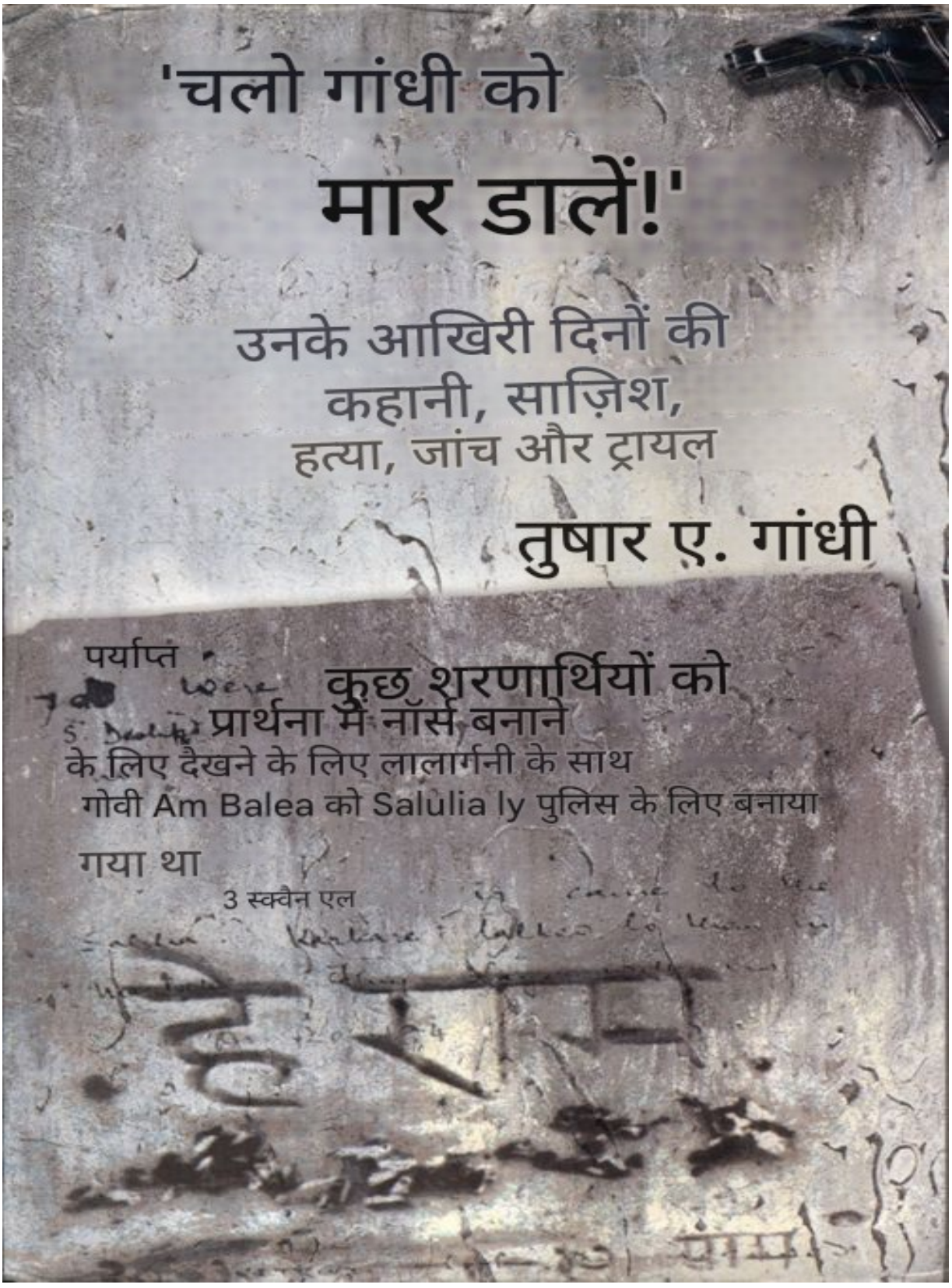
'चलो गांधी को
मार डालें!'
उनके आखिरी दिनों की
कहानी, साज़िश,
हत्या, जांच और ट्रायल
तुषार ए. गांधी
पर्याप्त
कुछ शरणार्थियों को
प्रार्थना में नॉर्स बनाने
के लिए देखने के लिए लालार्गनी के साथ
गोवी Am Balea को Salulia ly पुलिस के लिए बनाया
गया था
3 स्क्वैन एल

कपूर आयोग की रिपोर्ट का अध्याय 9 गांधी जी पर हुए पिछले जानलेवा हमलों से संबंधित है। चूंकि मैंने इन पर पिछले अध्याय में चर्चा की है , इसलिए मैं यहां कुछ चुनिंदा अंशों को छोड़कर इन्हें दोहराऊंगा नहीं। पंचगनी हमले के संबंध में आयोग ने अग्रानी से एक अंश उद्धृत किया है : 9.29 (संक्षेप 52) 23 जुलाई 1944 के अग्रानी का एक अंश है। इसमें भी घटना का उल्लेख है , जो कि राजजी के ' शिवाजी की इस भूमि में पाकिस्तान के अधार्मिक फार्मूले ' के खिलाफ हिंदुओं द्वारा आयोजित प्रदर्शन की है।
अध्याय X में वर्धा हमले का वर्णन है और अध्याय XI में गांधी स्पेशल ट्रेन के पटरी से उतरने का। मैंने इस विषय पर एक अन्य अध्याय में चर्चा की है और कपूर आयोग की रिपोर्ट में भी यही बात कही गई है , इसलिए मैं इन अध्यायों पर दोबारा चर्चा नहीं करूंगा।
कपूर आयोग की रिपोर्ट का अध्याय XIII अलवार में हुई जांचों से संबंधित है। अध्याय 14 ग्वालियर में हुई जांचों से संबंधित है। यहां यह ध्यान देने योग्य है कि ग्वालियर भेजे गए जांच अधिकारी कुख्यात यू. एच . राणा थे। दिल्ली और बॉम्बे के बीच यात्रा में समय लेने के बावजूद , राणा ने कई गलतियां कीं , जिनके परिणामस्वरूप नाथूराम गोडसे को गांधी की हत्या करने में कोई बाधा नहीं आई।
अध्याय पंद्रह में पुणे का वर्णन है। आयोग ने 1947 से पुणे की स्थिति का विस्तृत अध्ययन किया है। पुणे को हिंदू महासभा का गढ़ बताया गया है। गांधी हत्याकांड में आरोपित आठ लोगों में से मुख्य चार आरोपी पुणे के निवासी थे ; वी. आर . करकरे उनके करीबी सहयोगी थे और वी. डी . सावरकर उनके मार्गदर्शक और प्रेरणास्रोत थे।
अध्याय सोलह में अहमदनगर की स्थिति का वर्णन किया गया है।
कपूर आयोग की रिपोर्ट का अध्याय XIX सांप्रदायिक हिंदू संगठनों , हिंदू महासभा , आरएसएस और हिंदू राष्ट्र दल से संबंधित है।
अध्याय XXI में इस मुद्दे पर चर्चा की गई है कि क्या किसी को हत्या के बारे में पूर्व सूचना थी। आयोग ने कई गवाहों के बयानों पर भरोसा किया है। मैं सभी बयानों को दोहरा नहीं रहा हूँ , केवल कुछ ऐसे बयान यहाँ दिए गए हैं जिनका पहले उल्लेख नहीं किया गया है।
कपूर आयोग की रिपोर्ट का अध्याय XXIII दिल्ली में हुई जांचों से संबंधित है। ये जांचें 20 से 30 जनवरी के बीच की गई थीं।
कपूर आयोग की रिपोर्ट का अध्याय XXIV इस बात से संबंधित है कि क्या दिल्ली पुलिस ने बॉम्बे पुलिस को मदनलाल का बयान (प्रदर्श 5- ए) दिया था।
कपूर आयोग की रिपोर्ट का अध्याय XXV बंबई में हुई जांचों से संबंधित है। कपूर आयोग की रिपोर्ट का अध्याय XXVI आयोग के कार्यक्षेत्र से संबंधित निष्कर्षों पर चर्चा करता है। इस अध्याय में आयोग के सभी निष्कर्षों का विस्तार से वर्णन किया गया है , लेकिन चूंकि मैंने जांचों को विस्तार से प्रस्तुत किया है , इसलिए कुछ महत्वपूर्ण बिंदुओं को छोड़कर सभी विवरणों में दोबारा जाने की आवश्यकता नहीं है।

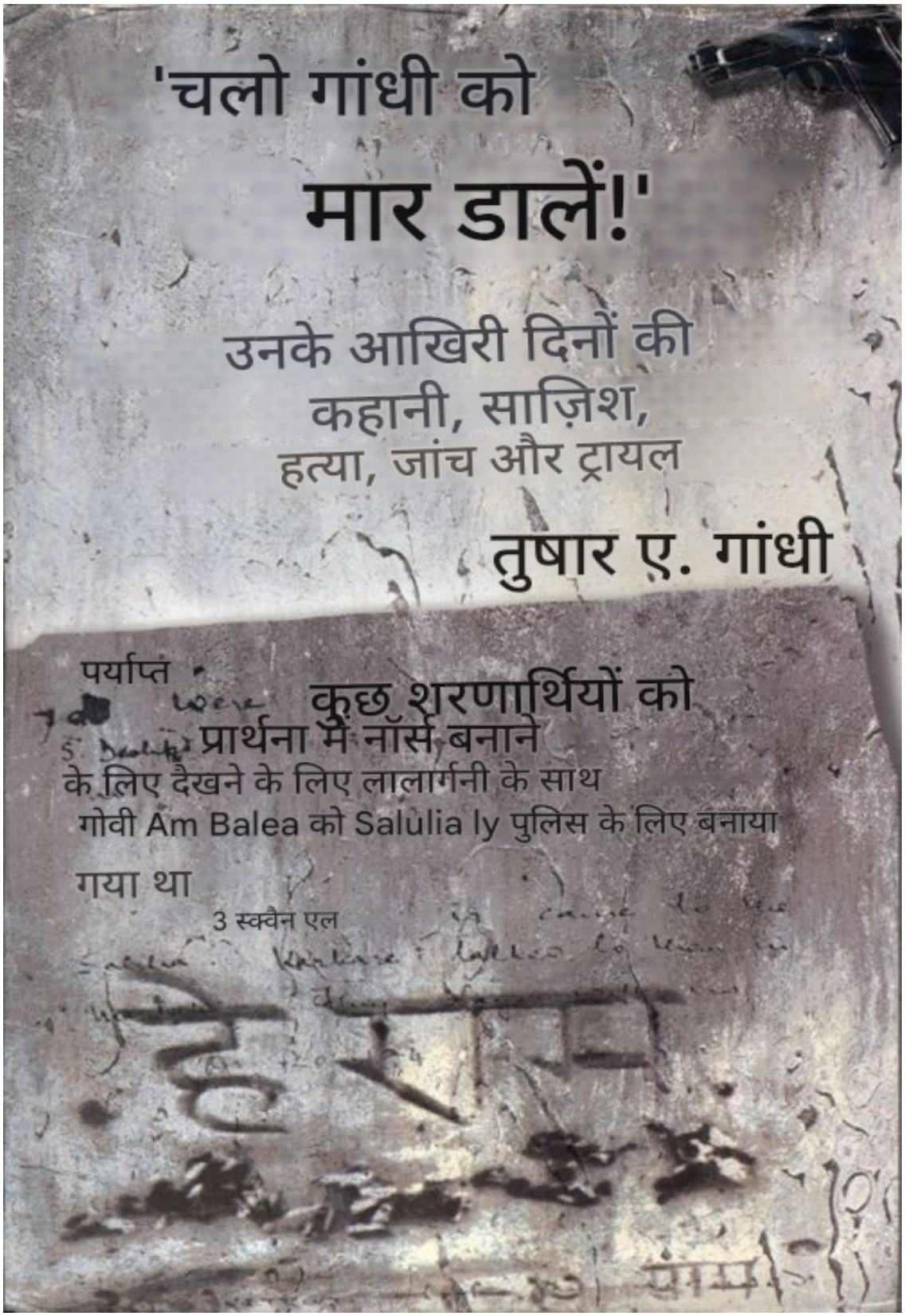
'चलो गांधी को
मार डालें!'
उनके आखिरी दिनों की
कहानी, साज़िश,
हत्या, जांच और ट्रायल
तुषार ए. गांधी
पर्याप्त
कुछ शरणार्थियों को
प्रार्थना में नॉर्स बनाने
के लिए देखने के लिए लालार्गनी के साथ
गोवी Am Balea को Salùlia ly पुलिस के लिए बनाया
गया था
3 स्क्वैन एल

'□□□ □□□□□ □□ □□□ □□□□□ □□□!'

कॉपीराइट © तुषार ए. गांधी 2007 पहली बार 2007 में प्रकाशित
द्वितीय संस्करण 2007

द्वारा प्रकाशित

7/16, Ansari Road, Daryaganj,
नई दिल्ली 110 002
बिक्री केंद्र:
Allahabad Bangalore Chandigarh Chennai Hyderabad Jaipur Kathmandu
Kolkata Mumbai Pune
सर्वाधिकार सुरक्षित।
इस प्रकाशन का कोई भी भाग पुनरुत्पादित या किसी पुनर्प्राप्ति प्रणाली में संग्रहीत नहीं किया जा सकता है।
या किसी भी रूप में या किसी भी माध्यम से, इलेक्ट्रॉनिक, यांत्रिक, के माध्यम से प्रसारित किया गया हो।
बिना पूर्व अनुमति के फोटोकॉपी करना, रिकॉर्डिंग करना या किसी अन्य प्रकार से ऐसा करना प्रतिबंधित है।
प्रकाशक।
लेखक इस कृति के लेखक के रूप में पहचाने जाने के नैतिक अधिकार का दावा करता है।
Aldine721 फॉन्ट में टाइपसेट किया गया निकिता ओवरसीज प्राइवेट लिमिटेड 1410 चिरंजीव टावर
43 नेहरू प्लेस
नई दिल्ली 110 019
भारत में मुद्रित
रेखा प्रिंटर्स प्राइवेट लिमिटेड ए-102/1 ओखला औद्योगिक क्षेत्र, चरण-II नई दिल्ली-110 020

[redacted] of [redacted]

[redacted]

अंतर्वस्तु

स्वीकृतियाँ
प्रस्तावना
पुस्तक 1
1. 'हे राम': एक और सूली पर चढ़ाना
2. हत्यारे
3. कथानक
4. जांच में गड़बड़ी
5. गुरु ने धोखा दिया
6. असफल प्रयास
पुस्तक 2
7. अंतिम वर्ष
8. हिंसा भड़क उठती है
9. बिहार नरसंहार
10. एक अकेला महात्मा
11. मृतकों का शहर
पुस्तक 3
12. लाल किला परीक्षण
13. अपील और निष्पादन
14. कपूर आयोग
परिशिष्ट
आई रेक्स बनाम नाथूराम गोडसे और आठ आरोपी
II अभियोजन पक्ष के गवाहों की सूची और जिस तिथि को वे उपस्थित हुए
अदालत में पेश हुए

III □□□□□□□□ □□□□ □□ □□□□

IV □□□□□□□□, □□□ □□ □□□□□

□□□□□ □□ □□□□□□□ □□ V □□ □□□□□ □□□□□ □□□

VI □□□□□□□□ □□□□□ □□ □□□□□ □□ □□□□□ □□□□□□□□□□

□□□□□□□□□□□

ऐसा व्यक्ति कभी नहीं मरता। वह जीवित रहता है, वह जागता रहता है।
मृत्यु मर चुकी है, वह नहीं।
प्रत्येक व्यक्ति को उसकी रचना, प्रत्येक को उसका मुकुट।
न्यायपूर्ण भाग्य ही देता है;
जो कोई संसार का जीवन अपने ऊपर ले लेता है और अपना जीवन त्याग देता है,
इस प्रकार मरते हुए भी वह जीवित रहता है।
जो भी इस अन्यायग्रस्त संसार के पूरे भार को वहन करता है
और इसे इस तरह रखता है,
भले ही उसे मनुष्य के भाग्य का सामना करना पड़े, फिर भी उसे कष्ट सहने में कोई आपत्ति नहीं है;
उसकी मृत्यु कैसे होनी चाहिए?
मृत्यु को देखकर अब उसमें कोई स्थान नहीं रह गया, कोई शक्ति नहीं बची।
उसके सिर पर;
उसने एक छोटे से घंटे में अपनी अमरता खरीद ली है।
और वह मरा नहीं है।
अगर तुम एक घंटे तक उसकी तलाश करो, तो वह कहीं नहीं मिलेगा।
एक घंटे के लिए स्थान;
तब तुम अपनी आँखें उसकी ओर उठाओगे और उसे मुकुट पहने हुए देखोगे।
एक अमर चेहरा।
स्मृति के पहाड़ों पर, संसार के उद्गम स्थलों के किनारे, सभी पुरुषों की नजरों में,
जहां उनके जीवन का प्रकाश अतीत की सभी घटनाओं पर पड़ता है,

[redacted] [redacted] [redacted] [redacted]

– [redacted] [redacted]. [redacted]
[redacted] [redacted] [redacted] [redacted] [redacted]

आभार

इस पुस्तक को लिखने का कार्य करने में कई लोगों का योगदान रहा है, इसलिए सबसे पहले मैं उन सभी को धन्यवाद देना चाहता हूँ जिन्होंने जानबूझकर या अनजाने में मेरी मदद की। कई लोगों ने किसी न किसी रूप में मुझे वह बनाया है जो मैं आज हूँ।
सबसे पहले, मैं अपने माता-पिता अप्पा और मां, अपनी दोनों नानी बा और ऐजी और अपनी बहन बाई (जिन्हें मैं बचपन से बाई कहकर बुलाती थी) का शुक्रिया अदा करती हूं, जिन्होंने मुझे इतनी अच्छी तरह पाला-पोसा। उनके बिना मैं अधूरी होती। सोनल, विवान और कस्तूरी, मेरे प्यार और मेरी जिंदगी, जिन्होंने मेरी हर छोटी-बड़ी गलती को सहा और मुझे लिखने के लिए प्रेरित किया। हरिजी, परितोष और अनीश, धैर्य रखने के लिए। पूनम, जो मेरे जीजा से भी बढ़कर एक दोस्त थीं, 'जहां भी हो खुश रहो मेरे दोस्त, तुमने हम सबके दिलों में एक खालीपन छोड़ दिया है।' मेरे सास-ससुर, मुझ पर विश्वास रखने के लिए। राजन, देवंगी, रशिका और आदित, हमेशा मेरे साथ रहने के लिए। मेरे सभी रिश्तेदार, चाहे पास हों या दूर, जिन्होंने लगातार मेरा हौसला बढ़ाया। कृष्णा, मेरे घर और बच्चों की देखभाल करने के लिए। प्रभुभाई और धनुबेन, मेरे शिक्षक, जिन्होंने मुझे संवारा और मेरे भीतर ज्ञान और विद्या की अदम्य जिज्ञासा जगाई, साथ ही उन मूल्यों को भी सिखाया जिन्हें मैंने आदर्श बाल मंदिर और बाद में आदर्श विनय मंदिर में अध्ययन करते समय नहीं समझा था, और वहां के मेरे सभी शिक्षकों को धन्यवाद। मैं अपने सभी करीबी दोस्तों भरत, पंकज, विजय, राजू, जनक, मेहुल और सुशील को धन्यवाद देता हूं, जो हमेशा मेरे साथ रहे, और भारी मन से अपने बचपन के दोस्त अरजव को भी याद करता हूं, जो अब हमारे बीच

नहीं हैं। मेरे दोस्त भीमसिंह यादव, जिन्होंने मुझे कई बार दिल्ली घुमाया; कनॉट प्लेस के रीगल थिएटर से बिरला हाउस के पीछे वाले गोलचक्कर तक हत्यारों द्वारा लिए गए रास्ते का पता लगाने में, और अन्य समय में भी।
मैं वेंकटनरसिम्हन का धन्यवाद करता हूँ, जिन्हें मेरे नखरों का सामना करना पड़ता है। सुधीर गट्टावार का भी धन्यवाद, जिन्होंने पुस्तक में तस्वीरों को संपादित किया, दीपांकर साडेकर और महेश बाइकर का भी धन्यवाद, जिन्होंने उन्हें स्कैन किया, और निपुण, समीर, अमोल और अनूप का भी धन्यवाद, जिन्होंने महात्मा गांधी फाउंडेशन में मेरे साथ काम किया जब मैंने पुस्तक लिखना शुरू किया था।
मैं श्री कंवल रेखी, श्री बी.वी. जगदीश और श्री हरीश मेहता का आभारी हूं, जिनकी कृपा से मैं लिख सका। मेरे मित्र कनकसबापति पांडियन, मीहीर माफतलाल और विजय मुखी, जिन्होंने मुझ पर विश्वास किया और मेरा साथ दिया।
मैं आर. श्रीराम का शुक्रिया अदा करती हूँ जिन्होंने मुझे बस लिखने के लिए प्रेरित किया और जिन्होंने मुझे जयप्रिया वासुदेवन से मिलवाया, जिन्होंने मेरी लेखन प्रक्रिया पूरी होने का बेसब्री से इंतज़ार किया ताकि वे किताब बेच सकें। जैकारांडा प्रेस के सभी लोगों का, खासकर अश्वती का, जिन्हें मैंने उनकी छुट्टियों में भी परेशान किया। रूपा की दीप्ति और संजना, मेरी संपादकों का, जिन्होंने मेरी विशाल पांडुलिपि को आकार दिया; काश वे मुझ पर भी ऐसा ही जादू कर पातीं!
मैं मणि भवन गांधी संग्रहालय का तहे दिल से आभारी हूं कि उन्होंने मुझे अपनी लाइब्रेरी की किताबें अपनी इच्छानुसार रखने की अनुमति दी। गांधी राष्ट्रीय संग्रहालय और उसकी

लाइब्रेरी के पूर्व निदेशक डॉ. वाई.पी. आनंद का भी शोध में सहयोग के लिए धन्यवाद। साथ ही, मुझसे पहले इस विषय पर लिखने वाले सभी लेखकों का भी धन्यवाद: मनोहर मुलगांवकर, इनामदार, न्यायमूर्ति खोसला, तपन घोष और वे दो अज्ञात पत्रकार जिन्होंने 'गांधी हत्याकांड' और 'गांधी हत्याखंड' लिखा, मैंने उनके लेखन को आत्मसात कर लिया है। विशेष रूप से प्यारेलाल नैयर, बापूजी के जीवनीकार, की 'महात्मा गांधी: अंतिम चरण' खंड 10, भाग 1 और 2 अमूल्य थे। मैं नवजीवन और प्यारेलाल फाउंडेशन का भी आभारी हूं कि उन्होंने मुझे पुस्तक से पाठ का उपयोग करने की अनुमति दी। स्वर्गीय जगन फड़नीस, जिनकी मराठी पुस्तक 'महात्म्य ची अखेर' ने मुझे यह पुस्तक लिखने के लिए प्रेरित किया, और वाई.डी. फड़के, जिनकी पुस्तक 'नथुरामयन' ने मुझे एक अलग दृष्टिकोण प्रदान किया, का भी धन्यवाद।
मैं अपने मित्र अतुल तिवारी का आभारी हूँ जिन्होंने मुझे कुछ कठिन हिंदी, हिंदुस्तानी और उर्दू शब्दों और मुहावरों के अर्थ समझाने में मदद की। मैं शारदा द्विवेदी का आभारी हूँ जिन्होंने हत्यारों द्वारा इस्तेमाल किए गए बंबई के कुछ प्रतिष्ठानों के बारे में जानकारी दी। मैं अपने मित्र कमल हसन और दयालु सारिका का आभारी हूँ जिन्होंने मुझे 'हे राम' नाटक का हिस्सा बनाया। मैं 'मी नथुराम गोडसे बोलतोय' नाटक की टीम का आभारी हूँ जिन्होंने सच बोलने के मेरे संकल्प को और मजबूत किया। मैं उन सभी का आभारी हूँ जिन्होंने समय-समय पर ऐसे संदर्भ प्रदान किए जिनसे षड्यंत्र और हत्या से जुड़े कई छिपे हुए पहलुओं पर प्रकाश पड़ा। मैं स्वर्गीय मधुर वल्लूरी का आभारी हूँ जिनसे मैं कभी नहीं मिला और उनकी माता का भी, जो अथक भावना और अदम्य इच्छाशक्ति से परिपूर्ण थीं, जिन्होंने मुझे मधुर की रचनाओं की

एक पुस्तक दी, जिसमें मुझे गोपाल गोडसे, मदनलाल पाहवा और डॉ. सदाशिव परचुरे के साथ उनके साक्षात्कार मिले। मैं मंडालिया का आभारी हूँ जो मेरे लिए दुर्लभ पुस्तकें और पत्रिकाएँ लाए, जिनमें मुझे कुछ रोचक तथ्य मिले।
अंत में, लेकिन सबसे महत्वपूर्ण बात, मेरे प्रकाशक रूपा एंड कंपनी को धन्यवाद, जिन्होंने मुझ जैसे नवोदित लेखक को मौका दिया। उन सभी को भी धन्यवाद जिन्होंने मेरी इस पुस्तक के लेखन के बारे में सुना और अपने उत्साह से मुझे प्रेरित किया। मेरे पाठक, आपका बहुत-बहुत धन्यवाद। मैं आपका आभारी हूँ। Namohstute. Shukriya, karam, meherbani.
Tushar A. Gandhi

प्रस्तावना

30 जनवरी 1948 को, नव स्वतंत्र भारतीय राष्ट्र के जनक महात्मा गांधी की एक हिंदू कट्टरपंथी द्वारा हत्या कर दी गई थी।
आज के दिन पूरी दुनिया गांधी जी को याद करती है और उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करती है, लेकिन उनकी हत्या की कहानी भुला दी गई है। हर साल 30 जनवरी को भारत सरकार के प्रमुख राजघाट जाकर उनकी समाधि पर पुष्पांजलि अर्पित करते हैं। सुबह 11 बजे सायरन बजता है, जो भारतवासियों को याद दिलाता है कि शांति के दूत गांधी जी की हत्या उसी दिन हुई थी। लेकिन उनके बलिदान भुला दिए गए हैं। आज भारत उसी राह पर तेजी से आगे बढ़ रहा है, जिसने 1947 में इसके विभाजन का कारण बना। यदि इस नफरत और विनाश को नहीं रोका गया, तो एक राष्ट्र के रूप में हमारा अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। वे अब हमारे बीच हमें बचाने के लिए नहीं हैं; उनकी शहादत व्यर्थ हो जाएगी।
30 जनवरी 1948 से, विभिन्न समूहों ने उनकी हत्या के बारे में अपने-अपने, और अक्सर निराधार, सिद्धांत फैलाए हैं। कई झूठों को सच के रूप में पेश किया गया है; अर्ध-सत्यों को सच्ची घटनाओं के साथ मिलाकर पूर्ण सत्य के रूप में प्रस्तुत किया गया है। हत्यारे नाथूराम गोडसे के कृत्य को यह कहकर महिमामंडित किया गया है कि उसने गांधी के पाकिस्तान समर्थक रुख से आक्रोश के कारण ऐसा किया, जिससे हिंदुओं को नुकसान हुआ। 'महात्मा गांधी विभाजन के लिए जिम्मेदार थे'; 'महात्मा गांधी मुसलमानों को शरण दे रहे थे और हिंदुओं को त्याग दिया था'; 'अगर महात्मा गांधी को जीवित रहने दिया जाता तो वे हिंदू राष्ट्र के उद्देश्य को नुकसान पहुंचाते'; 'महात्मा गांधी ने भारत सरकार को पाकिस्तान

को 55 करोड़ रुपये देने के लिए मजबूर किया'; 'महात्मा गांधी ने हिंदू शरणार्थियों के कष्टों को अनदेखा किया और विभाजन के समय पीछे रह गए मुसलमानों को लाड़-प्यार दिया'; 'भारत माता को बचाने का एकमात्र तरीका गांधीजी की हत्या करना था', ये कुछ ऐसे झूठ थे, और आज भी हैं, जिन्हें गोडसे के अनुयायियों और हिंदू धुर दक्षिणपंथियों द्वारा उनकी हत्या को उचित ठहराने के लिए फैलाया जाता है।
लेकिन क्या ये सच हैं? भारतीयों की एक पीढ़ी इन्हें सच मानकर बड़ी हुई है। गांधीवादियों की चुप्पी, जिन्होंने गांधी पर हुए हमलों के बावजूद हमेशा मुंह फेर लिया, ने इस विश्वास को और मजबूत किया है। क्या किसी को पता है कि 20 और 30 जनवरी 1948 को हुए आखिरी दो हमलों से पहले गांधी पर चार बार जानलेवा हमले हुए थे? इन पांच असफल हमलों में से चार उस समय हुए थे जब मुस्लिम लीग के एजेंडे में पाकिस्तान का मुद्दा भी नहीं था। ये चारों हमले पुणे के अति दक्षिणपंथी उच्च जाति के हिंदुओं ने किए थे; इन चार हमलों में से तीन नारायण आप्टे-गोडसे गिरोह ने किए थे, और नाथूराम इनमें से दो हमलों में फंस गए थे।
20 जनवरी को बिरला हाउस में शाम की प्रार्थना सभा के दौरान एक पंजाबी शरणार्थी मदनलाल पाहवा ने एक देसी बम विस्फोट किया। गिरफ्तारी के बाद मदनलाल ने गांधीजी की हत्या की साजिश रचने वाले गिरोह का हिस्सा होने की बात कबूल की। उसने बताया कि गिरोह के सरगना पुणे के थे और उनमें से एक गोडसे और आप्टे द्वारा प्रकाशित मराठी भाषा की पत्रिकाएँ 'हिंदू राष्ट्र' और 'अग्रनी' का संपादक और प्रकाशक था। मदनलाल पुलिस को दिल्ली के मरीना होटल के कमरा नंबर 40 तक ले गया, जहाँ गिरोह के सरगना 20 जनवरी को असफल प्रयास से पहले ठहरे थे। पुलिस को कमरे से लावारिस

कपड़े मिले, जिन पर एन.वी.जी. (नाथूराम विनायक गोडसे) के नाम के शुरुआती अक्षर खुदे हुए थे। उन्हें दिल्ली हिंदू महासभा के सचिव के तत्कालीन अप्रकाशित प्रेस विज्ञप्ति की एक प्रति भी मिली।
20 तारीख को असफल प्रयास के बाद, बॉम्बे प्रांत के गृह मंत्री मोरारजी देसाई को बॉम्बे के रुइया कॉलेज में हिंदी के प्रोफेसर जे.सी. जैन से सूचना मिली, जिन्होंने मदनलाल कश्मीरीलाल पाहवा के सामने शेखी बघारी थी कि वह उस गिरोह का हिस्सा थे जिसने दिल्ली में गांधी की हत्या करने की योजना बनाई थी। देसाई ने जैन की चेतावनी को नजरअंदाज कर दिया, लेकिन अहमदाबाद में केंद्रीय गृह मंत्री सरदार पटेल से मुलाकात के दौरान उन्होंने casually इसका जिक्र किया। पटेल ने साजिश की जानकारी होने की बात स्वीकार की, लेकिन जैन की कहानी को अविश्वसनीय बताकर खारिज कर दिया।
इतनी सारी जानकारी उपलब्ध होने के बावजूद, पुलिस समय रहते अपराधियों को पकड़ने या उनकी पहचान स्थापित करने में असमर्थ रही। दस दिन बाद, नाथूराम गोडसे, नारायण आप्टे और विष्णु करकरे दिल्ली रेलवे स्टेशन के विश्राम कक्ष में मिले और बिरला हाउस की ओर चल दिए। वे शाम की प्रार्थना सभा में आए लोगों के बीच बेफिक्र होकर घुलमिल गए। शुक्रवार, 30 जनवरी 1948 को शाम 5 बजकर 17 मिनट पर, गोडसे ने गांधीजी का रास्ता रोककर 9 मिमी बेरेटा पिस्तौल से उनकी छाती में तीन गोलियां मारीं। गांधीजी 'हे राम' कहते हुए गिर पड़े।
गोडसे आखिरकार वह करने में सफल हो गया जो वह पहले तीन बार और शायद कई बार और करने में असफल रहा था। पुलिस क्या कर रही थी? क्या वे लापरवाह थे? उदासीन थे? या फिर जानबूझकर आँखें मूंद ली

गई थीं? दिल्ली पुलिस के पास मदनलाल का हस्ताक्षरित इकबालिया बयान था जिसमें उसने कहा था कि गिरोह इतना कट्टर था कि वह फिर से कोशिश करेगा, पूछताछ के दौरान वह बार-बार कहता था, 'वो फिर आएगा'। पुणे और बॉम्बे दोनों पुलिस हिंदू राष्ट्र और अग्रानी, उसके कर्मचारियों और उसके पीछे के लोगों से अवगत थीं। हैरानी की बात यह है कि पुणे पुलिस को कभी सूचित नहीं किया गया और न ही मदद मांगी गई। बॉम्बे पुलिस के एक वरिष्ठ अधिकारी को रिपोर्ट दी गई और उसे तुरंत बॉम्बे ले जाने के लिए कहा गया। अधिकारी ने हवाई जहाज या बॉम्बे के सीधे मार्ग से जाने के बजाय इलाहाबाद होते हुए ट्रेन से जाने का फैसला किया। जब तक अधिकारी बॉम्बे पहुंचा, नाथूराम गोडसे, नारायण आप्टे और विष्णु करकरे पहले ही निकल चुके थे और दिल्ली वापस जा रहे थे। बाद में जब उनसे यात्रा के तरीके के बारे में पूछा गया, तो सहायक आयुक्त ने जवाब दिया कि उन्हें हवाई यात्रा से डर लगता है। उनकी यह व्याख्या स्वीकार कर ली गई।
हत्या की साजिश की सफलता में एक अहम कारक यह था कि पुलिस—जो गांधी जी के अतिरिक्त सुरक्षा और आगंतुकों की तलाशी की अनुमति न देने के फैसले से बाधित थी—ने बिरला हाउस में बॉम्बे, पुणे या अहमदनगर से कांस्टेबल या इंस्पेक्टर तैनात करने के बारे में नहीं सोचा, जो गोडसे, आप्टे और करकरे की पहचान कर सकते थे, जो अपने-अपने शहरों में कुख्यात उपद्रवी थे और जिनके अपने-अपने आपराधिक रिकॉर्ड थे। हत्या के बाद, पुणे के दिग्गज कांग्रेसी नेता अन्ना गाडगिल पहले व्यक्ति थे जिन्होंने गोडसे की पहचान की।
कांग्रेस सरकार और कम से कम मंत्रिमंडल के कुछ सदस्य उस दखलंदाजी करने वाले बूढ़े व्यक्ति से तंग आ चुके थे। उनके लिए

शहीद महात्मा गांधी को स्वीकार करना आसान होता। गृह मंत्री सरदार पटेल को सौंपी गई एक गुप्त रिपोर्ट के अनुसार, पुलिस बल के कई अधिकारी और कई नौकरशाह राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) और हिंदू महासभा के गुप्त सदस्य थे और हिंदू चरमपंथी संगठनों की विचारधारा का सक्रिय रूप से समर्थन और प्रचार कर रहे थे। गिरोह के सदस्य इन चरमपंथी संगठनों के गुंडे थे। क्या इन दोनों के बीच कोई गुप्त मिलीभगत थी? जिस तरह से जांच की गई और गांधी जी के जीवन की रक्षा करने के प्रति पुलिस का ढुलमुल रवैया, यह मानने पर मजबूर करता है कि जांच का उद्देश्य सच्चाई को उजागर करने से कहीं अधिक छिपाना था। 20 से 30 जनवरी 1948 के बीच पुलिस द्वारा उठाए गए कदम उनकी हत्या को रोकने की कोशिश करने के बजाय हत्यारों की सुगम प्रगति सुनिश्चित करने के लिए अधिक थे। गांधी जी अंग्रेजों को देश से बाहर निकालने में सफल रहे थे। दुर्भाग्यवश, उनके कट्टरपंथी विचारों का अनुसरण उनके राजनीतिक उत्तराधिकारियों के लिए कठिन था। उनके लिए वे एक ऐसे पितृसत्तात्मक व्यक्ति थे जिनकी उपयोगिता समाप्त हो चुकी थी और अब वे एक उपद्रव साबित हो रहे थे। उन्होंने कांग्रेस को भंग करने का सुझाव दिया था। उन्होंने विभाजन की प्रक्रिया को पलटने के लिए पाकिस्तान जाने की धमकी दी थी। उन्होंने एक आदर्श समाज की स्थापना के अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए राजनीतिक रूप से प्रेरित अल्पकालिक उपायों को रद्द करने के लिए मजबूर किया। उन्होंने सामाजिक सुधार आंदोलन शुरू करने की धमकी दी थी। उन्होंने भारत के तीव्र औद्योगीकरण का विरोध किया और धीमी गति से चलने वाले ग्रामोद्योग मॉडल को प्राथमिकता दी। वे चाहते थे कि मंत्री जनता के सेवक बनकर रहें और अपने आलीशान बंगलों को बेघर शरणार्थियों के लिए आश्रय स्थलों में बदल दें। उन्होंने

माउंटबेटन से वायसराय महल खाली करने और उसे शरणार्थियों के लिए अस्पताल में बदलने का अनुरोध किया था।
गांधी के राजनीतिक उत्तराधिकारी ऐसे अव्यावहारिक बूढ़े व्यक्ति का सामना कैसे करते? अगर किसी तरह उन्हें हटा दिया जाता, तो इसमें क्या बुराई थी? कुछ वर्गों में उनके प्रति आक्रोश था, क्यों न उस आक्रोश को हवा दी जाए और शांति के दूत को ही भस्म कर दिया जाए? आरएसएस और हिंदू महासभा उनसे नाराज़ थे क्योंकि उन्होंने देश के पूर्ण विभाजन और मुस्लिम-मुक्त भारत की उनकी योजना को विफल कर दिया था। जब जनसंख्या का स्थानांतरण हो रहा था, तब इन संगठनों ने कम से कम उत्तरी भारत से पूर्ण जनसंख्या का स्थानांतरण सुनिश्चित करने का भरसक प्रयास किया। एक बार ऐसा हो जाने पर, उन्हें शेष भारत से निकालना आसान हो जाता और फिर एक सच्चा हिंदू राष्ट्र बनता। मुस्लिम लीग ने पश्चिम पंजाब, सिंध, उत्तर-पश्चिम सीमांत प्रांतों और पूर्वी बंगाल की हिंदू आबादी को आतंकित करके या तो पलायन करने या मारे जाने का प्रयास करके पहले ही इस पद्धति का प्रदर्शन कर दिया था। लेकिन गांधी ने अपने अहिंसक तरीकों से यह सुनिश्चित किया कि भारत में ऐसा न हो। पलायन के कगार पर खड़े मुसलमानों को उनके प्रयासों से राहत मिली। क्रोधित हिंदू चरमपंथियों का मानना था कि पाकिस्तान के निर्माण के बाद से मुसलमानों का भारत में रहने का अधिकार समाप्त हो गया है और उन्होंने गांधी जी को इस लक्ष्य को हासिल न करने देने के लिए दोषी ठहराया। कई कांग्रेस नेताओं की भी यही राय थी। आरएसएस और हिंदू महासभा के कट्टरपंथियों ने बड़ी चालाकी से अपने असली गुस्से को अपनी मातृभूमि के विभाजन और पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तान में अपने हिंदू भाइयों के नरसंहार के आक्रोश की आड़ में छिपा लिया और बड़ी आसानी से इसके

लिए गांधी जी को दोषी ठहरा दिया। कांग्रेस नेता इस बात से खुश थे कि उनकी गलतियों के लिए किसी और को बलि का बकरा बनाया जा रहा है।
आरएसएस और हिंदू महासभा दोनों में ब्राह्मणों का वर्चस्व था और वे गांधीजी से इसलिए नाराज़ थे क्योंकि उन्होंने एक वर्गहीन, जातिविहीन भारतीय समाज के लिए आंदोलन शुरू किया था। गांधीजी द्वारा मुक्त की गई निचली जातियाँ, जो अपने लोकतांत्रिक अधिकारों से नवपरिचित थीं, उच्च जातियों और विशेष रूप से ब्राह्मणों के वर्चस्व को चुनौती दे रही थीं, जिन्होंने अंग्रेजों के शासनकाल में नौकरशाही और न्यायपालिका पर एकाधिकार कर रखा था। 1947 से पहले, भारत में केवल एक ही ब्राह्मण राज्य था - महाराष्ट्र के पुणे में पेशवाओं का मराठा साम्राज्य। पुणे के ब्राह्मणों का हमेशा से यही मानना था कि जिस दिन अंग्रेज भारत छोड़ेंगे, देश की बागडोर फिर से उनके हाथों में आ जाएगी। पेशवाओं के वंशजों का यह सपना गांधीजी ने चकनाचूर कर दिया।
गांधी जी पर जानलेवा हमला करने का पहला प्रयास पुणे में 1934 में हुआ, जब उनकी कार पर हथगोला फेंका गया। यह उस समय की बात है जब पाकिस्तान और उसे 55 करोड़ रुपये देने की कल्पना भी नहीं की गई थी। आरएसएस और हिंदू महासभा के सदस्य गांधी जी का अपमान करने के लिए उनकी तस्वीरें अपने जूतों के तलवों पर चिपकाते थे। हिंदू चरमपंथी संगठनों द्वारा अपने कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षण देने के लिए आयोजित शिविरों में उनकी तस्वीरों को निशाने के रूप में इस्तेमाल किया जाता था। ये वही लोग थे जिन्होंने गोडसे और आप्टे को हत्या की योजना बनाने में मदद की, उन्हें समर्थन, धन और उपकरण मुहैया कराए; ये वही लोग थे जिन्होंने मिठाई बांटकर और

पटाखे फोड़कर उनकी हत्या का जश्न मनाया। वे इस हत्या को 'वध' कहते हैं, जो एक संस्कृत शब्द है जिसका प्रयोग राक्षस के वध का वर्णन करने के लिए किया जाता है, जैसे जब अच्छाई की शक्तियां बुराई की शक्तियों को मारती हैं, हिंदू पौराणिक कथाओं में राक्षसों का वध।
हत्यारों का मुकदमा नई दिल्ली के लाल किले में गठित विशेष अदालत में चला। अभियोजन पक्ष का रवैया उदासीन था; उसे लगता था कि मुकदमा पहले से ही पक्षपातपूर्ण है। सावरकर को हर हाल में बरी करना था, बाकी सभी को पहले ही दोषी मान लिया गया था। बचाव पक्ष को हिंदू-मुस्लिम घृणा के अपने घृणित सिद्धांतों को मनवाने की पूरी छूट दी गई थी। सबसे आश्चर्यजनक बात यह थी कि गोडसे को अदालत में दो बार अपना गुस्सा निकालने की अनुमति दी गई; एक बार लाल किले में और फिर पंजाब उच्च न्यायालय में अपील के दौरान। अदालत द्वारा उसका बयान दर्ज किए जाने के बाद ही भारतीय सरकार को इस बात का एहसास हुआ कि यह बयान भारत की पहले से ही नाजुक एकता को कितना नुकसान पहुंचाएगा। फिर, जल्दबाजी में प्रतिक्रिया देते हुए, उन्होंने इस पर प्रतिबंध लगा दिया और हिंदू चरमपंथियों को प्रचार का एक हथियार मुहैया करा दिया। गोडसे का बयान "माननीय महोदय, कृपया" अंततः उच्च न्यायालय द्वारा प्रतिबंध से मुक्त कर दिया गया, लेकिन इससे पहले हिंदू धुर दक्षिणपंथियों ने इसका इस्तेमाल अपने भूमिगत प्रचार में कट्टरपंथियों और समर्थकों की एक विशाल सेना खड़ी करने के लिए कर लिया था।
यह बयान निश्चित रूप से गोडसे द्वारा नहीं लिखा गया है, क्योंकि भाषा पर उनकी पकड़ इतनी गहरी कभी नहीं थी। इस दस्तावेज़ को बड़ी चतुराई से लिखा गया है ताकि उदार विचारों वाले लोगों को भी

भावनात्मक रूप से प्रभावित किया जा सके। गोडसे के सह-साजिशकर्ता वी.डी. सावरकर को भाषा पर पूर्ण महारत हासिल थी। वे एक बेजोड़ लेखक और वक्ता थे। गोडसे को कारावास और मुकदमे के दौरान उनसे मिलने का भरपूर अवसर मिला था। गोडसे के नाम से जारी किया गया यह बयान सावरकर की लिखावट की झलक दिखाता है।
गांधी जी की हत्या को अब लगभग साठ वर्ष हो चुके हैं, फिर भी कई तथ्य अनसुलझे हैं। भारत का विभाजन और उसके बाद हुई जनमानस की हत्या आज भी अत्यंत संवेदनशील और ज्वलंत मुद्दा है। हिंदू चरमपंथियों ने विभाजन और उसके बाद की घटनाओं में गांधी जी की भूमिका के बारे में अपने मनगढ़ंत दावे को सफलतापूर्वक फैलाया है। गांधीवादियों और कांग्रेसियों ने, गांधीवादियों की चुप्पी और कांग्रेसियों की उदासीनता से, इन चरमपंथियों के झूठ को और बल दिया है।
'चलो गांधी को मार डालें!' मौखिक इतिहास से, पहले प्रकाशित पुस्तकों से, हत्या के मुकदमे और जांच के रिकॉर्ड से, बचाव पक्ष के वकीलों और न्यायाधीशों द्वारा लिखी गई पुस्तकों से, समाचार पत्रों की रिपोर्टों से और जो मैंने परिवार में सुनते हुए और गांधी के प्रियजनों की हैरानी को देखते हुए प्राप्त तथ्यों से संबंधित है।
मेरे बचपन में एक ऐसी घटना घटी जिसने मुझ पर गहरा प्रभाव छोड़ा। मैं शायद दस या बारह साल की ही रही होंगी जब मेरी नानी, सुशीलाबेन, दक्षिण अफ्रीका से हमारे साथ रहने आईं। उन्होंने गोपाल गोडसे से मिलने की इच्छा जताई, जो नाथूराम का छोटा भाई और हत्या का सह-आरोपी था। वह मेरे परदादा की हत्या में अपनी भूमिका के लिए आजीवन कारावास की सजा पूरी करके आया था। पूरा परिवार पुणे के लिए रवाना हुआ। हमारे लिए पुणे का मतलब था आगा खान

पैलेस में कस्तूरबा की समाधि पर जाना और फिर महादेवकाका, महादेव देसाई, गांधी के सचिव और करीबी सहयोगी, जिनकी मृत्यु आगा खान पैलेस में कैद के दौरान हुई थी, की समाधि पर जाना। फिर हम मेरे परदादा के हत्यारों के घर गए। गोपाल गोडसे के लिए, हमारा यह कदम उनके पीड़ित के परिवार द्वारा उनके कृत्य की स्वीकृति के समान था। उसने इस घटना का इस तरह इस्तेमाल किया कि ऐसा लगे कि हमने उस घिनौने कृत्य का समर्थन किया है और उनके कृत्य पर अपनी मुहर लगा दी है। मेरे लिए यह सब बहुत उलझन भरा था। मैं इतनी छोटी थी कि दादी की बात समझ नहीं पाई कि वे यह बताना चाह रही थीं कि परिवार ने गोडसे परिवार को माफ कर दिया है। मुझे आज भी समझ नहीं आता कि ऐसा करना क्यों ज़रूरी था! भला कोई ऐसे व्यक्ति को कैसे माफ कर सकता है जिसे अपने किए पर ज़रा भी पछतावा न हो? मैं उन्हें कभी माफ नहीं कर सकती, और न ही उस विचारधारा को माफ कर सकती हूँ जिसने हत्यारे नाथूराम गोडसे को जन्म दिया।
मुझे गोपाल गोडसे से फिर से मिलने का मौका मिला—अब वे एक कमज़ोर बुज़ुर्ग व्यक्ति थे, लेकिन फिर भी उतने ही उग्र और खुले झूठ को सच बताने में माहिर थे। हम मेरी प्रिय मित्र, स्वर्गीय प्रिया तेंदुलकर द्वारा आयोजित एक टॉक शो में थे। शूटिंग खत्म होने के बाद गोपाल गोडसे लड़खड़ाते हुए उठने की कोशिश कर रहे थे। जब मैंने उन्हें लड़खड़ाते देखा, तो मैंने उन्हें सहारा देने के लिए हाथ बढ़ाया और उनके लैपल माइक को डिस्कनेक्ट करने में उनकी मदद की। प्रेस फोटोग्राफरों ने इस पल को कैमरे में कैद कर लिया और यह तस्वीर राष्ट्रीय समाचार पत्रों में छपी। मेरा यह कार्य एक बुज़ुर्ग व्यक्ति के प्रति सामान्य शिष्टाचार का उदाहरण था। मुझे यकीन है कि गोपाल ने उस तस्वीर को मेरे प्रति

अपनी प्रशंसा और उनके इस काम के प्रति मेरी स्वीकृति के प्रमाण के रूप में दिखाया होगा।
30 जनवरी 1997 को, मैंने अपने परदादा की चिता से निकली राख से भरे कलश को विसर्जित किया। शारीरिक रूप से उनके इतने करीब मैं पहली बार आया था। इलाहाबाद में यह रस्म अदा करने के बाद, मैं दिल्ली के राजघाट स्थित गांधी राष्ट्रीय संग्रहालय गया, जहाँ गांधी जी के खून से सने वस्त्र रखे हैं। पहली बार मैंने गोडसे द्वारा इस्तेमाल की गई 9 मिमी बेरेटा स्वचालित बंदूक को देखा और छुआ। मेरे भीतर अथाह क्रोध उमड़ आया; उस क्षण मैं किसी संघी को गोली मार सकता था। यह पुस्तक उस क्रोध का परिणाम है जो मेरे भीतर बहुत लंबे समय से दबा हुआ था। मेरे परदादा ने कहा था: 'क्रोध एक ऐसा तेजाब है जो उस पात्र को नष्ट कर देता है जिसमें उसे रखा जाता है।'
आज भारत उसी दौर से गुजर रहा है जैसा 1940 के दशक के मध्य में था। अवसरवादी और शोषक राजनेताओं ने लोकतांत्रिक प्रक्रिया का मजाक उड़ाया है और मतदाताओं को जाति और उपजातियों के आधार पर बांट दिया है। शोषक मुस्लिम मौलवियों और मुसलमानों के बीच अवसरवादी राजनीतिक नेतृत्व की मदद से हिंदू चरमपंथी तत्व शक्तिशाली हो गए हैं और उन्होंने भारत को मुसलमानों से मुक्त कराने या उन्हें उनकी जन्मभूमि में गुलाम बनाकर जीवन यापन करने के लिए मजबूर करने का अभियान फिर से शुरू कर दिया है। हिंदू वर्चस्ववादियों का एक समूह है जो गांधी और अंबेडकर से पहले के ब्राह्मण प्रधान समाज को पुनर्स्थापित करना चाहता है।
हम एक और नरसंहार नहीं चाहते। हम जातिगत वर्चस्व नहीं चाहते; हम धर्मों के बीच एक और युद्ध नहीं चाहते। नस्लीय भेदभाव जातीय सफ़ाई की दिशा में पहला कदम है; हम हिटलर और मिलोसेविक के युग को

दोबारा नहीं जी सकते। दुनिया एक अत्याचारी महाशक्ति की दया पर जीवित नहीं रह सकती। हमें गांधी जी के भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश के एकीकरण के अधूरे सपने को पूरा करना होगा। भारत को आरएसएस की ज़रूरत नहीं है, जो हिंदू महासभा का हिंदू राष्ट्र का संस्करण है। हम एक और विभाजन नहीं चाहते, न दिलों का और न ही ज़मीन का।
यह पुस्तक तथ्यों को स्पष्ट करती है। कहीं हम भूल न जाएं। Tushar A. Gandhi
पुस्तक 1

1

'यह रैम है':
एक और सूली

'यह दर्शाता है कि अत्यधिक अच्छा होना कितना खतरनाक है।'
- जॉर्ज बर्नार्ड शॉ,
महात्मा गांधी की हत्या पर प्रतिक्रिया देते हुए

शुक्रवार, 30 जनवरी 1948 को शाम के 4:55 बज रहे थे। गांधीजी शाम की नमाज के लिए देर से पहुँचने वाले थे। उनके लिए देर से पहुँचना लगभग पाप करने जैसा था।
आभा चिंतित थीं, लेकिन कमरे का माहौल बेहद जीवंत था। गांधीजी सरदार पटेल के साथ बातचीत में मग्न थे। बैठक शाम 4 बजे शुरू हुई थी; पटेल अपनी बेटी मणिबेन के साथ आए थे। गुरु और शिष्य के बीच गहन संवाद सरदार पटेल और पंडित नेहरू के बीच बढ़ते मतभेद और पार्टी एवं प्रशासन पर इसके प्रभाव पर केंद्रित था। संवाद निरंतर जारी रहा और इसके समाप्त होने का कोई आसार नहीं था। गांधीजी का ध्यान आकर्षित करने के लिए आभा ने उनके सामने शाम का भोजन रखा, जिसमें कुछ पकी हुई सब्जियां, बारह औंस बकरी का दूध, गाजर का रस और अदरक, खट्टा नींबू और एलोवेरा का काढ़ा शामिल था। लेकिन आज उन्होंने इसे भी नजरअंदाज कर दिया।
'आज वो नमाज़ के लिए देर से पहुँचेंगे और खुद पर बहुत गुस्सा होंगे', आभा ने मन ही मन सोचा। वो उनका ध्यान भटकाने के लिए कुछ नहीं कर सकीं, क्योंकि चर्चा की गंभीरता और दोनों नेताओं के करिश्माई व्यक्तित्व से वो पूरी तरह दबकर चुप हो गई थीं। आखिरकार, उन्होंने हिम्मत जुटाई और गांधी जी के सामने घड़ी

उठाई ताकि वो समय देख सकें, लेकिन इससे भी उनका ध्यान नहीं गया। उनकी इस परेशानी को देखकर मणिबेन ने हस्तक्षेप किया।
गांधी जी ने पटेल से कहा, 'अब मुझे यहाँ से जाना होगा।' सादा भोजन करने के बाद वे शाम की प्रार्थना के लिए तैयार होने उठे। शाम के 5:10 बज रहे थे। लोग बिरला हाउस के पीछे के बगीचे में इकट्ठा होना शुरू हो गए थे।
आभा और मनु नाम की अपनी छड़ियों के सहारे चलते हुए, एक सेवक ने उन्हें बताया कि काठियावाड़ के दो भाइयों ने उनसे मिलने का समय मांगा है। गांधीजी ने जवाब दिया, "उनसे कहिए कि वे प्रार्थना के बाद आएं। मैं उनसे मिलूंगा—अगर मैं जीवित रहा तो।" उस दिन उन्होंने दूसरी बार मृत्यु का जिक्र किया था। शाम के पांच बजकर तेरह मिनट हो रहे थे।
गांधी जी प्रार्थना स्थल की ओर चल पड़े, उनके हाथ आभा और मनु के कंधों पर थे। वे हँसते हुए उनसे चुटकुले सुना रहे थे। गुरबचन सिंह, एक सिख सेवक जो आम तौर पर गांधी जी से कुछ कदम आगे चलकर भीड़ में उनके लिए रास्ता बनाते थे, किसी काम में व्यस्त थे और गांधी जी से बारह कदम पीछे चल रहे थे।
दोपहर में आभा द्वारा परोसे गए कच्चे गाजर के भोजन का जिक्र करते हुए, उसने आभा को चिढ़ाते हुए कहा कि उसने उसे पशुओं का भोजन परोसा है।
आभा ने जवाब दिया, 'बा [कस्तूरबा] इसे घोड़े का किराया कहा करती थीं!'
तब गांधी ने कहा, 'क्या यह मेरे लिए महानता की बात नहीं है कि मैं उस चीज का आनंद ले रहा हूँ जिसकी परवाह कोई और नहीं करेगा?' 'बापू, आपकी घड़ी उपेक्षित महसूस कर रही है,' मनु ने मजाक में कहा, 'आपने इसे नजरअंदाज कर दिया।'

'मैं ऐसा क्यों करूं, क्योंकि तुम ही तो मेरे समय-पालक हो?' उसने पलटवार किया।
'लेकिन तुम तो अपने समय-पालों को भी नहीं देखते थे,' मनु ने कहा और गांधीजी जोर से हंस पड़े।
प्रार्थना सभा के लिए बने चबूतरे की ओर जाने वाली सीढ़ियों को साफ करते हुए गांधीजी ने कहा, 'मुझे पंद्रह मिनट की देरी हो गई है। मुझे देर होना बिल्कुल पसंद नहीं। मैं ठीक पाँच बजे प्रार्थना सभा में पहुँचना चाहता हूँ।' शाम के 5:15 बज रहे थे। सारी बातचीत रुक गई; गांधी और उनकी 'छड़ियों' के बीच एक अलिखित समझौता था कि प्रार्थना स्थल में प्रवेश करते ही सारे मजाक और बातचीत बंद हो जाएगी। उनके मन में प्रार्थना के अलावा और कुछ नहीं होना चाहिए।
भीड़ हट गई और एक रास्ता बन गया, जिसके बीच से गांधीजी मंच की ओर बढ़े और बीच-बीच में लोगों का अभिवादन करते रहे। उन्होंने दोनों लड़कियों के कंधों से हाथ हटाए और हाथ जोड़कर अभिवादन करते हुए आगे बढ़े। मंच की ओर दो-तीन कदम ही चले थे कि नीले-भूरे रंग की कमीज पहने एक युवक ने भीड़ को धक्का देते हुए उनका रास्ता रोक दिया।
युवक ने हाथ जोड़कर 'नमस्ते बापू' कहा। मनु ने युवक से रास्ता देने का आग्रह किया; उसने कहा, 'भाई, बापू को नमाज़ के लिए पहले ही देर हो चुकी है...' इससे पहले कि वह अपना वाक्य पूरा कर पाती, युवक ने उसे धक्का देकर रास्ते से हटा दिया। मनु के हाथ में मौजूद माला और थूकदान उसके हाथों से गिर पड़े और वह ज़मीन पर लुढ़क गई। भीड़ में किसी को कुछ समझ आने से पहले ही, उस व्यक्ति ने एक छोटी नोक वाली स्वचालित बंदूक निकाली और गांधी जी पर लगातार तीन गोलियां चलाईं।

गोलियां गांधी जी के सीने को भेद गईं, दो गोलियां उनके अठहत्तर वर्षीय दुर्बल शरीर को भेदते हुए निकल गईं, एक गोली उनके शरीर में ही फंसी रह गई। हत्यारा उनके इतने करीब था कि निकली हुई गोलियों में से एक बाद में गांधी जी के कपड़ों की तहों में मिली। पहली गोली उनके पेट के ऊपरी दाहिने हिस्से में, नाभि से ढाई इंच ऊपर और मध्य रेखा से साढ़े तीन इंच दाहिनी ओर लगी। दूसरी गोली मध्य रेखा से एक इंच दाहिनी ओर सातवीं पसली के बीच की जगह को भेदते हुए निकली, और तीसरी गोली सीने के दाहिनी ओर, निप्पल से एक इंच ऊपर और मध्य रेखा से चार इंच की दूरी पर लगी। पहली और दूसरी गोली सीधे शरीर को भेदकर गांधी जी की पीठ से बाहर निकल गईं; तीसरी गोली उनके फेफड़े में ही फंसी रह गई। जैसे ही पहली गोली लगी, उनका पैर, जो बीच रास्ते में था, नीचे गिर गया। दूसरी और तीसरी गोली लगने के समय भी वे खड़े ही थे। 'राम,' गांधी जी ने आह भरी, और फिर, एक नवजात राष्ट्रपिता, गिर पड़े।
जीवन के अंतिम क्षणों में उनके चेहरे पर आंतरिक शांति झलक रही थी। अपनी अंतिम साँसों में, परम धर्मनिष्ठ हिंदू राम गांधी अपनी बचपन की सहेली रंभा द्वारा सिखाए गए नाम का जाप करते रहे, 'राम.... र..अ...म.......र....अ......म......र.....अ...'। शुक्रवार, 30 जनवरी 1948 की शाम के सत्रह मिनट हो चुके थे। महात्मा गांधी, बापू, राष्ट्रपिता, मोहनदास करमचंद गांधी, अब हमारे बीच नहीं रहे। भीड़ स्तब्ध रह गई। उन्होंने तीन गोलियों की आवाज सुनी, अपने 'बापू' को गिरते देखा और एक आदमी को बंदूक ताने देखा। चारों ओर फुसफुसाहट मच गई, कुछ आवाजें सदमे और गुस्से में ऊंची उठीं, कुछ दबी हुई सिसकियां सुनाई दीं, आक्रोश बढ़ता जा रहा था और स्थिति अशांत होने की कगार पर थी। बिरला परिवार के नौकरों में से एक माली, रघु, बंदूकधारी की ओर दौड़ा और अपनी हंसिया के कुंद

हिस्से से उसके सिर के पिछले हिस्से पर वार किया, फिर उसे पीछे से पकड़ लिया। हत्यारे की कमीज का एक कंधा फट गया। स्वयंसेवक बेजान और खून से लथपथ गांधी को उस कमरे में ले गए, जहां से वे अभी निकले थे। लोगों का गुस्सा बेकाबू होने की कगार पर था। उन्होंने गर्म पानी में शहद मिलाकर कुछ बूंदें पिलाने की कोशिश की, लेकिन वह निगला नहीं जा सका। गांधी जी अब इस दुनिया में नहीं थे।
मैदान में हालात बिगड़ते जा रहे थे; क्रोधित भीड़ हत्यारे को पीट-पीटकर मार डालने की धमकी दे रही थी। किसी ने चिल्लाकर कहा, 'मियां लगता है, मुसलमान ने बापू को मार दिया।' भीड़ ने तुरंत नारा लगाना शुरू कर दिया, 'एक मुसलमान ने बापू को मारा है, मुसलमानों को मार डालो।' 1942 से गांधीजी के निजी सचिव रहे प्यारेलाल नैयर तुरंत मैदान में दौड़े और स्थिति को संभाला। उन्होंने भीड़ को शांत करते हुए कहा, 'शांत हो जाइए, हम बापू की संतान हैं, हम बदला नहीं लेंगे।' स्वयंसेवकों ने हत्यारे को पकड़ लिया, जिसने अपनी पहचान या धर्म का खुलासा नहीं किया, क्योंकि उन्हें पता था कि उसके मुसलमान होने की अफवाह फैल रही थी। हत्यारे को बिरला हाउस के भूतल पर एक कमरे में ले जाया गया और वहीं हिरासत में रखा गया।
गांधी जी की देखभाल के लिए डॉ. बी.पी. भार्गव को तुरंत बुलाया गया। उनकी नियमित देखभाल करने वाली, छोटी कद की सुशीला नायर, जो प्यारेलाल की छोटी बहन थीं, पश्चिमी पाकिस्तान में थीं। पटेल अभी घर ही पहुँचे थे कि उन्हें इस दुखद घटना की सूचना मिली; वे तुरंत वहाँ के लिए रवाना हो गए। वे पहुँचने वाले पहले राजनीतिक नेता थे। अपने शोक में, उन्होंने अपने नेता की बेजान कलाई को छुआ, जिनसे वे एक घंटे पहले ही बात कर रहे थे; उनके चेहरे पर

अचानक आशा की किरण जगी, उन्हें लगा कि वे एक हल्की सी नब्ज़ महसूस कर सकते हैं। डॉ. भार्गव ने नब्ज़ जाँची और आँखों की प्रतिक्रियाएँ देखीं; कोई प्रतिक्रिया नहीं थी। उन्होंने पटेल की ओर देखा और धीरे से कहा, 'दस मिनट पहले ही मृत हो गए।'
आभा और मनु फूट-फूटकर रोने लगीं, लेकिन जल्द ही सबने खुद को संभाला और राम नाम का जाप करने लगे। नेहरू वहाँ पहुँचे और गांधी जी के पास दौड़े। उन्होंने गांधी जी के खून से सने कपड़ों को पकड़ लिया और फूट-फूटकर रोने लगे। पटेल ने उन्हें सांत्वना दी, इस त्रासदी के सामने उनके बीच के मतभेद मानो मिट गए। थोड़ी देर बाद प्यारेलाल से बात करते हुए पटेल ने कहा, 'दूसरे लोग रोकर अपने दुख को आँसुओं में उतार सकते हैं, मैं ऐसा नहीं कर सकता।' लॉर्ड माउंटबेटन, जो उसी दिन मद्रास से लौटे थे, को इस त्रासदी की सूचना मिली और वे तुरंत बिरला हाउस पहुंचे। अंदर जाते समय उन्होंने किसी को कहते सुना, 'एक मुसलमान ने बापू को मार डाला है, मुसलमानों को मार डालो।' सहज ही माउंटबेटन मुड़े और चिल्लाए, 'मूर्ख, सबको पता है कि वह हिंदू थे।' बाद में, जब एक सहायक ने उनसे पूछा कि उन्हें कैसे यकीन है कि वह मुसलमान नहीं थे, तो माउंटबेटन ने जवाब दिया, 'मैं प्रार्थना करता हूं कि वह मुसलमान न हों। अगर किसी मुसलमान ने गांधीजी को मारा है, तो भारत में ऐसा नरसंहार होगा जिसकी मैं कल्पना भी नहीं कर सकता।' माउंटबेटन को एहसास हुआ कि उन्हें ही कमान संभालनी होगी। उन्होंने पटेल और नेहरू को एक तरफ बुलाया और उनसे शांत होने का अनुरोध किया। पटेल ने नेहरू को बताया कि गांधी जी ने उनसे क्या करने को कहा था; दोनों ने एक-दूसरे को गले लगाया और एकजुट होकर काम करने का संकल्प लिया।

पुलिस मौके पर पहुंची और स्थिति को अपने नियंत्रण में ले लिया। जिस जगह गांधी जी गिरे थे, वहां एक छोटा लड़का खून से सनी मिट्टी मुट्ठी भर-भरकर बांट रहा था। गांधी जी का चश्मा और चप्पलें—जो गिरने पर फिसल गई थीं—कभी नहीं मिलीं। पुलिस ने बिरला हाउस को घेर लिया, बगीचे को खाली करा दिया और सुरागों की तलाश शुरू कर दी। पुणे के दिग्गज कांग्रेसी नेता एन.वी. 'अन्ना' गाडगिल ने उस कमरे में झांका जहां हत्यारे को रखा गया था और उसे पहचान लिया। अन्ना की नजर उस पर पड़ते ही उन्होंने मराठी में कहा, 'अरे नथ्या, हे तू काय केला?' 'नथ्या [पुणे के लोग नथुराम को इसी नाम से जानते थे] तुमने क्या किया है?' भारत के नेताओं का सबसे बुरा सपना टूट गया: यह साबित हो गया था कि गांधी जी का हत्यारा एक हिंदू था, दरअसल पुणे का एक हिंदू ब्राह्मण। गोडसे को हिरासत में ले लिया गया और सबसे पहले उसने सिर के पिछले हिस्से पर मामूली चोट और कुछ खरोंचों के लिए चिकित्सा सहायता की मांग की। प्राथमिक उपचार के बाद उन्हें तुगलक रोड पुलिस स्टेशन ले जाया गया, जहां गांधी की हत्या की पहली सूचना रिपोर्ट दर्ज की गई। गांधी जी के सबसे छोटे बेटे देवदास और उनका परिवार बिरला हाउस पहुंचने वाले पहले करीबी रिश्तेदार थे। देवदास ने अपने पिता का बेजान हाथ प्यार से थाम लिया और आंसू बहाते हुए उसे सहलाया। उनके परिवार और उनके भाई-बहनों - हरिलाल, मनीलाल और रामदास - के लिए कोई निजी शोक नहीं था। गांधी जी जीवन और मृत्यु दोनों में राष्ट्र के थे।
माउंटबेटन, नेहरू और पटेल ने बगल के कमरे में अंतिम संस्कार की व्यवस्थाओं पर चर्चा की। माउंटबेटन का सुझाव था कि गांधी जी के शरीर को लेनिन की तरह लाल चौक में संरक्षित किया जाए। प्यारेलाल और देवदास ने इस सुझाव का कड़ा विरोध किया। देवदास

ने दृढ़ता से कहा, 'बापू ऐसा नहीं चाहेंगे। इससे भी बढ़कर, वे चाहेंगे कि उनका अंतिम संस्कार जल्द से जल्द हो जाए।' इसलिए यह तय किया गया कि अंतिम संस्कार अगली शाम यमुना नदी के किनारे एक स्थान पर होगा। सशस्त्र बल व्यवस्थाओं का प्रबंधन करेंगे और माउंटबेटन उनका निरीक्षण करेंगे। देवदास, अन्य पुरुष सदस्यों की मदद से, शव को स्नान के लिए ले गए। खून से सने कपड़े उतारते समय, उन्हें गांधी जी के शरीर से आर-पार हुई एक गोली और उनके ऊपरी शरीर पर लिपटे कपड़े की तहों में एक खाली कारतूस मिला। तीनों प्रवेश घाव छोटे थे और उनसे कम रक्तस्राव हुआ था; उनके शरीर से आर-पार हुई दो गोलियों ने मांस के बड़े-बड़े टुकड़े फाड़ दिए थे। शव को स्नान कराने के बाद, डॉक्टर ने गोली के घावों को बंद कर दिया। इसके बाद गांधी जी के शरीर को नए कपड़ों से लपेटा गया।
डॉक्टर की मृत्यु रिपोर्ट में मृत्यु का कारण बताया गया, 'मृत्यु... पिस्तौल से चलाई गई गोलियों से लगी चोटों के कारण सदमे और आंतरिक रक्तस्राव से हुई।' इसी बीच, गोबर, मिट्टी और पानी के मिश्रण से फर्श पर एक चौकोर गड्ढा बनाया गया, जिस पर खादी बिछाई गई। जब शव को बाहर लाया गया, तो उस पर शॉल बिछाकर गर्दन तक खींच दिया गया, केवल चेहरा खुला छोड़ दिया गया। देवदास ने शॉल को पीछे हटाकर सीना खुला छोड़ दिया; उन्होंने कहा, 'बापू के सीने पर लगे गोली के घाव एक अहिंसक योद्धा को दिए गए वीरता पदक हैं, दुनिया को इन्हें देखना चाहिए।'
ऑल इंडिया रेडियो के शाम छह बजे के समाचार बुलेटिन की शुरुआत इस घोषणा से हुई, 'आज शाम एक हिंदू ब्राह्मण ने राष्ट्रपिता महात्मा गांधी को गोली मार दी। गांधीजी अब हमारे बीच नहीं रहे।' यह खबर दुनिया के कोने-कोने तक पहुँचते ही पूरा देश थम सा गया।

जहाँ एक ओर पूरा देश शोक में डूबा था, वहीं कुछ लोग मिठाई बाँटकर खुशी मना रहे थे। आरएसएस और हिंदू महासभा की शाखाओं में उत्सव का माहौल था। दीपक जलाए गए, फूल बरसाए गए और पटाखे फोड़े गए। संघी पिछले एक दशक से जो नहीं कर पाए थे, वह उनके ही एक कार्यकर्ता ने कर दिखाया। आरएसएस और हिंदू महासभा की कई शाखाओं को पहले ही सूचना मिल चुकी थी और वे जश्न मनाने के लिए तैयार थीं। अलवर में गांधीजी की हत्या की घोषणा करने वाला एक पर्चा घटना से पाँच घंटे पहले ही बाँट दिया गया था।
इसी बीच, अल्बुकर्क रोड स्थित बिरला हाउस की ओर जाने वाली सड़कें जाम हो रही थीं। वीआईपी, कैबिनेट मंत्री, कांग्रेस नेता, राजनयिक, वरिष्ठ अधिकारी और अन्य लोग गांधी जी के अंतिम दर्शन के लिए आम लोगों के साथ जगह पाने के लिए होड़ कर रहे थे। पुलिस को भीड़ को नियंत्रित करने और जांच करने में कठिनाई हो रही थी। वरिष्ठ अधिकारियों ने देवदास और प्यारेलाल से शव को ऐसी जगह ले जाने का अनुरोध किया जहां से लोग उसे सड़क से देख सकें। बिरला परिवार से परामर्श किया गया और यह तय किया गया कि शव को पहली मंजिल की छत पर सड़क की ओर मुख करके एक ऊंचे चबूतरे पर रखा जाएगा। अस्थायी चबूतरे को थोड़ा झुकाया गया ताकि शव सभी को दिखाई दे। जब गांधी जी के शव को वहां ले जाया गया, तो भीड़ में सन्नाटा छा गया। गांधी जी के दर्शन ने लोगों को शांत कर दिया था। उसी रात नेहरू ने ऑल इंडिया रेडियो के स्टूडियो से राष्ट्र को संबोधित किया। शोक और अत्यधिक उदासी से भरी आवाज में उन्होंने कहा, 'मित्रों... हमारे जीवन से प्रकाश चला गया है और हर तरफ अंधेरा छा गया है और मुझे ठीक से नहीं पता कि मैं आपको क्या बताऊं और कैसे बताऊं।' हमारे प्रिय नेता, जिन्हें हम बापू कहते थे, राष्ट्रपिता, अब हमारे बीच नहीं रहे... हम उन्हें फिर कभी

नहीं देख पाएंगे, जैसे हम इतने वर्षों से देखते आ रहे थे। हम अब उनसे सलाह लेने और सांत्वना पाने के लिए उनके पास नहीं जाएंगे। मैंने कहा था, प्रकाश बुझ गया है, लेकिन मैं गलत था। क्योंकि इस देश में जो प्रकाश चमका, वह कोई साधारण प्रकाश नहीं था। जिस प्रकाश ने इतने वर्षों तक इस देश को रोशन किया है, वह आने वाले कई वर्षों तक इस देश को रोशन करता रहेगा और हज़ार साल बाद भी वह प्रकाश इस देश में दिखाई देगा और दुनिया उसे देखेगी और अनगिनत दिलों को सुकून देगी। क्योंकि वह प्रकाश जीवंत सत्य का प्रतीक था, और शाश्वत पुरुष अपने शाश्वत सत्य के साथ हमारे साथ थे, हमें सही मार्ग की याद दिलाते हुए, हमें गलतियों से बचाते हुए, इस प्राचीन देश को स्वतंत्रता की ओर ले जा रहे थे।
आधी रात को शव को छत से नीचे लाया गया; उसे स्नान कराया गया और चंदन का लेप लगाया गया, फिर फूलों से ढककर कमरे के बीचोंबीच रखा गया। अगली सुबह 11:30 बजे तिरंगे में लिपटे गांधी जी के शव को तोप गाड़ी पर रखा गया। डॉ. सुशीला नायर अंतिम संस्कार जुलूस शुरू होने से ठीक पहले वहाँ पहुँचीं। उन्होंने नम आँखों से गांधी जी को अंतिम विदाई दी, जिनकी देखभाल की ज़िम्मेदारी पिछले कुछ वर्षों से उन्हीं पर थी। शवयात्रा देवदास और उनके बड़े भाई रामदास के साथ शुरू हुई, जो मध्य भारत के नागपुर से तुरंत पहुँचे थे। नेहरू, पटेल और अन्य मंत्रिमंडल मंत्री तोप गाड़ी पर रखे शव के चारों ओर खड़े रहे। अन्य लोग उनके साथ-साथ चल रहे थे।
सशस्त्र बलों की तीनों शाखाओं के दो सौ सैनिकों ने हथियार ढोने वाले वाहन को खींचा। भारतीय वायु सेना के तीन विमानों ने शवयात्रा के ऊपर से उड़ान भरी और फूल बरसाए। बिरला हाउस के पास से गुजर रही भीड़ उफनती नदी जैसी लग रही थी, वहीं रास्ते में

खड़े लोग मानवता के सागर के समान थे। एक अनुमान के अनुसार, अंतिम संस्कार में शामिल लोगों की संख्या दस लाख से अधिक थी। लोग रास्ते में कतार बनाकर खड़े थे, इमारतों की बालकनियों और छतों पर चढ़े हुए थे। कुछ लोग पेड़ों पर चढ़ गए और कुछ साहसी लोगों ने बिजली और टेलीफोन के खंभों पर शरण ली। कई लोग युद्ध स्मारक पर चढ़ गए, तो कुछ किंग जॉर्ज पंचम की प्रतिमा के चंदवा के खंभों से लिपट गए। नई दिल्ली की सड़कों से गुजरते हुए शवयात्रा शाम 4:20 बजे यमुना नदी के किनारे स्थित श्मशान घाट पहुंची। लोग सुबह से ही वहां इकट्ठा होने लगे थे।
उस भीड़ में, गांधी के सबसे बड़े बेटे हरिलाल*, जो एक विमुख व्यक्ति थे, अपने पिता के पार्थिव शरीर के पास जाने की कोशिश कर रहे थे। सबसे बड़े बेटे होने के नाते अंतिम संस्कार करना उनका कर्तव्य था, लेकिन फटे-पुराने कपड़ों में होने के कारण कोई भी उन्हें चिता के पास नहीं आने दे रहा था। यह विशेषाधिकार केवल अभिजात वर्ग के लिए था। मृत्यु के बाद, गांधी उन आम लोगों की पहुँच से बाहर हो गए थे, जिनके साथ वे जीवन भर जुड़े रहे थे। शाम 4:30 बजे पार्थिव शरीर को 600 किलो चंदन, 160 किलो घी, 80 किलो अगरबत्ती, 40 किलो नारियल और 15 किलो कपूर से बनी चिता पर रखा गया। यह विडंबना ही थी कि स्वेच्छा से निर्धन रहे गांधीजी को राजा के समान अंतिम संस्कार दिया जा रहा था। अंत में तिरंगा हटाया गया; देवदास ने गंगाजल से पार्थिव शरीर पर छिड़काव किया, जो शुद्धि का अंतिम संस्कार था, और फिर उस पर चंदन की लकड़ियाँ रखीं। चिता को उनके बड़े भाई रामदास ने प्रज्वलित किया, जबकि सबसे बड़े पुत्र हरिलाल दूर से देख रहे थे। गांधीजी के दूसरे पुत्र मनीलाल दक्षिण अफ्रीका में रहते थे और अंतिम संस्कार में शामिल नहीं हो सके।

आग की लपटें तेज होती गईं और 'महात्मा गांधी अमर हो गए' के नारे भी गूंजते रहे। कुछ लोग रात भर जागते रहे, जबकि उनका दल बिरला हाउस लौट गया। आखिरकार हरिलाल को अपने पिता की चिता के पास जाने का मौका मिला। उन्होंने अपने पूरे जीवन गांधीजी से मतभेद रखे थे, फिर भी उन्हें उनकी चिता पर शोक व्यक्त करने की तीव्र इच्छा हुई।
गांधी जी की हत्या के चौबीस घंटे बाद लोगों ने सवाल खड़े करने शुरू किए। यह कैसे हो सकता है? इतना जघन्य कृत्य किसने किया होगा? गांधी जी को ही क्यों निशाना बनाया गया? क्या इसे रोका नहीं जा सकता था? पुलिस क्या कर रही थी? लेकिन गांधी जी की हत्या की वजह बनने वाली घटनाएं बहुत पहले ही शुरू हो चुकी थीं। भारत में उन पर जानलेवा हमले का पहला दस्तावेजी प्रमाण 1934 में पुणे में मिला था, और उसके बाद चार और हमले हुए, जिनका पुणे से कुछ न कुछ संबंध था। इनमें से तीन हमलों में आप्टे-गोडसे गिरोह, जो अंततः उनके हत्यारे बने, की संलिप्तता स्पष्ट रूप से साबित हो चुकी थी। आखिरी असफल हमला 20 जनवरी 1948 को, गांधी जी की हत्या से ठीक दस दिन पहले, बिड़ला हाउस में हुआ था।

— — — — — — — — —

हरिलाल दक्षिण अफ्रीका में अपने पिता के बहुत करीब थे। नागरिक अधिकारों के लिए सत्याग्रह के दौरान
उस देश में उन्हें 'छोटा गांधी', 'गांधी जूनियर' के नाम से जाना जाने लगा था। वे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने इसका प्रयोग किया। वहाँ उन्होंने विरोध के रूप में उपवास किया जब उन्होंने अपने जेलरों को उनके साथ मानवीय व्यवहार करने के लिए मजबूर किया। लेकिन

फिर उसका अपने पिता से झगड़ा हुआ और वह उन्हें छोड़कर चला गया। उनके बीच के मुद्दों में से एक हरिलाल की इच्छा थी कि...
आगे पढ़ाई करना जबकि गांधीजी चाहते थे कि वह उनकी तरह एक कार्यकर्ता बने। एक और मुद्दा था
हरिलाल का विवाह गुलाब से हुआ; गांधी जी का मानना था कि दोनों विवाह के लिए बहुत छोटे थे। हरिलाल की कई शादियाँ हुईं। व्यवसाय स्थापित करने के प्रयास विफल रहे। इन्फ्लूएंजा महामारी में उनकी पत्नी गुलाब की मृत्यु हो गई और वे
उसे अपने बच्चों को अपने माता-पिता के घर में रहने के लिए भेजने के लिए मजबूर होना पड़ा। कुछ ही समय बाद, वह कंगाल हो गया। वह कुछ मुसलमानों द्वारा उन्हें संरक्षण दिया गया था, जिनका इरादा गांधी को शर्मनाक स्थिति में डालने के लिए उनका उपयोग करना था। उन्होंने हरिलाल की शराब पीने की आदतों को बढ़ावा देकर और उनका खर्च उठाकर तथा अन्य प्रकार से उसकी रुचियों को अपने वश में कर लिया।
उन्होंने उसकी बुराइयों को उजागर किया और उसका विश्वास जीतने के बाद, उसे इस्लाम धर्म अपनाने के लिए राजी कर लिया। काफी समय बाद...
सार्वजनिक रूप से धर्म परिवर्तन, अब्दुल्ला गांधी का, हरिलाल का मुस्लिम नाम, संरक्षकों ने सार्वजनिक रूप से गांधी को आमंत्रित किया
अपने बेटे के अपनाए हुए धर्म को स्वीकार करने के लिए। गांधी जी ने अपने पूरे जीवन में हमेशा बहुत दृढ़ विश्वास व्यक्त किया था।
धर्मांतरण के विरुद्ध विचार। उन्होंने अपने बेटे के धर्मांतरण की आलोचना की और इसे महत्वहीन बताया।

ऐसा कुछ जो इस्लाम को गौरव न दिलाए। यह महसूस करते हुए कि वे गांधी को अपमानित करने में असफल रहे,
निहित स्वार्थों ने हरिलाल का साथ छोड़ दिया। अवसाद के दौरे में हरिलाल ने शराब का अत्यधिक सेवन किया और
मद्रास पुलिस ने उसे सार्वजनिक उपद्रव करने के आरोप में गिरफ्तार किया था। जब उसकी पहचान उजागर हुई,
जब हरिलाल की स्थापना हुई, तो गांधीजी को इसकी सूचना दी गई। गांधीजी ने सार्वजनिक रूप से हरिलाल को त्याग दिया; निजी तौर पर उन्होंने
अपने पहले बेटे को बर्बादी से बचाने में असमर्थ रहने पर उन्होंने अपनी हार व्यक्त की।
2

हत्यारे

'Bachche hain, abhi yeh samajhte nahin hai. Maroonga to yaad karenge ke boodha theek kehta tha.'
'वे बच्चे हैं। वे अभी स्थिति को नहीं समझते। जब मैं मर जाऊंगा, तब उन्हें याद आएगा कि उस बूढ़े आदमी ने जो कहा था वह सही था।'
– MAHATMA GANDHI
20 जनवरी 1948 को

गांधी की हत्या करने वाले गिरोह के सभी सदस्य, स्वभाव से अत्यंत भिन्न होते हुए भी, एक समान विशेषता रखते थे—वे सभी कट्टरपंथी थे। एक विकृत स्त्रीद्वेषी; एक आकर्षक स्त्री-प्रेमी; एक अनाथ गली का बच्चा जो बड़ा होकर कट्टरपंथी बन गया; एक क्रांतिकारी जो सहयोगी बन गया; एक धूर्त हथियार व्यापारी और उसका नौकर; बदला लेने की चाहत रखने वाला एक बेघर शरणार्थी; एक नायक-पूजा करने वाला छोटा भाई; एक डॉक्टर जो जीवन बचाने के बजाय हत्या करने में विश्वास रखता था। हथियार एक बंदूक थी, जिसने तीन महाद्वीपों की यात्रा की, अंततः गांधी के हत्यारे के हाथों में पहुँची। हत्यारों के गिरोह के सदस्य थे नारायण दत्तात्रेय आप्टे, नाथूराम विनायक गोडसे, विष्णु रामकृष्ण करकरे, विनायक दामोदर सावरकर, दिगंबर रामचन्द्र बैज, शंकर किस्तैया, मदनलाल कश्मीरीलाल पाहवा, गोपाल विनायक गोडसे और डॉ. दत्तात्रेय सदाशिव परचुरे।
चौदह वर्षों तक हिंदू महासभा गांधी जी की हत्या की साजिश रचती रही, और पुणे स्थित नारायण आप्टे और नाथूराम गोडसे की इनमें से अधिकांश प्रयासों में संलिप्तता दर्ज की गई है। इन वर्षों के

अधिकांश समय तक नारायण आप्टे गिरोह के नेता थे। गांधी जी के भावी हत्यारे नाथूराम गोडसे भी गिरोह के एक समर्पित सदस्य थे; एक आदर्शवादी अधीनस्थ होने के नाते, उन्होंने आप्टे के साथ घनिष्ठ संबंध बना लिए थे।
गोडसे का जन्म एक मध्यमवर्गीय चितपावन ब्राह्मण परिवार में हुआ था। चितपावन शब्द का शाब्दिक अर्थ है 'पवित्र अग्नि से शुद्ध किया हुआ'; माना जाता है कि चितपावन शुद्ध आर्य वंश के हैं। एक अन्य मत यह है कि वे मिस्र की लुप्त जनजातियों में से एक के यहूदी वंशज हैं। कई प्रख्यात चितपावन ब्राह्मणों में गांधी के 'राजनीतिक गुरु' गोपाल कृष्ण गोखले और कांग्रेस के उग्रवादी नेता 'लोकमान्य' बाल गंगाधर तिलक शामिल थे।
गोडसे परिवार पश्चिमी महाराष्ट्र के उक्सान नामक एक छोटे से गाँव से आया था। उक्सान, बॉम्बे-पुणे लाइन पर स्थित कामशेत रेलवे स्टेशन से लगभग दस किलोमीटर दूर है। नाथूराम के पिता विनायक गोडसे सरकारी भारतीय डाक सेवा में एक छोटे अधिकारी के रूप में कार्यरत थे। विनायक का विवाह 1892 में चितपावन ब्राह्मण समुदाय की दस वर्षीय लड़की से हुआ था। उनके पहले तीन पुत्र, जो एक के बाद एक पैदा हुए, बचपन में ही मर गए। केवल उनकी दूसरी संतान, एक बेटी ही जीवित रही। परिवार के बुजुर्गों ने एक ज्योतिषी से सलाह ली, जिसने कहा कि परिवार पर एक श्राप का बुरा प्रभाव है, इसलिए कोई भी पुत्र संतान जीवित नहीं रहेगी। इस श्राप को दूर करने का एकमात्र तरीका भाग्य को धोखा देना था: उन्हें अपनी अगली संतान को लड़की के रूप में पालना होगा। विनायक और उनकी पत्नी ने देवताओं को प्रसन्न करने और अपने अजन्मे पुत्रों की रक्षा के लिए अनुष्ठान किए। उन्होंने शपथ ली कि जन्म के समय वे शिशु की बाईं नाक छिदवाएंगे और उसे नथ

पहनाएंगे, जो नवजात बच्चियों के लिए एक आम प्रथा थी। 19 मई 1910 को इस दंपत्ति के घर एक पुत्र का जन्म हुआ। जन्म के समय उसका नाम रामचंद्र रखा गया, जिसे बाद में छोटा करके 'राम' कर दिया गया। वादे के मुताबिक, पुत्र की बाईं नाक तुरंत छिदवा दी गई और उसे नथ पहनाई गई। इस प्रकार पुत्र को नाथुराम कहा जाने लगा, जिसका अर्थ है 'नथ पहनने वाला राम'। यद्यपि बाद में नथ उतार दी गई, लेकिन बाद में सभी पुत्र संतानों के जीवित रहने के कारण यह नाम बना रहा। रामचंद्र जीवन भर नाथुराम ही कहलाते रहे। नाथुराम के बाद दत्तात्रेय, गोपाल और गोविंद का जन्म हुआ और एक पुत्री का भी। एक साधारण डाक कर्मचारी, विनायक अपने चार बेटों और दो बेटियों के परिवार का ठीक से भरण-पोषण नहीं कर पाता था, और परिवार में हमेशा राशन और अन्य आवश्यक वस्तुओं की कमी रहती थी। डाक विभाग के कर्मचारियों का अक्सर तबादला होता रहता था, इसलिए विनायक ने अपने बच्चों के जीवन के प्रारंभिक वर्षों में परिवार से दूर कई साल बिताए। नाथूराम का बचपन अपने पिता के सुरक्षात्मक स्पर्श के बिना ही बीता। लड़की होने के कारण उसे लगातार चिढ़ाया जाता था और मानसिक आघात पहुँचाया जाता था। छोटा नाथूराम जल्द ही एक उदास और अकेला व्यक्ति बन गया, जो सपनों की दुनिया में खोया रहता था। जल्द ही उसे 'अलग' करार दिया गया। उन दिनों के रिवाज़ के अनुसार, सामान्य से भिन्न व्यक्तित्व वाले लोगों को या तो 'मूर्ख' कहा जाता था या, यदि वे भाग्यशाली होते, तो उन्हें दैवीय शक्तियों वाला माना जाता था; नाथूराम बाद वाली श्रेणी में आता था। गोडसे परिवार का मानना था कि नाथूराम को अलौकिक शक्तियों का आशीर्वाद प्राप्त था। उनका मानना था कि लालटेन की कालिख से तांबे की थाली पर बनाए गए काले धब्बे को देखने पर वह समाधि में चला जाता था; उनका मानना था कि वह आकृतियाँ देखता था और दैवीय

कांग्रेस और मुसलमानों के विरुद्ध थीं। नाथुराम के लिए, जो हर चीज में असफल रहे थे, यह अपनी पहचान बनाने का एक अवसर था।
नाथुराम की निष्ठा से प्रभावित होकर सावरकर ने उन्हें अपना सचिव नियुक्त किया। नाथुराम ने सावरकर को सुनकर अंग्रेजी की बुनियादी बातें सीखीं और उनकी बोलने की शैली की नकल करने लगे। जल्द ही वे अंग्रेजी लिखने और बोलने में निपुण हो गए।
1931 में, विनायक गोडसे ने डाक विभाग से सेवानिवृत्ति ले ली। उन्होंने फैसला किया कि उन्हें एक छोटे शहर में बसना होगा जहाँ उनकी मामूली पेंशन उनके बड़े परिवार की जरूरतों को पूरा करने के लिए पर्याप्त होगी। गोडसे परिवार दक्षिण-पश्चिम महाराष्ट्र के छोटे से शहर सांगली में बस गया। अपने पिता की पेंशन में वृद्धि करने के लिए, नाथुराम ने सिलाई सीखी और एक दुकान खोली। यह भी पर्याप्त नहीं था, इसलिए परिवार की आय बढ़ाने के लिए उन्होंने फल बेचना शुरू कर दिया। इसी दौरान, ब्रिटिश भारत के भौगोलिक केंद्र, महाराष्ट्र के विदर्भ क्षेत्र में स्थित नागपुर में कुछ उच्च जाति के हिंदू एकजुट हुए और उन्होंने एक हिंदू संगठन की स्थापना की। यह आरएसएस और हिंदू महासभा का पूर्ववर्ती था। इसका उद्देश्य एक उग्रवादी हिंदू संगठन बनाना था, जो हिंदू वर्चस्व की आड़ में उच्च जाति के हिंदू वर्चस्व का प्रचार करे। इसके सभी संस्थापक महाराष्ट्रीयन ब्राह्मण थे। उन्होंने सभी भारतीयों को एकजुट करने की गांधीवादी नीति, मुसलमानों के लिए समान भागीदारी और ब्राह्मणों के लिए पूरी तरह से घृणित नीति, अछूतों को हिंदू समाज के शेष भाग के समान स्तर पर लाने के उद्देश्य से की गई समानता का विरोध किया। गांधी उनके प्रमुख शत्रु थे; उस समय गांधी के प्रभाव में चल रही कांग्रेस से भी इस समूह को घृणा थी। उन्होंने हिंदू उच्च जातियों से

गांधी के अहिंसा के मार्ग को त्यागकर हथियार उठाने का आह्वान किया। हिंदू संगठन के संस्थापकों पर सावरकर का गहरा प्रभाव था और संगठन की स्थापना से पहले उन्होंने रत्नागिरी में उनसे विचार-विमर्श किया था। वास्तव में, ऐसे संगठन का विचार सर्वप्रथम सावरकर ने ही रखा था।
जब संगठन की स्थापना की चर्चा चल रही थी, तब नाथुराम रत्नागिरी में अपने स्वामी की सेवा कर रहे थे। वे जानते थे कि सावरकर ने इस उग्रवादी हिंदू दक्षिणपंथी संगठन के गठन को आशीर्वाद दिया था। इसलिए, जब सांगली में संगठन की एक शाखा खोली गई, तो नाथुराम सबसे पहले उसमें शामिल हुए और जल्द ही सचिव नियुक्त हो गए। वे अब बीस वर्ष के थे और उनके माता-पिता चाहते थे कि उनकी शादी उनकी जाति की लड़की से हो। हालांकि, नाथुराम अभी भी बचपन में लड़की के रूप में बिताए गए सदमे से उबर नहीं पाए थे। अब उनके मन में विपरीत लिंग के प्रति घोर अरुचि पैदा हो गई थी और उन्होंने विवाह से साफ इनकार कर दिया।
1937 में, अंग्रेजों ने भारतीयों को अपने देश के शासन में आंशिक भागीदारी की अनुमति दी। कुछ प्रांतों में चुनाव हुए और कांग्रेस के नेतृत्व वाली प्रांतीय सरकारों ने सीमित शक्तियों के साथ शपथ ली। बंबई प्रांत ने अपनी पहली कांग्रेस सरकार चुनी, और उनका पहला कार्य सावरकर पर अंग्रेजों द्वारा लगाए गए प्रतिबंधों को हटाना था। अंततः स्वतंत्र होकर, उन्होंने बंबई जाने का निर्णय लिया। हिंदू संगठन और अन्य सावरकर समर्थकों ने मिलकर उन्हें महाराष्ट्र के दौरे पर ले गए। उन्होंने विभिन्न कस्बों और शहरों में व्याख्यान दिए; जिन स्थानों का उन्होंने दौरा किया उनमें से एक सांगली भी था। स्थानीय शाखा के सचिव के रूप में, नाथूराम सांगली में सावरकर के प्रवास की सभी

व्यवस्थाओं के प्रभारी थे। रत्नागिरी में उनसे घनिष्ठ परिचय के कारण सावरकर भी उन पर भरोसा करते थे। नाथूराम सावरकर के कर्मचारियों में शामिल हो गए और दौरे के बाकी हिस्सों में उनके साथ रहे। नाथूराम ने महसूस किया कि सांगली में रहना उनके विकास को अवरुद्ध कर रहा है। उन्हें बंबई और सावरकर के करीब एक अधिक केंद्रीय स्थान पर स्थानांतरित होना पड़ा; उन्होंने सांगली में अपनी दुकान बंद कर दी और पुणे चले गए। हालांकि उन्होंने वहां एक दर्जी की दुकान खोली थी, लेकिन उनका अधिकांश समय हिंदू संगठन की गतिविधियों में व्यतीत होता था। सावरकर की रिहाई के बाद, हिंदू संगठन ने अपने राजनीतिक कार्यक्रमों को पूरी गंभीरता से शुरू कर दिया था। आश्चर्य की बात नहीं है कि इनमें से कोई भी कार्यक्रम भारत की स्वतंत्रता के लिए नहीं था, यहां तक कि ब्रिटिश उपनिवेशवादियों के खिलाफ भी नहीं। भारत में हिंदू संगठन के केवल दो ही शत्रु थे: पहला गांधी और दूसरा भारतीय मुसलमान।
सावरकर के नेतृत्व में हिंदू संगठन हिंदू महासभा में परिवर्तित हो गया। उनका उद्देश्य एक हिंदू राष्ट्र था, जिसमें मुसलमानों को, यदि वे अस्तित्व में रहे, तो द्वितीय श्रेणी के नागरिक माना जाता। नाथूराम अब हिंदू महासभा के सदस्य के रूप में चौबीसों घंटे काम करते थे। रत्नागिरी में प्राप्त प्रशिक्षण उनके लिए बहुत उपयोगी साबित हुआ। वे हिंदू वर्चस्व के प्रबल प्रचारक बन गए। 1938 में, महासभा ने हैदराबाद की रियासत पर चढ़ाई की, जिस पर निज़ाम और उनके रजाकारों का शासन था, जो राज्य में रहने वाले हिंदुओं को आतंकित करने वाले गुंडों का एक क्रूर गिरोह था। नाथूराम को मार्च करने वालों के पहले दल का नेतृत्व सौंपा गया; उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और एक साल के

लिए जेल में डाल दिया गया। जब तक वे रिहा हुए, द्वितीय विश्व युद्ध छिड़ चुका था। प्रमुख ब्रिटिश उपनिवेश होने के नाते, भारत भी युद्ध की चपेट में आ गया।
कांग्रेस ने ब्रिटिश युद्ध प्रयासों में सहयोग करने से इनकार कर दिया; जिन्ना के नेतृत्व वाली मुस्लिम लीग और सावरकर के नेतृत्व वाली हिंदू महासभा ने अंग्रेजों के लिए काम करने का फैसला किया। दोनों के स्वार्थी इरादे थे: जिन्ना को लगा कि युद्ध के बाद उन्हें और उनकी पार्टी को विशेष लाभ मिल जाएगा; सावरकर को लगा कि यह अंग्रेजों के करीब आने का उनका अवसर है। सभी जानते थे कि भारत की स्वतंत्रता निश्चित थी। गांधी और भारत की जनता ने अपना काम कर दिया था, अब स्वतंत्रता का सबसे बड़ा हिस्सा हथियाने की होड़ लगी थी; कांग्रेस ने पहले ही अपना हिस्सा सुनिश्चित कर लिया था।
जेल से रिहा होने के बाद नाथुराम पुणे लौट आए। हिंदू महासभा में उनकी गतिविधियाँ बढ़ गई थीं, क्योंकि सावरकर एक ऐसी पार्टी को राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित करने का प्रयास कर रहे थे जिसकी पहचान और समर्थन केवल क्षेत्रीय स्तर पर और महाराष्ट्र के ब्राह्मण समुदाय के भीतर ही सीमित था। 1940 में, नाथुराम की मुलाकात एक ऐसे व्यक्ति से हुई जिनसे उनका जीवन भर का रिश्ता बनने वाला था। नारायण डी. आप्टे अहमदनगर से लौटे थे, जहाँ वे महासभा के लिए काम कर रहे थे। दोनों युवा एक-दूसरे से बिलकुल अलग थे, लेकिन जैसा कि अक्सर होता है, उनके बीच तुरंत एक ऐसा रिश्ता बन गया जो जीवन भर कायम रहा। 1942 में, कांग्रेस नेताओं और कार्यकर्ताओं की बड़े पैमाने पर गिरफ्तारी से पैदा हुए खालीपन को भरने के लिए, सावरकर ने हिंदू राष्ट्र दल बनाने का विचार रखा, जिसके सदस्य हिंदू महासभा के मुख्य कार्यकर्ता

होंगे। नाथुराम गोडसे और नारायण आप्टे दल में शामिल हो गए। सावरकर की तमाम बड़ी योजनाओं के बावजूद, दल हिंदू महासभा का एक छोटा रूप बनकर रह गया। अपने चरम पर दल के सदस्यों की संख्या पुणे तक ही सीमित थी और इसमें 150 से अधिक सदस्य नहीं थे। इसके सदस्यों को मार्शल आर्ट का प्रशिक्षण दिया जाता था और उन्हें सावरकर के असहिष्णुता और कट्टरता के दर्शन में दीक्षित किया जाता था। इसकी एकमात्र प्रत्यक्ष गतिविधि कांग्रेस की सभाओं को बाधित करना, कांग्रेस नेताओं को परेशान करना और गांधी जी का पीछा करना थी। नाथूराम और आप्टे इन गतिविधियों में अग्रणी थे। 1944 में नाथुराम ने आप्टे के सामने हिंदू महासभा और दल के आदर्शों को बढ़ावा देने वाला एक समाचार पत्र शुरू करने का विचार रखा। महाराष्ट्र में हिंदू नव वर्ष गुड़ी पड़वा के दिन अग्रानी का पहला अंक प्रकाशित हुआ। इसके पहले पृष्ठ पर, और बाद के सभी अंकों की तरह, सावरकर का चित्र था। नाथुराम संपादक थे और आप्टे प्रकाशक। इस समाचार पत्र का शुभारंभ नाथुराम के धर्मपिता सावरकर के आशीर्वाद से हुआ, जिन्होंने दोनों मित्रों को उनके इस उद्यम के लिए 15,000 रुपये का दान दिया था।
भारत उथल-पुथल में था: स्वतंत्रता अंततः उसकी मुट्ठी में थी, लेकिन क्षितिज पर संकट के बादल मंडरा रहे थे। मुस्लिम लीग ने एक स्वतंत्र मुस्लिम मातृभूमि पर जोर देते हुए कड़ा रुख अपनाया था। गांधी और कांग्रेस भारत के किसी भी विभाजन के घोर विरोधी थे। लेकिन अंग्रेज अपने युद्धकालीन सहयोगियों को पुरस्कृत करने के लिए उत्सुक थे। इससे उपमहाद्वीप के हिंदुओं और मुसलमानों को विभाजित करने और परिणामस्वरूप उत्पन्न अशांति का लाभ उठाकर उपनिवेश पर अपना शासन लंबा चलाने का उनका उद्देश्य पूरा हुआ। हिंदू महासभा ने इस स्थिति का लाभ उठाने का निर्णय

लिया। मुसलमानों के अपनी मातृभूमि में चले जाने से एक शुद्ध हिंदू राष्ट्र का उनका सपना पूरा हो जाएगा। विभाजन की स्थिति में, वे भारतीय मुसलमानों को सामूहिक रूप से पाकिस्तान में प्रवास करने के लिए 'प्रोत्साहित' करेंगे।
नाथुराम और आप्टे, जो अब एक दूसरे से अविभाज्य हो चुके थे, इन गतिविधियों में सबसे आगे थे। नाथुराम ने अधिक गतिशील और बहिर्मुखी आप्टे के नेतृत्व को स्वीकार कर लिया था। उनका संयुक्त उद्यम अग्रनी बड़ी मुश्किल से चल रहा था। हालांकि, सावरकर ने नकद सहायता देकर उन्हें सहारा दिया। बॉम्बे प्रांतीय सरकार द्वारा प्रेस अधिनियम के उल्लंघन के लिए अग्रनी पर लगातार मुकदमे चलाए गए। अखबार की भाषा और विषयवस्तु, इसकी शुरुआत से लेकर 1947 में बंद होने तक, अत्यंत उग्र थी। इसे नोटिस भेजे गए, जुर्माना लगाया गया और केवल नकद जमा राशि जमा करने पर ही इसे जारी रखने की अनुमति दी गई, जिसे समय-समय पर बढ़ाया जाता रहा। इस निरंतर मुकदमेबाजी ने नाथुराम के मन में कांग्रेस और उसके नेताओं के प्रति आक्रोश को और बढ़ा दिया। अंततः, सरकार द्वारा इसे बंद करने के आदेश जारी करने से ठीक पहले, आप्टे और गोडसे ने अखबार का नाम बदलकर हिंदू राष्ट्र कर दिया।
निजी जीवन की बात करें तो, नाथुराम अपने माता-पिता द्वारा लाए गए हर विवाह प्रस्ताव को ठुकराते रहे। उनकी एकमात्र आदत कॉफी की लत थी। आप्टे और वे पुणे के चायघरों में अक्सर जाया करते थे, जिनमें से एक उनका पसंदीदा अड्डा स्टेशन का रेस्तरां था। अपने पूरे जीवन में नाथुराम केवल पुरुषों के साथ ही संबंध और घनिष्ठ बंधन बना पाए। वे गतिशील और बहिर्मुखी व्यक्तित्व वाले पुरुषों की ओर तुरंत आकर्षित हो जाते थे; इस प्रकार उन्होंने

अपने प्रारंभिक वर्षों में सावरकर के साथ एक नायक-शिष्य संबंध स्थापित किया और फिर बहिर्मुखी और जोशीले नारायण आप्टे के प्रति अधीनता का बंधन बना लिया, जो वास्तव में उनसे एक वर्ष छोटे थे। वे महात्मा गांधी से भी उतनी ही शिद्दत से घृणा करते थे, और उनकी घोर घृणा का निशाना वही थे।
अस्वीकृति और असफलता का भय नाथूराम को लगातार सताता रहता था। गांधीजी को मारने में कई बार असफल होने के बाद, विशेषकर 20 जनवरी 1948 के बाद, नाथूराम ने अपने आलोचकों को गलत साबित करने और कम से कम एक बार सफल होने की हताशा में गांधीजी के जीवन पर अंतिम हमले का नेतृत्व किया। जब उसने अंततः 30 जनवरी 1948 को गांधीजी पर गोलियां बरसाईं, तो विनायक गोडसे के सबसे बड़े बेटे ने पहली बार किसी चीज में सफलता प्राप्त की।
गांधी हत्याकांड में दूसरा आरोपी नारायण दत्तात्रेय आप्टे था, जो पुणे का एक ब्राह्मण था। 1911 में जन्मे आप्टे एक विद्वान परिवार से थे। वे बहिर्मुखी, रंगीन मिजाज और स्त्रियों के प्रति बेहद आकर्षित थे। शराब, स्त्रियाँ और जीवन के सभी सुख-सुविधाएँ उनकी कमजोरी थीं। वे धूम्रपान और शराब पीते थे, और ब्राह्मणों के विपरीत, मांस भी बड़े चाव से खाते थे; वे ब्रिटिश राज के एक सच्चे सज्जन की तरह पश्चिमी कपड़े पहनना पसंद करते थे। आप्टे को ऐसा रूप-रंग मिला था कि स्त्रियाँ उन पर मोहित हो जाती थीं। वे स्त्रियों को वश में करने में माहिर थे और इसका फायदा उठाकर एक रिश्ते से दूसरे रिश्ते में आगे बढ़ते थे। जहाँ नाथुराम स्त्री की परछाई से भी घृणा करते थे, वहीं नारायण उनकी ओर ऐसे आकर्षित होते थे जैसे पतंगा दीपक की रोशनी की ओर। नारायण के माता-पिता पुणे में रहते थे। उनके पिता दत्तात्रेय आप्टे संस्कृत के विद्वान और एक प्रसिद्ध इतिहासकार थे।

नाथूराम की तरह नारायण भी अपने माता-पिता की पहली संतान थे; नाथूराम की तरह ही उनके भी तीन बहनें और चार भाई थे; लेकिन अशिक्षित नाथूराम के विपरीत, नारायण ने पुणे से मैट्रिक की पढ़ाई की और फिर 1932 में बॉम्बे विश्वविद्यालय से विज्ञान में स्नातक की उपाधि प्राप्त की।
भारतीय परिवारों में प्रचलित प्रथा के अनुसार, आप्टे के माता- पिता ने उनकी स्नातक की पढ़ाई पूरी होने के तुरंत बाद, उसी जाति के ब्राह्मण परिवार की एक लड़की से उनका विवाह तय कर दिया। चंपा फड़तारे पुणे के एक पुराने और प्रभावशाली ब्राह्मण परिवार से थीं और आप्टे परिवार से कहीं अधिक धनी थीं। नारायण के माता-पिता को चंपा अपने बेटे के लिए बिल्कुल उपयुक्त लगीं: उनके परिवार का प्रभाव और धन उनके बेरोजगार बेटे के लिए एक उपयुक्त नौकरी का इंतजाम कर सकता था। तीन साल की बेरोजगारी के बाद, आप्टे को अहमदनगर के अमेरिकन मिशन हाई स्कूल में एक अमेरिकी मिशनरी द्वारा संचालित शिक्षक के रूप में नौकरी मिल गई।
आप्टे अपने काम में बहुत मेहनती थे। उन्होंने अध्यापन को अपना करियर बनाने का फैसला किया था और उच्च कक्षाओं के शिक्षक बनने के लिए उन्होंने बैचलर ऑफ एजुकेशन की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। वे राजनीति में भी रुचि रखते थे और उस समय के कई अन्य महाराष्ट्रीयन ब्राह्मण युवाओं की तरह सावरकर से प्रभावित थे। अहमदनगर में रहते हुए नारायण ने एक राइफल क्लब की स्थापना की, जिसमें एक शूटिंग गैलरी थी जहाँ केवल.22 कैलिबर की बंदूकें ही चलाई जा सकती थीं, गोलियों के बजाय स्लग दागे जाते थे। यह प्रतिबंध 1857 में स्वतंत्रता की पहली लड़ाई के बाद अंग्रेजों द्वारा भारतीयों के लिए आग्नेयास्त्रों के उपयोग पर लगाए गए प्रतिबंध के कारण था। बंबई प्रांत की कांग्रेस सरकार ने पहले

नागरिक शूटिंग क्लब के लिए लाइसेंस जारी किया। नारायण का क्लब बहुत लोकप्रिय हुआ और जल्द ही पुणे और महाराष्ट्र के कई शहरों में इसकी शाखाएँ खुल गईं।
1939 में नारायण आप्टे, हिंदू महासभा की अहमदनगर शाखा में शामिल हुए, जिसके संस्थापक विष्णु आर. करकरे एक होटल व्यवसायी थे। आप्टे, करकरे का ज़्यादा सम्मान नहीं करते थे, जो अर्ध-अशिक्षित होने के बावजूद अपने दम पर सफल हुए थे। करकरे, जो एक कट्टरपंथी हिंदू थे, ने भी आप्टे के प्रति वैसी ही उदासीनता दिखाई और एक ईसाई मिशनरी संस्था में काम करने वाले व्यक्ति पर भरोसा नहीं कर सके। इसी दौरान आप्टे का संपर्क नाथूराम से हुआ। जब आप्टे अहमदनगर में थे, चंपा ने उन्हें एक पुत्र को जन्म दिया। नारायण अत्यंत प्रसन्न हुए, वे अपने इकलौते बेटे को बहुत प्यार करते थे और स्नेह से उसे पप्पन कहते थे। हालांकि, आप्टे परिवार के लिए दुख का पहाड़ टूट पड़ा। जल्द ही उन्हें पता चला कि उनके बेटे का बौद्धिक विकास ठीक नहीं है। पहले तो इसे युवा माता-पिता की चिंता मानकर टाल दिया गया, फिर यह कहकर बात को टाल दिया गया कि कुछ बच्चे ऐसे ही मंदबुद्धि होते हैं। लेकिन जब पप्पन दो साल का हुआ, तब यह स्पष्ट हो गया कि वह एक गंभीर मानसिक विकार से पीड़ित है। नारायण टूट गए; वे अहमदनगर और अपने उभरते करियर को भी छोड़ना चाहते थे। गंभीर रूप से बौद्धिक रूप से अक्षम बच्चे के पिता होने के दुख ने उन्हें चंपा से दूर कर दिया और बहुत जल्द ही वे दूसरी महिलाओं के साथ संबंध बनाने लगे। नारायण अभी भी अहमदनगर में काम कर रहे थे, फिर भी गोडसे और उनका संपर्क बना रहा। अहमदनगर उस समय हिंदू महासभा की गतिविधियों का केंद्र था; यह निज़ाम द्वारा शासित मुस्लिम रियासत हैदराबाद पर हमलों का प्रक्षेपण स्थल था। करकरे इन हमलों के प्रमुख आयोजकों

में से एक थे। आप्टे ने निज़ाम के दरबार पर मोर्टार और स्टेंगन से हमला करने की योजना बनाई थी। इनमें से कोई भी साहसिक हमला कभी साकार नहीं हुआ, लेकिन ये इतने आकर्षक थे कि धनी और भोले- भाले समर्थकों ने इन्हें वित्तपोषित करने में कोई कसर नहीं छोड़ी।
करकरे-आपटे गिरोह द्वारा मुसलमानों को परेशान करने का सबसे आम तरीका रात में सड़क यात्रा कर रहे परिवारों पर हमला करना और कभी-कभी मुसलमानों को ले जा रही बसों को रोकना था। मुस्लिम व्यापारियों द्वारा सड़क मार्ग से ले जाए जा रहे सामान को लूटना और उसे नुकसान पहुंचाना या नष्ट करना भी गिरोह द्वारा अक्सर इस्तेमाल किया जाने वाला एक अन्य तरीका था। मुस्लिम बहुल क्षेत्रों में हिंदुओं से निपटने में भी रजाकार उतने ही कुशल थे और कभी-कभी उनसे भी अधिक क्रूर थे।
द्वितीय विश्व युद्ध के प्रारंभ होते ही, सावरकर ने अपने अनुयायियों को अंग्रेजों के साथ सहयोग करने और बड़ी संख्या में सेना में भर्ती होने का आदेश दिया। आप्टे ने रॉयल इंडियन एयर फोर्स (आरआईएएफ) में युद्धकालीन भर्ती अधिकारी के रूप में नौकरी कर ली। उन्हें युद्धकालीन कमीशन दिया गया; आरआईएएफ में उनका कार्यकाल युद्ध की अवधि तक चला। उन्हें पुणे में फ्लाइट लेफ्टिनेंट के अस्थायी पद पर तैनात किया गया। इससे उन्हें प्रतीक चिन्हों और सभी साजो-सामानों से युक्त वर्दी पहनने का अधिकार मिल गया, जो युवतियों को आकर्षित करने का एक कारगर जरिया था। अंततः आप्टे अहमदनगर और उस नौकरी को छोड़ सके जिससे वे ऊब चुके थे। उनका एकमात्र संतोष यह था कि उन्होंने कई युवतियों को पढ़ाया था और अपनी कई छात्राओं को मोहित कर लिया था। मिशन स्कूल में अपनी नौकरी छोड़ने पर कई छात्राओं ने नम आँखों से विदाई ली।

शोक संतप्त छात्राओं में से एक थीं मनोरमा साल्वी, जो बॉम्बे की सत्रह वर्षीय शर्मीली ईसाई लड़की थीं। आप्टे ने अपनी छात्राओं को अपना पुणे का पता दिया और उनसे कहा कि वे हमेशा उनसे मिलने आ सकती हैं। मनोरमा उन छात्रों में से एक थी जिन्होंने सावधानीपूर्वक पते को संरक्षित किया और बाद में नारायण से दोबारा संपर्क स्थापित करने के लिए इसका इस्तेमाल किया। युद्धकाल में अधिकारियों की कमी के कारण नारायण को आरआईएएफ द्वारा स्थायी कमीशन की पेशकश की गई। आप्टे बेहद खुश हुए, क्योंकि कमीशन प्राप्त अधिकारी का करियर सम्मानजनक और सुरक्षित था। इसके साथ कई सुविधाएं, घर, रियायती सामान, बच्चों के लिए उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा और आजीवन पेंशन भी मिलती थी। लेकिन आप्टे ने इसे स्वीकार नहीं किया। उन्होंने आधिकारिक तौर पर कारण बताया कि उनके पिता का निधन हो गया था और एक हिंदू संयुक्त परिवार के मुखिया के रूप में अब वे अपनी विधवा माता और भाई-बहनों के भरण-पोषण और कल्याण के लिए जिम्मेदार थे। वे ऐसी नौकरी नहीं कर सकते थे जिसमें कम समय में तबादले होते और युद्धकाल में मोर्चे पर स्थानांतरण की संभावना रहती। दूसरा कारण यह था कि उनके बेटे पप्पन की हालत बिगड़ गई थी। चंपा भी मानसिक रूप से टूटने लगी थीं। वह पप्पन को अपनी एकमात्र जिम्मेदारी मानती थीं और उनका जीवन उसी के इर्द-गिर्द घूमता था। नारायण को पप्पन को मानसिक अस्पताल में भर्ती कराने की सलाह दी गई थी, लेकिन वे जानते थे कि चंपा अपने बेटे के खोने का दुख सहन नहीं कर पाएंगी। इसलिए, आप्टे ने पुणे में तैनात रहने के दौरान अपने अस्थायी युद्धकालीन कमीशन को बनाए रखने का विकल्प चुना।

पुणे में भर्ती का काम लगभग बंद होने के कारण उनके पास काफी खाली समय था। कांग्रेस के असहयोग आंदोलन के आह्वान ने भर्ती अभियान को रोक दिया था। खाली समय मिलने पर आप्टे और नाथुराम ने महासभा के काम में अधिक समय देना शुरू कर दिया। इसी समय सावरकर ने हिंदू राष्ट्र दल की स्थापना की। आप्टे और गोडसे दोनों को जल्द ही जिम्मेदारियां सौंपी गईं और उन्हें सरकारी पदों से सम्मानित किया गया। जब गोडसे ने अखबार शुरू करने का विचार रखा, तो आप्टे सहमत हो गए और इस तरह दोनों अग्रानी में साझेदार बन गए।
यह वह समय था जब आप्टे-गोडसे गिरोह ने गांधीजी का सुनियोजित उत्पीड़न शुरू किया। आगा खान महल में कैद से रिहा होने के बाद, गांधीजी ने पुणे के निकट स्थित पंचगनी के ठंडे पहाड़ी रिसॉर्ट में कुछ महीने बिताए। नारायण आप्टे और नाथूराम गोडसे दल सदस्यों के एक गिरोह का नेतृत्व करते हुए पंचगनी पहुंचे और एक सप्ताह तक जुलूस निकालते रहे, गांधीजी और कांग्रेस के खिलाफ नारे लगाते रहे। आप्टे को हिरासत में लिया गया और बाद में उप अधीक्षक एन.वाई. देउलकर ने उनसे पूछताछ की, जिन्होंने बाद में गांधीजी की हत्या की जांच में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। टाइम्स ऑफ इंडिया ने 23 जुलाई 1944 के अपने अंक में पंचगनी की घटना की रिपोर्ट करते हुए कहा कि पुणे के एक पत्रकार एन.डी. आप्टे के नेतृत्व में युवकों के एक समूह ने गांधीजी को परेशान किया। इस घटना के एक प्रत्यक्षदर्शी के अनुसार, जब नाथूराम चाकू लहराते हुए गांधीजी की ओर दौड़ा, तो स्वयंसेवकों ने उसे पकड़ लिया। गांधीजी ने तब नाथूराम को जाने देने का अनुरोध किया। उन्होंने आप्टे और उनके प्रदर्शनकारियों के समूह को

अपने साथ रहने और उनसे बात करने के लिए आमंत्रित किया। आप्टे और नाथुराम ने प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया और पुणे लौट गए।
दो नौकरियां एक साथ करते हुए, एक आरआईएएफ में कमीशन प्राप्त भर्ती अधिकारी के रूप में और दूसरी अग्रानी के प्रबंधक के रूप में, साथ ही हिंदू महासभा में अपनी गतिविधियों के बावजूद, नारायण को अपनी पूर्व छात्रा मनोरमा साल्वी के साथ अवैध संबंध बनाने का समय मिल गया। मनोरमा उस समय बॉम्बे के विल्सन कॉलेज में पढ़ रही थीं और कॉलेज से जुड़े रमाबाई गर्ल्स हॉस्टल में रहती थीं। उन्होंने आप्टे को पत्र लिखा और कुछ दिनों बाद, वायुसेना अधिकारी की वर्दी में सजे-धजे आप्टे हॉस्टल की मैट्रन के कार्यालय में पहुंचे। आमतौर पर बेहद सख्त रहने वाली श्रीमती हेवत उस आकर्षक युवा अधिकारी से मोहित हो गईं और जब उन्होंने मनोरमा और अपनी कुछ अन्य पूर्व छात्राओं से मिलने की अनुमति मांगी, तो तुरंत अनुमति दे दी गई। आप्टे तीनों युवतियों को फिल्म दिखाने ले गए। जल्द ही नारायण हॉस्टल में नियमित रूप से आने लगे, लेकिन अब वे केवल मनोरमा से ही मिलने आते थे। वे 'निर्मला' नाम से मनोरमा को पत्र लिखते थे और बहुत जल्द दोनों प्रेमी बन गए। मनोरमा मनगढ़ंत कहानियां बनाकर हॉस्टल वार्डन से रात भर बाहर रहने की इजाजत ले लेती थी। दोनों दक्षिण मुंबई के कई होटलों में पति-पत्नी बनकर ठहरते थे। नारायण ने एक मोटरसाइकिल खरीद ली थी और मुंबई से पुणे के बीच लगभग एक सौ तीस मील की दूरी तय करके मनोरमा से मिलने में उसे कोई हिचक नहीं होती थी, जबकि वह अपनी कानूनी रूप से विवाहित पत्नी चंपा के प्रति एक समर्पित पति होने का दिखावा करता था।

युद्ध की समाप्ति पर, नारायण की आरआईएएफ में कमीशन समाप्त हो गई। अब नाथुराम और नारायण दोनों अपनी आजीविका के लिए पूरी तरह से अग्रानी पर निर्भर थे।
इसी बीच, हिंदू और मुसलमानों के बीच दरार बढ़ती जा रही थी। जिन्ना और मुस्लिम लीग द्वारा स्वतंत्र मुस्लिम मातृभूमि की मांग को लेकर अपनाए गए अड़ियल रुख और मुस्लिम लीग के साथ समझौता करने से कांग्रेस के हठपूर्वक इनकार ने हिंदुओं और मुसलमानों को और भी ध्रुवीकृत कर दिया था। तब तक लड़खड़ा रहा दक्षिणपंथी हिंदू राजनीतिक मोर्चा नए समर्थकों को आकर्षित कर रहा था। इससे इन दोनों नेताओं को मरते हुए अग्रानी मोर्चे को पुनर्जीवित करने में मदद मिली। जैसे-जैसे प्रसार बढ़ा, राजस्व आने लगा और वे धनी और भोले-भाले हिंदुओं से मुसलमानों पर हमले की अपनी कई योजनाओं के लिए धन जुटाने में सक्षम हो गए। कुछ समय के लिए, स्वतंत्रता-पूर्व भारत में, मुस्लिम और हिंदू दोनों कट्टरपंथियों के लिए अपने अभियानों के लिए धन और समर्थकों को जुटाना आसान हो गया था।
नाथुराम और नारायण ने जल्द ही अपने प्रकाशन का विस्तार करने के बारे में सोचना शुरू कर दिया। उन्होंने एक कार्यालय बनाने के लिए ज़मीन खरीदी, जिसमें उनकी नई खरीदी गई प्रिंटिंग प्रेस भी स्थापित की जाएगी। पुणे के एक पुराने इलाके 495 शानवार पेठ में एक शेड बनाया गया, जहाँ से अग्रानी और शिवाजी प्रिंटिंग प्रेस का संचालन शुरू हुआ।
यह सन् 1946 की बात है; मुस्लिम लीग समर्थित प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस के बाद हुए दंगों में हिंदुओं के नरसंहार से भारत तहस-नहस होने वाला था। लीग प्रशासन और विशेष रूप से कांग्रेस को डरा-धमकाकर उनसे अलग मुस्लिम मातृभूमि की मांग

मनवाने पर तुली हुई थी। अगर निर्दोष हिंदुओं की बलि देनी पड़ती, तो वे ऐसा ही करते। और अगर मुसलमानों के खिलाफ हिंदुओं की प्रतिक्रिया होती, तो इससे अलग पाकिस्तान की उनकी मांग और मजबूत हो जाती। और ऐसा ही हुआ।
प्रांतीय विधानसभाओं और केंद्रीय संविधान सभा के चुनाव हुए और भारत के अधिकांश प्रांतों में कांग्रेस ने सरकारें बनाईं। वायसराय ने अखिल भारतीय मंत्रिमंडल की सहायता से कार्यवाहक सरकार के रूप में शासन किया। बंबई प्रांत एक बार फिर कांग्रेस सरकार के अधीन था, और इस बार उनके पास पहले से कहीं अधिक शक्ति थी। अग्रानी अखबार जल्द ही सरकार के उत्पीड़न का शिकार होने लगा। भारत में अशांति के इस दौर में, यह अखबार एक बेहद उग्र पत्रिका बन गया था; इसने हिंदुओं के नरसंहारों के भयावह, कई बार अतिरंजित और यहां तक कि मनगढ़ंत विवरण प्रकाशित किए। उसी समय, नाथूराम ने अपने संपादकीयों में हिंदुओं को हर जगह मुसलमानों से बदला लेने के लिए उकसाया और विशेष रूप से कांग्रेस और गांधी पर तीखे हमले किए। प्रेस अधिनियम के उल्लंघन और हिंदू- मुसलमानों के बीच अशांति फैलाने के आरोप में प्रांतीय सरकार ने अग्रानी पर कई जुर्माने लगाए। इन जुर्मानों से उस उद्यम के ठप होने का खतरा मंडरा रहा था, जिसने अभी-अभी लाभ कमाना शुरू किया था और साझेदारों के लिए कुछ राजस्व और प्रसिद्धि अर्जित की थी। नाथूराम और नारायण के लिए, यह एक राजनीतिक प्रतिद्वंद्वी द्वारा प्रतिशोधात्मक उत्पीड़न का मामला था। वे कांग्रेस के प्रति उत्तरोत्तर कटु होते गए, और उनके क्रोध का निशाना गांधी जी थे।
इसी दौरान नारायण आप्टे का फिर से करकरे से संपर्क हुआ। विष्णु रामकृष्ण करकरे ब्राह्मण माता-पिता के पुत्र थे। उनके पिता का

निधन तब हो गया जब विष्णु बहुत छोटे थे, जिससे उन्हें अपने पिता और बचपन की कोई याद नहीं रही। उन्हें अपनी जन्मतिथि भी नहीं पता थी, जो आज भी भारत में असामान्य नहीं है। पिताविहीन विष्णु का प्रारंभिक पालन-पोषण बंबई के नॉर्थकोट अनाथालय में हुआ। अनाथालय के रिकॉर्ड बताते हैं कि विष्णु का जन्म 1910 में हुआ था।
विष्णु को बहुत ही बुनियादी प्राथमिक शिक्षा मिली। दस साल की उम्र तक वह अनाथालय से भाग गया और एक छोटी सी चाय की दुकान पर चायवाले का काम करने लगा। वह ज़्यादा दिन तक वहाँ नहीं टिका, लेकिन उसने काम सीख लिया। एक दिन वह पुणे भाग गया। पुणे में विष्णु के जीवन के बारे में बहुत कम जानकारी है, लेकिन उसने मराठी पढ़ना-लिखना और हिंदी बोलना सीख लिया, जिसे उस समय 'हिंदुस्तानी' कहा जाता था। अगले पंद्रह वर्षों तक विष्णु ने पुणे में छोटे-मोटे काम करके अपना जीवन यापन किया। उसके युवावस्था के जीवन को देखकर लगता है कि उसने पुणे में सिर्फ़ गुज़ारा करना ही नहीं सीखा, बल्कि और भी बहुत कुछ सीखा। युवावस्था में वह हिंदू चरमपंथी विचारधारा का प्रबल समर्थक था।
शायद जीवन के सफर में कहीं न कहीं, उस अनाथ और सड़क पर रहने वाले बच्चे के मन में जीवन के प्रति गहरा असंतोष पनप गया होगा। संभवतः, बचपन में विष्णु को एक निर्दयी समाज के हाथों कष्ट सहना पड़ा होगा। चाहे जो भी आघात उसने सहा हो, विष्णु एक बेहद गुस्सैल युवक बनकर बड़ा हुआ और उसके गुस्से का निशाना मुसलमान थे।
पुणे में पंद्रह साल बिताने के बाद, पच्चीस वर्षीय युवक विष्णु ने आगे बढ़ने का फैसला किया। अपने जीवन भर का सामान एक बोरी में

भरकर वह अहमदनगर के लिए बस में सवार हो गया। यहाँ, उसने बस डिपो के पास एक छोटी सी चाय की दुकान खोली। गर्म चाय के साथ-साथ, विष्णु पूरी और थेचा भी परोसता था, जो दरदरी पिसी हरी मिर्च का तीखा पेस्ट होता है जिसे गर्म तेल में तड़का लगाया जाता है। एक मोटी भाकरी, एक कच्चा प्याज जिसे हाथ से मसलकर खाने से ठीक पहले छीला जाता है, और एक चम्मच थेचा महाराष्ट्र के मजदूरों और खेतिहर मजदूरों का मुख्य भोजन है। जल्द ही विष्णु की चाय की दुकान लोकप्रिय हो गई और वह एक खाली पड़े गौशाला में चला गया। करकरे ने उसे एक होटल में बदल दिया जहाँ रहने और खाने की सुविधा उपलब्ध थी। कुछ वर्षों बाद, करकरे ने अहमदनगर के कपड़ा बाजार क्षेत्र में डेक्कन गेस्ट हाउस का निर्माण किया, जो आज भी वहीं स्थित है। अनाथ बच्चा जिसने अपना अधिकांश बचपन और जवानी सड़कों पर बिताई थी, एक मध्यम संपन्न होटल व्यवसायी बन गया था।
करकरे के नाम के आगे 'सेठ' जुड़ गया, जिसका अर्थ था मालिक या धनी व्यक्ति। उनका विवाह हो गया और उन्होंने रंगमंच के प्रति अपने प्रेम को पूरा करने के लिए एक नाट्य मंडली की स्थापना की, जो नियमित रूप से भ्रमणशील प्रस्तुतियाँ देती थी। ग्रामीण महाराष्ट्र में ये भ्रमणशील मंडलियाँ मनोरंजन का एकमात्र साधन थीं और बहुत लोकप्रिय थीं। सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त करने के बाद विष्णु ने समाज सेवा करने का निश्चय किया। उन्होंने गाँवों के छात्रों को नि:शुल्क आश्रय प्रदान किया और हिंदू महासभा की अहमदनगर शाखा की स्थापना की।
1938 में सावरकर अहमदनगर आए। उनके सम्मान में, हिंदू महासभा के जिला प्रमुख करकरे ने अपने नाट्य समूह द्वारा एक विशेष प्रस्तुति का आयोजन किया। करकरे के अनुसार, सावरकर प्रस्तुति से बहुत प्रभावित हुए थे। 1939 में, आप्टे की मुलाकात महासभा की

वास्तव में हथियारों का ऑर्डर है, और हर किताब का शीर्षक एक हथियार या विस्फोटक को दर्शाता है।
मुस्लिम लीग द्वारा बुलाए गए प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस के बाद, पूरे उत्तर-पूर्वी भारत, विशेष रूप से कलकत्ता और पूर्वी बंगाल के भीतरी जिलों में हिंसा का तांडव मच गया। इन क्षेत्रों की सामाजिक संरचना विचित्र थी। हिंदू अल्पसंख्यक थे और अधिकतर धनी जमींदार, व्यापारी, सौदागर या साहूकार थे, जबकि बहुसंख्यक मुस्लिम समुदाय में कृषि मजदूर, कारीगर शामिल थे और आम तौर पर गरीब थे। इस प्रकार दोनों समुदायों के बीच लंबे समय से चली आ रही वर्ग-भेद की भावना थी। जब मुस्लिम नेताओं ने अपने लोगों को सड़कों पर उतरकर सरकार को अलग मुस्लिम मातृभूमि की मांग मानने के लिए मजबूर करने का आह्वान किया, तो कई इमामों ने इस आह्वान का समर्थन किया। पूर्वी बंगाल के मुसलमान एकजुट हो गए और उन्होंने हिंदुओं का जघन्य नरसंहार किया तथा उनकी पत्नियों और बेटियों का अपहरण और बलात्कार किया। ब्रिटिश अधिकारियों और मुस्लिम पुलिस बल से युक्त उदासीन पुलिस बल ने पक्षपातपूर्ण रवैया दिखाया। वे हिंदू गांवों को निहत्था कर देते थे और फिर उन गांवों पर मुसलमानों की भीड़ हमला कर देती थी।
जल्द ही नोआखली में घट रही घटनाओं की भयावह कहानियाँ भारत के हर कोने में फैल गईं, जिससे वहाँ की आबादी स्तब्ध रह गई। इन कहानियों ने दो बिल्कुल अलग-अलग तरह के लोगों को कार्रवाई करने के लिए प्रेरित किया।
गांधी जी तुरंत नोआखली पहुंचे और दंगाग्रस्त इलाकों में पैदल चलकर शांति और भाईचारे का संदेश फैलाने लगे। जिले में, खासकर हिंदू बहुल इलाकों में, पहुंचने वाला दूसरा समूह हिंदू चरमपंथियों का था। उनका मकसद नफरत फैलाना था ताकि पीड़ितों और

उनकी कहानियों का इस्तेमाल देश के अन्य हिस्सों में मुस्लिम विरोधी भावनाओं को भड़काकर नफरत की आग में बदल सकें। करकरे भी उनमें से एक थे। उनके अनुसार, उन्होंने दंगाग्रस्त इलाकों में घूमकर हिंदुओं में विश्वास जगाया और मुसलमानों द्वारा अगवा की गई हिंदू महिलाओं को बचाया। वे जबरन इस्लाम में परिवर्तित किए गए हिंदुओं को वापस इस्लाम में लाने के मिशन पर भी थे। नोआखली में अपने कारनामों का वर्णन करते हुए करकरे ने एक मित्र से कहा कि वे और उनके हिंदू बचाव दल ने दंगाग्रस्त इलाकों में पारंपरिक हिंदू पोशाक पहनकर और माथे पर सिंदूर का तिलक लगाकर यात्रा की थी। यह बात कुछ अतिशयोक्तिपूर्ण लगती है: हिंदू महासभा और उसके कार्यकर्ता मुस्लिम बहुल इलाकों में ज्यादा अंदर तक नहीं जाते। इसके अलावा, अगर करकरे का गिरोह नोआखली के दंगाग्रस्त इलाकों में उसी पोशाक में गया होता जैसा कि वह दावा करता है, तो यह बेहद असंभव था कि मुसलमान उन्हें बख्श देते। लेकिन करकरे की कल्पना चाहे जो भी रही हो, उनके भीतर का क्रोध और घृणा वास्तविक थी। पूर्वी बंगाल से लौटने के बाद उन्होंने मुसलमानों से क्रूर प्रतिशोध लेने का निश्चय कर लिया था और इसके लिए उन्हें नारायण आप्टे और नाथूराम गोडसे याद आए, जो पुणे से हिंदू महासभा का मुखपत्र चला रहे थे। वे चाहते थे कि वे नोआखली से उनकी अतिरंजित कहानियों को प्रकाशित करें। जब उनकी मुलाकात आप्टे और करकरे से हुई, तो उनके मन में मौजूद प्रारंभिक नाराजगी और संदेह उनके नए क्रोध की आग में पिघलते हुए प्रतीत हुए। नाथूराम और आप्टे द्वारा रची गई प्रतिशोध की योजनाओं में करकरे भी पूरी तरह से शामिल हो गए। 1947 की गर्मियों में, करकरे ने आप्टे और गोडसे को अपना समर्थन दिया और आप्टे-गोडसे गिरोह की गतिविधियों के लिए धन और हथियार जुटाने पर सहमति जताई।

दादा महाराज (यहाँ महाराज शब्द का प्रयोग उपाधि के रूप में किया गया है और इसका अर्थ पुजारी है), बंबई के एक हिंदू धार्मिक नेता, ने हिंदुओं को पुनः धर्म परिवर्तन कराने के प्रयास में नोआखली के कुछ हिस्सों का दौरा किया था। वे पूर्वी बंगाल में हिंदुओं पर हुए अत्याचारों का बदला लेने वाले किसी भी व्यक्ति की मदद करने के लिए उत्सुक थे। दादा महाराज एक धनी व्यक्ति थे और मुसलमानों पर हमले करने के लिए धन देने के इच्छुक थे। नोआखली से लौटने पर उनके एक अनुयायी, मुकुंद मालवीय ने उन्हें आप्टे- गोडसे गिरोह की योजनाओं के बारे में सूचित किया। आप्टे, कुछ व्हिस्की पीने के बाद, मुसलमानों और पाकिस्तानी नेताओं को सबक सिखाने की अपनी योजनाओं के बारे में डींगें हांकने के लिए जाने जाते थे। उनकी एक योजना कुछ मोर्टार हासिल करके दिल्ली में पाकिस्तानी मंत्रिमंडल की बैठक के दौरान उन पर हमला करना था। जबकि उन्हें यह भी नहीं पता था कि मोर्टार कैसा दिखता है, उसे चलाना तो दूर की बात है!
दादा महाराज आप्टे और नथुराम से मिलने के लिए पुणे की विशेष यात्रा पर गए। उनसे मिलने के बाद, आप्टे की मोर्टार हमले की योजना से वे इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने इसके लिए धन देने का वादा कर दिया। आप्टे और गोडसे के लिए यह वरदान साबित हुआ। वे दिवालिया होने की कगार पर थे और ऐसे में एक धनी व्यक्ति उन्हें धन देने का वादा कर रहा था। दादा महाराज ने न केवल उन्हें धन दिया, बल्कि उन्हें व्यापार जगत के उन लोगों से भी मिलवाया जो हिंदू चरमपंथी गतिविधियों में योगदान देने के इच्छुक थे। जल्द ही आप्टे दादा महाराज के घर नियमित रूप से आने लगे और उन्हें एक के बाद एक योजनाएँ सुनाने लगे। कभी यह मोर्टार खरीदने की बात होती, कभी हैदराबाद के निज़ाम के क्षेत्रों में हिंदू लड़ाकों

कारण यह था कि वह अपने ग्राहकों के लिए हर संभव चीज़ उपलब्ध करा सकता था। उसने पुणे छावनी के हथियार डिपो में पैठ बना ली थी और ज़रूरत पड़ने पर वह असली ब्रिटिश निर्मित हथगोले भी मुहैया करा सकता था।
जुलाई 1947 में, आप्टे करकरे के साथ फिर से शस्त्र भंडार गए। आप्टे ने बैज को बताया कि उन्हें कुछ प्रभावशाली ग्राहकों के लिए एक स्टेंगन की आवश्यकता है। बैज कार में बैठे और येरवदा केंद्रीय जेल की ओर चल पड़े, रास्ते में उन्होंने गुरदयाल सिंह नाम के एक सिख को भी साथ ले लिया। जेल के पीछे कार खड़ी करके गुरदयाल उतरे और कुछ मिनट बाद एक पैकेट में चमकती हुई स्टेंगन लेकर वापस आए। तब तक आप्टे हमेशा बैज का मज़ाक उड़ाते थे, लेकिन जिस आसानी से उन्होंने स्टेंगन पेश की, उससे आप्टे के मन में उनकी विश्वसनीयता स्थापित हो गई। गुरदयाल सिंह को छोड़ने के बाद वे शस्त्र भंडार लौट आए, जहाँ बैज ने स्टेंगन के लिए 1,200 रुपये मांगे। जल्द ही आप्टे को एहसास हुआ कि न तो वे और न ही उनके कमांडो स्टेंगन को ठीक से पकड़ सकते थे, निशाना लगाना और चलाना तो दूर की बात थी। उन्हें एहसास हुआ कि लोगों को प्रशिक्षण देने के लिए उन्हें बहुत सारे गोला-बारूद की आवश्यकता होगी, लेकिन उनके पास गोला-बारूद नहीं था। मोर्टार की तरह, स्टेंगन भी आप्टे की एक और मूर्खता थी।
बैज न्यूनतम खर्च और अधिकतम लाभ के सिद्धांत पर अपना कारोबार चलाता था। वह कर्मचारियों को सबसे कम वेतन पर रखता था और उनसे गुलामों जैसा काम करवाता था। लगभग 1945 में, बैज महाराष्ट्र और आंध्र प्रदेश की सीमा के पास स्थित शोलापुर शहर गया, जहाँ तेलुगु भाषी आबादी अच्छी खासी थी। शोलापुर की एक झुग्गी बस्ती में शंकर किस्तय्या नाम का एक अनपढ़ युवक अपनी माँ के साथ रहता

था। वह एक बढ़ई के यहाँ प्रशिक्षु के रूप में काम करता था। बैज ऐसे किसी व्यक्ति की तलाश में था जो रियायती दरों पर खरीदी गई कटारों पर हैंडल बना सके और उन्हें ठीक कर सके। शंकर इसके लिए उपयुक्त व्यक्ति था। बैज ने उसे बीस रुपये प्रति माह के वेतन पर नौकरी की पेशकश की। शंकर को यह नहीं पता था कि अपने आधिकारिक कर्तव्यों के साथ-साथ उसे रिक्शा चालक, डिलीवरी बॉय, सफाईकर्मी, धोबी, रसोइया, मालिश करने वाला और बैज के आदेशानुसार कोई भी काम करना पड़ता था। उसे बैज की बहन के लिए भी यही काम करने पड़ते थे। बैज वेतन देने में कंजूस था और उसने शंकर को कभी भी पूरा वेतन नहीं दिया। एक बार बैज पर शंकर का छह महीने का वेतन बकाया था, इसलिए उसने नौकरी छोड़ दी और शोलापुर भाग गया। पुलिस से अपने संपर्कों का इस्तेमाल करते हुए, बैज ने शंकर के खिलाफ चोरी की शिकायत दर्ज कराई और उसे गिरफ्तार करवा दिया। पुलिस के दुर्व्यवहार से तंग आकर शंकर ने फैसला किया कि बैज के साथ रहना ही उसके लिए बेहतर है। उसने चुपचाप अपना काम फिर से शुरू कर दिया और अंततः मामला खारिज हो गया।
बंबई में दादा महाराज आप्टे से अधीर हो रहे थे। आप्टे ने मोर्टार के लिए 5,000 रुपये ले लिए थे, लेकिन पाकिस्तानी विधायिका पर हमले का कोई संकेत नहीं था। पाकिस्तान के भावी नेता दिल्ली छोड़कर कराची जा रहे थे; आखिर वादा किया गया हमला कब होगा? आप्टे करकरे के साथ दादा महाराज से मिलने गए और स्वीकार किया कि वे मोर्टार नहीं ला पाए हैं; उन्होंने इसका दोष गोवा में अपने उस संपर्क पर डाला जिसने आखिरी समय में सौदा तोड़ दिया था। लेकिन आप्टे दो और योजनाएँ पेश कर रहे थे: पहली थी हैदराबाद की सीमा पर स्थित एक सीमावर्ती चुंगी चौकी पर छापा मारना। वे निज़ाम के चुंगी एजेंटों को मार गिराएंगे और दिन भर

की चुंगी लूट लेकर भाग जाएंगे। आप्टे ने कहा कि हमले के लिए उन्हें दादा महाराज की कार, एक शेवरले स्टेशन-वैगन की आवश्यकता होगी, जो एक बड़ी हमलावर टुकड़ी और हथियारों को ले जाने में सक्षम होगी। दूसरी योजना और भी प्रभावशाली थी। आप्टे ने अंग्रेजों द्वारा छोड़े गए विस्फोटकों और गोला-बारूद के पाकिस्तान के हिस्से को ले जा रही ट्रेन पर घात लगाकर हमला करने और उसे नष्ट करने का प्रस्ताव रखा। लेकिन इस छापे को अंजाम देने के लिए उसे दो फ्लेमथ्रोअर खरीदने के लिए 10,000 रुपये की जरूरत थी।
दादा अपनी कार देने के लिए तैयार हो गए, लेकिन उन्होंने पहले आग लगाने वाले यंत्र देखे बिना कोई पैसा देने से इनकार कर दिया। उन्होंने यह भी कहा कि उनके पास कुछ हथगोले और डायनामाइट हैं जिनका इस्तेमाल वे ट्रेन को उड़ाने के लिए कर सकते हैं। लेकिन आप्टे को पैसा चाहिए था। उन्होंने कार ली और मनोरमा से मिलने के लिए निकल पड़े।
दादा महाराज धैर्यपूर्वक आप्टे से सूचना मिलने या अखबारों में चुंगी चौकी पर हमले की खबर पढ़ने का इंतजार करते रहे, लेकिन दो महीने तक कोई खबर नहीं मिली। आखिरकार अक्टूबर में वे आप्टे से मिलने और स्पष्टीकरण मांगने तथा अपनी कार वापस लेने के लिए पुणे गए। आप्टे समझ गए थे कि दादा पूरी तरह हताश हो चुके हैं। उन्होंने अपने हिंदू राष्ट्र दल के सदस्यों को इकट्ठा किया और दावा किया कि टीम तैयार है और केवल पाकिस्तान जाने वाली अगली गोला-बारूद की ट्रेन पर हमला करने और उसे नष्ट करने के लिए आग लगाने वाले हथियारों का इंतजार कर रही है। उन्होंने दादा को हिंदू राष्ट्र के नए कार्यालय और प्रेस भवन के उद्घाटन के लिए आमंत्रित किया। यह भवन हैदराबाद और पाकिस्तानी नेतृत्व पर

छापे मारने की योजनाओं के लिए मिले धन को दूसरी जगह इस्तेमाल करके बनाया गया था और इसका उद्घाटन सावरकर द्वारा किया जाना था, लेकिन खराब स्वास्थ्य के कारण वे बॉम्बे से बाहर नहीं जा सके। आप्टे के पास चुंगी चौकी पर हमला न होने का कोई स्पष्टीकरण नहीं था। अपनी कार सुरक्षित पाकर दादा महाराज को राहत मिली और उन्होंने इस मामले को आगे नहीं बढ़ाया, लेकिन आग लगाने वाले हथियारों के लिए पैसे देने से इनकार कर दिया।
आप्टे ने बैज को बुलवाया, जो विस्फोटक पदार्थों का पूरा मिश्रण लेकर आया - गन कॉटन स्लैब, नाइट्रोग्लिसरीन के 808 पैकेट, फ्यूज तार और डेटोनेटर। दादा ने लगभग सब कुछ खरीद लिया। उन्होंने इसे अपनी कार में भरकर बॉम्बे वापस ले जाने का फैसला किया क्योंकि वे इसे हैदराबाद के अधिक विश्वसनीय हिंदू आगजनी करने वालों में बांटना चाहते थे। आप्टे ने उन्हें एक छोटे कैलिबर का रिवॉल्वर दिखाया, जिसके बारे में उन्होंने दावा किया कि उन्होंने इसे 400 रुपये में खरीदा था। उन्होंने दादा से इसे एक अधिक विश्वसनीय और बड़े कैलिबर के रिवॉल्वर से बदलने का अनुरोध किया। बॉम्बे जाने से पहले, दादा ने आप्टे को पाकिस्तान जा रही गोला-बारूद की ट्रेन को उड़ाने का आदेश दिया। लेकिन आप्टे व्यस्त थे। उनका बेटा पप्पन लगातार अनियंत्रित होता जा रहा था और अंततः उन्हें उसे एक पागलखाने में भेजना पड़ा। चंपा अपने बेटे को खोने से बुरी तरह टूट गई और इसके लिए आप्टे को दोषी ठहराया, जिन्हें आखिरकार झुकना पड़ा और उसे वापस घर लाना पड़ा। बंबई में मनोरमा ने आप्टे को बताया कि वह गर्भवती है। वह हॉस्टल छोड़कर अपने माता-पिता के साथ रहने लगी थी। उसके पिता, दौलतराव साल्वी, बायकुला में नॉर्थकोट पुलिस अस्पताल के पास पुलिस क्वार्टर में रहते थे, जहाँ वे चिकित्सा सहायक के रूप में काम

करते थे। मनोरमा बीए के अंतिम वर्ष में थी और स्नातक होने में कुछ ही महीने बचे थे। उसकी गर्भावस्था उसके लिए बहुत चिंता का विषय थी, क्योंकि वह एक बेहद रूढ़िवादी और घनिष्ठ रोमन कैथोलिक समुदाय से संबंध रखती थी।
नथुराम को ऐसी कोई चिंता नहीं थी। उनका परिवार पुणे लौट आया था; उनकी बहनों की शादी हो चुकी थी और उनके दो भाई काम कर रहे थे और उनके अपने घर थे। वे हिंदू राष्ट्र के कार्यालय और प्रेस के बहुत पास, 334, शनवर पेठ में एक छोटे से एक कमरे के मकान में रहते थे। आप्टे के विपरीत, नथुराम को विपरीत लिंग में कोई रुचि नहीं थी; बल्कि उनके प्रति उनकी अरुचि और बढ़ गई थी और अब एक भय में बदल गई थी। वे प्रिंटिंग प्रेस वाली इमारत के पीछे लगाए गए एक तंबू से हिंदू राष्ट्र का संपादन करते थे। महासभा की ओर से अपनी सभी योजनाओं और कार्यों में वे आप्टे को अपना नेता मानते थे। जब तक आप्टे पैसा लाते रहते थे, वे खुश रहते थे: साधन मायने नहीं रखते थे।
लेकिन आप्टे चिंतित होने लगा था; जिन लोगों ने उसकी बेतुकी योजनाओं में आसानी से पैसा लगाया था, वे अब परिणाम की मांग कर रहे थे। उन्हें जल्द ही कुछ न कुछ छोड़ना ही पड़ेगा। आप्टे को अपनी विलासितापूर्ण जीवनशैली बनाए रखने के लिए पैसे की ज़रूरत थी, जबकि नाथूराम को अपना प्रकाशन जारी रखना था। गर्म चाय-कॉफी पीते हुए इस पर चर्चा करते हुए आप्टे ने कहा, 'चलो गांधी जी को मार डालते हैं!' नाथूराम की आँखें चमक उठीं। उन्होंने कई बार ऐसा करने की कोशिश की थी, लेकिन असफल रहे थे। गांधी जी पर हमला करने से खूब प्रचार मिलेगा; अपने वित्तपोषकों को मनाना आसान होगा और पैसा मिल जाएगा। अधिकांश हत्यारों की तरह, आप्टे और

गोडसे को विश्वास था कि महात्मा गांधी की हत्या करने के बाद वे बच निकलेंगे।
मुख्य दल में आप्टे और नथुराम अच्छे दोस्त थे; करकरे अलग-थलग पड़ गए थे। जल्द ही उनकी भी किसी से दोस्ती हो गई। अहमदनगर विभाजन के शरणार्थियों के कई ठिकानों में से एक था। करकरे ने इन दुर्भाग्यशाली पीड़ितों के जीवन को थोड़ा आसान बनाने के लिए काम शुरू किया और उन्हें अस्थायी आश्रय और असीमित भोजन उपलब्ध कराया। अहमदनगर में अच्छी खासी मुस्लिम आबादी थी जिनके पास अच्छे घर और फलते-फूलते व्यवसाय थे और वे आम तौर पर संपन्न थे। इससे शरणार्थी भड़क उठे; वे मुसलमानों को भगाना चाहते थे और उनके व्यवसाय और घरों को आपस में बांटना चाहते थे। सीमा पार से आई खबरों ने उनके गुस्से को और बढ़ा दिया: निज़ाम के गुंडों का गिरोह, जिन्हें 'रज़ाकार' या 'स्वयंसेवक' कहा जाता था और जिनका नेतृत्व कासिम रिज़वी नामक एक क्रूर कट्टरपंथी कर रहा था, ने न केवल हैदराबाद में रहने वाले हिंदुओं को आतंकित किया था, बल्कि अक्सर सीमा पार करके अलग-थलग गांवों पर भी हमले किए थे। इन कार्रवाइयों का खामियाजा अहमदनगर के निर्दोष मुस्लिम निवासियों को भुगतना पड़ा। स्थिति इतनी अस्थिर हो गई कि प्रशासन ने पूरे जिले में नागरिकों द्वारा किसी भी प्रकार के हथियार ले जाने पर प्रतिबंध लगा दिया।
उस समय करकरे आप्टे के सीमावर्ती चुंगी चौकी पर हमले के लिए हथियार और गोला-बारूद इकट्ठा करने में व्यस्त थे। उन्हें ग्रेनेड की ज़रूरत थी, लेकिन बैज ने दाम बढ़ा दिए थे और एक ग्रेनेड के लिए 200 रुपये मांग रहा था। करकरे ने सुना कि बंबई में कई अवैध कारखानों में से किसी एक से ग्रेनेड बहुत सस्ते में खरीदे जा सकते हैं। करकरे बंबई गए और चेंबूर स्थित शरणार्थी

शिविर का दौरा किया। वहाँ उनकी मुलाकात मदनलाल से हुई, जिसने दावा किया कि उसने वास्तव में हथगोले बनाए थे। मदनलाल पश्चिमी पंजाब के मोंटगोमरी जिले के पाकपट्टन नामक गाँव से था, जो अब पाकिस्तान में है। जब वह मात्र इक्कीस दिन का था, तब उसकी माँ का निधन हो गया था। वह बचपन से ही शरारती था और उसके पिता और सौतेली माँ उसे बहुत सख्ती से अनुशासित करते थे। सात साल की उम्र में उसे एक गुरुकुल में भेज दिया गया, जहाँ वह सहपाठियों के साथ झगड़े और हिंसक लड़ाइयों में उलझा रहता था। युवावस्था में मदनलाल उग्रवादी आरएसएस शाखा में शामिल हो गया। उसके पिता एक कट्टर कांग्रेसी थे और अपने बेटे की हरकतों से वे नाखुश थे। एक बार बुरी तरह पिटाई खाने के बाद वह घर से भाग गया। वह रावलपिंडी पहुंचे और नौसेना में भर्ती हो गए, जहां उन्होंने रेडियो ऑपरेटर के रूप में काम किया। मदनलाल ने लाहौर, रावलपिंडी और झेलम में सेवा की और फिर बंबई में तैनात हुए, जहां उन्हें 1946 में सेवामुक्त कर दिया गया।
भारत का विभाजन, जिसका अर्थ पंजाब और बंगाल का विभाजन भी था, पहले से ही तय था। मदनलाल ने अपने गाँव लौटकर हिंदुओं को संगठित करने का फैसला किया; 'मुसलमान पहले ही नेशनल गार्ड्स में संगठित हो चुके थे, हमें कुछ करना ही था।' उन्होंने लाहौर में मुसलमानों के खिलाफ हमलों का नेतृत्व किया; एक बार बम विस्फोट करने की कोशिश में लाहौर में उनकी तर्जनी उंगली का पहला पोर कट गया। बाद में, लेखक मनोहर मुलगांवकर से बात करते हुए, उन्होंने एक अधिक नाटकीय कहानी सुनाई, जिसमें उन्होंने दावा किया कि एक गुप्त बम कारखाने में काम करते समय उनका पैर फिसल गया और उनकी उंगली गियर व्हील के दांतों में कुचल गई। उन्होंने कहा, 'मेरे सहायक ने तुरंत मशीन बंद कर दी और डॉक्टर को बुलाना चाहा, लेकिन

अहमदनगर के मुस्लिम निवासियों को आतंकित करना शुरू कर दिया। मदनलाल ने बाज़ार में एक फल विक्रेता की दुकान पर उसके मुस्लिम मालिक को डरा-धमकाकर और भगाकर जबरन कब्ज़ा कर लिया। करकरे ने उसे अपना फल का व्यवसाय शुरू करने के लिए आर्थिक सहायता दी। अब मदनलाल 'करकरे सेठ' का ऋणी हो गया था और उसके लिए कुछ भी करने को तैयार था। करकरे ने मुस्लिम व्यापारियों को भगाकर और उनके व्यवसाय पर कब्ज़ा करके अपना कारोबार बढ़ाया। उसने इन नए अधिग्रहित व्यवसायों के लिए प्रबंधकों को कई शरणार्थियों में से ही नियुक्त किया; उन्हें रोज़गार प्रदान करने के साथ-साथ, करकरे को उनकी कृतज्ञता और वफादारी भी मिली।
दिसंबर के पहले पखवाड़े में मदनलाल बंबई गए। वहां उनकी मुलाकात जैन से हुई, जो हिसाब-किताब न चुका पाने के कारण उनसे काफी नाराज़ थे। मदनलाल ने उन्हें शांत किया और हिसाब-किताब निपटा दिया। जल्द ही वे अहमदनगर में अपने जीवन और कारनामों के बारे में शेखी बघारने लगे। उन्होंने अपने संरक्षक 'करकरे सेठ' के बारे में बताया कि कैसे वे न केवल उनके कारोबार को, बल्कि मुसलमानों के खिलाफ अभियान को भी आर्थिक सहायता दे रहे थे। उन्होंने बताया कि कैसे उन्होंने कई मुस्लिम ठिकानों पर हथगोले से हमला किया था और शेखी बघारी कि कैसे 'करकरे सेठ' जरूरत पड़ने पर उनसे बाहुबल मुहैया कराते थे। मदनलाल ने जैन को यह भी बताया कि कैसे वे दोनों गिरफ्तारी से बच निकले और अपने खिलाफ चल रही जांच को रुकवा दिया।
दिसंबर के मध्य में करकरे मदनलाल को पुणे ले गए, जहाँ उनकी मुलाकात आप्टे और नथुराम से हुई। चुंगी चौकी पर छापे की योजना पर फिर से चर्चा हुई। करकरे ने अहमदनगर में मदनलाल के हथगोले चलाने के कारनामों के बारे में बताया। आप्टे खुश हुए; आखिरकार

छापा कभी पड़ ही नहीं पाया। 1 जनवरी 1948 को अहमदनगर पुलिस ने करकरे के मैनेजर एस.वी. केतकर के घर पर छापा मारा। उन्हें वहां करकरे द्वारा रखा गया एक बक्सा मिला, जो हथियारों और विस्फोटकों से भरा हुआ था। उन्हें मिले कुछ ग्रेनेड हाल ही में अहमदनगर और पुणे में हुए विस्फोटों से मिलते-जुलते थे। पुलिस ने करकरे के घर और गेस्ट हाउस पर भी छापा मारा, लेकिन करकरे को पहले ही सूचना मिल गई थी। उन्होंने सभी हथियार और विस्फोटक हटा दिए और मदनलाल से उन्हें छिपाने का अनुरोध किया। पुलिस को कुछ नहीं मिला। बंबई स्थित गृह मंत्रालय ने करकरे और उनके आदमियों पर चौबीसों घंटे निगरानी रखने का आदेश दिया। करकरे और मदनलाल के लिए हालात बेहद तनावपूर्ण होते जा रहे थे।
5 जनवरी को करकरे को पता चला कि कांग्रेसी सांप्रदायिक सद्भाव के लिए एक जनसभा आयोजित कर रहे हैं। रावसाहेब पटवर्धन इस सभा को संबोधित करने वाले थे। करकरे ने मदनलाल और उसके आदमियों को सभा में बाधा डालने और कांग्रेसियों को भगाने का आदेश दिया। मदनलाल चाकू लेकर सभा स्थल पर पहुंचा; करकरे के घर से उनके पास मौजूद विस्फोटक और ग्रेनेड जब्त कर लिए गए थे। जैसे ही पटवर्धन ने बोलना शुरू किया, मदनलाल और उसके आदमियों ने उन्हें परेशान करना और मुस्लिम विरोधी और कांग्रेस विरोधी नारे लगाने शुरू कर दिए। जब पटवर्धन बोलते रहे, तो मदनलाल मंच पर चढ़ गया, माइक छीन लिया, वरिष्ठ कांग्रेसी नेता की गर्दन पकड़कर उन्हें मंच से नीचे घसीट लिया। इससे पहले कि वह कुछ और कर पाता, कुछ पुलिस कांस्टेबलों ने उसे छुड़ा लिया। वहां पूरी तरह से अफरा-तफरी मच गई। मदनलाल के पास से एक चाकू बरामद हुआ, जिसे जब्त कर लिया गया और फटकार लगाने के बाद उसे छोड़ दिया गया। गांधी हत्याकांड के

मुकदमे के दौरान अदालत में मदनलाल ने कहा कि कांस्टेबल उसके हमदर्द थे और इसलिए उन्होंने नरमी बरती।
इसी दौरान उन दोनों को पुणे बुलाया गया। आप्टे चाहते थे कि वे सब काम छोड़कर तुरंत पुणे पहुँचें। 9 तारीख को जब वे निकलने ही वाले थे, तभी पुलिस विभाग में करकरे के एक सूत्र ने उन्हें सूचना दी कि उनके खिलाफ गिरफ्तारी वारंट जारी किया जा रहा है। अब उनके लिए अहमदनगर से तुरंत निकलना अनिवार्य हो गया था। रेलवे स्टेशन पर मदनलाल की मुलाकात इंस्पेक्टर जोशी से हुई, जो उन्हें करकरे के आदमी के रूप में जानते थे। उन्होंने मदनलाल से पूछा कि वह वहाँ क्या कर रहे हैं। मदनलाल ने बताया कि वह शादी के लिए दिल्ली जा रहे हैं और कुछ ही मिनटों में उन्होंने पुणे जाने वाली ट्रेन पकड़ ली।
मदनलाल को दिल्ली में रहने वाले उसके चाचा डॉ. आहूजा ने बताया था कि उन्होंने उसकी शादी के लिए कुछ लड़कियों को शॉर्टलिस्ट किया है। हालांकि, मदनलाल आप्टे-गोडसे-करकरे गिरोह के प्रति वफादार था। पुणे में, करकरे और मदनलाल शस्त्र भंडार गए, जहाँ उन्होंने कई तरह के हथियार देखे। मदनलाल ने करकरे को भरोसा दिलाया कि वह उन्हें चलाना जानता है और बैज को सामान रखने के लिए कहकर चला गया।
पूरा गिरोह नथुराम के दफ्तर में इकट्ठा हुआ। योजना पर चर्चा हुई और तय हुआ कि बैज द्वारा कीमतें बढ़ाए जाने के कारण उन्हें हथियारों का सस्ता स्रोत ढूंढना होगा। मदनलाल जानता था कि उसकी पुरानी फैक्ट्री पुलिस ने बंद कर दी है, लेकिन उसने दावा किया कि चेंबूर शरणार्थी शिविर में उसके पास अन्य स्रोत हैं। आप्टे ने करकरे और मदनलाल को तुरंत बॉम्बे जाने और जितना हो सके उतने हथगोले और विस्फोटक लाने का आदेश दिया।

बंबई हिंदू महासभा के सर्वोच्च नेता विनायक दामोदर सावरकर का घर था, वही व्यक्ति जिसने अपने अनुयायियों में गांधी के प्रति घृणा पैदा की थी। पूना ब्राह्मणों और आप्टे-गोडसे गिरोह द्वारा गांधी की हत्या की योजना और उसके कई असफल प्रयासों को सावरकर ने समर्थन दिया था, भले ही सीधे आदेश जारी करके नहीं, लेकिन महात्मा गांधी से हिंदू धर्म को बचाने की आवश्यकता पर अपने तीखे भाषणों के माध्यम से उन्होंने लोगों को प्रेरित किया था। भारतीय जनता पर गांधी के प्रभाव ने सावरकर के राजनीतिक करियर पर विराम लगा दिया था। अंग्रेजों के साथ समझौते के बाद, हिंदुओं के राष्ट्रीय नेता बनने के अपने सभी प्रयासों के बावजूद, सावरकर महाराष्ट्र के कुछ उच्च जाति के ब्राह्मणों के नेता बनकर रह गए थे। इससे एक घृणाग्रस्त और कड़वे स्वभाव वाले व्यक्ति को बहुत ठेस पहुंची, जिसने जीवन भर हिंसक प्रतिशोध के सिद्धांत का पालन और प्रचार किया था।
विनायक दामोदर सावरकर का जन्म 28 मई 1883 को नासिक के पास भगुर नामक एक छोटे से गाँव में एक उच्च जाति के महाराष्ट्रीयन ब्राह्मण परिवार में हुआ था। बचपन से ही सावरकर के मन में मुसलमानों के प्रति गहरी नफरत थी। महाराष्ट्र का वह हिस्सा, जहाँ सावरकर का गाँव स्थित था, सदियों से मुसलमानों द्वारा बसा हुआ था और आसपास के लगभग सभी गाँवों में हिंदू और मुस्लिम आबादी लगभग बराबर थी। सावरकर ने अपने गाँव के बच्चों के साथ एक गिरोह बनाया और नियमित रूप से मुसलमानों पर हमले करते थे तथा मुस्लिम गुंडों से झड़प करते थे। समय के साथ-साथ यह हिंसा बढ़ती गई और इसमें चाकूबाजी और मस्जिदों पर सुनियोजित हमले भी शामिल हो गए। सावरकर एक प्रतिभाशाली छात्र थे, लेकिन उनके हर काम में नफरत और हिंसा की भावना अंतर्निहित थी। वे गद्य और कविता दोनों में

समान रूप से निपुण थे और पाठक की आँखों में आँसू ला सकते थे। उन्होंने अपनी इस प्रतिभा का उपयोग लोगों को भड़काने के लिए किया।
किशोरावस्था के दौरान, सावरकर भारत में चल रहे क्रांतिकारी ब्रिटिश विरोधी आंदोलन से बहुत प्रभावित हुए। जब वे पंद्रह वर्ष के थे, तब महाराष्ट्र में एक सनसनीखेज हत्या घटी। पुणे के चफेकर बंधुओं ने पुणे में प्लेग महामारी के दौरान अंग्रेजों द्वारा अपनाए गए निर्मम और अक्सर क्रूर तरीकों से क्रोधित होकर, इस क्रूरता के लिए जिम्मेदार ब्रिटिश अधिकारी डब्ल्यू.सी. रैंड की हत्या की योजना बनाई और उसे अंजाम दिया। चफेकर बंधुओं को औपनिवेशिक ब्रिटिश प्रशासन द्वारा गिरफ्तार कर फांसी दे दी गई। उनके बलिदान से महाराष्ट्र के युवाओं की एक पूरी पीढ़ी बहुत प्रभावित हुई। सावरकर भी उनमें से एक थे। 1901 में उनका दाखिला पुणे के फर्ग्यूसन कॉलेज में हुआ। यह वह समय था जब 'भारत के शेर' कहे जाने वाले और कांग्रेस के उग्रवादी नेताओं में से एक प्रमुख नेता बाल गंगाधर तिलक का दबदबा था। उनके जोशीले भाषणों ने कई युवाओं को ब्रिटिश-विरोधी आंदोलन में शामिल होने के लिए प्रेरित किया। तिलक पहले ऐसे राजनीतिक नेता थे जिन्होंने भारतीय राजनीति में धर्म की शक्ति को पहचाना और सामाजिक एकता लाने के लिए इसका इस्तेमाल किया। तिलक से प्रभावित होकर सावरकर ने ब्रिटिश शासन के विरुद्ध कई छात्र आंदोलनों का नेतृत्व किया और अपनी वाक्पटुता का भरपूर उपयोग किया। उन्होंने स्नातक और स्नातकोत्तर छात्रों का एक आंदोलन संगठित किया और उसे अभिनव भारत नाम दिया।
इस दौर में भी मुसलमानों के प्रति उनकी घृणा बनी रही। सावरकर अपने पूर्वाग्रहों और घृणा से इतने अंधे हो गए थे कि वे यह

इंग्लैंड में रहने के दौरान, सावरकर ने विपुल लेखन किया और उनकी कई पांडुलिपियों को भारत में तस्करी करके प्रकाशित किया गया। वे पेरिस से प्रकाशित होने वाले 'तलवार' नामक एक समाचार पत्र के लिए नियमित रूप से लिखते थे। उन्होंने ग्यूसेप्पे मैज़िनी की जीवनी का मराठी अनुवाद किया, लेकिन सरकार ने इस पर प्रतिबंध लगा दिया। उन्होंने भारत के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम, 1857 में भारतीय सैनिकों के विद्रोह का एक दिल दहला देने वाला विवरण लिखा।
सावरकर की पुस्तक के दो अध्याय ब्रिटिश गुप्तचरों द्वारा चुरा लिए गए और भारत में औपनिवेशिक प्रशासन को भेज दिए गए। भारतीय प्रशासन ने इसे पूरी तरह लिखे जाने से पहले ही प्रतिबंधित कर दिया था। अंततः यह 1907 में गुप्त प्रकाशकों द्वारा प्रकाशित हुई। मराठी मूल प्रति छपने से पहले ही अंग्रेजों ने शोलापुर स्थित प्रकाशक पर छापा मार दिया। पांडुलिपि को पुणे में सावरकर के मित्रों द्वारा तस्करी करके बाहर निकाला गया और इसका अंग्रेजी अनुवाद हॉलैंड में प्रकाशित हुआ। यह पुस्तक पश्चिमी देशों में रहने वाले प्रवासी भारतीयों के बीच बहुत लोकप्रिय हुई और इसकी कई प्रतियां भारत में तस्करी करके लाई गईं। पुस्तक की विषयवस्तु से चिंतित ब्रिटिश प्रशासन ने सावरकर के भारत लौटने पर प्रतिबंध लगा दिया।
भारत के औपनिवेशिक प्रशासन ने सावरकर के कई संदेशों को ज़ब्त कर लिया और बम बनाने की विधियाँ और अन्य क्रांतिकारी सामग्री बरामद की। उनके घर पर छापा मारा गया और उनके परिवार को प्रताड़ित किया गया। एक छापे के दौरान, सावरकर के बड़े भाई बाबूराव के घर से इन विधियों का एक गट्ठा बरामद हुआ। भारत पर कब्ज़ा करने वाले साम्राज्यवादी ब्रिटिश शासकों को सावरकर पर

मुकदमा चलाने के लिए बस यही बहाना चाहिए था। उन्होंने आरोप लगाया कि वह ब्रिटिश राज और देश के खिलाफ युद्ध छेड़ने की तैयारी कर रहे थे। बाबूराव को आजीवन कारावास की सज़ा सुनाई गई, जिसका अर्थ था ब्रिटिश भारत के सुदूर स्थानों जैसे बर्मा के रंगून और मांडले और अंडमान द्वीप समूह में, पूर्वी तट पर स्थित पोर्ट ब्लेयर की कुख्यात सेलुलर जेल में कैद होना, जिसे उन दिनों 'काले पानी की जगह' के नाम से जाना जाता था।
1909 में, लंदन में, सावरकर की फ्री इंडिया सोसाइटी के सदस्य मदनलाल ढिंगरा ने सर कर्ज़न वाइली की हत्या कर दी। ढिंगरा सरकारी अभियोजक थे जिन्होंने खुदीराम बोस और बंगाल के कई अन्य क्रांतिकारियों के खिलाफ मौत की सजा की मांग की थी और उसे हासिल भी कराया था। सावरकर ने लंदन में ढिंगरा के बचाव के लिए एक कोष का आयोजन किया और लंदन में रहने वाले कुछ भारतीय प्रवासियों द्वारा उनके क्रांतिकारी कृत्य की निंदा करने वाले बयान का विरोध किया। उन्होंने ढिंगरा के लिए निष्पक्ष सुनवाई के लिए भी पैरवी की। भारत में क्रांतिकारी आंदोलन उग्र था। अहमदाबाद में लॉर्ड मिंटो पर बम फेंका गया; नासिक में, बाबूराव के मुकदमे का बदला लेने के लिए एक क्रांतिकारी ने ब्रिटिश कलेक्टर ए.एम.टी. जैक्सन को गोली मारकर हत्या कर दी। ब्रिटिश प्रशासन ने आरोप लगाया कि बंदूक सावरकर ने लंदन से भेजी थी। अपनी गिरफ्तारी को भांपते हुए, सावरकर अपने दोस्तों की मदद से पेरिस भाग गए। पेरिस में भारतीयों का एक छोटा समुदाय रहता था, और सावरकर ने उनमें क्रांतिकारी भावना को भड़काने का प्रयास किया। लेकिन उसे अपनी प्रेमिका की याद सताने लगी और उसने छुपकर उससे मिलने के लिए लंदन में प्रवेश करने की कोशिश की। लेकिन उसकी किस्मत में उससे दोबारा मिलने का कोई वादा नहीं था।

सावरकर को विक्टोरिया स्टेशन पर गिरफ्तार किया गया और ब्रिक्सटन जेल में कैद कर दिया गया, जहां उन्हें भारत प्रत्यर्पित करने का आदेश दिया गया। भारतीय सरकार ने सावरकर के भारत लौटने पर रोक लगाने वाले अपने पूर्व आदेश को रद्द कर दिया था और सम्राट के विरुद्ध युद्ध छेड़ने के आरोप में उन पर मुकदमा चलाने का फैसला किया था। बॉम्बे पुलिस के उप पुलिस अधीक्षक सी.आई. पॉवर को एक दल के साथ लंदन भेजा गया। स्कॉटलैंड यार्ड ने भी पॉवर के साथ भारत वापसी यात्रा के लिए जासूस निरीक्षक एडवर्ड जोश पार्कर को नियुक्त किया। दल को एसएस मौरिया जहाज से लौटने के लिए निर्धारित किया गया था। सावरकर एक उच्च सुरक्षा वाले कैदी थे और उनके अपहरणकर्ता चौबीसों घंटे उन पर नजर रख रहे थे। अज्ञात कारणों से जहाज मार्सिले में रुका। सावरकर जानते थे कि उन्हें भागना होगा। उन्हें यकीन था कि भारत लौटने पर उन्हें या तो मौत की सजा दी जाएगी या आजीवन कारावास। सुबह-सुबह उन्होंने शौचालय जाने की अनुमति मांगी। दो कांस्टेबल दरवाजे के बाहर खड़े थे जबकि सावरकर हथकड़ी खोले बिना शौचालय में चले गए। उसने दरवाजा बंद कर दिया और अपनी कमीज से जासूसी छेद को ढक लिया। वह उस छेद से बाहर निकला, समुद्र में कूद गया और किनारे की ओर तैरने लगा।
सावरकर ब्रिटिश पुलिस से पहले ही फ्रांस की धरती पर पहुँच गए थे। उन्हें उम्मीद थी कि वे पेरिस में अपने दोस्तों के साथ छिप जाएँगे, लेकिन ऐसा नहीं हो सका। उन्हें एक पुलिसकर्मी ने पकड़ लिया और ब्रिटिश पुलिस के हवाले कर दिया। सावरकर का क्रांतिकारी जीवन यहीं समाप्त हो गया। भारत लौटने पर ब्रिटिश उपनिवेशवादियों ने उन्हें पोर्ट ब्लेयर द्वीप पर स्थित सेलुलर जेल में अभूतपूर्व पचास साल की कैद की सजा सुनाई।

काला पानी से किसी के भी जीवित बचने की कोई जानकारी नहीं है। क्रांतिकारी नेता सावरकर भी नहीं बच पाए; दस साल जेल में बिताने के बाद उनका स्वास्थ्य और मनोबल टूट चुका था और उन्होंने ब्रिटिश सरकार से समझौता कर लिया। उन्होंने ब्रिटिश राजशाही के विरुद्ध अनजाने में किए गए अपने अपराधों के लिए कई पत्र लिखकर क्षमा मांगी और क्षमादान के बदले जीवन भर वफादार सहयोगी बने रहने का वादा किया। यह स्वतंत्रता के उद्देश्य के साथ विश्वासघात और भारतीय क्रांतिकारियों द्वारा किए गए बलिदानों का अपमान था। पोर्ट ब्लेयर में कई अन्य लोगों ने प्रतिदिन कोड़े, भुखमरी, अस्वच्छ परिस्थितियों और एकांत कारावास को सहन किया, लेकिन उन्होंने हार नहीं मानी। सावरकर उन लोगों से अलग थे। उन्होंने केवल दस साल बाद ही अंग्रेजों के सामने आत्मसमर्पण कर दिया और अपने पूरे जीवन में फिर कभी उनका विरोध नहीं किया। वे सेलुलर जेल से एक कट्टर धार्मिक व्यक्ति के रूप में निकले। न तो उनकी कड़वाहट और न ही बदला लेने की इच्छा अंग्रेजों के प्रति थी; बल्कि यह भारतीय मुसलमानों के प्रति लक्षित थी।
विडंबना यह है कि अंग्रेजों के समक्ष आत्मसमर्पण करने के बाद, उनके समर्थकों ने उन्हें 'स्वतंत्र वीर' की उपाधि से सम्मानित किया, जो स्वतंत्रता के सबसे वीर योद्धा का नाम था। दया की अपनी कई अपीलों में से एक में उन्होंने लिखा: 'मैं स्वीकार करता/करती हूँ कि मेरा निष्पक्ष परीक्षण हुआ और मुझे न्यायसंगत सजा मिली। मैं बीते समय में अपनाई गई हिंसा की विधियों से घोर घृणा करता/करती हूँ और स्वयं को कानून और संविधान (अंग्रेजों द्वारा जोड़े गए) को अपनी पूरी शक्ति से बनाए रखने के लिए बाध्य महसूस करता/करती हूँ और औपनिवेशिक अंग्रेजों द्वारा शुरू किए गए

'सुधारों' को भविष्य में जहाँ तक संभव हो, सफल बनाने के लिए तत्पर हूँ।' यह सावरकर द्वारा ब्रिटिश अधिकारियों को लिखे गए पत्र की प्रतिकृति का शब्दशः उद्धरण है। सरकार द्वारा रिहाई की शर्तों को स्वीकार करने के बाद, उन्हें मुख्य भूमि पर लाया गया और रत्नागिरी में कैद रखा गया। उन्हें किसी भी सार्वजनिक या निजी राजनीतिक गतिविधि में भाग लेने से मना किया गया था। प्रकाशकों को यह गारंटी देनी पड़ती थी कि उनकी पांडुलिपियों में कोई राजनीतिक संदेश या कोई ब्रिटिश विरोधी टिप्पणी न हो, तभी वे उन्हें प्रकाशित करते थे। इसके बदले में अंग्रेजों ने उन्हें पश्चिमी महाराष्ट्र के सुरम्य समुद्र तटीय शहर रत्नागिरी में एक आरामदायक बंगला उपलब्ध कराया, जहां वे 1937 तक रहे।
अपनी यात्राओं के दौरान, गांधी जी ने रत्नागिरी जाकर सावरकर से मिलने की इच्छा व्यक्त की, लेकिन प्रशासन ने उनका आवेदन अस्वीकार कर दिया। तब गांधी जी ने कस्तूरबा को उनसे मिलने भेजा। रत्नागिरी में ही नाथूराम गोडसे सावरकर के प्रभाव में आ गए थे। गांधी जी की हत्या के बीज यहीं बोए गए थे।
अपने जीवन के शेष समय में सावरकर ने कभी भी किसी भी ब्रिटिश विरोधी गतिविधि में भाग नहीं लिया। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान उन्होंने अपने कट्टर शत्रु मोहम्मद अली जिन्ना के साथ मिलकर अंग्रेजों का समर्थन किया। सावरकर पहले भारतीय नेता थे जिन्होंने सार्वजनिक रूप से कहा कि भारत कभी भी एक संयुक्त देश नहीं हो सकता; हिंदू महासभा के अहमदाबाद सम्मेलन में उन्होंने कहा कि दो भारत हैं—एक हिंदू राष्ट्र और एक मुस्लिम राष्ट्र। यह मुस्लिम लीग द्वारा एक अलग मुस्लिम मातृभूमि की मांग उठाने से बहुत पहले की बात है। सावरकर हिंदू राष्ट्र के नेता बनना

चाहते थे और उन्हें इस बात की परवाह नहीं थी कि मुसलमान अपने देश के हिस्से के साथ क्या करते हैं। उनके इस सपने के रास्ते में एक व्यक्ति खड़ा था—मोहनदास के. गांधी। इसी कारण सावरकर उनसे घृणा करते थे। गांधी के नेतृत्व में, प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के बाद पहली बार हिंदू और मुस्लिम समुदाय स्वतंत्रता के लिए एकजुट हुए थे। इससे अंग्रेजों को बहुत चिंता हुई, क्योंकि वे जानते थे कि यदि गांधी की भारतीय जनता पर पकड़ को कमजोर करना है, तो उन्हें पहले सांप्रदायिक अशांति फैलानी होगी और दूसरा, हिंदुओं और मुसलमानों के बीच एक ऐसी खाई पैदा करनी होगी जिसे पाटना असंभव हो। इसके लिए उन्हें भारतीयों की ज़रूरत थी जो उनके घिनौने काम कर सकें। सावरकर में उन्हें एक समर्पित सहयोगी मिल गया। रत्नागिरी में अपने प्रवास के दौरान, उन्होंने हिंदू धर्म के एक सशस्त्र और उग्रवादी स्वरूप का प्रचार किया, जिसका उद्देश्य अंग्रेजों का मुकाबला करना नहीं, बल्कि मुसलमानों से लड़ना और उन्हें अधीन करना था। उन्होंने भोले- भाले युवाओं को मुसलमानों के खिलाफ सशस्त्र कमांडो बनाने के लिए प्रेरित किया। पड़ोसी हैदराबाद राज्य के मुस्लिम शासकों की विनाशकारी गतिविधियों ने उनके प्रयासों में बहुत मदद की। सावरकर ने इस भावना का फायदा उठाकर अपने स्वार्थ को आगे बढ़ाया। सावरकर और उनके समर्थक अछूतों, उच्च जाति के हिंदुओं और मुसलमानों के लिए अलग-अलग निर्वाचक मंडलों को रद्द किए जाने से बेहद नाराज़ थे, जिन्हें गांधी जी द्वारा पुणे में किए गए अनशन के कारण रद्द कर दिया गया था।
1937 में बंबई प्रांत की कांग्रेस के नेतृत्व वाली पहली प्रांतीय सरकार ने सावरकर को बिना शर्त रिहा कर दिया। हिंदू संगठन ने उन्हें महाराष्ट्र के तूफानी दौरे पर ले जाया।

उन्होंने एक के बाद एक भाषण दिए जिसमें उन्होंने एक ऐसे युद्धप्रिय हिंदू समुदाय के निर्माण की आवश्यकता पर बल दिया जो हथियारों से लैस हो, रक्षा के लिए तैयार हो और मुसलमानों पर हमला करके उन्हें अधीन करने के लिए भी तैयार हो। वे हिंदू महासभा के अध्यक्ष बने और अन्य धर्मों के प्रति असहिष्णुता और दमन का प्रचार करते रहे। 1942 में जब गांधी ने भारत छोड़ो आंदोलन का आह्वान किया और सभी भारतीयों से औपनिवेशिक प्रशासन का बहिष्कार करने की अपील की, तब सावरकर ने एक फरमान जारी किया: 'मैं सभी हिंदू संगठनवादियों को, जो सरकारी सेवाओं में किसी भी पद या महत्वपूर्ण स्थिति पर आसीन हैं, यह स्पष्ट निर्देश देता हूं कि वे अपने पदों पर बने रहें और ब्रिटिश सरकार के प्रति निष्ठापूर्वक अपने नियमित कर्तव्यों का पालन करते रहें।' अपने वफादार करीबी लोगों के बीच, सावरकर लगातार गांधी कार्ड खेलते रहे और मुसलमानों के साथ उनकी दोस्ती और अंग्रेजों के खिलाफ उनके आंदोलनों के लिए गांधी और कांग्रेस को दोषी ठहराते रहे। इस प्रकार, सावरकर के करीबी लोगों के बीच, जिनमें से कुछ कट्टरपंथी हिंदू सैन्य टुकड़ियों के कमांडर थे, यह संदेश स्पष्ट था: 'यदि आप हिंदू राष्ट्र स्थापित करना चाहते हैं, तो गांधी को हटा दें और कांग्रेस को उखाड़ फेंकें।' उन्होंने गांधी की हत्या के प्रयासों को बढ़ावा दिया। 1934 के बाद ही उनके जीवन पर कई हमले हुए, जो किसी न किसी तरह से पुणे, पुणे के ब्राह्मणों, आप्टे और नाथूराम गोडसे से जुड़े थे।
गांधी जी की हत्या से दो दिन पहले तक, गोडसे और आप्टे के पास हत्या को अंजाम देने के लिए सबसे ज़रूरी चीज़ों में से एक, यानी एक भरोसेमंद हथियार, नहीं था। बाद में ग्वालियर के डॉ. दत्तात्रेय एस. परचुरे ने उन्हें वह हथियार मुहैया कराया।

परचुरे एक शिक्षक परिवार में जन्मे थे। मूल रूप से पुणे के रहने वाले इस परिवार ने ग्वालियर रियासत में अपना घर बसा लिया था। दत्तात्रेय ने पुणे से ही अपनी स्कूली शिक्षा और स्नातक की पढ़ाई पूरी की और बॉम्बे विश्वविद्यालय से चिकित्सा की डिग्री प्राप्त करने के बाद ग्वालियर में बस गए। एक योग्य एलोपैथिक डॉक्टर होने के बावजूद, वे ग्वालियर के पाटनकर बाज़ार इलाके में स्थित एक औषधालय से आयुर्वेद और होम्योपैथी का अभ्यास करते थे। लेकिन उनकी मुख्य गतिविधि स्थानीय हिंदू महासभा के उग्रवादी नेता और हिंदू राष्ट्र सेना के स्वघोषित तानाशाह के रूप में थी। विभाजन के दौरान वे भाग रहे मुसलमानों पर हमला करने, लूटपाट करने और उनकी हत्या करने में बहुत सक्रिय थे। सैंतालीस वर्षीय यह डॉक्टर एक रंगीन व्यक्तित्व के धनी थे। उनके कंकालनुमा चेहरे पर लहराते बाल थे जो उनके पतले कंधों पर गिर रहे थे, और एक लंबी, लहराती दाढ़ी उनकी छाती तक लटक रही थी। उनकी धुंधली काली आँखें मोटे चश्मे के पीछे से चेहरों को घूर रही थीं, जिससे उनकी आँखें अनुपातहीन रूप से बड़ी दिखाई दे रही थीं।
परचुरे ने महासभा और अपनी सेना को इस तरह मजबूत किया था कि महासभा ग्वालियर की राजनीति में एक शक्तिशाली ताकत बन जाए और सेना वर्चस्व हासिल करने का एक साधन। उन्हें ग्वालियर के शासक का संरक्षण भी प्राप्त था, जो उनकी कट्टरता और आतंक के कृत्यों को अनदेखा करते थे। मदनलाल पाहवा, जिसने ग्वालियर से ही अपने प्रतिशोध की शुरुआत की थी, ने कई मौकों पर भाग रहे मुसलमानों पर हमला करने और उनकी हत्या करने में परचुरे की सेना का साथ दिया था।

परचुरे बड़ा शेखीबाज़ था। उसे अपने कारनामों की अतिरंजित कहानियाँ सुनाकर लोगों को प्रभावित करना पसंद था, जिनमें से कई के बारे में उसने शायद सिर्फ़ सुना ही होता था! जैसे ही गांधी जी की हत्या की खबर ग्वालियर पहुँची, परचुरे ने सार्वजनिक रूप से दावा किया कि वह इस साजिश में शामिल था। जब उसके शेखी बघारने की बात प्रशासन तक पहुँची तो उसे गिरफ्तार कर लिया गया।
महासभा के पदाधिकारी के रूप में परचुरे का गोडसे से अक्सर संपर्क रहता था। दिसंबर 1947 में वे अलवर में हिंदू महासभा- आरएसएस शिखर सम्मेलन में शामिल हुए थे, साथ ही उन्होंने हैंडगन और अन्य आग्नेयास्त्रों का उपयोग सीखने के लिए एक गुप्त प्रशिक्षण शिविर में भी भाग लिया था। एक समय वे हिंदू राष्ट्र दल और हिंदू राष्ट्र सेना के विलय के कगार पर थे; एकीकृत निकाय की नेतृत्व संरचना के मुद्दे पर दोनों के बीच मतभेद होने के कारण बातचीत कटुता और कड़वाहट में समाप्त हो गई थी। लेकिन जब नाथूराम गोडसे और नारायण आप्टे की विश्वसनीयता खतरे में थी, तब नाथूराम ने एक विश्वसनीय आग्नेयास्त्र प्राप्त करने में मदद के लिए परचुरे से संपर्क किया।
परचुरे एक कड़वे और क्रोधित स्वभाव के व्यक्ति थे। स्वतंत्रता के समय यह स्पष्ट था कि रियासतों का काल समाप्त होने वाला है। ग्वालियर में लोकतांत्रिक प्रशासन के लिए दो दावेदार थे: कांग्रेस और हिंदू महासभा। महासभा के नेतृत्व को उम्मीद थी कि राजा जियाजीराव सिंधिया उन्हें सरकार बनाने के लिए आमंत्रित करेंगे, लेकिन शासक और केंद्र सरकार के साथ उनके संबंधों के कारण सिंधिया ने कांग्रेस को सरकार बनाने के लिए आमंत्रित किया। कांग्रेस ने महासभा के साथ गठबंधन सरकार बनाने से इनकार कर दिया। परचुरे, जिन्होंने महासभा के नेता के रूप में

बड़े भाई को अपना आदर्श मानता था और बचपन से ही उसके नक्शेकदम पर चलता था। मैट्रिक की पढ़ाई पूरी करने के बाद, वह सैन्य आयुध सेवा में एक नागरिक क्लर्क के रूप में भर्ती हुआ। द्वितीय विश्व युद्ध शुरू होने पर, उसने विदेश सेवा के लिए स्वेच्छा से आवेदन किया। 1941 में उसे ब्रिटिश टुकड़ी के साथ ईरान और इराक भेजा गया। उसने अगले तीन वर्षों तक पीएफोर्स में सेवा की और अप्रैल 1944 में युद्ध की समाप्ति पर भारत लौट आया। सेना से मुक्त होने के बाद, वह अपनी पुरानी नौकरी पर लौट आया और पुणे के बाहरी इलाके किरकी स्थित आयुध डिपो में सहायक स्टोरकीपर के पद पर पदोन्नत हुआ। लेकिन नियमों का पालन करने वाले और नियमित आदतों वाले इस व्यक्ति के एक असामान्य कृत्य से यह पुष्टि होती है कि वह अपने बड़े भाई द्वारा रची गई साजिशों में शामिल था। युद्धकालीन आयोग से इस्तीफा देते समय, जहाँ उन्हें.38 वेब्ले स्कॉट रिवॉल्वर जारी की गई थी, गोपाल ने उसे वापस नहीं किया। गोपाल ऐसा तब तक नहीं करते जब तक कि उनके किसी भरोसेमंद और सम्मानित व्यक्ति ने उन्हें ऐसा करने के लिए न कहा होता। अब अवैध हो चुके इस हथियार को अपने पास न रखना चाहते हुए गोपाल अपने पैतृक घर उक्सान गए और उसे भविष्य में उपयोग के लिए निकालने के उद्देश्य से आंगन में एक अमरूद के पेड़ के नीचे दफना दिया।
गोपाल अपने परिवार के साथ किरकी के बाज़ार के पीछे किराए पर लिए गए एक छोटे से दो कमरों के अपार्टमेंट में रहता था। काम पर वह शांत स्वभाव का था, लेकिन जब उसके बड़े भाई का बुलावा आता, तो वह किसी भी कार्रवाई के लिए तैयार हो जाता था। वह आप्टे-नाथूराम गिरोह के लिए रिवॉल्वर लाने के लिए उक्सान वापस जाने को तैयार हो गया। जब उसने वेब्ले स्कॉट रिवॉल्वर को उसकी उथली कब्र से

खोदकर निकाला और उसे दिल्ली ले आया, तो वह गांधीजी की हत्या की साजिश में शामिल हो गया। 20 तारीख को असफल प्रयास के बाद, गोपाल का मन बदल गया, और अपने भाई नाथूराम को.32 बोर की रिवॉल्वर सौंपने के बाद, उसने गिरोह से सभी संपर्क तोड़ दिए और घर लौट आया, यह सोचकर कि अब उसका इस साजिश से कोई लेना-देना नहीं है। जेल से रिहा होने के बाद बोलते हुए, गोपाल ने आप्टे-गोडसे गिरोह के प्रति अपनी प्रतिबद्धता और गांधीजी की हत्या के उनके लक्ष्य का बहुत नाटकीय वर्णन किया। '20 जनवरी को बैज और शंकर को महात्मा गांधी की हत्या का काम पूरा किए बिना भागते हुए देखने के बाद, मेरे मन में पहला विचार भाग जाने का आया।' लेकिन जब मैं टैक्सी के पास पहुँचा तो देखा कि ड्राइवर गाड़ी नहीं चला रहा था। जब मैंने पीछे का दरवाजा खोला तो मुझे बैज द्वारा छिपाई गई बंदूकें पिछली सीट पर मिलीं।
मैं बेकाबू गुस्से से भर गया था। तुरंत ही मैंने फैसला किया कि यही वो मौका है जब हम अपना तय किया हुआ काम पूरा कर सकते हैं। मैंने अपनी बंदूक उठाई और नौकरों के क्वार्टर की ओर भागा। मैं छोटूराम के कमरे में घुसा, जहाँ से बैज को बापूजी को गोली मारनी थी। मैं कमरे में घुसा और अंदर से दरवाजा बंद कर लिया। तभी मुझे एहसास हुआ कि जालीदार ग्रिल से ढका वेंटिलेटर बहुत ऊँचा था। मैंने ग्रिल के नीचे एक पलंग खींची और उस पर चढ़ गया। मैंने अपनी.38 वेब्ले स्कॉट सर्विस रिवॉल्वर निकाली और गांधीजी को गोली मारने की तैयारी की। लेकिन पलंग पर चढ़ने के बाद भी मैं मुश्किल से ग्रिल के निचले किनारे तक ही पहुँच पाया, वो भी पैर की उंगलियों पर खड़े होकर पूरी ऊँचाई तक खिंचने के बाद। बंदूक से निशाना लगाकर गोली चलाना नामुमकिन था। मैंने खुद को ग्रिल तक खींचा, लेकिन इसके लिए मुझे दोनों हाथों की जरूरत थी और मुझे

एहसास हुआ कि इस स्थिति से मैं बंदूक नहीं चला सकता। आखिरकार मैंने कोशिश छोड़ दी। जब मैंने दरवाजा खोलने की कोशिश की तो मैं भूल गया था कि मैंने उसे कुंडी लगा रखी है और उसे खोलने के लिए बेताब होकर धक्का दिया, लेकिन दरवाजा टस से मस नहीं हुआ। मैं बहुत डर गया था और मुझे लगा कि अब सब खत्म हो गया। मुझे पसीना आने लगा। तभी मुझे अपने अंगों में नई ऊर्जा और अलौकिक शक्ति का संचार महसूस हुआ। मैंने दरवाजे पर एक लात मारी, दूसरी लात मारते ही दरवाजा खुल गया और मैं आज़ाद हो गया। होश में आकर मैं शांति से टैक्सी तक गया और उसमें बैठ गया।
यह कहानी बहुत ही अविश्वसनीय लगती है। गोपाल की इस मूर्खतापूर्ण हरकत का किसी की नज़र में न आना असंभव है। बम विस्फोट के तुरंत बाद, नौकर, प्रार्थना सभा में उपस्थित कुछ लोग और पुलिस कांस्टेबल सभी घटनास्थल पर पहुंचे और मदनलाल को गिरफ्तार कर लिया। मदनलाल को बम हमलावर बताने वाले चश्मदीद नौकरों के क्वार्टर के आंगन में खड़े थे। सुलोचना देवी नाम की एक महिला, जिसने टैक्सी को आते और गिरोह को उससे उतरते देखा था, ने उन्हें मदनलाल से बात करते हुए भी देखा था। यह सब उस जगह के बहुत करीब हो रहा था जहां गोपाल का दावा है कि उसने गांधी जी पर जानलेवा हमला किया था। अगर किसी ने उसे कमरे में जाते हुए नहीं देखा, तो उन्होंने दरवाजे पर ज़ोर से दस्तक, उसके खुलने की आवाज़ और नौकर छोटूराम के क्वार्टर से एक अजनबी के बाहर आने की आवाज़ ज़रूर सुनी होगी। इन परिस्थितियों में, लोग निश्चित रूप से उसे पकड़कर अधिकारियों के हवाले कर देते। लेकिन सुलोचना, जो एक प्रमुख गवाह थी और जिसकी गवाही ने हत्या के मुकदमे में बिरला हाउस में गिरोह की मौजूदगी को साबित किया, और वहां के कर्मचारी, जिन्होंने 20 तारीख की शाम की घटनाओं को समझने में मदद की,

दोनों ने गोपाल की हरकतों को देखने का जिक्र नहीं किया। हालांकि, उन्होंने तीन लोगों को परिसर से बाहर भागते, कार में बैठते और धमाके के तुरंत बाद कार को तेजी से वहां से जाते हुए जरूर देखा था।
गोपाल द्वारा सुनाई गई यह कहानी इस बात को साबित करने के प्रयास में बाद में जोड़ी गई प्रतीत होती है कि वह केवल एक अनुयायी नहीं था, बल्कि गांधी की हत्या के उद्देश्य के प्रति समर्पित एक समान रूप से प्रतिबद्ध कट्टरपंथी था।
अगर नथुराम गोडसे को यूरोप की सबसे लोकप्रिय नज़दीकी रेंज की घातक पिस्तौल, 9 मिमी बेरेटा स्वचालित पिस्तौल, न मिल पाती, तो वह गांधी की हत्या में कभी सफल न हो पाता। यहाँ महत्वपूर्ण सवाल यह है कि ग्वालियर के एक हथियार तस्कर को लगभग नई जैसी विदेशी पिस्तौल कैसे मिली। यह बहुत नज़दीकी रेंज से वार करने के लिए सबसे कारगर बंदूकों में से एक थी। 9 मिमी की गोलियां अपने शिकार को अधिकतम क्षति पहुँचाती थीं और नज़दीकी रेंज से शरीर को भेदकर बड़े घाव कर देती थीं, जिससे अगर तुरंत मौत न भी हो तो सदमे और अत्यधिक रक्तस्राव से मौत निश्चित हो जाती थी। एक कमज़ोर व्यक्ति इन घावों से बच नहीं पाता था।
सीरियल नंबर 606824 वाली 9 मिमी बेरेटा ऑटोमैटिक पिस्तौल बेहतरीन कार्यशील स्थिति में थी, लगभग नई जैसी। यह हत्या के लिए एकदम सही हथियार थी। इसने एक अकल्पनीय मार्ग तय किया था, दुनिया के आधे हिस्से को पार करते हुए, 30 जनवरी 1948 को बिरला हाउस तक पहुंची। 1934 में इटली में निर्मित, यह बंदूक मुसोलिनी की आक्रमणकारी सेना के एक अधिकारी द्वारा अबिसीनिया ले जाई गई थी। जब अबिसीनिया में मुसोलिनी की सेना ने अंग्रेजों के सामने आत्मसमर्पण कर दिया, तो चौथी ग्वालियर इन्फैंट्री के एक

अधिकारी ने बेरेटा को उसके मालिक से युद्ध की ट्रॉफी के रूप में ले लिया। पिस्तौल बटालियन के कमांडिंग ऑफिसर, लेफ्टिनेंट कर्नल वी.वी. जोशी के साथ ग्वालियर पहुंची। लौटने पर जोशी ने ग्वालियर के महाराजा जियाजीराव सिंधिया के सैन्य सहायक के रूप में कार्य किया। यह पिस्तौल जगदीशप्रसाद गोयल के पास कैसे पहुंची, यह एक रहस्य है जो आज तक अनसुलझा है। क्या जोशी ने इसे किसी हथियार तस्कर को बेच दिया था? जोशी ने युद्ध में मिली एक प्रसिद्ध जीत की यादगार के तौर पर ली गई बंदूक क्यों बेची? गोयल को वह बंदूक कैसे मिली, यह भी एक रहस्य बना हुआ है। गोयल ने वह बंदूक दंडवते को बेच दी, जिन्होंने उसे नाथूराम गोडसे की ओर से खरीदा था। दंडवते ने 28 जनवरी की शाम को परचुरे के घर पर नाथूराम को पूरी तरह से भरी हुई बंदूक और सात अतिरिक्त गोलियां सौंप दीं।
30 जनवरी 1948 को शाम 5:17 बजे, नाथूराम विनायक गोडसे ने बेरेटा पिस्तौल से आखिरी बार गोली चलाई। इसकी छोटी नली से तीन 9 मिमी की गोलियां एक के बाद एक तेजी से निकलीं और गांधी जी को लगीं, जो ढाई फीट से भी कम दूरी तय करके आईं। आज भी यह बंदूक दिल्ली के राजघाट के सामने स्थित राष्ट्रीय गांधी संग्रहालय में एक सीलबंद स्टील कैबिनेट में बंद है। 1997 में मुझे इस बंदूक को छूने का मौका मिला था। हत्या के हथियार के साथ उस संक्षिप्त संपर्क की याद मुझे घृणा से भर देती है।
गांधी हत्याकांड में तीन और लोगों के नाम आरोपी के तौर पर दर्ज थे, तीनों ग्वालियर के रहने वाले थे, लेकिन पुलिस मुकदमे के अंत तक उन्हें पकड़ नहीं पाई। इन तीनों भगोड़ों की साजिश में बहुत मामूली भूमिका थी, वे मुख्य रूप से गवाह थे। पुलिस ने लगभग सभी आरोपियों के खिलाफ ठोस सबूत पेश कर दिए थे और इन तीनों भगोड़ों

का कोई खास महत्व नहीं था। मुकदमे के अंत में ही तीनों को गिरफ्तार कर लिया गया, लेकिन सरकार ने उन पर मुकदमा नहीं चलाया। ये उन विविध किरदारों का समूह था जो भारत के इतिहास में सबसे जघन्य कृत्यों में से एक को अंजाम देने के लिए एक साथ आए थे - एक महात्मा की हत्या।

3

प्लॉट

'हत्या का अर्थ है दूसरों को मृत्यु तक पीड़ा पहुँचाना, ताकि हत्यारा या वे लोग जिनके लिए वह हत्या करता है, लाभान्वित हो सकें।'
— MAHATMA GANDHI, 21 May 1925

नवंबर 1947 में, नारायण आप्टे ने बैज से हथियार और गोला-बारूद मांगे। बैज ने कहा कि उनके पास उस समय हथियार नहीं हैं, लेकिन वे जल्द ही उनका इंतजाम कर देंगे। कुछ दिनों बाद, बैज ने आप्टे को बताया कि उनका ऑर्डर तैयार है। दिसंबर के आखिरी सप्ताह में, आप्टे शस्त्र भंडार गए और बैज से पूछा कि क्या उनके द्वारा खरीदे गए हथियार अभी भी उपलब्ध हैं। यह सुनकर कि हथियार उपलब्ध हैं, आप्टे ने बैज को बताया कि उनके एक सहयोगी, विष्णु करकरे, कुछ दिनों में उन्हें ले आएंगे। हालांकि, जनवरी के दूसरे सप्ताह में ही आप्टे ने किसी को बैज के पास भेजा। उस दिन से, 9-30 जनवरी 1948 तक, जो घटनाएँ घटीं, उन्होंने नव स्वतंत्र राष्ट्र के भविष्य को नया रूप दे दिया।
शुक्रवार, 9 जनवरी 1948
पुणे में, आप्टे ने बैज को बताया कि करकरे और कुछ अन्य लोग हथियारों का निरीक्षण और खरीद करेंगे।
रात करीब 8:30 बजे, करकरे समेत तीन लोगों को शस्त्र भंडार में बैज से मिलवाया गया। उनमें से एक मदनलाल पाहवा था, जिसने दूसरों को बताया कि वह विस्फोटकों को संभालना जानता है। हथियारों का निरीक्षण करने के बाद वे चले गए।
शनिवार, 10 जनवरी 1948

आप्टे शस्त्र भंडार गए और सुबह लगभग 10 बजे बैज को हिंदू राष्ट्र कार्यालय ले गए। वहाँ, गोडसे की उपस्थिति में, आप्टे ने बैज से दो रिवॉल्वर, प्राइमर और फ्यूज सहित दो गन कॉटन स्लैब और पाँच हैंड ग्रेनेड उपलब्ध कराने को कहा। बैज ने कहा कि उनके पास रिवॉल्वर नहीं हैं, लेकिन वे तुरंत गन कॉटन स्लैब और हैंड ग्रेनेड उपलब्ध करा सकते हैं। यह तय हुआ कि बैज रिवॉल्वर प्राप्त करने का प्रयास करेंगे और 14 जनवरी की शाम तक सभी सामग्री बॉम्बे के दादर स्थित हिंदू महासभा कार्यालय में पहुँचा देंगे।
रविवार, 11 जनवरी 1948
बंबई में मदनलाल पाहवा और विष्णु करकरे ने डॉ. जे.सी. जैन के घर का दौरा किया। मदनलाल जैन को तब से जानते थे जब वे उत्तर-पूर्वी बंबई के चेंबूर शरणार्थी शिविर में शरणार्थी के रूप में रह रहे थे। कुछ मिनट बातचीत करने के बाद, मदनलाल ने जैन को बताया कि वे जल्द ही एक महत्वपूर्ण कार्य के लिए दिल्ली रवाना होने वाले हैं। बिना अधिक विस्तार बताए, वे चले गए और मदनलाल ने दिल्ली जाने से पहले प्रोफेसर से मिलने का वादा किया।
सोमवार, 12 जनवरी 1948
दिल्ली में गांधी जी ने स्वतंत्र भारत के गवर्नर जनरल और उसके अंतिम वायसराय लॉर्ड लुई माउंटबेटन के साथ चाय पर मुलाकात की। माउंटबेटन पूरे उत्तर-पश्चिम में बिगड़ती सांप्रदायिक स्थिति को लेकर बहुत चिंतित थे। जैसे-जैसे पश्चिमी पंजाब से शरणार्थियों की संख्या बढ़ती जा रही थी, दिल्ली और उसके आसपास के इलाकों में सरकार के लिए आवास, गर्म कपड़े, भोजन और पीने योग्य पानी की मांग को पूरा करना मुश्किल होता जा रहा था।

अपने घरों से बेदखल किए गए मुसलमानों ने चांदनी चौक और जामा मस्जिद इलाकों में खचाखच भरे शरणार्थी शिविरों में शरण ली थी, जिससे संकट और भी बढ़ गया था। हिंदू और सिख शरणार्थी मांग कर रहे थे कि मुसलमानों द्वारा खाली किए गए घर उन्हें दे दिए जाएं। मुसलमानों के घरों की रखवाली के लिए पीछे छोड़े गए लोगों को हिंदू शरणार्थियों ने या तो भगा दिया या मार डाला और घरों पर जबरन कब्जा कर लिया। मस्जिदों पर कब्जा कर लिया गया, हिंदू देवी-देवताओं की मूर्तियां स्थापित की गईं और उन्हें 'मुक्त' हिंदू मंदिर घोषित कर दिया गया। यह हिंदू महासभा और आरएसएस की पुरानी रणनीति थी। पश्चिमी पाकिस्तान में हिंदू शरणार्थियों पर हुए अत्याचारों की कहानियों के फैलने से दिल्ली में स्थिति और भी अस्थिर होती जा रही थी। आरएसएस और हिंदू महासभा, जिन्होंने विभाजन को रोकने के लिए कुछ नहीं किया था, अब सक्रिय हो गए थे और पाकिस्तान में हिंदुओं पर अत्याचार, बलात्कार, अपहरण, हत्या और जबरन धर्म परिवर्तन की कहानियां फैला रहे थे। मुस्लिम लीग भी नफरत फैलाने में उतनी ही सक्रिय थी। जिन्ना द्वारा 15 अगस्त 1946 को बुलाए गए 'प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस' के बाद से, जिसे मुस्लिम लीग के सैनिकों द्वारा बेहद क्रूरता से अंजाम दिया गया था, भारत के मुस्लिम बहुल हिस्सों में हिंदुओं का नरसंहार अभूतपूर्व रहा था, जिसने हिंदू प्रतिशोध को काफी हद तक भड़का दिया था।
माउंटबेटन चिंतित थे। वे जानते थे कि अगर दिल्ली में आग लग गई तो भारत का अस्तित्व छिन जाएगा। उन्होंने कलकत्ता और पूर्वी बंगाल में उस व्यक्ति द्वारा किए गए चमत्कार को देखा था, जिसे वे अक्सर 'छोटी चिड़िया' और 'एक अकेला शांति रक्षक' कहते थे। उन्हें उम्मीद थी कि गांधी जी दिल्ली को बचाने के लिए एक और

चमत्कार करेंगे और उन्होंने इस बैठक में उनकी सेवाएं लेने का फैसला किया था। हालांकि, एक और समस्या थी। विभाजन की शर्तों के अनुसार, भारत और पाकिस्तान को अविभाजित भारत की नकद राशि में आनुपातिक हिस्सा मिलना था। 3,750 मिलियन रुपये की नकद राशि में से 200 मिलियन रुपये सत्ता हस्तांतरण के दिन पाकिस्तान को दिए गए थे। विभाजन समिति, जिसके नेहरू और पटेल दोनों सदस्य थे, की गहन बातचीत के बाद यह तय हुआ कि पाकिस्तान को 55 करोड़ रुपये और दिए जाएंगे; नेहरू और पटेल ने अपने पाकिस्तानी समकक्षों के साथ एक संधि पर हस्ताक्षर करके इसकी पुष्टि की। अब दिवालिया होने की कगार पर खड़ा पाकिस्तान शेष राशि की मांग कर रहा था। पटेल और नेहरू का मानना था कि कश्मीर मुद्दे के हल होने तक भुगतान रोक देना चाहिए। एक सुझाव यह था कि यह पैसा बिल्कुल भी न दिया जाए बल्कि इसका इस्तेमाल शरणार्थियों के पुनर्वास के लिए किया जाए।
बकाया राशि देने से इनकार करना गैरकानूनी होता। इससे भारत पर एक अविश्वसनीय देश का दाग लग जाता, जो अपने संधियों और प्रतिबद्धताओं का सम्मान नहीं करता। अगर पाकिस्तान भारत को मध्यस्थ के पास घसीटता, तो भारत की हार निश्चित थी। माउंटबेटन भारत के गवर्नर जनरल थे, लेकिन उनकी वफादारी ब्रिटिश राजशाही के प्रति थी; सरकार के मुखिया के रूप में वे भारतीय सरकार के किसी भी कार्य में भागीदार होते। वे इस धोखे के लिए ज़िम्मेदार नहीं बनना चाहते थे।
गांधी जी से मुलाकात के दौरान, माउंटबेटन ने राजधानी में बिगड़ती सांप्रदायिक स्थिति और गृहयुद्ध में तब्दील होने की आशंका पर चर्चा शुरू की। गांधी जी, जिन्हें स्थिति की जानकारी मिल रही थी और जो मुसलमानों और हिंदुओं दोनों से बातचीत कर रहे

थे, चिंतित थे; उन्हें धीरे-धीरे यह एहसास होने लगा था कि स्थिति को संभालने के लिए उन्हें स्वयं को बलिदान करना होगा। उन्होंने माउंटबेटन को आश्वासन दिया कि वे जल्द ही ऐसे कदम उठाएंगे जिससे स्थिति बेकाबू न हो। जब गांधी जी जाने के लिए उठे, तो माउंटबेटन ने पाकिस्तान को भुगतान के मुद्दे पर अपनी चिंता व्यक्त की। गांधी जी ने भारत के रुख और उसकी अस्थिरता के साथ-साथ उसके नैतिक निहितार्थों के बारे में उनकी बातें सुनीं। उन्होंने असहमति जताते हुए सिर हिलाया और चले गए।
उस शाम, अपनी प्रार्थना सभा में, गांधीजी ने राजधानी की स्थिति और शरणार्थियों की दुर्दशा पर अपनी चिंता व्यक्त की। मुस्लिम घरों पर जबरन कब्जा किया जा रहा था और उन्होंने बेघर शरणार्थियों की पीड़ा पर गहरी सहानुभूति जताई। आवास उपलब्ध कराना सरकार का कर्तव्य था। मस्जिदों पर कब्जा करके उनमें हिंदू मूर्तियां स्थापित करने का भी मामला था। उन्होंने कहा कि वे नहीं चाहते कि उनके देशवासी ऐसा व्यवहार करें और उन्होंने आमरण अनशन शुरू करने की घोषणा की।
पुणे में, गांधी के अनशन करने के फैसले की खबर शनिवार पेठ स्थित हिंदू राष्ट्र के कार्यालय में बैठे दो लोगों तक पहुंची। शनिवार पेठ पुराने पुणे का एक घनी आबादी वाला इलाका था। ये दोनों व्यक्ति हिंदू राष्ट्र के संपादक और प्रकाशक, नथुराम और आप्टे थे। आरएसएस और हिंदू महासभा के इन दो उग्र नेताओं ने फैसला किया कि भारत सरकार के कामकाज में गांधी का हस्तक्षेप असहनीय है। उनका मानना था कि अगर इस व्यक्ति को नहीं रोका गया, तो वह उनके सपनों के हिंदू राष्ट्र की नींव को अपूरणीय क्षति पहुंचाएगा। आप्टे ने नथुराम की ओर देखकर कहा, 'गांधी की हत्या करने का यह एक अच्छा बहाना है। माहौल अनुकूल है और सावरकर का

आशीर्वाद हमारे साथ है, इसलिए हमें समर्थन मिलने का पूरा भरोसा है। हमारे लोग तैयार हैं, इस बार हम जरूर सफल होंगे।' नथुराम ने आप्टे की ओर देखा, उनकी आंखों में कोई भाव नहीं था, और उन्होंने कहा, 'इस बार हमें गांधी को मारना ही होगा।' उन्होंने पहले भी कोशिश की थी और असफल रहे थे, लेकिन इस बार वे नहीं रुकेंगे। इस बार उनके पास समर्थन था। उनके पास योजना थी और सफलता के साधन भी थे। वे अपने वित्तपोषकों को हिंदू वर्चस्ववादी विचारधारा के प्रति अपनी प्रतिबद्धता के बारे में आश्वस्त करने के लिए कुछ करना चाह रहे थे। मुस्लिम-विरोधी और पाकिस्तान-विरोधी योजनाओं के लिए धन देने वालों के बीच उनकी विश्वसनीयता सबसे निचले स्तर पर थी; उन्होंने बार-बार बड़े-बड़े वादे किए लेकिन उन्हें पूरा करने में विफल रहे।
मंगलवार, 13 जनवरी 1948
दिल्ली के बिरला हाउस में गांधीजी ने सुबह 11:55 बजे 'वैष्णव जन तो तेने कहिये' (यानी 'उसे सच्चा ईश्वर का बंदा कहो जो...') गीत गाकर अपना उपवास शुरू किया। उनके चारों ओर उनके दल के सदस्य और बिरला परिवार के लोग मौजूद थे।
सितंबर में दिल्ली (जिसे अब 'मृतकों का शहर' कहा जाने लगा था) में वापसी के बाद से गांधीजी को करीब से देखने वालों ने गवाही दी कि उपवास शुरू होने के बाद से वे इतने प्रसन्न कभी नहीं दिखे थे। अपने लंबे उपवासों के इतिहास में यह पहली बार था कि गांधीजी ने अपने करीबी सहयोगियों को उनकी पूर्व-निर्धारित जिम्मेदारियों को निभाने के लिए जाने पर जोर नहीं दिया। ऐसा लग रहा था मानो उन्हें आभास हो गया था कि कोई संकट आने वाला है जिसके दौरान उन्हें अपने भरोसेमंद लोगों की उपस्थिति की आवश्यकता होगी। इससे पहले, जब उन्होंने अली बंधुओं के साथ रहते हुए इक्कीस दिन

का उपवास शुरू किया था, तो उन्होंने उनसे पूछा था कि क्या बिना सलाह लिए उपवास करना निष्ठा का उल्लंघन नहीं है? उन्होंने उत्तर दिया, 'क्या हम सभी ने ईश्वर के प्रति निष्ठा की शपथ नहीं ली है? तो फिर ईश्वर के साथ अपनी प्रतिज्ञा निभाकर मैं किसी के प्रति बेवफाई का दोषी कैसे हो सकता हूँ?' इस बार उनके मित्र बेहतर जानते थे। नेहरू और पटेल उन पर उपवास छोड़ने के लिए दबाव नहीं डालने वाले थे। दरअसल, पटेल गांधी के फैसले से नाराज थे और नेहरू अनशन समाप्त करने के लिए उनकी शर्तों को पूरा करने में पहल करने से हिचकिचा रहे थे। पटेल ने अहमदाबाद और बंबई जाने से पहले केवल इतना संदेश भेजा कि गांधी की जो भी इच्छा होगी, वे उसे पूरा करेंगे।
जब एक सिख मित्र ने गांधीजी से पूछा कि उनके अनशन के लिए वे किसे जिम्मेदार मानते हैं, तो गांधीजी ने कहा कि वे किसी व्यक्ति या समुदाय को विशेष रूप से दोषी नहीं ठहराते। लेकिन उन्हें यह जरूर महसूस हुआ कि यदि हिंदू और सिख दिल्ली से मुसलमानों को निकालने पर अड़े रहे, तो वे भारत और अपने धर्म के साथ विश्वासघात करेंगे। उनका अनशन 'सभी को साथ लेकर चलने वाला' था, जो किसी विशेष के विरुद्ध नहीं, बल्कि सभी की अंतरात्मा को झकझोरने वाला था। उन्होंने कहा, 'यदि सभी समूह या उनमें से कोई एक भी पूरी तरह से सहयोग करे, तो मुझे पता है चमत्कार अवश्य होगा। उदाहरण के लिए, यदि सिख एक होकर मेरी अपील का जवाब दें, तो मैं पूर्णतः संतुष्ट हो जाऊंगा। मैं जाकर पंजाब में उनके बीच रहूंगा। मैं जानता हूं कि वे साहसी लोग हैं और अहिंसा का ऐसा उदाहरण प्रस्तुत कर सकते हैं जो सभी के लिए मार्गदर्शक बनेगा।' उस समय कश्मीर के प्रधानमंत्री शेख अब्दुल्ला अपने उप प्रधानमंत्री बख्शी गुलाम मोहम्मद के साथ दिल्ली में थे।

उन्होंने गांधीजी से कश्मीर के लिए अपना अनशन समाप्त करने का अनुरोध किया। उन्होंने कहा, 'कश्मीर को आज पहले से कहीं अधिक आपकी आवश्यकता है।' गांधीजी ने उनसे कहा कि उनका अनशन कश्मीर के लिए भी है। उनके घनिष्ठ मित्र और सहयोगी मौलाना आजाद ने हस्तक्षेप करते हुए कहा, 'चाहे हम अपना सिर पत्थर की दीवार से ही क्यों न टकरा लें, एक बार लिया गया उनका संकल्प नहीं टूटेगा। उनसे और बहस करना केवल उनकी पीड़ा को बढ़ाना है। हमारे लिए एकमात्र उपाय यही है कि हम यह सोचना शुरू करें कि हम उनकी शर्तों को पूरा करने के लिए क्या कर सकते हैं, जिससे वे अपना अनशन समाप्त करने के लिए विवश हो जाएं।' इसके बाद हिंदू और सिख शरणार्थियों का एक प्रतिनिधिमंडल उनसे मिलने आया। उन्होंने उनसे कहा कि अनशन समाप्त करवाना उनके हाथ में है। 'आपको यह आश्वासन देना होगा कि भले ही शेष भारत आग की लपटों में घिर जाए, दिल्ली सुरक्षित रहेगी। यदि आप अभी मेरी बात नहीं मानेंगे, तो बाद में आप सभी पछताएंगे और दुख से हाथ मलेंगे।'
विडंबना यह है कि जिस दिन गांधीजी ने अपना उपवास शुरू किया, उसी दिन लॉर्ड और लेडी माउंटबेटन गवर्नमेंट हाउस में एक स्वागत समारोह आयोजित कर रहे थे। गांधीजी के कुछ साथियों को भी आमंत्रित किया गया था। वे जाने को लेकर असमंजस में थे, लेकिन गांधीजी ने उन्हें मना लिया। उन्होंने प्यारेलाल से कहा, 'माउंटबेटन शायद आपसे उपवास के बारे में बात करना चाहेंगे। उनकी प्रतिक्रिया सीधे उनसे सुनना फायदेमंद होगा। वैसे भी, आप यह बता सकते हैं कि समारोह में कोई पेय पदार्थ परोसे गए थे या नहीं!'
समारोह में प्यारेलाल से मुलाकात होने पर माउंटबेटन ने तुरंत कहा, 'मेरी केवल एक ही आलोचना है। उन्हें पहले पंडित नेहरू से इस

बारे में चर्चा कर लेनी चाहिए थी।' उसी दिन पाकिस्तान से एक चौंकाने वाली खबर आई थी। उत्तर-पश्चिम सीमांत प्रांत से हिंदू और सिख शरणार्थियों को लेकर आ रही एक ट्रेन पर पश्चिमी पंजाब के गुजरात रेलवे स्टेशन पर हमला हुआ था। बड़ी संख्या में यात्रियों का नरसंहार हुआ था और महिलाओं का अपहरण कर लिया गया था। इस घटना का जिक्र करते हुए माउंटबेटन ने टिप्पणी की, 'इससे गांधी जी का काम और भी कठिन हो जाता है। लेकिन उनकी विजय इससे और भी बड़ी होगी।' जब प्यारेलाल ने यह बातचीत गांधी जी को बताई, तो उन्होंने कहा, 'क्या मैंने अक्सर यह नहीं कहा है कि अहिंसा की शक्ति को पूरी तरह से समझने के लिए एक महान योद्धा होना आवश्यक है?' गुजराती कवि प्रीतम की कविता उद्धृत करते हुए उन्होंने कहा, 'हरिनो मरग चे शूरानो, नहीं कायरनु काम जो', 'भगवान का मार्ग वीरों के लिए है, कायरों के लिए नहीं।' शाम की नमाज के दौरान उन्होंने घोषणा की कि वे अपना उपवास तभी तोड़ेंगे जब दिल्ली में हालात ऐसे हो जाएंगे कि शांति को कोई खतरा पहुंचाए बिना सेना और पुलिस की वापसी संभव हो सकेगी।
पुणे में, नथुराम गोडसे ने अपनी जीवन बीमा पॉलिसियों में बदलाव किया। उन्होंने नारायण आप्टे की पत्नी चंपुताई आप्टे को 2,000 रुपये की पॉलिसी में लाभार्थी नामित किया, जिस पर आप्टे ने गवाह के रूप में हस्ताक्षर किए।
गिरोह द्वारा अंतिम तैयारियां शुरू हो चुकी थीं।
बुधवार, 14 जनवरी 1948
दिल्ली में, देश के अन्य हिस्सों की तरह, मकर संक्रांति का त्योहार मनाया जा रहा था। महाराष्ट्र में लोग गुड़ और तिल से बनी मिठाइयों का आदान-प्रदान करते हैं। कांग्रेस समाजवादी प्रेमा कांतक ने गांधीजी के उपवास के दूसरे दिन उन्हें घर का

बना तिलगुल भेजा, जिसे उन्होंने बिड़ला हाउस में उपस्थित लोगों में बाँट दिया। उपवास के एक दिन बाद ही गांधीजी की कुछ वर्गों द्वारा आलोचना की जाने लगी। कुछ लोगों ने आरोप लगाया कि गांधीजी को केवल मुसलमानों से सहानुभूति है और उन्होंने उन्हीं के लिए उपवास किया है। उन्होंने उत्तर दिया कि एक तरह से वे सही हैं। उन्होंने जीवन भर अल्पसंख्यकों का साथ दिया। पाकिस्तान के गठन ने मुसलमानों को उनके गौरव और आत्मविश्वास से वंचित कर दिया, जिससे राज्य की नींव कमजोर हो गई। लेकिन उनका उपवास मुसलमानों के खिलाफ भी था, इस अर्थ में कि इससे उन्हें अपने हिंदू और सिख भाइयों के सामने खड़े होने की शक्ति मिले। दिल्ली के एक मौलाना को, जिन्होंने कुछ दिन पहले कहा था कि उन्हें इंग्लैंड जाने के लिए सुरक्षित मार्ग दिया जाना चाहिए, उन्होंने कहा, 'तब मेरे पास आपको देने के लिए कोई जवाब नहीं था। अब मैं आपका सामना कर सकता हूँ।' क्या मैं सरकार से आपके लिए इंग्लैंड जाने का इंतज़ाम करने को कहूँ? मैं उनसे कहूँगा: "ये वो बेवफ़ा मुसलमान हैं जो भारत छोड़ना चाहते हैं। इन्हें जो सुविधा चाहिए, दे दीजिए।" मौलाना ने माफ़ी माँगी और गांधी ने पलटकर कहा, "ये तो उस अंग्रेज़ की तरह होगा जो आपको लात मारे और साथ ही कहता रहे 'माफ़ कीजिए'।" उन्होंने गंभीर स्वर में आगे कहा, "क्या आपको इंग्लैंड भेजे जाने की गुहार लगाने में शर्म नहीं आती? और फिर आपने कहा कि ब्रिटिश शासन के अधीन गुलामी, भारत संघ के अधीन आज़ादी से बेहतर थी। आप, जो खुद को देशभक्त और राष्ट्रवादी कहते हैं, ऐसे शब्द बोलने की हिम्मत कैसे करते हैं? आपको अपने दिल को साफ़ करना होगा और शत प्रतिशत सच बोलना सीखना होगा। वरना भारत आपको ज़्यादा देर तक बर्दाश्त नहीं करेगा और मैं भी आपकी मदद नहीं कर पाऊँगा।"

उस दोपहर बिरला हाउस के लॉन में मंत्रिमंडल की बैठक हुई और उन्होंने पाकिस्तान को 55 करोड़ रुपये की शेष राशि का भुगतान रोकने के अपने निर्णय पर पुनर्विचार करने का फैसला किया। इससे भारतीय समाज के कुछ वर्गों में आक्रोश फैल गया। हालांकि गांधी जी मंत्रिमंडल के भुगतान रोकने के फैसले से नाखुश थे, लेकिन उन्होंने अपने किसी भी बयान में कभी यह नहीं कहा था कि यह उनकी अनशन समाप्त करने की शर्तों में से एक है।
उस शाम की प्रार्थना सभा में गांधीजी ने पश्चिमी पाकिस्तान के गुजरात में शरणार्थियों के नरसंहार और कराची में हिंदुओं और सिखों के नरसंहार के बारे में बात की। उन्होंने कहा, 'संघ कब तक ऐसी चीजें बर्दाश्त कर सकता है? मैं अपने अनशन के बावजूद हिंदुओं और सिखों के धैर्य पर कब तक भरोसा कर सकता हूँ? पाकिस्तान को इस स्थिति को रोकना होगा। उन्हें यह प्रतिज्ञा करनी होगी कि जब तक हिंदू और सिख वापस आकर पाकिस्तान में सुरक्षित नहीं रह लेते, तब तक वे चैन से नहीं बैठेंगे। पाकिस्तान पाक (शुद्ध) बनेगा... अतीत की बातें भुला दी जाएंगी, अतीत के भेदभाव मिटा दिए जाएंगे, पाकिस्तान में सबसे छोटे और सबसे कमजोर व्यक्ति को भी वही सम्मान और जीवन-संपत्ति की सुरक्षा मिलेगी जो कायद-ए-आजम जिन्ना को प्राप्त है। ऐसा पाकिस्तान कभी नष्ट नहीं हो सकता। तब तक और तब तक मैं इस बात के लिए पश्चाताप करता रहूँगा कि मैंने कभी इसे पाप कहा था, जैसा कि मुझे आज मानना ही पड़ेगा, यह पाप है। मैं पाकिस्तान को कागजों पर नहीं, पाकिस्तानी वक्ताओं के भाषणों में नहीं, बल्कि हर पाकिस्तानी मुसलमान के दैनिक जीवन में देखना चाहता हूँ।' तब संघ के निवासी यह भूल जाएंगे कि उनके बीच कभी कोई दुश्मनी थी और अगर मैं गलत नहीं हूं, तो संघ गर्व से पाकिस्तान की नकल करेगा और

अगर मैं जीवित रहा तो मैं उससे कहूंगा कि वह अच्छे कार्यों में पाकिस्तान से भी आगे निकल जाए। यह अनशन इसी का एक प्रयास है। ऐसे सपने को साकार करने के लिए भला कौन अपनी जान कुर्बान करने को तैयार नहीं होगा? तब हमें सच्चा स्वराज मिलेगा। तब भले ही कानूनी और भौगोलिक रूप से हम दो राज्य हों, लेकिन रोजमर्रा की जिंदगी में कोई यह नहीं सोचेगा कि हम अलग हैं। मुझे याद है कि मैंने 1896 में दिल्ली किले की यात्रा के दौरान एक द्वार पर एक श्लोक पढ़ा था, जिसका अनुवाद है: "अगर धरती पर स्वर्ग है, तो वह यहीं है, यहीं है"। मैं उस श्लोक को न्यायसंगत रूप से पाकिस्तान के द्वारों पर खुदा हुआ देखना चाहता हूं।
उस रात पश्चिमी पंजाब से आए कुछ सिख शरणार्थियों ने बिरला हाउस के बाहर प्रदर्शन किया। वे इस बात से नाराज़ थे कि गांधी जी उनसे उन घरों को खाली करने की मांग कर रहे थे जिन पर उन्होंने मुस्लिम निवासियों को बेदखल करके कब्ज़ा कर लिया था। उन्होंने गुस्से में नारे लगाए, 'खून का बदला खून', 'आंख के बदले आंख', 'मरता है तो मरने दो, हमें घर दो' और 'गांधी को मरने दो'। नेहरू, जो एक सभा के बाद बिरला हाउस से निकल ही रहे थे, अपनी कार से कूदे और गुस्से से कांपते हुए प्रदर्शनकारियों की ओर दौड़े और चिल्लाए, 'कौन हिम्मत करता है 'गांधी को मरने दो' चिल्लाने की? हिम्मत करने वाला मेरे सामने ये शब्द दोहराए। उसे पहले मुझे मारना होगा।' नेहरू के क्रोध के आगे प्रदर्शनकारी तितर-बितर हो गए। अपने अंधेरे कमरे में गांधी ने पूछा, 'वे क्या चिल्ला रहे हैं?' वे "गांधी को मरने दो" के नारे लगा रहे हैं।
'वे कितने हैं?'
'ज्यादा नहीं।'

गांधी ने आह भरी और अपनी आदत के अनुसार भगवान राम का नाम दोहराना शुरू कर दिया।
अगस्त 1946 के कलकत्ता हत्याकांड के बाद से गांधी जी मुसलमानों से कहते आ रहे थे कि अगर वे अपने सहधर्मियों के अत्याचारों की बहादुरी से निंदा करने के बजाय चुप बैठे रहे, चाहे इसके लिए उन्हें अपनी जान भी जोखिम में डालनी पड़े, या अगर वे उन अत्याचारों के अपराधियों के प्रति गुप्त सहानुभूति रखते रहे, तो उन पर उन लोगों का प्रकोप बरसेगा जिनके साथ—पाकिस्तान हो या न हो—उनमें से अधिकांश को रहना ही है। लेकिन उनकी चेतावनियों को बड़े पैमाने पर अनसुना कर दिया गया, जिसका दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम यह हुआ कि भारतीय मुसलमान, जिन्होंने बीज बोने की कोशिश की थी, अब बवंडर काटने के लिए मजबूर थे। अपने अनशन की शुरुआत में उन्होंने मौलानाओं के एक समूह से, जो उनसे अपना निर्णय बदलने का अनुरोध करने आए थे, कहा था कि अगर गुजरात में ट्रेन में हिंदू और सिख शरणार्थियों के हालिया नरसंहार जैसी घटनाएं बिना रोक-टोक के जारी रहीं, तो 'दस गांधी भी भारतीय मुसलमानों को नहीं बचा पाएंगे।'
पुणे में, नथुराम ने अपनी दूसरी जीवन बीमा पॉलिसी में बदलाव किए। उन्होंने अपने छोटे भाई गोपाल गोडसे की पत्नी सिंधुताई गोडसे को 3,000 रुपये की पॉलिसी का लाभार्थी नामित किया।
उसी दोपहर आप्टे और गोडसे दक्कन एक्सप्रेस से बॉम्बे के लिए रवाना हुए। ट्रेन पुणे से शाम 4:30 बजे चली। वे द्वितीय श्रेणी के डिब्बे में बैठे थे। बैज, साधु के वेश में, अपने नौकर शंकर किस्तय्या के साथ, जो विस्फोटक और डेटोनेटर लेकर आए थे, उसी ट्रेन में सवार होकर भीड़भाड़ वाले तृतीय श्रेणी के डिब्बे में बैठे।

समुदाय है। दोनों भाई वैष्णव संप्रदाय के संस्थापक वल्लभाचार्य के वंशज होने का दावा करते थे। दादा महाराज और उनके भाई चरमपंथी हिंदू गतिविधियों के वित्तपोषक के रूप में जाने जाते थे और उन्होंने अतीत में मुसलमानों के खिलाफ किए गए हमलों को वित्तपोषित किया था। आप्टे द्वारा रची गई विभिन्न योजनाओं को उनका समर्थन प्राप्त था, इसलिए उन्हें विश्वास था कि वे अपने अंतिम कृत्य के लिए उनका समर्थन प्राप्त कर सकते हैं। दीक्षित बैज को भी जानते थे क्योंकि उन्होंने उनसे चाकू- रोधी चेन मेल जैकेट खरीदी थी; उन्होंने बैज से अपने लिए इसी तरह की बुलेट-प्रूफ जैकेट बनाने का भी अनुरोध किया था।
जब वे दीक्षित महाराज के घर पहुंचे तो वे सो रहे थे, इसलिए आप्टे ने विस्फोटकों से भरा बैग एक नौकर के पास छोड़ दिया और उसे सुरक्षित स्थान पर रखने के लिए कहा और बताया कि वे इसे बाद में ले लेंगे।
इसके बाद चारों लोग हिंदू महासभा कार्यालय गए। आप्टे ने बैज को यात्रा खर्च के लिए 50 रुपये दिए और उन्हें तथा किस्तय्या को कार्यालय परिसर में ही रुकने को कहा। आप्टे उन दोनों से जल्द से जल्द छुटकारा पाना चाहते थे ताकि वे मनोरमा से मिल सकें।
जैसा कि उन दोनों की आदत थी, जो गिरोह के अन्य सदस्यों की तुलना में खुद को अधिक विलासिता की अनुमति देते थे, आप्टे और गोडसे ने व्यापारिक और सरकारी जिले के बाहरी इलाके में स्थित मरीन ड्राइव पर सी ग्रीन साउथ होटल में चेक-इन किया था।
जब बैज और किस्तय्या हिंदू महासभा कार्यालय में दाखिल हुए तो उनकी मुलाकात मदनलाल पाहवा से हुई। एक-दूसरे को नमस्कार करने के बाद बैज ने करकरे के बारे में पूछा। पाहवा ने बताया कि करकरे (अपनी पंजाबी लहजे वाली हिंदी में, पाहवा उन्हें 'करकरा सेठ'

कहते थे) बॉम्बे के पास स्थित ठाणे कस्बे में अपने रिश्तेदारों से मिलने गए हैं और या तो उसी रात देर से या अगली सुबह लौट आएंगे।
इसी बीच, पाहवा ने उसी दोपहर डॉ. जैन से मुलाकात की और उन्हें अहमदनगर में अपने समूह द्वारा किए गए कार्यों के बारे में बताया। इसी समय डॉ. जैन से मिलने आए उनके मित्र अंगद सिंह जाने के लिए उठे। पाहवा ने शेखी बघारते हुए बताया कि वह एक ऐसे समूह का हिस्सा हैं जो एक महत्वपूर्ण मिशन पर दिल्ली जा रहा है। उकसाने पर उन्होंने कहा कि उनका मिशन एक बहुत ही महत्वपूर्ण नेता की हत्या करना था, जिसके लिए उन्होंने बम और हथियार जुटा लिए थे। उन्होंने बताया कि करकरा सेठ, जो पिछली बार पाहवा के साथ गए थे, इस मिशन के लिए धन जुटा रहे थे। पाहवा ने दावा किया कि उन्हें गांधीजी की प्रार्थना सभा में बम विस्फोट करके अफरा- तफरी मचाने का काम सौंपा गया था। इस अफरा-तफरी का फायदा उठाकर समूह के बाकी सदस्य गांधीजी को 'वश में' कर लेंगे। जैन ने पाहवा की बात को गंभीरता से नहीं लिया क्योंकि वे जानते थे कि वह शेखी बघारने वाला व्यक्ति है।
डॉ. जैन ने अपने बयान में कहा कि उन्होंने अगले दिन अंगद सिंह से पाहवा की कही बातों के बारे में बात की और दोनों इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि पाहवा सिर्फ शेखी बघार रहा था।
गुरुवार, 15 जनवरी 1948
बिरला हाउस में, अपने उपवास के तीसरे दिन, गांधीजी की हालत बिगड़ती जा रही थी। वे इतने कमजोर हो गए थे कि उन्हें कुर्सी पर बिठाकर शौचालय ले जाना पड़ता था। तीन चिकित्सकों, डॉ. बी.सी. रॉय, डॉ. जीवराज मेहता और डॉ. एम.डी.डी. गिल्डर, जिन्होंने उनकी जांच की थी, द्वारा जारी चिकित्सा बुलेटिन में कहा गया था:

'गांधीजी का वजन स्वाभाविक रूप से घट रहा है, कमजोरी बढ़ गई है। आवाज कमजोर हो गई है। उनके मूत्र में एसीटोन कण पाए गए हैं।' इसका तात्पर्य यह था कि उपवास के परिणामस्वरूप शरीर के ऊतकों के विघटन से रक्त में विषाक्त पदार्थ भरने लगे थे। वे उस स्थिति में पहुँच चुके थे जिसे चिकित्सकीय भाषा में 'खतरे का क्षेत्र' कहा जाता है। डॉक्टरों के लिए चिंता की बात यह थी कि उनका शरीर जल संतुलन बनाए नहीं रख पा रहा था: 68 औंस गर्म पानी के सेवन के मुकाबले शरीर से केवल 28 औंस पानी ही बाहर निकल रहा था। दूसरे शब्दों में, उनके गुर्दे खराब हो रहे थे।
लेकिन उनका जोश अभी भी बरकरार था। मीराबेन को लिखे एक पत्र में गांधीजी ने मज़ाक में लिखा: 'मैं अपना भोजन वैसे ही कर रहा हूँ जैसे कोई व्रत रखने वाला व्यक्ति निर्धारित भोजन करता है। हैरान मत होइए। भोजन में आठ औंस गर्म पानी है जिसे बड़ी मुश्किल से घूंट-घूंट करके पिया जाता है। आप इसे ज़हर समझकर पीते हैं, जबकि आप जानते हैं कि अंत में यह अमृत है। जब भी मैं इसे पीता हूँ, यह मुझे नई ऊर्जा देता है। हैरानी की बात है कि इस बार मैं इस ज़हर जैसे स्वाद वाले लेकिन अमृत जैसे भोजन को लगभग आठ बार खा चुका हूँ। फिर भी मैं व्रत रखने का दावा करता हूँ और भोले- भाले लोग इसे मान लेते हैं! क्या अजीब दुनिया है!'
उस शाम प्रार्थना स्थल तक चलने की उनकी शारीरिक क्षमता बहुत कमज़ोर थी, इसलिए उनके कमरे में उनके पलंग के पास एक माइक्रोफोन लगाया गया। गांधीजी का भाषण सुनने के लिए वहाँ जमा हुए लोगों के बीच उनकी आवाज़ मुश्किल से सुनाई दे रही थी। प्रार्थना के बाद उनका पलंग बरामदे में रख दिया गया, जहाँ से बाहर खड़े लोग उन्हें देख सकते थे। वे एक सफेद ऊनी शॉल ओढ़े करवट लेटे थे, हाथ नमस्कार की मुद्रा में जुड़े थे और उनका चेहरा उदास, चिंतनशील

लेकिन साथ ही शांत था। जब लोगों ने उन्हें देखा, तो उन्हें एहसास हुआ कि उन्हें तुरंत कार्रवाई करनी होगी। हिंदू, मुस्लिम, सिख और अन्य समुदायों के प्रतिनिधिमंडलों ने उन्हें आश्वासन दिया कि वे शांति और सद्भाव से रहेंगे; सीमावर्ती प्रांतों से आए शरणार्थियों के प्रतिनिधिमंडल ने उन्हें आश्वासन दिया कि अत्यधिक कष्ट सहने के बावजूद वे प्रतिशोध नहीं लेंगे।
10,000 से अधिक हिंदू, सिख और मुस्लिम लोगों की एक रैली को संबोधित करते हुए नेहरू ने कहा, 'महात्मा गांधी का निधन भारत की आत्मा का निधन होगा, क्योंकि वे भारत की आध्यात्मिक शक्ति के प्रतीक हैं... एक पैगंबर की तरह, उन्होंने यह जान लिया था कि यदि सांप्रदायिक संघर्ष को तुरंत नहीं रोका गया, तो इससे स्वतंत्रता का अंत हो जाएगा।'
14 अगस्त 1946 को मुस्लिम लीग के प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस के बाद हुए नरसंहार के बाद, और विशेष रूप से विभाजन के बाद, गांधी ने अपनी कई प्रार्थना सभाओं में भारत के दोनों हिस्सों में नफरत फैलाने और सांप्रदायिक भावनाओं को भड़काने के लिए मुस्लिम लीग को जिम्मेदार ठहराया था। उनके घनिष्ठ मित्र शुऐब कुरैशी ने इस आलोचना को अनुचित बताया। लेकिन गांधीजी का मानना था कि इन कठिन समयों में, उन्हें कूटनीतिक शिष्टाचार के लिए बात को घुमा-फिराकर कहने के बजाय, सच को सच कहना चाहिए। उन्होंने कुरैशी से कहा कि वे वर्तमान स्थिति के लिए मुस्लिम लीग को दोषी ठहराने पर जरा भी पश्चाताप नहीं करते। 'मैं पूरी ईमानदारी से इसे दोषमुक्त नहीं कर सकता। न ही इस संकट में मुझे शब्दों को घुमा-फिराकर बोलना चाहिए या ऐसी बातें छुपानी चाहिए जो दूसरों को अप्रिय लगें। मैं यह भी कहना चाहता हूं कि जो लोग मेरे

स्वभाव के इस पहलू को नहीं समझ सकते, वे मेरे अनशन के सफल समापन के लिए की गई प्रार्थना में शामिल नहीं हो सकते। सच्ची मित्रता कायम रहे, इसके लिए सत्य बोलना मित्रता का अधिकार है, भले ही वह सुनने में अप्रिय लगे।'
अनशन के तीसरे दिन भारत सरकार ने एक विज्ञप्ति जारी कर घोषणा की कि उसने पाकिस्तान को 55 करोड़ रुपये की शेष राशि तुरंत चुकाने का निर्णय लिया है। विज्ञप्ति में कहा गया: 'राष्ट्रपिता द्वारा किए गए अनशन को लेकर विश्वव्यापी चिंता में सरकार भी भागीदार है। उनके साथ मिलकर सरकार ने भी भारत और पाकिस्तान के संबंधों को दूषित करने वाली दुर्भावना, पूर्वाग्रह और संदेह की खाई को पाटने के लिए हर संभव प्रयास किया है। गांधीजी के उद्देश्य को पूरा करने में हर संभव सहायता करने की प्रबल इच्छा से प्रेरित होकर सरकार ने राष्ट्र की आत्मा के शारीरिक कष्टों को समाप्त करने और राष्ट्र के मन को वर्तमान अशांति, कड़वाहट और संदेह से निकालकर रचनात्मक प्रयासों की ओर मोड़ने के आंदोलन में ठोस और महत्वपूर्ण योगदान की तलाश की है। सरकार राष्ट्रीय हित को हानि पहुंचाए बिना, भारत और पाकिस्तान के बीच टकराव पैदा करने वाले हर कारण को यथासंभव दूर करने के लिए तत्पर है...' गांधी जी का उपवास संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद की उस महत्वपूर्ण बैठक की पूर्व संध्या पर हुआ था जिसमें कश्मीर मुद्दे पर चर्चा होनी थी। उनसे पूछा गया कि क्या उनके उपवास का असर गुजरात में शरणार्थी ट्रेन हत्याकांड और कराची दंगों, जिनमें बड़ी संख्या में सिख मारे गए थे, पर पर्दा नहीं पड़ेगा? उन्हें बताया गया कि पाकिस्तान के प्रतिनिधि अपनी प्रतिष्ठा के लायक नहीं होंगे, यदि वे संयुक्त राष्ट्र की नज़र में भारत के पक्ष को पक्षपातपूर्ण बनाने के इस अवसर का पूरा लाभ नहीं

उठाते। गांधी जी ने उत्तर दिया कि वे ऐसी बातों से सत्य की खोज से विचलित होने के आदी नहीं हैं। उनका उपवास संयुक्त राष्ट्र को भी पवित्र करने और उसे शुद्ध करने के उद्देश्य से था। 'भारत के बाहर की शक्तियों और लोगों के बारे में मैंने जो कुछ भी जाना है, उसके आधार पर मैं साहसपूर्वक कह सकता हूँ कि उपवास ने केवल सकारात्मक प्रभाव डाला है। भारत में जो कुछ हो रहा है, उसका निष्पक्ष और तटस्थ दृष्टिकोण रखने वाले बाहरी लोग उपवास के उद्देश्य को विकृत नहीं कर सकते... संयुक्त राष्ट्र जानता है कि मेरा उपवास उन्हें सही निर्णय लेने और नवगठित दो डोमिनियनों को सही मार्गदर्शन देने में सहायक है।'
बंबई में, सुबह लगभग 7:20 बजे, आप्टे और गोडसे ने 17 जनवरी को बंबई से दिल्ली जाने वाली दोपहर की उड़ान में 'डी.एन. कर्मकार' और 'एस. मराठे' के छद्म नामों से दो सीटें आरक्षित करवाईं। उड़ान बुक करने के बाद, वे दादर स्थित हिंदू महासभा कार्यालय गए और मदनलाल, किस्तय्या और बैज से मिले। आप्टे ने उन्हें अपने साथ चलने के लिए कहा; चूंकि पाहवा तैयार नहीं थे, इसलिए उन्हें पीछे छोड़ दिया गया। चारों शिवाजी प्रिंटिंग प्रेस गए, जहां उनकी मुलाकात करकरे से हुई। यह प्रेस ठाणे के जी.एम. जोशी की थी, जो करकरे के पारिवारिक मित्र थे; करकरे ने पिछली रात यहीं बिताई थी। किस्तय्या को बाहर इंतजार करने के लिए कहा गया, बैज को स्वागत कक्ष में छोड़ दिया गया और आप्टे, गोडसे और करकरे जोशी के निजी केबिन में चले गए। जोशी से चंदा मांगने के उद्देश्य से हुई यह बैठक तीस मिनट तक चली। इसके बाद पांचों हिंदू महासभा कार्यालय लौट आए। करकरे ने पाहवा से अपना बिस्तर उठाकर उनके साथ चलने को कहा। आप्टे ने एक टैक्सी ली और किस्तय्या को छोड़कर बाकी सभी लोग दीक्षित महाराज के घर के लिए रवाना हो गए।

घर में प्रवेश करते ही पाहवा ने बिस्तर को हॉल में ही छोड़ दिया और सभी लोग सोने के कमरे में चले गए जहाँ दीक्षित आराम कर रहे थे। विस्फोटकों से भरा थैला मंगवाया गया। बैज ने सबको हथियार दिखाए और हथगोले चलाने का तरीका बताया। दीक्षित ने देखा कि बैज गलती कर रहा है और उसने सही तरीका बताया। फिर आप्टे ने थैला करकरे को सौंप दिया और उन्हें तथा मदनलाल को उसी शाम नई दिल्ली के लिए रवाना होने को कहा।
आप्टे ने दीक्षित से पूछा कि क्या वह उन्हें दो रिवॉल्वर दे सकते हैं। दीक्षित ने कहा कि उनके पास अभी रिवॉल्वर नहीं हैं, लेकिन वह लाने की कोशिश करेंगे। इसके बाद आप्टे, गोडसे और बैज दीक्षित के घर से बाहर आए और मंदिर के प्रांगण में खड़े हो गए। यहाँ आप्टे ने बैज से पूछा कि क्या वह किस्तय्या के साथ दिल्ली चलेंगे। आप्टे ने बैज को बताया कि 'तात्याराव' (मराठी में इसका अर्थ पिता का बड़ा भाई होता है और यह एक सम्मानजनक उपाधि है; हिंदू महासभा में वीर सावरकर इसी नाम से जाने जाते थे) ने तय कर लिया है कि गांधी, नेहरू और बंगाल के वरिष्ठ नेता हसन शहीद सुहरावर्दी को 'खत्म' करना है। उन्होंने यह काम आप्टे और गोडसे को सौंपा है। बैज उनके साथ चलने के लिए सहमत हो गए।
अब आप्टे-गोडसे गिरोह को उनका शूटर मिल गया था।
दिल्ली जाने से पहले बैज पुणे लौटना चाहता था क्योंकि उसका कुछ काम अधूरा रह गया था। नाथूराम भी अपने भाई गोपाल से मिलने पुणे जाना चाहता था। गोपाल को उसके लिए एक बंदूक लानी थी और नाथूराम यह सुनिश्चित करना चाहता था कि उसने वह काम कर दिया है। इसके बाद आप्टे, गोडसे और बैज दक्षिण-मध्य बंबई के एक पुराने व्यापारिक क्षेत्र पायधोनी के पास स्थित कॉटन एक्सचेंज बिल्डिंग की ओर गए। आप्टे और गोडसे अंदर चले गए और बैज बाहर ही

रह गया। बढ़ते खर्चों को पूरा करने के लिए आप्टे-गोडसे गिरोह अपने जान-पहचान वाले समर्थकों से चंदा इकट्ठा करने की कोशिश कर रहा था। वे पंद्रह-बीस मिनट बाद बाहर आए और हिंदू महासभा कार्यालय की ओर चल पड़े। बैज वहीं उतर गया; आप्टे ने उसे 17 जनवरी की सुबह विक्टोरिया टर्मिनस रेलवे स्टेशन पर मिलने के लिए कहा। इसके बाद आप्टे और गोडसे गाड़ी चलाकर चले गए।
उस शाम जब बैज किस्तय्या और उनके सामान को लेने महासभा कार्यालय गए, तो उनकी मुलाकात मदनलाल पाहवा से हुई, जिन्होंने बताया कि उनकी दिल्ली जाने वाली पंजाब मेल ट्रेन छूट गई है। उन्होंने बताया कि करकरे उनके लिए दिल्ली जाने वाली रात की ट्रेन के टिकट का इंतजाम कर रहे हैं। आखिरकार उन्हें पेशावर एक्सप्रेस में दो तृतीय श्रेणी की सीटें मिल गईं। यह ट्रेन अविभाजित भारत के उत्तर-पश्चिमी सीमांत प्रांत में स्थित बॉम्बे से पेशावर तक चलती थी। अब यह ट्रेन भारत की सीमाओं से बाहर नहीं जाती थी। ट्रेन रात 9:30 बजे निर्धारित समय पर विक्टोरिया टर्मिनस स्टेशन से रवाना हुई।
गिरोह के पहले दो सदस्य दिल्ली जा रहे थे।
बैज और किस्तय्या मद्रास मेल से पुणे के लिए रवाना हुए, जो उसी स्टेशन से एक घंटे बाद रवाना हुई थी। नाथूराम गोडसे भी उसी शाम पुणे के लिए रवाना हुए।
आप्ते ही एकमात्र व्यक्ति थे जो बॉम्बे में रुके रहे। वे मनोरमा के साथ कुछ दिन बिताना चाहते थे। आप्ते ने मनोरमा को बताया कि वे एक गुप्त मिशन पर जा रहे हैं, जिससे शायद वे वापस न लौटें। मनोरमा का दिल टूट गया: जिस व्यक्ति पर उन्होंने भरोसा किया था, वह किसी रहस्यमय मिशन के लिए उन्हें छोड़कर जा रहा था।

उनके परिवार का अपमान होगा और उन्हें समाज से बहिष्कृत कर दिया जाएगा।
शुक्रवार, 16 जनवरी 1948
दिल्ली में गांधी जी की हालत धीरे-धीरे गंभीर होती जा रही थी। उनके स्वास्थ्य में गिरावट आ रही थी; उनका इलाज कर रहे डॉक्टर उनकी खराब होती किडनी को लेकर चिंतित थे। उपवास के पहले दो दिनों में उनका वजन दो पाउंड कम हो गया था, लेकिन अब वह 107 पाउंड पर स्थिर था। उनकी चिंता अचानक मृत्यु की नहीं, बल्कि उनके महत्वपूर्ण अंगों को लंबे समय तक और अपरिवर्तनीय क्षति पहुंचने की थी। लेकिन गांधी जी उनकी बातों में आने वाले नहीं थे। 'मेरे एकमात्र मार्गदर्शक, बल्कि मेरे तानाशाह, ईश्वर हैं, जो अचूक और सर्वशक्तिमान हैं... यदि उन्हें मेरे इस दुर्बल शरीर की आगे भी आवश्यकता है, तो वे इसे चिकित्सकों की चेतावनियों के बावजूद बनाए रखेंगे। मैं उनके हाथों में हूं। इसलिए... मुझे न तो मृत्यु का भय है और न ही स्थायी क्षति का... लेकिन मुझे लगता है कि चिकित्सकों की चेतावनी—यदि देश को मेरी आवश्यकता है—तो लोगों को एकजुट होने के लिए प्रेरित करेगी। कठिन परिश्रम से प्राप्त स्वतंत्रता के बाद हमें जिस प्रकार का साहसी पुरुष और महिला होना चाहिए, उसी प्रकार हमें उन लोगों पर भी भरोसा करना चाहिए जिन्हें हम अपना शत्रु मानते हैं। साहसी लोग अविश्वास को तुच्छ समझते हैं।' अंतिम पत्र उन लोगों को संबोधित था जिन्हें आशंका थी कि पाकिस्तान को दिया गया पैसा कश्मीर में भारत के खिलाफ सैन्य आक्रामकता को जारी रखने के लिए इस्तेमाल किया जाएगा।
इस सुझाव पर प्रतिक्रिया देते हुए कि चूंकि सरकार ने पाकिस्तान को बकाया राशि तुरंत चुकाने पर सहमति जता दी है, इसलिए उन्हें

अपना अनशन वापस ले लेना चाहिए, उन्होंने कहा कि जिन कारणों से उन्होंने अनशन शुरू किया था, वे अभी तक हल नहीं हुए हैं। हत्याएं बंद नहीं हुई हैं। अनशन तोड़ने के बारे में सोचने से पहले बहुत कुछ किया जाना बाकी है। 'लोगों के दिल नहीं बदले हैं, नफरत अभी भी बरकरार है।'
उस शाम, अपने बिस्तर से प्रार्थना सभा को संबोधित करते हुए गांधीजी ने कहा कि उनकी प्रतिज्ञा तभी पूरी होगी जब दिल्ली के हिंदू, मुसलमान और सिख हृदय से एक हो जाएं। उनके अनशन का सबसे उपयुक्त उत्तर 'दोनों राज्यों के बीच पूर्ण मित्रता' होनी चाहिए, ताकि सभी समुदायों के सदस्य बिना किसी उत्पीड़न के किसी भी राज्य में आ-जा सकें। दोनों राज्यों के शेष भाग द्वारा दिल्ली पर अत्यधिक दबाव डालना गलत होगा। हमारी सरकार ने बिना सोचे-समझे एक उदार कदम उठाया है। पाकिस्तान की जवाबी कार्रवाई क्या होगी? इच्छाशक्ति हो तो रास्ते अनेक हैं। क्या वह है?' उन्होंने पूछा।
पटेल को उस दिन एक महत्वपूर्ण कार्य के लिए सौराष्ट्र जाना था, लेकिन वे राजधानी छोड़ने के इच्छुक नहीं थे। गांधीजी ने उन पर जाने का दबाव डाला, जिससे यह अटकलें लगने लगीं कि गृह मंत्री सरकार के फैसले और गांधीजी द्वारा किए गए अनशन के प्रति अपनी नाराजगी दिखाने के लिए दिल्ली छोड़ रहे हैं। गांधीजी ने पटेल के कार्यों का बार-बार बचाव किया था, जिससे भारत के लौह पुरुष पटेल के आत्मसम्मान को ठेस पहुंची थी। कांग्रेस में नेहरू समर्थक गुट द्वारा उनके खिलाफ चलाए जा रहे निरंतर अभियान के मद्देनजर, पटेल ने सौराष्ट्र जाने से पहले गांधीजी को लिखे पत्र में सरकार से इस्तीफा देने की पेशकश की।

बैज और किस्तय्या सुबह-सुबह पुणे पहुंचे। बैज ने अपने हथियारों का आखिरी जखीरा निकाला और उसे अपने नियमित ग्राहक और मित्र गणपत एस. खरात, जो राज्य विधानसभा के कांग्रेस सदस्य थे, को सुरक्षित रखने के लिए सौंप दिया। बैज को अपने पैतृक गांव चालीसगांव में स्थित अपनी संपत्ति भी बेचनी थी। सौदा तय हो चुका था और बैज दिल्ली रवाना होने से पहले औपचारिकताएं पूरी करना चाहते थे।
इसी बीच नथुराम भी आ गया था। वह बैज को ढूंढने के लिए दो बार शस्त्र भंडार गया था। उसी शाम लौटकर बैज हिंदू राष्ट्र कार्यालय गया और नथुराम से मिला। नथुराम ने एक छोटी पिस्तौल निकाली और बैज से उसे एक बड़ी और अधिक प्रभावी बंदूक से बदलने का अनुरोध किया। बैज ने हाल ही में हैदराबाद राज्य कांग्रेस के सदस्य शर्मा को एक .32 कैलिबर की रिवॉल्वर बेची थी, जो थोड़ी सी रकम लेकर बंदूक बदलने के लिए तैयार हो गया था। उसने बैज को चार कारतूस भी दिए। पिस्तौल तो.32 बोर की थी, लेकिन कारतूस थोड़े छोटे कैलिबर के थे, जो शायद मैगज़ीन से लोड होने वाली बंदूक के लिए थे। बैज को इस अंतर का पता नहीं था।
किरकी आर्म्स डिपो में, गोपाल गोडसे ने 17 जनवरी से 23 जनवरी 1948 तक आकस्मिक अवकाश के लिए एक और आवेदन दिया था। इस बार अवकाश स्वीकृत हो गया।
गोपाल ने अपने भाई से वादा किया था कि वह उक्सान स्थित अपने पैतृक घर में छिपाई हुई सैन्य रिवॉल्वर वापस ले आएगा। नाथूराम ने गोपाल को बंदूक और दिल्ली जाने के लिए 250 रुपये दिए और उसे 18 तारीख को दिल्ली रेलवे स्टेशन पर आप्टे और उससे मिलने के लिए कहा। गोपाल ने अपने भाई को आश्वासन दिया कि वह शुक्रवार शाम को

उक्सान से रिवॉल्वर ले आएगा और शनिवार को दोपहर की पंजाब मेल ट्रेन पकड़कर दिल्ली जाने के लिए समय पर बॉम्बे पहुंच जाएगा। अब गिरोह हथियारों से लैस था और हमले के लिए तैयार था। शनिवार, 17 जनवरी 1948
दिल्ली में, हिंदू और सिख शरणार्थियों और फिर नेहरू ने गांधीजी से मुलाकात की। गांधीजी ने उनसे आग्रह किया कि वे अपना अनशन समाप्त कर दें क्योंकि राजधानी में स्थिति तेजी से सुधर रही थी। गांधीजी ने उनसे कहा कि वे ज्यादा जल्दबाजी न करें। 'आप जो भी करें, वह सार्थक होना चाहिए। मुझे ठोस काम चाहिए।'
उस दिन गांधीजी को कराची से एक टेलीग्राम मिला था। दिल्ली से बेदखल किए गए मुस्लिम शरणार्थी जानना चाहते थे कि क्या अब वे वापस आकर अपने घरों पर दोबारा कब्जा कर सकते हैं। टेलीग्राम पढ़ते ही गांधीजी ने कहा, 'यही असली परीक्षा है।' उनके प्रतिनिधि टेलीग्राम की प्रतियां लेकर हर हिंदू और सिख शरणार्थी शिविर में गए और लोगों को समझाया कि गांधीजी का अनशन तोड़ने के लिए उन्हें क्या करना होगा।
शाम तक, 10,000 शरणार्थियों ने एक घोषणापत्र पर हस्ताक्षर कर दिए थे कि वे मुसलमानों का स्वागत करेंगे, भले ही उन्हें स्वयं दिल्ली की कड़ाके की ठंड में अपर्याप्त सुविधाओं वाले शरणार्थी शिविरों में रहना पड़े। उन्होंने गांधी जी को पूरा आश्वासन दिया कि वे लौट रहे मुसलमानों का स्वागत करेंगे और शांति, सद्भावना और सांप्रदायिक सामंजस्य के लिए काम करेंगे। उन्होंने गांधी जी से विनती की कि वे भारत को इस विपत्ति से बचाने के लिए अपना अनशन तोड़ दें।
उनकी उम्मीद तब और मजबूत हुई जब दिल्ली प्रशासन ने घोषणा की कि एक सप्ताह के भीतर दिल्ली में हर गैर-मुस्लिम शरणार्थी को किसी

न किसी प्रकार का आश्रय प्रदान किया जाएगा। नेहरू और उनके कुछ मंत्रिमंडल सहयोगियों ने शरणार्थियों के लिए अपने सरकारी बंगलों के द्वार खोल दिए। गांधी ने सुझाव दिया था कि अंग्रेजों द्वारा खाली किए गए और अब केंद्रीय मंत्रियों और नौकरशाहों के कब्जे वाले आलीशान बंगलों का उपयोग शरणार्थियों को ठहराने के लिए किया जाए, और पूर्व वायसराय के महल, गवर्नमेंट हाउस को शरणार्थियों के लिए अस्पताल में परिवर्तित किया जाए। पटियाला के महाराजा ने गांधीजी को आश्वासन दिया कि वे दिल्ली के सभी सिख नेताओं से मिल चुके हैं, जिन्होंने उन्हें वचन दिया है कि वे शहर में सांप्रदायिक सद्भाव और भाईचारे का संदेश फैलाएंगे। पटियाला में मुस्लिम आबादी पर कुछ सबसे भीषण अत्याचार हुए थे, लेकिन महाराजा ने खुद को निर्दोष बताया। मालेर कोटला के नवाब गांधीजी से मिलने आए और उन्हें बताया कि अशांति के दौरान, जब उनके राज्य में कुछ मुस्लिम शरणार्थियों ने स्थानीय सिखों को धमकाना शुरू कर दिया था, तब उन्होंने घोषणा की थी कि मालेर कोटला में मारे गए प्रत्येक सिख के बदले वे दस मुसलमानों को गोली मारेंगे। 'उसके बाद एक भी घटना नहीं हुई।' उनके पूर्वजों में से एक ने मुगल सम्राट औरंगजेब का बहादुरी से सामना किया था, जब औरंगजेब ने एक सिख गुरु के पुत्रों को मारने की घोषणा की थी। तब से पूरे सिखों ने मालेर कोटला के मुसलमानों को शरण दी है और इसके विपरीत भी। नवाब ने कहा कि विभाजन के बाद के दंगों के दौरान, मालेर कोटला सिखों और हिंदुओं के लिए एक शरणस्थल था। इसी प्रकार, जब मुसलमान अशांत समय में पंजाब से होकर कहीं भी यात्रा करते थे और यह साबित करते थे कि वे मालेर कोटला के निवासी हैं, तो सिखों द्वारा उन्हें संरक्षण दिया

जाता था। जब गांधीजी ने यह सुना तो उन्होंने कहा, 'तो भारत के लिए मेरा सपना मालेर कोटला में साकार हो गया।'
उस शाम अपनी प्रार्थना सभा में उन्होंने कहा कि उन्हें मिलने वाले टेलीग्रामों की संख्या बढ़ती जा रही है। पाकिस्तान से भी कई टेलीग्राम आए थे। जहाँ तक उनका संबंध था, वे अच्छे थे। लेकिन एक मित्र और शुभचिंतक होने के नाते, पाकिस्तान का भविष्य तय करने वालों को यह बताना उनका कर्तव्य था कि यदि वे पाकिस्तान द्वारा किए गए अन्याय को अनदेखा करते रहे और स्वीकार नहीं करते रहे, तो वे उस देश को स्थायी नहीं बना पाएंगे। उन्होंने विभाजन को एक अटल सत्य के रूप में स्वीकार कर लिया था और कहा कि यदि पाकिस्तान का अर्थ उसके नाम के अनुरूप हो—पवित्रों की भूमि— तो उन्हें पूरे भारत के पाकिस्तान बनने से कोई आपत्ति नहीं होगी। इसका यह अर्थ नहीं था कि वे विभाजन या स्वैच्छिक पुनर्मिलन का समर्थन करते थे, बल्कि मैं इस विचार को दूर करना और उसका विरोध करना चाहता हूँ कि पाकिस्तान को बलपूर्वक एकजुट किया जाए। मुझे आशा है कि इसे असहमति का संकेत नहीं समझा जाएगा। मैं सचमुच मृत्युशय्या पर लेटा हूँ, और आशा करता हूँ कि सभी पाकिस्तानी यह समझेंगे कि यदि मैं कमजोरी के कारण और उनकी भावनाओं को ठेस पहुँचाने के डर से, उन्हें अपने सच्चे विचार न बताऊँ तो मैं उनके और स्वयं के प्रति बेईमानी करूँगा। यदि मैं गलत हूँ... तो मुझे बताया जाना चाहिए, और यदि मैं आश्वस्त हूँ, तो मैं वादा करता हूँ कि मैंने यहाँ जो कुछ कहा है उसे वापस ले लूँगा। जहाँ तक मुझे पता है, इस बात पर कोई संदेह नहीं है। उन्होंने भारत के लोगों को भी चेतावनी दी कि वे उपवास के दबाव में आकर कोई कदम न उठाएं। 'आध्यात्मिक उपवास का कार्य हृदयों का शुद्धिकरण है। यदि यह शुद्धिकरण निष्ठापूर्वक किया जाए, तो यह

उस कारण के समाप्त होने पर भी समाप्त नहीं होता, जिसके कारण उपवास शुरू हुआ था... यह केवल मृत्यु के साथ ही समाप्त होता है... न तो राजा-महाराजा, न हिंदू-सिख और न ही कोई अन्य व्यक्ति स्वयं का या भारत का भला कर पाएगा... यदि इस पवित्र क्षण में वे मुझे मेरा उपवास भंग करने के उद्देश्य से गुमराह करें। इस सुखद स्थिति को भंग करने की आवश्यकता किसी को नहीं है, जब तक कि वह ईमानदारी से यह दावा न कर सके कि अपनी यात्रा में उसने जानबूझकर शैतान से ईश्वर की ओर रुख किया था।'
शाम होते-होते जी मिचलाने लगा। दोपहर से ही गांधीजी की बेचैनी बढ़ती जा रही थी। उपस्थित डॉक्टरों में से एक ने सुझाव दिया कि उन्हें पानी में एक औंस संतरे का रस मिला लेना चाहिए। गांधीजी ने जवाब दिया कि अगर ऐसा हुआ तो उन्हें उस दिन से इक्कीस दिन और उपवास करना पड़ेगा जिस दिन से वे पानी में संतरे का रस मिलाना शुरू करेंगे। एक अन्य डॉक्टर ने गुर्दों को सक्रिय करने के लिए उन पर कपिंग थेरेपी करने का सुझाव दिया, जिस पर गांधीजी ने कहा, 'मैं आपकी सहानुभूति की सराहना करता हूँ, लेकिन अगर मरना ही है तो मुझे मरने दीजिए।'
'लेकिन क्या कपिंग भी एक प्रकार की सेंक नहीं है, जिसे आपने प्राकृतिक चिकित्सा के अंतर्गत खारिज नहीं किया है?' डॉक्टर ने जोर देकर पूछा।
गांधी ने उत्तर दिया, 'इसी तरह हम अपने संकल्पों से भटक जाते हैं। अब मेरे लिए राम नाम ही एकमात्र प्राकृतिक उपचार है।' अपने उपवास के दौरान भी गांधीजी अपनी दिनचर्या से नहीं भटके, जो सुबह 3:30 बजे पहली प्रार्थना से शुरू होती थी। उस सुबह उन्होंने रिचर्ड साइमंड्स को एक पत्र लिखवाया, जिन्हें उन्होंने बिरला हाउस में रोगी के रूप में भर्ती कराया था और

आंत्रशोथ के दौरान उनकी देखभाल की थी। बंगाली वर्णमाला के अपने दैनिक अभ्यास के बाद, उन्होंने सुबह के समाचार पत्र, महत्वपूर्ण पत्र और टेलीग्राम पढ़वाए, जिसके बाद उन्होंने सुबह 10:30 बजे तक चिकित्सा जांच, मालिश और स्नान किया। फिर उन्होंने स्नान टब में लेटे हुए प्यारेलाल को भारत सरकार द्वारा पाकिस्तान के नकद शेष के हिस्से को जारी करने के निर्णय पर अपना बयान लिखवाया। सुबह 10:30 बजे से दोपहर 12 बजे के बीच उन्होंने सात आगंतुकों से मुलाकात की, जिनमें तीन राष्ट्राध्यक्ष शामिल थे। दोपहर 12:30 बजे से 3:35 बजे के बीच उन्होंने विश्राम किया, जिसके बाद उन्होंने अपनी नियमित प्राकृतिक चिकित्सा की दिनचर्या का पालन किया और नेहरू, मौलाना आजाद और दिल्ली के चार मौलानाओं सहित दस आगंतुकों के साथ गंभीर चर्चा की। शाम की नमाज के बाद उन्होंने लोगों की एक बड़ी भीड़ से मुलाकात की, जिसमें एक महाराजा, एक मुख्यमंत्री और केंद्रीय मंत्रिमंडल के लगभग आधा दर्जन मंत्री शामिल थे।
उस दिन डॉक्टरों के बुलेटिन में एक गंभीर चेतावनी दी गई थी: 'हमारी राय में, उपवास जारी रखना अत्यंत अनुचित होगा। इसलिए, लोगों को यह बताना हमारा कर्तव्य है कि वे तत्काल उपवास समाप्त करने के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ उत्पन्न करने हेतु कदम उठाएँ।'
उस शाम, परंपरा से हटकर, लॉर्ड और लेडी माउंटबेटन ने गांधीजी से अचानक मुलाकात की; गांधीजी ने उनका अभिवादन एक चुटीले अंदाज़ में किया, 'पहाड़ को मोहम्मद के पास लाने के लिए मुझे उपवास करना पड़ेगा!' यह महज़ एक व्यक्तिगत मुलाकात से कहीं बढ़कर था: माउंटबेटन ने बाद में कहा कि एक मित्र के स्वास्थ्य के लिए स्वाभाविक चिंता के अलावा, वे दुनिया को—और गांधीजी को—यह

संकेत देना चाहते थे कि वे उनके उपवास के उद्देश्य में उनके साथ हैं।
गैर-मुस्लिम दुकानदारों ने गांधीजी से मुलाकात कर उन्हें आश्वस्त किया कि उन्होंने बहिष्कार हटा लिया है और मुसलमान उनकी दुकानों पर आने के लिए स्वतंत्र हैं। दिल्ली की सब्जी मंडी में कुछ सबसे भीषण अत्याचार हुए थे और इस क्षेत्र के मुसलमानों को आर्थिक बहिष्कार का सामना करना पड़ा था।
एक रैली को संबोधित करते हुए मौलाना आजाद ने कहा कि गांधी जी ने सात शर्तें रखी थीं जिनका पालन करना अनिवार्य था। उनका अनशन तब समाप्त होगा जब सभी संबंधित पक्षों के जिम्मेदार लोग, जो इन शर्तों के उचित पालन की गारंटी दे सकें, इन शर्तों को पूरा करने का वचन पत्र लिखकर शपथ लें। मौलाना ने चेतावनी देते हुए कहा, 'उन्हें झूठे आश्वासन नहीं दिए जाने चाहिए। यदि हम उनके कहे अनुसार कार्य कर सकें, तभी हम उनके पास जाकर उनसे अनशन छोड़ने का अनुरोध कर सकते हैं। अन्यथा बेहतर होगा कि हम उन्हें ईश्वर के भरोसे छोड़ दें।'
आचार्य कृपलानी के इस्तीफे के बाद कांग्रेस अध्यक्ष बने डॉ. राजेंद्र प्रसाद की अध्यक्षता में सभी समुदायों का प्रतिनिधित्व करने वाले 130 सदस्यों की एक केंद्रीय शांति समिति का गठन किया गया। समिति की पहली बैठक उसी शाम डॉ. प्रसाद के आवास पर हुई और एक प्रस्ताव पारित कर गांधीजी को आश्वासन दिया गया कि वे सभी समुदायों के बीच शांति, सद्भाव और भाईचारे की भावना को स्थापित करने और बनाए रखने के लिए अपनी पूरी कोशिश करेंगे। हिंदू महासभा और आरएसएस के प्रतिनिधि, जो अपने चरम सांप्रदायिक रुख और सांप्रदायिक नफरत भड़काने के लिए जाने जाते थे, बैठक में उपस्थित नहीं थे। उनकी अनुपस्थिति में उनके

मित्रों ने उनकी ओर से आश्वासन दिया। यह कुछ संदिग्ध लग रहा था, लेकिन कुछ लोगों का मानना था कि समय कम होने के कारण, अनुपस्थित सदस्यों के हस्ताक्षर की प्रतीक्षा किए बिना समिति के प्रस्ताव के आधार पर गांधीजी को अपना अनशन समाप्त करने के लिए राजी करने का प्रयास किया जाना चाहिए। बैठक में गांधीजी का प्रतिनिधित्व कर रहे प्यारेलाल जानते थे कि समय कम है, लेकिन यह भी जानते थे कि गांधीजी ऐसे प्रस्ताव को स्वीकार नहीं करेंगे जिस पर सभी की ओर से आश्वासन न हो। उन्होंने डॉ. प्रसाद को चेतावनी दी, जिन्होंने उनसे सहमति जताई। बैठक का समापन इस निर्णय के साथ हुआ कि अनुपस्थित सदस्यों को प्रस्ताव पर हस्ताक्षर करने के लिए मनाने हेतु दूत भेजे जाएंगे।
जब प्यारेलाल बिरला हाउस लौटे तो माहौल गमगीन था। शाम ढलते- ढलते गांधीजी की हालत और बिगड़ गई थी और वे बार-बार बेहोश हो रहे थे। उनके डॉक्टर उनकी गुर्दों की बिगड़ती हालत को लेकर चिंतित थे। बार-बार पुकारने पर भी जब प्यारेलाल ने उन्हें जगाने की कोशिश की, तो उन्हें कई बार धीरे से हिलाया। आखिरकार गांधीजी ने अपनी आँखें खोलीं और बैठक की रिपोर्ट को ध्यान से सुना। जैसा कि उम्मीद थी, उन्होंने अधूरे आश्वासन को मानने से इनकार कर दिया। उन्होंने फिर से कहा कि उन्हें अपना उपवास तोड़ने के लिए जल्दबाजी में कुछ भी नहीं किया जाना चाहिए। उन्होंने चेतावनी दी कि उन्हें दिए गए वचन का उल्लंघन करने पर उन्हें बिना शर्त आमरण अनशन करना होगा, जो उनके जीवन का दंड होगा।
इसी बीच, नाथुराम, बैज और किस्तय्या उस सुबह बंबई पहुँच गए थे। वे अलग-अलग यात्रा कर रहे थे; गोडसे ने पहले वाली ट्रेन ली थी और बैज और किस्तय्या ने बाद में एक साथ यात्रा की थी। बैज ने किस्तय्या को दादर स्टेशन पर उतरकर हिंदू महासभा कार्यालय में

उनका इंतज़ार करने को कहा और खुद विक्टोरिया टर्मिनस स्टेशन पर उतरे। आप्टे और गोडसे प्रवेश द्वार पर उनका इंतज़ार कर रहे थे। उन्हें यह जानकर बहुत खुशी हुई कि बैज छोटी पिस्तौल के बदले एक अधिक प्रभावी हैंडगन लेने में कामयाब हो गए थे।
तीनों ने एक टैक्सी ली और सबसे पहले सी ग्रीन साउथ होटल गए, जहाँ से उन्होंने रोती हुई मनोरमा साल्वी को लिया। उन्होंने मनोरमा को मध्य मुंबई के बायकुला स्थित उनके घर के पास छोड़ दिया। अपने मिशन के लिए धन जुटाने के उद्देश्य से, गिरोह ने उन विभिन्न ज्ञात समर्थकों से मिलना शुरू किया जिन्होंने पहले उन्हें आर्थिक सहायता दी थी। जिन लोगों से उन्होंने विभिन्न बहाने बनाकर धन प्राप्त किया, उनमें उद्योगपति चरनदास मेघजी, गणपतराव अफजलपुरकर और महादेव जी. काले शामिल थे। इसके बाद गिरोह ने दीक्षित महाराज से मिलकर उन्हें अपना रिवॉल्वर देने के लिए मनाने की कोशिश की। दीक्षित ने उनसे कहा कि यदि वे रिवॉल्वर का बाजार मूल्य चुका दें तो वे उसे दे देंगे; गिरोह खाली हाथ लौट आया। इस बार उन्हें ज्यादा निराशा नहीं हुई क्योंकि उनके पास पहले से ही दो रिवॉल्वर थीं।
इसके बाद आप्टे, गोडसे और बैज हिंदू महासभा कार्यालय गए और किस्तय्या को साथ ले आए। फिर वे अपने संरक्षक और प्रेरणास्रोत वी.डी. सावरकर से मिलने के लिए आगे बढ़े। सावरकर सदन पहुँचने पर किस्तय्या को बाहर सड़क के किनारे इंतजार करने को कहा गया, जबकि आप्टे, गोडसे और बैज सदन में प्रवेश कर गए। बैज को भूतल पर बने हॉल में छोड़ दिया गया, और सावरकर के एक सेवक ने आप्टे और गोडसे को पहली मंजिल पर स्थित उस कमरे में पहुँचाया जहाँ उनकी मुलाकात 'तात्याराव' यानी वी.डी. सावरकर से होनी थी।

लगभग दस मिनट बाद दोनों सावरकर के साथ नीचे उतरे और उनका आशीर्वाद लेने के बाद तीनों चले गए। बाहर मुस्कुराते हुए आप्टे ने बैज को बताया कि 'तात्याराव' ने उनके मिशन को आशीर्वाद दिया और मराठी में कहा, 'यशस्वी हौन या', 'अपने मिशन में सफल हो और वापस आओ'।
चारों टैक्सी में बैठकर जुहू हवाई अड्डे की ओर चल पड़े क्योंकि आप्टे को लगा था कि दिल्ली के लिए उनकी उड़ान जुहू हवाई पट्टी से होगी, जिसका इस्तेमाल एक फ्लाइंग स्कूल करता है। लेकिन उनकी उड़ान सांता क्रूज़ घरेलू हवाई अड्डे से होनी थी। रास्ते में आप्टे ने गर्व से बैज से मराठी में कहा, 'तात्याराव नी असे भविष्य केले आहे की गांधीजीची शंभर वर्षा भरली, अता आपले कम निश्चित होनार यत कही संशय नाही', यानी 'तात्याराव ने भविष्यवाणी की है कि गांधीजी का सौ साल का जीवन अब समाप्त होगा। इसमें कोई संदेह नहीं कि हमारा काम सफलतापूर्वक पूरा होगा।' जुहू हवाई पट्टी पर पहुँचते ही उन्हें अपनी गलती का एहसास हुआ और वे तुरंत सांता क्रूज़ के पूर्वी हिस्से में स्थित कलिना के घरेलू हवाई अड्डे की ओर दौड़े। वे ठीक उसी समय पहुँचे जब उड़ान रवाना होने वाली थी। आप्टे और गोडसे सबसे आखिर में विमान में सवार हुए। विमान अहमदाबाद होते हुए दिल्ली जा रहा था और उन्हें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि दादा महाराज भी उसी विमान से यात्रा कर रहे थे। अहमदाबाद टर्मिनल पर दादा महाराज ने आप्टे को फटकार लगाते हुए कहा, 'तुमने बड़ी-बड़ी बातें तो कीं, पर कुछ हासिल नहीं किया।' आप्टे ने जवाब दिया, 'जब हम काम करेंगे तब आपको पता चल जाएगा।'
जाने से पहले आप्टे ने बैज को 350 रुपये दिए और उसे किस्तय्या के साथ शाम की ट्रेन से दिल्ली जाने को कहा। बैज और किस्तय्या,

ऐतप्पा कोटियन द्वारा चलाई जा रही एक ही टैक्सी से, कुछ पैसे लेने के लिए मुंबई के पूर्वी उपनगर कुर्ला गए। पैसे लेने के बाद वे कुर्ला उपनगरीय स्टेशन पहुंचे। वहां बैज ने कोटियन से 55 रुपये के टैक्सी किराए की रसीद पर हस्ताक्षर करने की ज़िद की। उन दिनों एक टैक्सी चालक के लिए यह एक दिन के कारोबार के लिए अच्छी-खासी रकम थी और कोटियन को उस सुबह उसके साथ यात्रा करने वाले सभी यात्री याद थे।
आप्टे ने बैज को आश्वासन दिया था कि वे उनसे दिल्ली रेलवे स्टेशन पर मिलेंगे, लेकिन अगर ऐसा नहीं हो सका तो दोनों हिंदू महासभा भवन जाएंगे।
गिरोह के सरगना अब दिल्ली की ओर रवाना हो रहे थे।
उस दिन दोपहर को, करकरे और पाहवा विस्फोटक और हथगोले लेकर दिल्ली पहुँचे। वहाँ उनकी मुलाकात एक सहयात्री शांताराम ए. आमचेकर से हुई, जो एक महाराष्ट्रीयन शरणार्थी थे और भारत सरकार में अपनी सरकारी नौकरी का स्थानांतरण करवाने के लिए दिल्ली जा रहे थे। विभाजन से पहले, वे कराची में एक सरकारी पद पर कार्यरत थे, जो अब पाकिस्तान का हिस्सा बन चुका था।
शरणार्थियों की मदद करने की प्रबल इच्छा से प्रेरित होकर करकरे ने आमचेकर को अपने संरक्षण में लिया और दिल्ली में उन्हें अपने यहाँ ठहराने का प्रस्ताव दिया। वे पहले हिंदू महासभा भवन गए, लेकिन वहाँ उन्हें रहने की जगह नहीं मिली। फिर वे एक तांगे में सवार होकर पुरानी दिल्ली के चांदनी चौक गए। उन्होंने फतेहपुरी स्थित शरीफ होटल में तीन पलंगों वाला कमरा लिया। करकरे ने होटल रजिस्टर में हिंदी में बी.एम. ब्यास के नाम से हस्ताक्षर किए। उनके बाद हस्ताक्षर करने वाले आमचेकर ने इस बात पर ध्यान नहीं

दिया। मदनलाल ने अंग्रेजी में अपना असली नाम लिखा। उन्हें कमरा नंबर 2 दिया गया।
चूंकि करकरे को दिल्ली में काम था, इसलिए उन्होंने पाहवा और अमचेकर को होटल में छोड़ दिया। उस शाम पाहवा अमचेकर को अपने रिश्तेदारों से मिलवाने ले गए, क्योंकि उन्हें वहां अपनी होने वाली दुल्हन से मिलना था। लौटते समय वे जयप्रकाश नारायण द्वारा संबोधित एक जनसभा में रुके। पाहवा ने जयप्रकाश नारायण के भाषण पर नारे लगाते हुए पूछा कि अगर उन्हें बंबई में रैलियों को संबोधित करने की अनुमति नहीं है, तो वे यहां शरणार्थियों से क्यों बात कर रहे हैं। पुलिस के पकड़ने से पहले ही पाहवा भीड़ में गायब हो गए और घबराए हुए अमचेकर के साथ शरीफ होटल पहुंच गए और दिन भर के लिए आराम किया। हैरानी की बात यह है कि करकरे उस रात वापस नहीं लौटे।
आप्टे और नथुराम उसी शाम दिल्ली पहुँचे। वे कनॉट प्लेस स्थित मरीना होटल गए, जहाँ आप्टे और गोडसे ने 'एम. देशपांडे' और 'एस. देशपांडे' के छद्म नामों से चेक-इन किया। उन्हें होटल की तीसरी मंजिल पर कमरा नंबर 40 दिया गया। चेक-इन करने के बाद वे हिंदू महासभा भवन गए, जहाँ करकरे उनका इंतज़ार कर रहे थे। होटल लौटकर करकरे ने रूम सर्विस से व्हिस्की मंगवाई और साथ में खाना खाने के बाद वे अलग हो गए।
बंबई में, बैज ने अपने होटल व्यवसायी मित्र नवारे के आतिथ्य को स्वीकार किया। दादर स्थित आसरा होटल अपने शाकाहारी भोजन के लिए प्रसिद्ध था, और होटल के मालिक के मित्र होने के नाते, उन्हें एक अलग कमरा दिया गया। दिनभर की भागदौड़ भरी गतिविधियों के बाद, एक आरामदायक कमरे में रात बिताना बैज के लिए बहुत लुभावना था, और

इसी कारण वे और किस्तय्या दिल्ली जाने वाली शाम की फ्रंटियर मेल ट्रेन चूक गए।
रविवार, 18 जनवरी 1948
जब डॉक्टर उनकी जांच करने आए, तो गांधी ने पेट में दर्द की शिकायत की। नेहरू द्वारा उस दिन लिया गया उनका वजन चिंताजनक रूप से 107 पाउंड था।
उस सुबह शांति समिति की बैठक हुई। इस बार हिंदू महासभा और आरएसएस के प्रतिनिधि, सभी महत्वपूर्ण संगठनों के सदस्य और सब्जीमंडी, करोल बाग और पहाड़गंज (शहर के तीन सबसे अधिक प्रभावित हिस्से) से आए शरणार्थियों के प्रतिनिधि उपस्थित थे। उन सभी ने गांधी द्वारा निर्धारित शर्तों को स्वीकार किया और प्रतिज्ञा पत्र पर हस्ताक्षर किए।
हम यह घोषणा करना चाहते हैं कि हमारी हार्दिक इच्छा है कि हिंदू, मुसलमान, सिख और अन्य समुदायों के सदस्य एक बार फिर दिल्ली में भाईचारे और पूर्ण सद्भाव के साथ रहें। हम प्रतिज्ञा करते हैं कि हम मुसलमानों के जीवन, संपत्ति और आस्था की रक्षा करेंगे और दिल्ली में घटी घटनाएं दोबारा नहीं होंगी।
1. हम गांधीजी को आश्वस्त करना चाहते हैं कि ख्वाजा कुतुब-उद-मेहरौली स्थित दीन के मकबरे का अंतिम संस्कार इस वर्ष भी पिछले वर्षों की तरह ही आयोजित किया जाएगा।
2. मुसलमान सब्जी मंडी, करोल बाग में घूम-फिर सकेंगे।
पहाड़गंज और अन्य इलाकों में पहले की तरह ही सुविधाएं उपलब्ध रहेंगी।
3. मुसलमानों द्वारा छोड़ी गई और अब जो मस्जिदें हैं
हिंदुओं और सिखों के कब्जे वाले क्षेत्र वापस कर दिए जाएंगे।

जिन क्षेत्रों को मुसलमानों के लिए आरक्षित किया गया है, उन पर जबरन कब्जा नहीं किया जाएगा।
4. हम उन मुसलमानों के दिल्ली लौटने पर आपत्ति नहीं करेंगे जो यदि वे चाहें तो यहाँ से पलायन कर सकते हैं, और मुसलमान पहले की तरह अपना कारोबार जारी रख सकेंगे। हम यह आश्वासन देते हैं कि ये सभी कार्य हमारे व्यक्तिगत प्रयासों से किए जाएंगे, न कि पुलिस या सेना की सहायता से।
हम महात्माजी से निवेदन करते हैं कि वे हम पर विश्वास करें और अपना अनशन समाप्त करें तथा जैसा कि वे अब तक करते आए हैं, हमारा नेतृत्व करना जारी रखें।
जब शपथपत्र पर हस्ताक्षर हो रहे थे, तभी बिरला हाउस से खबर आई कि गांधी जी की हालत अचानक बिगड़ गई है। डॉ. प्रसाद समिति के कुछ सदस्यों के साथ बिरला हाउस पहुंचे ताकि गांधी जी को अपनी उपलब्धियों की जानकारी दे सकें और सभी समिति सदस्यों के बिरला हाउस पहुंचने में हुई थोड़ी देरी का कारण बता सकें। जल्द ही सभी सदस्य गांधी जी के कमरे में इकट्ठा हो गए, जो खचाखच भरा हुआ था। उपस्थित लोगों में नेहरू, मौलाना आजाद, जाहिद हुसैन, पाकिस्तान के उच्चायुक्त और दिल्ली के मुस्लिम, आरएसएस, हिंदू महासभा और विभिन्न सिख संगठनों के प्रतिनिधि शामिल थे। दिल्ली प्रशासन की ओर से मुख्य आयुक्त खुर्शीद और उप आयुक्त एम.एस. रंधावा उपस्थित थे।
डॉ. प्रसाद ने बैठक की कार्यवाही का ब्योरा दिया। उन्होंने बताया कि जिन लोगों को एक दिन पहले शपथ लेने में हिचकिचाहट थी, उन्होंने आज बिना किसी संकोच के शपथ ले ली। शपथ में किए गए वादों के पालन की निगरानी के लिए विभिन्न समितियाँ गठित करने का निर्णय लिया गया था। अन्य लोगों ने बताया कि उसी सुबह 150

उन्होंने इसे इस्लाम पर कलंक करार देने में कोई संकोच नहीं किया।
गांधी जी ने धैर्यपूर्वक अपने सामने हाथ जोड़कर नम आँखों से खड़े सभी नेताओं की बातें सुनीं और अंततः उनका मन बदल गया। उन्होंने कहा, 'मैं अपना व्रत तोड़ूँगा। ईश्वर की इच्छा पूरी हो।' उन्होंने हिंदू, इस्लामी, पारसी और बौद्ध धर्मग्रंथों के पवित्र अंशों के पाठ के साथ व्रत तोड़ा। कमरे में आठ औंस संतरे के रस में एक औंस ग्लूकोज मिलाकर भरा एक गिलास लाया गया। मौलाना आजाद ने गिलास को अपने होठों से लगाया। दोपहर के 12:45 बज रहे थे; गांधी जी ने नई दिल्ली में कलकत्ता का चमत्कार कर दिखाया, जैसा कि लॉर्ड माउंटबेटन ने उम्मीद की थी।
यह एक शुभ दिन था, क्योंकि यह गुरु गोविंद सिंह का जन्मदिन था, और व्रत तोड़ने के तुरंत बाद गांधीजी ने निम्नलिखित संदेश दिया: 'सिखों ने क्रोध का त्याग करके सच्चा साहस दिखाया है। यही गुरु गोविंद सिंह महाराज की सच्ची शिक्षा है। एक सिख का डेढ़ लाख लोगों के बराबर होना इसी बात को दर्शाता है। सिखों की जय हो!'
राहत भरी सभा के विदा होने के बाद, नेहरू ने गांधीजी को बताया कि वे भी पिछले दो दिनों से उपवास कर रहे थे, यह बात उन्होंने अपने परिवार से भी छुपा रखी थी! नेहरू के जाने के बाद, गांधीजी ने एक पत्र लिखकर उनके घर भेजा: 'अब अपना उपवास तोड़िए... आप दीर्घायु हों और भारत के जवाहर बने रहें। बापू का आशीर्वाद।' फिर उन्हें याद आया कि एक अमेरिकी पत्रकार आर्थर मूर भी पिछले छह दिनों से उनके साथ उपवास कर रहे थे। उन्होंने डॉ. नैयर से कहा, 'मूर को तुरंत फोन कीजिए, उन्हें बताइए कि मैंने अपना उपवास तोड़ लिया है और अब उन्हें भी अपना उपवास तोड़ना चाहिए। और उन्हें उपवास

तोड़ने का सही तरीका बताइए। शायद उन्हें पता न हो।' मूर ने जवाब दिया कि उन्हें यह खुशखबरी पहले ही मिल चुकी है और उन्होंने अभी-अभी एक कप गर्म कॉफी और सिगार के साथ अपना उपवास तोड़ा है! बाद में, गांधीजी ने प्यारेलाल को फोन किया और उनसे पाकिस्तानी राजदूत ज़ाहिद हुसैन से मिलने और पाकिस्तान यात्रा के समय का पता लगाने के लिए कहा। ज़ाहिद ने गांधीजी के अनशन की जमकर प्रशंसा की और बताया कि उनकी पत्नी ने उनके ग्रंथों का उर्दू अनुवाद पढ़कर उनकी प्रशंसा की है। उन्होंने यह भी बताया कि उन्हें पूरे पाकिस्तान से गांधीजी के स्वास्थ्य के बारे में पूछने वाले रोज़ाना टेलीग्राम मिल रहे थे। हुसैन ने कहा, 'आप नहीं जानते कि गांधीजी के इस नए बलिदान ने पाकिस्तान के लोगों के दिलों को कितनी गहराई से झकझोर दिया है।' लेकिन जब उनसे पूछा गया कि क्या इसका मतलब यह है कि पाकिस्तान सरकार अब गांधीजी की पाकिस्तान यात्रा का स्वागत करेगी, तो उन्होंने कहा, 'नहीं, अभी नहीं। लेकिन मुझे उम्मीद है कि जल्द ही हालात काफी बेहतर हो जाएंगे।' पाकिस्तानी सरकार भारतीय पक्ष के अधिकारियों के आचरण से पूरी तरह संतुष्ट नहीं थी। शिमला उच्च न्यायालय में मुसलमानों को अभी भी धार्मिक अनुष्ठान करने की अनुमति नहीं थी। बिड़ला हाउस लौटने पर प्यारेलाल ने टिप्पणी की कि ज़ाहिद की बातें समय के साथ कम विश्वसनीय होती जा रही थीं।
प्यारेलाल की पाकिस्तानी उच्चायुक्त से मुलाकात की रिपोर्ट सुनकर गांधी ने गहरी आह भरते हुए उत्तर दिया, 'ऐसा लगता है कि मेरे एक सौ पच्चीस वर्ष की पूरी अवधि पूरी करने की संभावना बहुत कम है।'
उस सुबह मरीना होटल में, करकरे ने आप्टे और नाथुराम के साथ नाश्ता किया, और फिर तीनों एक तांगे पर सवार होकर अल्बुकर्क रोड

गए, ताकि बिड़ला हाउस का जायजा ले सकें। ईंटों से बनी नीची चारदीवारी के समानांतर चलने वाली गलियों से घर और परिसर का स्पष्ट दृश्य दिखाई देता था, और वहां से गांधी जी का कमरा साफ दिखाई दे रहा था। पिछले प्रवेश द्वार पर बने नौकरों के कमरे से परिसर और प्रार्थना स्थल तक आसानी से पहुंचा जा सकता था। नौकरों का कमरा बगीचे से नीचे था, जबकि उसकी पिछली दीवार और शाम की सार्वजनिक प्रार्थना स्थल की पिछली चारदीवारी एक ही स्तर पर थीं।
सभी गिरोह सदस्यों को बता दिया गया था कि अगर वे दिल्ली रेलवे स्टेशन पर एक-दूसरे से नहीं मिल पाते हैं, तो उन्हें हिंदू महासभा भवन जाना है। इसलिए यह तय किया गया कि करकरे दिन के समय महासभा में ही रहेगा। गिरोह के सरगना दिल्ली में इकट्ठा हो चुके थे, लेकिन उनका शूटर अभी तक नहीं पहुंचा था। बैज के बिना उनकी योजना नाकाम हो सकती थी।
उस शाम वे तीनों गांधीजी की शाम 5 बजे की प्रार्थना सभा में शामिल हुए। वे भीड़ में घुलमिल गए और प्रार्थना स्थल का चक्कर लगाया; उन्हें पूरा विश्वास था कि गांधीजी ने अपना उपवास तोड़ दिया था, इसलिए वे एक-दो दिन के भीतर अपने नियमित स्थान से— नौकरों के क्वार्टर की दीवार की ओर पीठ करके—प्रार्थना स्थल को संबोधित करेंगे। प्रार्थना स्थल का जायजा लेते हुए आप्टे ने दूसरों को वह मंच दिखाया जहाँ गांधीजी भीड़ को संबोधित करने के लिए बैठते थे। ठीक पीछे, लगभग बारह फीट की दूरी पर, एक नौकर के कमरे की वेंटिलेटर ग्रिल थी। कमरे के अंदर खड़ा कोई भी व्यक्ति ग्रिल से बाहर देखकर गांधीजी पर बिल्कुल करीब से गोली चला सकता था। यहाँ तक कि वह ग्रिल के आर-पार एक हैंड ग्रेनेड भी फेंक सकता

था, ताकि गांधीजी बच न सकें। अब उन्हें केवल नौकरों के क्वार्टर तक पहुँचने का रास्ता खोजना था।
अपनी योजना को अंजाम देना कितना आसान होगा, यह सोचकर वे प्रसन्न हुए और दिल्ली रेलवे स्टेशन पर गोपाल को लेने गए, जो पंजाब मेल से यात्रा कर रहा था, और बैज और किस्तय्या को लेने गए, जो फ्रंटियर मेल से आने वाले थे। दोनों ट्रेनें एक घंटे के अंतराल पर दिल्ली पहुंचीं। तीनों ने भीड़ में गोपाल, बैज और किस्तय्या को ढूंढना शुरू किया, लेकिन उन्हें कोई नहीं मिला। उन्हें पता नहीं था कि बैज और किस्तय्या की ट्रेन छूट गई थी। गोपाल ट्रेन के प्लेटफॉर्म पर पहुंचते ही कूद गया और स्टेशन से भाग गया, क्योंकि उसे डर था कि अवैध बंदूक के साथ पुलिस उसे पकड़ लेगी। सभी के ट्रेन छूट जाने की आशंका से नेता निराश होने लगे। आप्टे- गोडसे गिरोह अपनी शेखी बघारने के लिए बदनाम था; उनकी योजनाएँ हमेशा बहुत भव्य होती थीं, लेकिन अंतिम परिणाम कभी भी उनके अनुरूप नहीं होते थे। इसी वजह से उनके कई वित्तपोषक उनसे निराश हो गए थे। आप्टे और गोडसे हमेशा अपनी असफलताओं का दोष भाग्य और परिस्थितियों पर डालते थे। दिल्ली की इस सर्द शाम में, उनकी सबसे बड़ी योजना भी अंततः विफल होती दिख रही थी। तीनों निराश व्यक्ति मरीना होटल पहुँचे। नथुराम ने अपने लिए गर्म कॉफ़ी मंगवाई और आप्टे और करकरे, जो हमेशा से ज़्यादा दुखी थे, ने व्हिस्की के दो-दो पेग मंगवाए। हर होटल की तरह, शराब के ऑर्डर का हिसाब रखा जाता था। परोसे गए हर पेग का हिसाब रखना ज़रूरी था, इसलिए ग्राहक का नाम या कमरा नंबर होटल द्वारा रखे गए एक अलग 'शराब रजिस्टर' में दर्ज किया जाता था।

बारिश में भीगने के बाद गोपाल स्टेशन लौट आया और उन सैकड़ों शरणार्थियों के बीच प्लेटफार्म पर लेट गया, जिन्होंने इसे अपना अस्थायी घर बना लिया था।
बंबई में, बैज और शंकर किस्तय्या विक्टोरिया टर्मिनस पहुंचे और दोपहर 2:30 बजे पंजाब मेल में सवार हुए। यह ट्रेन मध्य भारतीय मैदानों और विंध्य पर्वतमाला को पार करते हुए चौबीस घंटे की यात्रा के बाद अगली शाम दिल्ली पहुंचेगी।
अंततः, गिरोह का सबसे अहम सदस्य अपने रास्ते पर था। दूसरा रिवॉल्वर और शूटर अगली शाम तक दिल्ली में होंगे।
सोमवार, 19 जनवरी 1948
बिरला हाउस में गांधी जी ने अपनी दिनचर्या का पालन किया। उनके उपवास की थकान का उनकी दैनिक गतिविधियों पर कोई असर नहीं पड़ा। उपवास का असर 78 वर्षीय गांधी जी के शरीर पर दिखने लगा था। उनके गुर्दों को हुए नुकसान से डॉक्टर चिंतित थे, लेकिन गांधी जी ने अतीत में कई चिकित्सा सिद्धांतों को गलत साबित किया था। उनकी नियमित और संयमी आदतों और संयमी स्वभाव ने उन्हें अद्भुत उपचार शक्ति प्रदान की थी। नींद पर उनका पूर्ण नियंत्रण था। उन्होंने कहा, 'जब नींद पर मेरा नियंत्रण खत्म हो जाएगा, तब मेरा अंत हो जाएगा। यह न केवल शारीरिक क्षय का संकेत होगा, बल्कि आत्मा के पतन का भी। हर तरह का पतन आत्मा से शुरू होता है; फिर शरीर पर और अंत में परिवेश पर।' उनकी याददाश्त में कुछ थकान के लक्षण दिखाई देने लगे थे, लेकिन उनका दिमाग तेज था। उनके निर्णय सटीक थे और उनकी अंतर्ज्ञान शक्ति पहले से कहीं अधिक अचूक थी। अपनी उम्र के बावजूद गांधी जी प्रतिदिन बहुत शारीरिक और बौद्धिक कार्य कर सकते थे। नियमित भोजन शुरू करने के बाद से, उनका कहना था कि उन्हें इसे 'रोटी श्रम' करके कमाना होगा, यानी भोजन के सेवन को

उचित ठहराने के लिए उचित मात्रा में शारीरिक श्रम करना होगा। इसलिए उस दिन कमजोर और थके हुए शरीर ने भी अपनी रेंटियो (सूअर का कपड़ा) कातने और खादी का धागा बनाने पर जोर दिया, जिसे सालाना कपड़े में बुना जाता था जिसका उपयोग उसे ढकने और कपड़े पहनाने के लिए किया जाता था।
उन्होंने मन ही मन सोचा कि दिल्ली में उनकी उपस्थिति की आवश्यकता न होने के कारण, क्या उन्हें पाकिस्तान के लिए रवाना हो जाना चाहिए, भले ही वहाँ की सरकार और अधिकारी इस विचार के विरोधी हों। यदि वे पाकिस्तान में वही सफलता प्राप्त कर लेते जो उन्होंने कलकत्ता और दिल्ली में की थी, तो उपमहाद्वीप में स्वस्थ वातावरण के विकास में सबसे बड़ी बाधा दूर हो जाएगी। इससे दोनों देशों का एकीकरण भी संभव हो सकता था। वे कश्मीर जाकर वहाँ के लोगों के मन को शांति देना चाहते थे। उनका हृदय उन्हें बता रहा था कि यदि कश्मीर का उपचार नहीं किया गया, तो वह एक नासूर बन जाएगा और उनके प्रिय भारत को नष्ट कर देगा।
डॉक्टरों ने गांधीजी के करीबी विश्वासपात्रों को आगाह किया था कि उन्हें ज्यादा मेहनत नहीं करनी चाहिए। उस दिन उनके दर्शन के लिए कुछ ही लोग आए थे, बाकी ज्यादा लोग उनसे मिलने नहीं आए। उन्हें लॉन में आने की इजाजत थी, लेकिन गांधीजी जहां धूप में अपने बिस्तर पर लेटे थे, वहां से उन्हें दूर रखा गया था, जैसा कि उनकी रोज़ की आदत थी।
हिंदू महासभा कार्यालय में अफरा-तफरी मची हुई थी। आशुतोष लाहिड़ी महासभा के चरमपंथी गुट के निशाने पर आ गए थे, जिन्होंने सात सूत्री शांति प्रतिज्ञा को स्वीकार करने के लिए उनकी आलोचना की थी। उन्हें एक बयान तैयार करने के लिए मजबूर होना पड़ा, जिसमें उन्होंने इस बात से इनकार किया कि हिंदू महासभा के

किसी भी प्रतिनिधि ने प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर किए थे। यह बयान उसी शाम प्रेस को जारी किया जाना था।
आप्टे और गोडसे महासभा कार्यालय में थे, अपने दो अंतिम सदस्यों और अपनी योजनाओं के सबसे महत्वपूर्ण हिस्से के न आने से चिंतित थे। उनके शूटर के बिना, गिरोह का बाकी हिस्सा बेअसर था। उत्तेजित लाहिड़ी ने प्रेस विज्ञप्ति का मसौदा तैयार किया और उसकी एक प्रति नाथूराम को दी। नाथूराम ने न तो प्रेस विज्ञप्ति पर ध्यान दिया और न ही लाहिड़ी की शिकायत पर, और अनमने ढंग से उसे अपनी जैकेट की जेब में डाल लिया।
आप्टे ने लाहिड़ी से बॉम्बे कॉल करने की अनुमति मांगी। लाहिड़ी ने कॉल के शुल्क के लिए पहले उचित राशि जमा करने को कहा। आप्टे ने 15 रुपये दिए और 6020 नंबर पर कॉल बुक की - सावरकर सदन। आप्टे ने कासर या दामले से बात करने को कहा। वह यह पता लगाना चाहते थे कि क्या गोपाल गोडसे या बैज सावरकर सदन गए थे या उन्होंने अपने नेताओं के लिए कोई संदेश छोड़ा था। कॉल 11:30 बजे की गई, लेकिन कासर और दामले दोनों ही उपलब्ध नहीं थे। तभी दरवाजे के पास खड़े करकरे ने गोपाल को हिंदू महासभा भवन में प्रवेश करते देखा। उन्होंने कहा, 'हा के गोपाल आला'। आप्टे ने कॉल रद्द कर दी और उन्हें बताया गया कि शुल्क एक रुपया और पंद्रह आना है। उन दिनों बहुत कम लोग अर्जेंट कॉल बुक करके रद्द करते थे, इसलिए सुबह 9:20 बजे बुक की गई यह कॉल दिल्ली में कुलवंत कौर और बॉम्बे में जी. फर्नेस, दोनों ऑपरेटरों के दिमाग में अटक गई। उन दिनों जब कॉल मैन्युअल रूप से कनेक्ट की जाती थीं, तो ऊबे हुए ऑपरेटर अपने काम की नीरसता को दूर करने के लिए अक्सर बातचीत को सुनते थे। नाथूराम ने दौड़कर अपने भाई को गले लगा लिया। 'सुख रूप फोनचला. प्रवासत त्रास तार नहि जाला न? समन अनला?', आप सुरक्षित पहुंच गए

हैं. आशा है आपकी यात्रा आरामदायक रही होगी? क्या तुम्हें सामान मिल गया?' गोपाल ने अपना थैला थपथपाया और कहा, 'चिंता नाका करो, दादा, आराम भी। समन पण अनला।' 'चिंता मत करो भाई, मैं ठीक हूं। 'मैं सामान भी लाया हूं।'
इसके बाद करकरे और गोपाल शरीफ होटल के लिए रवाना हुए, जहाँ राहत महसूस कर रहे पाहवा ने उनका स्वागत किया। करकरे ने गोपाल का परिचय आमचेकर से नहीं कराया, बल्कि उन्हें रूखेपन से बताया कि उन्हें उसी दोपहर मदनलाल की शादी के लिए जालंधर जाना है, इसलिए उन्हें कमरा खाली करना होगा। आमचेकर, जिन्होंने पहले ही स्थानांतरण ब्यूरो में पंजीकरण करा लिया था और अपने परिवार के साथ बॉम्बे लौटने के लिए उत्सुक थे, ने कहा कि उन्हें कोई आपत्ति नहीं है और आतिथ्य सत्कार के लिए करकरे को धन्यवाद दिया। शिष्टाचारवश उन्होंने करकरे से उनका पता पूछा, लेकिन उन्हें आश्चर्य हुआ जब करकरे ने संक्षिप्त उत्तर दिया, 'आपको मेरा पता जानने की आवश्यकता नहीं है।' यह कहकर तीनों ने अपना सामान उठाया, जिसमें मदनलाल ने करकरा सेठ का सामान उठाया। वे एक तांगे में सवार हुए और हिंदू महासभा कार्यालय की ओर चल पड़े। उस दोपहर करकरे और आप्टे नौकरों के क्वार्टर में घुसने का रास्ता खोजने के लिए बिरला हाउस गए। उन्होंने योजना को अंतिम रूप दे दिया था: शूटर नौकरों के क्वार्टर में बने कमरे में घुसेगा और जैसे ही मंच के दोनों ओर रखे गन कॉटन स्लैब फटेंगे, वह गांधी पर गोली चलाएगा और उन पर एक हैंड ग्रेनेड फेंकेगा। गिरोह के बाकी सदस्य मंच के चारों ओर घेरा बनाकर खड़े हो जाएंगे और भीड़ में कुछ ग्रेनेड फेंककर अफरा-तफरी मचा देंगे। इस अफरा- तफरी और दहशत का फायदा उठाकर गिरोह के सदस्य भाग निकलेंगे।

आप्टे और नाथुराम गिरोह के सदस्यों की गतिविधियों का निर्देशन और समन्वय करने के लिए ज़िम्मेदार थे। उन्होंने बड़ी चतुराई से यह सुनिश्चित किया था कि उनमें से कोई भी गांधी की हत्या में हथियारबंद या भागीदार के रूप में पकड़ा न जाए। नाथुराम ने अपने छोटे भाई गोपाल को भी पनाह दी थी। गांधी जैसे 'अड़चन डालने वाले' व्यक्ति से राष्ट्र को मुक्ति दिलाने के अपने पूरे गुस्से और प्रतिबद्धता के बावजूद, वे कोई भी ऐसा जोखिम नहीं उठा रहे थे जिससे वे इस प्रयास में फंस जाएं।
उस शाम आप्टे, नाथुराम और करकरे यह देखने के लिए दिल्ली रेलवे स्टेशन गए कि क्या बैज उस दिन आ जाएँगे। उन्हें न पाकर वे हिंदू महासभा भवन लौट आए। वहाँ उन्हें बड़ी राहत मिली जब उन्होंने बैज और किस्तय्या को पाहवा के साथ बैठे और बातें करते देखा। करकरे और गोपाल ने उस रात भवन में एक कमरा साझा किया। अब उन्हें बगल वाला कमरा मिल गया था, इसलिए पाहवा, बैज और किस्तय्या को हॉल में सोने के लिए कहा गया।
गांधी की हत्या के प्रयास से ठीक चौबीस घंटे पहले पूरा गिरोह किसी तरह दिल्ली में इकट्ठा होने में कामयाब हो गया था। मंगलवार, 20 जनवरी 1948
सर्दियों की बारिश के बाद दिल्ली में भीषण ठंड पड़ गई थी। बिरला हाउस में दिन की शुरुआत सामान्य रूप से हुई। गांधी जी को रात भर खांसी की वजह से बेचैनी रही, लेकिन उन्होंने कोई दवा लेने से इनकार कर दिया।
उस दिन कोई मुलाकात तय नहीं थी। गांधी जी ने पूरी सुबह और दोपहर का अधिकांश समय अपने पत्रों के निपटान में बिताया। पिछली शाम से ही गांधी जी प्रार्थना सभा में शामिल होने लगे थे, लेकिन कमजोरी के कारण उन्हें कुर्सी पर बिठाकर मंच तक ले जाया गया। उस

दिन प्रार्थना सभा में देरी हुई क्योंकि सार्वजनिक संबोधन प्रणाली खराब हो गई थी। इसे ठीक करने में कुछ समय लगा।
मरीना होटल में, नथुराम और आप्टे ने अपने कमरे में नाश्ता मंगवाया। उन दिनों, छोटे होटलों में धोबी होते थे जो कमरों में जाकर कपड़े धुलवाते और इस्त्री करते थे और शाम या अगली सुबह उन्हें वापस दे देते थे। नथुराम ने अपने गंदे कपड़े धुलवाने के लिए दिए, उन्हें इस बात का एहसास नहीं था कि उनके कपड़ों पर स्याही से उनके असली नाम के पहले अक्षर 'एन.वी.जी.' लिखे हुए थे। धोबी ने कमरा नंबर 40 से दिए गए दस कपड़ों की सूची बनाई।
हिंदू महासभा भवन में, आप्टे सुबह 8:30 बजे करकरे के कमरे में पहुँचे और बैज और किस्तय्या को अपने साथ बिरला हाउस चलने के लिए कहा। द्वार पर एक संतरी ने उन्हें रोक दिया; आप्टे ने उसे बताया कि वे गांधी के सचिव से मिलने आए हैं। उन्होंने कागज के एक टुकड़े पर एक नाम लिखा और संतरी को उसे अंदर ले जाने के लिए कहा। जब संतरी अंदर गया, तो सूट पहने एक हट्टा-कट्टा आदमी द्वार से बाहर आया। आप्टे ने बैज से कहा कि वह शहीद सुहरावर्दी है। 'वह प्रार्थना सभा में गांधी के बगल में बैठेगा। तात्याराव के आदेशानुसार तुम्हें उन दोनों को या कम से कम उनमें से एक को मारना होगा।' संतरी वापस आया और उन तीनों को अंदर जाने दिया। आप्टे, बैज और किस्तय्या बिरला हाउस परिसर में दाखिल हुए और पीछे की ओर बढ़े, जहाँ प्रार्थना स्थल स्थित था। आप्टे ने बैज को वह मंच दिखाया जहाँ गांधी और सुहरावर्दी बैठने वाले थे। फिर उन्होंने बैज को खिड़की पर लगी जालीदार ग्रिल दिखाई और बताया कि कमरे में उनके प्रवेश की व्यवस्था कर दी जाएगी। उन्हें गांधी पर गोली चलानी थी और मंच पर एक हथगोला फेंकना था। पाहवा और करकरे मंच के दोनों ओर की दीवारों पर लगी दो रुई की पट्टियों

में आग लगाएंगे; जैसे ही आग भड़केगी, बैज को गोली चलानी थी और हथगोला फेंकना था। किस्तय्या को मंच के सामने खड़े होकर गांधी पर सामने से गोली चलानी थी और मंच पर एक हथगोला फेंकना था।
यह योजना अनुभवहीनता का चरम उदाहरण थी। गांधीजी को जान से मारने के लिए वे इतने बेताब थे कि घनी भीड़ में गोलियों और बमों की बौछार करने की उन्हें कोई परवाह नहीं थी। उन्होंने निर्दोष लोगों की जान के नुकसान के बारे में जरा भी नहीं सोचा। गांधीजी की प्रार्थना सभाओं में औसतन चार से पांच सौ पुरुष, महिलाएं और बच्चे आते थे, लेकिन उपवास के बाद भीड़ बढ़कर एक हजार से अधिक हो गई थी। वह स्थान 8,000 वर्ग फुट का था और वहां महिलाओं और बच्चों के लिए मंच के पास आगे की पंक्तियों में बैठने की प्रथा थी। उनकी योजना के अनुसार, बम और हथगोले फटने पर सबसे ज्यादा नुकसान वहीं होगा। लेकिन आप्टे, गोडसे और करकरे के लिए निर्दोष लोगों की यह हानि स्वीकार्य थी।
पोडियम की नाप ली गई; पोडियम से नौकरों के क्वार्टर की वेंटिलेटर खिड़की तक की दूरी नापी गई। उन दो जगहों के बीच की दूरी नापी गई जहाँ गन कॉटन को विस्फोटित किया जाना था। यह सब इस तरह किया गया कि आसपास मंडरा रहे नौकरों और गांधीजी के दल के सदस्यों को कोई शक न हो। अपने सर्वेक्षण के दौरान, उन्होंने कई बार बिरला हाउस की ओर देखा और अपने शिकार को अपने कमरे के बाहर पलंग पर लेटे हुए पाया। वह कुछ आए हुए लोगों से मिल रहे थे और अपना पत्र लिखवा रहे थे। प्रार्थना स्थल के आसपास मंडरा रहे तीनों व्यक्तियों पर किसी ने ध्यान नहीं दिया।
आप्टे ने बताया कि नाथुराम, गोपाल और वह कहाँ खड़े होंगे और उनमें से प्रत्येक कहाँ से अपना ग्रेनेड फेंकेगा। उन्होंने बैज से पूछा कि क्या उसे यकीन है कि वह अपने शिकार से इतनी दूरी

से निशाने पर मार गिराएगा। बैज ने उन्हें आश्वस्त किया कि वह ऐसा कर सकता है।
अंततः, सुबह 11:30 बजे तक, उन्हें लगा कि वे परिसर से अच्छी तरह परिचित हो चुके हैं। फिर तीनों महासभा भवन लौट आए, जहाँ उन्हें पता चला कि नाथूराम को माइग्रेन है और वे आराम कर रहे हैं। पाहवा गोपाल के साथ उनका इंतजार कर रही थी। आप्टे ने सुझाव दिया कि उन्हें किसी ऐसी जगह जाना चाहिए जहाँ वे तोपों का परीक्षण कर सकें।
महासभा भवन के पीछे का इलाका घने जंगलों से घिरा हुआ था। आप्टे, बैज, किस्तय्या और गोपाल को लेकर इन जंगलों में गए। लगभग पंद्रह मिनट बाद वे एक छोटे से खुले मैदान में पहुँचे। यह उनकी बंदूकों का परीक्षण करने के लिए एकदम सही जगह थी। आप्टे ने ग्रिल और पोडियम के बीच की सटीक दूरी नापी और किस्तय्या से रिवॉल्वर माँगी। आप्टे ने बंदूक में चार गोलियाँ भरीं। फिर उन्होंने बंदूक किस्तय्या को सौंप दी और उसे पेड़ पर एक निशाने पर गोली चलाने को कहा। उनके लिए यह एक भयानक अनुभव था, जब बंदूक चलाई गई तो गोलियाँ लक्ष्य तक नहीं पहुँचीं, जबकि लक्ष्य मुश्किल से दस फीट दूर था! तभी उन्हें पहली बार एहसास हुआ कि बंदूक और गोला- बारूद अलग-अलग कैलिबर के थे और इसलिए प्रभावी ढंग से काम नहीं करेंगे। अब गोपाल ने तेल से सने थैले को खोला और अपनी सर्विस रिवॉल्वर, एक .38 वेब्ले स्कॉट निकाली, जिसे वह उक्सान से वापस लाए थे। नम मिट्टी के कारण उसका फायरिंग मैकेनिज्म जंग खाकर जाम हो गया था। गोपाल के ट्रंक में कुछ चिकनाई वाला तेल और एक पेननाइफ था; उन्होंने शंकर को महासभा भवन वापस जाकर उसे लाने के लिए कहा।

शंकर का इंतज़ार करते हुए उन्होंने तीन वन रक्षकों को अपनी ओर आते देखा। उन्होंने अपनी बंदूकें एक कंबल के नीचे छिपा लीं। एक रक्षक, मेहर सिंह ने उनसे पूछा कि वे यहाँ क्या कर रहे हैं। गोपाल, जो सेना में सेवा देने के बाद थोड़ी-बहुत पंजाबी बोल सकता था, ने बताया कि वे पिकनिक मना रहे हैं। रक्षकों के चले जाने के बावजूद, समूह ने महसूस किया कि वह जगह सुरक्षित नहीं है और वे महासभा भवन की ओर चल दिए।
करकरे और पाहवा वहाँ उनका इंतज़ार कर रहे थे। गिरोह फिर से मुश्किल में पड़ गया। उनकी दोनों बंदूकें काम नहीं कर रही थीं— आखिर वे अपनी योजना को अंजाम कैसे देते? हिम्मत जुटाते हुए आप्टे ने करकरे और पाहवा को मरीना होटल जाने को कहा। गोपाल ने विस्फोटकों और बेकार बंदूकों से भरा कैनवास का थैला उठाया। चारों एक गहरे नीले रंग की कार में बैठकर होटल के लिए रवाना हुए। उन्होंने होटल के कमरे में नाथूराम को चारपाई पर लेटा हुआ पाया। इसके बाद बैज और किस्तय्या होटल के भोजन कक्ष में दोपहर का भोजन करने चले गए।
जब वे लौटे तो उन्होंने गोपाल को अपनी बंदूक ठीक करते हुए पाया। बैज और पाहवा बंदूक के कॉटन स्लैब में प्राइमर और हैंडग्रेनेड में डेटोनेटर लगाने के लिए बाथरूम में चले गए। नथुराम और किस्तय्या दरवाजे पर खड़े होकर तैयारियों को देख रहे थे। उन्होंने बैज से मराठी में कहा, 'ही आमची शेवतची संधि आहे, काम यशसवी ज़ालेच पाहिजे, सगला वायवस्थित आहे ह्याची कलजी घ्या।' 'यह हमारा आखिरी मौका है; काम सफल होना चाहिए, तुम ध्यान रखो कि सब कुछ ठीक से तैयार हो।' तब तक गोपाल ने रिवॉल्वर को साफ करके फिर से जोड़ दिया था। खाली रिवॉल्वर चलाने पर वह ठीक से काम करती हुई प्रतीत हुई। फ्यूज को जलने में लगने वाले समय का

परीक्षण करने के लिए, उन्होंने बंदूक के कॉटन स्लैब में लगाए गए फ्यूज के समान लंबाई का एक फ्यूज काटकर उसे जलाने का फैसला किया। एक ज़ोरदार धमाका हुआ और कमरा धुएं से भर गया। आवाज सुनकर एक वेटर घबराकर जांच करने आया। आप्टे ने उसे दरवाजे पर ही रोक लिया और उसे यकीन दिलाया कि बिस्तर पर सिगरेट पीते समय गलती से गद्दे में आग लग गई थी और उसे आश्वस्त किया कि चिंता करने की कोई जरूरत नहीं है।
इसके बाद आप्टे ने विभिन्न सदस्यों को जिम्मेदारियाँ सौंपीं। उन्होंने सुझाव दिया कि पाहवा एक गन कॉटन स्लैब और एक हैंड ग्रेनेड लेकर चले। किस्तय्या दूसरा सेट लेकर चलेगा। नाथूराम, करकरे और गोपाल एक-एक हैंड ग्रेनेड लेकर चलेंगे। बैज एक रिवॉल्वर और आखिरी हैंड ग्रेनेड लेकर चलेगा, और आप्टे भी एक रिवॉल्वर लेकर चलेगा। बैज ने बीच में दखल देते हुए कहा कि एक गन कॉटन स्लैब ही हंगामा मचाने के लिए काफी है। उन्होंने सुझाव दिया कि पाहवा को एक गन कॉटन स्लैब और एक हैंड ग्रेनेड लेकर चलना चाहिए। पाहवा फ्यूज जलाकर दूर हट जाएगा; विस्फोट से पहले उसके पास साठ सेकंड का समय होगा। गोपाल और करकरे के पास एक-एक हैंड ग्रेनेड होगा, जबकि किस्तय्या और वह एक-एक रिवॉल्वर और एक हैंड ग्रेनेड लेकर चलेंगे। आप्टे और नाथूराम हर छोटी-बड़ी बात पर नजर रखेंगे और हाथ के इशारों से समन्वय करेंगे। शूटर ने एक पूरी तरह से कारगर योजना बना ली थी। इससे आप्टे और नाथूराम भी सुरक्षित रहेंगे, अगर कुछ गड़बड़ हो जाए तो।
करकरे ने सुझाव दिया कि जैसे ही मदनलाल गन कॉटन स्लैब में विस्फोट करेगा, वे सभी गांधी जी पर गोलियां चलाएंगे और हथगोले फेंकेंगे। आप्टे ने आगे कहा कि वह मदनलाल को संकेत देगा और नाथुराम बैज को संकेत देगा ताकि सभी घटनाएँ एक साथ घटित हों।

बाकी लोग भीड़ में घुलमिल जाएंगे और अपने-अपने कार्यों को अंजाम देने के लिए सही समय का इंतजार करेंगे। उन्हें पूरा विश्वास था कि इस अफरा-तफरी में वे बिरला हाउस से भाग निकलेंगे और पुणे वापस भागने से पहले हिंदू महासभा भवन में फिर से इकट्ठा हो जाएंगे। उनकी योजना इतनी सरल थी कि उन्हें ऐसा लग रहा था जैसे वे स्कूल पिकनिक पर जा रहे हों।
इसके बाद आप्टे ने उन सभी को बिरला हाउस में उस शाम इस्तेमाल करने के लिए एक-एक नकली नाम दिया। नाथुराम 'देशपांडे', करकरे 'बियास', आप्टे 'कर्मकार', किस्तय्या 'तुकाराम' और बैज 'बंदोभाऊ' बन गए। मदनलाल और गोपाल को क्या नाम दिए गए थे, यह पूरी तरह से स्पष्ट नहीं है। नाथुराम ने गहरे नीले रंग की आधी बाजू की कमीज और खाकी शॉर्ट्स पहनने का फैसला किया। आप्टे ने भारतीय वायुसेना की वर्दी जैसी गहरे नीले रंग की जैकेट और पतलून पहनी। करकरे ने धोती, नेहरू शर्ट और गांधी टोपी पहनी। मदनलाल ने आप्टे द्वारा दी गई जैकेट और पतलून पहनी। गोपाल नाथुराम की तरह कपड़े पहने। शंकर ने कमीज, कोट, धोती और टोपी पहनी। बैज ने धोती और नेहरू कोट पहना। अपनी पहचान छिपाने की व्यर्थ कोशिश में, करकरे ने नकली मूंछें बनाईं, अपनी भौहें काली कीं और माथे पर बड़ा सा तिलक लगाया। उन्हें लगा कि यह एक आदर्श छलावरण है, लेकिन वास्तव में, उनके इस पहनावे ने सबका ध्यान आकर्षित किया।
इसके बाद आप्टे ने गिरोह के सदस्यों को हथियार बांटे। बैज ने अपना रिवॉल्वर और हैंड ग्रेनेड एक कैनवास बैग में रखा; बाकी लोगों ने उन्हें दिए गए सामान को अपने पास छिपा लिया।
करकरे और मदनलाल सबसे पहले तांगे से बिरला हाउस के लिए होटल से निकले। उनके पीछे आप्टे, बैज, किस्तय्या और गोपाल थे। नाथूराम ने सिरदर्द की शिकायत की और कहा कि वह पंद्रह-बीस मिनट बाद

आएगा। होटल से निकलते समय बैज ने किस्तय्या को अपने शिकार की पहचान बता दी। उसने कहा, 'हमें तातायराव की इच्छा के अनुसार गांधी को मारना है।' अपने आका के आदेशों का पालन करने के आदी किस्तय्या ने कोई भावना नहीं दिखाई।
चारों ने रीगल सिनेमा के पास से सुरजीत सिंह नाम के एक सिख ड्राइवर की टैक्सी किराए पर ली। वे पहले हिंदू महासभा भवन गए और टैक्सी के इंतज़ार में तीनों अपने कमरों में चले गए। गोपाल ने अपना सामान अलमारी में रख दिया। फिर तीनों टैक्सी में वापस आ गए, जो उन्हें बिरला हाउस के पिछले द्वार तक ले गई। एक सर्विस लेन नौकरों के क्वार्टर से सटी एक खुली ज़मीन में खुलती थी। जैसे ही टैक्सी पिछले द्वार के पास पहुँची, ड्यूटी से छुट्टी पर मौजूद चौकीदार, भूर सिंह, जो पूर्व सेना सिपाही थे, टैक्सी रोकने के लिए उठे। जब उन्होंने देखा कि गाड़ी फुटपाथ के किनारे रुक गई है, तो वे बिरला परिवार के कार क्लीनर छोटूराम के साथ अपनी सीट पर वापस चले गए। दोनों ने देखा कि गाड़ी से चार लोग तो उतर गए, लेकिन ड्राइवर स्टीयरिंग व्हील पर ही बैठा रहा।
परिसर से दो लोग उन चारों के पास आए और कुछ मिनटों तक बातचीत की। इस समय तक भूर सिंह मुख्य द्वार पर अपनी ड्यूटी के लिए निकल चुके थे। कुछ मिनटों की बातचीत के बाद, समूह एक-एक करके या दो-दो करके प्रार्थना स्थल में प्रवेश कर गया। बिरला हाउस के पीछे से लगभग सौ फीट दूर, अल्बुकर्क रोड स्थित 9 नंबर के नौकरों के क्वार्टर में रहने वाली सुलोचना देवी ने भी गिरोह को कार से आते देखा। अक्सर उनके सात और चार साल के बच्चे खेलने के लिए प्रार्थना स्थल पर आते थे। सुलोचना हमेशा की तरह अपने बच्चों को देखने आई थीं, तभी उन्होंने टैक्सी को आते और चारों पुरुषों को उतरते देखा।

करकरे को पता चला था कि जिस कमरे में वे जाना चाहते थे, वह द्वार से तीसरा कमरा था। करकरे ने एक दिन पहले ही उस नौकर से दोस्ती कर ली थी जिसे वह कमरा सौंपा गया था। उन्होंने नौकर छोटूराम से अनुरोध किया कि वह अपने एक मित्र को अपना कमरा इस्तेमाल करने दे, क्योंकि वह गांधी जी की कुछ तस्वीरें लेना चाहता था। हालाँकि यह अनुरोध थोड़ा अटपटा लग रहा था, छोटूराम बिरला हाउस के परिसर में कई फोटोग्राफरों को घूमते हुए देखने का आदी था, खासकर फ्रांसीसी फोटोग्राफर हेनरी कार्टियर ब्रेसन को, जो दीवारों के ऊपर से, पेड़ों के नीचे छिपकर और यहाँ तक कि छत से भी तस्वीरें लेता था!
करकरे ने छोटूराम को दस रुपये दिए; कार साफ़ करने वाले के लिए यह रकम काफ़ी थी, क्योंकि उसकी महीने की कमाई पैंसठ रुपये थी। आख़िरकार, बात तो बस कुछ मिनटों की थी, किसे पता चलेगा? हालाँकि, एक बात ने उसे ज़रूर उत्सुक कर दिया; दोनों में से किसी के पास भी कैमरा नहीं था। वे तस्वीरें कैसे लेंगे? उसने करकरे से यह पूछा, जिस पर करकरे ने जवाब दिया कि उसके दोस्त के पास कार में कैमरा है।
छोटूराम से सौदा तय करने के बाद, करकरे कार की ओर वापस चले गए। बैज, किस्तय्या, गोपाल और नाथुराम उनके आसपास जमा हो गए थे। करकरे ने बैज को बताया कि कमरा तैयार है। बैज ने नौकरों के क्वार्टर के बाहर कई लोगों को और दरवाजे से कुछ ही दूरी पर तीन आदमियों को बैठे देखा। उन्हें एहसास हुआ कि कमरे से गोली चलाने के बाद उनका भागना नामुमकिन होगा। अचानक उन्हें समझ आया कि हत्या के बाद, किस्तय्या और उनके हाथ में सिर्फ़ हथियार होंगे, जबकि बाकी गिरोह के लोग भाग निकलेंगे। बैज के मन में डर बैठ गया। उन्होंने कमरे में जाने से इनकार कर दिया और कहा कि यह

अपशगुन है, क्योंकि छोटूराम की एक ही आँख थी। उन्होंने सुझाव दिया कि वे मंच के सामने, गांधी जी के बैठने की जगह के जितना करीब हो सके, खड़े हो जाएँगे और जैसे ही मदनलाल गन कॉटन स्लैब में विस्फोट करेगा, वे गांधी जी पर गोली चलाकर अपना हैंड ग्रेनेड फेंक देंगे। बाकी लोगों को समझ आ गया कि बैज को मनाना नामुमकिन है। बैज को यह भी एहसास हो गया था कि जालीदार ग्रिल में इतने बड़े छेद थे कि हथगोला उसमें से निकल तो सकता था, लेकिन खिड़की से उसे दूर फेंकना संभव नहीं था। नतीजतन, ग्रेनेड खिड़की के ठीक बाहर फट जाता और पीड़ित को मारने के बजाय, शायद उसे फेंकने वाले को ही मार देता।
इस प्रकार, अंतिम क्षण में योजना बदल दी गई। तब तक प्रार्थना सभा शुरू हो चुकी थी। जनसंपर्क प्रणाली ठीक हो चुकी थी और सर्वधर्म प्रार्थना के बाद गांधीजी ने सभा को संबोधित करना शुरू कर दिया था। गिरोह परिसर में अपनी-अपनी जगह लेने के लिए दाखिल हुआ। पाहवा धीरे-धीरे उनके पास आया और फुसफुसाते हुए कहा कि उसने दीवार पर कपास की पटिया रख दी है। करकरे ने पाहवा से पूछा कि क्या वह तैयार है। मदनलाल ने हाँ में जवाब दिया और उस जगह की ओर चल पड़ा जहाँ उसने कपास रखी थी। वह जगह पीछे की सड़क से दिखाई दे रही थी और सुलोचना उस युवक को दीवार की ओर जाते हुए देखती रही। उसने दीवार पर रखी ईंट जैसी वस्तु पर भी ध्यान दिया। इसी बीच, घबराए हुए बैज ने किस्तय्या को पकड़ लिया और उसे अपना रिवॉल्वर और ग्रेनेड सौंपने का आदेश दिया, साथ ही यह भी कहा कि जब तक वह उसे कुछ करने का आदेश न दे, तब तक वह कुछ न करे। बैज ने मरीना होटल से मिले एक तौलिए में रिवॉल्वर और ग्रेनेड दोनों लपेट दिए। वह कार की ओर भागा और उन्हें पिछली सीट के नीचे छिपा दिया। टैक्सी चालक प्रार्थना स्थल तक चला गया था। बैज अपने

हाथों को कोट की जेब में डाले, यह दिखावा करते हुए कि उसकी जेब में बंदूक और ग्रेनेड हैं, प्रार्थना स्थल पर वापस आया और अपनी जगह पर खड़ा हो गया। बैज ने क्या किया, यह किसी और को पता नहीं था।
बैज ने आप्टे को इशारा किया कि वह तैयार है। आप्टे ने पाहवा को इशारा किया, जिसने माचिस की तीली से गन कॉटन स्लैब पर लगी बत्ती जलाई और वहां से चला गया। सुलोचना ने उसे ऐसा करते देखा। मदनलाल ने इशारा किया कि स्लैब किसी भी क्षण फट सकता है।
गांधीजी सभा को संबोधित कर रहे थे। बैज गांधीजी के दाहिनी ओर चार-पाँच फीट की दूरी पर खड़ा था, करकरे और किस्तय्या बैज के दाहिनी ओर कुछ फीट की दूरी पर खड़े थे। अचानक एक जोरदार धमाके ने प्रार्थना सभा की शांति भंग कर दी। चारों ओर धुआँ और धूल का गुबार उठ गया; दीवार का एक बड़ा हिस्सा गिर गया था। कुछ लोग उठकर उस जगह की ओर दौड़े जहाँ धमाका हुआ था; बम गांधीजी के बैठने की जगह से लगभग पचहत्तर फीट की दूरी पर फटा था। गिरोह के सदस्य अगली कार्रवाई का इंतजार करने लगे। कुछ नहीं हुआ। कोई गोली नहीं चली। समझ से परे, न तो करकरे और न ही गोपाल ने अपने पास मौजूद ग्रेनेड फेंके।
गांधी ने भीड़ को शांत करते हुए कहा, 'अगर हम बेवजह इस तरह घबराते रहे, तो अगर सच में कुछ हो गया तो हमारा क्या हाल होगा?... सुनो! सब लोग सुनो, कुछ नहीं हुआ है, मेरी बात सुनो। चुपचाप बैठ जाओ।' गिरोह को जिस घबराहट की उम्मीद थी, वह नहीं हुई। गांधी के शब्दों ने भीड़ को शांत कर दिया था। गिरोह के सदस्य ही अकेले खड़े रह गए थे, और वे साफ तौर पर दिखाई दे रहे थे। लेकिन हालात ने उन्हें ध्यान से बचने में मदद की। उन्होंने कुछ लोगों को देखा जो बिरला हाउस के सुरक्षाकर्मियों जैसे लग रहे थे और बम

विस्फोट स्थल की ओर दौड़ रहे थे। उन्होंने एक महिला को पाहवा की ओर इशारा करते देखा और अगले ही पल उसे पकड़कर बिरला हाउस के मुख्य द्वार की ओर ले जाया गया। द्वार के ठीक बाहर एक पुलिस चौकी थी।
गिरोह घबरा गया, उन्हें यकीन था कि वे किसी भी पल पकड़े जाएँगे। आप्टे, नाथुराम और गोपाल पीछे के गेट से बाहर भागे और टैक्सी में बैठकर चिल्लाने लगे, 'गाड़ी चालू करो, गाड़ी चलाओ, जल्दी, जल्दी!' 'गाड़ी स्टार्ट करो, गाड़ी स्टार्ट करो। चलाओ, चलाओ, तेज़, तेज़!' कई लोगों ने गाड़ी को जाते हुए देखा, सुलोचना ने भी देखा। एक छोटे लड़के ने नंबर प्लेट देखी और बाद में पुलिस को नंबर बताया, लेकिन नंबर गलत था।
करकरे भीड़ में घुलमिल गया और भागने में कामयाब रहा। बैज ने किस्तय्या को पकड़ लिया और पुलिस कांस्टेबलों से बचते हुए बिरला हाउस से बाहर निकल गया। उन्होंने एक तांगा किराए पर लिया और हिंदू महासभा भवन की ओर चल पड़े। बैज ने वहां नाथूराम, गोपाल और आप्टे को घबराए हुए पाया। बैज, नाथूराम और आप्टे के बीच तीखी बहस छिड़ गई, तीनों एक-दूसरे पर मकसद से विश्वासघात करने का आरोप लगा रहे थे। बैज इस बात से बेहद नाराज़ था कि बाकी सबने उसकी परवाह किए बिना भागने की योजना बना ली थी। हालांकि नाथूराम और आप्टे ने खुद अपने काम पूरे नहीं किए थे, फिर भी उन्होंने अपनी योजना की विफलता के लिए बैज को दोषी ठहराया। आप्टे ने बैज से कहा कि अब उन्हें उसकी सेवाओं की आवश्यकता नहीं है और उसे पुणे वापस चले जाना चाहिए। बैज ने शंकर को बचे हुए विस्फोटक और हथगोले ठिकाने लगाने को कहा। शंकर ने भवन के पीछे जंगल में बारूद का जखीरा गाड़ दिया।

गोपाल को तुरंत पुणे जाने के लिए कहा गया। नथुराम और आप्टे ने भी दिल्ली से भागने का फैसला किया। करकरे ने कहा कि वह दिल्ली में ही रुकेंगे और पाहवा के लिए कानूनी सहायता दिलाने की कोशिश करेंगे। सभी ने अपना सामान उठाया और जल्दी से निकल पड़े। आप्टे और नथुराम मरीना होटल गए और चेक आउट किया। नथुराम आशुतोष लाहिड़ी द्वारा दी गई प्रेस विज्ञप्ति की प्रति और अपने कपड़े लेना भूल गए। वे जल्दी से रेलवे स्टेशन की ओर भागे।
नथुराम और आप्टे बेहद निराश थे। उनकी सुनियोजित योजना अंतिम क्षण में विफल हो गई। हिंदुओं पर हुए अत्याचारों का 'बदला' लेने के उनके पिछले सभी प्रयासों की तरह, यह भी नाकाम साबित हुआ। अब कौन उन पर विश्वास करेगा? वे तात्याराव का सामना कैसे करेंगे? आप्टे-गोडसे गिरोह एक बार फिर हार गया था।
स्टेशन पहुँचकर बैज और किस्तय्या ने रात 11 बजे वाली ट्रेन से बॉम्बे के टिकट खरीदे और प्लेटफार्म पर ही रुकने का फैसला किया। बैज ने कुछ पुलिस कांस्टेबलों को चलते देखा और आशंका से वे वहाँ से निकलकर पुराने दिल्ली रेलवे स्टेशन चले गए। एक घंटे के भीतर बॉम्बे के लिए एक ट्रेन छूटने वाली थी, जिसमें वे सवार हो गए; वहाँ से वे पुणे के लिए रवाना होंगे। महात्मा गांधी की हत्या की साजिश में उनकी भूमिका समाप्त हो गई थी।
नाथुराम और आप्टे पुरानी दिल्ली स्टेशन के लिए रवाना हुए और कानपुर जाने वाली रात भर चलने वाली ट्रेन में प्रथम श्रेणी में सफर किया, और फिर वहां से बॉम्बे के लिए रवाना हुए। अपने असफल प्रयास के बाद, आप्टे ने देखा कि नाथुराम बहुत शांत थे। आप्टे जानते थे कि ऐसे समय में उन्हें अकेला छोड़ देना ही बेहतर होता है। आप्टे के अनुसार, उस रात ट्रेन में किसी समय, नाथुराम ने अचानक उन्हें जगाया और कहा, 'हमने गांधीजी को मारने का फैसला

किया था, हम हार नहीं मान सकते, हमें तात्याराव से किया वादा पूरा करना ही होगा। हमें अपनी योजना को पूरा करना ही होगा। हम फिर से कोशिश करेंगे, लेकिन इस बार मैं खुद करूंगा। दूसरों पर निर्भर नहीं। चलो एक कारगर बंदूक का इंतजाम करते हैं। हम दिल्ली वापस जाएंगे और अपनी योजना को पूरा करेंगे। मैं गांधी को खुद मारूंगा।' यह कहते ही नाथुराम शांत हो गए। फिर उन्हें नींद आ गई। उस क्षण तक आप्टे-गोडसे गिरोह के नेता आप्टे थे और नाथुराम उनके वफादार अनुयायी। लेकिन उस क्षण नेतृत्व की बागडोर बदल गई। अब से नाथूराम ही नेता थे। आप्टे केवल देखते रहते थे।
कुछ देर चाय की दुकान पर रुकने के बाद, करकरे और गोपाल पुरानी दिल्ली गए और रेलवे स्टेशन के पास एक सस्ते होटल में ठहरे। फ्रंटियर हिंदू होटल मुख्य रूप से रात भर रुकने वाले यात्रियों या ट्रांजिट में रहने वाले लोगों द्वारा इस्तेमाल किया जाता था। गोपाल ने 'राजगोपालन' और करकरे ने 'जी.एम. जोशी' के नाम से चेक-इन किया। वे एक रात रुके। अगली सुबह गोपाल पंजाब मेल से बॉम्बे के लिए रवाना होंगे और फिर पुणे जाएंगे।
बिरला हाउस में, धमाके के तुरंत बाद, मदनलाल को भूर सिंह, सार्जेंट राम चंद्र और कांस्टेबल रतन सिंह ने पकड़ लिया। उन्हें मुख्य द्वार पर ले जाकर वहां तैनात पुलिसकर्मियों के हवाले कर दिया गया। करनाल के मजिस्ट्रेट और शरणार्थी मामलों के जिला अधिकारी के.एन. साहनी, जो प्रार्थना सभा में उपस्थित थे और धमाके के समय गांधीजी से तीन-चार फीट की दूरी पर बैठे थे, ने पाहवा की तलाशी ली। उन्हें मदनलाल के कोट की दाहिनी जेब में एक हथगोला मिला। इसे निष्क्रिय कर दिया गया, एक टिन में पैक किया गया और सील कर दिया गया। यह उस समय 'बम हमले के मामले' के नाम से

जाने जाने वाले मामले में शुरुआती सबूतों में से एक था, जो बाद में गांधी हत्याकांड के नाम से जाना गया। बम विस्फोट के कुछ ही समय बाद नेहरू वहां पहुंचे। गांधीजी ने साहनी को बुलाया और कहा, 'लड़का बहादुर था,' और उसकी तुलना क्रांतिकारी शहीद भगत सिंह से की। उन्होंने आगे कहा, 'ये बच्चे हैं। ये अभी स्थिति को नहीं समझते। जब मैं मर जाऊंगा, तब इन्हें याद आएगा कि बूढ़े ने जो कहा था वह सच था।'
मदनलाल को तुगलक रोड पुलिस स्टेशन ले जाया गया। शुरू में यह माना गया कि उसने अकेले ही यह काम किया है, एक पागल शरणार्थी ने अपना गुस्सा निकाला है, लेकिन जब छोटूराम और सुलोचना के बयान पुलिस को मिले, तो पता चला कि इसमें एक बड़ी साजिश रची गई थी और एक से अधिक लोग शामिल थे।
वरिष्ठ पुलिस अधिकारी थाने पहुंचे और पाहवा से पूछताछ शुरू हुई। मदनलाल को तोड़ने के लिए कठोर तृतीय डिग्री विधि का प्रयोग किया गया। जल्द ही उसने पुलिस के सामने कबूलनामा करना शुरू कर दिया। उसने अहमदनगर के 'करकरा सेठ' को वित्तपोषक बताया; उसने पुणे के हिंदू राष्ट्र और अग्रानी के संपादक और प्रकाशक तथा संपादक के छोटे भाई के बारे में बताया। उसने दाढ़ी वाले हथियार आपूर्तिकर्ता और उसके नौकर के बारे में, मरीना होटल में हुई बैठक के विवरण और पूरी योजना के बारे में बताया। पुलिस से वह बार-बार दोहराता रहा, 'वो फिर आएगा'।
छोटूराम और सुलोचना ने पुलिस को पाहवा के साथ आए लोगों के बारे में बताया और उनका हुलिया भी बताया। एक लड़के ने उन्हें कार नंबर डीएलएच 9435 दिया, लेकिन बाद में पता चला कि वह एक बस का नंबर था। देर शाम मदनलाल को मरीना होटल ले जाया गया। उसने पुलिस को होटल की तीसरी मंजिल पर स्थित कमरा नंबर 40 तक पहुंचाया।

मैनेजर सी. पचेको को कमरा खोलने के लिए कहा गया, जिसके बाद कमरे की पूरी तरह से तलाशी ली गई। ड्रेसिंग टेबल की एक दराज से पुलिस को हिंदू महासभा के लेटरहेड पर टाइप की गई प्रेस विज्ञप्ति मिली, जिसमें आशुतोष लाहिड़ी ने यह स्पष्ट किया था कि हिंदू महासभा के किसी भी प्रतिनिधि ने शांति प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर नहीं किए हैं। इससे पुलिस को यह अंदाजा हो जाना चाहिए था कि मदनलाल के साथी हिंदू महासभा से जुड़े हुए थे। उन्होंने होटल के रजिस्टरों की जांच की और पाया कि होटल में रहने वालों के नाम फर्जी दर्ज थे। पुलिस को कपड़े धोने का सामान भी दिखाया गया, जिनमें से कुछ पर 'एन.वी.जी.' लिखा हुआ था। जब तक पुलिस ने अपना काम खत्म किया, तब तक रात के 11 बज चुके थे। वे हिंदू महासभा भवन गए और कमरा नंबर 3 की तलाशी ली, लेकिन उन्हें कोई सबूत नहीं मिला। हैरानी की बात यह है कि पुलिस ने न तो कर्मचारियों से और न ही आशुतोष लाहिड़ी से पूछताछ की। पुलिस स्टेशन में पाहवा से रात भर पूछताछ जारी रही।
बुधवार, 21 जनवरी 1948
बिरला हाउस में सुबह के अखबार आए, जिनमें गांधी जी पर हुए जानलेवा हमले की खबर छपी थी। गांधी जी की सेवा में तत्पर रहने वाले उनके सेवक हरिराम समेत कई लोग उन्हें भगवान मानते थे और यह सोचकर हैरान थे कि कोई उन्हें मारना क्यों चाहेगा।
शाम की प्रार्थना के दौरान गांधीजी ने कहा, 'जब मैंने पहली बार विस्फोट की आवाज़ सुनी, तो मुझे लगा कि सेना नियमित रूप से निशाना लगाने का अभ्यास कर रही है। प्रार्थना समाप्त होने के बाद ही मुझे एहसास हुआ कि यह बम विस्फोट था और बम मेरे लिए था।' उन्होंने आगे कहा कि बम फेंकने वाले गुमराह युवक के प्रति किसी को भी द्वेष नहीं रखना चाहिए। संभवतः गांधीजी गांधीजी को हिंदू

धर्म का शत्रु और स्वयं को अपने वध का साधन मानते थे। वे पुलिस से अपराधी को छोड़ने के लिए तो नहीं कह सकते थे, लेकिन उन्होंने पुलिस से अपील की कि वे उस युवक को परेशान न करें; बल्कि उसे सही राह पर ले चलें।
अगली सुबह तड़के, पुलिस मदनलाल को ओल्ड दिल्ली स्टेशन ले गई, जहाँ से बॉम्बे के लिए पहली दो ट्रेनें एक घंटे के अंतराल पर रवाना होने वाली थीं। गोपाल—जिसके पास रिवाल्वर और हथगोले थे — पंजाब मेल से यात्रा कर रहा था और करकरे उसे छोड़ने आया था। गोपाल ने हथियारों और हथगोलों से भरा कैनवास का थैला तीसरे दर्जे के डिब्बे में अपनी सीट के नीचे छिपा दिया था और ट्रेन छूटने में अभी कुछ समय था, इसलिए करकरे और वह नाश्ते के लिए रेलवे कैंटीन चले गए। चाय पीते समय उन्होंने देखा कि दो पुलिसकर्मी एक हथकड़ी लगे व्यक्ति को, जिसका चेहरा कंबल से ढका हुआ था और केवल उसकी आँखें ही दिखाई दे रही थीं, कैंटीन की ओर ले जा रहे थे। गोपाल तुरंत समझ गया कि पुलिस मदनलाल को उसके साथियों की पहचान कराने के लिए लाई है। गोपाल का चेहरा पीला पड़ गया। 'सौभाग्य से हम कमरे के दूर कोने में बैठे थे और मदनलाल ने हमें नहीं देखा,' गोपाल ने बाद में याद किया। प्लेटफार्म पर इधर-उधर चक्कर लगाने के बाद पुलिस मदनलाल को अपने साथ ले गई। गोपाल ने राहत की साँस ली; वह तेजी से प्लेटफार्म पार करके अपनी ट्रेन में चढ़ गया।
गोपाल के जाने के बाद, करकरे कैंटीन में तब तक रुके रहे जब तक उन्हें यकीन नहीं हो गया कि पुलिस मदनलाल को लेकर चली गई है। वे फ्रंटियर हिंदू होटल गए, चेक आउट किया और थाने के वेटिंग रूम में बैठ गए, दोपहर में ही बाहर निकले। पुलिस को दिए अपने बयान में करकरे ने कहा कि वे 20 तारीख की शाम को गोपाल से अलग हुए थे।

उन्होंने दावा किया कि उन्होंने वह रात बिरला धर्मशाला के बाहर फुटपाथ पर बिताई। वे हिंदू महासभा भवन गए यह देखने के लिए कि क्या वे मदनलाल के लिए कुछ मदद जुटा सकते हैं, लेकिन कोई भी मदद करने को तैयार नहीं था। निराश करकरे ने मदनलाल के रिश्तेदारों के पास जाने का फैसला किया। उन्होंने अगले दो दिनों तक मदद पाने की कोशिश की, लेकिन सफलता नहीं मिली।
उसी शाम दिल्ली पुलिस के दो अधिकारी, डिप्टी सुपरिटेंडेंट जसवंत सिंह और इंस्पेक्टर बालकिशन, हवाई मार्ग से बॉम्बे भेजे गए। खुफिया ब्यूरो के निदेशक और पुलिस महानिरीक्षक टी.जी. संजीवी को बम हमले के मामले की जांच का जिम्मा सौंपा गया था। उन्हीं के आदेश पर इन दोनों अधिकारियों को बॉम्बे भेजा जा रहा था। उन्हें आदेश दिया गया था कि वे बॉम्बे के पुलिस उपायुक्त जे.डी. नागरवाला को मदनलाल के इकबालिया बयान के बारे में तुरंत जानकारी दें, फिर पुणे जाकर पुलिस उप-अधीक्षक (सीआईडी) रावसाहेब गुरतू को मदनलाल के इकबालिया बयान की एक प्रति सौंप दें। उत्तर भारत में उन दिनों प्रचलित प्रथा के अनुसार, मदनलाल का बयान उर्दू में लिखा गया था। बॉम्बे में कोई भी वरिष्ठ पुलिस अधिकारी उर्दू नहीं पढ़ सकता था, लेकिन दिल्ली पुलिस द्वारा अनुवाद उपलब्ध नहीं कराया गया।
बंबई में जैन ने सुबह के अखबार की सुर्खियाँ देखीं और जब उन्होंने पढ़ा कि बम किसने फोड़ा था, तो वे स्तब्ध रह गए। मदनलाल के गिरोह के अन्य सदस्यों की गिरफ्तारी की कोई खबर नहीं थी, लेकिन पाहवा ने उन्हें गांधी को 'पराजित' करने की साजिश के वित्तपोषक के रूप में 'करकरे सेठ' से मिलवाया था। अखबारों में खबरें देखने के बाद जैन ने महसूस किया कि उन्हें पाहवा की बातचीत की जानकारी देनी चाहिए, लेकिन वे चिंतित थे क्योंकि वे

शिवाजी पार्क में रहते थे, जो हिंदू महासभा का गढ़ था। उन्होंने बंबई के तत्कालीन मुख्यमंत्री बी.जी. खेर से संपर्क किया, लेकिन चूंकि वे शहर से बाहर जा रहे थे, इसलिए उन्हें गृह मंत्री मोरारजी देसाई से मिलने के लिए कहा गया। उसी शाम 4 बजे जैन ने 11 और 14 जनवरी को मदनलाल के साथ हुई बातचीत की जानकारी मोरारजी देसाई को दी। उन्होंने करकरे सेठ और मदनलाल की सावरकर से मुलाकात के बारे में बताया। उन्होंने देसाई से अनुरोध किया कि वे उनकी पहचान उजागर न करें क्योंकि उन्हें अपनी जान का खतरा था। समझ से परे बात यह है कि देसाई ने जैन के बयान के दौरान किसी भी पुलिस अधिकारी को उपस्थित रहने के लिए नहीं कहा, न ही उन्होंने बयान को रिकॉर्ड किया या उसके नोट्स बनाए।
जैन के अपने कक्ष से चले जाने के बाद, देसाई ने खुफिया शाखा के प्रभारी पुलिस उपायुक्त जमशेद दोराबजी नागरवाला, जिन्हें 'जिमी' के नाम से जाना जाता था, को बुलवाया। वे व्यस्त थे, इसलिए देसाई ने उनसे उसी शाम बॉम्बे सेंट्रल रेलवे स्टेशन पर मिलने का अनुरोध किया, क्योंकि उन्हें रात 8:30 बजे गुजरात मेल से अहमदाबाद जाना था।
बॉम्बे सेंट्रल अस्पताल में, देसाई ने जिमी नागरवाला को जैन द्वारा बताई गई सारी बातें बताईं, लेकिन प्रोफेसर की पहचान उजागर नहीं की, और उनसे मामले की जांच करने को कहा। देसाई ने नागरवाला को करकरे को गिरफ्तार करने और सावरकर पर नज़र रखने के लिए कहा। देसाई ने बताया कि वह अहमदाबाद में पटेल से मिल रहे हैं और उन्हें सारी जानकारी देंगे।
जिम्मी नागरवाला ने सबसे पहले शिवाजी पार्क स्थित सावरकर सदन पर निगरानी रखने के लिए दो सादे कपड़ों में पुलिसकर्मियों को तैनात किया। नागरवाला को पूरा यकीन था कि अगर कोई बड़ी साजिश

रची जा रही है, तो सावरकर की संलिप्तता को नकारा नहीं जा सकता और गिरोह के सदस्य देर-सवेर वहीं इकट्ठा होंगे। नागरवाला ने अपने आदमियों को भी सतर्क कर दिया कि वे सावरकर समर्थकों की किसी भी साजिश की जानकारी उन्हें दें।
नाथुराम और आप्टे उस सुबह कानपुर पहुँचे और थाने के विश्राम कक्ष में ठहरे। नाथुराम ने रजिस्टर में अपने असली नाम से हस्ताक्षर किए। उन्होंने कागज़ात पर सरसरी नज़र डाली और यह देखकर राहत महसूस की कि पुलिस किसी भी सहयोगी की तलाश नहीं कर रही है। वे सुबह 11:30 बजे लखनऊ-झांसी मेल से झांसी गए, जहाँ से उन्होंने दिल्ली-मुंबई पंजाब मेल पकड़कर मुंबई के लिए प्रस्थान किया।
गुरुवार, 22 जनवरी 1948
बिरला हाउस में गांधी जी अपनी नियमित दिनचर्या में लौट आए थे। ऐसा प्रतीत होता था कि वे अपना अगला कार्य शुरू करने से पहले अपने सभी लंबित कार्यों को निपटाने के लिए उत्सुक थे। दोनों राज्यों में हजारों अपहृत महिलाओं की बरामदगी, सिंध में हिंदुओं पर हो रहा अत्याचार और भारत में सीमा पार करने के इच्छुक लोगों को सुरक्षित निकालना, कुछ ऐसे मुद्दे थे जिन पर उन्हें विशेष ध्यान देना था। पाकिस्तान के भानवालपुर राज्य में भारत आने की प्रतीक्षा कर रहे गैर-मुस्लिम शरणार्थियों की दुर्दशा चिंताजनक थी। गांधी जी ने दो दूत भेजने का निर्णय लिया। उन्होंने फ्रेंड्स सर्विस यूनिट के लेस्ली क्रॉस और अपने निजी चिकित्सक डॉ. नय्यर को जल्द से जल्द भानवालपुर रवाना होने का आदेश दिया।
उस शाम गांधीजी प्रार्थना सभा में पैदल गए, जो तय समय पर उसी स्थान पर आयोजित हुई। क्षतिग्रस्त दीवार की मरम्मत हो चुकी थी।

उन्होंने पटेल के अधिक पुलिस बल तैनात करने और बिरला हाउस आने वाले प्रत्येक व्यक्ति की तलाशी लेने के सुझाव को अस्वीकार कर दिया था। उन्होंने कहा, 'मेरी आस्था मुझे प्रार्थना के समय किसी भी प्रकार की मानवीय सुरक्षा में रहने की अनुमति नहीं देती; इससे मेरी आस्था का उपहास होगा।'
उसी सुबह, बंबई स्थित पुलिस मुख्यालय में, दिल्ली से आए दो अधिकारियों ने नागरवाला से मुलाकात की और उन्हें पाहवा के इकबालिया बयान की एक प्रति सौंपी। नागरवाला ने उन्हें टालते हुए कहा कि वे जांच में दखल न दें।
गोपाल गोडसे दोपहर के समय बंबई पहुंचे। वे दादर स्टेशन पर उतरे और पुणे जाने वाली ट्रेन का इंतज़ार करने लगे। वे अपनी पत्नी सिंधु और बेटियों से मिलने के लिए बेताब थे। अचानक एक पुलिस कांस्टेबल उनके पास आया और उनका सामान तलाशी के लिए कहा। गोपाल डर गए, उन्हें लगा कि अब वे पकड़े जाएंगे क्योंकि उनके कंधे के थैले में दो रिवॉल्वर और एक हथगोला था। हिचकिचाते हुए उन्होंने अपना बिस्तर खोला। कुछ पूछताछ के बाद, कांस्टेबल गोपाल के कंधे के थैले की तलाशी लिए बिना ही चला गया।
शाम छह बजे घर पहुँचते ही उसने सबसे पहले यही फैसला किया कि वह उन सभी सबूतों को नष्ट कर देगा जो उसे गांधी पर हुए हमले से जोड़ सकते हैं।
उस शाम गोपाल सदाशिव पेठ में अपने मित्र पांडुरंग गोडबोले के घर गया। उसने गोडबोले को एक पार्सल दिया जिसमें.38 वेब्ले स्कॉट रिवॉल्वर थी। वह बैज से बेकार पड़ी.32 रिवॉल्वर को उस.22 रिवॉल्वर से बदलने के लिए कहने जा रहा था जो नाथुराम ने उसे पहले दी थी।
शुक्रवार, 23 जनवरी 1948

उस सुबह बिरला हाउस में गांधीजी ने अपने पोते डॉ. कांति गांधी को पत्र लिखा: 'उपवास से मेरे शरीर को कुछ हानि हुई है। इस हद तक रामनाम के प्रति मेरी निष्ठा कम हो गई है। इस आस्था के लिए निरंतर अभ्यास की आवश्यकता होती है, जो मैं नहीं कर पाया हूँ। यदि ईश्वर मेरी आस्था को फलदायी बनाना चाहते हैं, तो वे इसे प्रदान करेंगे। भले ही मुझे इस जीवन में वह अनुभव न मिले, मुझे लगता है कि मेरी आस्था अडिग रहेगी।' आश्रम के एक साथी को उन्होंने लिखा: 'उपवास छोड़ने से मेरी जिम्मेदारी कम नहीं हुई है, बल्कि बढ़ गई है। यदि मैं दिल्ली में कुछ उपलब्धि दिखा पाता हूँ, तो यह सार्थक होगा। 20 तारीख को मैं मर सकता था। लेकिन राम ने मुझे बचा लिया क्योंकि उन्हें मुझसे कुछ और काम लेना था। यदि मैं मुस्कुराते हुए मर सकूँ, तो यह बड़ी कृपा होगी... आज सुबह मेरी मनु से लंबी और स्पष्ट बातचीत हुई। मैं राम का सेवक हूँ। जब तक वे मुझे काम करने का आदेश देंगे, मैं काम करूँगा। जब वे मुझे जाने का आदेश देंगे, मैं जाऊँगा। मैं दोनों के लिए तैयार हूँ।' मेरी एकमात्र प्रार्थना यही है कि मैं अहिंसा का अभ्यास कर सकूँ और दूसरों को भी इसका अभ्यास करा सकूँ। आप भी इस प्रार्थना में मेरे साथ शामिल हों।
गांधी जी ने कांग्रेस अध्यक्ष डॉ. प्रसाद द्वारा गठित नई कांग्रेस कार्य समिति (सीडब्ल्यूसी) के पहले सत्र में भाग लिया। सदस्यों ने गांधी जी को शांति स्थापित करने पर बधाई दी और बम हमले में उनके बाल-बाल बचने पर राहत व्यक्त की। उस दिन नेताजी सुभाष चंद्र बोस की जयंती थी। दोनों के बीच कभी भी एकमत नहीं थे। गांधी जी के विरोध के कारण नेताजी ने कांग्रेस अध्यक्ष पद छोड़ दिया था और अग्रदल का गठन किया था। उस शाम गांधी जी ने नेताजी को भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए

कहा, 'सुभाष बाबू हिंसा के समर्थक थे, जबकि मैं अहिंसा का अनुयायी हूं। लेकिन इससे क्या फर्क पड़ता है? सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि हमें दूसरों के गुणों से सीखना चाहिए। सुभाष एक महान देशभक्त थे। उन्होंने देश के लिए अपना प्राणों की आहुति दी। उनकी भारतीय राष्ट्रीय सेना के सैनिकों में हिंदू, मुसलमान, सिख, पारसी, ईसाई और अन्य शामिल थे। उन्हें संकीर्णता और जातिगत भेदभाव से कोई मतलब नहीं था। उनकी नजर में सभी भारतीय और भारत के सेवक थे।' सुभाष को याद करते हुए, आइए हम उनके महान गुणों का स्मरण करें।
नथुराम गोडसे और नारायण आप्टे को ले जा रही पंजाब मेल ट्रेन दोपहर में मुंबई के विक्टोरिया टर्मिनस पहुंची। उन्होंने मध्य मुंबई में हरकिशोन्दास अस्पताल के पास सैंडहर्स्ट ब्रिज तक टैक्सी ली। उन्होंने आर्य पथिक आश्रम में ठहरने की योजना बनाई थी, जो एक सस्ता होटल था और पहले आप्टे और मनोरमा साल्वी अक्सर वहां ठहरते थे। होटल के प्रबंधक, गया प्रसाद दुबे, आप्टे को अपना पसंदीदा ग्राहक मानते थे। आप्टे हमेशा अपने लिए एक कमरा मांगते और उसका भुगतान करते थे, जो उनके लिए एक विलासिता थी। दुर्भाग्य से, इस बार दो बिस्तरों वाले कमरे उपलब्ध नहीं थे। दुबे केवल इतना ही कर सके कि उन्हें एक शयनकक्ष में दो बिस्तर दिए, जिन्हें उन्हें छह अन्य लोगों के साथ साझा करना था। आप्टे ने अपने असली नाम से हस्ताक्षर किए और 'मित्र' लिखा, जैसा कि वे मनोरमा के साथ रहते समय करते थे।
होटल में अपना सामान छोड़कर आप्टे ने मनोरमा को फोन किया। मनोरमा को उससे बात करके हैरानी और राहत दोनों महसूस हुई। मनोरमा से बात करने के बाद आप्टे और नथुराम बॉम्बे के उत्तर-पूर्व में स्थित जिला मुख्यालय शहर ठाणे में जी.एम. जोशी के घर

के लिए रवाना हुए। करकरे और आप्टे दोनों ही उन्हें जानते थे; दिल्ली जाने से पहले वे सभी जोशी के शिवाजी प्रिंटिंग प्रेस में मिले थे और उन्होंने गिरोह को कुछ धनराशि भी दी थी। दोनों यह पता लगाना चाहते थे कि क्या जोशी ने करकरे से संपर्क किया है। जब जोशी ने नकारात्मक जवाब दिया, तो उन्होंने कुछ अन्य स्थानों पर करकरे के बारे में पूछा, लेकिन हर जगह से कोई जानकारी नहीं मिली।
हालांकि नथुराम ने घोषणा की थी कि उनकी नई योजना एक अकेले व्यक्ति का प्रयास होगी और वे फिर से संगठित नहीं होंगे, फिर भी वे दोनों गिरोह को फिर से इकट्ठा करने के लिए बेताब दिख रहे थे। उन्होंने गोपाल को संदेश भेजा, जिसमें बताया कि वे बंबई में हैं और मनोरमा को उनके ठिकाने का पता है।
दरअसल, करकरे दिल्ली छोड़ चुके थे। पुलिस की नजरों से बचने के लिए उन्होंने मथुरा में ट्रेन से छलांग लगाई और आगरा के लिए बस पकड़ी।
बंबई स्थित पुलिस मुख्यालय में दिल्ली पुलिस के दो अधिकारियों को नागरवाला के कार्यालय में बुलाया गया। उन्होंने दोनों को तुरंत दिल्ली के लिए रवाना होने और बंबई में समय बर्बाद न करने का आदेश दिया। हैरानी की बात यह है कि उन्होंने दिल्ली में दिए गए आदेशों का पालन नहीं किया और जल्द ही ट्रेन पकड़कर बंबई में दो दिन बर्बाद करने के बाद दिल्ली वापस आ गए।
शनिवार, 24 जनवरी 1948
बिरला हाउस में, फरवरी के आगामी महीने में होने वाली विभिन्न गतिविधियों की योजना बनाते हुए भी, गांधीजी को अपने भीतर कहीं गहरी शंका का अनुभव हो रहा था। अपने भतीजे और मनु के पिता

जयसुखलाल गांधी को लिखे एक पत्र में उन्होंने लिखा: 'आपको फरवरी में सेवाग्राम आना चाहिए। संभव है कि मैं
मुझे 11 फरवरी को जमनालाल की पुण्यतिथि पर वर्धा जाना है। लेकिन यह निश्चित नहीं है। लगता नहीं कि मैं दिल्ली से निकल पाऊँगा। मैं प्रार्थना के तुरंत बाद यह पत्र लिखवा रहा हूँ। बहुत सारे पत्रों का निपटारा करना है। ईश्वर की इच्छा हुई तो कुछ दिनों में हमारी मुलाकात होगी, तब हम बाकी बातों पर चर्चा कर सकते हैं।
एक अन्य पत्र में उन्होंने लिखा: 'मैं राम का सेवक हूँ। जब तक वे चाहेंगे, मैं उनका कार्य करता रहूँगा। यदि मुझे ऐसी मृत्यु प्राप्त हो जिसमें मैं सत्य और अहिंसा की शक्ति का प्रदर्शन कर सकूँ, तो मैं अपने मिशन में सफल हो जाऊँगा। यदि मैंने उनके अनुसरण में निष्ठापूर्वक कार्य किया है और ईश्वर को साक्षी मानकर कार्य किया है, तो मुझे निश्चित रूप से ऐसी ही मृत्यु प्राप्त होगी। मैंने प्रार्थना में यह इच्छा व्यक्त की है कि यदि कोई मेरी हत्या करे, तो मेरे हृदय में हत्यारे के प्रति कोई क्रोध न हो और मैं राम नाम का जाप करते हुए प्राण त्याग दूँ।' गांधी जी ने डॉ. नैयर को अपने निजी प्रतिनिधि के रूप में भानवालपुर और लाहौर भेजा था, ताकि वे पाकिस्तान के शरणार्थी पुनर्वास मंत्री ग़ज़नफ़र अली खान से मिलें और अपहृत महिलाओं और अन्य बेसहारा लोगों के लिए उपयुक्त घर खोजने हेतु एक कारगर नीति विकसित करने के लिए कदम उठाएं। डॉ. नैयर ने लाहौर से गांधी जी को संदेश भेजा कि उनकी बातचीत उपयोगी रही। शाम को कर्नाटक कांग्रेस के नेताओं का एक प्रतिनिधिमंडल उनसे मिलने आया। उनकी चर्चा भाषा के आधार पर कर्नाटक प्रांत के गठन पर केंद्रित थी। भारत की भाषाओं को बढ़ावा देने और उन्हें अधिक महत्व देने के

प्रति गांधी जी की प्रबल इच्छा को देखते हुए, वे इस विचार के प्रति अनिच्छुक नहीं थे।
दिल्ली पुलिस मुख्यालय में जसवंत सिंह और बालकिशन ने बॉम्बे यात्रा की रिपोर्ट दर्ज कराई। उन्होंने बताया कि वे 'करकरे सेठ' को गिरफ्तार नहीं कर पाए और न ही हिंदू राष्ट्र के संपादक की पहचान स्थापित कर पाए। उन्होंने बॉम्बे में अपने साथ हुए लापरवाही भरे व्यवहार की शिकायत अपने वरिष्ठ अधिकारियों से की।
इसी बीच, दिल्ली पुलिस जिस व्यक्ति, करकरे, की तलाश कर रही थी, वह आगरा से ट्रेन में सवार होकर बॉम्बे वापस जाने के अपने जटिल सफर पर निकल पड़ा। रात के दौरान उसने मध्य प्रदेश के इटारसी और फिर बॉम्बे के उत्तर-पूर्व में स्थित औद्योगिक शहर कल्याण में ट्रेन बदली।
बंबई में, आर्य पथिक आश्रम के प्रबंधक दुबे ने आखिरकार आप्टे के लिए दो बिस्तरों वाला कमरा दिलवा दिया। प्रसन्न होकर आप्टे ने कमरा स्वीकार कर लिया। नाथुराम विक्टोरिया टर्मिनस के पास और बंबई पुलिस आयुक्त कार्यालय और पुलिस मुख्यालय के बगल में स्थित कार्नाक रोड के एल्फिंस्टन एनेक्स होटल गए थे; वहाँ उन्होंने 'एन. विनायकराव और मित्र' के नाम से एक और कमरा बुक करवाया। आप्टे दोपहर को मनोरमा के साथ अपने होटल के कमरे में लौटे। मनोरमा 24 तारीख को भी वहीं रुकीं और रात भी वहीं बिताई। नाथुराम बाहर रहे और कुछ फिल्में देखीं।
रविवार, 25 जनवरी 1948
बिरला हाउस में, गांवों के उत्थान और भारत को जाति व्यवस्था से मुक्त करने के अपने आंदोलन की योजना बनाते हुए, गांधी ने प्रभुदयाल विद्यार्थी को पत्र लिखा, जो चौदह वर्ष की आयु से

सेवाग्राम में रह रहे थे और अब एक ग्राम कार्यकर्ता थे। उन्होंने कहा कि ग्रामीण पुनर्निर्माण के कार्यों में उन्हें कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। लेकिन इन कार्यों के लिए समर्पित कार्यकर्ताओं को दृढ़, साहसी और साथ ही परिवर्तन लाने में कुशल होना होगा। उसी दोपहर, उन्होंने सामुदायिक समिति के दूसरे सत्र में भाग लिया। उन्होंने भारत की प्रमुख भाषाओं के आधार पर प्रांतों के गठन के प्रस्ताव का समर्थन किया, लेकिन इस बात पर जोर दिया कि इसके बाद उनके सभी नागरिकों को प्रेम और सहयोग से एक साथ रहना चाहिए।
उस शाम प्रार्थना सभा में गांधीजी ने कहा, 'मैं यह नहीं पूछूंगा कि इस सभा में कितने मुसलमान हैं। मैं बस इतना ही कहूंगा कि सभी मुसलमान मुसलमानों को अपना भाई समझें। प्रार्थना में आने वालों की संख्या बढ़ती जा रही है। अगर उनमें से हर कोई अपने साथ एक मुस्लिम मित्र को लाए, तो यह बहुत बड़ी बात होगी। मेहरौली स्थित ख्वाजा सैयद कुतुबुद्दीन बख्तियार की दरगाह पर उर्स कल से शुरू होगा। इस साल की शुरुआत में दरगाह का कुछ हिस्सा तोड़ दिया गया था। अब उसकी मरम्मत हो चुकी है और उर्स हमेशा की तरह होगा। पहले वहां बड़ी संख्या में मुसलमान और उतने ही हिंदू जाया करते थे। हिंदुओं को भी वहां शांति और श्रद्धा भाव से जाना चाहिए।'
फरवरी महीने के अपने कार्यक्रम का जिक्र करते हुए गांधी ने कहा, 'मैं 2 फरवरी को राजेंद्र बाबू के साथ वर्धा के लिए रवाना होऊंगा। लेकिन मैं जल्द से जल्द दिल्ली लौटने की कोशिश करूंगा। यह खबर कि मैं वर्धा में एक महीने रुकूंगा, सही नहीं है। मैं तभी जाऊंगा जब आप मुझे आशीर्वाद दें और मुझे आश्वस्त करें कि मेरे

जाते ही आप लड़ाई शुरू नहीं करेंगे! बाद में, मैं पाकिस्तान भी जाना चाहता हूं, अगर वहां की सरकार इसकी अनुमति देती है।'
उस सुबह दिल्ली स्थित पुलिस मुख्यालय में दोनों पुलिस अधिकारियों की रिपोर्ट संजीव के पास पहुँची। हालाँकि, वह अपने अधीनस्थों की शिकायतों को बॉम्बे पुलिस के समक्ष नहीं उठाना चाहते थे। उनका मानना था कि षड्यंत्रकारी बॉम्बे प्रांत के थे और इसलिए उन्हें उनके सहयोग की आवश्यकता थी। बॉम्बे पुलिस विभाग के उप महानिरीक्षक यू.एच. राणा दिल्ली में थे। संजीव ने उन्हें मामले की जानकारी दी और मदनलाल के इकबालिया बयान की एक प्रति उन्हें सौंपी, इस बार अंग्रेजी अनुवाद के साथ। उन्होंने राणा को आदेश दिया कि इसे बॉम्बे पुलिस को सौंप दें और इकबालिया बयान में उल्लिखित लोगों को गिरफ्तार करने के लिए कार्रवाई शुरू करें।
राणा उसी दिन बंबई के लिए रवाना हो गए, और मिशन की तात्कालिकता के बावजूद, उन्होंने ऐसा मार्ग चुना जिससे यात्रा इतनी लंबी हो गई कि अंततः वह अनावश्यक हो गई। राणा ने हवाई जहाज से नहीं बल्कि ट्रेन से बंबई जाने का फैसला किया क्योंकि उन्हें हवाई यात्रा से डर लगता था।
ठाणे में, करकरे सीधे नवपाड़ा एन्क्लेव में स्थित जोशी के घर, शांता सदन गए और गली से ही उन्हें आवाज़ दी, जैसा कि उन दिनों रिवाज था। कुछ हिंदू घरों में महिलाओं के अजनबियों और जान-पहचान वालों से न मिलने का विशेष ध्यान रखा जाता था। जब कोई मेहमान आता, तो वे गली या आंगन से ही परिवार को आवाज़ देते थे, ताकि घर की महिलाओं को अंदर के कमरों में जाने का समय मिल सके। जोशी ने करकरे को बताया कि आप्टे और गोडसे दो दिन पहले उनसे मिलने आए थे, लेकिन अपने ठिकाने के बारे में कोई जानकारी दिए

बिना चले गए। करकरे ने पुणे में आप्टे को एक टेलीग्राम भेजा, लेकिन सतर्क होने के कारण उन्होंने इसे ठाणे से नहीं भेजा। अगर पुलिस सतर्क होती, तो वे टेलीग्राम को रोक लेते, ठाणे तक उसका पता लगा लेते और फिर जोशी के घर तक पहुँच जाते। इसलिए जोशी के अठारह वर्षीय बेटे, वसंत को फ्लोरा फाउंटेन के पास, बॉम्बे के फोर्ट इलाके में स्थित सेंट्रल टेलीग्राफ ऑफिस भेजा गया। यह एक तरफ का बीस मील का सफर था। रविवार होने के कारण केवल एक्सप्रेस टेलीग्राम ही बुक किए गए थे। टेलीग्राम में लिखा था: आप्टे, आनंद आश्रम, पुणे। दोनों तुरंत आएं, व्यास। 'व्यास' 'बियास' का दूसरा रूप है, जो गिरोह में करकरे का कोड नाम था।
पुणे में गोपाल आप्टे के घर नियमित रूप से जाया करते थे और उनकी पत्नी चंपाताई से उनके बारे में जानकारी लेते थे। जब उन्हें नाथूराम से यह संदेश मिला कि वह और आप्टे बंबई में हैं, तो गोपाल ने चंपाताई को इसकी सूचना दे दी।
उस सुबह चंपाताई को व्यास नाम के किसी व्यक्ति द्वारा उनके पति के नाम एक टेलीग्राम मिला। उन्हें कुछ समझ नहीं आया, इसलिए उन्होंने उसे गोपाल को भेज दिया, जिसने भेजने वाले को पहचान लिया। अब उन्हें यह सूचना बंबई में नाथूराम को भेजनी थी। गोपाल तुरंत स्टेशन पहुंचे और बंबई जाने वाली पहली ट्रेन में सवार हो गए। उन्हें बंबई पहुंचना था, अपने भाई को ढूंढना था, उसे संदेश देना था और अगली सुबह तक पुणे वापस लौटना था, क्योंकि उनकी छुट्टी खत्म हो रही थी और उन्हें गोला-बारूद डिपो में काम पर रिपोर्ट करना था। वह अपने साथ.32 रिवॉल्वर ले गए। उन्होंने इसे बैज को देने की कोशिश की थी, लेकिन शूटर ने गाली-गलौज शुरू कर दी थी, इसलिए गोपाल ने बंदूक अपने पास रख ली थी। अब वह इसे अपने भाई को वापस देना चाहते थे, जो शायद इसका इस्तेमाल कर सके। दिनों के

बीतने के साथ गोपाल का गिरफ्तारी का डर कम हो गया था। वह ठाणे में उतरे और एक पेफोन से नॉर्थकोट पुलिस अस्पताल में फोन किया और मनोरमा के लिए एक संदेश छोड़ा, जिसमें उनसे आप्टे को यह सूचित करने का अनुरोध किया कि व्यास ठाणे पहुंच गए हैं। फिर वह जोशी के घर गया और वहां करकरे से मिला।
एल्फिंस्टन होटल में, आप्टे और गोडसे ने चंदा इकट्ठा करने का फैसला किया। वे उग्रवादी हिंदू गतिविधियों के एक धनी समर्थक, परंजपे से मिलने गए, जो एक बैंकर और सिल्वर बैंक कंपनी के सह-मालिक थे। उन्होंने अपने शोध पत्र के लिए उनसे 25,000 रुपये का ऋण मांगा। परंजपे ने उन्हें अगले दिन अपने कार्यालय आने पर 10,000 रुपये देने का वादा किया। यह जानते हुए कि उन्हें मांगी गई राशि से कम ही मिलेगा, आप्टे ने कम से कम 5,000 रुपये मिलने की उम्मीद में अधिक राशि मांगी थी। परंजपे का वादा उनके लिए अप्रत्याशित लाभ साबित हुआ। दोनों फोर्ट स्थित एयर इंडिया कार्यालय पहुंचे और मंगलवार, 27 तारीख की सुबह की उड़ान से दिल्ली के लिए दो टिकट बुक करवाए। टिकट आप्टे के लिए 'डी. नारायणराऊ' और नाथूराम के लिए 'एन. विनायकराऊ' के फर्जी नामों से बुक किए गए थे, और मरीन ड्राइव स्थित सी ग्रीन साउथ होटल का पता दिया गया था।
जब वे एल्फीनस्टोन एनेक्स होटल लौटे, तो उन्होंने देखा कि मनोरमा गोपाल का संदेश देने के लिए उनका इंतजार कर रही थी।
आप्टे और नाथुराम तुरंत ठाणे के लिए रवाना हो गए।
गिरोह फिर से संगठित हो रहा था।
जोशी के घर पहुँचकर उन चारों ने उनसे कुछ समय अकेले रहने का अनुरोध किया। नाथूराम ने समूह के सामने अपनी योजना प्रकट की।
करकरे और गोपाल ने आप्टे से स्वीकृति की उम्मीद में उनकी ओर

देखा, लेकिन उन्हें एहसास हुआ कि उनकी अनुपस्थिति में कुछ घटित हुआ है। आप्टे को सत्ता से हटा दिया गया था। उनका नया नेता नाथूराम विनायक गोडसे था।
आप्टे और करकरे नाथुराम के साथ शामिल होने के लिए सहमत हो गए। गोपाल ने.32 रिवॉल्वर अपने भाई को सौंप दी। गांधी की हत्या की साजिश में उसकी भूमिका समाप्त हो गई थी। वह अपने परिवार और नौकरी पर वापस लौट रहा था।
सात लोगों का गिरोह अब घटकर तीन रह गया था। गोपाल ने जोशी से पूछा कि पुणे के लिए अगली ट्रेन कितने बजे निकलेगी। जोशी ने बताया कि ट्रेन रात 10 बजे के बाद निकलेगी, इसलिए गोपाल रेलवे स्टेशन की ओर चल पड़ा और फिर पुणे के लिए रवाना हो गया। सोमवार, 26 जनवरी 1948
बिरला हाउस में गांधी जी का मौन दिवस था। उन्होंने डॉ. गोपीचंद भार्गव, प्रफुल्ल चंद्र घोष और अन्य लोगों के साथ 'चर्चा' की और अपनी टिप्पणियाँ और उत्तर लिखित रूप में दिए। उन्होंने सीडब्ल्यूसी के सत्र में भाग लेते समय भी यही प्रक्रिया अपनाई। शाम की प्रार्थना सभा में, उनके लिखित भाषण को पढ़ा गया। प्यारेलाल ने कहा: 'आज, 26 जनवरी, भारत का स्वतंत्रता दिवस है।* यह उत्सव उस समय बिल्कुल उपयुक्त था जब हम स्वतंत्रता के लिए संघर्ष कर रहे थे और हमने इसे न तो देखा था और न ही अनुभव किया था। अब जब हमने इसे देख लिया है और अनुभव कर लिया है, तो हम निराश प्रतीत होते हैं। आज हम क्या मना रहे हैं? निश्चित रूप से अपनी निराशा तो नहीं! हमें जिस बात का जश्न मनाने का अधिकार है, वह यह आशा है कि सबसे बुरा दौर बीत चुका है, और हम भारत के सबसे गरीब ग्रामीणों को यह दिखाने के मार्ग पर अग्रसर हैं कि स्वतंत्रता का अर्थ है गुलामी से मुक्ति, और वह अब भारत के शहरों और कस्बों

की सेवा करने के लिए पैदा हुआ गुलाम नहीं है, बल्कि उसे अपने सुविचारित परिश्रम के फल के लिए शहरवासियों का उपयोग करने का अधिकार है। वह भारतीय धरती का नमक है।'
बंबई में, नाथुराम और आप्टे, दादा महाराज से मिलने गए, इस उम्मीद में कि वे उन्हें एक भरोसेमंद पिस्तौल दे देंगे। दीक्षित महाराज भी उस मुलाकात में मौजूद थे। पिछली मुलाकात में आप्टे ने दीक्षित महाराज को बताया था कि उन्होंने हथियारों और विस्फोटकों से भरा एक ट्रक मंगवा लिया है और उसे कश्मीर ले जाकर पाकिस्तान से आए 'कबाली' आक्रमणकारियों से लड़ेंगे। दीक्षित महाराज ने अब आप्टे से कश्मीर भेजे जाने वाले इस माल के बारे में पूछा। आप्टे ने जवाब दिया कि माल तैयार है और वे अपनी सुरक्षा के लिए एक रिवॉल्वर ढूंढ रहे हैं, क्योंकि दिल्ली के उत्तर में यात्रा करना बहुत खतरनाक है। दादा महाराज ने यह कहते हुए मना कर दिया कि वे उनकी मदद नहीं कर सकते। आप्टे ने फिर आर्थिक मदद मांगी, लेकिन महाराज बंधुओं का उनसे मोहभंग हो चुका था, इसलिए उन्हें खाली हाथ लौटना पड़ा।
उसी सुबह आप्टे और नाथुराम परंजपे से मिलने सिल्वर बैंक कंपनी गए। उन्हें शाम नौ बजे करकरे से अंतिम मुलाकात करनी थी, जिसके बाद तीनों दिल्ली के लिए रवाना होने वाले थे। जेब में काफी नकदी होने के कारण आप्टे और नाथुराम ने दोपहर का समय निजी सुख-सुविधाओं में बिताने का फैसला किया। आप्टे ने मनोरमा को आमंत्रित किया था और नाथुराम ने फिल्म देखने का निर्णय लिया। आप्टे ने मनोरमा को बाद में इस बात का सबूत बनाने के लिए इस्तेमाल करने की योजना बनाई थी कि हत्या के समय वह नाथुराम के साथ दिल्ली में नहीं थे। आप्टे ने मनोरमा से कहा कि जैसे ही उन्हें दिल्ली में नाथुराम की गतिविधियों की खबर मिले, वह

दिल्ली में हिंदू महासभा के सचिव को एक टेलीग्राम भेजें, जिसमें लिखा हो: 'गोडसे के बचाव की व्यवस्था करने के लिए दिल्ली पहुंच रहा हूं, नारायण डी. आप्टे'।
उस शाम, जल्दी भोजन करने के बाद, नाथूराम और आप्टे ठाणे जाने वाली ट्रेन में सवार हुए। करकरे प्लेटफार्म पर उनका इंतजार कर रहे थे। तीनों ने रेलवे ट्रैक पार किया और यार्ड के एक सुनसान कोने में एक दीपक के नीचे बैठ गए, जहाँ नाथूराम ने करकरे को अपनी योजनाओं के बारे में बताया। आप्टे और वह अगली सुबह हवाई जहाज से दिल्ली के लिए रवाना होने वाले थे। वहाँ से वे ग्वालियर जाकर गोपाल के एक परिचित से बंदूक खरीदेंगे। ग्वालियर भारत में अवैध बंदूक व्यापार का केंद्र था। वहाँ हर तरह की भारतीय और विदेशी बंदूकें और हथियार आसानी से उपलब्ध थे। फिर वे 29 तारीख की सुबह दिल्ली लौटेंगे। उन्होंने करकरे से कहा कि वे 27 तारीख की शाम तक दिल्ली के लिए निकल जाएं, ताकि वे 28 तारीख की रात तक वहाँ पहुँच सकें। 29 तारीख की सुबह करकरे को पुरानी दिल्ली रेलवे स्टेशन के बाहर रानी उद्यान में पत्थर के फव्वारे के पास उनका इंतजार करना था। करकरे ने वादा किया कि वे गुरुवार को गोडसे और आप्टे का पूरा इंतजार करेंगे। इस समय तक करकरे के पास पैसे खत्म हो चुके थे, इसलिए आप्टे ने उन्हें दिल्ली में यात्रा और रहने के खर्च के लिए तीन सौ रुपये दिए।
इसके बाद तीनों वापस मुख्य प्लेटफार्म पर गए और बॉम्बे के लिए आखिरी लोकल ट्रेन आने तक एक चाय की दुकान पर बैठ गए। करकरे ने उन दोनों को विदा किया और जोशी के घर वापस चले गए।
यू.एच. राणा, जिन्हें संजीवी ने मदनलाल का इकबालिया बयान सौंपा था, अभी भी इलाहाबाद से बॉम्बे के लिए ट्रेन से यात्रा कर रहे थे
- एक ऐसी यात्रा जिसमें उन्हें लगभग छत्तीस घंटे लगेंगे।

मंगलवार, 27 जनवरी 1948
बिरला हाउस में गांधीजी ने उस दिन एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम की योजना बनाई थी। दिल्ली से सात मील दक्षिण में स्थित रमणीय परिवेश में बसा महरौली, ऐतिहासिक रूप से पृथ्वीराज चौहान की प्राचीन राजधानी के रूप में प्रसिद्ध है। यह सूफी संत ख्वाजा सैयद कुतुबुद्दीन बख्तियार की दरगाह शरीफ का स्थान है और अजमेर स्थित ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती की दरगाह के बाद इसका दूसरा सबसे महत्वपूर्ण स्थान है। दिल्ली में हुए दंगों के दौरान यहां भी सांप्रदायिक हिंसा की कुछ जघन्य घटनाएं घटी थीं। हर साल पीर पर्व के दौरान एक धार्मिक मेला लगता था, जिसमें न केवल मुसलमान बल्कि सूफी परंपरा के अनुसार हिंदू, मुसलमान, सिख और ईसाई भी शामिल होते थे। गांधीजी ने कहा था कि उर्स करना उनके उपवास तोड़ने की पूर्व शर्त है, इसलिए दिल्ली प्रशासन ने दरगाह और उसके आसपास के क्षेत्र की सफाई करवाई थी और क्षतिग्रस्त हिस्सों की मरम्मत करवाई थी।
गांधी जी को दरगाह जाना था और उर्स में शामिल होना था। सनातनी हिंदू और उग्र सिख, अपने लगाए चाय के स्टॉलों से फूल और गरमागरम चाय पिलाकर मेहमानों का स्वागत करने के लिए होड़ कर रहे थे। गांधी जी के साथ आभा, मनु और एक अन्य महिला थीं। इस्लामी परंपरा के अनुसार, महिलाओं को गर्भगृह में प्रवेश करने की अनुमति नहीं थी। उन्होंने सुझाव दिया कि वे बाहर प्रतीक्षा करें, 'अधिमानतः किसी मुस्लिम मित्र की सुरक्षा में'। लेकिन आयोजकों ने कहा कि महिलाओं को गांधी जी के साथ जाना ही होगा क्योंकि वे उनकी बेटियाँ थीं। दरगाह के चारों ओर जटिल नक्काशीदार सफेद संगमरमर की जाली को हुए नुकसान को देखकर गांधी जी ने कहा, 'मुझे डर है कि पाकिस्तान में हिंदू और सिख दरगाहों को भी इसी तरह का नुकसान

पहुँचा होगा।' प्रेस में पाकिस्तान सरकार द्वारा जारी एक बयान के हवाले से खबर आई थी कि पेशावर के परचिनार शरणार्थी शिविर में कबायली क्षेत्र के हमलावरों ने 130 निर्दोष हिंदू और सिख शरणार्थियों का नरसंहार कर दिया था। वास्तविक हताहतों की संख्या कहीं अधिक थी। पहले के विपरीत, इस खबर ने राजधानी में मुसलमानों पर जवाबी हमले नहीं भड़काए। 'मुझे कहना होगा,' गांधी जी ने दरगाह से बाहर आते हुए कहा, 'अहिंसक साहस के मेरे आह्वान पर सिखों की प्रतिक्रिया मेरी उम्मीदों से कहीं अधिक रही है।' परचिनार नरसंहार के बारे में बोलते हुए गांधी जी ने कहा, 'मैं आप सभी से यह प्रतिज्ञा चाहता हूँ कि आप शैतान की वाणी को फिर कभी नहीं सुनेंगे और भाईचारे और शांति के मार्ग को नहीं छोड़ेंगे। परचिनार से आई खबर ने मुझे स्तब्ध कर दिया है, लेकिन आपको ऐसी उकसावों को भी अपने दिलों में प्रतिशोध और बदले की भावना को फिर से जगाने नहीं देना चाहिए। आपको स्वयं को और सभी संबंधित लोगों को यह बताना चाहिए कि वे खून का बदला खून से लेने नहीं निकले थे, बल्कि हत्यारे से भी प्रेम से मिलने निकले थे।'
तीर्थस्थल से लौटते समय अपने साथियों से बात करते हुए गांधीजी ने कश्मीर मुद्दे पर संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के रवैये पर घोर निराशा व्यक्त की। भारत की शिकायत पर विचार करके आक्रमण को समाप्त कराने के बजाय, कश्मीर के भविष्य का फैसला करने वाले जनमत संग्रह से पहले भारत से कश्मीर से अपनी सेना वापस बुलाने की शर्त रखी जा रही थी। ऐसा लग रहा था कि संयुक्त राष्ट्र एक ऐसा संगठन बन गया है जहाँ झूठ और टालमटोल को बहुत महत्व दिया जाता है। उन्होंने कहा, 'आज वे पंडित नेहरू की सरकार को कटघरे में खड़ा करने की तैयारी कर रहे हैं। अगर हम बेहद सतर्क नहीं रहे, तो हमारी छवि खराब हो जाएगी।'

दोपहर में, ब्रिटिश पत्रकार किंग्सले मार्टिन ने गांधीजी का साक्षात्कार लिया। उन्होंने अपने इस बढ़ते विश्वास को दोहराया कि विदेशी शासन से भारत की स्वतंत्रता का संघर्ष वास्तव में अहिंसक नहीं था, और कथनी और करनी में अंतर ही विभाजन के तुरंत बाद देश में हुई हिंसा का मूल कारण था। उन्होंने भारत के अहिंसक प्रतिरोध को एक तात्कालिक उपाय बताया, जिसे केवल इसलिए अपनाया गया था क्योंकि स्वतंत्रता सेनानियों के पास ब्रिटिश साम्राज्य से लड़ने के लिए पर्याप्त सैन्य शक्ति नहीं थी। उनके विचार में, सच्ची अहिंसा उन शक्तिशाली लोगों का दृष्टिकोण होना चाहिए जो सत्ता में होते हुए भी उसका प्रयोग धर्म के लिए करते हैं, न कि अपनी लाचारी के कारण।
उन्होंने मार्टिन को समझाने के लिए दक्षिण अफ्रीका में कई साल पहले घटी एक घटना को याद किया। विलियम होस्केन, एक व्यापारी, ने एक सभा में उनका परिचय कराते हुए कहा था, 'श्री गांधी ट्रांसवाल के उन भारतीयों के नेता हैं जो अहिंसक प्रतिरोध का सहारा लेते हैं, जिनके पास मताधिकार और हथियार नहीं हैं। उन्होंने अहिंसक प्रतिरोध को चुना है, जिसे कमजोरों का हथियार माना जाता है।' गांधी ने कहा कि उन्होंने तब भी इस वर्णन का विरोध किया था: 'वास्तविक अहिंसक प्रतिरोध को गलत तरीके से कमजोरों का हथियार कहा गया है। आखिर, यीशु मसीह सभी अहिंसकों के राजकुमार हैं। क्या उन्हें किसी भी अर्थ में कमजोर कहा जा सकता है? आत्मबल, जो सच्चे अहिंसकों का हथियार है, वास्तव में बलवानों का हथियार है।'
अपनी प्रार्थना सभा में बोलते हुए गांधी ने कश्मीर में हमलावरों द्वारा मीरपुर से कई महिलाओं और बच्चों के अपहरण का जिक्र किया। उन्होंने कहा, 'मानवता और ईश्वर के नाम पर, मैं

हमलावरों और पाकिस्तान सरकार से अनुरोध करता हूं कि वे सभी अपहृत महिलाओं को सम्मानपूर्वक लौटा दें। यह उनका कर्तव्य है। मुझे इस्लाम का पर्याप्त ज्ञान है, जिसके बारे में मैंने बहुत कुछ पढ़ा है। इस्लाम में कहीं भी महिलाओं को अगवा करके ऐसी अपमानजनक परिस्थितियों में रखने की शिक्षा नहीं दी गई है। यह शैतान की पूजा है, ईश्वर की नहीं।'
अमेरिकी लेखक विन्सेंट शीन ने प्रार्थना सभा के बाद गांधीजी का साक्षात्कार लिया। उन्होंने धर्म के प्रभाव और साध्य एवं साधन के दर्शन पर चर्चा की। बल प्रयोग के प्रति अपने विरोध के बारे में बोलते हुए गांधीजी ने कहा कि उनका विरोध इस बात पर नहीं था कि बल का प्रयोग अन्यायपूर्ण युद्धों को समर्थन देने के लिए भी किया जा सकता है; बल्कि यह मौलिक था। 'मैं नहीं जानता कि वास्तव में अच्छा क्या है। इसलिए, मैं परिणामों पर ध्यान नहीं देता। मेरे लिए इतना ही काफी है कि मैं साधनों का ध्यान रखूँ।' उदाहरण के तौर पर उन्होंने कहा कि एक प्राकृतिक चिकित्सावादी होने के नाते, वे टाइफाइड होने पर सल्फा औषधियों के प्रयोग में विश्वास नहीं करते। क्या उन्हें अपना विश्वास त्याग देना चाहिए? 'मैं नहीं जानता कि सल्फा औषधियों के प्रयोग से मेरा या मानवता का इलाज होना अच्छा है या नहीं; इसलिए मैं उनका प्रयोग करने से इनकार करता हूँ... यदि कभी-कभी अच्छाई से बुराई उत्पन्न होती प्रतीत होती है, तो इसका अर्थ यह होगा कि प्रयुक्त साधन संभवतः गलत थे। अच्छे परिणाम उत्पन्न करने के लिए अच्छे कर्मों को शुद्ध साधनों द्वारा समर्थित होना चाहिए।'
चूंकि काफी देर हो चुकी थी, इसलिए उन्होंने साक्षात्कार अगली सुबह जारी रखने का फैसला किया।

ठाणे में, करकरे उसी दोपहर जोशी के घर से निकले और दिल्ली जाने वाली ट्रेन के निर्धारित समय से तीन घंटे पहले बॉम्बे सेंट्रल स्टेशन पहुँच गए। करकरे को तीसरे दर्जे के डिब्बे में सीट मिल गई और उन्होंने फ्रंटियर मेल का इंतजार करते हुए प्लेटफार्म पर समय बिताया।
बंबई में, गोडसे और आप्टे दिल्ली जाने वाली फ्लाइट में सवार हुए। उन्होंने विमान के लगभग पिछले हिस्से में सीटें लीं। आप्टे ने एयर होस्टेस लोर्ना बैनब्रिज के साथ हल्के-फुल्के अंदाज़ में छेड़छाड़ करके सबका ध्यान अपनी ओर खींचा। लोर्ना को आप्टे और उनके दोस्त याद रहे क्योंकि आप्टे लगातार कॉफी और मिठाई मांग रहे थे ताकि उस बेहद खूबसूरत एयर होस्टेस से बात करने का बहाना बना सकें।
दिल्ली पहुँचते ही दोनों सीधे ओल्ड दिल्ली रेलवे स्टेशन गए और ग्रैंड ट्रंक एक्सप्रेस में सवार हो गए, जो उन्हें ग्वालियर ले जाएगी, जो एक रियासत थी और भारतीय संघ में विलय होने की प्रक्रिया में थी।
आधी रात से ठीक पहले ट्रेन स्टेशन पर पहुंची। उस समय ट्रेन से बहुत कम यात्री उतर रहे थे। स्टेशन के बाहर, नथुराम और आप्टे ने कुछ तांगेवालों से पूछा कि क्या वे डॉ. परचुरे का घर जानते हैं। उनमें से एक, गरीब, उन्हें एक रुपये के किराए पर वहां ले जाने के लिए तैयार हो गया। रास्ते में लगाम टूट गई और उन्हें जुम्मा द्वारा चलाए जा रहे दूसरे तांगे को रोकना पड़ा।
डॉ. दत्तात्रेय सदाशिव परचुरे रक्त शुद्ध करने और श्वसन संबंधी रोगों से लोगों को ठीक करने के लिए घर में बनी दवाइयाँ बेचते थे। उनकी प्रसिद्धि का एक और कारण था: वे ग्वालियर में हिंदू महासभा के संस्थापक और हिंदू राष्ट्र सेना नामक गुंडों की निजी

सेना के मुखिया थे। लंबी दाढ़ी और लंबे बालों के कारण वे साधु जैसे दिखते थे, लेकिन मोटे लेंस के पीछे उनकी आँखों में कट्टरता झलकती थी। वे अपने उग्र स्वभाव और तीखी जुबान के लिए जाने जाते थे, उन्हें आधुनिक युग का रसपुतिन कहा जाता था। नाथूराम को पूरा विश्वास था कि परचुरे उन्हें हथियार दिलवा देंगे, क्योंकि उनकी मुलाकात ग्वालियर में हिंदू महासभा के एक समारोह में हुई थी। कुछ महीने पहले दोनों अलवर रियासत में एक हथियार प्रशिक्षण शिविर में भी साथ थे।
पिछली बैठक में गोडसे और परचुरे ने सावरकर द्वारा स्थापित हिंदू राष्ट्र दल (जिसके प्रमुख सदस्य नाथूराम थे) और परचुरे की शिवसेना के विलय की संभावना पर चर्चा की थी, लेकिन नेतृत्व के मुद्दे पर बातचीत विफल हो गई थी। परचुरे के पास कांग्रेस से नाराज़ होने के अपने कारण थे। ग्वालियर के महाराजा जियाजीराव सिंधिया (शिंदे का अंग्रेज़ी रूप) ने ग्वालियर हिंदू महासभा के दावे को नज़रअंदाज़ करते हुए ग्वालियर में कांग्रेस सरकार के गठन का निमंत्रण दिया था, जिससे परचुरे ग्वालियर के मुख्यमंत्री बनने का मौका गँवा बैठे थे। यह घटना 24 जनवरी को हुई थी और कांग्रेस और महासभा के बीच तनाव चरम पर था। परचुरे पहले ही लाई कोठी पर एक प्रदर्शन का नेतृत्व कर चुके थे। परचुरे एक बड़ा परिवार था; सभी भाई और उनके परिवार ग्वालियर के लश्कर या छावनी क्षेत्र में स्टेशन रोड पर स्थित एक बड़े पारिवारिक हवेली में रहते थे।
आधी रात के बाद जब नाथूराम ने परचुरे वाडा के दरवाजे पर दस्तक दी, तो उनका स्वागत परचुरे के पुत्र नीलकंठ ने किया, जिसने उन्हें इंतजार करने को कहा और बताया कि वह उनके आने की सूचना अपने पिता को दे देगा। परचुरे, जो कुछ ही मिनट पहले अपने सोने के

कमरे में गए थे, इतनी देर रात अचानक आने से थोड़े नाराज़ थे। कुछ मिनट बाद वे नीचे आए और नाथूराम और आप्टे को सार्वजनिक कमरे में ले गए। उन्होंने नाथूराम से अचानक आने का कारण पूछा। नाथूराम ने आश्चर्यजनक रूप से स्पष्ट शब्दों में, जिससे पता चलता है कि नाथूराम को परचुरे पर पूरा भरोसा था, बताया कि उन्होंने गांधी की हत्या करने का फैसला किया है और इसके लिए उन्हें बंदूक प्राप्त करने में परचुरे की मदद चाहिए। परचुरे ने दोनों को अपने घर में रात बिताने के लिए कहा और अगली सुबह कुछ करने का वादा किया।
उस दोपहर, राणा भारत के आधे से ज़्यादा हिस्से की यात्रा करने के बाद आखिरकार बंबई पहुँच गया। जब तक वह बंबई पहुँचा, गिरोह के तीनों सदस्य पहले ही भाग चुके थे। राणा सीधे जिमी नागरवाला के घर गया और उनके साथ पेय और भोजन करते हुए एक सुखद शाम बिताई। उसने नागरवाला को जाँच के बारे में जानकारी दी, लेकिन मदनलाल का बयान अपने पास रखने का फैसला किया। कुछ पेय पीने के बाद, दोनों ने दिल्ली में संजीव को फोन किया और उन्हें आश्वासन दिया कि वे काम पर लगे हुए हैं और जाँच में हुई किसी भी प्रगति के बारे में उन्हें सूचित करते रहेंगे। नागरवाला ने तब संजीव को उस असली साजिश के बारे में बताया जिसे वह अपहरण मानते थे। नागरवाला ने दावा किया कि बीस लोगों का एक मुख्य समूह था, जिनमें से प्रत्येक को बीस समर्पित स्वयंसेवकों का सहयोग प्राप्त था, जो इसमें शामिल थे, और वह जल्द ही पूरी साजिश का पर्दाफाश करेगा और सभी प्रमुख साजिशकर्ताओं को गिरफ्तार करेगा। नागरवाला ने संजीव को गांधी की सुरक्षा के बारे में अतिरिक्त सावधानी बरतने की चेतावनी दी।
बुधवार, 28 जनवरी 1948

बिड़ला हाउस में गांधी जी कांग्रेस के भविष्य की रूपरेखा तैयार करने में मग्न थे। वे संगठन के लिए एक नए संविधान को अंतिम रूप दे रहे थे। ऐसा लग रहा था मानो वे उस पार्टी के लिए वसीयत लिख रहे हों जिसे उन्होंने पोषित किया था और शहरी बुद्धिजीवियों के एक वाद-विवाद समूह से एक सर्वव्यापी राष्ट्रीय पार्टी में परिवर्तित किया था।
उन्होंने आर.आर. दिवाकर, आचार्य जुगल किशोर और कांग्रेस की संविधान उप-समिति के सदस्यों से मुलाकात की। इसके बाद राजेंद्र प्रसाद, पंडित नेहरू और राजकुमारी अमृत कौर से भी बातचीत हुई। भारत को आजादी मिल चुकी थी, इसलिए गांधीजी चाहते थे कि लोग रचनात्मक कार्यों पर ध्यान दें। उनका मानना था कि इनमें ही एक ऐसी सरकार चलाने का आधार और साधन है जो जनता के कल्याण को मार्गदर्शक मानकर चले और सत्ता की बागडोर रचनात्मक कार्यकर्ताओं के हाथों में सौंपे।
विन्सेंट शीन के साथ अपने साक्षात्कार को जारी रखते हुए गांधी ने कहा कि बल प्रयोग के बिना सरकार का कामकाज नहीं चल सकता; उन्होंने अपने इस दृढ़ विश्वास को दोहराया कि जो व्यक्ति हर परिस्थिति में अच्छा बनना और भलाई करना चाहता है, उसे सत्ता नहीं संभालनी चाहिए। क्या तब सारी सरकारें निष्क्रिय हो जाएंगी? शीन जानना चाहते थे। गांधी, जो हमेशा अपने विचारों और कार्यों में व्यावहारिक थे, ने उत्तर दिया, 'नहीं। अहिंसा का मार्ग अपनाने वाला व्यक्ति सरकार में ऐसे लोगों को भेज सकता है जो उसके उद्देश्य और इच्छा का प्रतिनिधित्व करते हों। यदि वह स्वयं वहां जाता है, तो वह स्वयं को सत्ता के भ्रष्ट प्रभाव के अधीन कर लेता है। लेकिन वहां मेरा प्रतिनिधि, एक तरह से, केवल मेरी इच्छा के लिए ही सत्ता का अधिकार रखता है। यदि वह प्रलोभन

में पड़ जाता है, तो उसे वापस बुलाया जा सकता है। लेकिन मैं स्वयं को वापस नहीं बुला सकता! इन सब के लिए मतदाताओं की उच्च स्तर की बुद्धिमत्ता की आवश्यकता है। रचनात्मक कार्य करने वाले संगठन हैं। मैं उनके कार्यकर्ताओं को संसद में नहीं भेजना चाहता। मैं चाहता हूं कि ये कार्यकर्ता बाहर रहें और संसद पर नियंत्रण रखें। रचनात्मक कार्यकर्ता मतदाताओं को शिक्षित और मार्गदर्शन करके ऐसा करेंगे।'
शीन, जिन्होंने भगवद गीता पढ़ी थी, ने पूछा, 'यह पूरी गीता एक न्यायपूर्ण युद्ध के समर्थन में है। द्वितीय विश्व युद्ध एक न्यायपूर्ण युद्ध के रूप में लड़ा गया था। फिर भी, उसके बाद हिंसा और भी अधिक बढ़ गई है। आप क्या सोचते हैं?' गांधी ने उत्तर दिया, 'देखिए भारत में, कश्मीर में क्या हो रहा है। फिर भी, मुझे विश्वास है। यदि मैं लंबे समय तक जीवित रहा, तो मेरे अनुयायी बल प्रयोग की निरर्थकता को समझेंगे और मेरे मार्ग पर चल पड़ेंगे।' उन्होंने समझाया कि यद्यपि गीता को युद्धक्षेत्र के भौतिक परिवेश में प्रस्तुत किया गया है, फिर भी इसके पाठ में न्यायपूर्ण युद्ध का तात्पर्य सही और गलत के बीच निरंतर चलने वाले उस संघर्ष से है जो मनुष्य के हृदय में चलता रहता है। गीता का मूल सिद्धांत न तो हिंसा था और न ही अहिंसा: यह सही, अनासक्त कर्म का समर्थन करता है जिसे सही साधनों से किया जाए और प्रत्येक कर्म के फल को सर्वशक्तिमान ईश्वर की देखरेख में छोड़ दिया जाए।
कर्तव्य की पुकार ने उन्हें आगे बढ़ने की प्रेरणा दी, लेकिन गांधी जी पूर्वधारणाओं से भी परेशान प्रतीत होते थे। एक गुजराती मित्र को लिखे पत्र में गांधी जी ने कहा, 'मैं अभी भी एक अंधकारमय संसार में भटक रहा हूँ। मेरा यहाँ अधिक समय तक रुकने

का इरादा नहीं है। जो भी निर्णय लेना है, वह अगले चार दिनों के भीतर ले लिया जाएगा।'
उस शाम उनकी प्रार्थना सभा में बातचीत का रुख दक्षिण अफ्रीका की ओर मुड़ गया, जहाँ गांधीजी के सामाजिक और राजनीतिक जीवन की शुरुआत कई दशक पहले हुई थी और जहाँ भारतीय आज भी अपने अधिकारों के लिए संघर्ष कर रहे थे। उन्होंने कहा, 'दक्षिण अफ्रीका में हमारे लोग संघर्ष कर रहे हैं। भारत में ऐसा कोई कानून नहीं है जो लोगों को भूमि स्वामित्व या मनचाहे स्थान पर रहने के अधिकार से वंचित करता हो। दक्षिण अफ्रीका में स्थिति अलग है। वहाँ भारतीय अपने अधिकारों की रक्षा और भारत के गौरव की रक्षा के लिए संघर्ष कर रहे हैं। उनका संघर्ष सत्याग्रह का रूप ले चुका है। भारतीय संख्या में कम हैं, लेकिन यदि वे सच्चे सत्याग्रही हैं, तो उनकी विजय निश्चित है। मैं दक्षिण अफ्रीका सरकार से अनुरोध करूँगा कि वह सत्याग्रहियों के प्रति कठोर न हो, जो इतने सम्मान के साथ अपना वैध संघर्ष जारी रखे हुए हैं। सरकार को उनकी शिकायतों को समझना चाहिए और उनके साथ समझौता करना चाहिए।' फ्रंटियर मेल में सवार करकरे एक भीड़भाड़ वाले तृतीय श्रेणी के डिब्बे में बैठे थे। मामूली होटल व्यवसायी और हिंदू महासभा के कार्यकर्ता करकरे एक ऐसे मिशन पर दिल्ली जा रहे थे जो उन्हें बदनामी दिलाएगा। लेकिन, अपने सभी पिछले कार्यों की तरह, करकरे को भी कुछ समय के लिए याद किया जाएगा और फिर अपमान और विस्मृति के जीवन में धकेल दिया जाएगा।
ग्वालियर में, उस सुबह परचुरे के घर पर, उन्होंने अपने बेटे नीलकंठ और अंगरक्षक रूपा को गंगाधर एस. दंडवते को लाने के लिए भेजा, जो बंदूकों की खरीद-बिक्री करने वाले लोगों से परिचित थे। जब दंडवते परचुरे वाडा पहुंचे, तो उन्होंने परचुरे को दो लोगों

से बात करते हुए पाया, जिनका परिचय उन्हें पुणे के नाथूराम गोडसे और नारायण आप्टे के रूप में कराया गया। परचुरे ने दंडवते से अपने मित्र गोडसे के लिए एक रिवॉल्वर लाने को कहा, जिसने बंदूक की कीमत चुकाने की पेशकश की। दंडवते ने परचुरे से अपनी बंदूक देने को कहा, लेकिन परचुरे ने गुस्से में जवाब दिया, 'मैं इतना मूर्ख नहीं हूं कि अपनी बंदूक दे दूं, जिसका आसानी से पता लगाया जा सकता है। आप वही करें जो आपको कहा गया है।' दंडवते ने अपनी पूरी कोशिश करने का वादा किया और चले गए। इसके बाद परचुरे अपने क्लिनिक के लिए निकल गए।
दोपहर करीब 12:30 बजे, हिंदू महासभा के कार्यकर्ता मधुकर के. काले, परचुरे के घर गए। वे जानना चाहते थे कि महाराजा द्वारा कांग्रेस को सरकार में आमंत्रित करने और हिंदू महासभा के वैध दावे को नजरअंदाज करने के फैसले के खिलाफ महासभा क्या विरोध करने की योजना बना रही है। उन्होंने परचुरे को दो अजनबियों और दंडवते के साथ बातचीत करते हुए पाया। दोनों अजनबियों के पास देसी रिवाल्वर थीं। नाथूराम और आप्टे बंदूक चलाना नहीं जानते थे। दंडवते ने प्रदर्शन करने का प्रस्ताव रखा और वे पिछवाड़े में चले गए। वहां दंडवते ने एक पेड़ पर निशाना साधा और गोली चलाई। लेकिन जब नाथूराम ने कोशिश की, तो वे ट्रिगर दबाने में असमर्थ रहे। नाथूराम ने दंडवते से बेहतर बंदूक लाने का अनुरोध किया। उन्होंने कहा कि उन्हें जल्दी है क्योंकि उन्हें दोपहर 3 बजे दिल्ली जाने वाली ट्रेन पकड़नी है। दंडवते ने कहा कि वे शाम तक ही बंदूक का इंतजाम कर सकते हैं और वे दोनों रात की ट्रेन पकड़ सकते हैं। नाथूराम मान गए।

दंडवते के जाने के बाद, परचुरे और उनके मेहमान अपने घर की पहली मंजिल पर बने अतिथि कक्षों में चले गए। काले ने उस सुबह हुई पूरी बातचीत और बंदूकों से जुड़े मुकदमे को देखा।
दंडवते जगदीश प्रसाद गोयल के पास गए, जो एक बंदूक विक्रेता थे। गोयल ने उन्हें हाल ही में खरीदी गई एक चमचमाती 9 मिमी बेरेटा सेमी-ऑटोमैटिक पिस्टल दिखाई। उन्होंने बंदूक और सात अतिरिक्त गोलियों के लिए 500 रुपये मांगे; मैगज़ीन में पहले से ही नौ गोलियां थीं। दंडवते ने कहा कि वे अपने ग्राहकों द्वारा हथियार को मंजूरी देने के बाद ही उन्हें नकद पैसे देंगे।
नाथुराम और आप्टे बंदूक देखकर बहुत खुश हुए। हालाँकि उनके पास पर्याप्त नकदी थी और उन्हें बंदूक की सख्त ज़रूरत थी, फिर भी उन्होंने कीमत को लेकर मोलभाव किया। उन्होंने बेरेटा के बदले 300 रुपये नकद और नाथुराम के पास मौजूद देसी रिवॉल्वर देने की पेशकश की। गोयल क्रोधित हो गया और उसने पूरी रकम नकद या अपनी बंदूक वापस माँगी। नाथुराम ने परचुरे को शेष राशि की गारंटी देने के लिए मना लिया और 300 रुपये अग्रिम भुगतान करके बंदूक अपने पास रख ली। परचुरे के साथ भोजन करने के बाद वे रात 10:30 बजे बॉम्बे-अमृतसर एक्सप्रेस पकड़ने के लिए स्टेशन के लिए रवाना हुए। उस रात ट्रेन तीन घंटे देरी से चली।
हथियारबंद हत्यारे अपने रास्ते पर थे।
करकरे देर शाम को ओल्ड दिल्ली स्टेशन पहुंचे। इस बार उन्होंने होटल नहीं ढूंढा, बल्कि सैकड़ों शरणार्थियों के बीच प्लेटफार्म पर ही अपना बिस्तर बिछाया और सो गए।
गुरुवार, 29 जनवरी 1948
बिरला हाउस में गांधी जी सुबह 3 बजे के कुछ ही देर बाद उठ गए। उन्होंने सर्द और अंधेरे घंटों में स्नान और प्रार्थना पूरी

की। बाहर कड़ाके की ठंड पड़ रही थी। उन्होंने चरखे पर सूत कातना और पत्र लिखवाना शुरू किया।
अपनी बेटी को खो चुके मित्र शंकरन को उन्होंने लिखा: 'मैं क्या सांत्वना दे सकता हूँ? मृत्यु एक सच्ची मित्र है। दुख का कारण केवल हमारी अज्ञानता है। सुलोचना की आत्मा कल भी थी, आज भी है और कल भी रहेगी। शरीर का तो नाश होना तय है। सुलोचना का शरीर अपने दोषों के साथ चला गया है, केवल अच्छाई ही पीछे छोड़ गया है। हमें इसे या उसे नहीं भूलना चाहिए। अब अपने कर्तव्य का निर्वाह करते हुए और भी अधिक सच्चे रहें।'
उस दोपहर गुजरात के भारत-पाकिस्तान सीमा के पास स्थित बन्नू कस्बे से कुछ शरणार्थी गांधी जी से मिलने आए। वे गुजरात ट्रेन हत्याकांड के पीड़ित थे और गांधी जी से मिलकर अपना गुस्सा जाहिर करने आए थे। उनमें से एक ने कहा, 'आपने बहुत नुकसान पहुंचाया है। आपने हमें पूरी तरह बर्बाद कर दिया है। अब आपको हमें अकेला छोड़ देना चाहिए और हिमालय में जाकर आराम करना चाहिए।'
गांधी ने उत्तर दिया, 'मैं किसी के कहने पर सेवानिवृत्त नहीं हो सकता। मैंने स्वयं को पूरी तरह से ईश्वर के अधीन कर दिया है।' उस व्यक्ति ने दृढ़ता से कहा, 'यह ईश्वर ही है जो हमारे माध्यम से आपसे बात कर रहा है। हम दुःख से व्याकुल हैं।'
गांधी ने धैर्यपूर्वक उत्तर दिया: 'मेरा दुख तुम्हारे दुख से कम नहीं है,' और इस प्रकार वे शोकग्रस्त शरणार्थियों को शांत करने में सफल रहे।
उस शाम, प्रार्थना सभा में बोलते हुए, गांधी ने घटना का वर्णन किया और कहा, 'मैं आपसे दूर भागकर पहाड़ों की शांति का आनंद नहीं

ले सकता। लेकिन अगर आप सभी हिमालय जाते हैं, तो मैं आपके विनम्र सेवक के रूप में आपका अनुसरण कर सकता हूं।'
दिन भर की भागदौड़ के बाद गांधी जी थक चुके थे। उन्होंने आभा से कहा, 'मेरा सिर चकरा रहा है। फिर भी मुझे इसे पूरा करना ही होगा।' उन्होंने कांग्रेस के संविधान के मसौदे की ओर इशारा करते हुए कहा, जिसे उन्होंने केंद्रीय विश्व परिषद के लिए तैयार करने का जिम्मा लिया था, और आगे कहा, 'मुझे डर है कि आज मुझे देर रात तक काम करना पड़ेगा।'
रात 9:15 बजे, वह आखिरकार सोने के लिए उठे। उनकी आदत थी कि वे आसपास बैठे लोगों से अनौपचारिक और अक्सर हल्के-फुल्के अंदाज में बातचीत करते थे। उस दिन उन्होंने कहा, 'मैं लड़कियों को अपना सहारा बनने देता हूँ, लेकिन असल में मैंने खुद को किसी पर निर्भर न रहने की आदत डाल ली है। लड़कियां मेरे पास अपने पिता की तरह आती हैं। व्यक्तिगत रूप से, मेरे लिए इसका कोई महत्व नहीं है।'
राजनीतिक परिदृश्य पर टिप्पणी करते हुए उन्होंने आश्चर्य व्यक्त किया कि कुछ कांग्रेसी नेता, जिन्होंने देश की स्वतंत्रता के लिए परिश्रम और बलिदान दिया और जिन पर अब स्वतंत्रता का भार है, वे पद और सत्ता के लालच में क्यों बह रहे हैं। 'यह हमें कहाँ ले जाएगा? यह कब तक चलेगा? क्या हम दुनिया में अपनी प्रतिष्ठा बनाए रख पाएंगे? मैं कहाँ खड़ा हूँ? अशांति के बीच अविचलित शांति और स्थिरता प्राप्त करने के लिए मुझे क्या करना चाहिए?' फिर असीम उदासी भरे स्वर में उन्होंने इलाहाबाद के प्रसिद्ध उर्दू कवि नज़ीर की प्रसिद्ध कविता दोहराई:
वसंत ऋतु की भव्यता क्षणभंगुर होती है।

दुनिया के बगीचे में।
जब तक यह साहसिक प्रदर्शन चल रहा है, इसे जरूर देखें।
पिछले कुछ दिनों से उन्हें जो असहनीय खांसी सता रही थी, वह फिर से शुरू हो गई। उन्हें खांसी कम करने के लिए पेनिसिलिन की गोलियां चूसने की सलाह दी गई थी, लेकिन उन्होंने अंतिम बार दोहराया कि वे केवल भगवान राम के नाम की शक्ति से ही ठीक होना चाहते हैं। मनु से उन्होंने कहा, 'यदि मैं किसी लंबी बीमारी से मर जाऊं, यहां तक कि एक फोड़े या फुंसी से भी, तो यह आपका कर्तव्य होगा कि आप दुनिया को बताएं, भले ही इससे लोग आपसे नाराज हो जाएं, कि मैं वह ईश्वर का बंदा नहीं था जैसा मैंने दावा किया था। यदि आप ऐसा करेंगे, तो मेरी आत्मा को शांति मिलेगी। यह भी लिख लीजिए कि यदि कोई मुझे गोली मारकर मेरी जान लेने की कोशिश करे— जैसा कि किसी ने कुछ दिन पहले बम से करने की कोशिश की थी—तो मैं बिना कराह के उसकी गोली का सामना करूं, और भगवान का नाम लेते हुए अंतिम सांस लूं, तभी मेरा दावा सही साबित होगा।'
ओल्ड दिल्ली रेलवे स्टेशन पर, करकरे उठे और सार्वजनिक शौचालयों में से एक में गए और फिर एक चाय की दुकान पर चाय और बिस्कुट खाए। वे स्टेशन के सामने सड़क के पार क्वीन गार्डन में स्थित पानी के फव्वारे के पास अपनी निगरानी शुरू करने के लिए जल्दी में थे। करकरे जल्दी से अपनी जगह पर बैठ गए। पार्क में बेघर शरणार्थी जमा हो गए थे। थोड़ी देर बाद उन्हें लगा कि वे बहुत ज्यादा ध्यान खींच रहे हैं और इसलिए वे बगीचे के चारों ओर घूमने लगे। वे चाय की दुकान लगाए एक व्यक्ति से बातचीत करने के लिए बैठ गए। करकरे को पता चला कि वह एक शरणार्थी था जिसने दंगों के दौरान अपना घर और परिवार खो दिया था और एक छोटे से बक्से में जितना सामान आ सकता था, उससे भी कम सामान लेकर दिल्ली भागने में

कामयाब रहा था। कुछ देर घूमने और बातचीत करने के बाद करकरे चिंतित होने लगे।
करकरे जिन लोगों का इंतज़ार कर रहे थे, वे ग्वालियर से दिल्ली की ओर जा रहे थे। रास्ते में उनकी ट्रेन और लेट हो गई, और सुबह तड़के दिल्ली पहुँचने के बजाय वे दोपहर में पहुँचे। नाथुराम आराम करने के लिए कमरा लेने बुकिंग दफ्तर गए। बुकिंग क्लर्क सुंदरीलाल ने उन्हें बाद में आने को कहा। वे दोपहर करीब 1 बजे वापस गए और पाया कि एक कमरा खाली था। सुंदरीलाल ने दिल्ली मुख्य स्टेशन पर कमरा नंबर 6 नाथुराम गोडसे को आवंटित किया, जिन्होंने अपना नाम 'एन. विनायकराव' बताया। इसके बाद दोनों ने रेलवे रेस्तरां में गर्म खाना खाया और थोड़ी देर आराम किया। हैरानी की बात यह थी कि उन्होंने करकरे को ढूंढने की ज़हमत नहीं उठाई। उसी शाम करीब 6 बजे नाथुराम ने कमरे के कर्मचारी हरि किशन को बुलाया और उन्हें कुछ कपड़े धोने के लिए दिए। हरि किशन ने जूते पॉलिश करने वाले लड़के जानू को कपड़े धोने और कमरा नंबर 6 में पहुँचाने को कहा।
करकरे शाम तक जागता रहा। उसने अनगिनत कप चाय पीकर और कई बीड़ी फूंककर अपना समय बिताया था। आखिरकार उसने अपने दोनों साथियों को रेलवे स्टेशन से निकलते और फव्वारे की ओर जाते देखा।
फिर वे तीनों विश्राम कक्ष में वापस चले गए। बंद दरवाजों के पीछे, नथुराम ने अपने संदूक में से एक चमकती हुई नीली-काली पिस्तौल निकाली। करकरे ने ऐसी बंदूक पहले कभी नहीं देखी थी। 'गोली-बारूद का क्या होता है, गोलियां कहां जाती हैं?' उसने पूछा।
नथुराम ने एक रूमाल में बंधे एक छोटे से पैकेट को ऊपर उठाया, जिसमें सात गोलियां थीं।

इसके बाद तीनों चांदनी चौक की ओर पैदल चल पड़े। अचानक ही वे सड़क किनारे एक फोटोग्राफर की दुकान पर रुक गए, जहाँ नाथूराम ने अपनी तस्वीर खिंचवाई। उन्होंने तीन प्रतियाँ मंगवाईं और फोटोग्राफर ने उन्हें एक घंटे के भीतर तैयार करने का वादा किया। रात के खाने के बाद आप्टे और करकरे फिल्म देखने चले गए, जबकि नाथूराम ने जल्दी सोने की इच्छा जताई। वापस आते समय उन्होंने तस्वीरें ले लीं।
फिल्म खत्म होने के बाद आप्टे ने दिल्ली के रेड लाइट एरिया घूमने जाने का बहाना बनाया। यह आशिक मिजाज दिल्ली की मशहूर नाचने वाली लड़कियों के साथ मौज-मस्ती करने के लिए बेताब था। करकरे आधी रात के काफी बाद स्टेशन पहुंचे। नाथूराम को परेशान न करने की इच्छा से, करकरे प्लेटफार्म पर उसी तरह लेट गए जैसे उन्होंने पिछली रात किया था।
शुक्रवार, 30 जनवरी 1948
बिरला हाउस में दिन की शुरुआत एक सामान्य सर्दी के दिन की तरह हुई। घरवाले अपने रोज़मर्रा के कामों में लगे हुए थे। भारत के प्रमुख औद्योगिक परिवारों में से एक, बिरला परिवार, घर के एक बड़े हिस्से में रहता था। पारंपरिक मारवाड़ी परिवार चरखे की आवाज़ से जाग उठा। पिछले कुछ महीनों में, सेठ घनश्यामदास बिरला और उनका परिवार घर में होने वाली इस और कई अन्य घटनाओं का आदी हो चुका था।
सभी की निगाहों के केंद्र महात्मा गांधी के लिए, यह दिन उनके 78 वर्ष, 3 महीने और 28 दिन के जीवन के अन्य दिनों की तरह ही था। बा की मृत्यु के बाद से ही उनकी व्यक्तिगत जरूरतों का ख्याल उनकी पोती आभा और पोती मनु रखती थीं। मनु ने सुबह की सैर पर उनके साथ न जाने की अनुमति मांगी क्योंकि वह उनकी खांसी दूर करने के लिए

ली जाने वाली गुड़ और लौंग पाउडर की गोलियों के लिए कुछ लौंग पीसना चाहती थीं। गांधीजी, जो भविष्य की तैयारी और व्यवस्था करने के अपने वर्तमान कर्तव्य को न मानने को नापसंद करते थे, ने मनु को समझाया, 'कौन जानता है कि रात होने से पहले क्या होगा या मैं जीवित भी रहूंगा या नहीं? अगर रात तक मैं जीवित रहा तो तुम आसानी से कुछ तैयार कर सकती हो।'
गांधी जी को अभी भी कांग्रेस पार्टी के लिए नए संविधान का मसौदा अंतिम रूप देना था। उन्हें भारत के लिए अपने सपनों को साकार करना था, अपने प्रिय देश के लिए अपनी अंतिम वसीयत को अंतिम रूप देना था। महादेव देसाई की मृत्यु के बाद से उनके कुशल सचिव रहे प्यारेलाल नैयर को अंतिम मसौदे की जाँच और उसमें सुधार करना था, जिसे गांधी जी अपनी सुबह की सैर के बाद पूरा करते। कांग्रेसियों को पार्टी भंग करके लोक सेवक संघ बनाने का उनका सुझाव पसंद नहीं आने वाला था, जो स्वयंसेवी कार्यकर्ताओं का एक ऐसा संगठन होता जो ग्रामीण विकास और सामाजिक सुधारों का काम करता। पत्रों के बढ़ते ढेर का जवाब देना बाकी था। लाइफ पत्रिका की फोटोग्राफर मार्गरेट बोर्के-व्हाइट उनके साथ एक फोटो फीचर शूट करना चाहती थीं। फ्रांसीसी फोटोग्राफर हेनरी कार्टियर ब्रेसन लगातार अपने कैमरे से उन्हें घेरने की कोशिश कर रहे थे। दोपहर के समय, गांधी जी अपनी आदत के अनुसार, अपने कमरे के बाहर एक पलंग पर झपकी लेने चले गए। मनु ने देखा कि एक युवक गांधी जी और उनके साथियों के कमरों में घूम रहा है। उसने उस पर ज़्यादा ध्यान नहीं दिया, लेकिन उसे लगा कि वह गांधी जी के दर्शन के अलावा किसी और कारण से वहाँ आया है। वह युवक मनु से गांधी जी के बैठने, काम करने, खाने और सोने के समय के बारे में पूछने लगा। अंत में मनु ने बहाना बनाकर वहाँ से जाने का फैसला किया। मनु ने

पता था कि हाल ही में पटेल ने भारतीय सरकार के कामकाज पर गांधी के प्रभाव को लेकर अपनी नाराजगी व्यक्त की थी। लेकिन उन्हें पटेल पर इतना भरोसा था कि वे उनकी बात सुनेंगे, इसलिए उन्होंने उनके लिए दोपहर का समय खाली रखा था।
शाम के 4 बजने वाले थे। पटेल किसी भी क्षण पहुंचने वाले थे। पुरानी दिल्ली रेलवे स्टेशन पर नथुराम सुबह जल्दी उठ गए। जब करकरे कमरे में दाखिल हुए तो उन्होंने देखा कि आप्टे रात भर मौज-मस्ती करने के बाद लौट आए हैं। स्नान करने के बाद तीनों स्टेशन पर ब्रैंडन एंड कंपनी द्वारा संचालित एक मांसाहारी रेस्तरां में गए। वे मांसाहारी रेस्तरां में क्यों गए, यह एक रहस्य है क्योंकि नथुराम और करकरे दोनों ही पक्के शाकाहारी थे। जैसे ही वे बैठे, एक वेटर उनके पास आया और मराठी में बोला, 'नमस्ते साहब, लैंब प्रवास केलय वट ता', यानी 'साहिबों, आप घर से बहुत दूर आ गए हैं'। एक पल के लिए तीनों घबरा गए। नथुराम ने खुद को संभालते हुए जवाब दिया, 'आप भी घर से बहुत दूर हैं। मैंने आपको आखिरी बार पुणे स्टेशन के रेस्तरां में देखा था।' वह वेटर अक्सर नथुराम और आप्टे को खाना परोसता था। पिछली बार जब वे पुणे के रेस्तरां में गए थे, तब आप्टे ने सुझाव दिया था कि उन्हें गांधी को मारने की एक और कोशिश करनी चाहिए; उसी वेटर ने उस दिन भी उन्हें खाना परोसा था। पुणे से हाल ही में दिल्ली स्थानांतरित हुए वेटर को अपने घर के लोगों से मिलकर बहुत खुशी हुई। लेकिन गिरोह के तीनों सदस्यों के लिए उस दिन इतनी आसानी से पहचाने जाना एक अपशगुन था।
उन्होंने मक्खन लगे टोस्ट की तीन प्लेटें, आप्टे और करकरे के लिए चाय और नाथुराम के लिए इंग्लिश कॉफी मंगवाई। जब वे अपने ऑर्डर का इंतज़ार कर रहे थे, नाथुराम ने अपने हाथ जोड़कर कलाई

बात यह थी कि उसे न तो रोका गया और न ही उससे कोई पूछताछ की गई। वह गांधीजी के दल के कमरों में घुस गया, जहाँ उसकी मुलाकात मनु से हुई। फिर उसने गांधीजी को लॉन में चारपाई पर सोते हुए देखा। नाथुराम अपने शिकार के पास पहुँच गया। जिस व्यक्ति को वह जान से मारने के लिए दृढ़ था, उसके इतने करीब आकर वह एक तरह से बेहोश हो गया, जिसे मनु ने जगाकर होश में लाया। वह मुड़ा और बिरला हाउस से तेजी से बाहर निकल गया। उसने एक तांगा लिया और रेलवे स्टेशन पहुँचा, अपने साथियों के लौटने से कुछ मिनट पहले। उसने अपनी इस छोटी सी घटना को उनसे छुपाए रखा।
नथुराम ने बुर्का पहनकर देखा। वह बिल्कुल फिट तो था, लेकिन ढीले-ढाले कपड़ों की सिलवटों में उलझ गया और जेब में रखी रिवाल्वर नहीं मिल रही थी। चलने की कोशिश में वह लगभग लड़खड़ाकर गिर ही गया। यह विचार भी नाकाम रहा। नथुराम ने बुर्का त्याग दिया, और आप्टे ने अपने स्वभाव के विपरीत पैसे की बर्बादी पर नाराज़गी जताई।
शाम के प्रयास के लिए कोई योजना न होने के कारण, वे एक टैक्सी लेकर बिरला मंदिर गए, जो बिरला परिवार द्वारा निर्मित था और हिंदू महासभा भवन के बहुत करीब था। वे मंदिर के पीछे जंगल में गए और लगभग उसी स्थान पर, जहाँ उन्होंने दस दिन पहले अपनी बंदूकों का अभ्यास किया था, एक पेड़ के तने पर निशाना साधा। नाथूराम ने पेड़ से लगभग बीस कदम की दूरी नापी और निशाना साधकर दो गोलियां चलाईं। दोनों ही गोलियां निशाने के ठीक पास पेड़ पर लगीं। करकरे के अनुसार, नाथूराम ने विभिन्न दूरियों से निशानेबाजी का अभ्यास किया था। यह सच नहीं हो सकता था। उन्हें ग्वालियर में केवल सात अतिरिक्त गोलियां दी गई थीं। साथ ही, बार-बार गोलीबारी की आवाज से वन रक्षकों का ध्यान अवश्य

आकर्षित हो जाता। वापस आते समय, नाथूराम ने दूसरों को बताया कि भेष बदलने का विचार काम नहीं कर रहा है। इसके बजाय, वह कुछ ऐसा पहनेगा जो वर्दी जैसा दिखता हो। वापस आते समय उन्होंने बड़ी जेबों और कंधे पर पट्टियाँ वाली एक नीले-भूरे रंग की कमीज खरीदी। उन्होंने एक खाकी टोपी भी खरीदी, जो सेना की वर्दी जैसी दिखती थी।
वे दोपहर 1 बजे तक विश्राम कक्ष में लौट आए। नाथुराम ने कमीज़ पहनकर देखी, जो उसे ठीक से फिट आई। उनके कमरे को खाली करने का समय हो चुका था। उन्होंने सुंदरीलाल से बुकिंग को चौबीस घंटे और बढ़ाने का अनुरोध किया, लेकिन क्लर्क ने कहा कि वह ऐसा केवल स्टेशन अधीक्षक के आदेश पर ही कर सकता है। दोनों के बीच बहस छिड़ गई। क्रोधित सुंदरीलाल ने नाथुराम, जिसे वह 'एन. विनायकरौ' के नाम से जानते थे, पर तुरंत कमरा खाली करने का दबाव डाला। वह तब तक वहीं खड़े रहे जब तक कि तीनों अपना सामान लेकर बाहर नहीं चले गए। फिर सुंदरीलाल ने हरि किशन को कमरा बंद करने का आदेश दिया।
यह घटना सुंदरीलाल के मन में बसी रही। हरि किशन, जन्नू और मांसाहारी रेस्तरां के वेटर ने भी उन्हें ध्यान से देखा था। नाथुराम द्वारा अपने साथियों के लिए झूठी गवाही गढ़ने का अनाड़ी प्रयास उनके अपने ही कृत्यों से विफल हो गया था। 9 जनवरी से ही उन्होंने एक मील चौड़ा सुराग छोड़ दिया था, जो अंततः पुलिस को गिरोह के सभी सदस्यों और उनके साथियों तक ले गया। फिर तीनों तीसरे दर्जे के प्रतीक्षालय में गए, जहाँ सभी यात्रियों को रुकने की अनुमति थी। यह एक खाली गलियारा था जिसमें कुछ बेंच और मेजें थीं और परिवारों और उनके सामान से खचाखच भरा हुआ था। सौभाग्य से उन्हें एक खाली बेंच मिल गई।

नथुराम लेट गया, जबकि बाकी दोनों उसके बगल में ज़मीन पर बैठ गए। आप्टे ने सुझाव दिया कि उन्हें एक बार बिरला हाउस जाकर देखना चाहिए कि वहाँ गश्त कर रहे पुलिसकर्मियों में कोई जाना-पहचाना चेहरा है या नहीं। आप्टे और करकरे ने अकबर रोड और अल्बुकर्क रोड के चौराहे तक एक टैक्सी ली और गेट पर कड़ी नज़र रखते हुए सड़क की पूरी लंबाई पर दो बार चक्कर लगाया। उन्हें राहत मिली कि किसी ने उन्हें पहचाना नहीं।
एडवर्ड रोड ऑफिसर मेस के पास से उन्होंने एक टैक्सी ली और ओल्ड दिल्ली रेलवे स्टेशन की ओर चल पड़े। वे लगभग 3 बजे वहाँ पहुँचे, जहाँ उन्होंने नाथूराम को एक उपन्यास पढ़ते हुए पाया। वे बेमतलब की बातें करने लगे। तीनों एक महत्वपूर्ण मिशन पर निकलने वाले लोगों की भावनाओं से अभिभूत थे। वे जानते थे कि उनके कार्यों से दुनिया का इतिहास बदल जाएगा; वे यह भी जानते थे कि नाथूराम को सज़ा मिलेगी। सवा चार बजे, नाथूराम उठे और बोले, 'अता निगयाला पाहिजे', 'अब जाना होगा'। उन्होंने अपनी जेब थपथपाकर यह सुनिश्चित किया कि बंदूक वहीं है। 'क्या हम भी साथ चलें?' आप्टे ने पूछा। बॉम्बे से इतनी दूर आने के बाद, यह वाकई एक बहुत ही आश्चर्यजनक सवाल था। अगर वे गांधी की हत्या के लिए नाथूराम के साथ जाने वाले नहीं थे, तो वे उनके साथ क्यों आए थे?
'क्यों नहीं?' नथुराम ने उत्तर दिया। 'अत इथ पर्यंत अल्लात तार शेवत पर्यंत रहा', 'जब आप इतनी दूर आ ही गए हैं, तो मेरे साथ क्यों न चलें?' यह कहकर नथुराम चले गए।
आधे घंटे बाद आप्टे और करकरे एक तांगे पर सवार होकर कनॉट प्लेस गए। उन्होंने अपना बिस्तर और सामान प्रतीक्षालय में छोड़ दिया। कुछ कदम चलने के बाद वे दूसरे तांगे पर सवार हुए और बिरला हाउस के गेट से कुछ सौ गज दूर उतर गए। फिर वे भीड़ में मिल गए और

बिरला हाउस में प्रवेश कर गए। प्रार्थना स्थल पर पहुँचकर उन्होंने देखा कि मैदान खचाखच भरा हुआ था। कुछ लोग बैठे थे, कुछ खड़े थे जबकि कई लोग इधर-उधर टहल रहे थे। सबकी निगाहें उस दरवाजे की ओर थीं जिससे गांधी जी हर शाम प्रार्थना सभा में शामिल होने के लिए निकलते थे। शाम के 5 बज रहे थे। गांधी जी देर से आ रहे थे। भीड़ में कानाफूसी हुई; वे अपनी प्रार्थनाओं के लिए कभी देर से नहीं आते थे। क्या कुछ हुआ था? क्या वे आज शाम प्रार्थना में शामिल नहीं होंगे?
आप्टे और करकरे ने नाथूराम को मंच और प्रार्थना स्थल तक जाने वाली सीढ़ियों के बीच के लॉन में प्रतीक्षा करते हुए पाया। गांधी जी इन्हीं सीढ़ियों से ऊपर चढ़ते थे; मंच तक जाने के लिए उन्हें इन्हीं सीढ़ियों से होकर गुजरना पड़ता था। आप्टे और करकरे नाथूराम के दोनों ओर, उनसे कुछ ही कदम पीछे खड़े हो गए। उनमें से किसी ने भी उन्हें पहचानने का कोई संकेत नहीं दिया। अब पांच बजकर पंद्रह मिनट हो चुके थे। अचानक एक हल्की सी आहट सुनाई दी; गांधीजी अपने कमरे से बाहर निकले और धीरे-धीरे प्रार्थना स्थल की ओर बढ़ने लगे।
आप्टे और करकरे से घिरे नाथुराम, जो अब उनके ठीक पीछे थे, एक ऐसी जगह पर चले गए जहाँ से उनके लिए गांधी के रास्ते में सीधे आगे बढ़ना आसान होगा।
गांधी जी सीढ़ियों तक पहुँच चुके थे; भीड़ उनकी ओर उमड़ पड़ी। ऐसा लग रहा था मानो वह उन्हें निगल जाएगी। हत्यारों के लिए यह सौभाग्य की बात थी कि गांधी जी के साथ वह हट्टा-कट्टा सिख नहीं था जो आमतौर पर हमेशा उनसे आगे चलता था और उनके लिए रास्ता बनाता था। भीड़ अनुशासित थी और गांधी जी के लिए आगे बढ़ने का रास्ता बन गया।

गांधी जी ने आभा और मनु के कंधों से अपने हाथ हटा लिए थे और मंच की ओर बढ़ते हुए हाथ जोड़कर भीड़ का अभिवादन कर रहे थे। नाथुराम ने अपनी चाल चली। वह दाहिनी ओर से आगे बढ़ा और सीधे गांधी जी के सामने रास्ते में आ गया। गांधी जी कुछ ही कदम दूर थे जब मनु ने उस युवक को उनके रास्ते में रुकावट डालते देखा। नाथुराम हाथ जोड़कर खड़ा हो गया और बोला, 'नमस्ते, बापू'। मनु ने युवक से हटने का अनुरोध करते हुए कहा, 'भाई, बापू को प्रार्थना के लिए देर हो रही है...' इससे पहले कि वह अपना वाक्य पूरा कर पाती, युवक ने उसे धक्का देकर एक तरफ कर दिया। उसके हाथ में रखा थूकदान और माला नीचे गिर गए; मनु भी ज़मीन पर गिर पड़ी। गिरते ही उसने नाथुराम को पहचान लिया। उसने उसे उसी दोपहर देखा था। अगले ही पल गोडसे ने बंदूक निकाली, महात्मा गांधी पर तानी और एक के बाद एक गोलियां दाग दीं।
तीन गोलियों की आवाज सुनाई दी। मनु ने गांधीजी को 'हे राम' कहते सुना और फिर वह गिर पड़ा।
30 जनवरी 1948 की शाम को पांच बजकर सत्रह मिनट का समय था।
भारत का इतिहास बदल गया था। दुनिया अब पहले जैसी नहीं रहेगी।

— — — — — — — — — —

जमनालाल बजाज, बजाज परिवार के मुखिया, जिन्हें गांधी जी अपना पांचवां पुत्र मानते थे।
कांग्रेस ने बहुत पहले ही 26 जनवरी को स्वतंत्रता दिवस घोषित कर दिया था। बापू इस घोषणा पर अडिग रहे।
हालांकि 15 अगस्त ने वास्तविकता में इसकी जगह ले ली थी, फिर भी इसका महत्व बना हुआ था।

4

जांच में गड़बड़ी करना

'मेरी आस्था मुझे प्रार्थना के समय किसी भी मानवीय सुरक्षा के अधीन रहने की अनुमति नहीं देती, जब मैंने स्वयं को पूरी तरह से ईश्वर की सुरक्षा में रखा हुआ है।'
– MAHATMA GANDHI
21 जनवरी 1948

जो व्यक्ति साधारण मनुष्यों द्वारा संरक्षित होने से इनकार करता है, उसकी रक्षा करना कठिन है। गांधी जी ऐसे ही एक व्यक्ति थे।
20 तारीख को हुए असफल हत्या के प्रयास के बाद, केंद्रीय गृह मंत्री पटेल ने गांधीजी की सुरक्षा के लिए अधिक पुलिसकर्मियों की तैनाती का सुझाव दिया था; सादे कपड़ों में पुलिसकर्मियों की संख्या पाँच से बढ़ाकर पच्चीस कर दी गई थी। हालाँकि, प्रार्थना सभाओं में उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति की तलाशी लेने के उनके सुझाव को गांधीजी ने अस्वीकार कर दिया था। उन्होंने प्रार्थना सभाओं के दौरान पुलिस की उपस्थिति से इनकार कर दिया और उपस्थित होने वाले लोगों की संख्या कम करने पर भी सहमति नहीं जताई। उन्होंने कहा, 'मेरा धर्म मुझे प्रार्थना के समय स्वयं को किसी मानवीय सुरक्षा में रखने की अनुमति नहीं देता, जब मैंने स्वयं को केवल ईश्वर की सुरक्षा में रखा है।'
मदनलाल की गिरफ्तारी के बाद, शुरू में यही माना गया कि उसने अकेले ही यह कदम उठाया था; किसी मानसिक रूप से परेशान शरणार्थी का कृत्य। लेकिन छोटूराम और सुलोचना देवी के बयानों से पुलिस को पता चला कि इस साजिश में एक से अधिक लोग शामिल थे। पूछताछ के

दौरान मदनलाल बार-बार दोहराता रहा, 'वो फिर आएगा'। मदनलाल के साथियों को गिरफ्तार करने के लिए दिल्ली पुलिस पर भारी दबाव पड़ा।
पुलिस महानिरीक्षक और खुफिया ब्यूरो के निदेशक टी.जी. सेन्जेवी को इस मामले की जिम्मेदारी सौंपी गई। जब उन्हें हमले में एक से अधिक व्यक्तियों की संलिप्तता और मदनलाल के एक भयावह बयान के बारे में पता चला, तो उन्होंने अपने सर्वश्रेष्ठ पूछताछकर्ताओं को उससे अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए लगाया। दो-तीन घंटों के भीतर, पुलिस को सहयोगियों की पहचान और साजिश के बारे में सुराग मिल गए। मदनलाल ने औरंगाबाद के 'करकरे सेठ' और हिंदू राष्ट्र और अग्रानी के संपादक और प्रकाशक तथा अन्य विवरणों के बारे में बताया था। कुछ ही घंटों में वह उन्हें मरीना होटल ले गया, जहाँ पुलिस को कुछ सबूत मिले। होटल रजिस्टर में कमरा नंबर 40 में रहने वालों के नाम 'एम. देशपांडे' और 'एस. देशपांडे' दर्ज थे, लेकिन निवासियों द्वारा दिए गए कपड़ों पर 'एन.वी.जी.' के शुरुआती अक्षर लिखे थे। चौबीस घंटों के भीतर दिल्ली पुलिस को मदनलाल का विस्तृत बयान मिल गया। वह हिंदुस्तानी और पंजाबी बोलता था, इसलिए दुभाषियों की आवश्यकता ही नहीं पड़ी। वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों को यह एहसास हुआ कि गिरोह की उत्पत्ति बंबई प्रांत के मराठी भाषी क्षेत्रों में हुई थी और जांच बंबई पुलिस के सहयोग से ही की जानी थी।
21 तारीख की शाम को, गांधी जी पर हुए बम हमले और पंजाबी शरणार्थी मदनलाल पाहवा की गिरफ्तारी की खबरें पढ़ने के बाद, बंबई के डॉ. जैन को एहसास हुआ कि मदनलाल ने कुछ दिन पहले गांधी जी को 'पराजित' करने वाले गिरोह में अपनी संलिप्तता के बारे में जो बताया था, वह सच था। इसके बाद वे गृह मंत्री मोरारजी देसाई से

मिलने गए, उन्हें सारी जानकारी दी और अपनी पहचान गुप्त रखने का अनुरोध किया। देसाई का व्यवहार बेहद आश्चर्यजनक था। वे एक कट्टर कांग्रेसी के रूप में जाने जाते थे और एक बेहद सतर्क और अनुशासित व्यक्ति के रूप में प्रसिद्ध थे। फिर भी, उन्होंने किसी वरिष्ठ पुलिस अधिकारी को अपने कक्ष में नहीं बुलाया और न ही जैन की जानकारी का कोई नोट बनाया। देसाई जैन की गिरफ्तारी और पूछताछ का आदेश भी दे सकते थे। लेकिन उन्होंने ऐसा कुछ नहीं किया।
जैन के जाने के बाद उन्होंने डिप्टी कमिश्नर नागरवाला को फोन किया। जब नागरवाला ने तुरंत आने में असमर्थता जताई, तो देसाई ने उनसे उसी शाम बॉम्बे सेंट्रल रेलवे स्टेशन पर मिलने का अनुरोध किया, मानो कोई अर्जेंसी न हो। अहमदाबाद जाने वाली ट्रेन में चढ़ने से पहले, देसाई ने उनसे मामले की जांच करने और 'करकरे सेठ' नाम के व्यक्ति को गिरफ्तार करने को कहा। देसाई ने मदनलाल के सावरकर से संबंध का भी जिक्र किया और उन्हें सावरकर के घर पर नजर रखने को कहा। देसाई ने आगे कहा कि वे अहमदाबाद में पटेल से मिल रहे हैं और उनके पास जो भी जानकारी है, वह मंत्री को दे देंगे।
नागरवाला ने देसाई के सूचना स्रोत के बारे में पूछताछ करने की जहमत नहीं उठाई। अपने पास मौजूद जानकारी के आधार पर नागरवाला ने फैसला किया कि उनके लिए सबसे अच्छा उपाय सावरकर के घर की चौबीसों घंटे निगरानी करना है। उन्होंने अपने अधिकारियों को आरएसएस और हिंदू महासभा के कट्टरपंथियों द्वारा रची गई किसी भी साजिश, विशेष रूप से शरणार्थियों की संलिप्तता के बारे में जानकारी जुटाने का आदेश दिया। जैसा कि हम पहले से ही जानते हैं, दिल्ली से दो पुलिसकर्मी, जसवंत सिंह और इंस्पेक्टर बालकिशन,

मदनलाल के बयान की एक प्रति के साथ हवाई जहाज से बॉम्बे भेजे गए। उन्हें पुणे जाकर पुलिस उप-सहायक महानिरीक्षक रावसाहेब गुरतू से मिलने और उन्हें मदनलाल के बयान के बारे में जानकारी देने के लिए भी कहा गया।
औपनिवेशिक काल से ही भारत में प्रेस अधिनियम के तहत समाचार पत्रों और पत्रिकाओं का पंजीकरण अनिवार्य है। समाचार पत्र रजिस्ट्रार विभाग में एक बार जाने से ही अग्रनी और हिंदू राष्ट्र के संपादक और प्रकाशक की पहचान उजागर हो जाती। न तो सेन्जेवी और न ही नागरवाला ने ऐसा किया। अपने उग्र संपादकीय सामग्री के कारण इन दोनों पत्रिकाओं पर कई बार जुर्माना लगाया गया था। 1946 से अग्रनी बॉम्बे प्रांतीय सरकार की निगरानी में थी। इसलिए, पुणे के स्थानीय खुफिया विभाग ने इसके संपादकीय रिकॉर्ड, कार्यालय विवरण, संपादक और प्रकाशक के नाम और पते सहित एक विस्तृत रिपोर्ट तैयार की। इसकी एक प्रति प्रांतीय गृह विभाग को, दूसरी केंद्रीय गृह विभाग को और तीसरी खुफिया ब्यूरो को भेजी गई, जिसका नेतृत्व बम हमले मामले में जांच के प्रमुख सेन्जेवी कर रहे थे। यह बात गांधी की हत्या के बीस साल बाद तब सामने आई, जब कपूर आयोग की सुनवाई चल रही थी और आयोग के अधिकारियों ने इस दस्तावेज़ को खोजा।
20 तारीख के बाद के दिनों में गिरोह के सरगना बॉम्बे में बेरोकटोक घूमते रहे, अपने नियमित ठिकानों पर जाते रहे और धन व हथियार जुटाने की कोशिश करते रहे। फिर भी पुलिस अपने मुखबिरों के नेटवर्क को सक्रिय नहीं कर पाई और हत्यारों के बारे में कोई जानकारी हासिल नहीं कर सकी। नागरवाला ने साजिश के बारे में अपना एक सिद्धांत विकसित किया था। उनका मानना था कि बीस से पच्चीस लोगों का एक मुख्य समूह गांधी जी पर हमला करने और उनका

अपहरण करने की सक्रिय रूप से साजिश रच रहा था। उनका मानना था कि इस मुख्य समूह के प्रत्येक सदस्य के लिए बीस लोगों की एक टीम थी, जिनके पास हथियारों और विस्फोटकों का विशाल भंडार था। नागरवाला को पूरा भरोसा था कि समय मिलने पर वह पूरी साजिश का पर्दाफाश कर देंगे और इस कुख्यात संगठन के सभी सदस्यों को गिरफ्तार कर लेंगे। नागरवाला ने परेल स्थित हिंदू महासभा कार्यालय पर चौबीसों घंटे निगरानी का आदेश दिया था, लेकिन आरोपियों ने एक बार फिर उन्हें चकमा दे दिया—उन्होंने दादर स्थित कार्यालय को अपने मिलने के ठिकाने के रूप में इस्तेमाल किया।
सबसे चौंकाने वाली बात यह थी कि करकरे की संलिप्तता के बारे में मोरारजी देसाई और दिल्ली पुलिस, दो अलग-अलग स्रोतों से जानकारी मिलने के बावजूद नागरवाला ने इसे कोई महत्व नहीं दिया। उन्होंने इसे असली साजिश से ध्यान भटकाने की एक सोची-समझी साजिश मानकर खारिज कर दिया। करकरे के ठिकाने के बारे में जानकारी लेने के लिए अहमदनगर पुलिस से संपर्क करने के बजाय, नागरवाला ने अपने भाई से संपर्क किया, जो मानद मजिस्ट्रेट थे। अगले दिन नागरवाला के भाई ने उन्हें बताया कि करकरे अहमदनगर में नहीं हैं।
दिल्ली पुलिस के अधिकारियों को उनका आदेश था कि वे बॉम्बे में अपनी उपस्थिति का प्रचार न करें। उन्होंने उन्हें वर्दी न पहनने का आदेश दिया और होटल से चेक आउट करने को कहा। अधिकारियों का दावा है कि बॉम्बे में अपने दो दिन के प्रवास के दौरान नागरवाला से उनकी तीन से अधिक मुलाकातें हुईं, लेकिन हर मुलाकात में उनका व्यवहार बेहद असभ्य और कठोर था, और वे उन पर दबाव डालते रहे कि वे बॉम्बे पुलिस को अकेला छोड़ दें और अपने

मुख्यालय लौट जाएं। हैरानी की बात यह है कि दोनों अधिकारियों ने अपनी दुर्दशा की सूचना देने या नए आदेश प्राप्त करने के लिए दिल्ली में अपने वरिष्ठों से संपर्क करने का प्रयास नहीं किया। 23 जनवरी की दोपहर को अधिकारियों की नागरवाला से फिर मुलाकात हुई, जिन्होंने उन्हें तुरंत दिल्ली के लिए रवाना होने को कहा। अधिकारियों को पुणे जाकर मदनलाल के इकबालिया बयान की एक प्रति पुलिस को सौंपने का आदेश दिया गया था। यदि पुणे पुलिस को अग्रनी और हिंदू राष्ट्र के बारे में जानकारी होती, तो वे तुरंत नाथूराम गोडसे और नारायण आप्टे की पहचान उजागर कर देते। लेकिन बंबई में मिले स्वागत के बाद जसवंत सिंह और बालकिशन पुणे नहीं जाना चाहते थे और वे दिल्ली लौट आए।
गांधी जी पर हमले और मदनलाल की गिरफ्तारी को तीन दिन बीत चुके थे, लेकिन पुलिस ने कोई प्रगति नहीं की थी। दिल्ली और बॉम्बे पुलिस विभागों के बीच समन्वय की पूर्ण कमी वाकई चौंकाने वाली थी। नागरवाला को लावारिस कपड़ों की बरामदगी के बारे में सूचित नहीं किया गया था, जिन पर एन.वी.जी. के शुरुआती अक्षर लिखे थे, और सेन्जेवी को जैन के खुलासों के बारे में जानकारी नहीं दी गई थी। मदनलाल के इकबालिया बयान से मिलान करने पर यह जानकारी बेहद महत्वपूर्ण साबित हो सकती थी।
जसवंत सिंह और बालकिशन 24 तारीख की दोपहर दिल्ली लौट आए और तुरंत अपने मुख्यालय पहुंचे, जहां उन्होंने बॉम्बे पुलिस द्वारा उनके साथ किए गए दुर्व्यवहार के बारे में एक बेहद आलोचनात्मक रिपोर्ट दर्ज कराई। उन्होंने दुख व्यक्त करते हुए कहा, 'बॉम्बे में रहने के दौरान हमें लगभग पूरी तरह से नजरबंद रखा गया था।' सेन्जेवी ने अगले दिन उनकी रिपोर्ट पढ़ी। उन्होंने नागरवाला का सामना नहीं किया, क्योंकि उन्होंने यह

निर्णय लिया कि जांच के इस चरण में उन्हें नाराज करना उचित नहीं होगा। सेन्जेवी का यह मानना सही था कि साजिशकर्ता बॉम्बे प्रांत के थे। पुणे सीआईडी के उप महानिरीक्षक यू.एच. राणा किसी काम से दिल्ली में थे। जब राणा अपने कार्यालय आए, तो सेन्जेवी ने उन्हें साजिश और मदनलाल से अब तक प्राप्त जानकारी के बारे में बताया। सेन्जेवी ने उन्हें मदनलाल के इकबालिया बयान की एक प्रति दी, इस बार उसके अंग्रेजी अनुवाद के साथ, और उनसे इसे व्यक्तिगत रूप से बॉम्बे ले जाने के लिए कहा। दोपहर में बंबई के लिए एक फ्लाइट थी जिसे राणा को लेना चाहिए था, लेकिन पुलिस की पहले से ही की गई गलतियों को और बढ़ाने के लिए, उन्होंने इलाहाबाद होते हुए ट्रेन से बंबई जाने का फैसला किया, जिससे उनकी यात्रा में सोलह घंटे और जुड़ गए। इसके अलावा, इलाहाबाद पहुँचकर उन्होंने कुछ धार्मिक अनुष्ठान करने के लिए विश्राम करने का निर्णय लिया। ऐसा लग रहा था मानो वे किसी निजी तीर्थयात्रा पर हों, न कि उन महत्वपूर्ण दस्तावेजों के साथ जल्दबाजी में हों, जो गांधी जी की जान बचा सकते थे। अंततः वे 27 तारीख की देर शाम बंबई पहुँचे।
उस शाम नागरवाला और राणा ने नागरवाला के आवास से सेन्जेवी से बात की। नागरवाला ने सेन्जेवी को बताया कि वे इकबालिया बयान पर कोई कार्रवाई नहीं करेंगे क्योंकि वे असली साजिश का पर्दाफाश करने के बेहद करीब थे और उन्होंने विस्तृत रिपोर्ट भेजने का वादा किया। सेन्जेवी ने अपने कनिष्ठ नागरवाला को बिना पुष्ट सबूतों के जांच करने और तीन चश्मदीदों के बयानों से समर्थित इकबालिया बयान को नजरअंदाज करने के लिए फटकार नहीं लगाई। हैरानी की बात यह है कि वे नागरवाला की रिपोर्ट का इंतजार करने के लिए सहमत हो गए। वादा की गई रिपोर्ट 31 जनवरी 1948 की सुबह

सेन्जेवी के डेस्क पर थी, गांधी की हत्या के बारह घंटे से भी अधिक समय बाद।
29 तारीख को राणा ने मदनलाल द्वारा रावसाहेब गुरतू को दिए गए सुरागों के बारे में बताया। गुरतू ने तुरंत नाथूराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे के नाम याद कर लिए, जो अग्रानी और हिंदू राष्ट्र के संपादक और मालिक थे, और बैज के नाम शास्त्र भंडार के मालिक के रूप में बताए। गुरतू ने आप्टे और करकरे की तस्वीरें भी राणा को दीं। हालांकि, राणा ने यह जानकारी नागरवाला या सेन्जेवी को नहीं दी। उन्होंने कपूर आयोग को बताया कि उन्हें टेलीफोन प्रणाली पर भरोसा नहीं था क्योंकि ऑपरेटरों की बातचीत सुनने की आदत थी।
बाद में जब राणा से बॉम्बे तक की धीमी यात्रा के बारे में पूछा गया, तो उन्होंने कहा कि सेन्जेवी ने उन्हें गुप्त रूप से यात्रा करने के लिए कहा था, इसलिए उन्होंने इलाहाबाद होते हुए जाने का फैसला किया। उनके इस तर्कहीन स्पष्टीकरण को मान लिया गया। यह भी एक रहस्य है कि सेन्जेवी ने सीआईडी के प्रमुख राणा को संदेशवाहक की तरह काम करने के लिए क्यों कहा और इकबालिया बयान के आधार पर स्वतंत्र जांच क्यों नहीं करवाई। नागरवाला ने कभी भी इस बात का कारण नहीं बताया कि उनका यह दृढ़ विश्वास क्यों था कि असली साजिश अपहरण की थी, न कि हत्या की। उनसे कभी भी इस बारे में स्पष्टीकरण नहीं मांगा गया। हैरानी की बात यह है कि गांधी की गोली लगने के बाद पटेल ने उन्हें हत्या की जांच का समग्र प्रभारी नियुक्त कर दिया; जिस व्यक्ति ने 20 से 30 जनवरी के बीच जांच को पूरी तरह से गड़बड़ा दिया था, उसे गांधी हत्याकांड में जांच और आरोपियों की गिरफ्तारी का जिम्मा सौंपकर पुरस्कृत किया गया।

पुलिस की ओर से एक और अस्पष्ट चूक मरीना होटल में मिली प्रेस विज्ञप्ति को लेकर थी। इससे यह साबित हुआ कि होटल में रहने वालों का हिंदू महासभा से संबंध था। पदाधिकारियों से थोड़ी सी पूछताछ करने पर आरोपियों की पहचान का पता चल जाता। अगर दिल्ली पुलिस ने आशुतोष लाहिड़ी से बात की होती, तो उन्हें नाथूराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे और विष्णु आर. करकरे की पहचान पता चल जाती। कपूर आयोग को सौंपे गए हलफनामे में लाहिड़ी ने शिकायत की कि पुलिस ने 20 से 30 तारीख के बीच उनसे पूछताछ करने की जहमत ही नहीं उठाई।
गांधी हत्याकांड में 30 जनवरी के बाद आरोपियों की गिरफ्तारी और सभी गवाहों की पहचान में आई तेजी से यह स्पष्ट है कि पुलिस को गिरोह के सदस्यों और उनके समर्थकों की पहचान के बारे में काफी जानकारी मिली होगी। हत्या के पंद्रह दिनों के भीतर पूरा गिरोह सलाखों के पीछे था। उनके प्रायोजकों और आपूर्तिकर्ताओं की पहचान भी स्थापित हो गई थी और उनमें से कई को हिरासत में लेकर पूछताछ की गई थी। यह संभावना नहीं है कि नाथूराम ने मदनलाल की तरह स्वेच्छा से पुलिस को जानकारी दी होगी। पुलिस ने उन पर तृतीय-श्रेणी यातना के तरीके नहीं अपनाए। नाथूराम ने अपने अधिकारों के हर काल्पनिक और वास्तविक उल्लंघन या दुर्व्यवहार की शिकायत अदालत में की, लेकिन उन्होंने कभी भी पुलिस पर उत्पीड़न या यातना का आरोप नहीं लगाया।
पुलिस की ओर से एक और बड़ी चूक हुई। बॉम्बे प्रांत, विशेषकर पुणे और अहमदनगर से, किसी भी पुलिसकर्मी को दिल्ली नहीं बुलाया गया ताकि वे जांच में मदद कर सकें और बिड़ला हाउस में निगरानी रख सकें, यह सुनिश्चित करने के लिए कि उनके गृह प्रांत के कुख्यात उपद्रवी गांधी जी तक न पहुंचें। आप्टे और करकरे को इस

बात का डर था और वे 30 तारीख की दोपहर को बिड़ला हाउस गए थे यह देखने के लिए कि क्या उनके प्रांत का कोई पुलिस अधिकारी वहां मौजूद है। हत्यारों ने इस संभावना के बारे में सोचा था, लेकिन पुलिस ने नहीं। बॉम्बे नगर और प्रांतीय पुलिस ने दावा किया कि ऐसी मदद मांगना दिल्ली पुलिस का काम है; पुलिस सेवा नियमों के तहत वे अपने कर्मियों को किसी अन्य विभाग पर थोप नहीं सकते थे। फिर भी, 1 फरवरी 1948 को, पुणे से चार कांस्टेबलों को हवाई मार्ग से दिल्ली भेजा गया ताकि आप्टे और करकरे की तलाश की जा सके और यह सुनिश्चित किया जा सके कि वे आगे कोई गड़बड़ी न करें। यह कभी पता नहीं चल पाया कि यह दिल्ली पुलिस के अनुरोध पर किया गया था या पुणे पुलिस की पहल पर।
नागरवाला ने एकमात्र बुद्धिमत्तापूर्ण पुलिस कार्रवाई करते हुए 24 जनवरी को बैज की गिरफ्तारी का आदेश दिया था। हालांकि उनके पास गिरफ्तारी का आदेश देने के लिए कोई ठोस सबूत नहीं थे; मदनलाल के पास से एक ग्रेनेड बरामद हुआ था और उसने कबूल किया था कि हत्या की योजना पुणे में बनाई गई थी, और बैज का पुणे में हथियार डीलर के रूप में लंबा आपराधिक रिकॉर्ड था। हालांकि, यह आदेश भी विभिन्न विभागों के असहयोग का शिकार हो गया। पुणे पुलिस बॉम्बे प्रांतीय पुलिस विभाग के अधीन थी। अगले सात दिनों तक उन्होंने आदेश पर कोई कार्रवाई नहीं की; अंततः 31 जनवरी की सुबह बैज को गिरफ्तार किया गया। पुणे पुलिस ने दावा किया कि बैज पुणे के आसपास के जंगलों में छिप गया था, लेकिन उसने पुलिस को बताया कि 22 जनवरी को दिल्ली से आने के बाद वह पुणे में अपने घर पर था।
9 जनवरी को इंस्पेक्टर रजाक ने करकरे और मदनलाल को हिरासत में लेने की सिफारिश की थी। इस सिफारिश पर कार्रवाई करने और वारंट

जारी करने में विभाग को तीन दिन लग गए; तब तक दोनों अहमदनगर छोड़ चुके थे। करकरे एक प्रभावशाली व्यक्ति थे और अगर विभाग में उनके किसी मित्र ने उनकी गिरफ्तारी की सूचना दे दी हो तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है। पुलिस विभाग में स्टेनोग्राफर इंस्पेक्टर जे.एन. जोशी की 9 जनवरी 1948 को रेलवे स्टेशन पर मदनलाल से मुलाकात हुई थी; दरअसल, उन्होंने उनसे बात भी की थी। उन्हें याद है कि मदनलाल ने बताया था कि वह शादी करने के लिए दिल्ली जा रहे हैं। रजाक की सिफारिश निश्चित रूप से जोशी के कार्यालय तक पहुंची होगी: करकरे अहमदनगर नगरपालिका के निर्वाचित सदस्य थे। जोशी ने अपने वरिष्ठों या अधीनस्थों को यह बताना जरूरी नहीं समझा कि जिन लोगों को वे हिरासत में लेना चाहते थे, उनमें से कम से कम एक पहले ही भाग चुका था। मदनलाल की गिरफ्तारी के बाद, पुलिस ने डॉ. जैन के बॉम्बे स्थित पते पर मदनलाल के लिए प्राप्त दो पत्र पेश किए। ये पत्र अहमदनगर में मदनलाल की प्रेमिका शेवंता ने लिखे थे। हालांकि, पुलिस ने उससे पूछताछ नहीं की; उन्होंने गांधी की हत्या के बाद ही इस सुराग पर कार्रवाई की।
हत्या के बाद, गृह मंत्रालय ने प्रशासनिक सेवाओं, पुलिस बलों और सशस्त्र बलों में आरएसएस और हिंदू महासभा के कार्यकर्ताओं की घुसपैठ की सीमा का पता लगाने के लिए जांच शुरू की। सभी विभागों में बड़ी संख्या में सक्रिय सदस्यों की उपस्थिति पाई गई। सक्रिय सदस्यों के अलावा, कई ऐसे समर्थक भी थे जो हिंदू चरमपंथी समूहों को प्रोत्साहित करते थे।
प्यारेलाल ने अपनी पुस्तक महात्मा गांधी—अंतिम चरण, खंड 10, भाग-II में पुलिस की इस अस्पष्ट सुस्ती का जिक्र किया है। वे लिखते हैं: 'लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि अधिकारियों के पास

पुख्ता और ठोस जानकारी होने के बावजूद वे साजिशकर्ताओं का पता लगाने और उन्हें गिरफ्तार करने तथा उनकी योजना को विफल करने में असफल रहे। यह विफलता सेवाओं की कई शाखाओं में व्याप्त भ्रष्टाचार की सीमा को दर्शाती है, जिसमें पुलिस भी शामिल है। वास्तव में, बाद में यह बात सामने आई कि आरएसएस संगठनों का प्रभाव सरकारी विभागों में भी था, और कई पुलिस अधिकारी, आम पुलिसकर्मियों की तो बात ही छोड़िए, आरएसएस की गतिविधियों में शामिल लोगों के प्रति सहानुभूति रखते थे और यहां तक कि सक्रिय रूप से उनकी मदद भी करते थे। बम विस्फोट से पहले भी, दिल्ली के कुछ शरणार्थी शिविरों में गांधीजी और अन्य कांग्रेस नेताओं की हत्या की अफवाहें फैल रही थीं, जो सांप्रदायिक विचारधाराओं के विरोधी होने के लिए जाने जाते थे।' सरदार पटेल को हत्या के बाद एक युवक से एक पत्र मिला, जिसने अपने बयान के अनुसार आरएसएस संगठन में शामिल होने के लिए बहकावे में आकर बाद में अपना भ्रम खो दिया था। पत्र में बताया गया था कि आरएसएस के सदस्यों को कुछ स्थानों पर पहले से ही निर्देश दिए गए थे कि वे उस शुक्रवार को अपने रेडियो सेट चालू करके "अच्छी खबर" सुनें। खबर सुनने के बाद सभी आरएसएस शाखाओं में मिठाइयाँ बांटी गईं। बाद में जब सरकार के आदेश से आरएसएस पर प्रतिबंध लगा दिया गया, तो सरदार पटेल के संवाददाता के अनुसार, भारत के एक राज्य के स्थानीय पुलिस प्रमुख ने आयोजकों को शोक के प्रतीक के रूप में "तेरह दिनों" के लिए अपना कार्यालय बंद करने और संगठन को भंग न करने का संदेश भेजा। यह भ्रष्टाचार इतना कपटी और व्यापक था कि केवल सर्वोच्च बलिदान ही इसे रोक या समाप्त कर सकता था।
गांधी हत्याकांड की सुनवाई कर रहे न्यायाधीश आत्मचरण ने गांधी हत्या में पुलिस की भूमिका की कड़ी आलोचना की। उन्होंने अपने

फैसले में पुलिस की निंदा की। उन्होंने केंद्र सरकार के ध्यान में 20-1-1948 से 30-1-1948 के बीच मामले की जांच में पुलिस की ढिलाई को लाया। दिल्ली पुलिस ने मदनलाल के. पाहवा से 20-1-1948 को उनकी गिरफ्तारी के तुरंत बाद एक विस्तृत बयान प्राप्त किया था। बॉम्बे पुलिस को डॉ. जे.सी. जैन के उस बयान की भी सूचना मिली थी जो उन्होंने 21-1-1948 को माननीय श्री मोरारजी देसाई को दिया था। इन दोनों बयानों के बाद दिल्ली पुलिस और बॉम्बे पुलिस ने एक-दूसरे से संपर्क किया था। फिर भी पुलिस इन दोनों बयानों से कोई लाभ नहीं उठा पाई। यदि उस समय मामले की जांच में थोड़ी सी भी तत्परता दिखाई गई होती तो शायद इस त्रासदी को टाला जा सकता था। गांधी की हत्या में पुलिस की सहायता करने का दोषी ठहराने के अलावा, पीठासीन न्यायाधीश ने पुलिस के खिलाफ अब तक की सबसे प्रतिकूल टिप्पणियों में से एक पारित की थी।
गांधी जी की जान पर सुनियोजित हमले के बारे में कई लोगों के पास जानकारी होने के आरोपों की जांच के लिए 1965 में गठित जे.एल. कपूर आयोग ने पुलिस की अक्षमता और निष्क्रियता के खिलाफ भी कई प्रतिकूल टिप्पणियां कीं।
यदि 30 जनवरी 1948 की शाम को नाथूराम ने ही 9 मिमी बेरेटा पिस्तौल का ट्रिगर दबाया था, तो पुलिस की आपराधिक लापरवाही और घोर सुस्ती ने इसमें उसकी पूरी तरह से मदद की थी। बाद में यही कहा जा सकता है कि गांधी की हत्या में पुलिस अपनी लापरवाही और निष्क्रियता से हत्यारों के बराबर ही दोषी थी।
30 तारीख के बाद पुलिस ने आरोपियों को गिरफ्तार करने में बहुत तेजी दिखाई। सबसे पहले, नथुराम को तुगलक रोड पुलिस स्टेशन ले जाया गया और गांधी की हत्या के आरोप में औपचारिक रूप से गिरफ्तार किया गया।

31 तारीख की सुबह 5:30 बजे, पुणे जिला पुलिस के इंस्पेक्टर ओक ने बैज को उसके घर से गिरफ्तार कर लिया। जब उससे पूछा गया कि मदनलाल को विस्फोटक कहाँ से मिले, तो बैज ने उन्हें सप्लाई करने की बात कबूल कर ली। हालांकि, उसने गांधीजी की हत्या की साजिश में शामिल होने से इनकार किया। उसने पहले दिन से लेकर अब तक की सारी घटनाएँ विस्तार से बताईं, जितनी उसे याद थीं। इसके बाद 31 तारीख की दोपहर को नागरवाला ने सावरकर सदन पर छापा मारा। जब वे वहाँ पहुँचे, तो सावरकर अपने पहले माले के कमरे के बाहर उनसे मिले। नागरवाला को देखते ही उन्होंने पूछा, 'तो आप महात्मा गांधी की हत्या के आरोप में मुझे गिरफ्तार करने आए हैं?' नागरवाला यह देखकर हैरान रह गए कि सावरकर ने इस तरह पहले ही उनसे सवाल कर लिया, और उन्होंने कहा कि वे तो सिर्फ एक नियमित तलाशी और जब्ती अभियान पर आए हैं। उनके आवास से आपत्तिजनक दस्तावेज जब्त किए गए, जिनसे गिरोह के सदस्यों, विशेष रूप से नाथूराम और आप्टे के सावरकर के साथ घनिष्ठ संबंधों का पता चलता है। उन्हें अंततः 5 फरवरी 1948 को हिरासत में लिया गया और 11 मार्च को औपचारिक रूप से गिरफ्तार कर लिया गया।
नागरवाला 5 फरवरी को आप्टे, गोपाल और शंकर की तलाश में पुणे गए। आप्टे के घर पर उन्हें बताया गया कि पिछले बीस दिनों से उनसे कोई संपर्क नहीं हो पाया है। शंकर अपनी मां से मिलने कोल्हापुर गए थे और वापस नहीं लौटे थे। 6 फरवरी को वे बॉम्बे पुलिस मुख्यालय पहुंचे, जहां नागरवाला ने उन्हें एक जोरदार थप्पड़ मारा।
गोपाल उक्सान स्थित अपने पैतृक घर में थे; उन्हें गिरफ्तार कर बॉम्बे ले जाया गया। पूछताछ में उन्होंने पुलिस को बताया कि उन्होंने अपनी रिवॉल्वर पांडुरंग गोडबोले को सुरक्षित रखने के

लिए दी थी, जो उनके बड़े भाई दत्तात्रेय गोडसे की कंपनी उद्यम इंजीनियरिंग में काम करते थे। पुलिस 8 तारीख को गोपाल को वापस पुणे ले आई और उन्हें गोडबोले के घर ले गई। जब गोडबोले को पता चला कि गांधी जी के हत्यारे गोपाल के भाई नाथूराम हैं, तो वे घबरा गए। उन्होंने गोपाल की बंदूक छिपाने का वादा किया था और उन्हें पूरा यकीन था कि वे हत्या के मामले में फंस जाएंगे। उन्होंने अपने एक मित्र काले से बात की, जो अपने मित्र के लिए बंदूक ठिकाने लगाने को तैयार हो गया। लगातार पूछताछ के बाद गोडबोले ने स्वीकार किया कि उन्होंने बंदूक अपने मित्र को सौंप दी थी। काले को तुरंत हिरासत में लिया गया और उन्होंने स्वीकार किया कि उन्होंने उसी रात बंदूक फेंक दी थी जिस रात गोडबोले ने उन्हें सौंपी थी। उन्होंने बंदूक पुणे के फर्ग्यूसन कॉलेज के गेट के सामने झाड़ियों में फेंक दी थी। बंदूक कभी नहीं मिली। काले और गोडबोले को गिरफ्तार कर पूछताछ के लिए हिरासत में रखा गया; उन्होंने छह सप्ताह लॉक-अप में बिताए।
बैज के इकबालिया बयान के आधार पर नागरवाला ने आप्टे और करकरे को छोड़कर लगभग सभी आरोपियों को गिरफ्तार कर लिया था। नाथूराम की गिरफ्तारी के बाद, उससे एक डायरी बरामद हुई, जो महत्वपूर्ण जानकारी का स्रोत साबित हुई। उसने आप्टे और अपने संयुक्त खाते से खर्च किए गए पैसों का विस्तृत हिसाब रखा था। 'गोपाल को 250 रुपये', 'बंदोभाऊ को 50 रुपये', 'मुंबई-दिल्ली हवाई जहाज का 305 रुपये' जैसी सभी जानकारियाँ उसमें दर्ज थीं। हालाँकि नाथूराम ने दावा किया कि वह अकेले ही यह सब कर रहा था, लेकिन उसकी डायरी से पुलिस को संदेह हुआ कि इसमें एक बड़ा गिरोह शामिल था। नाथूराम और आप्टे बैज को 'बंदोभाऊ' कहते थे, गोपाल नाथूराम का भाई गोपाल गोडसे ही हो सकता था, और 'मुंबई-दिल्ली हवाई जहाज' के

308 रुपये का मतलब था कि दो टिकट खरीदे गए थे, क्योंकि उन दिनों एक टिकट की कीमत 154 रुपये होती थी। इतना ही नहीं, डायरी में 20 से 30 जनवरी के बीच उनकी गतिविधियों का भी विवरण था। उन्होंने उल्लेख किया था कि वे 24 से 27 जनवरी तक बॉम्बे के एल्फिंस्टन होटल में रुके थे। 5 फरवरी को बॉम्बे से दो सीआईडी अधिकारी हॉर्नबी रोड स्थित एल्फिंस्टन होटल गए, लेकिन उन्हें वहां ठहरने का कोई रिकॉर्ड नहीं मिला। होटल के प्रबंधक ने उनसे पूछा कि क्या उनका मतलब कार्नाक रोड स्थित एल्फिंस्टन एनेक्स से है। उन्होंने एनेक्स के प्रबंधक कश्मीरीलाल से पुलिस को आवश्यक जानकारी के बारे में बात की। एनेक्स एक छोटा होटल है; लॉबी के रूप में इस्तेमाल होने वाली गैलरी कश्मीरीलाल के फोन पर बात करने के दौरान साफ दिखाई दे रही थी। जब फोन आया तो आप्टे और करकरे अपने कमरे के ठीक बाहर खड़े थे। कश्मीरीलाल ने उन्हें देख लिया। एक रूम अटेंडेंट गोविंदा कश्मीरीलाल के पास खड़ा था और उसने बताया कि कमरा नंबर 5 में रहने वालों में से एक का हुलिया पुलिस द्वारा दिए गए विवरण से मिलता है। 24 जनवरी के बारे में अस्पष्ट संदर्भ सुनकर आप्टे ने कश्मीरीलाल से पूछा कि क्या हो रहा है। कश्मीरीलाल ने उन्हें आश्वस्त किया कि कुछ नहीं हुआ है और फिर वह गेस्ट रजिस्टर लेकर एल्फिंस्टन होटल की ओर दौड़ा, जहाँ दो पुलिसकर्मी उसका इंतजार कर रहे थे। शक होने पर आप्टे और करकरे ने तुरंत अपना सामान उठाया और होटल से निकल गए; वे पुलिस से आधे घंटे पहले होटल पहुँच गए।
30 तारीख की शाम को आप्टे और करकरे बिरला हाउस के एक गुप्त द्वार से चुपके से निकल गए और पुरानी दिल्ली रेलवे स्टेशन की ओर चल पड़े। उन्होंने रात प्लेटफार्म पर बिताई और पुलिस को स्टेशन पर आते और विश्राम कक्ष से नाथूराम का सामान ले जाते देखा।

आप्टे और करकरे ने दिल्ली में कुछ हमदर्द राजनेताओं से मिलने की योजना बनाई, जो हिंदू दक्षिणपंथी विचारधारा के समर्थक थे, ताकि उन्हें भागने में मदद के लिए धन और दस्तावेज़ मिल सकें। हालांकि, अगले दिन जब उन्होंने अपने मददगारों तक पहुंचने की कोशिश की, तो वे गांधी जी के दस लाख लोगों के जुलूस में फंस गए। वे वापस स्टेशन पहुंचे और इलाहाबाद जाने वाली एक्सप्रेस ट्रेन पकड़ी, क्योंकि उन्हें संदेह था कि बॉम्बे जाने वाली ट्रेनों पर नज़र रखी जा रही होगी।
आप्टे के निर्देशों के अनुसार, मनोरमा साल्वी ने 31 तारीख की सुबह दिल्ली स्थित हिंदू महासभा के सचिव को एक टेलीग्राम भेजा। उसमें लिखा था: 'दिल्ली पहुँच रहे हैं, सुरक्षा का इंतज़ाम करें, रुकें, रुकें, डी रुकें, आप्टे रुकें।' आप्टे और करकरे 2 फरवरी को बॉम्बे पहुँचे। वे सबसे पहले सी ग्रीन (नॉर्थ) होटल गए। होटल के मैनेजर सत्यवान रेले उन्हें कमरा नहीं दे पाए और उन्होंने उन्हें दूसरे कमरों में दो बिस्तर दिए, जिनमें पहले से ही लोग ठहरे हुए थे। 3 तारीख को उन्होंने होटल खाली किया और एल्फिंस्टन एनेक्स होटल में एक डबल रूम लिया, जहाँ से वे करकरे के दोस्त जोशी से मिलने गए। मैनेजर की बातचीत सुनने के बाद, दोनों ने सैंडहर्स्ट ब्रिज स्थित आर्य पथिक आश्रम के लिए टैक्सी ली। आप्टे को पूरा भरोसा था कि मैनेजर जी.पी. दुबे उन्हें ज़रूर ठहरा देंगे। लेकिन उनकी किस्मत ने साथ नहीं दिया। बाद में दुबे ने पुलिस को बताया कि उनकी अस्त-व्यस्त हालत देखकर उन्हें वहाँ जाने से मना कर दिया गया था। वहाँ से लौटाए जाने के बाद, आप्टे और करकरे ने पहली बार पीछा किए जाने का अनुभव किया। वे सीधे विक्टोरिया टर्मिनस स्टेशन गए और ठाणे के लिए ट्रेन पकड़ी। दोपहर बाद, वे अपने सामान के साथ जोशी के घर पहुँचे,

जिन्हें गांधीजी की हत्या में उनकी संलिप्तता का पता चल गया था। लेकिन वह महासभा के समर्थक और करकरे के मित्र भी थे, इसलिए उन्होंने उनकी मदद के लिए जोखिम उठाया। दोनों गिरफ्तारी से बचने के लिए किसी विदेशी क्षेत्र या देश में भागने के लिए उत्सुक थे। जोशी ने करकरे और आप्टे के लिए मदद मांगने के लिए कुछ लोगों से मिलने की पेशकश की। उनसे मिलने वाले पहले व्यक्ति एम.जी. घैसास थे, जिन्हें पुणे जाकर स्थिति का जायजा लेने और यह पता लगाने के लिए कहा गया था कि क्या पुलिस आप्टे के घर गई थी। घैसास 9 तारीख की सुबह उत्साहवर्धक खबर लेकर लौटे और आप्टे और करकरे ने पुणे जाने का फैसला किया। उनके बयानों के अनुसार, पुणे में उनके दोस्तों ने उन्हें आतिथ्य प्रदान किया और वे उनके घरों में छिपने में सफल रहे; अन्य मित्र आप्टे के घर से उनके लिए समाचार और कपड़े लेकर आए, जबकि कुछ ने उन्हें भागने में मदद की पेशकश की।
हालांकि, पुणे में रहना उनके लिए खतरनाक होता जा रहा था। पुलिस उनके करीब आने लगी थी और करकरे और आप्टे ने बंबई जाने का फैसला किया। उन्हें पूरा भरोसा था कि बंबई में उनके दोस्त उन्हें गोवा भागने में मदद कर देंगे, और वहां से वे किसी दूसरे देश में चले जाएंगे। आप्टे और करकरे 11 फरवरी की सुबह बंबई लौट आए और सीधे ठाणे चले गए। वे दो दिन जोशी के साथ रहे। खुद को बचाने के लिए, जोशी के बेटे ने उन्हें 30 जनवरी को खरीदे गए उपनगरीय रेलवे के टिकट दिलवा दिए थे। गिरफ्तारी की स्थिति में, उन्हें उम्मीद थी कि वे पुलिस को यह सोचने पर मजबूर कर देंगे कि वे उस दिन बंबई में थे। आप्टे की गिरफ्तारी के बाद, पुलिस को उनके पास से दादर से विले पार्ले जाने का टिकट नंबर 05891 मिला, जिसकी तारीख 30/01/48 थी। हिंदू महासभा और आरएसएस जैसे संगठनों के

लिए इस्तेमाल किया हुआ टिकट हासिल करना कोई मुश्किल काम नहीं था। हिसाब-किताब के लिए, स्टेशनों पर जमा किए गए सभी टिकटों का रिकॉर्ड रखा जाता है; उनके नंबर स्टेशन पर मौजूद बरामद टिकट रजिस्टर में दर्ज किए जाते हैं। इसके बाद टिकट केंद्रीय कार्यालय भेजा जाता है और वहां से मंडल कार्यालय। टिकट नंबर दर्ज और मिलान हो जाने के बाद टिकट बेकार हो जाते हैं और उन्हें नष्ट कर दिया जाता है। इस प्रक्रिया के दौरान कहीं से भी कुछ टिकट गायब हो सकते हैं। जांच के बाद पुलिस यह साबित करने में सफल रही कि विले पार्ले स्टेशन पर टिकट चेकर ने टिकट उसी दिन प्राप्त कर लिया था जिस दिन वह जारी किया गया था और प्रयुक्त टिकट रजिस्टर में दर्ज कर लिया था। आप्टे के लिए जिसने भी टिकट प्राप्त किया था, उसने 30 तारीख के बाद टिकट लेने और जोशी को सौंपने के लिए पैसे या रेलवे कार्यालय तक पहुंच का इस्तेमाल किया था। मनोरमा द्वारा भेजे गए टेलीग्राम की तरह, टिकट का होना भी एक निराधार सबूत साबित हुआ।
13 फरवरी को आप्टे और करकरे दक्षिण मुंबई में रीगल सिनेमा के पीछे स्थित पायर्के के अपोलो होटल में ठहरे, जो गेटवे ऑफ इंडिया और ताज महल होटल से कुछ ही दूरी पर था। आप्टे और मनोरमा अक्सर 'श्रीमान एवं श्रीमती आप्टे' के नाम से यहाँ ठहरते थे। रिसेप्शन काउंटर पर क्लर्क क्लॉडियो पिंटो ने 'एन. काशीनाथ' और 'आर. बिष्णु' का चेक-इन किया और उन्हें दूसरी मंजिल पर स्थित कमरा नंबर 29 की चाबियाँ दीं। अगली सुबह लगभग दस बजे, आप्टे ने मनोरमा को फोन किया और उन्हें उसी शाम छह बजे होटल में मिलने के लिए कहा। उन्हें इस बात की जानकारी नहीं थी कि बैज के कबूलनामे के अनुसार पुलिस को उनके संबंध के बारे में पता था। चूंकि मनोरमा के पिता पुलिस में थे, इसलिए उनका फोन जनरल पुलिस

एक्सचेंज का एक्सटेंशन नंबर था। पिछले कुछ दिनों से नागरवाला ने साल्वी परिवार के घर पर निगरानी का आदेश दिया था और उनके फोन टैप किए जा रहे थे। इसलिए पुलिस ने आप्टे और मनोरमा की बातचीत सुन ली। फोन के बाद नारायण आप्टे और विष्णु करकरे अपने-अपने रास्ते चले गए।
सुबह 11 बजे इंस्पेक्टर बी.ए. हल्दिपुर होटल पहुंचे और कमरा नंबर 29 में ठहरे लोगों के बारे में पूछताछ की। चूंकि वे वहां नहीं थे, हल्दिपुर ने उनके लौटने का इंतजार करने का फैसला किया। उन्होंने लॉबी में एक सुविधाजनक स्थान ग्रहण किया क्योंकि उन्हें पता था कि आप्टे ने मनोरमा को उस शाम छह बजे आने के लिए कहा था। काफी देर इंतजार करने के बाद, शाम 5:30 बजे, एक टैक्सी होटल के सामने आकर रुकी और आप्टे उससे उतरे। रिसेप्शन क्लर्क पिंटो ने सिर हिलाया और हल्दिपुर ने आप्टे को पकड़ लिया। उन्हें गिरफ्तार कर पुलिस मुख्यालय ले जाया गया।
करकरे देश से भागने की तैयारियों की जानकारी लेने के लिए जोशी से मिलने ठाणे गए थे। वे रात 8:25 बजे होटल लौटे। हल्दीपुर उनका इंतज़ार कर रहा था। अब बैज द्वारा नामजद लगभग सभी लोग पुलिस की गिरफ्त में थे।
11 फरवरी को शंकर किस्तय्या पुलिस दल को नई दिल्ली में हिंदू महासभा भवन और साउथ इंडियन स्कूल के पीछे जंगल में उस स्थान पर ले गया, जहां उसने 20 जनवरी की शाम को दिल्ली से भागने से पहले हथगोले और अप्रयुक्त गन कॉटन स्लैब छिपाए थे। उसने पुलिस को लगभग पैंतालीस गज की दूरी पर स्थित दो स्थान दिखाए, जहां से पुलिस ने तीन जिंदा हथगोले, पच्चीस कारतूस और एक फ्यूज तार से जुड़ा गन कॉटन स्लैब बरामद किया।

ओल्ड दिल्ली रेलवे स्टेशन के रिटायरिंग रूम के रजिस्टर में दर्ज था कि नाथूराम ने 29 जनवरी को ग्वालियर से दिल्ली और पुणे से दिल्ली के टिकट दिखाकर यह टिकट बुक कराया था। उसने कबूल किया था कि उसने परचुरे की मदद से ग्वालियर में बंदूक खरीदी थी। 14 फरवरी को बॉम्बे सीआईडी के डिप्टी सुपरिटेंडेंट एन.वाई. देउलकर परचुरे को गिरफ्तार करने ग्वालियर पहुंचे। उन्होंने पाया कि परचुरे ग्वालियर किले में सेना की हिरासत में था। कारण? परचुरे ने गांधीजी की हत्या का जश्न मिठाई बांटकर मनाया था और यह दावा किया था कि वह हत्यारों को जानता है। उसने सार्वजनिक रूप से गांधीजी को मुगल सम्राट औरंगजेब का पुनर्जन्म बताया था, जो एक कट्टरपंथी था और अपने शासनकाल में हिंदुओं पर अत्याचार करता था। परचुरे ने 29 जनवरी को (नाथूराम और आप्टे के दिल्ली जाने के बाद) अपने बड़े भाई को बताया था कि पिछले दिन उनके घर पर ठहरे लोग गांधीजी की हत्या करने के मिशन पर थे और उसने उन्हें बंदूक दिलाने में मदद की थी। उसने राम दयाल सिंह नाम के एक व्यक्ति से यह भी कहा कि एक अच्छा काम हुआ है; 'हिंदू धर्म के विरोधी को मार दिया गया है'। उसने यह भी कहा कि हत्यारा उन्हीं का आदमी था। जब यह सब ग्वालियर में नवगठित कांग्रेस सरकार के गृह मंत्री धुले को पता चला, तो उन्होंने तुरंत लोक सुरक्षा अध्यादेश के तहत परचुरे की गिरफ्तारी का आदेश दिया।
यू.एच. राणा भी इस मामले में कूद पड़े। वे ग्वालियर पहुंचे और देउलकर के साथ मिलकर मांग की कि परचुरे को उनके हवाले कर दिया जाए।
17 फरवरी को नागरवाला को दिल्ली से एक आदेश मिला जिसमें उन्हें गांधी हत्याकांड की जांच का नेतृत्व करने वाला अधिकारी नियुक्त किया गया था। अक्षमता को भी इनाम मिलता है।

18 फरवरी को परचुरे ने अपना जुर्म कबूल करने की इच्छा जताई। प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेट आर.बी. अटल को ग्वालियर किले में बुलाया गया, जो सेना के अधीन था। परचुरे से मिलना सैन्य कमान के आदेशानुसार ही संभव था। अटल के साथ ग्वालियर के वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक दिनकर पी. थोरात पाटिल भी थे।
किले पर पहुँचते ही उन्हें सबसे पहले कमान अधिकारी मेजर छत्रे के कार्यालय ले जाया गया। छत्रे के साथ अटल उस कोठरी की ओर बढ़े जहाँ परचुरे को रखा गया था। ये कोठरियाँ किले के ऊपरी तल पर स्थित थीं, जिन्हें मुगलों ने अपने कैदियों को रखने के लिए बनवाया था। परचुरे से आमने-सामने होने पर अटल ने उनसे पूछा कि क्या उन्होंने अपना अपराध स्वीकार करने की इच्छा व्यक्त की है। परचुरे ने हाँ में जवाब दिया। इसके बाद अटल परचुरे को कोठरी के पिछले बरामदे में ले गए और एक मेज और दो कुर्सियाँ माँगीं। उन्होंने छत्रे से बरामदे से सटे पिछले परिसर में दो सैन्य संतरी तैनात करने को भी कहा, जो उनसे पचास गज की दूरी पर खड़े रहेंगे।
अगले एक घंटे तक अटल ने परचुरे को शपथपूर्वक बयान देने के कानूनी परिणामों और निहितार्थों के बारे में समझाया। प्रचलित कानूनों के तहत शपथपूर्वक बयान देने वाले व्यक्ति की दोषसिद्धि निश्चित थी। अटल ने उसे बताया कि कोई भी उसे बयान देने के लिए मजबूर नहीं कर सकता। परचुरे अपनी बात पर अड़ा रहा और जब वह आश्वस्त हो गया, तभी अटल ने उसे बयान शुरू करने के लिए कहा। अगले पैंतालीस मिनट तक परचुरे ने 27 और 28 जनवरी को नथुराम और आप्टे के उसके घर आने पर घटी सारी घटनाएँ विस्तार से बताईं। परचुरे की बात सुनने के बाद अटल ने उसे आधा घंटा सोचने का समय दिया और फिर उससे कुछ प्रश्न पूछे। इस लंबी प्रक्रिया के बाद

अटल ने परचुरे के निर्देशानुसार उसके बयान को अंग्रेजी में शब्दशः रिकॉर्ड कर लिया।
इसके बाद अटल ने पारचुरे को बयान पढ़कर सुनाया, उससे हर पन्ने पर हस्ताक्षर करवाए और यह सुनिश्चित किया कि उसने इकबालिया बयान दर्ज करने की हर कानूनी प्रक्रिया का बहुत सावधानीपूर्वक पालन किया है ताकि किसी भी तकनीकी या प्रक्रियात्मक गलती के कारण इसे खारिज न किया जा सके।
गांधी हत्याकांड की साजिश में अपनी भूमिका के लिए परचुरे का कबूलनामा उसे दोषी साबित करने के लिए काफी था।
26 फरवरी 1948 को आप्टे और करकरे पुलिस दल के साथ दिल्ली में हिंदू महासभा भवन के पीछे के जंगल में गए। आप्टे ने उस स्थान की ओर इशारा किया जहाँ 30 तारीख की दोपहर को पिस्तौल का परीक्षण किया गया था। उन्होंने एक पेड़ की ओर इशारा किया जिस पर चार गोलियों के निशान थे। पेड़ की छाल के तीन हिस्से काटे गए और पास में मिली एक खाली कारतूस को सबूत के तौर पर जब्त कर लिया गया। अगले दिन, आप्टे पुलिस के साथ ग्वालियर में परचुरे के आवास पर गए। वहाँ उन्होंने उस दीवार की ओर इशारा किया जहाँ पिस्तौल का परीक्षण किया गया था। दीवार पर कई गोलियों के निशान मिले और वहाँ मिली एक गोली को सबूत के तौर पर जब्त कर लिया गया।
जब नागरवाला को मुख्य जांच अधिकारी नियुक्त किया गया, तब तक पुलिस ने मुख्य आरोपी को पकड़ लिया था। अब उनका काम मामले की सभी कमियों को दूर करना था, जिसमें पहचान परेड आयोजित करने की कानूनी प्रक्रियाओं की समीक्षा करना, लिखावट का मिलान करना और एक ऐसा मामला तैयार करना शामिल था जिसे बचाव पक्ष के वकील ध्वस्त न कर सकें। दिल्ली और बॉम्बे में आरोपियों की कई पहचान परेड आयोजित की गईं, जिनकी निगरानी मजिस्ट्रेट द्वारा की गई:

दिल्ली में, यह प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेट किशन चंद की देखरेख में और बॉम्बे में मुख्य प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेट ऑस्कर एच. ब्राउन की देखरेख में आयोजित की गईं।
दिल्ली और बॉम्बे के बीच लगातार यात्रा करते हुए नागरवाला ने अगले दो महीनों में प्रत्येक आरोपी के खिलाफ सबूतों का एक विशाल संग्रह तैयार किया। एकमात्र व्यक्ति जिसके खिलाफ उन्हें बैज के इकबालिया बयान के अलावा कोई ठोस सबूत नहीं मिल सका— जिसमें बैज ने सावरकर के साथ गिरोह की बातचीत, विशेष रूप से नाथूराम और आप्टे की बातचीत के बारे में कई विवरण दिए थे—और परिस्थितिजन्य साक्ष्य ही एकमात्र व्यक्ति थे, जिनके खिलाफ उन्हें कोई ठोस सबूत नहीं मिला। केवल 19 जनवरी की सुबह दिल्ली स्थित हिंदू महासभा कार्यालय से सावरकर सदन को किए गए फोन कॉल से सावरकर को दोषी साबित करना संभव नहीं था। यहां यह याद रखना आवश्यक है कि 15 अगस्त 1947 को, जब पूरा देश भारत की नव-प्राप्त स्वतंत्रता का जश्न मना रहा था, आरएसएस और हिंदू महासभा ने जश्न के बहिष्कार का आह्वान किया था और अपने सदस्यों को स्वतंत्र भारत का तिरंगा फहराने से मना किया था। हिंदू महासभा के संस्थापक सावरकर ने इस प्रतिबंध का उल्लंघन किया और सावरकर सदन की छत पर झंडा फहराया। इससे हिंदू कट्टरपंथी भड़क उठे थे और पिछले कुछ महीनों से उनके सहयोगी उनका बहिष्कार कर रहे थे। इसलिए दिल्ली महासभा कार्यालय से किसी के लिए भी उस सुबह सावरकर को फोन करने का कोई कारण नहीं था। आप्टे के पास एक कारण था और जिस समय फोन बुक किया गया था, उस समय वह महासभा कार्यालय में ही मौजूद थे। 31 जनवरी को सावरकर सदन पर हुई छापेमारी के दौरान जब्त किए गए दस्तावेजों में नाथूराम और आप्टे द्वारा

सावरकर को लिखे गए कई पत्र मिले, जिनसे तीनों के बीच घनिष्ठ संबंध की पुष्टि होती है।
डॉ. जैन ने करकरे द्वारा मदनलाल को सावरकर से मिलवाने और सावरकर द्वारा मदनलाल को बधाई और आशीर्वाद देने का भी उल्लेख किया था। लाल किला कारागार में मुकदमे के दौरान और फिर पश्चिम पंजाब उच्च न्यायालय में दया याचिका की सुनवाई के दौरान नाथूराम गोडसे द्वारा पढ़ा गया अत्यंत नाटकीय और भावुक बयान निश्चित रूप से सावरकर की रचना है। लाल किला कारागार में कैद के दौरान, कैदियों को बाहर से नियमित रूप से संदेश और चिट्ठियाँ मिलती रहती थीं और वे उन्हें एक-दूसरे तक पहुँचाने में सक्षम थे। एक जेल गार्ड, लांस नायक कदम, को आरोपियों के लिए पत्र और दस्तावेज़ ले जाते हुए पकड़े जाने के बाद निलंबित कर दिया गया था। मुकदमे के दौरान नाथूराम ने न्यायाधीश आत्मचरण से अपील की थी कि पुलिस को अदालत या उनकी कोठरियों में बनाई गई चिट्ठियों को देखने से रोका जाए। न्यायाधीश भी कैदियों के बीच इस संवाद से अवगत थे।
सावरकर और नाथूराम दोनों जानते थे कि नाथूराम पर ही सबकी नज़र रहेगी, इसलिए उन्होंने उस थोड़े समय का उपयोग अपने घृणा के संदेश को फैलाने के लिए किया। दोनों ने लगभग आठ महीने लाल किले की जेल में एक-दूसरे के बेहद करीब रहकर बिताए। सावरकर एक प्रतिभाशाली लेखक थे और जानते थे कि पाठकों को भड़काने के लिए अपनी प्रतिभा का उपयोग कैसे करना है। 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम का उनका इतिहास और उनके द्वारा लिखे गए मराठी गीत उनकी भावनाओं को भड़काने की क्षमता को दर्शाते हैं। नाथूराम न तो अपने लेखन कौशल के लिए जाने जाते थे और न ही भाषण कला के लिए, सिवाय उग्र और अपशब्दों के प्रयोग के। अगले पाँच दशकों तक,

हिंदू दक्षिणपंथी ताकतों ने इसी भाषण का इस्तेमाल भारतीयों की नई पीढ़ियों का मस्तिष्क यह विश्वास दिलाने के लिए किया कि गांधी देश के विभाजन के लिए जिम्मेदार थे, मुसलमानों के प्रति पक्षपाती थे और उनकी हत्या करके नाथूराम गोडसे ने देश और जनता की महान सेवा की थी।
पुलिस ने गांधी हत्याकांड में 27 मई 1948 को आरोप पत्र दाखिल किया।
जब तक मुकदमा शुरू हुआ, नागरवाला और उनकी जांच टीम ने प्रत्येक आरोपी की संलिप्तता साबित करने के लिए पर्याप्त सबूत जुटा लिए थे। यदि उन्होंने 20 जनवरी के असफल प्रयास की जांच में उतनी ही तेज़ी दिखाई होती, जितनी उन्होंने हत्या की जांच में दिखाई, तो भारत का इतिहास शायद कुछ और होता।
गांधी हत्याकांड के आरोपपत्र के अनुसार मुख्य आरोपी 'आरोपी नंबर 1' नथुराम विनायक गोडसे; 'आरोपी नंबर 2' नारायण दत्तात्रेय आप्टे; 'आरोपी नंबर 3' विष्णु रामकृष्ण करकरे; 'आरोपी नंबर 4' मदनलाल कश्मीरीलाल पाहवा; 'आरोपी नंबर 5' शंकर किस्तय्या; 'आरोपी नंबर 6' गोपाल विनायक गोडसे; 'आरोपी नंबर 7' विनायक दामोदर सावरकर; 'आरोपी नंबर 8' दत्तात्रेय सदाशिव परचुरे; 'आरोपी नंबर 9, 10 और 11' गंगाधर एस. दंडवते, गंगाधर जाधव और सूर्यदेव शर्मा थे, जिन्हें फरार घोषित किया गया था। मुकदमे के अंत तक पुलिस अंतिम तीन आरोपियों को गिरफ्तार नहीं कर पाई थी। बैज को अदालत के साथ किए गए समझौते के बदले न्यायिक क्षमादान दिया गया था, जिसके तहत उसने मामले में गवाह बनकर गवाही दी थी। आरोपपत्र
(ए) नाथूराम विनायक गोडसे, नारायण दत्तात्रेय आप्टे, विष्णु रामकृष्ण करकरे, मदनलाल कश्मीरीलाल पाहवा, शंकर किस्तैया,

Gopal Vinayak Godse, Vinayak Damodar Savarkar and Dattatreya
□□□□□□ □□□□□□ □□ □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 120-□□ (□□□□□□□□□)
□□ □□□ □□□□ □□□□□ □□□ □□□
read with section 302 I.PC. (Indian Penal Code) (murder). (b)
Nathuram V Godse, Narayan D. Apte, Vishnu R. Karkare,
Madanlal S.
Pahwa, Shankar Kistayya and Gopal V. Godse were also charged
under
□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 19 (□□) □□ □□□□□□ □□□□□□
□□□□□□□ □□ □□□□ 19 (□□)
□□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 109 □□ 114 □□□ □□□□□□ □□□□□□
□□□□□□□ □□ □□□□ 19 (□□) □□ □□□ □□□□ □□□□
□□ □□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 19 (□□), □□□□ 114 □□□□□□ □□□
□□□□□□ □□ □□□ □□□□ □□□,
□□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 4 (□□) □□ □□□□□□□□ □□□□□□
□□□□□□□ □□ □□□□ 4 (□□)
□□□□□□ □□□□□□□, □□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 6 □□ □□□ □□□□ □□□; □□□□ 5
□□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□; □□ □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□
5
□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 6 □□ □□□ □□□□ □□□□
(□) □□□□□□ □□. □□□□□ □□ □□□□ 3 □□ □□□ □□□ □□ □□□□ □□□□□ □□□ □□□
□□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□. □□□□□□□ □□. □□□□□, □□□□□□ □□. □□□□□,
□□□□□□
R. Karkare, Shankar Kistayya and Gopal V. Godse were also
charged

विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 3 के तहत, धारा 6 के साथ पढ़ा जाए तो
उक्त अधिनियम।
(डी) नाथूराम वी गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, मदनलाल एस.
Pahwa, Shankar Kistayya, Gopal V. Godse and V.D. Savarkar

were

इसके अलावा, उन पर भारतीय दंड संहिता की धारा 115 के साथ धारा 302 के तहत भी आरोप लगाए गए। (ई) नाथूराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे पर भी आरोप लगाए गए।
भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19 (सी)।
(f) Nathuram Godse, Narayan D. Apte and Dattatreya S. Parchure were
भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19 (सी) के तहत भी आरोप लगाया गया है, साथ ही
भारतीय दंड संहिता की धारा 114
(जी) नाथूराम गोडसे पर धारा 19 (एफ) के तहत अलग से आरोप लगाया गया था।
भारतीय शस्त्र अधिनियम।
(h) नारायण डी. आप्टे और विष्णु आर. करकरे पर धारा 19 के तहत आरोप लगाया गया था।
(एफ) भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 114 भारतीय दंड संहिता के साथ पढ़ी गई। (i) नाथूराम गोडसे पर धारा 302 भारतीय दंड संहिता के तहत भी अलग से आरोप लगाया गया था।
गांधी की हत्या के लिए।

(j) नारायण डी. आप्टे और विष्णु आर. करकरे पर आगे निम्नलिखित आरोप लगाए गए।
भारतीय दंड संहिता की धारा 302 (हत्या) को भारतीय दंड संहिता की धारा 114 (उकसाने) के साथ पढ़ा जाए।
उपस्थिति)।
(के) मदनलाल के. पाहवा, शंकर किस्तय्या, गोपाल वी. गोडसे, विनायक डी.
सावरकर और दत्तात्रेय एस. परचुरे पर भी धारा के तहत आरोप लगाए गए थे।
भारतीय दंड संहिता की धारा 302, धारा 109 के साथ पढ़ी जाए।

5

गुरु ने धोखा दिया

'यह बात हर तरफ फैली हुई थी कि उन्हीं के साथ व्यापार किया जा सकता है।' उस असंभव बूढ़े व्यक्ति को ऊँचा दर्जा दिया गया, उसकी प्रतिभा और 'अचूक अंतर्ज्ञान' के लिए उसकी प्रशंसा की गई, उससे सलाह ली गई, सम्मानपूर्वक उसकी बात सुनी गई और फिर उसे नजरअंदाज कर दिया गया।'
- महात्मा गांधी: अंतिम चरण, खंड 10, भाग II
by Pyarelal Nayyar

अगर गोडसे-आपटे गिरोह और लापरवाह पुलिसकर्मियों ने गांधीजी की हत्या में अहम भूमिका निभाई, तो राजनेताओं की भूमिका भी कम घिनौनी नहीं थी। चाहे जानबूझकर हो या संयोगवश, उन्होंने हत्यारों को सफल होने में बहुत बड़ी भूमिका निभाई। अन्य लोगों ने गांधीजी के आदर्शों को त्यागकर और सार्वजनिक रूप से खुद को अलग करके इस कृत्य को संभव बनाया। हत्या के बाद आपटे और करकरे की भागने की योजना के अनुसार, उन्हें दिल्ली के कुछ बहुत शक्तिशाली मंत्रियों से मदद मिलने का पूरा भरोसा था। हत्या के बाद, भारत के लौह पुरुष कहे जाने वाले गृह मंत्री सरदार वल्लभभाई पटेल की बहुत आलोचना हुई। उन्हें लगभग सभी रियासतों के राजकुमारों और राजाओं को भारतीय संघ में विलय के लिए सफलतापूर्वक राजी करने और उन पर दबाव डालने का श्रेय दिया जाता है। गांधीजी के जन्मस्थान पोरबंदर के पास स्थित काठियावाड़ के सोमनाथ मंदिर का पुनर्निर्माण, जिसे आक्रमणकारी महमूद गजनी ने नष्ट कर दिया था, का श्रेय भी उन्हें ही जाता है। लेकिन गांधीजी की हत्या उनके रिकॉर्ड पर एक बड़ा धब्बा है। गृह मंत्री के रूप

में वे पुलिस और खुफिया विभागों के प्रभारी थे। जे.सी. जैन ने बॉम्बे प्रांत के मुख्यमंत्री बी.जी. खेर और बॉम्बे प्रांत के गृह मंत्री मोरारजी देसाई को महत्वपूर्ण सुराग दिए थे। मोरारजी देसाई गांधीवादी विचारधारा के कट्टर समर्थक और पटेल के करीबी विश्वासपात्र थे। देसाई का दावा था कि अहमदाबाद में पटेल से मुलाकात के तुरंत बाद उन्होंने उन्हें यह जानकारी दे दी थी। हालांकि, दिल्ली पुलिस ने उस जानकारी पर कभी कार्रवाई नहीं की। जैन को पुलिस ने कभी पूछताछ के लिए नहीं बुलाया। दिल्ली पुलिस ने हमेशा यही कहा कि जैन द्वारा दी गई जानकारी के बारे में उन्हें कभी बताया ही नहीं गया था। पटेल ने संजीव को सूचित करना क्यों जरूरी नहीं समझा, जो दिल्ली में मदनलाल की जांच और पूछताछ की देखरेख कर रहे थे? यह एक रहस्य बना हुआ है। पटेल ने गांधीजी को खतरे की सूचना दी और उनकी सुरक्षा बढ़ाने तथा उनसे मिलने आने वाले सभी लोगों की तलाशी लेने की सलाह दी। हालांकि, यह पहले से ही तय था कि गांधीजी ऐसी किसी भी बात को मानने से इनकार कर देंगे। हैरानी की बात यह है कि पटेल मान गए और गांधीजी की सुरक्षा का मामला भाग्य के भरोसे छोड़ दिया। यह समझा जा सकता है कि सभी मंत्री इस बात से डरे हुए थे कि उनके किसी भी कदम से गांधीजी नाराज हो सकते हैं और वे फिर से भूख हड़ताल पर बैठ सकते हैं, लेकिन पटेल ने 20 वीं भूख हड़ताल के असफल प्रयास की जांच की व्यक्तिगत रूप से निगरानी करना भी उचित नहीं समझा। पटेल आरएसएस और हिंदू महासभा के प्रति सहानुभूति रखने के लिए जाने जाते थे और उनके सदस्यों को 'सच्चे देशभक्त' कहते थे, भले ही वे कभी-कभी गुमराह हो जाते थे। गांधीजी की हत्या और साजिश में इन दोनों संगठनों की संलिप्तता साबित होने के बाद

भी, पटेल ने आरएसएस को कांग्रेस में उसके युवा विंग के रूप में विलय करने का प्रस्ताव रखा था।
हाल की घटनाओं से पटेल परेशान थे। एक घटना यह थी कि गांधी जी ने उपवास शुरू कर दिया था, जिससे पटेल शर्मिंदा और क्रोधित हुए थे। गृह मंत्री के रूप में उन पर देश के नागरिकों को सुरक्षा प्रदान करने का दायित्व था, लेकिन गांधी जी ने उपवास इसलिए किया था क्योंकि उन्हें लगता था कि भारत के मुसलमानों को उनकी उचित सुरक्षा नहीं मिल रही है। कांग्रेस में पटेल के विरोधियों ने उन पर गृह मंत्री के रूप में अपने कर्तव्यों का निर्वाह करने और गांधी जी को उपवास करने का कारण प्रदान करने का आरोप लगाते हुए हमला किया था। पटेल ने अपनी नाराजगी स्पष्ट शब्दों में व्यक्त की थी। जब गांधी जी के अंतिम उपवास के दौरान स्वतंत्र भारत का पूरा मंत्रिमंडल बिड़ला हाउस से काम कर रहा था, तब पटेल बंबई और अहमदाबाद की यात्रा पर नई दिल्ली से रवाना हो गए।
जब केंद्रीय मंत्रिमंडल ने पाकिस्तान को 55 करोड़ रुपये का बकाया भुगतान न रोकने का फैसला किया, तो पटेल बहुत नाराज हो गए। प्यारेलाल के अनुसार, यह उनके लिए आखिरी झटका साबित हुआ। 'उन्हें महत्वपूर्ण मामलों पर अपने मंत्रिमंडल के सहयोगियों से लगातार असहमति जतानी पड़ रही थी और हालांकि गांधी कई मुद्दों पर पटेल के रुख से असहमत थे, फिर भी उन्होंने मंत्रिमंडल के नेहरू समर्थक गुटों के हमलों के सामने पटेल का बचाव किया था।' पटेल को किसी के द्वारा बचाव किया जाना पसंद नहीं था।
पटेल का दृष्टिकोण बहुत सरल था और वे अपने कार्यों में अतिवादी थे। उनकी शक्ति और दृढ़ इच्छाशक्ति से जुड़ी एक प्रसिद्ध कहानी जटिल मुद्दों के प्रति उनके दृष्टिकोण पर प्रकाश डालती है। कहा जाता है कि युवावस्था में पटेल की बगल में एक फोड़ा हो गया था।

उपचार से आराम न मिलने पर उन्होंने एक चाकू उठाया, उसे अपनी माँ के रसोई के चूल्हे पर जलते कोयलों पर गर्म किया और फोड़े में घुसा दिया।
भारत के विभाजन के लिए भी उन्होंने इसी तरह का तर्क दिया। सत्ता हस्तांतरण वार्ता के दौरान, जब मुस्लिम लीग और कांग्रेस की अंतरिम कैबिनेट का गठन हुआ, तो पटेल और नेहरू ने सोचा कि नवगठित राष्ट्र के लिए गृह मंत्रालय अत्यंत महत्वपूर्ण होगा। पटेल ने गृह मंत्रालय का कार्यभार संभाला, जबकि आश्चर्यजनक रूप से नेहरू ने विदेश मंत्रालय का कार्यभार संभाल लिया और महत्वपूर्ण वित्त मंत्रालय मुस्लिम लीग के लिए छोड़ दिया। मुस्लिम लीग देश का विभाजन कराने के लिए दृढ़ संकल्पित थी। उन्होंने लीग द्वारा प्रायोजित 'प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस' के दौरान देश में आतंक फैलाया था और अब अंतरिम सरकार के कांग्रेस मंत्रियों को परेशान करने के लिए उन्हें एक और हथियार मिल गया था। अंतरिम प्रधानमंत्री और गृह मंत्री को अपने कार्यालयों में फर्नीचर या क्लर्कों की नियुक्ति जैसी छोटी-छोटी चीजों के लिए भी बजट की मंजूरी के लिए कई दिनों तक इंतजार करना पड़ा। यहां तक कि अविभाजित भारत की संपत्ति और परिसंपत्तियों के विभाजन पर बातचीत के दौरान भी, लीग के सदस्य सौदेबाजी के लिए जाने जाते थे। वे कुर्सियों, मेजों, कार्यालय अलमारियों और पंखों के विभाजन जैसे तुच्छ मुद्दों पर भी बहस करते थे। पटेल और अन्य कांग्रेस नेता पूरी तरह से हताश हो गए थे। अंततः, जब अविभाजित भारत और पाकिस्तान के गठन के बीच निर्णय लेने का समय आया, तो पटेल और नेहरू ने कई कारणों से विभाजन का विकल्प चुना, जिसमें मुस्लिम लीग और उसके मंत्रियों के उत्पीड़न से छुटकारा पाने की इच्छा भी शामिल थी।

क्या गृह मंत्री के पुलिस विभाग द्वारा गांधी के जीवन की सुरक्षा के प्रति अपनाए गए लापरवाह रवैये में भी यही रवैया स्पष्ट हो रहा था?
पटेल विभाजन का समर्थन करने वाले अकेले नेता नहीं थे; मौलाना अबुल कलाम आजाद और खान अब्दुल गफ्फार खान को छोड़कर लगभग पूरे कांग्रेस नेतृत्व ने विभाजन का समर्थन किया और गांधी जी का साथ छोड़ दिया। कांग्रेस अध्यक्ष आचार्य कृपलानी ने विभाजन के अपने समर्थन को यह कहकर उचित ठहराया था, 'हिंदू और मुस्लिम समुदायों ने हिंसा की सबसे भयानक घटनाओं में एक-दूसरे से होड़ लगाई है। मैंने एक कुआँ देखा है जहाँ 107 महिलाओं ने अपने बच्चों सहित अपनी इज्जत बचाने के लिए खुद को कुएँ में फेंक दिया। एक पूजा स्थल पर इसी कारण से 50 युवतियों को उनके पुरुषों ने मार डाला। इन भयावह अनुभवों ने निस्संदेह इस मुद्दे पर मेरे दृष्टिकोण को प्रभावित किया है। कुछ सदस्यों ने हम पर आरोप लगाया है कि हमने डर के मारे यह रुख अपनाया है। मुझे उनके आरोप की सच्चाई स्वीकार करनी होगी। डर यह है कि अगर हम इसी तरह चलते रहे तो हम खुद को राज्य की गुलामी और उससे भी बदतर स्थिति में पहुँचा देंगे। मैं पिछले तीस वर्षों से गांधी जी के साथ रहा हूँ। तो फिर मैं अब उनके साथ क्यों नहीं हूँ? क्योंकि मुझे लगता है कि उन्होंने अभी तक इस समस्या का व्यापक स्तर पर समाधान नहीं खोजा है।' पटेल ने कहा, 'मैंने विभाजन के लिए तभी सहमति दी जब हमारे पास कोई और चारा नहीं बचा था और हम सब कुछ खो चुके थे।' प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस के बाद से ही मुस्लिम लीग की रणनीति भारतीय जनता और कांग्रेस नेतृत्व को डरा-धमकाकर पाकिस्तान के सामने आत्मसमर्पण कराने की थी; कांग्रेस नेता सीधे-सीधे इस जाल में फंस गए। गांधी जी ही एकमात्र ऐसे व्यक्ति थे जो इन आतंककारी

हथकंडों के खिलाफ लड़ने और लीग की योजनाओं को विफल करने के लिए तैयार थे, लेकिन उन्हें कोई समर्थक नहीं मिला। अगर यह कहा जा सकता है कि पटेल गांधी जी से नाराज थे और उनकी नाराजगी ने उनके फैसले को प्रभावित किया; तो गांधी जी के चहेते जवाहर, नेहरू, प्रधानमंत्री के रूप में भी गांधी जी का समर्थन और संरक्षण करने में विफल रहे।
नेहरू महत्वाकांक्षी थे और स्वतंत्र भारत के पहले प्रधानमंत्री बनने के लिए उत्सुक थे। स्वतंत्रता के बाद, वे कई ऐसी समस्याओं में घिर गए जिनका समाधान असंभव सा प्रतीत होता था: सत्ता का हस्तांतरण, विभाजन की त्रासदी, लाखों शरणार्थियों का पुनर्वास, पाकिस्तान द्वारा कश्मीर पर आक्रमण और कांग्रेस में पटेल के साथ उनका निरंतर आंतरिक संघर्ष। लेकिन भारत के प्रधानमंत्री के रूप में, और यह विशेषाधिकार उन्हें केवल गांधीजी के समर्थन के कारण प्राप्त था, नेहरू गांधीजी की रक्षा करने में विफल रहे। स्वतंत्र भारत के लिए नीतियां बनाते समय निर्णय लेने की प्रक्रिया में उन्होंने गांधीजी को खुलेआम नजरअंदाज किया, जिसके लिए वे स्वयं भी दोषी थे।
भारत के राज्य और भविष्य से जुड़े मामलों में नेहरू गांधीवादी दर्शन और गांधी से दूर होते जा रहे थे। लंबे समय तक उन्होंने गांधी को अपना आदर्श और पिता तुल्य माना था, लेकिन माउंटबेटन दंपति के आगमन के बाद नेहरू अंतिम वायसराय और विशेष रूप से वायसराय की पत्नी से अधिक प्रभावित होने लगे। इस चतुर दंपति ने नेहरू और गांधी के बीच बढ़ती दूरी और नेहरू और पटेल के बीच की दरार और प्रतिद्वंद्विता को भांप लिया था, जिसका उन्होंने पूरा फायदा उठाया। प्यारेलाल द्वारा लिखित महात्मा गांधी: द लास्ट फेज, खंड 10, भाग II के निम्नलिखित अंश में इसका सार मिलता है:

'लेकिन चाहे उन्हें इसका एहसास हो या न हो, पुराने नेताओं का पूरा समूह, अंतरिक्ष में आकाशगंगाओं की तरह, धीरे-धीरे एक अलग कक्षा की ओर खिंचा चला जा रहा था—आने वाले वायसराय लॉर्ड माउंटबेटन की कक्षा की ओर। हाल के समय में वे और गांधीजी जिन अलग-अलग परिस्थितियों में काम कर रहे थे, उन्होंने उनकी सोच, दृष्टिकोण और कार्यशैली को अलग-अलग तरह से प्रभावित किया था। गांधीजी का मार्ग मुक्ति का मार्ग था। उन्होंने अहिंसक मार्ग का प्रतिनिधित्व किया, जिसका अपना तर्क है।' जब तक बिहार में सच्ची पश्चाताप की भावना प्रकट नहीं होती, भारत के अन्य हिस्सों में जो कुछ भी हो रहा हो, उससे कोई फर्क नहीं पड़ता, हिंदू और मुसलमानों के दिल एकजुट नहीं हो सकते थे और भारत का विभाजन अपरिहार्य परिणाम होता। सरदार पटेल ने अपने रूढ़िवादी राजनीतिक दृष्टिकोण से स्थिति का जायजा लेते हुए पारस्परिक कार्रवाई की बात की—बिहार, बंगाल और अन्य जगहों पर एक समान कार्रवाई। लीग को तभी होश आया जब उसे एहसास हुआ कि हिंसा एक ऐसा खेल है जिसमें दोनों पक्ष भाग ले सकते हैं। पंडित नेहरू का दृष्टिकोण आदर्शवादी था, लेकिन उसमें वह समर्थन नहीं था जो गांधीजी के अहिंसक स्वतंत्रता संग्राम के नेतृत्व ने प्रदान किया था और जो उस आदर्शवाद को प्रभावी बना सकता था। सरदार पटेल, जो व्यावहारिक यथार्थवादी थे, कभी-कभी अपने सहयोगी के उस आदर्शवाद की कड़ी आलोचना करते थे जो उन्हें बिखरा हुआ लगता था। लेकिन चाहे वे एक-दूसरे से कितना भी असहमत हों, उनमें से कोई भी गांधीजी से सहमत नहीं हो सकता था। उन्हें चाहते-ना चाहते उस तंत्र की कार्यप्रणाली का पालन करना पड़ा जिसका वे हिस्सा बन चुके थे—एक ऐसा प्रशासन जो अंततः बल पर आधारित था—और प्रांतों और केंद्र में सत्ता में आने के बाद से अपनी ही नीतियों के अटल

तर्क का भी पालन करना पड़ा। उनके और उनके पूर्व मार्गदर्शक के बीच एक बढ़ती खाई बन चुकी थी। सरदार पटेल ने सबसे पहले इसे पहचाना। पंडित नेहरू को यह पहचान देर से मिली, और वे लगभग अंत तक इससे जूझते रहे। प्यारेलाल यह भी लिखते हैं: 'लेकिन लॉर्ड माउंटबेटन को कांग्रेस नेताओं में योग्य शिष्य मिले, जो भारत के विभाजन या किसी अन्य स्थिति में रक्षा की समस्या पर उनके प्रवचनों को ध्यान से सुनते थे। यह बात फैली हुई थी कि वे ही ऐसे लोग थे जिनके साथ "काम चल सकता था"। उस असंभव बूढ़े व्यक्ति को ऊँचा दर्जा दिया गया, उसकी प्रतिभा और "अचूक अंतर्ज्ञान" की प्रशंसा की गई, उससे परामर्श किया गया, सम्मानपूर्वक सुना गया और—फिर भी उसे नजरअंदाज कर दिया गया। लेकिन जितना वे उससे दूर होते गए, उतनी ही उन्हें उसकी आवश्यकता महसूस हुई। क्योंकि अंततः वही परिणाम दे सकता था।' अपने लिए कुछ भी न चाहने वाला, वह केवल देने और सेवा करने के लिए उत्सुक रहता था, उसमें ईर्ष्या का कोई भाव नहीं था, वह कभी द्वेष नहीं रखता था... कभी असभ्य नहीं था, अपने लिए कोई अधिकार नहीं जताता था, किसी चोट पर शोक मनाने से कतराता था... अपनी बात को जल्दी उजागर नहीं करता था, हमेशा अच्छी बात पर विश्वास करने को उत्सुक रहता था, हमेशा आशावादी और हमेशा धैर्यवान था।
एक समय गांधी ने नेहरू पर संयुक्त भारत के अपने सपने को चकनाचूर करने का आरोप लगाया था। 1946 में पंचगनी में कांग्रेस सोशलिस्टों के नेता जयप्रकाश नारायण को दिए गए एक बेहद भावुक बयान में गांधी ने कहा था, 'जवाहरलाल ने मेरे अविभाजित भारत के सपने को चकनाचूर कर दिया है।' इस बयान के पीछे क्या वजह थी? जैसा कि इससे स्पष्ट है, यह गांधी के साथ हुए सबसे बड़े विश्वासघातों में से एक था। मौलाना आजाद के संस्मरणों और मिनू मसानी की

पुस्तक 'ब्लिस वाज़ इट इन दैट डॉन' में इसका जिक्र मिलता है। यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि माउंटबेटन ने पहले पटेल को भारत के विभाजन की अपनी योजना स्वीकार करने के लिए राजी किया; फिर उन्होंने नेहरू को राजी किया क्योंकि पटेल पहले ही इसे मंजूरी दे चुके थे।
गांधी ने विभाजन को टालने की कोशिश की थी। जब उनके सारे प्रयास विफल हो गए, तो उन्होंने यह विचार रखा कि ब्रिटिश हस्तक्षेप के बिना, स्वतंत्रता के बाद विभाजन पर विचार किया जाए। लेकिन यह व्यर्थ ही साबित हुआ। जिन्ना, पटेल और नेहरू की उम्रदराज तिकड़ी सत्ता के लिए बेचैन थी और वे अब और इंतजार नहीं कर सकते थे। जिन्ना जानते थे कि उनके पास बहुत कम समय बचा है। 10 जुलाई 1946 को बंबई में कांग्रेस अध्यक्ष के रूप में नेहरू द्वारा दिए गए एक बयान ने जिन्ना और मुस्लिम लीग को पाकिस्तान की मांग को और भी उग्र बना दिया। पत्रकारों को संबोधित करते हुए नेहरू ने कहा था, 'कांग्रेस किसी भी पूर्व समझौते या सहमति से मुक्त होकर राष्ट्रीय सरकार में प्रवेश करेगी। कांग्रेस परिस्थितियों और जमीनी हकीकतों के अनुसार अपनी नीतियां और कार्य तय करने के लिए स्वतंत्र होगी। कांग्रेस संविधान समिति की सदस्य बनने के लिए सहमत हो गई है। कांग्रेस अपनी आवश्यकताओं के अनुसार कैबिनेट मिशन योजना में बदलाव और संशोधन करने के लिए स्वतंत्र होगी।' कांग्रेस, मुस्लिम लीग की तरह, पहले ही कैबिनेट मिशन योजना का पालन करने के लिए सहमत हो गई थी और कांग्रेस अध्यक्ष का यह बयान उनके लिए अप्रत्याशित था। जैसा कि उम्मीद थी, जिन्ना और मुस्लिम लीग ने तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की और आपातकालीन सत्र बुलाया। वहां जिन्ना ने घोषणा की कि 'कांग्रेस अध्यक्ष के बयान के मद्देनजर लीग के पास पाकिस्तान की मांग को

फिर से जोरदार तरीके से उठाने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचा है।' सत्र के अंत में, लीग ने कैबिनेट मिशन योजना के प्रति अपने पूर्व अनुमोदन से पीछे हटते हुए उसे अस्वीकार कर दिया। कांग्रेस दुविधा में फंस गई। उसने पहले कैबिनेट मिशन योजना को स्वीकार कर लिया था, लेकिन उसके अध्यक्ष ने सार्वजनिक रूप से इसे पलटने का इरादा घोषित कर दिया था। अंततः, उन्होंने मुस्लिम लीग के प्रस्ताव पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए एक सम्मानजनक लेकिन अस्पष्ट बयान जारी किया और लीग से भारत के संविधान के मसौदा तैयार करने और सत्ता हस्तांतरण वार्ता में कांग्रेस के साथ सहयोग करने की अपील की। जिन्ना ने सीडब्ल्यूसी के बयान को खारिज करते हुए कहा कि अध्यक्ष द्वारा जो संकेत दिया गया था, वही कांग्रेस की वास्तविक नीति थी।
जब भारत को विभाजित करने की माउंटबेटन योजना को मंजूरी देने के लिए सीडब्ल्यूसी की बैठक हुई, तो जयप्रकाश नारायण और डॉ. राम मनोहर लोहिया को विशेष अतिथि के रूप में आमंत्रित किया गया था। अपनी पुस्तक 'पार्टिशन के दोषी पुरुष' में लोहिया ने उस बैठक का वर्णन किया है:
'गांधी जी, फ्रंटियर गांधी खान अब्दुल गफ्फार खान*, जयप्रकाश नारायण और मैं ही वे चार लोग थे जिन्होंने भारत के विभाजन की योजना का विरोध किया था, बाकी किसी ने भी भारत को बांटने की योजना के खिलाफ विरोध का एक शब्द भी नहीं कहा।' वे आगे लिखते हैं: 'गांधी जी ने चर्चा को बीच में ही रोक दिया, उन्होंने अफसोस जताया कि विभाजन योजना को मंजूरी देने से पहले न तो नेहरू और न ही सरदार पटेल ने उन्हें जानकारी दी थी। उन्हें अंधेरे में रखा गया था। क्रोधित नेहरू ने गांधी जी को बीच में ही रोक दिया और कहा कि वे गांधी जी को घटनाक्रम की जानकारी दे रहे थे। जब गांधी

जी ने दोहराया कि सरदार पटेल और नेहरू द्वारा विभाजन योजना को स्वीकार किए जाने से पहले उन्हें अंधेरे में रखा गया था, तो नेहरू ने आपत्ति जताई और स्वीकार किया कि चूंकि उस समय गांधी जी दंगा प्रभावित नोआखली जिले का दौरा कर रहे थे, इसलिए उनके लिए विभाजन योजना के बारे में उन्हें सूचित करना संभव नहीं था।' डी.जी. तेंदुलकर ने अपनी पुस्तक महात्मा के सातवें खंड में इस बैठक का वर्णन किया है, जो डॉ. लोहिया द्वारा दिए गए विवरण से लगभग पूरी तरह मेल खाता है। तेंदुलकर लिखते हैं: 'बैठक में गांधीजी ने आगे कहा कि चूंकि कांग्रेस नेताओं ने विभाजन योजना को स्वीकार करने का वचन दे दिया था, इसलिए पार्टी के लिए विभाजन को स्वीकार करना अनिवार्य था, ताकि उनके नेताओं की प्रतिष्ठा बनी रहे। कांग्रेस और मुस्लिम लीग द्वारा विभाजन योजना को स्वीकार करने के बाद, वायसराय और ब्रिटिश सरकार को पीछे हट जाना चाहिए और कांग्रेस और लीग को बाहरी प्रभाव या दबाव के बिना भारत के विभाजन की योजना बनानी चाहिए।' यहां 'चूंकि नेताओं ने अपना वचन दे दिया था' और 'प्रतिष्ठा बनाए रखने के लिए' शब्द बहुत महत्वपूर्ण हो जाते हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि पटेल और नेहरू ने पार्टी या गांधीजी से परामर्श या जानकारी लिए बिना ही एकतरफा रूप से भारत के विभाजन पर सहमति दे दी थी। फिर भी आरएसएस और हिंदू महासभा ने भारत के विभाजन के लिए गांधीजी को दोषी ठहराया।
गांधीजी को पंजाब के विभाजन की मांग करने वाले कांग्रेस के प्रस्ताव के बारे में पहली बार मार्च 1947 में एक प्रेस रिपोर्ट से पता चला, जब वे दंगों से तबाह बिहार का दौरा कर रहे थे। प्यारेलाल ने महात्मा गांधी: द लास्ट फेज, खंड 10, भाग II में लिखा है: 'यह मार्च 1947 का महीना था। गांधीजी लगभग एक सप्ताह से

बिहार में थे, उस दंगाग्रस्त प्रांत में हिंदुओं और मुसलमानों के टूटे हुए दिलों को जोड़ने के लिए अपनी पूरी ताकत से संघर्ष कर रहे थे ताकि वे अपनी जन्मभूमि में एक बार फिर भाईचारे से साथ रह सकें, तभी विडंबना यह थी कि उन्होंने अखबारों में पंजाब के विभाजन की मांग करने वाला कांग्रेस का प्रस्ताव देखा। ऐसा लगा जैसे अचानक उनके पैरों तले खाई खुल गई हो। उनसे न तो सलाह ली गई थी और न ही उन्हें पहले से सूचित किया गया था। उन्होंने 20 मार्च को नेहरू को लिखा, "मुझे लगता है कि मुझे कार्य समिति के प्रस्ताव के पीछे का कारण नहीं पता था।" उन्होंने सरदार पटेल को लिखा, "मैं इसे समझ नहीं पा रहा हूँ।"
पंजाब के विभाजन की मांग पर कांग्रेस के प्रस्ताव में कहा गया था:
'पिछले सात महीनों के दौरान भारत ने कई भयावह घटनाओं और त्रासदियों को देखा है, जिन्हें क्रूर हिंसा, हत्या और जबरदस्ती के माध्यम से राजनीतिक उद्देश्यों की प्राप्ति के प्रयास में अंजाम दिया गया है...'
'छह सप्ताह पहले पंजाब में एक आंदोलन छिड़ गया, जिसे उच्च अधिकारियों में से कुछ लोगों का समर्थन प्राप्त था। इसका उद्देश्य एक ऐसी लोकप्रिय सरकार को भंग करना था जिस पर संवैधानिक तरीकों से हमला नहीं किया जा सकता था। इसमें कुछ हद तक सफलता मिली और आंदोलन का नेतृत्व करने वाले समूह के प्रभुत्व वाली सरकार बनाने का प्रयास किया गया। इसका घोर विरोध हुआ और इसके परिणामस्वरूप हिंसा में वृद्धि और व्यापक हिंसा हुई...'
इन दुखद घटनाओं ने यह साबित कर दिया है कि पंजाब में समस्या का समाधान हिंसा और ज़बरदस्ती से संभव नहीं है, और ज़बरदस्ती पर

आधारित कोई भी व्यवस्था लंबे समय तक नहीं टिक सकती। इसलिए, कम से कम ज़बरदस्ती का सहारा लेकर समाधान खोजना आवश्यक है। इसके लिए पंजाब को दो प्रांतों में विभाजित करना होगा, ताकि मुस्लिम बहुल भाग को गैर-मुस्लिम बहुल भाग से अलग किया जा सके। कांग्रेस ने पंजाब के धार्मिक विभाजन की औपचारिक मांग करके मुस्लिम लीग को अलग पाकिस्तान की मांग करने का वैध अधिकार दे दिया। ब्रिटिश प्रशासन और मुस्लिम लीग इसी अवसर की प्रतीक्षा कर रहे थे। गांधी जी ने कांग्रेस की मांग के पीछे छिपे खतरे को तुरंत भांप लिया, लेकिन दुर्भाग्यवश उन्हें तब तक बहुत देर हो चुकी थी। इस तरह देश का विभाजन हुआ: एक तरफ राजनीतिक आतंक, छल-कपट और एक धूर्त औपनिवेशिक शक्ति का, और दूसरी तरफ नैतिक रूप से दिवालिया और कायर राजनीतिक नेतृत्व का।
नेहरू को गांधी ने लिखा: 'मैं आपसे अनुरोध करता हूँ कि आप मुझे पंजाब त्रासदी के बारे में जो कुछ भी जानते हैं, वह बताएँ। मुझे इसके बारे में प्रेस में छपने वाली खबरों के अलावा कुछ भी नहीं पता, जिस पर मुझे बिल्कुल भी भरोसा नहीं है। न ही मैं उस नीति से सहमत हूँ जिसे पुरानी कहावत "चुपचाप नीति" कहा जा सकता है। यह आश्चर्यजनक है कि देश लगभग उन्हीं उपायों को अपना रहा है जिनकी उसने ब्रिटिश शासन के दौरान आलोचना की थी। बेशक, मैं इसके पीछे का कारण जानता हूँ। लेकिन यह मुझे बिल्कुल भी स्वीकार्य नहीं है।' क्या गांधी कांग्रेस नेतृत्व को अप्रत्यक्ष रूप से चेतावनी दे रहे थे कि वे न केवल अपने नागरिकों से जानकारी छिपाने की ब्रिटिश नीति का अनुसरण कर रहे हैं, बल्कि औपनिवेशिक शक्ति की सदियों पुरानी फूट डालो और राज करो की नीति को भी अपना रहे हैं?

मार्च 1947 के पहले सप्ताह में कांग्रेस ने गांधीजी को बिना बताए या उनसे सलाह लिए पंजाब के धार्मिक विभाजन की मांग वाला प्रस्ताव पारित कर दिया। प्रस्ताव पारित होने के बाद भी न तो नेहरू और न ही पटेल ने उन्हें सूचित करना उचित समझा। प्रस्ताव पारित होने के दो सप्ताह बाद, 20 मार्च को गांधीजी ने नेहरू को लिखा: 'मैं लंबे समय से आपको पत्र लिखकर पंजाब के संभावित विभाजन पर कार्य समिति के प्रस्ताव के बारे में पूछना चाहता था। मैं इसके पीछे का कारण जानना चाहता हूं। मुझे इस बारे में बोलना ही होगा। मैंने पूरी जानकारी न होने के कारण अत्यंत सावधानी से ऐसा किया है। मद्रास में एक प्रश्न के उत्तर में कृपलानी ने कहा था कि संभव है कि यह सिद्धांत बंगाल पर भी लागू हो। मुझसे एक प्रतिष्ठित मुस्लिम लीग नेता ने पूछा था... यदि यह मुस्लिम बहुल प्रांतों पर लागू होता है, तो बिहार जैसे कांग्रेस बहुल प्रांतों पर क्यों नहीं। मुझे लगता है कि मैं कार्य समिति के प्रस्ताव के पीछे का कारण नहीं जानता था। न ही मुझे जानने का अवसर मिला। मैं केवल अपना विचार दे सकता था जो सांप्रदायिक आधार पर और दो-राष्ट्र सिद्धांत पर आधारित किसी भी विभाजन के विरुद्ध था।' दबाव से सब कुछ संभव था। लेकिन स्वेच्छा से सहमति के लिए तर्क और हृदय से अपील की आवश्यकता होती थी। स्वैच्छिकता में दबाव या उसके दिखावे का कोई स्थान नहीं था। उसी दिन उन्होंने पटेल को लिखा: 'यदि संभव हो तो मुझे अपने पंजाब प्रस्ताव को समझाने का प्रयास करें। मैं इसे समझ नहीं पा रहा हूँ।' पटेल ने 24 तारीख को उत्तर दिया: 'पंजाब के प्रस्ताव को आपको समझाना कठिन है। इसे गहन विचार-विमर्श के बाद अपनाया गया था। कोई भी कार्य जल्दबाजी में या बिना सोचे-समझे नहीं किया गया है। आपने इसके विरुद्ध अपने विचार व्यक्त किए थे, यह हमें केवल

समाचार पत्रों से पता चला। लेकिन आपको जो उचित लगे, वह कहने का पूरा अधिकार है।'
'पंजाब की स्थिति बिहार से कहीं ज़्यादा खराब है... सेना ने नियंत्रण अपने हाथ में ले लिया है। नतीजतन, ऊपरी तौर पर हालात कुछ हद तक शांत लग रहे हैं। लेकिन कोई नहीं कह सकता कि कब फिर से अशांति फैल सकती है। अगर ऐसा हुआ, तो मुझे डर है कि दिल्ली भी इससे अछूती नहीं रहेगी। लेकिन यहाँ तो हम इससे निपटने में सक्षम होंगे।' पटेल दिल्ली में भी गलत साबित होने वाले थे। राष्ट्रीय राजधानी में शांति सुनिश्चित करने के लिए गांधी जी की ज़रूरत थी। पटेल के पत्र लिखने के अगले दिन नेहरू ने गांधी जी के पत्र का जवाब देते हुए लिखा: 'पंजाब के विभाजन के हमारे प्रस्ताव के बारे में, यह हमारी पिछली चर्चाओं का स्वाभाविक परिणाम है। पहले ये चर्चाएँ नकारात्मक थीं, लेकिन अब निर्णय लेने का समय आ गया है और केवल अपने विचारों को व्यक्त करने वाले प्रस्ताव पारित करने का कोई महत्व नहीं है। मैं और कार्य समिति के अधिकांश सदस्य आश्वस्त हैं कि हमें इस तत्काल विभाजन के लिए दबाव डालना चाहिए ताकि वास्तविकता सामने आ सके। वास्तव में, जिन्ना द्वारा माँगे गए विभाजन का यही एकमात्र जवाब है। मैंने पंजाब के लोगों को इस प्रस्ताव से सहमत पाया - आमतौर पर मुसलमानों को छोड़कर। फिलहाल इसका मतलब कानून में कोई बदलाव किए बिना एक प्रशासनिक निर्णय है।'
नेहरू और पटेल दोनों इस बात को समझने में कैसे असफल रहे कि धर्म के आधार पर विभाजन की कोई भी मांग केवल लीग की मुस्लिम राष्ट्र की मांग को वैधता प्रदान करती है? लेकिन गांधी के शिष्य उनकी छाया से बाहर निकल चुके थे और अब अपने गुरु को एक बोझ मानते थे जिसे उन्हें अनिच्छा से ढोना पड़ता था। प्यारेलाल लिखते हैं:

'पुराने जमाने में ऐसी बात अकल्पनीय होती। यहां तक कि जब वे भारत के कोने-कोने का भ्रमण कर रहे थे, तब भी वे कोई भी महत्वपूर्ण निर्णय लेने से पहले उनसे परामर्श करना नहीं भूलते थे।'
एक प्रार्थना सभा में बोलते हुए गांधीजी ने कहा था, 'यदि विभाजन अपरिहार्य है तो यह अंग्रेजों के हाथों नहीं होना चाहिए, जब तक भारत पर अंग्रेजों का शासन है तब तक देश के विभाजन पर विचार नहीं किया जाना चाहिए। अंग्रेजों को स्वतंत्रता प्रदान करने दें और फिर कांग्रेस और मुस्लिम लीग एक साथ बैठकर देश के विभाजन के बारे में निर्णय लेंगे। मैंने यह सुझाव वायसराय को दिया था, पंडित नेहरू और सरदार पटेल को मेरा सुझाव पसंद नहीं आया। उन्हें जो करना है करने दें, लेकिन कोई यह न कहे कि गांधीजी देश के विभाजन में भागीदार थे। हर कोई किसी भी कीमत पर स्वतंत्रता प्राप्त करने की जल्दी में है।'
कांग्रेस के उच्च कमान ने गांधीजी को दरकिनार कर दिया था और उन्हें इसका पछतावा हुआ। आजादी के बाद, जब विभाजन के बाद हुए नरसंहारों की भयावहता उनके सामने आई, तो कांग्रेस के सभी शीर्ष नेता हताशा में हाथ मलते हुए रो पड़े और कहने लगे कि उन्होंने ऐसे भयावह परिणाम की उम्मीद नहीं की थी। दो साल बाद, 16 अक्टूबर 1949 को, नेहरू ने न्यूयॉर्क में एक सभा के सामने घोषणा की कि यदि उन्हें विभाजन के भयावह परिणामों का पता होता, तो वे भारत के विभाजन का विरोध करते। मौलाना आजाद ने स्वीकार किया, 'उस समय गांधीजी की बात न सुनना हमारी बड़ी गलती थी।' डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने कहा, 'काश हमें पता होता!' विभाजन के समय कांग्रेस के अध्यक्ष रहे आचार्य कृपलानी ने आरोप लगाया था कि गांधीजी अंधेरे में भटक रहे थे, क्योंकि विभाजन के अलावा कोई विकल्प

नहीं था। अपने जीवन के उत्तरार्ध में, वे कांग्रेस के उच्च कमान के उन लोगों के लिए कड़े शब्दों का प्रयोग करते थे, जिन्हें वे भारत के विभाजन के लिए जिम्मेदार मानते थे, और एआईसीसी सम्मेलन में विभाजन योजना के अपने स्वयं के समर्थन को भूल जाते थे। गांधी जी की हत्या को लगभग साठ वर्ष हो चुके हैं। उस समय के प्रमुख व्यक्ति अब इस दुनिया में नहीं हैं। पिछले पचास वर्षों से भी अधिक समय से, हत्या के कारण और गांधी जी के जीवन के अंतिम वर्ष में घटी दुखद घटनाओं में उनकी भूमिका के बारे में कई झूठ फैलाए गए हैं। गांधी जी के अनुयायी और कांग्रेस के बाद के नेता हिंदू दक्षिणपंथी संगठनों के दुष्प्रचार अभियान का मुकाबला करने में विफल रहे हैं। हिंदू चरमपंथियों ने हाल ही में पटेल को अपना आदर्श बना लिया है, शायद इस बात से अनभिज्ञ हैं कि वही पहले व्यक्ति थे जिन्होंने भारत के विभाजन की ब्रिटिश योजना को स्वीकार किया था। वे उस संधि पर हस्ताक्षर करने वालों में से एक थे जिसके तहत पाकिस्तान को बिना शर्त 55 करोड़ रुपये देने पर सहमति हुई थी।
पटेल इस मुद्दे पर गांधी के रुख से नाराज़ थे। स्वतंत्रता के समय, अविभाजित भारत की नकद राशि को दोनों देशों के क्षेत्रफल और जनसंख्या के अनुसार विभाजित किया जाना था; ऋण भी इसी प्रकार उनके बीच विभाजित किया गया था। अविभाजित भारत की नकद राशि 375 करोड़ रुपये थी। यह तय किया गया था कि पाकिस्तान को उसके अस्तित्व में आने के दिन, यानी 14 अगस्त को 20 करोड़ रुपये का भुगतान किया जाएगा। बातचीत के बाद दोनों स्वतंत्र देशों के बीच एक द्विपक्षीय संधि पर हस्ताक्षर किए गए और पाकिस्तान का हिस्सा 75 करोड़ रुपये निर्धारित किया गया। पहले से भुगतान किए गए 20 करोड़ रुपये घटाने के बाद, भारत पर पाकिस्तान का 55 करोड़

रुपये बकाया था। संधि के अनुसार, भारत ने पाकिस्तान को शेष राशि का भुगतान बाद में या जब पाकिस्तान भुगतान की मांग करे, तब करने पर सहमति व्यक्त की। पटेल और नेहरू ने इस संधि पर हस्ताक्षर किए थे। मुस्लिम लीग के मंत्रियों ने लोकप्रियता हासिल करने के लिए इस संधि पर हस्ताक्षर करने की बात सार्वजनिक की। भारत में इस खबर से काफी आक्रोश फैल गया। विरोध की आशंका से चिंतित कांग्रेस नेताओं ने सार्वजनिक रूप से कहा कि उन्होंने यह शर्त रखी थी कि शेष राशि का भुगतान तब किया जाएगा जब भारत और पाकिस्तान के बीच सभी अनसुलझे मुद्दे सुलझ जाएंगे। संधि पर हस्ताक्षर तब हुए जब कश्मीर में घुसपैठ पहले ही शुरू हो चुकी थी। लेकिन न तो मुस्लिम लीग ने कभी इस 'सभी मुद्दे सुलझने पर' वाली शर्त को स्वीकार किया, और न ही कांग्रेस नेता कभी यह साबित कर पाए कि इस 'शर्त' पर ध्यान दिया गया था। संधि दस्तावेज़ में ऐसी किसी शर्त का उल्लेख नहीं था।
जब पश्चिमी पाकिस्तान से शरणार्थियों की बाढ़ आ गई और पाकिस्तान द्वारा वहाँ अत्याचार शुरू हो गए, तो भारतीय मंत्रिमंडल ने फैसला किया कि भारत 55 करोड़ रुपये की शेष राशि का भुगतान रोक देगा। लेकिन यह संधि का उल्लंघन होता। यदि इसे चुनौती दी जाती—और पाकिस्तान निश्चित रूप से भारत के रुख को चुनौती देता—तो भारतीय मंत्रिमंडल का यह रुख उचित नहीं ठहरता। उन्होंने एक संप्रभु राष्ट्र के साथ संधि पर हस्ताक्षर किए थे और संधि में भुगतान रोकने का कोई प्रावधान नहीं था। इससे न केवल भारत को एक अविश्वसनीय राष्ट्र के रूप में बदनामी मिलती, बल्कि वह अनुबंध के उल्लंघन का दोषी भी होता। भारतीय मंत्रिमंडल लोकलुभावन रुख अपनाने की कोशिश कर रहा था, लेकिन इससे अंतरराष्ट्रीय स्तर पर देश की प्रतिष्ठा खतरे में पड़ रही थी।

जब मंत्रिमंडल के इस फैसले की खबर गवर्नर जनरल लॉर्ड माउंटबेटन तक पहुँची, तो वे चिंतित हो गए। तकनीकी रूप से सरकार के प्रमुख होने के नाते, वे मंत्रिमंडल द्वारा लिए गए किसी भी निर्णय में भागीदार होते।
जनवरी के दूसरे सप्ताह में गांधी जी दिल्ली की स्थिति का जायजा लेने के लिए माउंटबेटन से मिलने गए। गांधी जी के जाने के दौरान माउंटबेटन ने कैबिनेट द्वारा बकाया भुगतान रोकने के फैसले का जिक्र किया और बताया कि यह कानूनी रूप से अनुचित और नैतिक रूप से भ्रष्ट कृत्य है। गांधी जी ने इस फैसले की आलोचना की, लेकिन कोई प्रतिबद्धता जताए बिना चले गए।
उस शाम, प्रार्थना सभा में, गांधी ने हिंदू, मुस्लिम और सिखों के बीच शांति स्थापित करने के लिए आमरण अनशन पर जाने का निर्णय घोषित किया। भारतीय मंत्रिमंडल को पाकिस्तान को बकाया भुगतान रोकने के अपने निर्णय की निरर्थकता का एहसास हो चुका था। माउंटबेटन मंत्रिमंडल के वरिष्ठ सदस्यों को इस निर्णय को पलटने के लिए पुरजोर प्रयास कर रहे थे। अपने निर्णय की त्रुटि का एहसास होने पर, वे अब एक दुविधा में थे: यदि वे अपने पूर्व रुख से पीछे हटते, तो उन्हें जनता के आक्रोश का सामना करना पड़ता। पटेल ने कहा, 'मुसलमान हमसे नाराज हैं, हम हिंदुओं को भी नाराज नहीं कर सकते।' कांग्रेस को डर था कि वह जनसमर्थन खो देगी, और परिणामस्वरूप सत्ता भी।
शायद मंत्रिमंडल को यह आशंका थी कि गांधीजी के उपवास शुरू करने के बाद यदि वे अपना निर्णय पलट देते, तो ऐसा प्रतीत होता कि उन्होंने दबाव में ऐसा किया है। उनके विचार जो भी रहे हों, जब मंत्रिमंडल ने बकाया राशि के भुगतान की घोषणा की, तो यह मान लिया गया कि गांधीजी के हस्तक्षेप और उपवास के दबाव में

पाकिस्तान को यह पैसा दिया गया था - और यह बात आज तक मानी जाती है। वास्तव में, मंत्रिमंडल का निर्णय उपवास के पहले दिन लिया गया था, और इसके सार्वजनिक होने के बाद भी उपवास चार दिनों तक जारी रहा।
गांधी के प्रति इस आक्रोश को आरएसएस और हिंदू महासभा ने हवा दी, जिन्होंने पीड़ित शरणार्थियों के बीच अभियान चलाकर कहा कि गांधी ही उनकी दुर्दशा के लिए जिम्मेदार हैं। कांग्रेस के कई सदस्यों के मन में भी यही भावनाएँ दबी हुई थीं। कई मौकों पर गांधी ने कांग्रेस के प्रमुख नेताओं द्वारा सार्वजनिक रूप से की गई सांप्रदायिक टिप्पणियों की आलोचना की थी। प्यारेलाल ने अपनी पुस्तक महात्मा: द लास्ट फेज, खंड 10 भाग II में लिखा है: 'गांधीजी भारत में अल्पसंख्यकों के साथ लगातार हो रहे दुर्व्यवहार से पनप रहे सांप्रदायिकता-विरोधी माहौल को लेकर बढ़ती बेचैनी और चिंता से भर गए थे। इसके कुछ भयावह लक्षण पहले ही दिखने लगे थे। एक प्रांतीय कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष ने सार्वजनिक भाषण में कथित तौर पर कहा था कि अगर पाकिस्तान में हिंदुओं को कोई नुकसान पहुँचाया गया तो कांग्रेस "15 अगस्त के बाद" भारत में प्रतिशोध लेगी।' गांधीजी ने तुरंत उन्हें पत्र लिखा: "आप आँख के बदले आँख और दाँत के बदले दाँत का सिद्धांत बता रहे हैं। केवल आप ही 15 अगस्त तक प्रतीक्षा करेंगे। क्या कांग्रेस की नीति बदल गई है? मुझे पता है कि कांग्रेसी बदल गए हैं, लेकिन मुझे कांग्रेस के संविधान में किसी बदलाव की जानकारी नहीं है। दूसरे, यदि कांग्रेस की नीति या व्यवहार में कोई बदलाव आया है, तो आपको 15 अगस्त तक प्रतीक्षा करने के लिए कौन बाध्य कर रहा है? इस बीच भारत और पाकिस्तान के लोगों को जो अपूरणीय क्षति होगी, उसके लिए कौन जिम्मेदार होगा? यदि लोग

हिंसक हो जाते हैं और प्रतिशोध का रास्ता अपनाते हैं, तो उन्हें कौन नियंत्रित कर सकता है?"
प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस के दंगों ने पंजाब और बंगाल की हिंदू आबादी में दहशत फैला दी थी और कांग्रेस नेताओं के मन में इसके दोबारा होने का डर पैदा कर दिया था। अपनी एक विचित्र मांग में जिन्ना ने न केवल पंजाब और बंगाल, बल्कि उत्तरी भारत के बीच से गुजरने वाले 1,000 मील लंबे गलियारे की भी मांग की थी जो दोनों पाकिस्तानों को जोड़ता। आरएसएस और हिंदू महासभा ने इनमें से किसी भी मांग की सार्वजनिक रूप से निंदा नहीं की। वे मुस्लिम मातृभूमि के निर्माण से खुश थे, क्योंकि तब वे हिंदुस्तान से मुसलमानों को निकालने के लिए आंदोलन शुरू कर सकते थे। लेकिन जब विभाजन वास्तव में हुआ, तो दोनों संगठन हिंदुस्तान से मुसलमानों को हटाने की अपनी योजना में विफल रहे। वे उस एक व्यक्ति को कभी नहीं भूले जो उनके और जातीय रूप से शुद्ध हिंदुस्तान के उनके सपने के बीच खड़ा था - गांधी जी। यहां तक कि उनकी हत्या में सफल होने के बाद भी, वे उनकी स्मृति को मिटा नहीं सके और उनके खिलाफ नफरत का अभियान जारी रखा।
जब नाथूराम ने गोली चलाई, तो उन्होंने न केवल वह उपलब्धि हासिल की जो उन्होंने पहले कई बार कोशिश की थी और असफल रहे थे, बल्कि उन्होंने गांधी के अब अलग हो चुके राजनीतिक उत्तराधिकारियों पर भी बहुत बड़ा उपकार किया। एक शहीद महात्मा के साथ रहना अब कहीं अधिक आसान हो गया था। अब वे उनके नाम और भारत की अधिकांश जनता के दिलों में उनके विशेष स्थान का लाभ अपनी इच्छानुसार उठा सकते थे, बिना उनकी दखलंदाजी और 'अव्यावहारिक' विचारधाराओं को सहन किए। हालांकि, गांधी ने एक बार कहा था, 'यदि मेरा विश्वास प्रज्वलित रहे, जैसा कि मुझे आशा है कि ऐसा होगा, भले ही मैं

□□□□□ □□□□ □□□□, □□ □□□ □□□□ □□□ □□□□□ □□□□□□, □□ □□□□ □□ □□□□□, □□□□ □□ □□□□□□□□'

————————————

* □□□ □□ □□□□ □□ □□□□□ □□ □□□□□□□□ □□□□□ □□ □□□ □□ □□ □□□□ □□□□ □□□

असफल प्रयास

ईश्वर की कृपा से मैं सात बार मौत के मुंह से बच चुका हूँ। मैंने कभी किसी को चोट नहीं पहुँचाई। मैं किसी को अपना दुश्मन नहीं मानता, इसलिए मेरी समझ से परे है कि मुझ पर इतने जानलेवा हमले क्यों हुए हैं। कल मुझ पर हुआ हमला नाकाम रहा। मैं अभी मरने के लिए तैयार नहीं हूँ। मैं 125 साल तक जीवित रहूँगा।
– महात्मा गांधी, 30 जून 1946 को,
पुणे में, जानलेवा हमले की असफल कोशिश के बाद
लेकिन आपको इतनी लंबी जिंदगी जीने की इजाजत कौन देगा?
- नाथूराम विनायक गोडसे का मज़ाकिया जवाब,
उसका भावी हत्यारा

गांधी जी पर हुए सात हमलों में से पांच अच्छी तरह से दस्तावेजीकृत हैं और इनमें हिंदू महासभा की पुणे शाखा शामिल है; इनमें से तीन हमले इस ओर इशारा करते हैं।
विशेष रूप से नारायण आप्टे और नाथूराम गोडसे* की संलिप्तता पर ध्यान केंद्रित किया गया है। इनमें से अंतिम घटना 20 जून 1948 को एक प्रार्थना सभा में बम विस्फोट थी। इसी हमले के दौरान मदनलाल पाहवा को गिरफ्तार किया गया था। गांधी जी पर हुए इस अंतिम असफल हमले और उनकी हत्या का विवरण यहाँ नहीं दिया गया है, क्योंकि इसका विस्तृत वर्णन पिछले अध्याय में किया जा चुका है। इस अध्याय का उद्देश्य पिछले असफल हमलों का विश्लेषण करना और गांधी विरोधी अभियान के जारी रहने के कारणों को समझना है। गोडसे और आप्टे, हिंदू महासभा और उसके सहयोगी आरएसएस ने हमेशा दावा किया है कि गांधी की हत्या इसलिए की गई क्योंकि वे

मुसलमानों के प्रति पक्षपाती थे; क्योंकि वे भारत के विभाजन के लिए जिम्मेदार थे; और क्योंकि उन्होंने भारत सरकार को पाकिस्तान को 55 करोड़ रुपये देने के लिए मजबूर किया था। हालांकि, उनकी जान पर पहले हुए सभी हमले उस समय हुए थे जब गांधी पर मुसलमानों के प्रति पक्षपात का कोई आरोप नहीं लगा था, देश का विभाजन होना बाकी था, और इसलिए पाकिस्तान को कुछ भी देने का सवाल ही नहीं उठता था। फिर भी हिंदू महासभा और गोडसे-आप्टे गिरोह ने उन्हें अपना निशाना बनाया। क्या गांधी का छुआछीटी उन्मूलन अभियान ही हिंदू वर्चस्ववादियों को आहत करने वाला था? पहला प्रयास—पुणे में बम फेंका गया
25 जून 1934, पुणे:
25 जून 1934 को गांधी जी हरिजन यात्रा में भाग लेने के लिए पुणे में थे। उन्हें नगर निगम सभागार में भाषण देना था और नगर परिषद से पुरस्कार प्राप्त करना था। इस घटना के कई संस्करण प्रचलित हैं। श्रीपाद जोशी ने अपनी पुस्तक 'महात्मा, मेरे बापू' में प्रत्यक्षदर्शी विवरण दर्ज किया है। नीचे चौथे अध्याय 'मृत्यु के जबड़े से' का एक अंश दिया गया है। अन्य दर्ज संस्करणों में कुछ मामूली अंतर हैं, जिनका वर्णन किया गया है।
'मनुष्यों की तरह, कस्बों और शहरों की भी अपनी विशिष्टताएँ, गुण-दोष और विशेषताएँ होती हैं। कुछ मुख्य रूप से व्यापारिक शहर हैं, कुछ अपने जुझारू स्वभाव के लिए जाने जाते हैं और कुछ विद्या में रुचि के लिए। पुणे भी इसका अपवाद नहीं है। इसे विद्या का केंद्र माना जाता है। पुणे ने महाराष्ट्र में राष्ट्रीय भावना और सुधारवादी आंदोलनों को जन्म देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। साथ ही, इनके समानांतर, पुणे में प्रगतिशील विचारों और कार्यों के विरुद्ध प्रतिक्रियावादी

विचारधारा की एक प्रबल धारा भी बहती रही है, ठीक चंदन के जंगल में छिपे सर्प की तरह। पुणे ने ही गांधीजी और उनके विचारों का सबसे कड़ा विरोध किया था। शायद पुणे को डर था कि लोकमान्य तिलक द्वारा भारत को सौंपी गई नेतृत्व क्षमता को गांधीजी छीन लेंगे।'
लेकिन ऐसा लगता है कि गांधीजी को पुणे से एक अजीब सा लगाव था। संभव है कि वे पुणे से गुप्त रूप से मोहित थे, जिसे राणाडे, फुले, गोखले, तिलक, अगरकर, शिंदे, करवे आदि जैसे समाज सुधारकों, कार्यकर्ताओं और देशभक्तों ने पवित्र बना दिया था। वे पुणे के कई स्थानों पर रुके थे और उन्होंने कई महत्वपूर्ण निर्णय लिए थे, जैसे यरवदा जेल, आगा खान पैलेस, डॉ. दिनशॉ का प्राकृतिक चिकित्सा क्लिनिक और पंचगनी। मुझे आश्चर्य होता है कि क्या उन्हें पता था कि पुणे ही उन्हें शहीद बनाने वाला था!
30 जनवरी, 1948 को एक पुणे निवासी ने राष्ट्रपिता की हत्या कर दी और विश्व के क्रोध और घृणा का केंद्र बन गया। इससे उसकी आत्मा को क्या शांति मिल सकती है!
लेकिन यह सम्मान प्राप्त करने से पहले भी, पुणे ने 25 जून, 1934 को इसी तरह का एक प्रयास किया था। भारतीय आतंकवादियों (क्रांतिकारियों) ने किसी ब्रिटिश गणमान्य व्यक्ति के सम्मान में आयोजित एक स्वागत समारोह में उपस्थित लोगों पर बम फेंकने का प्रयास किया था और अक्सर लोगों की प्रशंसा प्राप्त की थी क्योंकि उन मामलों में उन्होंने जनता की भावनाओं को प्रतिबिंबित किया था। लेकिन पुणे नगर पालिका भवन में गांधीजी पर बम फेंकने वाले अज्ञात व्यक्ति को कभी भी इस तरह सम्मानित नहीं किया गया... आज भी मुझे उस बम का भयानक विस्फोट याद है।

25 जून, 1934। पुणे के नागरिकों के जीवन की एक अविस्मरणीय संध्या। गांधीजी छुआछीटी के राक्षस को हमेशा के लिए मिटाने के उद्देश्य से किए गए अखिल भारतीय दौरे के दौरान पुणे आए थे। सरकार की असहमति के बावजूद, पुणे नगरपालिका ने इस महान मिशन के लिए नागरिकों की ओर से उन्हें सम्मानित करने का निर्णय लिया था।
पुणे नगर पालिका भवन खचाखच भरा हुआ था और भीड़ बाहर सड़कों तक फैल गई थी। हमारा बॉय स्काउट बैंड भवन की पहली मंजिल पर दक्षिणी बालकनी में उनके आने का इंतजार कर रहा था। मैं उस बैंड में बांसुरी वादक था। उन दिनों हमारे बॉय स्काउट बैंड को बहुत संरक्षण प्राप्त था। शादियों आदि जैसे समारोहों में बजाने के लिए बुलाए जाने पर हमें थोड़ी शर्मिंदगी महसूस होती थी, लेकिन नगर पालिका में होने वाले समारोह जैसे कार्यक्रमों में बुलाए जाने पर हमें खुशी होती थी। हम खुश थे कि हम गांधीजी के स्वागत समारोह में भाग ले रहे थे और उस दिन उन्हें देख पाएंगे... थोड़ी देर बाद बाहर से भीड़ की आवाजें सुनाई दीं, "गांधीजी आ गए हैं", "महात्माजी आ गए हैं", "वह उनकी गाड़ी है" आदि, और हमने भी एक धुन बजानी शुरू कर दी। एक कार बालकनी के नीचे रुकी। हमने सोचा कि गांधीजी उतरेंगे और हम सभी उन्हें देख पाएंगे। मैं बांसुरी बजाते हुए बालकनी से नीचे झुक गया। अचानक... एक कान फाड़ देने वाला शोर सुनाई दिया जिसने बैंड के संगीत को दबा दिया। घबराकर हम सबने एक-दूसरे की ओर देखा। हम समझ नहीं पा रहे थे कि क्या हुआ है, लेकिन हमें लगा कि कुछ बुरा हुआ है। फिर भी, हम खेलते रहे। कुछ देर बाद हमें बताया गया कि गांधीजी नहीं, बल्कि अन्नासाहेब भोपटकर आए थे।

कुछ देर बाद गांधीजी आए और हमने उनकी दुर्बल आकृति देखी। कार्यक्रम बिना किसी बाधा के संपन्न हुआ। उनके जाने के बाद, हम प्रस्थान के लिए अपना सामान इकट्ठा करने लगे, तभी सी.आई.डी. ने हमें घेर लिया। हमारी पूरी तरह से तलाशी ली गई। लेकिन असली अपराधी तब तक भाग चुका था। सरकार ने उसकी गिरफ्तारी के लिए एक बड़ा इनाम घोषित किया, लेकिन वह कभी नहीं मिला। परिणामस्वरूप, यह कभी पता नहीं चल पाया कि आतंकवादी गांधीजी की लोकप्रियता से ईर्ष्या करने वाला कोई विरोधी था या कोई कट्टरपंथी हिंदू था जो यह मानता था कि छुआछीटी के उन्मूलन से उसका धर्म नष्ट हो जाएगा। गांधीजी की जीवनी में इस घटना का वर्णन करते हुए आचार्य शंकर दत्तात्रेय जावडेकर कहते हैं: 'जब गांधीजी भाषण सुनने जा रहे थे, तो अछूतों के हित में उनकी निष्ठा से क्रोधित एक कट्टरपंथी हिंदू ने उन पर बम फेंका। सौभाग्य से बम निशाने से चूक गया और गांधीजी बाल-बाल बच गए। पुलिस उस आतंकवादी को पकड़ने में असमर्थ रही... धर्म की रक्षा और सही आचरण गांधीजी के शाश्वत धर्म का सार था। लेकिन स्वयं को शाश्वत हिंदू धर्म का सच्चा अनुयायी कहने वालों में से कुछ ने सोचा कि इसे केवल गांधीजी की हत्या के माध्यम से ही बचाया जा सकता है। जब इस मूर्खतापूर्ण और दुष्ट रूढ़िवादिता को राजनीति का रंग दिया गया, तो उग्र हिंदू राष्ट्रवाद का जन्म हुआ जिसने आतंकवादी षड्यंत्रों का सहारा लिया। अंत में, इस विकृत हिंदू आतंकवाद के एक अंध अनुयायी ने गांधीजी की हत्या कर दी। लेकिन गांधीजी भारत को स्वतंत्रता दिलाने का अपना मिशन पहले ही पूरा कर चुके थे।'
यह एक विचित्र संयोग था कि बम अन्नासाहेब भोपटकर की कार पर फेंका गया, जो गांधी जी के कट्टर विरोधी के रूप में कुख्यात थे। भोपटकर कांच के टुकड़ों से मामूली रूप से घायल हो गए, लेकिन

उनका साहस और आत्मसंयम ऐसा था कि वे चोटों की परवाह किए बिना वापस अपनी सीट पर बैठ गए। यह सब इतनी अचानक हुआ कि केवल पुलिस और कुछ अन्य लोगों को ही इसकी जानकारी थी। गांधी जी को भी कार्यक्रम समाप्त होने के बाद ही इसकी सूचना मिली। इस घटना से उन्हें कितना दुख हुआ, यह उनके द्वारा घटना के बारे में दिए गए बयान से स्पष्ट था।
गांधी ने कहा, “मुझे विश्वास नहीं होता कि कोई भी समझदार सनातनवादी हिंदू आज शाम को घटी इस विकराल घटना को बढ़ावा दे सकता है। हालांकि, मैं सनातनवादियों से निवेदन करता हूं कि वे अपने नाम से बोलने का दावा करने वाले वक्ताओं और लेखकों द्वारा इस्तेमाल की जा रही भाषा पर नियंत्रण रखें। इस दुखद घटना ने निस्संदेह हरिजन आंदोलन को आगे बढ़ाया है। यह देखना आसान है कि किसी आंदोलन को सफल बनाने के लिए उसके समर्थकों की शहादत ही क्यों ज़रूरी है। मैं शहादत की लालसा नहीं रखता, लेकिन अगर लाखों हिंदुओं के साथ अपने साझा धर्म की रक्षा के अपने सर्वोच्च कर्तव्य का पालन करते हुए मुझे शहादत मिलती है, तो मैं इसे पूरी तरह से अर्जित कर लूंगा और भविष्य का इतिहासकार कह सकेगा कि मैंने हरिजनों के सामने जो प्रतिज्ञा ली थी कि यदि आवश्यक हुआ तो मैं छुआछीपी को मिटाने के प्रयास में अपनी जान दे दूंगा, वह अक्षरशः पूरी हुई।” जो लोग इस सांसारिक जीवन में मेरे बचे-खुचे हिस्से से ईर्ष्या करते हैं, उन्हें पता होना चाहिए कि मेरे शरीर को नष्ट करना सबसे आसान काम है... अगर बम मुझ पर और मेरे साथियों पर गिरा होता, जिनमें मेरी पत्नी और तीन बेटियाँ शामिल थीं, जो मुझे बेटियों के समान प्रिय हैं और जिन्हें उनके माता-पिता ने मेरे हवाले किया है, तो दुनिया क्या कहती? ... मुझे उस अज्ञात बम फेंकने वाले के लिए गहरी दया आती है। अगर मेरा बस

चलता, और अगर बम फेंकने वाला ज्ञात होता, तो मैं निश्चित रूप से उसे रिहा करने की मांग करता, जैसा मैंने दक्षिण अफ्रीका में उन लोगों के मामले में किया था जिन्होंने मुझ पर सफलतापूर्वक हमला किया था। सुधारकों को बम फेंकने वाले या उसके पीछे के लोगों के प्रति क्रोधित नहीं होना चाहिए। मैं उनसे यही चाहता हूँ कि वे देश को छुआछीटी की घातक बुराई से मुक्त करने के लिए अपने प्रयासों को दोगुना करें।
एक विवरण, जो ऊपर वर्णित विवरण से थोड़ा भिन्न है, कहता है कि हथगोला उस कार के बोनट से टकराकर उछला जिसमें गांधी जी यात्रा कर रहे थे और कुछ दूर लुढ़कने के बाद फट गया, जिससे कुछ अधिकारी घायल हो गए। एक अन्य विवरण के अनुसार, गांधी जी और उनके दल को कार्यक्रम स्थल तक लाने के लिए दो कारें थीं। एक रेलवे क्रॉसिंग पर वे अलग हो गईं, इसलिए गांधी जी को लाने वाली कार पहली कार से एक मिनट बाद कार्यक्रम स्थल पर पहुंची। जब पहली कार पहुंची, तो यह मान लिया गया कि गांधी जी उसमें हैं; बैंड बजने लगा और स्वागत समिति कार की ओर दौड़ी। हमलावर ने यह मानकर कि उसका शिकार आ गया है, छत पर बैठे-बैठे ग्रेनेड फेंक दिया। हथगोला कार के बोनट पर गिरा और सड़क के बीचोंबीच लुढ़कते हुए फट गया। गांधी जी जिस कार में यात्रा कर रहे थे, वह विस्फोट के कुछ ही सेकंड बाद कार्यक्रम स्थल पर पहुंची। गांधी जी ने नुकसान देखा, लेकिन कार्यक्रम जारी रखने का फैसला किया।
एक अन्य संस्करण के अनुसार, कई लोगों के घायल होने का दावा किया गया है: नगर निगम के मुख्य अधिकारी, दो पुलिसकर्मी और सात अन्य लोग।
जैसा कि प्यारेलाल ने अपनी पुस्तक में और गांधी के जीवनीकार बी.जी. तेंदुलकर ने उल्लेख किया है, बम कथित तौर पर गांधी-विरोधी

हिंदू चरमपंथियों द्वारा फेंका गया था। प्यारेलाल लिखते हैं: 'इस बार उनका प्रयास बहुत सुनियोजित और पूरी तरह से अंजाम दिया गया था...' इससे यह संकेत मिलता है कि गांधी के जीवन पर पहले भी हमले हुए थे और पिछले हमलों के लिए जिम्मेदार लोग इस हमले में भी शामिल थे। प्यारेलाल की टिप्पणी से यह भी पता चलता है कि 25 जून 1934 से पहले के प्रयास योजना और समन्वय की कमी के कारण विफल रहे और हत्यारे हर बार बेहतर होते जा रहे थे।
प्यारेलाल लिखते हैं: 'ये लोग गांधी, नेहरू और अन्य कांग्रेस नेताओं की तस्वीरें अपने जूतों में रखते थे। उन्हें गांधीजी की तस्वीर को निशाना बनाकर गोली चलाने का प्रशिक्षण दिया गया था। ये वही लोग थे जिन्होंने बाद में महात्मा गांधी की हत्या कर दी, जब वे 1948 में दंगों से तबाह दिल्ली में शांति स्थापित करने का प्रयास कर रहे थे।'
हमलावर भाग निकले और हैरानी की बात यह है कि इस मामले में किसी भी जांच या गिरफ्तारी का कोई रिकॉर्ड नहीं है। शायद इसका कारण यह था कि चोटें मामूली थीं और पुलिस ने गहन जांच शुरू करना जरूरी नहीं समझा।
भारत में गांधी जी पर हुए पहले दस्तावेजी हमले में से यह एक था। कई इतिहासकारों का मानना है कि यह हमला नाथूराम गोडसे-नारायण आप्टे गिरोह का हो सकता है। यह गिरोह हिंदुत्व और उच्च जातियों के वर्चस्व की आलोचना करने वालों पर कई अन्य बम हमलों में भी शामिल था। यह वह दौर था जब हिंदू महासभा बेहद सक्रिय थी और सावरकर ने भारत का दौरा कर हिंदू वर्चस्व का अपना सिद्धांत और मुस्लिम विरोधी बयानबाजी फैलाई थी।
गांधी जी द्वारा हरिजन समुदाय को आत्मसात करने के अभियान और हरिजनों को मंदिरों में प्रवेश दिलाने के उनके संघर्ष के बाद

से ही सनातनी हिंदू उनसे नाराज थे। उन्होंने देश भर में गांधी जी के खिलाफ प्रदर्शन किए।
दूसरा प्रयास- नाथूराम ने पंचगनी में गांधी पर हमला किया जुलाई 1944, पंचगनी:
मई 1944 में आगा खान पैलेस जेल शिविर से रिहा होने के बाद, गांधी जी मलेरिया से पीड़ित हो गए और उनके चिकित्सक ने उन्हें आराम करने की सलाह दी। वे पुणे के पास स्थित एक पहाड़ी रिसॉर्ट पंचगनी चले गए, जहाँ वे दिलखुश बंगले में ठहरे। अठारह-बीस लोगों का एक समूह पुणे से एक किराए की बस से पंचगनी पहुँचा और गांधी जी के खिलाफ दिन भर का विरोध प्रदर्शन किया। जब गांधी जी को इसकी जानकारी मिली, तो उन्होंने समूह के नेता नाथूराम विनायक गोडसे को बातचीत के लिए आमंत्रित किया। नाथूराम ने निमंत्रण अस्वीकार कर दिया और प्रदर्शन जारी रखा।
उस शाम की प्रार्थना सभा के दौरान, नेहरू शर्ट, पायजामा और जैकेट पहने नाथूराम गोडसे गांधी जी की ओर दौड़ा। उसके हाथ में खंजर था और वह गांधी विरोधी नारे लगा रहा था। पूना के सुरती लॉज के मालिक मनीषंकर पुरोहित और सतारा के डी. भिलारे गुरुजी (जो बाद में महाबलेश्वर से कांग्रेस के विधायक बने) ने गोडसे को काबू में कर लिया। गोडसे के साथ आए अन्य युवक भाग गए। गोडसे के हमले से प्रार्थना सभा में थोड़ी अफरा-तफरी मच गई, लेकिन गांधी जी शांत रहे। उन्होंने गोडसे से आठ दिन उनके साथ बिताने का अनुरोध किया ताकि वे उनका दृष्टिकोण समझ सकें। गोडसे ने यह निमंत्रण ठुकरा दिया और उदार गांधी जी ने उसे जाने दिया। पुणे छोड़ने से पहले, गोडसे ने अपने पत्रकार मित्रों से शेखी बघारी थी कि पंचगनी से गांधीजी से जुड़ी कोई महत्वपूर्ण खबर जल्द ही उन तक पहुंचेगी। गोडसे की पत्रिका अग्रानी में काम

करने वाले पत्रकार जोगलेकर ने इस बात की पुष्टि की। पूना हेराल्ड के तत्कालीन संपादक ए. डेविड ने गांधीजी की हत्या के षड्यंत्र की जांच के लिए साठ के दशक के उत्तरार्ध में गठित कपूर आयोग के समक्ष शपथपूर्वक बयान दिया कि गोडसे ने गांधीजी पर जानलेवा हमला करने का प्रयास किया था और उन्होंने साथी पत्रकारों से इस नियोजित हमले के बारे में गोडसे की शेखी के बारे में भी सुना था। टाइम्स ऑफ इंडिया ने एक छोटी सी खबर में प्रकाशित किया कि पुणे स्थित एक संपादक ने गांधीजी पर हमला करने का प्रयास किया था।
पुलिस रिकॉर्ड से पता चलता है कि पंचगनी में गांधी जी के खिलाफ दिनभर प्रदर्शन हुए थे। रिकॉर्ड में यह भी उल्लेख है कि गांधी जी पर नारे लगाते हुए हमला करने की कोशिश करने के आरोप में गोडसे को गिरफ्तार किया गया था, लेकिन यह स्पष्ट नहीं है कि उसके पास हथियार थे या नहीं। गांधी जी की चिकित्सक और करीबी सहयोगी डॉ. सुशीला नायर ने कपूर आयोग के समक्ष गवाही दी कि प्रदर्शनकारियों में से एक के पास चाकू मिला था, लेकिन वह इस बात की पुष्टि नहीं कर सकीं कि वह नाथूराम गोडसे ही था। हालांकि, गोडसे को काबू करने वाले दो व्यक्ति - मनीषंकर पुरोहित और डी. भिलारे गुरुजी - ने कपूर आयोग के समक्ष इस हमले की गवाही दी और बताया कि उन्होंने उसी दिन पंचगनी में नाथूराम विनायक गोडसे को पकड़ा और उससे हथियार छीन लिए थे।
मुझे 13 जनवरी 2007 को सांगली में भिल्लारे गुरुजी से मिलने का अवसर मिला। वे लगभग अस्सी वर्ष के हैं, अत्यंत बलवान और सक्रिय हैं, और उनकी स्मृति अत्यंत तीव्र है। उनसे 63 वर्ष पूर्व उस दुर्भाग्यपूर्ण दिन की घटनाओं का वर्णन करने को कहा गया, तो भिल्लारे ने दृढ़तापूर्वक कहा कि नाथूराम गोडसे ने गांधीजी पर

हमला करने का प्रयास किया था। भिल्लारे के अनुसार, नाथूराम एक खंजिया लहरा रहा था। भिल्लारे ने बताया कि कैसे उन्होंने मनीषंकर पुरोहित की सहायता से नाथूराम को रोका और उसे निहत्था किया। उन्होंने बताया कि जब उन्होंने नाथूराम को पकड़कर जमीन पर गिरा दिया, तो गांधीजी ने उन्हें पुकारा और हमलावर के साथ दुर्व्यवहार न करने का निर्देश दिया। वे चाहते थे कि वे नाथूराम को उनके पास लाएँ ताकि वे बातचीत कर सकें। भिल्लारे ने यह भी बताया कि विष्णु करकरे, थाट्टे, बैज और गोपाल गोडसे भी उस समूह में मौजूद थे जो गांधीजी विरोधी प्रदर्शन करने के लिए पुणे से आया था। ये सभी लोग चार साल बाद गांधी की हत्या में शामिल थे।
तीसरा प्रयास—सेवाग्राम में जान को खतरा; गोडसे की संलिप्तता सितंबर 1944, सेवाग्राम:
1944 में गांधी जी जिन्ना से बातचीत करने की तैयारी कर रहे थे, लेकिन हिंदू महासभा और आरएसएस इसके खिलाफ थे। नाथूराम गोडसे और एल.जी. थाट्टे ने दोनों की मुलाकात रोकने का संकल्प लिया। उन्होंने सार्वजनिक रूप से धमकी दी कि अपने उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए वे हर संभव प्रयास करेंगे। गांधी जी ने 9 सितंबर 1944 को बंबई में जिन्ना से बातचीत शुरू की। यह बातचीत अठारह दिनों तक चली और निष्फल सिद्ध हुई। लेकिन गांधी जी ने अपना सर्वश्रेष्ठ प्रयास किया था और हठी जिन्ना को मनाने के अपने प्रयास में पूरी ईमानदारी बरती थी।
गांधीजी वार्ता के लिए सेवाग्राम से बंबई गए थे। गोडसे और थाट्टे ने गांधीजी को रोकने के लिए अपने गिरोह का नेतृत्व किया और बंगाल से कुछ और लोग भी उनके साथ शामिल हो गए। गिरोह ने सेवाग्राम आश्रम के मुख्य द्वार पर धरना दिया ताकि गांधीजी

बंबई के लिए रवाना न हो सकें। डॉ. सुशीला नायर ने कपूर आयोग के समक्ष गवाही दी कि जब नाथूराम गोडसे ने गांधीजी तक पहुंचने की कोशिश की तो आश्रमवासियों ने उसे रोककर हिरासत में ले लिया और उसके पास से एक 'जंबिया' (छुरा) बरामद हुआ। हमले की पुलिस रिपोर्ट भी इस तथ्य की पुष्टि करती है। रिपोर्ट में आगे कहा गया है: 'यह निश्चित नहीं था कि उनका इरादा गांधीजी को नुकसान पहुंचाना था, लेकिन वे हथियारबंद थे और किसी भी कीमत पर उन्हें जिन्ना से मिलने से रोकने के लिए दृढ़ थे।'
प्यारेलाल ने तेज बहादुर सप्रू को लिखे पत्र में कहा: 'सेवाग्राम में प्रदर्शनकारियों का नेता, जो बेहद कट्टर और उग्र था, गांधीजी को जिन्ना से मिलने से रोकने के लिए किसी भी हद तक जाने को तैयार था। गिरफ्तार करने वाले अधिकारी ने, जिसने दल के नेता से खंजर बरामद किया, उससे उपहासपूर्वक पूछा कि क्या वह शहीद होना चाहता है। नेता ने उत्तर दिया कि जब अंततः गांधीजी की हत्या होगी, तो उनमें से कोई एक शहीद होगा। अधिकारी ने फिर पूछा कि वे अपने नेताओं और गांधीजी के बीच इस लड़ाई में अपना समय और जान क्यों बर्बाद कर रहे हैं। अगर गांधीजी को रोकना ही था, तो उन्होंने यह काम अपने नेता सावरकर पर क्यों नहीं छोड़ दिया? दल के नेता ने उत्तर दिया, "अगर सावरकर गांधीजी से बात करते हैं, तो यह गांधीजी के लिए सम्मान की बात होगी। सावरकर के गांधीजी से बात करने का समय कभी नहीं आएगा। गांधीजी से ये जमादार निपटेंगे।"' प्यारेलाल ने लिखा कि दल के नेता द्वारा इंगित व्यक्ति नाथूराम गोडसे था।
गिरोह के अन्य सदस्यों के बारे में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है।
चौथा प्रयास—पुणे जा रही ट्रेन में तोड़फोड़ की गई

29 जून 1946, ट्रेन से पुणे जाते हुए:
29 जून की रात को, गांधी जी को ले जा रही ट्रेन (जिसे 'गांधी स्पेशल' के नाम से जाना जाता है) पुणे जाते समय नेरुल और कर्जत स्टेशनों के बीच दुर्घटनाग्रस्त हो गई। इंजन चालक ने अपनी रिपोर्ट में दावा किया कि उसने ट्रेन को पटरी से उतारने के इरादे से पटरियों के आगे पत्थर रखे हुए देखे। ट्रेन पत्थरों से टकरा गई, लेकिन इंजन चालक की सतर्कता और आपातकालीन ब्रेक लगाने के कारण एक बड़ा हादसा टल गया, जिससे टक्कर से पहले ही ट्रेन की गति धीमी हो गई। हालांकि, इंजन के पहिए और धुरी बुरी तरह क्षतिग्रस्त हो गए। दूसरा इंजन भेजा गया और 'गांधी स्पेशल' को पुणे ले जाया गया। गांधी जी पूरी घटना के दौरान सोते रहे। पुणे पुलिस का दावा था कि मालगाड़ियों को रोकने के लिए लुटेरों ने पत्थर रखे थे। लेकिन रेलवे रिकॉर्ड से पता चला कि उस दिन गांधी जी को पुणे ले जा रही 'गांधी स्पेशल' ट्रेन से पहले या बाद वाले खंड पर ऐसी कोई ट्रेन नहीं थी। पुलिस ने तोड़फोड़ की संभावना से इनकार नहीं किया है, और चूंकि उस समय उस मार्ग पर 'गांधी स्पेशल' एकमात्र ट्रेन थी, इसलिए संभवतः वही निशाना बनी थी।
30 जून को पुणे में आयोजित प्रार्थना सभा में गांधीजी ने कहा, 'ईश्वर की कृपा से मैं सात बार मृत्यु के मुंह से बच चुका हूं। मैंने किसी को कोई हानि नहीं पहुंचाई है और न ही मैं किसी को अपना शत्रु मानता हूं। मुझे समझ नहीं आता कि मुझ पर इतने जानलेवा हमले क्यों होते हैं। कल मुझ पर हुआ हमला नाकाम रहा। मैं अभी नहीं मरूंगा, मेरा लक्ष्य 125 वर्ष की आयु तक जीना है।' 'लेकिन तुम्हें इतनी लंबी जिंदगी जीने कौन देगा?' यह नाथूराम गोडसे का व्यंग्यात्मक जवाब था। गांधीजी की हत्या के बाद, कुछ

लोगों ने, जो उस प्रार्थना सभा में मौजूद होने का दावा करते थे, इस बात का जिक्र किया। इस खुलासे ने अंततः सरकार को कपूर जांच आयोग नियुक्त करने के लिए विवश कर दिया। 20 जनवरी 1948 को, गांधीजी जहां शाम की प्रार्थना सभा कर रहे थे, उससे कुछ मीटर पीछे एक बम फटा। मदनलाल पाहवा को घटनास्थल से गिरफ्तार किया गया। अपने कबूलनामे के अनुसार, बम विस्फोट गांधीजी की हत्या के प्रयास का हिस्सा था। मदनलाल ने पुलिस को इस प्रयास के पीछे के लोगों का विवरण दिया और कहा, 'वो फिर आएगा'।
30 जनवरी 1948 को, शाम 5.17 बजे, अंतिम असफल प्रयास के दस दिन बाद, नाथूराम गोडसे गांधी के पास गया, एक स्वचालित पिस्तौल निकाली और तीन फीट की दूरी से उनकी छाती में तीन गोलियां दाग दीं।
अंततः गोडसे महात्मा गांधी की हत्या करने में सफल हो गया था।

— — — — — — — — —

* इसे लिखते समय मैंने प्यारेलाल की महात्मा गांधी: द लास्ट फेज और तेंदुलकर की किताबों का संदर्भ लिया है।
महात्मा और महात्म्य ची अखेर (महात्मा का अंत) स्वर्गीय जगन द्वारा मराठी में लिखी गई एक पुस्तक है।
Phadnis.
पुस्तक 2

7

पिछले वर्षों

'मेरे लोग जा रहे हैं और मुझे उनका अनुसरण करना होगा क्योंकि मैं उनका नेता हूं।'
– मार्टिन लूथर किंग

गांधी जी के जीवन के अंतिम दो वर्ष उथल-पुथल भरे थे। उनकी विजय का क्षण घोर त्रासदी में बदल गया था; उनकी प्यारी मातृभूमि का विभाजन हो रहा था। इससे भी अधिक दुखद बात यह थी कि जिन लोगों को उन्होंने औपनिवेशिक शक्ति के विरुद्ध लड़ने के लिए इतनी मेहनत से एकजुट किया था, वे अब एक-दूसरे के विरुद्ध हो रहे थे। उनके विश्वास का आधार स्तंभ—अहिंसा—अपनी सबसे कठिन परीक्षा से गुजर रहा था। गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर ने उनसे विनती की थी: 'Aekla chalo re,
अकेले चलो।'
अकेले चलो।
यदि वे तुम्हारी पुकार का उत्तर न दें, तो अकेले ही चलो;
यदि वे डरते हैं और चुपचाप दुबक कर सामना करते हैं
दीवार,
हे दुर्भाग्य के स्वामी,
अपना मन खोलो और अकेले में खुलकर बोलो।
अगर वे आपसे मुंह मोड़ लें और आपको अकेला छोड़ दें तो जंगल पार करते हुए,
हे दुर्भाग्य के स्वामी,
अपने पैरों तले कांटों को कुचल दो,
और रक्त से सने उस रास्ते पर अकेले ही यात्रा करते हैं।

यदि वे प्रकाश को नहीं रोकते हैं
जब रात तूफान से घिरी हो,
हे दुर्भाग्य के स्वामी,
दर्द की गर्जना-ज्वाला के साथ प्रज्वलित करें
तेरा अपना दिल
और इसे अकेले जलने दो
अपने जीवन के अंतिम दो वर्षों के दौरान, वफादार अनुयायियों के एक छोटे समूह के अलावा, गांधी जी अकेले ही चले।
ब्रिटिश षड्यंत्र
गांधी जी को 9 अगस्त 1942 की पूर्व संध्या पर 'भारत छोड़ो' और 'करो या मरो' के नारे लगाने के बाद हिरासत में लिए जाने के इक्कीस महीने बाद, 6 मई 1944 को उम्मीद से पहले रिहा कर दिया गया। आगा खान पैलेस में उनकी अंतिम कैद उनके लिए बेहद दर्दनाक रही थी। उन्होंने अपने दो सबसे करीबी साथियों, अपनी पत्नी कस्तूरबा और पच्चीस वर्षों तक अपने सचिव रहे महादेव देसाई को खो दिया था, जिन्हें वे बेटे की तरह प्यार करते थे। उन्होंने दोनों का अंतिम संस्कार जेल परिसर में ही किया और फिर पत्थर और मिट्टी से दो छोटे स्मारक बनवाए।
जब गांधीजी को ले जा रही गाड़ी जेल शिविर के द्वार पर पहुँची, तो उन्होंने खिड़की से बाहर देखा और परिसर के एक कोने में लकड़ियों के ढेर पर उनकी एक झलक पड़ी। उनके ब्रिटिश जेलरों ने उनके अंतिम संस्कार के लिए पर्याप्त चंदन जमा कर रखा था, इस आशंका में कि जेल में ही उनकी मृत्यु हो जाएगी। उनकी अंतिम कैद के दौरान, प्रशासन ने दो बार यह मान लिया था कि वे मृत्युशय्या पर हैं। एक बार, जब उन्होंने भूख हड़ताल की, तो नजरबंदी शिविर के चारों ओर सुरक्षा दोगुनी कर दी गई थी और गांधीजी के निधन की खबर

से होने वाले किसी भी उपद्रव को दबाने के लिए पूरे ब्रिटिश राज में सशस्त्र बलों और पुलिस को हाई अलर्ट पर रखा गया था। दूसरी बार, जब वे पेचिश और मलेरिया से पीड़ित थे। इस बार विदेश कार्यालय ने अपने सभी वैश्विक कार्यालयों को इस बारे में दिशानिर्देश जारी किए कि उनकी मृत्युलेख कैसे लिखे जाने चाहिए, जिस पर विदेश सचिव एंथोनी ईडन के हस्ताक्षर थे। चुंगकिंग कार्यालय को इसकी एक प्रति तब मिली जब भारतीय विद्वान और दार्शनिक डॉ. एस. राधाकृष्णन वहाँ मौजूद थे। संदेश में दिए गए निर्देश थे: 'गांधी की मृत्यु की स्थिति में उनके नैतिक कद को कम न करें, सांसारिक आदर्शों के प्रति उनकी अटूट निष्ठा को स्वीकार करें, और इस बात पर खेद व्यक्त करें कि उनका अद्वितीय प्रभाव मित्र राष्ट्रों, विशेष रूप से चीन और भारत की सेवा में नहीं लग सका।'
गांधी जी इतनी आसानी से मरने वाले नहीं थे, खासकर तब जब उनका काम अभी अधूरा था। जब कार लेडी प्रेमलीला ठाकरे के महल परनाकुटीर की ओर बढ़ रही थी, गांधी जी कस्तूरबा और महादेवभाई के बारे में सोच रहे थे। 'वह जेल से बाहर निकलने के लिए इतनी बेताब थीं। फिर भी मैं जानता हूँ कि उन्हें इससे बेहतर मृत्यु नहीं मिल सकती थी।' 'उन्होंने और महादेव दोनों ने स्वतंत्रता की वेदी पर अपने प्राणों का बलिदान दिया। वे अमर हो गए हैं।' कस्तूरबा की स्मृति में, गांधी जी ने अपनी रिहाई के दिन बंबई प्रांत की सरकार को लिखा, 'मैं यह दर्ज कराना चाहता हूँ... कि श्री महादेव देसाई और फिर मेरी पत्नी के शवों के दाह संस्कार के कारण, दाह संस्कार स्थल... पवित्र भूमि बन गया है... मुझे उम्मीद है कि सरकार इस भूमि का अधिग्रहण कर लेगी... मैं इस पवित्र स्थल के रखरखाव और दैनिक प्रार्थनाओं की व्यवस्था करना चाहता हूँ।'

जब मित्र देशों की युद्ध मशीन इंग्लिश चैनल पार करके फ्रांस के तटों पर उतरी और नाज़ी-कब्ज़े वाले यूरोप को पुनः प्राप्त करके अंततः नाज़ी युद्ध मशीन को कुचल दिया, तब अंग्रेजों ने उसे रिहा कर दिया। इसके परिणामस्वरूप यूरोप में धुरी राष्ट्रों का आत्मसमर्पण हुआ और नाज़ी एडॉल्फ हिटलर ने आत्महत्या कर ली, जिससे यूरोप में बीसवीं शताब्दी के सबसे विनाशकारी युद्धों में से एक का अंत हुआ।
जेल से रिहा होने के बाद अंग्रेजों ने गांधीजी को 1942 के उस कांग्रेसी प्रस्ताव को वापस लेने के लिए लगातार हर संभव प्रयास किया, जिसमें अंग्रेजों से भारत छोड़ने और स्वतंत्रता की घोषणा करने की मांग की गई थी। गांधीजी ने जोर देकर कहा कि यह प्रस्ताव कांग्रेस समिति (सीडब्ल्यूसी) द्वारा पारित किया गया था और केवल वही इसे वापस ले सकते हैं। कांग्रेस का पूरा नेतृत्व विभिन्न जेलों में बंद था; गांधीजी ने मांग की कि या तो उन्हें रिहा किया जाए या जेल में ही बैठक करने की अनुमति दी जाए ताकि आगे की रणनीति पर निर्णय लिया जा सके। उन्होंने वायसराय लॉर्ड वेवेल को पत्र लिखकर उनसे कहा, "यदि वे भारत के मुद्दे पर प्रगति करना चाहते हैं, तो औरंगाबाद किले की चाबियां ढूंढें," जहां लगभग पूरी सीडब्ल्यूसी को हिरासत में रखा गया था।
अपने कट्टर आलोचक, ब्रिटिश युद्धकालीन प्रधानमंत्री सर विंस्टन चर्चिल को उन्होंने पत्र लिखकर जेल में सीडब्ल्यूसी से मिलने की अनुमति मांगी। नीचे प्यारेलाल नैयर द्वारा लिखित महात्मा गांधी: द लास्ट फेज नामक पत्र का अंश दिया गया है। Dilkhusha,
पंचगनी
17 जुलाई, 1944

प्रिय प्रधानमंत्री जी,
आप मुझे 'नग्न फकीर' कहकर कुचलने की इच्छा रखते हैं, जैसा कि आपने मुझे बताया है। मैं लंबे समय से फकीर बनने का प्रयास कर रहा हूँ, और वह भी नग्न अवस्था में—यह और भी कठिन कार्य है। इसलिए, मैं इस अभिव्यक्ति को एक प्रशंसा मानता हूँ, भले ही यह अनजाने में कही गई हो। मैं इसी रूप में आपके समक्ष उपस्थित हूँ और आपसे निवेदन करता हूँ कि आप मुझ पर विश्वास करें और अपने और मेरे लोगों के हित में, और उनके माध्यम से संसार के लोगों के हित में, मेरा उपयोग करें।
आपका सच्चा मित्र,
एम.के. गांधी
चर्चिल को लिखा गया पत्र गुम हो गया। दो महीने बाद उसकी एक प्रति भेजी गई। चर्चिल ने अप्रत्यक्ष रूप से जवाब देते हुए वायसराय के कार्यालय के माध्यम से गांधीजी को उनके पत्र के लिए धन्यवाद दिया। यह स्पष्ट था कि ब्रिटिश सरकार गांधीजी या कांग्रेस की किसी भी मांग को सुनने के लिए तैयार नहीं थी। उनकी अपनी ही योजना थी। अपने जवाब में तत्कालीन वायसराय लॉर्ड वेवेल ने लिखा कि उन्हें न तो कांग्रेस समिति के सदस्यों से मिलने और विचार-विमर्श करने की अनुमति मांगने में और न ही उनके द्वारा प्रस्तावित समझौते के आधार में कोई रचनात्मक बात नजर आती है। गांधी जी ने वायसराय के रुख पर निराशा व्यक्त की और एक 'ठोस प्रस्ताव' प्रस्तुत किया: 'मैं कार्य समिति को यह सलाह देने के लिए तैयार हूं कि परिवर्तित परिस्थितियों को देखते हुए अगस्त 1942 के प्रस्ताव में परिकल्पित जन सविनय अवज्ञा आंदोलन संभव नहीं है और यदि तत्काल भारतीय स्वतंत्रता की घोषणा की जाती है और केंद्रीय विधानसभा के प्रति उत्तरदायी राष्ट्रीय सरकार का

गठन किया जाता है, तो कांग्रेस को युद्ध प्रयासों में पूर्ण सहयोग देना चाहिए, बशर्ते कि युद्ध की अवधि के दौरान सैन्य अभियान वर्तमान की तरह जारी रहें, लेकिन भारत पर कोई वित्तीय बोझ न पड़े।' यह प्रस्ताव 30 जुलाई 1944 को दिया गया था। उन्होंने अपने संदेश का समापन इस प्रकार किया: 'जब तक सम्मानजनक समझौते की थोड़ी सी भी उम्मीद है, मैं प्रयास जारी रखूंगा।' लेकिन ब्रिटिश सरकार 'सम्मानजनक समझौते' के मूड में नहीं थी। गांधी की मांग को मानने में बाधा डालने वाले 'जातीय और धार्मिक अल्पसंख्यकों और दलित वर्गों के हितों की रक्षा करने के अपने कर्तव्य और भारतीय राज्यों के प्रति अपने संधि दायित्वों' का हवाला देते हुए, और उन्हें यह याद दिलाते हुए कि सर स्टैफोर्ड क्रिप्स द्वारा युद्धविराम के बाद पूर्ण स्वतंत्रता का ब्रिटिश प्रस्ताव 'भारत के राष्ट्रीय जीवन के प्रमुख तत्वों द्वारा सहमत संविधान के निर्माण पर सशर्त' था, वेवेल ने आगे दोहराया कि 'महामहिम की सरकार की यह परम इच्छा थी कि भारत की जटिल समस्या का समाधान किया जाए'। उन्होंने निष्कर्ष निकाला, 'लेकिन आपके द्वारा प्रस्तुत किए गए ऐसे प्रस्ताव महामहिम की सरकार को चर्चा के आधार के रूप में बिल्कुल अस्वीकार्य हैं।' यह उत्तर वेवेल की ओर से था, लेकिन भाषा प्रधानमंत्री चर्चिल की थी। गांधी जी ने टिप्पणी की कि वायसराय के जवाब का अर्थ यह था कि 'जब तक सभी प्रमुख दल भावी संविधान पर सहमत नहीं हो जाते और ब्रिटिश सरकार तथा प्रमुख दलों के बीच सहमति नहीं बन जाती, तब तक संवैधानिक स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं होगा और भारत सरकार वर्तमान स्वरूप में ही चलती रहेगी... यह बात बिल्कुल स्पष्ट है कि ब्रिटिश सरकार 40 करोड़ लोगों पर अपनी सत्ता छोड़ने को तैयार नहीं है, जब तक कि वे इतनी शक्ति विकसित न कर लें कि उससे

सत्ता छीन सकें। मुझे उम्मीद है कि भारत विशुद्ध नैतिक साधनों से ऐसा करेगा।'
और इस प्रकार उन्होंने अंग्रेजों के विरुद्ध निरंतर अहिंसक प्रदर्शनों का नेतृत्व किया। उनका तरीका बहते पानी और हवा द्वारा होने वाले अपरदन पर आधारित था; यद्यपि इसमें समय लगा, लेकिन उन्होंने लगातार विशाल चट्टानों को धीरे-धीरे नष्ट किया, यहाँ तक कि पहाड़ धूल में मिल गए।
अंततः, 1945 में युद्ध समाप्त हुआ। मित्र राष्ट्र विजयी हुए, लेकिन ब्रिटिश साम्राज्य का पतन हो रहा था। उन्हें एहसास हो गया था कि दुनिया के कई हिस्सों को गुलाम बनाकर रखने का उनका नैतिक अधिकार अब खत्म हो चुका है; उन्हें धीरे-धीरे अपने साम्राज्य को छोड़ना पड़ा। भारत उनके सबसे महत्वपूर्ण उपनिवेशों में से एक था जिसे उन्हें जल्द ही छोड़ना होगा। लेकिन अंग्रेज इतनी आसानी से हार मानने वाले नहीं थे। अगर उन्हें अपने मुकुट का रत्न छोड़ना पड़ा, तो वे इसकी भारी कीमत वसूलेंगे। वे जानते थे कि जब वे जाएंगे तो उन्हें सत्ता कांग्रेस को सौंपनी होगी, जो उनकी कट्टर शत्रु थी, जिसने उनके साम्राज्य के निर्माण के लिए लड़े गए किसी भी हिंसक युद्ध में चुकाई गई कीमत से कहीं अधिक कीमत उनसे वसूली थी। स्वतंत्रता के लिए अहिंसक संघर्ष ने अंग्रेजों को शर्मिंदा कर दिया था। वे अपने सहयोगियों, जिन्ना के नेतृत्व वाली नवगठित मुस्लिम लीग और रियासतों का उपयोग भारत को इस तरह विभाजित करने के लिए करेंगे कि स्वतंत्र भारत का स्वरूप कभी गौरवशाली रहे परिधान के फटे- पुराने अवशेषों जैसा दिखेगा।
इससे पहले, भारत के मुसलमानों के स्वघोषित नेता मोहम्मद अली जिन्ना ने गोलमेज सम्मेलन के बाद भारत और स्वतंत्रता आंदोलन को

त्याग दिया था और लंदन चले गए थे, जहाँ उन्होंने प्रिवी काउंसिल में वकालत शुरू की थी। 1930 के दशक में, धनी मध्यम वर्ग और मुस्लिम समुदाय के अति-रूढ़िवादी तत्वों ने, ब्रिटिश सरकार की मौन स्वीकृति से, उन्हें भारत लौटने का निमंत्रण दिया ताकि कांग्रेस के राजनीतिक एकाधिकार के प्रतिकार के रूप में निष्क्रिय मुस्लिम लीग को पुनर्जीवित किया जा सके। सूअर का मांस खाने वाले, स्कॉच के शौकीन और लगातार धूम्रपान करने वाले जिन्ना रातोंरात मुस्लिम कट्टरपंथी बन गए, लेकिन केवल सार्वजनिक रूप से। उन्होंने अंग्रेजों के खिलाफ एकजुट मोर्चा बनाने के कांग्रेस के प्रयासों को विफल कर दिया। जब कांग्रेस ने युद्ध में शामिल होने से इनकार कर दिया और भारत छोड़ो आंदोलन शुरू किया, तो उन्होंने अंग्रेजों का साथ दिया। उनके नेतृत्व में लीग को मुश्किल से पाँच प्रतिशत मुस्लिम वोट मिले, जबकि कांग्रेस ने 1935 के चुनावों में भारी जीत हासिल की और ग्यारह में से सात प्रांतों में सत्ता संभालने का निमंत्रण प्राप्त किया। कड़वे अनुभवों से भरे जिन्ना को यह अहसास हो गया था कि कांग्रेस और उसके नेता गांधी के प्रभाव में अविभाजित भारत में वे अपने राजनीतिक लक्ष्यों को प्राप्त नहीं कर पाएंगे। हालांकि, वे युद्ध के दौरान अंग्रेजों के साथ गठबंधन करके और फिर इनाम के तौर पर एक अलग मुस्लिम राष्ट्र की मांग करके सत्ता की अपनी लालसा को पूरा कर सकते थे।
विडंबना यह है कि उनके वैचारिक प्रतिद्वंद्वी वी.डी. सावरकर ने भी हिंदुओं पर अपना प्रभाव बढ़ाने के लिए इसी तरह की रणनीति अपनाई थी।
गांधी-जिन्ना वार्ता

गांधी जी जानते थे कि भारत एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में तभी फल-फूल सकता है जब सभी धार्मिक समूह और रियासतें एकजुट होकर एक संयुक्त राष्ट्र का गठन करें। वे इसे हासिल करने के लिए किसी भी हद तक जाने को तैयार थे। उन्हें यह भी आभास था कि इस कार्य में सबसे बड़ी बाधा जिन्ना होंगे, जिन्हें अंग्रेजों का मौन समर्थन प्राप्त था। गांधी जी ने 1942 में 'भारत छोड़ो' आंदोलन के बाद अपनी गिरफ्तारी से पहले ही जिन्ना और उनकी मुस्लिम लीग दोनों का समर्थन हासिल करने के प्रयास किए थे। 4 अगस्त को गांधी जी ने अपने एक साझा मित्र मेकलाइ के माध्यम से जिन्ना और मुस्लिम लीग को एक प्रस्ताव दिया था। अंग्रेजों के खिलाफ संयुक्त मोर्चे के लिए उन्होंने ये शर्तें रखीं: 'यदि मुस्लिम लीग बिना किसी संकोच के तत्काल स्वतंत्रता की कांग्रेस की मांग का पूर्ण सहयोग करे... तो कांग्रेस को इस बात पर कोई आपत्ति नहीं होगी कि ब्रिटिश सरकार आज जो भी सत्ता अपने पास रखती है, उसे पूरे भारत की ओर से, तथाकथित "भारतीय" भारत सहित, मुस्लिम लीग को सौंप दे।' और कांग्रेस न केवल जनता की ओर से मुस्लिम लीग द्वारा गठित किसी भी सरकार में बाधा नहीं डालेगी, बल्कि स्वतंत्र राज्य के कामकाज में सरकार का सहयोग भी करेगी।' कुछ समय पहले, कांग्रेस अध्यक्ष मौलाना अबुल कलाम आजाद ने सार्वजनिक रूप से इसी तरह का प्रस्ताव रखा था। स्वतंत्र पाकिस्तान के प्रति दृढ़ संकल्पित जिन्ना ने इस प्रस्ताव को यह कहते हुए अस्वीकार कर दिया कि वे किसी सार्वजनिक बयान या मध्यस्थ के माध्यम से दिए गए बयान का जवाब नहीं दे सकते। यदि कांग्रेस बातचीत करना चाहती थी, तो उसके नेताओं को जिन्ना से आमने-सामने बात करनी होगी। गांधी जिन्ना से मिलने को तैयार थे, लेकिन चार दिन बाद अंग्रेजों ने उन्हें हिरासत में ले लिया और फिर जेल में डाल दिया।

अप्रैल 1943 में, दिल्ली में मुस्लिम लीग के एक खुले अधिवेशन को संबोधित करते हुए जिन्ना ने कहा कि अगर गांधी जी सचमुच मुस्लिम लीग के साथ समझौता करने को तैयार हैं, तो इसका स्वागत उनसे अधिक कोई नहीं करेगा: 'अगर श्री गांधी जी की यही इच्छा है, तो उन्हें सीधे मुझे पत्र लिखने से क्या रोक सकता है?... चाहे इस देश में यह सरकार कितनी भी मजबूत क्यों न हो, मुझे विश्वास नहीं होता कि अगर ऐसा पत्र मुझे भेजा जाए तो वह इसे रोकने की हिम्मत करेगी। अगर ऐसा पत्र रोका गया तो यह वाकई बहुत गंभीर बात होगी... अगर उनका मन बदल जाए... तो उन्हें बस मुझे कुछ पंक्तियाँ लिखनी होंगी। तब मुस्लिम लीग असफल नहीं होगी।' गांधी जी ने जेल से जवाब देते हुए जिन्ना से मिलने की इच्छा व्यक्त की। 'आपके निमंत्रण में एक 'अगर' लगा हुआ लगता है। क्या आप कह रहे हैं कि मुझे तभी लिखना चाहिए जब मेरा मन बदल जाए? लोगों के दिलों को तो केवल ईश्वर ही जानता है। मैं चाहता हूँ कि आप मुझे वैसे ही स्वीकार करें जैसा मैं हूँ।' 'सांप्रदायिक एकता के महान प्रश्न पर हम दोनों मिलकर एक साझा समाधान खोजने के लिए दृढ़ संकल्पित होकर क्यों न विचार करें और अपने समाधान को उन सभी के लिए स्वीकार्य बनाने के लिए मिलकर काम करें जो इससे संबंधित हैं या इसमें रुचि रखते हैं?' सरकार ने पत्र को जिन्ना तक पहुंचने से रोक दिया। क़ैद-ए-आज़म, जिन्होंने सार्वजनिक रूप से अंग्रेजों को गांधी के पत्र को उन तक पहुंचने से रोकने की चुनौती दी थी, जब अंग्रेजों द्वारा उन्हें स्पष्ट रूप से सेंसर किया हुआ पत्र दिया गया तो उन्होंने विनम्रतापूर्वक उसे स्वीकार कर लिया। जिन्ना ने प्रतिक्रिया देते हुए कहा कि गांधी से उन्हें यह सुनने की उम्मीद नहीं थी। वे चाहते थे कि गांधी पहले मुस्लिम लीग की अलग देश की मांग को स्वीकार करें और फिर उन्हें पत्र

लिखें। 'श्री गांधी के इस पत्र को केवल उनकी रिहाई के उद्देश्य से मुस्लिम लीग को ब्रिटिश सरकार के साथ संघर्ष में उलझाने की उनकी चाल के रूप में ही समझा जा सकता है।'
गांधी जी के करीबी सहयोगी सी. राजगोपालाचारी ने भारत छोड़ो प्रस्ताव पर कांग्रेस के रुख का विरोध किया था और ब्रिटिश युद्ध प्रयासों में असहयोग की नीति से असहमत थे। इसी कारण उन्हें 1942 में अंग्रेजों द्वारा गिरफ्तार नहीं किया गया था। राजगोपालाचारी, जैसा कि वे लोकप्रिय रूप से जाने जाते थे, का मानना था कि यदि कांग्रेस और मुस्लिम लीग एक साथ आ जाएं, तो स्वतंत्रता की लड़ाई निर्णायक रूप से और बहुत कम समय में जीत ली जाएगी। उनका मानना था कि यदि कांग्रेस मुस्लिम लीग द्वारा मांगे गए मुस्लिम-बहुसंख्यक क्षेत्रों के लिए आत्मनिर्णय के अधिकार को स्वीकार कर लेती है, तो वे भारत की स्वतंत्रता की मांग में कांग्रेस के साथ हाथ मिला लेंगे और अंग्रेज इनकार नहीं कर पाएंगे।
जब अंग्रेजों ने आगा खान पैलेस जेल शिविर के द्वार थोड़े समय के लिए खोल दिए, क्योंकि उन्हें डर था कि गांधीजी के अनशन और उनकी विभिन्न बीमारियों के कारण उनकी मृत्यु निकट है, तो राजाजी ने इस संक्षिप्त विराम का लाभ उठाते हुए कांग्रेस और मुस्लिम लीग के बीच समझौता कराने के लिए अपने द्वारा विकसित एक सूत्र प्रस्तुत किया। यह सूत्र लोकप्रिय रूप से 'राजाजी सूत्र' के नाम से जाना गया, जिसमें यह परिकल्पना की गई थी कि: (1) मुस्लिम लीग को स्वतंत्रता की भारतीय मांग का समर्थन करना चाहिए और संक्रमणकालीन अवधि के लिए एक अस्थायी अंतरिम सरकार के गठन में कांग्रेस के साथ सहयोग करना चाहिए; (2) युद्ध की समाप्ति के बाद, कांग्रेस उत्तर-पश्चिम और उत्तर-पूर्व भारत में उन सन्निहित

जिलों के सीमांकन के लिए एक आयोग की नियुक्ति पर सहमत होगी, जहां मुस्लिम पूर्ण बहुमत में हैं; (3) इस प्रकार सीमांकित क्षेत्रों में वयस्क मताधिकार या किसी समकक्ष व्यवस्था के आधार पर सभी निवासियों का जनमत संग्रह भारत से अलग होने के मुद्दे का निर्णय करेगा। यदि बहुमत भारत से अलग एक संप्रभु राज्य के गठन के पक्ष में निर्णय लेता है, तो ऐसे निर्णय को लागू किया जाएगा। (4) पृथक्करण की स्थिति में, रक्षा, वाणिज्य, संचार और अन्य आवश्यक मामलों की सुरक्षा के लिए आपसी समझौता किया जाएगा; और अंत में (5) ये शर्तें केवल भारत के शासन के लिए पूर्ण शक्ति और जिम्मेदारी के ब्रिटिश द्वारा हस्तांतरण के मामले में ही बाध्यकारी होंगी।
गांधी ने राजाजी फॉर्मूला का समर्थन किया। राजाजी ने यह योजना जिन्ना के सामने पेश की, जिन्होंने इसे सिरे से खारिज कर दिया और इसे 'एक खोखला, अपंग, विकृत और दीमक लगा हुआ पाकिस्तान' बताया। उन्होंने दिखावटी तौर पर यह पेशकश की कि अगर राजाजी चाहें तो वे इसे मुस्लिम लीग परिषद के समक्ष विचार के लिए रख सकते हैं। यह व्यर्थ प्रयास था क्योंकि मुस्लिम लीग परिषद एक अप्रभावी, दिखावटी संस्था थी जिस पर पूरी तरह से जिन्ना का वर्चस्व था। राजाजी फॉर्मूला के बारे में उनकी सार्वजनिक टिप्पणियों के बाद, यह तय था कि मुस्लिम लीग परिषद में उनके चापलूस इसे अस्वीकार कर देंगे। राजाजी ने इस योजना को प्रेस में इस उम्मीद से जारी किया कि इससे जनमत बनेगा और जिन्ना इसे स्वीकार करने के लिए मजबूर हो जाएंगे। जिन्ना ने अपने स्वभाव के अनुरूप ही प्रतिक्रिया दी: 'इसके साथ ही निजी बातचीत समाप्त होती है। अब जनता को विश्वास में लेना आवश्यक है।'

अपनी रिहाई के बाद गांधी ने जिन्ना को राष्ट्रीय आंदोलन में वापस लाने के अपने प्रयासों को फिर से तेज कर दिया। 17 जनवरी 1944 को उन्होंने जिन्ना को पत्र लिखा, इस बार जानबूझकर उनकी साझा मातृभाषा गुजराती में। जिन्ना काठियावाड़ के मुसलमान थे और पहले भी कई बार गांधी ने उन्हें सार्वजनिक समारोहों में गुजराती में बोलने के लिए मजबूर किया था। 'भाई जिन्ना, एक समय था जब मैं आपको मातृभाषा में बोलने के लिए राजी कर लेता था। आज मैं आपको मातृभाषा में पत्र लिखने का साहस कर रहा हूँ। मैंने जेल से भेजे अपने निमंत्रण में आपसे मिलने का प्रस्ताव रखा था। रिहाई के बाद से मैंने आपको पत्र नहीं लिखा है। आज मुझे ऐसा करने की प्रेरणा मिली है। जब भी आप चाहें, हम मिल सकते हैं। मुझे इस्लाम या भारतीय मुसलमानों का दुश्मन न समझें। मैं हमेशा आपका और मानवता का सेवक और मित्र रहा हूँ। मुझे निराश न करें।' गुजराती में लिखकर गांधी जी ने जिन्ना को अप्रत्यक्ष रूप से याद दिलाया कि हिंदू और मुसलमान कई स्थानीय भाषाएँ और क्षेत्रीय संस्कृतियाँ साझा करते हैं, जिससे जिन्ना और मुस्लिम लीग द्वारा पाकिस्तान की मांग को पुष्ट करने के लिए दिए गए एक तर्क का खंडन होता है: भारत में दो अलग-अलग राष्ट्रों का अस्तित्व है, एक हिंदू और दूसरा मुस्लिम। यह सिद्धांत हिंदू दक्षिणपंथी नेता सावरकर द्वारा भी समर्थित था। श्रीनगर में डल झील पर लंगर डाले हुए हाउसबोट क्वीन एलिजाबेथ से जिन्ना ने उत्तर दिया: 'प्रिय गांधी जी, कश्मीर से लौटने पर अगस्त के मध्य में कभी भी बंबई स्थित अपने घर पर आपका स्वागत करना मेरे लिए प्रसन्नता का विषय होगा।'
दोनों पक्षों की ओर से बातचीत शुरू करने और गतिरोध तोड़ने का दबाव बढ़ता जा रहा था। मुसलमान, जिनका प्रतिनिधित्व करने का

को मुस्लिम लीग की मांगों को नजरअंदाज करने के लिए मनाने के किसी भी प्रयास को विफल कर देगा।
वार्ता से पूर्व संध्या पर बंबई का माहौल बेहद तनावपूर्ण था। पुलिस पूरी तरह सतर्क थी; मालाबार हिल के आसपास की कई सड़कें और गलियां बंद कर दी गई थीं, जहां दोनों प्रमुख व्यक्ति ठहरे हुए थे। पूरे शहर में हाई अलर्ट जारी किया गया था। गांधीजी बिरला हाउस में ठहरे, जो मालाबार हिल के मध्य में नेपियनसी रोड के समुद्र तट की ओर स्थित है। जिन्ना का घर उससे आगे माउंट प्लेजेंट रोड पर 10 नंबर पर था। जिन्ना ने निजी वार्ता होने के कारण प्रेस के सदस्यों से दूर रहने का 'अनुरोध' करके पहले से ही रंगीन माहौल में अपना एक अलग ही अंदाज जोड़ा। उन्होंने फिल्म कंपनियों और फोटोग्राफरों को गांधीजी के आगमन और प्रस्थान की तस्वीरें और वीडियो लेने की अनुमति देकर रियायत दी।
यह उन दुर्लभ अवसरों में से एक था जब जिन्ना ने गांधी को महात्मा गांधी कहकर संबोधित किया और उनसे राजनीतिक शांति की अवधि की घोषणा करने की अपील करते हुए कहा, 'यह सर्वव्यापी इच्छा रही है कि हम मिलें। अब जब हम मिलने जा रहे हैं, तो हमारी मदद करें। हम सुलह की ओर बढ़ रहे हैं। अतीत को भुला दें।'
वार्ता 9 सितंबर 1944 को शुरू हुई और अठारह दिनों तक चली। दुनिया की निगाहें दक्षिण बंबई के इस छोटे से कुलीन इलाके में घट रही घटनाओं पर टिकी थीं। तय कार्यक्रम के अनुसार, गांधीजी प्रतिदिन दोपहर बाद अपने छोटे से दल के साथ औपनिवेशिक प्रशासन के कुलीन अधिकारियों के आलीशान घरों से घिरी घुमावदार सड़क पर चलते हुए माउंट प्लेजेंट रोड स्थित 10 नंबर के मकान में प्रवेश करते थे।

वार्ता के पहले दिन, जिन्ना गांधीजी का स्वागत करने के लिए अपने दरवाजे पर इंतजार कर रहे थे; उन्होंने हाथ मिलाया और फिर एक-दूसरे को गले लगाया, जिससे एक अच्छी तस्वीर लेने का अवसर मिला। उस दिन वार्ता समाप्त होने पर जिन्ना गांधीजी के साथ उनके बरामदे तक गए, और विदाई के समय उन्होंने जो स्नेह दिखाया, उसे पर्यवेक्षकों ने शुभ संकेत माना। लेकिन, जैसा कि बाद में पता चला, वार्ता व्यर्थ साबित हुई। शायद जिन्ना का एकमात्र उद्देश्य गांधीजी को अपने विचारों में परिवर्तित करना था। अगले दिन उनकी मुलाकात नहीं हुई, क्योंकि वह रमज़ान का इक्कीसवाँ दिन था। जिन्ना के एक पूर्व सहकर्मी ने व्यंग्यपूर्वक टिप्पणी की, 'उन्होंने यह क्यों नहीं कहा कि रविवार है और उन्हें छुट्टी चाहिए? जिन्ना रमज़ान से ज़्यादा रविवार को समझते हैं।' सोमवार, 11 सितंबर की शाम को बातचीत फिर से शुरू हुई। गांधी जी अपना खाना एक छोटे से डिब्बे में लेकर आए और बातचीत के दौरान ही खाया। बातचीत के पूरे समय राजजी गांधी जी के साथ ही ठहरे रहे और सारी कार्यवाही की जानकारी उन्हें दी जाती रही। एक बार उनसे बात करते हुए गांधी जी ने बातचीत आयोजित करने का अपना उद्देश्य स्पष्ट किया, '...मुझे उन्हीं के मुँह से यह साबित करना है कि पाकिस्तान का पूरा प्रस्ताव बेतुका है। मुझे लगता है कि वे अलग नहीं होना चाहते। मैं भी जल्दबाजी नहीं करने वाला। लेकिन वे मुझसे एक अपरिभाषित पाकिस्तान का समर्थन करने की उम्मीद नहीं कर सकते।'
राजाजी ने पूछा: 'क्या आपको लगता है कि वह अपना दावा छोड़ देगा?' गांधीजी ने उत्तर दिया: 'समझौते के लिए उन्हें ऐसा करना ही होगा। वे समझौता चाहते हैं, लेकिन वे क्या चाहते हैं, यह उन्हें स्वयं नहीं पता। मैं उन्हें यह दिखाना चाहता हूं कि आपका सूत्र

ही एकमात्र ऐसी चीज है जिसकी वे तर्कसंगत रूप से मांग कर सकते हैं।'
बातचीत के शुरुआती कुछ दिनों में दबी हुई उम्मीद थी। लेकिन बीच में ही, ईद के मौके पर, जिन्ना ने कांग्रेस और कांग्रेस में मुसलमानों पर अपने तीखे हमले फिर से शुरू कर दिए। मुसलमानों को एक 'राष्ट्र' के रूप में उनकी खूबियों और प्रगति का बखान करने के बाद, जिन्ना ने 'मिल्लत के गद्दारों' पर जमकर हमला बोला, जो 'हमारी प्रगति में बाधा डाल रहे हैं'। इसके बाद से, बातचीत का रुख पहले से ही तय था कि कैसे बिगड़ेगा। 27 सितंबर को बातचीत पूरी तरह से टूट गई। दोनों नेता आपस में बातचीत कर रहे थे, जिन्ना का रवैया पूरी तरह से बंद था और गांधी का रवैया हमेशा आशावादी बना हुआ था, फिर भी वे लगातार एक-दूसरे को पत्र लिखते रहे। हैरानी की बात यह थी कि न तो पत्रों का बातचीत पर कोई असर पड़ा और न ही बातचीत पर। ऐसा लग रहा था मानो दो अलग-अलग लोग एक साथ दो घटनाओं को संचालित कर रहे हों।
गांधी ने कहा कि उनके जीवन का उद्देश्य हिंदू-मुस्लिम एकता था। इसलिए, यदि मुसलमान चाहें तो वे लाहौर प्रस्ताव में मुस्लिम लीग द्वारा रखी गई मांग, अर्थात् उन क्षेत्रों के लिए आत्मनिर्णय जहां मुसलमान बहुसंख्यक हैं, को स्वीकार करने के लिए तैयार थे। लेकिन यह स्पष्ट था कि स्वतंत्रता के बिना आत्मनिर्णय का प्रयोग नहीं किया जा सकता था। इसलिए, लीग और भारत के अन्य सभी समूहों को सर्वप्रथम एकजुट होकर संयुक्त प्रयास से स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए सहमत होना चाहिए। जिन्ना ने उत्तर दिया, 'यह तो उल्टी बात है।' गांधी ने कहा कि जब तक वे तीसरे पक्ष को बाहर नहीं निकाल देते, तब तक वे एक-दूसरे के साथ शांति से नहीं रह सकते। लेकिन वे प्रयास करने के लिए हमेशा

तत्पर थे और इसीलिए उन्होंने राजजी सूत्र को अपनी स्वीकृति दी थी। इसमें लाहौर प्रस्ताव में रखी गई मांग का सार समाहित था और उसे आकार दिया गया था। हालांकि, जिन्ना ने आपत्ति जताते हुए कहा कि राजजी सूत्र के अनुसार मुस्लिम लीग को एक संयुक्त भारत के आधार पर स्वतंत्रता की मांग का समर्थन करना आवश्यक था। गांधी ने स्पष्ट किया कि यह एक संयुक्त भारत के आधार पर नहीं था। 'यदि हम किसी समझौते पर पहुँचते हैं... तो हम संयुक्त प्रयासों से भारत को यथास्थिति में स्वतंत्रता दिला सकते हैं। स्वतंत्र होने पर, भारत सीमांकन, जनमत संग्रह और विभाजन की प्रक्रिया आगे बढ़ाएगा, यदि संबंधित जनता विभाजन के पक्ष में मतदान करती है।' क्या यही आत्मनिर्णय का सार नहीं था?
जिन्ना ने जोर देकर कहा कि जब राजजी फॉर्मूला लाहौर प्रस्ताव को आधार मानकर चलता है, तो गांधी ने लाहौर प्रस्ताव को क्यों नहीं स्वीकारा? गांधी ने इसे स्वीकार करने में अपनी कठिनाई बताते हुए कहा, 'यह प्रस्ताव अस्पष्ट और अनिश्चित है। इसमें न तो 'पाकिस्तान' का जिक्र है और न ही विभाजन के लिए 'दो राष्ट्र' के औचित्य की बात की गई है। यदि लीग की पाकिस्तान की मांग का आधार धार्मिक था, तो क्या इसका अंतिम लक्ष्य अखिल-इस्लाम था, क्योंकि विश्व के सभी मुसलमान एक ही समुदाय हैं? दूसरी ओर, यदि पाकिस्तान केवल भारतीय मुसलमानों तक ही सीमित था, तो क्या जिन्ना यह समझाएंगे कि धर्म के अलावा एक भारतीय मुसलमान को अन्य सभी भारतीयों से क्या अलग करता है? क्या वह किसी तुर्क या अरब से अलग है?' जिन्ना ने उत्तर दिया कि अखिल-इस्लाम केवल एक काल्पनिक मुद्दा है। उन्होंने स्वीकार किया कि 'पाकिस्तान' शब्द लाहौर प्रस्ताव में नहीं था, लेकिन अब यह उसका पर्याय बन गया है। 'हम मानते हैं कि किसी भी परिभाषा या राष्ट्र के मापदंड

15 सितंबर को गांधी ने जिन्ना को लिखा, 'जैसे-जैसे हमारी बहस आगे बढ़ती है, आपकी तस्वीर मुझे और भी भयावह लगने लगती है। लाहौर प्रस्ताव के व्यावहारिक क्रियान्वयन की कल्पना करते हुए, मुझे पूरे भारत के लिए विनाश के सिवा कुछ नहीं दिखता।' इसके बाद पत्राचार में कटुता का दौर शुरू हो गया। एक समय जिन्ना ने फिर से गांधी के इस दावे पर सवाल उठाया कि वे भारत के सभी दलितों की आकांक्षाओं का प्रतिनिधित्व करते हैं और उन्होंने लाहौर प्रस्ताव को स्वीकार करने की बात दोहराई। गांधी ने जोर देकर कहा कि यदि विभाजन होना ही है, तो यह एक परिवार में दो भाइयों के बीच हुए वियोग के मॉडल पर आधारित होना चाहिए, जो अलग होने के बावजूद एक बड़े परिवार का हिस्सा बने रहते हैं। गांधी ने कहा कि यदि स्वतंत्रता के बाद विभाजित होने वाले क्षेत्रों में रहने वाली अधिकांश वयस्क आबादी विभाजन के पक्ष में मतदान करती है, तो वे देश के विभाजन को स्वीकार कर लेंगे। इस स्थिति में, दोनों विभाजित भागों की रक्षा, विदेश मामलों, आंतरिक संचार, सीमा शुल्क और इसी तरह के कार्यों के क्षेत्र में कुछ सामान्य और साझा जिम्मेदारियां और नीतियां होंगी, साथ ही दोनों क्षेत्रों में अल्पसंख्यकों की सुरक्षा से संबंधित कार्य भी होंगे। लेकिन जिन्ना ने जनमत संग्रह के आधार पर विभाजन से इनकार कर दिया, जिसमें विभाजन से प्रभावित क्षेत्र के सभी निवासी भाग लेते। वे चाहते थे कि यह पूरी तरह से मुसलमानों का निर्णय हो, 'हम एक राष्ट्र के रूप में आत्मनिर्णय के अधिकार का दावा करते हैं... आप इस गलत धारणा में जी रहे हैं कि "आत्मनिर्णय" का अर्थ केवल "क्षेत्रीय इकाई" का है... हमारा मामला दो प्रमुख राष्ट्रों, हिंदू और मुस्लिम, के बीच समझौते के माध्यम से दो स्वतंत्र संप्रभु राज्यों के विभाजन और निर्माण का है, न कि

किसी मौजूदा संघ से अलगाव या पृथक्करण का, जो भारत में अस्तित्वहीन है।' गांधी ने 15 सितंबर को उत्तर दिया, 'मुझे इतिहास में ऐसा कोई उदाहरण नहीं मिलता जहां धर्मांतरित लोगों और उनके वंशजों का समूह मूल वंश से अलग होकर एक राष्ट्र होने का दावा करे। यदि इस्लाम के आगमन से पहले भारत एक राष्ट्र था, तो उसके बहुत से बच्चों के धर्म परिवर्तन के बावजूद भी वह एक ही रहना चाहिए... ऐसा लगता है कि आपने राष्ट्रवाद का एक नया स्वरूप प्रस्तुत किया है। यदि मैं इसे स्वीकार करता हूं, तो मुझे कई और दावों को स्वीकार करना होगा और एक अनसुलझी समस्या का सामना करना होगा।'
गांधी ने 22 सितंबर के अपने पत्र में लिखा: 'ऐसा लगता है कि हम एक ही जगह पर गोल-गोल घूम रहे हैं।' 23 तारीख को लिखे एक नोट में उन्होंने लिखा: 'कल शाम की बातचीत से मन में कड़वाहट रह गई है।' जिन्ना को अपना दृष्टिकोण समझाने के बार-बार प्रयास करने के बाद, गांधी को एहसास हुआ कि उनकी बात नहीं मानी जा रही है और उन्होंने सुझाव दिया कि जिन्ना उन्हें मुस्लिम लीग परिषद को संबोधित करने दें और देखें कि क्या वे उन्हें अपना प्रस्ताव स्वीकार करने के लिए मना सकते हैं। 'यदि वे इसे अस्वीकार करते हैं, तो लीग का एक खुला सत्र बुलाएँ और मुझे सत्र को संबोधित करने की अनुमति दें।' अंतिम उपाय के रूप में उन्होंने सुझाव दिया कि इस मुद्दे को मध्यस्थता के लिए भेजा जाए। जिन्ना ने इन सभी प्रस्तावों को अस्वीकार कर दिया। 27 सितंबर को, एक बड़ी प्रार्थना सभा को संबोधित करते हुए, गांधी ने घोषणा की कि वार्ता किसी संतोषजनक या पारस्परिक रूप से स्वीकार्य निष्कर्ष पर नहीं पहुँच पाई है, और न ही कोई पक्ष दूसरे को समझाने में सक्षम रहा है। गांधी ने कहा कि यद्यपि वे अपेक्षित परिणाम

प्राप्त करने में विफल रहे, फिर भी उनमें निराशा या हताशा की कोई भावना नहीं थी। उन्होंने सभी के सामान्य हित के लिए जिन्ना के दृष्टिकोण को पूरा करने के लिए यथासंभव प्रयास किया था। अगले दिन एक प्रेस विज्ञप्ति में गांधी ने कहा, 'सभी दलों और विशेष रूप से मुस्लिम लीग के सदस्यों को क़ैद-ए-आज़म से अपने विचार पर पुनर्विचार करने के लिए कहना चाहिए। अगर मैंने और राजजी ने लाहौर प्रस्ताव को विफल कर दिया है, तो हमें सीख लेनी चाहिए।' न्यूज़ क्रॉनिकल के स्टुअर्ट गेल्डर को दिए एक साक्षात्कार में उन्होंने टिप्पणी की, 'मेरा मानना है कि श्री जिन्ना ईमानदार हैं, लेकिन मुझे लगता है कि वे भ्रम में हैं जब वे यह कल्पना करते हैं कि भारत का अस्वाभाविक विभाजन संबंधित लोगों के लिए सुख या समृद्धि ला सकता है।'
गांधी ने पत्रकारों के एक अन्य समूह से कहा, 'उनकी बातचीत केवल अनिश्चितकाल के लिए स्थगित की गई थी। मुझे पूरा विश्वास है कि श्री जिन्ना एक अच्छे इंसान हैं। मुझे उम्मीद है कि हम फिर मिलेंगे... इस बीच जनता का यह कर्तव्य है कि वह स्थिति को समझे और अपनी राय हम पर डाले।'
इस प्रकार गांधी और जिन्ना के बीच वार्ता बिना किसी खास प्रगति के समाप्त हो गई।
शिमला सम्मेलन
यूरोप में द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति के साथ ही, ब्रिटेन और तटस्थ देशों में जनमत भारत की स्वतंत्रता के लिए स्व-निर्धारण के अधिकार से लगातार वंचित किए जाने की आलोचना करने लगा। राष्ट्रमंडल संबंध सम्मेलन में ग्रेट ब्रिटेन को एक बेहद शर्मनाक स्थिति का सामना करना पड़ा, जब उसके अपने ही प्रतिनिधि, भारतीय प्रतिनिधिमंडल के नेता ने, एक निश्चित तिथि तक भारत के

लिए डोमिनियन दर्जा की मांग की और ब्रिटिश राजनेताओं से कहा कि वे भारत को अपना लक्ष्य प्राप्त करने से नहीं रोक सकते। पूर्व सैनिक और भारत के तत्कालीन वायसराय लॉर्ड वेवेल ने व्हाइटहॉल पर बार-बार दबाव डाला था कि वह भारतीय गतिरोध को सुलझाए और सुदूर पूर्व में युद्ध में भारत का सक्रिय सहयोग सुनिश्चित करे। मार्च 1945 में, महामहिम की सरकार (एचएमजी) ने वेवेल को भारत की स्थिति और आगे की रणनीति पर परामर्श के लिए इंग्लैंड बुलाया। जब वे लंदन में थे, तब यूरोप में युद्ध धुरी राष्ट्रों के बिना शर्त आत्मसमर्पण के साथ समाप्त हो गया। लेबर पार्टी ने युद्धकालीन गठबंधन से अपना नाम वापस ले लिया और 23 मई को सरकार गिर गई। एक कार्यवाहक सरकार ने कार्यभार संभाला और अगले आम चुनाव 5 जुलाई को निर्धारित किए गए। जैसे-जैसे तारीख नजदीक आती गई, यहां तक कि टोरी पार्टी के कट्टर समर्थक भी, जिन्होंने तब तक एचएमजी की भारत के प्रति नीति में बदलाव पर विचार करने से भी इनकार कर दिया था, यह समझ गए कि वास्तविकता को अब नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। भारत में युद्धकालीन कर्तव्यों का पालन करके घर लौटे सैनिकों ने क्रूर औपनिवेशिक शासन और पश्चिम बंगाल के भीषण अकाल के दौरान राहत प्रदान करने में प्रशासन की पूर्ण विफलता की भयावह कहानियां सुनाई थीं। ग्रेट ब्रिटेन में जनमत अब भारत में अपने देश की भूमिका की आलोचना कर रहा था। चुनाव के दौरान भारत की दयनीय स्थिति के बारे में कई असहज सवाल पूछे गए। ब्रिटिश लोगों के बीच गांधीजी की अपार लोकप्रियता भी एक ऐसा कारक था जिसने पुनर्निर्वाचन चाहने वाले राजनेताओं के लिए यह दिखाना अनिवार्य बना दिया कि वे बदलाव की लहर के आगे झुकने को तैयार हैं। यदि भारतीय मुद्दे को

सुलझाने की दिशा में छोटे-छोटे कदम उठाकर वे कुछ और सीटें जीतने में सफल हो जाते, तो इसमें कोई बुराई नहीं थी।
14 जून को, एचएमजी की सहमति से, लॉर्ड वेवेल ने 1935 के भारत सरकार अधिनियम के दायरे में प्रस्तावित संवैधानिक संशोधनों की व्याख्या करते हुए एक सार्वजनिक घोषणा की। वायसराय एक राष्ट्रीय सरकार बनाने का प्रयास करेंगे जो मौजूदा वायसराय की कार्यकारी परिषद का स्थान लेगी, जिसमें भारतीय नेताओं के परामर्श से चयनित सवर्ण हिंदू और मुस्लिम सदस्यों का समान प्रतिनिधित्व होगा। साथ ही, अगस्त 1942 से हिरासत में लिए गए सीडब्ल्यूसी के सभी सदस्यों को रिहा कर दिया गया, यह दर्शाने के लिए कि एचएमजी और उनके औपनिवेशिक प्रतिनिधि भारतीय गतिरोध को हल करने में गंभीर थे।
तदनुसार, वायसराय की अध्यक्षता में 25 जून 1945 से एक 'शिमला सम्मेलन' आयोजित किया जाना था, जिसमें वायसराय द्वारा चयनित सभी राजनीतिक दलों और समूहों के आमंत्रित प्रतिनिधि शामिल होंगे। इक्कीस निमंत्रण भेजे गए, जिनमें से ग्यारह विभिन्न प्रांतों के प्रधानमंत्रियों को, केंद्रीय सभा में कांग्रेस पार्टी के नेताओं और मुस्लिम लीग के उपनेता को, राज्य परिषद में मुस्लिम लीग के नेताओं को, केंद्रीय सभा में राष्ट्रवादी पार्टी और यूरोपीय समूह के नेताओं को, अनुसूचित जाति और सिखों से एक-एक प्रतिनिधि को और दो प्रमुख राजनीतिक दलों के मान्यता प्राप्त नेताओं के रूप में गांधी और जिन्ना को भेजे गए थे। प्रारंभ में, कांग्रेस के अध्यक्ष मौलाना आजाद को कोई निमंत्रण नहीं भेजा गया था।
जब गांधी पंचगनी में स्वास्थ्य लाभ कर रहे थे, तभी एक प्रेस संवाददाता ने उन्हें वायसराय के प्रसारण और सम्मेलन में शामिल

होने के निमंत्रण के बारे में सूचित किया। गांधी ने कांग्रेस अध्यक्ष को आमंत्रित न किए जाने पर तुरंत आपत्ति जताई और वायसराय को पत्र लिखा: 'मैं औपचारिक रूप से किसी संस्था का प्रतिनिधित्व नहीं करता। मैं 1934 से कांग्रेस का प्राथमिक सदस्य भी नहीं हूँ; एक व्यक्ति के रूप में मैं केवल सलाह दे सकता हूँ। यदि मैं कांग्रेस का आधिकारिक प्रतिनिधि नहीं बनता, तो सम्मेलन में मेरी उपस्थिति आधिकारिक स्वरूप को बदल देगी। कांग्रेस अध्यक्ष ही कांग्रेस के दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करने के लिए उचित प्राधिकारी हैं।' इसे देखते हुए तुरंत अध्यक्ष को निमंत्रण भेजा गया। गांधी एक अनुभवी सलाहकार के रूप में शिमला जाने और वायसराय और अन्य आमंत्रितों की आवश्यकता के अनुसार वहाँ रहने के लिए सहमत हो गए। अपने प्रसारण में वायसराय ने भारतीय स्वतंत्रता का एक शब्द भी नहीं कहा था और अशुभ संकेत यह था कि पहली बार राष्ट्रीय सरकार में एक मूलभूत शर्त के रूप में 'जातिगत हिंदू-मुस्लिम समानता' शब्द का प्रयोग किया गया था। गांधी ने टिप्पणी की: 'व्यक्तिगत रूप से मैं इसका समर्थन कभी नहीं कर सकता, न ही कांग्रेस, अगर मैं उसके इरादे जान लूँ।' भारी संख्या में हिंदू सदस्यों के बावजूद कांग्रेस ने विशुद्ध रूप से राजनीतिक बने रहने का प्रयास किया है। मैं कांग्रेस को सभी गैर-हिंदुओं और विशेष रूप से गैर-जातिगत हिंदुओं को मनोनीत करने की सलाह देने में पूरी तरह सक्षम हूं।' उन्होंने इस बात पर और जोर देते हुए कहा, 'कांग्रेस ने कभी भी जातिगत या गैर-जातिगत हिंदुओं के साथ खुद को नहीं जोड़ा है और न ही कभी जोड़ सकती है, यहां तक कि आजादी हासिल करने के लिए भी नहीं, जो एकतरफा, असत्य और आत्मघाती होगा।'

तीन साल बाद सीडब्ल्यूसी की बैठक बंबई में हुई। कांग्रेस के अधिकांश नेता हाल ही में रिहा हुए थे और उनमें से कई गंभीर बीमारियों से जूझ रहे थे। उन सभी में एक समान पीड़ा थी - टूटा हुआ मनोबल। अंततः, औपनिवेशिक सत्ता उनकी 'करो या मरो' की इच्छाशक्ति को तोड़ने में सफल हो गई थी। कारावास का जिक्र करते हुए लगभग सभी कांग्रेसियों के मुंह से एक ही बात बार-बार सुनाई दे रही थी, 'फिर कभी नहीं'। अब वे बातचीत की मेज पर बैठेंगे, सौदे करेंगे, समझौते करेंगे और जो भी मिले उसे स्वीकार करेंगे। वे अब जन आंदोलन नहीं करेंगे, न ही सविनय अवज्ञा आंदोलन चलाएंगे, न ही 'चले जाओ', 'छोड़ो' के नारे लगाएंगे, जो भारत के शहरों की सड़कों और गांवों के चौकों पर हजारों देशवासियों के साथ ब्रिटिश पुलिस की पिकेट लाइनों के विरोध में लगाए जाते थे और जिनके कारण बड़े पैमाने पर गिरफ्तारियां और लंबी कैद होती थी। अब वे एक समझौता चाहते थे। उन्हें डर था कि अगर आजादी पाने में बहुत ज्यादा समय लग गया, तो उनमें से बहुत कम लोग ही इसके लाभ उठाने के लिए जीवित बचेंगे। सम्मेलन में आमंत्रित कांग्रेस सदस्यों के लिए एक 'निर्देश पत्र' तैयार किया गया। कार्यकारी समिति ने गौर किया कि उसके कई कार्यकर्ता अभी भी जेल में हैं और कांग्रेस की कई समितियों पर अभी भी प्रतिबंध लगा हुआ है, जिसे 'दबाव' बताया गया। फिर भी, यह निर्णय लिया गया कि कांग्रेस सम्मेलन में भाग लेगी। गांधी जी ने कांग्रेस प्रतिनिधिमंडल के लिए उपलब्ध कराए गए वातानुकूलित डिब्बों में यात्रा करने से इनकार कर दिया और इसके बजाय अपने पसंदीदा तृतीय श्रेणी के डिब्बे में यात्रा करना चुना। उसी ट्रेन में यूनाइटेड प्रेस ऑफ अमेरिका के संवाददाता प्रेस्टन ग्रोवर भी यात्रा कर रहे थे। गांधी जी के स्वास्थ्य को लेकर चिंतित ग्रोवर ने उनसे वातानुकूलित डिब्बे में जाने का

अनुरोध किया। गांधी जी ने उत्तर दिया, 'आपके विचारशील पत्र के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। लेकिन मुझे इस प्राकृतिक गर्मी में खुद को भीगने दीजिए। भाग्य के समान, इस गर्मी के बाद ताजगी भरी ठंडक आएगी जिसका मैं आनंद उठाऊंगा। मुझे बस वास्तविक भारत का थोड़ा सा अनुभव करने दीजिए।'
शिमला पहुँचने पर गांधीजी ने राजकुमारी अमृत कौर के आवास पर जल्दी से स्नान किया और भोजन किया तथा वायसराय से मुलाकात के लिए निकल पड़े। वायसराय लॉज में लॉर्ड वेवेल का अभिवादन करते हुए उन्होंने कहा, 'मैं भी आपकी ही तरह एक सिपाही हूँ, भले ही मेरे पास हथियार न हों।' कुछ देर शिष्टाचारवश बातचीत करने के बाद जब गांधीजी विदा लेने उठे तो उन्होंने लेडी वेवेल को प्रणाम किया। अगले तीस मिनट उन्होंने लेडी वेवेल और वायसराय के पुत्र से बातचीत में बिताए। गांधीजी शिमला सम्मेलन की पूरी अवधि के दौरान राजकुमारी अमृत कौर के साथ रहे। ऊँची छतों में से एक पर उनकी पसंदीदा जगह थी, जहाँ से वे चारों ओर के नज़ारों को निहारते थे - निर्मल, सदा बर्फ से ढकी हिमालय पर्वत श्रृंखला और देवदार के पेड़ों से ढकी पहाड़ियाँ और घाटियाँ। नीले आसमान ने हिमालय की मोती जैसी सफेद चमक के लिए एक मनमोहक पृष्ठभूमि बनाई, जो घाटियों के जीवंत बहुरंगी हरे रंग से ढकी हुई थी। गांधीजी ने गुनगुनाते हुए कहा, 'दुनिया में इसकी कोई बराबरी नहीं है।' वायसराय गांधीजी को प्रतिनिधि के रूप में सम्मेलन में शामिल करने के लिए उत्सुक थे, लेकिन उन्होंने यह कहते हुए मना कर दिया कि प्रतिनिधि सम्मेलन में किसी व्यक्ति, चाहे वह कितना भी प्रतिष्ठित क्यों न हो, के लिए कोई जगह नहीं है। उन्होंने सम्मेलन की अवधि के लिए शिमला में रहने की पेशकश की और आवश्यकता पड़ने पर सलाह देने के लिए भी सहमति जताई। जिन्ना ने गांधीजी की

सम्मेलन से अनुपस्थिति को 'वापसी' करार दिया और बयान जारी कर कहा कि 'श्री गांधीजी की सम्मेलन से वापसी ने माहौल को दूषित कर दिया है।' प्रेस्टन ग्रोवर को दिए एक साक्षात्कार में गांधीजी ने जवाब दिया, 'यदि श्री जिन्ना मुझे वहां चाहते हैं, तो वे मुझे वहां ले जा सकते हैं। श्री जिन्ना की ओर से ऐसा कदम उठाने का अर्थ होगा कि वे सम्मेलन के सामने आने वाले मतभेदों और बाधाओं के बावजूद भी समझौता चाहते हैं।'
प्रतिनिधियों को संबोधित करते हुए अपने उद्घाटन भाषण में वेवेल बेहद उत्सुक और ईमानदार लग रहे थे। उन्होंने कहा, 'मैंने अपने प्रसारण में कहा था कि हर पक्ष में कुछ न कुछ ऐसा है जिसे माफ किया जा सकता है और भुलाया जा सकता है... फिलहाल आपको मेरा नेतृत्व स्वीकार करना होगा... मैं इस सम्मेलन की चर्चा को देश के सर्वोत्तम हित में निर्देशित करने का प्रयास करूंगा।' उद्घाटन भाषण पर टिप्पणी करते हुए गांधी ने कहा, 'लॉर्ड वेवेल ने जिस अभिव्यक्ति का प्रयोग किया है वह अच्छी और गरिमापूर्ण है। इस प्रकार वे सम्मेलन में इसके नेता के रूप में कार्य कर रहे हैं, न कि व्हाइटहॉल के प्रतिनिधि के रूप में।' वायसराय ने सम्मेलन को असहमति और संघर्षों के उतार-चढ़ाव से बखूबी संभाला। एक समय कांग्रेस ने वायसराय के भाषण में खुद को हिंदू दल कहे जाने पर आपत्ति जताई, और वायसराय ने ऐसा कहने से इनकार कर दिया। जिन्ना ने इस विवाद में कूदते हुए कांग्रेस को हिंदू दल करार दिया। इसके बाद जिन्ना, वायसराय और कांग्रेस सदस्यों के बीच तीखी बहस हुई।
वायसराय वेवेल: 'मेरे प्रस्तावों में ऐसा कुछ भी नहीं है जो कांग्रेस को एक सांप्रदायिक निकाय के रूप में दर्शाता हो।'

जिन्ना: 'हम यहां समुदायों के रूप में एकत्रित हुए हैं और कांग्रेस हिंदुओं के अलावा किसी और का प्रतिनिधित्व नहीं करती।'
वायसराय वेवेल: 'कांग्रेस अपने सदस्यों का प्रतिनिधित्व करती है।'
डॉ. खान साहब: 'उनका क्या मतलब है? मैं एक कांग्रेसी हूँ। क्या मैं हिंदू हूँ या मुसलमान?'
वायसराय वेवेल: 'बात यहीं खत्म करो। कांग्रेस अपने सदस्यों का प्रतिनिधित्व करती है।'
यदि वायसराय अपने कथनों पर दृढ़ रहते तो भारत का इतिहास एक अलग ही दिशा में अग्रसर होता। सम्मेलन समाप्त होने से पहले ही उनके प्रारंभिक कथन की खोखली सच्चाई सिद्ध हो गई।
'समुदायों के बीच समानता' शब्द के अर्थ को लेकर कांग्रेस और गांधीजी के बीच मतभेद था। गांधीजी का मानना था कि इसका अर्थ है, 'कोई भी समुदाय दूसरे समुदाय से अधिक प्रतिनिधित्व की मांग नहीं कर सकता, लेकिन यदि वह चाहे तो कम प्रतिनिधित्व स्वीकार करने के लिए स्वतंत्र है। कांग्रेस को यह स्वीकार करना चाहिए कि गैर-अनुसूचित हिंदू किसी भी स्थिति में मुसलमानों से अधिक नहीं होंगे और सभी अल्पसंख्यक समूहों से सर्वश्रेष्ठ भारतीयों को नामित करके समानता को भंग करना चाहिए, जिसमें एंग्लो-इंडियन, अंग्रेज, पारसी, सिख, यहूदी (यदि उपलब्ध हों), भारतीय ईसाई, अनुसूचित जाति और महिलाओं का एक-एक प्रतिनिधि शामिल हो, चाहे वे कांग्रेस के सदस्य हों या नहीं।' इससे मुस्लिम लीग के पास चौदह सदस्यीय परिषद में एक राष्ट्रवादी मुस्लिम सहित तीन या अधिक सदस्यों का पैनल रह जाता। हिंदुओं की ओर से समानता के अधिकार का प्रयोग करने से इनकार करके, वे क्षेत्रीय जटिलताओं को दूर कर

सकते थे और स्वतंत्र भारत के लिए विशुद्ध रूप से राष्ट्रवादी आधार पर एक ठोस और सुरक्षित नींव रख सकते थे। दूसरी ओर, यदि कांग्रेस सांप्रदायिक समानता के सूत्र को स्वीकार कर लेती, तो वायसराय की कार्यकारी परिषद में हिंदुओं और मुसलमानों के बीच अनिवार्य रूप से टकराव उत्पन्न हो जाता और वायसराय के वीटो का प्रयोग करना पड़ता। लेकिन वे स्वेच्छा से हिंदुओं के लिए कम संख्या का प्रावधान चुनकर वायसराय के प्रस्ताव के समानता वाले भाग को निरर्थक बना सकते थे। पाँच सवर्ण हिंदुओं के विरुद्ध पाँच मुसलमानों के साथ, मुस्लिम लीग वायसराय और कमांडर-इन-चीफ की सहायता से मंत्रिमंडल में बराबरी स्थापित कर सकती थी। लेकिन यदि मंत्रिमंडल में देशभक्तिपूर्ण, राष्ट्रवादी सोच वाले अल्पसंख्यक समूह के प्रतिनिधि हों और अधिकतम तीन ही 'सवर्ण हिंदू' सदस्य हों, तो मंत्रिमंडल में कोई सांप्रदायिक विभाजन नहीं होगा और लीग 'हिंदू बहुसंख्यक शासन' का मुद्दा नहीं उठा पाएगी। सीडब्ल्यूसी गांधी की रणनीति से सहमत नहीं थी। समिति के सदस्य व्यक्तिगत रूप से इस आकलन से सहमत थे। एक प्रांत के पूर्व मुख्यमंत्री ने अपने एक सहकर्मी से कहा, 'यह मुझे पसंद आया, गांधीजी सही हैं।' 'और आप हिंदुओं के लिए असमानता स्वीकार करने के बाद मतदाताओं का सामना करने की उम्मीद करते हैं?' दूसरे ने जवाब दिया। इसके बाद मुख्यमंत्री ने सार्वजनिक रूप से गांधी के दृष्टिकोण से असहमत होना बंद कर दिया।
प्यारेलाल नैयर द्वारा 29 जून 1945 को दर्ज की गई प्रविष्टि में निम्नलिखित बातें लिखी हैं:
25 तारीख की शाम को बापू ने समता के विषय पर अपने विचार क्रमशः मध्य प्रांत, बंबई और बिहार के पूर्व मुख्यमंत्री रविशंकर शुक्ला, बी.जी. खेर और श्रीकृष्ण सिन्हा को समझाए, और बाद में

राजजी को भी। उन्होंने मुझे 26 तारीख की सुबह मौलाना साहब और राजजी को फिर से समझाने के लिए भेजा। 26 तारीख की दोपहर को मौलाना साहब ने बापू से मुलाकात की। बापू ने अपनी बातचीत में स्पष्ट कर दिया कि जहाँ तक उनका सवाल है, वे समता के इस मुद्दे या इसके प्रति प्रतिबद्ध कांग्रेस से कोई संबंध नहीं रख सकते। मौलाना साहब ने यह आभास देते हुए विदा ली कि सैद्धांतिक रूप से वे बापू के रुख से पूरी तरह सहमत हैं। लेकिन 28 तारीख की दोपहर को जब प्रतिनिधि सम्मेलन से लौटे, तो पता चला कि सम्मेलन ने वायसराय द्वारा प्रस्तुत वेवेल प्रस्ताव के सभी पाँच मूलभूत सिद्धांतों को स्वीकार कर लिया है, जिनमें समता भी शामिल है... यह तर्क दिया गया था कि वेवेल प्रस्ताव में समता को त्यागने की कोई स्वतंत्रता नहीं है, भले ही कोई एक पक्ष ऐसा चाहे। हालांकि, बापू ने सभी संबंधित पक्षों को यह स्पष्ट कर दिया है कि थोपी गई समानता का प्रस्ताव उनकी नजरों में बदबूदार हो जाएगा और वायसराय का प्रस्ताव पूरी तरह से अस्वीकार्य हो जाएगा।
'इस बात पर फिर से सहमति बनी है कि कांग्रेस जाति, धर्म या दलीय संबद्धता की परवाह किए बिना सर्वश्रेष्ठ व्यक्तियों को चुनने के सिद्धांत पर जोर दे सकती है और अल्पसंख्यक समूह के प्रतिनिधियों को प्राथमिकता भी दे सकती है (इस शर्त के साथ कि वे स्वतंत्रता के लिए खड़े हों और उसके लिए काम करें), लेकिन वह हिंदुओं के लिए कमतर दर्जा देने पर जोर नहीं दे सकती। यह कार्य विशुद्ध रूप से हिंदू संगठन द्वारा ही उचित रूप से किया जा सकता है। हालांकि, बापू का दृष्टिकोण यह है कि कांग्रेस, एक राष्ट्रीय संगठन के रूप में कार्य करने के लिए प्रतिबद्ध होने के कारण, इस स्थिति को स्वीकार नहीं कर सकती। न ही सम्मेलन हिंदुओं के संबंध में कांग्रेस के इस रुख पर आपत्ति कर सकता है,

क्योंकि कांग्रेस भारतीय राष्ट्र के एक भाग के रूप में हिंदुओं की ओर से भी बोलने का दावा करती है, और सम्मेलन की संरचना सांप्रदायिक नहीं बल्कि राजनीतिक है। लीग विधानसभा में प्रमुख राजनीतिक दलों में से एक के रूप में उपस्थित है। यदि यह इरादा होता कि विभिन्न समूह सांप्रदायिक आधार पर कार्य करें, तो हिंदू महासभा को आमंत्रित किया जाना चाहिए था और कांग्रेस को बाहर रखा जाना चाहिए था।'
समता सूत्र को जारी रखने के सम्मेलन के निर्णय पर प्रतिक्रिया देते हुए गांधी ने वेवेल को लिखा: 'इसका मतलब यह नहीं है कि मेरी ओर से कोई बदलाव आया है। मैं पहले से कहीं अधिक आश्वस्त हूँ कि गैर-अनुसूचित हिंदू सदस्यों की संख्या मुसलमानों से कम होनी चाहिए थी।' जिन्ना ने एक बार फिर अपना रुख बदल लिया और टालमटोल करके सम्मेलन को रोक दिया। उन्होंने कांग्रेस के इस सुझाव पर कोई प्रतिक्रिया नहीं दी कि लीग को अपने कोटे में दो गैर-लीग मुस्लिम सदस्यों को उसी तरह शामिल करना चाहिए जैसे कांग्रेस अपने कोटे में दो गैर-कांग्रेसी सदस्यों को शामिल कर रही थी। वायसराय ने सुझाव दिया कि जिन्ना और कांग्रेस अध्यक्ष यूरोपीय समूह के नेता रिचर्डसन के साथ बैठक करें। जिन्ना ने यह कहकर बैठक टाल दी कि चूंकि वे कांग्रेस नेता और उड़ीनगर के पूर्व प्रधानमंत्री गोविंद वल्लभ पंत के साथ चल रही वार्ता के प्रति प्रतिबद्ध हैं, इसलिए उन्हें कांग्रेस अध्यक्ष से मिलने की कोई आवश्यकता नहीं है। जिन्ना ने पंत के साथ भी बातचीत को बाधित कर दिया। जिन्ना अब विभाजन और पाकिस्तान के लक्ष्य की ओर दृढ़ता से काम कर रहे थे।
29 तारीख को जब सम्मेलन दोबारा शुरू हुआ, तो वायसराय ने घोषणा की कि चूंकि कोई भी दल किसी समझौते पर नहीं पहुंच सका है, इसलिए

समय बर्बाद करने के बजाय प्रतिनिधि दल राष्ट्रीय सरकार के लिए अपने सदस्यों की सूची उन्हें भेज सकते हैं। वे स्वयं कुछ नाम जोड़ेंगे और संबंधित दलों से परामर्श करने के बाद एक आम सहमति वाली सूची तैयार करेंगे। जिन्ना इसके खिलाफ थे; वे चाहते थे कि वायसराय गारंटी दें कि वे मुस्लिम लीग की सूची को पूरी तरह स्वीकार करेंगे। वायसराय ने ऐसा कोई आश्वासन देने से इनकार कर दिया; अंतिम चयन करना उनका एकमात्र अधिकार था। लेकिन उन्होंने सभी दलों को आश्वासन दिया कि वे उन्हें अपने द्वारा सुझाए गए नामों को स्वीकार या अस्वीकार करने का पर्याप्त अवसर देंगे। जिन्ना ने तब जानना चाहा कि यदि कोई दल अंततः इसे अस्वीकार कर देता है तो क्या वायसराय चयन प्रक्रिया जारी रखेंगे; वायसराय ने पहले से कोई प्रतिबद्धता देने से इनकार कर दिया। जब अंततः वायसराय ने जिन्ना से पूछा कि क्या लीग कोई सूची प्रस्तुत करने जा रही है, तो जिन्ना ने फिर से टालमटोल का सहारा लेते हुए कहा कि चूंकि वे सम्मेलन में व्यक्तिगत रूप से उपस्थित हैं, इसलिए वे पार्टी की ओर से कोई प्रतिबद्धता नहीं जता सकते। यदि वायसराय मुस्लिम लीग की कार्यकारी समिति को अपना प्रस्ताव लिखित रूप में प्रस्तुत करें, तो वे निश्चित उत्तर देंगे। वायसराय सहमत हो गए और सम्मेलन को दो सप्ताह के लिए स्थगित कर दिया गया।
मुस्लिम लीग और यूरोपीय समूह को छोड़कर सभी दलों ने अपनी सूचियाँ प्रस्तुत कीं। कांग्रेस ने सभी अल्पसंख्यक समुदायों को उचित प्रतिनिधित्व देने का प्रयास करते हुए पंद्रह नामों का एक पैनल प्रस्तुत किया। कांग्रेस की सूची में निम्नलिखित नाम शामिल थे:

मौलाना अबुल कलाम आजाद (कांग्रेस मुस्लिम) आसफ अली (कांग्रेस मुस्लिम)
पंडित जवाहरलाल नेहरू (कांग्रेस हिंदू)
सरदार वल्लभभाई पटेल (कांग्रेस हिंदू)
Dr. Rajendra Prasad (Congress Hindu)
एम.ए. जिन्ना (मुस्लिम लीग)
नवाब मोहम्मद इस्माइल खान (मुस्लिम लीग) नवाबजादा लियाकत अली खान (मुस्लिम लीग) डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी (हिंदू महासभा) गगनविहारी मेहता (हिंदू)
राजकुमारी अमृत कौर (महिला, भारतीय ईसाई) मुनिस्वामी पिल्ले (अनुसूचित वर्ग)
राधानाथ दास (अनुसूचित कक्षा)
Sir Ardeshir Dalai (Parsi)
एक सिख सदस्य, जिसका नाम वे बाद में प्रस्तुत करेंगे
जिन्ना ने वेवेल को लिखा: 'नामों की सूची प्रस्तुत करने के आपके सुझाव के संबंध में... लीग की कार्यकारी समिति यह बताना चाहती है कि जब आपके पूर्ववर्ती, लॉर्ड लिनलिथगो ने इसी तरह का प्रस्ताव रखा था... तब कार्यकारी समिति ने इसका विरोध किया था और जब लॉर्ड लिनलिथगो को उनकी आपत्तियों के बारे में बताया गया, तो उन्होंने
प्रस्ताव वापस ले लिया और दूसरा विकल्प सुझाया।
14 जुलाई को जब सम्मेलन की अंतिम बैठक हुई, तो वेवेल ने खुलासा किया कि मुस्लिम लीग से सूची प्राप्त किए बिना ही उन्होंने कार्यकारी परिषद के सदस्यों की एक सूची तैयार कर ली थी, जिसके बारे में उन्हें पूरा विश्वास था कि वह सम्मेलन को स्वीकार्य होगी। लेकिन उनके द्वारा सुझाए गए मुस्लिम नाम जिन्ना को

स्वीकार्य नहीं थे। हालांकि, कांग्रेस द्वारा सूची मांगे जाने के बावजूद वायसराय ने कांग्रेस अध्यक्ष को अपनी सूची नहीं दिखाई; न ही किसी और को वायसराय की सूची दिखाई गई। वायसराय ने सूची को सम्मेलन के समक्ष विचार-विमर्श के लिए नहीं रखा। अपने समापन भाषण में उन्होंने कहा कि सम्मेलन विफल रहा और वे इस विफलता के लिए स्वयं को जिम्मेदार मानते हैं। गांधी ने वायसराय को लिखा, 'यह सोचकर मुझे बहुत दुख होता है कि जो सम्मेलन इतनी खुशी और उम्मीद के साथ शुरू हुआ था, वह स्पष्ट रूप से विफल हो गया - ठीक उसी कारण से, जैसा कि पहले हुआ था। इस बार आपने दोष अपने कंधों पर ले लिया है। लेकिन दुनिया कुछ और सोचेगी। भारत तो निश्चित रूप से ऐसा ही सोचता है।' विफलता के कारणों की पड़ताल करते हुए उन्होंने आगे कहा: 'मुझे आपसे यह संदेह नहीं छुपाना चाहिए कि इसका गहरा कारण शायद आधिकारिक जगत की सत्ता छोड़ने की अनिच्छा है, जिसका अर्थ यह होता कि वस्तुतः नियंत्रण उनके पूर्व कैदियों के हाथों में चला जाता।'
शिमला सम्मेलन की विफलता भारतीय जनता के मनोबल पर गहरा आघात थी, जो एक नई शुरुआत की उम्मीद कर रही थी। यदि सम्मेलन का परिणाम पूरी तरह से कांग्रेस और मुस्लिम लीग के अध्यक्षों द्वारा वायसराय के प्रस्ताव को स्वीकार करने पर निर्भर था, तो अन्य सभी प्रतिनिधियों को बुलाने की क्या आवश्यकता थी? जिन्ना ने एक बयान में वेवेल की योजना को 'जाल' और मुस्लिम लीग के लिए 'मौत का फरमान' बताया। उन्होंने दावा किया कि यदि सरकार में सभी मुस्लिम मुस्लिम लीग से भी हों, तो भी वे मंत्रिमंडल में अल्पसंख्यक ही रहेंगे। जिन्ना ने कहा कि 'सभी अल्पसंख्यकों' के प्रतिनिधि 'वास्तव में, हमेशा... हमारे खिलाफ... मतदान करेंगे'। ऐसा लगता है कि जिन्ना अपने ही उस सिद्धांत को भूल गए थे जिसे वे

अक्सर दोहराते थे कि मुस्लिम लीग भारत में सभी अल्पसंख्यकों की रक्षक और हिमायती है, और कांग्रेस 'हिंदुओं' का भी नहीं, बल्कि केवल 'सवर्ण हिंदुओं' का प्रतिनिधित्व करती है। अब उन्होंने दावा किया: 'अनुसूचित जाति, सिख और ईसाई जैसे अन्य सभी अल्पसंख्यकों का लक्ष्य कांग्रेस के समान ही है... उनका लक्ष्य और विचारधारा एक संयुक्त भारत की है। जातीय और सांस्कृतिक रूप से वे हिंदू समाज से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं।' यह जिन्ना की दोहरी बात का विशिष्ट उदाहरण था।
सम्मेलन का अंतिम परिणाम यह हुआ कि 'जाति-हिंदू-मुस्लिम समानता' का सूत्र व्यावहारिक राजनीति में लागू हो गया और स्वतंत्रता की पूर्व संध्या पर धार्मिक विभाजन के सिद्धांत को आधिकारिक रूप से एक रूढ़िवादी मान्यता मिल गई। इस सम्मेलन ने एक ऐसे निबंध की शुरुआत भी की, जो बाद में कैबिनेट मिशन की वार्ताओं के दौरान बहुत महत्वपूर्ण हो गया, जिसमें ब्रिटिश राजनेताओं के 'इरादों' को उनकी घोषणाओं के पाठ से ही झुठला दिया गया और जो बात कहने में अस्वीकार की गई थी, उसे 'अस्पष्ट मध्य मार्ग' के माध्यम से व्यवहार में अपनाया गया। संयुक्त राष्ट्र राहत और पुनर्वास प्रशासन के फ्रांसिस सेयर ने गांधीजी के साथ एक साक्षात्कार में लॉर्ड वेवेल के इरादों पर टिप्पणी करते हुए कहा, 'आप मानेंगे कि वेवेल ने गतिरोध को तोड़ने का ईमानदारी से प्रयास किया था।'
गांधी ने जवाब दिया, 'ईमानदारी से किया गया प्रयास ईमानदारी से ही समाप्त होना चाहिए था।'
ब्रिटिश प्रशासन के बेईमान इरादों की पुष्टि नेहरू को लंदन से मिले एक पत्र से हुई: 'अब यह ज्ञात है कि वेवेल का प्रस्ताव चुनाव की आवश्यकताओं के तहत बरकरार रखा गया था। साथ ही, जिन्ना

के बिना सरकार बनाने का स्पष्ट रास्ता अपनाए बिना वेवेल द्वारा वार्ता को समाप्त करना यहीं से निर्देशित किया गया था।' मंत्रिमंडल आयोग
शिमला सम्मेलन की विफलता के बाद, भारत निरंतर उथल-पुथल के दौर से गुजर रहा था। आत्मनिर्णय और स्वतंत्रता की मांग जोर पकड़ रही थी। कांग्रेस कार्यकर्ता बेचैन थे; एक और टकराव की आशंका मंडरा रही थी।
शिमला सम्मेलन के बाद गांधीजी ने मिले थोड़े से अवकाश का उपयोग अपने सहयोगियों की देखभाल के लिए किया। जेल में रहने के दौरान पटेल का स्वास्थ्य बिगड़ गया था; उन्हें आंत्र की ऐंठन की बीमारी हो गई थी। डॉक्टरों ने एक बड़े ऑपरेशन की सलाह दी, लेकिन जोखिम बहुत अधिक था। गांधीजी ने सुझाव दिया कि पटेल उनकी देखरेख में रहें और वे प्राकृतिक चिकित्सा से उनका इलाज करें। इस प्रकार, अगस्त 1945 के तीसरे सप्ताह में, वे दोनों पुणे के पास उर्ली कंचन नामक एक छोटे से गाँव में डॉ. दिनशॉ मेहता द्वारा संचालित प्राकृतिक चिकित्सा क्लिनिक में भर्ती हुए। वे अगले तीन महीने तक वहीं रहे। क्लिनिक में रहते हुए उनके साथ घटी एक घटना का वर्णन करना महत्वपूर्ण है। इस घटना ने गांधीजी के दूसरे पुत्र मणिलाल की पत्नी, उनकी बहू सुशीला के मन पर गहरी छाप छोड़ी।
एक दिन एक युवक एक बड़ी टोकरी लेकर गांधीजी से क्लिनिक में मिलने आया। उसने सुशीला से कहा, 'मैं गांधीजी के लिए फल लाया हूँ।' सुशीला ने उसका नाम पूछा और बताया कि गांधीजी व्यस्त हैं, इसलिए वह उनसे मिल नहीं पाएगा। युवक बेचैन और घबराया हुआ लग रहा था और उसने अपना नाम बताने से इनकार कर दिया। उसने टोकरी प्रतीक्षालय में रखी और चुपके से चला गया। कुछ देर बाद, गांधीजी

अफ्रीका के डरबन में उनसे मिलने आए प्रख्यात गुजराती लेखक स्वर्गीय चंद्रकांत बख्शी को सुनाई।
इंग्लैंड में हुए चुनाव परिणामों से स्पष्ट हो गया कि ब्रिटेन में भारी बहुमत भारत में ब्रिटिश शासन की समाप्ति के पक्ष में था। लेबर पार्टी ने चुनावों में शानदार जीत हासिल की और सरकार बनाई। भारत के नए राज्य सचिव लॉर्ड पेथिक-लॉरेंस गांधीजी के पुराने मित्र थे। उनकी नियुक्ति पर बधाई देते हुए गांधीजी ने लिखा, 'यदि भारत कार्यालय को सम्मानजनक अंत मिले और उसकी राख से एक महान स्मारक का उदय हो, तो इस कार्य के लिए आपसे अधिक योग्य व्यक्ति कौन हो सकता है?', जिस पर लॉर्ड पेथिक-लॉरेंस ने उत्तर दिया, 'मुझे पूरी आशा है कि हमारी वर्षों पुरानी व्यक्तिगत मित्रता भारत और उसके लोगों के स्थायी हित को प्राप्त करने में सामंजस्यपूर्ण सहयोग के रूप में फलदायी होगी।'
अगस्त के अंतिम सप्ताह में वायसराय को लंदन में नई लेबर सरकार के साथ बैठक के लिए आमंत्रित किया गया था, ताकि भारतीय समस्या की नए सिरे से समीक्षा की जा सके और वायसराय के परामर्श से इसका समाधान निकाला जा सके। उसी समय, केंद्रीय और प्रांतीय विधानसभाओं के लंबे समय से स्थगित चुनावों की घोषणा की गई, जो सर्दियों के दौरान आयोजित किए जाने थे। 19 सितंबर 1945 को, वायसराय के लंदन से लौटने के बाद, भारत में एक बयान जारी किया गया, जिसमें एचएमजी और वायसराय दोनों ने केंद्रीय विधानसभा और प्रांतों के चुनावों के तुरंत बाद, (1) प्रांतों में मंत्रिस्तरीय उत्तरदायित्व को पुनः सौंपने के लिए आमंत्रित करने, (2) यथाशीघ्र एक संविधान-निर्माण निकाय गठित करने और (3) प्रमुख भारतीय दलों के समर्थन से वायसराय की कार्यकारी परिषद का पुनर्गठन करने की मंशा की घोषणा की।

गांधी जी बंगाल के दौरे पर निकले, जो उस समय ऑस्ट्रेलियाई गवर्नर रिचर्ड गैविन केसी के शासन में था। केसी ने गांधी जी को बंगाल आने का निमंत्रण भेजा था। बंगाल का मिदनापुर जिला चक्रवात, बाढ़, मानव निर्मित भुखमरी और इन सबसे ऊपर सरकारी दमन से बुरी तरह तबाह हो चुका था। केसी ने गांधी जी को इस तबाह जिले का दौरा करने की अनुमति दे दी और इस तरह, जब देश चुनावों की तैयारियों में व्यस्त था, गांधी जी 30 नवंबर 1945 को बंगाल के लिए रवाना हो गए।
गांधी जी के बारे में अपने विचार लिखते हुए केसी ने कहा: “संतों में वे एक राजनेता हैं, और राजनेताओं में वे एक संत हैं। श्री गांधी जी का सबसे बड़ा गुण उनकी गर्मजोशी भरी मानवता है... वे अपने विरोधी के सामने सार्वजनिक रूप से अपनी बात रख सकते हैं और फिर भी उन्हें किसी भी प्रकार की कड़वाहट का एहसास नहीं होने देते।” अगले सप्ताह गांधी जी ने तबाह हुए मिदनापुर जिले का दौरा शुरू किया। यह जिला अभूतपूर्व प्रचंड चक्रवात और ज्वारीय बाढ़ से तबाह हो गया था, जिसने पिछले दो दशकों में स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान भारत में देखी गई किसी भी घटना को धूमिल कर दिया था। जिले के कभी हरे-भरे धान के खेत मनुष्यों और पशुओं के शवों से भरे पड़े थे। मृतकों में से कई लोगों को उसी जमीन के नीचे अंधाधुंध दफना दिया गया था जहाँ गांधी जी ने प्रार्थना सभा की थी। जमीन के ऊपर त्रासदी का कोई निशान नहीं था। प्रार्थना के बाद अपने संबोधन में गांधी जी ने कहा, “ईश्वर दयापूर्वक पृथ्वी पर मनुष्य की त्रासदी के कलंक को हरियाली के आवरण में छुपा देता है।”
वायसराय इंग्लैंड स्थित एचएमजी को भारत की स्थिति से अवगत कराते रहते थे। उनकी रिपोर्टें हर महीने और भी गंभीर होती जा

रही थीं। भारत में हालात तेजी से बिगड़ रहे थे। भारत में ब्रिटिश शासन को कायम रखना हर महीने और भी मुश्किल और कम न्यायसंगत होता जा रहा था। औपनिवेशिक सरकार लगभग सभी भारतीय वर्गों में तेजी से अलोकप्रिय होती जा रही थी। 'जातिवादी हिंदू कांग्रेस' के साथ टकराव की आशंका मंडरा रही थी। दिसंबर 1945 में व्हाइटहॉल को भेजे गए एक संदेश में वायसराय ने स्पष्ट किया कि यदि कांग्रेस को दबा दिया गया, तो इससे एक ऐसा शून्य उत्पन्न हो जाएगा क्योंकि कोई अन्य संगठन इसकी जगह नहीं ले सकता। चुनावों के बाद, यदि इस बीच गतिरोध को हल करने के लिए कोई कार्रवाई नहीं की गई, तो कांग्रेस निश्चित रूप से अपनी मांग को और भी उग्र रूप में प्रस्तुत करेगी, और तब इसका विरोध करना बहुत मुश्किल हो जाएगा। कांग्रेस अपनी मांग को लागू करवाने के लिए 'प्रत्यक्ष कार्रवाई' का सहारा भी ले सकती है, और ऐसी स्थिति में सरकार खुद को बिना किसी समर्थक के पाएगी—यहां तक कि राजकुमारों के भी नहीं। रिहा किए गए कांग्रेस नेताओं का जिस उन्मादपूर्ण उत्साह के साथ स्वागत किया गया, वह इस बात का स्पष्ट संकेत था कि 'करो या मरो' की भावना ने जड़ पकड़ ली थी।
सशस्त्र बल भी इस आक्रोश और राष्ट्रवादी भावना से अछूते नहीं रहे। जबलपुर और कुछ अन्य छावनियों में विद्रोह भड़क उठे। पुणे में इसी तरह का विद्रोह गांधीजी द्वारा भारतीय सैनिकों के प्रतिनिधियों को गुप्त रूप से दिए गए परामर्श के कारण टल गया। नेताजी सुभाष चंद्र बोस के नेतृत्व में बर्मा में अंग्रेजों से लड़े भारतीय राष्ट्रीय सेना के विचाराधीन सैनिकों को पूरे भारत में सम्मानित किया गया। फरवरी 1946 में कलकत्ता में तीन दिनों तक दंगे भड़क उठे, इस दौरान पुलिस ने छात्रों के जुलूसों पर चौदह बार गोलीबारी की। ये सभी चेतावनी संकेत थे और इनके

महत्व को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता था। भारत में ब्रिटिश सत्ता के प्रतिनिधि और जनता, जिन पर उनका शासन था, के बीच की खाई पहले कभी इतनी गहरी नहीं थी। अंग्रेजों के इरादों पर अविश्वास गहरा था और आजादी की तीव्र इच्छा थी। वायसराय को आशंका थी कि जल्द ही औपनिवेशिक कब्ज़ाधारियों के पास पूर्ण और स्वैच्छिक आत्मसमर्पण या भारत पर वस्तुतः पुनः कब्ज़ा और अनिश्चितकालीन सैन्य कब्ज़ा ही एकमात्र विकल्प बचेगा, लेकिन 1946 के इंग्लैंड में जनमत इन विकल्पों को बर्दाश्त करने को तैयार नहीं था। अंग्रेजों के पास केवल एक ही विकल्प बचा था और उन्हें गांधी के अहिंसक मुक्ति आंदोलन द्वारा साम्राज्य को पहुँचाए गए आघात का बदला लेने के साथ-साथ अपनी प्रतिष्ठा भी बचानी थी।
प्रांतों और केंद्रीय विधानसभा के चुनावों के परिणाम आ गए। मुस्लिम लीग ने कांग्रेस पर बढ़त हासिल कर ली थी, जिसे 1942-45 के बीच बुरी तरह से दबा दिया गया था, और ब्रिटिश प्रशासन से उसे संरक्षण प्राप्त था। इसी वजह से उसने केंद्रीय विधानसभा की लगभग सभी मुस्लिम सीटों के साथ-साथ सभी प्रांतीय विधानसभाओं में भी जीत हासिल की। हालांकि, उत्तरी पश्चिमी प्रांत (एनडब्ल्यूएफपी) को छोड़कर, जहां खान बंधुओं के नेतृत्व वाली कांग्रेस सरकार ने चुनावों में शानदार जीत दर्ज की, न केवल विधानसभा पर कब्जा किया बल्कि मुस्लिम सीटों के बहुमत पर भी लीग को हराया। कांग्रेस ने ग्यारह में से आठ प्रांतों में सरकार बनाई और पंजाब में उसने संघवादी पार्टी के साथ गठबंधन किया, जिसने सांप्रदायिक संबंधों को दरकिनार कर दिया। मुस्लिम लीग ने बंगाल और सिंध में सरकार बनाई। सिंध में उसके पास मामूली बहुमत था और वह ब्रिटिश गवर्नर सर फ्रांसिस मुडी की कृपा से ही सरकार बनाने और सत्ता में बने रहने में सक्षम रही।

अब अंग्रेजों के लिए सही काम करने का समय आ गया था। सितंबर 1945 में एचएमजी की ओर से वायसराय द्वारा किए गए वादों को पूरा करना आवश्यक था। भारत की प्रमुख राजनीतिक पार्टियों के समर्थन से वायसराय परिषद का गठन किया जाना था और एक संविधान-निर्माण निकाय का गठन किया जाना था; यह सब भारत की जनता से किए गए वादे का हिस्सा था। ब्रिटिश सरकार ने भारतीय पार्टियों के साथ बातचीत की जिम्मेदारी पूरी तरह से वायसराय के हाथों में न छोड़ने का फैसला किया। 19 फरवरी 1946 को, सरकार ने ब्रिटिश संसद में घोषणा की कि तीन कैबिनेट मंत्रियों का एक मिशन जल्द ही भारत भेजा जाएगा। वहां, वायसराय के सहयोग से, वे 'सितंबर 1945 की वायसराय की घोषणा में उल्लिखित कार्यक्रम को लागू करने' की दिशा में आगे बढ़ेंगे। इसकी घोषणा करते हुए, लेबर पार्टी के प्रधानमंत्री क्लेमेंट एटली ने 15 मार्च 1946 को हाउस ऑफ कॉमन्स में कुछ बहुत ही प्रासंगिक टिप्पणियां कीं:
भारत को अपने भावी संविधान का चुनाव स्वयं करना होगा। मुझे आशा है कि भारतीय जनता ब्रिटिश राष्ट्रमंडल में बने रहने का विकल्प चुनेगी... लेकिन यदि वह ऐसा चुनती है, तो यह उसकी अपनी स्वतंत्र इच्छा होनी चाहिए... दूसरी ओर, यदि वह स्वतंत्रता का चुनाव करती है, तो हमारी राय में उसे ऐसा करने का अधिकार है... मैं भली-भांति जानता हूँ कि जब मैं भारत की बात करता हूँ, तो मैं एक ऐसे देश की बात कर रहा हूँ जिसमें विभिन्न नस्लों, धर्मों और भाषाओं का संगम है... हम अल्पसंख्यकों के अधिकारों के प्रति अत्यंत सजग हैं, और अल्पसंख्यकों को भयमुक्त जीवन जीने का अधिकार होना चाहिए। दूसरी ओर, हम किसी अल्पसंख्यक को बहुसंख्यक की प्रगति पर वीटो लगाने की अनुमति नहीं दे सकते... भारतीय राज्यों का मुद्दा भी है... मुझे एक क्षण के लिए भी विश्वास नहीं है कि

भारतीय राजकुमार भारत की प्रगति में बाधा बनना चाहेंगे। लेकिन, अन्य समस्याओं की तरह, यह एक ऐसा मामला है जिसका समाधान भारतीय स्वयं करेंगे। पहली बार भारतीय प्रश्न के समाधान की प्रक्रिया में बाधा डालने वाली तीन प्रमुख रुकावटें दूर हो गईं: राजनीतिक प्रगति पर अल्पमत का वीटो, राजकुमारों के प्रति दायित्व और बिना शर्त स्वतंत्रता के अधिकार से वंचित करना।
लेकिन 'बीते हालातों से उपजी' अन्य बाधाएँ अभी भी इस प्रक्रिया के लिए खतरा बनी हुई थीं। भारत को इन 'बीते हालातों' की भारी कीमत चुकानी पड़ी। गांधीजी इस प्रक्रिया को देखते हुए चिंतित थे। यह देश के भविष्य का निर्णायक समय था। क्या उनके सपनों का भारत अपने गौरवशाली अतीत के योग्य साबित होगा? उन्होंने घोषणा की, 'ब्रिटिश मंत्रिमंडल का प्रतिनिधिमंडल जल्द ही हमारे बीच होगा। उनकी नेक नियत पर पहले से ही संदेह करना कमजोरी की निशानी होगी। एक साहसी राष्ट्र होने के नाते, यह हमारा कर्तव्य है कि हम ब्रिटिश मंत्रियों के इस कथन को सत्य मानें कि वे भारत को उसका हक दिलाने आ रहे हैं। अगर कोई कर्जदार पश्चाताप में अपना कर्ज चुकाने आपके घर आए, तो क्या उसका स्वागत करना आपका कर्तव्य नहीं होगा? क्या अन्याय की याद में उसका अपमान और तिरस्कार करना कायरता नहीं होगी?'
मार्च 1946 में, जब गांधी जी प्राकृतिक चिकित्सा केंद्र में ठहरे हुए थे, उन्हें ब्रिटिश कैबिनेट प्रतिनिधिमंडल से अप्रैल के पहले सप्ताह में दिल्ली में उनसे मिलने का व्यक्तिगत निमंत्रण मिला, ताकि इस बात पर चर्चा की जा सके कि ब्रिटिश सरकार भारत छोड़ने की प्रक्रिया को सबसे तेज़ी से कैसे पूरा कर सकती है। दिल्ली से निमंत्रण लेकर आए विशेष दूत सुधीर घोष लगभग उर्ली कंचन नहीं पहुँच पाए। उन्हें हवाई अड्डे ले जाने के लिए

यहीं आयोजित की गईं, जिसके परिणामस्वरूप 150 साल पुराने ब्रिटिश राज का अंत हुआ, स्वतंत्र भारत का जन्म हुआ और विभाजन की त्रासदी घटी।
हरिजन कॉलोनी एक खेल के मैदान के आसपास बसी थी, जहाँ गांधी जी शाम की प्रार्थना करते थे। उग्रवादी हिंदू युवकों का एक समूह भी उस मैदान का इस्तेमाल शारीरिक प्रशिक्षण और हथियारों व आग्नेय शस्त्रों के अभ्यास के लिए करता था। वे अपनी दैनिक तैयारी का समापन अपनी भारत माता को सलामी देकर करते थे, जो 'पराधर्मी' यानी अन्य धर्मों और आस्थाओं के लोगों, अर्थात् मुसलमानों के प्रति असहिष्णु थी। वे आरएसएस के सदस्य थे, जो कट्टरपंथी मुस्लिम धार्मिक कट्टरपंथियों के एक पंथ - मुस्लिम नेशनल गार्ड - की प्रतिकृति थी।
कैबिनेट मिशन में ब्रिटिश संसद के तीन सदस्य शामिल थे—लॉर्ड पेथिक-लॉरेंस, सर स्टैफोर्ड क्रिप्स और अल्बर्ट पंचम अलेक्जेंडर। गांधीजी पेथिक-लॉरेंस के प्रशंसक थे। क्रिप्स को अक्सर 'पश्चिमी गांधी' कहा जाता था। उनकी सादगी, शाकाहार और आध्यात्मिक उपचार शक्ति में विश्वास ने उन्हें गांधीजी का प्रिय बना दिया, जिन्हें एक 'साथी सनकी और सनकी' पाकर खुशी हुई। कैबिनेट मिशन की बातचीत सांप्रदायिक अशांति के माहौल में हुई। मुस्लिम लीग इस बात से बेहद नाराज थी कि ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने उसके वीटो अधिकार को छीनने की धमकी दी थी। जिन्ना ने 'लीग को दरकिनार करने' के इस प्रयास की कड़ी निंदा करते हुए इसे 'विश्वासघात' बताया। अपने अतीत के अनुरूप, कई स्थानों पर सांप्रदायिक दंगे भड़के, सांप्रदायिक रूप से संवेदनशील क्षेत्रों में चाकूबाजी की घटनाएं हुईं। मुस्लिम लीग की संलिप्तता स्पष्ट थी।

इसी बीच, भारतीय राष्ट्रीय सेना के कैदियों को लाल किले में रखा गया था और उनका कोर्ट मार्शल चल रहा था। पूरे देश का ध्यान उन पर केंद्रित था। अंग्रेजों ने आईएनए के बंदियों के ठिकाने को गुप्त रखने की कोशिश की थी, लेकिन पटेल को उनके बारे में जानकारी मिल गई थी और उन्होंने इसे गांधीजी के ध्यान में लाया। कुछ देशभक्तों का कोर्ट मार्शल हो चुका था और उन्हें गोली मार दी गई थी। जैसे ही यह खबर गांधीजी तक पहुंची, उन्होंने लॉर्ड वेवेल को लिखा: 'मैं यह पत्र भयभीत और कांपते हुए लिख रहा हूं, कहीं मैं अपनी सीमा पार न कर जाऊं। मैं श्री सुभाष बाबू द्वारा गठित या उनके नेतृत्व में गठित कोर के सदस्यों के मुकदमे की प्रगति देख रहा हूं। हालांकि मैं शस्त्र बल द्वारा किसी भी प्रकार की रक्षा का समर्थन नहीं करता, फिर भी मैं शस्त्रधारी व्यक्तियों द्वारा अक्सर प्रदर्शित शौर्य और देशभक्ति को नजरअंदाज नहीं करता... भारत इन लोगों का आदर करता है जिन पर मुकदमा चल रहा है। निःसंदेह सरकार के पास अपार शक्ति है। लेकिन यदि इसका उपयोग सर्वव्यापी भारतीय विरोध के बावजूद किया जाता है, तो यह उस शक्ति का दुरुपयोग होगा।' मुझे यह कहने का अधिकार नहीं है कि क्या किया जाना चाहिए, सिवाय इसके कि जो किया जा रहा है वह सही तरीका नहीं है...
इसके बाद गांधी जी भारत के कमांडर-इन-चीफ जनरल औचिनलेक से मिले। जनरल द्वारा दिए गए आश्वस्त करने वाले उत्तर से उन्होंने अपनी प्रसन्नता व्यक्त की। गांधी जी ने आईएनए के विचाराधीन कैदियों के पक्ष में आवाज़ उठाई और उन्हें बचाने के लिए हर संभव प्रयास किया, हालांकि वे उनकी विचारधाराओं का समर्थन नहीं करते थे। नेहरू, जिन्होंने अक्सर अहिंसा की प्रभावशीलता पर संदेह व्यक्त किया था, अब आश्वस्त थे कि भारत हिंसा का सहारा लेकर या

किसी अन्य राष्ट्र की सहायता से स्वतंत्रता प्राप्त नहीं कर सकता। सीडब्ल्यूसी ने अपनी राय दर्ज की कि 'यद्यपि कांग्रेस के लिए वर्तमान में विचाराधीन आईएनए के सदस्यों का बचाव करना और उनके पीड़ितों की सहायता करना उचित है, लेकिन कांग्रेसियों को यह नहीं भूलना चाहिए कि इस समर्थन और सहानुभूति का अर्थ यह नहीं है कि कांग्रेस शांतिपूर्ण और वैध साधनों से स्वराज प्राप्त करने की अपनी नीति से किसी भी तरह से विचलित हुई है।' गांधी जी, पटेल के साथ, एक बार काबुल लाइन्स में और एक बार लाल किले में आईएनए के बंदियों से मिलने गए। लाल किले में कैदियों ने बताया कि भारतीय सशस्त्र बलों (आईएनए) में उन्होंने धर्म और जाति के भेदभाव को पूरी तरह मिटा दिया था और हिंदू-मुस्लिम एक ही भोजन करते थे। हालांकि, युद्धबंदी होने के कारण, उनके ब्रिटिश जेलरों ने उनके साथ भेदभाव किया। शिविर अधिकारियों द्वारा उन्हें 'हिंदू चाय' और 'मुस्लिम चाय' अलग-अलग परोसी जाती थी। ब्रिटिश भारत में भारतीय सशस्त्र बलों में यह एक आम प्रथा थी। गांधी ने उनसे कहा कि उन्हें इस समस्या को दूर करने के लिए, 'दोनों को आधा-आधा मिलाकर आपस में बांट लेना चाहिए!'
उन्होंने जवाब दिया, 'हम बिल्कुल यही कर रहे हैं।'
सुभाष चंद्र बोस की मृत्यु के बाद आईएनए में पैदा हुई दरारों के कारण, आईएनए के संस्थापकों में से एक जनरल मोहन सिंह ने नजरबंदी शिविर में अलग क्वार्टर को प्राथमिकता दी। गांधीजी उनसे मिलने गए और फिर उस फील्ड अस्पताल गए जहाँ घायल युद्धबंदियों को रखा गया था। वहाँ उनकी मुलाकात मेजर-जनरल चटर्जी, मेजर-जनरल लोगनाथन और कर्नल हबीब-उर रहमान से हुई। आईएनए के कैदियों से मिलने से पहले गांधीजी बोस की विमान दुर्घटना में मृत्यु की खबरों पर विश्वास करने से इनकार कर रहे थे। कर्नल हबीब-उर

रहमान, जो नेताजी के साथ विमान में थे, ने दुर्घटना का प्रत्यक्षदर्शी विवरण दिया। उन्होंने गांधीजी को बताया, 'नेताजी के हाथों और शरीर के अन्य हिस्सों पर गंभीर रूप से जलने के निशान थे। लेकिन इन निशानों की परवाह किए बिना उन्होंने मुझसे पूछा कि मैं कैसा हूँ। मैंने उन्हें बताया कि मैं ठीक हूँ और ठीक होने की उम्मीद करता हूँ। उन्होंने मुझे बताया कि उन्हें बचने की उम्मीद नहीं है और अपना अंतिम संदेश दिया: "मैं जा रहा हूँ, लेकिन मेरे देशवासियों और सभी संबंधितों को बता देना कि भारतीय स्वतंत्रता के लिए संघर्ष तब तक जारी रहना चाहिए जब तक लक्ष्य प्राप्त न हो जाए।" दुर्घटना सुबह 9:30 बजे हुई। दोपहर साढ़े तीन बजे उन्होंने अंतिम सांस ली, लगभग अंत तक वे होश में रहे। असहनीय पीड़ा के बावजूद उनके होंठों से एक भी आह नहीं निकली। अगले दिन अपनी प्रार्थना सभा में गांधीजी ने घोषणा की कि अपने पहले के विश्वास के विपरीत, अब उन्हें पूरा यकीन है कि नेताजी सुभाष चंद्र बोस का निधन हो चुका है।
इससे पहले, 2 अप्रैल को पेथिक-लॉरेंस के साथ एक बैठक के दौरान, गांधी ने विश्वास कायम करने के लिए कुछ उपाय सुझाए थे। इनमें से एक था सभी राजनीतिक कैदियों की रिहाई, जिनमें वे लोग भी शामिल थे जिन्हें स्वतंत्रता संग्राम में तोड़फोड़ के मामलों में गिरफ्तार किया गया था: 'अब जब स्वतंत्रता संग्राम एक साझा उद्देश्य बन गया है, तो वे राज्य के लिए खतरा नहीं हो सकते।' गांधी की इस सिफारिश को धीरे-धीरे लागू किया गया। समाजवादी नेता जयप्रकाश नारायण और डॉ. राम मनोहर लोहिया को 12 अप्रैल को रिहा कर दिया गया। भारतीय राष्ट्रीय सेना के विचाराधीन कैदियों को दो दिन बाद रिहा कर दिया गया।

ब्रिटिश कैबिनेट मिशन के सदस्य 23 मार्च 1946 को कराची हवाई अड्डे पर पहुंचे और अगले दिन दिल्ली पहुंचे। 1 से 17 अप्रैल तक, उन्होंने विभिन्न 'भारतीय प्रतिनिधियों' से मुलाकात की और 182 बैठकों में 472 नेताओं से मिले, ताकि विभिन्न दलों के बीच 'अधिकतम आम सहमति' तक पहुंचा जा सके। उन्होंने ब्रिटिश प्रोटोकॉल को दरकिनार करते हुए भारतीय नेताओं से व्यक्तिगत संपर्क स्थापित किए। पहले सप्ताह के बाद, भारत की जनता की उम्मीदें बढ़ने लगीं। उन्होंने अंग्रेजों के रवैये में बदलाव देखा और सोचा कि केंद्र में जल्द ही एक राष्ट्रीय सरकार का गठन होगा। उनका मानना था कि कैबिनेट मिशन द्वारा अपनाए गए बदले हुए रवैये और बातचीत के तरीके तथा संसद में प्रधानमंत्री क्लेमेंट एटली के बयान से अंग्रेजों की ओर से एक नया दृढ़ विश्वास और ईमानदारी झलकती है। कैबिनेट प्रतिनिधिमंडल के एक सदस्य वुडरो वायट ने अप्रैल के दूसरे सप्ताह में गांधीजी से मुलाकात की। उन्होंने पूछा, 'क्या आपको लगता है कि हम आपका पीछा छोड़ देंगे?' 'मुझे लगता है कि तुम कर लोगे। लेकिन तुम्हारे पास ताकत होनी चाहिए।'
वायट ने लीग द्वारा पाकिस्तान की मांग से उत्पन्न बाधाओं का जिक्र किया। 'अगर हम वह लागू कर दें जिसे हम न्यायसंगत समाधान मानते हैं और आगे बढ़ जाएं तो क्या होगा?'
'सभी नाराज हो जाएंगे।'
तो क्या यह फैसला भारत पर ही छोड़ देना चाहिए?
'जी हां, इसे कांग्रेस और लीग पर छोड़ दीजिए। जिन्ना की प्रतिभा और ब्रिटिश सहयोग के बदौलत उन्होंने एक शक्तिशाली संगठन खड़ा किया है, जिसमें न केवल सभी मुसलमान, बल्कि अधिकांश मुसलमान शामिल हैं। मैं आपको सलाह दूंगा कि आप उन्हें आज़माएं और अगर

आपको लगे कि वे अपना काम ठीक से नहीं कर सकते, तो कांग्रेस से सलाह लें... लेकिन किसी भी हालत में ब्रिटिश कब्ज़ा तुरंत समाप्त होना चाहिए।'
'और अंग्रेजों के चले जाने के बाद क्या होगा?'
'संभवतः मध्यस्थता होगी... लेकिन खून-खराबा भी हो सकता है। अगर मैं भारत को अपनी बात मनवाने में कामयाब हो गया तो दो दिनों में अहिंसा के माध्यम से मामला सुलझ जाएगा, वरना यह मामला और लंबा खिंच सकता है। फिर भी, यह ब्रिटिश शासन के अधीन की स्थिति से बदतर नहीं होगा...'
सर गोपालस्वामी अय्यंगार से बात करते हुए सर क्रिप्स ने टिप्पणी की, 'जहां समझौता करना हो, वहां सबसे मजबूत पक्ष के लिए भी अपने उचित हक से कम राशि स्वीकार करना आवश्यक हो सकता है, ताकि उनके खिलाफ संभावित फैसले से बचा जा सके।'
लीग के कुछ प्रभावशाली मुस्लिम समर्थकों के बीच यह राय ज़ोर पकड़ रही थी कि पाकिस्तान को लेकर जिन्ना का हठधर्मिता मुसलमानों के हित को नुकसान पहुंचा रहा है। सर क्रिप्स ने इस बात से सहमति जताई कि जिन्ना का पाकिस्तान एक 'असंभव विचार' था, जिसे लीग भी समझ चुकी थी। उन्होंने कहा, 'जब मैं किसी व्यक्ति को अपने विरोधियों की निंदा करने में और अधिक मुखर और आक्रामक होते देखता हूं, तो मुझे यह आभास होता है... कि वह यह समझने लगा है कि जिस चरमपंथी तर्क का वह समर्थन कर रहा है, वह अब निराशाजनक होता जा रहा है।'
17 अप्रैल को कैबिनेट मिशन ने सात दिन का अवकाश लिया और नेताओं के साथ हुई मुलाकातों और अनौपचारिक वार्ताओं के परिणामों की समीक्षा करने के लिए कश्मीर रवाना हो गया। वे 24 अप्रैल को लौटे; 27 अप्रैल को पेथिक-लॉरेंस ने कांग्रेस और मुस्लिम लीग के

अध्यक्षों को पत्र लिखकर 'समझौते के लिए एक और प्रयास' करने का सुझाव दिया। उन्होंने समझौते के लिए कुछ मूलभूत सिद्धांत सुझाए: विदेश मामलों, रक्षा और संचार का प्रबंधन करने वाली एक केंद्र सरकार होनी चाहिए; प्रांतों के दो समूह होंगे, एक मुख्य रूप से हिंदू प्रांतों का और दूसरा मुस्लिम प्रांतों का। ये समूह उन सभी अन्य विषयों पर विचार करेंगे जो प्रांत चाहते हैं; प्रांतीय सरकारें अन्य सभी विषयों पर विचार करेंगी और उनके पास सभी अवशिष्ट संप्रभु अधिकार होंगे। पेथिक-लॉरेंस ने अपने पत्र में आगे सुझाव दिया कि यदि लीग और कांग्रेस इस आधार पर बातचीत करने के लिए तैयार हैं, तो कैबिनेट मिशन के साथ उनकी एक सम्मेलन बैठक की व्यवस्था की जाएगी। उन्होंने शिमला को संभावित स्थान के रूप में सुझाया और दोनों दलों के अध्यक्षों से चार प्रतिनिधियों को नामित करने का अनुरोध किया जो उनकी ओर से बातचीत करेंगे।
कांग्रेस ने सांप्रदायिक आधार पर समूहों के गठन और प्रत्येक समूह के लिए अलग-अलग विधायिका और कार्यकारी तंत्र के गठन का विरोध किया था। उसने किसी प्रांत को किसी विशेष समूह में शामिल होने के लिए बाध्य करने का भी विरोध किया। एनडब्ल्यूएफपी में खान बंधुओं के नेतृत्व वाली कांग्रेस सरकार थी। कैबिनेट मिशन की योजना के तहत, एनडब्ल्यूएफपी को अन्य प्रांतों में मुस्लिम लीग के बहुमत वाले अलग समूह में शामिल होना पड़ता। यहां तक कि देश के पूर्वी हिस्से में स्थित असम, जो एक गैर-मुस्लिम प्रांत है, भी ऐसी स्थिति में आ गया था जहां उसे मुस्लिम प्रांत समूह में शामिल होना पड़ता क्योंकि उसके पड़ोसी प्रांत पूर्वी और पश्चिमी बंगाल में मुस्लिम लीग का शासन था और वे एक अलग समूह का विकल्प चुनते। पेथिक-लॉरेंस के पत्र के जवाब में कांग्रेस

पत्र मिला था, जिसे गांधी, कांग्रेस अध्यक्ष या सीडब्ल्यूसी की जानकारी के बिना लिखा गया था। गांधी के लिए पत्र की सामग्री से ज़्यादा उसका महत्व था: कांग्रेस के भीतर एक दरार उजागर हो गई थी और यह आगे के विघटन का संकेत दे रही थी। लौटने पर, बहुत परेशान गांधी ने इस घटना का जिक्र अपने दो सहयोगियों से किया, जिनमें से एक सीडब्ल्यूसी का सदस्य था। वे इस पर विश्वास करने को तैयार नहीं थे और उन्हें लगा कि गांधी ने गलत समझा है। गांधी ने ज़ोर देकर कहा: 'मैं न तो बहरा हूँ और न ही इतना मूर्ख कि इतनी साधारण सी बात को न सुन सकूँ और सही-सही न बता सकूँ।' अगले दिन, क्रिप्स गांधी से मिले और पत्र साथ लाए। उन्होंने कहा, 'कल शाम आपसे बात करते समय, ऐसा लग रहा था कि आपको इसकी जानकारी नहीं है। इसलिए हमने सोचा कि बेहतर होगा कि हम इस मामले को आपसे स्पष्ट कर लें।' पिछली शाम गांधीजी पर संदेह जताने वाले दोनों कांग्रेसी नेता वहां मौजूद थे और उन्हें वह पत्र दिखाया गया। अब उनकी बारी थी चौंकने की। पत्र किसने लिखा और उसमें क्या लिखा था, यह अभी तक ज्ञात नहीं है।
कांग्रेस अध्यक्ष मौलाना अबुल कलाम आजाद ने दूसरे शिमला सम्मेलन में कांग्रेस का प्रतिनिधित्व करने के लिए स्वयं के अलावा नेहरू, पटेल और खान अब्दुल गफ्फार खान को नामित किया था। मंत्रिमंडल मिशन और केंद्रीय परिषद ने गांधीजी से सम्मेलन में उपस्थित रहने का अनुरोध किया; वे 2 मई 1946 को शिमला पहुंचे। सम्मेलन 5 से 12 मई तक चला। तीसरे दिन, पहले दो दिनों की चर्चाओं पर विचार करने के बाद, मंत्रिमंडल मिशन ने कुछ और 'समझौते के लिए सुझाए गए बिंदु' प्रस्तुत किए। संघ के विषयों की मूल सूची में 'मौलिक अधिकारों' को शामिल करने के लिए विस्तार किया गया, और यह प्रस्ताव रखा गया कि केंद्र सरकार को उन विषयों को लागू करने के

लिए आवश्यक वित्तीय संसाधन प्राप्त करने की शक्तियां प्राप्त होनी चाहिए। लीग ने सिफारिश की थी कि संविधान सभा को तीन भागों में विभाजित किया जाए, पहला भाग हिंदू बहुसंख्यक प्रांतों का प्रतिनिधित्व करे, दूसरा भाग मुस्लिम बहुसंख्यक प्रांतों का और तीसरा भाग ब्रिटिश भारत के रियासतों, राजाओं का प्रतिनिधित्व करे। लीग ने सुझाव दिया कि पहले दो भाग अलग-अलग बैठक करें और अपने-अपने समूहों के लिए प्रांतीय संविधान और यदि वे चाहें तो समूह संविधान भी तय करें। इस खंड में प्रांतों के अनिवार्य समूहीकरण पर कांग्रेस की आपत्ति का प्रतिकार करने के लिए, मंत्रिमंडल मिशन ने प्रस्ताव रखा कि यदि किसी प्रांत को प्रांतीय या समूह संविधान स्वीकार्य नहीं है, तो उसे अपने प्रतिनिधियों के बहुमत से मूल समूह से बाहर निकलने और दूसरे समूह में शामिल होने या किसी भी समूह से बाहर रहने की स्वतंत्रता होनी चाहिए। इसके बाद तीनों खंड संघ संविधान बनाने के लिए बैठक करेंगे।
संघ के संविधान के अनुसार, तीन उप-संघ होंगे: मुस्लिम बहुसंख्यक प्रांत; हिंदू बहुसंख्यक प्रांत; और रियासतों का समूह। मुस्लिम बहुसंख्यक प्रांतों को संघ विधानमंडल और संघ सरकार में हिंदू बहुसंख्यक प्रांतों के बराबर प्रतिनिधित्व प्राप्त होगा, चाहे वे प्रांत समूह बनाएं या न बनाएं। इसके अलावा, मुस्लिम बहुसंख्यक समूह से एनडब्ल्यूएफपी और असम के बाहर निकलने से लीग को होने वाले संभावित नुकसान की भरपाई के लिए यह प्रस्ताव रखा गया कि संघ के संविधान में सांप्रदायिक मुद्दे से संबंधित कोई भी विधेयक तब तक पारित नहीं किया जाएगा जब तक कि दोनों प्रमुख समुदायों के बहुमत इसके पक्ष में मतदान न करें।

कांग्रेस गुटों के गठन को स्वीकार करने के लिए तैयार थी, बशर्ते यह पूरी तरह से वैकल्पिक हो। हालांकि, उसका मानना था कि अखिल भारतीय संघीय संघ के लिए संविधान सभा द्वारा संविधान तैयार किए जाने के बाद प्रांतों के प्रतिनिधि इस पर निर्णय लेंगे। मुस्लिम लीग ने मांग की कि छह मुस्लिम प्रांतों - पंजाब, उत्तर पश्चिमी खाड़ी प्रांत, बलूचिस्तान, सिंध, बंगाल और असम - के लिए अलग-अलग संविधान निर्माण निकाय होने चाहिए। यद्यपि असम एक हिंदू बहुसंख्यक प्रांत था, मुस्लिम लीग ने इसे मुस्लिम समूह का हिस्सा होने का दावा किया। पाकिस्तान की संघीय सरकार और प्रांतों के संविधान तैयार होने के बाद, दोनों गुटों के संविधान निर्माण निकाय तीन विषयों पर विचार करेंगे: विदेश मामले, रक्षा और, जैसा कि उन्होंने कहा, 'रक्षा के लिए आवश्यक संचार'।
कांग्रेस और मुस्लिम लीग के बीच केंद्र सरकार के लिए धन के मुद्दे पर मतभेद थे। कांग्रेस चाहती थी कि केंद्र सरकार अपने कार्यों के निर्वहन के लिए आवश्यक वित्त का प्रबंध करों के माध्यम से करे। मुस्लिम लीग का कहना था कि संघीय संघ को किसी भी परिस्थिति में अपने अधिकार से राजस्व जुटाने का अधिकार नहीं होना चाहिए, बल्कि केवल अंशदान के माध्यम से ही राजस्व जुटाना चाहिए। लीग यह भी चाहती थी कि कोई भी निर्णय—विधायी, कार्यकारी या प्रशासनिक—केंद्र द्वारा नहीं लिया जाना चाहिए। 'विवादास्पद मामलों' पर निर्णय तीन-चौथाई बहुमत से लिया जाना चाहिए। मुस्लिम लीग पाकिस्तान की स्थापना के लिए दृढ़ संकल्पित थी और यदि वे असफल होते, क्योंकि उनके बीच भी असहमति की आवाजें थीं, तो वे केंद्र सरकार को उसके गठन के समय ही कमजोर कर देंगे।

कैबिनेट मिशन भी ब्रिटिश औपनिवेशिक नीतियों और प्रथाओं के दलदल में फंसने लगा था और साहसिक निर्णय लेने को तैयार नहीं था। गांधी ने बहुत पहले सर क्रिप्स से यह उम्मीद जताते हुए अपील की थी कि 'इस बार भारत के मामले में सही काम करने का दृढ़ संकल्प है,' लेकिन यह अपील कूटनीतिक औपचारिकता और सभी भारतीय नागरिकों के प्रति ब्रिटिशों की तथाकथित जिम्मेदारियों को भेदने में विफल रही। ब्रिटिशों ने भारत को एक इकाई के रूप में देखने से इनकार कर दिया और इस बात पर जोर दिया कि कई भारत हैं, जिनमें से प्रत्येक की स्वतंत्रता और लोकतांत्रिक सुरक्षा के लिए वैध मांगें हैं।
कैबिनेट मिशन ने विभाजन को मानने से लगातार इनकार किया और जिन्ना के पाकिस्तान के सपने को एक असंभव 'कोरी कल्पना' करार दिया, वहीं उन्होंने अलगाववादी मुस्लिम लीग को लगातार प्रोत्साहित किया। कांग्रेस नेता, स्वतंत्रता और सत्ता पाने की जल्दबाजी में, लीग और औपनिवेशिक प्रशासन में उनके मित्रों द्वारा बिछाए गए उस जाल में फंसते चले गए, जिससे बचने का एकमात्र रास्ता देश के विभाजन को स्वीकार करना था।
6 मई को ही मौलाना आजाद ने लॉर्ड पेथिक-लॉरेंस को एक पत्र लिखकर वार्ता की अस्पष्टता और भ्रम पर अपनी चिंता व्यक्त की: 'मैं स्वीकार करता हूँ कि हमारी वार्ता की अस्पष्टता और उसमें निहित कुछ मान्यताओं से मैं कुछ हद तक भ्रमित और विचलित हूँ। जब तक भारतीय धरती पर कोई विदेशी सेना है, तब तक स्वतंत्रता संभव नहीं है। हम पूरे भारत की स्वतंत्रता के लिए अभी खड़े हैं, न कि निकट भविष्य में। अन्य मामले इसके गौण हैं और संविधान सभा द्वारा उचित रूप से चर्चा और निर्णय लिया जा सकता है... संविधान सभा

स्वतंत्रता के प्रश्न का निर्णय नहीं करेगी; वह प्रश्न अब तय होना चाहिए और, हमारा मानना है, तय हो चुका है।'
नियति के अनुसार, सम्मेलन असफल रहा: जो कांग्रेस को स्वीकार्य था, उसे मुस्लिम लीग ने अस्वीकार कर दिया, और मुस्लिम लीग की मांगें किसी को भी स्वीकार्य नहीं थीं। अंततः, 12 मई को यह घोषणा की गई कि सम्मेलन कांग्रेस और लीग के बीच समझौता कराने में विफल रहा है। विफलता स्वीकार करते हुए, कैबिनेट मिशन के सदस्य दिल्ली लौट गए।
16 मई को, कैबिनेट मिशन ने 'यूनाइटेड किंगडम में महामहिम की सरकार की पूर्ण स्वीकृति' के साथ, नए संविधान के शीघ्र कार्यान्वयन के लिए अपनी सिफारिशें प्रकाशित कीं। उनकी योजना में दो चरण थे: संविधान निर्माण निकाय की स्थापना के लिए दीर्घकालिक योजना और प्रमुख राजनीतिक दलों के समर्थन वाली 'अंतरिम सरकार' के गठन की अल्पकालिक योजना। भारत के विभाजन के प्रश्न पर, कैबिनेट मिशन की सिफारिशें बेहद स्पष्ट थीं—वे इसके घोर विरोधी थे। इसके अलावा, सिफारिशें बहुत अस्पष्ट और जटिल थीं। कई तो पिछली धाराओं से पूरी तरह भिन्न थीं। कुल मिलाकर, यह एक बेहद भ्रामक दस्तावेज था, जो हर किसी को खुश करने का बेताब प्रयास कर रहा था। कांग्रेस को इसने एक साझा केंद्र और प्रांतों को समूह बनाने या न बनाने की स्वतंत्रता का प्रस्ताव दिया। मुस्लिम लीग को इसने उत्तर-पश्चिम और उत्तर-पूर्व भारत में 'मुस्लिम क्षेत्र' बनाने की संभावना पेश की, जिसके लिए प्रांतों के प्रतिनिधियों को प्रांतीय संविधानों को अंतिम रूप देने के लिए अनुभागों में बैठना अनिवार्य होगा। राजकुमारों को इससे सर्वोच्चता से मुक्ति मिली, जो उत्तराधिकारी सरकार को

हस्तांतरित नहीं होनी थी। सिखों को इससे अपनी मातृभूमि की अखंडता को बरकरार रखने की उम्मीद जगी।
अनुच्छेद 15 खंड 5 में, कैबिनेट मिशन की रिपोर्ट में सिफारिश की गई थी कि: 'प्रांतों को समूह, कार्यपालिका और विधायिका बनाने की स्वतंत्रता होनी चाहिए, और प्रत्येक समूह उन प्रांतीय विषयों का निर्धारण कर सकता है जिन्हें सामूहिक रूप से लिया जाना है।' अनुच्छेद 19 उपखंड (iv) और (v) में इसका खंडन किया गया, जहाँ इसने व्यावहारिक रूप से असम, एक गैर-मुस्लिम प्रांत, को मुस्लिम-बहुल समूह C में शामिल होने के लिए बाध्य किया; और उत्तर-पश्चिम सीमांत प्रांत, जहाँ कांग्रेस सरकार सत्ता में थी, को अपने चुने हुए प्रतिनिधियों की इच्छा के विरुद्ध मुस्लिम लीग-बहुल समूह B में शामिल होने के लिए बाध्य किया। इसमें कहा गया: 'इसके बाद प्रांतीय प्रतिनिधि तीन खंडों में विभाजित होंगे.... ये खंड प्रांतीय संविधान को अंतिम रूप देंगे... और यह तय करेंगे कि क्या उन प्रांतों के लिए कोई समूह संविधान स्थापित किया जाना चाहिए।' खंड B और C का सीमांकन इस प्रकार किया गया था कि मुस्लिम लीग-बहुल पंजाब खंड B पर प्रभुत्व स्थापित कर सके और इसी प्रकार बंगाल खंड C पर प्रभुत्व स्थापित कर सके। इन दोनों प्रांतों में मुस्लिम बहुमत था और विधायिका में बड़ी संख्या में प्रतिनिधि थे; यह स्पष्ट था कि वे अपने समूह के अन्य प्रांतीय प्रतिनिधियों द्वारा उठाई गई किसी भी आपत्ति को आसानी से कुचल देंगे। समूह बी में पंजाब के हिंदू बहुल क्षेत्र और गैर-अलगाववादी कांग्रेस-प्रभुत्व वाले एनडब्ल्यूएफपी तथा समूह सी में असम, जो कि प्रमुख प्रांत हैं, संविधान बनाकर और उचित तरीके से चुनाव नियम स्थापित करके असंतुष्ट प्रांतों

द्वारा समूह से बाहर निकलने के प्रयासों को आसानी से विफल कर सकते थे।
गांधी ने इस दस्तावेज़ का गहन अध्ययन किया और 26 मई 1946 को हरिजन में प्रकाशित एक लेख में अपनी व्याख्याएँ दीं: 'कैबिनेट मिशन और वायसराय द्वारा ब्रिटिश सरकार की ओर से जारी किए गए राजकीय दस्तावेज़ का चार दिनों तक गहन अध्ययन करने के बाद मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि ब्रिटिश सरकार उस समय की परिस्थितियों में इससे बेहतर दस्तावेज़ नहीं बना सकती थी। हालाँकि, मेरी यह प्रशंसा इस बात का अर्थ नहीं है कि ब्रिटिश दृष्टिकोण से जो सर्वोत्तम है, वह भारतीय दृष्टिकोण से भी सर्वोत्तम या अच्छा है। उनका सर्वोत्तम भी हानिकारक हो सकता है... यह एक अपील और सलाह है। इसमें कोई बाध्यता नहीं है। इस प्रकार प्रांतीय विधानसभाएँ प्रतिनिधि चुन सकती हैं या नहीं भी चुन सकती हैं। चुने गए प्रतिनिधि संविधान सभा में शामिल हो सकते हैं या नहीं भी। सभा की बैठक होने पर, वह इस वक्तव्य में निर्धारित प्रक्रिया से भिन्न प्रक्रिया निर्धारित कर सकती है। किसी व्यक्ति या दल पर जो भी बाध्यकारी होता है, वह परिस्थिति की आवश्यकता से उत्पन्न होता है।'
इसलिए, जब भारत के राज्य सचिव लॉर्ड पेथिक-लॉरेंस ने एक प्रेस संवाददाता से कहा, "यदि वे उस आधार पर एक साथ आते हैं, तो इसका अर्थ होगा कि उन्होंने उस आधार को स्वीकार कर लिया है, लेकिन यदि प्रत्येक दल के बहुमत से वे ऐसा करना चाहें तो वे इसे बदल सकते हैं", तो वे इस अर्थ में सही थे कि जो प्रतिनिधि बनते हैं, वे वक्तव्य की सामग्री को भली-भांति जानते हुए, लेखकों द्वारा उस आधार का पालन करने की अपेक्षा रखते थे, जब तक कि प्रमुख दलों द्वारा इसे विधिवत रूप से परिवर्तित न कर दिया जाए... यह अब तक तो

ठीक है, लेकिन इकाइयों का क्या? क्या सिख, जिनके लिए पंजाब भारत में एकमात्र घर है, अपनी इच्छा के विरुद्ध, सिंध, बलूचिस्तान और सीमांत प्रांत को शामिल करने वाले एक अनुभाग का हिस्सा बनने के लिए बाध्य हैं? मेरी राय में, वक्तव्य का स्वैच्छिक स्वरूप यह मांग करता है कि व्यक्तिगत इकाई की स्वतंत्रता अप्रभावित रहे। कोई भी सदस्य या अनुभाग इसमें शामिल होने के लिए स्वतंत्र है। बाहर निकलने की स्वतंत्रता एक अतिरिक्त सुरक्षा उपाय है। यह अनुच्छेद 15(5) में निहित स्वतंत्रता का विकल्प कभी नहीं हो सकता।
मंत्रिमंडल प्रतिनिधिमंडल की चर्चाओं में शामिल तीनों प्रमुख दलों ने अंततः सिफारिशों की व्याख्या अपने-अपने फायदे और आवश्यकताओं के अनुरूप की। कांग्रेस और मुस्लिम लीग ने अलग-अलग व्याख्या की, लेकिन मंत्रिमंडल प्रतिनिधिमंडल की अपनी अलग व्याख्या थी और सभी दलों के मत एक-दूसरे से भिन्न थे। एकमात्र उपाय यही था कि सिफारिश को न्यायिक न्यायाधिकरण के पास भेजा जाए।
कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों ने ही सिफारिशों का अध्ययन किए बिना उन्हें स्वीकार या अस्वीकार करने से इनकार कर दिया। वे आगे की कार्रवाई तय करने से पहले सिफारिशों का परीक्षण करना चाहते थे। गांधी जी का कहना था कि जब तक ब्रिटिश सेना भारतीय धरती पर रहेगी, आजादी एक दिखावा ही रहेगी; वे ब्रिटिश सशस्त्र बलों की तत्काल वापसी चाहते थे। कैबिनेट प्रतिनिधिमंडल से उन्होंने कहा, "...अंततः, यह किसी भी तरह से तर्क नहीं दिया जा सकता कि सैनिकों की उपस्थिति में संविधान सभा में स्वाभाविक व्यवहार होगा।"

कैबिनेट मिशन की यह सिफारिश कि भारतीय रियासतों पर अंग्रेजों द्वारा प्रदत्त सर्वोच्चता समाप्त हो जाएगी और भारत सरकार को हस्तांतरित नहीं की जाएगी, विवाद का एक और मुख्य कारण था। भारत के लगभग 7,12,000 वर्ग मील या एक तिहाई भूभाग में फैली छह सौ से अधिक रियासतें थीं। कुछ वंशानुगत रियासतें थीं और कुछ अंग्रेजों द्वारा 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के दौरान शासकों की ब्रिटिश सेवा के लिए पुरस्कार के रूप में स्थापित की गई थीं। कैबिनेट मिशन की सिफारिशों का अर्थ यह था कि सर्वोच्चता समाप्त होने के साथ ही ये राजकुमार स्वतंत्र जागीरों के मुखिया बन जाएंगे और जो जर्जर भारतीय राष्ट्र उभरेगा वह एक अनियंत्रित अव्यवस्था होगी। गांधी ने कैबिनेट मिशन को सुझाव दिया कि यदि सर्वोच्चता समाप्त होनी है, तो इसे तुरंत समाप्त कर दिया जाना चाहिए, भले ही संविधान सभा संविधान को अंतिम रूप दे रही हो और स्वतंत्रता 'कानून में नहीं, बल्कि वास्तव में' कार्य कर रही हो: 'सर स्टैफोर्ड ने मेरे सुझाव पर अमल करने में खतरा देखा। मेरा विचार इसके विपरीत था।' मेरे प्रस्ताव की स्वीकृति राज्यों की जनता में मानो कलम की एक ही चोट से नई जान फूंक देगी। और अंतरिम सरकार उन राजकुमारों के लिए वरदान साबित होगी, जो सर्वोच्च सत्ता की रचना होने और अपने अस्तित्व के लिए उस पर निर्भर होने के बावजूद, उसके कठोर शासन से असंतुष्ट हैं। सर्वोच्च सत्ता का तत्काल अंत राजकुमारों और सर्वोच्च सत्ता की सत्यनिष्ठा की परीक्षा लेगा।
कांग्रेस का तर्क था कि यदि संविधान सभा में विभिन्न वर्गों के प्रतिनिधि शामिल नहीं होने चाहिए, तो संविधान सभा में आने वाले राज्यों के प्रतिनिधियों को प्रांतों के प्रतिनिधियों की तरह ही लोकतांत्रिक तरीके से शामिल होना चाहिए। इससे रियासतों की

जनता को अपने प्रतिनिधियों के चयन में अपनी राय देने का अधिकार मिलेगा और लोकतंत्र को और बढ़ावा मिलेगा। अंत में, केंद्र में स्थित राष्ट्रीय सरकार और संविधान सभा की शक्तियों का प्रश्न था। यदि संविधान सभा को एक संप्रभु निकाय के रूप में कार्य करना था, जिसके पास किसी भी मामले पर निर्णय लेने और उसे लागू करने की शक्ति हो, तो उसे सही मायने में एक अंतरिम राष्ट्रीय सरकार होना चाहिए। यह उस सीमा के अधीन था जिसे कांग्रेस ने स्वेच्छा से स्वीकार किया था, अर्थात् सांप्रदायिक मुद्दों के संबंध में, निर्णय दो प्रमुख समुदायों के बहुमत से लिए जाएंगे।
इन सभी बिंदुओं पर कैबिनेट आयोग की प्रतिक्रिया ब्रिटिश सैनिकों की वापसी के लिए स्पष्ट 'नहीं' थी और सर्वोच्चता छोड़ने से भी उन्होंने साफ इनकार कर दिया। यूरोपीय लोगों की भागीदारी के संबंध में, वे केवल इतना ही आश्वासन दे सके कि वे अपने प्रभाव का इस्तेमाल करके यूरोपीय लोगों को 16 मई की योजना के तहत प्रदत्त अधिकार का प्रयोग न करने के लिए मनाने का प्रयास करेंगे। लेकिन अंततः, निर्णय यूरोपीय लोगों का ही होगा। संविधान सभा की शक्तियों के संबंध में, कैबिनेट प्रतिनिधिमंडल ने आश्वासन दिया कि संविधान सभा के गठन के बाद, 'उसके संचालन में हस्तक्षेप करने या उसके निर्णयों पर सवाल उठाने' का कोई इरादा नहीं है। अंत में, हालांकि कैबिनेट मिशन केंद्रीय विधानमंडल के प्रति कानूनी रूप से उत्तरदायी अंतरिम सरकार के प्रस्ताव को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं था, उन्होंने यह आश्वासन दिया कि 'महामहिम की सरकार केंद्र में प्रस्तावित परिवर्तनों के प्रभाव को मान्यता देगी' और 'उनका पूरा महत्व देगी, और भारत सरकार को भारत के दैनिक प्रशासन के संचालन में यथासंभव अधिकतम स्वतंत्रता प्रदान करेगी'।

गांधी जी की आदत के अनुसार, वे कैबिनेट मिशन के सदस्यों के साथ हुई चर्चाओं का सार लिख लेते थे और सत्यापन के लिए संबंधित सदस्य को भेज देते थे। 18 और 19 मई को हुई उनकी चर्चाओं के लिखित प्रतिलेखों के जवाब में, पेथिक-लॉरेंस ने कहा कि उनकी चर्चाओं से उन्होंने जो निष्कर्ष निकाला था और जो नोट किया गया था, उसमें कुछ विसंगतियां थीं। उन्होंने उन बिंदुओं को स्पष्ट किया जिन पर उनके बीच मतभेद थे। क्रिप्स ने स्पष्ट रूप से इनकार किया कि उन्होंने यह स्वीकार किया था कि अतीत में सर्वोच्चता का उपयोग राजकुमारों को उनकी प्रजा से बचाने के लिए, उनकी स्वतंत्रता और प्रगति को दबाने के रूप में किया गया था: 'आप सर स्टैफोर्ड के कथन की गलत व्याख्या कर रहे हैं। उन्होंने कहा था कि वे जानते हैं कि यह मत था कि अतीत में कुछ मामलों में सर्वोच्चता का उपयोग राजकुमारों को उनकी प्रजा के विरुद्ध समर्थन देने के लिए किया गया था...' एक अन्य मतभेद के बिंदु पर पेथिक-लॉरेंस ने लिखा: 'प्रतिनिधिमंडल विशेष रूप से मुझसे यह स्पष्ट करने के लिए कह रहा था कि स्वतंत्रता नए संविधान के लागू होने के बाद ही मिलनी चाहिए, न कि उससे पहले।' गांधी ने अगले दिन उत्तर देते हुए कहा: 'आपके शीघ्र उत्तर के लिए धन्यवाद... लेकिन मुझे यह कहना होगा कि यह दुर्भाग्यपूर्ण है। इसमें पुराने आधिकारिक लहजे की झलक है। क्या "वास्तविक स्वतंत्रता" का नारा निराधार है? मैंने अपने पत्र में जो कुछ कहा है, मैं उस पर कायम हूं... आपका पत्र उस सर्वथा साम्राज्यवादी शैली में लिखा गया है जिसे मैंने हमेशा के लिए लुप्त मान लिया था। यह एक पुराने मित्र का पत्र है।'
28 मई को सीडब्ल्यूसी के सदस्य तितर-बितर हो गए। गांधी जी कुछ सदस्यों के साथ दिल्ली की चिलचिलाती गर्मी से राहत पाने के लिए

कुछ समय आराम करने मसूरी गए। उनके पास करने के लिए कुछ नहीं था क्योंकि मुस्लिम लीग 16 मई की योजना पर अपनी प्रतिक्रिया 6 जून को मुस्लिम लीग परिषद की बैठक के बाद ही घोषित करने वाली थी। 7 जून को गांधी जी दिल्ली लौट आए। उन्हें ले जा रही गाड़ी ने 175 मील की दूरी लगभग पूरी रात में तय की। दिल्ली में प्रवेश करते ही यमुना पुल पर गाड़ी रोक दी गई। ड्यूटी पर तैनात संतरी ने खिड़की से झाँककर सिख ड्राइवर से अपना और अपने यात्रियों का परिचय देने को कहा। ड्राइवर ने उत्तर दिया, 'मैं भारत के गरीबों के राजा को ले जा रहा हूँ'; संतरी सावधान मुद्रा में खड़ा रहा और गाड़ी को जाने दिया।
8 जून को सीडब्ल्यूसी की बैठक हुई। बाद में यह बात सामने आई कि क्रिप्स ने जिन्ना से मुलाकात की थी और जिन्ना बिना किसी भेदभाव के योग्यतम व्यक्तियों से बनी अंतरिम गठबंधन सरकार के गठन के लिए सहमत थे। एक मुलाकात के दौरान वायसराय ने गांधीजी को सुझाव दिया कि कांग्रेस और लीग के प्रतिनिधियों को मिलकर गठबंधन सरकार में नामित किए जाने वाले व्यक्तियों की सूची को अंतिम रूप देना चाहिए। वायसराय के सुझाव का स्वागत करते हुए गांधीजी ने कहा कि नामित व्यक्ति 'सिद्ध योग्यता और भ्रष्टाचार मुक्त' होने चाहिए; भेदभाव की कोई बात नहीं होनी चाहिए, उन्हें एक कमरे में बंद कमरे में बैठक करनी चाहिए और जब तक समझौता न हो जाए, तब तक किसी को भी बाहर नहीं जाना चाहिए। तमाम कोशिशों के बावजूद समझौता न होने की स्थिति में, वायसराय को दोनों पक्षों द्वारा प्रस्तुत सूचियों की खूबियों की जांच करनी चाहिए और उनमें से किसी एक को स्वीकार करना चाहिए, 'दोनों का मिश्रण नहीं'। जैसे ही लोगों को लगने लगा कि नया फॉर्मूला सफल होगा, जिन्ना ने एक बार फिर कांग्रेस अध्यक्ष मौलाना अबुल कलाम आजाद,

जो कि गैर-लीग मुस्लिम थे, के साथ बातचीत की मेज पर बैठने से इनकार कर दिया। जिन्ना के अनुसार, हिंदू दुश्मन थे, लेकिन गैर-लीग मुस्लिम गद्दार थे और वे 'गद्दारों से समझौता नहीं करेंगे'! कांग्रेस ने इस मामले पर पीछे हटने से इनकार कर दिया। बातचीत में एक और गतिरोध के डर से वायसराय ने सुझाव दिया कि मौलाना, कांग्रेस अध्यक्ष होने के नाते, प्रस्तावित बैठक में अपना प्रतिनिधित्व करने के लिए नेहरू को नामित करें। गांधी ने कांग्रेस को सलाह दी कि समझौते के लिए इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया जाए, लेकिन इस स्पष्ट समझ के साथ कि बैठक में नेहरू मौलाना के प्रवक्ता के रूप में कार्य करेंगे।
नेहरू 12 जून को दोपहर में वायसराय के कार्यालय में बैठक के लिए पहुँचे। जिन्ना बैठक में नहीं आए। नेहरू ने वायसराय को अंतरिम सरकार के लिए कांग्रेस द्वारा प्रस्तावित उम्मीदवारों की सूची दिखाई। अब वेवेल की बारी थी पाला बदलने की। बैठक में उन्होंने हिंदू-मुस्लिम समानता का मुद्दा उठाया। नेहरू फिर बिना कोई निर्णय लिए ही बैठक से चले गए। अगले दिन गांधी ने वेवेल को लिखा: 'आप एक महान सिपाही हैं, एक साहसी सिपाही। सही का साहस कीजिए। आपको एक घोड़े या दूसरे को चुनना होगा। जहाँ तक मैं देख सकता हूँ, आप कभी भी एक साथ दो घोड़ों की सवारी करने में सफल नहीं होंगे। कांग्रेस या लीग द्वारा प्रस्तुत नामों में से किसी एक को चुनें। भगवान के लिए, असंगत मिश्रण न बनाएँ और ऐसा करने के प्रयास में एक भयानक विस्फोट न करें।' क्रिप्स को लिखे एक निजी पत्र में गांधी ने लिखा: 'मेरी राय में आप अपने जीवन का सबसे कठिन कार्य संभाल रहे हैं। यह मिशन आग से खेल रहा है।' यदि आपमें साहस है तो आप वही करेंगे जो मैंने शुरू से ही सुझाया है... आप दोनों तरफ से फायदा नहीं उठा पाएंगे। आपको दो में से एक चुनना

होगा—मुस्लिम लीग और कांग्रेस, दोनों ही आपकी बनाई हुई हैं... कभी कांग्रेस के साथ, कभी लीग के साथ, और फिर कांग्रेस के साथ नखरे करके खुद को थकाना ठीक नहीं है। या तो आप सच्चाई का साथ दें या ब्रिटिश नीति की मजबूरियों का। दोनों ही मामलों में साहस आवश्यक है। केवल अपने कार्यक्रम पर अडिग रहें। चाहे कुछ भी हो जाए, अपनी तय तारीखों पर कायम रहें। चाहे आप कांग्रेस को गठबंधन बनाने दें या लीग को, 16 जून 1948 तक निकल जाएं। यदि आप सोचते हैं कि ब्रिटिश ज्ञान इन दोनों बनाई हुई पार्टियों से कहीं बेहतर है तो मेरे पास कहने के लिए कुछ नहीं है। लेकिन मुझे लगता है कि आप उस सांचे में नहीं ढले हैं। पत्र का अंत इस सलाह के साथ हुआ: 'जब तक ब्रिटिशों द्वारा की गई साहसी घोषणा भारतीयों की उम्मीदों पर खरी नहीं उतरती, तब तक निजी जीवन में लीन रहें। समझदार को एक बात।'
सर स्टैफोर्ड क्रिप्स ने उत्तर दिया: 'मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि न तो मुझमें और न ही मेरे सहयोगियों में कार्रवाई करने का साहस कम है, लेकिन हम अपने साहस को विवेक के साथ संतुलित करना चाहते हैं।' गांधी जी द्वारा दी गई सलाह का उल्लेख करते हुए उन्होंने आगे कहा: 'निश्चित रूप से मैं घर लौटने और आराम करने की अपनी इच्छा को यहाँ की कठिन समस्याओं के समाधान में सहायक हर संभव प्रयास करने के अपने दृढ़ संकल्प से ऊपर नहीं रखूँगा... मुझे पूरी उम्मीद है कि भारत छोड़ने से पहले हम इस समस्या के समाधान में योगदान दे सकेंगे।'
अब यह स्पष्ट हो गया था कि कैबिनेट मिशन भी 1945 के वायसराय सम्मेलन की राह पर चल रहा था। हालांकि वे दोनों पक्षों के प्रति निष्पक्ष रहने की बात करते रहे, लेकिन मुस्लिम लीग के प्रति उनका झुकाव साफ दिखाई दे रहा था। ब्रिटिश सिविल सेवा का

पक्षपातपूर्ण रवैया पर्दे के पीछे अपनी भूमिका निभा रहा था। गांधी जी को एक बड़ी आपदा का आभास हो रहा था। क्या उन्होंने बार-बार यह नहीं दोहराया था कि जब तक तीसरा पक्ष मौजूद नहीं होगा, तब तक सच्ची हिंदू-मुस्लिम एकता की उम्मीद नहीं की जा सकती? एक प्रार्थना सभा में अपने भाषण के दौरान उन्होंने कहा, 'गुलाम और उनके मालिक दोनों ही अस्वाभाविक अवस्था में हैं, वे स्वाभाविक रूप से सोच और कार्य नहीं कर सकते।' एक मित्र से बात करते हुए उन्होंने टिप्पणी की, 'एक अज्ञात भय ने मुझे जकड़ लिया है... परिणामस्वरूप मैं लकवाग्रस्त महसूस कर रहा हूँ। लेकिन मैं अपने निराधार संदेहों को आप तक पहुँचाकर आपके मन को भ्रमित नहीं करूँगा।' उनके लिए कैबिनेट मिशन के प्रयास उस माँ के समान थे जो अपने बच्चे को मरते हुए देखती है। 'फिर भी वह उम्मीद नहीं छोड़ती।' वह डॉक्टरों, चिकित्सकों और नीम-हकीमों के नुस्खे आजमाती रहती है—कभी एक के, कभी दूसरे के, फिर तीसरे के, अंत तक। इसी तरह, मिशन भी हार मानने को तैयार नहीं था।
समानता की मांग भी बेहद जटिल थी। अंग्रेज स्वतंत्र भारत के लिए लोकतांत्रिक व्यवस्था स्थापित करने की बात करते रहे, लेकिन रियासतों पर उनका रुख और समानता पर उनका जोर लोकतांत्रिक सिद्धांतों के विपरीत था। भारत की जनसंख्या में मुसलमानों की संख्या एक चौथाई से थोड़ी अधिक थी, इसलिए लोकतांत्रिक सिद्धांतों के अनुसार वे कुल प्रतिनिधित्व के एक तिहाई से कम का दावा कर सकते थे। लेकिन मुस्लिम लीग ने चतुराई से तर्क दिया कि मुसलमान हिंदू राष्ट्र से अलग एक राष्ट्र हैं, इस सिद्धांत का समर्थन सावरकर ने भी किया था। इस प्रकार उन्होंने दावा किया कि राष्ट्रों को समान स्तर पर होना चाहिए और इसलिए मुस्लिम अल्पसंख्यक को हिंदू बहुसंख्यक के बराबर दर्जा मिलना चाहिए।

ब्रिटिश औपनिवेशिक प्रशासन, क्राउन के प्रतिनिधि और वायसराय अपने युद्धकालीन सहयोगियों, लीग के इस दावे के प्रति पक्षपाती थे। प्रारंभ में 1945 में शिमला में वायसराय सम्मेलन के दौरान, सवर्ण हिंदुओं और मुसलमानों के बीच समानता का मुद्दा उठाया गया था; अब कांग्रेस और मुस्लिम लीग के बीच समानता का लक्ष्य रखा गया था। कांग्रेस पार्टी भारत के सभी धर्मों, जातियों, वर्गों और समूहों का प्रतिनिधित्व करती थी, जबकि मुस्लिम लीग का दावा था कि वह केवल मुसलमानों का प्रतिनिधित्व करती है। फिर भी दोनों पार्टियों में समानता होनी चाहिए थी। सत्ता की लालसा में मुस्लिम लीग अपने उन सहधर्मियों के अस्तित्व को स्वीकार करने को तैयार नहीं थी जिन्होंने कांग्रेस का साथ दिया था, और अंग्रेजों ने उनकी अलोकतांत्रिक और अनैतिक मांगों को बढ़ावा दिया।
प्रारंभ में यह सहमति बनी थी कि मुसलमानों के लिए मनोनीत की जाने वाली पाँच सीटों में से चार लीग के उम्मीदवार होंगे और एक कांग्रेस का उम्मीदवार होगा। लीग को सभी पाँचों मुसलमानों को मनोनीत करने का अधिकार दिया गया था, क्योंकि उन्हें मुसलमानों का प्रतिनिधित्व करने वाला माना जाता था। लेकिन कांग्रेस, जो वास्तव में राष्ट्रीय संरचना का प्रतिनिधित्व करती थी और एक राष्ट्रवादी संगठन थी, इसलिए वह अपने छह सदस्यों के कोटे में से एक राष्ट्रवादी मुस्लिम और एक अनुसूचित जाति से उम्मीदवार को मनोनीत करने के लिए बाध्य थी। इससे तेरह सदस्यीय अंतरिम सरकार में बहुसंख्यक समुदाय के सदस्यों की संख्या घटकर चार रह जाती। 14 जून को कांग्रेस अध्यक्ष ने वायसराय को पत्र लिखकर कहा: 'हम इस प्रस्ताव से सहमत नहीं हैं। यदि यूरोपीय मत और "समानता" के बारे में स्थिति यही बनी रहती है, तो मेरी समिति अनिच्छा से

आपको सूचित करती है कि वे आगे आने वाले कठिन कार्य में आपकी सहायता नहीं कर पाएंगे।' इस पत्र के साथ ही अंतरिम सरकार के गठन के मुद्दे पर कैबिनेट मिशन की बातचीत समाप्त हो गई।
मसूरी से लौटने के बाद से गांधी जी बेहद बेचैन थे। कैबिनेट मिशन के साथ चल रही बातचीत और औपनिवेशिक प्रशासन की चालों से वे व्याकुल थे। उन्हें आशंका थी कि हालात बिगड़ रहे हैं और देश को इसकी भारी कीमत चुकानी पड़ेगी। उन्हें यह भी संदेह था कि कांग्रेस नेतृत्व सही और न्यायपूर्ण समाधान के लिए संघर्ष करने को तैयार है या नहीं। 15 जून 1946 को अपने दिन का वर्णन करते हुए प्यारेलाल नैयर ने अपनी डायरी में उनकी इस चिंता का जिक्र किया है: 'एक बार फिर, बापू अपनी 'अंतरात्मा' के वश में हैं! पिछले तीन दिनों से उन्हें लग रहा है कि हालात बिगड़ रहे हैं। वायसराय समेत हर कोई जिन्ना से डरा हुआ लगता है और व्यर्थ ही किसी भी कीमत पर उन्हें खुश करने की कोशिश कर रहा है। वे मानते हैं कि उनकी स्थिति अस्थिर है, फिर भी सारा दोष कांग्रेस पर मढ़ा जा रहा है! क्रिप्स अपने साथियों से अलग-थलग पड़ गए हैं।' यह सर्वमान्य तथ्य था कि गांधी जी के पास अद्भुत अंतर्ज्ञान शक्ति थी।
16 जून को वायसराय और कैबिनेट मिशन ने एक संयुक्त बयान जारी कर घोषणा की कि उन्होंने आगे की बातचीत बंद करने का फैसला किया है और वे अंतरिम सरकार बनाने वाले व्यक्तियों की अपनी सूची घोषित करने जा रहे हैं। चौदह व्यक्तियों को निमंत्रण भेजा गया, जिनमें अनुसूचित जाति के एक प्रतिनिधि सहित कांग्रेस के छह हिंदू सदस्य, मुस्लिम लीग के पांच मुस्लिम सदस्य और अल्पसंख्यक समुदायों के तीन प्रतिनिधि शामिल थे: एक सिख, एक भारतीय ईसाई और एक पारसी। लॉर्ड वेवेल ने बयान की एक अग्रिम प्रति गांधीजी को

भेजी। सूची में सभी मुस्लिम सदस्य मुस्लिम लीग द्वारा अनुशंसित थे, लेकिन कांग्रेस द्वारा प्रस्तुत सूची में कुछ बदलाव किए गए थे। कांग्रेस के उम्मीदवार शरत चंद्र बोस के स्थान पर एक अन्य कांग्रेसी, हरेकृष्ण महताब को शामिल किया गया; राजकुमारी अमृत कौर का नाम हटा दिया गया, और राष्ट्रवादी मुस्लिम उम्मीदवार डॉ. जाकिर हुसैन का नाम भी हटा दिया गया। कांग्रेस ने मुस्लिम लीग के उम्मीदवार अब्दुर रब निश्तर का शुरू से ही विरोध किया था, उनका तर्क था कि निश्तर हाल ही में संपन्न हुए चुनावों में लीग के पराजित उम्मीदवार थे, और उन्हें अंतरिम सरकार में नामित करना जनता के फैसले के खिलाफ होगा। लेकिन वायसराय ने इस आपत्ति को अनसुना कर दिया। अंतरिम सरकार में तेरह सदस्यों की मूल संख्या को कांग्रेस के इस आग्रह पर एक सदस्य बढ़ाकर अंतरिम सरकार बना दी गई थी कि अंतरिम सरकार संतुलित होनी चाहिए। हालांकि, वायसराय ने एक सरकारी अधिकारी, एन.पी. इंजीनियर, जो कि एडवोकेट जनरल थे, को अंतरिम सरकार के लिए नामित किया। इंजीनियर हाल ही में संपन्न हुए आज़ाद हिंद फौज के सैनिकों के मुकदमों में अभियोजन पक्ष के वकील थे। अंतरिम सरकार के लिए नामित व्यक्तियों की सूची में उनका नाम भारतीय राष्ट्रीय गौरव पर एक करारा प्रहार था।
16 तारीख को नमाज़ के बाद दिए अपने भाषण में गांधीजी ने धैर्य रखने की अपील की। उन्होंने कहा, 'आपको मिशन के साथ भी धैर्य रखना चाहिए। उन्हें साम्राज्यवाद की परंपरा विरासत में मिली है, जिससे वे एक झटके में बाहर नहीं निकल सकते... हमें उन्हें इस बात के लिए दोष नहीं देना चाहिए कि उन्होंने इसे रातोंरात त्याग नहीं दिया। आइए हम उनकी ईमानदारी पर भरोसा करें। हमें मात्र संदेह के आधार पर कोई कार्रवाई नहीं करनी चाहिए।' उसी रात वे

डेढ़ बजे उठे और अंतरिम सरकार की एकतरफा घोषणा के जवाब में वायसराय को सीडब्ल्यूसी की ओर से लिखे जाने वाले पत्र का मसौदा लिखवाया। उन्होंने चार बिंदुओं पर जोर दिया: (i) लीग, जो स्पष्ट रूप से एक मुस्लिम संगठन है, अपनी सूची में किसी भी गैर-मुस्लिम प्रतिनिधि को शामिल नहीं कर सकती; (ii) कांग्रेस, एक राष्ट्रवादी संगठन होने के नाते, अपनी सूची में एक मुस्लिम कांग्रेसी सदस्य को शामिल करने का अधिकार रखती है; (iii) लीग को अपने पांच मुस्लिम सदस्यों के कोटे से बाहर किसी भी नाम के चयन में कोई दखल नहीं देना चाहिए। इसका अर्थ यह था कि अल्पसंख्यकों के लिए आवंटित सीटों में रिक्ति होने की स्थिति में, रिक्तियों को भरने के लिए नामों का चयन करने का अधिकार केवल कांग्रेस को होगा, क्योंकि वह सेवा के अधिकार से सभी वर्गों का प्रतिनिधित्व करने का दावा करती थी; और (iv) कार्य में, अंतरिम सरकार को विधानसभा में निर्वाचित प्रतिनिधियों के प्रति उत्तरदायी माना जाना चाहिए। सीडब्ल्यूसी ने गांधी के मसौदे को नजरअंदाज कर दिया और 17 जून के दोपहर के सत्र में अपना जवाब तय किया: सीडब्ल्यूसी वायसराय के प्रस्ताव से 'आकर्षित' नहीं थी, लेकिन वे इसे 'ना' भी नहीं कहना चाहते थे। महताब, एक निष्ठावान कांग्रेसी होने के नाते, सीडब्ल्यूसी के निर्णय का पालन करेंगे और शरत चंद्र बोस को शामिल न किए जाने की गलती को सुधारा जाएगा। कांग्रेस से एक राष्ट्रवादी मुस्लिम को शामिल न किए जाने की समस्या को कांग्रेस कोटे से एक हिंदू के स्थान पर एक राष्ट्रवादी मुस्लिम को मनोनीत करके हल किया जाएगा, भले ही इससे अंतरिम सरकार में बहुसंख्यक भारतीय समुदाय को प्रभावी रूप से अल्पसंख्यक प्रतिनिधित्व मिल जाएगा।

30 मई को कांग्रेस अध्यक्ष को लिखे पत्र में वायसराय ने इस बात से इनकार किया कि उन्होंने कभी कांग्रेस को यह आश्वासन दिया था कि अंतरिम सरकार को डोमिनियन कैबिनेट के समान शक्तियां प्राप्त होंगी। इसके बाद उन्होंने आश्वासन दिया कि: 'महामहिम की सरकार नई अंतरिम सरकार के साथ डोमिनियन सरकार के समान ही गहन विचार-विमर्श करेगी; उदारवादी इरादे औपचारिक दस्तावेज में व्यक्त किए जाने पर लगभग पहचान से परे हो जाते हैं। मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि यदि आप मुझ पर भरोसा करने को तैयार हैं, तो हम इस तरह से सहयोग कर सकेंगे जिससे भारत को बाहरी नियंत्रण से मुक्ति का अहसास होगा और नए संविधान के बनते ही उसे पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त करने की तैयारी हो जाएगी।' आश्चर्यजनक रूप से, कांग्रेस ने मुस्लिम लीग की धमकियों और वायसराय के पक्षपातपूर्ण व्यवहार के आगे घुटने टेक दिए और अंतरिम सरकार के लिए वायसराय की योजना को स्वीकार करने का निर्णय लिया। यह निर्णय लिया गया कि, चूंकि अब्दुर रब निश्तर का नाम शामिल करने से एनडब्ल्यूएफपी के खान भाइयों पर सीधा असर पड़ेगा, इसलिए सीडब्ल्यूसी अगले दिन उत्मनज़ई से खान अब्दुल गफ्फार खान के आने का इंतजार करेगी।
ठीक उसी समय एक नया संकट खड़ा हो गया। द स्टेट्समैन अखबार ने लॉर्ड वेवेल को जिन्ना द्वारा लिखे गए एक पत्र का अंश प्रकाशित किया, जिसमें उन्होंने कुछ नई शर्तें रखी थीं जिन्हें पूरा करने पर ही मुस्लिम लीग वायसराय द्वारा रखे गए प्रस्ताव को स्वीकार करेगी। उनकी कुछ मांगें बिल्कुल नई थीं, जिन पर कांग्रेस कभी सहमत नहीं हो सकती थी। अखबार की रिपोर्ट का हवाला देते हुए कांग्रेस अध्यक्ष ने वायसराय को पत्र लिखकर जिन्ना के पत्र का पूरा पाठ और वायसराय का जवाब मांगा। 20 जून 1946 के

पत्र में वायसराय ने जिन्ना को कई आश्वासन दिए थे। उनमें से एक यह था कि दोनों प्रमुख दलों की सहमति के बिना उम्मीदवारों की सूची में कोई बदलाव नहीं किया जाएगा। इसका मतलब यह था कि कांग्रेस लीग की सहमति के बिना अपने कोटे में भी किसी राष्ट्रवादी मुस्लिम को नामित नहीं कर सकती थी और न ही लीग के उम्मीदवारों पर उसकी आपत्ति का कोई महत्व होगा। वायसराय द्वारा जिन्ना को दिया गया एक और आश्वासन यह था कि यदि अल्पसंख्यक सीटों, जिनमें अनुसूचित जातियां भी शामिल हैं, में कोई रिक्ति होती है, तो रिक्ति भरने से पहले दोनों प्रमुख दलों से परामर्श किया जाएगा। इससे मुस्लिम लीग को अनुसूचित जातियों के प्रतिनिधियों के चयन में वीटो का अधिकार मिल गया, जो हिंदू समाज का अभिन्न अंग थे, यहां तक कि प्रशासन द्वारा तैयार और वायसराय द्वारा पुष्टि की गई वर्गीकरणों के अनुसार भी, और जिन्हें वायसराय ने कांग्रेस से जोड़ा था। 15 जून को कांग्रेस अध्यक्ष को लिखे अपने पत्र में, वायसराय ने अंतरिम सरकार में लीग-कांग्रेस या हिंदू-मुस्लिम समानता होने से इनकार किया था, क्योंकि पांच लीग-मुस्लिम सदस्यों के मुकाबले छह कांग्रेस-हिंदू सदस्य थे, जिनमें एक अनुसूचित जाति का सदस्य भी शामिल था। लेकिन वेवेल-जिन्ना के नए समझौते के साथ, 'समानता' को परोक्ष रूप से लाया जा रहा था। अब अनुसूचित जातियों को न केवल कांग्रेस से, बल्कि हिंदू कोटे से भी अलग किया जा रहा था। वायसराय द्वारा मुस्लिम लीग को अनुसूचित जाति के उम्मीदवार को स्वीकार या अस्वीकार करने का अधिकार देने से यही एकमात्र निष्कर्ष निकाला जा सकता था; अब न केवल कांग्रेस और मुस्लिम लीग के बीच, बल्कि सवर्ण हिंदू और मुसलमानों के बीच भी समानता स्थापित होगी।

कांग्रेस को अब से न केवल एक हिंदू संगठन के रूप में, बल्कि एक सवर्ण हिंदू संगठन के रूप में पुनर्वर्गीकृत किया जाएगा।
अब सीडब्ल्यूसी को लगने लगा था कि वायसराय न केवल मुस्लिम लीग और जिन्ना के प्रति पक्षपातपूर्ण व्यवहार कर रहे हैं, बल्कि वास्तव में उनके साथ गठबंधन में हैं। यह भावना तब और मजबूत हुई जब 22 जून को वायसराय ने कांग्रेस अध्यक्ष को लिखे एक पत्र में कांग्रेस से अंतरिम सरकार में अपनी पार्टी के किसी राष्ट्रवादी मुस्लिम को शामिल करने की मांग पर जोर न देने को कहा: 'जिन कारणों से आप भली-भांति परिचित हैं, उनके चलते कैबिनेट मिशन या मेरे लिए इस अनुरोध को स्वीकार करना संभव नहीं है।' यह उनके उस जवाब से बिल्कुल उलट था जिसमें उन्होंने मुस्लिम लीग के उम्मीदवार अब्दुर रब निश्तर के खिलाफ कांग्रेस द्वारा उठाई गई आपत्तियों को खारिज कर दिया था। 15 जून को वायसराय ने तर्क दिया था कि, 'मैं मुस्लिम लीग द्वारा प्रस्तावित नामों पर आपत्ति करने के कांग्रेस के अधिकार को उसी तरह स्वीकार नहीं कर सकता, जिस तरह मैं दूसरे पक्ष की ऐसी ही आपत्तियों को स्वीकार नहीं कर सकता।'
गांधी जी के लिए सत्ता संतुलन बनाए रखने की पेचीदगियाँ अर्थहीन थीं। उन्होंने सत्ता-साझाकरण के मात्र सफल फॉर्मूले के लिए कांग्रेस की भूमिका में बदलाव स्वीकार करने से इनकार कर दिया। उनके अनुसार, कांग्रेस का यह कर्तव्य और अधिकार था कि वह सभी समुदायों और वर्गों का प्रतिनिधित्व करने वाले एक राष्ट्रवादी संगठन के रूप में अपनी भूमिका निभाए। यदि कांग्रेस कोई और भूमिका स्वीकार करती, तो वह राजनीतिक आत्महत्या कर रही होती। इसी प्रकार, उसे किसी भी राजनीतिक लाभ के लिए अपने मित्रों को त्यागना नहीं चाहिए। ऐसा अवसरवाद उसके पतन का कारण बनेगा और

अंततः घातक सिद्ध होगा। 'अपनी आत्मा की कीमत पर संसार प्राप्त करना' गांधी जी के लिए एक बुरा सौदा था। हालाँकि, सीडब्ल्यूसी की सोच अलग थी। प्यारेलाल की डायरियों में लिखी दैनिक प्रविष्टियाँ इन दिनों की घटनाओं, गांधी जी की मनस्थिति और उनके तथा सीडब्ल्यूसी के बीच बढ़ती खाई पर प्रकाश डालती हैं। नई दिल्ली, 19 जून, 1946
'कैबिनेट में किसी राष्ट्रवादी मुस्लिम को शामिल करने के लिए कांग्रेस को एक हिंदू का नाम छोड़ना पड़ेगा। उदाहरण के लिए, अगर मौलाना साहब जैसे किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति को वहां रखा जाता है, तो हिंदू कोटा कम होने के बावजूद कोई आपत्ति नहीं करेगा। लेकिन मौलाना साहब को इस बात की संवेदनशीलता महसूस होती है और बापू के व्यक्तिगत आग्रह के बावजूद उन्होंने साफ इनकार कर दिया है।'
'बापू ने आज कार्य समिति को अंतिम चेतावनी दी कि यदि वे किसी राष्ट्रवादी मुस्लिम को शामिल न करने और वायसराय द्वारा उन पर थोपे गए एन.पी. इंजीनियर के नाम को शामिल करने पर सहमत हो जाते हैं, तो वे इस पूरे मामले से अपना हाथ खींच लेंगे और दिल्ली छोड़ देंगे।'
नई दिल्ली, 20 जून, 1946
कार्य समिति में बापू ने एक बार फिर राष्ट्रवादी मुस्लिम को शामिल करने के अपने रुख को दोहराया। सरदार ने उनका पुरजोर समर्थन किया और सदस्यों से कहा कि वे बापू की बात न मानकर कैबिनेट मिशन से समझौता करने की हिम्मत न करें। अंत में बापू के पत्र का मसौदा कैबिनेट मिशन को भेजने का निर्णय लिया गया। इसी बीच खबर आई कि कश्मीर सरकार ने पंडित नेहरू को गिरफ्तार कर लिया

है। अनुपस्थित सदस्यों शंकरराव देव, गोविंद वल्लभ पंत और नरेंद्र देव को वापस बुलाने के लिए तार भेजे गए।
दोपहर 1:30 से 2:45 के बीच, क्रिप्स आए और बापू से मिले। बापू ने उनसे फिर आग्रह किया कि कैबिनेट मिशन को दोनों में से किसी एक पार्टी को चुनना होगा, न कि विलय का प्रयास करना होगा; कैबिनेट मिशन गलत रास्ते पर चल रहा था। क्रिप्स ने क्षमा याचना की। इतनी दूर आने के बाद नए सिरे से शुरुआत करना मुश्किल होगा; जिन्ना नहीं सुनेंगे, इत्यादि। अंत में बापू ने उनसे कहा कि ऐसी स्थिति में कैबिनेट मिशन अपनी इच्छानुसार आगे बढ़ सकता है; उनका इससे कोई लेना-देना नहीं होगा।
नई दिल्ली, 21 जून, 1946
कार्य समिति में बापू के मसौदे पर फिर से चर्चा हुई। बापू ने सदस्यों को चेतावनी दी कि घुटने टेककर इस नए अभियान में उतरने से उन्हें कुछ भी हासिल नहीं होगा। उन्होंने अपनी राय दोहराई कि यदि मंत्रिमंडल मिशन उनकी शर्तें नहीं मानता है, तो अंतरिम अवधि के दौरान मुस्लिम लीग को केंद्र में राष्ट्रीय सरकार बनाने देना बेहतर होगा।
मौलाना साहब ने कश्मीर सरकार को तार भेजा कि कार्य समिति की चर्चाओं में जवाहरलाल की उपस्थिति अत्यंत आवश्यक है। उन्होंने वायसराय को भी संदेश भेजकर उनके दिल्ली लौटने के लिए उपयुक्त परिवहन की व्यवस्था करने का अनुरोध किया। वायसराय ने तदनुसार रेजिडेंट को आवश्यक निर्देश भेज दिए। बाद में खबर आई कि कश्मीर दरबार ने जवाहरलाल की वापसी के लिए विमान और वाहन की व्यवस्था कर दी है।
शाम को बापू ने सरदार से कहा कि मंत्रिमंडल में एक राष्ट्रवादी मुस्लिम को शामिल करने के लिए बातचीत मौलाना साहब द्वारा नहीं

बल्कि किसी और द्वारा की जानी चाहिए, क्योंकि मौलाना साहब स्वयं एक राष्ट्रवादी मुस्लिम होने के नाते इस बात पर जोर देने को लेकर शर्मिंदा महसूस कर सकते हैं।
नई दिल्ली, 22 जून, 1946
सुधीर घोष ने क्रिप्स से मुलाकात की। उन्होंने बताया कि क्रिप्स ने उनसे कहा था कि राष्ट्रवादी मुस्लिम को शामिल करने के संबंध में कांग्रेस का रुख बिल्कुल तर्कसंगत और वैध है, लेकिन क्या कार्य समिति इसे माफ नहीं कर सकती? उन्होंने मौलाना साहब से मिले लिखित आश्वासन के आधार पर कार्य शुरू किया था कि कार्य समिति इस मुद्दे पर अड़ी नहीं रहेगी। और अब वे खुद को एक अजीब स्थिति में पा रहे थे। जब सुधीर ने पूछा कि अगर कांग्रेस कैबिनेट मिशन की शर्तों पर इसे स्वीकार करने से इनकार करती है, तो वे लीग को सत्ता क्यों नहीं सौंप सकते, तो क्रिप्स ने जवाब दिया कि उन्हें नहीं लगता कि लीग को अकेले यह जिम्मेदारी सौंपी जा सकती है।
"तो फिर इसे कांग्रेस को क्यों न सौंप दिया जाए?"
"इसके लिए हमें एचएमजी के अधिकार की आवश्यकता होगी।"
"क्या यह काम यहाँ से नहीं किया जा सकता?"
"नहीं, इसके लिए व्यक्तिगत चर्चा की आवश्यकता होगी।"
दोपहर में वायसराय का एक पत्र प्राप्त हुआ जिसमें कांग्रेस अध्यक्ष से अंतरिम सरकार में कांग्रेस प्रतिनिधियों के रूप में अपनी पसंद के एक मुस्लिम को शामिल करने की मांग पर जोर न देने का अनुरोध किया गया था। इससे वह हासिल हुआ जो बापू के समझाने-बुझाने से अब तक नहीं हो पाया था। कार्य समिति में इस प्रश्न पर मतदान होने पर एक को छोड़कर सभी ने इन शर्तों पर सत्ता स्वीकार करने का विरोध किया।

नई दिल्ली, 23 जून, 1946
दोपहर में कार्य समिति की बैठक में बापू ने दृढ़तापूर्वक यह विचार रखा कि कांग्रेस को अंतरिम सरकार से बाहर रहना चाहिए और संविधान सभा में जाना चाहिए, क्योंकि यह पूरी तरह से निर्वाचित निकाय था, जिसका प्रतिनिधि स्वरूप ब्रिटिश सरकार द्वारा भी स्वीकार किया गया था। वायसराय इसके कामकाज में हस्तक्षेप नहीं कर सकता था—यहाँ तक कि वह इसमें बैठने का अधिकार भी नहीं रखता था। यदि स्थिति और बिगड़ती, तो इसे विद्रोही निकाय में बदला जा सकता था... इसके विकल्प के रूप में, उन्हें संघर्ष करने की कोई संभावना नहीं दिख रही थी, क्योंकि अहिंसा का अपेक्षित वातावरण नहीं बन पा रहा था। व्यक्तिगत रूप से, वे सविनय अवज्ञा आदि शुरू करने के बारे में सोच भी नहीं सकते थे।
जब राजेंद्र बाबू इसी लहजे में अपनी बात रख रहे थे, तभी उन्होंने असम से प्राप्त एक टेलीग्राम पढ़कर सुनाया, जिसमें वायसराय के सुधार कार्यालय द्वारा विभिन्न प्रांतीय विधानसभाओं के अध्यक्षों को संविधान सभा के सदस्यों के चुनाव हेतु जारी किए गए प्रपत्र की ओर ध्यान दिलाया गया था। अन्य बातों के अलावा, इसमें उम्मीदवारों से यह घोषणा करने को कहा गया था कि वे 16 मई को कैबिनेट मिशन के वक्तव्य के अनुच्छेद 19 के प्रयोजनों हेतु "प्रांत के प्रतिनिधि के रूप में सेवा करने के लिए तत्पर" होंगे। अनुच्छेद 19 में समूहों के गठन से संबंधित विवादित खंड शामिल थे। सरदार पटेल को भी बंबई के मुख्यमंत्री बी.जी. खेर से इसी प्रकार का संदेश प्राप्त हुआ था: यदि कांग्रेस उम्मीदवार घोषणापत्र पर हस्ताक्षर कर देते हैं, तो क्या वे अनुच्छेद 19 में निर्धारित समूह बनाने और अनुभाग में मतदान करने के सिद्धांत के प्रति प्रतिबद्ध नहीं हो जाएंगे? पत्र

पढ़ने के बाद बापू ने कहा: "संविधान सभा की योजना भी अब बदबूदार हो गई है। मुझे खेद है, हम इसे छू भी नहीं सकते।"
शाम को प्रार्थना प्रवचन के दौरान उत्पन्न हुई नई बाधा का जिक्र करते हुए गांधीजी ने टिप्पणी की: 'जहर की एक बूंद अमृत से भरे घड़े को घातक बना सकती है। यह देखकर मुझे बहुत दुख होता है कि संविधान सभा को उन्हीं लोगों के अधीन लोग नष्ट कर रहे हैं जिन्होंने इसे जन्म दिया था।' उन्होंने सरकारी दस्तावेज़ के लेखकों के बारे में यह बात तब तक कही जब तक कि बाद में यह पता न चल जाए कि उन्हें ऐसे निर्देशों की जानकारी थी। उन्हें अब भी उम्मीद थी कि यह केवल एक गलती है और जल्द ही इसे सुधार लिया जाएगा।
शाम को राजकुमारी अमृत कौर वायसराय के निजी सचिव अबेल से मिलने गईं। अबेल ने बताया कि जिन्ना बहुत अड़ियल थे। पर वे क्या कर सकते थे? उन्हें साथ ले जाना ही पड़ा। उन्होंने राजकुमारी को कांग्रेस से मिला पत्र दिखाया, जो स्पष्ट रूप से सीडब्ल्यूसी की जानकारी के बिना लिखा गया प्रतीत होता था। उस पत्र के मिलने पर ही उन्होंने समझौते के लिए जिन्ना की मांगें मान ली थीं। भला इसके लिए उन्हें कैसे दोषी ठहराया जा सकता है? उन्होंने आशा जताई कि कांग्रेस अपनी जिद को हद से ज्यादा नहीं बढ़ाएगी।
नई दिल्ली, 24 जून, 1946
कल मानो किस्मत का खेल ज़ोरों से चल रहा था। सुबह जब हम मौन प्रार्थना सभा से बिरला हाउस लौट रहे थे, बापू को हरिजन कॉलोनी में छोड़ने के बाद, सरदार की कार विपरीत दिशा से आ रही लॉर्ड पेथिक-लॉरेंस की कार से टकरा गई। लॉर्ड पेथिक-लॉरेंस मौन प्रार्थना सभा से सीधे बिरला हाउस सरदार से मिलने गए थे, लेकिन उन्हें वहाँ नहीं पाया। उन्होंने सरदार की कार पहचान ली,

उन्हें अपनी कार में बिठाया और अपने आवास ले गए, जहाँ दोनों ने आधे घंटे तक बातचीत की।
दोपहर में लॉर्ड पेथिक-लॉरेंस और श्री ए.वी. अलेक्जेंडर बिरला हाउस में सरदार के साथ दोपहर के भोजन पर शामिल हुए। राजाजी भी उपस्थित थे। दोपहर बाद सरदार, मौलाना, पंडित नेहरू और राजेंद्र बाबू ने कैबिनेट मिशन और वायसराय के साथ बैठक की।
आज सुबह जब सुधीर बापू से मिलने आया, तो उसने बताया कि पिछली रात उसकी मुलाकात क्रिप्स से हुई थी। क्रिप्स ने उसे बताया कि उन्होंने फैसला कर लिया है कि अगर कांग्रेस दीर्घकालिक योजना को स्वीकार कर लेती है और अल्पकालिक प्रस्ताव को अस्वीकार कर देती है, तो अंतरिम सरकार के गठन के लिए 16 जून की घोषणा के तहत कैबिनेट मिशन द्वारा किए गए सभी कार्य रद्द कर दिए जाएंगे और इसके लिए नए सिरे से प्रयास किया जाएगा। उन्होंने बापू और सरदार को भी मिलने के लिए आमंत्रित किया है। ऐसा लगता है कि उन्होंने लॉर्ड वेवेल द्वारा जिन्ना को दिए गए आश्वासनों से पैदा हुई गड़बड़ी को सुलझाने का मन बना लिया है।
सुबह सात बजे बापू सरदार और सुधीर के साथ कैबिनेट मिशन से मिलने गए। आज उनका मौन दिवस था, इसलिए उन्होंने संक्षिप्त पर्चियाँ लिखकर बातचीत की, जो इस प्रकार थीं:
"मुझे समझ आया कि आपने अंतरिम सरकार की अब तक की पूरी योजना को रद्द करने और स्थिति पर नए सिरे से विचार करने का प्रस्ताव रखा है।"
"अगर आप कहते हैं कि आप स्वीकृत प्रस्तावों से सरकार बनाएंगे, तो मेरी नज़र में यह संभव नहीं है। अगर आपको कोई जल्दी नहीं है और आप इस बारे में मुझसे बात करना चाहें, तो मैं अपने विचार व्यक्त करने के बाद, यानी रात 8 बजे के बाद, सहर्ष ऐसा करूँगा।

इस बीच, अगर आपको कोई आपत्ति न हो, तो आपको वायसराय के 22 तारीख के पत्र में उल्लिखित प्रस्ताव को अस्वीकार करने वाला कार्य समिति का पत्र मिल जाना चाहिए। मेरी राय में उस पत्र ने अंतरिम सरकार को एक नया रूप दे दिया है। जहाँ तक मुझे पता है, कार्य समिति का उद्देश्य मिशन की सहायता करना है, न कि उसमें बाधा डालना, सिवाय तब जब उसकी परियोजना के परिणामस्वरूप कार्य समिति को आत्महत्या करनी पड़े। सुधीर की बातों ने मुझे इस अंधकार में प्रकाश की किरण दिखाई। लेकिन क्या सचमुच कोई प्रकाश है?" संविधान सभा के संबंध में, कल दोपहर तक मेरा यही मत था कि कांग्रेस को अपनी पूरी क्षमता से संविधान सभा का संचालन करना चाहिए। लेकिन कल मैंने जो नियम पढ़े, उनसे मेरी सोच पूरी तरह बदल गई है। इसमें एक गंभीर खामी है। मैं किसी पर आरोप नहीं लगा रहा हूँ। लेकिन खामी तो खामी ही होती है। तीनों दलों को तीन अलग-अलग सोच के साथ काम नहीं करना चाहिए और सफलता की उम्मीद नहीं करनी चाहिए।
"तो फिर आपको किसी विशेष भाग को पूरे से अलग नहीं करना चाहिए। 'राज्य के संपूर्ण दस्तावेज़ के अंतर्गत' क्यों नहीं कहना चाहिए?"
"हालाँकि, मैं शाम को आपसे इस प्रश्न पर चर्चा करने में प्रसन्न होऊंगा। आपको इतनी असुविधा पहुँचाने के लिए मुझे खेद है। मुझे बस आशा है कि आप मेरे इस प्रयास के पीछे का उद्देश्य समझ पाएंगे।"
बैठक के बाद सरदार ने मौलाना के घर छोड़ने का अनुरोध किया। रास्ते में उन्होंने बापू से पूछा, "कार्य समिति की बैठक है; मैं उन्हें क्या बताऊँ?" बापू ने उत्तर दिया कि वे कैबिनेट मिशन के साथ हुई बातचीत से संतुष्ट नहीं हैं। सरदार चिढ़ गए। "आपने

अनुच्छेद 19 के संबंध में संदेह व्यक्त किया था। उन्होंने इस पर स्पष्ट आश्वासन दिया है। आपको और क्या चाहिए?" बापू ने जवाब में लिखा, "हमारी बैठक के दौरान जब क्रिप्स ने मुझसे कहा कि यदि हमें सुधार कार्यालय द्वारा जारी निर्देश के शब्दों के बारे में कोई आशंका है, तो वे अनुच्छेद 19 का संदर्भ हटाकर उसके स्थान पर '16 मई की घोषणा के उद्देश्य से' शब्द जोड़ सकते हैं, तभी लॉर्ड पेथिक-लॉरेंस ने तुरंत हस्तक्षेप करते हुए कहा, 'नहीं, इससे समस्या उत्पन्न होगी।' " सरदार ने असहमति जताई, बापू ने सुधीर से पूछा, सुधीर ने बापू की बात की पुष्टि की लेकिन साथ ही यह भी कहा कि उनका अपना मत यह था कि वे बापू की बात मानने को तैयार थे।
कैबिनेट प्रतिनिधिमंडल के साथ हुई बैठक की रिपोर्ट सुनने के बाद मौलाना साहब बापू और सरदार दोनों को कार्यकारी समिति में ले गए, जहाँ लंबी चर्चा हुई। सरदार ने कहा कि उन्हें उसी दोपहर कैबिनेट प्रतिनिधिमंडल को अपना निर्णय देने का वादा किया गया था। बापू असहमत थे। उन्होंने कई पर्चियाँ लिखकर सुझाव दिया कि वे अपना निर्णय तब तक के लिए टाल दें जब तक वे शाम को कैबिनेट प्रतिनिधिमंडल से मिलकर उनसे और स्पष्टीकरण प्राप्त न कर लें। अंत में उन्होंने लिखा: "मेरी भावनाओं को ठेस पहुँचने का कोई सवाल ही नहीं है। मैं इस मुद्दे पर आज निर्णय लेने के खिलाफ हूँ, लेकिन आप अपनी इच्छानुसार निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र हैं।" कैबिनेट मिशन ने कांग्रेस और लीग से उनके प्रस्तावों पर अंतिम निर्णय दोपहर 2 बजे तक सूचित करने को कहा था। दोपहर को वायसराय के घर से किसी ने पंडित नेहरू को फोन करके कहा कि कार्य समिति का जवाब तुरंत भेजा जाए। पंडित नेहरू ने सरदार को फोन किया, जिन्होंने कहा कि उन्हें जल्दबाजी की कोई जरूरत नहीं है और

सुधीर को कैबिनेट मिशन के स्टाफ के श्री ब्लेकर से संपर्क करने और यह कहने के लिए कहा कि इस तरह की अधीरता अनावश्यक रूप से मामले को बिगाड़ देगी। बापू को इसकी सूचना मिलने पर उन्होंने तुरंत भेजने के लिए एक संक्षिप्त अंतरिम उत्तर तैयार किया और सुझाव दिया कि कैबिनेट प्रतिनिधिमंडल को सूचित किया जाए कि एक विस्तृत पत्र बाद में भेजा जाएगा। ऐसा ही किया गया। बाद में पता चला कि अति उत्साही अधिकारी, जिसने संभवतः कांग्रेस के निर्णय की प्रतीक्षा कर रही मुस्लिम लीग की मदद के लिए टेलीफोन संदेश भेजा था, ने बिना अधिकार के कार्य किया था और इसके लिए उसे फटकार लगाई गई।
कार्य समिति की दोपहर की बैठक में बापू ने मुझसे कार्य समिति के लिए लिखा एक नोट पढ़ने को कहा। उसमें उन्होंने बताया कि संविधान सभा के पास कोई कानूनी अधिकार नहीं है, क्योंकि उसे संसद की स्वीकृति प्राप्त नहीं है। यह केवल मंत्रिमंडल मिशन की सिफारिश पर आधारित है। "उनकी सिफारिश उनके मुंह में या छपे हुए कागज पर ही रहेगी। संविधान सभा में कोई विवाद होने पर हमें कांस्टेबल को आदेश देने का भी अधिकार नहीं होगा। यह एक खतरनाक स्थिति है। संविधान सभा से कुछ भी हासिल करने से पहले संसद की स्वीकृति और केंद्र सरकार के पास वास्तविक शक्ति होनी चाहिए। संसद की स्वीकृति से संविधान सभा के अध्यक्ष के लिए (मामले को न्यायोचित बनाकर) रास्ता साफ हो जाएगा, यदि वे किसी महत्वपूर्ण मुद्दे को संघीय न्यायालय में निर्णय के लिए भेजना चाहें।" इसके बाद हुई चर्चा के दौरान, सरदार ने बड़े बलपूर्वक यह बात रखी कि कैबिनेट मिशन द्वारा सुधार कार्यालय के संबंध में दी गई व्याख्या पर्याप्त थी और कांग्रेस अपनी प्रतिष्ठा को नुकसान पहुंचाए बिना तत्काल निर्णय देने में देरी नहीं कर सकती थी।

बापू ने लिखा, "मेरा दिमाग उलझन में है... यह अनुच्छेद 19 के संदर्भ और अंतरिम सरकार की 'पूरी योजना को रद्द करने' के अर्थ के इर्द-गिर्द घूमता है।" सरदार का धैर्य टूट गया। बापू ने शरत बोस और राजेंद्र बाबू से पूछा कि क्या विधानसभा अध्यक्षों को जारी की गई घोषणा, उस पर हस्ताक्षर करने के बाद संविधान सभा में जाने वाले सदस्यों को 16 मई की योजना के अनुच्छेद 19 के संबंध में कार्रवाई की स्वतंत्रता देती है या नहीं। शरत बोस का मत था कि निर्देशों में अनुच्छेद 19 का उल्लेख सदस्यों की कार्रवाई की स्वतंत्रता को कम नहीं करता है, क्योंकि राज्य पत्र की उनकी स्वीकृति विवादित खंडों की कानूनी व्याख्या के अधीन थी। राजेंद्र बाबू का मत था कि अनुच्छेद 19 में प्रांतों का समूह बनाना अनिवार्य नहीं बताया गया था। इसमें केवल प्रांतों को समूह बनाने की स्वतंत्रता दी गई थी, जैसा कि दस्तावेज़ की भाषा से स्पष्ट था। राजकीय दस्तावेज़ पर संसद की मुहर के संबंध में पंडित नेहरू का मानना था कि यह एक "सीमित प्रक्रिया" होगी और व्याख्या के दायरे को सीमित कर देगी।
'एक बार तो डर झूठा साबित हुआ। कैबिनेट मिशन ने शाम को स्पष्टीकरण जारी किया कि संविधान सभा के सदस्यों को जिस प्रपत्र पर हस्ताक्षर करने थे, वह उन्हें अनुच्छेद 19 के अनुसार संविधान बनाने के लिए बाध्य नहीं करता था। उन्हें जिस प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर करने थे, उसमें केवल भारत के लिए संविधान बनाने में सहयोग करने की बात कही गई थी।'
रात 8 बजे जब बापू का मौन टूटा, तो वे और सरदार वायसराय और मंत्रिमंडल के सदस्यों से वायसराय आवास पर मिले। वहाँ से लौटने पर सरदार ने फिर बापू से पूछा, "क्या आप संतुष्ट हुए?" बापू ने उत्तर दिया, "इसके विपरीत, मेरी शंकाएँ और गहरी हो गई हैं। मेरा

सुझाव है कि अब से आप कार्य समिति का मार्गदर्शन करें।" सरदार ने जवाब दिया, "ऐसा कुछ नहीं। मैं एक शब्द भी नहीं कहूँगा। आप खुद उन्हें जो चाहें बताएँ।"
रात 10 बजे बापू ने क्रिप्स को एक पत्र लिखा: "मैं यह पत्र लिखना उचित नहीं समझता... संविधान सभा के गठन के लिए कार्य समिति की तत्परता के बावजूद, मैं अंधेरे में छलांग लगाने की सलाह नहीं दे सकता... यदि आप वास्तव में ऐसा करने का इरादा रखते हैं, तो सभी प्रतिबद्धताओं को त्यागने के बाद केवल एक शून्य ही रह जाएगा... राज्यपालों को (सुधार कार्यालय द्वारा जारी) दिए गए निर्देश, भले ही वे हानिरहित साबित हुए हों, एक भयावह परिदृश्य प्रस्तुत करते हैं। इसलिए, मैं कार्य समिति को सलाह देना चाहता हूं कि वे अंतरिम सरकार से जुड़े बिना दीर्घकालिक प्रस्ताव को स्वीकार न करें। मुझे अपनी अंतरात्मा के विरुद्ध कार्य नहीं करना चाहिए..."
नई दिल्ली, 23 जून, 1946
सुबह 8 बजे बापू कार्य समिति की बैठक में शामिल होने गए। उन्होंने मुझसे वह नोट पढ़ने को कहा जो उन्होंने कल रात क्रिप्स को लिखा था। फिर उन्होंने उन्हें बहुत संक्षेप में संबोधित किया: "मैं अपनी हार स्वीकार करता हूँ। आप मेरे निराधार संदेह पर अमल करने के लिए बाध्य नहीं हैं। आप मेरी अंतरात्मा की आवाज़ तभी सुनें जब वह आपके विवेक के अनुरूप हो। अन्यथा आप स्वतंत्र मार्ग अपनाएँ। अब मैं आपकी अनुमति से जा रहा हूँ। आप अपने विवेक का पालन करें।"
सभा में सन्नाटा छा गया। कुछ देर तक कोई नहीं बोला। मौलाना साहब ने अपनी अचूक सतर्कता से स्थिति को भांप लिया। उन्होंने पूछा, "आप लोग क्या चाहते हैं? क्या बापू को और रोकने की कोई ज़रूरत

है?" सब चुप रहे। सब समझ गए थे। निर्णय की उस घड़ी में बापू की कोई ज़रूरत नहीं थी। उन्होंने पायलट को छोड़ने का फैसला किया। बापू अपने निवास स्थान लौट गए।
कार्य समिति की दोपहर में फिर बैठक हुई और कैबिनेट मिशन को पत्र लिखकर केंद्र में अंतरिम सरकार के गठन के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया गया तथा विवादित अनुच्छेदों की अपनी व्याख्या के साथ दीर्घकालिक योजना को स्वीकार कर लिया गया। इसके बावजूद उन्होंने बापू को कार्य समिति के दोपहर के सत्र में उपस्थित कराया। दोपहर में कैबिनेट मिशन ने कार्य समिति के सदस्यों को मिलने के लिए आमंत्रित किया। बापू सदस्य नहीं थे, इसलिए उन्हें नहीं बुलाया गया और वे नहीं गए। लौटने पर किसी ने भी बापू को बैठक में हुई चर्चा के बारे में एक शब्द भी नहीं बताया! कैबिनेट मिशन के साथ वार्ता के अंतिम चरण में गांधी और केंद्रीय कार्य समिति के बीच तथा उनके तथा कांग्रेस के कुछ दिग्गज नेताओं के बीच बढ़ती दूरी स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगी। सत्ता हस्तांतरण, अंग्रेजों के साथ चल रही वार्ता और कांग्रेस की चुनावी प्रक्रियाओं के विभिन्न पहलुओं पर गांधी के विचार बहुत कठोर थे। कई ऐसे मुद्दे थे जिन पर वे कांग्रेस नेताओं से सहमत नहीं थे। अक्सर, कांग्रेस पार्टी और उसके नेता गांधी का साथ छोड़ रहे थे और महत्वपूर्ण मामलों पर उनकी सलाह को अनसुना कर रहे थे। फिर भी, उन्हें अपने फैसलों को भारत की जनता के लिए स्वीकार्य बनाने के लिए उनकी मंजूरी की आवश्यकता थी; देश के खेतों और गांवों में रहने वाली जनता अपने बापू के आशीर्वाद से कुछ भी स्वीकार कर लेती। और इसलिए, उनसे असहमति जताने के बाद, उनकी सलाह को अनदेखा करने के बाद, उन्हें दरकिनार करने के बाद,

वे अंततः उन्हें अपने कार्यों का समर्थन करने के लिए मना लेते थे।
जब गांधी ने इस बात पर ज़ोर दिया कि मुस्लिम लीग और कांग्रेस के बीच मतभेदों का समाधान अंग्रेजों के जाने के बाद ही होना चाहिए, तो वे उनसे सहमत नहीं हुए। गांधी ने ज़ोर देकर कहा, 'पहले स्वतंत्रता; फिर सत्ता, चाहे जितनी जल्दी हो और किसी भी कीमत पर।' गांधी ब्रिटिश सेना को भारत से बाहर निकालना चाहते थे; वे ब्रिटिश हथियारों और बाहुबल के बल पर लागू अनुशासन की बजाय अराजकता को प्राथमिकता देते थे। वे मुस्लिम लीग और उनकी अलगाव की मांग को एक स्वतंत्र संप्रभु राज्य के दो पक्षों के बीच बातचीत के माध्यम से सुलझाना चाहते थे, जो ब्रिटिश उपनिवेशवादियों के भ्रष्ट प्रभाव से मुक्त हो।
राजनीतिक मोर्चे पर उन्होंने कांग्रेस द्वारा भारतीय राष्ट्रीय सेना के सैनिकों को धन और अन्य प्रलोभनों से लाड़- प्यार करने का विरोध किया। वे चुनावों में कांग्रेस द्वारा धन के उपयोग के विरुद्ध थे। गांधी ने पूर्व सैनिकों को लाड़-प्यार करने और चुनावों में धन के उपयोग, दोनों के गंभीर परिणामों की चेतावनी दी, लेकिन उनकी चेतावनियों पर किसी ने ध्यान नहीं दिया। उन्हें बताया गया कि ये राजनीतिक आवश्यकताएँ हैं, एक अव्यावहारिक आदर्शवादी को इन बातों की क्या समझ होगी? लेकिन पूर्व भारतीय राष्ट्रीय सेना के सैनिकों को लाड़-प्यार करना जल्द ही एक समस्या बन गया: उनकी मांगें बढ़ती गईं और उनमें से कुछ ने हिंसा का सहारा लेने की धमकी तक दे दी। उनमें से कुछ, जिन्हें कांग्रेस ने चुनाव लड़ने के लिए समर्थन दिया या नामांकित किया था, हार गए और तुरंत मुस्लिम लीग में शामिल हो

गए। कांग्रेस के लिए मुसीबत बनकर लौटने वालों में से एक मियां गुलाम सरवर था, जिसे नोआखली का हत्यारा कहा जाता था।
दिल्ली में कार्य समिति के अंतिम दिन हुई एक घटना का जिक्र करते हुए गांधी ने 1 जुलाई 1946 को पुणे से पटेल को पत्र लिखकर कहा, 'आज हमारी बातचीत मुझे पसंद नहीं आई। इसमें किसी की गलती नहीं है। अगर गलती किसी की है तो वह परिस्थितियों की है। इसमें हम क्या कर सकते हैं? आप अपने अनुभव से चलते हैं, मैं अपने अनुभव से। आप जानते हैं कि आपने जो कुछ किया है, उसे मैं समझ नहीं पाया हूँ... आप समिति में बहुत तीखे स्वर में बोलते हैं। मुझे यह पसंद नहीं है। आज तो ऊपर से संविधान सभा का मुद्दा भी उठ खड़ा हुआ... यह सब शिकायत के तौर पर नहीं है। लेकिन मुझे लगता है कि हम अलग-अलग दिशाओं में जा रहे हैं।'
पटेल ने जवाब दिया: 'आपके पत्र के बाद मैं क्या कहूँ? मुझसे ही गलती हुई होगी। बस अभी तक मुझे वह समझ नहीं आ रही है और इसी वजह से मुझे दुख हो रहा है। मैं कोई दूसरा रास्ता नहीं अपनाना चाहता... मेरी अंतरात्मा तो इसके विपरीत थी, लेकिन अगर मैंने वह नहीं किया होता जो मैंने किया, तो बाद में कांग्रेस को ही दोषी ठहराया जाता... कमेटी में बोलते समय मुझमें थोड़ी गर्माहट आ जाती है... यह स्वभाव की कमी है... लेकिन इसमें कोई बड़ी बात नहीं है।'
कार्य समिति द्वारा 25 जून को मंत्रिमंडल आयोग को सूचित किया गया निर्णय मामले का समाधान नहीं कर पाया। मंत्रिमंडल आयोग विवादित अनुच्छेदों की अपनी व्याख्या पर अड़ा रहा; उन्होंने फ़िलहाल इन्हें सुलझाने के किसी भी प्रयास को स्थगित करने का निर्णय लिया। मंत्रिमंडल आयोग ने निर्णय लिया कि कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों की प्रतिक्रियाएँ उनकी 16 मई की योजना के

अनुरूप थीं, इसलिए दोनों दल अंतरिम सरकार बनाने के लिए आमंत्रित किए जाने के योग्य थे। उन्होंने वार्ता में एक संक्षिप्त विराम लिया, और 29 जून को तीन सदस्यीय मंत्रिमंडल आयोग दिल्ली से लंदन के लिए रवाना हो गया।
गांधी जी के मन में शंकाएँ बनी रहीं। लेकिन उन्होंने कार्य समिति के निर्णय को स्वीकार कर लिया था। उन्हें यह एहसास हो गया था कि कांग्रेस नेतृत्व में पहले से ही दरारें मौजूद थीं और यह समय उन्हें उजागर करके कांग्रेस की कमजोरियों को सामने लाने का नहीं था। यदि उन्हें कोई आपत्ति थी तो वे उसे दूर करने के उपाय खोजने का प्रयास करेंगे, लेकिन जब तक उन्हें स्वयं अपनी शंकाओं की सत्यता का यकीन न हो, तब तक वे आंदोलन शुरू नहीं करेंगे। उन्होंने अपनी इस कमजोरी के लिए स्वयं को दोषी ठहराया।
अपने जीवनीकार लुई फिशर से बात करते हुए उन्होंने कहा कि कार्य समिति को अपने मन में उठ रहे संदेहों के बारे में सूचित करने और यह स्वीकार करने के बाद कि वे अपने संदेहों को साबित नहीं कर सकते, वे 'अंधेरे में भटक रहे थे', और उन्होंने कार्य समिति को निर्देश दिया कि 'अपनी बुद्धि का पालन करें क्योंकि मेरी अपनी बुद्धि मेरी सहज प्रवृत्ति का समर्थन नहीं करती, मैंने स्वयं अपनी सहज प्रवृत्ति का पालन तब तक नहीं किया जब तक मेरी बुद्धि ने उसका समर्थन नहीं किया। दीर्घकालिक प्रस्ताव पर मेरी बुद्धि मेरी सहज प्रवृत्ति से विफल रही।'
कई कारणों से गांधीजी को छिपे हुए खतरों का आभास हो गया था। उन्हें ब्रिटिश प्रशासनिक तंत्र की कार्यप्रणाली पर संदेह था। उन्होंने कैबिनेट मिशन या वायसराय के इरादों पर अभी तक अविश्वास नहीं किया था, लेकिन अब तक की घटनाओं के तरीके पर उन्हें संदेह जरूर था। 24 जून की सुबह लॉर्ड पेथिक-लॉरेंस

द्वारा साक्षात्कार के दौरान दिखाई गई झिझक गांधीजी के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण थी। उन्होंने महसूस किया कि कैबिनेट मिशन के सदस्यों के बीच और उनके तथा वायसराय तथा ब्रिटिश औपनिवेशिक प्रशासन के बीच कई मामलों पर मतभेद थे। अंततः उन्हें वायसराय के सुधार कार्यालय के कामकाज पर चिंता सता रही थी। उन्होंने बार-बार यह दृढ़ विश्वास व्यक्त किया था कि भारत तभी आत्मनिर्भर होगा जब वह 'भारतीय इस्पात ढांचे' को तोड़ देगा। लंदन में दूसरे गोलमेज सम्मेलन के बाद श्रीनिवास शास्त्री के कहे शब्द उनके मन में गूंज उठे: 'व्हाइटहॉल से निकले कई नेक इरादे दिल्ली सचिवालय के अंधेरे गलियारों में कुचल दिए गए हैं।' क्या इतिहास खुद को दोहराएगा?
27 मई को उन्होंने सर क्रिप्स को लिखा: 'दिखावा किया गया भरोसा बेकार से भी बदतर है, वास्तविक भरोसा ही मायने रखता है... कैबिनेट आयोग की ओर से विश्वसनीय कार्रवाई सभी अविश्वास या संदेह को उसी तरह दूर कर देगी, जैसे सूर्य सुबह के कोहरे को दूर कर देता है।'
29 जून को गांधी जी बंबई से पुणे के लिए रवाना हुए। उन्हें ले जा रही विशेष ट्रेन जब रात के अंधेरे में दक्कन पठार की चढ़ाई पर तेज़ी से आगे बढ़ रही थी, तो अचानक ज़ोरदार ब्रेक लगाकर रुक गई— ट्रेन को पटरी से उतारने के लिए जानबूझकर पटरियों पर पत्थर रखे गए थे। इंजन चालक परेरा ने समय रहते आपातकालीन ब्रेक लगा दिए, लेकिन तब तक इंजन का निचला हिस्सा और पहला डिब्बा पत्थरों से बुरी तरह क्षतिग्रस्त हो चुके थे। गांधी जी की जान लेने का एक और प्रयास विफल हो गया।
अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैठक 7 जुलाई 1946 को बंबई में कार्य समिति द्वारा लिए गए निर्णयों की पुष्टि करने के लिए

हुई। कांग्रेस में समाजवादी तत्व कैबिनेट मिशन के दीर्घकालिक प्रस्तावों को अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा स्वीकार किए जाने के विरोध में थे। गांधी जी ने अपने भाषण के एक बड़े हिस्से में कार्य समिति के निर्णय का समर्थन किया।
'कार्यकारी समिति के सदस्यों के साथ मेरे संबंधों से आप परिचित हैं... मैं उनसे संविधान सभा के प्रस्ताव को अस्वीकार करने के लिए कह सकता था... लेकिन मैं इसके लिए कोई कारण नहीं बता सका... उनका निर्णय, जो सर्वसम्मति से लिया गया है, आपके समक्ष है... कार्यकारी समिति के सदस्य आपके निष्ठावान और परखे हुए सेवक हैं; आपको उनके प्रस्ताव को आसानी से अस्वीकार नहीं करना चाहिए।'
मैं यह स्वीकार करने को तैयार हूँ कि प्रस्तावित संविधान सभा जनता की संसद नहीं है। इसमें अनेक कमियाँ हैं। लेकिन आप सभी अनुभवी और मंझे हुए योद्धा हैं। एक सैनिक खतरे से कभी नहीं डरता, बल्कि वह उसमें आनंदित होता है। यदि प्रस्तावित संविधान सभा में कोई खामियाँ हैं, तो उन्हें दूर करना आपका कर्तव्य है। इसे चुनौती मानकर उसका सामना करना चाहिए, न कि अस्वीकृति का कारण बनना चाहिए। मुझे आश्चर्य है कि श्री जयप्रकाश नारायण ने कल कहा कि प्रस्तावित संविधान सभा में भाग लेना खतरनाक होगा और इसलिए उन्हें कार्य समिति के प्रस्ताव को अस्वीकार कर देना चाहिए। मैं जयप्रकाश जैसे अनुभवी योद्धा के मुख से ऐसी निराशावादी भाषा सुनने के लिए तैयार नहीं था... सत्याग्रही कभी पराजित नहीं होता।
न ही मैं किसी सत्याग्रही से यह अपेक्षा करता हूँ कि वह कहे कि अंग्रेज जो कुछ भी करते हैं वह बुरा ही होता है। अंग्रेज जरूरी नहीं कि बुरे ही हों। अन्य लोगों की तरह ही अंग्रेजों में भी

अच्छे और बुरे लोग होते हैं। यदि अंग्रेजों में कुछ अच्छाई न होती तो वे अपनी वर्तमान शक्ति तक न पहुँच पाते। हम स्वयं भी दोषों से मुक्त नहीं हैं... कुछ लोग कहते हैं कि सत्याग्रह उस व्यक्ति के विरुद्ध व्यर्थ है जिसमें नैतिक भावना नहीं है। मैं इस बात से असहमत हूँ। यदि हम सच्चे हों और पर्याप्त धैर्य रखें तो कठोरतम हृदय भी पिघल सकता है। सत्याग्रही प्राण त्याग देता है, पर कभी हार नहीं मानता। यही "करो या मरो" का अर्थ है...
'यह मौज-मस्ती या आराम का समय नहीं है... संविधान सभा आपके लिए फूलों की सेज नहीं बल्कि कांटों की सेज होगी। आप इससे बच नहीं सकते...'
यदि आप मुझसे पूछें कि प्रस्तावित संविधान सभा को अस्वीकार करने या संविधान सभा के न बनने की स्थिति में क्या मैं लोगों को व्यक्तिगत या सामूहिक सविनय अवज्ञा आंदोलन शुरू करने की सलाह दूंगा या स्वयं उपवास करूंगा, तो मेरा उत्तर होगा "नहीं"। मैं अकेले चलने में विश्वास रखता हूं। मैं इस संसार में अकेला आया हूं, मृत्यु के अंधकारमय घाटी में अकेला चला हूं और समय आने पर अकेला ही विदा लूंगा। मैं जानता हूं कि मैं अकेले रहते हुए भी सत्याग्रह करने में सक्षम हूं। मैंने पहले भी ऐसा किया है। लेकिन यह उपवास या सविनय अवज्ञा का समय नहीं है। मैं संविधान सभा को सत्याग्रह का विकल्प मानता हूं। यह रचनात्मक सत्याग्रह है।
"विकल्प रचनात्मक कार्य है जिसके साथ आपने कभी न्याय नहीं किया... लेकिन सत्याग्रही तब तक कार्य में देरी नहीं कर सकता जब तक कि अनुकूल परिस्थितियां प्राप्त न हो जाएं। वह उपलब्ध सामग्री से ही कार्य करेगा, उसमें से अशुद्धियों को दूर करेगा और उसे शुद्ध सोने में परिवर्तित करेगा..."

हमें अपने दृष्टिकोण में कायरता नहीं दिखानी चाहिए, बल्कि आत्मविश्वास और साहस के साथ अपने कार्य का सामना करना चाहिए। धोखे के डर से हमें हतोत्साहित नहीं होना चाहिए। सत्याग्रही को कोई धोखा नहीं दे सकता। मेरे मन में व्याप्त अंधकार की मुझे कोई परवाह नहीं है। ईश्वर उसे प्रकाश में बदल देगा।
कैबिनेट मिशन के प्रस्ताव के संबंध में कांग्रेस कार्य समिति के निर्णय को अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने 204 मतों के पक्ष में और 51 मतों के विपक्ष में पारित कर दिया।
गांधी जी विश्राम और स्वास्थ्य लाभ के लिए पंचगनी रवाना हुए। कारावास से रिहा होने के बाद पिछले कुछ वर्षों से वे हर ग्रीष्म ऋतु में दो महीने पुणे के पास पंचगनी के ठंडे पहाड़ी इलाके में बिताते थे। उनका उद्देश्य विश्राम करना था, फिर भी वे बहुत चिंतित थे: बारिश में देरी हो रही थी और धान की फसल खतरे में थी; खाद्य पदार्थों की कमी के इन दिनों में धान की फसल खराब होने से कई गांवों की अर्थव्यवस्था बर्बाद हो जाती। सौभाग्य से बारिश हुई और उन्होंने राहत की सांस ली।
लेकिन अपने प्रिय देश की दिशा को लेकर चिंता और मन में उठने वाले संदेहों को न समझ पाने की वजह से पंचगनी में उनका प्रवास असहज रहा। अंततः उन्होंने अपना प्रवास छोटा करने और सेवाग्राम जाने का निर्णय लिया। उन्होंने उर्ली कंचन स्थित प्राकृतिक चिकित्सा केंद्र में कुछ दिन बिताए। हालांकि, वहां आराम करने के बजाय उनका कार्यक्रम बहुत व्यस्त हो गया, क्योंकि उनसे कई लोग मिलने आए। थके-हारे उन्होंने कहा, 'देखते हैं सेवाग्राम मेरे लिए क्या कर पाता है। हालांकि, बोझ मायने नहीं रखता, बल्कि अनासक्ति का अभाव मायने रखता है। मैंने अभी तक चीजों को ईश्वर पर छोड़ना पूरी तरह से नहीं सीखा है। लेकिन अगर किसी को ईश्वर

में अटूट आस्था है, तो यह चिंता का अतिरिक्त कारण नहीं बनना चाहिए।'
जून के आखिरी सप्ताह में दिल्ली में सीडब्ल्यूसी की फिर से बैठक हुई। चर्चा का केंद्र बिंदु कैबिनेट मिशन की दीर्घकालिक योजना को कांग्रेस द्वारा स्वीकार करना और उनकी अल्पकालिक योजनाओं को अस्वीकार करना था। शहर के दूसरे हिस्से में, मुस्लिम लीग की कार्यकारी समिति लगातार सत्र में थी और कांग्रेस के फैसले का बेसब्री से इंतजार कर रही थी। जिन्ना और लीग आमतौर पर कांग्रेस के स्पष्ट प्रस्ताव आने तक अपनी रणनीति को रोके रखने की रणनीति अपनाते थे। लीग ने 16 मई के कैबिनेट मिशन के प्रस्ताव को पहले ही स्वीकार कर लिया था। समूहीकरण खंड की उनकी व्याख्या को कैबिनेट मिशन ने भी मंजूरी दे दी थी और जिन्ना ने वायसराय लॉर्ड वेवेल से अतिरिक्त आश्वासन प्राप्त कर लिए थे। उनका मानना था कि कांग्रेस कभी भी इस तरह की एकतरफा योजना को स्वीकार नहीं करेगी और इस प्रकार लीग को अंतरिम सरकार बनाने के लिए आमंत्रित किया जाएगा।
25 जून की शाम को, कांग्रेस का जवाब मिलने के बाद, जिन्ना को आश्चर्य हुआ जब कैबिनेट मिशन ने उन्हें बुलवाया और सूचित किया कि वे दोनों पक्षों के जवाबों से संतुष्ट हैं और दोनों अंतरिम सरकार का हिस्सा बनने के योग्य हैं। कांग्रेस ने 16 जून के प्रस्ताव के अनुच्छेद 8 के अनुसार इस सरकार का हिस्सा बनने में असमर्थता व्यक्त की थी, जिसमें कहा गया था कि यदि दोनों में से कोई भी पक्ष उस बयान में निर्धारित रूपरेखा के अनुसार गठबंधन सरकार के गठन में शामिल होने को तैयार नहीं है, तो वायसराय एक अंतरिम सरकार के गठन की प्रक्रिया शुरू करेंगे जो 16 मई के बयान

को स्वीकार करने के इच्छुक लोगों का यथासंभव प्रतिनिधित्व करेगी।
जिन्ना बेहद क्रोधित थे। उन्होंने मंत्रिमंडल मिशन से लिखित में प्रस्ताव मांगा कि वे क्या करने वाले हैं, और फिर वे तुरंत लीग की कार्यकारी समिति के पास गए, जहाँ उन्होंने अंतरिम सरकार के गठन के लिए 16 जून के प्रस्ताव को स्वीकार करने वाला एक प्रस्ताव पारित करवाया। उनका मानना था कि कांग्रेस के रुख के बाद, वायसराय का यह कर्तव्य था कि वे मुस्लिम लीग को अंतरिम सरकार बनाने के लिए आमंत्रित करें। लेकिन मंत्रिमंडल मिशन का कहना था कि, 'यदि कांग्रेस या मुस्लिम लीग में से कोई भी गठबंधन सरकार में शामिल होने के लिए सहमत नहीं होता है, तो गठबंधन सरकार की योजना रद्द हो जाएगी और हमें 16 मई की योजना को स्वीकार करने वालों में से किसी अन्य अंतरिम सरकार का गठन करना होगा।' 16 मई के बयान को स्वीकार करने से कांग्रेस देश के सबसे बड़े राजनीतिक समूह के रूप में उस गठबंधन सरकार में आमंत्रित होने का हकदार हो जाती थी। तदनुसार, 26 जून को मंत्रिमंडल मिशन ने एक बयान जारी किया कि संविधान सभा के चुनाव के दौरान थोड़े विराम के बाद अंतरिम सरकार के गठन के लिए आगे के प्रयास फिर से शुरू किए जाएंगे।
मुस्लिम लीग गुस्से में थी; उसे लगा कि उसे मात दी गई है, धोखा दिया गया है और छल किया गया है। जिन्ना ने मांग की कि चूंकि अंतरिम सरकार के गठन की योजना को स्थगित कर दिया गया है, इसलिए संविधान सभा के चुनाव भी स्थगित किए जाने चाहिए। कैबिनेट मिशन ने इस मांग को भी अस्वीकार कर दिया। क्रोधित जिन्ना ने कैबिनेट मिशन पर 'विश्वासघात' का आरोप लगाया; उन्होंने अनुच्छेद 8 की कैबिनेट मिशन की व्याख्या को 'बेहद मनगढ़ंत और बेईमान' बताया।

पहली बार जिन्ना अपने पारंपरिक संरक्षकों के बिना असहाय हो गए थे, और एक जिद्दी बच्चे की तरह उन्होंने गंभीर परिणामों की धमकियों और चेतावनियों का सहारा लिया।
लीग परिषद की बैठक 29 जुलाई को हुई और उसने 16 मई की योजना को पहले स्वीकार करने के अपने फैसले को वापस ले लिया। उसने पाकिस्तान की प्राप्ति के लिए 'प्रत्यक्ष कार्रवाई' शुरू करने और 'आवश्यकतानुसार आगामी संघर्ष के लिए मुसलमानों को संगठित करने' की घोषणा की। उन्होंने कहा कि 16 अगस्त 1946 को 'प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस' के रूप में मनाया जाएगा और पूरे भारत में विरोध प्रदर्शन के दिन के रूप में मनाया जाएगा।
मुस्लिम लीग की परिषद के समापन सत्र में जोरदार तालियों के बीच जिन्ना ने घोषणा की: 'आज हम संवैधानिक तरीकों को अलविदा कहते हैं... हमने पिस्तौल भी बना ली है और हम इसे चलाने की स्थिति में हैं।' 31 जून को एक प्रेस कॉन्फ्रेंस में उन्होंने आगे स्पष्ट किया कि चूंकि ब्रिटिश सरकार और कांग्रेस दोनों अपने-अपने तरीके से सशस्त्र थीं, एक आग्नेयास्त्रों से और दूसरी जन संघर्ष की धमकी से, इसलिए मुस्लिम लीग ने महसूस किया कि अब पाकिस्तान की अपनी मांग को लागू करवाने के लिए संघर्ष के लिए तैयार होने का समय आ गया है। उन्होंने प्रस्तावित 'प्रत्यक्ष कार्रवाई' के विवरण पर चर्चा करने से इनकार करते हुए कहा, 'मैं अभी आपको यह बताने के लिए तैयार नहीं हूं।' जब उनसे पूछा गया कि 'प्रत्यक्ष कार्रवाई' हिंसक होगी या अहिंसक, तो उन्होंने उत्तर दिया, 'मैं नैतिकता पर चर्चा नहीं करने जा रहा हूं।'

— — — — — — — — — — —

* 25 सितंबर 1940 को, जिन्ना को लिखे एक पत्र में, लॉर्ड लिनलिथगो ने सुझाव दिया था: 'मैं इस बात से संतुष्ट हूं कि

प्रतिनिधियों का चयन, हालांकि गवर्नर-जनरल के पास रहता है, निम्नलिखित मामलों में इस पर आधारित होगा:
मुस्लिम लीग... औपचारिक रूप से प्रस्तुत पैनल पर नहीं, बल्कि गोपनीय चर्चा के आधार पर।
पार्टी के नेता और मैं।' वेवेल को लिखे अपने पत्र में जिन्ना ने लिखा: 'कार्यकारी समिति की है'
यह राय है कि पिछली बार तय की गई प्रक्रिया का पालन वर्तमान में किया जाना चाहिए।
मुस्लिम लीग के मामले में यही स्थिति थी। जब वायसराय ने इस शर्त को मानने से इनकार कर दिया।
जिन्ना ने लिखा: 'समिति... चाहती है कि मैं यह बताऊं कि उसे यह जानकर बहुत खेद है कि आपका
महोदय इस बात का आश्वासन नहीं दे सकते कि प्रस्तावित समिति के सभी मुस्लिम सदस्य
कार्यकारी परिषद का चयन मुस्लिम लीग से किया जाएगा... और, इन परिस्थितियों में, मुझे खेद है, मैं
मैं मुस्लिम लीग की ओर से नामों को सूची में शामिल करने के लिए भेजने की स्थिति में नहीं हूं।
प्रस्तावित कार्यकारी परिषद।

8

हिंसा भड़क उठी

'शायद इस आगजनी और हिंसा के तांडव के बारे में एकमात्र बात जो निश्चित रूप से कही जा सकती है, वह यह है कि यह ग्रामीणों का स्वतःस्फूर्त विद्रोह नहीं था।'
– हिंदुस्तान स्टैंडर्ड में प्रकाशित रिपोर्ट, 6 नवंबर 1946

मुस्लिम लीग के अन्य सदस्य कहीं अधिक मुखर थे, और 'प्रत्यक्ष कार्रवाई' का एक भयावह अर्थ उभरने लगा। बंगाल के ख्वाजा नाजिमुद्दीन ने समझाया, 'मुश्किलें पैदा करने के सौ से अधिक तरीके हैं, खासकर जब हम अहिंसा तक सीमित न रहें। बंगाल की मुस्लिम आबादी अच्छी तरह जानती है कि प्रत्यक्ष कार्रवाई का क्या अर्थ होगा और हमें उन्हें कोई संकेत देने की आवश्यकता नहीं है।' जिन्ना के दाहिने हाथ नवाबजादा लियाकत अली खान ने समझाया, 'प्रत्यक्ष कार्रवाई का अर्थ है असंवैधानिक तरीकों का सहारा लेना और यह किसी भी रूप में हो सकती है, चाहे वह हमारे जीवन की परिस्थितियों के अनुकूल हो, हम किसी भी तरीके को समाप्त नहीं कर सकते, प्रत्यक्ष कार्रवाई का अर्थ है कानून के विरुद्ध कार्रवाई।' सरदार अब्दुर रब निश्तर प्रत्यक्ष कार्रवाई के लिए लीग की योजनाओं को समझाने में कहीं अधिक ईमानदार थे: 'पाकिस्तान केवल रक्तपात से ही प्राप्त किया जा सकता है और यदि अवसर मिले, तो गैर-मुसलमानों का रक्त बहाया जाना चाहिए, मुसलमान अहिंसा में विश्वास नहीं करते।'
अप्रैल 1946 में ही सर फ़िरोज़ खान नून ने मुस्लिम लीग के विधायकों के सम्मेलन को संबोधित करते हुए चेतावनी दी थी, 'हमें एक केंद्रीय सरकार के अधीन रखने पर मुसलमान जो उत्पात मचाएंगे,

वह चंगेज़ खान और हलाकु के कारनामों को भी शर्मिंदा कर देगा।' मुस्लिम लीग ने उकसावे का अभियान चलाया और कांग्रेस तथा ब्रिटिश प्रशासन दोनों मूकदर्शक बने रहे। ऐसा नहीं था कि लीग हिंसा भड़काने के लिए नियत तारीख का इंतज़ार करने वाली थी। अहमदाबाद, बंबई, इलाहाबाद, अलीगढ़, ढाका और कई अन्य स्थानों से सांप्रदायिक घटनाएं और गुंडों द्वारा सुनियोजित हमले पहले ही सामने आ चुके थे। हर जगह अल्पसंख्यक समुदायों पर चाकू से हमले और मारपीट हो रही थी। मुस्लिम लीग ने प्रस्तावित 'प्रत्यक्ष कार्रवाई' कार्यक्रम की योजना बनाने और उसे क्रियान्वित करने के लिए एक 'कार्रवाई परिषद' का गठन किया और उनके प्रेस ने यह संदेश पूरे विश्व के मुस्लिम समुदायों तक पहुंचाया। मुसलमानों को याद दिलाया गया कि रमज़ान के महीने में ही अरब में 'इस्लाम और मूर्तिपूजा के बीच पहला खुला संघर्ष' लड़ा गया था और उसमें 313 मुसलमानों ने जीत हासिल की थी। धर्मयुद्ध के लिए एक विशेष प्रार्थना वाले पर्चे में घोषणा की गई थी कि 10 करोड़ भारतीय मुसलमान, जो दुर्भाग्यवश हिंदुओं और अंग्रेजों के गुलाम बन गए थे, रमज़ान के इसी महीने में जिहाद शुरू करेंगे। एक अन्य पर्चे में तलवार लहराते जिन्ना की तस्वीर थी और उसमें लिखा था: 'हम मुसलमानों ने ताज पहना है और शासन किया है। तैयार हो जाओ और अपनी तलवारें उठा लो... ऐ काफिर... तुम्हारा अंत निकट है और आम नरसंहार होगा!'
प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस
मुस्लिम लीग द्वारा व्यापक दुष्प्रचार के बावजूद, मुसलमानों के प्रतिनिधित्व के उनके दावे की सबसे कड़ी परीक्षा प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस कार्यक्रम के दौरान हुई। यह जल्द ही स्पष्ट हो गया कि प्रत्यक्ष कार्रवाई केवल मुस्लिम लीग के नियंत्रण वाले

राज्यों में ही सफल होगी, जो अधिकतर वे प्रांत थे जिन पर वह अपना इस्लामी मातृभूमि होने का दावा करती थी: पश्चिम में मुस्लिम बहुल पश्चिमी पंजाब के कुछ हिस्से और पूर्व में मुस्लिम लीग शासित बंगाल।
बंगाल में शहीद सुहरावर्दी के नेतृत्व में मुस्लिम लीग की सरकार थी। मुस्लिम लीग द्वारा कैबिनेट मिशन की योजना को अस्वीकार किए जाने के बाद, सुहरावर्दी ने घोषणा की थी कि यदि केंद्र में कांग्रेस सत्ता में आई, तो बंगाल विद्रोह का झंडा उठाएगा और स्वतंत्रता की घोषणा करेगा।
मुख्यमंत्री के रूप में सुहरावर्दी के अधीन कानून व्यवस्था, पुलिस विभाग सहित, पूरी तरह से संचालित थी। उन्होंने व्यवस्थित रूप से हिंदू पुलिसकर्मियों का तबादला करना शुरू किया और उनकी जगह मुस्लिम पुलिसकर्मियों की नियुक्ति की। 16 अगस्त 1946, यानी प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस तक, कलकत्ता के चौबीस पुलिस थानों में से बाईस में मुस्लिम अधिकारी प्रभारी थे और बाकी दो में एंग्लो-इंडियन अधिकारी कार्यरत थे।
प्रांतीय सरकार ने विपक्ष की चेतावनी और विरोध को अनसुना करते हुए 16 अगस्त को सार्वजनिक अवकाश घोषित कर दिया। मुसलमानों को सुनियोजित तरीके से हथियारबंद किया गया; लाठियां, भाले, कुल्हाड़ियां, कटारें, तलवारें, डंडे, देसी बम और बंदूकें पहले से ही इकट्ठा करके बांट दी गईं। लीग के स्वयंसेवकों के लिए परिवहन की व्यवस्था की गई, जिसका इस्तेमाल बाद में असामाजिक तत्वों को लाने-ले जाने के लिए किया गया। हालांकि ईंधन की सख्त राशनिंग की गई थी, फिर भी लीग सरकार के मंत्रियों और स्वयं मुख्यमंत्री को बड़ी मात्रा में ईंधन उपलब्ध कराया गया।

पाकिस्तान के लिए लड़ते हुए घायल होने की आशंका वाले लोगों के लिए प्राथमिक चिकित्सा शिविर स्थापित किए गए।
'प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस' के लिए आयोजित कार्यक्रमों में से एक कलकत्ता मैदान में मुसलमानों की एक विशाल रैली थी। मुसलमानों को विभिन्न इलाकों से होते हुए यहाँ इकट्ठा होने के लिए कहा गया था। अपने नेताओं के भाषण सुनने के बाद वे तितर-बितर हो जाते। मैदान की ओर जाने वाली अधिकांश सड़कों पर प्राथमिक चिकित्सा केंद्र स्थापित किए गए थे। मुस्लिम लीग के विधायक हथियार बाँटने और पेशेवर अपराधियों के गिरोह बनाने में सक्रिय रूप से लगे हुए थे, ताकि 'प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस' कार्यक्रम का अधिकतम प्रभाव हो सके। विधानसभा में मुस्लिम लीग के सदस्य शरीफ खान ने व्यक्तिगत रूप से अपने इलाके में अपराधियों के गिरोह संगठित किए और उन्हें हथियारबंद किया। शरीफ एक कुख्यात गैंगस्टर था और सुहरावर्दी का खास आदमी माना जाता था। कलकत्ता के मुस्लिम लीग के मेयर और सचिव मोहम्मद उस्मान, शरीफ खान के साथ हावड़ा के मुस्लिम इलाकों में गए और स्थानीय मुस्लिम गैंगस्टरों और मुस्लिम लीग के कार्यकर्ताओं को हिंसा के लिए उकसाया।
15 अगस्त 1946 की आधी रात से ही कलकत्ता खौफ और नफरत के कोहरे में डूब गया था। मुसलमानों के गिरोहों ने कलकत्ता की सड़कों और गलियों पर कब्जा कर लिया था और रात भर नफरत के उन्मादी नारों से गूंजती रही। मुस्लिम गढ़ों के बीच बसे गैर-मुस्लिम अल्पसंख्यकों के इलाकों में 'अल्लाह-ओ-अकबर' और 'लड़के पाकिस्तान' के नारे गूंजते रहे। भारत में सुनियोजित सांप्रदायिक संघर्षों में आज तक जो एक विशेषता समान है, वह कलकत्ता में प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस पर भी स्पष्ट थी—कानून

और व्यवस्था का पूर्ण अभाव। अपराधी सड़कों पर राज कर रहे थे और मदद की गुहार और बचाव के लिए चीखें अनसुनी की जा रही थीं।
शहीद सुहरावर्दी ने केंद्रीय पुलिस नियंत्रण कक्ष में अपना दबदबा कायम कर लिया, जहाँ से कानून-व्यवस्था संबंधी सभी रिपोर्टें प्राप्त होती थीं। उन्होंने अभियानों की कमान संभाली और कानून-व्यवस्था तंत्र का उपयोग करते हुए लुटेरों की गतिविधियों को निर्देशित करते हुए पुलिस को नियंत्रण में रखा। 16 तारीख की शाम को, इंस्पेक्टर वेड ने लूटे हुए सामान से लदे एक ट्रक के साथ आठ मुसलमानों को रंगे हाथों पकड़ा; उन्होंने उन्हें गिरफ्तार कर पुलिस स्टेशन भेज दिया। सुहरावर्दी लुटेरों से पहले ही पुलिस स्टेशन पहुँच गए और अपनी 'व्यक्तिगत जिम्मेदारी' पर उनकी रिहाई का आदेश दिया। अंततः उनके खिलाफ राज्यपाल के समक्ष शिकायत दर्ज कराई गई और मुख्यमंत्री से नियंत्रण कक्ष से दूर रहने का 'अनुरोध' किया गया। 16 अगस्त 1946 को भड़की आग 16, 17 और 18 अगस्त 1946 के कलकत्ता हत्याकांड में भी जारी रही। 16 तारीख की दोपहर तक, मुस्लिम गुंडों के बड़े- बड़े जुलूस हथियारों से लैस होकर सड़कों पर उतर आए और लीग द्वारा आयोजित जनसभा के लिए कलकत्ता मैदान की ओर मार्च करने लगे। एक यूरोपीय पुलिस अधिकारी ने एक जुलूस को निहत्था कर दिया, जिसमें से दो ट्रक भर हथियार बरामद हुए। लेकिन मुख्यमंत्री द्वारा अभी तक बैरक में वापस न बुलाई गई पुलिस बल ने जैसे ही भीड़ से हथियार जब्त किए, लीग के मंत्रियों ने उन्हें अपने कब्जे में ले लिया और गिरोहों में बांट दिया।
रैली से लौटते समय उग्र भीड़ ने हिंदुओं की दुकानों और व्यापारिक प्रतिष्ठानों पर हमला किया और कारों, बसों और ट्रामों को जला दिया। पैदल चलने वालों को चाकू मारा गया और रैली

के कुछ ही घंटों के भीतर कलकत्ता की सड़कों पर लीग के सुरक्षाकर्मियों का कब्जा हो गया। अब आतंक का दूसरा चरण शुरू हो गया। लीग और पाकिस्तान समर्थक नारे लगाते हुए सशस्त्र भीड़ ने हिंदू और गैर-मुस्लिम आबादी वाले इलाकों पर हमला करना, लूटपाट करना और उन्हें तहस-नहस करना शुरू कर दिया। हिंसा, हत्या, बलात्कार, आगजनी और लूटपाट का बेलगाम सिलसिला जारी रहा, जबकि पुलिस निष्क्रिय रूप से देखती रही, या कुछ मामलों में, हमलावरों की सक्रिय रूप से सहायता करती रही।
मुस्लिम हमलों के दो दिनों के बाद, हिंदू प्रतिशोध भड़क उठा और इसके परिणाम विनाशकारी रहे। हिंदुओं ने भी खुद को हथियारबंद कर लिया था और अपने 'रक्षकों' के समूह संगठित कर लिए थे; ये आरएसएस और हिंदू महासभा के उग्र कार्यकर्ता थे, जिनमें से कुछ स्थानीय थे और कई अन्य राज्यों से लाए गए थे।
जब हिंदू भीड़ सड़कों पर उतरी, तो उन्होंने मुस्लिम बस्तियों के छोटे-छोटे इलाकों को निशाना बनाया और उन पर बेरहमी से हमला किया। सदियों से अपने हिंदू और सिख पड़ोसियों के साथ शांति से रहने वाले निर्दोष मुसलमान, अन्यत्र अपने कट्टरपंथी सहधर्मियों के कृत्यों की कीमत चुका रहे थे।
जल्द ही कलकत्ता एक कसाईखाने जैसा दिखने लगा: सड़ते हुए शवों की दुर्गंध सड़कों पर फैल गई, जलते घरों में मानव मांस भुन रहा था और सड़कों पर खून के पोखर फैले हुए थे। बलात्कार और बलात्कार से ग्रसित महिलाओं और युवतियों के शव चारों ओर बिखरे पड़े थे। बच्चों के शव और कटे हुए शरीर के अंग मैनहोल में ठूंस दिए गए थे, जिससे सीवेज पाइप जाम हो गए; गंदा पानी सड़कों पर बहने लगा और भयावह स्थिति को और भी बदतर बना दिया।

दोनों समुदायों के हत्यारों द्वारा अपनाई जाने वाली सबसे आम और कारगर हमला करने की विधि यह थी कि वे अलग-थलग पड़े घरों या लोगों के छोटे-छोटे समूहों को घेर लेते थे और भागने के सभी रास्ते बंद कर देते थे। फिर सुनियोजित तरीके से लूटपाट, हत्या और अपहरण शुरू हो जाते थे। सबसे पहले पुरुषों को निशाना बनाया जाता था और उनके परिवारों के सामने उनकी हत्या कर दी जाती थी। इसके बाद भीड़ काम की चीजें ले जाती थी और घरों में आग लगा देती थी।
उस दौर की प्रेस रिपोर्टों से प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस और उसके बाद के भयावह हालातों का पता चलता है। स्टेट्समैन अखबार के किम क्रिस्टन ने लिखा: 'युद्ध अस्पताल में रहने के अनुभव से मेरा दिल मजबूत हो गया है, लेकिन युद्ध कभी ऐसा नहीं था।' उसी अखबार के एक संपादकीय में लिखा था: 'यह कोई दंगा नहीं था... इसके लिए मध्यकालीन इतिहास में मिलने वाले शब्द 'क्रोध' की आवश्यकता है। फिर भी 'क्रोध' शब्द सहज लगता है और इस क्रोध को अंजाम देने के लिए कुछ सोची-समझी योजना और संगठन जरूर रहा होगा। आठ फुट लंबी लाठियों से मार-पीट करने वाले गिरोहों ने शायद उन्हें इधर-उधर पड़ी लाठियां मिली हों या उन्होंने उन्हें अपनी जेब से निकाला हो, लेकिन इस पर विश्वास करना मुश्किल है। हम पहले ही उन गिरोहों के बारे में बात कर चुके हैं जिन्हें पेट्रोल और वाहन आसानी से मिल जाते थे जब सड़कों पर किसी और को जाने की अनुमति नहीं थी। यह केवल अनुमान नहीं है कि कलकत्ता में प्रभाव डालने में मदद के लिए लोगों को बाहर से लाया गया था।'
उसी अंक में, 'घोर कलंक' शीर्षक वाले एक लेख में, अखबार ने टिप्पणी की: 'एक महान प्रांत की राजधानी में हुए भयावह नरसंहार और नुकसान का मूल कारण - जिसे हम भारत के इतिहास का सबसे भीषण सांप्रदायिक दंगा मानते हैं - मुस्लिम लीग का एक राजनीतिक

प्रदर्शन था... पीछे मुड़कर देखने पर, दंगे से पहले उसका आचरण न केवल राजनीतिक विरोधियों द्वारा, बल्कि अन्य लोगों द्वारा भी, इस निष्कर्ष के लिए खुला है कि वह इस बात को लेकर दुविधा में थी कि किसी प्रकार का दंगा करना अच्छा होगा या बुरा... इस देश के सबसे बड़े शहर की जो रक्तपातपूर्ण स्थिति हुई है, वह एक घोर कलंक है, जिसने बंगाल सरकार के लीग सरकार होने के कारण, अनिवार्य रूप से लीग की अखिल भारतीय प्रतिष्ठा को गंभीर रूप से धूमिल कर दिया है।'
जिसे 'महान कलकत्ता हत्याकांड' के नाम से जाना जाता है, उसमें पांच हजार से अधिक लोगों की जान चली गई; पंद्रह हजार से अधिक लोग घायल हुए और लाखों लोग बेघर हो गए।
मुस्लिम लीग ने कांग्रेस और ब्रिटिश प्रशासन को दबाने की उम्मीद से प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस का आयोजन किया था और इसमें वे सफल भी हुए। उन्हें हिंदू विद्रोह की भयावह प्रतिक्रिया का अनुमान नहीं था, लेकिन उन्होंने इसका लाभ उठाया। कलकत्ता में हुए नरसंहार पर टिप्पणी करते हुए, जिन्ना ने बेपरवाही से इसे मुस्लिम लीग और बंगाल की लीग सरकार को बदनाम करने की हिंदू साजिश बताया। उन्होंने कहा कि इस हिंसा ने यह प्रदर्शित कर दिया है कि भारत में मुसलमानों के लिए स्थिति कितनी खतरनाक है और उनके लिए अपना देश प्राप्त करना कितना आवश्यक है। उन्होंने कलकत्ता त्रासदी के लिए कांग्रेस, कैबिनेट मिशन और गांधी को जिम्मेदार ठहराया।
गांधी जी को कलकत्ता नरसंहार के बारे में तब पता चला जब वे सेवाग्राम आश्रम में थे। 24 अगस्त की शाम की प्रार्थना में उन्होंने आश्रमवासियों से कहा कि वे इस भीषण आग के सामने अपने कर्तव्यों पर विचार करें जो पूरे देश को अपनी चपेट में ले चुकी

है। उन्होंने कहा, 'आइए हम विनम्र होकर स्वीकार करें कि आज हमारे पास लोगों की सभी अपेक्षाओं को पूरा करने की शक्ति नहीं है।' यदि वे उन सिद्धांतों को पूरी तरह से समझते जिनके लिए आश्रम बना है, तो वे आग में कूद पड़ते और ऐसा पवित्र बलिदान देते जिससे शायद आग बुझ जाती। पवित्र बलिदान का अर्थ 'आग में पतंगे की तरह बिना सोचे-समझे नष्ट हो जाना' नहीं है। प्रभावी बलिदान तभी होना चाहिए जब वह स्वेच्छा से और विश्वास और आशा के साथ किया जाए, हृदय में किसी भी प्रकार की दुर्भावना या घृणा के बिना... ऐसा बलिदान असंभव नहीं है।'
कलकत्ता नरसंहार में उन्होंने उन चुनौतियों को समझा जो स्वतंत्रता भारत की जनता के सामने लाएगी। हरिजन में संपादकीय लेखों की एक श्रृंखला में उन्होंने लिखा, 'हम अभी गृहयुद्ध के बीच में नहीं हैं, लेकिन हम इसके करीब पहुँच रहे हैं। फिलहाल हम इसका खेल खेल रहे हैं... अगर अंग्रेज समझदार हैं, तो वे इससे दूर रहेंगे। हालात इसके विपरीत हैं।' जनता के लिए ब्रिटिश शांति और स्वतंत्रता के बीच अंतिम चुनाव करने का समय आ गया था। उन्होंने भविष्यवाणी की कि ब्रिटिश अधिकारी, सत्ता छोड़ने का फैसला करने के बाद, और भी अधिक कमजोरी दिखाएंगे। 'दोनों पक्ष पाएंगे कि यह... एक टूटा हुआ तार है।' उन्होंने चेतावनी दी कि अगर यह भाईचारा पूरे भारत में फैल गया और ब्रिटिश बारूद ने ही दोनों को एक-दूसरे को मारने से रोका, तो अपरिहार्य परिणाम यह होगा कि: 'ब्रिटिश सत्ता या उसका विकल्प लंबे समय तक भारत पर काबिज रहेगा। इसकी अवधि इस बात पर निर्भर करेगी कि दोनों पक्षों को समझदारी आने में कितना समय लगता है।' यह या तो विदेशी तत्वों से स्वतंत्र, एक थका देने वाले आपसी संघर्ष के बाद होगा, या फिर किसी एक पक्ष द्वारा सबसे प्रतिकूल परिस्थितियों के बावजूद

कलकत्ता में अशांति बनी रही और अगस्त, सितंबर और अक्टूबर के महीनों में हिंसा का सिलसिला जारी रहा। मुस्लिम लीग इन घटनाओं से खुश थी। जब हिंदू पीड़ितों की दुर्दशा उजागर हुई, तो उन्होंने इसे लीग को बदनाम करने की साजिश बताया, और जब हिंदुओं ने पलटवार किया, तो उन्होंने इसका इस्तेमाल पाकिस्तान की अपनी मांग को मजबूत करने के लिए किया। इसी बीच, आरएसएस और हिंदू महासभा ने हिंदुओं पर हुए हमलों का फायदा उठाकर हिंदू समुदाय पर अपनी पकड़ मजबूत कर ली। उन्होंने खुद को हिंदू रक्षक बताया और नए कार्यकर्ताओं की भर्ती की। उन्होंने निर्दोष मुसलमानों की हत्या करने के लिए उन्हें उकसाया और बचे हुए लोगों को डराया- धमकाया।
2 सितंबर को, गांधी जी के आशीर्वाद से कांग्रेस मंत्रियों ने पद की शपथ ली। गांधी जी दिल्ली लौट आए थे और हरिजन कॉलोनी के एक मकान में अपने शिविर में ठहरे हुए थे। सुबह तड़के उन्होंने नई सरकार के सदस्यों के लिए एक संक्षिप्त संदेश लिखा, जिसमें उन्हें याद दिलाया गया कि कांग्रेस के हाशिए पर रहने के दौरान किए गए वादों को पूरा करना न भूलें। उनका यह संदेश संक्षिप्त था और इसमें यह वाक्य शामिल था: 'प्रार्थना के बाद से आप मेरे विचारों में हैं। नमक कर समाप्त करो। दांडी मार्च को याद रखो। हिंदू और मुसलमान एकजुट हों। छुआछीटी दूर करो। खादी अपनाओ।' संध्या प्रार्थना के बाद सभा को संबोधित करते हुए गांधीजी ने इस दिन के महत्व और इससे जुड़ी जिम्मेदारियों के बारे में विस्तार से बताया। उन्होंने कहा कि भारत को इस दिन का लंबे समय से इंतजार था और इसे देश के इतिहास का एक ऐतिहासिक दिन बताया। उन्होंने ब्रिटिश सरकार को एक पुराने मुद्दे को शांतिपूर्ण तरीके से सुलझाने के लिए बधाई दी।

उत्पीड़न का सामना करना पड़ा, वह भारत के विभाजन के मुद्दे पर उनके अंतिम आत्मसमर्पण का एक कारण था।
अंतरिम सरकार के शपथ ग्रहण के बाद, मुस्लिम लीग के प्रति वेवेल का झुकाव स्पष्ट रूप से सामने आ गया; वह जिन्ना को अंतरिम सरकार में शामिल होने के लिए लगातार मनाते रहे और उनकी मांगों को मानते रहे। अंततः, गांधी ने यह राय व्यक्त की कि अब समय आ गया है कि वायसराय को किसी अधिक सक्षम संवैधानिक विशेषज्ञ से सलाह लेनी चाहिए। यह सौम्य शब्दों में दी गई सलाह एक स्पष्ट संकेत था कि सैनिक-राजनयिक संवैधानिक कानूनी पहलुओं से अवगत नहीं थे। लंबी बातचीत और कई रियायतों के बाद, मुस्लिम लीग अंततः सरकार का हिस्सा बनने के लिए सहमत हो गई।
इसी बीच, देश के अन्य हिस्सों में घटनाएँ तेज़ी से घट रही थीं। प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस का भूत फिर से देश को सताने लगा था। जैसे ही मुस्लिम लीग अंतरिम सरकार में शामिल हुई, बंगाल के दलदली ज़िले नोआखली में मचाई गई भयावह घटनाओं की पहली रिपोर्टें आने लगीं। रिपोर्टें कई दिनों की देरी से आईं, लेकिन जब उन्हें सार्वजनिक किया गया तो उन्होंने पूरे देश को दहला दिया। मुस्लिम लीग ने मुस्लिम बहुल क्षेत्रों में सुनियोजित रूप से एक क्रूर अभियान चलाया था: हिंदुओं को शत्रु के रूप में चित्रित किया गया और मुस्लिम आबादी को बलपूर्वक पाकिस्तान प्राप्त करने के लिए तैयार रहने को उकसाया गया। कई भड़काऊ पर्चे और 'पाकिस्तानीकृत' भारत का नक्शा व्यापक रूप से प्रसारित किया गया। भारत का नाम बदलकर 'दिनिया', यानी विश्वासियों की भूमि रख दिया गया और उसे आधा दर्जन 'स्तान' में विभाजित कर दिया गया - फारूकिस्तान, उस्मानिस्तान, बंगिस्तान, इत्यादि। पाकिस्तान को पश्चिम, पूर्व और दक्षिण में फैला हुआ दिखाया

गया। हिंदुस्तान को उत्तर प्रदेश में एक छोटे से हिस्से के रूप में दिखाया गया और शेष भूमि को पाकिस्तान की विभिन्न इकाइयों को जोड़ने वाले गलियारों के रूप में दर्शाया गया। भारत के चारों ओर के समुद्रों को भी 'पाकिस्तानी' बना दिया गया था। मनगढ़ंत सिद्धांतों और कहानियों के माध्यम से पाकिस्तान के अस्तित्व को अटलांटिस की किंवदंती से जोड़ दिया गया। मुस्लिम नेशनल गार्ड्स का पुनर्गठन किया गया और उन्हें हथियार दिए गए तथा कलकत्ता का बदला लेने की सैन्य तैयारियां ज़ोरों पर थीं। पूर्वी बंगाल में अराजकता और अव्यवस्था की खबरें अखबारों में चिंताजनक नियमितता से छपती रहीं। 12 सितंबर को स्टेट्समैन में प्रकाशित एक पत्र, जिसे कथित तौर पर एक मुस्लिम ने लिखा था, में कहा गया था: 'जब मैं 14 अगस्त [प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस से दो दिन पहले] यात्रा कर रहा था, तो मैंने कुछ मुसलमानों को रेलवे स्टेशनों पर खुलेआम लंबी छुरियाँ बेचते देखा। कलकत्ता की घटनाओं के बाद जब मैं 26 अगस्त को फिर से ट्रेन से यात्रा कर रहा था, तो एक मुस्लिम सज्जन मेरे द्वितीय श्रेणी के बगल वाले प्रथम श्रेणी के डिब्बे में बैठे थे। हर पड़ाव पर उन्होंने मुसलमानों को गैर-लीग के मुसलमानों और हिंदुओं, दोनों को "मिर्जाफरी" [देशद्रोही] का कत्लेआम करने के लिए उकसाया और इशारों से अपनी सलाह को दर्शाया। वह कट्टरपंथी एक उच्च पदस्थ लीग सदस्य था।' पूर्वी बंगाल के कोमिला से विधान परिषद के सदस्य कामिनी कुमार दत्ता ने 19 सितंबर 1946 को अमृत बाजार पत्रिका में एक प्रेस विज्ञप्ति जारी की, जिसमें उन्होंने लिखा: 'पूर्वी बंगाल में व्यवस्था और अराजकता के बीच की बेहद कम खाई ने हमें और अल्पसंख्यक समुदाय को चिंतित कर दिया है। मुस्लिम लीग के प्रचारक कलकत्ता में हिंदुओं द्वारा मुसलमानों पर किए गए कथित

क्रूर अत्याचारों की अतिरंजित कहानियां फैला रहे हैं और यह दुष्प्रचार कानून-व्यवस्था बनाए रखने के लिए स्थिति को खतरनाक बना रहा है। हमारी जानकारी के अनुसार, एक उच्च पदस्थ मुस्लिम अधिकारी को यह कहते हुए सुना गया कि देखते ही देखते हजारों शव पूरे देश में बिखरे पड़े होंगे। पूर्वी बंगाल के किसी भी हिस्से में बड़े पैमाने पर हिंसा भड़कने पर आग पूरे देश में फैल जाएगी।' 30 सितंबर को स्टेट्समैन में प्रकाशित एक अन्य रिपोर्ट में कहा गया: 'पूर्वी बंगाल में जान-माल की सुरक्षा खतरे में है। बदमाश रेलवे लाइनों पर सक्रिय हैं, अपनी मर्जी से ट्रेनों को रोकते हैं, लूटपाट करते हैं और अगले स्टेशन तक खबर पहुंचने से पहले ही नावों या बैलगाड़ियों से माल लेकर भाग जाते हैं।' बंगाल के प्रधानमंत्री शहीद सुहरावर्दी ने स्वीकार किया कि उनकी सरकार पूर्वी बंगाल की स्थिति से अवगत थी। उन्होंने कहा, 'हां, मैंने पूर्वी बंगाल में इस दुर्भाग्यपूर्ण सांप्रदायिक तनाव की खबरें देखी हैं। हम सभी को इसकी निंदा करनी चाहिए।' लेकिन सरकार ने कुछ नहीं किया।
प्यारेलाल ने महात्मा गांधी: द लास्ट फेज पार्ट आई, वॉल्यूम 13 में लिखा: 'सांप्रदायिकता के फ्रेंकस्टीन ने अपने बंधन तोड़ दिए थे, लेकिन उसके रखवाले की चिंता यह नहीं थी कि वह भाग निकला था, बल्कि यह थी कि उसका पहला प्रदर्शन संतोषजनक नहीं था।' गांधी जी का अनुमान सही साबित हुआ। हिंसा की आग भड़क उठी थी। अब समय ही बताएगा कि इसे काबू में लाने से पहले यह देश के कितने हिस्से को अपनी चपेट में ले लेगी।
NOAKHALI BURNS
नोआखली गंगा डेल्टा के सबसे दूरस्थ और दुर्गम क्षेत्रों में से एक में स्थित था; यह पूर्वी बंगाल (अब बांग्लादेश) के चटगांव

डिवीजन के दक्षिण-पश्चिमी भाग में पड़ता था। यह खाल नामक नहरों के एक जटिल जाल से घिरा हुआ था। ये जलमार्ग ही परिवहन का एकमात्र साधन थे; भूमि परिवहन मुख्य रूप से संकरे पैदल रास्तों और खालों पर बने बांस के छोटे, जर्जर पुलों (शंको) के माध्यम से होता था। इस क्षेत्र में भारी वर्षा होती थी और अधिकारियों तक संदेश पहुंचने में लंबा समय लगता था। नारियल और सुपारी के पेड़ों की बहुतायत के कारण मिट्टी उपजाऊ थी, जो एक ऐसी छतरी बनाती थी जिससे सूर्य का प्रकाश मुश्किल से ही प्रवेश कर पाता था। केला, पपीता, लीची, अनानास, खट्टे फल और आम बहुतायत में उगते थे। जल निकायों में मछलियाँ बहुतायत में पाई जाती थीं। लेकिन इस मनमोहक दृश्य के पीछे खतरा छिपा था। बस्तियाँ दूर-दूर तक फैली हुई थीं और घने जंगलों, ऊंचे जूट के खेतों और अनगिनत जल नहरों द्वारा एक-दूसरे से अलग-थलग थीं।
पूर्वी बंगाल में भी आर्थिक असमानताएँ थीं, जिनके कारण असंतोष उत्पन्न हुआ। मुस्लिम बहुसंख्यक आबादी में मुख्य रूप से गरीब कारीगर और निर्धन किसान शामिल थे, जबकि हिंदू अल्पसंख्यक आबादी में शिक्षित मध्यम वर्ग, धनी व्यापारी और जमींदार थे। इस प्रकार, पहले से ही बिगड़ी हुई धार्मिक स्थिति में एक आर्थिक पहलू भी जुड़ गया, जिसके कारण उस समय तक के सबसे क्रूर, सुनियोजित और योजनाबद्ध सांप्रदायिक नरसंहारों में से एक हुआ। यह घटना 10 अक्टूबर 1946 को शुरू हुई। लेकिन लगभग एक सप्ताह तक नोआखली में हुई इस आपदा की कोई खबर नहीं आई। पूर्वी बंगाल में अशांति की पहली रिपोर्ट 14 अक्टूबर को बंगाल प्रेस सलाहकार समिति द्वारा प्रेस को जारी की गई: 'नोआखली जिले में संगठित गुंडागर्दी की खबरें कलकत्ता पहुंच गई हैं। घातक हथियारों से लैस दंगाई भीड़ गांवों पर हमला कर रही है, और 10 अक्टूबर से बड़े

पैमाने पर लूटपाट, आगजनी और हत्याएं जारी हैं। जबरन धर्म परिवर्तन, महिलाओं का अपहरण और पूजा स्थलों का अपमान भी हो रहा है। अब तक प्रभावित क्षेत्र सदर और फेनी उपमंडलों के 200 वर्ग मील से अधिक बताए जा रहे हैं। प्रभावित क्षेत्रों के रास्तों पर सशस्त्र गुंडों का पहरा है।'
'जिन लोगों की हत्या या जिंदा जलाए जाने की खबरें हैं, उनमें जिला बार एसोसिएशन के अध्यक्ष अपने परिवार सहित और जिले के एक प्रमुख जमींदार भी शामिल हैं। कलकत्ता स्थित आधिकारिक सूत्रों से पूछताछ करने पर पता चला कि प्रभावित क्षेत्रों में सेना और सशस्त्र पुलिस को भेजा गया है। इन क्षेत्रों में पूरा रामगंज, बेगमगंज, लक्ष्मीपुर, रायपुर, सेनबाग, फेनी, चागलनाइया और संद्वीप थाने शामिल हैं।'
एक अन्य संदेश में बताया गया कि प्रभावित क्षेत्रों में आने- जाने वाले सभी लोगों की निगरानी 'घातक हथियारों से लैस गुंडों' द्वारा की जा रही है। टेलीग्राम में 'इस भयानक नरसंहार, आगजनी और लूट के पीछे सुनियोजित संगठन' का भी जिक्र था। अपने और अपने दल द्वारा किए गए इस सुनियोजित संकट पर चिंता जताने के बाद, सुहरावर्दी ने प्रभावित क्षेत्रों का दौरा करने में असमर्थता जताई क्योंकि उन्हें दार्जिलिंग जाना था, जहां राज्यपाल मंत्रिमंडल की बैठक कर रहे थे। 18 अक्टूबर को 'द स्टेट्समैन' ने टिप्पणी की, 'यह अजीब लगता है कि प्रांत के उस हिस्से में, जो इस तरह की आपदाओं से कुख्यात रूप से ग्रस्त है, हफ्तों से प्रशासनिक व्यवस्था ठप होने के सबूतों के बावजूद, अभी तक राज्यपाल या मुख्यमंत्री आपदा स्थल पर नहीं पहुंचे हैं। एक तो दार्जिलिंग में हैं, दूसरे उनसे मिलने वहां गए हैं।'

दस दिनों के भीतर ही अशांति उत्तरी भागों और पड़ोसी जिले तिप्पराह तक फैल गई। स्टेट्समैन के एक रिपोर्टर ने बताया कि तेरह दिनों तक नोआखली जिले के रामगंज, लक्ष्मीपुर, बेगमगंज और सेनबाग थानों के लगभग 120 गाँव, जिनकी आबादी 90,000 हिंदू थी, और तिप्पराह जिले के चांदपुर और फ्राइडगंज थानों के लगभग 70 गाँव, जिनकी आबादी लगभग 40,000 हिंदू थी, गुंडों के घेरे में रहे। पुलिस महानिरीक्षक टेलर ने बताया कि गुंडे "बंदूकों और अन्य कई प्रकार के हथियारों से लैस थे और वे अब भी पुलिस और सेना का सामना करने से नहीं डरते थे।" भीड़ के आगे बढ़ने पर उन्होंने "तालिका के तार काट दिए, पुल तोड़ दिए, नहरों पर बांध बना दिए और सड़कों को क्षतिग्रस्त कर उन पर अवरोध लगा दिए, जिससे प्रभावित इलाकों में आना-जाना असंभव हो गया।"
कांग्रेस के नव निर्वाचित अध्यक्ष आचार्य कृपलानी, शरत चंद्र बोस और अन्य कांग्रेस नेताओं के साथ 19 अक्टूबर को प्रभावित क्षेत्रों के ऊपर से हवाई यात्रा पर निकले। विमान लगभग पेड़ों की ऊँचाई पर उड़ा ताकि नेताओं को ज़मीनी हालात का स्पष्ट नज़ारा मिल सके। उन्होंने एक भीड़ को पुल तोड़ते हुए देखा, जबकि लोगों के समूह रणनीतिक स्थानों पर जमा हुए थे। मुख्यमंत्री, जो वापसी में उनके साथ विमान से गए, अपने लोगों की दुर्दशा से अप्रभावित दिखे; वे जलते हुए गाँवों की तस्वीरें लेने में व्यस्त थे।
पूर्वी बंगाल के सुदूर जिलों में घट रही घटनाओं की तस्वीर विभिन्न आधिकारिक, अनौपचारिक और प्रेस स्रोतों से मिल रही रिपोर्टों से जल्द ही सामने आने लगी। नई दिल्ली स्थित सैन्य खुफिया शाखा को सूचना मिली कि बंगाल विधान परिषद के पूर्व सदस्य मियां गुलाम सरवर दंगा करने वाली भीड़ का सरगना था। उसने

सुनियोजित तरीके से नफरत का प्रचार किया था; हिंसक भीड़ को हथियार और आर्थिक प्रलोभन मुहैया कराए थे, और नोआखली और टिप्पेरा जिलों में हिंदुओं के खिलाफ अभियान का नेतृत्व कर रहा था। अधिकारियों ने दावा किया कि उसकी गिरफ्तारी का वारंट जारी किया गया था, लेकिन वह भूमिगत हो गया था, जबकि स्थानीय प्रत्यक्षदर्शियों का दावा था कि सरवर अभी भी नरसंहार अभियान का सक्रिय रूप से नेतृत्व कर रहा था।
कुछ ग्रामीण किसी तरह बच निकलने में कामयाब रहे, या तो पैसे देकर या अपने पड़ोसियों की मदद से। प्रभावित जिलों से आए ये शरणार्थी कलकत्ता और पश्चिमी बंगाल व बिहार के अन्य सुरक्षित स्थानों पर पहुँचने लगे, और तबाही की भयावह कहानियाँ सुनाने लगे। देश अचानक नोआखली की स्थिति से जाग उठा। अब हिंदू कट्टरपंथी मैदान में उतर आए: आरएसएस और हिंदू महासभा की हर शाखा में प्रतिशोध की चीखें सुनाई देने लगीं। प्रतिशोध की भावना से ग्रस्त ये लोग नोआखली में अपने सहधर्मियों की मदद के लिए नहीं जा रहे थे, बल्कि बिहार और कलकत्ता की ओर बढ़ रहे थे ताकि वहाँ की भोली-भाली मुस्लिम आबादी पर बदला ले सकें। लेकिन यह सब अभी भविष्य में होना था।
नोआखली में जो कुछ हुआ, उसे बचे हुए लोगों के कुछ बयानों से समझा जा सकता है। रामगंज पुलिस स्टेशन के अंतर्गत नोआखली के एक गाँव के एक प्रतिष्ठित परिवार की इकलौती सदस्य, एक युवती ने उस घटना का वर्णन किया जिसमें उसके पूरे परिवार का कत्ल कर दिया गया था। उसने बताया कि 11 अक्टूबर की सुबह, गाँव के कुछ लोग उनके घर आए और धमकी दी कि अगर घरवाले स्थानीय मुस्लिम लीग के कोष में 500 रुपये नहीं देंगे, तो उनकी हत्या कर दी जाएगी, उनकी संपत्ति लूट ली जाएगी और उनके घर जला दिए जाएँगे। तुरंत ही पैसे दे दिए गए।

कुछ ही देर बाद, एक विशाल और हिंसक भीड़ ने घर को घेर लिया। परिवार के एक सदस्य ने भीड़ को शांत करने की कोशिश की, लेकिन इससे पहले कि वह कुछ कह पाता, एक नेता ने भारी घुमावदार लंबे चाकू से उसका सिर काट दिया। फिर उन्होंने घर के सबसे बुजुर्ग व्यक्ति पर हमला किया। उसे मारने के बाद, उन्होंने उसके दूसरे बेटे को पकड़ लिया और उसे उसके पिता के शव पर रख दिया। उसकी व्याकुल माँ अपने बेटे पर गिर पड़ी और भीड़ से उसे बख्शने की गुहार लगाई। उन आदमियों ने महिला को तब तक पीटा जब तक वह बेहोश नहीं हो गई और फिर उसके बेटे पर हमला कर दिया। लड़की अपने पिता की जान बचाने की उम्मीद में 400 रुपये नकद और सोने के गहने लेकर बाहर भागी। सरदार ने लड़की से पैसे और गहने छीन लिए और उसके पिता का सिर काट दिया।
25 अक्टूबर को प्रकाशित स्टेट्समैन के एक संपादकीय में टिप्पणी की गई: "आगज़नी, लूटपाट, हत्या, महिलाओं का अपहरण, जबरन धर्म परिवर्तन और जबरन विवाह, हर जगह और हर जांचकर्ता द्वारा अराजकता की विशेषताओं के रूप में वर्णित किए गए हैं। अगस्त में कलकत्ता की त्रासदी के बाद, विशेष रूप से मानचित्र के उस हिस्से में जहां अब एक बार फिर त्रासदी हुई है, कड़ी सावधानी बरतने के पर्याप्त कारण थे। उपद्रवियों की गिरफ्तारियां बहुत कम हुई हैं। कहीं न कहीं ऊर्जा की घोर कमी रही है।" संचार व्यवस्था के पूरी तरह से ठप होने को कानून-व्यवस्था बहाल करने में देरी का एक प्रमुख कारण बताते हुए, रिपोर्ट में आगे कहा गया: "यह जनता की सोच के लिए पर्याप्त स्पष्टीकरण नहीं है। यह एक बुरा देश है, लेकिन गुंडे इधर-उधर घूमते रहते हैं और पुलिस को सूचना के रूप में आम जनता से मदद मिलती है, वे युद्ध के समय जापानी कब्जे वाले देश में काम नहीं कर रहे हैं।"

उस समय अंग्रेज शांतिवादी मूरियल लेस्टर भारत में थीं। इस भयावह घटना की खबर सुनकर वे तुरंत नोआखली में एक राहत केंद्र स्थापित करने के लिए दौड़ीं। उन्होंने नवंबर के पहले सप्ताह में एक रिपोर्ट भेजी, जो 6 नवंबर को हिंदुस्तान स्टैंडर्ड में प्रकाशित हुई। रिपोर्ट में लिखा था: 'सबसे बुरी हालत महिलाओं की थी। उनमें से कई को अपने पतियों की हत्या होते देखनी पड़ी और फिर जबरन धर्म परिवर्तन कराकर उनकी शादी उन्हीं लोगों से करा दी गई, जो उनके पतियों और परिवार की हत्या के लिए जिम्मेदार थे। इन महिलाओं के चेहरे पर उदासी छाई हुई थी। यह निराशा नहीं थी, न ही ऐसी कोई भावना। यह घोर खालीपन था... हजारों महिलाओं को अपनी जान की कीमत के तौर पर गोमांस खाने और इस्लाम के प्रति निष्ठा की घोषणा करने के लिए मजबूर किया गया... शायद इस आगजनी और हिंसा के तांडव के बारे में केवल एक ही बात निश्चित रूप से कही जा सकती है कि यह ग्रामीणों का स्वतःस्फूर्त विद्रोह नहीं था। बंगाल में चाहे कितने भी गुंडे रहते हों, वे अपनी पहल पर इस तरह का अभियान चलाने में असमर्थ हैं। घरों पर पेट्रोल छिड़का गया और उन्हें जला दिया गया। यह सीमित ईंधन किसने उपलब्ध कराया?' इस ग्रामीण इलाके में रकाब-पंप किसने आयात किए? हथियार किसने मुहैया कराए?... गुंडे खुद को बंगाल के इस खूबसूरत इलाके का शासक समझते हैं। विनाश, अत्याचार और आक्रामकता को चुपचाप देखते रहने वालों में डर का कोई निशान नहीं दिखता; भविष्य में मिलने वाली सजा को लेकर कोई चिंता भी नजर नहीं आती।
अपने अनुयायियों के बीच 'शाह सैयद गुलाम सरवर हुसैनी, दरिया शरीफ, शमपुर गांव, नोआखली के पीर साहब' के नाम से मशहूर सरवर हुसैनी नोआखली के वास्तविक तानाशाह बन गए थे। उन्होंने इस क्षेत्र में कुछ सबसे बर्बर हमले और नरसंहार किए। उनके लिए एक

कांटा थे नोआखली बार एसोसिएशन के अध्यक्ष, करपारा जिले के चौधरीबाड़ी निवासी राय साहब राजेंद्रलाल चौधरी, जिन्होंने बढ़ती अराजकता के खिलाफ स्थानीय स्तर पर मोर्चाबंदी की थी और इस तरह सरवर के क्रोध का पात्र बने थे। हिंसा भड़कने से कुछ दिन पहले, भारत सेवाश्रम के एक साधु, त्रयंबकानंद, चौधरीबाड़ी आए और राय साहब के साथ ठहरे। साधु हिंदू बाड़ियों (घरों) में शीतला पूजा की प्रथा को पुनर्जीवित करना चाहते थे। इस पूजा में देवी की मूर्ति पर ताजा बलि दिए गए बकरे के रक्त का लेप किया जाता था। हालांकि, आसपास के गांवों में यह अफवाह फैल गई कि अगली पूजा में एक मुसलमान के रक्त का प्रयोग किया जाएगा। यह सुनकर सरवर मानो किसी भूत-प्रेत से ग्रस्त हो गया।
दस तारीख की सुबह, सरवर ने राय बहादुर को बुलाया; लेकिन किसी साजिश की आशंका से उन्होंने जाने से इनकार कर दिया। उसी सुबह आठ बजे, सरवर ने शामपुर बाजार में जमा हजारों लोगों की भीड़ को संबोधित किया और घोषणा की कि उन्हें करपारा के राय साहब राजेंद्रलाल और साधु त्रयंबकानंद के सिर चाहिए। उन्होंने भीड़ को उकसाया और उन्हें बाजार में बेकाबू छोड़ दिया। बाजार में सभी हिंदू दुकानें लूट ली गईं और जला दी गईं तथा एक मंदिर को पूरी तरह से तहस-नहस कर दिया गया। भीड़ अब तीन गुटों में बंट गई और अलग-अलग दिशाओं में चली गई। एक गुट ने रामगंज बाजार पर हमला किया, दूसरा दासघरिया बाजार की ओर गया और वहां ठाकुर मंदिर को नष्ट कर दिया। तीसरे गुट ने नारायणपुर के जमींदार सूरेन बोस के कच्छेहरी कार्यालय पर हमला किया। सूरेन बोस को एक स्थानीय पुलिस अधिकारी ने खतरे की चेतावनी दी थी और उसी सुबह सुरक्षित स्थान पर भाग जाने की सलाह दी थी, लेकिन उन्होंने यह कहते हुए इनकार कर दिया, 'मैं अपने भाइयों को पीछे नहीं छोड़ना चाहता...

मुझे उनके साथ मौत का सामना करना होगा।' जब भीड़ उसके घर पहुँची तो उसने भीड़ पर गोलियाँ चला दीं, लेकिन जल्द ही उसे पकड़ लिया गया और घर में मौजूद पाँच अन्य लोगों के साथ उसकी बेरहमी से हत्या कर दी गई। इसके बाद घर में आग लगा दी गई और शवों को आग में फेंक दिया गया।
अगली सुबह, 11 तारीख को, लगभग 8 बजे, चौधरीबाड़ी पर चालीस से पचास दंगाइयों के एक गिरोह ने हमला कर दिया। वे 'अल्लाह-ओ-अकबर' और बंगाली में 'हिंदुर रक्त चाई' के नारे लगा रहे थे। चौधरी हमले के लिए पूरी तरह तैयार थे। उन्होंने अपने बेटे और बाड़ी के कुछ युवकों के साथ मुख्य घर से कुछ दूरी पर भीड़ का सामना किया। हुई झड़प में तीन-चार हमलावर मारे गए और बाकी भाग गए। लेकिन कुछ ही घंटों में वे दस हजार लोगों की सशस्त्र भीड़ के साथ लौट आए, जो चौधरी परिवार का खून बहाने के लिए उग्र थे। राजेंद्रलाल के परिवार के सदस्य और अन्य निवासी छत पर शरण लेकर खुद को सुरक्षित कर लिया। उनके अंगरक्षकों में से एक, काली प्रसन्ना राउत, छत पर तैनात थे और उन्होंने गोलीबारी शुरू कर दी, जिसमें लगभग तीस से चालीस हमलावर मारे गए। गोलीबारी बंद होने पर हमलावर वापस आए और घर में आग लगा दी। पुरुषों के कपड़े उतार दिए गए, उन्हें चाकू से गोदकर पेड़ों से बांध दिया गया। फिर उनके परिवारवालों के सामने ही उनकी बेरहमी से हत्या कर दी गई। राजेंद्रलाल को पिछवाड़े में ले जाया गया, जहाँ उन्हें कसाईखाने पर झुकने के लिए मजबूर किया गया। उनका सिर धड़ से अलग कर दिया गया और विजयी भाव से गुलाम सरवर को भेंट किया गया। महिलाओं को अलग-अलग जगहों पर ले जाकर उनके साथ दुर्व्यवहार किया गया। उनमें से कुछ को वापस लाकर पास के एक बाड़े में शरण दी गई। राजेंद्रलाल की पत्नी और कुछ अन्य महिलाओं ने उनके एक मुस्लिम नौकर के बाड़े में शरण ली,

जहाँ से उन्हें 18 अक्टूबर को नागरिक आपूर्ति मंत्री अब्दुल गोफरान ने बचाया।
चौधरी परिवार की दो बेटियों का बदमाशों के एक गिरोह ने अपहरण कर लिया। उन्हें शाहपुर हाई स्कूल ले जाया गया और उनके साथ बार-बार सामूहिक बलात्कार किया गया। उनमें से एक को जलते हुए शाहपुर बाज़ार ले जाया गया, जहाँ उसकी हत्या कर दी गई और उसके शव को जलती हुई आग में फेंक दिया गया। दूसरी बच निकली, रास्ता भटक गई और अजनबियों से मदद की गुहार लगाने के बाद एक दयालु मुस्लिम दुकानदार ने उसे शाहपुर के राजबाड़ी का रास्ता बताया, जहाँ उसने एक हिंदू परिवार के यहाँ शरण ली। अपहरणकर्ताओं ने घर को घेर लिया और लड़की को न सौंपने पर जान से मारने की धमकी दी। डरे हुए परिवार ने लड़की को अपहरणकर्ताओं के हवाले कर दिया। अंत में, उनमें से एक मुस्लिम शिक्षक ने दया दिखाई और उसे अपने साथ ले गया। हालाँकि, बाद में उसने उसके साथ विश्वासघात किया और उसे कैद में रखा। उसे एक नाव में बिठाकर बाढ़ग्रस्त धान के खेत में ले जाया गया और शाहपुर राजबाड़ी से लगभग आधा मील दूर खालिसपारा गाँव के पास उसकी हत्या कर दी गई। शव को सड़ने के लिए पानी में फेंक दिया गया।
चौधरीबाड़ी पर हुए हमले में चौबीस लोगों की मौत हो गई, उनसठ लोग घायल हो गए और तिरानवे लोग लापता बताए गए, जिनके मारे जाने की आशंका थी। चौधरी परिवार की एक पांच वर्षीय बच्ची, जो चमत्कारिक रूप से बच गई थी, को गांधीजी के सामने तब पेश किया गया जब वे दत्तापारा शरणार्थी शिविर में रहने लगे थे।
रहस्यमय त्रयंबकनंदा ने अपने ही बयान के अनुसार, पहले हमले के बाद चौधरीबाड़ी से भागकर आसपास के जंगलों में छिप गए। खालों और जंगलों से होते हुए वे रामगंज पहुंचे और पुलिस सुरक्षा के साथ

नोआखली और फिर वहां से कलकत्ता पहुंचे। वहां वे रातोंरात हीरो बन गए और अपने भागने की कहानी बताते हुए लोगों का ध्यान अपनी ओर खींचने लगे।
काली प्रसन्ना राउत की मजल-लोडर बंदूक की जली हुई नली को चौधरीबाड़ी के मलबे से एक लुटेरे ने उठा लिया था और गांधीजी की हत्या के दो साल बाद, 1948 में, इसका इस्तेमाल गड़बड़ी फैलाने के लिए किया गया था। गुलाम सरवर के एक आदमी ने उस नली को गांधी शांति मिशन के शिविर में रख दिया, जिसका नेतृत्व प्यारेलाल नैयर कर रहे थे। उनका मकसद यह खबर फैलाना था कि शिविर में मुसलमानों के नरसंहार में इस्तेमाल किया गया हथियार मिला है, जिससे अधिकारियों पर शिविर बंद करने और गांधीवादियों को बाहर निकालने का दबाव पड़े। गांधी शांति मिशन के खिलाफ लगे आरोपों की जांच पूर्वी बंगाल सरकार के एक मंत्री ने की। एक स्थानीय मुस्लिम ने इस साजिश का खुलासा किया।
शाहपुर बाज़ार और चौधरीबाड़ी में नरसंहार का नेतृत्व करने के एक दिन बाद, सरवर ने अधिकारियों को एक रिपोर्ट भेजी जिसमें कहा गया कि 'बाहरी गुंडे' इस नरसंहार के लिए ज़िम्मेदार हैं और लोगों की जान खतरे में है। उसने अपने गिरोह द्वारा लूटी गई संपत्ति में से अपने पीड़ितों को राहत दी, जिन्हें जबरन इस्लाम में परिवर्तित कर दिया गया था और अब वे उसके अनुयायी माने जाते थे। सरवर को अंततः 22 अक्टूबर को सेना द्वारा गिरफ्तार कर लिया गया।
जबरन धर्म परिवर्तन का एक उल्लेखनीय मामला रायपुर कांग्रेस कमेटी के सचिव हरेंद्र घोष का था। अपने गाँव पर हुए हमले से बच निकलने के बाद, हरेंद्र ने दो मुस्लिम कार्यकर्ताओं के पास शरण ली, जिन्होंने इस्लाम धर्म अपनाने की शर्त पर उन्हें बख्शने का

वादा किया। जब हरेंद्र आखिरकार मान गए, तो एक पर्चा दिया गया और उनसे उस पर हस्ताक्षर करवाए गए। 15 अक्टूबर को, हरेंद्र को रायपुर की एक मस्जिद में ले जाया गया और वहाँ कैद कर दिया गया। वहाँ उनसे एक और पर्चे पर हस्ताक्षर करवाए गए, जिसे स्थानीय अखबार में छापा गया और हिंदुओं को धर्म परिवर्तन के लिए मनाने के उद्देश्य से वितरित किया गया। उन्हें बारह दिनों तक मस्जिद में कैद रखा गया। बाद में गांधीजी को दिए अपने लिखित बयान में, हरेंद्र ने अपने उन भयावह दिनों का वर्णन किया: 'मेरा रोज़ का भोजन गोमांस और चावल था, जिसे मुझे जबरन खाना पड़ता था। मुझे नमाज़ सिखाई जाती थी और शुक्रवार को हज़ारों मुसलमानों के सामने इस्लामी आस्था और संस्कृति पर व्याख्यान देने पड़ते थे।' इस बर्बरता में भाग लेने वाले और हत्यारों और आगजनी करने वालों के गिरोहों को निर्देश जारी करने के लिए प्रतिदिन सुबह और शाम मस्जिद में मिलने वाले नेताओं में विधानसभा का एक स्थानीय सदस्य, थाना मुस्लिम लीग का सचिव, यूनियन पीस कमेटी के दो सचिव, यूनियन बोर्ड के दो अध्यक्ष और एक जमींदार शामिल थे।
स्थानीय हरिजनों को भी नहीं बख्शा गया, हालांकि जिन्ना ने कांग्रेस को 'जातिवादी हिंदू' संगठन घोषित करवाकर और फिर मुस्लिम लीग के कोटे से बंगाल के एक हरिजन को अंतरिम सरकार में नामित करके उन्हें अपने पक्ष में करने की कोशिश की थी। नोआखली में केवल धर्म परिवर्तन करने वालों को ही बख्शा गया।
हालांकि, दोनों समुदायों के एक-दूसरे की मदद करने के उदाहरण भी थे। भाटियालपुर में, एक मुस्लिम व्यक्ति एक हिंदू डॉक्टर और उसे जान से मारने की कोशिश कर रही भीड़ के बीच खड़ा हो गया। उसने अंततः डॉ. चंद्रशेखर भौमिक की जान बचाई, जो बाद में गांधी शांति मिशन में शामिल हुए और प्यारेलाल नायर के अनुवादक के रूप में

काम किया। उसी मुस्लिम व्यक्ति ने बाद में प्यारेलाल नायर की भी जान बचाई, जब एक बार उनके शांति शिविर के अधिकार क्षेत्र में आने वाले एक गांव में तनावपूर्ण स्थिति को शांत करने के लिए दौड़ते समय एक गिरोह ने उन पर हमला कर दिया था।
दिल्ली में गांधी जी बंगाल की घटनाओं और देश भर में इसके संभावित परिणामों से चिंतित थे। वे जानते थे कि भारत तभी सुरक्षित रह सकता है जब हिंदू और मुसलमान सद्भाव से रहें। वे दिन-प्रतिदिन समझदारी से काम लेने की अपील करते रहे, पहले सेवाग्राम से और फिर नई दिल्ली स्थित अपने शिविर से। 24 अक्टूबर को, जब वाल्मीकि मंदिर और गांधी जी के कमरों के बीच स्थित प्रांगण में शाम की प्रार्थना शुरू होने ही वाली थी, तभी आरएसएस कार्यकर्ताओं के एक समूह ने सभा में खलल डाला और कुरान की आयतें पढ़ने से रोक दिया। वे भीड़ को धकेलते हुए गांधी जी के बैठने की जगह की ओर बढ़े, मुस्लिम विरोधी तख्तियां पकड़े हुए थे और नारे लगा रहे थे। बाद में पता चला कि नारायण डी. आप्टे और नाथूराम गोडसे भी इसी समूह का हिस्सा थे।
नेहरू और पटेल से सलाह मशवरा करने के बाद, गांधी ने 28 अक्टूबर को कलकत्ता होते हुए नोआखली जाने का फैसला किया। 28 तारीख को प्रार्थना सभा में गांधी ने कहा कि वे बंगाल में दोनों समुदायों के बीच की खाई को पाटने की कोशिश करने जा रहे हैं। वे महिलाओं और बच्चों को सांत्वना देना चाहते थे। वे राज्यपाल और मुख्यमंत्री से भी मिलना चाहते थे और फिर नोआखली के लिए रवाना होना चाहते थे। अगली सुबह वे अपने कुछ चुने हुए अनुयायियों के साथ निकल पड़े।
शांति तीर्थयात्री

गांधी जी तेरह साल के अंतराल के बाद इस मार्ग से यात्रा कर रहे थे और हजारों लोग उनकी एक झलक पाने के लिए स्टेशनों पर उमड़ पड़े। रेलवे अधिकारियों ने भीड़ को तितर-बितर करने के लिए हर संभव प्रयास किया, यहां तक कि उन्हें भगाने के लिए तात्कालिक जल प्रस्फुटन का भी इस्तेमाल किया।
जब वे कलकत्ता की ओर यात्रा कर रहे थे, तभी बिहार में अशांति फैल गई। पूर्वी बंगाल से सैकड़ों शरणार्थी बिहार के उत्तर-पूर्वी हिस्सों में पहुँच चुके थे। नोआखली में हिंदुओं की दुर्दशा की कहानियों ने बिहारियों और पूरे भारत के कट्टरपंथी हिंदुओं को भड़का दिया, जिन्होंने बिहार में मुसलमानों से बदला लेने का फैसला किया। बिहार मुख्य रूप से एक गरीब कृषि प्रधान राज्य था; गाँव और बस्तियाँ धर्म और जाति के आधार पर व्यवस्थित रूप से विभाजित थीं। हिंदू भीड़ ने अलग-थलग मुस्लिम बस्तियों और गाँवों की पहचान की और ऐसी कई बस्तियों को बेरहमी से नष्ट कर दिया, एक भी निवासी को नहीं बख्शा। हिंसा तेजी से बड़े शहरों में फैल गई और अंततः एक सप्ताह के भीतर राजधानी पटना तक पहुँच गई।
कलकत्ता पहुँचने पर गांधीजी और उनके साथियों को सीधे सतीश चंद्र दासगुप्ता के सोदेपुर स्थित खादी प्रतिष्ठान आश्रम ले जाया गया। वहाँ सैकड़ों लोगों की भीड़ गांधीजी का बेसब्री से इंतजार कर रही थी। उन्हें संबोधित करते हुए उन्होंने कहा कि वे ईश्वर की इच्छा पूरी करने के लिए निःसंकोच मन से आए हैं। सुहरावर्दी को अहंकार सवार था। उसने अपने दरबार को मुगल सम्राटों के निजी दरबारों की तर्ज पर सजाया था और मेहमानों को गद्दे पर लिटाकर ही उनका स्वागत करता था। गांधीजी से मुलाकात के दौरान भी उसने यही किया। गांधीजी ने कहा, 'कैसी बात है शहीद

साहब, सब आपको अपराधियों का सरगना कहते हैं? कोई आपके बारे में अच्छी बात नहीं कहता!' जवाब में सुहरावर्दी ने बेशर्मी से कहा, 'महात्माजी, क्या लोग आपके बारे में भी पीठ पीछे बातें नहीं करते?'
'हो सकता है,' गांधीजी ने हंसते हुए उत्तर दिया। 'फिर भी कुछ लोग मुझे महात्मा कहते हैं। लेकिन मैंने कभी किसी को आपको, शहीद सुहरावर्दी, महात्मा कहते नहीं सुना!' सुहरावर्दी ने बेशर्मी से जवाब दिया, 'महात्माजी, लोग आपके सामने जो कहते हैं उस पर विश्वास न करें!'
इस अवसर पर दोनों बंगाल के लिए शांति योजना तैयार करने के लिए बैठे। तैयार दस्तावेज़ में आपसी सहयोग और विश्वास के आधार पर शांति स्थापित करने की परिकल्पना की गई थी, जिसमें बाहरी बल के भय या अंग्रेजों के दबाव का कोई स्थान नहीं था। मुस्लिम और हिंदू दोनों समान रूप से जिम्मेदार होंगे। बंगाल सरकार शांति की गारंटी देगी, 'ऐसी शांति जो सैन्य और पुलिस बल द्वारा थोपी न जाए, बल्कि स्वतःस्फूर्त और हार्दिक प्रयासों से स्थापित हो... हमारा दृढ़ विश्वास है कि सांप्रदायिक संघर्ष से पाकिस्तान नहीं बनाया जा सकता और न ही भारत को उसी तरह एकजुट रखा जा सकता है। हमारा यह भी दृढ़ विश्वास है कि किसी भी प्रकार का धर्मांतरण या जबरन विवाह नहीं हो सकता; और अपहरण का ऐसे समाज में कोई स्थान नहीं है जो सभ्य या सुसंस्कृत कहलाने का दावा करता हो।' मुख्यमंत्री की अध्यक्षता में समान संख्या में हिंदू और मुस्लिम सदस्यों वाली एक समिति का गठन किया जाएगा, जिन्होंने यह गारंटी दी कि उनकी सरकार शांति समिति के निर्णयों को लागू करेगी।

इसी बीच, नेहरू, पटेल, लियाकत अली खान और कुख्यात सरदार अब्दुर रब निश्तर पटना पहुंचे ताकि स्थिति का जायजा लेकर जल्द से जल्द उसे शांत कर सकें। उन्होंने गांधीजी को आश्वासन दिया कि वे बिहार में शांति बहाल करेंगे, लेकिन उनके आश्वासन व्यर्थ साबित हुए; जहर तेजी से फैल चुका था। इसका मुकाबला केवल गांधीजी के तरीकों से ही किया जा सकता था। नोआखली जाने से पहले, गांधीजी ने अपने साथियों और भारत की जनता को सूचित किया कि वे अब से केवल उतना ही भोजन करेंगे जितना जीवित रहने के लिए आवश्यक है और यदि नोआखली और बिहार में स्थिति नहीं बदली तो शांति स्थापित होने तक वे पूरी तरह से भोजन त्याग देंगे। नेहरू को उन्होंने लिखा: 'बिहार से आई खबर ने मुझे झकझोर दिया है। मेरा कर्तव्य स्पष्ट प्रतीत होता है... हालांकि मैंने उपवास टालने का भरसक प्रयास किया है, लेकिन अब मैं ऐसा नहीं कर सकता... मेरी अंतरात्मा कहती है, 'आप इस संवेदनहीन नरसंहार के साक्षी बनने के लिए जीवित न रहें। यदि लोग स्पष्ट सच्चाई को देखने से इनकार करते हैं और आपकी बात नहीं सुनते, तो क्या इसका अर्थ यह नहीं है कि आपका समय समाप्त हो गया है?' इस तर्क की वजह से मैं अनशन करने के लिए बेताब हो रहा हूँ। इसलिए मैं यह घोषणा करना चाहता हूँ कि जब तक यह पागलपन का तांडव बंद नहीं होता, मुझे आमरण अनशन करना पड़ेगा... अगर आपकी राय अलग है, तो आप मुझसे बहस कर सकते हैं। आप जो भी कहेंगे, मेरे लिए मायने रखेगा। लेकिन आप मेरे स्वभाव को जानते हैं, इसलिए मुझे पूरा यकीन है कि आप मेरे इस कदम का समर्थन करेंगे। खैर, आप मेरी संभावित मृत्यु के बारे में सोचे बिना अपना काम जारी रखेंगे और मुझे ईश्वर की देखरेख में छोड़ देंगे। चिंता की कोई गुंजाइश नहीं है।

नोआखली रवाना होने से पहले उन्होंने बिहार की जनता को संबोधित करते हुए एक अपील जारी की, जिसका शीर्षक था: 'बिहार के लिए': 'मेरे सपनों का बिहार उन्हें झूठा साबित करता प्रतीत होता है... यह कहना आसान है कि बंगाल में मुस्लिम लीग सरकार के अधीन हालात इससे बेहतर नहीं थे, बल्कि बदतर ही थे, और बिहार तो बस उसी का परिणाम है। एक दल का बुरा कृत्य दूसरे दल द्वारा उसी प्रकार के कृत्य का औचित्य नहीं हो सकता... क्या सांप्रदायिकता-विरोधी आंदोलन उस सांप्रदायिकता का जवाब है जिसका आरोप कांग्रेसियों ने मुस्लिम लीग पर लगाया है? क्या बिहार के चौदह प्रतिशत मुसलमानों को बर्बरतापूर्वक कुचलने का प्रयास करना राष्ट्रवाद है?'
मुझे यह बताने की ज़रूरत नहीं है कि मुझे कुछ हज़ार बिहारियों के पापों के लिए पूरे बिहार की निंदा नहीं करनी चाहिए... मुझे डर है कि अगर बिहार में दुराचार जारी रहा, तो भारत के सभी हिंदुओं को दुनिया की निंदा का सामना करना पड़ेगा। मुझे अपनी अहिंसा पर ज़रा भी शर्म नहीं है... लेकिन मैं इस पत्र में आपसे अहिंसा की बात नहीं करना चाहता। मैं आपको यह ज़रूर बताना चाहता हूँ कि आपने जो किया है, वह कायरता से भी बदतर है। यह राष्ट्रवाद या किसी भी धर्म के योग्य नहीं है... आपने जो किया है, उससे आपने खुद को नीचा दिखाया है और भारत को भी नीचे गिराया है।
6 नवंबर को गांधीजी और उनके शांतिदूतों का दल, बंगाल सरकार के प्रतिनिधियों के साथ, एक विशेष ट्रेन से नोआखली के लिए रवाना हुआ। उनके साथ बंगाल सरकार के श्रम मंत्री शमशुद्दीन अहमद, दो संसदीय सचिव नस्रुल्ला खान और अब्दुर राशिद भी थे; उन्हें नोआखली में गांधीजी के शांति मिशन के दौरान स्थानीय अधिकारियों का सहयोग सुनिश्चित करने का दायित्व सौंपा गया था।

प्रारंभ में सुहरावर्दी और नस्रुल्ला खान दोनों की बेटियाँ गांधीजी के साथ जाने वाली थीं, लेकिन यह योजना तब रद्द कर दी गई जब सुहरावर्दी को 'सलाह' दी गई कि नोआखली से होकर गुजरने वाली दो बिना नकाब वाली मुस्लिम लड़कियाँ नोआखली के कट्टरपंथी मुल्लाओं की भावनाओं को 'आहत' कर सकती हैं।
खुस्तिया और गोलंदो में भारी भीड़ ने गांधीजी का स्वागत किया, जहाँ उन्होंने भीड़ से कहा कि 1920 के दशक के आरंभ में खिलाफत आंदोलन के दौरान जो हिंदू-मुस्लिम एकता हासिल हुई थी, वह उनकी यात्रा के कारण बंगाल में फिर से जागृत होगी। गोलंदो रेलवे स्टेशन का अंतिम पड़ाव था, आगे की सौ मील से अधिक की यात्रा पद्मा नदी में नावों से तय की जानी थी। वे देर रात चांदपुर पहुँचे, जहाँ पटेल का एक टेलीग्राम गांधीजी को सौंपा गया। वे तुरंत जवाब देना चाहते थे, लेकिन कोई भी फोन या टेलीग्राम लाइन काम नहीं कर रही थी। रात नदी के बीच में लंगर डाले नाव में ही गुज़री। अगली सुबह, काफिला नोआखली के चौमुहानी तक ट्रेन से यात्रा जारी रखने के लिए नाव से उतरा। उतरने से पहले, दो प्रतिनिधिमंडल गांधीजी से मिलने आए; एक मुस्लिम और दूसरा हिंदू। मुस्लिम प्रतिनिधिमंडल में प्रमुख मुस्लिम लीग के नेता शामिल थे, जो शांति प्रतिनिधिमंडल से बहुत नाराज़ थे। उनका दावा था कि नोआखली में हुई घटनाओं की खबरें बहुत बढ़ा-चढ़ाकर पेश की गई थीं और यह मुस्लिम लीग को बदनाम करने और उसकी साख मिटाने का एक सुनियोजित अभियान था। उन्होंने कहा कि नोआखली और तिप्पराह जिलों में केवल पंद्रह हिंदू मारे गए थे, जबकि मुख्य रूप से हिंदू सेना द्वारा की गई अंधाधुंध गोलीबारी में तीस से अधिक निर्दोष मुसलमान मारे गए थे।

नोआखली के जिला मजिस्ट्रेट मैकइनर्नी ने एक आधिकारिक नोटिस जारी किया था, जिसे गांधीजी को दिखाया गया। नोटिस में कहा गया था कि जब तक इसके विपरीत साबित न हो जाए, तब तक वे यह मानेंगे कि 'अशांति के बाद इस्लाम स्वीकार करने वाले सभी लोगों को जबरन धर्म परिवर्तन कराया गया था और वे वास्तव में हिंदू ही रहे।' नोटिस पढ़कर गांधीजी ने कहा कि यदि सभी मुसलमान इस नोटिस का समर्थन करें तो यह मामला काफी हद तक सुलझ जाएगा। अगर कोई सचमुच कलिमा पढ़ने को इच्छुक है तो इसे सार्वजनिक रूप से प्रदर्शित करने की क्या आवश्यकता है? मुस्लिम प्रतिनिधिमंडल पूर्वाग्रह से ग्रस्त होकर आया था। यह सोचकर कि गांधीजी उन्हें कड़ी फटकार लगाएंगे और उन पर आरोप लगाएंगे, वे हर आरोप और निंदा का जवाब देने की रणनीति बनाकर आए थे। लेकिन गांधीजी सख्त तो थे, पर उन्होंने पूरे समुदाय की निंदा नहीं की। उन्होंने शांति बनाए रखने के लिए सेना और पुलिस के इस्तेमाल पर भी आपत्ति जताई और हिंदुओं के पलायन और बड़े पैमाने पर आप्रवास की आलोचना की। उस सुबह दूसरा प्रतिनिधिमंडल लगभग बीस हिंदुओं का था, जिसमें क्षेत्र के प्रमुख कांग्रेस कार्यकर्ता और चटगांव शस्त्रागार पर प्रसिद्ध हमले में भाग लेने वाले पूर्व क्रांतिकारी शामिल थे। उन्होंने मांग की कि मुस्लिम पुलिस अधिकारियों, कांस्टेबलों और सेना के मुस्लिम सदस्यों को हटाकर उनकी जगह हिंदुओं को नियुक्त किया जाए। इस पर गांधी ने कहा: 'मैं काठियावाड़ से आता हूं - छोटी-छोटी रियासतों की भूमि से। इनमें से कुछ रियासतों में किसी भी महिला की इज्जत सुरक्षित नहीं है और मुखिया कोई गुंडा नहीं बल्कि विधिवत नियुक्त किया गया व्यक्ति है।'

और इस तरह उनकी बहस हुई। हिंदू हर तरह की सुरक्षा चाहते थे। उनका कहना था कि बंगाल में अल्पसंख्यक होने के कारण वे अपनी रक्षा करने की स्थिति में नहीं हैं। गांधी ने जवाब दिया कि अगर बंगाल में सिर्फ एक ही हिंदू जीवित बचे, तो वह चाहते हैं कि उसमें मुसलमानों के बीच रहने का आत्मविश्वास और साहस हो और जरूरत पड़ने पर वह एक नायक की तरह शहीद हो।
'यहां मुसलमानों और हिंदुओं का अनुपात छह गुना है। आप हमसे इतनी भारी चुनौतियों का सामना करने की उम्मीद कैसे कर सकते हैं?' 'जब भारत को अंग्रेजों के अधीन लाया गया था, तब 33 करोड़ भारतीयों के मुकाबले केवल 70,000 यूरोपीय सैनिक थे।'
'हमारे पास हथियार नहीं हैं। गुंडों को सरकारी संगीनों का समर्थन प्राप्त है।'
दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह का वर्णन करते हुए गांधी ने एक छोटे से भारतीय समुदाय का उदाहरण दिया, जिसने सरकार की पूरी शक्ति से लैस विशाल यूरोपीय समुदाय से समान अधिकारों की मांग की। उन्होंने कहा, 'यूरोपियों के पास हथियार थे। हमारे पास नहीं थे। इसलिए हमने सत्याग्रह का हथियार बनाया। आज दक्षिण अफ्रीका में एक भारतीय का सम्मान श्वेत व्यक्ति द्वारा किया जाता है, जबकि एक सुगठित शरीर वाले ज़ुलू का नहीं।'
'क्या आप हिंदुओं को आक्रामक रुख अपनाने की अनुमति देंगे?' 'बिहार के लोगों ने ऐसा किया और खुद पर और भारत पर कलंक लगाया। मैंने सुना है कि बिहार में हुई जवाबी कार्रवाई ने मुसलमानों को "शांत" कर दिया है। उनका मतलब है कि इससे भारतीय स्वतंत्रता की घड़ी पीछे चली गई है। आज भारत की स्वतंत्रता बंगाल और बिहार में दांव पर लगी है। ब्रिटिश सरकार ने केंद्र में कांग्रेस को सत्ता इसलिए नहीं सौंपी थी क्योंकि वे कांग्रेस से प्रेम करते

थे, बल्कि इसलिए सौंपी थी क्योंकि उन्हें विश्वास था कि कांग्रेस इसका बुद्धिमानी और अच्छे से उपयोग करेगी। आज पंडित नेहरू को लग रहा है कि उनके पैरों तले से ज़मीन खिसक रही है। लेकिन वे ऐसा होने नहीं देंगे। इसीलिए वे बिहार में हैं। अगर ज़रूरी हो तो अपने हथियारों का सही इस्तेमाल करो, लेकिन उनका गलत इस्तेमाल मत करो। बिहार ने अपने हथियारों का सही इस्तेमाल नहीं किया है... पूर्वी बंगाल के हिंदुओं को बिहार जो सबसे बड़ी मदद दे सकता था, वह यह होता कि वह अपने बीच रहने वाली मुस्लिम आबादी की पूर्ण सुरक्षा की गारंटी अपने प्राणों की कीमत पर देता।'
अगले रेलवे स्टेशन, लक्षम पर, शरणार्थियों की एक बड़ी भीड़ गांधीजी से अपनी बात रखने के लिए जमा हो गई थी। उन्होंने उन्हें आश्वासन दिया कि शांति बहाल होने तक वे बंगाल नहीं छोड़ेंगे और आगे कहा, 'अल्लाह-ओ-अकबर की पुकार से क्यों डरें? इस्लाम का अल्लाह वही है जो हिंदुओं का राम है। खतरे का सामना करने के बजाय उससे भागना, मनुष्य, ईश्वर और स्वयं में विश्वास का खंडन करना है। इस तरह के अविश्वास का ऐलान करने से बेहतर है कि खुद को डुबो दिया जाए।'
गांधी और उनके साथी 7 नवंबर की दोपहर चौमुहानी पहुंचे। सुचेता कृपलानी, जो अग्रिम दल के साथ राहत सामग्री पहुंचाने आई थीं और क्षेत्र का व्यापक दौरा कर चुकी थीं, ने गांधी को अपने अनुभव बताए और अंदरूनी इलाकों में जो कुछ उन्होंने देखा था, उससे वे बेहद दुखी थीं। उन्होंने गांधी को बताया कि शांतिदूतों का काम आसान नहीं होने वाला। चारों ओर गंदगी फैली हुई थी; सड़ते हुए शवों के कारण जलस्रोत प्रदूषित हो गए थे और अनाज की भारी कमी थी। दोनों समुदायों में दरार के कारण छोटे-मोटे काम करने के लिए

दिहाड़ी मजदूर मिलना मुश्किल था। कृपलानी ने बताया कि स्वयंसेवकों को बदनाम करने के लिए एक नया तरीका अपनाया जा रहा था—अफवाहें फैलाई जा रही थीं कि गांधी हिंदू अपराधियों की सेना ला रहे हैं, और गांधी के साथ आए सैन्य और पुलिसकर्मी 'निर्दोष' मुसलमानों को परेशान और प्रताड़ित करने वाले हैं। लेकिन ये अफवाहें कारगर नहीं हुईं। गांधी का भाषण सुनने के लिए 15,000 से अधिक लोग आए—और भीड़ में अधिकतर मुसलमान थे।
उस रात लीग मंत्री शमशुद्दीन मोहम्मद अपने सहयोगियों और स्थानीय मुस्लिम प्रतिनिधियों के साथ गांधीजी से क्षेत्र में शांति स्थापित करने के उपायों पर चर्चा करने आए। 9 नवंबर की सुबह गांधीजी नोआखली जिले के भीतरी गांवों की यात्रा पर निकल पड़े। उनके साथ दो संसदीय सचिव, जिला मजिस्ट्रेट और पुलिस अधीक्षक भी थे। इन जिलों में अधिकांश किसानों की हत्या कर दी गई थी, जबकि अन्य शरणार्थी शिविरों में भाग गए थे। मुसलमानों को हिंदुओं के लिए काम न करने का फतवा जारी किया गया था। इन दोनों जिलों में हिंदुओं का सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक बहिष्कार लागू था। भरपूर फसल के बावजूद, इन जिलों में मानव निर्मित खाद्य पदार्थों की कमी हो गई थी।
गोपाईरबाग वह पहला गाँव था जहाँ वे पहुँचे। यहाँ सुपारी और पान के घने झुरमुटों के बीच, हिंदू परिवारों की झोपड़ियों के पाँच समूह थे, जिनके चारों ओर उनसे लगभग पचास गुना अधिक मुस्लिम परिवार रहते थे। एक हिंदू घर एक धनी पटवारी का था, जिसकी संपत्ति कई लाख रुपये की थी। यह गाँव सबसे बर्बर नरसंहार, बलात्कार, लूटपाट और आगजनी की घटनाओं में से एक का गवाह रहा था। पटवारी के परिवार को विशेष निशाना बनाया गया था; पहले हमले में परिवार के तेईस पुरुषों में से इक्कीस को पकड़कर बेरहमी से मार

डाला गया था। जो दो लोग बच निकले, वे पूरी घटना के चश्मदीद गवाह थे। नरसंहार का मुख्य साजिशकर्ता और नेता उनका पड़ोसी कासिम अली था, जो पूर्व वायु सेना अधिकारी था और हमले के बाद से फरार था, और किसी ने भी उसके खिलाफ गवाही देने की हिम्मत नहीं की। अगले दिन गांधीजी ने अपना शिविर चौमुहानी से दत्तापारा स्थानांतरित कर दिया, ताकि वे अंदरूनी इलाकों के अधिक प्रभावित गांवों का दौरा कर सकें। उस शाम उन्होंने प्रार्थना सभा को संबोधित किया, जिसमें उपस्थित लोगों में से अस्सी प्रतिशत से अधिक मुसलमान थे। उन्होंने कहा, 'मैं आपको आश्वस्त करना चाहता हूं कि मैं हिंदुओं और मुसलमानों दोनों का सेवक हूं। मैं यहां पाकिस्तान से लड़ने नहीं आया हूं। यदि भारत का विभाजन होना तय है, तो मैं इसे रोक नहीं सकता। लेकिन मैं आपको बताना चाहता हूं कि पाकिस्तान को बलपूर्वक स्थापित नहीं किया जा सकता... मैं अपने मुस्लिम भाइयों से आग्रह करता हूं कि वे अपने अंतर्मन का चिंतन करें और यदि वे हिंदुओं के साथ मित्रवत जीवन नहीं जीना चाहते, तो खुलकर ऐसा कहें। उस स्थिति में हिंदुओं को पूर्वी बंगाल छोड़कर कहीं और चले जाना चाहिए। शरणार्थी हमेशा के लिए शरणार्थी नहीं रह सकते। लेकिन अगर पूर्वी बंगाल का हर हिंदू चला भी जाए, तो भी मैं पूर्वी बंगाल के मुसलमानों के बीच रहना जारी रखूंगा। दूसरी ओर, यदि आप चाहते हैं कि हिंदू आपके बीच रहें, तो आपको उनसे कहना चाहिए कि उन्हें सुरक्षा के लिए सेना की ओर नहीं, बल्कि अपने मुस्लिम भाइयों की ओर देखना चाहिए।' आंशिक उपवास का असर 77 वर्षीय गांधी जी पर साफ दिखाई दे रहा था। उनका आहार प्रतिदिन 600 कैलोरी से भी कम था। अंततः, अपनी शक्ति बचाने के लिए, काफी सोच-विचार के बाद, उन्होंने अपने दल के दो सदस्यों द्वारा बांस के डंडे पर टंगी कुर्सी पर बिठाकर

प्रार्थना स्थल तक आने-जाने की अनुमति दी। उनकी आवाज कमजोर हो गई थी और उनके चेहरे पर पीड़ा की गहरी लकीरें थीं। लेकिन जब वे बोलते थे तो उनमें क्रोध का कोई निशान नहीं होता था और न ही वे अधीर होते थे। उनके भाषण अत्यंत स्पष्ट और ईमानदार होते थे, जिनमें कुछ भी छिपाया नहीं जाता था, कुछ भी रोका नहीं जाता था, कुछ भी दबाया नहीं जाता था। 11 नवंबर को गांधी जी ने नोआखोला, सोनाचक और खिलपारा का दौरा किया, ये सभी रामगंज पुलिस स्टेशन के अंतर्गत आते थे। उन्होंने कार से और फिर छोटी डोंगी से यात्रा की, जिन्हें जलमार्गों पर डंडों से चलाया जाता था। नोआखोला में एक हिंदू परिवार के आठ सदस्यों की हत्या हुई थी, जिनमें एक 15 वर्षीय लड़का भी शामिल था। सोनाचक में गांधी जी ने देखा कि सौ से अधिक परिवारों की एक बस्ती को सुनियोजित तरीके से लूटा गया, जलाया गया और आंशिक रूप से ध्वस्त कर दिया गया था। अगले दिन, जब गांधी जी शरणार्थियों से भरी एक प्रार्थना सभा को संबोधित कर रहे थे, तब एक मौलवी ने घोषणा की कि पूर्वी बंगाल छोड़कर जाने की संभावना से मुसलमान 'दुखी और भयभीत' महसूस कर रहे हैं। उन्होंने सभा को आश्वासन दिया कि 'हजारों की संख्या में' मुसलमान उनका स्वागत करेंगे। गांधी जी ने उन्हें याद दिलाया कि उन्हें केवल ईमानदारी चाहिए, खोखली बातें नहीं। उन्होंने कहा कि शरणार्थियों की वापसी आसान काम नहीं है और यह भी कहा कि मुस्लिम लीग के सच्चे सहयोग के बिना कोई भी वापसी योजना सफल नहीं होगी। गोमाटोली और नंदीग्राम की यात्रा के बाद, नोआखली से होकर तीर्थयात्रा का पहला चरण पूरा हुआ। अगला चरण अहिंसा के अस्त्र-प्रबंधन और उसके सबसे कुशल प्रतिपादक के लिए एक नया प्रयोग था। नंदीग्राम में भी गांधीजी का स्वागत उसी भयावह स्थिति में हुआ: लगभग छह सौ घरों, एक स्कूल, छात्रावास और अस्पताल वाला एक गाँव

राख में तब्दील हो चुका था। 14 नवंबर को गांधीजी ने अपना शिविर दत्तापारा से काजीरखिल स्थानांतरित कर दिया और तबाह हुए इलाकों के बीचोंबीच पहुँच गए। रास्ते में वे हिंसा के केंद्र शमपुर में रुके। शमपुर स्वघोषित सर्वोच्च सेनापति मियां गुलाम सरवर का गढ़ था। गांधीजी के आने से पहले, सरवर ने यह अफवाह फैलाई थी कि महात्मा गांधी के साथ बड़ी संख्या में पुलिसकर्मी हैं और उनके दल में सादे कपड़ों में पुलिसकर्मी शामिल हैं जो नियोजित जनसभा का उपयोग मुसलमानों की पहचान करने और उन्हें गिरफ्तार करने के लिए करेंगे। इससे स्थानीय मुसलमानों ने सभा का आंशिक बहिष्कार कर दिया।
काज़ीरखिल में, गांधीजी का शिविर एक समृद्ध स्थानीय हिंदू के आंशिक रूप से क्षतिग्रस्त घर में स्थापित किया गया था। स्वयंसेवकों के एक अग्रिम दल ने उस स्थान की सफाई करके उसे रहने योग्य बना दिया था। शाम की प्रार्थना के बाद बोलते हुए, गांधीजी ने कहा कि उन्हें अपने आसपास शांति तो मिली, लेकिन आसपास के लोगों के चेहरों पर नहीं। उन्होंने दक्षिण अफ्रीका में बीस वर्षों तक और भारत में पिछले तीस वर्षों से सरकार के विरुद्ध एक कठिन संघर्ष किया था। लेकिन उन्होंने बंगाल से खाली हाथ न लौटने का निश्चय कर लिया था। काज़ीरखिल से चार मील दक्षिण-पूर्व में दासघरिया गाँव था। गांधीजी की एक धर्मनिष्ठ मुस्लिम अनुयायी और उनके आश्रम की निवासी बीबी अमतुस सलाम ने यहाँ एक राहत शिविर स्थापित किया था। उनके प्रयासों के कारण जबरन इस्लाम में परिवर्तित की गई लगभग सभी अपहृत महिलाओं को बचा लिया गया था। नोआखली में गांधीजी के शांति मिशन द्वारा लाया गया एक सकारात्मक परिवर्तन यह था कि जल्द ही जबरन धर्मांतरित किए गए सभी लोग अपने मूल धर्म में वापस लौटने में सक्षम हो गए।

तब गांधीजी ने अपने शांतिदूतों के समूह को विदा करने का निर्णय लिया। प्रत्येक व्यक्ति को एक गाँव में भेजा जाएगा जहाँ वे पुनर्वास और शांति स्थापना के लिए शिविर स्थापित करेंगे। उन्होंने उनसे कहा कि यह अहिंसा में उनके विश्वास की सर्वोच्च परीक्षा है। 'या तो अहिंसा जीवन का नियम है या नहीं।' उन्होंने याद किया कि कैसे एक मित्र उनके अहिंसा में विश्वास को लेकर उनसे बहस करता था। वह कहता था कि पतंजलि के योग सूत्र में अहिंसा सूत्र—अहिंसा प्रतिष्ठायं तत्सन्निधौ वैरत्यगः (पूर्ण अहिंसा की उपस्थिति में समस्त शत्रुता नष्ट हो जाती है) — गलत है और इसमें संशोधन की आवश्यकता है; और 'अहिंसा परमोधर्मः' (अहिंसा सर्वोच्च धर्म है) को 'अहिंसा परमो-अधर्म' (अहिंसा परम अधर्म है) पढ़ा जाना चाहिए। गांधी का मानना था कि यदि इस महत्वपूर्ण क्षण में उनका अहिंसा में विश्वास डगमगा जाए, तो उन्हें संशोधन स्वीकार करना होगा, और उन्होंने आगे कहा कि 'यदि अहिंसा लुप्त हो जाए, तो हिंदू धर्म लुप्त हो जाएगा।'
उनकी पार्टी के एक सदस्य ने टिप्पणी की, 'यह मुद्दा धार्मिक नहीं बल्कि राजनीतिक है। यह हिंदू विरोधी आंदोलन नहीं बल्कि कांग्रेस विरोधी आंदोलन है।'
गांधी ने उत्तर देते हुए कहा, 'क्या आपको नहीं दिखता कि वे सोचते हैं कि कांग्रेस पूरी तरह से एक हिंदू संगठन है? और यह मत भूलिए कि मेरे मन में धार्मिक, राजनीतिक या अन्य कोई स्पष्ट विभाजन नहीं हैं। क्या इस उलझन का हल हिंसा से निकलेगा या अहिंसा से— यही सवाल है।' एक मित्र को लिखे पत्र में उन्होंने लिखा, 'यहाँ जो काम मैं कर रहा हूँ, शायद वही मेरा अंतिम कार्य हो। अगर मैं यहाँ से जीवित और सुरक्षित लौट आया, तो यह मेरे लिए एक नए जन्म के समान होगा। यहाँ मेरी अहिंसा की ऐसी परीक्षा हो रही है जैसी

पहले कभी नहीं हुई।' गांधी ने घोषणा की कि पूर्वी बंगाल में अपने प्रवास के दौरान वे एक मुस्लिम के घर में रहेंगे, अधिमानतः बंगाल सरकार द्वारा अनुमोदित मुस्लिम लीग के सदस्य के घर में। अब्दुल गोफरान से बातचीत के दौरान उन्होंने यह अनुरोध किया, लेकिन मंत्री अचंभित रह गए। वे एक अनजान व्यक्ति के घर में कैसे रहेंगे? उनकी देखभाल कौन करेगा? गांधी ने उत्तर दिया, 'मैं अपनी देखभाल स्वयं करूँगा; मुझे किसी की देखभाल की आवश्यकता नहीं होगी।'
'तो मुझे खेद है,' गोफ्रान ने उत्तर दिया, 'कोई भी मुस्लिम परिवार आपको अपने यहाँ स्वीकार नहीं करेगा!' लेकिन गांधी जी ने अपना मन बना लिया था। वे जानते थे कि यदि हिंदू उन्हें मुस्लिम लीग के मित्र के साथ अकेले रहते हुए देखेंगे, तो शायद उनका हृदय परिवर्तन हो जाए। मुसलमान भी उन्हें करीब से परख सकेंगे। 'जब मैं आगा खान महल में नजरबंद था,' उन्होंने कहा, 'एक बार मैं भारत को अहिंसा के समर्थक के रूप में एक शोध प्रबंध लिखने बैठा था। जैसा कि हम जानते हैं, हिंदू धर्म के दो पहलू हैं। एक ओर ऐतिहासिक हिंदू धर्म है जिसमें छुआछीटी, अंधविश्वासपूर्ण पूजा, पशु बलि आदि शामिल हैं। दूसरी ओर, गीता, उपनिषद और पतंजलि के योग सूत्र का हिंदू धर्म है, जो अहिंसा का शिखर है, समस्त सृष्टि की एकता, एक सर्वव्यापी, निराकार, अविनाशी ईश्वर की शुद्ध पूजा। मेरा मानना है कि अहिंसा ही जीवन का मार्ग है और भारत को इसे विश्व को दिखाना होगा।'
20 नवंबर को गांधीजी अपने दल से विदा हुए। अपने स्टेनोग्राफर और प्रोफेसर निर्मल कुमार बोस (जो उनके दुभाषिया भी थे) के साथ वे बांस की बनी एक डोंगी में सवार हुए। एक बयान में गांधीजी ने कहा: 'मैं खुद को अतिशयोक्ति और झूठ के बीच पाता हूं। मैं सत्य

को खोज नहीं पा रहा हूं। चारों ओर घोर अविश्वास का माहौल है। सत्य और अहिंसा, जिनकी मैंने शपथ ली है और जिन्होंने मेरी जानकारी के अनुसार मुझे साठ वर्षों तक सहारा दिया है, वे उन गुणों को प्रदर्शित करने में विफल प्रतीत होते हैं जो मैंने उन्हें दिए हैं।' उनकी परीक्षा लेने के लिए, या बेहतर कहें तो अपनी परीक्षा लेने के लिए, मैं श्रीरामपुर नामक गाँव जा रहा हूँ, उन लोगों से खुद को अलग कर रहा हूँ जो इतने वर्षों से मेरे साथ रहे हैं और जिन्होंने मेरा जीवन आसान बनाया है... मेरे साथ आए अन्य कार्यकर्ता नोआखली के अन्य गाँवों में जाकर दोनों समुदायों के बीच शांति का कार्य करेंगे, यदि संभव हो तो... बंगाल के बाहर के कई मित्रों ने मुझे पत्र लिखकर शांति कार्य के लिए आने की अनुमति मांगी है, लेकिन मैंने उन्हें आने से दृढ़तापूर्वक मना किया है। अगर मुझे इस घोर अंधकार में कोई उम्मीद की किरण दिखाई देती है, तो मैं उन्हें अवश्य आने दूँगा। इस बीच... मैंने पत्राचार से संबंधित सभी अन्य गतिविधियों को स्थगित करने का निर्णय लिया है, जिसमें हरिजन और उससे संबंधित साप्ताहिक पत्रिकाओं का भारी काम भी शामिल है...
खली नदी में ढाई घंटे की यात्रा के बाद, डोंगी श्रीरामपुर में आकर रुकी, जो रामगंज पुलिस स्टेशन के अंतर्गत आने वाला एक छोटा सा गाँव था। गांधीजी डोंगी से उतरे और अपना सामान लेकर उस छोटी सी टिन की झोपड़ी में गए जो उनके रहने के लिए व्यवस्थित की गई थी। यह झोपड़ी एक हिंदू परिवार का परित्यक्त घर था जो दंगों के दौरान भाग गया था। हिंसा से पहले, श्रीरामपुर में 382 मुस्लिम और 200 हिंदू परिवार रहते थे। अब केवल तीन हिंदू परिवार ही बचे थे, बाकी सब डर के मारे भाग गए थे। गांधीजी ने लकड़ी के तख्ते पर अपना गद्दा बिछाया, जो अगले छह हफ्तों तक रात में उनका बिस्तर

और दिन में उनका कार्यालय होने वाला था। उन्होंने अपनी किताबें, लेखन सामग्री और अन्य निजी सामान कमरे में करीने से व्यवस्थित किए। यह झोपड़ी एक खुले मैदान के बीच में थी, जो तालाबों और हरे-भरे धान के खेतों से घिरी हुई थी।
पिछले कुछ वर्षों से गांधीजी की पोती आभा उनकी देखभाल कर रही थीं और वे उनकी सेवाओं पर निर्भर हो गए थे। वे उनके साथ नोआखली भी गई थीं, लेकिन उन्होंने उन्हें नोआखली जिले के चार मंडल क्षेत्र में ठक्कर बप्पा द्वारा स्थापित पुनर्वास शिविर में काम करने के लिए नियुक्त किया था। उन्होंने लिखा, 'मुझे यह स्वीकार करना होगा कि मैं उनकी सेवा का आदी हो गया था, मानो यह मेरी आदत बन गई हो। लेकिन किसी विशेष व्यक्ति से सेवा लेने की आदत तपस्या के अनुरूप नहीं है।' यहाँ उनके दैनिक भोजन में दोपहर के भोजन के रूप में एक पौंड बकरी का दूध और उतनी ही मात्रा में सब्जी का सूप शामिल होता था। रात के खाने में वे यही मिश्रण लेते थे, जिसमें एक अंगूर भी मिला होता था।
प्यारेलाल की किताब से लिए गए उनके डायरियों के अंशों से हमें श्रीरामपुर में उनकी दैनिक गतिविधियों का अंदाजा लग सकता है। श्रीरामपुर, 21 नवंबर, 1946
मैंने गीता के अध्यायों को छोड़कर स्वयं सुबह की नमाज़ पढ़ाई। नमाज़ के बाद मैंने X.Y. और Z.A. को पत्र लिखे। हावड़ा मस्जिद [नोआखली] से जुड़े एक मौलवी ने सुबह की सैर के दौरान मुझसे बात की। बाद में A. और B. [दो हिंदू कार्यकर्ता] आए और उन्होंने मुझसे काफी देर तक बात की। मैंने उनसे कहा कि लोगों को हिम्मत जुटाकर अपने गांवों में लौटना चाहिए, खासकर जहां एक अच्छा हिंदू और एक अच्छा मुसलमान सुरक्षा और संरक्षण की गारंटी दे सकें...

मैंने अपने हाथों से शरीर की मालिश की, लेकिन समय की कमी के कारण दाढ़ी नहीं बना पाया। दोपहर के भोजन में दही के साथ सब्जी का सूप पिया। शाम की नमाज़ से पहले कुछ मुसलमानों ने मुझे देखा; नमाज़ के बाद कुछ और आए। मैंने स्थानीय मुसलमानों के बारे में जानकारी ली। एम. और उसके दोस्तों से दो घंटे बात की। भोजन कल जैसा ही था, बस अंगूर नहीं खाया।
श्रीरामपुर, 22 नवम्बर, 1946
मैं सुबह 4 बजे उठी। गीता पाठ में दो घंटे लगे। पाठ करने वाले का उच्चारण बहुत ही असंतोषजनक था।
आर. को लिखा कि उनके बेटे (जिसकी पत्नी का हाल ही में निधन हो गया है) को पुनर्विवाह नहीं करना चाहिए, या यदि आवश्यक हो तो किसी विधवा से विवाह करना चाहिए।
मैंने सुबह 7:30 बजे एक मुस्लिम मठ में दर्शन किए। रास्ता लंबा था। वहाँ पहुँचने में पूरे 20 मिनट लगे—आने-जाने में कुल 55 मिनट।
मैंने कल की तरह ही मसाज की... सुबह 10:30 बजे कई लोग आए। उनके जाने के बाद, पेट पर मिट्टी की पट्टी लगाकर थोड़ी देर झपकी ली। एक घंटे तक करवटें बदलीं। अब्दुल्ला (पुलिस अधीक्षक) कुछ अन्य लोगों के साथ शाम को रामगंज में बैठक के लिए आए। मैं उनके साथ शाम 4 बजे रामगंज के लिए रवाना हुआ। शाम 5:20 बजे रामगंज पहुंचा। बैठक रात 10:30 बजे तक चली। अंत में मैंने कुछ शब्द कहे... वापसी यात्रा में नाव पर शाम की नमाज पढ़ी और फिर थोड़ी देर सो गया। रामगंज जाते समय दूध पिया; वापसी में गर्म पानी पिया। आधी रात को श्रीरामपुर पहुंचा।
श्रीरामपुर, 23 नवंबर, 1946

मैंने स्वयं भी सुबह की प्रार्थना के दौरान गीता के अध्यायों का पाठ किया। भविष्य में आर को गीता का पाठ तभी करना है जब वह उच्चारणों में पूरी तरह निपुण हो जाए। प्रार्थना के दौरान एक अंग्रेजी भजन भी गाया गया।
मालवियाजी की मृत्यु पर बयान पूरा किया। सुबह 7:30 बजे एक मुस्लिम घर में जाकर वहां के लोगों से कुरान के बारे में बात की। बाद में उन्होंने नारियल और संतरे उपहार में भेजे।
एन. ने मालिश की जिससे मुझे मालिश की मेज पर चालीस मिनट की झपकी लेने का मौका मिला। दोपहर में परोसी गई पत्तेदार सब्जी बहुत कड़वी थी। मैंने उसे 1 औंस नारियल के दूध के साथ लिया... फिर सोने की कोशिश की लेकिन जी मिचलाने लगा और पेट में दर्द होने लगा। रामगंज जाते समय पेट पर मिट्टी की पट्टी लगाकर झपकी आ गई... तेज दस्त और उल्टी के कारण नाव रोकनी पड़ी... राहत मिली... शाम 5 बजे रामगंज पहुंचा। अवकाश के दौरान फिर शौच हुआ लेकिन अंत में बिना किसी कठिनाई के सभा को संबोधित कर सका। रात 8.15 बजे वापसी की यात्रा शुरू की... रात 11 बजे श्रीरामपुर पहुंचा... सभा के लिए जाते समय नाव पर और सभा में ही सूत कातने का काम पूरा किया।
1 दिसंबर को दिनभर के थका देने वाले काम के बाद गांधीजी ने लिखा: 'कमर में दर्द हो रहा है। बिस्तर पर लेटे-लेटे हरिजन के लिए एक लेख संशोधित किया। बीच में ही नींद आ गई।' गांधीजी दोनों हाथों से काम कर सकते थे; और 2 दिसंबर की प्रविष्टि में लिखा है: 'बस करना होगा। अब तो बायां हाथ भी दुख रहा है और काम करना बंद कर दिया है। रात 9:30 बजे बिस्तर पर।'
8 दिसंबर को, उनकी डायरी में साप्ताहिक मौन के पालन में हुई चूक के संदर्भ में निम्नलिखित बातें दर्ज हैं: 'मुझे लगता है कि

मेरा मौन का अनुशासन केवल ऊपरी तौर पर ही है। मौन एक महान कला है, जिसमें महारत हासिल करना आसान नहीं है।'
20 दिसंबर को गांधी जी ने श्रीरामपुर में एक महीना पूरा किया। एक समाचार पत्र में लिखा था, 'वे यहाँ दोनों समुदायों के मित्र हैं। गाँव के मुसलमान और हिंदू उनसे मदद मांगने में संकोच नहीं करते। वे उनके मित्र, दार्शनिक और मार्गदर्शक हैं... अपने एकांत जीवन में वे सब कुछ स्वयं करने का प्रयास करते हैं... अपना भोजन स्वयं पकाते हैं... अपनी चीजें स्वयं व्यवस्थित करते हैं, अपने शरीर की मालिश स्वयं करते हैं और स्वयं ही अपने चिकित्सक की भूमिका निभाते हैं।' एक अन्य समाचार पत्र में लिखा था, 'महात्मा गांधी अपना अधिकांश समय गरीबों और बीमारों की सेवा में व्यतीत कर रहे हैं। कल सुबह वे एक मुसलमान के घर गए जहाँ उन्होंने डॉ. सुशीला नैयर द्वारा इलाज किए जा रहे मरीजों को देखा। दोपहर में वे एक अन्य मुसलमान के घर चिकित्सा सहायता देने गए। शाम को वे प्रेस शिविर गए और बिस्तर पर पड़े एक पत्रकार की देखभाल की।' एक रिपोर्ट में कहा गया, 'वे तेज चलते हैं। पिछले शनिवार को वे संकरी गाँव की सड़क पर उत्कृष्ट गति से चले, दो खतरनाक पुलों को पार किया और लगभग 2 मील की दूरी 40 मिनट में तय की।' उन्होंने अपनी शाम और सुबह की सैर भी बढ़ा दी है... एक अन्य रिपोर्ट में कहा गया है: 'गांधीजी को कर्मचारियों या अन्य लोगों से घिरे रहना पसंद नहीं है। आपातकालीन स्थिति को छोड़कर किसी को भी उनके शिविर में रात बिताने की अनुमति नहीं है। एक व्यक्ति नागपुर से इतनी दूर चलकर आया था, लेकिन यहाँ उसका विशेष कार्य समाप्त होते ही उसे तुरंत वापस भेज दिया गया। एक महिला जो उपवास पर थी, कल यहाँ आई और गांधीजी के सामने अपना उपवास तोड़ा... उसे भी तुरंत वापस भेज दिया गया।'

एक स्थानीय मौलवी के घर जाकर गांधीजी को पता चला कि 1400 की कुल आबादी में से केवल एक ही मैट्रिक पास था और केवल 40 ही पढ़-लिख सकते थे। उनमें से एक हजार लोग कुरान पढ़ सकते थे, लेकिन उनमें से कोई भी यह नहीं समझ पाता था कि वे क्या पढ़ रहे हैं। फिर भी मौलवी का दावा था कि बड़ी संख्या में लोगों ने स्वेच्छा से और स्वाभाविक रूप से इस्लाम धर्म अपना लिया था। गांधीजी ने अपनी डायरी में लिखा: 'उन्हें [मुसलमानों को] उनके पवित्र ग्रंथ के अर्थ से अनजान रखना बहुत बुरा है।' इसके बाद, जब भी वे मुसलमानों से बात करते, तो वे उनके साथ कुरान पर चर्चा करते और अपनी क्षमता के अनुसार आयतों के अर्थ समझाते। इससे कई मुल्ला नाराज हो गए क्योंकि उन्हें लगा कि गांधीजी उनके क्षेत्र में अतिक्रमण कर रहे हैं। अब गांधीजी ने बंगाली सीखने का फैसला किया ताकि उन्हें दुभाषिए पर निर्भर न रहना पड़े। बाकी सब चीजों की तरह, उन्होंने बंगाली भाषा को भी लगन से सीखना शुरू कर दिया। उनके समकालीनों में से एक की डायरी में लिखा एक नोट गांधीजी की लगन को प्रमाणित करता है: बंगाली अक्षर लिखने का अभ्यास करने के लिए, उन्होंने अपनी अभ्यास पुस्तिका में छोटे-छोटे वर्ग बनाए, ठीक वैसे ही जैसे कोई छोटा बच्चा करता है। जब मैंने इस पर उनका मज़ाक उड़ाया, तो उन्होंने उत्तर दिया, "मेरे शिक्षक हमें वर्णमाला के अक्षर इसी तरह बनाना सिखाते थे। यह एक उत्तम विधि है। लोग सोचते हैं कि स्कूली शिक्षा समाप्त होने पर व्यक्ति विद्यार्थी नहीं रह जाता। मेरे लिए यह बात बिल्कुल उलट है। मेरा मानना है कि जब तक मैं जीवित हूँ, मेरे भीतर एक विद्यार्थी की जिज्ञासु प्रवृत्ति और सीखने की प्यास बनी रहनी चाहिए।" फलों का रस पीने के बाद वे अपनी बंगाली की प्रारंभिक पुस्तक को ध्यान से पढ़ने लगे। पढ़ते-पढ़ते उन्हें लगभग दस मिनट की झपकी आ

गई और वे सुबह 7:15 बजे उठे। सुबह 7:25 बजे हमने अपनी दिन की यात्रा शुरू की और पूरे एक घंटे चलने के बाद सुबह 8:25 बजे वहाँ पहुँचे। वहाँ पहुँचते ही वे फिर से बंगाली पाठ करने बैठ गए। यह लगन उनके जीवन के अंतिम दिन तक जारी रही। यह आखिरी अभ्यास 30 जनवरी 1948 को उनकी हत्या से कुछ घंटे पहले किया गया था।
22 नवंबर को रामगंज डाक बंगले में तीस हिंदू, मुस्लिम और सरकारी प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन आयोजित किया गया। बंगाल सरकार द्वारा प्रस्तुत सुझावों के अनुसार शांति स्थापित करने की योजना तैयार की गई और रामगंज पुलिस स्टेशन के लिए एक शांति समिति का गठन किया गया। सर्वसम्मति से स्वीकृत सूत्र के अनुसार, शांति समिति में हिंदू और मुस्लिम सदस्यों की संख्या बराबर थी। गांवों के लिए शांति समितियां, ग्राम संघ और एक पुलिस स्टेशन भी गठित किए गए। किसी भी असहमति की स्थिति में, जिला मजिस्ट्रेट पूर्ण शक्तियों के साथ अंतिम मध्यस्थ होंगे। शांति समिति को पीड़ितों में विश्वास बहाल करने के लिए व्यापक रूप से काम करना था। उन्हें लौटने वाले शरणार्थियों के आवासों का पुनर्निर्माण करना था; शरणार्थियों को भोजन, राशन और वस्त्र उपलब्ध कराना था; अपराधियों की सूची तैयार करनी थी और उनकी गिरफ्तारी सुनिश्चित करनी थी।
शांति समिति की पहली बैठक 25 तारीख की शाम को रामगंज पुलिस स्टेशन में हुई। पश्चिम बंगाल सरकार के मंत्री शम्सुद्दीन अहमद ने घोषणा की कि पूर्वी बंगाल में शांति बहाल करने के लिए हाल ही में सात केंद्रीय शांति समितियां गठित की गई हैं और वे कार्यरत हैं। उन्होंने आश्वासन दिया कि बंगाल सरकार अपने अल्पसंख्यक नागरिकों का विश्वास जीतने के लिए पूरी तरह प्रतिबद्ध है। अंत में बोलते हुए गांधीजी ने कहा कि इस योजना की

सफलता समिति में शामिल लोगों पर निर्भर करेगी। कुछ मुसलमानों द्वारा शांति समितियों में जगह पाने की होड़ से वे चिंतित थे। इससे उनके मन में भय का भाव उत्पन्न हुआ, क्योंकि उन्हें लगा कि राज्य के कुछ हिस्सों में अभी भी अशांति पनप रही है। उन्हें हाल ही में संदीप द्वीप से एक टेलीग्राम मिला था जिसमें वहां गंभीर अशांति की सूचना दी गई थी। छेड़छाड़ के डर से महिलाओं ने माथे पर सिंदूर लगाना बंद कर दिया था।
24 नवंबर की सुबह, शरत चंद्र बोस अपने कुछ मित्रों और सहयोगियों के साथ श्रीरामपुर में गांधीजी से मिले। उन्होंने शांति बहाल करने के प्रति मंत्रियों और बंगाल के मुख्यमंत्री की निष्ठा पर संदेह व्यक्त किया। उन्होंने गांधीजी को बताया कि उन्होंने सुहरवर्दी के साथ दंगा प्रभावित क्षेत्रों में डेरा डालने और शांति स्थापित करने के लिए काम करने का प्रस्ताव दिया था। हालांकि, मुख्यमंत्री और उनके सहयोगियों ने झूठे बहाने बनाकर इस विचार को टाल दिया। गांधीजी ने बोस की बात से सहमति जताते हुए कहा कि मंत्रीजी वास्तव में निम्नतम स्तर तक गिर चुके हैं। एक सदस्य ने शिकायत की कि नेहरू और राजेंद्र प्रसाद ने बिहार में हस्तक्षेप किया, लेकिन बंगाल में नहीं। गांधी ने उत्तर देते हुए कहा कि केंद्रीय सरकार के उत्तरदायी सदस्य होने के साथ-साथ वे दोनों कांग्रेस के प्रतिष्ठित नेता भी थे। अंतरिम सरकार में उन्हें उस संस्था द्वारा निर्धारित प्रक्रियाओं का पालन करना था, इसलिए वे प्रांतीय सरकारों, जैसे कि बंगाल की सरकार, के अधिकार क्षेत्र में आने वाले मामलों में हस्तक्षेप नहीं कर सकते थे। जब उनसे पूछा गया कि धर्मांतरण का उनका विरोध उन्हें केवल हिंदू दक्षिणपंथी और हिंदू समुदाय से जोड़ता है, तो उन्होंने उत्तर दिया कि उन्हें व्यक्तिगत रूप से किसी

व्यक्ति द्वारा चुने गए धर्म से कोई आपत्ति नहीं है। हालांकि, इस तरह के धर्मांतरण अपने स्वभाव से ही बड़े पैमाने पर नहीं हो सकते और न ही कभी किसी की जान या संपत्ति बचाने या सांसारिक लाभ के लिए किए जा सकते हैं। नोआखली में जो हुआ वह सभी धर्मों का घोर अपमान और उल्लंघन था।
एक मत यह था कि बंगाल से कुछ ऐसे क्षेत्र अलग किए जाएं जहां अल्पसंख्यकों की विशेष बस्तियां स्थापित की जा सकें। गांधी जी ने इस मांग का विरोध किया और कहा कि इससे भविष्य में एक एकीकृत भारत को खतरा होगा। हिंदू महासभा के सदस्यों का एक प्रतिनिधिमंडल, जिसका नेतृत्व उनके नेता एन.सी. चटर्जी कर रहे थे, गांधी जी से मिला और ऐसी 'बस्तियों' के निर्माण के खिलाफ तर्क दिया। गांधी जी ने उन्हें बताया कि यह एक खतरनाक और अव्यवहारिक समाधान है, क्योंकि किसी भी प्रकार के समूह को उसकी अधिक संख्या से आसानी से पराजित किया जा सकता है। इसका मतलब यह होगा कि देश स्थायी रूप से शत्रुतापूर्ण वर्गों में विभाजित हो जाएगा जो एक प्रकार की सशस्त्र संधि का आनंद लेंगे। 'चाहे वे संख्या में हों या संख्या में, पूर्वी बंगाल के हिंदुओं को साहस का हुनर सीखना होगा। मान लीजिए कि बिहार के मुसलमान बिहार में मुस्लिम बस्तियां बनाना चाहते हैं; तो बिहार की हिंदू आबादी इसे एक संभावित खतरे के रूप में देखेगी। उसी प्रकार, ऐसे क्षेत्रों का निर्माण पूर्वी बंगाल के हिंदुओं के लिए अच्छा नहीं होगा।'
नोआखली में राहत संगठनों और राहतकर्मियों की बाढ़ आ चुकी थी। लगभग तीस राहत संगठन और आधा दर्जन चिकित्सा मिशन पीड़ितों के बीच काम कर रहे थे। गांधी जी का हर गाँव में एक कार्यकर्ता भेजने का मिशन अब बीस गाँवों में कारगर हो चुका था। चारों ओर से

सहायता आ रही थी। उन्हें डर था कि इतनी सहायता और स्वयंसेवकों के कारण सरकार अपनी जिम्मेदारियों में ढिलाई बरतेगी। सेना से मुक्त हुए और हाल ही में रिहा हुए भारतीय सेना के जवान गांधी जी की सहायता के लिए नोआखली आए थे। उनके नेता सरदार निरंजन सिंह गिल ने गांधी जी से नोआखली में उन्हें कार्य सौंपने का अनुरोध किया। मुस्लिम लीग ने अपने बीच भारतीय सेना के जवानों की इतनी बड़ी संख्या की उपस्थिति पर चिंता व्यक्त की थी। गांधी जी ने सिंह को सलाह दी कि वे राहत कार्य शुरू करने से पहले सुहरावर्दी से अनुमति लें। सुहरावर्दी को अपने मंत्रिमंडल के सहयोगियों और मुस्लिम लीग के सदस्यों से गांधी जी और उनके कार्यकर्ताओं को नोआखली में खुली छूट देने के लिए लगातार आलोचना का सामना करना पड़ रहा था। कुछ मुस्लिम लीग के कट्टरपंथियों ने गांधी जी के खिलाफ दुष्प्रचार अभियान शुरू कर दिया था, उन पर लीग को बदनाम करने के लिए नोआखली में लंबे समय तक रहने और शांति स्थापित करने में बाधा डालने का आरोप लगाया था। सुहरावर्दी ने निरंजन सिंह से विनती की कि वे अपनी स्थिति और खराब न करें। हालांकि, उस समय मुस्लिम लीग का केंद्रीय नेतृत्व पंजाब के सिखों को उत्तर-पश्चिम में अपने समूह में शामिल करने के लिए पुरजोर प्रयास कर रहा था, ताकि सिखों के समर्थन से मुस्लिम लीग नई दिल्ली तक पूरे उत्तर-पश्चिम प्रांत पर अपना दावा कर सके। सुहरावर्दी को सिखों को नाराज न करने का आदेश भेजा गया, और इस प्रकार सिंह को अनुमति मिल गई। गांधी ने एक हजार के बजाय केवल सौ स्वयंसेवकों को ही अनुमति दी। इस समूह में पूर्वी बंगाल का एक मुस्लिम, पंजाब का एक मुस्लिम और दक्षिण भारत का एक गैर-सिख शामिल था। अंततः आईएनए के अधिकांश स्वयंसेवकों को वापस भेज दिया गया; केवल कर्नल जीवन सिंह के नेतृत्व में एक दल

श्रीरामपुर में गांधी के शिविर का प्रभारी बना रहा और दंगाग्रस्त जिलों में उनके गांव-गांव पैदल मार्च में उनके साथ रहा। अंततः इस समूह को भी वापस भेज दिया गया जब गांधी मार्च 1947 में बिहार के लिए रवाना हुए। हालांकि, जीवन सिंह अन्य स्वयंसेवकों के साथ नोआखली में गांधी शिविरों में काम करते रहे।
जल्द ही गांधीजी के कार्यों का असर दिखने लगा। मुस्लिम परिवार अविश्वास और संदेह की बेड़ियों को तोड़कर उन्हें अपना मित्र मानने लगे। वे उनकी प्रार्थना सभाओं में बड़ी संख्या में आने लगे और उनकी दैनिक सैर के दौरान उनके आसपास जमा होने लगे। हिंदू भी इससे अछूते नहीं रहे। दिसंबर के तीसरे सप्ताह में एक संवाददाता ने बताया, 'नोआखली में गांधीजी की निरंतर उपस्थिति से प्रभावित लोगों में धीरे-धीरे लेकिन लगातार विश्वास बहाल हो रहा है। विस्थापित लोग अब अपने घरों को लौट रहे हैं।' एक अन्य संवाददाता ने बताया, 'महात्मा जी द्वारा सांप्रदायिक समस्या के समाधान का तरीका एक उत्कृष्ट विधि साबित हुआ है। इसके पूर्ण परिणाम मिलने में समय लग सकता है; आत्मा को छूने वाली अपील में हमेशा समय लगता है, लेकिन यह हमेशा एक निश्चित और अधिक स्थायी विधि है... यह ऊपर से थोपी गई शांति नहीं है, बल्कि भीतर से उत्पन्न होने वाली शांति है।' देश के अन्य हिस्सों में भी लोगों ने इस बदलाव को महसूस किया; हालांकि, कई संशयवादी भी थे, जिनमें से एक सी. राजगोपालाचारी थे। 19 नवंबर को, गांधीजी के श्रीरामपुर प्रस्थान की पूर्व संध्या पर, उन्होंने प्यारेलाल को लिखे पत्र में कहा: 'बापू कब लौट रहे हैं? वहाँ इतने लंबे समय तक रहने का क्या लाभ?... जो भी लाभ हो सकता था, वह हो चुका है... कम पोषण का क्या लाभ? यह खतरनाक है।' दो सप्ताह बाद, राजगोपालाचारी

दिया। वे मुसलमानों के साथ वैसा ही व्यवहार करना चाहते थे जैसा उनमें से कुछ हिंदुओं के साथ कर रहे थे। भारत के लौह पुरुष गांधी जी को उस समय इस बात का एहसास नहीं था, लेकिन बाद में उन्होंने स्वीकार किया कि मुस्लिम लीग मुसलमानों के लिए एक अलग देश की अपनी मांग को मजबूत करने के लिए इसी तरह की प्रतिक्रिया की उम्मीद कर रही थी। संकट के समय गांधी जी की सलाह न मानना और उनके तौर-तरीकों को त्यागना भारत और कांग्रेस दोनों के लिए भारी कीमत चुकाने वाला था। लेकिन गांधी जी को अपने राजनीतिक उत्तराधिकारियों की गलतियों का खामियाजा भुगतना पड़ा।
गांधी और पटेल के बीच पत्राचार सौहार्दपूर्ण और ईमानदार बना रहा, लेकिन पत्रों में व्यक्त विचारों ने दोनों के बीच दूरियों को और बढ़ा दिया। गांधी पटेल के विचारों से असहमत होते हुए और उनके कुछ कार्यों को अस्वीकार करते हुए भी, उन्हें अपने विश्वासों के अनुसार कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करते रहे। इसी दौरान कांग्रेस के भीतर नेहरू समर्थकों ने पटेल को राजनीतिक रूप से कमजोर करने का अभियान चलाया; उनके खिलाफ कई लिखित और मौखिक शिकायतें दर्ज की गईं। गांधी को भेजी गई शिकायतें तुरंत पटेल तक पहुंचा दी गईं। हालांकि पटेल और नेहरू के बीच दरार और दिल्ली की स्थिति पहले से ही तनावग्रस्त गांधी पर भारी पड़ रही थी, फिर भी उन्होंने पूर्वी बंगाल को छोड़कर नई दिल्ली या बिहार जाने से दृढ़तापूर्वक इनकार कर दिया। श्रीरामपुर में उनसे मिलने आए कलकत्ता विश्वविद्यालय के डॉ. अमिया चक्रवर्ती से अपनी आंतरिक उथल-पुथल के बारे में बात करते हुए गांधीजी ने कहा, 'मैं एक भयंकर आग के बीच में हूँ, और जब तक यह बुझ नहीं जाती, तब तक मैं यहाँ से नहीं हटूँगा; इन क्षेत्रों में बुरी तरह प्रभावित पुरुषों और महिलाओं के लिए जीवन को जीने

योग्य बनाना होगा। संगठन का काम जारी रहना चाहिए, और शारीरिक और नैतिक दोनों तरह से उद्धार किया जाना चाहिए।' डॉ. चक्रवर्ती ने उनसे पूछा कि अपराधियों से संपर्क करने के लिए कौन सी तकनीक अपनाई जा सकती है ताकि उनके प्रतिरोध को समाप्त किया जा सके, क्योंकि 'वे न केवल पश्चातापहीन हैं बल्कि अपने कुकर्मों पर अड़ियल और यहाँ तक कि आनंदित भी हैं।' गांधीजी ने उत्तर दिया, 'उनके रवैये का सामना करने का एकमात्र तरीका उनके आगे झुकना नहीं है, बल्कि उनके बीच रहकर सत्य की भावना को बनाए रखना है। मैं प्रकाश की तलाश में भटक रहा हूँ। मैं अंधकार से घिरा हुआ हूँ—लेकिन मुझे सत्य द्वारा निर्देशित होकर कार्य करना होगा या नहीं करना होगा। मुझे लगता है कि इन दुखद परिस्थितियों में मुझमें आवश्यक धैर्य और तकनीक नहीं है—दुख और बुराई अक्सर मुझे अभिभूत कर देते हैं और मैं अपने ही कर्मों में उलझ जाता हूँ।' इसलिए, मैंने अपने दोस्तों से कहा है कि वे मेरा साथ दें और उस विवेक के अनुसार काम करें या न करें जिसकी अब हमसे सख्त अपेक्षा की जाती है। यह अंधकार छंटेगा और अगर मुझे रोशनी दिखाई देती है तो उसे वे लोग भी देखेंगे जिन्होंने बंगाल में हाल ही में हुए सांप्रदायिक हिंसा की त्रासदी को अंजाम दिया था। श्रीरामपुर में अपने प्रवास की आखिरी सुबह का वर्णन करते हुए डॉ. चक्रवर्ती ने लिखा: 'आकाश में तारे अभी भी चमक रहे थे और श्रीरामपुर गाँव शांत था, नए दिन की प्रतीक्षा कर रहा था। सुबह की प्रार्थना के बाद गांधीजी काम पर बैठ गए। उन्हें सफेद वस्त्रों में लिपटा हुआ देखा जा सकता था, उनका माथा चमक रहा था और वे लालटेन की रोशनी में लिखते जा रहे थे। सुबह 7 बजे के बाद वे गाँव में अपनी सुबह की सैर के लिए निकले, ओस से भीगी हुई घास

की गलियों और खतरनाक पुलों को पार करते हुए। उन्होंने खेतों में काम करने जा रहे मुस्लिम किसानों का अभिवादन किया।' नोआखली में गांधीजी के शांति मिशन के प्रति मुस्लिम लीग के कार्यकर्ताओं के बीच व्याप्त विरोध को उनके साथ गए मुस्लिम लीग के संसदीय सचिव हामिदुद्दीन द्वारा जारी एक प्रेस विज्ञप्ति में संक्षेप में व्यक्त किया गया था। हामिदुद्दीन ने कहा, 'श्री गांधीजी का बिहार जाने का कोई इरादा नहीं है... क्या यह सोचना गलत होगा कि श्री गांधीजी नोआखली में केवल वहां की घटनाओं पर दुनिया का ध्यान केंद्रित करने और बिहार की घटनाओं को पृष्ठभूमि में रखने के लिए उन्हें बढ़ा-चढ़ाकर पेश करने के उद्देश्य से गए हैं?... क्या श्री गांधीजी बाहर से आए स्वयंसेवकों की संख्या के माध्यम से अपने संगठन को मजबूत करना चाहते हैं?... श्री गांधीजी आसानी से सभी बाहरी स्वयंसेवकों (पुरुष और महिला दोनों) को जाने के लिए कह सकते हैं और शरणार्थियों को अपने घरों को लौटने की सलाह दे सकते हैं... वहां के हिंदुओं के लिए अब किसी उपदेश या निर्देश की आवश्यकता नहीं प्रतीत होती है और मुसलमानों को इसकी कभी आवश्यकता नहीं पड़ी... बाहरी प्रचार से मुक्त होकर, वे अपने मुस्लिम पड़ोसियों पर विश्वास करना शुरू कर देंगे जिनके साथ वे सदियों से शांतिपूर्वक रहते आए हैं।' हामिदुद्दीन ने जबरन धर्मांतरण की किसी भी घटना से इनकार किया। उन्होंने आरोप लगाया कि प्रेस में व्यापक रूप से प्रसारित नोआखली में हुई मौतों और नरसंहार की अतिरंजित रिपोर्टों का खंडन न करके गांधीजी ने उन्हें विश्वसनीयता प्रदान की। उन्होंने अपने 'खुले पत्र' का समापन करते हुए कहा, 'गांधीजी को अब नोआखली छोड़ देना चाहिए और अपना

बहुमूल्य समय और ऊर्जा किसी और काम में लगानी चाहिए, अगर बिहार के पीड़ितों के लिए नहीं तो।'
श्रीरामपुर में जल्द ही चहल-पहल का माहौल छा गया। कांग्रेस के नव नियुक्त अध्यक्ष नेहरू गांधी से मिलने आ रहे थे। आचार्य कृपलानी और कांग्रेस कार्यकर्ताओं के एक छोटे समूह के साथ वे आधी रात को गांधी शिविर पहुंचे। अगले दिन गांधी और दिल्ली से आए नेताओं की एक झलक पाने के लिए स्थानीय लोगों की भीड़ उमड़ पड़ी थी। अपने गुरु जवाहरलाल नेहरू ने मजाक में कहा, 'तो, यही आपकी एकमात्र यात्रा है!'
'तुम भूल गए कि मैं भी महात्मा हूं!' गांधी ने दिल खोलकर हंसते हुए जवाब दिया।
इस समय तक, कांग्रेस में नेहरू के वफादारों ने पटेल के खिलाफ अपना अभियान शुरू कर दिया था। पटेल के कथित मुस्लिम-विरोधी रवैये के खिलाफ गांधी जी से लगातार मौखिक और लिखित शिकायतें की जा रही थीं। नेहरू के साथ गांधी जी की कट्टर अनुयायी मृदुला साराभाई भी थीं। उन्होंने पटेल के भाषणों के बारे में नेहरू से शिकायत की, जो मुस्लिम लीग की आलोचना से शुरू होकर अब पूरे मुस्लिम समुदाय के खिलाफ होते जा रहे थे। अंतरिम सरकार के कांग्रेस सदस्यों को झेलनी पड़ी उत्पीड़न मुस्लिम लीग की सुनियोजित रणनीति का परिणाम थी; सभी भारतीय मुसलमानों को दोषी ठहराना सही नहीं था। हालांकि, अपने भाषणों के माध्यम से पटेल हिंदू कट्टरपंथियों के कृत्यों को जायज ठहरा रहे थे। बिहार हत्याकांड के अपराधियों को पटेल के समर्थन की गलतफहमी ने और भी बेखौफ बना दिया था। किसी भी तरह से यह आरोप नहीं लगाया जा सकता कि पटेल सांप्रदायिक या हिंदू वर्चस्ववादी थे; उनकी कमजोरी यह थी कि वे गुस्सैल स्वभाव के थे और कभी-कभी बिना सोचे-समझे कुछ भी

बोल देते थे। अंतरिम सरकार में गृह मंत्री के रूप में पटेल में कूटनीति का अभाव था। इसी कारण मुस्लिम लीग ने मुसलमानों के बीच यह अफवाह फैला दी कि पटेल जैसे नेताओं के नेतृत्व में अविभाजित भारत में उनके हितों को खतरा होगा। इससे कांग्रेस के भीतर नेहरू समर्थकों को पटेल को कमजोर करने का अभियान चलाने में आसानी हुई। मृदुला साराभाई और अन्य लोगों की शिकायतें सुनने के बाद गांधी ने पटेल को पत्र लिखा। पटेल ने जवाब में कहा कि यदि गांधी चाहें तो वे मंत्रिमंडल से इस्तीफा देने को तैयार हैं। उन्होंने अपना बचाव करते हुए कहा कि कुछ कांग्रेसी उन्हें निशाना बना रहे हैं और मृदुला को अपने खिलाफ काम कर रहे गुट का नेता बताया। इस प्रकार, भारत के इतिहास के एक महत्वपूर्ण मोड़ पर, कांग्रेस अपने दो प्रमुख नेताओं के बीच आंतरिक कलह के कारण कमजोर पड़ गई।
नेहरू ने गांधीजी को पिछले दो महीनों में नई दिल्ली में घटी घटनाओं की जानकारी दी। उन्होंने लीग की हठधर्मिता, वायसराय लॉर्ड वेवेल के दोहरे व्यवहार और उनके नौकरशाहों के बारे में बताया, जो हर बार लीग के दबाव के आगे झुक जाते थे। वेवेल तो कांग्रेस को उन प्रांतों में भी लीग के साथ गठबंधन सरकार बनाने के लिए मजबूर कर रहे थे, जहाँ कांग्रेस को स्पष्ट बहुमत प्राप्त था। नेहरू ने स्वीकार किया कि समूह से संबंधित अनुच्छेदों की व्याख्या के मुद्दे पर कांग्रेस के साथ विश्वासघात हुआ था। काफी आनाकानी के बाद, ब्रिटिश सरकार ने नेहरू को लंदन में वार्ता के लिए आमंत्रित किया था, और पटेल की आपत्ति के बावजूद नेहरू वहाँ गए, लेकिन उन्हें पता चला कि वार्ता दिखावा थी। 6 दिसंबर को, एचएमजी ने एक 'राज्य अधिनियम' द्वारा समूह अनुच्छेद की व्याख्या से संबंधित विवाद को समाप्त कर दिया। संसद के

दोनों सदनों में यह घोषणा की गई कि एचएमजी को कानूनी सलाह मिली है जिससे यह पुष्टि होती है कि 16 मई के बयान का वही अर्थ है जो वे हमेशा से अपना इरादा बताते आए हैं, अर्थात्, यदि कोई विपरीत समझौता न हो तो, संबंधित क्षेत्रों में मतदान संबंधित क्षेत्रों के प्रतिनिधियों के साधारण बहुमत से होना चाहिए और इस प्रकार व्याख्या किए गए बयान के उस भाग को 16 मई की योजना का अनिवार्य हिस्सा माना जाना चाहिए। संविधान सभा चाहे तो इस मामले को संघीय न्यायालय में भेज सकती थी, लेकिन यदि मुस्लिम लीग को संविधान सभा में आने के लिए राजी नहीं किया जा सका और लीग की भागीदारी के बिना संविधान का निर्माण हुआ, तो देश के वे हिस्से जहां मुस्लिम लीग बहुमत में है, परिणाम से बाध्य नहीं होंगे। इसलिए, एचएमजी इस प्रकार निर्मित संविधान को संसद में स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करने का वचन नहीं देगी, क्योंकि वे 'देश के किसी भी अनिच्छुक हिस्से पर ऐसा संविधान थोपने' की कल्पना भी नहीं कर सकते थे। 12 दिसंबर को हाउस ऑफ कॉमन्स में बोलते हुए सर स्टैफोर्ड क्रिप्स ने टिप्पणी की, 'यह स्थिति कांग्रेस द्वारा हमेशा से ही स्पष्ट थी, जिसने बार-बार कहा था कि वे अनिच्छुक क्षेत्रों को नए संविधान को स्वीकार करने के लिए मजबूर नहीं करेंगे।'
इस प्रकार, कांग्रेस को एक कोने में धकेल दिया गया था। कई कांग्रेस नेता अब गांधी की बात न सुनने पर खेद व्यक्त कर रहे थे। पटेल भी उनमें से एक थे। उनका अपराधबोध और भी गहरा था क्योंकि जून 1946 में उन्हीं के आग्रह पर और गांधी की अवज्ञा करते हुए कार्य समिति ने गांधी की इच्छा के विरुद्ध कैबिनेट मिशन की 16 मई की योजना को जल्दबाजी में स्वीकार कर लिया था। अब कैबिनेट मिशन ने कांग्रेस को अधर में छोड़ दिया था। 15 दिसंबर

1946 को सर स्टैफोर्ड क्रिप्स को लिखे एक पत्र में पटेल ने लिखा: 'जब लंदन जाने का निमंत्रण आया, तो हमारी पहली प्रतिक्रिया इसे अस्वीकार करने की थी। लेकिन प्रधानमंत्री की अपील और हमारे तार के जवाब में उनके आश्वासन ने पंडित नेहरू के मन में यह भावना पैदा कर दी कि निमंत्रण को अस्वीकार करना असभ्यता का कार्य माना जा सकता है; और वे सद्भावना और सहानुभूति के संदेश की आशा से भरे हुए भारत से रवाना हुए, लेकिन वे बुरी तरह निराश होकर लौटे।' अब उन्हें अपनी गलती का एहसास हो गया है... आपने लीग प्रतिनिधिमंडल को वहाँ ऐसे समय बुलाया जब यह एहसास होने लगा था कि हिंसा एक ऐसा खेल है जिसे दोनों पक्ष खेल सकते हैं... जब सुलह का समय आ गया था, तभी जिन्ना को निमंत्रण मिला और वे मुसलमानों को एक बार फिर यह समझाने में कामयाब रहे कि उन्होंने अशांति और हिंसा फैलाकर और रियायतें हासिल कर ली हैं... लंदन में हमारे खिलाफ माहौल तैयार हो चुका था... आपकी व्याख्या का मतलब है कि बंगाल... असम का संविधान बना सकता है। यह आश्चर्यजनक है। क्या आपको लगता है कि असम इस तरह के भयावह प्रस्ताव को स्वीकार कर सकता है, खासकर जबरन धर्मांतरण, आगजनी, लूटपाट, बलात्कार और जबरन शादी जैसे भयावह अनुभवों के बाद? इस व्याख्या पर आपके जोर देने से पैदा हुए आक्रोश और गुस्से का आपको अंदाजा भी नहीं है। अगर आपको लगता है कि असम को बंगाल के प्रभुत्व को स्वीकार करने के लिए मजबूर किया जा सकता है, तो जितनी जल्दी आप इस भ्रम से बाहर निकलें, उतना ही बेहतर होगा... अगर वे असम का संविधान इस तरह बनाते हैं कि असमिया लोगों के लिए इससे बाहर निकलना असंभव हो जाए, तो आपके कथन में इसका क्या उपाय है?

आप जानते हैं कि 77 वर्ष की आयु में गांधीजी पूर्वी बंगाल के तबाह हिंदू घरों में अपनी सारी ऊर्जा लगा रहे हैं और खोई हुई लड़कियों को ढूंढने और जबरन धर्म परिवर्तन करा चुके लोगों को वापस उनके पुराने धर्म में लाने की कोशिश कर रहे हैं। लेकिन वे बहुत मुश्किलों का सामना कर रहे हैं... वे एक बेहद प्रतिकूल वातावरण से घिरे हुए हैं। इन परिस्थितियों में उनकी मृत्यु होने पर क्या होगा, यह कोई नहीं कह सकता। मैं इसके परिणामों के बारे में सोचकर ही कांप उठता हूँ... आपने देखा ही होगा कि बहस के तुरंत बाद लंदन में जिन्ना ने क्या कहा। वे पाकिस्तान की कसम खाते हैं और उन्हें जो कुछ भी दिया जाता है, उसका इस्तेमाल वे इसी उद्देश्य को पूरा करने के लिए करते हैं। क्या आप चाहते हैं कि हम उनके इस सपने को पूरा करने में उनकी मदद करें?... आप जानते हैं कि जब गांधीजी हमारे समझौते के सख्त खिलाफ थे, तब मैंने इसका समर्थन किया था। आपने मेरे लिए बहुत ही अप्रिय स्थिति पैदा कर दी है। हम सभी यहाँ महसूस करते हैं कि हमारे साथ विश्वासघात हुआ है। अब समाधान और भी मुश्किल, बल्कि लगभग असंभव हो गया है। समझौता तभी हो सकता है जब कोई बाहरी हस्तक्षेप न हो और पक्षों को अकेला छोड़ दिया जाए। वायसराय हमें शांति नहीं दे रहे हैं। हमें इस समस्या से निपटना होगा। यह एक असंभव स्थिति है।'
ब्रिटिश सरकार की 6 दिसंबर की घोषणा ने असम और उत्तरी पश्चिमी खाड़ी गणराज्य (एनडब्ल्यूएफपी) के लिए जीवन-मरण का मुद्दा खड़ा कर दिया था। यदि कांग्रेस मिशन द्वारा समूहीकरण संबंधी प्रावधानों की व्याख्या को स्वीकार कर लेती, तो असम, जहाँ हिंदू और कांग्रेस बहुमत में थे, और एनडब्ल्यूएफपी, जहाँ कांग्रेस की निर्वाचित सरकार थी, दोनों ही बंगाल और पंजाब में मुस्लिम लीग

की सरकारों के नियंत्रण में चले जाते, जो दोनों ही पाकिस्तान के प्रति वफादार थीं। दूसरी ओर, यदि वे कांग्रेस के निर्णय का पालन करने से इनकार करते, तो इसे कांग्रेस के साथ विश्वासघात माना जाता, और इससे संविधान सभा ध्वस्त हो जाती और इस प्रकार मुस्लिम लीग को लाभ होता। हमेशा की तरह, जब भी वे किसी दुविधा में फँसते, कांग्रेस नेता गांधी जी से सलाह लेने जाते। इस बार वे उन्हें नई दिल्ली वापस लाना चाहते थे ताकि वे वार्ता में सहायता कर सकें, जहाँ वे लोहे के एक कसते हुए घेरे में घिरे हुए थे। गांधी जी की सलाह स्पष्ट थी। सही हो या गलत, कांग्रेस ने यह निर्णय ले लिया था कि वह संघीय न्यायालय के निर्णय का समर्थन करेगी। उसे हर हाल में इस खेल को खेलना था, चाहे परिस्थितियाँ कितनी भी प्रतिकूल क्यों न हों, और यदि आवश्यक हो तो हार भी माननी थी। 'जहां तक मैं समझता हूं, संघीय न्यायालय का निर्णय समूह निर्माण के संबंध में कांग्रेस की व्याख्या के विरुद्ध जाएगा, इसका सीधा कारण यह है कि ब्रिटिश मंत्रिमंडल का कहना है कि उन्हें कानूनी सलाह मिली है जो उनके निर्णय का समर्थन करती है। संघीय न्यायालय अंग्रेजों की देन है। यह एक पक्षपातपूर्ण न्यायालय है।'
'कोई भी असम को वह करने के लिए मजबूर नहीं कर सकता जो वह नहीं करना चाहता। उसे अपना विरोध दर्ज कराना चाहिए, संविधान सभा से अलग हो जाना चाहिए और एक स्वायत्त इकाई के रूप में अपना संविधान बनाना चाहिए। न केवल एक प्रांत बल्कि एक अकेला व्यक्ति भी कांग्रेस के खिलाफ विद्रोह कर सकता है और ऐसा करके उसकी सेवा कर सकता है, बशर्ते कि वह व्यक्ति या प्रांत सही हो। मैंने स्वयं ऐसा किया है। यह कांग्रेस के हित में कांग्रेस के खिलाफ सत्याग्रह होगा... भारत की स्वतंत्रता के लिए यही एकमात्र शर्त है। प्रत्येक इकाई को अपने लिए निर्णय लेने और कार्य करने में

सक्षम होना चाहिए।' लेकिन अगर असम और एनडब्ल्यूएफपी इस खंड से बाहर रहते हैं, तो मुस्लिम लीग संविधान सभा में नहीं आ पाएगी। और अगर लीग के बहिष्कार के बावजूद कांग्रेस आगे बढ़कर स्वतंत्र भारत के लिए संविधान बना लेती है, तो एचएमजी इस पर कोई ध्यान नहीं देगा और संविधान निरर्थक ही रह जाएगा।
नेहरू और उनके दल ने गांधीजी से लगातार परामर्श किया और उन्हें दिल्ली वापस लाने के लिए हर संभव प्रयास किया, लेकिन वे अपने निर्णय पर अडिग रहे। 30 दिसंबर 1946 को उनकी डायरी में एक प्रविष्टि में लिखा है: 'जाने से पहले जवाहरलाल ने मुझसे लगभग दस मिनट बात की। उनका कहना था कि मुझे दिल्ली में उनके साथ होना चाहिए।' नेहरू को लिखे एक पत्र में उन्होंने लिखा: 'आपका स्नेह असाधारण और स्वाभाविक है! जब आप चाहें, फिर आइएगा, या किसी ऐसे व्यक्ति को भेजिएगा जो आपको समझता हो और मेरी प्रतिक्रियाओं को ईमानदारी से व्यक्त कर सके... जब आपको लगे कि परामर्श आवश्यक है और आप नहीं आ सकते। यह भी उचित नहीं है कि आप बार-बार मेरे पास आएं, जबकि मैं आपको पिता तुल्य मानता हूं और मोतीलाल जी से कम प्रेम नहीं करता। आपने कल मुझे जो मसौदा दिखाया था, उसके भाव से विचलित न हों। किसी न किसी तरह मुझे लगता है कि सांप्रदायिक समस्या और राजनीतिक स्थिति के बारे में मेरा आकलन सही है। अब मुझे इस बात पर कोई संदेह नहीं है कि दिल्ली में कार्य समिति द्वारा कैबिनेट मिशन के बयान को स्वीकार किए जाने पर मैंने जो कहा था, वह कितना बुद्धिमानी भरा था।' इसका यह अर्थ नहीं है कि कार्य समिति द्वारा जो किया गया वह नहीं किया जाना चाहिए था। इसके विपरीत, कार्य समिति द्वारा किए गए सभी कार्यों से मैं पूरी तरह सहमत था। मैंने जो अस्पष्ट भावनाएँ व्यक्त की थीं, उनका तर्क से समर्थन करना मेरे लिए संभव नहीं था। इस बार स्थिति

बिल्कुल अलग है। मेरा विवेक मेरे हृदय का पूर्ण समर्थन करता है। मुझे प्रतिदिन इसकी पुष्टि होती दिखती है। इसलिए, मैं राष्ट्र के एक अनुभवी और अनुभवी सेवक से नियमित परामर्श करने का सुझाव देता हूँ।
30 दिसंबर की सुबह साढ़े सात बजे नेहरू और उनके साथ आए लोग श्रीरामपुर से रवाना हुए। गांधी जी अपनी दैनिक सुबह की सैर तक उनके साथ चले। नेहरू और उनका समूह पास के गांव मधुपुर तक पैदल गए, जो पक्की सड़क से जुड़ा हुआ था, और वहां से उन्हें जीप द्वारा फेनी हवाई अड्डे तक ले जाया गया। वापसी पर प्रेस को संबोधित करते हुए नेहरू ने कहा: 'इस 77 वर्षीय युवक से मिलना हमेशा सुखद और प्रेरणादायक होता है। उनसे मिलने के बाद हम हमेशा थोड़ा युवा और मजबूत महसूस करते हैं और हमारे ऊपर का बोझ थोड़ा हल्का लगता है।'
1946 का आखिरी दिन जैसे ही शुरू हुआ, गांधीजी फिर से बेचैन होने लगे। उन्हें लगा कि श्रीरामपुर में रहकर वे अपनी पूरी क्षमता हासिल कर चुके हैं। श्रीरामपुर की उम्मीद को नोआखली के अन्य क्षेत्रों में फैलाने के लिए उन्हें शांति अभियान का अगला चरण शुरू करना होगा। उन्होंने पटेल को नोआखली में छाए अंधकार के बारे में लिखा: 'मेरी पूरी तरह से परीक्षा हो रही है। मेरी सत्य और अहिंसा की परीक्षा ऐसे तराजू पर हो रही है जो किसी मोती व्यापारी के तराजू से भी कहीं अधिक नाजुक है... सत्य और अहिंसा परिपूर्ण हैं। वे कभी असफल नहीं हो सकते। लेकिन मैं, उनका प्रचारक, असफल हो सकता हूँ। मैं इतनी आशा करता हूँ कि इससे पहले कि ऐसा हो, दयालु ईश्वर मुझे इस दुनिया से अपने पास बुला लें और अपनी इच्छा पूरी करने के लिए किसी योग्य व्यक्ति को भेजें... मुझे यहाँ से मत बुलाओ। अगर मैं कायर की तरह, पराजित होकर यहाँ

से भाग जाऊँ, तो यह मेरा भाग्य होगा, भारत की गलती नहीं। लेकिन मुझे ऐसा कोई डर नहीं है। मैं या तो करके दिखाऊँगा या मरूँगा...' गांधी जी अभी भी पटेल और नेहरू के बीच हाल ही में भड़की शत्रुता से व्याकुल थे, खासकर ऐसे महत्वपूर्ण मोड़ पर। नेहरू की यात्रा के बाद पटेल को लिखे एक अन्य पत्र में गांधी जी ने लिखा: 'मैंने आपके खिलाफ कई शिकायतें सुनी हैं... आपके भाषण भड़काऊ और भीड़ को खुश करने वाले हैं; आपने हिंसा और अहिंसा के बीच का अंतर पूरी तरह से भुला दिया है; आप जनता को तलवार से तलवार का मुकाबला करना सिखा रहे हैं; आप लीग के अधिवेशन में और अधिवेशन के बाहर भी उसका अपमान करने का कोई मौका नहीं छोड़ते। अगर ये सब सच है तो बहुत हानिकारक है। लोग कहते हैं कि आप पद पर बने रहने की बात करते हैं। अगर यह सच है तो यह भी बहुत अप्रिय है। मैंने जो कुछ भी सुना है, वह मैंने आपको विचार करने के लिए बता दिया है। यह बहुत नाजुक समय है। अगर हम जरा सा भी सीधे रास्ते से भटक गए, तो हमारा पतन निश्चित है। कार्य समिति में वह एकता नहीं है जो होनी चाहिए। भ्रष्टाचार को जड़ से उखाड़ फेंकिए—आप जानते हैं कि यह कैसे करना है। अगर आपको उचित लगे तो किसी भरोसेमंद और बुद्धिमान व्यक्ति को भेजिए, जो मुझे बातें समझा सके और मेरे मन की बात जान सके। आपको स्वयं आने की कोई आवश्यकता नहीं है। आप अब शारीरिक रूप से भागदौड़ करने के लिए सक्षम नहीं हैं।' आप अपनी सेहत का बिल्कुल भी ख्याल नहीं रखते; यह बुरी बात है।'
पटेल के जवाब में उनकी पीड़ा स्पष्ट झलक रही थी: 'मुझे आपका पत्र मिला है। इससे मुझे बहुत दुख हुआ है। स्वाभाविक रूप से आपने प्राप्त रिपोर्टों और सुनी शिकायतों के आधार पर ही लिखा है। शिकायतें बेशक झूठी हैं, लेकिन उनमें से कुछ तो बेतुकी भी हैं। मुझ पर पद पर बने रहने का आरोप सरासर मनगढ़ंत है। मैं तो जवाहर

द्वारा अंतरिम सरकार से इस्तीफा देने की खोखली धमकियों का विरोध कर रहा था। इन धमकियों से कांग्रेस की प्रतिष्ठा को ठेस पहुंची है और सेवाओं का मनोबल गिरा है। हमें पहले इस्तीफा देने का ठोस निर्णय लेना चाहिए। खोखली धमकियों को दोहराने से हमने वायसराय का सम्मान खो दिया है और अब वे हमारी इस्तीफे की धमकियों को महज़ दिखावा समझते हैं। वायसराय द्वारा पोर्टफोलियो सौंपने की मांग करते ही मैंने तुरंत इस्तीफा दे दिया। यह दिखावा नहीं था, बल्कि इसका बहुत सकारात्मक प्रभाव पड़ा। मुझे पद पर बने रहने में क्या रुचि है? मैं बीमार हूं। एक बार फिर से स्वस्थ होकर मुझे खुशी और राहत मिलेगी... मुझे समझ नहीं आता कि आप ऐसी शिकायत पर कैसे ध्यान दे सकते हैं।'
'लीग के किसी भी सदस्य ने यह नहीं कहा कि मैं बार-बार लीग का अपमान करता हूँ। यह मेरे लिए नई बात है कि मेरे भाषण श्रोताओं को ध्यान में रखकर दिए जाते हैं। लोगों को कड़वी सच्चाई बताना मेरी आदत है। रॉयल इंडियन नेवी के विद्रोह के समय, मैंने उन उपद्रवों की निर्भीक और स्पष्ट शब्दों में निंदा की थी, भले ही उस समय कई लोग इससे नाराज़ हुए थे... तलवार से तलवार का सामना करने वाली टिप्पणी को एक लंबे अनुच्छेद से अलग करके संदर्भ से बाहर प्रस्तुत किया गया है। यदि कार्य समिति में कोई मतभेद हैं, तो वे आज के नहीं हैं। वे लंबे समय से मौजूद हैं। इसके विपरीत, वर्तमान में अधिकांश मामलों में काफी हद तक सहमति है। यदि मेरे किसी सहकर्मी ने मेरे बारे में आपसे शिकायत की है, तो मैं जानना चाहूँगा। उनमें से किसी ने भी मुझसे कुछ नहीं कहा है। बंगाल सरकार और बंगाल के राज्यपाल द्वारा बंगाल में आपके निरंतर प्रवास के संबंध में भेजी जा रही गोपनीय रिपोर्टें बहुत ही खराब हैं। वे आपको वहाँ से निकालना चाहते हैं।'

प्यारेलाल लिखते हैं: 'सरदार का जवाब जहाँ तक संभव था, एकदम सही था। व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा का आरोप तुच्छ था। लेकिन गांधीजी की चिंता कहीं अधिक गहरी थी। यह सच है कि सरदार स्वयं कोई पद नहीं चाहते थे। लेकिन जाहिर तौर पर वे कांग्रेस को मिलने वाली शक्ति के कारण इस पद को महत्व देते थे। यदि सरदार भी इस बात से सहमत होते कि "अहिंसा पृथ्वी पर सबसे शक्तिशाली शक्ति है", तो वे अंतरिम सरकार में गृह मंत्री के पद की तुलना में बारडोली के सरदार के रूप में अपनी प्रभावशाली भूमिका को कहीं अधिक महत्व देते। उनके सामने आए संकटों में, लड़ने के साहस की नहीं, बल्कि शांत, आत्मविश्वासी और आत्म-संयम के साहस की आवश्यकता थी, जो किसी भी प्रकार की घबराहट या उकसावे से अप्रभावित रहे और जो शत्रु के पास प्रेम के रूप में जाकर उसे ठीक करे, उसे निरस्त्र करे और उस पर विजय प्राप्त करे। यह साहस तर्कों से नहीं सिखाया जा सकता था; इसे केवल प्रत्यक्ष अनुभव से ही समझाया जा सकता था।' सरदार पटेल को लिखे अपने अगले पत्र में गांधीजी ने केवल सरदार के स्वास्थ्य के बारे में चिंता व्यक्त की: "आपका स्वास्थ्य मुझे चिंतित कर रहा है। आपको शीघ्र स्वस्थ होना चाहिए। अभी बहुत कुछ करना बाकी है... यहाँ स्थिति नाजुक है। देखिए यहाँ क्या होता है। मैं अभी भी प्रयास कर रहा हूँ, लेकिन मुझमें कोई निराशा नहीं है।"
1 जनवरी 1947 को गांधी जी ने घोषणा की कि वे अगले दिन रवाना हो जाएंगे। श्रीरामपुर से जारी एक प्रेस विज्ञप्ति में लिखा था, 'जो लोग कभी उन पर संदेह और अविश्वास की दृष्टि से देखते थे, अब वे श्रद्धा और कृतज्ञता के साथ यहां आते हैं। ये कुछ संकेत हैं कि गांधीजी का इस गंभीर समस्या के प्रति नैतिक दृष्टिकोण धीमी लेकिन स्थिर गति से काम कर रहा है।' गांधीजी की प्रार्थना सभा

में शामिल होने के बाद एक स्थानीय मुस्लिम ने कहा, 'हम गांधीजी का बहुत सम्मान करते हैं और चाहते हैं कि वे यहीं ठहरें।' शहीद सुहरावर्दी द्वारा एक प्रेस ब्रीफिंग में कही गई बात और भी महत्वपूर्ण थी, 'मुझे आशा है कि महात्मा गांधी न केवल बंगाल में बल्कि भारत के अन्य हिस्सों में भी अपने मिशन में सफल होंगे।' 2 जनवरी की सुबह गांधीजी ने अपना शिविर छोड़ा। हिंदू और मुस्लिम दोनों ही गांधीजी को जाते हुए देखते रहे। पुलिस अधीक्षक अब्दुल्ला, जिनका गांधीजी के प्रति गहरा लगाव था, श्रीरामपुर से चांदीपुर तक उनके साथ गए। उन्होंने गांधीजी की सुरक्षा के लिए बंदूकों से लैस बीस सैन्य पुलिसकर्मियों का एक दल तैनात किया था। गांधी जी ने यह संदेश दिया कि उनके साथ कोई नहीं चलेगा। वे अकेले रहना चाहते थे।
श्रीरामपुर से चांदीपुर तीन मील दूर था और गांधीजी सुबह 8:50 बजे वहाँ पहुँचे। वहाँ पहुँचकर गांधीजी ने अब्दुल्ला से अपने साथ आए सशस्त्र गार्डों को हटाने का अनुरोध करते हुए कहा, 'मैं बंगाल सरकार द्वारा मेरी सुरक्षा के लिए बरती जा रही सतर्कता की सराहना करता हूँ, लेकिन मुझे ईश्वर के सिवा किसी और सुरक्षा की आवश्यकता नहीं है।'
गांधी जी पांच दिनों तक चांदीपुर में रहे। मृत्यु से बचने के लिए अपने घर छोड़कर आए लोग अब बड़ी संख्या में लौट रहे थे। एक प्रार्थना सभा में उन्होंने कहा कि नोआखली में उनका मिशन एक तीर्थयात्रा के समान है। नोआखली में ही गांधी जी के पुत्र हरिलाल ने अपने पिता से पुनः संपर्क स्थापित किया। गांधी जी ने उन्हें लिखा: 'यह जानकर मुझे कितनी प्रसन्नता होगी कि तुमने नया जीवन शुरू कर दिया है। सोचो मैंने तुम पर कितना स्नेह बरसाया है! मेरी तीर्थयात्रा कठिन है। यदि तुम कर सको तो इसमें शामिल

हो जाओ... यदि तुम स्वयं को शुद्ध कर लो, तो तुम जहाँ भी हो, इसमें पूर्णतः भागीदार बन जाओगे।' उन्होंने इस सिद्धांत में अपने विश्वास की पुष्टि करते हुए अपनी बात समाप्त की कि आध्यात्मिक पुनर्जन्म अनिवार्य रूप से व्यक्ति के शारीरिक नवीनीकरण में परिलक्षित होता है। उन्होंने लिखा, 'भागवत शास्त्र के अनुसार, तुम समय से पहले बूढ़े दिखना बंद कर दोगे, जैसा कि तुम अभी दिखते हो।'
गांधी जी को अब यह अहसास हो गया था कि उन्हें बंगाल के तबाह हुए इलाकों के हर कोने तक पहुंचना होगा। उन्हें श्रीरामपुर में जो हुआ था, उसे दोहराना था और इसका एकमात्र तरीका पैदल यात्रा करना था। अगले दो महीनों तक, सतहत्तर वर्षीय गांधी जी पैदल चलेंगे, जिसमें से कुछ दूरी उन्होंने नंगे पैर तय की, और दो चरणों में 116 मील की दूरी तय करते हुए 48 गांवों का दौरा किया। उन्होंने 7 जनवरी 1947 की सुबह अपनी यात्रा शुरू की। सुबह की रस्में पूरी करने के बाद, उन्होंने यह पता लगाया कि क्या यात्रा के लिए दिए गए सभी निर्देशों का पालन किया गया है। ठीक साढ़े सात बजे, गांधी जी को उनके अनुयायियों ने विदाई दी, जिन्होंने टैगोर का गीत 'एकला चलो रे...' गाया।
गांधी जी जिस रास्ते से गुजरे, वह बेहद मनोरम दृश्यों से भरा था। डेढ़ घंटे बाद उनका दल मशीमपुर पहुंचा, जहां उन्हें उस दिन रुकना था। सतीश चंद्र दास ने बांस, बेंत और घास की पट्टियों से एक चलती-फिरती झोपड़ी बनाई थी। झोपड़ी में किताबों और बर्तनों के लिए अलमारियां थीं और उससे जुड़े दो छोटे कमरों में शौचालय और मालिश कक्ष की व्यवस्था थी। गांधी जी ने उसे देखते ही 'महलनुमा' बताया। उन्होंने निर्देश दिया कि इस झोपड़ी को गरीबों के लिए चलते-फिरते औषधालय के रूप में इस्तेमाल किया जाए।

उन्होंने गुप्ता से कहा, 'मैं कहीं भी और हर जगह आराम से रह सकता हूं। अगर मुझे अपने घर में पनाह देने वाला कोई नहीं है, तो मैं किसी पेड़ की छाया में विश्राम करने में प्रसन्न रहूंगा।' अगली सुबह जब गांधीजी अपने अगले गंतव्य फतेहपुर के लिए रवाना हुए तो हवा में हल्की ठंडक थी। जब मनु उनके पैरों में तेल लगा रही थी, तो उसने देखा कि उनके तलवों में घाव थे और उनसे खून बह रहा था। फतेहपुर में गांधीजी के मेज़बान मौलवी इब्राहिम एक असाधारण व्यक्ति थे। वे एक समर्पित समाज सुधारक थे और पिछले पचास वर्षों से स्थानीय मुसलमानों के रवैये को बदलने का प्रयास कर रहे थे। वे किसी भी काम को 'निम्न वर्ग का काम' करार दिए जाने की प्रथा को समाप्त करने के लिए काम कर रहे थे।
जब गांधीजी शाम की प्रार्थना सभा से लौटे तो उन्हें वहाँ जी.डी. बिरला के घरेलू सहायक हरिराम को देखकर आश्चर्य हुआ। हरिराम गांधीजी के लिए खाना बनाते थे और नई दिल्ली के बिरला हाउस में उनके ठहरने के दौरान उनकी देखभाल करते थे। उनकी सेहत को लेकर चिंतित घनश्याम दास बिरला ने हरिराम को नोआखली में गांधीजी की सेवा के लिए भेजा था। गांधीजी ने तुरंत उन्हें वापस बुला लिया। अगले दिन गांधीजी दासपारा चले गए। एक गरीब मुस्लिम ग्रामीण ने गांधीजी को अपने यहाँ ठहराने की पेशकश की थी, लेकिन अपने साथी मुस्लिम ग्रामीणों के गुस्से के डर से अंतिम क्षण में अपना निमंत्रण वापस ले लिया। उस शाम, प्रार्थना सभा में आधे दर्जन से भी कम मुस्लिम उपस्थित थे। उनमें से कुछ ने संदेश भेजा कि जब तक गांधीजी सशस्त्र सुरक्षा में यात्रा करते रहेंगे, तब तक दोनों समुदायों के बीच सौहार्दपूर्ण संबंध नहीं हो सकते। गांधीजी ने बार-बार पुलिस और सरकार से सशस्त्र सुरक्षा हटाने का अनुरोध किया था। सरकार, उनकी सुरक्षा को लेकर चिंतित होने का बहाना

बनाकर, शांति स्थापित करने के उनके प्रयासों को विफल करती प्रतीत हो रही थी। गांधीजी ने सुहरावर्दी को लिखा: जब तक मैं सशस्त्र पुलिस या सेना की पूर्ण सुरक्षा में रहता हूँ, तब तक दोनों समुदायों के बीच सच्ची मित्रता स्थापित करने के मेरे सभी प्रयास विफल रहेंगे... सेना का भय उन्हें मेरे पास आने और अपने संदेहों के निवारण के लिए हर तरह के प्रश्न पूछने से रोकता है। मुझे उनके तर्क में कुछ दम तो दिखता है... मुझे इसकी आवश्यकता नहीं है। मुझे शर्मिंदगी भी महसूस होती है और यह निश्चित रूप से मेरी साधना में बाधा डालता है। यदि आपको लगता है कि मेरी ओर से एक स्पष्ट और दृढ़ लिखित माफीनामा आपकी समस्या का समाधान कर देगा, तो मैं आपके द्वारा हस्ताक्षर के लिए भेजे गए किसी भी मसौदे पर विचार करने के लिए तैयार हूँ। यदि ऐसा संभव न हो, तो मेरा सुझाव है कि आप यह घोषणा करें कि जिस क्षेत्र से मैं गुजरूंगा, वहां के मुसलमानों द्वारा मेरी सुरक्षा के संबंध में संतोषजनक आश्वासन दिए जाने पर आप सुरक्षा दल वापस ले लेंगे। यदि ऐसा होता है, तो यह एक सम्मानजनक प्रक्रिया होगी। मैं निश्चित रूप से इसकी सराहना करूंगा और इससे सभी को लाभ होगा। अगले दिन गांधी जगतपुर के लिए रवाना हुए, जहाँ उन्हें स्थानीय महिलाओं की एक सभा को संबोधित करना था। अपनी कहानियाँ सुनाते हुए उनमें से कई महिलाएँ रो पड़ीं। उसी शाम कुछ स्थानीय मुसलमानों ने नफरत भरे बयान देकर और गांधी के इरादों पर सवाल उठाकर उन्हें भड़काने की कोशिश की। प्यारेलाल लिखते हैं: अपने आस-पास के दृश्य को देखते हुए, उन्हें एक बार फिर यह आभास हुआ कि नोआखली में उनका मिशन जल्दी समाप्त होने वाला नहीं है। उन्होंने कहा, "सारे संकेत इसके विपरीत हैं। हिंदुओं और मुसलमानों के बीच आपसी एकता स्थापित करने के लिए उन्हें अभी और

आगे बढ़ना होगा।" अगले दिन, 11 जनवरी को, सुबह 2 बजे उठने के बाद, गांधी लामचर के लिए रवाना होने से ठीक पहले तक काम में व्यस्त रहे। चौराहे पर रास्ते के किनारे महिलाओं और बच्चों सहित स्थानीय मुसलमानों का एक बड़ा समूह इकट्ठा था; उनमें से कई गांधी के साथ लामचर गए। वहाँ के मुसलमानों ने भी उनका गर्मजोशी से स्वागत किया; वे उनके प्रयासों को समझने और सराहने लगे थे। लामचार में गांधीजी को यह एहसास हुआ कि दंगों के तुरंत बाद एक बड़ा लीपापोती की गई थी: स्थानीय लोग, राजनेता और पुलिस सभी दंगों में शामिल थे, लेकिन पीड़ितों में प्रशासन को सूचित करने का साहस नहीं था।
अगले दिन गांधी जी करपारा पहुँचे, जहाँ सुशीला पाई एक राहत एवं पुनर्वास केंद्र चला रही थीं। उन्होंने कार्यकर्ताओं को सलाह दी कि वे सबसे पहले लोगों को स्वच्छ पेयजल जैसी बुनियादी ज़रूरतें मुहैया कराएँ और सतीश गुप्ता के साथ मिलकर एक प्राकृतिक फ़िल्टर तैयार किया, जिसकी लागत मात्र 50 रुपये थी और जो पच्चीस परिवारों को शुद्ध एवं सुरक्षित पेयजल उपलब्ध कराने के लिए पर्याप्त था। अगले पड़ाव शाहपुर में बड़ी संख्या में मुसलमान गांधी जी का स्वागत करने के लिए उमड़ पड़े। अगली सुबह भाटियालपुर तक की पैदल यात्रा में रास्ते में कई पड़ावों के साथ लगभग 85 मिनट लगे। भाटियालपुर के स्थानीय मुसलमानों और हिंदुओं ने एक शांति समिति का गठन किया था। मुस्लिम सदस्यों ने दंगों के दौरान हुई बर्बर घटनाओं की निंदा करते हुए एक घोषणापत्र पर हस्ताक्षर किए थे और अपने हिंदू पड़ोसियों को पुनर्वास में हर संभव सहायता का आश्वासन दिया था। मुसलमानों ने उन लोगों से अपील की जिन्होंने हिंदू घरों में लूटपाट की थी कि वे चोरी की गई संपत्ति को उसके असली मालिकों को लौटा दें।

उस शाम, प्रार्थना सभा को संबोधित करते हुए, गांधी ने पर्दा प्रथा के विषय पर बात की, जिससे उनकी कड़ी आलोचना हुई। उन्होंने महिलाओं से इसे एक अप्रचलित प्रथा बताकर त्यागने का आग्रह किया। बंबई और मद्रास जैसे दूर-दराज के मुस्लिम कट्टरपंथियों ने उनका जमकर अपमान किया। उनके कार्यों को एक नास्तिक द्वारा अनुचित हस्तक्षेप और शुद्ध इस्लामी परंपराओं को भ्रष्ट करने का प्रयास बताया गया! अगली सुबह घने कोहरे ने जंगलों को ढक लिया और गांधी ने अपनी यात्रा फिर से शुरू की। उनका गंतव्य नारायणपुर गाँव था। भाटियालपुर के मेज़बानों और लोगों से विदा लेने से पहले, गांधी ने अपने पारिवारिक मंदिर का दर्शन किया, जिसका उन्होंने पिछले दिन पुनः उद्घाटन और अभिषेक किया था। गांधी की तीर्थयात्रा के अगले दो पड़ाव नारायणपुर और फिर रामदेवपुर-दासघरिया थे। कानू गांधी ने यहाँ एक राहत शिविर स्थापित किया था। गांधी का स्वागत करने के लिए रास्ते में कई मुसलमान जमा हुए थे।
गांधी जी के नोआखली पहुंचने के बाद से ही कुछ मुसलमानों की लगातार यही मांग रही थी कि अपराधों के मुख्य दोषी मियां गुलाम सरवर को तुरंत रिहा किया जाए। सरवर को सरकार पर काफी दबाव डालने के बाद ही गिरफ्तार किया गया था। उसके गुर्गों ने उसके खिलाफ शिकायत दर्ज कराने वालों को 'चेतावनी' दी और उनमें काफी डर पैदा कर दिया। सरवर के बारह स्थानीय मुसलमानों सहित उसके 'प्रतिनिधियों' का एक प्रतिनिधिमंडल रामदेवपुर में गांधी जी से मिला; उनकी याचिका में सरवर की रिहाई के लिए हिंसक आंदोलन की धमकी को हल्के-फुल्के ढंग से छिपाया गया था। हालांकि, गांधी जी ने उनकी बात नहीं सुनी।

19 जनवरी की सुबह, जब दल बादलकोट से अटाकोरा के लिए निकलने ही वाला था, तभी उन्हें एहसास हुआ कि भारी ओस के कारण पगडंडियाँ बहुत फिसलन भरी हो गई थीं। रास्ता संकरा था और वे एक-एक करके ही चल पा रहे थे। कर्नल जीवन सिंह दो बार लगभग गिरते-गिरते बचे। जब वे उठने की कोशिश कर रहे थे, तब गांधीजी ने उन्हें अपनी छड़ी का सिरा सहारा देकर उठने में मदद की। अटाकोरा बादलकोट से केवल दो मील दूर था, लेकिन वहाँ पहुँचने में उन्हें पूरा एक घंटा लग गया। अगले दिन दल सिरंदी के लिए रवाना हुआ, जहाँ गांधीजी की एक धर्मनिष्ठ मुस्लिम अनुयायी बीबी अमतुस सलाम काम कर रही थीं। वे कुछ स्थानीय मुसलमानों के विरोध में पिछले पच्चीस दिनों से उपवास पर थीं। बीबी एक कट्टर मुस्लिम थीं और दोनों समुदायों की एकता को अपने जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य मानती थीं। हाल ही में हुए दंगों के दौरान वे दिल्ली, कलकत्ता और ढाका के कई अशांत क्षेत्रों में गईं और स्थिति को नियंत्रण में लाने का प्रयास किया। गांधी जी सिरांडी पहुंचे, जहां स्थानीय मुसलमानों की एक बड़ी सभा ने उनका स्वागत किया और उनसे बीबी अमतुस सलाम को अपना उपवास तोड़ने के लिए मनाने की विनती की। गांधी जी जानते थे कि बीबी अमतुस सलाम केवल हिंदू और मुसलमानों के बीच शांति चाहती थीं, और यदि यह सुनिश्चित हो जाता तो उन्हें अपना उपवास तोड़ने के लिए राजी किया जा सकता था। गांधी जी ने उनके हस्ताक्षर के लिए एक घोषणापत्र तैयार किया, जिस पर चार गांवों के ग्यारह प्रमुख मुसलमानों ने हस्ताक्षर किए। बारहवें सदस्य, जिन्होंने मुस्लिम सभा की ओर से पहले बात की थी, ने हस्ताक्षर नहीं किए। वे कुछ मील दूर एक 'सभा में शामिल होने' गए थे। अगली सुबह उनसे घोषणापत्र पर हस्ताक्षर करवाए गए। गांधी जी ने बीबी अमतुस सलाम को हस्ताक्षरित प्रतिज्ञा का महत्व समझाया और अल-फातिहा के पाठ

के बाद बीबी अमतुस सलाम ने गांधी जी द्वारा पकड़े गए गिलास से तीन औंस संतरे का रस पीकर अपना उपवास तोड़ा।
सिरांडी के बाद, गांधी जी 22 जनवरी को केतुरी के लिए रवाना हुए। सिरांडी की व्यस्तताओं के कारण वे शारीरिक और मानसिक रूप से थक चुके थे, और आध्यात्मिक रूप से भी क्षीण थे। अगली सुबह, प्रार्थना के बाद कागजों का ढेर देखते हुए उन्हें नींद आ गई। दिन की यात्रा का समय हो चुका था और बाहर बड़ी संख्या में लोग इंतज़ार कर रहे थे, लेकिन मनु ने उन्हें जगाने की हिम्मत नहीं की। अंततः, जब गांधी जी जागे, तो वे स्वयं से नाराज़ थे कि एक क्षण की कमजोरी के कारण दिन का कार्यक्रम कुछ मिनटों के लिए विलंबित हो गया था। उनका हमेशा से मानना था कि समय का प्रत्येक क्षण ईश्वर की देन है, जिसे पूरी तरह से उनकी सेवा में ही व्यतीत किया जाना चाहिए। 'जब लोगों को सात बजे शुरू करने के लिए कहा गया है, तो ठीक सात बजे ही शुरू करना चाहिए। समय की पाबंदी न रखना पाप है।'
पनियाला, जो अगला पड़ाव था, की ओर यात्रा के दौरान मनु ने एक नया रामधुन गाया, जिसे उसने बचपन में अपने गृहनगर पोरबंदर के एक वैष्णव मंदिर में धार्मिक अनुष्ठान के दौरान सुना था। यह गीत उसके मन में बसा हुआ था और उस सुबह अनायास ही उसके मुख से निकल आया।
उस शाम की प्रार्थना सभा में बड़ी संख्या में पीड़ित उपस्थित थे। पनियाला में प्रार्थना के बाद, गांधीजी को मुस्लिम लीग के कुछ उपद्रवियों के गुस्से भरे सवालों की बौछार का सामना करना पड़ा, जिन्हें शांत करने के लिए उन्हें बड़ी चतुराई से जवाब देना पड़ा। हालांकि दिल्ली में राजनीतिक गतिविधियां और बातचीत चल रही थी, वहीं बंगाल के दूरदराज के इलाकों में गांधीजी से

अक्सर नाराज लोग संपर्क करते थे। नेताओं और प्रतिनिधिमंडलों का तांता लगा रहता था जो गांधीजी से सलाह लेने के लिए उनके पीछे पड़े रहते थे।
असम दुविधा में था; मुस्लिम लीग शासित बंगाल और मुस्लिम बहुल पूर्वी बंगाल के साथ शामिल होने के कारण, उसे यह तय करने का कोई अधिकार नहीं था कि वह किस पक्ष में रहेगा और संविधान के निर्माण में उसकी क्या भूमिका होगी। गांधी जी ने असम को सलाह दी कि यदि यह आश्वासन न दिया जाए कि असम के प्रतिनिधियों को अस्वीकार्य संविधान को अन्य प्रांतों के प्रतिनिधि उस पर थोपने का प्रयास नहीं करेंगे, तो वह संविधान सभा के उस खंड से बाहर निकल जाए। इससे मुस्लिम लीग में काफी आक्रोश फैल गया और गांधी जी पर दोहरे मापदंड अपनाने का आरोप लगा। उनसे पूछा गया कि यदि वे हिंदू- मुस्लिम एकता के लिए काम कर रहे थे, तो वे ऐसी सलाह कैसे दे सकते हैं; साथ ही, असम को इस सलाह के बाद मुस्लिम लीग संविधान सभा में कैसे शामिल हो सकती थी? उन्होंने उत्तर दिया कि उन्होंने असम को कैबिनेट मिशन की योजना में निहित बातों से अधिक कोई सलाह नहीं दी थी, जो कांग्रेस संगठन के चरित्र और परंपरा में अंतर्निहित थी। इसमें ऐसा कुछ भी नहीं था जो सांप्रदायिक एकता के उनके उद्देश्य के विपरीत हो या जिससे मुस्लिम लीग का संविधान सभा में प्रवेश असंभव हो जाए।
विरोध करने वालों ने असम में मुस्लिम घुसपैठियों की स्थिति का मुद्दा भी उठाया। बंगाल की मुस्लिम लीग सरकार ने राज्य की जनसंख्या के सांप्रदायिक अनुपात को बदलने के लिए असम पर आक्रमण किया था। मुस्लिम प्रवासी, और विशेष रूप से मुस्लिम लीग के राष्ट्रीय रक्षक, जो खुद को खिलजी दस्ता या टुकड़ियां कहते थे, सत्रह-सत्र के समूहों में असम में घुसपैठ कर रहे थे। वे तेरहवीं

शताब्दी के आक्रमणकारी बख्तियार खिलजी की नकल कर रहे थे, जिसने सत्रह घुड़सवारों के दल के साथ गौर (वर्तमान बंगाल) पर आक्रमण किया था और 'अल्लाह-ओ-अकबर' का नारा लगाते हुए राजधानी नवद्वीप (वर्तमान नादिया) पर धावा बोला था। आधुनिक खिलजी दस्तों ने असम में खाली सरकारी जमीनों पर अवैध कब्जा कर लिया था और उन्हें खाली करने से इनकार कर दिया था। इससे वहां की कांग्रेस सरकार को अवैध अतिक्रमणकारियों को जबरन बेदखल करने के लिए मजबूर होना पड़ा। यह निर्णय असम विधानसभा में मुस्लिम लीग पार्टी के नेता मोहम्मद सादुल्ला से परामर्श के बाद लिया गया था। यह पूरी तरह से प्रशासनिक मामला था और असम सरकार द्वारा उठाए गए कदम कानून-व्यवस्था बनाए रखने के दायरे में ही थे, लेकिन मुस्लिम लीग ने इस मुद्दे का इस्तेमाल सांप्रदायिक उन्माद भड़काने और असम में कांग्रेस सरकार पर मुस्लिम आबादी पर अत्याचार करने का आरोप लगाने के लिए किया। पनियाला में मुस्लिम लीग के प्रदर्शनकारियों ने गांधी पर इस मामले पर चुप रहने का आरोप लगाया। उन्होंने शांत भाव से जवाब दिया कि अवैध रूप से अतिक्रमण करने वाले, केवल इसलिए कि वे मुसलमान या बंगाली हैं, आम कानून से छूट का दावा नहीं कर सकते। मुस्लिम लीग ने इसका इस्तेमाल गांधी पर हिंदुओं के प्रति पक्षपात का आरोप लगाने के लिए किया।
गांधी जी का अगला पड़ाव मुरैम गाँव था। वहाँ की कुछ महिलाएँ घूंघट ओढ़े हुए थीं, लेकिन गाँव के मौलवी ने उन्हें विनम्रता से समझाते हुए कहा: 'आज हमारे बीच ईश्वर का ऐसा नेक बंदा होना हमारे लिए सौभाग्य की बात है। आज हमारा समुदाय अपने हिंदू भाइयों का खून बहाने के कलंक से ग्रस्त है। वे हमें इस कलंक से मुक्त करने आए हैं। उनकी पवित्र उपस्थिति में पर्दा करना व्यर्थ है।' अगले

दिन मौलवी गांधी जी के साथ हीरापुर तक आधा रास्ता चले। हीरापुर में केवल दो हिंदू परिवार थे। उस शाम की प्रार्थना सभा गांधी जी की पूरी तीर्थयात्रा के दौरान सबसे बड़ी थी।
26 जनवरी को, जिसे पिछले सत्रह वर्षों से स्वतंत्रता दिवस के रूप में मनाया जा रहा था, जब कांग्रेस ने 26 जनवरी 1930 को स्वराज की शपथ ली थी और अंग्रेजों को भगाने का संकल्प लिया था, गांधी और उनके छोटे से दल बंसा पहुंचे। अपनी अंतिम कैद के दौरान भी गांधी ने तिरंगा फहराकर अंग्रेजों का विरोध किया था। पल्ला में रुकने के बाद दल पंचगाँव की ओर बढ़ा। वहाँ घटी एक घटना से हिंदुओं और मुसलमानों के बीच व्याप्त शत्रुता स्पष्ट हो गई। अपनी आदत के अनुसार, मनु मुस्लिम महिलाओं से मिलने उनके घरों में गईं। इस बार उन्हें प्रवेश नहीं दिया गया और उनके मुंह पर दरवाजे बंद कर दिए गए। एक बूढ़ी मुस्लिम महिला बाहर आई और अपने हाथों में रोटी थमाते हुए मनु से उसे खाने को कहा। मनु यह देखकर दंग रह गईं कि उन्हें मछली का एक टुकड़ा भी दिया गया था; उन्होंने बूढ़ी महिला से कहा कि वह पूर्णतया शाकाहारी हैं। उस महिला ने कड़वे स्वर में कहा, "आखिरकार एक हिंदू तो हिंदू ही होता है," वह रूढ़िवादी हिंदुओं द्वारा मुसलमानों के साथ भोजन न करने की प्रथा का जिक्र कर रही थी, "तो फिर हम कैसे मान लें कि गांधी जी यहां हिंदू-मुस्लिम एकता स्थापित करने आए हैं!" उसे आश्वस्त करने के लिए मनु ने मछली को छुए बिना रोटी का एक टुकड़ा तोड़ा और खा लिया। इसके बाद ही दूसरे घरों की महिलाएं बाहर आईं और मनु से मिलीं। जब मनु ने गांधी जी को इस घटना के बारे में बताया, तो वे अविश्वास के व्यापक प्रसार को देखकर स्तब्ध रह गए। जयग में अभियान जारी रहा। पनियाला में पुनर्जीवित की गई नई रामधुन ट्रेन में और संशोधन किए गए।

'तू पतितों का शुद्धिकर्ता है।'
ईश्वर और अल्लाह तेरे नाम हैं।
हे प्रभु, सभी मनुष्यों को सही समझ प्रदान करो; कृष्ण और करीम तुम्हारे नाम हैं।
राम और रहीम भी वैसे ही हैं।
हे प्रभु, सभी मनुष्यों को सही समझ प्रदान करो।
नए संस्करण ने कट्टर मुस्लिमों को गांधी पर हमला करने का एक और बहाना दे दिया। उन्होंने हिंदू देवी-देवताओं के नामों को मुस्लिम पैगंबरों के नामों के साथ जोड़ने पर आपत्ति जताई। उन्होंने गांधी को कुरान की आयतें पढ़ने से मना किया और कहा कि चूंकि वे मुसलमान नहीं हैं, इसलिए उन्हें ऐसा करने का कोई अधिकार नहीं है।
गांधी जी 30 जनवरी को आमकी पहुंचे। यहां भगवान के नाम पर उनकी आस्था की कड़ी परीक्षा हुई। बकरी का दूध उपलब्ध न होने के कारण उन्होंने नारियल का दूध पीने और बकरी के मक्खन की जगह नारियल का तेल इस्तेमाल करने पर सहमति जताई। तदनुसार उन्होंने आठ औंस नारियल का दूध पिया; हालांकि, आहार में इस बदलाव के कारण उन्हें गंभीर दस्त हो गए। शाम तक वे पूरी तरह से कमजोर और थक चुके थे। मनु ने देखा कि उन्हें बहुत पसीना आ रहा है। जैसे ही वे गिर पड़े, उन्होंने प्रोफेसर निर्मल बोस को मदद के लिए पुकारा। दोनों ने मिलकर उन्हें उठाया और उनके बिस्तर पर लिटाया। उन्होंने जल्दी से डॉक्टर सुशीला नायर को बुलाने के लिए एक नोट लिखा और प्रोफेसर बोस को देने ही वाली थीं कि गांधी जी ने अपनी आंखें खोलीं। उन्होंने मनु से कहा, 'मुझे तुम्हारा निर्मल बाबू कहना अच्छा नहीं लगा। तुम अभी बच्ची हो। इसलिए मैं तुम्हें माफ कर सकता हूं। लेकिन वास्तव में मैं तुमसे यही उम्मीद करता था कि

ऐसे मौके पर तुम भगवान का नाम लेने के अलावा कुछ नहीं करोगी।' मैं इस पूरे समय उनका नाम जप रही थी। इसके बारे में किसी को मत बताना, सुशीला को भी नहीं। राम ही मेरे सच्चे चिकित्सक हैं। जब तक वे मुझसे काम लेना चाहेंगे, तब तक वे मुझे जीवित रखेंगे, अन्यथा वे मुझे अपने पास बुला लेंगे।' मनु ने डॉक्टर नय्यर के लिए लिखे अपने नोट को छिपाने की कोशिश की, लेकिन गांधी जी ने उसे देख लिया। 'तो, तुमने पहले ही लिख दिया है?' उन्होंने पूछा और मनु ने सिर हिलाया। उन्होंने कहा, 'आज भगवान ने हम दोनों को बचा लिया है। सुशीला अपने गाँव का काम छोड़कर मेरे पास दौड़कर आती। इससे मुझे खुद पर और तुम पर गुस्सा आता। आज मेरी परीक्षा हुई है। यदि उनके नाम ने सचमुच मेरे हृदय पर अपना अधिकार जमा लिया है, तो मैं बीमारी से नहीं मरूँगा। और यह नियम न केवल मुझ पर, बल्कि सभी पर लागू होता है।'
अपने अगले पड़ाव, अमीशापुरा में, एक विशाल भीड़ ने उनका स्वागत किया। वायु सेना से भागकर एक फर्जी पहचान अपना चुका एक पूर्व वायुसेनाकर्मी गांधीजी के दल में शामिल हो गया था। इसी तरह कई वायुसेनाकर्मियों और पूर्व क्रांतिकारियों का गांधीजी ने स्वागत किया था। उनमें से कुछ उनके सबसे भरोसेमंद सहकर्मी बन गए थे। उस व्यक्ति को इस शर्त पर 'परिवार' में शामिल किया गया था कि वह गांधीजी के साथ रहेगा और उनकी सीधी देखरेख में काम करेगा। हालांकि, अमीशापुरा पहुँचते ही, पूर्व वायुसेनाकर्मी अलग हो गया और उसने घोषणा कर दी कि वह शांति कार्यकर्ताओं से स्वतंत्र रूप से काम करेगा। गांधीजी ने तुरंत अधिकारियों को सूचित किया क्योंकि वह व्यक्ति मालाबार का रहने वाला था और उसकी अनियंत्रित गतिविधियाँ उसके और जिले दोनों के लिए खतरनाक हो सकती थीं।

इसी बीच, यह आशंका बढ़ती जा रही थी कि गांधी जी भले ही अहिंसक आंदोलनों के माध्यम से कृषि सुधारों का समर्थन कर रहे थे, लेकिन निहित स्वार्थ उनके समर्थन का चुनिंदा रूप से फायदा उठाकर हिंसक आंदोलन शुरू कर सकते हैं। क्या उनके लिए ऐसे आंदोलन का समर्थन करना गलत नहीं होगा जिससे पूरे बंगाली मध्यम वर्ग का पूर्ण विनाश हो जाए? क्या इससे अंततः आम ग्रामीणों पर भी असर नहीं पड़ेगा, क्योंकि जमींदारों द्वारा ग्रामीण अर्थव्यवस्था को दी जा रही सेवाओं से वे वंचित हो जाएंगे? प्यारेलाल लिखते हैं: 'गांधीजी ने उत्तर दिया कि वे स्थानीय मुद्दों के वास्तविक गुण-दोषों पर कोई निर्णय देने की स्थिति में नहीं थे, जिनका उन्होंने पर्याप्त अध्ययन नहीं किया था। वे केवल सामान्य सिद्धांतों के संदर्भ में ही बात कर सकते थे। जमींदार की जमीन जब्त नहीं की जानी थी; केवल उसका हिस्सा कम किया जाना था। निश्चित रूप से इससे उसका "पूर्ण विनाश" नहीं हो सकता था। इस प्रश्न के सांप्रदायिक पहलू से ग्रस्त होना गलत था। "हो सकता है कि नोआखली में जमींदार अधिकतर हिंदू थे। लेकिन यदि कानून स्वयं सही है तो इससे कोई फर्क नहीं पड़ना चाहिए कि यह किसे प्रभावित करता है।" उन्हें हर समस्या का उसके मूल गुणों के आधार पर ही कड़ाई से विश्लेषण करना चाहिए। इसलिए, उन्होंने भूस्वामियों को सलाह दी कि वे स्वामित्व के हिस्से में कमी की मांग के पीछे के सिद्धांत को स्वीकार करें और ठोस संशोधनों के लिए काम करें। "मैं वह समय आते देख रहा हूँ जब सारी भूमि राज्य की, यानी भूमि जोतने वाले की होगी। बीते वर्षों में भारत ने भूमि ज़ब्ती का सामना किया है। मामूली कमी का विरोध करके ज़ब्ती का जोखिम क्यों मोल लें? क्योंकि, मैं चाहे जितना भी चाहूँ, इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि स्वतंत्रता के बाद राज्य पूरी तरह से अहिंसक

तरीके से चलेगा।" उन्होंने निष्कर्ष निकाला: "यह स्पष्ट है कि हिंसा के माध्यम से भूस्वामियों का पूर्ण विनाश, यानी उनका खात्मा, अंततः किसानों को भी बर्बाद कर देगा। यदि भूस्वामी बुद्धिमानी से काम लें, तो अंत में किसी का भी नुकसान नहीं होगा।"
गांधी जी 3 फरवरी की सुबह अपने अगले गंतव्य साधुखिल पहुंचे। दंगाग्रस्त नोआखली में नंगे पैर शांति यात्रा पर निकले गांधी जी को अब एक महीना बीत चुका था। उनकी इस यात्रा ने दंगा प्रभावित समुदाय में विश्वास जगाया था और काफी हद तक भय को दूर करने में मदद की थी। उन्हें पूरा विश्वास था कि यदि उनमें वास्तव में वह स्वाभाविक पवित्रता है, जिसका वे दावा करते थे, तो उनके परिश्रम का फल अवश्य मिलेगा और वह स्थायी रहेगा। धरमपुर और प्रसादपुर में एक-एक दिन रुकने के बाद गांधीजी 8 फरवरी को नंदीग्राम पहुंचे, जहां उनका एक विशाल जनसमूह ने स्वागत किया। गांधीजी जिस मुस्लिम के घर गए थे, उनमें से एक ने पूछा, 'हम आपकी किस प्रकार से मेहमाननवाजी कर सकते हैं?'
गांधी ने उत्तर दिया, 'मुझे अपने प्रेम और स्नेह में स्थान देने का आतिथ्य सत्कार।'
अगले दिन गांधीजी डेढ़ घंटे पैदल चलकर बिजॉयनगर पहुंचे। राहत एवं शांति कार्यकर्ता, जो गांधीजी के साथ नोआखली गए थे और अब जिले के विभिन्न गांवों में काम कर रहे थे, एक दुविधा में फंस गए। उन्होंने सख्त निर्देश दिए थे कि वे राहत कार्य में स्थानीय कार्यकर्ताओं को शामिल करें और स्थानीय राजनीति और गुटबाजी से दूर रहें। हालांकि, हर गांव बंटा हुआ प्रतीत हो रहा था। गांधीजी का संदेश फिर भी स्पष्ट था: 'मैंने एक भी ऐसा गांव नहीं देखा जहां ईमानदार कार्यकर्ता न हो। मैं तो यहां तक

कहूंगा कि किसी एक गांव में कुछ वर्षों तक रहकर, स्थानीय कार्यकर्ताओं के माध्यम से काम करने का प्रयास करना भी इस बात का निर्णायक प्रमाण नहीं माना जाना चाहिए कि काम स्थानीय कार्यकर्ताओं के माध्यम से नहीं किया जा सकता। मैं मुख्य कार्यकर्ता से स्पष्ट रूप से कह सकता हूं: "यदि आपको कोई बाहरी सहायता मिल रही है, तो उसे हटा दें। अकेले, साहसपूर्वक, बुद्धिमानी से, जितनी भी स्थानीय सहायता मिल सके, उसके साथ काम करें और यदि अंत में आप सफल नहीं होते हैं, तो केवल स्वयं को दोष दें, किसी और को नहीं।"'
शाहपुर के बाद रायपुर में सबसे भीषण नरसंहार हुआ था। गांधीजी को इस बात के पर्याप्त सबूत मिले कि ज़िलों में अशांति अभी भी पनप रही थी। गांधीजी से मिलने के लिए पंजाब से आए एक मुस्लिम का सारा सामान रास्ते में लूट लिया गया था। गुजरात के एक अन्य मुस्लिम को गांधीजी से मिलने की इच्छा रखने पर कुछ स्थानीय मुसलमानों ने धमकाया था। रायपुर में दो जामा मस्जिदें थीं। एक मस्जिद के इमाम ने उन्हें मस्जिद दिखाई, लेकिन दूसरी मस्जिद के इमाम ने यह कहकर मना कर दिया कि उन्हें मस्जिद के ट्रस्टियों से लिखित अनुमति चाहिए। शाम की नमाज़ के बाद अपने शिविर लौटते समय, गांधीजी एक मंदिर गए जिसे दंगों के दौरान स्थानीय मुसलमानों ने कब्ज़ा कर लिया था और 'पाकिस्तान क्लब' में बदल दिया था। घटना के चार महीने बाद भी उस पर वही चिन्ह लगा हुआ था। स्थानीय मुसलमानों ने गांधीजी को आश्वासन दिया कि वे मस्जिद के शीघ्र जीर्णोद्धार के लिए सभी आवश्यक कदम उठाएंगे।
अपनी तीर्थयात्रा के दौरान गांधी जी अपने देश की आसन्न स्वतंत्रता को नहीं भूले थे। प्यारेलाल ने महात्मा गांधी: द लास्ट फेज, खंड 10, भाग दो, प्रथम में एक सच्चे स्वतंत्र भारत के

उनके दृष्टिकोण का वर्णन किया है: 'उन प्रांतों को, जिनमें ब्रिटिश राज से स्वतंत्र होने और अपने भाग्य की बागडोर अपने हाथों में लेने का आत्मविश्वास, शक्ति और दृढ़ संकल्प था, उन्होंने वह मार्ग सुझाया जिसका वे अनुसरण करना चाहते थे। धरमपुर से आगे की अपनी तीर्थयात्रा के दौरान प्रार्थना के बाद की बातचीत स्वतंत्र प्रांतों में साकार होने वाली स्वतंत्रता के उनके दृष्टिकोण पर केंद्रित थी, ताकि यह शेष भारत के लिए एक आदर्श बन सके। जो उभरने लगा वह उनके सपनों के भारत का चित्र था। एक जातिविहीन और वर्गविहीन समाज का चित्र, जिसमें कोई ऊर्ध्वाधर विभाजन नहीं, केवल क्षैतिज विभाजन; कोई ऊँच-नीच नहीं; सभी सेवाओं का समान दर्जा और समान वेतन; जिनके पास अधिक है वे अपने लाभ का उपयोग स्वयं के लिए नहीं बल्कि कम संपन्न लोगों की सेवा के लिए एक धरोहर के रूप में करते हैं; व्यवसाय के चुनाव में प्रेरक कारक व्यक्तिगत उन्नति नहीं बल्कि समाज की सेवा के माध्यम से आत्म-अभिव्यक्ति और आत्म-साक्षात्कार है।'
गांधीजी से पूछा गया कि सरकार देश के प्राकृतिक संसाधनों और कच्चे माल का अधिकतम उपयोग करने के लिए औद्योगीकरण की योजनाएँ चला रही है, जबकि देश की प्रचुर मानव शक्ति व्यर्थ जा रही है। क्या इसे सही मायने में राष्ट्रीय विकास कहा जा सकता है? गांधीजी ने उत्तर दिया था कि यह स्पष्ट है कि कोई भी योजना जो देश के कच्चे माल का दोहन करती है और संभावित रूप से अधिक शक्तिशाली मानव शक्ति की उपेक्षा करती है, वह कभी भी मानवीय समानता नहीं ला सकती और न ही राष्ट्र को वास्तव में सुखी और समृद्ध बना सकती है। पश्चिम में उन्होंने सार्वभौमिक मानव शक्ति की उपेक्षा की और सत्ता को कुछ मुट्ठी भर लोगों के हाथों में केंद्रित कर दिया, जो अधिकांश लोगों की कीमत पर सत्ता और

धनवान बने। इसका परिणाम यह हुआ कि उनका औद्योगीकरण उन देशों के गरीबों के लिए एक संदिग्ध वरदान और शेष विश्व के लिए एक खतरा बन गया। यदि भारत को ऐसी आपदा से बचना था, तो उसे पश्चिमी देशों की सर्वोत्तम नीतियों को अपनाना और आत्मसात करना होगा तथा उनकी आकर्षक दिखने वाली लेकिन विनाशकारी आर्थिक नीतियों को त्याग देना होगा। भारत के संदर्भ में, वास्तविक योजना में उसकी संपूर्ण मानव शक्ति का सर्वोत्तम उपयोग करना और उसके कच्चे उत्पादों को उसके असंख्य गांवों में वितरित करना शामिल होना चाहिए ताकि उन्हें वस्तुओं में परिवर्तित किया जा सके, बजाय इसके कि उन्हें गांवों से बाहर भेजा जाए या देश से निर्यात किया जाए और फिर तैयार माल के रूप में उच्च प्रीमियम पर पुनः खरीदा जाए।
इसी बीच, मुस्लिम लीग के कराची प्रस्ताव ने संविधान सभा में मुस्लिम लीग के शामिल होने की सारी उम्मीदें खत्म कर दीं। 9 फरवरी को नेहरू ने गांधीजी को लिखा: 'लीग का प्रस्ताव बेहद खराब था। शायद इसमें एक अच्छाई भी थी क्योंकि इसने स्थिति को बिल्कुल स्पष्ट कर दिया। इस प्रस्ताव के बाद अंतरिम सरकार में पुराने तरीके से काम करना हमारे लिए पहले से भी ज्यादा मुश्किल हो गया है। हम इस मामले में आगे बढ़ रहे हैं।' अगले दिन उन्होंने फिर लिखा: 'हमने वायसराय को सूचित कर दिया है कि कराची में पारित मुस्लिम लीग के प्रस्ताव के मद्देनजर, लीग के सदस्य सरकार में बने नहीं रह सकते। हमारे आरोप और मांग का कोई जवाब नहीं है और वायसराय इसे समझते हैं। वे लंदन से निर्देशों की प्रतीक्षा कर रहे हैं।' लंदन टाइम्स ने टिप्पणी की: 'लीग, जाहिर तौर पर इस ब्रिटिश घोषणा पर भरोसा करते हुए कि संविधान सभा द्वारा बनाया गया संविधान, जो पूरी तरह से प्रतिनिधि नहीं है, भारत के

अनिच्छुक हिस्सों पर लागू नहीं किया जा सकता, शायद इस कम महत्वपूर्ण बात को भूल गई कि अल्पमत को अनिश्चित काल तक बहुमत की प्रगति में बाधा डालने की अनुमति नहीं दी जा सकती।'
15 फरवरी को एक प्रेस साक्षात्कार में पटेल ने खुलासा किया कि अंतरिम सरकार के कांग्रेस सदस्यों ने एचएमजी से कहा था कि या तो वे मुस्लिम लीग से नए संविधान के मसौदे में सहयोग करने का आग्रह करें या फिर मंत्रिमंडल छोड़ दें। उन्होंने कहा कि अगर मुस्लिम लीग ऐसा नहीं करती, तो कांग्रेस ऐसा करेगी। यह कदम, जिस पर लंबे समय से विचार किया जा रहा था, अंतरिम सरकार में निचले सदन में बैठे मुस्लिम लीग सदस्यों द्वारा एक महत्वपूर्ण निर्णय पर सरकार का समर्थन करने से इनकार करने के बाद उठाया गया। यह मुद्दा एनडब्ल्यूएफपी में उपद्रवी तत्वों के खिलाफ दंडात्मक कार्रवाई करने का था, जो काफी संवेदनशील था। कानून-व्यवस्था के इतने महत्वपूर्ण मुद्दे को पूरी तरह से सांप्रदायिक आधार पर निपटाना एक खतरे का संकेत था जिसे कोई भी जिम्मेदार निकाय अनदेखा नहीं कर सकता था। यहां तक कि रूढ़िवादी लंदन टाइम्स को भी यह टिप्पणी करने के लिए मजबूर होना पड़ा कि दोनों मंत्रियों का व्यवहार 'वास्तव में अस्वीकार्य' था।
दिसंबर 1946 में लिखे एक पत्र में गांधी ने कहा था: 'मेरी राय में, अंग्रेजों का भारत में पूर्ण शांति स्थापित होने तक भारत न छोड़ना एक असंभव सपना लगता है। वे जो कर सकते हैं और उन्हें करना ही चाहिए, वह यह है कि वे पूरी सत्ता इच्छुक और सक्षम पक्ष को सौंप दें और जल्द से जल्द ब्रिटिश सेना को वापस बुला लें और शेष सेना को भंग कर दें। उन्हें ब्रिटिश हितों की रक्षा के लिए किसी भी हिस्से को अपने पास रखने के बारे में नहीं सोचना चाहिए। ये हित भारत की जनता की सद्भावना पर निर्भर होने चाहिए।

शांतिपूर्ण सत्ता हस्तांतरण का यही एकमात्र मार्ग है, कोई दूसरा नहीं।'
ब्रिटिश सरकार भी लगभग इसी निष्कर्ष पर पहुँची। 20 फरवरी, 1947 को एटली ने संसद में बयान दिया कि एचएमजी का यह निश्चित इरादा है कि जून 1948 तक सत्ता का हस्तांतरण जिम्मेदार भारतीय हाथों में सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक कदम उठाए जाएँ। 16 मई, 1946 के राजकीय पत्र के तहत, उन्होंने संसद को संविधान सभा द्वारा तैयार किए जाने वाले संविधान को अपनाने की सिफारिश करने पर सहमति व्यक्त की थी। लेकिन एटली ने आगे कहा कि यदि कैबिनेट मिशन योजना के अनुसार 'पूरी तरह से प्रतिनिधि संविधान सभा' द्वारा संविधान तैयार नहीं किया गया, तो 'एचएमजी को इस बात पर विचार करना होगा कि ब्रिटिश भारत में केंद्र सरकार की शक्तियाँ नियत तिथि पर किसे सौंपी जानी चाहिए, चाहे पूरी तरह से ब्रिटिश भारत के लिए किसी प्रकार की केंद्रीय सरकार को, या कुछ क्षेत्रों में मौजूदा प्रांतीय सरकारों को, या किसी अन्य तरीके से जो सबसे उचित और भारतीय जनता के सर्वोत्तम हित में प्रतीत हो।'
इसी दौरान, ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने लॉर्ड वेवेल को 'युद्धकालीन' वायसराय के पद से बर्खास्त करने और लॉर्ड माउंटबेटन को उनका उत्तराधिकारी और भारत का अंतिम वायसराय नियुक्त करने की घोषणा की। हालाँकि उनकी सेवा समाप्ति पर उन्हें औपचारिक रूप से बधाई दी गई, लेकिन लॉर्ड वेवेल को स्थिति को संभालने में उनकी अक्षमता के कारण बर्खास्त किया जा रहा था। प्रधानमंत्री को दिसंबर 1946 में ही यह एहसास हो गया था कि यदि उनकी सरकार की भारत नीति को पूर्णतः विफल होने से बचाना है तो वेवेल को हटाना ही होगा। वेवेल अपने पीछे पहले से कहीं अधिक गंभीर राजनीतिक गतिरोध, भयंकर हिंसा जो एक भयंकर आग में बदलने

की कगार पर थी, संगठित अराजकता जो पहले ही तीन प्रांतों में फैल चुकी थी और पूरे देश को युद्धक्षेत्र में बदलने की धमकी दे रही थी, वायसराय के निजी कर्मचारियों और ब्रिटिश प्रशासनिक सेवा के गोरे साहबों के बीच विभाजित केंद्रीय सचिवालय और एक चरमराती प्रशासनिक सेवा छोड़ रहे थे जिसमें सांप्रदायिकता घुसपैठ कर चुकी थी। जैसा कि स्वयं श्री एटली ने कहा था, 'सैन्य निकासी योजना से अधिक रचनात्मक कुछ भी नहीं।'
एचएमजी की घोषणा पर अपनी पहली प्रतिक्रिया देते हुए, गांधी ने 24 फरवरी को नेहरू को लिखा: 'स्पष्ट रूप से मैंने लगभग पूरी बात का अनुमान लगा लिया था। एटली के भाषण की मेरी व्याख्या यह है कि स्वतंत्रता उन क्षेत्रों को दी जाएगी जो इसे चाहते हैं और ब्रिटिश संरक्षण के बिना काम चला लेंगे;
(1) अंग्रेज वहीं रहेंगे जहां उनकी जरूरत होगी;
(2) इससे उन प्रांतों या भागों के लिए पाकिस्तान बन सकता है जो जो चाहे वो चाहे। किसी पर भी कोई दबाव नहीं डाला जाएगा। कांग्रेस
यदि प्रांत बुद्धिमान होंगे तो उन्हें वह मिल जाएगा जो वे चाहते हैं; (3) बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करेगा कि संविधान सभा क्या करेगी और
आप अंतरिम सरकार के रूप में क्या कर सकते हैं; (4) यदि ब्रिटिश सरकार घोषणा के प्रति ईमानदार बनी रहती है तो
अच्छा है। वरना यह खतरनाक हो सकता है।
दूसरे शब्दों में, भविष्य इस बात पर निर्भर करेगा कि भारत, गांधी जी द्वारा तैयार किए जा रहे 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव के संदर्भ में स्वतंत्रता की चुनौती का सामना करने में कितना सक्षम है, और ब्रिटिश सरकार बिना शर्त पीछे हटने और भारत को

उसके भाग्य पर छोड़ने के लिए कितनी इच्छुक है, और यह कि भारत, सेवाओं से उस निर्णय को अक्षरशः और भावना से निष्ठापूर्वक और निष्पक्ष रूप से लागू करवाने में कितना सक्षम है।
देवपुर, नोआखली जिले का आखिरी गाँव जहाँ गांधीजी ने रात बिताई, बेहद सुंदर था। गाँव तक जाने वाला रास्ता डकातिया नदी के किनारे-किनारे घुमावदार था। बाद में, उन्होंने मुख्य कार्यकर्ता को बुलवाया क्योंकि वे अपने रास्ते को सजाने में खर्च किए गए अतिरिक्त धन से नाखुश थे। उन्होंने पूछा, "इतना सारा सामान कहाँ से लाया? यह गाँव से तो नहीं हो सकता!" बेचारे कार्यकर्ता ने समझाने की कोशिश की: उन्होंने गांधीजी के उचित स्वागत के लिए चंदा इकट्ठा किया था। गांधीजी ने कहा, "क्या तुम्हें एहसास है कि इस दिखावे से तुम सांप्रदायिक भावनाओं को भड़काओगे? इस दिखावे का मेरे लिए कोई महत्व नहीं है... लेकिन यह दुर्भावना की एक ऐसी विरासत छोड़ जाएगा जो आने वाले लंबे समय तक इस गाँव के सांप्रदायिक संबंधों को दूषित करती रहेगी। तुम कांग्रेसी हो। खादी पर मेरे कड़े विचारों को जानते हुए भी क्या तुम्हें यह बात समझ में नहीं आई कि मिल के कपड़े से बने रिबन और झंडे मुझे ही ठेस पहुँचाएँगे?" गांधीजी ने स्वयं मालाओं और पुष्पांजलिओं को खुलवाने का निरीक्षण किया और धागे के हर एक गज को दोबारा लपेटवाया ताकि उसका इस्तेमाल कपड़ा बुनने में किया जा सके। उन्होंने लगभग बीस ऊन के गुच्छे बचा लिए। मनु ने नोआखली से अपनी डायरी में लिखा, 'जब वे इस तरह अपने दिल की बात कह रहे थे, तो वे मानो किसी ज्वालामुखी के विस्फोट की तरह लग रहे थे। लेकिन उनकी आवाज़ में क्रोध या निंदा का कोई निशान नहीं था। उनके चेहरे को देखकर ऐसा लग रहा था मानो वे अपनी किसी बड़ी गलती को स्वीकार कर रहे हों। और वास्तव में, उन्होंने हमें कई बार बताया

है कि उनके अनुयायियों की गलती को उनकी विफलता—उनकी शिक्षाओं की विफलता—माना जाना चाहिए।'
18 फरवरी को गांधी जी पड़ोसी जिले तिप्परा में दाखिल हुए और सुबह 8:30 बजे जिले के पहले गांव अलुनिया पहुंचे। जिले के नज़ारे और मिट्टी की प्रकृति में काफी बदलाव देखने को मिला। नोआखली में नरम जलोढ़ मिट्टी थी, जबकि तिप्परा में दोमट मिट्टी थी। सुपारी के बागान तो थे, लेकिन नारियल के पेड़ कम होते जा रहे थे। नोआखली में बहुतायत में दिखने वाले हरे-भरे धान के खेत यहां गायब थे। अपने भोजन को सरल बनाने के लिए गांधी जी ने अलुनिया में कुछ बहुत ही अजीब और बेस्वाद व्यंजन बनाए। प्यारेलाल लिखते हैं: 'दोपहर के भोजन में उन्होंने भिंडी, करेला और साग का गाढ़ा, चिपचिपा स्टू खाया, जिसमें न तो मसाला था और न ही नमक। इसमें उन्होंने उबला हुआ बकरी का दूध डाला और चम्मच से हिलाकर पी लिया। उन्हें देखते हुए मुझे आश्चर्य हुआ कि भला कोई उस भयानक चीज़ को कैसे निगल सकता है! मुझे इसका भारी खामियाजा भुगतना पड़ा।' शायद मेरे मन में चल रही बातों को भांपते हुए उन्होंने मुझे चिढ़ाया, "तुम्हें इन सब चीजों का क्या ज्ञान है! जब तुम्हें सचमुच भूख लगती है तो तुम्हारे सामने जो कुछ भी परोसा जाता है वह एक दावत जैसा लगता है!" अपने अपार स्नेह से उन्होंने मुझे काढ़े के दो चम्मच दिए, जिसे मैंने जितना हो सके साहस दिखाते हुए पी लिया!
हालांकि उनका मन और शरीर थका हुआ था, गांधी जी बिल्कुल भी क्षीण नहीं थे। 19 फरवरी को महाशिवरात्रि थी, भगवान शिव का पर्व, और गांधी जी उस दिन बीरामपुर में थे। उनके लिए यह पर्व दर्दनाक यादें ताजा कर देता था, क्योंकि तीन साल पहले इसी दिन आगा खान पैलेस जेल शिविर में उन्होंने अपनी पत्नी कस्तूरबा को खो दिया

था। तब से वे हर साल उपवास और प्रार्थना करके कस्तूरबा की पुण्यतिथि मनाते थे। देखने में तो यह दिन किसी आम दिन जैसा ही था, जो सुबह चार बजे हमेशा की तरह शुरू हुआ और बिना रुके चलता रहा। उनके लिए व्यक्तिगत रूप से इतना महत्वपूर्ण इस घटनाक्रम का एकमात्र उल्लेख उनकी डायरी के एक वाक्य में मिलता है: 'इसी दिन, और ठीक इसी समय (शाम 7.35 बजे) तीन साल पहले बा ने अपना नश्वर शरीर त्याग दिया था।'
शाम 7.35 बजे, सभी लोग कस्तूरबा के चित्र के सामने जल रहे एक छोटे से तेल के दीपक के चारों ओर एकत्रित हुए। चित्र पर गांधी जी द्वारा काते गए धागे की माला थी। बाद में इस धागे को फिर से काता जाएगा और बुनाई के लिए भेजा जाएगा। गांधी जी ने गीता के पहले छह अध्यायों का पाठ सुना, फिर थकान के कारण लेट गए। बाद में उन्होंने बताया कि जब वे पाठ सुन रहे थे, तो उन्हें अपनी प्रिय दिवंगत साथी के साथ एकात्मता का अनुभव हुआ। 'गीता पाठ के दौरान, तीन साल पहले बा के अंतिम क्षणों का पूरा दृश्य मेरे सामने स्पष्ट रूप से प्रकट हो गया। मुझे ऐसा लगा जैसे उनका सिर सचमुच मेरी गोद में रखा हो। यह विशेष रूप से छठे अध्याय के बाद हुआ, जब मैं लेट गया और एक पल के लिए गहरी नींद में सो गया। मुझे स्वीकार करना होगा,' उन्होंने उदास स्वर में कहा, 'उनके बिना मैं अहिंसा और आत्म-अनुशासन के अपने प्रयास में सफल नहीं हो पाता। वे मुझे किसी और से बेहतर समझती थीं। उनकी निष्ठा अतुलनीय थी।' आखिरी दिन, मुझे अंत तक नहीं पता था कि वह किसकी गोद में अपनी आँखें बंद करेंगी। लेकिन अंत से ठीक पहले उन्होंने मुझे बुलवाया और मेरी गोद में अंतिम सांस ली। यही थीं बा। हम उनके गुणों को याद करके और उन्हें अपने भीतर अपनाने का प्रयास करके उनकी श्रद्धा (हर साल बरसी पर मनाया जाने वाला हिंदू मृत्यु संस्कार) उचित

रूप से मना सकते हैं। मैंने उनके जैसी निष्कपट आस्था, निस्वार्थ भक्ति और सेवा का दूसरा उदाहरण नहीं देखा। हमारे विवाह के बाद से, वह मेरे जीवन के सभी संघर्षों में अटूट निष्ठा के साथ खड़ी रहीं और तन-मन से मेरे जीवन के लक्ष्य के प्रति समर्पित रहीं, जिसकी कोई तुलना नहीं है।
बीरामपुर गांव मेघना नदी के किनारे बसा था, जो एक परिवर्तनशील नदी थी और अक्सर अपना रास्ता बदल लेती थी। अब यह गांव से लगभग छह किलोमीटर दूर बहती थी। दंगों के कारण मछुआरों को भी भारी नुकसान उठाना पड़ा था। उनकी दुर्दशा को देखते हुए, गांधी जी ने पहली बार कहा था कि उनके लिए एकमात्र विकल्प स्वैच्छिक और पूर्ण विस्थापन ही है।
अगले गाँव, बिश्कटली में, मुस्लिम विरोध और मुस्लिम लीग द्वारा गांधी के विरुद्ध चलाया गया अभियान चरम पर पहुँच गया। इस छोटे से गाँव में 4,694 की भारी मुस्लिम आबादी के बीच केवल 306 हिंदू लोग रहते थे। बचे हुए हिंदू गाँव छोड़कर चले गए थे और उनमें से कोई भी वापस नहीं लौटा था। बिश्कटली की ओर जाने वाले रास्ते के दोनों ओर पेड़ों पर कई पोस्टर चिपकाए गए थे जिनमें गांधी को चेतावनी दी गई थी:
'बिहार को याद रखो'
और तुरंत टिप्पेराह छोड़ दें।
हमने आपको कई बार चेतावनी दी है।
फिर भी तुम यहीं हो।
वापस जाओ; नहीं तो तुम्हारे लिए और भी बुरा होगा।' एक अन्य संदेश में यह लिखा था:
'वहां जाओ जहां तुम्हारी जरूरत हो।'
अपना पाखंड छोड़ दो और

पाकिस्तान को स्वीकार करो।'
'मुस्लिम लीग जिंदाबाद।'
Quaid-i-Azam zindabad.
पाकिस्तान हो और
कांग्रेस मुर्दाबाद!
एक अन्य ने घोषणा की।
गांधी जी अगले दिन कमलापुर से चार क्षेत्र के मध्य में स्थित चार कृष्णपुर के लिए रवाना हुए। चार का शाब्दिक अर्थ है नदी के मार्ग परिवर्तन से नदी तल में बना द्वीप। नोआखली और टिप्पेरा का चार क्षेत्र मेघना नदी की देन है—इसका धीमा, गाद से भरा और निरंतर बदलता प्रवाह चारों के जाल के निर्माण में योगदान देता है। चार कृष्णपुर की अधिकांश आबादी नामाशुद्रों और हरिजनों की थी, जबकि मुसलमानों की संख्या केवल दो सौ थी। दंगों के दौरान नामाशुद्रों को भारी कष्ट सहना पड़ा था और अन्य क्षेत्रों में शांति बहाल होने के बाद भी लंबे समय तक आतंक का राज जारी रहा था। जब गांधी जी की मेजबानी करने वाले एक स्थानीय मुस्लिम ने अपने समुदाय के भारी दबाव के कारण अपना इरादा बदल दिया, तो एक घर के जले हुए अवशेषों से प्राप्त जली हुई और काली पड़ी नालीदार चादरों का उपयोग करके एक अस्थायी झोपड़ी बनाई गई।
गांधीजी को दोनों जिलों में फैले अपने कार्यकर्ताओं से खबरें मिलने लगी थीं कि हिंदुओं को डराया-धमकाया जा रहा है। मुसलमान, विशेषकर मुस्लिम लीग से जुड़े और हालिया हिंसा के दोषियों से संबद्ध मुसलमान, गुप्त रूप से मिलकर आतंक का एक नया अभियान चलाने की योजना बना रहे थे। हिंदुओं को धमकी दी जा रही थी कि अगर उन्होंने अपनी शिकायतें वापस नहीं लीं तो उन पर और हमले किए जाएंगे। बड़ी संख्या में हिंदू मछुआरे, पान उत्पादक, बुनकर,

एक ऐसी समस्या है जिसे भारत को अपने और मानवता के लिए हल करना होगा। सौभाग्य से या दुर्भाग्य से, मैंने अपने जीवन के सबसे कठिन प्रयासों में सफलता प्राप्त की है। लेकिन मुझे नहीं पता कि इस बार क्या होगा।' हमें सबसे बड़ी परीक्षा दी जाती है, लेकिन उस पर विजय पाना हमारी क्षमता से कभी परे नहीं होता।
इसी बीच, गांधी जी द्वारा अपने शरीर पर किए जा रहे निरंतर कष्टों का असर दिखने लगा था। प्यारेलाल ने अपनी पुस्तक महात्मा गांधी: द लास्ट फेज, खंड 9, भाग दो, प्रथम में गांधी जी की स्थिति का वर्णन करते हुए लिखा है: "मुझ पर घात लगाए बैठे लोग और भी उग्र होते जा रहे हैं," गांधी जी ने एक पत्र में लिखा। "लेकिन ऐसे हमलों का आनंदपूर्वक और निडरता से सामना करना ही मेरे जीवन का उद्देश्य रहा है। मेरा वर्तमान यज्ञ परम शुद्धि का है। शायद यह मेरा अंतिम यज्ञ हो।" नई दिल्ली से कुछ महत्वपूर्ण संदेश लेकर आए एक मित्र से बातचीत के दौरान उन्होंने कहा: "मैं अपनी इंद्रियों के धीरे-धीरे कमजोर होते जाने से, एक पराजित व्यक्ति के रूप में मरना नहीं चाहता। किसी हत्यारे की गोली से मेरा अंत हो सकता है। मैं इसका स्वागत करूंगा। लेकिन सबसे बढ़कर, मैं अपने अंतिम सांस तक अपने कर्तव्य का पालन करते हुए विलीन होना चाहता हूं।" एक मित्र को लिखे उनके पत्र में उन्होंने खुद को "तूफानी मौसम में बिना जुते रास्तों पर चलते हुए" बताया है। इस तरह वे शायद हमेशा के लिए जीवित रह सकते थे। लेकिन शरीर और रक्त की भी सीमाएँ होती हैं और प्रकृति ने मनुष्य के प्रयासों पर एक समझदारी भरा नियंत्रण रखा है। कुछ समय से उन्हें कानों में "ढोल की आवाज़" सुनाई दे रही थी—जो उच्च रक्तचाप का एक संकेत था, जिसके प्रति वे प्रवण थे। अंततः मित्रों की सलाह पर वे हैमचार में कुछ समय के लिए विश्राम करने के लिए सहमत हो गए ताकि वे

कारगर नियम यह था कि अपनी क्षमता और पहुँच के भीतर कुछ कार्यों का चयन किया जाए और समग्र योजना को ध्यान में रखते हुए उन पर पूर्ण रूप से कार्य किया जाए। गांधी जी ने अंत में कहा कि व्यक्तिगत रूप से वे दोनों समुदायों के बीच एकता स्थापित करने को सर्वोच्च प्राथमिकता देंगे, जिसकी कमी ने पूरे माहौल को इतना दूषित कर दिया था कि शांति समिति की बैठक में भी, जहां राहत आयुक्त ने अपनी महत्वाकांक्षी योजना का अनावरण किया था, बहुत कम गैर-मुस्लिम दिखाई दे रहे थे।
हैमचार में आयोजित पहली प्रार्थना सभा में, जिसमें बड़ी संख्या में नामाशुद्र उपस्थित थे, गांधीजी ने कहा कि उन्हें स्वयं को पतित या 'अछूत' नहीं समझना चाहिए। उन्होंने स्वर्गीय मदन मोहन मालवीय के कहे शब्दों का उल्लेख किया—'ईश्वर के बच्चों को ईमानदारी से कमाया हुआ पैसा और उससे प्राप्त होने वाली आजीविका से संतुष्ट रहना चाहिए। यही उन्हें सच्ची खुशी देगा।' ब्रिटिश प्रधानमंत्री के कथन का उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि ब्रिटिश शासन के इतिहास में चाहे जो कुछ भी हुआ हो, इसमें कोई संदेह नहीं था कि ब्रिटिश निकट भविष्य में भारत छोड़ देंगे। प्रधानमंत्री के कथन ने विभिन्न दलों पर यह दायित्व डाल दिया कि वे जो उचित समझें, वही करें। स्थिति को बनाना या बिगाड़ना उन्हीं पर निर्भर था। उनकी एकजुट इच्छा को कोई नहीं बदल सकता था। जहाँ तक उनका संबंध था, वे दृढ़तापूर्वक मानते थे कि यदि हिंदू और मुसलमान बिना किसी बाहरी दबाव के एकजुट हो जाएं, तो वे न केवल भारत के भविष्य को, बल्कि संभवतः पूरे विश्व के भविष्य को प्रभावित करेंगे। इसका विकल्प गृहयुद्ध था, जो केवल देश को टुकड़ों में बांट देगा।

24 अप्रैल को ही नेहरू ने गांधीजी को लिखा: 'ब्रिटिश सरकार द्वारा जारी नई घोषणा पर आपने मेरा बयान अवश्य देखा होगा। अंतरिम सरकार में हमारे सभी सहयोगियों ने इस बयान पर सावधानीपूर्वक विचार किया, सिवाय मुस्लिम लीग के सदस्यों के... श्री एटली के बयान में बहुत सी अस्पष्ट बातें हैं जिनसे परेशानी हो सकती है। लेकिन मुझे विश्वास है कि अंततः यह एक साहसिक और स्पष्ट बयान है। यह भारत छोड़ने की हमारी बार-बार की मांग को पूरा करता है... अब मामले तेजी से आगे बढ़ेंगे, या कम से कम माउंटबेटन के आने के बाद... कार्यकारी समिति की बैठक 5 मार्च को है... इस नाजुक समय में आपकी सलाह हमारे लिए बहुत मददगार होगी। लेकिन आप परामर्श के लिए बहुत दूर हैं और आप पूर्वी बंगाल से हटने से इनकार कर रहे हैं। फिर भी, यदि आप इस विषय पर अपने विचार हमें बता सकें, तो हम आभारी होंगे।' 28 फरवरी को नेहरू ने लिखा: 'कार्यकारी समिति की बैठक जल्द ही यहां होने वाली है और हम सभी इस अवसर पर आपकी उपस्थिति के लिए उत्सुक थे। हमने आपको एक संयुक्त टेलीग्राम भेजकर आपसे आने का आग्रह करने पर विचार किया था। लेकिन अंततः हमने इसे न भेजने का निर्णय लिया।' हमें पूरा यकीन था कि आप इस समय नहीं आएंगे और हमारा टेलीग्राम भेजना शर्मिंदगी का कारण बनेगा। लेकिन हालांकि हम टेलीग्राम नहीं भेज रहे हैं, फिर भी हम दृढ़ता से मानते हैं कि आने वाले महत्वपूर्ण हफ्तों में आपकी सलाह अत्यंत आवश्यक है। हममें से एक या दो लोगों का आपसे मिलने आना संभव है, लेकिन यह संतोषजनक तरीका नहीं है। हम सभी आपस में विस्तार से चर्चा करना चाहते थे। फिलहाल हममें से किसी के लिए भी दो-तीन दिनों के लिए भी दिल्ली छोड़ना बेहद मुश्किल है। कई लोगों का एक साथ जाना काम को पूरी तरह से बाधित कर देगा। विधानसभा में बजट है, संविधान सभा की

समितियां हैं, राजकुमारों के साथ बातचीत है, वायसराय का परिवर्तन है और कई अन्य चीजें हैं जिन पर लगातार ध्यान देने की आवश्यकता है। इसलिए हम जा नहीं सकते और अगर आप नहीं आएंगे तो हम कैसे मिलेंगे?
लेकिन गांधीजी का मानना था कि बंगाल में वे जो कर रहे थे, वह उनका कर्तव्य था, और चाहे कितनी भी मजबूरियाँ क्यों न हों, वे अपना काम अधूरा नहीं छोड़ सकते थे। पटेल को लिखे एक पत्र में उन्होंने लिखा: 'हो सकता है मैं इसे आपको साबित न कर पाऊँ, लेकिन मुझे पूरा विश्वास है कि यहाँ मेरा काम अत्यंत महत्वपूर्ण है। आप सभी अनुभवी लोग वहाँ अपना पूरा योगदान दे रहे हैं... मैं यहाँ गणमान्य व्यक्तियों के बीच अकेला हूँ। इसलिए मुझे यहाँ बने रहने की अनुमति दें। यदि मैं कुछ सार्थक कर पाता हूँ, तो पूरे देश को लाभ होगा; यदि मैं असफल भी होता हूँ, तो किसी को कोई हानि नहीं होगी।' मौलाना आजाद, जिन्होंने उन्हें सुझाव दिया था कि यदि वे दिल्ली आकर नहीं रह सकते, तो कलकत्ता को अपना मुख्यालय बना लें, गांधीजी ने उत्तर दिया: 'जिस अहिंसा के बारे में मैंने इतना कुछ लिखा है और जिसे मैंने इन सभी वर्षों में व्यवहार में लाने का प्रयास किया है, यदि वह संकट की घड़ी में कारगर साबित नहीं होती, तो मेरी दृष्टि में उसका कोई मूल्य नहीं रह जाता। आपका स्नेह ही आपको यह कहने के लिए प्रेरित करता है कि काश मैं आपके पास होता, तो सब ठीक होता।' लेकिन सच्चाई यह है कि जब तक मैं यहां अच्छा प्रदर्शन नहीं कर सकता, तब तक मैं कहीं भी किसी काम का नहीं हो सकता।
उन्होंने यूरोप में रहने वाली अपनी मित्र, श्रीमती एडमंड प्रिवेट को लिखा, 'मेरी पैदल तीर्थयात्रा मुझे असीम मन की शांति प्रदान करती है। इसका परिणाम मुझे नहीं पता और न ही मैं जानना

चाहता हूँ। मनुष्य का परिणामों पर कोई नियंत्रण नहीं है। यह एकमात्र ईश्वर का विशेषाधिकार है। इसलिए मैं कार्डिनल न्यूमैन के साथ गा सकता हूँ।'
मुझे नहीं देखता
दूर का दृश्य;
मेरे लिए एक कदम ही काफी है।'
गांधी जी के अपने मिशन के सफल होने तक नोआखली छोड़ने से इनकार करने पर कांग्रेस नेताओं के सामने एक दुविधा खड़ी हो गई। नेहरू द्वारा उन्हें लिखे गए एक पत्र में यह बात स्पष्ट रूप से व्यक्त की गई थी: 'मैं जानता हूँ कि हमें आत्मनिर्भर होना सीखना चाहिए और हर अवसर पर आपकी सहायता के लिए नहीं आना चाहिए। लेकिन हमें यह बुरी आदत पड़ गई है और हम अक्सर महसूस करते हैं कि यदि आप आसानी से उपलब्ध होते तो हमारी मुश्किलें कम होतीं।' लेकिन गांधी जी अपने रुख पर अडिग रहे: 'मैं जानता हूँ कि यदि मैं स्वतंत्र होता तो मैं अपने देश में उत्पन्न होने वाली विभिन्न समस्याओं को हल करने में अपना योगदान दे सकता था। लेकिन मुझे लगता है कि जब तक मैं यहाँ कुछ नहीं कर सकता, तब तक मैं व्यर्थ हूँ... हम सब उस शक्ति के हाथों में हैं जिसे हम ईश्वर कहते हैं।' अंततः न तो उनकी इच्छा और न ही कांग्रेस नेताओं की लगातार मांग प्रबल हुई। गांधीजी ने जिसे 'ईश्वर की शक्ति' कहा था, उसी ने उन्हें निर्णय लेने के लिए प्रेरित किया। न तो नोआखली में रुकना और न ही दिल्ली जाना, जहाँ उनकी उपस्थिति की प्रबल मांग थी, बल्कि बिहार से उठ रही उस बेताब पुकार का जवाब देना था, जिसने गांधीजी को वहाँ से जाने के लिए बाध्य किया, और फिर कभी पूर्वी बंगाल में अपने 'अधूरे काम' को पूरा करने के लिए वापस नहीं लौटने के लिए प्रेरित किया। नोआखली में स्थिति गांधीजी के

लिए अभी भी असंतोषजनक थी, और उन पर बिहार जाने के लिए जबरदस्त दबाव डाला जा रहा था। 6 फरवरी को नेहरू को लिखे एक पत्र में गांधीजी ने अपनी दुविधा का जिक्र किया: 'मुझ पर बिहार जाने के लिए बहुत दबाव डाला जा रहा है क्योंकि सभी कहते हैं कि बिहार सरकार की ओर से मुझे सही जानकारी नहीं दी जा रही है। मैं स्थिति पर नजर रख रहा हूँ।'
बिहार में उनकी उपस्थिति की मांग करने वाले पत्रों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी। मुस्लिम लीग के उग्र नेताओं द्वारा सुनियोजित अभियान के तहत उन्हें अपमानजनक और कटु पत्र भेजे गए। उन्होंने प्रत्येक पत्र का सावधानीपूर्वक अध्ययन किया। बिहार के मुंगेर जिले के मुस्लिम लीग के अध्यक्ष से प्राप्त एक पत्र में लिखा था: 'बिहार में हिंदुओं द्वारा किए गए अत्याचारों का इतिहास में कोई सानी नहीं है। लेकिन इस प्रांत के मुस्लिम पीड़ितों के प्रति सहानुभूति का एक शब्द भी नहीं, और अपराधियों के लिए निंदा या फटकार का एक शब्द भी नहीं। फिर भी आप मुसलमानों से अपने द्वारा प्रचारित राष्ट्रवाद, आपके द्वारा समर्थित "राष्ट्रीय" कांग्रेस और आपके संरक्षण प्राप्त "राष्ट्रीय" नेताओं में विश्वास रखने को कहते हैं। इसलिए मैं आपसे निवेदन करता हूं कि यदि आप वास्तव में मानवता की सेवा करना चाहते हैं तो जल्द से जल्द बिहार आएं।' इस कड़वे और अतिरंजित पत्र के जवाब में गांधी ने कहा: 'आपका पत्र उन्मादपूर्ण है। मैं आपसे यह जानना चाहता हूं कि बिहार जाकर मैं मुसलमानों की बेहतर सेवा कैसे कर सकता हूं।' हालांकि मैं आपके इस कथन से सहमत नहीं हूं कि बिहार में हिंदुओं द्वारा किए गए अत्याचारों का इतिहास में कोई समानांतर उदाहरण नहीं है, लेकिन मैं यह स्वीकार करने के लिए स्वतंत्र हूं कि वे नोआखली की तुलना में कहीं अधिक भयावह

थे। मुंगेर जिला मुस्लिम लीग के अध्यक्ष के रूप में, मैं आपसे आग्रह करता हूं कि आप केवल सिद्ध तथ्यों तक ही सीमित रहें, जो मुझे खेदपूर्वक कहना पड़ रहा है कि आपने नहीं किया है। सुहरावर्दी ने विवाद में कूदते हुए अपने अड़ियल अंदाज़ में गांधीजी की 'अंतरात्मा की आवाज़' का मज़ाक उड़ाया। गांधीजी ने उन्हें विनम्रता से याद दिलाया कि मुख्यमंत्री की भी एक अंतरात्मा की आवाज़ होती है, बस उन्हें उसे सुनने की ज़रूरत है: 'मैंने अखबारों में आपके नाम से छपा एक बयान देखा है जो मुझ पर कटाक्ष जैसा लगता है। मुझे आपसे ऐसी उम्मीद नहीं थी। इसलिए मैं आपको यह विश्वास करने का श्रेय देता हूँ कि मेरी भी एक अंतरात्मा की आवाज़ है जिसे मैं सुनता हूँ। मेरा मानना है कि सभी मनुष्यों में यह होती है। लेकिन बाहरी शोर-शराबे ने इसे अधिकांश लोगों के लिए लगभग खत्म कर दिया है। जब मेरी आवाज़ बोलेगी तो मैं खुद को बिना किसी और प्रेरणा के बिहार में पाऊँगा।'
जल्दबाजी में कोई कदम उठाने से इनकार करते हुए, गांधीजी ने सच्चाई जानने के लिए हर संभव प्रयास किया। उन्होंने कर्नल निरंजन गिल को बिहार भेजा ताकि वे उन्हें वहां की स्थिति की रिपोर्ट दें। गिल की रिपोर्ट ने मुस्लिम लीग द्वारा फैलाए गए मिथकों का भंडाफोड़ कर दिया, लेकिन उसमें जो लिखा था वह बिहार सरकार के लिए काफी नुकसानदायक था। इसके बाद गांधीजी ने बिहार सरकार में मंत्री डॉ. सैयद महमूद से दूसरी राय मांगी: 'मुस्लिम लीग के आरोपों और अन्य स्रोतों से मिली जानकारी के बीच सच्चाई का पता लगाना मेरे लिए मुश्किल हो रहा है। मैं चाहता हूं कि आप मुझे लिखकर बताएं कि लीग की रिपोर्ट कितनी सही है।' आश्चर्यजनक

रूप से डॉ. महमूद ने चुप्पी साधे रखी। इससे गांधीजी सच्चाई जानने के लिए और भी बेचैन हो गए।
हैमचार में अपने लंबे प्रवास के दौरान, गांधीजी ने जिले में पैदल शांति यात्रा के अगले चरण की योजना बनाना शुरू किया, जो 2 मार्च को शुरू होनी थी। उन्होंने चारमंडल क्षेत्र और नोआखली और टिप्पेरा के कुछ हिस्सों को शामिल करते हुए एक विस्तृत यात्रा कार्यक्रम तैयार किया था। यह यात्रा कार्यक्रम श्रीरामपुर की ओर जाता था, जहाँ से उन्होंने दो महीने पहले अपनी यात्रा शुरू की थी। वहाँ से उन्होंने नोआखली और टिप्पेरा के अन्य हिस्सों को कवर करने के लिए फिर से यात्रा शुरू करने की योजना बनाई थी। हालाँकि, ऐसा नहीं हो सका।
उस शाम गांधीजी ने सतीश चंद्र दास गुप्ता को बिहार जाने की अपनी मंशा के बारे में सूचित किया। उन्होंने बताया कि कैसे एक दिन पहले तक वे अपनी तीर्थयात्रा के तीसरे चरण के लिए निकलने की योजना बना रहे थे, लेकिन नियत समय पर उन्होंने बिहार जाने की तैयारी शुरू कर दी। उन्होंने बिहार के हिंदुओं द्वारा किए गए अत्याचारों की रिपोर्ट का जिक्र किया, जिसके सामने नोआखली की घटनाएँ 'तुच्छ' प्रतीत होती थीं। वे मुसलमानों और हिंदुओं दोनों के कल्याण के लिए समान रूप से चिंतित थे। उनके मन में दोनों के बीच कोई भेद नहीं था। उन्होंने बिहार के मुख्यमंत्री को तत्काल तार भेजा था और संभवतः यह उनकी फिलहाल की आखिरी मुलाकात थी। हालांकि, 1 मार्च तक उन्हें बिहार के मुख्यमंत्री से कोई जवाब नहीं मिला था। सोने से पहले उन्होंने निर्देश दिया कि उनका सामान पैक करके अगले दिन प्रस्थान के लिए तैयार रखा जाए। हालांकि गांधी जी बहुत कम सामान और निजी वस्तुओं के साथ रहते थे, फिर भी उन्होंने बड़ी संख्या में पुस्तकें और पत्र-व्यवहार

एकत्र किए थे। बिहार ले जाने वाली चीजों में एक बंगाली शब्दकोश और एक नोटबुक भी शामिल थी, जिसमें वे प्रतिदिन बंगाली में लेखन का अभ्यास करते थे। 2 मार्च का दिन उदास था। ठक्कर बप्पा ने गांधी जी के शिविर को समेटने और यह सुनिश्चित करने का जिम्मा स्वयं उठाया था कि सारा सामान जीप में ठीक से लाद दिया गया है। ग्यारह बजे कोहरा छटा और सूरज निकला। दो महीनों में पहली बार गांधी जी ने चप्पल पहनी थी। उनके लिए उमड़ती भीड़ के बीच से होकर प्रतीक्षा कर रही जीप तक चलना मुश्किल था। उनके साथ प्रोफेसर निर्मल कुमार बोस, मनु गांधी, देव प्रकाश नायर और हामिद हुनर भी थे। उन्होंने देव प्रकाश को गांधीजी के नए शिक्षा कार्यक्रम 'नई तालीम' में अपनी परिवीक्षा अवधि पूरी करने के लिए और हामिद को हिंदुस्तानी शिक्षा में उनके अधीन प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए अपने साथ शामिल होने की अनुमति दी थी; हिंदुस्तानी भाषा का प्रचार-प्रसार उनके हिंदू-मुस्लिम एकता कार्यक्रम का अभिन्न अंग था। जो अन्य लोग मूल रूप से उनके साथ आए थे, उन्हें उन्होंने विभिन्न केंद्रों पर अपना काम जारी रखने के लिए वहीं छोड़ दिया था। सतीश चंद्र दास गुप्ता को उनकी अनुपस्थिति में अधिकारियों से बातचीत करने के लिए उनका प्रतिनिधित्व करने का अधिकार दिया गया था।
दल दोपहर 3:20 बजे चांदपुर पहुंचा। चांदपुर के बुजुर्ग और प्रतिष्ठित व्यक्ति, स्वर्गीय हरदयाल नाग के आवास के चारों ओर भारी भीड़ जमा थी, जहां गांधीजी के ठहरने की व्यवस्था की गई थी। पूर्वी बंगाल में उनकी अंतिम सार्वजनिक प्रार्थना सभा में तीस हजार से अधिक लोग शामिल हुए थे।
सभा को संबोधित करते हुए गांधीजी ने कहा कि वे शांति स्थापित करने के उद्देश्य से बिहार जा रहे हैं। उन्होंने उम्मीद जताई

कि वे जल्द से जल्द अपने चुने हुए सेवा स्थल - नोआखली - लौट आएंगे।
रात 9:30 बजे दल एक स्टीमर पर सवार हुआ। सबसे आखिर में कर्नल जीवन सिंह ने विदा ली। जब गांधी जी ने अपने सैनिकों को विदा करने का अंतिम आदेश लिखा, तो जीवन सिंह को यह सोचकर दुख और निराशा हुई कि यह उनके लिए बर्खास्तगी है। भारी मन से विदा लेने ही वाले थे कि गांधी जी ने एक और पर्ची पर लिखा: 'मैं तुम्हें व्यक्तिगत रूप से खोना नहीं चाहता।' गांधी जी की हत्या के बाद भी जीवन सिंह नोआखली में ही रहे और भारत-पाकिस्तान के बीच अंतर-डोमिनियन संबंधों की कहानी में एक नया अध्याय जोड़ दिया। अगले दिन, 4 मार्च 1947 को, सुबह 8.45 से 10 बजे तक गांधी जी बंगाल के मुख्यमंत्री से एकांत में मिले। गांधी जी ने स्वीकार किया कि बिहार में हालात उतने अच्छे नहीं थे जितना उन्हें बताया गया था। इससे सुहरावर्दी को मौका मिल गया। अपनी आवाज में कड़वाहट और जीत का भाव लिए उन्होंने गांधी जी से कहा कि नेहरू और डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने उनके साथ विश्वासघात किया है। इससे गांधी जी को गहरा आहत हुआ। बाद में जब उनसे पूछा गया कि क्या मुख्यमंत्री से हुई बातचीत से कुछ सार्थक परिणाम निकलने की संभावना थी, तो गांधी जी ने नकारात्मक उत्तर दिया। 'वह बात को घुमा-फिराकर कहने में माहिर हैं; वह गोलमोल बातें करते रहे; मुझे अपने मन की बात कहने का एक शब्द भी नहीं बोलने दिया।' हावड़ा स्टेशन पर, जब उन्हें पटना ले जाने वाली ट्रेन तैयार की जा रही थी, गांधीजी ने हरिजन कोष के लिए दान की भीख मांगी। उनके फैले हुए हाथ में लगातार सिक्के आते रहे।
जैसे ही ट्रेन दंगाग्रस्त बिहार की ओर बढ़ी, शांति का दूत अपने बंक पर लेटा हुआ आगे आने वाली चुनौतियों के लिए तैयारी कर रहा

था। एक बात का उसे पूरा यकीन था, जैसे ही उसे यह भरोसा हो जाएगा कि बिहार शांति के मार्ग पर अग्रसर है, वह तुरंत नोआखली लौट आएगा। वह जानता था कि वहाँ उसका काम अभी अधूरा है। संदेह और घृणा के बादल अभी छंटे नहीं थे।
लेकिन नियति ने उसके लिए कुछ और ही तय कर रखा था।

9

बिहार नरसंहार

'आंख के बदले आंख से अंततः पूरी दुनिया अंधी हो जाएगी।'
– Mahatma Gandhi

1915 में दक्षिण अफ्रीका से लौटने पर गांधीजी को भारत में राजनीतिक रूप से प्रेरित करने वाला स्थान बिहार ही था। चंपारण के नील किसानों की दुर्दशा देखकर गांधीजी अत्यंत व्याकुल हो गए थे। इन किसानों को नील की खेती करने और ब्रिटिश जमींदारों को भारी किराया चुकाने के लिए मजबूर किया जाता था, जिससे वे वस्तुतः गुलाम बन गए थे। गांधीजी ने उनके अधिकारों के लिए आवाज उठाई और औपनिवेशिक सरकार को कृषि सुधार लागू करने और किसानों को मुक्त करने के लिए बाध्य किया। इस सफलता ने गांधीजी को भारत के स्वतंत्रता संग्राम में नेतृत्व की स्थिति तक पहुँचा दिया। बिहार की स्थिति पर रिपोर्ट करते हुए, नेहरू ने 6 नवंबर 1946 को गांधीजी को लिखे एक पत्र में कहा: 'बिहार एक गरीब कृषि प्रधान राज्य है। इसकी अधिकांश भूमिहीन ग्रामीण आबादी मौसमी तौर पर पंजाब और अन्य राज्यों के खेतों में काम करने के लिए पलायन करती है। प्रत्येक ग्रामीण बिहारी परिवार का कम से कम एक सदस्य काम की तलाश में दूसरे राज्यों में जाता है। दस लाख से अधिक बिहारी प्रवासी कलकत्ता में मजदूर, घरेलू नौकर, रिक्शा चालक, कारीगर और छोटे व्यापारी के रूप में रहते और काम करते थे। कलकत्ता दंगों के दौरान यही वर्ग सबसे अधिक प्रभावित हुआ। उन्होंने अपना थोड़ा-बहुत सामान खो दिया; उनके छोटे-मोटे व्यवसाय ठप हो गए और उनमें से कई को कलकत्ता की सड़कों पर बेरहमी से मार डाला गया। 1911-12 तक बिहार बंगाल प्रांत का हिस्सा था। बिहार में बड़ी

संख्या में बंगाली हिंदू रहते थे, इन लोगों के रिश्तेदार कलकत्ता और फिर नोआखली और टिप्पेरा में हुए दंगों में मारे गए।' कलकत्ता और नोआखली में दंगों से बचकर निकले लोग बिहार में उमड़ पड़े और अपने साथ अपनी पीड़ा की कहानियाँ, नरसंहारों, जबरन धर्म परिवर्तन और महिलाओं के साथ हुए जघन्य अपराधों के भयावह विवरण लेकर आए। अपहरण, बलात्कार, जबरन धर्म परिवर्तन और अपहरणकर्ताओं से जबरन विवाह - यह एक नया घटनाक्रम था जिसने देशभर की हिंदू आबादी में भारी आक्रोश पैदा कर दिया। बड़ी संख्या में बिहारी अपने रिश्तेदारों और सहधर्मियों की दुर्दशा देखकर शोक में डूब गए। जैसे-जैसे ये कहानियाँ, हर बार बढ़ा-चढ़ाकर बताई जाने लगीं और कई बार सुनाने वाले के राजनीतिक उद्देश्यों के अनुरूप गढ़ी गईं, बिहार और शेष भारत में आक्रोश की लहर उठने लगी। यह उन लोगों के लिए सही समय था जिन्होंने इस मानवीय त्रासदी में राजनीतिक लाभ का अवसर देखा।
नेहरू का तात्पर्य स्पष्ट रूप से हिंदू दक्षिणपंथी और मुस्लिम लीग से था। हिंदू दक्षिणपंथी, जो अपने सहयोगी रवैये के कारण काफी हद तक हाशिए पर चले गए थे, स्वतंत्रता की ओर तेजी से बढ़ रहे भारत में राजनीतिक क्षेत्र में अपनी स्थिति मजबूत करने के अवसर की सख्त जरूरत थी। यही उनका अवसर था। सिविल सेवाओं और पुलिस बल में उनके कार्यकर्ता अच्छी तरह से स्थापित थे। अब उन्हें अपने राजनीतिक और वैचारिक संगठन के एजेंडे का समर्थन और प्रोत्साहन देने के लिए सक्रिय किया जाएगा; देश और उसके कल्याण की परवाह किए बिना। हिंदू महासभा और आरएसएस बिहार के असंतुष्ट किसानों के बीच धार्मिक असहिष्णुता फैलाने में सक्रिय रूप से शामिल हो गए। उन्होंने बिहारियों को यह विश्वास दिलाया कि उनका अस्तित्व इस बात पर निर्भर करता है कि वे मुसलमानों को अपने बीच

रहने देंगे या उन्हें भगा देंगे। यदि मुसलमानों को रहने दिया गया, तो वे एक दिन बिहार में कलकत्ता और नोआखली जैसी घटना को दोहराएंगे, जब तक कि वे पहले खून न बहा दें। इस बीच, मुस्लिम लीग ने भी बिहार के मुसलमानों में यह भय पैदा करके माहौल को दूषित कर दिया कि वे बहुसंख्यक समुदाय के अचानक हमलों के शिकार हो सकते हैं। दोनों समुदायों को हथियार और गोला-बारूद की आपूर्ति की गई। भड़काऊ दुष्प्रचार अपने चरम पर पहुंच चुका था; अब बस एक चिंगारी की जरूरत थी।
सितंबर 1946 में मुजफ्फरपुर जिले के बेनीबाद गांव में इस घटना की शुरुआत हुई। खबर मिली कि एक स्थानीय मुस्लिम ने कलकत्ता से एक हिंदू लड़की का अपहरण कर लिया था। हिंदू समुदाय ने लड़की को उनके हवाले करने की मांग की और मुस्लिम ने कुछ दिनों में ऐसा करने का वादा किया। तय दिन पर हिंदुओं की भीड़ उसके घर पहुंची, लेकिन वह खाली मिला: न तो लड़की का पता चला और न ही उस आदमी का। क्रोधित हिंदुओं ने अपना गुस्सा निकाला और मुसलमानों को इसका खामियाजा भुगतना पड़ा। दुर्भाग्य से, पुलिस समय पर घटनास्थल पर नहीं पहुंच सकी, क्योंकि सिपाहियों और एक मजिस्ट्रेट को ले जा रही वैन रास्ते में खराब हो गई थी। हालांकि, दोषी हिंदुओं पर कांग्रेस पार्टी ने मुकदमा चलाया। इसके जवाब में, प्रांतीय हिंदू महासभा ने 'बिहार के हिंदुओं की वर्तमान विपत्तियां' शीर्षक से एक पर्चा जारी किया, जिसमें दावा किया गया कि इस बात के पर्याप्त सबूत हैं कि बिहार में मुस्लिम हिंदुओं पर एक संगठित हमले की योजना बना रहे हैं। हिंदुओं को अचानक घेर लिया जाएगा और कलकत्ता और नोआखली की तरह उनका नरसंहार किया जाएगा। हिंदुओं के 'राष्ट्रवादी, बुद्धिमान और साहसी कार्य' का कांग्रेस सरकार द्वारा अत्यंत क्रूरता से प्रतिफल दिया जा रहा

था। इसलिए हिंदुओं को कांग्रेस को यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि वे उसे सौंपी गई सत्ता का दुरुपयोग नहीं होने देंगे! कांग्रेस के एक मजबूत गुट का मानना था कि नोआखली में मुस्लिम हिंसा का उतना ही क्रूर जवाब देना आवश्यक और उचित था। वे खुलकर तो नहीं कह सकते थे, लेकिन उनकी सहानुभूति और समर्थन हिंदू प्रतिशोधियों के समूह के साथ था। बिहार हत्याकांड के दौरान, उनमें से कई लोगों का मानना था कि यह एक उचित प्रतिक्रिया थी; उन्हें विश्वास था कि बिहार में हुई कड़ी प्रतिक्रिया ने ही 'आक्रामक' मुसलमानों को देशभर में नियंत्रण में रखा। विचारधारा की इन परस्पर विरोधी धाराओं ने कांग्रेस को कमजोर कर दिया और मुस्लिम लीग और हिंदू दक्षिणपंथी, दोनों ही सांप्रदायिक चरमपंथी समूहों को मजबूत बना दिया। प्रशासन और पुलिस में सांप्रदायिक चरमपंथी संगठनों के सक्रिय सदस्य व्यापक रूप से घुसपैठ कर चुके थे। उन्होंने, संगठनों का समर्थन करने वाले अधिकारियों के साथ मिलकर, स्थिति को नियंत्रण में लाने के सरकार के प्रयासों को प्रभावी ढंग से विफल कर दिया। कई जगहों पर तो उन्होंने अन्य धार्मिक समूहों के खिलाफ हिंसा को भी बढ़ावा दिया। नेहरू ने गांधी को लिखा, 'यह विचित्र है कि ब्रिटिश शासन के दौरान इन्हीं अधिकारियों ने भारत के राष्ट्रीय हितों के खिलाफ नीतियां लागू कीं।'
एक और घटना जिसने सांप्रदायिक हिंसा को भड़काया, वह सरना जिले के मुख्यालय छपरा में घटी, जो लगभग बराबर संख्या में हिंदू और मुस्लिम आबादी वाला शहर है। उस वर्ष दिवाली का त्योहार 24 अक्टूबर को था। लगभग हर परिवार को हुए नुकसान के कारण, उत्सव बहुत ही सादगी से मनाया गया। हिंदू महासभा के सदस्यों ने हिंदुओं को उन लोगों से बदला लेने के लिए उकसाया जिन्होंने

उनकी दिवाली को 'अंधेरा' बना दिया था। मुस्लिम लीग के एक प्रमुख नेता ने मुसलमानों की एक सभा को बधाई दी और उनसे खुशी मनाने को कहा क्योंकि उन्होंने हिंदुओं को एक आनंदहीन त्योहार मनाने के लिए मजबूर किया था। 'आज हिंदुओं के घर में मातम हो रहा है। हम लोगों को आज जश्न मनाना चाहिए।' यह नारा पूरे शहर में आग की तरह फैल गया।
25 अक्टूबर को, बंगाल में हिंदुओं के नरसंहार की निंदा करने के लिए बिहार के कई शहरों में जनसभाएं आयोजित की गईं, जिससे पहले से ही तनावपूर्ण स्थिति और बिगड़ गई। सरकार ने इन सभाओं की अनुमति इस उम्मीद में दी थी कि इससे दबी हुई नाराजगी शांत हो जाएगी। लेकिन इसके विपरीत, स्थिति बेकाबू हो गई। दोपहर और शाम होते-होते छपरा में नौ स्थानों पर दंगे भड़क उठे। भारी हथियारों से लैस भीड़ सड़कों पर उतर आई। कुल मिलाकर पचास सांप्रदायिक घटनाएं दर्ज की गईं। पुलिस ने तीन अलग-अलग स्थानों पर तीन बार गोलीबारी की। चाकूबाजी और दंगे की कई घटनाएं सामने आईं। 26 अक्टूबर को भी दंगे जारी रहे; अधीक्षक ने तीस राउंड फायरिंग करके छपरा की मुस्लिम बस्तियों पर हमला करने वाली एक बड़ी हिंदू भीड़ को रोका। वह इस भीड़ को तितर-बितर करने में सफल रहे, लेकिन अशांति तेजी से जिले के ग्रामीण क्षेत्रों में फैल गई और अगले पांच दिनों तक सुनियोजित तरीके से जारी रही, जिसके बाद स्थिति पर काबू पाया गया।
प्यारेलाल ने अपनी पुस्तक महात्मा गांधी: द लास्ट फेज, भाग 1, खंड 10, भाग दो में बिहार नरसंहार का विस्तृत वर्णन किया है: '26 अक्टूबर से स्थानीय कांग्रेस नेता शहर में आने लगे। उन्होंने आंतरिक क्षेत्रों का दौरा शुरू किया। रास्ते में उनका सामना कई बार 50,000 लोगों की भीड़ से हुआ। जब उन्हें बताया गया कि उनके

इस कदम की कीमत गांधी जी की जान से चुकानी पड़ सकती है, तो भीड़ वापस लौट गई। 27 अक्टूबर तक जिले के सभी कांग्रेस नेता आ चुके थे और समूहों में संगठित होकर गांवों में प्रवेश कर गए। 28 अक्टूबर के बाद जिले में किसी भी स्थान पर किसी भी सुनियोजित हमले की कोई खबर नहीं मिली। मुख्यमंत्री अपने सहयोगी डॉ. सैयद महमूद के साथ 28 अक्टूबर को छपरा पहुंचे।' जो कुछ उन्होंने देखा, उससे वे दंग रह गए—"हम 28 अक्टूबर को (रांची से विमान द्वारा) रवाना हुए और उसी रात छपरा पहुँच गए। कस्बे में लगभग सौ घर जल चुके थे। लगभग छह हज़ार लोगों ने ज़िला विद्यालय में शरण ली थी और उनकी हालत बहुत दयनीय थी। अगले दिन हम पैगंबरपुर गए। यह एक बड़ा गाँव है। यहाँ लगभग पचास घर जल चुके थे। इतने ही पुरुषों, महिलाओं और बच्चों की इन घरों में हत्या कर उन्हें जला दिया गया था। पुलिस वहाँ मौजूद थी। मुसलमानों ने कहा कि सब-इंस्पेक्टर दंगाइयों में शामिल हो गया था। छपरा पहुँचते ही हमने कुछ कांग्रेसी कार्यकर्ताओं को भेजा। ये लोग सुबह 3 बजे तक पैगंबरपुर पहुँच गए। तब भी उन्होंने आग से तीन लोगों को बाहर निकाला और उनकी जान बचाई। तब तक पुलिस गायब हो चुकी थी। जब मुख्यमंत्री श्री बाबू और मैं वहाँ गए, तो हमने कुछ डरी हुई महिलाओं को एक पेड़ के नीचे बैठकर रोते हुए देखा। गलियों से गुज़रते हुए हमारे पैरों से खोपड़ियाँ और हड्डियाँ टकराईं। एक घर में एक आदमी, जो जलकर कोयला बन चुका था, बैठा हुआ मिला। दूसरे घर में..." आग अभी भी सुलग रही थी। बाहर का दरवाजा बंद था। एक महिला ने हमारे पैर पकड़ लिए और रोने लगी। उसने बताया कि गांव के चौकीदार ने उसकी गोद से उसका बच्चा छीन लिया और उसके दो टुकड़े कर दिए। श्री बाबू अपने आंसू नहीं रोक पाए। उन्होंने अगले दिन मुजफ्फरपुर में अपने भाषण में इस घटना का जिक्र किया।

एक अन्य महिला ने बताया कि उसने अपने दो छोटे बच्चों को दंगाइयों से बख्शने के लिए अपनी सारी जमा पूंजी, जो कुछ हजार रुपये थी, दे दी थी। पैसा ले लिया गया और फिर बच्चों को उसके सामने बेरहमी से मार डाला गया। ज्यादातर ग्रामीण मध्यम वर्ग के लोग थे। कई मुसलमानों ने शिकायत की कि छपरा के हिंदू कलेक्टर ने दंगे में अहम भूमिका निभाई थी। उनके द्वारा किए गए और कहे गए कुछ काम तो बयान से परे थे। (डॉ. महमूद की गांधी को रिपोर्ट से, 17 फरवरी 1947)।
31 अक्टूबर को वे पटना लौट आए। पटना जिले और कस्बे में अशांति की खबरें भेजी गईं: "हमने सैन्य सहायता के लिए सेना प्रभारी ब्रिगेडियर को बुलवाया। उन्होंने कहा कि इसकी कोई आवश्यकता नहीं है। शाम को खबर आई कि बड़ी संख्या में घायल, जिनमें बूढ़े पुरुष, महिलाएं और बच्चे भी शामिल थे, पटना और तारेगना स्टेशनों पर पहुंचे हैं। घायल महिलाओं में से दो गर्भवती थीं, तारेगना स्टेशन पर दो-तीन दिन बाद भी लगभग 50 शव पड़े थे।" अगले दिन वे सैन्य बलों के कमांडर जनरल से मिलने रांची गए। हवाई जहाज से उन्होंने नीचे एक बड़े गांव को आग की लपटों में घिरा देखा। दस हजार लोगों की भीड़ ने उसे घेर रखा था। "लोग सचमुच अपने घरों में कैद थे। महिलाएं और बच्चे अपनी छप्पर की छतों पर इकट्ठा होकर दयनीय ढंग से रो रहे थे। जब हमारा विमान ऊपर से गुजरा तो उन्होंने हमारा ध्यान आकर्षित करने के लिए बेतहाशा हाथ हिलाए। श्री बाबू यह सब सहन नहीं कर सके। वे रो पड़े।"
2 नवंबर को, जनरल से मुलाकात के बाद पटना लौटते समय, उन्होंने फिर से कई गांवों को जलते हुए और भीड़ को लूटपाट करते हुए देखा। कुछ गांव पूरी तरह से वीरान थे; अन्य गांवों को भीड़ ने घेर रखा था। दोपहर में उन्होंने पटना जिले का एक और चक्कर लगाया और कई

और गांवों को जलते हुए देखा। यह सब प्रांत की राजधानी पटना से दस से पंद्रह मील की दूरी के भीतर हुआ। डॉ. महमूद ने गांधीजी को बताया, "जिला अधिकारियों की उदासीनता और लापरवाही का वर्णन करना असंभव था।" नेहरू के शब्दों में, "अगर वे पैदल भी चलते, तो समय पर घटनास्थल पर पहुंच सकते थे।"
डॉ. महमूद की रिपोर्ट में आगे लिखा था: "लगभग साढ़े तीन लाख (350 हजार) मुसलमान बिहार से भागकर अलग-अलग जगहों पर चले गए। उन्होंने अपने सोने के गहने बहुत कम कीमत पर बेच दिए और अपने घर-बार भी कौड़ियों के भाव बेच दिए। तिलहारी के एक ही गाँव में मैंने पाँच कुएँ लाशों से भरे देखे और धरला गाँव में भी इसी तरह 10 से 12 कुएँ लाशों से भरे हुए थे। जहाँ आस-पास नदी थी, वहाँ लाशों को फेंक दिया गया था। उनकी सही संख्या का पता नहीं लगाया जा सकता। मरने वालों में बूढ़े पुरुषों, महिलाओं और बच्चों की संख्या बहुत अधिक है। अस्पतालों में घायल लोगों में गोद में लिए हुए शिशुओं की संख्या भी बहुत अधिक थी। कुछ महिलाओं ने मुझे बताया कि कैसे उनके छोटे बच्चों की उनकी गोद में ही हत्या कर दी गई।"
छपरा (सारण जिला) से अशांति मुंगेर, भागलपुर, संथाल परगना, पटना और गया जिलों तक फैल गई। 25 अक्टूबर को पटना में 'पूर्वी बंगाल दिवस' के उपलक्ष्य में एक जुलूस निकाला गया। यह जुलूस बांकीपुर मैदान में एक बड़ी सभा के साथ समाप्त हुआ, जिसकी अध्यक्षता प्रांतीय कांग्रेस समिति के मुस्लिम अध्यक्ष प्रोफेसर अब्दुल बारी ने की। आयोजकों के आश्वासन के बावजूद कि ऐसा नहीं होगा, जुलूस के एक वर्ग ने बेहद आपत्तिजनक नारे लगाए। सभा में हिंदुओं से नोआखली का बदला लेने का आह्वान करने वाला प्रस्ताव पारित करने का प्रयास किया गया। अध्यक्ष और कुछ अन्य प्रमुख

व्यक्तियों ने इसका विरोध किया। अगले दिन भी यही स्थिति रही। लेकिन छपरा के विपरीत, एक चाकूबाजी की घटना को छोड़कर, अधिकारियों द्वारा बरती गई व्यापक सुरक्षा व्यवस्था के कारण अशांति को टाल दिया गया।
पटना में हालात को भड़काने में मुस्लिम चरमपंथियों ने भी अहम भूमिका निभाई थी। 27 अक्टूबर की रात को वे घातक हथियारों से लैस होकर सड़कों पर उतर आए। भीड़ ने पटना के मुस्लिम बहुल इलाकों की गलियों में 'अल्लाह-ओ-अकबर' के नारे लगाते हुए दौड़ लगाई। इन इलाकों से मुसलमानों को इकट्ठा करके उन्हें पूर्वनिर्धारित केंद्रों पर लाया गया; वहां उन्हें हथियार और गोला-बारूद मुहैया कराए गए और हमले के संकेत मिलते ही तैयार रहने का निर्देश दिया गया। एक रेलवे लाइन पटना के मुस्लिम बहुल इलाकों को हिंदू इलाकों से अलग करती है। मुस्लिम चरमपंथियों के उन्मादी नारों ने आसपास के इलाकों से हजारों हिंदू भीड़ को सड़कों पर ला खड़ा किया। दोनों भीड़ आमने-सामने आ गईं। कई कांग्रेस नेताओं की मदद से पटना पुलिस मौके पर पहुंची और उत्तेजित भीड़ के बीचोंबीच रेलवे ट्रैक पर मोर्चा संभाल लिया। काफी समझाने-बुझाने के बाद भीड़ पीछे हट गई। हिंदू भीड़ का एक हिस्सा पटना शहर के पास कुमारहार गांव में फिर से इकट्ठा हो गया, जबकि दूसरी भीड़ एक अलग गांव में जमा हो गई। पुलिस ने दोनों भीड़ को हिंसक होने से पहले ही रोक लिया। यह घटना 28 अक्टूबर को हुई थी; इसके बाद अशांति पटना जिले के ग्रामीण इलाकों में फैल गई, जो सबसे ज्यादा प्रभावित हुआ। 29 और 30 अक्टूबर को फुलवारीशरीफ और पूनपून पुलिस स्टेशनों से बड़े पैमाने पर दंगे और आगजनी की खबरें मिलीं, जिसके बाद मसौढ़ी में हुए पहले भयानक

नरसंहार की खबर आई। फिर दंगे दक्षिण-पूर्व में बिहारशरीफ और गया जिले के जहानाबाद उपमंडल की उत्तरी सीमा तक फैल गए।
27 अक्टूबर को ही पटना के स्थानीय अधिकारियों ने आयुक्त से परामर्श करने के बाद स्थिति को नियंत्रित करने के लिए सैन्य सहायता का अनुरोध किया था। लेकिन 31 अक्टूबर तक पुलिस महानिरीक्षक क्रीड का मानना था कि स्थिति पूरी तरह नियंत्रण में है। 31 अक्टूबर को तत्काल सैन्य सहायता का अनुरोध पुनः किया गया। सैन्य चौकी के प्रभारी ब्रिगेडियर ने यह कहते हुए अनुरोध को खारिज कर दिया कि इसकी आवश्यकता नहीं है क्योंकि स्थिति '1942 की तुलना में इतनी खराब नहीं थी', उनका तात्पर्य भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान हुई छिटपुट हिंसा की घटनाओं से था। अंततः 3 और 4 नवंबर तक मजिस्ट्रेट और सैनिक पटना उपमंडल के आंतरिक क्षेत्रों में तैनात हो गए। 5 नवंबर तक बिहार दंगों के प्रायश्चित के रूप में गांधीजी का आंशिक उपवास शुरू हो गया था। गांधीजी के आंशिक उपवास और आमरण अनशन के उनके संकल्प की खबर वाले हजारों पर्चे हर जगह वितरित किए गए। नेहरू और पटेल, लियाकत अली खान और कुख्यात सरदार अब्दुर रब निश्तर के साथ 3 नवंबर को पटना पहुंचे। डॉ. राजेंद्र प्रसाद, मौलाना आजाद और आचार्य कृपलानी भी कुछ समय बाद उनसे जुड़ गए, और उनके बाद वायसराय भी आ गए। 6 नवंबर को पटना में एक विशाल जनसभा को संबोधित करते हुए नेहरू ने कहा, 'मेरे लिए यहां आकर आपसे सभ्य आचरण के बुनियादी सिद्धांतों का पालन करने का अनुरोध करना शर्म की बात है, जबकि हमारे सामने राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर इतनी समस्याएं हैं जिनका समाधान आवश्यक है। सभ्य आचरण के किसी भी मानदंड से अराजकता और पड़ोसियों की हत्या को उचित नहीं ठहराया जा सकता। केवल इसलिए कि कुछ लोगों का सिर कहीं और काट दिया गया

है, इस तरह की क्रूरता को किसी भी तरह से उचित नहीं ठहराया जा सकता। प्रांत में जो हो रहा है वह विशुद्ध रूप से गुंडागर्दी है और इसे हर कीमत पर तुरंत रोकना आपका सर्वोपरि कर्तव्य है। आप केवल यह कहकर जिम्मेदारी से बच नहीं सकते कि आपने व्यक्तिगत रूप से इसमें भाग नहीं लिया।' डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने लोगों से कहा कि उनके जिले को कलंकित किया जा रहा है। सरकार इस मामले को बल प्रयोग से निपटाने के लिए दृढ़ संकल्पित है। कृपलानी ने टिप्पणी की कि 'ऐसे कृत्यों में लिप्त होकर आपने देश के अंदर और बाहर अपने शत्रुओं की ही मदद की है और देश के हित के प्रति गद्दार साबित हुए हैं।'

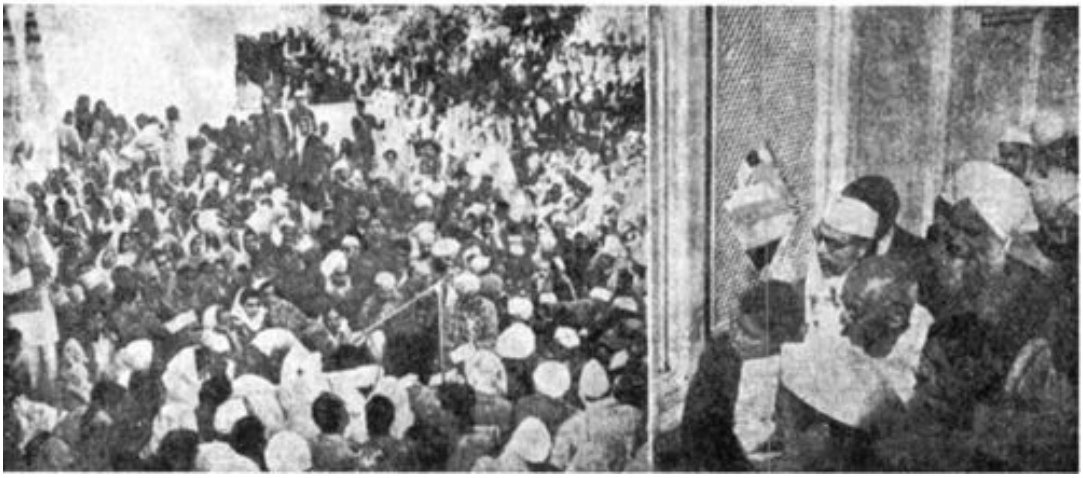

□□□□□ □□ 27 □□□□□ 1948 □□ □□□□□□□ □□□□□ □□□□□□ □□□□□-□□-□□□ □□ □□□□□ □□ □□ □□□□□ □□ □□□□ □□□□□□□□□□□□ □□ □□□□□□□ □□□□ □□□□

PARACHINAR TRAGEDY WAS RESULT OF PAKISTAN INACTIONS

The recent tragedy at Parachinar (in Kurram Agency) has a background which it is necessary that the public should know, says a Press note issued by the Ministry of Relief and Rehabilitation.

Evacuation of non-Muslims from Parachinar became an important issue at the end of October last when non-Muslims of that town were attacked by neighbouring tribes who (here 32 to 36 words were illegible) and some were killed. A representation was made to the provincial authorities stressing the need for immediate evacuation of non-Muslims from Parachinar and its surrounding areas and the local authorities agreed that they should be brought down to Kohat from where they would move down by train.

Until such time as the necessary arrangements for evacuation could be completed, it was decided that the non-Muslims should be collected in a camp of tents under proper guard. In the camp they were not given any ration not rations at controlled rates so that they had to buy their necessities at prohibitive prices. They were stripped of all arms and ammunition while their houses were broken into and looted.

Some time later, the local authorities agreed to move about 1,400 of the refugees to Arawala Fort, 13 miles to the south, a warmer and safer area than Parachinar. Actually, however, this move was not effected on the ground that it involved an elaborate protection of routes.

The position continued unchanged till snow began to fall. The Government of India then took up the matter again with the Government of Pakistan. At this time the Governor of the N.W.F.P. visited Parachinar and opposed the breaking up of the camp. The inmates of the camp, however, refused to return to their homes which had been looted and where they had no safety whatsoever.

Government, thereupon, took up the matter once again with the Government of Pakistan and emphasised the urgency of the evacuation of non-Muslims from Parachinar. After a while the Government of Pakistan replied that a large majority of non-Muslims in the Agency tract were anxious to stay in their homes and that there was no great danger. Furthermore, it was stated that there was adequate protection in Parachinar, which in rural areas made-homogeneous was unique.

This was in the first week of January. Government were unable to accept this view. The fact that these people had refused to return to their homes and continued to live in the miserable camp was a clear indica-

CLEAN-UP DRIVE IN DELHI STATION

REMOVAL OF REFUGEES FROM PLATFORMS

(By Our Staff Correspondent)

Delhi railway station looked clean and neat yesterday when the railway authorities succeeded in removing a large number of refugees who were living on the platforms during the last few weeks. Only some refugees seek shelter in the verandahs and waiting rooms and in the open space outside the railway platforms.

Dr. R. L. Chopra, Divisional Medical Officer of the E.P.Ry., said that sanitary conditions were bad at the station when it was full of refugees. More than two truckloads of refuse thrown by the refugees had been removed every month since September. About 100 sweepers have been engaged in this work. Bleaching powder was often used to dispel bad odour at the station. A first-aid post has been set up at the station where daily passengers are inoculated against small-pox.

Some time ago small-pox broke out among the refugees living on the platform. Since then about 5,000 people have been inoculated against small-pox and cholera. Medical facilities have also been provided at Muradnagar railway colony.

Sanitary conditions at most stations on the E.P.Ry. between Delhi and Bhatinda and Ambala and Jullundur, have not been satisfactory, the platforms at these stations being occupied by refugees. Only the stations between Jagadhari and Shahdara are clean.

Maulana Azad's Appeal For Funds

"In order to carry out the decisions of the Lucknow Conference of Indian Muslims, and bring about a change in their outlook and the general atmosphere among them, it was resolved that a fund of Rs. 1,000,000 should be raised for the work of the committee formed for the purpose," says Maulana Abul Kalam Azad in a statement. "I feel that of this amount the people [illegible]

Gandhiji Attends Mehrauli 'Urs'

(By Our Staff Correspondent)

Mahatma Gandhi visited the tomb of Khwaja Kutbuddin Bakhtiar at Mehrauli yesterday morning, where the Urs is being celebrated. Nearly 10,000 people, mostly Muslims, welcomed him.

Gandhiji was received by the Chief Commissioner of Delhi, Mr. Khurshed Ahmad Khan Mumtaz Zaidi and Congress and Akhar volunteers. Gandhiji was shown round the huge building where the tomb is located and was informed of the history of the relic.

A representative of the Ajmer Dargah Inding Gandhiji to visit Ajmer at the time of the Urs at the Dargah of Khwaja Moinuddin Chishti, said that although a large number of Muslims had come to Delhi from Ajmer during the recent communal disturbances Gandhiji's visit would greatly help to allay the panic of Muslims who were still there.

Maulana Abdul Sayed said that Muslims were grateful to Gandhiji for creating an atmosphere in which they were able to celebrate the Urs.

Gandhiji said that both Muslims and Hindus must purify their hearts and in that lay their salvation. He was grieved that Hindus and Muslims were still massacring one another. He deplored the [illegible] members of Hindu to a refugee camp in Pura Chinar in the N.W.F.P. where armed Pathans had said that the Hindu incidents greatly pained him.

Maulana Hifzur Rehman, General Secretary [illegible] Pura Chinar, had appealed to Pakistan leaders to take a lesson from the spirit of communal goodwill shown by people of Delhi. They should also follow the Government of India in working actively for communal harmony.

There was Puja by the Sikhs inside the dargah after Gandhiji left. The action was greatly appreciated by the Muslims.

The function ended with a great inter-communal party given by Lala Kishanchand Gupta. People from all communities participated in the function. Speeches stressing the need for communal harmony were delivered by leaders of different communities.

GANDHIJI'S VISITORS

(By Our Staff Correspondent)

Sardar Vallabhbhai Patel, Deputy Prime Minister, Mr. Jairamdas Daulatram, Minister for Food, Maulana Abul Kalam Azad, Minister for Education, the Maharajkumar of Vizianagram and Sardar Partap Singh called on Mahatma Gandhi yesterday

[illegible] 28 [illegible] 1948 [illegible]

□□□□□ □□□□ □□□ □□□□□□□ □□□□ '□□□□' □□□ □□ □□□ □□ □□□ □□□□ □□□□

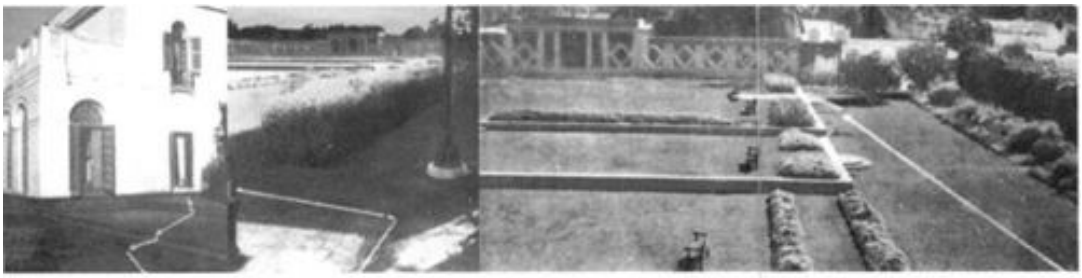

□□ □□ □□□□□ □□ □□□□ □□□□□ □□ □□ 30 □□□□□ 1948 □□ □□□□□ □□□□ □□□□□ □□□□ □□□□ □□ □□ □□□□□ □□ □□□□ □□□□ □□ □□□□ □□ □□□□ □□□□ □□□□□ □□ □□ □□ □□□

□□ □□□□□ □□□□ □□□□□ □□ 30 □□□□□ 1948 □□ □□□□ □□□ □□□□□ □□□:
□□ □□□□□ □□ □□□□□□□ □□□□□ □□ □□□□□□□□

□□□□□ □□ □□ □□□ □□□□ □□□□ □□□□□□□ □□ □□□□□ □□□□□□ □□ □□□□□□□ □□□□ □□□□□□□ □□□□ □□ □□□ □□□ □□□ □□□ □□□□

गांधी जी का शव अंतिम दर्शन के लिए रखा गया था, उनकी छाती को खुला छोड़ दिया गया था जिससे गोली के घाव स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहे थे।

Nehru addresses the media from the gate of Birla House on the evening of 30 January 1948.

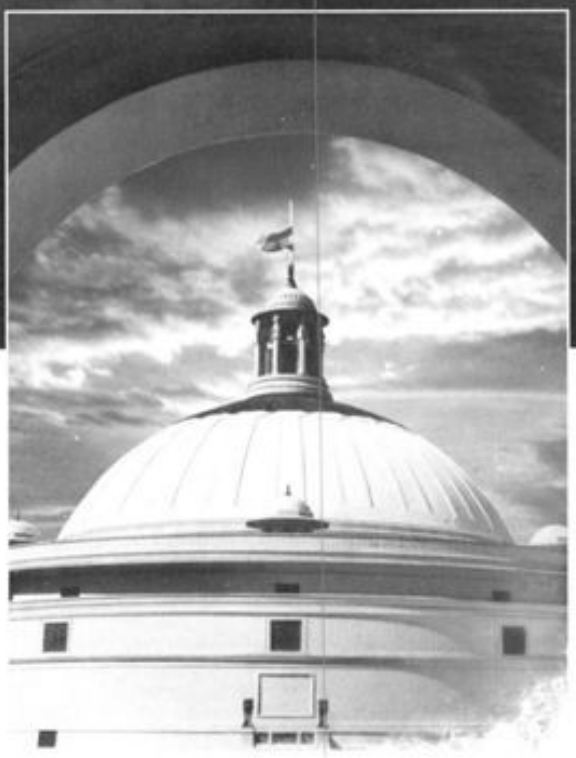

The flag atop Government House flies at half mast.

[illegible] [illegible] [illegible] [

□□□□□ □□ □□ □□□□□ □□□□□□ □□□□ □□□□ □□ □□□□□ □□ □□□□□□□□□□ □□□□ □□□□

□□ □□□□ □□□□□ □□□□□ □□ □□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□□□□□□□ □□ □□□□□□□□ □□□□ □□□□

□□□□□ □□□□ □□ □□□□□□□□□□ □□□□□□ □□□□ □□□□

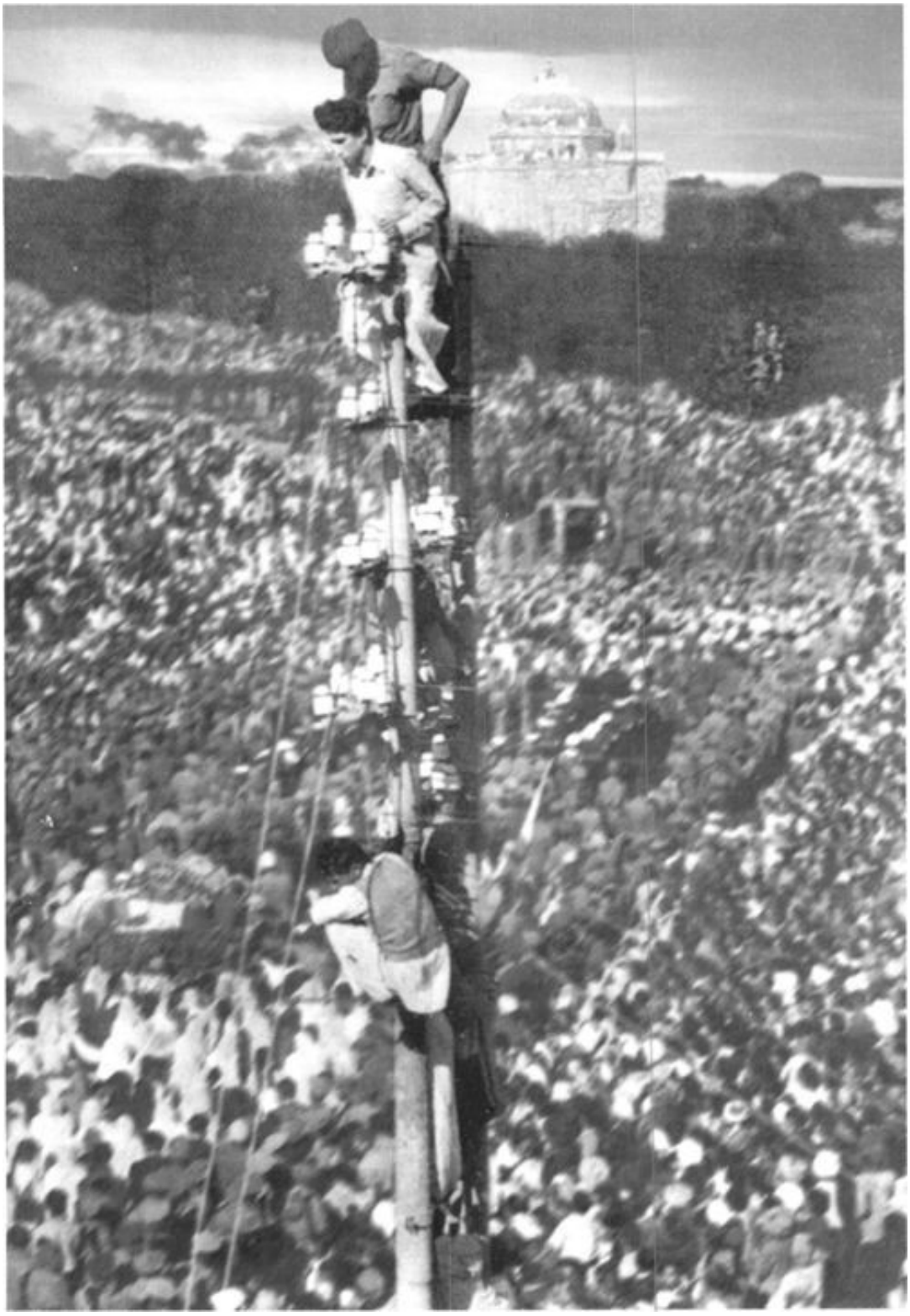

गांधी जी की अंतिम यात्रा की एक झलक पाने के लिए लोग बिजली और टेलीग्राफ के खंभों पर चढ़ गए थे।
(सामने वाला पृष्ठ):
अंतिम संस्कार का जुलूस राजा जॉर्ज की प्रतिमा के चारों ओर से होकर गुजरता है।

पटेल और रामदास गांधी, डॉ. सुशीला नायर, मनु और आभा को सांत्वना देते हैं, जब वे गांधी को नम आंखों से विदाई दे रहे होते हैं।

राज पथ पर अंतिम संस्कार का जुलूस।

गवर्नर जनरल के घुड़सवार गार्ड जलती हुई चिता के चारों ओर घेरा बनाकर खड़े हैं ताकि लोगों को चिता पर धकेलने से रोका जा सके।

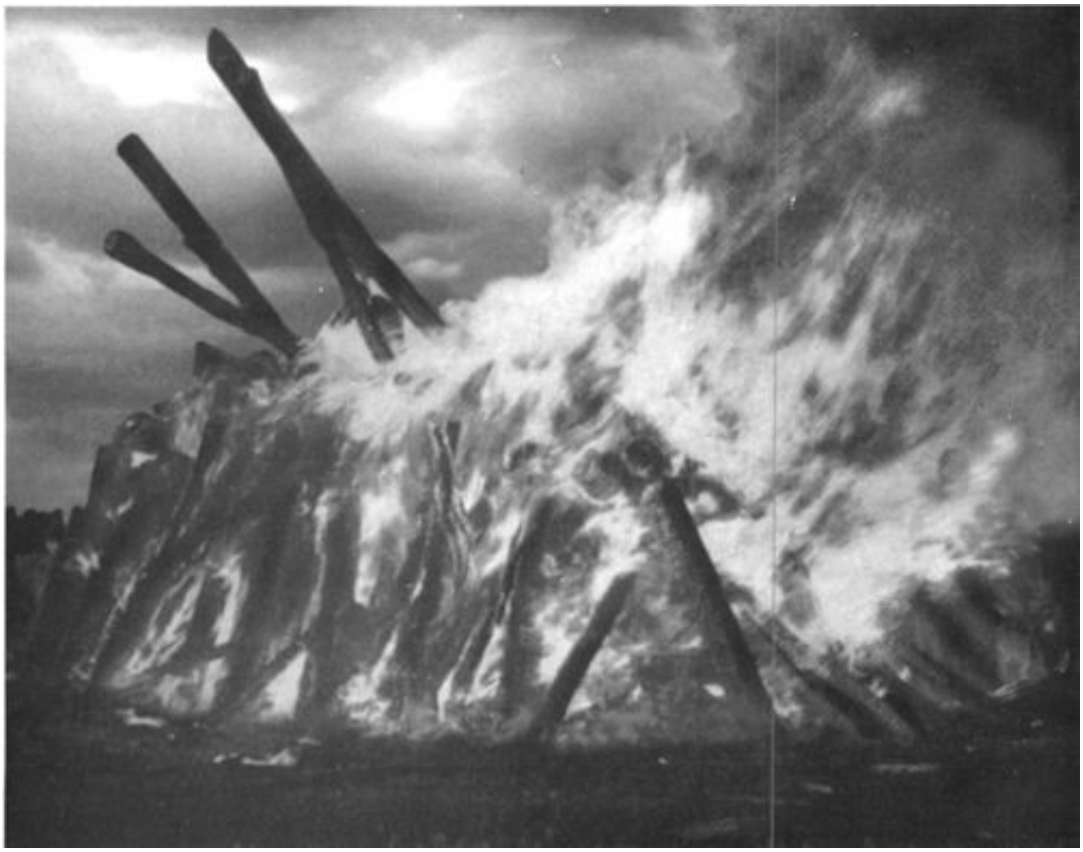

प्रधानमंत्री नेहरू गवर्नर जनरल माउंटबेटन से बात कर रहे हैं।

राजकुमारी अमृत कौर, चीनी राजदूत और मौलाना अबुल कलाम आजाद, माउंटबेटन परिवार के साथ खड़े हैं।
6 नवंबर की रात को नेहरू ने गांधीजी को रिपोर्ट भेजी जिसमें उन्होंने गरीबों की पीड़ा का वर्णन किया। लेकिन उन्होंने बिहार की स्थिति में आए बदलाव का भी जिक्र किया। उन्होंने कहा, 'कुल मिलाकर स्थिति शांत हो रही है।' 7 तारीख को पटना, मुंगेर और गया के ऊपर से उड़ान भरते समय उन्होंने पाया कि 'सामान्य तौर पर माहौल बहुत शांतिपूर्ण था, किसान खेतों में काम कर रहे थे।' 8 तारीख तक नेहरू ने लिखा: 'जहाँ तक अनुमान लगाया जा सकता है, मुसलमानों के खिलाफ जन आंदोलन समाप्त हो गया है।' एक नई प्रवृत्ति दिखाई दी जो आशाजनक थी: 'मुसलमानों ने सुझाव दिया कि विस्थापितों को अपने उन गाँवों में लौट जाना चाहिए जहाँ वे अभी भी मौजूद हैं ताकि वे अपनी उस संपत्ति की देखभाल कर सकें जिसे

वे जल्दबाजी में छोड़कर आए थे, और अपनी पकी हुई धान की फसल काट सकें। अन्यथा, दूसरों द्वारा फसल काटे जाने और ले जाने का खतरा था। इस प्रकार, आत्मरक्षा की प्राथमिक प्रवृत्ति संपत्ति के प्रेम के आगे फीकी पड़ रही थी। यह अपने आप में कुछ हद तक सामान्य स्थिति की वापसी का संकेत था।'
सोलह जिलों में से छह जिले दंगों से प्रभावित हुए थे। सरकारी आंकड़ों के अनुसार, 9,869 घर क्षतिग्रस्त या नष्ट हो गए; पुलिस और सेना द्वारा 2,186 गोलियां चलाई गईं, जिनमें 393 लोग मारे गए और 100 घायल हुए। हालांकि मृतकों की सही संख्या का अनुमान लगाना कठिन था, सरकार ने कहा कि दंगों में मारे गए मुसलमानों की संख्या लगभग 5,400 थी। फ्रेंड्स सर्विसेज यूनिट ने मृतकों की संख्या 10,000 बताई। सच्चाई इन दोनों आंकड़ों के बीच कहीं थी। बिहार हत्याकांड ने अंततः भारत का विभाजन कर दिया। इसके बाद पीछे मुड़कर देखना संभव नहीं था: घटनाएँ बेकाबू हो गईं, अंततः भारत के विभाजन और बड़े पैमाने पर जनसंख्या के आदान-प्रदान का कारण बनीं, जिसकी चर्चा तब तक केवल जिन्ना और उनकी मुस्लिम लीग ही करती थी, लेकिन कांग्रेस और औपनिवेशिक प्रशासन दोनों इसे अव्यावहारिक और अनावश्यक मानते थे। बिहार वह अवसर था जिसका मुस्लिम लीग इंतजार कर रही थी।
बिहार मुस्लिम लीग ने 1 दिसंबर को दंगों पर एक रिपोर्ट प्रकाशित की, जिसे मुस्लिम लीग द्वारा प्रायोजित प्रेस ने पूरे भारत में व्यापक रूप से प्रचारित किया। कांग्रेस पार्टी और सरकार के नेताओं पर आरोप लगाया गया कि उन्होंने 'मुसलमानों के खिलाफ एक भूमिगत युद्ध परिषद' बनाई, जिसने मुसलमानों के नरसंहार की योजना बनाई और उसे अंजाम दिया तथा सामूहिक हत्या अभियान के उच्च कमान के रूप में काम किया। बिहार के

प्रधानमंत्री श्रीकृष्ण सिन्हा, जिन्हें मुसलमान भी अपना सच्चा मित्र और हितैषी मानते थे, को हत्यारा करार दिया गया और उन पर आरोप लगाया गया कि उन्होंने 'सरकारी अधिकारियों को अपने हस्ताक्षर से लिखित आदेश जारी किए थे कि निकासी और बचाव कार्य में कोई सहायता न दी जाए और इस आदेश का कड़ाई से पालन किया जाए'। समाजवादी नेता जयप्रकाश नारायण, जिन्होंने कांग्रेस की कड़ी आलोचना की थी और सार्वजनिक रूप से कई कांग्रेसियों पर दंगों में शामिल होने का आरोप लगाया था, उन्हें भी लीग ने निशाना बनाया और 'अति सांप्रदायिक' करार दिया। लीग के आरोप इतने बेतुके और निराधार थे कि नेहरू को उन्हें जोरदार ढंग से खारिज करने के लिए मजबूर होना पड़ा: 'रिपोर्ट इतनी बेतुकी और गैरजिम्मेदार है कि इसमें कही गई बातों को महत्व देना असंभव हो जाता है।' मुस्लिम लीग के प्रयासों को हिंदू महासभा और आरएसएस जैसे हिंदू दक्षिणपंथी संगठनों के साथ-साथ कांग्रेस की गलतियों से भी भरपूर समर्थन मिला। मुस्लिम लीग के एक प्रमुख नेता और गांधी के कट्टर आलोचक सैयद अब्दुल अजीज ने एक बेहद निंदनीय रिपोर्ट तैयार की, जिसमें दिखाया गया कि पुलिस और नागरिक प्रशासन दंगाइयों को उकसाने और आपराधिक निष्क्रियता में किस हद तक दोषी थे। उनके शोध से पता चला कि मुसलमानों की हत्या, बलात्कार, अंग-भंग और संपत्ति लूटी गई, और कई मामलों में ये घटनाएँ पुलिस स्टेशन या मजिस्ट्रेट कार्यालय से कुछ ही गज की दूरी पर हुईं, और किसी भी मामले में दो मील से अधिक दूर नहीं थीं। इसके बावजूद पीड़ितों के जीवन या संपत्ति को बचाने के लिए कई दिनों तक कोई कार्रवाई नहीं की गई। उदाहरण के लिए, पूनपून और हिल्सा पुलिस स्टेशन से सौ गज की दूरी पर थे; मसौढ़ी और तारेगना रेलवे स्टेशन क्रमशः तीन सौ और चार सौ गज की दूरी पर; चिस्तीपुर और पलावापुर

आधे मील के भीतर; अट्टासराय और मनौरा एक मील के भीतर और कैला पुलिस स्टेशन से डेढ़ मील की दूरी पर थे। इन सभी स्थानों पर मुसलमानों की सुनियोजित तरीके से हत्या की गई और उनकी संपत्ति लूटी गई। अब्दुल अजीज ने अपने तीखे बयान का समापन करते हुए कहा: 'यदि अधिकारियों और पुलिस में मुसलमानों की रक्षा करने के अपने कर्तव्य और दृढ़ संकल्प की कोई भावना होती, तो कम से कम 100 कांस्टेबल, 15 सब-इंस्पेक्टर, 10 इंस्पेक्टर, 2 जिला पुलिस अधीक्षक, 10 मजिस्ट्रेट और 2 जिला मजिस्ट्रेट हजारों पुरुषों, महिलाओं और बच्चों को, जो उनके सीधे नियंत्रण में थे, निर्दयता से मारे जाने देने से पहले खुद को मारे जाने या घायल होने देते।' सरकार द्वारा घोषित राहत उपाय और मुआवज़े पीड़ितों तक बेहद धीमी गति से पहुँचे। बेनीबाद में मुस्लिम पीड़ितों के बीच वितरित करने के लिए 45,000 रुपये स्वीकृत किए गए थे, लेकिन गांधीजी के गाँव पहुँचने के छह महीने बाद ही इसका वितरण हुआ। द स्टेट्समैन ने बिहार दंगों पर लेखों की एक श्रृंखला में दंगों से निपटने के तरीके की कड़ी आलोचना की। 8 नवंबर को प्रकाशित 'शर्मनाक भी' शीर्षक वाले एक लेख में कहा गया: 'इतने बड़े पैमाने पर नरसंहार बिना किसी पूर्व चेतावनी के शायद ही हो सकता था। फिर भी स्थानीय प्रशासन इससे अनभिज्ञ प्रतीत होता है।' 13 नवंबर के एक अन्य लेख में कहा गया: 'बिहार की त्रासदी न केवल बंगाल की इससे भी बदतर त्रासदी से गंभीरता में मिलती-जुलती है, बल्कि अन्य विवरणों में भी भयावह समानता पाई जा सकती है। राज्यपाल की धीमी कार्रवाई या मौके पर उनकी अनुपस्थिति; शुरुआत में मंत्री इस बात को लेकर बंटे हुए थे कि कुछ दंगे अच्छे होंगे या बुरे, और बाद में, नरसंहार के संकट के बीच, वे भीड़ को अनुशासित करने में

पूरी तरह असमर्थ साबित हुए... इस महत्वपूर्ण समय में राज्यपाल की अनुपस्थिति ने वाकई टिप्पणी को जन्म दिया है।
दंगों पर काबू पाने के बाद कांग्रेस ने एक गंभीर गलती की। यह पहले से ही तय था कि दंगाग्रस्त क्षेत्रों से मुसलमानों का बड़े पैमाने पर पलायन होगा। सरकार ने तुरंत शरणार्थी शिविर स्थापित करने का काम शुरू कर दिया। मुस्लिम लीग के तीखे हमले को रोकने के लिए, सदमे में डूबी बिहार सरकार ने शिविरों की स्थापना और संचालन की जिम्मेदारी मुस्लिम लीग को सौंप दी। लीग ने व्यवस्थित रूप से शिविरों को इस तरह स्थापित करना शुरू किया कि वे मुस्लिम पीड़ितों को अलग-अलग क्षेत्रों में केंद्रित कर सकें और मुस्लिम मातृभूमि की स्थापना के लिए अधिकतम क्षेत्र पर अपना दावा कर सकें। कांग्रेस के लिए शिविर लगभग बंद कर दिए गए थे। बिहार सरकार द्वारा भेजी गई राहत सामग्री को जिन्ना द्वारा भेजा गया बताया गया। कई शिविरों पर खाकसारों और अन्य कट्टरपंथी तत्वों के गिरोहों ने कब्जा कर लिया; उन्होंने राहत सामग्री और राशन का एक बड़ा हिस्सा अपने उपयोग के लिए हड़प लिया। परिणामस्वरूप हुई कमी का दोष बिहार सरकार पर लगाया गया, जिससे पीड़ितों का गुस्सा और बढ़ गया। उन्हें यह विश्वास दिलाया गया कि उन्हें सुरक्षा तभी मिलेगी जब उनका अपना देश होगा।
जनवरी 1947 तक लगभग 75,000 बिहारी मुसलमान बंगाल में पलायन कर चुके थे। जिन जिलों में इन प्रवासियों को बसाया गया था, वे सभी बिहार की सीमा पर स्थित थे, जिनका उद्देश्य इस क्षेत्र को मुस्लिम-बहुसंख्यक बनाना था। बंगाल की यह सीमा बिहार के संथाल परगना से सटी हुई थी, जो मध्य भारत के आदिवासी क्षेत्र थे। सरकार को भेजे गए एक दस्तावेज़ से, जो बाद में मिला, पता चला कि मुस्लिम लीग छोटानागपुर और संथाल परगना के आदिवासियों के

सहयोग से एक स्वतंत्र झारखंड के लिए आंदोलन भड़काने की योजना बना रही थी। झारखंड तब मध्य प्रांतों के आदिवासियों के साथ विलय की मांग करेगा और अंततः हैदराबाद के निज़ाम के क्षेत्रों से जुड़ जाएगा, जो गोवा की पुर्तगाली कॉलोनी के साथ संधि करने की कोशिश कर रहा था। इस प्रकार भारत का एक हिस्सा पूर्वी बंगाल से अलग होकर, मध्य क्षेत्रों से गुजरते हुए, पश्चिमी तट पर समाप्त हो जाएगा। मुस्लिम लीग स्पष्ट रूप से देश को विभाजित करने की अपनी योजनाओं को अमल में लाने के उन्नत चरण में थी और उसने पहले ही अन्य राजनीतिक संगठनों से संपर्क स्थापित कर लिया था। संथाल परगना आदिवासी सभा के सचिव कानू किक्कू के भाषण से यह बात स्पष्ट होती है। मुस्लिम लीग द्वारा प्रायोजित 'बिहार विभाजन सम्मेलन' में बोलते हुए उन्होंने कहा, "संविधान का घोर अपमान यह है कि कुल जनसंख्या का सत्तर प्रतिशत हिस्सा बनाने वाले आदिवासियों को एक साधारण बहुमत में बदल दिया गया है। मंगोल, आर्य या कोई भी जाति हो, देश छोड़कर इसके असली निवासियों, आदिवासियों को सौंप दे। नस्लीय और सांस्कृतिक रूप से हम हिंदुओं से अलग हैं। भौगोलिक दृष्टि से झारखंड बाकी बिहार से अलग है, हम बस इतना चाहते हैं: 'झारखंड से हाथ हटाओ'।" इस प्रकार लीग प्रशासन से मतभेद रखने वाले राजनीतिक समूहों का इस्तेमाल देश को विभाजित करने की अपनी महत्वाकांक्षा को मजबूत करने के लिए कर रही थी।
प्यारेलाल ने स्थिति का सटीक वर्णन किया है: 'गांधीजी जिस परिदृश्य में आ रहे थे, वह अत्यंत अराजक और हिंसा से भरा हुआ था। उन्हें लोगों को आत्मनिरीक्षण और आत्मपरीक्षण की ओर ले जाना था; कठोर हृदयों को सच्चे पश्चाताप की ओर मोड़ना था; मित्रों को स्थिर करना था और शत्रुओं को भी, यहाँ तक कि उनके स्वार्थ के

विरुद्ध भी, अपने पक्ष में करना था; घृणा और छल-कपट के शासन में प्रेम का संचार करना था; और अंततः, एक शक्तिशाली संगठन को, जो स्वयं को भूल चुका था, कर्तव्य के मार्ग पर वापस लाना था, और इस प्रकार लोकतंत्र की नींव को, जो अपने आरंभ में ही डगमगा रही थी, स्थिर करना था। उनकी अहिंसा की सर्वोच्च परीक्षा हुई। बिहार उनके "करो या मरो" मिशन का एक और पड़ाव बन गया।'
गांधी जी 5 मार्च 1947 को बिहार पहुंचे। उन्हें पटना से अठारह मील दूर फतवा रेलवे स्टेशन पर उतरने के लिए कहा गया, ताकि वहां उमड़ी भारी भीड़ और पत्रकारों के समूह से बचा जा सके। गांधी जी ने तुरंत डॉ. सैयद महमूद और प्रांतीय कांग्रेस समिति के मुस्लिम अध्यक्ष प्रो. अब्दुल बारी को बुलाया, जो दोनों उनके पुराने सहयोगी और कट्टर राष्ट्रवादी थे। उन्होंने व्यंग्यात्मक लहजे में कहा, 'तो, आप अभी भी जीवित हैं?' डॉ. महमूद का घर गंगा नदी के किनारे था। अगले कुछ हफ्तों में, गंगा ने गांधी जी के जीवन में एक अभिन्न और महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। शाम की नमाज के बाद जब वे इसके किनारे बैठकर अपना दैनिक प्रार्थना भाषण लिखते थे या शाम की सैर के दौरान लोगों से साक्षात्कार करते थे, तब यह उनकी निरंतर साथी थी।
बिहार के प्रधानमंत्री डॉ. राजेंद्र प्रसाद, अपने मंत्रिमंडल के सहयोगियों और प्रांतीय कांग्रेस समिति के सदस्यों के साथ डॉ. महमूद के आवास पर गांधीजी से मिले। गांधीजी अपने पुराने और भरोसेमंद सहयोगियों से घिरे बैठे थे, लेकिन उनका सिर शोक और चिंता से झुका हुआ था। उस दिन बैठक संक्षिप्त कर दी गई क्योंकि गांधीजी अत्यधिक थके हुए थे और उन्हें आराम की आवश्यकता थी। अगली सुबह खान अब्दुल गफ्फार खान द्वारा पटना में छोड़े गए दो कार्यकर्ता उनसे मिलने आए। आंतरिक क्षेत्रों की स्थिति के

बारे में उनकी रिपोर्ट ने गांधीजी को बहुत प्रभावित किया। इसके बाद पटना विश्वविद्यालय के कुलपति सी.पी.एन. सिन्हा उनसे मिलने आए और बिहार में उनकी उपस्थिति पर गहरी राहत व्यक्त की। गांधीजी ने उन्हें बताया कि उन्होंने खान से उनके साथ आने का अनुरोध किया था। सिन्हा ने गांधीजी से पूछा कि खान ने वहां किए जा रहे कार्यों के बारे में क्या सोचा। गांधीजी ने उत्तर दिया कि मंत्रालय सब कुछ से संतुष्ट है, लेकिन समस्याओं से निपटने में अधिकारी नहीं बल्कि जनता सक्षम है। गांधीजी ने कहा कि खान ने आगे सुझाव दिया था कि इस उद्देश्य के लिए एक गैर-राजनीतिक समिति बनाई जाए और उन्हें स्वयं भी यह एक अच्छा विचार लगा। इसके बाद डॉ. राजेंद्र प्रसाद उनसे जुड़ गए। गांधीजी के साथ अपनी पिछली मुलाकात में उन्होंने उल्लेख किया था कि मुस्लिम लीग अपने नेशनल गार्ड्स के साथ लड़ाई की तैयारी कर रही थी। अशांति फैलने के बाद भी अलीगढ़ से प्रांत में हथियार आयात किए जा रहे थे। गांधीजी को ये बयान हिंदू हिंसा का औचित्य प्रतीत हुए और वास्तविक पश्चाताप के साथ असंगत थे। राजेंद्र बाबू ने आगे कहा कि हिंदू महासभा और आरएसएस गठबंधन द्वारा आर्थिक बहिष्कार का आह्वान किया गया है और इसे कई क्षेत्रों में लागू किया जा रहा है। जब दोनों समुदायों का जीवन इतना घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है, तब उन्हें इस तरह से अलग करना कतई अस्वीकार्य है।
बाद में गांधी ने मुस्लिम लीग के दो वरिष्ठ और बीमार नेताओं से मुलाकात की। एक थे नवाब इस्माइल, जो प्रांतीय विधानसभा में लीग के सदस्य और बिहार प्रांतीय मुस्लिम लीग के पूर्व अध्यक्ष थे, और दूसरे थे सैयद अब्दुल अजीज, जो मुस्लिम लीग के एक प्रख्यात नेता, मुसलमानों के हिमायती और गांधी के मुखर आलोचक थे। अब्दुल अजीज ने बिहार में गांधी के देर से आने की कड़ी आलोचना की थी।

हालांकि, गांधी को पूरा विश्वास था कि स्थिति का संपूर्ण परिप्रेक्ष्य प्राप्त करने के लिए उन्हें इन नेताओं से मिलना ही होगा। दोपहर बाद उन्होंने बिहार के मंत्रियों के साथ लंबी बैठक की। उन्होंने सुझाव दिया कि एक जांच आयोग नियुक्त किया जाए। 'यदि हम इस मामले में शीघ्र कार्रवाई नहीं करते हैं, तो इसका प्रभाव समाप्त हो जाएगा; हमें लीग के पक्ष में माना जाएगा।' मुख्यमंत्री श्रीकृष्ण सिन्हा ने आशंका व्यक्त की कि लीग इसका राजनीतिक लाभ उठा सकती है। गांधी ने स्वीकार किया कि यह एक संभावना थी, लेकिन यह एक ऐसा जोखिम था जिसे उन्हें उठाना ही था।
इसी बीच, कई कांग्रेसी इस बात से नाराज़ थे कि डॉ. महमूद ने उनसे सलाह लिए बिना गांधी को बिहार बुला लिया था। गांधी ने इस गलतफहमी को दूर करने की कोशिश करते हुए कहा, 'डॉ. महमूद का वह पत्र, जिसके कारण मुझे बिहार आना पड़ा, मेरी ज़िद भरी पूछताछ का जवाब था; उन्होंने आपके प्रति कोई विश्वासघात नहीं किया है।' राजेंद्र बाबू ने 5 मार्च 1947 की सुबह गांधीजी से फिर मुलाकात की और गांधीजी ने स्वीकार किया कि वे अभी तक किसी योजना के साथ तैयार नहीं थे। उन्होंने कहा कि वे भारतीय संघ के भीतर केवल मुस्लिम बस्तियों की अनुमति देने को तैयार थे, लेकिन उन्होंने न तो उन्हें हथियार देने से इनकार कर दिया और न ही मुस्लिम पुलिस और सेना की मांग को स्वीकार किया।
7 तारीख को गांधी जी ने बिहार की स्थिति पर रिपोर्ट देने के इच्छुक कई प्रतिनिधिमंडलों से मुलाकात की। ऐसा करने वाले पहले प्रतिनिधिमंडल मुस्लिम छात्र संघ के प्रतिनिधि थे, जो मुस्लिम लीग से संबद्ध छात्रों का एक समूह था।

उन्होंने गांधीजी से कहा कि बिहार में मुसलमानों के रहने का एकमात्र तरीका या तो राज्य का विभाजन करना है या मुस्लिम शरणार्थियों को आस-पास की बस्तियों में बसाना है। गांधीजी ने दोनों सुझावों को अस्वीकार कर दिया और कहा कि वे दोनों समुदायों के बीच की खाई को पाटना चाहते हैं, न कि उसे बढ़ाना। इसके बाद उनसे मिलने के लिए मुस्लिम धार्मिक नेताओं के समूह जमीयत-उल-उलेमा का एक प्रतिनिधिमंडल आया। उनकी शिकायत थी कि मुसलमानों को धमकाया और डराया जा रहा है। बुजुर्गों की परिषद, मजलिस-ए-अहरार ने भी उनकी शिकायत को दोहराया। एक मुस्लिम जमींदार ने शिकायत की कि मुस्लिम किसानों की फसलें हिंदुओं द्वारा काटी और ले जाई जा रही हैं। जयप्रकाश नारायण की गवाही सरकार और कांग्रेस पार्टी की कड़ी आलोचना थी। बिहार सरकार और कांग्रेस पर इससे भी गंभीर आरोप मोमिन समुदाय की ओर से आए। वे पारंपरिक रूप से कांग्रेस समर्थक थे, फिर भी उन्होंने आरोप लगाया कि कई वरिष्ठ कांग्रेसी नेता दंगों की घटनाओं में सक्रिय रूप से शामिल थे।
8 मार्च को मोहम्मद यूनुस गांधीजी से मिलने आए। कांग्रेस द्वारा 1937 में सत्ता स्वीकार करने से पहले वे बिहार की अंतरिम मुख्यमंत्री सरकार में रह चुके थे। उन्होंने कहा कि दंगों को भड़काने या उनमें भाग लेने वाले लोग कांग्रेस के मित्र नहीं हो सकते, भले ही वे कांग्रेसी हों। उन्होंने शिकायत की कि मुस्लिम लीग के लिए कांग्रेस ही जिम्मेदार है। यदि कांग्रेसियों ने पहले दूरदर्शिता और खुले विचारों का परिचय दिया होता, तो स्थिति इस हद तक न पहुँचती। यूनुस गांधीजी के पुराने मित्र थे और उन्हें लगा कि वे उनसे खुलकर बात कर सकते हैं। उन्होंने पूछा, 'क्या जिन्ना को इस मामले से अलग रखा जा

सकता है? क्या यह उन मुसलमानों का कर्तव्य नहीं था जो मानते थे कि जिन्ना गलत रास्ते पर जा रहे हैं, कि वे उन्हें सुधारने का प्रयास करें?' इस पर यूनुस ने उत्तर दिया, 'ऐसा नहीं हो सकता। या तो आप जिन्ना का अनुसरण करें या मुस्लिम लीग से बाहर निकल जाएँ।' यह सुनकर गांधीजी ने टिप्पणी की, 'तो फिर इस्लाम और भारत दोनों का भविष्य अंधकारमय है; भारत की तुलना में इस्लाम का भविष्य कहीं अधिक अंधकारमय है।'
9 मार्च को बिहार मंत्रिमंडल के सदस्य बिनोदानंद झा ने गांधी जी से मुलाकात की और उन्हें बताया कि दंगों पर प्रतिक्रिया देने में देरी करने का सरकार पर झूठा आरोप लगाया जा रहा है। दंगे भड़कने के तुरंत बाद मुख्यमंत्री ने उन्हें गया और भागलपुर भेजा था। उन्होंने कहा कि ये दंगे कांग्रेस के राजनीतिक विरोधियों, जो उनके आर्थिक सुधारों के कार्यक्रम का विरोध कर रहे थे, और ब्रिटिश सेना के अधिकारियों की 'संयुक्त साजिश' के कारण हुए थे। सबूत के तौर पर उन्होंने हिंदू महासभा और जमींदारों द्वारा जारी एक-एक पर्चा प्रस्तुत किया। एक अन्य पर्चे में लोगों से संगठित होकर बंगाल का बदला लेने का आह्वान किया गया था, क्योंकि कांग्रेस नोआखली और कलकत्ता में हिंदू महिलाओं के अपमान के प्रति उदासीन प्रतीत हो रही थी। भागलपुर में मंत्री ने शिकायत की कि ये अशांति मुस्लिम लीग के दुष्प्रचार के कारण भड़की थी। उन्होंने मुसलमानों को बड़ी संख्या में इकट्ठा करके उनकी भावनाओं को भड़काया और हिंसा की एक श्रृंखला शुरू कर दी। सरकार को सूचना मिली थी कि आत्मरक्षा के लिए सरकार द्वारा मुसलमानों को दिए गए हथियार मुस्लिम नेशनल गार्ड्स तक पहुँच गए थे। मंत्री ने आगे कहा कि लीग ने जानबूझकर

और झूठे आरोप लगाकर प्रमुख हिंदुओं को फंसाया है। वे मामले को शांत नहीं होने देना चाहते।
11 मार्च को भी मुलाकातों का सिलसिला जारी रहा। गांधीजी से मिलने आए सभी मुस्लिम प्रतिनिधिमंडलों ने उन पर बिहार के सांप्रदायिक विभाजन के विचार को स्वीकार करने का दबाव डाला। यहां तक कि राष्ट्रवादी संगठन होने का दावा करने वाली जमीयत-उल-उलेमा भी अब अलगाववादी समाधान को लागू करने की वकालत कर रही थी। बिहार में गांधीजी से मिलने वाले सभी मुस्लिम समूहों ने कांग्रेस की कड़ी निंदा की। मुस्लिम लीग के एक समर्थक से गालियों से भरा पत्र मिलने पर गांधीजी ने कहा, 'वातावरण में व्याप्त हिंसा का एकमात्र उत्तर शुद्ध और निष्कलंक अहिंसा ही हो सकता है।' संध्या की प्रार्थना में उन्होंने कहा कि असंख्य संतों ने तपस्या में अपने प्राणों की आहुति दी। परन्तु अहिंसा की वह परंपरा अब समाप्त हो चुकी है। यदि मानवता को जीवित रहना है तो क्रोध का उत्तर प्रेम से और हिंसा का उत्तर अहिंसा से देने के शाश्वत नियम को पुनर्जीवित करना आवश्यक है।
मुस्लिम लीग का साथ न देने वाले मुसलमानों को प्रभावित करने के लिए, जिन्ना ने बिहार दंगों की कई अतिरंजित रिपोर्टें प्रकाशित की थीं। 'पीरपुर रिपोर्ट' नामक एक पुस्तिका में कांग्रेस शासित प्रांतों में मुसलमानों पर हुए अत्याचारों का विस्तृत वर्णन किया गया था। पटना के बैरिस्टर शेरिफ ने भी इसी तरह की एक अतिरंजित रिपोर्ट दो खंडों में प्रकाशित की। मुस्लिम लीग की कार्यकारी समिति के एक प्रमुख सदस्य और बिहार प्रांतीय मुस्लिम लीग के पूर्व अध्यक्ष मोहम्मद इस्माइल ने डॉ. राजेंद्र प्रसाद से इस रिपोर्ट के संबंध में हुई बातचीत में कहा था कि 'विधानसभा में इसका पचहत्तर प्रतिशत हिस्सा झूठा माना गया था

और शेष पच्चीस प्रतिशत झूठा साबित हो चुका है!' जब राजेंद्र बाबू ने कांग्रेस अध्यक्ष रहते हुए मुस्लिम लीग की शिकायतों की निष्पक्ष जांच कराने का प्रस्ताव रखा और इस काम के लिए संघीय न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश सर मौरिस ग्वेयर का नाम सुझाया, तो जिन्ना ने यह सुझाव देते हुए इसे अस्वीकार कर दिया कि 'यह मामला अब महामहिम वायसराय के विचाराधीन है और वे ही उचित प्राधिकारी हैं जो हमारी आवश्यकताओं को पूरा करने और उन प्रांतों में पूर्ण सुरक्षा की भावना बहाल करने के लिए उचित कार्रवाई और उपाय कर सकते हैं जहां कांग्रेस सरकारें प्रशासन संभाल रही हैं।' वायसराय ने जिन्ना की टिप्पणियों पर ध्यान नहीं दिया और न ही जिन्ना ने उन्हें समझाने का कोई प्रयास किया। वे केवल झूठे आरोप फैलाने में ही संतुष्ट रहे।
12 मार्च को गांधीजी ने अपने आंतरिक क्षेत्रों का दौरा शुरू किया। सबसे पहले वे कुमारहार गाँव गए, जो पटना जंक्शन रेलवे स्टेशन से मात्र तीन मील दूर था। भीड़ ने न तो मदरसे (धार्मिक विद्यालय) को बख्शा था और न ही मस्जिद को। यही हाल अगले गाँव परसा का भी था, जहाँ गांधीजी गए। रास्ते में, सिपारा गाँव के ग्रामीणों ने उनकी कार रोक ली और उन्हें एक बटुआ दिया, जिसमें गांधीजी को कुछ सिक्के और पश्चाताप का पत्र मिला। उसी शाम अब्दुल्ला चक में बोलते हुए, गांधीजी ने कहा कि वे चाहते हैं कि प्रत्येक भारतीय यह महसूस करे कि भारत में कहीं भी किए गए हर बुरे काम में, चाहे वह किसी के द्वारा किया गया हो या किसी के भी विरुद्ध, उसका हिस्सा है और उसे सुधारने का भार सभी पर है। खुसरोपुर में, जहाँ वे अगले स्थान पर गए, उन्होंने कहा कि देश के सामने केवल दो ही रास्ते हैं: एक है जैसे को तैसा जवाब देना और दूसरा है शुद्ध अहिंसा का मार्ग। 1917 का चंपारण सत्याग्रह इसी

दूसरे मार्ग की शिक्षा थी। लेकिन बिहार में हाल ही में हुई घटनाओं ने उन्हें इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए मजबूर कर दिया था कि उनकी अहिंसा कमजोरों की अहिंसा है।
15 मार्च को, फूलवारी शरीफ के नेतृत्व में मुस्लिम लीग राहत समिति के सदस्यों के एक प्रतिनिधिमंडल ने गांधीजी से मुलाकात की और उनसे शरणार्थियों के बारे में कई सवाल पूछे। उनके जवाबों से पता चला कि जहाँ पहले वे अपनी राय देने में हिचकिचाते थे, वहीं प्रभावित क्षेत्रों के दौरे के बाद उन्होंने एक स्पष्ट राय बना ली थी। ग्रामीणों ने उनसे सीधे पूछा कि क्या मुसलमानों के लिए अपने गाँवों में लौटना सुरक्षित है। उन्होंने जवाब दिया कि यदि उनमें साहस और ईश्वर में आवश्यक आस्था हो, तो वे उन्हें वापस जाने के लिए कहेंगे। गाँवों के अपने दौरों के दौरान मिले अनुभवों के आधार पर गांधीजी इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि स्थिति अब तक इतनी सामान्य हो चुकी है कि शरणार्थी अपने घरों में वापस जा सकते हैं।
बलूची नेता और पूर्व पठान सरदार अब्दुल गफ्फार खान, जिन्होंने अपने कबीले के साथ हिंसा का मार्ग त्याग कर 'खुदाई खिदमतगार' नामक लाल कमीजों का दस्ता बनाया था, दंगों के बाद कांग्रेस और कई गैर-कांग्रेसी नेताओं के आग्रह पर बिहार का दौरा करने आए। निस्वार्थ सेवा, ईमानदारी और नैतिक उत्साह के बल पर उन्होंने सभी का इतना सम्मान अर्जित किया था कि वे हिंदू और मुसलमान दोनों से समान रूप से आत्मविश्वास से बात कर सकते थे। वे अपनी बात स्पष्ट रूप से कहते थे और बिहार के मंत्री बिना किसी द्वेष के उनकी बातें सुनते थे। बादशाह खान के नाम से भी जाने जाने वाले उन्होंने पटना शहर में सिखों के दसवें और अंतिम गुरु, गुरु गोविंद सिंह के जन्मस्थान गुरुद्वारा हर मंदिर में आयोजित

हिंदू, मुस्लिम और सिखों की संयुक्त सभा में कहा, 'आज भारत पागलपन की आग में जलता हुआ प्रतीत होता है और अपने ही हाथों अपने घरों को आग लगाते देखकर मेरा हृदय रोता है।' 'आज मुझे भारत पर अंधकार छाया हुआ दिखाई देता है और मेरी आँखें व्यर्थ ही प्रकाश की तलाश में इधर-उधर भटकती रहती हैं।' उन्होंने कहा कि वे सत्ता की राजनीति से तंग आ चुके थे और पूरे भारत में फैलाई जा रही नफरत से बहुत दुखी थे। 'ईश्वर के सेवक' के रूप में वे केवल पीड़ित मानवता की सेवा करने के लिए तत्पर थे। इस अवसर पर एक प्रेस संवाददाता ने लिखा: 'उनके हर शब्द में झलकने वाली उनकी ईमानदारी ने श्रोताओं पर गहरी छाप छोड़ी है। उन्होंने जो कहा उसमें कुछ भी नया नहीं था। फिर भी, भारी हृदय से निकले कुछ सरल शब्दों ने उनके कई श्रोताओं के दिलों को छू लिया। सीमांत गांधी (खान अब्दुल गफ्फार खान का दूसरा नाम) की एक सभा में दिखाई देने वाला भाईचारा और पूजा स्थलों पर सभी समुदायों का एक साथ आना खिलाफत के दिनों की याद दिलाता है।' जब गांधी पटना पहुँचे, तब बादशाह खान अंदरूनी इलाकों में यात्रा कर रहे थे; वहाँ से उन्होंने गांधी को लिखा: 'आप सही कह रहे हैं। हमारी अहिंसा की परीक्षा हो रही है।' जब मैं देखता हूँ कि हमारे आस-पास के राजनेता ईश्वर और धर्म के नाम का गलत इस्तेमाल करके नफरत फैला रहे हैं, तो मुझे राजनीति से नफरत होने लगती है।' उनके ठिकाने का पता चलते ही गांधीजी ने उन्हें बुलवाया। तब से वे गांधीजी के निरंतर साथी, उनकी खामोश परछाईं, उनके चट्टान जैसे सहारे बन गए, अंत तक।
16 मार्च गांधी जी का साप्ताहिक मौन दिवस था। उन्होंने शाम की नमाज़ के बाद बादशाह खान से अपनी ओर से बोलने का अनुरोध किया। गहरे दुख में डूबे बादशाह खान ने कहा कि वे घोर अंधकार से घिरे

हुए हैं, जो भारत के भविष्य के बारे में सोचने पर और भी गहरा हो जाता है। तमाम कोशिशों के बावजूद उन्हें कोई रोशनी नज़र नहीं आ रही। अगर भारत जलकर राख हो गया, तो हम सब हार जाएँगे। वे एक ख्वाहिशगार थे, इसलिए वे सबके बीच थे। उन्होंने उन्हें याद दिलाया कि उनकी ज़िम्मेदारी बहुत बढ़ गई है, खासकर अंग्रेजों द्वारा पंद्रह महीनों में भारत छोड़ने की घोषणा के बाद। उन्हें याद रखना होगा कि जो शांति से हासिल किया जा सकता है, वह नफ़रत या बल से कभी हासिल नहीं किया जा सकता। उनके पास यूरोप का उदाहरण है जिससे वे सीख सकते हैं। मुस्लिम लीग के सभी सदस्यों को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा कि अगर वे पाकिस्तान चाहते हैं, तो वह केवल प्रेम और स्वेच्छा से ही मिल सकता है।
बिहार के अपने दौरे के अगले चरण में गांधी जी सबसे बुरी तरह प्रभावित क्षेत्रों में से एक, मसौढ़ी से गुज़रे, जहाँ पूरे गाँव तबाह हो चुके थे। जब अन्य क्षेत्रों में अशांति फैली, तो मसौढ़ी के मुसलमान अपने गढ़ों में इकट्ठा होने लगे, जिससे हिंदू महासभा और आरएसएस द्वारा ग्रामीणों को डराने के लिए दी गई चेतावनी और भी पुख्ता हो गई। 30 अक्टूबर की रात को 'अल्लाह-ओ-अकबर' के नारे गूंज उठे। इस अचानक और भड़काऊ नारेबाज़ी का कारण कभी पता नहीं चल पाया, लेकिन इसने हिंदुओं में दहशत फैला दी। स्थानीय हिंदू महासभा नेता की कपड़ा मिल का सायरन बजते ही, हिंदू 'स्वयंसेवक' सड़कों पर उतर आए और 'महाबीर स्वामी की जय' के नारे लगाने लगे। यह नारा जैन संत भगवान महावीर की स्तुति में था, जिन्होंने अहिंसा को समर्पित एक धार्मिक संप्रदाय की स्थापना की थी। मुसलमान शांत हो गए। कुछ कांग्रेस कार्यकर्ताओं ने हस्तक्षेप किया, अस्थायी शांति सुनिश्चित की और दोनों पक्ष पीछे हट गए। अगले दिन कुछ मुसलमान घबरा गए और

पटना जाने वाली किसी भी ट्रेन में चढ़ने के लिए रेलवे स्टेशन की ओर भागे। मिल मालिक ने अफवाह फैलाई कि मुसलमानों ने रेलवे स्टेशन पर हमला किया है और उसके बाद हुई झड़प में कुछ हिंदू मारे गए हैं। हिंदुओं की एक बड़ी भीड़ रेलवे स्टेशन की ओर बढ़ी, जहाँ मुसलमान, जिनमें ज्यादातर बूढ़े पुरुष, महिलाएं और बच्चे थे, पटना जाने वाली ट्रेन में चढ़ने का इंतजार कर रहे थे। अगले कुछ घंटों में स्टेशन एक कत्लगाह में बदल गया। स्टेशन पर फंसे लगभग सभी मुसलमानों को पकड़ लिया गया और बेरहमी से मार डाला गया। बाकी बचे लोग एक इंजन चालक की सूझबूझ के कारण बच गए। जैसे ही हमला शुरू हुआ, उसकी मालगाड़ी चलने की तैयारी कर रही थी। इंजन चालक ने इंजन को डिब्बों से अलग किया और अगले जंक्शन की ओर बढ़ा, जहाँ उसने अधिकारियों से संपर्क किया और सशस्त्र बलों के एक बड़े दल को मसौढ़ी वापस बुलाया। मुसलमानों के एक समूह ने बुकिंग कार्यालय में खुद को बंद कर लिया था, जिसमें आग लगा दी गई थी। सशस्त्र बल समय रहते पहुँच गए और उन मुसलमानों को बचा लिया। चार महीने बाद जब गांधी जी मसूरही पहुँचे, तो वहाँ के एक हज़ार मुसलमानों में से केवल पच्चीस ही बचे थे। गांधी जी ने बताया कि उन्हें सौंपी गई एक रिपोर्ट में लिखा था कि मसूरही में शुरुआती हमला मुसलमानों ने किया था। हालाँकि, उन्हें इस बात की चिंता नहीं थी कि असल में समस्या कैसे शुरू हुई या किसने शुरू की। उन्हें यह जानने की चिंता थी कि इतनी बड़ी संख्या में मौजूद हिंदू निर्दोषों की हत्या कैसे कर सकते हैं। मुसलमानों ने यह भी शिकायत की थी कि सरकार उनकी पीड़ा के प्रति उदासीन है। गांधी जी ने आगे कहा कि वे न्याय करने नहीं आए थे; उनकी भूमिका एक सुधारक और मानवतावादी की थी। सरकार पहले ही घोषणा कर चुकी थी कि वे अशांति के कारणों की जाँच करने और पीड़ितों को क्या मुआवज़ा

दिया जाना चाहिए, इस पर विचार करने के लिए एक निष्पक्ष आयोग नियुक्त करेंगे।
उस शाम प्रार्थना सभा में जाते समय गांधीजी ने मसौढ़ी के दो गांवों, अंदाड़ी और गोर्रैखारी का दौरा किया। दंगों से पहले अंदाड़ी में 462 हिंदू और 168 मुसलमान रहते थे। आसपास के गांवों से मुसलमान 30 अक्टूबर 1946 को अंदाड़ी में एकत्रित हुए थे। जब गोर्रैखारी हत्याकांड की खबर गांव पहुंची, तो सेना ने उन्हें गांव खाली करने की सलाह दी। लेकिन मुसलमानों को विश्वास था कि बंदूक और पिस्तौल से लैस होकर वे किसी भी हमले को विफल कर सकते हैं। हमला 2 नवंबर को हुआ; मुसलमानों की सुरक्षा के लिए तैनात तीन कांस्टेबलों ने गोलीबारी की, जिसमें सात हमलावर मारे गए, लेकिन सरकारी रिपोर्ट के अनुसार, बाद में एक बड़ी भीड़ के सामने उन्हें भागने पर मजबूर होना पड़ा। जब गांधीजी गांव गए, तो उन्हें वहां एक भी मुसलमान नहीं मिला। सरकारी रिपोर्टों में कहा गया है कि आज तक केवल एक मामला दर्ज किया गया है; उनतीस आरोपियों में से एक को गिरफ्तार कर लिया गया था, एक ने अदालत में आत्मसमर्पण कर दिया था, बाकी के खिलाफ कानूनी कार्यवाही शुरू कर दी गई थी और इलाके के तेरह लोगों को बिहार लोक व्यवस्था अध्यादेश, 1946 के तहत हिरासत में लिया गया था। गोर्रैखारी गांव की आबादी 400 मुसलमान और 20 हिंदू थी। सरकारी रिपोर्ट में कहा गया था कि 119 मुसलमान मारे गए, 11 घायल हुए और 12 लापता थे। गांव पूरी तरह से सुनसान था। गांधी जी भारी मन से सन्नाटे भरी गलियों से गुजरे। उस शाम गांधी जी इतने दुखी थे कि वे बोल नहीं सके। इसके बजाय उन्होंने सभा का उपयोग मुसलमानों के पीड़ितों के लिए चंदा इकट्ठा करने के लिए किया, ताकि वे अपने किए गए गंभीर पाप के प्रायश्चित के रूप में दान दे सकें।

अगले दिन गांधी जी ने बीर में डेरा डाला, जहाँ से उन्होंने आसपास के दंगाग्रस्त गाँवों का दौरा किया। 20 मार्च को वे मसौढ़ी लौट आए। शाम की नमाज़ के बाद उन्होंने कहा, 'पिछले कुछ दिनों में मैंने जिस तरह की तबाही देखी है, उसका वर्णन करने से मुझे डर लग रहा है, कहीं मैं दुःख से टूट न जाऊँ। जो कुछ आपने इतनी बेरहमी से नष्ट किया है, उसका पुनर्निर्माण करना आपका कर्तव्य है। आपने अपराध किया है और अब आपको ही उसका प्रायश्चित करना होगा।' उन्होंने कहा कि वे सभी प्रभावित इलाकों में राहत और पुनर्वास के लिए स्वयंसेवी दल के लिए नामों का स्वागत करेंगे।
गांधी जी जनता को शांत करने की कोशिश कर रहे थे, तभी पंजाब और नोआखली से और भी अशांति की खबरें आने लगीं। औपनिवेशिक प्रशासन के मौन समर्थन से उत्साहित मुस्लिम लीग ने कलकत्ता की तरह ही पंजाब में भी 'प्रत्यक्ष कार्रवाई' शुरू कर दी, जिसके परिणाम भी वैसे ही निकले। पंजाब से फैल रही उग्रता की खबरों से उत्तेजित होकर हिंदू महासभा और आरएसएस ने अपने कार्यकर्ताओं को संगठित करना शुरू कर दिया और पंजाब की घटनाओं का बदला लेने के लिए बिहार में 'पंजाब दिवस' मनाने का आह्वान किया। मुस्लिम लीग ने बंगाल में 'पाकिस्तान दिवस' मनाने की घोषणा कर दी; जितना अधिक ध्रुवीकरण, जितनी अधिक नफरत और संदेह बढ़ेगा, उतना ही उनके राजनीतिक भविष्य उज्ज्वल होंगे।
21 मार्च को गांधीजी हसादीहा गांव पहुंचे, जहां उनकी मुलाकात आसपास के गांवों से आए कई मुस्लिम शरणार्थियों से हुई; दोपहर में उन्होंने गांव के प्रतिनिधियों से मुलाकात की। उन्होंने उन्हें सलाह दी कि सामान्य संबंध तभी बहाल होंगे जब मुसलमान हिंदू दंगाइयों के खिलाफ सभी आपराधिक मामले वापस ले लेंगे।

22 मार्च को पटना लौटने पर, गांधीजी ने शाम की प्रार्थना सभा में उन छह दिनों के अपने अनुभवों के बारे में बताया, जब वे तबाह हुए गांवों से होकर गुजरे थे। पटेल ने गांधीजी को लिखा था कि सैन्य उपायों के माध्यम से पंजाब में कुछ हद तक शांति स्थापित हो गई है।
गांधी जी 26 मार्च 1947 को जहानाबाद स्टेशन पहुंचे, जहां उनका विशाल जनसमूह ने स्वागत किया। गया जिले में दंगों से प्रभावित तीन उप-मंडलों में से जहानाबाद सबसे बुरी तरह प्रभावित था। दो गिरोह मुख्य उपद्रवी माने जाते थे। कुछ क्षेत्रों में उपद्रवियों को खदेड़ने में कामयाबी मिली थी। ऐसे ही एक व्यक्ति थे सकल बाबू, जो स्थानीय प्रधानाध्यापक थे। उन्होंने अपने छात्रों और कुछ स्थानीय लोगों की मदद से दौलतपुर, नगमा और रसलपुर के आसपास के गांवों में दिन-रात गश्त की, जब तक कि पूरी मुस्लिम आबादी को सुरक्षित रूप से जहानाबाद नहीं पहुंचा दिया गया। नौ महीने बाद भी दौलतपुर के हिंदू मुस्लिम घरों की रखवाली कर रहे थे। एक मुस्लिम ने गांधी जी के दल के एक सदस्य को बताया कि उनकी संपत्ति इतनी सुरक्षित थी कि दंगों के नौ महीने बाद जब उन्हें अपनी सुरक्षा का आश्वासन मिला और वे घर लौटे, तो उन्होंने देखा कि दंगों के दौरान जल्दबाजी में छोड़ा गया आधा खाया हुआ भोजन अभी भी वहीं पड़ा था!
कुछ देर आराम करने के बाद, गांधी जी काको गाँव में शरणार्थी शिविर गए, जहाँ लगभग पाँच सौ मुसलमान रह रहे थे। उनमें से कुछ घोसी पुलिस स्टेशन के सैस्ताबाद से थे—जो उपमंडल का सबसे अधिक प्रभावित पुलिस स्टेशन था। जब गांधी जी जहानाबाद पहुँचे, तो उनके साथ यात्रा कर रही मृदुला साराभाई ने उनसे बिना सलाह लिए ही अधिकारियों से गांधी जी और उनके दल के लिए उचित व्यवस्था

करने को कहा था। जब गांधी जी को एहसास हुआ कि मुस्लिम लीग के सदस्यों से किया गया उनका वादा, कि वे हर गाँव में स्थानीय मुसलमानों के साथ रहेंगे, नई व्यवस्थाओं के कारण टूट जाएगा, तो उन्होंने उन्हें स्थिति स्पष्ट करने के लिए संदेश भेजने का प्रयास किया। लेकिन वे पहले ही नाराज हो चुके थे और उन्हें स्पष्टीकरण का मौका दिए बिना ही एक प्रस्ताव पारित कर गांधी जी पर वादा तोड़ने का आरोप लगा दिया। इसे प्रेस में जारी किया गया और जहानाबाद के मुसलमानों के बीच व्यापक रूप से प्रचारित किया गया। इससे गांधी जी दुखी हुए, क्योंकि उन्हें लगा कि निंदा करने से पहले उन्हें माफी मांगने और स्थिति स्पष्ट करने का मौका दिया जाना चाहिए था।
अगले दिन गांधी जी ने अमाथुआ गांव के शरणार्थी शिविर का दौरा किया; यह मुख्य रूप से मुस्लिम आबादी वाला गांव था, जहां समय रहते सेना के पहुंचने से शरणार्थी किसी भी हमले से बच गए थे। शिविर मुस्लिम लीग के नियंत्रण में था और शरणार्थी इसलिए कटुता और आक्रोश के साथ प्रतिक्रिया देने के लिए तैयार थे। उनके प्रतिनिधि ने एक याचिका पढ़ी, जो कांग्रेस और उसकी सरकार पर आरोप लगाने वाला एक दस्तावेज मात्र थी। घोसी में प्रतिनिधि गांधी जी से मिलने आए और कहा कि मुसलमानों को गांधी जी पर पूरा भरोसा है और वे किसी और पर विश्वास नहीं करते। उन्होंने आगे कहा कि गांधी जी के बिहार छोड़ने के बाद मुसलमानों को फिर से कष्ट सहना पड़ेगा, लेकिन गांधी जी ने उन्हें पूरा आश्वासन दिया। उन्होंने कहा कि उन्होंने सरकार से परामर्श किया है और प्रांतीय मुस्लिम लीग के लगभग सभी नेताओं से मुलाकात की है; वे सुनिश्चित करेंगे कि मुसलमानों को न्याय मिले। हालांकि, उन्होंने यह भी कहा कि वे न तो सरकार के और न ही लीग के सुझावों

से सहमत हैं। यह लगातार मांग बनी हुई थी कि विश्वास कायम करने के लिए स्थापित किए जा रहे नए पुलिस स्टेशनों में कम से कम पचास प्रतिशत पुलिसकर्मी और अधिकारी मुस्लिम होने चाहिए। गांधी ने यहां ऐसी किसी भी मांग का समर्थन करने से इनकार कर दिया, और न ही उन्हें लगता था कि पाकिस्तान में गैर-मुसलमानों की ऐसी मांग को स्वीकार किया जाएगा। 'इसलिए, मैं कहता हूं, हिंदुओं और मुसलमानों के लिए एक-दूसरे के मित्र होने के अलावा कोई और रास्ता नहीं है।'
मुसलमानों का आरोप था कि बिहार में अपने सार्वजनिक भाषणों में बार-बार नोआखली का ज़िक्र करके वे हिंदुओं को यह सोचने पर मजबूर कर रहे थे कि उन्होंने जो किया वह नोआखली की घटना की प्रतिक्रिया मात्र थी। क्या इससे उनकी सोच में बदलाव लाना मुश्किल नहीं हो जाएगा? गांधी जी ने कहा कि यह निष्कर्ष गलत था, क्योंकि उन्होंने हिंदुओं को नहीं बख्शा था। वास्तव में, एक समय ऐसा भी था जब वे मुसलमानों के प्रति भी उतने ही स्पष्टवादी थे। उन्होंने 1924 में मुसलमानों द्वारा किए गए कृत्य के लिए इक्कीस दिनों तक उपवास भी किया था। उस समय मुसलमान उन्हें अपना शत्रु नहीं मानते थे। लेकिन हाल ही में, उन्हें यह स्वीकार करना पड़ा कि जब वे मुसलमानों के बारे में बोलते हैं, तो बहुत सावधानी से बोलते हैं। 'मैं नोआखली का ज़िक्र यथासंभव टालता हूँ। लेकिन पूरी तरह से टालना उचित नहीं होगा। नोआखली और पंजाब से लगातार आ रही परेशान करने वाली खबरों के सामने मुझे चुप नहीं रहना चाहिए, कम से कम बिहार के मुसलमानों के हित में तो नहीं। ये दोनों विषय आपस में इतने जुड़े हुए हैं।' इसके बाद गांधी से बिहार सरकार के उस फैसले के बारे में उनकी राय पूछी गई जिसमें दंगों की जांच और रिपोर्ट के लिए गठित बिहार जांच आयोग में

भारतीय सिविल सेवा के रूबेन को एकमात्र न्यायाधीश नियुक्त किया गया था। गांधी ने जवाब दिया कि अगर एक सदस्यीय आयोग न्याय करने में सक्षम है तो यह ठीक है। लेकिन अगर उन्हें रूबेन पर भरोसा नहीं है तो वे किसी और का नाम सुझा सकते हैं, लेकिन किसी को सिर्फ इसलिए शक की नजर से देखना कि वह गैर-मुस्लिम है, सही नहीं है।
उस दोपहर गांधी जी ने आसपास के गांवों के प्रतिनिधियों और कुछ मुस्लिम शरणार्थियों के साथ बैठक की। सुबह की बैठक की रिपोर्ट पढ़कर सुनाई गई और फिर ग्रामीणों से बैठक में जिन मुद्दों पर चर्चा नहीं हुई, उन्हें उठाने के लिए कहा गया।
मार्च 1947 के उत्तरार्ध में बिहार में पुलिसकर्मियों की अचानक हड़ताल हुई, जिससे पहले से ही अस्थिर स्थिति और बिगड़ने का खतरा पैदा हो गया। बिहार आने के बाद से ही गांधीजी को यह लगता था कि पुलिस में सांप्रदायिक तत्वों की घुसपैठ दंगाइयों की सफलता और व्यापक नरसंहार का एक मुख्य कारण थी।
28 मार्च को रात 10 बजे एक विशेष ट्रेन दल को पटना वापस लेकर आई। दल के कुछ सदस्य पहुँचते ही कार से निकल गए और मुख्य दल से पहले शिविर में पहुँचने के लिए छोटा रास्ता अपनाया। शिविर के प्रवेश द्वार पर उनका स्वागत कुछ गंभीर चेहरों वाले कांग्रेसी नेताओं ने किया। उसी शाम बिहार प्रांतीय कांग्रेस समिति के मुस्लिम अध्यक्ष प्रोफेसर अब्दुल बारी की तस्करी रोधी बल के एक गोरखा संतरी ने गोली मारकर हत्या कर दी थी। ग्रामीण इलाकों की यात्रा से लौटते समय, प्रोफेसर बारी की कार को तस्करी रोधी बल के संतरियों ने रोक लिया और उन्हें चुनौती दी। जब प्रोफेसर बारी ने कोई जवाब नहीं दिया, तो संतरी ने उन पर बंदूक तान दी। प्रोफेसर बारी अपने उग्र स्वभाव के लिए जाने जाते थे, और अपने

ऊपर बंदूक ताने देख वे अपनी कार से कूदकर संतरी से राइफल छीनने के लिए दौड़ पड़े। दूसरे संतरी ने व्यक्ति की पहचान सुनिश्चित किए बिना ही प्रोफेसर बारी पर बंदूक तान दी और उन्हें बेहद करीब से गोली मार दी। बारी की हार के साथ, बिहार ने अपने सबसे नेक और प्रतिष्ठित पुत्रों में से एक और एक कुशल राष्ट्रवादी मुस्लिम को खो दिया। इस घटना ने कई अफवाहें फैलाईं और काफी दहशत पैदा कर दी। गोरखा संतरी आईएनए का पूर्व सदस्य था, और यह अफवाह फैलने लगी कि आईएनए के जवान प्रमुख मुसलमानों को निशाना बना रहे हैं। 30 मार्च 1947 को, गांधी जी नए वायसराय लॉर्ड माउंटबेटन के निमंत्रण पर दिल्ली के लिए रवाना हुए। उन्होंने दो सप्ताह बाद बिहार लौटने की योजना बनाई थी। वायसराय ने जिन्ना और गांधी दोनों को निमंत्रण दिया था। उन्होंने गांधी को पटना से लेने के लिए अपना निजी यॉर्क विमान भेजने की पेशकश की थी, लेकिन इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया गया। गांधी जी अपने देशवासियों से घिरे अपने पसंदीदा तृतीय श्रेणी के डिब्बे में नियमित ट्रेन से यात्रा करेंगे। साराभाई ने उनके और अन्य यात्रियों के बीच दूरी बनाए रखने के लिए दो सटे हुए डिब्बे बुक किए थे, क्योंकि उन्हें गांधी जी की चिंता थी। लेकिन गांधी जी की नजर से कुछ भी नहीं बचता था। आधी रात को, जब ट्रेन एक स्टेशन पर पहुँचती, तो वे स्टेशन मास्टर को बुलाते और उनसे डिब्बे को आम जनता के लिए खोलने को कहते। उन्होंने अपना अधिकांश समय अपने सचिवालयी कार्यों में व्यतीत किया।
दिल्ली के पास एक छोटे से स्टेशन पर उनके उतरने की व्यवस्था की गई थी। जब उन्हें हरिजन कॉलोनी स्थित उनके आवास पर ले जाया जा रहा था, तो उन्होंने चालक से रुकने का अनुरोध किया और कहा कि उनके सुबह के टहलने का समय हो गया है; वे गाड़ी से उतरे और बाकी

का रास्ता पैदल ही तय किया। उसी दिन दोपहर तीन बजे गांधीजी की मुलाकात नए वायसराय से पहली बार हुई। राजनीति पर बहुत कम या न के बराबर चर्चा हुई। वायसराय ने गांधीजी से उनके प्रारंभिक जीवन और इंग्लैंड में उनकी शिक्षा, दक्षिण अफ्रीका में समान अधिकारों के लिए उनके संघर्ष और सत्याग्रह के शुरुआती वर्षों के बारे में पूछा। गांधीजी माउंटबेटन से मिलने और उनके व्यक्तित्व को जानने के लिए भी उतने ही उत्सुक थे। दोनों जानते थे कि भारत-ब्रिटिश मुद्दे का शांतिपूर्ण समाधान निकालने का यह उनका आखिरी मौका था। गांधीजी नए वायसराय की ईमानदारी, सज्जनता और उच्च चरित्र से बहुत प्रभावित हुए।
गांधी जी अगली सुबह तीन बजे उठे, जो उनका रोज़ का समय था, हालांकि पिछली रात वे बहुत देर से सोए थे। पाँच बजे राजकुमारी अमृत कौर उनसे मिलने आईं; मौलाना आजाद साढ़े छह बजे उनके पीछे आए। इसके बाद नेहरू, राजजी, राजेंद्र बाबू और अंत में पटेल से मुलाकातें हुईं, जो नौ बजे उन्हें वायसराय से एक और मुलाकात के लिए ले जाने आए। बैठक के बीच में मनु और उनके एक सचिव, बृजकृष्ण चांदीवाला, गांधी जी के लिए दोपहर का भोजन लेकर आए। मनु से परिचय कराने के बाद वायसराय ने उनसे कहा, 'तुम बहुत भाग्यशाली हो। मेरी बेटी कहती है कि गांधी जी के साथ तुम्हारी तस्वीर देखकर उसे तुमसे ईर्ष्या होती है। मैं उसे तुम्हारी प्रार्थना सभा में भेजूंगा।' जब गांधी जी दोपहर का भोजन कर रहे थे, वायसराय चाय का प्याला लेकर उनके पास आए। गांधी जी ने वायसराय से पूछा कि क्या मनु बगीचों में घूम सकती हैं ताकि वे अपनी बातचीत बिना किसी रुकावट के जारी रख सकें। वायसराय ने उत्तर दिया, 'ज़रूर, यह सब आपका है; हम तो केवल संरक्षक हैं। हम इसे आपको सौंपने आए हैं।'

गांधी ने हंसते हुए कहा, 'आप उसके शरीर की तलाशी ले सकते हैं ताकि कोई छिपा हुआ हथियार न मिले।'
'मुझे पूरा विश्वास है कि आपके शिष्य को इसकी कोई आवश्यकता नहीं हो सकती,' वायसराय ने मुस्कुराते हुए उत्तर दिया।
बातचीत वहीं से शुरू हुई जहाँ पिछले दिन रुकी थी। वायसराय ने गांधीजी से कहा कि बल के आगे न झुकना हमेशा से अंग्रेजों की नीति रही है, लेकिन गांधीजी की अहिंसा की जीत हुई है। भारत के अहिंसक स्वतंत्रता आंदोलन के परिणामस्वरूप उन्होंने भारत छोड़ने का फैसला किया था। बैठक के अंत में, आमंत्रित किए जाने पर, गांधीजी ने वायसराय के सामने भारतीय गतिरोध का अपना समाधान रखा। उन्होंने वही दोहराया जो वे अक्सर कहते थे: कि उन्हें जिन्ना या मुस्लिम लीग द्वारा पूरे भारत को पाकिस्तान बनाने पर कोई आपत्ति नहीं है, बशर्ते यह तर्क के आधार पर किया जाए, न कि हिंसा की धमकी से। हालांकि उन्होंने पहले यह माना था कि ऐसा केवल अंग्रेजों के भारत छोड़ने के बाद ही हो सकता है, और सैद्धांतिक रूप से वे अब भी इस विचार पर कायम हैं, लेकिन उनके वर्तमान प्रस्ताव का सार यह था कि वे अब माउंटबेटन की देखरेख में, वायसराय के रूप में नहीं बल्कि एक निष्पक्ष व्यक्ति के रूप में, जिन्ना को केंद्र में अपनी पसंद की सरकार बनाने के लिए आमंत्रित करने और सत्ता हस्तांतरण से पहले ही उनकी पाकिस्तान योजना को स्वीकृति के लिए प्रस्तुत करने के लिए तैयार हैं। कांग्रेस जिन्ना सरकार को पूर्ण समर्थन देगी। साथ ही, चूंकि मुस्लिम लीग अब सरकार में होगी, इसलिए उसके पास कुछ प्रांतों में शुरू किए गए संगठित अराजकता के आंदोलन को जारी रखने का कोई बहाना नहीं रहेगा। इन आंदोलनों को बंद करना होगा। इसके अलावा, चूंकि वायसराय ने घोषणा की थी कि वह केवल न्याय करेंगे और किसी

समस्यापूर्ण विकल्प से नहीं जोड़ सकते, भले ही समस्या आदर्श समाधान प्रतीत होती हो। इसलिए वे सभी उस गहरी त्रासदी में फंस गए जिसने पूरी स्थिति को जकड़ रखा था और जिसमें ब्रिटिश सरकार जानबूझकर या अनजाने में सहयोग कर रही थी, ताकि अपने घोषित इरादों को विफल कर सके। ग्रीक त्रासदी के पात्रों की तरह, वे अपने पूर्ववर्तियों के पापों के शिकार थे, जिनके परिणामों से बचना असंभव था। गांधी ने वायसराय से वह बात कही जो उन्हें अवश्य ही कठोर लगी होगी, कि अंग्रेजों की 'बांटो और राज करो' की नीति ने ऐसी स्थिति पैदा कर दी थी कि ब्रिटिश शासन को जारी रखने का एकमात्र विकल्प, जो अब उनके लिए संभव नहीं था, यही था कि वे 'भारत छोड़ो' की मांग को स्वीकार कर लें और बिना शर्त पीछे हट जाएं, भारत को उसके हाल पर छोड़ दें। जिस 'सांप्रदायिक त्रिकोण' को बनाने में उन्होंने स्वयं योगदान दिया था, उसमें शांतिदूत की भूमिका निभाना उनके बस की बात नहीं थी।
माउंटबेटन को यह योजना आकर्षक लगी और उन्होंने सुझाव दिया कि गांधी जी इस पर वायसराय के चीफ ऑफ स्टाफ लॉर्ड इस्मे से चर्चा करें, ताकि इस्मे इसे एक उचित ढांचा दे सकें। हालांकि गांधी जी ने इसका अर्थ यह समझा कि वायसराय इस योजना को एक औपचारिक समझौते में बदलना चाहते हैं, लेकिन इस बीच वायसराय और उनके सलाहकारों ने एक अलग निर्णय ले लिया था। वायसराय को लगा कि उन्होंने विकल्पों और अन्य पक्षों के विचारों को जाने बिना ही गांधी जी की योजना का समर्थन करने में जल्दबाजी कर दी थी। 5 अप्रैल को वायसराय की स्टाफ बैठक में इस योजना पर चर्चा हुई और इसे 'बिना किसी छलावे के उड़ाई गई पुरानी पतंग' कहा गया। आम सहमति यह थी कि 'माउंटबेटन को महात्मा गांधी के साथ बातचीत में नहीं पड़ना चाहिए, बल्कि केवल उनकी सलाह सुननी चाहिए'।

नई दिल्ली में ब्रिटिश अधिकारियों ने 1931 के गांधी-इरविन समझौते को इरविन की एक बड़ी राजनीतिक भूल माना था, जिसे दोहराया नहीं जाना चाहिए था। यह माना जा रहा था कि पटेल गांधी द्वारा सुझाए गए योजना का कड़ा विरोध करेंगे; वायसराय के सलाहकारों को पूरा विश्वास था कि वे अपने रुख पर अडिग रहेंगे। लेकिन उन्हें आशंका थी कि अगर नेहरू को पता चला कि वायसराय भी गांधी की योजना का समर्थन कर रहे हैं, तो वे गांधी के प्रभाव में आ जाएंगे। नेहरू को लिखे अपने एक पत्र में गांधी ने 'उस परिवेश का जिक्र किया था जिसके लिए भारतीय तत्व जिम्मेदार है' और जो वायसराय को 'हममें से किसी की तरह ही प्रभावित' कर सकता है। स्वतंत्र सलाहकार, जो भारतीय नेताओं, उनकी व्यक्तिगत कमजोरियों, विलक्षणताओं और यहां तक कि आंतरिक गठबंधनों के बारे में अपनी 'सुझावों' और 'अंदरूनी जानकारियों' के साथ ब्रिटिश अधिकारियों को जानकारी देने के लिए तैयार थे, उन्होंने न तो वायसराय को भारतीय चरित्र के प्रति सम्मान की भावना से प्रेरित किया होगा। उनमें से कुछ ने बाद में भारतीय नेताओं के सामने ऐसे सूत्र रखने का श्रेय लिया, जिन्हें उन्होंने पहले देशद्रोही बताकर खारिज कर दिया था।
लॉर्ड माउंटबेटन के कहने पर, 5 अप्रैल की दोपहर को उनके स्टाफ के सदस्यों के बीच इस मामले पर फिर से चर्चा हुई। दिन के अंत में यह निष्कर्ष निकला कि 'गांधी द्वारा कांग्रेस पर बहुत अधिक काम शुरू करने से पहले नेहरू को यह स्पष्ट करना आवश्यक था कि माउंटबेटन गांधी योजना के प्रति पूरी तरह से प्रतिबद्ध नहीं थे और इस योजना की सावधानीपूर्वक जांच की आवश्यकता होगी।' तदनुसार, नेहरू को वायसराय के पुनर्विचार के बारे में सूचित किया गया। जब उन्होंने उस शाम लॉर्ड इस्मे के एक पत्र के साथ

गांधी से मुलाकात की, तो उसमें 'योजना पर कम से कम एक गंभीर आपत्ति' थी। इससे गांधी हतोत्साहित नहीं हुए, क्योंकि उन्हें अभी भी विश्वास था कि वायसराय पूरी तरह से उनके साथ हैं। गांधी ने माउंटबेटन को लिखा कि यदि दोनों 'एकमत' हों तो नेहरू की समस्या का समाधान हो सकता है। उत्तर में उन्हें बताया गया कि समस्या के बारे में कोई भी निर्णय लेने से पहले अधिक जानकारी प्राप्त करने की उनकी मूल नीति ही वह थी जिसका वायसराय अनुसरण करना चाहते थे। और इस प्रकार, जो मित्रता इतनी सुखद शुरुआत कर चुकी थी, उसे शुरुआत में ही एक बड़ा झटका लगा।
निम्नलिखित अंश गांधी, माउंटबेटन, इस्मे और कई भारतीय नेताओं के बीच नई दिल्ली में उनके प्रवास के दौरान हुए पत्राचार का है, जो प्यारेलाल की पुस्तक महात्मा गांधी: द लास्ट फेज, खंड 10, भाग II में दिया गया है।
Gandhi to Lord Ismay:
5 अप्रैल 1947
नेहरू ने मुझे वह दिया जिसे आपने योजना की रूपरेखा बताया है। मैंने जो पढ़ा वह केवल उन बिंदुओं की प्रतिलिपि है जो मैंने जल्दबाजी में लिखवाए थे, जबकि मुझे वायसराय से यह समझ आया था कि आपको मेरे द्वारा लिखवाए गए बिंदुओं के आधार पर एक मसौदा समझौता तैयार करना था...
Lord Ismay to Gandhi:
6 अप्रैल, 1947
मुझे लगता है कि पिछले शुक्रवार को मैंने जो संक्षिप्त नोट तैयार किया था, उसके स्वरूप को लेकर कुछ गलतफहमी हुई है। मेरी समझ के अनुसार, लॉर्ड माउंटबेटन ने आपसे अनुरोध किया था कि क्या आप कृपया अपनी योजना के बारे में मुझसे बात करने के लिए थोड़ा

और समय निकाल सकते हैं, ताकि मैं उसकी मुख्य विशेषताओं का संक्षिप्त सारांश तैयार कर सकूँ। उनका इरादा किसी भी प्रकार का औपचारिक या विस्तृत नोट लिखने का नहीं था। उन्होंने पुष्टि की है कि उनकी इच्छाओं के बारे में मेरी समझ सही थी।
Gandhi to Lord Ismay:
6 अप्रैल, 1947
लॉर्ड माउंटबेटन और आपके साथ मेरी मित्रता की दहलीज पर किसी भी प्रकार की गलतफहमी की आशंका मात्र से ही मुझे अपनी क्षमता पर गंभीर संदेह होने लगता है कि क्या मैं अपने ऊपर लिए इस बोझ को संभाल पाऊँगी... मैं केवल इतना ही कह सकती हूँ कि यदि मैं इतनी सरल बातों को भी गलत समझ लेती हूँ, तो अवश्य ही मेरी समझ या ध्यान में कोई कमी है। मैं इस विषय पर हुई बातचीत को दोहराना नहीं चाहती, सिवाय एक बात का उल्लेख करने के, कि महामहिम ने आपके समक्ष मेनन [उपराष्ट्रपति मेनन, सुधार आयुक्त] का जिक्र किया और कहा कि आपको उनके साथ मिलकर कुछ तैयार करना चाहिए और मैं आपको वे बिंदु दूंगी जो आपके द्वारा तैयार किए जाने वाले मसौदे का आधार बनेंगे...
यह लिखने के बाद, बादशाह खान मेरे कमरे में आए और मैंने पाया कि उन्होंने लॉर्ड माउंटबेटन के साथ हुई बातचीत के सार की पुष्टि की जैसा कि मैंने बताया था और आगे कहा कि जब हम आपके कार्यालय गए थे तो मैंने आपसे कहा था कि मुझे केवल उन बिंदुओं को बताना था जो मेरे दिमाग में जल्दबाजी में आए थे ताकि आप और आपका मसौदाकार एक मसौदा समझौता तैयार कर सकें।
लॉर्ड माउंटबेटन ने गांधीजी से कहा:
7 अप्रैल, 1947

इस्मे ने मुझे 6 अप्रैल को लिखा आपका पत्र दिखाया है, और हम दोनों इस बात से बेहद दुखी हैं कि हमारी किसी भी गलती या चूक से आपके ऊपर जो भारी बोझ है, वह किसी भी तरह से बढ़ सकता है। इसलिए मुझे लगता है कि आपको निम्नलिखित व्यक्तिगत स्पष्टीकरण भेजना उचित होगा।
पिछले शुक्रवार की दोपहर जब हम विदा हो रहे थे, मैंने कहा था कि आपकी योजना में मुझे कई बातें आकर्षक लगीं और... मैंने इस्मे से इसके मुख्य बिंदुओं को नोट करने को कहा और उसे सुधार आयुक्त के साथ गोपनीय रूप से इस पर चर्चा करने के लिए अधिकृत किया। मुझे बेहद खेद है यदि मेरी इन टिप्पणियों से आपको यह आभास हुआ कि मैं आपकी योजना को औपचारिक समझौते के रूप में प्रस्तुत करना चाहता था।
जैसा कि मैंने आपसे कई वार्ताओं के दौरान समझाया है, मेरा उद्देश्य हमेशा से यही रहा है कि मैं सभी पक्षों के बीच समझौता कराने के उद्देश्य से महत्वपूर्ण भारतीय राजनीतिक नेताओं के साथ चर्चा करने तक पूरी तरह से निष्पक्ष रहूँ, ताकि देश में शांति बहाल हो सके और सत्ता हस्तांतरण के लिए एक स्वीकार्य आधार तैयार किया जा सके। इन प्रारंभिक वार्ताओं के पूरा होने के बाद, मुझे यह तय करना होगा कि मैं महामहिम की सरकार को क्या सिफारिश करने जा रहा हूँ, और ऐसा करने से पहले, मैं निश्चित रूप से आपके साथ आगे की चर्चा के आपके उदार प्रस्ताव का लाभ उठाऊँगा।
गांधी ने लॉर्ड माउंटबेटन से कहा:
8 अप्रैल, 1947

आपके दिनांक 7 तारीख के दो पत्रों के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। पहले पत्र के बारे में, मुझे यह जानकर खुशी हुई कि यदि कोई गलतफहमी थी भी, तो उसका कोई महत्व नहीं था।
5 अप्रैल को इस्मे को लिखे गांधी के पत्र के अंतिम भाग में उन्होंने कहा: 'मुझे यह अवश्य कहना चाहिए कि नेहरू को इस रूपरेखा पर कम से कम एक गंभीर आपत्ति है। लेकिन मैं यहाँ इसका उल्लेख करके आपको परेशान नहीं करना चाहता। यदि महामहिम को यह रूपरेखा व्यावहारिक प्रतीत होती है, तो मैं उनसे एक बार फिर मिलना चाहूँगा और नेहरू की आपत्ति पर चर्चा करना चाहूँगा।' हालाँकि, वह चरण कभी नहीं आया। तब तक कांग्रेस उच्च कमान का रुख पूरी तरह से लॉर्ड माउंटबेटन के विचारों से जुड़ चुका था। कुछ समय से धीरे-धीरे बदलाव आ रहा था, विशेष रूप से लॉर्ड वेवेल की सत्ता हस्तांतरण योजना के प्रभाव से। उस योजना की प्रमुख विशेषता प्रांतवार सत्ता हस्तांतरण और मौजूदा केंद्र का विघटन था। इसके साथ ही, लगभग छह सौ भारतीय राज्य स्वतंत्र घोषित किए गए; मुस्लिम लीग के प्रांतों ने स्वैच्छिक संघ द्वारा एक अलग राज्य का गठन किया, जिसका अर्थ था कि भारतीय संघ को पूरे बंगाल और शायद पंजाब का भी नुकसान उठाना पड़ेगा; देश के कुछ हिस्से जो केंद्रीय रूप से प्रशासित थे, बिना किसी गठित प्राधिकरण के रह गए। प्रशासन, सेना और पुलिस में पक्षपाती गुटों को आंतरिक अशांति फैलाने की छूट मिलने से पूरे देश में भ्रम और अराजकता फैल जाती। यह स्थिति कांग्रेस नेताओं के लिए चिंताजनक थी। धीरे-धीरे मुस्लिम लीग के प्रांतों को एक अलग राज्य बनाने की अनुमति देने के पक्ष में माहौल बदलने लगा—जिसे किसी भी हालत में रोका नहीं जा सकता था—साथ ही पंजाब और बंगाल के विभाजन की मांग भी की जाने लगी। कांग्रेस के नेताओं के मन में व्याप्त

विचारों का एक उदाहरण पटेल द्वारा 4 मार्च 1947 को माउंटबेटन के भारत आने से पहले बंबई में अपने एक मित्र को लिखे पत्र से मिलता है: 'यदि लीग पाकिस्तान पर अड़ी रहती है, तो एकमात्र विकल्प पंजाब और बंगाल का विभाजन है... मुझे नहीं लगता कि ब्रिटिश सरकार विभाजन के लिए सहमत होगी। अंततः, वे सबसे मजबूत दल को सत्ता सौंपने की बुद्धिमत्ता को समझेंगे।' यदि वे ऐसा नहीं भी करते हैं... तो पूर्वी बंगाल और पंजाब, सिंध और बलूचिस्तान के कुछ हिस्सों को छोड़कर पूरे भारत को केंद्र के अधीन पूर्ण स्वायत्तता प्राप्त करने वाला एक मजबूत केंद्र इतना शक्तिशाली होगा कि शेष हिस्से भी अंततः केंद्र में आ जाएंगे।
फरवरी 1947 के आखिरी सप्ताह में नोआखली के एक जंगल में, डॉ. अमिया चक्रवर्ती ने गांधीजी को बंगाल को दो भागों में बांटने की योजना से अवगत कराया। गांधीजी इससे बेहद आहत हुए। जो बात तब दबी हुई थी, वह अब एक ज़ोरदार आह्वान बन गई। 4 अप्रैल को, बंगाल से केंद्रीय विधानमंडल के हिंदू सदस्यों द्वारा हस्ताक्षरित एक बयान वायसराय को सौंपा गया। इसमें भारतीय संघ के भीतर पश्चिम बंगाल के एक अलग स्वायत्त प्रांत के गठन की मांग की गई। इसमें यह भी कहा गया कि अंतरिम उपाय के रूप में, बंगाल के दोनों भागों के लिए एक सामान्य राज्यपाल के अधीन अलग-अलग मंत्रालयों वाले दो क्षेत्रीय प्रशासनों की तत्काल आवश्यकता है। इसमें आगे कहा गया कि आगे और रक्तपात से बचने के लिए यह आवश्यक है। उसी दिन, बंगाल प्रांतीय कांग्रेस समिति की कार्यकारी समिति ने निम्नलिखित प्रस्ताव पारित किया: 'यदि महामहिम की सरकार बंगाल की मौजूदा सरकार को अपनी सत्ता सौंपने का विचार कर रही है, जो बंगाल को एक अलग संप्रभु राज्य बनाने के लिए दृढ़ संकल्पित है

और जो अपनी संरचना के अनुसार एक सांप्रदायिक दलीय सरकार है, तो बंगाल के वे हिस्से जो भारत संघ के भीतर रहना चाहते हैं, उन्हें ऐसा ही रहने दिया जाए और उन्हें भारत संघ के भीतर एक अलग प्रांत के रूप में गठित किया जाए।'
गांधी ने वायसराय को सौंपी योजना को मंजूरी दिलाने के लिए कांग्रेस वर्किंग कमेटी (सीडब्ल्यूसी) से काफी संघर्ष किया। गरमागरम बहसें हुईं, सलाहों में मतभेद थे और तनाव का माहौल था। गांधी और बादशाह खान ब्रिटिश शासन के तहत किसी भी विभाजन के घोर विरोधी थे। गांधी के अनुसार, कांग्रेस द्वारा अंग्रेजों से पंजाब और बंगाल के विभाजन की मांग करना निराशा का संकेत था। वे विभाजन के पूरे विचार के ही विरोधी थे; इससे उनकी कोई भी समस्या हल नहीं होती। इसके विपरीत, यह पहले से मौजूद समस्याओं को और बढ़ा देता और नई समस्याएं पैदा कर देता। लेकिन वे न तो कांग्रेस को मना सके और न ही कांग्रेस उन्हें। अगले दिन उन्होंने वायसराय को अपनी विफलता की सूचना दी कि वे वर्किंग कमेटी को अपने साथ नहीं ला पाए। उनके और उनके सहयोगियों के बीच मतभेद हो गए थे।
गांधी ने लॉर्ड माउंटबेटन से कहा:
11 अप्रैल, 1947
मैंने नेहरू से कई संक्षिप्त वार्ताएँ कीं और एक घंटे तक उनसे अकेले में बात की; फिर कल रात कार्य समिति के कई सदस्यों से उस फार्मूले पर चर्चा की जो मैंने आपके सामने प्रस्तुत किया था और जिसे मैंने उनके सामने सभी निहितार्थों सहित स्पष्ट किया था। मुझे खेद है कि बादशाह खान को छोड़कर मैं उनमें से किसी को भी अपने साथ नहीं ले जा सका।

मुझे नहीं पता कि नेहरू के दिमाग और दिल दोनों को अपने साथ लाने में असफल रहने के बाद मैं इस मामले को आगे बढ़ाना चाहता या नहीं। लेकिन पंडितजी इतने अच्छे थे कि जब तक उपस्थित कांग्रेस कार्य समिति के कुछ सदस्यों के साथ पूरी योजना पर चर्चा नहीं हो जाती, तब तक वे संतुष्ट नहीं हुए।
मुझे खेद है कि मैं उन्हें हर दृष्टिकोण से अपनी योजना की सत्यता के बारे में आश्वस्त नहीं कर सका। और न ही वे मुझे मेरे रुख से हटा सके, हालाँकि मैंने हर तर्क को पूरी तरह से नकार नहीं दिया था। इसलिए मुझे आपसे निवेदन है कि आप मुझे अपने विचार से बाहर रखें।
अंतरिम सरकार में शामिल कांग्रेसी सदस्य दिग्गज और राष्ट्र के अनुभवी सेवक हैं, और इसलिए जहां तक कांग्रेस के दृष्टिकोण का संबंध है, वे सक्षम सलाहकार साबित होंगे।
मैं अब भी स्वर्गीय सी.एफ. एंड्रयूज की जगह लेने के लिए उत्सुक हूं। उन्होंने केवल स्वयं का प्रतिनिधित्व किया। यदि आपको कभी भी मेरी सेवाओं की आवश्यकता हो, तो मैं हमेशा आपके लिए उपलब्ध रहूंगा।
उपरोक्त परिस्थितियों में, आपकी सहमति के अधीन, यदि संभव हो तो मैं कल पटना के लिए रवाना होने का प्रस्ताव करता/करती हूँ। वायसराय के साथ हुई बातचीत का एक और पहलू सांप्रदायिक शांति के लिए संयुक्त अपील थी, जिस पर माउंटबेटन के संरक्षण में जिन्ना और गांधी के हस्ताक्षर थे। अक्टूबर 1946 में नोआखली जाने से ठीक पहले, जब लॉर्ड वेवेल ने इसी तरह का प्रस्ताव रखा था, तब गांधीजी को लगा था कि यह गलत व्यक्ति को संबोधित है। लेकिन तब से परिस्थितियां बदल चुकी थीं; दोनों पक्षों ने खुद को एक ही तराजू में तौल लिया था। उनकी पुरानी आपत्ति अभी भी बनी हुई थी,

लेकिन लॉर्ड माउंटबेटन ने तर्क दिया कि अगर गांधीजी हस्ताक्षर नहीं करेंगे तो जिन्ना भी नहीं करेंगे। उनके हस्ताक्षर से जनता में विश्वास पैदा होगा और नरसंहार को रोकने में मदद मिलेगी। इस तर्क के सामने गांधीजी इनकार नहीं कर सके। अपील का पाठ इस प्रकार था:
'हम हाल ही में हुई अराजकता और हिंसा की उन घटनाओं की कड़ी निंदा करते हैं, जिन्होंने भारत के गौरवशाली नाम पर घोर कलंक लगाया है और निर्दोष लोगों को भारी पीड़ा पहुंचाई है, चाहे हमलावर कोई भी हो और पीड़ित कोई भी हो।'
'हम राजनीतिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए बल प्रयोग की सर्वथा निंदा करते हैं और भारत के सभी समुदायों से, चाहे वे किसी भी विचारधारा के हों, न केवल हिंसा और अव्यवस्था के सभी कृत्यों से दूर रहने का आह्वान करते हैं, बल्कि भाषण और लेखन दोनों में से किसी भी प्रकार की ऐसी गतिविधियों के लिए उकसाने से भी बचने का आह्वान करते हैं।'
गांधी जी ने देवनागरी, फारसी और रोमन लिपि में अपील पर हस्ताक्षर किए थे; जिन्ना ने केवल अंग्रेजी में। गांधी जी ने इस बात पर ज़ोर दिया कि चूंकि कृपलानी कांग्रेस अध्यक्ष थे, इसलिए उनके हस्ताक्षर भी जिन्ना के हस्ताक्षरों के साथ जोड़ दिए जाएं, क्योंकि कांग्रेस की ओर से बोलने का अधिकार केवल उन्हीं के पास था, जैसा कि जिन्ना को मुस्लिम लीग के संबंध में था। अपील से कांग्रेस अध्यक्ष के हस्ताक्षर हटाना, अप्रत्यक्ष रूप से जिन्ना के इस आरोप को स्वीकार करने के समान होगा कि हिंदू और मुसलमान दो राष्ट्र हैं—गांधी एक राष्ट्र के प्रवक्ता होंगे, जबकि जिन्ना दूसरे राष्ट्र के प्रवक्ता होने का दावा करते थे। लेकिन जिन्ना इस मुद्दे पर झुकने को तैयार नहीं थे। लॉर्ड

माउंटबेटन ने जिन्ना से सीधा सवाल किया कि क्या संयुक्त शांति अपील का मुद्दा मुस्लिम लीग को 'राजनीतिक रूप से नुकसान' पहुंचाएगा। इस पर जिन्ना ने नकारात्मक उत्तर दिया। माउंटबेटन ने नेहरू से विनती की कि वे इस मुद्दे पर अड़े न रहें, कम से कम उन्हें (माउंटबेटन को) जिन्ना की सत्यनिष्ठा की जांच करने का अवसर दें। नेहरू ने तथ्यों के आधार पर गांधी जी से पूरी तरह सहमति जताई। लेकिन इस तर्क के सामने, उन्होंने माउंटबेटन का साथ दिया। इस संबंध में गांधी और वायसराय के बीच निम्नलिखित टेलीग्रामों का आदान-प्रदान हुआ:
लॉर्ड माउंटबेटन ने गांधीजी से कहा:
13 अप्रैल, 1947
श्री जिन्ना हिंसा आदि की निंदा करने वाले उस बयान पर हस्ताक्षर करने के लिए पूरी तरह तैयार हैं, जिस पर आपने दिल्ली छोड़ने से पहले हस्ताक्षर किए थे, बशर्ते कि दस्तावेज़ पर केवल आपके और उनके ही हस्ताक्षर हों। जैसा कि आपने उल्लेख किया कि आप श्री कृपलानी के हस्ताक्षर भी शामिल किए जाने के बारे में सोच रहे थे, हालांकि मुझे पता चला कि आपने इसे एक शर्त के रूप में नहीं रखा था, मैं आपसे प्रतिक्रिया मिलने तक बयान जारी नहीं कर रहा हूँ। नेहरू इस मामले को मेरे विवेक पर छोड़ने के लिए सहमत हैं, लेकिन मुझे लगता है कि मुझे आपके विचार जानने होंगे। जब तक बयान पर केवल आपके हस्ताक्षर नहीं होंगे, श्री जिन्ना हस्ताक्षर नहीं करेंगे। क्या मैं आपसे इस पर सहमति देने का अनुरोध कर सकता हूँ?
गांधी ने लॉर्ड माउंटबेटन से कहा:
(पटना) 14 अप्रैल 1947

मेरी राय है कि कांग्रेस अध्यक्ष को भी हस्ताक्षर करने चाहिए।
कांग्रेस अध्यक्ष, आपको बहिष्कार का कारण पता होना चाहिए।
हालांकि, अंतिम निर्णय मैं आप और पंडितजी पर छोड़ता हूं। लॉर्ड माउंटबेटन ने गांधीजी से कहा:
15 अप्रैल, 1947
मुझे आपको यह बताते हुए खुशी हो रही है कि नेहरू भी यह निर्णय मुझ पर छोड़ने के लिए सहमत हो गए हैं। मैं इस अपील को जारी करना इतना महत्वपूर्ण समझता हूं कि मैंने सोचा कि इस पर केवल आपके और श्री जिन्ना के हस्ताक्षर ही होने चाहिए।
माउंटबेटन के इस कदम का नतीजा यह हुआ कि एक अस्वाभाविक स्थिति और भी बिगड़ गई, जिसमें हिंसा का इस्तेमाल मुस्लिम लीग को लगातार भारी लाभ पहुंचा रहा था। अगर यह अपील संबंधित पक्षों के स्वतःस्फूर्त प्रयास से आई होती, तो इसके लागू होने की कुछ संभावना होती। लेकिन ऐसा नहीं हुआ, इसने मुस्लिम लीग को कूटनीति की बिसात पर एक और दांव खेलने का मौका दे दिया। मुस्लिम लीग के मुखपत्र डॉन की टिप्पणी स्पष्ट थी: 'भारत के दोनों राष्ट्रों के नेताओं द्वारा हस्ताक्षरित नाटकीय अपील के तरीके में नवीनता है। लेकिन इसमें शायद ही कुछ ऐसा है जो कायद-ए-आजम ने बिना किसी के उकसावे के पहले न कहा हो...'
अगला कदम बिना किसी देरी के और तार्किक क्रम में उठाया जाना चाहिए। हम जानबूझकर "तार्किक" शब्द पर जोर दे रहे हैं क्योंकि वायसराय द्वारा इस प्रकार की अपील जनता तक पहुंचाने के लिए कायद-ए-आजम और श्री गांधी को चुनना इस बात का प्रमाण है कि इस संदर्भ में एक नहीं बल्कि दो आवाजों की आवश्यकता है। यदि यह मान्यता नहीं है कि दो लोग, दो राष्ट्र हैं, जो केवल अपने-अपने

नेता का सम्मान करेंगे, तो ऐसी अपील करने के लिए दो लोगों की आवश्यकता क्यों है?
और फिर:
'वाइसराय ने श्री गांधी को राजनीतिक उद्देश्यों की प्राप्ति के साधन के रूप में हिंसा की "सदा निंदा करने" के लिए राजी कर लिया है, लेकिन महात्मा के राजनीतिक उत्तराधिकारी और वंशज अभी भी इस बात से सहमत नहीं हैं।'
मुस्लिम लीग से यह उम्मीद करना कि वे अपना एकमात्र हथियार, जिसे जिन्ना ने उनका गढ़ा हुआ बताया था, फेंक देंगे, एक कोरी कल्पना ही होती। लेकिन गांधी ने मन ही मन सोचा कि भले ही मुस्लिम लीग ईमानदार न हो, माउंटबेटन के कहने पर जारी की गई संयुक्त अपील के कारण वायसराय भी परोक्ष रूप से इसमें भागीदार बन गए थे और इसके पूर्ण कार्यान्वयन का भार उन पर आ गया था, जिसे वे अवश्य ही पूरा करेंगे। वायसराय ने बाद में कहा कि उन्होंने इस दायित्व को स्वीकार नहीं किया, हालांकि उन्होंने गांधी से कहा कि वे सांप्रदायिक शांति स्थापित करने में अपनी पूरी कोशिश करेंगे। फिर भी, गांधी को लगा कि यह पर्याप्त नहीं है। लेकिन न तो तब और न ही बाद में की गई उनकी विनतियों से वायसराय अपना मन बदलने को तैयार हुए। परिणामस्वरूप, शांति अपील निरर्थक ही रह गई और गांधी ने इस पर एक से अधिक बार अपनी निराशा व्यक्त की।
जब दिल्ली में ये सब हो रहा था, पंजाब भी जल रहा था। मुस्लिम लीग ने वहाँ भी आतंक का राज फैला रखा था। हिंदुओं को डराया जा रहा था, उनकी संपत्तियाँ लूटी और जलाई जा रही थीं, उनकी ज़मीनें हड़पी जा रही थीं, उनकी महिलाओं का अपमान किया जा रहा था और मुस्लिम बहुसंख्यकों के बीच रहने वाले अल्पसंख्यक समुदायों का नरसंहार किया जा रहा था। पश्चिमी पंजाब में हो रहे अत्याचारों

की कहानियाँ उत्तर भारत के बाकी हिस्सों में आग लगा रही थीं। धीरे-धीरे पश्चिमी पंजाब से भाग रहे हिंदू शरणार्थियों की एक छोटी सी धारा नई दिल्ली और उसके आसपास के इलाकों में शरण लेने लगी। इनकी संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी। कट्टरपंथी हिंदू संगठन शरणार्थी शिविरों में घुसपैठ करने लगे और लोगों को बदला लेने के लिए उकसाने लगे। पूरा उत्तर भारत विस्फोट के कगार पर था। हालाँकि, नेता आश्चर्यजनक रूप से उदासीन थे; गांधी एकमात्र अपवाद थे, लेकिन उन्होंने खुद को पूरी तरह से अलग-थलग पाया।
गांधी जी एशियाई सम्मेलन के अंतिम सत्र से ठीक पहले वाले सत्र से लौटकर शाम की प्रार्थना सभा में समय पर पहुँचे। कुरान का पाठ शुरू होते ही हिंदू महासभा का एक युवक उछल पड़ा और चिल्लाने लगा, 'यह हिंदू मंदिर है, हम आपको यहाँ मुस्लिम प्रार्थनाएँ नहीं पढ़ने देंगे।' स्वयंसेवकों ने उस युवक को सभा से हटाने की कोशिश की, लेकिन गांधी जी ने हस्तक्षेप किया। 'जब तक एक भी व्यक्ति आपत्ति करता रहेगा, मैं प्रार्थना नहीं करूँगा। मैं असहमति जताने वाले अल्पसंख्यकों को पूरी स्वतंत्रता देना चाहता हूँ।' युवक ने मंच तक पहुँचने की कोशिश की, लेकिन उसे रोक दिया गया। गांधी जी उससे मिलने के लिए आधे रास्ते तक नीचे गए और बोले, 'कोई भी मेरे और इस युवक के बीच न आए।' अगले दिन भी यही घटनाक्रम दोहराया गया। तीसरे दिन शाम को, जब गांधी जी प्रार्थना स्थल की ओर जा रहे थे, तो उनके हाथों में सफाईकर्मियों के संघ के अध्यक्ष का एक पत्र थमा दिया गया, जिसमें लिखा था कि वे नहीं चाहते कि गांधी जी हरिजन कॉलोनी में रहें; लेकिन पत्र फर्जी साबित हुआ। उस शाम भी तीन लोगों ने कुरान की आयतें पढ़ने पर आपत्ति जताई। इस प्रकार प्रतिदिन उनकी

अहिंसा की परीक्षा होती रही। चौथे दिन वे इस विचार के साथ जागे: 'शाम की नमाज़ में विरोध क्यों जारी है?' उन्होंने मनु से कहा कि अहिंसा और सत्य के लिए उनका प्रयास न केवल उनकी गलती से, बल्कि उनके साथियों की खामियों से भी व्यर्थ हो सकता है। चूंकि वह नमाज़ पढ़ा रही थीं, इसलिए उन्हें स्वयं से यह पूछना चाहिए कि क्या उनके द्वारा पढ़ी गई आयतें उनकी सच्ची आस्था से निकली हैं। यदि उनकी प्रार्थनाएं हृदय से निकली हों, तो नमाज़ का यह कट्टर विरोध अवश्य समाप्त हो जाएगा। वे बहुत व्याकुल थे; मौलाना आजाद से बात करने के बाद उन्होंने दुख से कहा: 'लगता है ईश्वर मुझे अधिक समय तक जीवित नहीं रहने देगा।'
अंततः उनकी तपस्या का फल मिला: उसी शाम आरएसएस का एक नेता उनसे मिलने आया और उन्हें आश्वासन दिया कि उनकी प्रार्थना सभाओं में अब कोई व्यवधान नहीं होगा। प्रार्थना के बाद अपने प्रवचन में गांधीजी ने कहा, 'कोई यह न सोचे कि हमने पिछले तीन दिनों से प्रार्थना नहीं की है। हमने होठों से नहीं, बल्कि हृदय से प्रार्थना की, जो प्रार्थना का कहीं अधिक प्रभावी रूप है। इसमें विरोध करने वालों ने भी, भले ही अनजाने में, मेरी मदद की है। उनके विरोध ने मुझे पहले से कहीं अधिक आत्मनिरीक्षण करने में सक्षम बनाया है। आप शायद यह पूछना चाहें कि जब लॉर्ड माउंटबेटन के साथ वार्ता चल रही है, जिस पर राष्ट्र का भविष्य टिका है, तो मैं अपना इतना समय और ऊर्जा ऐसी तुच्छ बातों में क्यों लगा रहा हूँ? मैं आपको बता दूं, मेरे लिए कोई भी बात बड़ी या छोटी नहीं है। सभी समान रूप से महत्वपूर्ण हैं। नोआखली में, बिहार में, पंजाब में, दिल्ली में, यहाँ तक कि इस प्रार्थना स्थल पर भी अविभाजित भारत की लड़ाई प्रतिदिन हार-जीत हो रही है। आज

यहाँ के अनुभव ने मुझे अन्य स्थानों पर सफलता की कुंजी प्रदान की है।'
6 अप्रैल को 'राष्ट्रीय सप्ताह' का प्रारंभ हुआ। 1919 में इसी दिन रॉलेट एक्ट के विरुद्ध सत्याग्रह का शुभारंभ हुआ, जिसके तहत पूरे भारत में प्रार्थना और उपवास का दिन मनाया गया। इससे उत्पन्न जनमानस का स्वतःस्फूर्त प्रदर्शन एक मार्मिक दृश्य था, जो भारत के जागरण का प्रतीक था। एक सप्ताह बाद अमृतसर में जलियांवाला बाग हत्याकांड घटित हुआ।
राष्ट्रवादी मुस्लिम नेता और गांधीजी के पुराने मित्र ख्वाजा साहब अब्दुल मजीद राष्ट्रीय सप्ताह के दौरान उनसे मिलने आए। भारत के संभावित विभाजन से वे गहरे दुखी थे, लेकिन उन्होंने अपने दुख को हँसी में उड़ाने की कोशिश की। उन्होंने कहा, 'बापूजी अब बुढ़ापे में हमें भारत से बाहर निकाल देंगे।' उन्होंने मज़ाकिया अंदाज़ में आगे कहा, 'जब भारत का विभाजन हो जाएगा, तो मैं आपके यहाँ शरण लेने आऊँगा। आप हिंदुओं को मेरी हत्या नहीं करने देंगे।' गांधीजी ने बीच में ही कहा, 'अगर कोई कट्टरपंथी तुम्हें मार डाले, तो मैं खुशी से नाचूँगा! मेरा दुर्भाग्य है कि मेरे पास तुम्हारे जैसे बहुत कम लोग हैं जो बहादुरी से और बिना क्रोध के मरेंगे। अगर मेरे पास तुम्हारे जैसे आधे दर्जन भी होते, तो हमें भस्म करने वाली आग बुझ जाती और भारत में तुरंत शांति छा जाती।' गांधीजी को यह जरा भी अंदाजा नहीं था कि ठीक नौ महीने बाद, ख्वाजा साहब ही उनके गोलियों से छलनी शरीर पर फातिहा (मुस्लिम अंतिम संस्कार की प्रार्थना) पढ़ेंगे।
1947 की गर्मियों में दिल्ली ने लंबे समय बाद इतनी भीषण गर्मी झेली थी। गांधी जी ने अपने सिर पर एक गीला कपड़ा लपेटा, मानो वह

उनके लिए 'एयर कंडीशनिंग' का काम कर रहा हो, लेकिन उनके प्यारे देश में नफरत की एक कहीं अधिक खतरनाक और उग्र हवा चल रही थी, जो अपने रास्ते में आने वाली हर चीज और खुद देश को भी निगलने की धमकी दे रही थी। बाहरी तौर पर वे शांत और स्थिर दिखाई दे रहे थे, लेकिन उनका मन उथल-पुथल में था। उन्हें नफरत भरे पत्रों की बाढ़ आ गई थी; उन्हें 'मोहम्मद गांधी', 'मौलाना गांधी', 'सांप्रदायिक' जैसे नामों से पुकारा जा रहा था, जबकि एक अन्य ने उन्हें 'जिन्ना का गुलाम' कहा। इन सभी बातों से गांधी जी को हंसी आ रही थी, और उन्होंने कहा, 'जनता ने ही तो महात्मा की उपाधि दी है, ये विशेषण भी उन्हीं की देन हैं; ये भी उतने ही स्वीकार्य हैं।'
भारत में ब्रिटिश औपनिवेशिक प्रशासन और ब्रिटिश व्यापारिक हितों की भूमिका न केवल भारतीय नेतृत्व की नज़र में संदिग्ध थी, बल्कि अंतिम वायसराय द्वारा सत्ता हस्तांतरण की सुचारू प्रक्रिया में बाधा भी मानी जा रही थी। किसी ने गांधीजी को पत्र लिखकर चेतावनी दी थी कि उन्हें अंग्रेजों की योजनाओं से सावधान रहना चाहिए; वे अभी भी अपनी पुरानी चालें चल रहे थे। ब्रिटेन की नई सरकार और उसके प्रतिनिधि, वायसराय, सत्ता हस्तांतरण के अपने इरादों को लेकर गंभीर थे, लेकिन व्यापक आशंका थी कि उनके इरादों को उन ताकतों द्वारा विफल किया जा सकता है जिन्होंने पहले भी कई बार ब्रिटिश उद्देश्यों को सफलतापूर्वक विफल किया था। यह निराधार भय या किसी षड्यंत्र सिद्धांतकार की कल्पना नहीं थी। स्वयं लॉर्ड माउंटबेटन ने स्वीकार किया था कि उन्हें उच्च ब्रिटिश अधिकारियों और स्थायी सेवाओं को ब्रिटिश योजनाओं और इरादों की तात्कालिकता से अवगत कराना आवश्यक लगा था।
10 अप्रैल की शाम को गांधीजी ने कहा, 'लोगों के मन में व्याकुलता है। वे मुझसे पूछते हैं कि क्या लॉर्ड माउंटबेटन अपने वादे

करें। मुझे आशा है कि अंग्रेज भारत को शत्रु बनकर नहीं, बल्कि मित्र बनकर छोड़ेंगे।'
उन्होंने अपनी प्रजा को किसी भी अप्रिय घटना से सावधान रहने की सलाह दी; लेकिन उनकी अपील अनसुनी कर दी गई। न तो अंग्रेजों के स्वार्थी तत्वों ने अपनी मनमानी रोकी और न ही उनके राजनीतिक उत्तराधिकारी उनके लिए रचे गए सुनियोजित जालों से बच पाए। सभी भारतीय नेताओं को ब्रिटिश प्रशासन ने उनकी ताकत और कमजोरियों के अनुरूप और उन्हें फंसाने के लिए अपनाए जाने वाले तरीकों के अनुसार कुशलतापूर्वक नियंत्रित किया। गांधी जी अकेले रह गए। 12 अप्रैल को गांधी जी पटना के लिए रवाना हुए। उन्होंने अगले दिन पटेल को पत्र लिखा:
'एक बात थी जो मैं आपसे पूछना चाहता था लेकिन समय न होने के कारण पूछ नहीं सका... मुझे लगता है कि अब मुझे हरिजन में कुछ लिखना चाहिए... मैं यह भी देखता हूँ कि हमारे विचारों में व्यापक और लगातार मतभेद हैं। इन परिस्थितियों में, क्या यह उचित होगा कि मैं वायसराय से व्यक्तिगत रूप से भी मिलूँ?'
इस पर निष्पक्ष होकर विचार करें, केवल देश के हित को ध्यान में रखें। चाहें तो दूसरों से इस पर चर्चा करें। आपके मन में यह संदेह बिल्कुल नहीं होना चाहिए कि मैं इस पर आपत्ति जता रहा हूँ। मैं तो बस देश के सर्वोच्च हित के संदर्भ में अपने कर्तव्य के बारे में सोच रहा हूँ। हो सकता है कि लाखों लोगों के मामलों का प्रबंधन करते समय आप वह देख पाएँ जो मैं नहीं देख पा रहा हूँ। शायद मैं भी आपकी जगह होता तो आपके जैसा ही व्यवहार करता और बोलता।
और इसलिए वे सभी—माउंटबेटन, सीडब्ल्यूसी और मुस्लिम लीग—अलग-अलग कारणों से और एक-दूसरे से भिन्न होते हुए भी, एक ही स्वर में

गूंज उठे: 'राष्ट्र की आवाज' उनकी जन्मभूमि में उच्च राजनीति के मैदान में 'वीरानी की आवाज' बन गई। अपनी मातृत्व भावना से सरोजिनी नायडू ने स्थिति की गंभीरता, गांधी के घोर आध्यात्मिक एकाकीपन, उनके मित्रों और विरोधियों से समान रूप से अलग करने वाली खाई को भांप लिया, और जो 78 वर्ष की आयु में उन्हें एक बार फिर बिहार में अपने अकेले रास्ते पर चलने के लिए भेज रही थी, जहां एक चौथाई सदी से भी अधिक समय पहले उन्होंने भारतीय राजनीति में अपना पदार्पण किया था और एक ऐसे करियर की शुरुआत की थी जिसने एक ही पीढ़ी के भीतर उनकी आंखों के सामने देश का चेहरा बदल दिया था। उन्होंने लिखा:
प्रिय तीर्थयात्री
मुझे पता चला है कि आप बिहार में अपने चुने हुए वाया डोलोरोसा मार्ग पर एक बार फिर से यात्रा शुरू कर रहे हैं।
आपके लिए दुःख का मार्ग शायद लाखों दुखी हृदयों के लिए आशा और सांत्वना का मार्ग हो। आपकी तीर्थयात्रा मंगलमय हो।
मैं अभी भी बेहद कमजोर हूँ, वरना मुझे आपको विदाई देने के लिए हरिजन कॉलोनी पहुँचने की कोशिश करनी चाहिए थी।
लेकिन भले ही मैं तुम्हें देख न पाऊं, तुम जानती हो कि मेरा प्यार और मेरा विश्वास हमेशा तुम्हारे साथ है।
आपका अम्माजन
सरोजिनी
बिहार लौटकर, भीषण गर्मी और उससे भी अधिक घुटन भरे राजनीतिक माहौल से उबरने के बाद, गांधीजी को राहत महसूस हुई। उन्होंने सभी वर्गों के नेताओं से बातचीत की थी, लेकिन असफल रहे थे। अब भारत के विभाजन को रोकने का एकमात्र उपाय समग्र स्थिति में आमूलचूल परिवर्तन था। केवल मौखिक समझाने-बुझाने से काम नहीं

चलेगा; उन्हें ऐसा माहौल बनाना होगा जिसमें सभी पक्ष नए सिरे से सोचने पर मजबूर हों। लेकिन उनके पास समय कम होता जा रहा था। गांधी जी बिहार में तीन सप्ताह से भी कम समय के लिए रहने वाले थे, फिर भी उन्होंने वहां के लोगों के लिए अथक प्रयास किया। चंपारण सत्याग्रह के दिनों से ही गांधी जी बिहार के लोगों के दिल के बेहद करीब थे। अपनों द्वारा किए गए इस विश्वासघात से उन्हें गहरा दुख हुआ। दो दिन बाद, उन्होंने उन हिंदुओं के एक वर्ग को कड़ी फटकार लगाई, जिन्होंने उस क्षेत्र पर लगाए गए दंडात्मक कर का विरोध किया था, जहां के स्थानीय लोग दंगों के दौरान अपराधों के आरोपी भगोड़ों को गिरफ्तार करने में अधिकारियों की मदद नहीं कर रहे थे। 'न्याय से भागे हुए अपराधियों को पनाह देना कितना विश्वासघात है! आप शिकायत करते हैं कि निर्दोष लोग गुंडों के कुकर्मों का शिकार हो रहे हैं, लेकिन जब सरकार अपराधियों की गिरफ्तारी में लोगों का सहयोग लेने के लिए कार्रवाई करना चाहती है, तो आप हंगामा करते हैं। यह सच है कि भगोड़ों को पनाह देने वाले कम हैं, लेकिन उपाय आपके हाथ में है। आपको असली दोषियों को सामने लाना चाहिए ताकि कुछ लोगों के पापों का खामियाजा दूसरों को न भुगतना पड़े।'
पिछले कुछ महीनों में, गांधी जी बंगाल और बिहार में व्यस्त थे, इसलिए वे अपने द्वारा स्थापित या समर्थित विभिन्न संगठनों की गतिविधियों से अवगत नहीं रह पाए थे, जो रचनात्मक कार्यों और सामाजिक सुधारों में लगे हुए थे। पटना में बैठकों की एक श्रृंखला आयोजित की गई ताकि वे इन संगठनों के कार्यकर्ताओं से मिल सकें और उनका मार्गदर्शन कर सकें। अगले कुछ दिनों में उन्होंने प्रगतिशील शिक्षा के अपने आदर्श, नई तालीम और राष्ट्र भाषा प्रचार समिति के प्रतिनिधियों से मुलाकात की, जो स्वतंत्र

भारत की राष्ट्रीय भाषा के रूप में हिंदुस्तानी के प्रचार-प्रसार के लिए काम कर रही थी। उन्होंने एक सहकर्मी को लिखा, 'अब जब स्वराज आ रहा है, तो इसे कायम रखने के लिए हमें प्रत्येक व्यक्ति के सहयोग और सेवा की आवश्यकता है। 1942 में, एक्स ने भारत के बाहर न केवल मेरे बारे में, बल्कि बेचारे कस्तूरबा की बीमारी और मृत्यु के बारे में भी झूठा प्रचार किया था। लेकिन आज हमें उनकी प्रतिभा का भी उपयोग करना चाहिए, जैसा कि हम कर रहे हैं। यही बात रचनात्मक कार्य संगठनों पर भी लागू होती है। हमें पुराने पूर्वाग्रहों को त्याग देना चाहिए।' हमें अपनी ताकत बढ़ाने के लिए हर किसी की ऊर्जा का उपयोग करना होगा।
उन्होंने सदाकत आश्रम के कार्यकर्ताओं और हरिजन सेवक संघ के सदस्यों से मुलाकात की, जो अस्पृश्यता उन्मूलन और अछूतों के उत्थान में लगे स्वयंसेवकों का एक संगठन है। उन्होंने कहा कि अब हरिजनों के सांस्कृतिक और आर्थिक उत्थान की आवश्यकता है ताकि 'छूतों' और 'अछूतों' के बीच का भेद पूरी तरह मिट जाए। जातिगत भेदभाव को मिटाने और एक समरूप एवं वर्गविहीन समाज के निर्माण पर उनका यह आग्रह कुछ उच्च जाति के हिंदू समुदायों में उनके प्रति आक्रोश के कई कारणों में से एक था।
गांधी जी की सबसे तीखी आलोचना बिहार के उन मंत्रियों के लिए थी जिनसे वे दिल्ली रवाना होने से ठीक पहले मिले थे। उन्हें शिकायत मिली थी कि वे उनके सामने तय की गई पुनर्वास नीति को लागू नहीं कर रहे हैं। उन्होंने मंत्रियों से कहा, 'मुझे बताया गया है कि मंत्री मुझसे कहते कुछ हैं और करते कुछ और हैं। इस तरह हम न तो स्वतंत्रता प्राप्त कर पाएंगे और न ही उसे बनाए रख पाएंगे। अगर आप सिर्फ मेरी चापलूसी करने के लिए सहमति जताते हैं, तो आप मेरे प्रति, अपनी जनता के प्रति और अपने भरोसे के

प्रति विश्वासघात कर रहे हैं। मैं अचूक होने का दावा नहीं करता। अगर मेरी बात आपको पसंद नहीं आती, तो आपको सीधे-सीधे मुझे बताना चाहिए और मेरी गलती को समझाने की कोशिश करनी चाहिए। जब आप वास्तव में मुझे गलत मानते हैं, तब औपचारिक सहमति जताकर आप मेरे साथ अन्याय कर रहे हैं और खुद को गलत साबित कर रहे हैं। आपको यह समझना होगा कि पंजाब, बिहार और बंगाल में जो हो रहा है, वह भारतीय स्वतंत्रता में बाधा बन रहा है।'
गांधी जी अपने करीबी लोगों के प्रति बहुत सख्त थे। वे उनसे बेदाग होने की उम्मीद रखते थे; जब उनकी कमियां उन्हें दिखाई देती थीं या उन्हें बताई जाती थीं, तो उन्हें ऐसा लगता था मानो उनकी कमियां उनकी अपनी कमजोरियों का प्रतिबिंब हों। वे वहां के मंत्रियों से स्वतंत्र भारत में मर्यादा का उदाहरण प्रस्तुत करने की अपेक्षा रखते थे।
उस रात वह साढ़े नौ बजे सो गया। भीषण गर्मी के कारण उसने भोजन बहुत कम कर दिया था। परिणामस्वरूप वह कमजोर महसूस कर रहा था और उसका रक्तचाप भी बढ़ गया था। वह दिनभर कातना भूल गया था। जैसे ही वह अपने गद्दे पर लेटा और आँखें बंद कीं, उसे अचानक वह भूला हुआ काम याद आ गया। उसने सोचा, यह ठीक नहीं है। वह बिस्तर से उठा, चरखा तैयार किया और दिनभर कात पूरा कर लिया। फिर वह शांति से सो गया।
29 अप्रैल 1947 गांधी जी के बिहार प्रवास का अंतिम दिन था। उस शाम प्रार्थना के बाद अपने भाषण में बिहार को विदाई देते हुए उन्होंने बिहारवासियों से अनुरोध किया कि वे रेलवे स्टेशनों पर भीड़ जमा करके नहीं, बल्कि सांप्रदायिक एकता के लिए काम करके उनके प्रति अपना स्नेह प्रदर्शित करें। उन्होंने कहा, 'इस उम्र में मैं भीड़ का शोर बर्दाश्त नहीं कर सकता। इसके अलावा, मुझे

'जय' के नारे सुनना भी पसंद नहीं है; ये मुझे उन हिंदुओं की याद दिलाते हैं जिन्होंने निर्दोष पुरुषों और महिलाओं का नरसंहार किया, ठीक वैसे ही जैसे मुसलमानों ने अल्लाह-ओ-अकबर के नारे लगाते हुए हिंदुओं का वध किया। मुझे ईश्वर के नाम पर निर्दोषों पर अत्याचार करने से बड़ा कोई पाप नहीं दिखता।'
इस संदेश के साथ उन्होंने बिहार से विदा ली। वे राष्ट्रीय राजधानी लौट रहे थे, जहाँ और भी राजनीतिक षड्यंत्र उनका इंतजार कर रहे थे। उन्हें पूरा विश्वास था कि वे अपने राजनीतिक सहयोगियों को उनके चुने हुए मार्ग से नहीं हटा पाएंगे। उन्हें यह भी एहसास हो गया था कि उन पर उनका प्रभाव कम होता जा रहा है; उन्हें एक नया मार्गदर्शक मिल चुका था—लॉर्ड माउंटबेटन। गांधी जी को संदेह था कि बिहार में उनका प्रवास घटनाओं की दिशा को प्रभावित करने में कितना कारगर होगा, लेकिन एक चिरस्थायी आशावादी गांधी जी अपनी पूरी कोशिश करने को उत्सुक थे। यदि सत्य और अहिंसा की शक्ति में उनका विश्वास नहीं डगमगाता, तो वे कोई न कोई रास्ता निकाल ही लेंगे, और उन्हें पूरा विश्वास था कि अंतिम समय में भी वे अपने देश को विभाजन और उसके परिणामस्वरूप होने वाली मानवीय त्रासदी से बचा लेंगे। दुर्भाग्य से, समय ने गवाही दी कि वे सफल नहीं हुए।

10

एक एकाकी महात्मा

'सिरदर्द से छुटकारा पाने के लिए सिर काटने को भी तैयार!' विभाजन को स्वीकार करने का औचित्य
'मैं पुलिस को नहीं बुलाऊँगा। हो सकता है मैं मारा जाऊँ, लेकिन बाद में तुम्हें अपने किए पर पछतावा होगा और तुम रोओगे। दूसरी ओर, अगर मैंने पलटवार किया या पुलिस को बुलाया, तो हो सकता है मैं तब भी मारा जाऊँ, लेकिन मुझे मारने वालों को अपनी सफलता पर गर्व करने का अच्छा कारण मिल जाएगा।'
– MAHATMA GANDHI, January 1947
'एक खुद को मेरा बेटा कहता है, दूसरा खुद को मेरा चेला कहता है। पर मेरी कोई सुनता नहीं, लेकिन अब कोई मेरी बात नहीं सुनता।'
– MAHATMA GANDHI, January 1948

नई दिल्ली में सत्ता हस्तांतरण से पहले की स्थिति षड्यंत्रों और राजनीतिक छल-कपट का अड्डा बनती जा रही थी। इस साजिश और धोखे के जाल में मुख्य खलनायक औपनिवेशिक प्रशासन का राजनीतिक विभाग था। अंतरिम सरकार में मुस्लिम लीग के मंत्रियों के साथ मिलकर वे लगातार गड़बड़ी कर रहे थे। मुस्लिम लीग के अंतरिम सरकार में शामिल होने पर कांग्रेस ने वित्त मंत्रालय छोड़ दिया था। इससे सरकार की वित्तीय बागडोर मुस्लिम लीग के मंत्रियों के हाथों में आ गई और उन्होंने कांग्रेस से मिले इस उपहार का पूरा फायदा उठाते हुए सरकारी विभागों में घुसपैठ की। दूरदर्शिता की इस कमी ने कांग्रेस नेताओं को उनकी अन्य गलतियों से कहीं अधिक कष्ट पहुंचाया।

के खेल में नहीं घसीटना चाहिए। किसी भी हालत में उन्हें अंग्रेजों से कोई रियायत पाने के लिए भारत की एकता का सौदा नहीं करना चाहिए, बल्कि इसके बजाय अंग्रेजों से यह मांग करनी चाहिए कि वे अपनी मध्यमार्गी नीति को त्याग दें और स्पष्टवादी रवैया अपनाएं, सत्ता हस्तांतरण होने तक पूरे देश में कानून का सख्ती से पालन करें और उस दल से बातचीत करने से इनकार कर दें जो इस मामले में ढिलाई बरतता है या सहयोग करने से इनकार करता है; और यदि अंग्रेज ऐसा करने को तैयार न हों, तो उन्हें इस खेल से बाहर निकल जाना चाहिए और उनके पीछे हटने का इंतजार करना चाहिए, और भारतीय दलों को इसे आपस में सुलझाने के लिए छोड़ देना चाहिए। उस शाम कार्यकारिणी की बैठक हुई। गांधी जी को अब यह एहसास हो चुका था कि कांग्रेस नेतृत्व दिखावे के तौर पर तो उनकी सलाह सुनता था, लेकिन उस पर अमल बहुत कम ही करता था। कांग्रेस नेताओं को पता था कि जब तक गांधी जी उनके कार्यों का समर्थन नहीं करेंगे, तब तक वे पार्टी के कार्यकर्ताओं या आम भारतीयों को स्वीकार्य नहीं होंगे। इसलिए उन्होंने गांधी जी को बैठक में आने के लिए राजी किया। बैठक में गांधी जी मूक दर्शक बने रहे, जहाँ कांग्रेस ने भारत के विभाजन को सैद्धांतिक रूप से स्वीकार करने वाला प्रस्ताव पारित कर दिया। विभाजन के सिद्धांत को स्वीकार करने वाले कार्यकारिणी के निर्णय का मुख्य अंश नेहरू द्वारा वायसराय को लिखे गए निम्नलिखित पत्र में निहित था: 'उस प्रस्ताव के संबंध में, जिसे, मेरा अनुमान है, लॉर्ड इस्मे लंदन ले जा रहे हैं, हमारी समिति निश्चित रूप से निर्धारित क्षेत्रों पर लागू आत्मनिर्णय पर आधारित विभाजन के सिद्धांत को स्वीकार करने के लिए तैयार है। इसमें बंगाल और पंजाब का विभाजन शामिल है। जैसा कि आप जानते हैं, हम एक संयुक्त भारत के

विचार से पूरी तरह जुड़े हुए हैं, लेकिन हमने संघर्ष और दबाव से बचने के लिए भारत के विभाजन को स्वीकार किया है।' इस विभाजन को प्रभावी बनाने के लिए, इससे प्रभावित लोगों की इच्छाओं और हितों को पूरा करने के लिए हर संभव प्रयास किया जाना चाहिए। ऐसे विभाजन से पहले और इसके अलावा भी, हाल की घटनाओं ने बंगाल और पंजाब दोनों के प्रशासनिक विभाजन को एक स्पष्ट और अत्यावश्यक आवश्यकता बना दिया है।
'बहुमत वाली विधिवत गठित प्रांतीय सरकार को भंग करने और आतंकवाद के बल पर चुनाव कराने का कोई भी प्रस्ताव आत्मसमर्पण माना जाना चाहिए और इसका कड़ा विरोध किया जाना चाहिए।' नेहरू के पत्र के इस भाग में मुस्लिम लीग और उत्तर पश्चिमी खाड़ी प्रांत (एनडब्ल्यूएफपी) के ब्रिटिश गवर्नर की नापाक योजनाओं का जिक्र था, जहां खान अब्दुल गफ्फार खान के भाई डॉ. खान साहब के नेतृत्व में कांग्रेस सरकार सत्ता में थी। मुस्लिम लीग ने औपनिवेशिक गवर्नर की मिलीभगत से आतंक का राज कायम कर रखा था और केंद्रीय प्रशासन को यह विश्वास दिला दिया था कि एकमात्र समाधान लोकतांत्रिक रूप से चुनी गई कांग्रेस सरकार को भंग करना और मुस्लिम लीग की कठपुतली सरकार स्थापित करना है, जो बाद में प्रांत को पाकिस्तान में विलय करने के लिए मतदान करेगी। उस समय यह योजना कागजों पर एक गुप्त रहस्य थी, लेकिन इसे जल्द ही लागू किया जाना था। खान बंधुओं, जो कट्टर राष्ट्रवादी और मुस्लिम लीग के कट्टर दुश्मन थे, जिन्ना के लिए एक कांटा थे। जिन्ना और लीग में उनके साथियों को इस बात की चिंता थी कि खान बंधुओं के नेतृत्व में पख्तून भारत के साथ रहने के लिए मतदान कर सकते हैं और पाकिस्तान पर प्रभुत्व जमाने वाले पंजाबी-मुस्लिम बहुमत के अधीन होने से इनकार कर सकते हैं। यदि ऐसा हुआ, तो भले ही वे

स्वतंत्रता के साथ-साथ पाकिस्तान के निर्माण में सफल हो जाएं, वे इसे लंबे समय तक कायम नहीं रख पाएंगे। उन्हें पख्तूनों से निर्णायक रूप से निपटना था, और अपने औपनिवेशिक संरक्षकों की मिलीभगत से उन्होंने ठीक यही किया।
आज भी गांधी ने विभाजन को एकमात्र समाधान मानने से इनकार कर दिया और इस तर्क को भी खारिज कर दिया कि अराजकता से बचने के लिए यह एक आवश्यक कदम था। उन्होंने इससे पहले एक ब्रिटिश समाचार पत्रिका, कैवलकेड को लिखे संदेश में इस संबंध में अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा था कि पूर्ण स्वतंत्रता के बिना, जिसमें भारत से ब्रिटिश सैनिकों और प्रभाव की वापसी भी शामिल है, कोई भी वास्तविक शांति संभव नहीं है। थोपी गई शांति केवल मानवीय संबंधों को बिगाड़ सकती है: 'इसलिए भारत में वास्तविक शांति की स्थापना में अनिवार्य रूप से निरर्थक संघर्ष शामिल होगा। यह तब जल्दी समाप्त होगा जब कोई भी पक्ष संरक्षण के लिए ब्रिटिश सत्ता की ओर नहीं देख पाएगा। एक महान राष्ट्र का जबरन कमजोर होना दुखद परिणाम देगा। निस्संदेह, गड़बड़ी को कम करने के लिए बहुत कुछ भारतीय बुद्धिमत्ता पर निर्भर करेगा। जबकि संबंध टूट रहे हैं, भारत में ब्रिटिश राजनेताओं और ब्रिटिश निवासियों की ईमानदारी और दूरदर्शिता समान रूप से आवश्यक है। मुझे खेद के साथ कहना होगा कि ब्रिटिश बयानों पर अविश्वास बहुत गहरा गया है और शायद यह उचित भी है। इसलिए, इस नाजुक समय में ब्रिटिश व्यवहार पूरी तरह से स्पष्ट और संदेह से परे होना चाहिए।' गांधी जी को पूरा विश्वास था कि अगर ब्रिटिश शासक और उच्च अधिकारी ईमानदारी और निष्ठा से स्थिति को संभालते हैं, तो भारत को तबाह करने वाली संभावित अराजकता का कोई कारण नहीं होगा। लेकिन अगर सभी के सबसे बुरे डर सच हो जाते और ब्रिटिशों के पीछे

थी कि बल के आगे कुछ भी नहीं झुकेगा। संयुक्त अपील जारी करने का कोई अर्थ नहीं था जब तक कि यह सुनिश्चित न हो जाए कि इसका अर्थ दोनों हस्ताक्षरकर्ताओं के लिए वह सब कुछ है जो इसके शब्दों में निहित है: 'क्या मैं वायसराय से पूछ सकता हूँ कि वह इस सब का मूक साक्षी क्यों है? वह मुझे या जिन्ना साहब को, जो भी संयुक्त अपील के कार्यान्वयन में चूक करता है, जवाबदेह क्यों नहीं ठहराता?' और अगर अंग्रेज हिंदू और मुसलमानों को आपस में शांति से रहने के लिए मजबूर नहीं कर सकते, तो वे उन्हें आपस में मामला सुलझाने के लिए छोड़कर क्यों नहीं चले जाते?' लेकिन उन्होंने आगे कहा कि अगर अंग्रेज नहीं भी जाते, तो भी तलवार उठाना इसका जवाब नहीं होगा। 'अगर आप सोचते हैं कि अंग्रेज बल के आगे झुक जाएंगे, तो आप बहुत बड़ी गलती कर रहे हैं। और यह आपके लिए भी एक सबक होना चाहिए। अगर आप आखिरी दम तक मरने का साहस सीख लेते हैं, तो कोई भी आपसे बलपूर्वक कुछ नहीं छीन सकता।'
गांधी जी ने 3 मई को माउंटबेटन से मुलाकात के दौरान संयुक्त अपील के उल्लंघन और इसके प्रस्तावक के रूप में वायसराय की जिम्मेदारी का मुद्दा उठाया। वायसराय ने कहा कि दोनों हस्ताक्षरकर्ताओं ने स्वेच्छा से और अपनी मर्जी से इस पर हस्ताक्षर किए थे, इसलिए उनकी कोई जिम्मेदारी नहीं बनती। वायसराय अशांति जारी रहने की जिम्मेदारी लेने और जिन्ना और उनकी मुस्लिम लीग को दोषी ठहराने से भी कतरा रहे थे। उनका एकमात्र उद्देश्य यथाशीघ्र शांतिपूर्ण तरीके से सत्ता को भारत को सौंपना था। वे भारत की एकता को लेकर बेहद चिंतित थे। सांप्रदायिक संघर्ष जारी रहने से न तो ब्रिटेन और न ही भारत की प्रतिष्ठा को ठेस पहुंचती। उन्होंने अंत में गांधी जी को आश्वासन दिया कि यदि ब्रिटिश सत्ता के खात्मा के दौरान उनके

सर्वोत्तम प्रयासों के बावजूद भी संघर्ष जारी रहता है, तो वे सेना की सेवाएं लेने से नहीं हिचकिचाएंगे।
हालांकि, उनके दृष्टिकोण में एक बुनियादी मतभेद बना रहा। गांधी जी न तो कांग्रेस नेताओं को और न ही वायसराय को एकता और सांप्रदायिक सद्भाव की समस्या को उस तरीके से सुलझाने के लिए राजी कर पाए, जिससे कठिन लेकिन सही सूत्र को लागू किया जा सके। जब पंजाब जल रहा था और अराजकता और सांप्रदायिक उन्माद की लहर पूरे भारत को अपनी चपेट में लेने की धमकी दे रही थी, तभी नोआखली में फिर से अशांति फैल गई। गांधी जी ने माउंटबेटन से पूछा कि क्या उन्हें पंजाब जाना चाहिए, जैसा कि उनके मित्र बार-बार उनसे अनुरोध कर रहे थे, या नोआखली जाना चाहिए, जहां उनका काम अधूरा था। 'नेहरू सहमत हैं। फिर भी मैं चाहता हूं कि आप मुझे मार्गदर्शन दें। हिंसा का यह प्रकोप महज़ एक छोटी सी बात नहीं है। अगर इससे अभी निपटा नहीं जा सका, तो चौदह महीने बाद भी नहीं निपट पाएगा।' माउंटबेटन ने उत्तर दिया, 'मैं पूरी तरह सहमत हूं कि ये हिंसाएं महज़ एक छोटी सी बात नहीं हैं। हमें केंद्र में सभी पक्षों के बीच समझौता करवाना होगा और यदि संभव हो तो हिंसा के खिलाफ एक संयुक्त मोर्चा बनाना होगा।' ब्रिटिश औपनिवेशिक प्रशासन ने प्रतिशोध की अपनी विकृत इच्छा में, एक कांग्रेसी नेता को दूसरे के खिलाफ खड़ा किया और गुप्त रूप से जिन्ना और मुस्लिम लीग को अधिक से अधिक अशांति पैदा करने के लिए प्रोत्साहित किया ताकि अंततः, जब भारत स्वतंत्र हो जाए, तो यह एक ऐसी जीत हो जो व्यर्थ साबित हो।
प्यारेलाल लिखते हैं: 'अंत तक मतभेद बना रहा। दोनों पक्षों को खुश करने की नीति जारी रही और इसके साथ ही हिंसा को नियंत्रण में लाने के लिए हिंसा के अपराधी के साथ "संयुक्त मोर्चा" बनाने

की काल्पनिक खोज भी चलती रही, जबकि मृतकों की संख्या बढ़ती ही जा रही थी, जिससे देश एक विशाल बारूद भंडार में तब्दील हो गया।' रॉयटर्स के विशेष संवाददाता दून कैंपबेल द्वारा पूछे गए एक प्रश्न के उत्तर में कि क्या उन्हें लगता है कि भारत का सांप्रदायिक विभाजन अपरिहार्य था, गांधी ने कहा, 'व्यक्तिगत रूप से, मैंने हमेशा "नहीं" कहा है और मैं अब भी "नहीं" कहता हूं।' फिर उनसे पूछा गया, 'क्या आप इस राय से सहमत हैं कि यदि जून 1948 तक हिंदू-मुस्लिम मतभेदों का समाधान नहीं हुआ, तो अंग्रेजों को नैतिक रूप से भारत में बने रहने के लिए बाध्य होना पड़ेगा?'
गांधी जी को इससे पहली बार यह संकेत मिला कि सांप्रदायिक कलह का बहाना बनाकर ब्रिटिश वापसी में देरी करने और स्वतंत्रता को टालने के लिए पर्दे के पीछे से एक गुट सक्रिय रूप से काम कर रहा था। ऐसा माना जाता था कि नए वायसराय माउंटबेटन ने भी ऐसी संभावना का संकेत दिया था, बशर्ते भारतीय दल ब्रिटिश सत्ता को बने रहने के लिए आमंत्रित करें, हालांकि व्यक्तिगत रूप से वे इसे 'अत्यंत असंभव' मानते थे। गांधी जी ने स्पष्ट किया कि ब्रिटिश वापसी—जिसे उन्होंने 'ब्रिटिश राष्ट्र का सबसे महान कार्य' कहा था—यदि ईमानदारी और पूर्ण रूप से कार्यान्वित की जानी है, तो आंतरिक परिस्थितियों की परवाह किए बिना, निर्धारित समय पर होनी चाहिए। उन्होंने उत्तर दिया, 'अगर ब्रिटिश आज ही चले जाएं तो अच्छा होगा—तेरह महीने भारत के लिए मुसीबत का सबब हैं। मैं ब्रिटिश घोषणा की महानता पर सवाल नहीं उठाता, मैं वायसराय की ईमानदारी पर सवाल नहीं उठाता, लेकिन तथ्य तो तथ्य हैं। न तो ब्रिटिश मंत्रिमंडल और न ही वायसराय, चाहे वे कितने भी प्रतिष्ठित क्यों न हों, तथ्यों को बदल सकते हैं। और तथ्य यह

है कि भारत को हर चीज के लिए ब्रिटिश सत्ता की ओर देखने की आदत पड़ गई है।' अब भारत के लिए उस स्थिति से अचानक ध्यान हटाना संभव नहीं है। मुझे यह तर्क कभी पसंद नहीं आया कि अंग्रेजों को जाने की तैयारी के लिए इतने महीने चाहिए। उस दौरान सभी पक्ष ब्रिटिश मंत्रिमंडल और वायसराय की ओर देखेंगे। ऐसे में, ब्रिटिश सत्ता और ब्रिटिश हथियारों का तेरह महीने का प्रवास वास्तव में मदद से ज़्यादा बाधा है, क्योंकि हर कोई उस विशाल सैन्य मशीन से मदद की उम्मीद करता है जिसे उन्होंने खड़ा किया है। ऐसा बंगाल, बिहार, पंजाब और उत्तर-पश्चिम सीमा प्रांत में हुआ। हिंदुओं और मुसलमानों ने बारी-बारी से कहा: "हमें ब्रिटिश सेना चाहिए"। यह एक अपमानजनक दृश्य है। मैं दोहराता हूँ: अंग्रेजों को भारत को अराजकता और अव्यवस्था में छोड़ने का जोखिम उठाना ही होगा। ऐसा इसलिए है क्योंकि यहाँ कोई स्वशासन नहीं था; यह जनता पर थोपा गया था। और जब आप स्वेच्छा से उस शासन को हटाते हैं, तो हो सकता है कि प्रारंभिक स्थिति में कोई शासन ही न रहे। यह [व्यवस्थित शासन] शायद तब स्थापित हो जाता जब हमने शस्त्र बल से विजय प्राप्त की होती। मेरे विचार से, यहाँ जो सांप्रदायिक दंगे देखने को मिलते हैं, वे आंशिक रूप से अंग्रेजों की उपस्थिति के कारण हैं। अगर अंग्रेज यहाँ नहीं होते, तो भी हमें निश्चित रूप से इन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता। लेकिन वह कठिनाई हमें शुद्ध कर देती।'
एंग्लो-मुस्लिम संबंधों में हो रही वृद्धि और उनके बीच चल रही साजिशों की खबरों से पटेल काफी चिंतित हो गए थे। इसी दौरान औपनिवेशिक प्रशासन ने एक प्रस्ताव रखा: 'क्या वे कांग्रेस को अंतरिम व्यवस्था के रूप में डोमिनियन स्टेटस स्वीकार करने के लिए मना लेंगे? इससे भारत से ब्रिटिश वापसी की तारीख का अनुमान

लगाना संभव हो जाएगा। साथ ही, इससे मुस्लिम लीग की अंग्रेजों के साथ सौदेबाजी की शक्ति भी कम हो जाएगी।' पटेल इस तर्क से सहमत हो गए। 1 मई को वायसराय के सचिव ने सूचना दी कि पटेल फिलहाल डोमिनियन स्टेटस का प्रस्ताव स्वीकार करने के लिए तैयार हैं, लेकिन आधिकारिक तौर पर कांग्रेस संविधान सभा के संप्रभु स्वतंत्र गणराज्य प्रस्ताव के प्रति प्रतिबद्ध थी। इससे ब्रिटिश सरकार विचलित नहीं हुई; उन्हें एहसास हुआ कि इस गतिरोध को सुलझाने के लिए केवल एक चतुराई से गढ़ा गया 'इज्जत बचाने का फॉर्मूला' ही काफी था। अंततः, कांग्रेस के उच्च कमान के विवेक को ठेस न पहुंचाने के लिए 'राजा-सम्राट' और 'साम्राज्य' शब्दों को हटाकर यह फॉर्मूला ढूंढ लिया गया।
दिन-प्रतिदिन देश की राजनीतिक स्थिति और भी तनावपूर्ण होती जा रही थी। इसके साथ-साथ बढ़ते सांप्रदायिक उन्माद ने गांधी जी पर बहुत दबाव डाला। लेकिन आशावाद उनके विश्वास का अभिन्न अंग था। जब उनसे पूछा गया कि क्या उन्हें लगता है कि हिंदुओं और मुसलमानों के बीच बढ़ती खाई स्थायी और कभी न भरने वाली है, तो उन्होंने उत्तर दिया, 'ऐसा बिल्कुल नहीं। क्योंकि इसका अर्थ यह होगा कि दोनों में से किसी भी धर्म में कोई सच्चाई नहीं है।' सीडब्ल्यूसी द्वारा भारत के विभाजन को स्वीकार किए जाने से गांधीजी आश्वस्त हो गए कि उन्हें दिल्ली के बजाय बिहार और नोआखली में होना चाहिए। यदि लोग इस बीच एक-दूसरे के साथ शांति से रहना नहीं सीखते, तो स्वतंत्रता एक भ्रम ही साबित होगी। इसी दौरान, कलकत्ता से बिगड़ती सांप्रदायिक स्थिति की चिंताजनक खबरें आ रही थीं। डेरा इस्माइल खान के कुछ पठानों ने वहां मुस्लिम लीग द्वारा फैलाई गई अराजकता का वर्णन किया। 5 मई को

गांधीजी ने नेहरू से कहा कि वे शीघ्र ही कलकत्ता के लिए रवाना होंगे।
उस दिन वायसराय ने गांधी और जिन्ना दोनों को अलग-अलग मुलाकातों के लिए आमंत्रित किया था। वायसराय आवास पर उनकी मुलाकातें कुछ समय के लिए एक ही समय पर हुईं। इसका फायदा उठाते हुए माउंटबेटन ने अपनी उपस्थिति में दोनों की मुलाकात का इंतजाम किया। इस संक्षिप्त मुलाकात के बाद, गांधी ने अगली शाम जिन्ना के आवास पर उनसे दोबारा मुलाकात की। उन्होंने 8 मई को लिखे एक पत्र में वायसराय को इस मुलाकात के बारे में बताया: 'पिछले मंगलवार को कायद-ए-आजम जिन्ना के साथ मेरी ढाई घंटे की मुलाकात बहुत सुखद रही। हमने शांति के लिए संयुक्त बयान पर चर्चा की। उन्होंने अहिंसा में अपने विश्वास को दृढ़ता से व्यक्त किया। उन्होंने अपने द्वारा तैयार किए गए प्रेस बयान में भी इसे दोहराया है। हमने पाकिस्तान और विभाजन के मुद्दे पर भी बात की। मैंने उनसे कहा कि पाकिस्तान के प्रति मेरा विरोध पहले जैसा ही है और सुझाव दिया कि अहिंसा में अपनी आस्था की घोषणा को देखते हुए, उन्हें अपने विरोधियों को बल प्रयोग के बजाय तर्क से समझाने की कोशिश करनी चाहिए। हालांकि, वे इस बात पर पूरी तरह अडिग रहे कि पाकिस्तान का मुद्दा चर्चा के लिए खुला नहीं है।' तार्किक रूप से, अहिंसा में विश्वास रखने वाले व्यक्ति के लिए, ईश्वर का अस्तित्व भी इसकी सीमा से बाहर नहीं हो सकता।
पटेल गांधी के जिन्ना से मिलने के खिलाफ थे, क्योंकि उन्हें डर था कि इससे गलत संदेश जाएगा और जिन्ना की प्रतिष्ठा बढ़ेगी। लेकिन अगर जिन्ना को अलग-थलग कर दिया गया तो बातचीत कैसे शुरू होगी? गांधी ने उनकी आपत्तियों को दरकिनार करते हुए कहा कि वे जिन्ना से मिलेंगे और उनसे विनती करेंगे, एक बार नहीं बल्कि

जरूरत पड़ने पर सत्तर बार। 7 मई को अपने प्रार्थना भाषण में जिन्ना के बयान पर टिप्पणी करते हुए गांधी ने कहा: 'मैं घुटने टेककर उन लोगों से पूछता हूं जो पाकिस्तान चाहते हैं कि वे मुझे यह विश्वास दिलाएं कि पाकिस्तान भारत के हित में है। वे अपना पक्ष जनता के सामने रखें और उन्हें समझाएं कि इससे उन्हें क्या लाभ होगा। अगर वे उनकी बुद्धि को समझाने में सफल होते हैं, तो अच्छी बात है, लेकिन उन्हें यह समझ लेना चाहिए कि बल के आगे एक इंच भी नहीं झुकेगा।'
उन्होंने आगे कहा कि सीडब्ल्यूसी ने व्यावहारिक रूप से पाकिस्तान को स्वीकार करने का फैसला कर लिया था, लेकिन भारत के विभाजन की स्थिति में यह मांग रखी कि बंगाल और पंजाब के हिंदू बहुल क्षेत्रों को इससे बाहर रखा जाए। वे इसके भी विरोधी थे। देश के विभाजन का विचार ही उन्हें भयभीत कर देता था। लेकिन इस मामले में वे अकेले थे। उन्होंने जिन्ना से स्पष्ट रूप से कहा था कि वे भारत के विभाजन में भागीदार नहीं बन सकते और किसी भी विभाजन योजना पर कभी हस्ताक्षर नहीं करेंगे। यदि कांग्रेस उच्च कमान गांधी के साथ दृढ़ता से खड़ी रहती और संयुक्त शांति घोषणा के आधार पर और ब्रिटिश सरकार की इस घोषणा के आधार पर कि बल के आगे कुछ नहीं झुकेगा, देश में शांति बहाल होने तक अंग्रेजों के साथ पाकिस्तान के मुद्दे पर बातचीत करने से इनकार कर देती, तो पाकिस्तान का मुद्दा केवल तर्क के आधार पर ही हल हो जाता। लेकिन कांग्रेस उच्च कमान वह दृढ़ नैतिक रुख नहीं अपना सकी, जिसके परिणामस्वरूप उनके पैरों तले ज़मीन खिसकती चली गई। इस मामले में माउंटबेटन से कांग्रेस से अधिक सतर्क रहने की अपेक्षा नहीं की जा सकती थी!

उसी दिन बाद में, गांधी जी कलकत्ता के लिए ट्रेन में सवार हुए। उनकी यात्रा अत्यंत व्याकुल रही, क्योंकि विभाजन को स्वतंत्रता की पूर्वधारणा के रूप में स्वीकार करने के पूरे तर्क पर वे जितना अधिक विचार करते गए, उतना ही उन्हें विश्वास होता गया कि एक गलत कदम उठाया जा रहा है, जिसके लिए अंततः सभी संबंधित पक्षों को भारी कीमत चुकानी पड़ेगी। उन्होंने इस आसन्न आपदा को, यदि संभव हो तो, टालने का एक और प्रयास करने का निश्चय किया। 8 मई को माउंटबेटन को लिखे पत्र में, जिसे उन्होंने एक रास्ते के स्टेशन से डाक द्वारा भेजा था, गांधी जी ने आगे कहा: 'मुझे लगता है कि मुझे संक्षेप में बताना चाहिए कि मैंने पिछले रविवार की हमारी बैठक में क्या कहा और क्या कहना चाहता था, लेकिन समय की कमी के कारण अधूरा छोड़ दिया।'
1. इसके विपरीत चाहे जो भी कहा जाए, यह एक अत्यंत बड़ी भूल होगी। भारत के विभाजन में किसी भी तरह से ब्रिटिशों की भागीदारी का कोई महत्व नहीं है। यदि विभाजन होना ही है, तो ब्रिटिश वापसी के बाद, पक्षों के बीच आपसी सहमति से या फिर सशस्त्र संघर्ष के माध्यम से हो, जो कि कायद-ए-आजम जिन्ना के अनुसार वर्जित है। विवाद करने वाले पक्षों के बीच मतभेद होने की स्थिति में मध्यस्थता न्यायालय की स्थापना करके अल्पसंख्यकों की सुरक्षा सुनिश्चित की जा सकती है।
2. इस बीच अंतरिम सरकार में निम्नलिखित में से कोई एक सदस्य होना चाहिए:
चाहे कांग्रेसी हों या वे जिनके नाम कांग्रेस चुनती है, या मुस्लिम लीग के सदस्य हों या वे जिन्हें लीग चुनती है। आज का दोहरा नियंत्रण, जिसमें टीम वर्क और टीम भावना का अभाव है, देश के लिए हानिकारक है। पार्टियां अपनी सीटें बरकरार रखने और आपको

खुश करने के प्रयास में खुद को थका देती हैं। टीम भावना का अभाव सरकार का मनोबल गिराता है और उन सेवाओं की अखंडता को खतरे में डालता है जो एक अच्छे और कुशल शासन के लिए अत्यंत आवश्यक हैं।
3. सीमावर्ती क्षेत्र (या किसी भी प्रांत) में इस चरण में जनमत संग्रह।
यह मामला अपने आप में एक खतरनाक चीज है। आपको अपने सामने मौजूद परिस्थितियों से निपटना होगा। किसी भी सूरत में, प्रधानमंत्री के पद के ऊपर से कुछ भी नहीं किया जाना चाहिए और न ही किया जा सकता है। ध्यान दें कि यह पैराग्राफ केवल तभी प्रासंगिक है जब विभाजन को किसी भी तरह से स्वीकार किया जाना हो।
4. मुझे पूरा विश्वास है कि पंजाब और बंगाल का विभाजन हर तरह से गलत है।
यह मामला लीग के लिए एक अनावश्यक परेशानी है। यह और सभी नवाचार ब्रिटिश वापसी के बाद ही हो सकते हैं, उससे पहले नहीं, सिवाय आपसी समझौते के। जब तक भारत में ब्रिटिश सत्ता कार्यरत है, देश में शांति बनाए रखने की मुख्य जिम्मेदारी इसी संस्था की होनी चाहिए। यह संस्था मौजूदा तनाव के कारण चरमराती हुई प्रतीत हो रही है, जो उन तमाम उम्मीदों के कारण पैदा हुआ है जिन्हें पूरा नहीं किया जा सकता या नहीं किया जाना चाहिए। शेष तेरह महीनों के दौरान इन उम्मीदों का कोई स्थान नहीं है। इस अवधि को सबसे अधिक लाभप्रद रूप से कम किया जा सकता है यदि सभी का ध्यान केवल वापसी के कार्य पर केंद्रित हो। ब्रिटिश कब्जे से संबंधित अन्य सभी गतिविधियों को छोड़कर, यह कार्य केवल आप ही कर सकते हैं।
5. नौसैनिक युद्ध के निर्विवाद स्वामी के रूप में आपका कार्य, चाहे वह कितना भी महान क्यों न हो, यह था कि...

अब आपको जो काम करना है, उसके मुकाबले यह कुछ भी नहीं है। जिस एकाग्रता और स्पष्टता ने आपको सफलता दिलाई, वह इस काम में कहीं अधिक आवश्यक है।
6. यदि आप अराजकता की विरासत नहीं छोड़ना चाहते हैं, तो आपको यह सुनिश्चित करना होगा कि...
आप अपनी पसंद के अनुसार पूरे भारत की सरकार, राज्यों सहित, एक ही दल को सौंप दें। संविधान सभा को भारत के उस हिस्से के शासन की भी व्यवस्था करनी होगी जिसका प्रतिनिधित्व मुस्लिम लीग या कुछ राज्य नहीं करते हैं।
7. पंजाब और बंगाल का विभाजन न होने का यह अर्थ नहीं है कि
इन प्रांतों में अल्पसंख्यकों की उपेक्षा की जानी चाहिए। दोनों प्रांतों में वे इतने बड़े और शक्तिशाली हैं कि वे ध्यान आकर्षित कर सकते हैं और अपना प्रतिनिधित्व मांग सकते हैं। यदि लोकप्रिय सरकार उन्हें संतुष्ट नहीं कर पाती है, तो राज्यपालों को अंतरिम अवधि के दौरान सक्रिय रूप से हस्तक्षेप करना चाहिए।
8. सर्वोच्चता की हस्तांतरणीयता एक दुष्चक्र है, यदि इसका अर्थ यह है कि
राजकुमार संप्रभु बन सकते हैं और स्वतंत्र भारत के लिए खतरा बन सकते हैं। भारत में अंग्रेजों द्वारा प्रयोग की गई सभी शक्ति स्वतः ही उनके उत्तराधिकारी को प्राप्त हो जाएगी। इस प्रकार, राज्यों की जनता स्वतंत्र भारत का उतना ही हिस्सा बन जाएगी जितना कि ब्रिटिश भारत की जनता। वर्तमान राजकुमार ब्रिटिश सत्ता के रखरखाव और प्रतिष्ठा के लिए बनाए गए या सहन किए गए कठपुतली हैं। उनके द्वारा अपनी प्रजा पर प्रयोग की जाने वाली अनियंत्रित शक्तियां संभवतः ब्रिटिश ताज पर सबसे बड़ा धब्बा हैं। नए शासन के तहत राजकुमार केवल उन्हीं शक्तियों का प्रयोग

कर सकते हैं जो न्यासी कर सकते हैं और जो उन्हें संविधान सभा द्वारा दी जा सकती हैं। इसका अर्थ यह है कि वे निजी सेना या हथियार कारखाने नहीं रख सकते। उनके पास जो भी क्षमता और शासन कौशल है, वह गणतंत्र के अधीन होना चाहिए और उनकी प्रजा के समग्र हित के लिए उपयोग किया जाना चाहिए। मैंने केवल यह बताया है कि क्या किया जाना चाहिए।
राज्यों के साथ। इस पत्र में यह बताना मेरा काम नहीं है कि यह कैसे किया जा सकता है।
9. इसी प्रकार कठिन, लेकिन उतना पेचीदा नहीं, सवाल है नागरिक कानून का।
सेवा। इसके सदस्यों को अभी से ही नई व्यवस्था के अनुरूप ढलना सिखाया जाना चाहिए। उन्हें किसी भी पक्ष का समर्थन नहीं करना चाहिए। उनमें सांप्रदायिकता का जरा सा भी अंश पाए जाने पर उससे सख्ती से निपटा जाना चाहिए। इसमें मौजूद अंग्रेज तत्व को यह जानना चाहिए कि उन्हें पुरानी व्यवस्था की तुलना में नई व्यवस्था के प्रति और इसलिए ग्रेट ब्रिटेन के प्रति अधिक निष्ठा रखनी चाहिए। स्वयं को शासक और इसलिए श्रेष्ठ समझने की प्रवृत्ति को त्यागकर जनता की सच्ची सेवा की भावना को अपनाना चाहिए।
गांधी ने वायसराय के रूप में माउंटबेटन से उचित कार्य करने का आग्रह किया। वे ब्रिटिश सरकार के प्रतिनिधि थे, जिसने आरक्षित शक्तियों को अपने पास रखने पर जोर दिया था। सेना पर उसका पूर्ण नियंत्रण था। इसलिए, अंतिम समाधान होने तक, कानून और व्यवस्था को दृढ़तापूर्वक बनाए रखना उसका कर्तव्य था, चाहे कांग्रेस नेता इस पर जोर दें या न दें। यदि यह ब्रिटिश संसाधनों से परे था, तो वायसराय को तुरंत एचएमजी को बिना शर्त वापस बुलाने और

पनपने नहीं देने के लिए दृढ़ थे। वे मानते थे कि पाकिस्तान एक बुरी चीज है, लेकिन उन्हें लगता था कि कांग्रेस के उच्च कमान "अब इसके लिए और इसे जल्द से जल्द साकार करने के लिए बहुत उत्सुक हैं" इस उम्मीद में कि अंततः लीग खुद इसे छोड़ देगी। "आप [गांधीजी]... एकमात्र ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने इसका विरोध किया और वे [माउंटबेटन] आपसे सहमत थे। मैंने पूछा कि पंजाब और बंगाल दोनों में एक मजबूत गठबंधन सरकार क्यों संभव नहीं हो सकती, जिसमें उन प्रांतों के अल्पसंख्यक क्षेत्रों में फिलहाल हिंदू या मुस्लिम अधिकारियों की संख्या अधिक हो, ताकि भय को कम किया जा सके, और अंतरिम काल में वे यह सुनिश्चित करने के लिए मौजूद रहें कि अन्याय न हो और एक स्थायी मध्यस्थता न्यायालय हो सके। वे सहमत हुए लेकिन टिप्पणी की कि इसका मतलब हिंदू बहुसंख्यक प्रांतों में भी गठबंधन सरकारें होंगी। जवाहरलाल ने कहा था कि यह असंभव है। मैंने उनसे सरदार से परामर्श करने को कहा। उन्हें लगा कि सरदार जवाहरलाल से कम उदार होंगे। उन्होंने दोनों की बहुत प्रशंसा की - बिल्कुल अलग-अलग व्यक्तित्व, लेकिन सीधे और जिनके साथ काम करना आसान था। जवाहरलाल अधिक उदार थे... अक्सर उनसे सहमत होते थे लेकिन उनसे कांग्रेस कार्य समिति को अपने साथ न ले जाने की अपनी असमर्थता का हवाला देते थे। उन्होंने [माउंटबेटन] फिर कहा कि वे पाकिस्तान की पूरी अवधारणा के खिलाफ थे। वे महामहिम की सरकार की प्रतिक्रिया से पूरी तरह संतुष्ट नहीं थे और उन्हें आपके विचारों के अनुरूप सोचने के लिए मनाने का प्रयास कर रहे थे। उन्होंने बार-बार उन्होंने "अपने लिए छोड़ी गई विरासत और चीजों को करने के लिए उनके पास बचे कम समय" पर खेद व्यक्त किया।

गांधी जी को कलकत्ता ले जा रही ट्रेन पटना में रुकी, जहाँ बिहार मंत्रिमंडल के मंत्रियों ने उनका स्वागत किया। वहाँ ट्रेन का निर्धारित ठहराव पंद्रह मिनट का था, लेकिन गांधी जी के साथ उनकी मुलाकात अधिक समय तक चली। स्टेशन मास्टर ने गांधी जी से पूछा कि क्या वे प्रस्थान का संकेत दे सकते हैं। गांधी जी ने उत्तर दिया, 'आप किसी अन्य यात्री से आदेश लेने नहीं जाते, तो फिर मुझसे क्यों? आपको अपना कर्तव्य निभाना चाहिए, मंत्रियों से डरना नहीं चाहिए।'
गांधी जी ने कलकत्ता से दस मील दूर सोदेपुर स्थित खादी प्रतिष्ठान आश्रम में ठहरने का निर्णय लिया था। शहर में कड़ाई से कर्फ्यू लगा हुआ था। जिस दिन वे पहुंचे, वह रवींद्रनाथ टैगोर की जयंती थी। प्रार्थना सभा के बाद गांधी जी ने सभा को संबोधित करते हुए कहा कि जब उन्होंने संयुक्त शांति अपील पर हस्ताक्षर किए थे, तो उन्होंने पूरी ईमानदारी से ऐसा किया था और एक तरह से शांति और एकता की गारंटी दी थी। उन्होंने दोनों पक्षों द्वारा शांति बनाए रखने के लिए स्वयं को बंधक बना लिया था। इसलिए बिहार के हिंदुओं और नोआखली के मुसलमानों को यह याद रखना चाहिए कि यदि वे फिर से हिंसा करते हैं, तो वे उन्हें सर्वदा अनशन पर बैठने के लिए मजबूर कर देंगे।
इस बीच, बंगाल के मुख्यमंत्री सुहरावर्दी चिंतित थे। उन्होंने मुस्लिम लीग के उस गुट का नेतृत्व किया था जिसने पाकिस्तान की पुरजोर मांग रखी थी। अब उन्हें डर था कि कांग्रेस की मांग के बाद, पाकिस्तान का पूर्वी भाग उनके द्वारा हमेशा से माने गए पूर्वी भाग से काफी छोटा रह जाएगा। नए समीकरण में असम और बंगाल के औद्योगिक क्षेत्र भारत के साथ ही रहेंगे। पूरी संभावना है कि कलकत्ता बंदरगाह और शहर भी पाकिस्तान के पूर्वी भाग में

शामिल हो जाएंगे। सुहरावर्दी को इस बात की भी चिंता थी कि पाकिस्तान के पूर्वी और पश्चिमी भाग के बीच भारतीय संघ के शक्तिशाली प्रांतों का एक समूह होगा। वे लंबे समय से बिहार के समृद्ध लौह और कोयला उत्पादक क्षेत्र को मिलाकर एक ग्रेटर बंगाल बनाने का सपना देखते आ रहे थे। अपनी इस महत्वाकांक्षा को पूरा करने के लिए वे लीग के 'दो राष्ट्र' सिद्धांत की पुनर्व्याख्या करने को भी तैयार थे। एक प्रेस साक्षात्कार में उन्होंने कहा, 'दो राष्ट्र सिद्धांत की पृष्ठभूमि में मुख्य रूप से राजनीतिक विचार रहे हैं।' लेकिन कुछ अन्य पहलू भी हैं जैसे कि सामान्य भाषा, आर्थिक संबंध, परस्पर निर्भरता, जातीय और ऐतिहासिक पहलू... जो लोगों को सीधे प्रभावित करते हैं... राष्ट्र की परिभाषा को लेकर राजनीति के प्रख्यात विद्वानों में भी कोई अंतिम मत नहीं है और विभिन्न मापदंड अलग-अलग उत्तर देते हैं। इसलिए, दो राष्ट्र सिद्धांत को स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप ढालने में पूर्णतः सक्षम होना चाहिए, जैसा कि स्थिति की मांग हो।
9 मई को प्रेस ने जिन्ना के उस बयान की खबर छापी जिसमें उन्होंने कहा था कि उन्हें बंगाल को मौजूदा संविधान सभा में शामिल होने देने या 'पाकिस्तान की योजना से पीछे हटने' पर कोई आपत्ति नहीं है, बशर्ते पाकिस्तान का पश्चिमी क्षेत्र उन्हें सौंप दिया जाए। इससे पता चलता है कि भारतीय मुसलमानों के एकमात्र प्रतिनिधि होने का दावा करने वाले जिन्ना बंगाली मुसलमानों के प्रति कितने चिंतित थे।
बंगाली मुसलमान भारत के पश्चिमी प्रांतों में रहने वाले मुसलमानों से अलग थे। दोनों समुदायों को अपनी साझा भाषा बंगाली पर गर्व था। बंगाली हिंदू को नज़्रुल इस्लाम की कविता पर उतना

ही गर्व था जितना बंगाली मुसलमान को रवींद्रनाथ टैगोर पर। ये भाषाई और सांस्कृतिक बंधन हाल के राजनीतिक विभाजन के झटकों से भी अप्रभावित रहे। बंगाल के मुसलमानों और पश्चिमी प्रांतों के मुसलमानों के बीच राजनीतिक और वैचारिक विभाजन दो घटनाओं से उजागर हुआ। पहली घटना तब हुई जब गांधी जी के साथ नोआखली गए मुस्लिम लीग के मंत्रियों ने उनसे कहा कि बंगाली मुसलमान अविभाजित भारत में बंगाल के मुस्लिम-नियंत्रित प्रांत होने से संतुष्ट थे; उनकी एकमात्र शिकायत मुसलमानों को हाशिए पर रखे जाने से थी। दूसरी घटना 29 अप्रैल को द हिंदू में प्रकाशित मुस्लिम लीग के दिल्ली संवाददाता की एक प्रेस रिपोर्ट थी जिसमें कहा गया था: 'यह महत्वपूर्ण है कि जहां पंजाब के मुस्लिम लीग सदस्य एक अलग संविधान सभा के बारे में सोच रहे हैं, वहीं बंगाल के सदस्य मौजूदा संविधान सभा में शामिल होना चाहते हैं।' बंगाल में यूरोपीय समूह की जूट में बड़ी हिस्सेदारी थी। वे प्रांत का विभाजन नहीं चाहते थे क्योंकि पूर्वी बंगाल में स्थित जूट उत्पादक जिलों के अलग होने से जूट व्यापार और उद्योग को भारी नुकसान होता। राष्ट्रवादी हिंदुओं का एक समूह भी था जो बंगाल के विभाजन को उसका विनाश मानता था। इस समूह का नेतृत्व शरत चंद्र बोस कर रहे थे। इस समूह में एक अनुभवी कांग्रेसी नेता अखिल चंद्र दत्त भी थे। हिंदुओं के एक वर्ग द्वारा बंगाल विभाजन का आंदोलन शुरू किए जाने के तुरंत बाद उन्होंने गांधीजी को लिखा: 'बंगाल के विभाजन और इस प्रकार "हिंदुओं के लिए एक मातृभूमि सुरक्षित करने" के लिए एक आंदोलन शुरू किया गया है। यह एक निराशावादी मानसिकता का परिणाम प्रतीत होता है। वास्तव में यह आंदोलन मुझे सांप्रदायिक लगता है। सांप्रदायिकता से लड़ना आवश्यक है, लेकिन हिंदुओं के लिए मातृभूमि की मांग करने वाले

खेल रहे हैं।' दिल्ली में उन्होंने फिर कहा, 'मुझे आश्चर्य होता है कि हम यह नहीं देख पा रहे हैं कि इस तीसरे पक्ष के हस्तक्षेप की हमें क्या कीमत चुकानी पड़ेगी... मुझे विश्वास है कि जब पागलपन का सैलाब थम जाएगा, तो कीचड़ और गाद नीचे बैठ जाएगी, और पानी निर्मल और शुद्ध होकर पूरे विश्व में शांति का आशीर्वाद लाएगा।' अपनी तमाम कमियों के बावजूद, हमारा स्वतंत्रता संग्राम मूलतः न्याय, धर्म, अहिंसा और सत्य पर आधारित है।'
शरत चंद्र बोस, बंगाल मुस्लिम लीग के सचिव अब्दुल हाशेम के साथ, गांधीजी से उसी दिन मिले जब वे सोदेपुर आश्रम पहुंचे थे। गांधीजी को आश्चर्यचकित करते हुए, हाशेम ने संयुक्त बंगाल के अपने तर्क को 'एक ही भाषा, एक ही संस्कृति और एक ही इतिहास' पर आधारित किया, जो बंगाल के हिंदुओं और मुसलमानों को समान रूप से एकजुट करता है। गांधीजी इस अचानक बदलाव से चकित थे, क्योंकि कुछ ही महीने पहले उन्होंने पाकिस्तान की मांग का पुरजोर समर्थन किया था। थके हुए गांधीजी ने हाशेम से पूछा कि क्या उन्हें पाकिस्तान में शामिल होने पर कोई आपत्ति होगी, यदि पाकिस्तान विलय के बजाय उन्हें 'इस्लामी संस्कृति और धर्म के प्रचार के लिए एक स्वैच्छिक संघ' में शामिल होने के लिए आमंत्रित करे? हाशेम ने उनके प्रश्न का उत्तर नहीं दिया। गांधीजी ने एक अलग दृष्टिकोण अपनाया। चूंकि टैगोर में सन्निहित बंगाल की साझा संस्कृति, जिसका उल्लेख लीग सचिव ने किया था, उपनिषदों के दर्शन में निहित है, जो न केवल बंगाल बल्कि पूरे भारत की साझा विरासत है, तो क्या संप्रभु बंगाल शेष भारत के साथ 'स्वैच्छिक संघ' में शामिल होने पर विचार करेगा? हाशेम ने फिर से मौन रहना ही चुना। 11 मई को सुहरावर्दी, मोहम्मद अली और अब्दुल हाशेम के साथ गांधीजी से एक संप्रभु बंगाल के मुद्दे पर चर्चा करने के लिए

मिले। गांधीजी ने सुहरावर्दी को अपने हृदय में पूर्ण और वास्तविक परिवर्तन की आवश्यकता समझाने का प्रयास किया। उनका मानना था कि यदि वे चाहते हैं कि हिंदू उनके कथनों को गंभीरता से लें, तो यह परिवर्तन उनके स्वयं के आचरण और उनके प्रशासन के आचरण में परिलक्षित होना चाहिए। लेकिन सुहरावर्दी ने दृढ़ता से कहा कि बंगाल में सब कुछ ठीक है, कलकत्ता में शांति है और बंगाल सरकार पर किसी भी प्रकार के अन्याय का आरोप नहीं लगाया जा सकता! जब गांधीजी ने उनसे कहा कि प्रशासन के प्रमुख के रूप में, बंगाल में हुई प्रत्येक मृत्यु के लिए वे नैतिक रूप से उत्तरदायी हैं, तो वे क्रोधित हो गए। सुहरावर्दी ने गांधीजी पर सारी समस्या का कारण होने का आरोप लगाया और बैठक से बाहर चले गए! गांधीजी इससे व्यथित हुए और बोले, 'उन्हें इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता कि वे क्या कहते हैं। वे चाहते हैं कि लोग उन पर विश्वास करें क्योंकि उनका कहना है कि वे जिस नए बंगाल का निर्माण करना चाहते हैं, उसमें सभी समुदायों को समान व्यवहार मिलेगा। लेकिन भविष्य वर्तमान की उपज है।' यदि कलकत्ता में आज जो कुछ हो रहा है वह आने वाले समय का संकेत है, तो यह उनकी योजना के लिए अच्छा संकेत नहीं है।
12 तारीख को सुहरावर्दी ने गांधीजी से दोबारा मुलाकात की और एक संप्रभु संयुक्त बंगाल की मांग में उनका समर्थन मांगा। गांधीजी ने उनसे कहा कि बंगाल के विभाजन को रोकने का एकमात्र तरीका यह है कि जिन्ना को उस संयुक्त शांति अपील को लागू करने के लिए राजी किया जाए जिस पर उन्होंने हस्ताक्षर किए थे। 'यद्यपि मैं किसी विशेष समुदाय का प्रतिनिधित्व नहीं करता, आप देख सकते हैं कि मैं बिहार के हिंदुओं को पश्चाताप और अपने किए पर पछतावा दिलाने के लिए किस प्रकार अथक प्रयास कर रहा हूं।

लेकिन आप मुसलमानों के अधिकृत प्रतिनिधि हैं। क्या आपको भारतीय मुसलमानों के प्रति वही नहीं करना चाहिए जो मैं कर रहा हूं और उससे भी अधिक? लेकिन आप ऐसा करने का दावा नहीं कर सकते। मुझे विश्वास है कि यदि बंगाल सरकार शत प्रतिशत ईमानदारी से कार्य करे, तो जिन्ना साहब और मुस्लिम लीग भी ऐसा करने के लिए विवश हो जाएंगे।'
सुहरावर्दी ने शिकायत की कि कोई भी हिंदू उन पर भरोसा नहीं करता; उनकी बात सुनने तक को कोई नहीं मिलता, तो वे अपनी ईमानदारी का यकीन कैसे दिला सकते थे? जवाब में गांधी ने उन्हें एक चौंकाने वाला प्रस्ताव दिया, जिसकी पुष्टि उन्होंने बाद में लिखित रूप में की: 'मैं विभाजन के मामले में बंगाल की स्थिति की गंभीरता को समझता हूँ। यदि आप अपने वादों में पूरी तरह से ईमानदार हैं और मेरे मन में आपके प्रति मौजूद सभी संदेहों को दूर कर देंगे और यदि आप अहिंसक तरीकों से बंगाल को हमेशा के लिए सभी बंगालियों—हिंदुओं और मुसलमानों—के लिए अक्षुण्ण रखना चाहते हैं, तो मैं आपका मानद निजी सचिव बनने और आपके घर में तब तक रहने को तैयार हूँ, जब तक हिंदू और मुसलमान भाईचारे के भाव से रहना शुरू नहीं कर देते।' सुहरावर्दी इस प्रस्ताव से स्तब्ध रह गए। 'यह कैसा अजीब प्रस्ताव है! इसके निहितार्थों को समझने से पहले मुझे दस बार सोचना पड़ेगा,' सुहरावर्दी ने गांधी के कमरे से बाहर आते हुए कहा।
एक संप्रभु बंगाल के लिए उठाए गए इस कदम में गांधीजी को अविभाजित भारत के अपने सपने के साकार होने की एक झलक दिखाई दी। यदि बंगाल के मुसलमान अपनी क्षेत्रीय पहचान को अपनी धार्मिक पहचान से ऊपर रख लें, तो पाकिस्तान के समर्थकों द्वारा प्रतिपादित दो-राष्ट्र सिद्धांत को आसानी से निष्फल किया जा

सकता था। जिन्ना भारत के सभी मुसलमानों के एकमात्र प्रतिनिधि होने का अपना दावा खो देते और इस प्रकार, उत्तर-पश्चिम में पठानों के असंतोष के साथ मिलकर, वे जिन्ना और मुस्लिम लीग को कांग्रेस और ब्रिटिश प्रशासन पर अपनी हर मांग मनवाने के लिए दबाव डालने से रोक सकते थे। लेकिन इससे पहले कि वे आगे कोई योजना बना पाते, उन्हें बंगाली हिंदुओं और बंगाल के विभाजन की उनकी मांग का सामना करना पड़ा।
13 मई को गांधी जी ने बंगाल हिंदू महासभा के प्रमुख डॉ. श्यामप्रसाद मुखर्जी से मुलाकात की। डॉ. मुखर्जी संप्रभु बंगाल आंदोलन के कट्टर विरोधी थे। वे 'बंगाल विभाजन' की मांग के समर्थकों में से एक थे और 19 मार्च को ही उन्होंने प्रेस को दिए एक बयान में अविभाजित भारत में भी बंगाल के विभाजन की मांग की थी। उन्होंने 'संप्रभु बंगाल' आंदोलन की निंदा करते हुए इसे यूरोपियों द्वारा अपने स्वार्थों के लिए उकसाया गया आंदोलन बताया था। गांधी जी ने उनसे पूछा, 'तो क्या आपकी आपत्ति इसकी उत्पत्ति के आधार पर है?' डॉ. मुखर्जी ने आशंका व्यक्त की कि यदि एक संप्रभु बंगाल राज्य के गठन की अनुमति दी गई, तो इस बात की कोई गारंटी नहीं थी कि सुहरावर्दी बाद में इसे पाकिस्तान में शामिल करने के लिए चालबाजी नहीं करेंगे। ऐसी स्थिति से बचने के लिए गांधी जी ने सुहरावर्दी और शरत चंद्र बोस दोनों को सुझाव दिया था कि एक संप्रभु बंगाल में, इसके भविष्य की स्थिति से संबंधित सभी प्रमुख निर्णय 'आपसी सहमति' से लिए जाएंगे। इसलिए कोई भी निर्णय सदन के साधारण बहुमत से नहीं लिया जाएगा, बल्कि दोनों समुदायों द्वारा अलग-अलग बहुमत से सहमति देने पर ही लिया जाएगा। गांधी ने सुहरावर्दी को सुझाव दिया था कि प्रत्येक समुदाय का दो-तिहाई बहुमत होना चाहिए। इसके अलावा, चूंकि उनके

प्रस्तावित फार्मूले के तहत संप्रभु बंगाल के संविधान में किसी भी बाद के बदलाव पर भी यही प्रक्रिया लागू होगी, इसलिए उन्हें व्यक्तिगत रूप से प्रस्तावित योजना में कोई आशंका नहीं थी। 'यदि सुहरावर्दी को विधानसभा के हिंदू सदस्यों के बहुमत को अपने पक्ष में करना है, तो क्या आपको नहीं लगता कि बंगाल की वर्तमान सांप्रदायिक स्थिति तुरंत बेहतर हो जाएगी?'
मुखर्जी ने पूछा, 'मान लीजिए कि अधिकांश हिंदू हिंदुस्तान में शामिल होना चाहते हैं और अधिकांश मुसलमान पाकिस्तान के पक्ष में हैं, तो फिर क्या होगा?'
गांधी ने जवाब दिया, 'तब बंगाल का विभाजन तो होगा, लेकिन यह बंगाल के हिंदू और मुस्लिम निवासियों की आपसी सहमति से होगा। यह जिन्ना के दो राष्ट्र सिद्धांत के आधार पर किसी तीसरे पक्ष द्वारा किया गया विभाजन नहीं होगा।' गांधी का तर्क था कि चूंकि सुहरावर्दी के प्रस्ताव का आधार बंगाल के लोगों की मूलभूत एकता, चाहे वे हिंदू हों या मुसलमान, की मान्यता थी, और चूंकि मुस्लिम लीग की परिकल्पना के अनुसार बंगाल के मुसलमान पाकिस्तान में बहुमत में होंगे, इसलिए जिन्ना की सहमति से बंगाल मुस्लिम लीग द्वारा दो राष्ट्र सिद्धांत को क्रियान्वित रूप में अस्वीकार करने से उस सिद्धांत पर आधारित पाकिस्तान योजना का कोई अस्तित्व नहीं बचेगा।
खुले कूटनीति—सद्भावना और सत्य की कूटनीति—के माध्यम से भारत के विभाजन को टालने का यह एक अवसर था। लेकिन मुखर्जी और उनके समूह को 'हिंदू' बंगाल के भविष्य को लेकर अस्पष्ट आशंकाएँ थीं। कलकत्ता छोड़ने से पहले, गांधीजी ने शहर के दंगा प्रभावित क्षेत्रों का दौरा किया। कार्यवाहक मुख्यमंत्री मोहम्मद अली और बंगाल हिंदू महासभा के सचिव गांधीजी के साथ थे। पचास मील की

यात्रा से लौटते समय गांधीजी को दोपहर में काफी गर्मी का सामना करना पड़ा।
बाद में, शरत चंद्र बोस ने 23 मई को पटना में उन्हें संयुक्त बंगाल प्रस्ताव का मसौदा भेजा। इसमें लिखा था: '20 मई को सुहरावर्दी, फजलुर रहमान, मोहम्मद अली, अब्दुल हाशेम, अब्दुल मलिक, किरण शंकर रॉय और सत्यरंजन बख्शी की उपस्थिति में आयोजित एक सम्मेलन में, हम एक अस्थायी समझौते पर पहुँचे, जिसकी एक प्रति आपके विचारार्थ संलग्न है। पहचान के लिए, इस पर अब्दुल हाशेम और मैंने अन्य लोगों की उपस्थिति में हस्ताक्षर किए हैं। इसे कांग्रेस और मुस्लिम लीग के समक्ष रखा जाना आवश्यक है। जहाँ तक बंगाल में कांग्रेस और मुस्लिम लीग संगठनों का संबंध है, चर्चाओं की दिशा को देखते हुए मुझे लगता है कि वे इस समझौते को कुछ संशोधनों के साथ स्वीकार कर लेंगे। मुझे विश्वास है कि यदि आपकी सहायता, सलाह और मार्गदर्शन से दोनों संगठन अस्थायी समझौते की तर्ज पर अंतिम समझौते पर पहुँच सकते हैं, तो हम बंगाल की समस्याओं के साथ-साथ असम की समस्याओं का भी समाधान कर लेंगे। इसका शेष भारत पर भी सकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है।'
अगले दिन उत्तर देते हुए गांधी ने उन कुछ महत्वपूर्ण बिंदुओं की कमी की ओर इशारा किया, जिन्हें उन्होंने पटना जाने से पहले शरत बोस को विस्तार से समझाया था: 'मसौदे में ऐसा कुछ भी नहीं है जो यह कहता हो कि केवल बहुमत से कोई कार्य नहीं होगा। सरकार के प्रत्येक कार्य में कार्यपालिका और विधायिका में हिंदू अल्पसंख्यकों के कम से कम दो-तिहाई सदस्यों का सहयोग आवश्यक है। यह स्वीकार किया जाना चाहिए कि बंगाल की एक साझा संस्कृति और एक साझा मातृभाषा - बंगाली है। यह सुनिश्चित करें कि केंद्रीय मुस्लिम लीग विपरीत रिपोर्टों के बावजूद इस प्रस्ताव

को स्वीकार करे। यदि दिल्ली में आपकी उपस्थिति आवश्यक हो तो मैं आपको फोन या टेलीग्राम करूंगा। मैं कार्य समिति के साथ मसौदे पर चर्चा करना चाहता हूं।' दुर्भाग्य से, शरत बोस सुहरावर्दी या मुस्लिम लीग को गांधी की शर्त मानने के लिए राजी नहीं कर सके। इसके बजाय अंतिम मसौदे में यह बात सामने आई कि किसी भी निर्णय के लिए पूर्ण दो-तिहाई बहुमत आवश्यक होगा। संयुक्त संप्रभु बंगाल की चर्चा जोर पकड़ रही थी, जिससे असम असुरक्षित महसूस करने लगा। संप्रभु बंगाल की स्थिति में, असम भारतीय संघ से पूरी तरह अलग हो जाएगा। असम के मुख्यमंत्री गोपीनाथ बोरदोलोई ने नई दिल्ली को एक आपातकालीन संदेश भेजा: 'यदि बंगाल को स्वतंत्र राज्य का दर्जा दिया जाता है, तो केंद्र और अन्य सहमत प्रांतों से कटा हुआ असम, समुद्र तक कोई पहुंच न होने के कारण, पूर्व और पश्चिम दोनों ओर से आक्रमण का शिकार होगा। असम को संघ के साथ संपर्क बनाए रखना चाहिए, उसे समुद्र तक पहुंच मिलनी चाहिए।'
इस समय तक माउंटबेटन के पहले मसौदा योजना में महत्वपूर्ण बदलाव किए जा चुके थे। इससे प्रांतों से स्वतंत्रता का विकल्प चुनने का अधिकार छीन लिया गया, जब तक कि कांग्रेस और लीग दोनों की ओर से इसके लिए अनुरोध न किया जाए। जिन्ना भारत और पाकिस्तान दोनों से अलग एक संप्रभु बंगाल के गठन के विचार पर विचार करने को तैयार थे, यदि इसके बदले उन्हें पूरा पंजाब मिल जाता, लेकिन माउंटबेटन की मसौदा योजना के अनुसार पंजाब का विभाजन होना ही था, और निश्चित रूप से सीमावर्ती प्रांत को संप्रभुता सौंपना पड़ता, तो वे इसके लिए तैयार नहीं थे। संयुक्त संप्रभु बंगाल आंदोलन की नींव कमजोर पड़ने लगी और जल्द ही शरत चंद्र बोस अलग-थलग पड़ गए। 28 मई को, माउंटबेटन के लंदन से लौटने से दो दिन

पहले, बंगाल प्रांतीय मुस्लिम लीग की कार्यकारी समिति ने एक प्रस्ताव पारित किया कि न तो कार्यकारी समिति और न ही उसके द्वारा नियुक्त उप-समिति का 'अखबारों में प्रकाशित बंगाल के संविधान के निपटारे के प्रस्ताव से कोई लेना-देना है' और वह 'पाकिस्तान के लिए मुस्लिम लीग की मांग के साथ दृढ़ता से खड़ी है'। उसी दिन, एआईसीसी के महासचिव ने भी एक बयान जारी कर संयुक्त संप्रभु बंगाल की स्थापना के फार्मूले को खारिज कर दिया और बंगाल के एक स्वतंत्र राज्य के निर्माण का विरोध व्यक्त किया। 6 जून को शरत बोस ने दिल्ली में गांधीजी से फिर मुलाकात की और आगे की योजनाओं पर चर्चा की। लेकिन तब तक लीग और कांग्रेस दोनों ने आधिकारिक तौर पर माउंटबेटन की 3 जून की विभाजन योजना को स्वीकार कर लिया था। नेहरू और पटेल एक संप्रभु संयुक्त बंगाल के किसी भी प्रस्ताव के घोर विरोधी थे, उनका आरोप था कि यह हिंदू और अनुसूचित जाति के नेताओं को विभाजित करने की एक चाल मात्र है। उन्होंने यह भी आरोप लगाया कि विधायकों और राजनेताओं को दोनों पक्षों से रिश्वत दी जा रही थी ताकि उनका समर्थन हासिल किया जा सके। गांधीजी इससे निराश हुए और अंततः शरत चंद्र बोस को एक संप्रभु संयुक्त बंगाल का विचार छोड़ने की सलाह दी। इस तरह, जिन्ना को अलग-थलग करने और उनके दो-राष्ट्र सिद्धांत को गलत साबित करने का एक और अवसर हाथ से निकल गया।
माउंटबेटन ने 10 मई को शिमला से कांग्रेस, मुस्लिम लीग और सिख नेताओं को एक सप्ताह बाद दिल्ली में होने वाले सम्मेलन में आमंत्रित किया था। वहां वे ब्रिटिश सरकार द्वारा अनुमोदित सत्ता हस्तांतरण की अपनी योजना उनके सामने प्रस्तुत करने वाले थे। माउंटबेटन को उम्मीद थी कि अब सब कुछ सुचारू रूप से चलेगा, लेकिन उनका यह आशावाद समय से पहले का था। डॉ. खान साहब की

लोकतांत्रिक रूप से चुनी गई सरकार को बर्खास्त करने का प्रस्ताव, जो उत्तर पश्चिमी पश्चिमी खाड़ी (एनडब्ल्यूएफपी) में पुन: चुनाव कराने की तैयारी के रूप में था, किसी तरह लीक हो गया था और कांग्रेस ने इस राजनीतिक चालबाज़ी पर कड़ी प्रतिक्रिया व्यक्त की थी। कांग्रेस नेतृत्व भारत के विभाजन के बाद ग्रेट ब्रिटेन द्वारा पाकिस्तान के साथ अलग राजनीतिक संधि करने या यहां तक कि सैन्य गठबंधन करने की संभावना से चिंतित था। अंतिम समय में, लंदन ने मसौदा योजना में कुछ और संशोधन किए, जिससे यह कांग्रेस को कम स्वीकार्य हो गई। कांग्रेस अब इस बात पर अड़ी थी कि उसने भारत के विभाजन के लिए लीग द्वारा दावा किए गए अधिकार को कभी स्वीकार नहीं किया था। गैर-दबाव के सिद्धांत का कड़ाई से पालन करते हुए, इसने केवल उन भागों को अलग होने की स्वतंत्रता दी थी जो भारतीय संघ में नहीं रहना चाहते थे, क्योंकि यह हमेशा से किसी भी अनिच्छुक भाग को जबरदस्ती रखने के खिलाफ रहा था। इसलिए इसने मांग की कि भारतीय संघ को ब्रिटिश सत्ता का उत्तराधिकारी माना जाए, और जो इकाइयाँ अलग होने पर जोर देती हैं उन्हें अलग होने वाले माना जाए। लेकिन संशोधित योजना में, इस अवधारणा को त्याग दिया गया प्रतीत होता है। पीछे हट रहे अंग्रेजों के स्थान पर किसी उत्तराधिकारी को नामित नहीं किया जाएगा; केंद्रीय सत्ता पूरी तरह से समाप्त हो जाएगी; ब्रिटिश भारत स्वायत्त इकाइयों, 'उत्तराधिकारी सरकारों' के एक समूह में सिमट जाएगा, जिनमें से प्रत्येक को सामान्यतः अपना भविष्य निर्धारित करने का अधिकार होगा। लगभग छह सौ भारतीय राज्य स्वतः संप्रभु बन जाएंगे, प्रत्येक राज्य शांति या युद्ध करने या किसी अन्य शक्ति के साथ स्वतंत्र संधि करने के लिए स्वतंत्र

होगा। अंग्रेजों ने भारत के नाम से जाने जाने वाले क्षेत्र को पूरी तरह से भंग करते हुए, वहाँ से चले जाने का प्रस्ताव रखा। 10 मई को वायसराय ने नेहरू की प्रतिक्रिया जानने के लिए उन्हें संशोधित योजना दिखाई। नेहरू बेहद क्रोधित हुए। उन्होंने कहा, 'यह सरासर विश्वासघात है। इसका मतलब है भारत का बाल्कनीकरण; हम इसे कभी स्वीकार नहीं कर सकते।' वायसराय ने तुरंत सुधार आयुक्त वी.पी. मेनन को बुलाया। माउंटबेटन ने कहा, 'मामला गंभीर हो गया है।' मेनन ने उन्हें आश्वासन दिया कि वे मसौदे को फिर से तैयार करके उसे स्वीकार्य बना देंगे। अगले दिन नेहरू की प्रतिक्रिया संशोधित योजना के प्रति अनुकूल बताई गई, लेकिन उन्हें यह पक्का नहीं था कि कांग्रेस समिति की क्या प्रतिक्रिया होगी। दिल्ली में पटेल से संपर्क किया गया और उनसे अनुरोध किया गया कि वे इसे कांग्रेस समिति से पारित करवाएं; वे 'इस हिस्से को देखने' के लिए सहमत हो गए। वायसराय और उनके कर्मचारियों को यह एहसास हो गया कि अब से सभी नाजुक वार्ताओं के दौरान नेहरू के साथ पटेल को एक स्थिर प्रभाव के रूप में रखना आवश्यक होगा। एक बार इन दोनों का ध्यान रख लिया जाए, तो कांग्रेस के उच्च कमान उनके नियंत्रण में आ जाएंगे। और इन दोनों के साथ होने से उन्हें उस व्यक्ति के बारे में चिंता करने की कोई जरूरत नहीं थी जिसे चर्चिल ने 'आधा नंगा फकीर' कहा था!
पुनर्रचित योजना में किए गए संशोधनों में से एक यह था कि प्रांतों को अपना भविष्य तय करने की स्वतंत्रता नहीं रही। मूल मसौदे के अनुसार, यदि एनडब्ल्यूएफपी चाहे तो भारत और पाकिस्तान दोनों से स्वतंत्रता की घोषणा कर सकता था। बंगाल को भी इसी प्रकार की स्वतंत्रता प्राप्त थी। इस पुनर्रचित योजना ने एनडब्ल्यूएफपी का भविष्य तय कर दिया; उनका बंधन पाकिस्तान से

अटूट रूप से जुड़ गया, और बंगाल का भविष्य केवल कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों के संयुक्त अनुरोध से ही तय हो सकता था, भले ही बंगाली हिंदू और मुसलमान दोनों एकता और स्वतंत्रता चाहते हों। एक ही झटके में जिन्ना की सारी मांगें पूरी हो गईं।
उस समय लॉर्ड इस्मे और एबेल लंदन में थे और मूल मसौदा योजना के लिए ब्रिटिश कैबिनेट की स्वीकृति प्राप्त कर रहे थे। माउंटबेटन ने एक अनुमान के आधार पर इसे नेहरू को दिखाया था और उनकी प्रतिक्रिया के आधार पर इसे फिर से तैयार करवाया था। यह सब तब हुआ जब एचएमजी ने मूल मसौदे पर अपनी मुहर लगा दी। वायसराय ने लंदन को एक तार भेजा, जिसमें इस्मे और एबेल को वहीं रुकने और एचएमजी से संशोधित योजना की स्वीकृति प्राप्त करने के लिए कहा गया। साउथहॉल नाराज हो गया; लंदन से एक संक्षिप्त संदेश में, माउंटबेटन को तत्काल वापस बुलाकर यह बताने का आदेश दिया गया कि मूल योजना को पहले ही मंजूरी मिल जाने के बावजूद इसे फिर से क्यों तैयार किया गया। 17 जून को भारतीय नेताओं के साथ निर्धारित बैठक को स्थगित कर दिया गया और व्हाइटहॉल की सहमति से 2 जून के लिए पुनर्निर्धारित किया गया। नेहरू ने गांधी को शिमला और दिल्ली में हो रही घटनाओं की जानकारी देते रहे। माउंटबेटन लंदन जा रहे थे और भारत की स्वतंत्रता और उसके विभाजन की अंतिम योजना लेकर 28 मई को ही दिल्ली लौटेंगे। इसलिए पटेल और नेहरू ने मसूरी में कुछ आराम और मनोरंजन करने का अवसर लेने का निर्णय लिया। नेहरू ने गांधीजी को भी साथ आने का निमंत्रण दिया। 17 मई को गांधीजी ने पटेल को लिखा: 'मुझे आपके और जवाहर के पत्र मिले हैं। मुझे मसूरी जाने की बिल्कुल भी इच्छा नहीं है। आप जब तक चाहें मसूरी में रह सकते हैं। मुझे यहां मिलने वाले हर दिन का पूरा उपयोग करना है। इसलिए यदि आप अनुमति

दें, तो मैं 31 मई को या उसके बाद जब भी आप चाहें, दिल्ली पहुंच जाऊंगा। मुझे खुशी होगी यदि आप मसूरी में आराम करें। हम दिल्ली में जरूर बात करेंगे।'
गांधी जी को इस बात में ज़रा भी संदेह नहीं था कि अंग्रेज अंततः चले जाएंगे, लेकिन हाल ही में उन्हें इस बात की चिंता सताने लगी थी कि उनके देशवासियों के हाथ में एक खोखला ढांचा ही रह जाएगा, जो कभी एक गौरवशाली राष्ट्र हुआ करता था। 24 मई की सुबह, जब गांधी जी दिल्ली जाने वाली ट्रेन में सवार हुए, तो उन्होंने डॉ. महमूद से कहा, 'कांग्रेस ने विभाजन को लगभग स्वीकार कर लिया है। लेकिन मैं जीवन भर एक योद्धा रहा हूँ। मैं दिल्ली एक हारी हुई लड़ाई लड़ने जा रहा हूँ।' जब ट्रेन कानपुर स्टेशन पर रुकी, तो उनके डिब्बे में दर्शन के लिए घुसे एक स्मृति चिन्ह हड़पने वाले ने उनके तकिए के नीचे से उनकी घड़ी चुरा ली। गांधी जी को उस घड़ी से बहुत लगाव था क्योंकि वह उन्हें नेहरू की बेटी इंदिरा गांधी ने उपहार में दी थी। इंदिरा गांधी ने उन्हें यह घड़ी बीस साल पहले तब दी थी जब वे उनके दादा मोतीलाल नेहरू से मिलने इलाहाबाद गए थे।
इंजन में खराबी के कारण ट्रेन दिल्ली पहुंचने में देरी हो गई। पटेल और नेहरू अभी तक मसूरी से नहीं लौटे थे। दिन के दौरान राजजी की मुलाकात गांधीजी से हुई। गांधीजी ने उनसे कहा कि उनके सामने जो भारत आकार ले रहा है, उसमें उनके लिए कोई जगह नहीं है। देश हिंसा के मार्ग पर अग्रसर है। चरखे की जगह बड़े कारखाने और तीव्र औद्योगीकरण ले रहे हैं; देश का लक्ष्य क्षेत्र में एक सैन्य शक्ति बनना है। लेकिन इन सबके बीच, उनका दृढ़ विश्वास था कि एक दिन ऐसा आएगा जब वे सब स्वयं देखेंगे कि भारत के लिए ग्राम उद्योग और अहिंसा के अलावा कोई दूसरा मार्ग नहीं है।

कुछ समय से यह अफवाह जोर पकड़ रही थी कि 3 जून को जब वायसराय सत्ता हस्तांतरण के लिए ब्रिटिश सरकार की योजना की घोषणा करेंगे, तो पूरे देश में दंगे भड़काए जाएंगे। बंगाल से खबर आई थी कि बंगाल मुस्लिम लीग के कई कार्यकर्ताओं और नेताओं ने कलकत्ता को भारतीय संघ का हिस्सा बनने देने के बजाय उसे जलाकर राख करने की धमकी दी थी। कलकत्ता को लूटने की तैयारी में पूरे इलाकों और गलियों को किलेबंद किया जा रहा था; मुसलमान अपने आगजनी करने वालों को तैयार कर रहे थे और अपने कमांडो को हथियारबंद कर रहे थे; और हिंदू भी अपनी तैयारियों में पीछे नहीं थे। कोई भी पक्ष अचानक हमले का शिकार नहीं होना चाहता था। बिहार से एक टेलीफोन संदेश में गांधीजी को बताया गया कि वहां भी स्थिति तेजी से बिगड़ रही है। सिंध से उनके एक सिंधी मित्र ने उन्हें लिखा कि उस प्रांत में हिंदू मृत्यु और विनाश के साये में जी रहे हैं।
जब गांधीजी उस शाम प्रार्थना सभा के बाद अपने कमरे में लौटे, तो उनके सबसे छोटे बेटे देवदास, लक्ष्मी और बहू गोपालकृष्ण और उनके सबसे छोटे बेटे, जिन्हें प्यार से गोपू कहा जाता था, उनसे मिलने आए, जैसा कि वे हर रोज करते थे जब भी गांधीजी दिल्ली में होते थे।
इस पूरे समय जिन्ना लगातार बेतुकी मांगें करते रहे। ऐसा करके उन्होंने सत्ता हस्तांतरण के लिए चल रही अंतिम वार्ता को ठप्प कर दिया। उनकी पहली मांग थी असम को पाकिस्तान समूह में शामिल करना। असम में केवल दो जिलों में ही मुस्लिम बहुसंख्यक आबादी थी; इसलिए जिन्ना की यह मांग उस आधार के विरुद्ध थी जिस पर हज़ारों मील दूर स्थित दो पाकिस्तानों का निर्माण हो रहा था— कि इन दोनों क्षेत्रों में मुस्लिम बहुसंख्यक आबादी थी। असम को

पाकिस्तान समूह में शामिल करने के लिए जिन्ना का तर्क था कि यह पाकिस्तान के क्षेत्रों से सटा हुआ है और इसके दो जिलों में मुस्लिम आबादी है। माउंटबेटन के लंदन रवाना होने के चार दिन बाद उन्होंने यह बेहद हास्यास्पद मांग रखी। उन्होंने कहा कि पाकिस्तान के दोनों हिस्सों के बीच एक जमीनी संपर्क का होना आवश्यक है और पूर्वी और पश्चिमी पाकिस्तान को जोड़ने के लिए उत्तर भारत से 1000 मील लंबा गलियारा बनाने की मांग की। पटेल ने इसे 'इतना बेतुका और हास्यास्पद' बताया कि इस पर गंभीरता से विचार नहीं किया जा सकता।
जिन्ना की बेतुकी और कभी न खत्म होने वाली मांगों के परिणामस्वरूप विभाजन योजना के प्रति कांग्रेस का रुख और भी कठोर हो गया, जो हर रियायत के साथ और भी हास्यास्पद होती जा रही थीं। इससे गांधीजी को भारत के विभाजन को टालने की एक उम्मीद जगी। उन्होंने कांग्रेस के उच्च कमान को माउंटबेटन की विभाजन योजना को छोड़ने और कैबिनेट मिशन योजना पर वापस लौटने के लिए मनाने का अंतिम प्रयास किया। उन्होंने कहा कि 'पाकिस्तान से पहले शांति' ही प्राथमिकता होनी चाहिए। वायसराय को मुस्लिम लीग के साथ तब तक कोई बातचीत नहीं करनी चाहिए, जब तक कि जिन्ना द्वारा सह-हस्ताक्षरित अपील को अक्षरशः और भावनापूर्वक लागू न कर दिया जाए। वायसराय भी उतने ही प्रतिबद्ध थे और वे एक ईमानदार व्यक्ति थे। यदि कांग्रेस कमजोर नहीं पड़ी, तो मुस्लिम लीग को कांग्रेस के पास आकर तर्क से बात करनी होगी, न कि अपनी बढ़ती मांगों को बंदूक की नोक पर पेश करने की, जैसा कि वह पहले करती आ रही थी।
प्रेस में अफरा-तफरी मची हुई थी; वे एक के बाद एक अटकल भरी खबरें छाप रहे थे कि माउंटबेटन लंदन से क्या लेकर लौटेंगे। गांधीजी

को यह रवैया पसंद नहीं आया। भारतीयों को यह क्यों मानना चाहिए कि उनका भविष्य ब्रिटिश सरकार के कहने या करने पर निर्भर है? 26 मई को प्रार्थना के बाद दिए अपने भाषण में उन्होंने कहा कि स्वतंत्रता उनके सामने है। इसे हासिल करना उन्हीं का काम है, जब तक कि वे अपनी मूर्खता में इसे त्याग न दें। उन्हें ब्रिटिश कैबिनेट या ब्रिटिश राजनीतिक दलों की इच्छाओं या आकांक्षाओं की चिंता क्यों करनी चाहिए? 'स्वतंत्रता देना उनका काम नहीं है, बल्कि सिर्फ हमारे ऊपर से अपना बोझ हटाना है। उन्होंने इसका वादा किया है। लेकिन अपनी स्वतंत्रता को बनाए रखने और उसे साकार करने के लिए हमें खुद ही प्रयास करना होगा... जब तक भारत में ब्रिटिश सत्ता है, हम ठीक से सोच नहीं सकते। उसका काम भारत का नक्शा बदलना नहीं है। उसे बस इतना करना है कि वह पीछे हट जाए और यदि संभव हो तो व्यवस्थित तरीके से भारत छोड़ दे। लेकिन किसी भी हालत में उसे तय तारीख को या उससे पहले पीछे हटना ही होगा, चाहे इसका मतलब अराजकता ही क्यों न हो।'
'एक अतिरिक्त कारण यह है कि देश की वर्तमान स्थिति में विभाजन के साथ या उसके बिना हिंदुस्तान के स्वरूप में कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन संभव नहीं है। यह कारण कायद-ए-आजम और मेरे द्वारा जारी किया गया संयुक्त बयान है। इसमें एक ठोस सिद्धांत प्रतिपादित किया गया है कि किसी भी राजनीतिक लक्ष्य की प्राप्ति में हिंसा का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए।'
तब हमें यह कड़वा सबक मिल जाएगा कि अगर पर्याप्त मात्रा में हिंसा की जाए तो सब कुछ हासिल किया जा सकता है। इसलिए, मैं हर देशभक्त और निश्चित रूप से ब्रिटिश सत्ता से आग्रह करता हूँ कि वे सबसे भीषण हिंसा का सामना करें और भारत को उसी स्थिति में छोड़ दें जैसा कि पिछले वर्ष 16 मई के कैबिनेट मिशन दस्तावेज़

के तहत छोड़ा जा सकता है। आज, ब्रिटिश सत्ता की उपस्थिति में, हम रक्तपात, आगजनी और इससे भी बदतर हिंसा के तांडव से हतोत्साहित हैं। आशा है कि इसके हटने के बाद, हम समझदारी से सोचेंगे और भारत को एक रखेंगे, या इसे दो या दो से अधिक भागों में बाँट देंगे। लेकिन अगर हम तब भी लड़ने पर तुले रहे, तो मुझे यकीन है कि हम आज की तरह हतोत्साहित नहीं होंगे, हालाँकि यह सच है कि हर हिंसा अपने साथ कुछ हद तक हतोत्साहित करने वाली होती है। मैं पूरी उम्मीद करता हूँ कि स्वतंत्र भारत, दुनिया को हिंसा का एक और सबक नहीं देगा, जिससे दुनिया पहले से ही लगभग मौत के कगार पर है। अगली शाम गांधी ने सीधे जिन्ना, कांग्रेस नेतृत्व और ब्रिटिश सरकार को चुनौती दी। जिन्ना उनके नाम से संयुक्त रूप से जारी किए गए प्रसिद्ध बयान पर हस्ताक्षर करने वालों में से एक थे। उन्हें उनके साथ एक ही मंच से काम करते हुए दिखना चाहिए था, और तब तक चैन से नहीं बैठना चाहिए था जब तक कि उनकी जन्मभूमि में शांति स्थापित न हो जाए या इस प्रयास में उनकी मृत्यु न हो जाए। इसके बावजूद, राजधानी के आसपास भी आगजनी और हत्याएं व्यापक रूप से जारी थीं, और भारत के विभाजन की तैयारियां तेजी से आगे बढ़ रही थीं। अंतरिम सरकार ने दुर्भाग्यवश ब्रिटिश सरकार की नकारात्मक नीति का अनुसरण किया: उसके विज्ञप्तियों में बार-बार, अत्यंत अस्पष्ट शब्दों में, यह उल्लेख किया गया कि 'एक विशेष समुदाय' के सदस्यों ने हत्याएं की हैं, लेकिन यह स्पष्ट नहीं किया गया कि किसने किसको मारा। वे हत्यारे का नाम लेने की हिम्मत क्यों नहीं कर सके? ब्रिटिश सत्ता ने दोषी का नाम लेकर उसे सत्ता से बाहर क्यों नहीं किया? उन्होंने कहा कि संयुक्त अपील के बाद, जिन्ना ने पाकिस्तान की प्राप्ति के लिए केवल तर्क के माध्यम से बातचीत करने का ही रास्ता छोड़ा था। उन्होंने

पहले कहा था कि अगर उनकी चलती तो शांति स्थापित होने से पहले पाकिस्तान की कोई बात नहीं होती, और निश्चित रूप से ब्रिटिश हस्तक्षेप से तो बिल्कुल नहीं। जिन्ना को पहले शांति स्थापित करनी चाहिए—इस प्रयास में उन्हें हमेशा उनका सहयोग मिल सकता था—फिर सभी वर्गों और समुदायों के भारतीय नेताओं की एक बैठक बुलानी चाहिए और उनसे पाकिस्तान के मुद्दे पर तब तक बात करनी चाहिए जब तक कि वे उन्हें आश्वस्त न कर दें। 'जिस दिन हम भाईचारे के साथ मिलेंगे, वह भारत के इतिहास में एक ऐतिहासिक दिन होगा। क्योंकि उस दिन हम जो भी निर्णय लेंगे, वह एक परिवार के सदस्यों के रूप में हमारा निर्णय होगा।'
गांधी ने आगे कहा कि अगर जिन्ना की कल्पना वाला पाकिस्तान एक तर्कसंगत प्रस्ताव था, तो उन्हें भारत को समझाने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। यद्यपि उत्तर पश्चिमी सीमा प्रांत, पंजाब और बंगाल की घटनाओं ने आशा की गुंजाइश बहुत कम कर दी थी, फिर भी वे एक प्रस्ताव देने के लिए तैयार थे। जिन्ना ने दावा किया था कि पाकिस्तान एक ऐसा राज्य होगा जहाँ हर कोई पूर्ण सुरक्षा का आनंद लेगा; जहाँ ऊँच-नीच का कोई भेद नहीं होगा और जहाँ सभी के लिए न्याय होगा। यदि यह वास्तव में ऐसा था, तो वे [गांधी] स्वयं उनके साथ देश भर में यात्रा करेंगे और लोगों को बताएंगे कि वे सभी ऐसे पाकिस्तान में सुखी जीवन जी सकते हैं: 'उन्हें [जिन्ना को] ब्रिटिश सत्ता या उसके प्रतिनिधि विस्काउंट माउंटबेटन से अपील नहीं करनी चाहिए। बाद वाले का काम केवल अगले वर्ष जून के अंत तक चले जाना है - चाहे शांति हो या न हो। थोपी गई शांति कब्र की शांति होगी जिससे पूरा भारत और ब्रिटिश शर्मिंदा होंगे। ऐसा न कहा जाए कि गांधी बहुत देर से आए। वे नहीं आए थे।' सुधार करने में कभी देर नहीं होती, तलवार की

ताकत को तर्क की ताकत से बदलने में कभी देर नहीं होती। क्या अंग्रेज एक ऐसे भारत पर पाकिस्तान थोपने की हिम्मत करेंगे जो कुछ समय के लिए पागल हो गया है?
जिन्ना ने अपील पर कोई ध्यान नहीं दिया; उन्हें पता था कि कांग्रेस नेताओं पर उनका पूरा नियंत्रण है और अंग्रेज़ तो वैसे भी उनके प्रति पक्षपाती थे, तो भला उन्हें उस व्यक्ति की बातों से क्या फ़र्क पड़ता जो खुद अलग-थलग पड़ चुका था। माउंटबेटन ने शिकायत की कि वे बहुत देर से आए, जब विभाजन के अलावा कोई और समाधान दोनों पक्षों को मंज़ूर नहीं था, और कांग्रेस मुश्किल रास्ता अपनाने को तैयार नहीं थी। सत्ता में आने के बाद से ही कांग्रेस कानून-व्यवस्था बनाए रखने के लिए ब्रिटिश शासन पर बहुत ज़्यादा निर्भर थी। रियासतों की समस्या से निपटने के लिए उन्हें ब्रिटिश प्रशासन की मदद की ज़रूरत थी। वे पूरी तरह से इस बात पर निर्भर थे कि माउंटबेटन लंदन से क्या लेकर आते। गांधी उनके लिए एक ऐसे व्यक्ति थे जिन्हें उन्हें बर्दाश्त करना पड़ता था और ज़रूरत पड़ने पर इस्तेमाल करना पड़ता था, लेकिन उनकी बातों को गंभीरता से नहीं लिया जा सकता था; इन नए-नए राजनीति में आए लोगों के लिए गांधी के विचार और दर्शन अब व्यावहारिक या यथार्थवादी नहीं रह गए थे। सार्वजनिक रूप से वे उनके प्रति सहानुभूति दिखाते थे, निजी तौर पर उनका उपहास करते थे।
29 मई को सुबह की सैर के दौरान, एक सहकर्मी ने गांधीजी से कहा: 'आपने घोषणा की है कि यदि तर्क के आधार पर पूरे भारत को पाकिस्तान बना दिया जाए तो आपको कोई आपत्ति नहीं होगी, लेकिन बल के आगे एक इंच भी नहीं झुकेंगे। आप अपनी घोषणा पर अडिग रहे हैं। लेकिन क्या कार्यकारी समिति उसी सिद्धांत पर कार्य कर रही है?

वे बल के आगे झुक रहे हैं। आपने हमें "भारत छोड़ो" का नारा दिया; आपने हमारी लड़ाइयाँ लड़ीं; लेकिन निर्णायक समय में, मुझे लगता है, आप कहीं नज़र नहीं आ रहे हैं। आपको और आपके विचारों को दरकिनार कर दिया गया है।'
गांधी ने जवाब दिया, 'आज मेरी बात कौन सुनता है?' इस पर सहकर्मी ने कहा, 'नेता शायद न सुनें, लेकिन जनता आपके साथ है।' गांधी ने आगे कहा, 'वे भी नहीं। मुझे हिमालय में जाकर रिटायर होने के लिए कहा जा रहा है। हर कोई मेरी तस्वीरों और मूर्तियों पर माला चढ़ाने के लिए उत्सुक है। असल में कोई भी मेरा अनुसरण नहीं करना चाहता।'
सहकर्मी ने कहा, 'हो सकता है कि वे आज ऐसा न करें, लेकिन जल्द ही उन्हें ऐसा करना ही पड़ेगा।' इस पर गांधीजी ने उत्तर दिया, 'इससे क्या लाभ? कौन जानता है कि तब तक मैं जीवित रहूँ या नहीं? सवाल यह है कि आज हम क्या कर सकते हैं? स्वतंत्रता की पूर्व संध्या पर हम उतने ही विभाजित हैं जितने स्वतंत्रता संग्राम के दौरान एकजुट थे। सत्ता की संभावना ने हमारा मनोबल गिरा दिया है।' माउंटबेटन के राजधानी लौटने के साथ ही घटनाक्रम में तेज़ी आ गई। 31 मई को राजेंद्र बाबू ने अपनी सुबह की सैर के दौरान गांधीजी से संक्षिप्त बातचीत की। उसी दोपहर सीडब्ल्यूसी की बैठक होनी थी। कांग्रेस नेताओं का मानना था कि सभी दलों द्वारा विभाजन के विचार को स्वीकार करने से देश में शांति लौट आएगी। गांधीजी को इस विचार पर गहरा संदेह था; उनका दृढ़ मत था कि विभाजन की बात से पहले शांति की स्थापना आवश्यक है; शांति से पहले विभाजन घातक होगा। घटनाक्रम के अनुसार, विभाजन के बाद अल्पसंख्यक पाकिस्तान में नहीं रह पाएंगे। विभाजन रेखा के दोनों ओर से अल्पसंख्यकों का बड़े पैमाने पर पलायन होगा, जिससे

अराजकता और अपरिहार्य रक्तपात होगा। आने वाले शरणार्थियों को नियंत्रित करना लगभग असंभव होगा। बादशाह खान उनके सैर समाप्त होने का इंतजार कर रहे थे। निराशा भरे स्वर में उन्होंने कहा, 'तो महात्माजी, अब आप हमें पाकिस्तानी मानेंगे? सीमावर्ती प्रांतों और बलूचिस्तान में भयावह स्थिति है। हमें नहीं पता कि क्या करें।'
गांधी ने उत्तर दिया, 'अहिंसा में निराशा नहीं होती। यह आपके और खुदाई खिदमतगारों के लिए परीक्षा की घड़ी है। आप कह सकते हैं कि पाकिस्तान आपको स्वीकार्य नहीं है और सबसे बुरे हालात का सामना कर सकते हैं। जो लोग 'करो या मरो' की प्रतिज्ञा पर अड़े हैं, उन्हें भला क्या डर हो सकता है? मेरा इरादा है कि हालात अनुकूल होते ही मैं सीमा पर जाऊँगा। मैं पासपोर्ट नहीं बनवाऊँगा क्योंकि मैं विभाजन में विश्वास नहीं करता। और अगर इसके फलस्वरूप कोई मुझे मार डाले तो मुझे मरने में खुशी होगी। अगर पाकिस्तान अस्तित्व में आता है तो मेरा स्थान पाकिस्तान में ही होगा।'
उस शाम प्रार्थना सभा के दौरान, जब कुरान की आयतें पढ़ी जा रही थीं, पश्चिमी कपड़े पहने एक युवक खड़ा हुआ और चिल्लाने लगा, 'जिन्ना को जेल में डालो, कुरान पढ़ना बंद करो, मुस्लिम लीग के खिलाफ युद्ध की घोषणा करो।' पारसी प्रार्थना के दौरान भी वह लगातार मुस्लिम-विरोधी और जिन्ना-विरोधी नारे लगाता रहा। गांधीजी ने प्रार्थना रोक दी और स्वयंसेवकों से अनुरोध किया कि वे उस युवक के साथ सख्ती न बरतें। उस समय ऑल इंडिया रेडियो गांधीजी की प्रार्थना सभाओं की रिकॉर्डिंग करता था। मेरे पास उस विशेष प्रार्थना सभा की रिकॉर्डिंग है और मैंने उसे कई बार सुना है। उस व्यक्ति की आवाज़ में एक भयावह तीव्रता है, लेकिन

गांधीजी की शांत और तर्कसंगत प्रतिक्रिया उसका मुकाबला करती है। यह स्पष्ट है कि ये उपद्रवी अपने उद्देश्य के लिए जनता की सहानुभूति बटोरने का तरीका भली-भांति जानते थे। पहले उन्होंने कुरान के पाठ पर आपत्ति जताई थी, लेकिन यह बात लोगों को पसंद नहीं आई। इसलिए हिंदू चरमपंथियों, आरएसएस और हिंदू महासभा ने अपनी रणनीति बदल दी। अब उन्होंने जिन्ना की गिरफ्तारी और मुस्लिम लीग से बदला लेने की मांग की। उस समय भारत में शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति था जो इन मांगों का विरोध करता।
गांधी जी घटनाक्रम से बेहद निराश थे और तनाव व चिंता उन पर गहरा असर डालने लगी थी। उसी दोपहर कार्य समिति ने स्वतंत्रता वार्ता के दौरान अपनाई जाने वाली रणनीतियों पर चर्चा करने के लिए फिर से बैठक की। सभी एक बात पर सहमत थे— विभाजन अपरिहार्य था। 2 जून 1947 को माउंटबेटन भारतीय दलों से मिलने वाले थे और लंदन से लाए गए सत्ता हस्तांतरण की योजना का अनावरण करने वाले थे। वे भारतीयों को तीन विकल्प देने वाले थे: कैबिनेट मिशन योजना को स्वीकार करवाने का अंतिम प्रयास, जिसे वे व्यक्तिगत रूप से स्वीकार नहीं किए जाने की आशंका जताते थे; एचएमजी की विभाजन योजना; और अंत में मौजूदा संविधान के आधार पर सत्ता हस्तांतरण की योजना। इसके तहत, प्रांतीय विषयों को मौजूदा प्रांतीय सरकारों को और केंद्रीय विषयों को मौजूदा केंद्रीय सरकार को हस्तांतरित किया जाना था। यह एकतरफा कार्रवाई थी और किसी को भी इस बात पर सवाल उठाने या चुनौती देने का अधिकार नहीं था कि उन्हें कहाँ हस्तांतरित किया गया है।
भारतीय नेता सुबह 10 बजे वायसराय हाउस में एकत्रित हुए। कांग्रेस की ओर से पटेल, नेहरू और कृपलानी उपस्थित थे; मुस्लिम लीग की ओर से जिन्ना, लियाकत अली और रब निश्तर उपस्थित थे।

जिन्ना ने कृपलानी की उपस्थिति पर आपत्ति जताई थी—यह कांग्रेस नेताओं को चिढ़ाने की एक चाल थी। जब उनकी आपत्ति खारिज कर दी गई, क्योंकि कांग्रेस अध्यक्ष होने के नाते कृपलानी को बैठक में उपस्थित होने का पूरा अधिकार था, तो जिन्ना ने कृपलानी का मुकाबला करने के लिए रब निश्तर को नामित किया। सिखों की ओर से सरदार बलदेव सिंह उपस्थित थे। माउंटबेटन ने कैबिनेट मिशन योजना को स्वीकार करने के औपचारिक प्रस्ताव के साथ बैठक शुरू की, जिन्ना ने इसे स्वीकार करने से इनकार कर दिया और प्रस्ताव वापस ले लिया गया। इसके बाद, माउंटबेटन ने एचएमजी की विभाजन योजना का अनावरण किया, जिसे वे लंदन से वापस लाए थे। इसमें निम्नलिखित प्रस्ताव थे:
(1) मुस्लिम बहुल प्रांतों के लिए एक अलग संविधान सभा
जो मौजूदा संविधान सभा में शामिल होने के इच्छुक नहीं थे, पंजाब और बंगाल के विभाजन के साथ, उनके निर्णय द्वारा
हिंदू और मुस्लिम बहुमत के लिए संबंधित विधानमंडलों में अलग-अलग मतदान।
जिले।
(2) बंगाल के विभाजन की स्थिति में, जनमत संग्रह होगा।
सिलहट को यह तय करना है कि वह किस प्रांत का हिस्सा होगा— पूर्वी बंगाल
या असम।
(3) उत्तर-पश्चिम सीमा प्रांत में बिना जनमत संग्रह आयोजित किया जाएगा
सत्ताधारी मंत्रालय को परेशान करते हुए, यह तय करना कि दो संविधान निर्माताओं में से किसे चुना जाए।
यह जिन सभाओं में शामिल होगा।

(4) सिंध विधान सभा साधारण बहुमत से निर्णय करेगी कि
यह भारत के किस हिस्से से संबंधित होगा?
(5) बलूचिस्तान में विधान सभा न होने के कारण, प्रक्रिया इस प्रकार थी:
इसका भविष्य कैसे तय होगा, यह वायसराय पर छोड़ दिया जाएगा। भारतीय पक्षों के साथ परामर्श।
(6) विभाजन का अंतिम स्वरूप सीमा द्वारा निर्धारित किया जाएगा इस उद्देश्य के लिए आयोग की नियुक्ति की गई है।
(7) पृथक्करण होने तक अंतरिम सरकार में कोई परिवर्तन नहीं होगा जब
दो सरकारें स्थापित की जाएंगी जिन्हें सभी विषयों में पूर्ण शक्तियां प्राप्त होंगी। (8) प्रमुख भारतीय राजनीतिक दलों की शीघ्र इच्छा को पूरा करने के लिए
सत्ता हस्तांतरण की संभावना है, सत्ता एक भारतीय को हस्तांतरित की जाएगी।
इससे भी पहले के समय में प्रभुत्व के आधार पर सरकार या सरकारें तारीख।
(9) प्रभुत्व का दर्जा प्राप्त करना निम्नलिखित पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालेगा:
भारतीय संविधान सभाओं को उचित समय पर निर्णय लेने का अधिकार है।
चाहे भारत का वह भाग जिसके संबंध में उन्हें अधिकार प्राप्त था, ब्रिटिश राष्ट्रमंडल में ही रहेगा।
(10) रियासतों की स्थिति यथावत बनी रहेगी
मंत्रिमंडल मिशन योजना।

वायसराय ने कहा था कि स्वतंत्रता की तिथि आगे बढ़ा दी जाएगी।
वास्तव में उन्होंने प्रस्थान की तिथि को काफी कम कर दिया था, और इसे अगस्त 1947 तक आगे बढ़ा दिया था।
कांग्रेस नेताओं ने इस योजना को इस शर्त पर स्वीकार किया कि जिन्ना और मुस्लिम लीग इसे बिना किसी बदलाव के स्वीकार कर लें। कांग्रेस और सिख नेताओं ने उसी शाम लिखित में अपना अंतिम निर्णय देने पर सहमति जताई। हालांकि, जिन्ना ने कहा कि विभाजन के प्रस्ताव पर केवल लीग की पूर्ण परिषद ही निर्णय ले सकती है, और मुस्लिम लीग की परिषद को बुलाने में कुछ दिन लगेंगे। उन्होंने केवल व्यक्तिगत तौर पर यह आश्वासन दिया कि वे इस योजना को विफल नहीं करना चाहते।
दोपहर 12:30 बजे गांधीजी वायसराय से मिलने आए। वायसराय की ओर से यह महज़ एक औपचारिकता थी; गांधीजी चाहे कुछ भी कहें या सुझाव दें, उनकी बातों का अब कोई महत्व नहीं रह गया था। गांधीजी भी यह जानते थे और उन्होंने इस बात को स्वीकार कर लिया था। 2 जून सोमवार था—गांधीजी का साप्ताहिक मौन दिवस। उन्होंने अपनी सारी बातें कागज़ की पर्चियों पर लिखकर वायसराय को सौंप दीं। ब्रिटिश प्रशासन और वायसराय के कर्मचारियों के एक वर्ग ने विभाजन योजना के लिए एक काल्पनिक खतरा पैदा कर दिया था। उन्हें पूरा विश्वास था कि गांधीजी कांग्रेस से नाता तोड़ लेंगे और विभाजन योजना को स्वीकार किए जाने के विरुद्ध एक जन आंदोलन का नेतृत्व करेंगे; इससे वायसराय के कर्मचारियों के साथ-साथ व्हाइटहॉल में भी काफी दहशत फैल गई थी। यह बैठक मूल रूप से गांधीजी की प्रतिक्रिया जानने और यह पता लगाने के लिए थी कि उनके डर में कोई सच्चाई है या नहीं। गांधीजी का प्रभाव इतना अधिक था कि कांग्रेस नेताओं से उन्हें सफलतापूर्वक अलग-थलग

करने के बावजूद भी ब्रिटिश औपनिवेशिक प्रशासन और ब्रिटिश सरकार भयभीत थे। लेकिन गांधी ने अपने राजनीतिक सहयोगियों और भारत की जनता के मिजाज को भांप लिया था और जानते थे कि उस नाजुक मोड़ पर वे अकेले खड़े थे। वायसराय की आशंकाओं को दूर करते हुए उन्होंने लिखा: 'मुझे खेद है, मैं बोल नहीं सकता। सोमवार को मौन रहने का निर्णय लेते समय मैंने दो अपवाद रखे थे, अर्थात् उच्च अधिकारियों से अत्यावश्यक मामलों पर बात करना या बीमार लोगों की देखभाल करना। लेकिन मैं जानता हूं कि आप नहीं चाहते कि मैं अपना मौन भंग करूं।'
विभाजन योजना के लिए गांधी द्वारा अशांति फैलाने की आशंका के बारे में वायसराय के सतर्क प्रश्न का उत्तर देते हुए गांधी ने लिखा: 'क्या मैंने अपने भाषणों के दौरान आपके विरुद्ध एक भी शब्द कहा है? यदि आप यह स्वीकार करते हैं कि मैंने नहीं कहा है, तो आपकी चेतावनी व्यर्थ है। एक-दो बातें हैं जिन पर मुझे बोलना है, लेकिन आज नहीं। यदि हम फिर मिलेंगे, तो मैं बोलूंगा।'
उसी रात कांग्रेस अध्यक्ष द्वारा वायसराय को लिखे पत्र के माध्यम से सीडब्ल्यूसी के अंतिम निर्णय की सूचना दी गई। उन्होंने लिखा: 'हमने 16 मई, 1946 के कैबिनेट मिशन के वक्तव्य और 6 दिसंबर, 1946 की उसकी व्याख्या को पूर्णतः स्वीकार कर लिया है। हम अभी भी उस योजना का पालन करने के लिए तैयार हैं। हालांकि, हम उस योजना में संशोधन के रूप में अब दिए जा रहे प्रस्तावों को स्वीकार करने के लिए तैयार हैं। जबकि हम महामहिम की सरकार द्वारा दिए गए प्रस्तावों को स्वीकार करने के लिए तैयार हैं, मेरी समिति इस बात पर जोर देना चाहती है कि वे ऐसा अंतिम समझौता करने के उद्देश्य से कर रहे हैं। यह मुस्लिम लीग द्वारा

प्रस्ताव की स्वीकृति और इस स्पष्ट समझ पर निर्भर है कि आगे कोई दावा नहीं किया जाएगा।'
हालांकि, कैबिनेट मिशन योजना के समय जो कुछ हुआ था, उसे ध्यान में रखते हुए, जब लॉर्ड वेवेल ने लिखित में उचित गारंटी प्राप्त किए बिना मुस्लिम लीग को अंतरिम सरकार में शामिल कर लिया था, कार्य समिति के पत्र में आगे कहा गया: 'अतीत में काफी गलतफहमी हुई है और भविष्य में इससे बचने के लिए, इन प्रस्तावों के संबंध में लिखित में स्पष्ट बयान देना आवश्यक है।'
राष्ट्रमंडल में शामिल होने और ब्रिटिश सरकार के साथ व्यक्तिगत गठबंधन बनाने के दोनों पक्षों के अधिकार के प्रश्न पर, कांग्रेस अध्यक्ष के पत्र में दृढ़ रुख अपनाने के बजाय यह स्पष्ट हुआ कि नेतृत्व में संघर्ष करने की इच्छाशक्ति समाप्त हो गई थी: 'यह अत्यंत अवांछनीय प्रतीत होता है और इससे टकराव की संभावना है यदि ब्रिटिश और भारतीय संघ तथा इसके पृथक भागों के बीच संबंध भिन्न-भिन्न आधार पर हों। अतः हम यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि हम ऐसे किसी भी घटनाक्रम के लिए सहमत नहीं हो सकते।' अंत में कांग्रेस अध्यक्ष के पत्र में उल्लेख किया गया: 'हम पहले की तरह ही एक संयुक्त भारत में पूर्ण विश्वास रखते हैं। हमें पूरी उम्मीद है कि जब वर्तमान भावनाएं शांत हो जाएंगी, तो हमारी समस्याओं को उनके उचित परिप्रेक्ष्य में देखा जाएगा और इसके परिणामस्वरूप भारत के सभी भागों का एक स्वैच्छिक संघ बनेगा।'
लीग के लिखित जवाब देने से जिन्ना के अड़ियल इनकार ने वायसराय और उनके बीच आधी रात को एक तीखी बहस को जन्म दिया, जिसके एकमात्र गवाह लॉर्ड इस्मे थे। इस बैठक से पता चला कि जिन्ना ब्रिटिश औपनिवेशिक प्रशासन के मौन समर्थन से अपने सभी उद्देश्यों को

प्राप्त करने को लेकर कितने आश्वस्त थे, और माउंटबेटन द्वारा दी गई गंभीर धमकियों के बावजूद वे कितने अडिग रह सकते थे। विभाजन योजना पर लिखित जवाब देने से इनकार करने पर वायसराय ने उन्हें चेतावनी दी कि यदि वे अपनी हठधर्मिता जारी रखते हैं, तो सत्ता का हस्तांतरण मौजूदा संविधान के आधार पर किया जा सकता है। जिन्ना ने वायसराय की इस धमकी को बेपरवाही से 'जो होना है, सो होगा' कहकर खारिज कर दिया। अंततः माउंटबेटन ने अपना अंतिम 'गुप्त हथियार' निकाला। यह विंस्टन चर्चिल का एक संदेश था, जिसे अंतिम उपाय के रूप में दिया जाना था। संदेश स्पष्ट था: यदि जिन्ना इस योजना को अस्वीकार करते हैं या इसकी स्वीकृति में बाधा डालने का प्रयास करते हैं, तो यह उनके पाकिस्तान के सपने का अंत होगा। जिन्ना ने कोई भावना नहीं दिखाई। अगली सुबह नेताओं के सम्मेलन में जब उनसे विभाजन योजना के प्रति उनकी स्वीकृति पूछी गई, तो उन्होंने केवल सिर हिलाकर सहमति दी, जिसे स्वीकृति मान लिया गया। इसके बाद 9 जून को जिन्ना की अध्यक्षता में मुस्लिम लीग परिषद की बैठक नई दिल्ली में हुई और पंजाब और बंगाल के विभाजन की निंदा करते हुए, उन्होंने शांति और स्थिरता के हित में ब्रिटिश सरकार की योजना को 'समझौते' के रूप में स्वीकार करने का प्रस्ताव पारित किया।
3 जून की सुबह टहलते हुए गांधीजी ने राजेंद्र बाबू से पूछा कि क्या वे अब बिहार लौट सकते हैं। लेकिन बाबू ने मना कर दिया क्योंकि राजधानी में उनकी उपस्थिति 'बादशाह खान के लिए ही सही' अनिवार्य थी। इस प्रकार उन्होंने अप्रत्यक्ष रूप से संकेत दिया कि एनडब्ल्यूएफपी के भविष्य के मुद्दे पर पूरी प्रक्रिया अराजकता में तब्दील हो सकती है। गांधीजी ने कहा, "हाल ही में मैंने गौर किया है कि मुझे बहुत जल्दी गुस्सा आ जाता है। इसका

मतलब है कि मैं अब ज्यादा दिन जीवित नहीं रह सकता। लेकिन ईश्वर में मेरी आस्था दिन-प्रतिदिन गहरी होती जा रही है। वही मेरे सच्चे मित्र और साथी हैं। वे अपने किसी भी प्राणी को कभी नहीं छोड़ते।"
बाद में उन्होंने कहा, 'पूरी संभावना है कि आज दिन में विभाजन योजना पर अंतिम मुहर लग जाएगी। लेकिन भले ही इस विचार को मानने वाला मैं अकेला ही क्यों न होऊं, मैं फिर दोहराता हूं कि भारत का विभाजन देश के भविष्य को केवल नुकसान ही पहुंचाएगा। 150 वर्षों की गुलामी का अंत होने वाला है, लेकिन मौजूदा हालात को देखते हुए ऐसा नहीं लगता कि यह आजादी इतने लंबे समय तक टिक पाएगी। यह सोचकर मुझे बहुत दुख होता है कि विभाजन योजना में मुझे बुराई के सिवा कुछ नहीं दिखता। शायद जिस तरह ईश्वर ने मेरी दृष्टि को अंधा कर दिया था, जिससे मैंने कमजोरों की अहिंसा को—जिसे अब मैं गलत नाम और विरोधाभास मानता हूं—सच्ची अहिंसा समझ लिया था, उसी तरह उन्होंने मुझे फिर से अंधा कर दिया है। अगर ऐसा हुआ तो मुझसे ज्यादा खुश कोई नहीं होगा।'
शाम की सैर के बाद जब गांधी जी गर्म पानी में पैर डुबोकर बैठे थे, तभी राजकुमारी अमृत कौर आईं और उन्हें खबर दी कि कांग्रेस, लीग और सिखों सहित तीनों दलों ने योजना पर हस्ताक्षर कर दिए हैं। लीग इसके अलावा कुछ और स्वीकार नहीं करेगी; इसलिए कांग्रेस के पास विभाजन स्वीकार करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था। गांधी जी ने बिना कुछ कहे खबर सुनी; अंत में उन्होंने राहत की सांस ली। उन्होंने धीरे से कहा, 'ईश्वर उनकी रक्षा करे और उन्हें ज्ञान प्रदान करे।' उसी रात, यह फैसला एयर पर प्रसारित हुआ; 'भारत का विभाजन होगा।' इस घोषणा के बाद नेहरू, जिन्ना और बलदेव सिंह के भाषण हुए। इस तरह भारत के भविष्य और स्वतंत्रता

को लेकर अनिश्चितता समाप्त हुई। इसने गांधी जी के अपने प्रिय राष्ट्र को हर हाल में एकजुट रखने के सपने को भी चकनाचूर कर दिया। भारत स्वतंत्र तो होगा, लेकिन इस प्रक्रिया में वह टुकड़ों में बंट जाएगा।
उस समय गांधी जी के साथ न तो राजनेता थे और न ही आम जनता, जो भारत को एकजुट रखने, लीग की हिंसा और कांग्रेस के आत्मसमर्पण के खिलाफ लड़ने के लिए कोई आंदोलन शुरू करने को तैयार थे। कई लोगों का दावा था कि गांधी जी ने विभाजन को चुपचाप स्वीकार कर लिया था और इसे रोकने के लिए कुछ नहीं किया, इसलिए वे उनसे विश्वासघात का शिकार हुए। लेकिन विभाजन योजना को स्वीकार किए जाने के खिलाफ किसी ने भी स्वतंत्र आंदोलन नहीं चलाया। हिंदू दक्षिणपंथी और आरएसएस और हिंदू महासभा के स्वघोषित देशभक्तों ने इस विभाजन के खिलाफ एक बार भी प्रदर्शन नहीं किया, जिसे वे अब, साठ साल बाद, एक घोर विश्वासघात कहते हैं। उन्होंने केवल इतना किया कि अपने सभी समर्थकों को भारत की स्वतंत्रता का जश्न न मनाने का फरमान जारी किया। स्वतंत्रता दिवस पर मध्य मुंबई के शिवाजी पार्क स्थित अपने घर की छत पर तिरंगा फहराने वाले एकमात्र नेता वी.डी. सावरकर थे। अपने इस देशभक्तिपूर्ण कार्य के लिए उन्हें अपने हिंदू महासभा के साथियों की निंदा और बहिष्कार का सामना करना पड़ा।
विभाजन योजना पर हस्ताक्षर होने से पहले ही हस्ताक्षरकर्ता राजनीतिक षड्यंत्रों में जुट गए थे। अब सभी गतिविधियों का केंद्र बिंदु एनडब्ल्यूएफपी (उत्तर पश्चिमी पश्चिमी जनजाति) था। पठान समुदाय द्वारा पाकिस्तान में शामिल होने से साफ इनकार जिन्ना के लिए चिंता का विषय था। विभाजन योजना के तहत एनडब्ल्यूएफपी भारत के साथ रहने के लिए मतदान कर सकता था। यदि

ऐसा होता, तो संभावना थी कि सिंध, या कम से कम सिंध के हिंदू बहुल हिस्से, भी पाकिस्तान में शामिल न होने का विकल्प चुनेंगे, जिससे जिन्ना चारों ओर से भारतीय प्रांतों से घिरे रह जाएंगे, उनके पास पंजाब का एक हिस्सा और संभवतः बलूचिस्तान भी होगा। उन्हें एहसास था कि यदि ऐसा हुआ तो उनका नवजात राज्य टिक नहीं पाएगा। इसलिए मुस्लिम लीग ने अपनी सारी शक्ति डॉ. खान साहब की कांग्रेस सरकार को अस्थिर करने में लगा दी। उन्होंने प्रांत में आतंक का राज फैला दिया। उन्होंने यह भी जोर दिया कि प्रांत के भविष्य का फैसला करने के लिए प्रस्तावित जनमत संग्रह तभी कराया जाए जब वहां की कांग्रेस सरकार बर्खास्त हो जाए। हैरानी की बात यह थी कि नई दिल्ली में कांग्रेस नेतृत्व खान बंधुओं की दलीलों के प्रति उदासीन बना रहा। ब्रिटिश औपनिवेशिक प्रशासन और वायसराय से मुस्लिम लीग पर कड़ी कार्रवाई करने के लिए पैरवी करने के बजाय, पटेल और नेहरू ने कुछ नहीं किया; वे उत्तर पश्चिमी वन जनजाति (एनडब्ल्यूएफपी) के भविष्य के प्रति उदासीन प्रतीत हुए। पटेल ने गांधी से तर्क दिया कि खान बंधुओं का अपने प्रांत में अब कोई दबदबा नहीं रहा। गांधी से राजनीतिक षड्यंत्रों और एक-दूसरे से आगे निकलने की होड़ में शामिल होने की उम्मीद नहीं थी, लेकिन पटेल और नेहरू को भारत को एकजुट रखने के इस अवसर को पहचानना चाहिए था। यदि उन्होंने पठानों को भारत के साथ बने रहने के उनके संघर्ष में दृढ़ता से समर्थन दिया होता, तो शायद वे एक ऐसी श्रृंखला प्रतिक्रिया शुरू कर सकते थे जिसे सिंध में दोहराया जा सकता था। परिणामस्वरूप, जिन्ना के पास जो कुछ बचा होता, वह एक देश की बजाय एक रियासत जैसा होता।
जब मुस्लिम लीग ने उत्तरी पश्चिमी कनाडा प्रांत (एनडब्ल्यूएफपी) में हिंसा की लहर फैला दी, तो औपनिवेशिक

प्रशासन की दोहरी नीति और लीग के उद्देश्यों को मौन समर्थन ने डॉ. खान साहब की सरकार को घेर लिया। जब से अशांति फैलनी शुरू हुई, राज्यपाल सर ओलाफ कैरो प्रांत को लीग के हवाले करने पर तुले हुए थे। लोकतांत्रिक रूप से चुनी गई सरकार के साथ मिलकर स्थिति को नियंत्रित करने और उपद्रवियों पर नकेल कसने की कोशिश करने के बजाय, राज्यपाल ने मंत्रियों को बर्खास्त करने का प्रयास किया। अपने मंत्रियों के साथ एक बैठक में उन्होंने कांग्रेस का साथ देने के लिए उन्हें जमकर लताड़ा। उनके अनुसार, उनका—मुसलमानों का—कांग्रेस से कोई लेना-देना नहीं है; उन्हें अपने सहधर्मियों—मुस्लिम लीग—के साथ होना चाहिए। उन्होंने धमकी दी कि अगर वे मुस्लिम लीग के साथ गठबंधन नहीं करते हैं तो उन्हें बर्खास्त कर दिया जाएगा। स्वाभिमानी पठान इतनी आसानी से कुचले जाने वाले नहीं थे। उन्होंने राज्यपाल को चुनौती दी कि वे जो चाहें कर सकते हैं।
जब नए वायसराय ने पदभार संभाला, तो कैरो ने उन्हें प्रांतीय सरकार को बर्खास्त करने के लिए प्रभावित करने का प्रयास किया। उन्होंने प्रांत में कानून-व्यवस्था की स्थिति और प्रांतीय सरकार द्वारा स्थिति को सामान्य करने में असमर्थता को बर्खास्तगी के लिए पर्याप्त कारण बताया। अप्रैल में, जब वायसराय ने एनडब्ल्यूएफपी का दौरा किया, तो कैरो ने नए चुनावों के लिए ज़ोरदार वकालत की। यह अजीब था क्योंकि एक साल पहले ही चुनाव हुए थे, जिसमें कांग्रेस जीती थी। चुनाव पाकिस्तान के मुद्दे पर लड़ा गया था; लीग ने एक स्वतंत्र मुस्लिम मातृभूमि की अपनी मांग के आधार पर ज़ोरदार प्रचार किया था, फिर भी कांग्रेस ने 38 मुस्लिम सीटों में से 21 सीटें जीतीं, साथ ही सभी नौ हिंदू सीटें और तीन में से दो सिख सीटें भी जीतीं। परिणाम से पता चलता

असाधारण रियायतें मिलीं। सीमांत क्षेत्र में 'प्रत्यक्ष कार्रवाई' अभियान कभी बंद नहीं किया गया और 7 मई को जिन्ना ने एक बयान जारी कर सीमांत मुस्लिम लीग के आंदोलन को जारी रखने के निर्णय का समर्थन किया।
कैरो कांग्रेस सरकार को बर्खास्त करने और प्रांत में नए चुनाव कराने पर इतना अड़ा क्यों था? उसका तर्क था कि 'पूरे प्रांत में हिंसक प्रदर्शन' सरकार पर अविश्वास का संकेत दे रहे थे। बादशाह खान ने जोरदार जवाब दिया। दूसरे विश्व युद्ध के छह वर्षों के दौरान सीमांत प्रांत में कोई अशांति नहीं थी। अंग्रेजों को तब शांति की आवश्यकता थी और शांति थी। और अब, उत्तर पश्चिमी सीमा प्रांत में ब्रिटिश सत्ता के सामने, सैकड़ों लोग मारे जा रहे थे और हजारों बेघर हो रहे थे। अपने मंत्रियों द्वारा मांगे गए कड़े कदम उठाने के बजाय, अराजकता को उनके निष्कासन के बहाने के रूप में इस्तेमाल किया जा रहा था, जबकि वे भारी बहुमत से सत्ता में वापस आए थे और अभी भी विधायिका में बहुमत रखते थे! 4 मई 1947 को दिल्ली से जारी एक बयान में, कांग्रेस के महासचिव आचार्य जुगल किशोर और नेहरू द्वारा सीमांत प्रांत भेजे गए दीवान चमनलाल ने रिपोर्ट दी: 'हम हाल ही में सीमांत प्रांत के दौरे से लौटे हैं और हमने जो देखा है उसने हमें बेहद स्तब्ध कर दिया है।' इसमें कोई शक नहीं कि मुस्लिम लीग के समर्थकों ने मंत्रालय के कामकाज को ठप्प करने के उद्देश्य से इन घृणित तरीकों का इस्तेमाल किया है, और न ही हमें इस बात पर कोई संदेह है कि राज्यपाल की पार्टी ने कानून तोड़ने वालों को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रोत्साहन दिया है। यह सर्वविदित है कि वर्तमान राज्यपाल मंत्रालय के पक्षधर नहीं हैं। उनके पद पर बैठे व्यक्ति, जो राजनीतिक विभाग के प्रमुख भी हैं, मंत्रालय के

कामकाज में गंभीर बाधा डाल सकते हैं, क्योंकि बड़ी संख्या में प्रशासनिक अधिकारी दोहरी भूमिका निभाते हैं, वे नागरिक प्रशासक होने के साथ-साथ राजनीतिक एजेंट भी हैं।
डेरा इस्माइल खान में जो कुछ हुआ, वह हमारे लिए आंखें खोलने वाला था। लीग का आंदोलन लगभग खत्म हो चुका था, यहां तक कि गिरफ्तारी के लिए चार से अधिक व्यक्ति मिलना भी मुश्किल हो गया था। यह स्पष्ट था कि आंदोलन की कमर टूट चुकी थी और सब कुछ शांतिपूर्ण था। इस स्थिति में, गुप्त बैठकें आयोजित की गईं, पंजाब और अन्य क्षेत्रों से लोगों को बुलाया गया। अधिकारियों को आसन्न आपदा की पुख्ता जानकारी दी गई। नागरिक प्रशासन के प्रमुख द्वारा सरगनाओं की गिरफ्तारी के लिए बार-बार आदेश जारी किए गए, लेकिन पुलिस अधिकारियों ने बार-बार इन आदेशों का उल्लंघन किया। वास्तव में, मंत्रालय के निर्देशों के तहत पुलिस महानिरीक्षक के आदेशों की भी अवहेलना की गई। इन आदेशों की अवहेलना के परिणामस्वरूप आंदोलनकारियों ने बेखौफ होकर हिंसा का सहारा लिया। पुलिस के पास पर्याप्त बल उपलब्ध था। एक भी प्लाटून को कार्रवाई में नहीं लगाया गया, न ही आंसू गैस का गोला दागा गया, न ही लाठीचार्ज किया गया, यहां तक कि हवा में भी एक गोली नहीं चलाई गई, जिसका अपरिहार्य परिणाम यह हुआ कि पूरे बाजार जलकर राख हो गए और लूट लिए गए। सर ओलाफ कैरो के स्थान पर एक ऐसे राज्यपाल की नियुक्ति की जानी चाहिए जो अल्पसंख्यकों को संरक्षण देने के लिए तैयार हो और जो वर्तमान सरकार के साथ पूर्ण रूप से सहानुभूति और सामंजस्य रखता हो। सरकार को बर्खास्त नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि राज्यपाल और उन अधिकारियों को बर्खास्त किया जाना चाहिए जो उनसे समर्थन की उम्मीद करते हैं और जो कानून-व्यवस्था बनाए रखने में विफल रहे हैं।

कांग्रेस के उच्च कमान ने डॉ. खान साहब की सरकार को बर्खास्त करने और प्रांत में नए चुनाव कराने के खिलाफ कड़ा रुख अपनाया। उन्होंने औपनिवेशिक प्रशासन का बहिष्कार करने और वायसराय तथा ब्रिटिश सरकार के साथ किसी भी तरह की बातचीत से बाहर निकलने की धमकी दी। माउंटबेटन ने तुरंत लीग को स्पष्ट कर दिया कि कांग्रेस के इस अड़ियल रवैये के सामने वे न तो सरकार की बर्खास्तगी और न ही नए चुनाव कराने पर सहमत हो सकते हैं। इसलिए प्रस्ताव को रद्द किया जा रहा था। हताश होकर लीग ने हत्या और आगजनी के अपने कार्यक्रम को और तेज कर दिया।
बादशाह खान को इन घटनाक्रमों में मुस्लिम लीग के सदस्यों और उनके 'विदाई आकाओं, अंग्रेजों' द्वारा रची गई 'एक बड़ी साजिश' की आशंका थी। उन्होंने चेतावनी दी: 'हमने अपने देश में आग लगा दी है, एक ऐसी आग जिससे हम खुद नहीं बच सकते। ये बातें न तो इस्लाम, न मुस्लिम लीग और न ही पाकिस्तान के लिए मददगार हैं। मुस्लिम लीग के सांप्रदायिक आंदोलन को राजनीतिक दर्जा देना बेईमानी है, जिसके अनुयायी अपराधों में लिप्त रहे हैं।' उन्होंने मुस्लिम लीग से अपील की कि वे 'खुदाई खिदमतगारों के साथ एक संयुक्त जिरगा [जनजातीय परिषद] में बैठें', ताकि अंग्रेजों के भारत छोड़ने के बाद उत्पन्न होने वाले विभिन्न महत्वपूर्ण मुद्दों का समाधान किया जा सके। 'यदि वे हमसे भाईचारे की भावना से मिलें और अपने हिंसक तरीकों को त्याग दें, तो हम आज ही अपने मतभेदों को सुलझा सकते हैं। यदि ईमानदारी से प्रयास किया जाए, तो मैं हमारे बीच किसी भी सम्मानजनक समझौते के लिए सहमत हूँ। लीग के सदस्य हिंदू वर्चस्व से डरते हैं, जबकि हम ब्रिटिश वर्चस्व से डरते हैं। आइए हम सब मिलकर एक-दूसरे को समझाएं। हम उनके भय को दूर करने के लिए तैयार हैं। लेकिन क्या वे बदले में हमारे भय को दूर

करेंगे?' यह अपील अनसुनी कर दी गई। लीग की कांग्रेस या खुदाई खिदमतगारों के साथ बैठकर सम्मानजनक समझौता करने की कोई इच्छा नहीं थी, क्योंकि इससे उसे अंग्रेजों से अधिक लाभ मिल सकता था, जो एक ओर तो उन्हें लुभाते रहे, वहीं दूसरी ओर उनके द्वारा किए गए नरसंहार के निरंकुश कृत्यों पर लगातार नाराजगी जताते रहे। कैबिनेट मिशन योजना विफल होने और कांग्रेस एवं लीग द्वारा विभाजन स्वीकार किए जाने के बाद, नई योजना में एक खंड शामिल किया गया जिसमें लीग की इस मांग को स्वीकार किया गया कि सीमांत प्रांत में जनमत संग्रह कराया जाए ताकि यह तय किया जा सके कि परिवर्तित स्थिति में वह किस डोमिनियन में शामिल होगा - भारत में या नए डोमिनियन पाकिस्तान में, यदि पश्चिम पंजाब पाकिस्तान का विकल्प चुनता है। खान बंधुओं और अन्य सीमांत नेताओं को लगा कि यह जल्दबाजी है। उनका मानना था कि भारत के दोनों हिस्सों द्वारा अपने-अपने संविधान बनाने और अंग्रेजों के साथ उनके भविष्य के संबंधों के महत्वपूर्ण प्रश्न पर उनके निर्णय के ज्ञात होने से पहले इस मुद्दे का उचित निर्णय नहीं लिया जा सकता। ब्रिटिश-पश्चिम एशिया की साम्राज्यवादी कूटनीति के उनके पिछले अनुभव ने उन्हें अंग्रेजों से अत्यधिक सावधान रहना सिखाया था। 3 जून 1947 को विभाजन योजना के प्रकाशन के तुरंत बाद जारी एक बयान में बादशाह खान ने कहा: 'यह मुस्लिम लीग के लिए जीत हो सकती है, लेकिन इस्लाम के लिए नहीं। दो भारत होंगे, जिनमें से प्रत्येक को संबंधित संविधान सभाओं के निर्णय तक डोमिनियन का दर्जा दिया जाएगा।' पठान एक दिन के लिए भी स्वतंत्र राज्य का दर्जा नहीं चाहते। वे अपना संविधान बनाना और भारत के उस हिस्से से गठबंधन करना पसंद करेंगे जो उन्हें पूर्ण स्वतंत्रता

प्रदान करे। पठान पूरी दुनिया के मित्र होंगे और किसी के शत्रु नहीं।
'मेरी राय में जनमत संग्रह का सवाल ही नहीं उठता। लेकिन अगर यह बिना किसी दबाव या बाहरी प्रभाव के कराया जाए तो मैं इसका सहर्ष स्वागत करूंगा। पूरा भारत जानता है कि सीमांत प्रांत ने हाल ही में कितनी कठिनाइयों का सामना किया है और आगे भी करना पड़ सकता है। इसलिए मेरी सलाह यही होगी कि जब तक राजनीतिक माहौल शांत न हो जाए, सीमांत प्रांत को अकेला छोड़ दिया जाए। जब दोनों पक्ष अंतिम स्वतंत्रता या ब्रिटिश राष्ट्रमंडल की सदस्यता के मुद्दे पर निर्णय ले लें, तब उससे राय मांगी जा सकती है।' सीमांत क्षेत्र के नेताओं को यह भी लगा कि जिस मुद्दे पर जनता का मत मांगा जा रहा है, वह गलत है। इससे पठानों का मन भ्रमित होगा और मुस्लिम लीग इसका फायदा उठाकर सांप्रदायिक भावनाएं भड़काएगी तथा पठानों में फूट डालेगी, जिसका परिणाम गृहयुद्ध और अंतहीन रक्तपात होगा। उनका मानना था कि यदि पठान स्वायत्तता के मुद्दे पर जनमत संग्रह कराया गया, तो सभी पठान एकजुट होकर 'आजादी' की मांग करेंगे। उन्होंने मांग की कि सीमांत क्षेत्र के लोगों को पाकिस्तान और पठानिस्तान के बीच चुनाव करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए, जो उनके द्वारा निर्मित एक संविधान के तहत पश्तू भाषी लोगों की एक स्वायत्त इकाई हो। पठानिस्तान तब यह तय करेगा कि वह किस हिस्से में शामिल होगा, जब भारत और पाकिस्तान के संबंधित संविधानों की पूरी तस्वीर उसके सामने होगी।
गांधी ने खान बंधुओं के प्रस्ताव का समर्थन किया। उन्होंने माना कि यदि प्रस्तावित जनमत संग्रह 'पाकिस्तान बनाम हिंदुस्तान' पर आधारित होता, तो मौजूदा हालात में कट्टरपंथी

इसे गलत तरीके से पेश करते। पठानों से पूछा जाता, 'क्या आप हिंदुओं के साथ हैं या अपने मुस्लिम भाइयों के साथ?' कांग्रेस एक हिंदू संगठन नहीं थी, लेकिन इन परिस्थितियों में पठान असमंजस में पड़ जाते। 'दोनों दलों को पठानों की भावनाओं का सम्मान करना चाहिए और पठानों को आंतरिक मामलों और प्रशासन के लिए अपना संविधान बनाने की अनुमति देनी चाहिए। इससे पठान एकजुटता को बढ़ावा मिलेगा और आंतरिक संघर्ष से बचा जा सकेगा, जिससे वे पाकिस्तान या भारत संघ के साथ बेहतर ढंग से जुड़ सकेंगे। यह जनमत संग्रह हो या न हो, इससे अप्रभावित रहना चाहिए। कोई भी समय से पहले जनमत संग्रह कराना अंधेरे में छलांग लगाने जैसा होगा।'
पठान एक गौरवशाली पहाड़ी जाति थे और जैसा कि पूरी दुनिया में होता है, वे मैदानी इलाकों के लोगों के प्रभुत्व के विरोधी थे। उस समय बन रहे पाकिस्तान में यह स्पष्ट था कि पंजाबी मुस्लिम जमींदार और व्यापारी अपना दबदबा कायम कर रहे थे। पठानों को डर था कि पंजाब का आधा हिस्सा खोने के बाद, पंजाबी नवाब उत्तरी पश्चिमी खाड़ी (एनडब्ल्यूएफपी) की ज़मीनों पर कब्ज़ा करके नए राज्य स्थापित कर लेंगे। पाकिस्तान में पंजाबी मुसलमानों के इस प्रभुत्व का विरोध न केवल पठानों ने किया, बल्कि पूर्वी पाकिस्तान के बंगालियों और सिंध के नागरिकों ने भी किया। 1971 में पंजाबी मुसलमानों के इसी वर्चस्व ने बंगालियों को स्वतंत्रता संग्राम छेड़ने और पाकिस्तान से अलग होने के लिए मजबूर किया। कश्मीर की स्थिति भी कुछ ऐसी ही थी; कश्मीरी मुसलमान पाकिस्तान में पंजाबी मुसलमानों के अधीन होने की कल्पना भी नहीं कर सकते थे; यह अविश्वास आज भी बना हुआ है।

खान बंधुओं और गांधी तथा विभिन्न कांग्रेस नेताओं के बीच पत्रों का तांता लगा रहा। गांधी ने कांग्रेस नेताओं को सलाह दी और वायसराय तथा जिन्ना से भी परामर्श किया। उनका यह सुझाव कि यदि पठानों की स्वायत्त मातृभूमि की मांग पूरी नहीं हुई तो उन्हें सत्याग्रह का सहारा लेना चाहिए, किसी ने नहीं माना। खान बंधुओं को डर था कि पंजाबी मुस्लिम बहुल मुस्लिम लीग से टकराव के कारण अनगिनत रक्तपात होंगे और पख्तून जनजातियाँ गृहयुद्ध में उलझ जाएँगी। महीनों की बातचीत और जिन्ना को समझाने के प्रयासों के बाद, पख्तून राजनेताओं ने जनमत संग्रह से दूर रहने का फैसला किया। मुस्लिम लीग ने औपनिवेशिक प्रशासन और ब्रिटिश राजनीतिक विभाग की चालों की मदद से एक बार फिर अपनी मनचाही चीज़ हासिल कर ली। अंततः, सांप्रदायिक आधार पर जनमत संग्रह कराया गया और मुस्लिम लीग तथा उसके ब्रिटिश संरक्षकों की इच्छा के अनुरूप परिणाम सामने आया— उत्तरी पश्चिमी पश्चिमी खाड़ी पाकिस्तान का हिस्सा बन गया। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान ब्रिटिश जेलों के अनगिनत दौरे करने के बाद, बादशाह खान ने अपने शेष जीवन का अधिकांश समय पाकिस्तान में नजरबंदी में बिताया। प्यारेलाल ने महात्मा गांधी: द लास्ट फेज, खंड 10, भाग II में स्थिति का सारांश इस प्रकार दिया है: 'सीमा प्रांत में हो रहे घटनाक्रम ने गांधीजी को अत्यंत दुखी कर दिया था। विभाजन जिस तरह से हो रहा था, ठीक उसी तरह विभाजन का निर्णय भी शांति का संकेत नहीं दे रहा था। उन्होंने प्रार्थना के बाद दिए गए अपने एक भाषण में कहा, "लॉर्ड माउंटबेटन की मंशा अच्छी है, लेकिन मुझे डर है कि जिस तरह से वे आगे बढ़ रहे हैं, अनजाने में वे अथाह नुकसान पहुंचा सकते हैं।" तत्काल राहत पाने की बेचैनी में, वास्तविकताओं का सामना करने की अनिच्छा थी और दिखावटी तथा झूठे

समझौतों का सहारा लिया जा रहा था। ब्रिटिश सत्ता के पतन के संबंध में गांधीजी की भविष्यवाणी सच हो रही थी। इसमें गहरी दरारें दिखाई दे रही थीं। अतीत में, जब अपने हित दांव पर होते थे, तो सत्ता कड़े कदम उठाने से नहीं हिचकिचाती थी; लेकिन अब वह अपनी गंभीर घोषणा के पूर्ण तर्क का सामना करने और हिंसा को दृढ़ता से दबाने के लिए तैयार नहीं थी।'
गांधीजी को इसमें कोई भला नहीं दिख रहा था। अंग्रेजों के हाथों विभाजन स्वीकार करके कांग्रेस ने एक खुले गृहयुद्ध को तो टाल दिया था, लेकिन इसकी कीमत एक सुलगते हुए अघोषित युद्ध को जन्म देना था। गांधीजी तो नग्न वास्तविकता को ही पसंद करते। एक खुला संघर्ष, चाहे कितना भी भयंकर क्यों न हो, स्वाभाविक रूप से शांति के दौर में समाप्त होता है और कम से कम कुछ समय के लिए एक प्रकार की सुरक्षा प्रदान करता है। लेकिन एक अघोषित युद्ध, जिसे केवल किसी तीसरे पक्ष की सशस्त्र शक्ति ही खुले संघर्ष में बदलने से रोकती है, केवल खतरनाक भावनाओं को और तीव्र करता है। और जैसे मानसिक हिंसा अक्सर शारीरिक हिंसा की तुलना में अधिक उग्र हो जाती है, वैसे ही जब ऐसी हिंसा अंततः भड़क उठती है, तो वह बिजली की तरह प्रचंड क्रोध के साथ भड़कती है, जो अपने पीछे केवल मृत्यु और विनाश का निशान छोड़ जाती है।
इसीलिए गांधीजी ब्रिटिश शासन के तहत विभाजन के घोर विरोधी थे। विभाजन के जो परिणाम सामने आ रहे थे, उनमें उन्हें अपने सबसे बुरे डर की पुष्टि दिखाई दे रही थी। कांग्रेस हाई कमांड ने लीग की विध्वंसक गतिविधियों से खुद को और देश को राहत दिलाने के लिए भारत के विभाजन पर सहमति दे दी थी। पंडित नेहरू के कठोर शब्दों में कहें तो, उन्होंने सिरदर्द से छुटकारा पाने के लिए अपना ही सिर काट लिया था। उन्हें वैसी ही राहत मिली, जैसे किसी अपंग

व्यक्ति को, जिसका अंग कट जाने के बाद "अदृश्य अंग" पहले से भी अधिक दर्द करता रहता है।
कांग्रेस नेताओं को उम्मीद थी कि विभाजन योजना को स्वीकार किए जाने के तुरंत बाद अंतरिम सरकार में मुस्लिम लीग के सदस्यों को हटा दिया जाएगा, जिससे वे बिना किसी दखल के नवगठित स्वतंत्र राष्ट्र का प्रशासन कर सकेंगे। उन्होंने इसके लिए दबाव बनाना शुरू कर दिया, लेकिन माउंटबेटन इस मुद्दे पर आगे बढ़ने से हिचकिचा रहे थे। जिन्ना ने तुरंत खतरे को भांप लिया; अगर लीग के सदस्यों को अब अंतरिम सरकार से हटा दिया जाता, तो पाकिस्तान के अस्तित्व में आने तक उनके पास कोई शक्ति नहीं होती और कांग्रेस का ही देश पर पूर्ण शासन होता। उन्होंने तुरंत विभाजन योजना से बाहर निकलने और 'प्रत्यक्ष कार्रवाई' का सहारा लेने की धमकी दी। माउंटबेटन ने संकोच किया क्योंकि वे सत्ता हस्तांतरण को खतरे में नहीं डालना चाहते थे। माउंटबेटन को भारत और पाकिस्तान का गवर्नर जनरल नियुक्त किए जाने का मुद्दा अभी भी पुष्टि के लिए लंबित था। कांग्रेस सहमत थी, लेकिन जिन्ना ने अभी तक पुष्टि नहीं की थी। यही उनका तुरुप का पत्ता था। वायसराय के सलाहकारों का मानना था कि इन परिस्थितियों में उन्हें ऐसा कोई कदम नहीं उठाना चाहिए जिससे उनकी 'उद्देश्यपूर्ण और लगभग न्यायिक स्थिति' खतरे में पड़ जाए। एक समझौते के तौर पर, माउंटबेटन ने सुझाव दिया कि अंतरिम सरकार में सभी विवादास्पद मुद्दों को यथासंभव स्थगित कर दिया जाए, जबकि दैनिक प्रशासन के दौरान उत्पन्न होने वाले विवादास्पद मुद्दों को मंत्रिमंडल में बहुमत से निर्णय लेने के बजाय उनके समक्ष प्रस्तुत किया जाए। इससे उन्हें अस्थायी राहत मिली, लेकिन तनाव जारी रहा।

देश भर में हालात तेज़ी से बिगड़ रहे थे। पंजाब, बंगाल और उत्तर पश्चिमी खाड़ी प्रांत (एनडब्ल्यूएफपी) से हिंसा, हत्या और आगजनी की रोज़ाना खबरें आ रही थीं। विभाजन के परिणामस्वरूप सबसे अधिक नुकसान झेल रहे सिख समुदाय में अशांति फैल रही थी। सिंध और एनडब्ल्यूएफपी के अल्पसंख्यक पाकिस्तान में अपने भविष्य को लेकर लगातार असुरक्षित होते जा रहे थे। पश्चिमी पंजाब से शरणार्थियों का आना अब एक नियमित प्रवाह बन गया था। राजधानी के आसपास भी स्थिति गंभीर थी। गुड़गांव जिले के मुस्लिम मेवों और हिंदू अहीरों और जाटों के बीच भीषण झड़पों की खबरें थीं। पटेल, जिन्होंने भारत की एकता और स्थिरता के लिए मुस्लिम लीग से उत्पन्न खतरे को खत्म करने के लिए विभाजन पर सहमति जताई थी, उन्हें यह देखकर निराशा हुई कि अंतरिम सरकार और प्रशासन में मुस्लिम लीग का गढ़ अभी भी मज़बूती से जमा हुआ था और वे बिगड़ती स्थिति से निपटने के लिए कुछ नहीं कर सकते थे। उन्होंने मुख्य समस्या को हल कर दिया था, लेकिन समस्या का समाधान नहीं हुआ।
ऑल इंडिया मुस्लिम लीग की परिषद द्वारा विभाजन योजना को स्वीकार करने वाला प्रस्ताव पारित करने के अगले दिन, गांधी ने एक बार फिर माउंटबेटन को पत्र लिखकर उन्हें मामले को यूं ही टालने के खतरे से अवगत कराया: 'जितनी जल्दी एक समरूप मंत्रिमंडल का गठन हो जाए उतना ही बेहतर है। किसी भी हालत में लीग के नामित सदस्य पूरे मंत्रिमंडल से स्वतंत्र रूप से काम नहीं कर सकते। यह एक कुटिल बात है कि प्रत्येक सदस्य के हर कार्य के लिए संयुक्त जिम्मेदारी तय की जाती है... नागरिक और सैन्य सेवाओं की समस्या के लिए भी इसी तरह के दृढ़ समाधान की आवश्यकता है।

गुड़गांव का संघर्ष इसका एक उदाहरण है; जहां तक मुझे पता है, एक अकेला अधिकारी इस गड़बड़ी को जारी रखने के लिए जिम्मेदार है।' अंत में, मैं यह कहना चाहूंगा कि सभी पक्षों को प्रसन्न करने का प्रयास व्यर्थ और निरर्थक है। हमारी बातचीत के दौरान, मैंने सुझाव दिया था कि दोनों पक्षों की समान रूप से प्रशंसा करना उचित नहीं था। कोई प्रशंसा न करना ही सही होता। "कर्तव्य तभी पुण्य कहलाता है जब ऋण दान बन जाता है।" सुधार करने में अभी देर नहीं हुई है। एक योद्धा के रूप में आपकी निर्विवाद कुशलता की आज जितनी आवश्यकता है, उतनी पहले कभी नहीं थी।
लेकिन राजनीतिक प्रशासक माउंटबेटन, योद्धा माउंटबेटन पर हावी हो गए, और इसलिए उन्होंने अपने एजेंडे पर काम करना जारी रखा, उस व्यक्ति की गंभीर चेतावनियों को अनदेखा करते हुए, जिसे उस समय दूरदर्शिता प्राप्त थी। गांधीजी को डर था कि अपने सभी अच्छे इरादों के बावजूद, माउंटबेटन अपनी ही मजबूरियों और औपनिवेशिक प्रशासन की बेड़ियों से बंधे रहेंगे, और इस प्रकार कैबिनेट मिशन की भारत यात्रा के बाद से अपनाई गई नीति में आमूलचूल परिवर्तन किए बिना आसन्न त्रासदी को टालने में असमर्थ रहेंगे। गांधीजी को अब भी लगता था कि भारत के लिए कैबिनेट मिशन की योजना माउंटबेटन की विभाजन योजना से बेहतर होगी। उन्होंने वायसराय को अपने दृष्टिकोण से मुद्दों को देखने के लिए मनाने का अंतिम प्रयास करने का निर्णय लिया। 27 जून की मध्यरात्रि को गांधीजी ने वायसराय को पत्र लिखा। चूंकि उन्होंने मध्यरात्रि के बाद लिखना समाप्त किया, इसलिए पत्र पर 27/28 जून, 1947 की तिथि अंकित है: 'मैंने आपको दोपहर में एक नोट भेजा था।' शाम की प्रार्थना और सैर के बाद का समय मैं आपसे कुछ ऐसे मामलों पर बात

करने के लिए समर्पित करना चाहता हूँ जिन पर हमारी मुलाकात के दौरान चर्चा तो हुई थी लेकिन विस्तार से बात नहीं हो सकी। मैंने कैबिनेट मिशन का नेतृत्व करने वाले संसदीय प्रतिनिधिमंडल और स्वयं कैबिनेट मिशन से कहा था कि उन्हें दो या तीन दलों में से किसी एक को चुनना होगा। यदि वे सभी को सही मानकर सबको खुश करने की कोशिश करेंगे, तो उनकी असफलता निश्चित है। मुझे आशा थी कि आप साहस और ईमानदारी से इस असंभव स्थिति से निकलने का प्रयास कर रहे हैं। लेकिन मेरी आंखें तब खुलीं जब, यदि मैंने आपको सही समझा है, आपने कहा कि कायद-ए-आजम जिन्ना और लीग के सदस्य कांग्रेस सदस्यों के बराबर ही सही थे और संभवतः कायद-ए-आजम जिन्ना अधिक सही थे। मैंने सुझाव दिया कि यह मानवीय रूप से संभव नहीं है। किसी एक को तुलनात्मक रूप से पूरी तरह सही होना चाहिए। आपको इस देश के इतिहास के इस अत्यंत महत्वपूर्ण मोड़ पर अपना चुनाव करना होगा। यदि आप सोचते हैं कि कायद-ए-आजम जिन्ना समग्र रूप से कांग्रेस से अधिक सही और अधिक जिम्मेदार हैं, तो आपको लीग को अपना सलाहकार चुनना चाहिए और सभी मामलों में स्पष्ट और खुले तौर पर उनका मार्गदर्शन लेना चाहिए।
आपने संकेत दिया था कि कायद-ए-आजम आपको 15 अगस्त तक भी इस्तीफा नहीं देने देंगे, खासकर अगर कांग्रेस सदस्य सहयोगात्मक रवैया नहीं अपनाते हैं। यह मेरे लिए चौंकाने वाला बयान था। मैंने भारत को दो भागों में बांटने में अंग्रेजों की भूमिका की प्रारंभिक गलती की ओर इशारा किया था। इस गलती को सुधारा नहीं जा सकता। लेकिन मेरा मानना है कि इस गलती को महत्व न देना बिल्कुल संभव और आवश्यक है। इससे निष्पक्षता के प्रशंसनीय सिद्धांत पर कोई आहत नहीं होता। निष्पक्षता की मांग है कि मैं गलती करने वाले पक्ष को यह भ्रम पैदा करने में मदद न करूं कि गलती कोई गलती

नहीं थी, बल्कि एक दायित्व का विलंबित और केवल आंशिक निर्वहन था।
आपने मुझे यह कहकर चौंका दिया कि यदि ब्रिटिश शासन के दौरान विभाजन न हुआ होता, तो हिंदू, जो कि बहुसंख्यक पक्ष थे, विभाजन की अनुमति कभी नहीं देते और मुसलमानों को बलपूर्वक अपने अधीन रखते। मैंने आपसे कहा कि यह एक गंभीर त्रुटि है। इस संदर्भ में संख्या का प्रश्न बिल्कुल निराधार था। मैंने एक लाख से भी कम ब्रिटिश सैनिकों द्वारा भारत को पूर्णतः अधीन रखने का उत्कृष्ट उदाहरण दिया। आपने दोनों उदाहरणों में कोई समानता नहीं देखी। मैंने सुझाव दिया कि अंतर केवल संख्या का है।
मैं निम्नलिखित बातों को आपके विचारार्थ प्रस्तुत करता हूँ: (क) कांग्रेस ने स्पष्ट रूप से घोषणा की है कि वह बलपूर्वक कोई भी आयोजन नहीं करेगी।
संघ के भीतर का प्रांत।
(ख) लाखों जाति-ग्रस्त हिंदुओं के लिए सभा आयोजित करना शारीरिक रूप से असंभव है।
बलपूर्वक अधीन किए गए लाखों मुसलमानों में से, हालांकि वे अच्छी तरह से एकजुट थे। (ग) यह नहीं भूलना चाहिए कि मुस्लिम राजवंशों ने उत्तरोत्तर प्रगति की है।
उन्होंने भारत को ठीक उसी तरीके से अपने अधीन किया, जैसे अंग्रेजों ने किया था।
बाद में किया।
(घ) मुस्लिम पक्ष को अपने पक्ष में करने के लिए पहले से ही एक आंदोलन चल रहा है।

तथाकथित अनुसूचित वर्ग और तथाकथित आदिवासी जातियाँ। (ई) जातिवादी हिंदू, जो भय का कारण हैं, यह निर्णायक रूप से सिद्ध किया जा सकता है,
एक निराशाजनक अल्पसंख्यक वर्ग। इनमें से सशस्त्र राजपूत अभी तक राष्ट्रवादी नहीं हैं।
एक वर्ग के रूप में। ब्राह्मण और बनिया अभी भी इनके उपयोग में अप्रशिक्षित हैं।
शस्त्र। उनकी सर्वोच्चता, जहाँ भी मौजूद है, विशुद्ध रूप से नैतिक है। शूद्र
गिनती, मुझे खेद है, किसी और चीज़ से ज़्यादा शेड्यूल क्लास की तरह है।
हिंदू समाज मात्र अपनी संख्यात्मक श्रेष्ठता के कारण कुचल सकता है
लाखों मुसलमानों की बात एक चौंकाने वाला मिथक है।
'इससे आपको यह पता चल जाएगा कि क्यों, भले ही मैं अकेला हूँ, मैं अहिंसा और सत्य की शपथ लेता हूँ, जो सर्वोच्च स्तर के साहस का प्रतीक हैं, जिसके सामने परमाणु बम भी महत्वहीन हो जाता है, युद्धपोतों के बेड़े की तो बात ही छोड़ दें।'
मैंने इसे अपने किसी भी दोस्त को नहीं दिखाया है।
माउंटबेटन ने उसी दिन उत्तर दिया: 'मुझे खुशी है कि आपने पत्र लिखा, क्योंकि आपका पत्र पढ़ने के बाद मुझे लगता है कि शुरू से अंत तक मैं आपको अपना अर्थ स्पष्ट रूप से समझाने में असफल रहा। मुझे खुशी है कि आपने अपना पत्र दूसरों को नहीं दिखाया, क्योंकि मुझे बहुत खेद होता अगर मेरे नाम से ऐसे विचार जोड़े जाते जो मैंने वास्तव में व्यक्त नहीं किए थे। मुझे आशा है कि आप हमारी अगली मुलाकात में इन मामलों पर फिर से चर्चा करने के लिए सहमत

होंगे।' दुर्भाग्य से, इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि दोनों ने कभी इन मामलों पर दोबारा चर्चा की। सच्चाई यही है कि अपने तमाम प्रयासों के बावजूद, गांधी अपने देश के लिए जो सही मानते थे, उस पर किसी को भी विश्वास दिलाने में असफल रहे।
जून के आखिरी सप्ताह और जुलाई की शुरुआत में कांग्रेस और लीग मंत्रियों के बीच टकराव चरम पर पहुंच गया। स्थिति इतनी अस्थिर हो गई कि गुस्से में आकर सभी कांग्रेस मंत्रियों ने सरकार से बाहर चले जाने की धमकी दे दी। अंतरिम सरकार में लीग मंत्रियों के बने रहने का सवाल अब टाला नहीं जा सकता था। हमेशा की तरह समस्या खड़ी करने के बजाय, जिन्ना ने ही इसका समाधान किया। उन्होंने घोषणा की कि वे स्वयं पाकिस्तान के गवर्नर जनरल होंगे। माउंटबेटन अब कार्रवाई करने के लिए स्वतंत्र महसूस कर रहे थे। जिन्ना ने एक बार फिर लीग मंत्रियों द्वारा अपने पोर्टफोलियो छोड़ने को प्रतिष्ठा का मुद्दा बनाया, 'लीग मंत्रियों से उनके पोर्टफोलियो छोड़ने के लिए कहना अपमान की बात होगी। लीग इस तरह के अपमान को बर्दाश्त नहीं करेगी।' जब माउंटबेटन ने एक ऐसा फॉर्मूला सुझाया जिससे सभी संतुष्ट हो जाएं, तो जिन्ना ने वायसराय की अंतरिम सरकार के पुनर्गठन की योजना को 1935 के भारत सरकार अधिनियम के तहत 'अवैध' घोषित करने की धमकी दी। लंदन से प्राप्त कानूनी राय से जिन्ना की आपत्तियों का समर्थन होता प्रतीत हुआ। माउंटबेटन को कुछ समय की मोहलत मिल गई। वह यह साबित कर सकता था कि उसने प्रयास किए थे और कानूनी वैधता का हवाला देकर जिन्ना की दादागिरी वाली रणनीति को भी उचित ठहरा सकता था। यह सिलसिला जुलाई के तीसरे सप्ताह तक चला।

19 जुलाई 1947 को भारतीय स्वतंत्रता विधेयक ब्रिटिश संसद द्वारा पारित किया गया और इसे शाही स्वीकृति प्राप्त हुई। वायसराय ने अंतरिम सरकार का पुनर्गठन किया और व्यावहारिक रूप से इसे दो अस्थायी प्रशासनों में विभाजित किया: एक भारतीय संघ के लिए और दूसरा पाकिस्तान के लिए। दोनों भाग केवल समान हितों के मामलों पर ही एक-दूसरे से परामर्श करेंगे, लेकिन अन्य सभी मामलों में एक-दूसरे से स्वतंत्र रूप से कार्य करेंगे। तीनों दलों के नेताओं द्वारा विभाजन योजना को स्वीकृति देने के कुछ दिनों बाद, वायसराय की अध्यक्षता में कांग्रेस, लीग और सिखों के प्रतिनिधियों वाली एक छोटी उच्च-स्तरीय समिति का गठन किया गया। यह समूह विभाजन और सत्ता हस्तांतरण के निर्णय से उत्पन्न विभिन्न समस्याओं पर विचार करेगा। पंजाब और बंगाल प्रांतों द्वारा अपने-अपने विभाजन के पक्ष में निर्णय लेने के बाद, इस समिति के स्थान पर एक विभाजन परिषद का गठन किया गया, जिसे अंतिम निर्णय लेने के लिए व्यापक शक्तियां और अधिकार दिए गए। एक प्रेस विज्ञप्ति जारी की गई जिसमें कहा गया कि परिषद में सभी दलों ने वायसराय के समक्ष सहमति व्यक्त की थी कि विभाजन 'भाईचारे की भावना' से संपन्न किया जाएगा। गांधी जी व्यक्त किए गए विचारों की सत्यता को लेकर संशय में थे; उनके अनुभव ने उन्हें कुछ और ही सिखाया था। एक बातचीत के दौरान उन्होंने कहा, 'मुझे डर है कि हम खुद को और जनता को धोखा दे रहे हैं।'
पंजाब और बंगाल सीमा आयोगों के अध्यक्ष के रूप में सर सिरिल रेडक्लिफ को आमंत्रित करने का निर्णय लिया गया। उन्हें दोनों प्रांतों के दो भागों की सीमाओं का निर्धारण 'मुस्लिम और गैर-मुस्लिम बहुसंख्यक क्षेत्रों का पता लगाने के आधार पर' करना था। ऐसा करते समय उन्हें 'अन्य कारकों' को भी ध्यान में रखना था।

इससे दोनों पक्षों को उम्मीद जगी कि सीमा आयोग उन्हें उनकी अपेक्षा से कहीं अधिक लाभ देगा। मुस्लिम लीग को उम्मीद थी कि उन्हें कलकत्ता मिलेगा और सिखों को उम्मीद थी कि उनकी संपत्ति और अन्य योग्यताएं उन्हें पंजाब में बेहतर अवसर प्रदान करेंगी। सभी पक्षों की अपेक्षाएं बहुत अधिक थीं; यह स्पष्ट था कि सभी अपेक्षाएं पूरी नहीं हो सकती थीं, और अधूरी अपेक्षाओं से उत्पन्न निराशाओं ने मौजूदा तनाव को और बढ़ा दिया।
जून के उत्तरार्ध में लाहौर और अमृतसर के पड़ोसी शहरों में उत्तेजना चरम पर थी। दोनों शहर पंजाब के विवादित क्षेत्र में स्थित थे; दोनों में मुख्य रूप से हिंदू और सिख आबादी थी और ये शहर मुख्य रूप से अपनी पूंजी और उद्यम के बल पर विकसित हुए थे। वाणिज्यिक और औद्योगिक संपत्तियों तथा चल और अचल संपत्ति का अधिकांश हिस्सा इन्हीं शहरों के स्वामित्व में था। अमृतसर सिखों की धार्मिक राजधानी थी और लाहौर महाराजा रणजीत सिंह द्वारा स्थापित सिख साम्राज्य की राजधानी थी। मुस्लिम लीग ने 'राजनीतिक आधार' पर दोनों शहरों को पाकिस्तान में शामिल करने की मांग की। विभाजन योजना की घोषणा के बाद से ही दोनों शहर पूर्ण अराजकता की चपेट में थे। लाहौर में एक ही दिन में सौ से अधिक घर जलकर राख हो गए। जैसे-जैसे जून का महीना बीतता गया, शरणार्थी समस्या ने गांधीजी का अधिक समय और ध्यान आकर्षित करना शुरू कर दिया। उनमें से कुछ ने गांधीजी को हरिद्वार जाने की सलाह दी, जहां रावलपिंडी और पश्चिमी पंजाब के विभिन्न अन्य शहरों से आए 32,000 शरणार्थी लगभग आधा दर्जन शरणार्थी शिविरों में एक साथ रह रहे थे।

शिविरों के प्रभारी अधिकारियों ने गांधीजी को माला पहनाने की कोशिश की, लेकिन उन्हें मौखिक फटकार ही मिली। इसके बाद गांधीजी ने सभी शरणार्थी शिविरों का दौरा किया।
हरिद्वार शरणार्थी शिविर के दौरे के अगले दिन रॉयटर्स की एक खबर ने गांधीजी का ध्यान खींचा। इसमें लंदन में संसद में स्वतंत्रता विधेयक पेश किए जाने के उपलक्ष्य में आयोजित होने वाले एक भव्य समारोह का वर्णन था, जिसमें दो राष्ट्रों के जन्म की घोषणा की गई थी। भारत के आसन्न विभाजन को लेकर इंग्लैंड में एक तरह का लापरवाही भरा रवैया था। ऐसा नहीं था कि वे स्वतंत्रता से पहले और बाद में होने वाली त्रासदी और हिंसा से अनभिज्ञ थे। लॉर्ड पेथिक-लॉरेंस ने स्वतंत्रता विधेयक पर बहस के दौरान संसद में एक हल्का-फुल्का भाषण दिया। कैम्ब्रिज में अपने छात्र जीवन की एक घटना का वर्णन करते हुए उन्होंने कहा कि एक दिन दोपहर में उनका कॉलेज पोर्टर उन्हें छोड़कर घर चला गया क्योंकि उसकी पत्नी को उसी शाम बच्चे को जन्म देना था। अगली सुबह वह उदास चेहरे के साथ लौटा और बताया कि जिस एक बच्चे की उसे उम्मीद थी, उसकी जगह उसकी पत्नी ने उसे जुड़वां बच्चे दिए हैं! 'कुछ ऐसा ही भारत में हुआ है। भारत माता बहुत लंबे समय से प्रसव पीड़ा से गुजर रही थी, और हर कोई सोच रहा था कि जन्म लेने वाले शिशु का स्वभाव कैसा होगा। और देखो!' भारत माता की कोख से एक राज्य के उभरने के बजाय, विधेयक में वर्णित अनुसार दो राज्यों का उदय हो रहा है।
ब्रिटिशों ने भारतीय एकता को अपनी सबसे बड़ी उपलब्धि माना और इसके विखंडन पर खेद व्यक्त किया। वायसराय ने भारतीय नेताओं से यह भी कहा था कि विधेयक में एक विशेष प्रावधान जोड़ा गया है ताकि अलग होने वाले लोग आपसी सहमति से संघ में वापस आ सकें।

गांधीजी को लगा कि यदि रॉयटर्स की रिपोर्ट पर भरोसा किया जाए, तो ब्रिटिश संसद भारत के विभाजन को ऐसे धूमधाम से मंजूरी देने जा रही है जो वायसराय द्वारा कही गई बातों के बिल्कुल विपरीत है।
गांधी जी ने 23 जून को अपनी प्रार्थना सभा में कहा, “आज अखबारों में लंदन में होने वाले एक भव्य समारोह की बात हो रही है, जिसमें भारत को “दो राष्ट्रों” में विभाजित किया जाएगा, जबकि कुछ ही दिन पहले तक वह एक राष्ट्र था। इस त्रासदी में खुश होने की क्या बात है? हमने इस विश्वास को अपनाया है कि भले ही हम अलग हो रहे हैं, लेकिन हम एक ही परिवार के मित्र और भाई-बहन के रूप में अलग हो रहे हैं। अब, अगर अखबारों की खबर सही है, तो अंग्रेज हमें “दो राष्ट्र” बना देंगे और वह भी तुरही बजाकर। क्या यही अंतिम प्रहार होगा? मुझे उम्मीद है कि ऐसा नहीं होगा।” उन्होंने पूछा, “लोग इस चुनौती का सामना कैसे करेंगे? भारत का यह विभाजन और प्रांतों का उप-विभाजन हमारी परीक्षा लेता है। अगर प्रमुख सहयोगी अपने सिद्धांतों पर खरा उतरता है, तो विभाजन से बचने के बजाय, चाहे वह कितना भी अप्रिय क्यों न हो, प्रमुख सहयोगी के सही व्यवहार से, हमेशा एक राष्ट्र के रूप में कार्य करने से, और मुस्लिम अल्पसंख्यकों को उनके ही घर में परदेसी न मानने से, भविष्य में आने वाली बुद्धिमत्ता को गलत साबित किया जा सकता है।”
उन्होंने पटेल को लिखा: 'आज के अखबारों में रॉयटर्स की खबर देखिए। यह विधेयक दो राष्ट्रों का निर्माण करेगा!!! फिर यहां चल रही इन खोखली बातों का क्या मतलब है? अगर आपने इस पर अपनी सहमति नहीं दी है तो आप भारतीय राष्ट्र के खिलाफ इस अपराध को रोक सकते हैं। विधेयक पारित होने के बाद कोई आपकी बात नहीं सुनेगा।' कुछ

दिनों बाद गांधी को वायसराय का एक पत्र मिला जिसमें लिखा था कि नेहरू, पटेल और वे तीनों महसूस करते हैं कि गांधी को भारतीय स्वतंत्रता विधेयक 'निस्संदेह दिखाया जाना चाहिए'। तदनुसार, गांधी अगले दिन सुबह कांग्रेस नेताओं के साथ वायसराय के पास गए। विधेयक के मसौदे पर उनकी तत्काल प्रतिक्रियाएँ दर्ज हैं, जो आंशिक रूप से पेंसिल और आंशिक रूप से स्याही से लिखी गई हैं।
1. यदि इसे शामिल नहीं किया जा सकता है, तो कुछ घोषणा की जानी चाहिए।
क़ानून के अनुसार, प्रभुत्व का दर्जा अस्थायी होगा।
2. दोनों के साथ समान व्यवहार किया जाएगा।
3. ऐसा कोई प्रमाण नहीं है जिससे यह साबित हो कि पाकिस्तान एक अलग देश है और यह इकाई
इसके बावजूद भारत को बरकरार रखा गया है।
4. कोई भी प्रांत बिना सहमति के दूसरे राज्य में शामिल नहीं हो सकता।
5. पाकिस्तान विधानसभा निर्धारित तिथि से पहले नहीं बैठेगी।
6. राज्यों की स्थिति बेहद कमजोर है। मई 1946 का बयान
इसका इस्तेमाल प्रगति को रोकने के लिए नहीं किया जाना चाहिए। प्यारेलाल गांधी जी की विधेयक पर टिप्पणियों का वर्णन करते हुए लिखते हैं: 'उनकी झुंझलाहट तो शांत हो गई थी, लेकिन 5 जुलाई को अपनी प्रार्थना सभा को संबोधित करते समय उनके हृदय में तीखा प्रहार और भी गहरा उतर गया था। उन्होंने कहा कि वे कई आलोचकों की तरह विधेयक में कोई कुटिल अर्थ नहीं निकालना चाहते थे। एक के बजाय दो भारत का होना अपने आप में ही काफी बुरा था। दोनों का दर्जा एक ही था, और मुस्लिम लीग उस स्थिति को लाने के लिए पूरी तरह से श्रेय की हकदार थी जो मानो एक दिन पहले तक असंभव लग रही

थी। उन्होंने कैबिनेट मिशन की गंभीर घोषणा को नकार दिया था। वे कांग्रेस और सिखों को विभाजन के लिए सहमत कराने में सफल रहे थे। जो हो चुका था, वह अपने आप में अच्छा नहीं हो गया, भले ही स्वीकृति के कारण हर मामले में अलग-अलग थे। जिन्ना को वह सब कुछ नहीं मिला जो वे चाहते थे, यह कोई सांत्वना की बात नहीं थी। अंतर प्रकार का बिल्कुल नहीं था। वे एक संप्रभु राज्य चाहते थे। और वह उन्हें पूर्ण रूप से प्राप्त हुआ।'
गांधीजी ने विधेयक को बार-बार पढ़ते हुए कहा, 'जैसे-जैसे वे विधेयक को पढ़ते और दोबारा पढ़ते गए, उन्होंने देखा कि तीनों पक्ष जानबूझकर या अनजाने में विधेयक के संदर्भ में जनता की राय के अधीन हो गए थे। हालांकि ब्रिटिश सत्ता से अपना हाथ खींच रहे थे, लेकिन विभाजन में भागीदार बनकर और राष्ट्रमंडल परिवार में परस्पर विरोधी आदर्शों और हितों वाले दो सदस्यों को शामिल करके उन्होंने खुद को तराजू पर तौलने के लिए रख दिया था। जब तक दोनों पक्षों का ग्रेट ब्रिटेन से कोई संबंध था, ग्रेट ब्रिटेन का मूल्यांकन विधेयक की भाषा के बजाय उसके कार्यों के आधार पर किया जाएगा, चाहे वह कितनी भी उदार और न्यायसंगत क्यों न हो। उन्हें डर था कि परस्पर विरोधी हितों में सामंजस्य बिठाना और उनके साथ समान व्यवहार करना एक असंभव कार्य होगा। संविधान अधिनियम पारित होने पर यदि कोई एक पक्ष राष्ट्रमंडल से बाहर निकलने का फैसला करता है तो क्या होगा?... राजकुमारों के साथ संबंध अत्यंत असंतोषजनक स्थिति में थे। यहां भी, ब्रिटिश प्रतिष्ठा दांव पर थी। किसी भी अप्रिय घटना की स्थिति में निश्चित रूप से ब्रिटिशों को ही दोषी ठहराया जाएगा।' उन्होंने आगे बताया, 'पाकिस्तान में अधिकारियों के कुछ कार्यों ने इस आशंका को जन्म दिया था कि पाकिस्तान में अनुसूचित वर्गों

अच्छाई में परिवर्तित करना संभव था। यदि सभी आशंकाएं दूर हो जाएं, शत्रुता मित्रता में बदल जाए और आपसी अविश्वास विश्वास में परिवर्तित हो जाए।'
भारत के विभाजन के साथ ही इसकी सार्वजनिक संपत्तियों और धन के बंटवारे, और विशेष रूप से सशस्त्र बलों के बंटवारे का विवादास्पद प्रश्न सामने आया। 1 से 11 जुलाई के बीच, विभाजन परिषद ने विभाजन को नियंत्रित करने वाले सिद्धांतों को निर्धारित किया। अचल संपत्तियां स्वाभाविक रूप से उन प्रांतों की होंगी जिनमें वे स्थित हैं, लेकिन अन्य संपत्तियां—सरकारी कार्यालयों में मौजूद रिकॉर्ड तक—दोनों देशों के बीच निष्पक्ष रूप से विभाजित की जानी थीं। जब सर सिरिल रेडक्लिफ धैर्यपूर्वक भारत के मानचित्र पर एक रेखा खींच रहे थे, तब विभाजन परिषद नई दिल्ली में दिन-रात इस बात पर बहस करती रही कि किसे क्या मिलेगा। एक मेज पाकिस्तान को दी गई और उसकी कुर्सियां भारत के पास रहीं। एक शानदार घोड़ा भारत में ही रहा, जबकि उसकी उतनी ही शानदार काठी पाकिस्तान भेज दी गई। हर चीज का बंटवारा होना था और हर वस्तु के लिए दोनों पक्षों के बीच विवाद चल रहा था। लॉर्ड इस्मे के शब्दों में, सशस्त्र बलों को दोनों देशों के बीच विभाजित करने का प्रश्न 'सबसे बड़ा अपराध और सबसे बड़ी समस्या' था। 'सेना को अब हिंदू और मुस्लिम में विभाजित किया जा रहा है,' लॉर्ड सेलबोर्न ने हाउस ऑफ लॉर्ड्स को रिपोर्ट दी, 'ठीक उसी तरह जैसे फुटबॉल मैच से पहले टीमें चुनी जाती हैं। ऐसे में शांति बनाए रखना असंभव है।'
गांधीजी को उम्मीद थी कि अलगाव संधि में ही संयुक्त रक्षा का प्रावधान शामिल करना संभव होगा। यह एक कठिन प्रस्ताव था, लेकिन असंभव नहीं, अगर दोनों पक्ष मित्रतापूर्वक विदा हो रहे थे,

शत्रुतापूर्वक नहीं, तो यह संभव था। 6 जुलाई को अपनी प्रार्थना सभा में उन्होंने टिप्पणी की कि पूर्ण स्वतंत्रता के आसन्न आगमन जैसी महान घटना के प्रति जो उत्साह होना चाहिए था, वह उनमें नहीं था। उत्साह की कमी का कारण निस्संदेह देश का दो राज्यों में विभाजन था, जिन्हें दो सशस्त्र शिविरों में परिवर्तित किया जाना था। कोई संयुक्त रक्षा बल नहीं होना था। सेना का विभाजन होना था; इसके लिए तैयारियां चल रही थीं। ब्रिटिश शासन के विरोध के 'गौरवशाली और कठिन दिनों' के दौरान वे बड़ी सहजता से कहते थे कि उनके पास आंतरिक झगड़ों को दबाने के लिए कोई सेना नहीं होगी, जो अस्तित्वहीन होगी, और उन्हें किसी विदेशी शत्रु के विरुद्ध रक्षा बल की आवश्यकता नहीं होगी। लेकिन अब सैन्य व्यय को बिना किसी महत्वपूर्ण कटौती की निकट संभावना के बहुत उच्च स्तर पर बनाए रखना था। वास्तव में, सैन्य खर्च में निश्चित रूप से वृद्धि होने की भयावह संभावना थी—वह भी आपस में ही लड़ने के लिए—और उन्हें दो नवगठित राज्यों को हथियारों की होड़ में एक हास्यास्पद प्रतिस्पर्धा में उलझते हुए देखना पड़ता, जिसका उद्देश्य आपसी नरसंहार करना था! क्या भारत की स्वतंत्रता उन सभी चीजों के त्याग की तैयारी थी जिन्हें वे अपने लिए प्रिय मानते थे? आत्म-प्रशंसा के बजाय, उन्होंने महसूस किया कि यह गहन आत्मनिरीक्षण, आत्म-परीक्षण और आत्म-निंदा का समय है। पिछले तीस वर्षों के दौरान स्वतंत्रता संग्राम में मुख्य भूमिका निभाने वाले के रूप में, उन्होंने कहा कि वे निश्चित रूप से अपने भीतर कई गहन प्रश्नों से घिरे हुए थे। 'क्या इस महान संघर्ष का परिणाम यही होगा—आगामी कलंक? मैं वैदिक ऋषियों के साथ गहरे दुख में रोता हूँ, "हे प्रभु, हमें अंधकार से प्रकाश की ओर ले चलो।"'

गांधी जी ने 10 जुलाई को अपनी प्रार्थना सभा में कहा कि चूंकि भारत दो भागों में बंट रहा था, इसलिए उन्हें अपने आचरण पर तदनुसार विचार करना होगा। दुर्भाग्य से, शत्रुतापूर्ण व्यवहार करना एक चलन बन गया था। आरोप लगे कि 1944 में उन्होंने अठारह दिनों तक जिन्ना की सेवा की थी और मुस्लिम लीग अब इसका लाभ उठा रही थी। गांधी जी ने इस आरोप का खंडन किया। उन्होंने कहा कि उन्होंने जिन्ना को एक प्रस्ताव दिया था, जो सभी के हित में था। यदि जिन्ना ने उनका प्रस्ताव स्वीकार कर लिया होता, तो वे तथाकथित 'पाकिस्तान क्षेत्रों' के स्वामी बन सकते थे। तब उनके पास पूरी दुनिया के सामने एक भारत होता, जिस पर किसी तीसरे पक्ष के प्रभुत्व का कोई भय नहीं होता। लेकिन इसके बजाय, अब हर कोई एक-दूसरे का खून चाहता था। उस बर्बर अवस्था में उन्हें कोई स्वतंत्रता नजर नहीं आ रही थी। जब तक अगले पैंतीस दिनों में हालात नहीं बदलते, तब तक वे आने वाली स्वतंत्रता को लेकर उत्साहित नहीं हो सकते थे।
कुछ दिनों बाद उसी विषय पर लौटते हुए उन्होंने पूछा, विदेशी आक्रमण का सामना करने के उद्देश्य से वे एकजुट क्यों नहीं रह सके? विभाजन का वर्तमान स्वरूप दोनों सेनाओं के बीच आंतरिक युद्ध का कारण बन सकता है, जहाँ वे एक-दूसरे को प्रतिद्वंद्वी भी मान सकती हैं। यह एक बहुत बड़ी त्रासदी होगी। वर्षों से वे कहते आ रहे थे कि उन्हें कोई सेना नहीं चाहिए। वे अब भी अपने इस कथन पर कायम थे, लेकिन अन्य लोग नहीं। एक नई पीढ़ी का उदय हो चुका था। कांग्रेसी भारत की गुलामी के दौरान किए गए कार्यों से बंधे नहीं थे। इस बदलाव के लिए उन्हें दोषी नहीं ठहराया जा सकता था। लगभग हर प्रांत सैन्य सहायता चाहता था। सैन्य तानाशाही स्थापित होने का खतरा मंडरा रहा था। क्या यही स्वतंत्रता थी?—

उन्होंने पूछा। यह अंतिम चेतावनी पाकिस्तान के मामले में सच साबित हुई, जो अपने राष्ट्र के रूप में अधिकांश वर्षों तक जनरलों के शासन के अधीन रहा है।
जैसे-जैसे 15 अगस्त नज़दीक आता गया, गांधीजी बढ़ती चिंता के साथ क्षितिज पर मंडरा रहे अपशकुनों को देखने लगे। देश का विभाजन वह कीमत थी जो भारत ने अराजकता और अव्यवस्था से बचने के लिए चुकाई थी। लेकिन हालात देखकर लग रहा था कि विभाजन के बाद भारत और भी बुरे दौर की ओर बढ़ रहा है। जिन्ना ने एक बार फिर पाकिस्तान में सभी अल्पसंख्यकों को पूर्ण धार्मिक स्वतंत्रता, धार्मिक पूजा- पाठ की स्वतंत्रता और जीवन-संपत्ति की पूर्ण सुरक्षा का वादा किया था। लेकिन कही गई बातों और व्यवहार में गहरा अंतर था। सिंध में गैर-मुस्लिम अपने घर छोड़कर भाग रहे थे, जितना सामान वे अपने साथ ले जा सकते थे। इसी बीच, प्रमुख लीग नेताओं द्वारा राष्ट्रवादी मुसलमानों को चेतावनी दी जा रही थी कि पाकिस्तान की स्थापना के बाद उन पर मुकदमा चलाया जाएगा और उन्हें फांसी दी जाएगी। माउंटबेटन विभाजन परिषद के एक बयान में दोनों पक्षों द्वारा अल्पसंख्यकों और पूर्व राजनीतिक विरोधियों के नागरिक अधिकारों की गारंटी का गंभीर आश्वासन शामिल करवाने में सफल रहे थे। लेकिन भविष्य के लिए दिए गए वे आश्वासन, जो वर्तमान स्थिति से झूठे साबित हो रहे थे, गांधीजी के लिए बिलकुल भी मायने नहीं रखते थे। उन्हें इस बात की गहरी चिंता थी कि संबंधित लोग गंभीर गारंटियों के बार-बार और खुलेआम उल्लंघन को कितनी उदासीनता से देख रहे थे, जबकि वे इस उम्मीद में खुद को धोखा दे रहे थे कि अंततः शांति स्थापित हो जाएगी। वे जानते थे कि नैतिक नियम कितना अटल है और उस नियम का उल्लंघन करने पर मिलने वाला दंड कितना अपरिहार्य है। दूसरी ओर अल्पसंख्यकों के साथ लगातार हो

रहे दुर्व्यवहार के कारण भारतीय संघ में पनप रही सांप्रदायिकता विरोधी लहर से वे और भी चिंतित हो रहे थे। वे जानते थे कि हिंदू समाज के कुछ वर्गों में, विशेषकर कुछ उच्च जातियों में, जो सावरकर और उनकी हिंदू महासभा के प्रभाव में थीं, साथ ही आरएसएस द्वारा प्रतिपादित धार्मिक अलगाव और हिंदू वर्चस्व में विश्वास रखने वालों में, प्रतिशोध की भावना दृढ़ता से जड़ जमा चुकी थी। हालांकि, वे यह भी जानते थे कि ये संगठन आबादी के एक छोटे से हिस्से को ही आकर्षित करते हैं। तीस वर्षों से अधिक समय तक वे राष्ट्र को एकजुट रखने में सक्षम रहे थे; लेकिन देश का विभाजन उनके द्वारा बुने गए एकता के नाजुक धागों को तेजी से तोड़ रहा था।
इसी समय के आसपास, स्टेट्समैन के पूर्व संपादक आर्थर मूर की मुलाकात गांधी जी से हुई। उनकी मुलाकात इससे पहले 1924 में हुई थी, जब गांधी जी ने नई दिल्ली में हिंदू-मुस्लिम एकता के लिए इक्कीस दिनों का उपवास किया था। मूर ने तब परिवर्तन के लिए एक नैतिक हथियार के रूप में उपवास की पद्धति को 'पूरी तरह से विफल' बताया था। उन्हें अभी भी इसकी प्रभावशीलता पर संदेह था। गांधी जी ने 1924 के उपवास का जिक्र करते हुए कहा, 'अभी तक तो यह सफल नहीं लग रहा है,' और शायद आस्था की पुष्टि के बजाय आशा की अभिव्यक्ति के रूप में कहा, 'लेकिन कुछ तो परिणाम जरूर निकलेगा।' मूर को पटेल का रवैया आक्रामक लगा, लेकिन गांधी जी ने उन्हें सुधारा। उन्होंने कहा, 'आप सरदार को नहीं जानते। वह प्रतिशोधी या सांप्रदायिक नहीं हैं। लेकिन वह मेरे इस विश्वास को साझा नहीं करते कि अहिंसा से सब कुछ जीता जा सकता है। वह कभी पूर्ण समर्थक हुआ करते थे। अब वह ऐसे नहीं हैं।'

'सरदार सबसे लोकप्रिय नेता हैं। शायद यही इसका कारण है,' मूर ने कहा।
'नहीं,' गांधी ने उत्तर दिया, 'सरदार ही बलवान व्यक्ति होता है। वह किसी भी कठिनाई से विचलित नहीं होता। यही इसका कारण है।' कुछ लोगों का आरोप है कि गांधीजी एक तानाशाह थे जिन्होंने कांग्रेस और उसके परिणामस्वरूप पूरे देश पर अपनी इच्छा थोपी। लेकिन इतिहास इससे अलग ही सच्चाई दिखाता है। बीसवीं सदी के असहयोग आंदोलन के दौरान, कांग्रेस नेताओं के एक समूह ने देशबंधु सी.आर. दास के नेतृत्व में एक स्वराजवादी समूह बनाया। इस समूह का मानना था कि उन्हें परिषदों में शामिल होकर आंतरिक रूप से अपना असहयोग आंदोलन चलाना चाहिए। एक कट्टरपंथी 'परिवर्तन न करने वाले' ने गांधीजी से स्वराजवादियों को दंडित करने के लिए अवज्ञा आंदोलन को पुनर्जीवित करने का आग्रह किया। गांधीजी ने इनकार कर दिया; हालांकि वे उनके कार्यक्रम से सहमत नहीं थे, फिर भी उन्होंने स्वराजवादियों के बजाय सरकार से लड़ना बेहतर समझा। 1940 में, जब कांग्रेस ने घोषणा की कि यदि ब्रिटिश सरकार उनकी शर्तें मान लेती है, तो वह मित्र देशों की तरफ से युद्ध में शामिल हो जाएगी, तो गांधीजी ने आपत्ति नहीं जताई। उन्होंने अपने सहयोगियों को अपने विवेक के अनुसार निर्णय लेने दिया, हालांकि उन्होंने उनसे कहा कि उन्हें लगता है कि वे गलत हैं। इस मार्ग को अपनाने का उनका कारण महत्वपूर्ण था: 'मैंने एक प्रस्ताव का मसौदा तैयार किया था जिसे लगभग सभी ने सर्वश्रेष्ठ माना, बशर्ते वे अहिंसा में पूर्णतः दृढ़ विश्वास रखते हों, या सत्यपूर्वक कह सकें कि यह उनके निर्वाचन क्षेत्रों का विश्वास है। कुछ लोगों में न तो पूर्ण विश्वास था और न ही पूर्ण विश्वास, जबकि कुछ लोगों में व्यक्तिगत रूप से

आवश्यक आस्था थी। राजाजी अपने रुख को लेकर उतने ही आश्वस्त थे जितना मैं अपने रुख को लेकर। मैं समिति को अपने साथ नहीं ले जा सका। मुझे तुरंत स्पष्ट रूप से समझ आ गया कि यदि मेरा रुख स्वीकार्य नहीं था, तो राजाजी का रुख ही एकमात्र वास्तविक विकल्प था।'
इस मिथक का दूसरा कारण हरिपुरा अधिवेशन में पार्टी प्रतिनिधियों द्वारा चुने जाने के बाद नेताजी सुभाष चंद्र बोस को कांग्रेस अध्यक्ष पद से हटाने के लिए गांधीजी का आग्रह था। हालांकि, सीडब्ल्यूसी के लगभग सभी नेता बोस के खिलाफ थे। कांग्रेस अध्यक्ष के रूप में अपने पहले कार्यकाल के दौरान ही बोस का पटेल और जवाहरलाल नेहरू ने विरोध किया। पटेल ने बोस की समाजवादी विचारधारा से असहमत होते हुए उनके खिलाफ खुला असहयोग आंदोलन शुरू किया था। नेहरू ने शायद कांग्रेसियों की युवा पीढ़ी के नेता के रूप में अपनी स्थिति के लिए चुनौती महसूस की और पार्टी में बोस की शक्ति को कमजोर करने के लिए कोई कसर नहीं छोड़ी। गांधीजी अंग्रेजों से लड़ने के बोस के तरीकों से सहमत नहीं थे; साथ ही, अन्य नेताओं की भावनाओं को जानते हुए, उन्होंने महसूस किया कि यदि बोस अध्यक्ष बने रहे, तो पार्टी बिखर जाएगी और इसके साथ ही वह एकता भी नष्ट हो जाएगी जो गांधीजी के अहिंसक स्वतंत्रता संग्राम की ताकत थी। इसलिए गांधीजी ने अपनी नाराजगी जाहिर की और बोस से इस्तीफा मांगा। इसके बाद ही अन्य असंतुष्ट नेताओं ने सक्रियता दिखाते हुए वैकल्पिक अध्यक्ष का नामांकन सुनिश्चित किया और बोस को कांग्रेस से बाहर कर दिया। गांधीजी राजनीतिक षड्यंत्रों में लिप्त रहने वाले व्यक्ति नहीं थे: यदि वे किसी कार्य, दर्शन या व्यक्ति के विरुद्ध होते, तो सार्वजनिक रूप से अपनी असहमति व्यक्त करते थे। वे मन में कोई

द्वेष भी नहीं रखते थे; किसी व्यक्ति की कड़ी आलोचना करने के तुरंत बाद ही वे उसके साथ हंसते-हंसते और मजाक करते नजर आते थे। बोस के साथ उनके संबंध में भी यही बात लागू होती थी। बोस के कांग्रेस छोड़ने और अग्रदल बनाने के बाद भी वे मित्र बने रहे और एक-दूसरे के प्रति अपार सम्मान और स्नेह रखते थे। गांधीजी पहले व्यक्ति थे जिन्होंने बोस को 'नेताजी' कहकर संबोधित किया। वहीं, बोस ने रंगून से भारतीय राष्ट्र को संबोधित करते हुए पहली बार सार्वजनिक रूप से गांधीजी को 'भारतीय राष्ट्रपिता' कहा।
1945 में शिमला सम्मेलन के दौरान, अमेरिका के एसोसिएटेड प्रेस के प्रेस्टन ग्रोवर ने गांधी से पूछा कि जब उनके साथियों ने उनकी सलाह के बावजूद 'समानता सूत्र' स्वीकार कर लिया, तो उन्होंने उनके खिलाफ आवाज़ क्यों नहीं उठाई। ग्रोवर ने कहा कि जिन्ना, लॉर्ड वेवेल, पूरा देश और सम्मेलन में मौजूद सभी पर्यवेक्षक गांधी को कांग्रेस का मुखिया मानते थे, भले ही वे तकनीकी रूप से सदस्य नहीं थे। उनकी सहमति के बिना कोई समझौता नहीं हो सकता था। गांधी ने जवाब दिया, 'यह बात सही भी है और गलत भी। यह धारणा इसलिए बनी है क्योंकि आम तौर पर मेरी सलाह मानी जाती है। लेकिन तकनीकी और वास्तविक रूप से यह गलत है।'
ग्रोवर ने इस बात पर जोर दिया कि कांग्रेस में गांधीजी की ही सर्वोच्च आवाज थी, जिस पर गांधीजी ने जवाब दिया, 'ऐसा भी नहीं है। वे मुझे कभी भी बाहर कर सकते हैं। अगर मैंने उन्हें दरकिनार करने की कोशिश की, तो शायद एक बार सफल हो जाऊं। लेकिन जिस क्षण मैं सत्ता से चिपके रहने की कोशिश करूंगा, मैं गिर जाऊंगा और फिर कभी नहीं उठ पाऊंगा। यह मेरा स्वभाव नहीं है।'
अंततः, जून 1946 में कैबिनेट मिशन वार्ता के समय, गांधी ने न केवल कांग्रेस नेताओं को अपनी 'सहज प्रवृत्ति' का पालन करने के

लिए मजबूर नहीं किया - जो कैबिनेट मिशन योजना की स्वीकृति के विरुद्ध थी - बल्कि इस बात पर भी जोर दिया कि जब तक उनकी कही बात उनके दिमाग और दिल को भा न जाए, तब तक उनके लिए एकमात्र सही बात यही है कि वे अपने विवेक का पालन करें।
यदि अंग्रेजों ने भारतीय दलों की सहमति के बिना भारत का विभाजन थोपने का साहस किया होता, तो गांधी जी—भले ही अकेले ही—इसका विरोध करते। लेकिन लीग और सावरकर के नेतृत्व वाली हिंदू वर्चस्ववादी पार्टियों ने पहले ही दो-राष्ट्र सिद्धांत का समर्थन कर दिया था। इस प्रकार भारत के विभाजन के समझौते के समय गांधी जी अकेले खड़े थे। कांग्रेस के निर्णय को पलटने से शायद अंततः विभाजन नहीं रुकता, और वे निश्चित रूप से उनकी राजनीतिक विश्वसनीयता को नष्ट कर देते। परिणामस्वरूप, देश को एक ऐसे शून्य का सामना करना पड़ता, जैसा पाकिस्तान को जिन्ना की मृत्यु के बाद करना पड़ा था।
इसी बीच, मुस्लिम लीग के कुछ सदस्यों ने स्पष्ट कर दिया कि वे पाकिस्तान के मौजूदा स्वरूप से संतुष्ट नहीं हैं। उन्होंने कसम खाई कि वे तब तक चैन से नहीं बैठेंगे जब तक कि वे भारत में मुस्लिम संस्कृति के सबसे महत्वपूर्ण केंद्रों, दिल्ली, आगरा, अजमेर और अलीगढ़ को पाकिस्तान के लिए सुरक्षित नहीं कर लेते। विभाजन से पहले लीग का नारा था 'लड़के लेंगे पाकिस्तान'; अब इसे बदलकर 'हंसके लिया है पाकिस्तान, लड़के लेंगे हिंदुस्तान' कर दिया गया। इन कार्यों का उद्देश्य हिंदुओं को भड़काना था, और कांग्रेस इसके आगे झुक गई। कुछ नेताओं ने कहा कि चूंकि पाकिस्तान एक इस्लामी राज्य बनने वाला था, तो भारतीय संघ को हिंदू राष्ट्र क्यों न घोषित किया जाए? जिन मुसलमानों ने पाकिस्तान या मुस्लिम लीग के राजनीतिक एजेंडे का समर्थन न करके

भारत के प्रति अपनी वफादारी साबित की थी, अब उन्हें संदेह की नजरों से देखा जा रहा था और गद्दार करार दिया जा रहा था। एक समय तो पटेल जैसे काबिल नेता को भी भारत में रह गए मुसलमानों की वफादारी पर शक होने लगा था। लेकिन गांधी जी ने कहा कि चाहे जो भी घटनाक्रम हो, कांग्रेस सरकार धर्म के आधार पर किसी के साथ भेदभाव नहीं कर सकती। उन्होंने इस स्थिति की तुलना अपने बड़े बेटे हरिलाल के दुखद जीवन से की। उन्होंने कहा, 'मेरा बड़ा बेटा अक्सर मेरे पास आकर कहता है, "मैं भविष्य में अच्छा बनूंगा, शराब को हाथ नहीं लगाऊंगा।" मैं उससे कहता हूं, "भले ही मुझे तुम पर भरोसा न हो, फिर भी मैं तुम्हें एक मौका दूंगा।" अब तक वह अपना वादा नहीं निभा पाया है। फिर भी, अगर वह दोबारा आता है, तो मैं उसे नहीं निकालूंगा और उम्मीद करूंगा कि वह अपना वादा निभाएगा, जब तक मुझे यह पता न चल जाए कि वह सिर्फ मुझे धोखा देने के लिए वापस आया है। हमें मुसलमानों पर भी इसी तरह भरोसा करना चाहिए और साथ ही सतर्क भी रहना चाहिए।'
हालाँकि उन्होंने सार्वजनिक रूप से अपने देश के विभाजन और अपने पूर्व शिष्यों द्वारा ठुकराए जाने के गहरे दुख को ज़ाहिर नहीं किया, लेकिन उनके सहयोगियों को लिखे पत्रों में उनका अकेलापन स्पष्ट रूप से झलकता था। जुलाई के तीसरे सप्ताह में उन्होंने अमेरिका में नव नियुक्त भारतीय राजदूत आसफ अली को लिखा, 'आज़ादी तो आ गई है, पर मुझे इससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता। जहाँ तक मैं देख सकता हूँ, मैं एक हाशिये पर पड़ा हुआ हूँ। मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि हमारा अहिंसक मार्ग केवल ऊपरी तौर पर था, हमारे भीतर हिंसा थी। विदेशी शक्ति को हटाना ही काफ़ी था। लेकिन भीतर पल रही हिंसा अप्रत्याशित रूप से फूट पड़ी है। ईश्वर ही जाने यह हमें कहाँ ले जाएगी।' एक अन्य सहकर्मी को उन्होंने लिखा,

'स्वराज कहाँ है? अंग्रेज़ जा रहे हैं, पर इसमें उत्साहित होने जैसी क्या बात है?'
उन्होंने अपनी बहू सुशीला को लिखा, 'मुझे अपने जीवनकाल में शांति देखने की उम्मीद लगभग खत्म हो चुकी है। सत्ता हस्तांतरण और पाकिस्तान को लेकर देश में जो कुछ हो रहा है, उससे मुझ पर बहुत दबाव पड़ रहा है। इसलिए, मुझे अपनी दीर्घायु होने की क्षमता पर भरोसा नहीं रहा।' मौजूदा परिस्थितियों में दीर्घायु होने की इच्छा की कमी के उनके बार-बार उल्लेख पर गांधीवादी दर्शन और अहिंसा के अमेरिकी व्याख्याकार, रिचर्ड ग्रेग, जो 'अहिंसा की शक्ति' के लेखक हैं, ने आपत्ति जताई। उन्होंने कहा कि गांधी के कथनों में उन्हें निराशा और आशा की हानि दिखाई देती है। उन्होंने गांधी से अपने दृष्टिकोण पर पुनर्विचार करने का आग्रह किया। भारत में मौजूदा हिंसा से कहीं अधिक दांव पर लगा है, 'भले ही यह स्थिति पंद्रह वर्षों तक जारी रहे।' हरिजन में इसका उत्तर देते हुए गांधी ने कहा कि हिंसा पर आधारित समाज में अपने लिए कोई स्थान न होने का उनका कथन आशा की हानि से संबंधित नहीं है; वे निराशा के विचार को मन में नहीं रखना चाहते थे। साथ ही, उन्होंने इस बात पर फिर से ज़ोर दिया कि कलह से भरे समाज में शांतिप्रिय व्यक्ति के लिए कोई जगह नहीं हो सकती। 'फिर भी वह निरंतर प्रयास करके अपने लिए जगह बनाने की उम्मीद कर सकता है। यही मेरे कथन का सार है। मैं उस समाज में हूँ, पर उसका हिस्सा नहीं हूँ। यह कथन मेरे विरोध को दर्शाता है। हम ईश्वर से यह नहीं कह सकते कि यदि हिंसा, जो मनुष्यों की मूर्खता है, हमारी आशाओं के अनुरूप एक निश्चित समय के भीतर नहीं रुकती, तो हम अपनी पूरी कोशिश करना बंद कर देंगे, जिसमें यथासंभव लंबे समय तक जीना भी शामिल है।'

क्वेकर शांति कार्यकर्ता कार्ल हीथ ने गांधी जी के इस कथन पर आपत्ति जताते हुए कहा कि उनका बयान आस्था की हानि की घोषणा के समान है, जो आशा की हानि से भी बदतर है। 'इस संसार में आपके जीवन के वर्ष आपके मित्रों की भीड़ के लिए सर्वोपरि नहीं हैं, बल्कि यह सर्वोपरि है कि आप अपनी उज्ज्वल आशा को बनाए रखें। क्योंकि आस्थावान व्यक्ति के लिए आशा, ईश्वर में विश्वास के समान है। वह आशा इसलिए नहीं रखता कि उसे मानवीय उद्देश्यों की पूर्ति पर भरोसा है, बल्कि इसलिए रखता है क्योंकि उसे ईश्वर और शाश्वत के उद्देश्य में गहरी आस्था है। प्रिय मित्र, मेरा मानना है कि आपके साथ जो हुआ है, वह भारत में सांप्रदायिक हिंसा के दर्द और मुस्लिम लीग द्वारा हम सभी को अपने देश के विभाजन को स्वीकार करने के लिए विवश किए जाने के कारण उत्पन्न हृदय रोग है। लेकिन मनुष्य की सभी योजनाएँ समय के साथ समाप्त हो जाती हैं। अंत में शाश्वत अच्छाई की इच्छा ही प्रबल होती है—क्योंकि ईश्वर ही सर्वोपरि है।'
गांधी ने उत्तर दिया, ‘मैं आपसे पूर्णतः सहमत हूँ कि इस संसार में मनुष्य के जीवन के वर्ष उसके लिए या संसार के लिए कोई मायने नहीं रखते, बल्कि मानव जाति की सच्ची सेवा में बिताया गया एक दिन भी सर्वोपरि और एकमात्र महत्व रखता है।’ उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि आशा और आस्था अक्सर पर्यायवाची शब्द होते हैं। ‘निःसंदेह ईश्वर शाश्वत है, बुराई क्षणभंगुर।’ यद्यपि इससे उनके तर्क के मूल भाव पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। गांधी ने कहा कि यद्यपि उनकी पीड़ा अपार थी, फिर भी उनका दृष्टिकोण निराशा का नहीं था। उनकी पीड़ा बुराई से भागने की इच्छा का संकेत नहीं थी। बल्कि, उनकी पीड़ा बुराई से संघर्ष करने और उसके लिए जान देने के उनके दृढ़ संकल्प का ही प्रमाण थी। परिवर्तित परिस्थितियों

में उनकी अहिंसा की विचारधारा को चुनौती मिल रही थी। कई लोगों ने अहिंसा की वैधता पर ही प्रश्नचिह्न लगा दिया, यह कहते हुए कि ‘अहिंसा की शक्ति और उद्देश्य सीमित हैं, इसे वर्तमान परिस्थिति में लागू नहीं किया जा सकता।’ गांधी ने उनसे कहा कि यद्यपि वे इससे अवगत नहीं थे, फिर भी उस समय उनके बीच अहिंसा का नियम लागू था।
गांधी जी को अपने कांग्रेस सहयोगियों का रुख पसंद नहीं आ रहा था। साथ ही, वे खुले तौर पर उनकी आलोचना भी नहीं करना चाहते थे, कहीं उन्हें शर्मिंदगी न उठानी पड़े। जुलाई के आखिरी सप्ताह में उन्होंने पटेल को लिखा: 'यहाँ जो कुछ हो रहा है, वह मुझे ठीक नहीं लग रहा। इसका मतलब यह नहीं है कि आपको अपना रुख बदलना चाहिए, लेकिन मैं यह नहीं चाहता कि यह कहा जाए कि मैं इसमें शामिल था... मुझे यह भी लगता है कि अब हरिजन को बंद कर देना चाहिए। देश को विपरीत दिशा देना मुझे उचित नहीं लगता। आप आराम से इस पर विचार करें।' हरिजन के प्रबंधक को उन्होंने लिखा: 'शायद हमें हरिजन को बंद करने का फैसला लेना पड़े। हमारे नेताओं के कई कार्यों से मेरा मन असहमत है। फिर भी मैं उनका खुलकर विरोध नहीं करना चाहता। लेकिन अगर मैं अखबार चला रहा हूँ तो मैं इससे कैसे बच सकता हूँ? आप इसे मेरे बिना नहीं चलाना चाहते, न ही सरदार जी।'
गांधी ने पटेल को लिखे पत्र में नोआखली लौटने की इच्छा व्यक्त की थी, लेकिन कांग्रेस नेता चाहते थे कि वे राजधानी में ही रहें। स्वतंत्रता दिवस नजदीक आ रहा था और कांग्रेस नेता रियासतों समेत देश चलाने की रोजमर्रा की चुनौतियों से निपटने के लिए कड़ी मेहनत कर रहे थे। हालांकि विभाजन के बाद लगभग सभी रियासतें भारत की सीमा में आ गईं, जिन्ना कुछ मुस्लिम शासकों और

अन्य अधिक से अधिक शासकों को स्वतंत्रता घोषित करने और फिर पाकिस्तान के साथ संघ बनाने के लिए राजी करने की महत्वाकांक्षा रखते थे। कई राजकुमारों ने स्वीकार कर लिया था कि उनकी पुरानी जीवनशैली का अंत हो रहा है और उन्होंने भारत संघ द्वारा प्रस्तावित शर्तों को कमोबेश मान लिया था। उनमें से अधिकांश ने पटेल के अधीन राज्य विभाग के सचिव वी.पी. मेनन द्वारा तैयार किए गए 'विलय पत्र' पर हस्ताक्षर किए थे। इस पत्र में रक्षा, विदेश मामले और संचार को छोड़कर राज्यों की संवैधानिक स्वतंत्रता को अपरिवर्तित रखा गया था, इन तीन मुद्दों को उन्होंने केंद्र सरकार को सौंप दिया था।
आजादी के समय तक तीन राजकुमार ऐसे बचे थे जिन्होंने आत्मसमर्पण करने से इनकार कर दिया था—हैदराबाद, जूनागढ़ और कश्मीर। नवंबर 1947 में हैदराबाद के साथ एक वर्ष के लिए 'स्थगन' समझौता हुआ, जिसे वर्ष के अंत से पहले ही स्थायी कर दिया गया। कुछ समय बाद नवाब के पाकिस्तान में विलय के फैसले के खिलाफ एक जन आंदोलन के जरिए जूनागढ़ को सफलतापूर्वक अपने कब्जे में ले लिया गया। लेकिन कश्मीर भारत और पाकिस्तान के बीच विवाद का एक मुख्य कारण और दोनों देशों की राजनीति में एक नासूर बन गया। गांधी ने 24 जुलाई 1947 को पटेल को लिखा, 'जितना मैं इस बारे में सोचता हूं, उतना ही मुझे लगता है कि कश्मीर का मामला सुलझते ही मुझे दिल्ली छोड़ देनी चाहिए।' नेहरू ने जेल में बंद लोकतंत्र समर्थक नेता शेख अब्दुल्ला के समर्थन में कश्मीर जाने का फैसला किया था, जिनका मुकदमा उसी तारीख को शुरू होना था। कश्मीर के महाराजा हरि सिंह ने नेहरू को चेतावनी दी कि घाटी में रहते हुए उन्हें केवल शेख अब्दुल्ला के बचाव तक ही सीमित रहना चाहिए। यदि वे किसी अन्य राजनीतिक गतिविधि में भाग लेते हैं तो उन्हें 'अपने

कार्यों के परिणाम भुगतने होंगे'। हरि सिंह एक हिंदू राजा थे, जिनका राज्य मुस्लिम बहुसंख्यकों से आबाद था। लोकतंत्र समर्थक आंदोलन के नेता शेख अब्दुल्ला मुस्लिम थे। हरि सिंह ने अपनी संप्रभुता को बनाए रखने के प्रयास में मुस्लिम लीग और उग्रवादी हिंदू गुटों से बातचीत की थी। मुस्लिम लीग से उनकी अपील थी कि बहुसंख्यक मुस्लिम आबादी के मुखिया होने के नाते वे उनके संरक्षण के पात्र हैं, जबकि हिंदू कट्टरपंथियों से उन्होंने मुसलमानों से घिरे एक संकटग्रस्त हिंदू राजा की सहायता के लिए आगे आने की अपील की थी।
नेहरू द्वारा कश्मीर में चल रही घटनाओं की रिपोर्ट सीडब्ल्यूसी को सौंपने के बाद, यह निर्णय लिया गया कि पटेल और मौलाना आजाद के नेतृत्व में एक तथ्य-खोज मिशन कश्मीर भेजा जाए। कांग्रेस का प्रस्ताव हरि सिंह को भेजा गया। महाराजा ने जवाब दिया कि वे केवल पटेल को, और वह भी केवल उनकी व्यक्तिगत हैसियत से, कश्मीर आने और स्थिति का अध्ययन करने की अनुमति देंगे। शेख अब्दुल्ला के नेतृत्व में कश्मीर राष्ट्रीय सम्मेलन के नेता नेहरू के कश्मीर दौरे को लेकर उत्सुक थे, लेकिन हरि सिंह ने इस पर कड़ा विरोध जताया। गांधी ने माउंटबेटन को पत्र लिखकर पूछा कि क्या हरि सिंह नेहरू के बदले उन्हें या पटेल को कश्मीर जाने की अनुमति देंगे: 'पंडितजी मेरे साथ थे। मैंने उन्हें कश्मीर के बारे में हुई बातचीत का सार बताया। मैं उनकी इस चिंता से सहमत हूँ कि इस मामले में कोई देरी नहीं होनी चाहिए। उनके लिए यह व्यक्तिगत सम्मान का मामला है। मैंने अपनी पूरी क्षमता से उनकी जगह लेने का वचन दिया है। मैं इस मामले में उनकी चिंता को दूर करना चाहता हूँ।' माउंटबेटन ने हरि सिंह को पत्र लिखकर गांधी को कश्मीर जाने की अनुमति देने का आग्रह किया। महाराजा ने वायसराय

की बात मानने से इनकार कर दिया। 11 जुलाई को गांधी ने वायसराय को फिर लिखा: 'मुझे कश्मीर से अभी तक कोई खबर नहीं मिली है। यदि मैं आपसे किए गए किसी वादे से बंधा न होता, तो निश्चित रूप से मुझे कश्मीर जाने की अनुमति की आवश्यकता नहीं होती। मैं बस एक आम नागरिक की तरह चला जाता।'
जून के आखिरी सप्ताह तक, नेहरू हरि सिंह और उनके प्रधानमंत्री पंडित रामचंद्र काक की रणनीति से पूरी तरह से तंग आ चुके थे। उन्होंने हरि सिंह की इच्छा की अवहेलना करते हुए कश्मीर की जनता के निमंत्रण पर कश्मीर जाने की घोषणा कर दी। इससे मामला और बिगड़ गया और काक ने जल्दबाजी में माउंटबेटन को लिखा कि मौजूदा परिस्थितियों में वे गांधीजी को कश्मीर जाने की अनुमति देने को तैयार हैं। गांधीजी अंततः 30 जुलाई को कश्मीर के लिए रवाना हुए और 1 अगस्त की दोपहर श्रीनगर पहुंचे। शाम को उन्हें राजधानी में सैर के लिए ले जाया गया, जिसे गिलगित को कश्मीर में पुनः शामिल किए जाने के उपलक्ष्य में रोशन किया गया था। गिलगित का प्रशासन गवर्नर जनरल द्वारा राजनीतिक विभाग के माध्यम से किया जाता था। रोशन क्षेत्र को देखकर गांधीजी ने टिप्पणी की, 'बहुत बड़ी गलती। उन्हें इस अवसर का लाभ उठाकर गिलगित को कश्मीर के भीतर स्वायत्तता की घोषणा कर देनी चाहिए थी।' लगभग शत प्रतिशत मुस्लिम आबादी वाला गिलगित अलगाववादी राजद्रोह गतिविधियों का गढ़ था, जिसे राजनीतिक विभाग के शासन द्वारा बढ़ावा और पोषित किया जाता था। अपनी विशिष्ट दूरदर्शिता के साथ, गांधी ने गिलगित को कश्मीर में बिना शर्त शामिल करने में भविष्य की समस्याओं के बीज को पहचान लिया था।
गांधीजी दो दिन श्रीनगर में रुके। इस दौरान उन्होंने प्रधानमंत्री और महाराजा से मुलाकात की और नेशनल कॉन्फ्रेंस

शरणार्थी चाहते थे कि गांधी जी 15 अगस्त तक उनके साथ रहें, लेकिन व्यस्तताओं के कारण वे ऐसा नहीं कर सके। उन्होंने कहा कि वे इसके बजाय डॉ. सुशीला नायर को बंधक बनाकर उनके साथ चले जाएंगे, जो उनके लिए बेटी के समान थीं। अगर उनके साथ कुछ भी अप्रिय घटना घटती है, तो सबसे पहले उनकी मृत्यु होगी। गांधीजी रावलपिंडी से ट्रेन में सवार हुए। उनका इरादा उत्तर भारत के गंगा के मैदानी इलाकों को पार करते हुए पटना, फिर कलकत्ता और उसके बाद संभवतः नोआखली तक यात्रा करने का था। रास्ते में लाहौर में रुकते हुए उन्होंने 6 अगस्त 1947 को श्रीमती रामेश्वरी नेहरू के निवास से पटेल को पत्र लिखा: "वाह शिविर में बहुत उपयोगी कार्य हुआ है। लोगों को वहां से नहीं हटाया जाना चाहिए। आपको इस मामले को पाकिस्तान सरकार के साथ उठाना चाहिए। रावलपिंडी में फिर से हिंदू-सिख आबादी होनी चाहिए। आपको पंजा साहब और वाह शिविर में मेरा भाषण देखना चाहिए। मैंने वहां यह सुझाव दिया है। मैंने सुशीला को वाह शिविर में ही छोड़ दिया है। मुझे यह आवश्यक लगा। इससे लोगों का मनोबल बढ़ा। वे दहशत में हैं। मुझे इसका कोई कारण नहीं दिखता।" उन्होंने कश्मीर यात्रा की एक रिपोर्ट नेहरू को भी भेजी, जिसे पटेल के साथ साझा किया जाना था: 'पहुँचने वाले दिन कोई सार्वजनिक प्रार्थना नहीं हुई, लेकिन मैं उनके सामने दो-तीन बार उपस्थित हुआ और कहा कि मैं कोई सार्वजनिक भाषण नहीं दे सकता, किसी निषेध के कारण नहीं, बल्कि इसलिए कि मैंने स्वयं से वादा किया था कि यदि मुझे अपनी यात्रा को यथासंभव राजनीतिक महत्व से रहित रखना है, तो मुझे सार्वजनिक सभाओं को संबोधित नहीं करना चाहिए। प्रधानमंत्री ने मुझे बताया कि उन्हें सार्वजनिक प्रार्थनाओं से कोई आपत्ति नहीं है। परिणामस्वरूप,

अगले दो दिनों में श्रीनगर में और तीसरे दिन जम्मू में सार्वजनिक प्रार्थनाएँ आयोजित की गईं।'
प्रधानमंत्री के साथ दो मुलाकातों के दौरान मैंने उन्हें जनता के बीच उनकी अलोकप्रियता के बारे में बताया। उन्होंने महाराजा को पत्र लिखकर कहा कि उनके इशारे पर वे सहर्ष इस्तीफा दे देंगे। महाराजा ने संदेश भेजा था कि महाराजा और महारानी मुझसे मिलने के लिए उत्सुक हैं। मैं उनसे मिला; राजकुमार भी अपने पैर में प्लास्टर लगे होने के बावजूद उपस्थित थे। दोनों ने स्वीकार किया कि ब्रिटिश शासन के समाप्त होने के साथ ही कश्मीर की जनता का वास्तविक प्रभुत्व स्थापित होगा। वे संघ में शामिल होने की कितनी भी इच्छा रखते हों, उन्हें जनता की इच्छा के अनुसार ही निर्णय लेना होगा। उस मुलाकात में इस बात पर चर्चा नहीं हुई कि जनता की इच्छा का निर्धारण कैसे किया जाएगा।
गुलाम मोहम्मद बख्शी को पूरा विश्वास था कि जनता के स्वतंत्र मतदान का परिणाम, चाहे वयस्क मताधिकार के आधार पर हो या मौजूदा मतदाता सूची के आधार पर, कश्मीर के संघ में शामिल होने के पक्ष में होगा, बशर्ते शेख अब्दुल्ला और उनके सह-कैदियों को रिहा कर दिया जाए, सभी प्रतिबंध हटा दिए जाएं और वर्तमान प्रधानमंत्री सत्ता में न हों। संभवतः उन्होंने आम भावना को व्यक्त किया था। मैंने अमृतसर संधि का अध्ययन किया, जिसे सही मायने में "बिक्री विलेख" कहा जाता है। मेरा अनुमान है कि यह 15 तारीख को समाप्त हो जाएगी। राज्य किसके पास वापस जाएगा? क्या यह जनता के पास नहीं जाएगा? पटेल को लिखे एक पत्र में उन्होंने लिखा: "वह [महाराजा] काक को हटाना चाहते हैं... उनके सामने एकमात्र प्रश्न यह है कि कैसे... मेरी राय में कश्मीर समस्या का समाधान हो सकता है।"

पंजाब और कश्मीर में गांधीजी की उपस्थिति मात्र से ही सांप्रदायिक स्थिति पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा; हमले रुक गए, आगजनी और हिंसा थम गई, जिससे पीड़ित जनता को बड़ी राहत मिली। गांधीजी 8 अगस्त की सुबह पटना पहुंचे और पूरा दिन कांग्रेस नेताओं और बिहार के मंत्रियों से मुलाकात में बिताया। उसी शाम, प्रार्थना सभा में उन्होंने बिहार के लोगों से 15 अगस्त को प्रार्थना, उपवास और कताई करके मनाने का आग्रह किया। 'चरखे ने बिहार को बनाया है। आज भी बिहार कताई में अग्रणी है। ईश्वर न करे कि बिहार अपनी अब तक की सारी उपलब्धियों को राख कर दे।' प्रार्थना सभा के बाद वे कलकत्ता जाने वाली ट्रेन में चढ़ने के लिए स्टेशन की ओर दौड़े। रास्ते में एक छोटे से पड़ाव पर भीड़ अत्यधिक उत्साहित थी। मनु और आभा ने तुरंत स्थिति के बेकाबू होने और त्रासदी में परिणत होने के खतरे को भांप लिया। उन्होंने ताली बजाना और रामधुन का जाप करना शुरू कर दिया, जिससे अंततः भीड़ शांत हुई।
जब गांधी जी 9 अगस्त को कलकत्ता पहुंचे, तब तक राजनीतिक परिदृश्य बदल चुका था। 3 जुलाई को, बंगाल द्वारा अपने विभाजन का निर्णय लेने के बाद, पश्चिम बंगाल विधानसभा कांग्रेस पार्टी के नेता डॉ. प्रफुल्ल चंद्र घोष की अध्यक्षता में पश्चिम बंगाल के लिए एक अलग मंत्रिमंडल का गठन किया गया था। एक एकीकृत संप्रभु बंगाल की वकालत करके, सुहरावर्दी ने अपने केंद्रीय नेतृत्व को नाराज कर दिया था, जिसने पूर्वी बंगाल के मुख्यमंत्री के रूप में ख्वाजा नाजिमुद्दीन को नामित करके जवाबी कार्रवाई की थी। मौजूदा मुस्लिम लीग मंत्रिमंडल 15 अगस्त तक पूरे बंगाल के विभिन्न विभागों का वास्तविक प्रशासनिक प्रभार संभाले रहा, लेकिन उसके निर्णय केवल पूर्वी बंगाल पर लागू होते थे; पश्चिम

बंगाल को प्रभावित करने वाले किसी भी निर्णय को पश्चिम बंगाल मंत्रिमंडल द्वारा अनुमोदित किया जाना आवश्यक था।
अगस्त 1946 के भीषण कलकत्ता हत्याकांड के बाद से कलकत्ता में सामान्य स्थिति कभी पूरी तरह से बहाल नहीं हो पाई थी। मुस्लिम लीग के प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस की क्रूरता की कड़वी यादों ने दोनों समुदायों के बीच संबंधों को और भी खराब कर दिया था। इसके अलावा, विभाजन योजना ने सरकारी कर्मचारियों को यह स्वतंत्रता दी थी कि वे किस डोमिनियन में शामिल होना चाहते हैं और सभी मुस्लिम पुलिसकर्मियों और अधिकारियों ने पाकिस्तान को चुना था, इसलिए उनकी जगह हिंदुओं की नियुक्तियां कर दी गई थीं, जिससे मुस्लिम आबादी और भी परेशान हो गई थी। सोदेपुर आश्रम पहुंचने के तुरंत बाद, डॉ. घोष गांधी से मिलने गए और उन्हें स्थिति से अवगत कराया। उस शाम गांधी ने कहा कि वे मुस्लिम लीग सरकार के तहत हुई घटनाओं की जांच नहीं करेंगे; वे अपने मित्र घोष की सरकार के कार्यों को लेकर अधिक चिंतित थे। यदि कलकत्ता के मुसलमान आतंक में जी रहे थे, तो यह कांग्रेस सरकार पर एक गंभीर सवाल था। 'सरकार को अपराधियों के कृत्यों के लिए स्वयं को भी जिम्मेदार ठहराना होगा। मैं भारत के गुलामी में लौटने का प्रत्यक्ष साक्षी नहीं बनूंगा, जो हिंदू-मुस्लिम संघर्ष जारी रहने पर उसका भाग्य होगा, लेकिन मेरी आत्मा इस त्रासदी पर मृत्यु के बाद भी विलाप करेगी।' मेरी प्रार्थना है कि ईश्वर हमें उस विपत्ति से बचाए। नोआखली के लिए अपनी यात्रा स्थगित करने का निर्णय सुनाते हुए गांधी ने कहा कि यह अकल्पनीय है कि प्रशासन की कला में निपुण सरकार के अधीन, बहुसंख्यक एक क्षण के लिए भी अल्पसंख्यकों पर अत्याचार कर सके। उन्हें बताया गया था कि अब जब कांग्रेस सरकार सत्ता में है, हिंदू पुलिस और अधिकारी

न्याय प्रशासन में पक्षपातपूर्ण हो गए हैं, और वही कर रहे हैं जो पहले मुस्लिम पुलिस और अधिकारियों पर करने का आरोप था। उन्हें इस बात पर विश्वास करना कठिन लग रहा था। 'यदि सांप्रदायिकता की यह घिनौनी भावना पुलिस बल में प्रवेश कर गई, तो भविष्य वास्तव में अंधकारमय होगा।'
सुहरावर्दी कराची में थे और उन्हें कुछ दिनों के लिए नई दिल्ली में रुकना था। तभी उन्हें पता चला कि गांधी जी नोआखली जाते हुए कलकत्ता में हैं। सुहरावर्दी ने दिल्ली की अपनी यात्रा रद्द कर कलकत्ता जाने का फैसला किया। 11 अगस्त को वे सोदेपुर आश्रम में गांधी जी से मिले और कहा कि जब शहर जल रहा हो तो उनका कलकत्ता छोड़कर जाना उचित नहीं होगा। गांधी जी ने कहा कि अगर सुहरावर्दी शांति बहाल करने में उनका साथ देने को तैयार हों तो वे रुकने को तैयार हैं। गांधी जी ने सुझाव दिया कि वे अशांत क्षेत्रों में, पुलिस या सेना की सुरक्षा के बिना, एक ही छत के नीचे रहें और लोगों से मिलें। गांधी जी ने कहा कि अगर सुहरावर्दी यह प्रस्ताव स्वीकार कर लें तो वे नोआखली की अपनी यात्रा अनिश्चित काल के लिए स्थगित कर देंगे और जब तक आवश्यक होगा कलकत्ता में ही रहेंगे। गांधी जी ने सुहरावर्दी से कहा कि वे समय लें, इस पर विचार करें, अपने वृद्ध पिता और पुत्री से सलाह लें और फिर उन्हें अपना निर्णय बताएं।
1947 के सुहरावर्दी एक सुधरे हुए इंसान थे; तीन महीने पहले गांधीजी के कमरे से बाहर निकलकर इसी तरह के प्रस्ताव को 'पागलपन' कहने वाले सुहरावर्दी से बिलकुल अलग। अगले दिन दोपहर को मोहम्मद उस्मान ने गांधीजी को बताया कि सुहरावर्दी ने उनका प्रस्ताव मान लिया है। शाम की प्रार्थना सभा में गांधीजी ने कलकत्ता में अपना प्रवास बढ़ाने का फैसला सुनाया। उन्होंने

आगे कहा कि उन्हें सुहरावर्दी पर भरोसा न करने की चेतावनी दी गई थी। लेकिन अब वे भरोसा करेंगे और उनसे भी भरोसे की उम्मीद रखेंगे। गांधीजी ने 13 अगस्त को पटेल को पत्र लिखकर अपने फैसले की जानकारी दी: 'मैं यहाँ फंस गया हूँ और अब एक बड़ा जोखिम उठाने जा रहा हूँ। सुहरावर्दी और मैं आज से एक मुस्लिम बस्ती में साथ रहने जा रहे हैं। भविष्य अपने आप सामने आएगा। नज़र बनाए रखें। मैं पत्र लिखता रहूँगा।'
बेहद सतर्क और स्पष्टवादी पटेल कलकत्ता में चल रही घटनाओं पर नजर रख रहे थे और उन्होंने एक पत्र में अपनी चिंता व्यक्त की: 'तो आपको कलकत्ता में हिरासत में ले लिया गया है, और वह भी एक ऐसे इलाके में जो पूरी तरह से बदहाल है और बदमाशों और गुंडों का कुख्यात अड्डा है। और वो भी कितनी घटिया संगत में! यह एक भयानक जोखिम है। लेकिन उससे भी ज्यादा, क्या आपका स्वास्थ्य इस तनाव को झेल पाएगा? मुझे डर है; वहाँ बहुत गंदगी होगी। मुझे अपने बारे में जानकारी देते रहना।'
गांधी जी किसी भी महत्वपूर्ण निर्णय या कार्य की सूचना अपने विस्तारित परिवार के सभी सदस्यों को देते थे। 13 तारीख को डाक से कई हस्तलिखित पत्र आए जिनमें कलकत्ता में उनके मिशन के बारे में जानकारी दी गई थी; उस दिन दोपहर 1:30 बजे तक काम चलता रहा। गांधी जी ने सुहरावर्दी को संदेश भेजा था कि वे दोपहर ठीक ढाई बजे सोदेपुर से बेलियाघाटा स्थित अपने नए निवास के लिए रवाना होंगे, इसलिए उन्हें समय पर पहुंचकर उनके साथ चलना चाहिए। समय के पाबंद गांधी जी ठीक 2:28 बजे अपने कमरे से निकले, ड्राइवर के बगल में अपनी सीट पर बैठे और 2:30 बजे कार बेलियाघाटा की ओर चल पड़ी।

हैदरी हवेली कलकत्ता के बेहद गंदे इलाके बेलियाघाटा में स्थित एक पुराना, वीरान मुस्लिम मकान था। हालांकि, पिछले बारह घंटों में इसे साफ करने का प्रयास किया गया था। जर्जर इमारत चारों ओर से भीड़ के लिए खुली थी, जो इसके नए निवासी के बारे में खबर फैलने के बाद से ही इकट्ठा होने लगी थी। इसमें केवल एक ही शौचालय था, जिसका इस्तेमाल सैकड़ों लोग करते थे, जिनमें ड्यूटी पर तैनात पुलिसकर्मी और गांधीजी के आगंतुक भी शामिल थे। गांधीजी और उनके दल के लिए तीन कमरे खाली कराए गए थे—एक उनके लिए, एक उनके सामान और दल के सदस्यों के रहने के लिए और तीसरा उनके कार्यालय के रूप में इस्तेमाल किया जाना था।
एक क्रोधित भीड़ ने गांधीजी की और कुछ देर बाद सुहरावर्दी की कारों का स्वागत किया, और स्थिति भयावह मोड़ लेने लगी। गांधीजी ने अपने दल के कुछ सदस्यों को प्रदर्शनकारियों से विनती करने और शांति बनाए रखने का आग्रह करने के लिए भेजा, क्योंकि वे उनकी शिकायतें सुनने को तैयार थे। प्यारेलाल ने स्थिति का विस्तृत वर्णन इस प्रकार किया है: प्रदर्शन अभी जारी ही था कि होरेस अलेक्जेंडर, जिन्हें गांधीजी ने बेलियाघाटा में अपने साथ रहने के लिए आमंत्रित किया था, वहाँ पहुँचे। प्रदर्शनकारियों ने उन्हें भी रोकने की कोशिश की। होरेस के साथ आए एक भारतीय मित्र ने भीड़ को समझाने का प्रयास किया। जवाब में, "गांधीजी, वापस जाओ" के और भी तीखे नारे लगे। अंततः, वे दोनों कार से उतरे और घर के अंदर चले गए। शोरगुल जारी रहा।
कुछ युवकों ने उस कमरे की खिड़की से अंदर चढ़ने की कोशिश की जिसमें गांधीजी बैठे थे। गांधीजी के दल के सदस्यों ने उनसे ऐसा न करने की विनती की। लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। होरेस ने खिड़कियाँ बंद करना शुरू कर दिया। जैसा कि उन्होंने खुद बाद

में कहा, यह एक "बेहद गलत कदम" साबित हुआ। लगभग तुरंत ही खिड़कियों के शीशे पर पत्थर फेंके जाने लगे और शीशा चारों ओर उड़ने लगा। तब हमें एहसास हुआ कि वहाँ लकड़ी के शटर लगे हैं और हमने उन्हें भी बंद कर दिया, फिर भी कुछ देर तक उन पर पत्थर फेंके जाते रहे। एक प्रेस रिपोर्टर मेरे पास आया और बोला, "क्या आपको चोट लगी है?" मैंने कहा, "नहीं, लेकिन मेरे बालों में थोड़ा सा शीशा लगा है!"
'तभी प्रदर्शनकारियों के प्रतिनिधियों को गांधीजी से मिलवाने के लिए लाया गया। उनमें से एक ने बोलना शुरू किया, "पिछले साल जब 16 अगस्त को हिंदुओं पर प्रत्यक्ष कार्रवाई शुरू की गई थी, तब आप हमारी मदद के लिए नहीं आए थे। अब जब मुस्लिम बहुल इलाकों में थोड़ी सी भी अशांति फैली है, तो आप उनकी सहायता के लिए दौड़ पड़े हैं। हमें आपकी यहाँ ज़रूरत नहीं है।"
गांधीजी: अगस्त 1946 के बाद से बहुत समय बीत चुका है। मुसलमानों ने तब जो किया वह सरासर गलत था। लेकिन 1947 में 1946 का बदला लेने का क्या फायदा? मैं नोआखली जा रहा था, जहाँ आपके अपने रिश्तेदार मेरी उपस्थिति चाहते थे। लेकिन अब मुझे लगता है कि मुझे यहीं से नोआखली की सेवा करनी होगी। आपको समझना होगा कि मैं यहाँ केवल मुसलमानों की ही नहीं, बल्कि हिंदुओं, मुसलमानों और सभी की सेवा करने आया हूँ... मैं स्वयं को आपकी सुरक्षा में सौंप रहा हूँ। यदि आप चाहें तो मेरे विरुद्ध जाकर विपरीत भूमिका निभा सकते हैं। मैं अपने जीवन के अंतिम पड़ाव पर पहुँच चुका हूँ। अब मुझे ज्यादा दूर नहीं जाना है... मैंने नोआखली के मुसलमानों को भी यही चेतावनी दी है; मैंने यह अधिकार अर्जित कर लिया है। नोआखली में मुसलमानों के फिर से पागलपन का प्रकोप होने से पहले, वे मुझे मृत पाएंगे। आप यह क्यों नहीं देख पा रहे

हैं कि यह कदम उठाकर मैंने नोआखली की शांति का भार शहीद सुहरावर्दी और उनके मित्रों—जिनमें मियां गुलाम सरवर और अन्य लोग शामिल हैं—के कंधों पर डाल दिया है? यह कोई छोटी उपलब्धि नहीं है।'
शाम की नमाज़ हैदरी हवेली के परिसर में अदा की गई। दस हज़ार से ज़्यादा लोग उस छोटी सी जगह में ठसाठस भर गए। नमाज़ के बाद गांधीजी ने कहा, 'कल, 15 अगस्त से हम ब्रिटिश शासन के बंधन से मुक्त हो जाएँगे। लेकिन आज आधी रात से भारत का विभाजन भी हो जाएगा। इसलिए, कल का दिन खुशी का दिन होने के साथ-साथ दुख का भी दिन होगा। यह हम पर ज़िम्मेदारी का भारी बोझ डालेगा। आइए हम ईश्वर से प्रार्थना करें कि वह हमें इसे सम्मानपूर्वक सहने की शक्ति दे। वे सभी मुसलमान जो भागने पर मजबूर हुए, अपने घरों को लौट जाएँ। अगर कलकत्ता में ढाई लाख हिंदू और मुसलमान एक-दूसरे के कट्टर दुश्मन हैं, तो मैं किस मुँह से नोआखली जाकर वहाँ के मुसलमानों के सामने हिंदुओं का पक्ष रख सकता हूँ? और अगर सांप्रदायिक कलह की आग पूरे देश को अपनी चपेट में ले ले, तो हमारी नवजात स्वतंत्रता कैसे बच पाएगी?'
भीड़ में से कई लोग उत्तेजित होकर सुहरावर्दी के बारे में पूछने लगे। गांधीजी ने उत्तर दिया कि उन्होंने सुहरावर्दी को सभा से दूर रहने के लिए कहा था क्योंकि वे किसी भी प्रकार की नाराजगी से बचना चाहते थे। उन्होंने आगे कहा कि चूंकि भीड़ ने अत्यंत धैर्य दिखाया है, इसलिए वे सुहरावर्दी को अगले दिन सभा में शामिल होने के लिए कहेंगे।
प्रार्थना के बाद गांधीजी अपने कमरे में लौट आए और काम करने बैठ गए। थोड़ी देर बाद गांधीजी सड़क की ओर खुलने वाली एक खिड़की पर दिखाई दिए। वहाँ गुस्से में भरे युवकों का एक समूह जमा था और

सुहरावर्दी के खिलाफ नारे लगा रहा था। गांधीजी ने सुहरावर्दी को अपने पास बुलाया और भीड़ के सामने खड़े हो गए, एक हाथ चतुराई से उनके कंधे पर और दूसरा मनु के कंधे पर रखा। भीड़ में से किसी ने चिल्लाकर पूछा, 'क्या आप कलकत्ता हत्याकांड के लिए जिम्मेदार नहीं हैं?'
'हां, यह मेरी जिम्मेदारी थी,' सुहरावर्दी ने प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस के दौरान हुए नरसंहारों में अपनी भूमिका को पहली बार सार्वजनिक रूप से स्वीकार करते हुए कहा।
विनम्रता का कभी अनुभव न करने वाले व्यक्ति द्वारा अपने अपराध की इस स्पष्ट और बेबाक स्वीकारोक्ति का भीड़ पर गहरा प्रभाव पड़ा। गांधी ने बाद में कहा, 'यह एक निर्णायक मोड़ था। इसका एक शुद्धिकरण प्रभाव था। मैं इसे महसूस कर सकता था।'
गांधी जी के अनुरोध पर 15 अगस्त की मध्यरात्रि से हैदरी हवेली के बाहर तैनात सशस्त्र गार्डों को हटा दिया गया और उनकी जगह युवा स्वयंसेवक खड़े हो गए, जिनमें हिंदू और मुस्लिम दोनों समान संख्या में थे।
जैसे ही घड़ी में बारह बजे, ज़ोरदार जयकार गूंज उठी। भारत आज़ाद हो गया! पूरा देश खुशी से झूम उठा, लेकिन वह शख्स जिसने पिछले तीन दशकों से स्वतंत्रता संग्राम का नेतृत्व किया था, कलकत्ता के सबसे गंदे इलाकों में से एक जर्जर हवेली के एक अंधेरे कमरे में गहरी नींद में सो रहा था। नई दिल्ली में, जिन लोगों को उसने भारत को उसके शुरुआती दौर में मार्गदर्शन देने की ज़िम्मेदारी सौंपी थी, वे एक ऐसे समारोह में व्यस्त थे जो अपनी भव्यता और समारोह में राज द्वारा भारत को एक सदी तक गुलाम बनाए रखने के दौरान आयोजित किए गए महान दरबारों को टक्कर दे रहा था।

उस सुबह गांधी जी अपने सामान्य समय से एक घंटा पहले, दो बजे उठ गए। उस दिन उनके घनिष्ठ सहयोगी और पच्चीस वर्षों तक सचिव रहे महादेव देसाई की पांचवीं पुण्यतिथि भी थी। गांधी जी ने सुबह की प्रार्थना के बाद उपवास और गीता पाठ करके अपनी परंपरा के अनुसार पुण्यतिथि मनाई।
स्वतंत्रता के उल्लास में डूबी एक विशाल भीड़ ने राज्यपाल के निवास, गवर्नमेंट हाउस पर धावा बोल दिया। गुलामी के अनेक वर्षों में यह ब्रिटिश शक्ति का प्रतीक रहा था, एक ऐसा स्थान जहाँ भारत के आम आदमी का जाना वर्जित था। अब अपने उल्लास में वे यह भूल गए कि तत्कालीन राज्यपाल सी. राजगोपालाचारी, जिन्हें 'राजाजी' कहा जाता था, उनकी अपनी सरकार के प्रतिनिधि थे; पश्चिम बंगाल के राज्यपाल को वस्तुतः तब तक बंदी बनाकर रखा गया जब तक कि पुलिस और सेना ने भीड़ को वहाँ से खदेड़ नहीं दिया। स्वतंत्रता दिवस की शाम की प्रार्थना के लिए लगभग 30,000 लोग एकत्रित हुए। हैदरी हवेली के पास का मैदान लोगों से खचाखच भरा हुआ था। गांधी जी ने कलकत्ता के नागरिकों को उस दिन प्रदर्शित की गई एकता के लिए बधाई दी। उन्हें पूरा विश्वास था कि उनके द्वारा स्थापित उदाहरण पंजाब और भारत के अन्य हिस्सों को भी प्रभावित करेगा। उन्होंने लोगों को अपनी स्वतंत्रता का बुद्धिमानी से उपयोग करने की चेतावनी दी। उन्होंने कहा कि भारत में रहने वाले यूरोपीय लोगों के साथ उन्हें वैसा ही व्यवहार करना चाहिए जैसा वे अपने लिए अपेक्षा करते हैं।
गांधीजी ने 15 अगस्त को अपनी एक यूरोपीय प्रशंसक, अगाथा हैरिसन को लिखे पत्र में बताया कि उन्होंने वह दिन कैसे मनाया था: 'आप जानती हैं कि आज जैसे महान अवसरों को मनाने का मेरा तरीका ईश्वर का धन्यवाद करना और इसलिए प्रार्थना करना है। इस प्रार्थना के

साथ उपवास भी आवश्यक है। और गरीबों के प्रति अपनी पहचान और समर्पण के प्रतीक के रूप में कताई भी आवश्यक है। इसलिए मुझे प्रतिदिन की जाने वाली कताई से संतुष्ट नहीं होना चाहिए, बल्कि अपनी अन्य जिम्मेदारियों के अनुरूप जितना संभव हो उतना करना चाहिए।'
राजकुमारी अमृत कौर को लिखे एक अन्य पत्र में उन्होंने लिखा: 'मैं एक मुस्लिम परिवार में हूँ। वे सभी बहुत अच्छे हैं। मैंने सोडेपोर आश्रम से किसी को नहीं लिया है। इसलिए मुझे जो मदद चाहिए, वह केवल मुस्लिम मित्रों से ही मिलती है। यह मेरे लिए कोई नया अनुभव नहीं है। यह मुझे दक्षिण अफ्रीका के पुराने दिनों और यहाँ के खिलाफत काल की याद दिलाता है। फिलहाल मैं किसी का दुश्मन नहीं हूँ। कौन जाने यह कब तक चलेगा! हिंदू और मुसलमान लगभग एक ही दिन में दोस्त बन गए हैं। ऐसा लगता है जैसे सुहरावर्दी पूरी तरह बदल गया है।'
घेराबंदी वाले सरकारी भवन से मुक्त होने के बाद राजाजी गांधीजी से मिलने आए। सम्मान के प्रतीक के रूप में उन्होंने प्रवेश द्वार पर अपनी चप्पलें उतार दीं और पूरे हॉल में नंगे पैर चले। दोनों पुराने सहकर्मी थे जिन्होंने अलग-अलग राजनीतिक विचारधाराओं के बावजूद अपनी मित्रता बनाए रखी थी, इसके अलावा वे वैवाहिक बंधन से भी बंधे थे: गांधीजी के सबसे छोटे बेटे देवदास का विवाह राजाजी की बेटी लक्ष्मी से हुआ था।
16 अगस्त की शाम की प्रार्थना के लिए लगभग पचास हजार लोग इकट्ठा हुए, और 17 अगस्त को लगभग एक लाख लोगों की भीड़ उमड़ी। उन्हें संबोधित करते हुए गांधीजी ने आश्चर्य व्यक्त किया कि उनका उत्साह कितना वास्तविक था। उन्होंने कहा, 'कलकत्ता में जो चमत्कार हो रहा है, उसके लिए हर कोई मुझे बधाई दे रहा है। आइए हम

सब ईश्वर की अपार कृपा के लिए उनका धन्यवाद करें। लेकिन इस क्षम्य उत्साह में हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि कलकत्ता में कुछ ऐसे स्थान भी हैं, जहाँ सब कुछ ठीक नहीं है। मैंने सुना है कि एक जगह हिंदू उन मुस्लिम निवासियों का स्वागत करने को तैयार नहीं हैं जिन्हें अपने घर छोड़ने के लिए मजबूर होना पड़ा था... मैं आपके अपार स्नेह की सराहना करता हूँ, लेकिन मुझे आशा है कि यह क्षणिक उत्साह साबित नहीं होगा।'
प्रतिदिन होने वाली प्रार्थना सभाओं में बड़ी संख्या में हिंदुओं और मुसलमानों की उपस्थिति का जिक्र करते हुए सुहरावर्दी ने कहा कि किसी ने कल्पना भी नहीं की थी कि कलकत्ता में दोनों समुदायों का इतनी बड़ी संख्या में मिलन संभव होगा। उन्होंने कहा कि पार्क सर्कस क्षेत्र, जो मुख्य रूप से मुस्लिम बहुल इलाका है, में हिंदू पहले से ही अपने खाली पड़े घरों पर कब्जा कर रहे हैं। उन्होंने आगे कहा कि वे दुनिया को दिखाएंगे कि उनके बीच कोई भेद नहीं है।
हालांकि, गांधीजी को आभास हो गया था कि कुछ गड़बड़ होने वाली है। 18 अगस्त को मीराबेन को लिखे पत्र में गांधीजी ने अपने मन में उठ रहे संदेहों का जिक्र किया: 'भीड़ की खुशी तो है, लेकिन मुझे कोई संतोष नहीं। क्या मुझमें कुछ कमी है? हिंदू-मुस्लिम एकता इतनी अचानक हुई है कि सच नहीं लगती। वे इस बदलाव का श्रेय मुझे दे रहे हैं। मुझे आश्चर्य होता है! शायद अगर मैं वहां न भी होता, तब भी हालात ऐसे ही होते। समय बताएगा।' गांधीजी द्वारा बताई गई गड़बड़ का पहला संकेत उसी दिन मिला। यह मुसलमानों का ईद का त्योहार था। सुबह से ही बड़ी संख्या में मुसलमान गांधीजी से मिलने आए। चूंकि यह उनके साप्ताहिक मौन का दिन था, इसलिए गांधीजी ने उन्हें बधाई देते हुए एक छोटा सा संदेश लिखा। दोपहर

में उन्हें कलकत्ता से चौदह मील उत्तर में स्थित बैरकपुर में हुई गड़बड़ी की खबर मिली: पिछले दिन निकाली गई एक शोभायात्रा को लेकर हंगामा हुआ था। गांधीजी दोपहर बाद बैरकपुर पहुंचे, तब तक हंगामा शांत हो चुका था; घटना का अंत दोनों समुदायों के एक-दूसरे को गले लगाने के साथ हुआ।
उसी शाम गांधीजी को कलकत्ता से छब्बीस मील उत्तर में स्थित औद्योगिक क्षेत्र कांचरापारा में घटी एक अन्य घटना की सूचना मिली। घटना नमाज़ के दौरान मस्जिद के बाहर संगीत बजाए जाने से संबंधित थी। भीड़ को नियंत्रित करने के लिए पुलिस को गोलीबारी करनी पड़ी, जिसके परिणामस्वरूप कई लोगों की मौत हो गई। गांधीजी ने 19 तारीख को कांचरापारा का दौरा किया और उस दुर्भाग्यपूर्ण घटना का जिक्र करते हुए सुझाव दिया कि जब तक कांग्रेस और मुस्लिम लीग या भारत और पाकिस्तान के प्रधानमंत्रियों के बीच कोई समझौता नहीं हो जाता, तब तक मस्जिदों के आसपास, अक्सर मजबूरी में, संगीत बजाने की प्रथा को दोनों राज्यों में स्वेच्छा से और स्वतंत्र रूप से जारी रखा जाना चाहिए, जैसा कि ब्रिटिश शासनकाल में होता था।
कुछ क्षेत्रों में एक और कारण से तनाव था। बंगाल के दो बार विभाजन के कारण गड़बड़ी हो गई थी: एक बार काल्पनिक विभाजन के तहत और फिर सीमा आयोग के निर्णय के अनुसार। पहले विभाजन के तहत, हिंदू बहुल खुलना और चटगांव पहाड़ी क्षेत्रों को पश्चिम बंगाल में और मुस्लिम बहुल मुर्शिदाबाद को पूर्वी बंगाल में शामिल किया गया था। सीमा आयोग के निर्णय ने इसे उलट दिया। इन क्षेत्रों में स्वतंत्रता दिवस काल्पनिक विभाजन के अनुसार मनाया जाता था। इसे उलट दिए जाने और सीमा आयोग के निर्णय के अनुसार सीमा का पुनर्निर्धारण किए जाने पर, स्वतंत्रता दिवस के

बाद से इन जिलों में फहराए जा रहे राष्ट्रीय ध्वज गलत थे। इससे इन क्षेत्रों में कुछ शत्रुता पैदा हो गई थी। यह मामला गांधीजी के समक्ष रखा गया, जिन्होंने कहा कि ध्वजों को बदलने में जरा भी संकोच नहीं होना चाहिए। व्यक्तिगत रूप से उनका मत था कि चूंकि दोनों राज्य एक-दूसरे के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध रखते हैं, इसलिए दोनों ध्वजों को प्रदर्शित न करने का कोई कारण नहीं है। 'भले ही पाकिस्तान में ऐसा न हो, हमें भारतीय संघ में तो करना ही चाहिए।' हमें दूसरे पक्ष के कार्यों की परवाह किए बिना सही काम करना चाहिए।
दिन-प्रतिदिन शाम की प्रार्थना सभा में उपस्थित लोगों की संख्या बढ़ती गई। 21 अगस्त को पार्क सर्कस में आयोजित सभा में सात लाख से अधिक लोग उपस्थित थे। भारत संघ और पाकिस्तान के झंडे साथ-साथ फहराए गए। इसका जिक्र करते हुए गांधीजी ने कहा कि अब वे नोआखली के लिए प्रस्थान कर सकते हैं।
27 अगस्त को गांधी जी ने किद्दरपुर बंदरगाह क्षेत्र में अपनी प्रार्थना सभा आयोजित की; इस क्षेत्र में बड़ी संख्या में श्रमिक आबादी की उपस्थिति ने इसे भविष्य में अशांति का संभावित केंद्र बना दिया था। प्रार्थना के बाद श्रमिकों को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा कि श्रम का भविष्य सांप्रदायिक सद्भाव से घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ है। श्रमिक तभी अजेय बनेंगे जब वे अपनी शक्ति को पहचान लेंगे और एकजुटता की कला सीख लेंगे। ऐसा तब तक संभव नहीं होगा जब तक श्रमिक एक हिंदू नियोक्ता और एक मुस्लिम नियोक्ता के साथ भेदभाव करते रहेंगे, या जब तक हिंदू श्रमिक वर्ग स्वयं को मुस्लिम श्रमिक वर्ग से और दोनों को हरिजन वर्ग से अलग समझेगा।

जिसे 'कलकत्ता का चमत्कार' कहा जा रहा था, उसका असर देश के अन्य हिस्सों में भी दिखने लगा था। पटना से आए एक टेलीफोन संदेश में गांधीजी को बताया गया कि कलकत्ता के इस चमत्कार का बिहार पर भी गहरा प्रभाव पड़ रहा है। यह खबर सुनकर वे बहुत प्रसन्न हुए। 24 अगस्त को भारतीय संघ की संविधान सभा में मुस्लिम लीग पार्टी ने एक प्रस्ताव पारित कर कहा, 'कलकत्ता में समुदायों के बीच शांति और सद्भावना बहाल करने और सैकड़ों निर्दोष लोगों और संपत्ति को विनाश से बचाने के लिए महात्मा गांधी द्वारा किए गए कार्यों के प्रति गहरी कृतज्ञता व्यक्त की जाती है। शांति बनाए रखने के लिए उनके अथक प्रयासों से उन्होंने दूरदर्शिता और उदारता का परिचय दिया है। मुस्लिम लीग को पूर्ण विश्वास है कि श्री सुहरावर्दी और अन्य मुसलमान उनके साथ सहयोग करना जारी रखेंगे और उनके सराहनीय प्रयासों के प्रति अपनी प्रशंसा व्यक्त करेंगे।'
हरिजन में प्रकाशित 'चमत्कार या संयोग?' शीर्षक वाले एक लेख में गांधी ने लिखा: 'शहीद सुहरावर्दी और मैं बेलियाघाटा में साथ रह रहे हैं, जहाँ मुसलमानों के कष्ट झेलने की खबरें आ रही हैं। हम एक मुस्लिम घर में रह रहे हैं और मुस्लिम स्वयंसेवक हमारी सुख-सुविधाओं का पूरा ध्यान रख रहे हैं। यहाँ परिसर में अनगिनत हिंदू और मुसलमान अपने पसंदीदा नारे लगाते हुए आते रहते हैं। ऐसा लगता है मानो भाईचारे का आनंद पल-पल बढ़ता जा रहा है... क्या इसे चमत्कार कहा जाए या संयोग? इसे चाहे जो भी नाम दिया जाए, यह स्पष्ट है कि मुझे जो श्रेय मिल रहा है वह बिलकुल अनुचित है; न ही शहीद इसके योग्य हैं। यह अचानक आया बदलाव एक या दो लोगों का काम नहीं है। हम ईश्वर के हाथों की कठपुतली हैं। वह हमें अपनी धुन पर नचाते हैं। इसलिए मनुष्य का अधिकतम कार्य यही है कि वह

इस नृत्य में हस्तक्षेप न करे और अपने सृष्टिकर्ता की इच्छा का पूर्णतः पालन करे।' इस प्रकार विचार करने पर यह कहा जा सकता है कि इस चमत्कार में उन्होंने हम दोनों को अपने साधन के रूप में इस्तेमाल किया है और जहाँ तक मेरा सवाल है, मैं केवल यही पूछता हूँ कि क्या मेरे जीवन के अंतिम पड़ाव में मेरी जवानी का सपना साकार होगा।
हालांकि, लोगों को पूरा यकीन था कि कलकत्ता में शांति एक ही व्यक्ति की मौजूदगी से आई थी। लॉर्ड माउंटबेटन ने गांधीजी को लिखा: 'पंजाब में हमारे पास 55,000 सैनिक हैं और बड़े पैमाने पर दंगे हो रहे हैं। बंगाल में हमारी सेना में सिर्फ एक व्यक्ति है और कोई दंगा नहीं है। एक सेवारत अधिकारी और प्रशासक होने के नाते, क्या मुझे एक सदस्यीय सीमा बल को श्रद्धांजलि अर्पित करने की अनुमति दी जा सकती है, और उनके द्वितीय कमान अधिकारी श्री सुहरावर्दी को भी। आपको 15 अगस्त को संविधान सभा में आपके नाम का जिक्र होने पर मिली जोरदार तालियों को सुनना चाहिए था, जब हम सभी आपके बारे में बहुत सोच रहे थे।' प्रशंसाओं को नजरअंदाज करते हुए और चुनौती स्वीकार करते हुए, गांधीजी ने माउंटबेटन को जवाब दिया: 'मुझे नहीं पता कि शहीद और मैं आपकी प्रशंसाओं को वैध रूप से अपना सकते हैं या नहीं। शायद हमारे लिए उस जादुई प्रदर्शन का श्रेय लेने के लिए अनुकूल परिस्थितियां बन गई थीं। क्या मैं आपके पत्र से सही समझ रहा हूं कि आप चाहते हैं कि मैं पंजाब के लिए भी ऐसा ही प्रयास करूं?'
माउंटबेटन ने पंजाब के बारे में जो लिखा था, वह दुखद रूप से सच था। विभाजन के बाद, पंजाब के दोनों हिस्से, पाकिस्तानी पश्चिम और भारतीय पूर्व, धार्मिक घृणा और हिंसा के उन्माद में डूबे हुए थे। पश्चिमी पंजाब में, हिंदुओं को व्यवस्थित रूप से धमकाया जा

रहा था, अपहरण किया जा रहा था, बलात्कार किया जा रहा था, जबरन धर्म परिवर्तन कराया जा रहा था, आगजनी की जा रही थी, लूटपाट की जा रही थी और हत्या की जा रही थी। उन्हें जो कुछ भी वे बचा सकते थे, उसे लेकर भारतीय क्षेत्र की ओर भागने के लिए मजबूर किया जा रहा था। पंजाब के भारतीय हिस्सों में, सिखों और हिंदुओं के हाथों मुसलमानों का भी यही हाल हुआ। दोनों हिंसक भीड़ में से किसी के भी कृत्य का दूसरे की ओर से समान या कई गुना अधिक गंभीर प्रतिशोध हुआ।
17 अगस्त को गांधीजी को लाहौर से एक बेहद चिंताजनक टेलीग्राम मिला: 'सोमवार से लाहौर शहर में हिंदुओं का भयानक नरसंहार जारी है, जो रावलपिंडी से भी कहीं अधिक भयावह है। सैकड़ों शव सड़कों पर बिखरे पड़े हैं। अनारकली बाजार और अन्य व्यापारिक क्षेत्र जला दिए गए हैं। शहर का अधिकांश भाग आग की लपटों में घिरा है। हिंदू आवासीय क्षेत्रों में पानी की आपूर्ति बंद कर दी गई है। फंसे हुए हिंदू, जिन्होंने भागने की कोशिश की, उन्हें सेना और पुलिस ने गोली मार दी। तीन सौ से अधिक हिंदू जिंदा जल गए। हिंदू भोजन और पानी से वंचित हैं। उन्हें जान से मारने की धमकी दी जा रही है। तुरंत कुछ करें। लाहौर में आपकी उपस्थिति आवश्यक है।' गांधीजी ने यह संदेश पटेल को यह कहते हुए भेजा: 'मैंने इसका जवाब नहीं दिया है। अगर यह सच है तो यह बहुत भयानक है। मुझे तथ्य बताएं।' ताजा हिंसा की खबर मिलते ही नेहरू पूर्वी पंजाब के दंगाग्रस्त क्षेत्रों की ओर तुरंत रवाना हो गए। दिल्ली लौटने पर उन्होंने 21 अगस्त को गांधीजी को संदेश भेजा, जिसमें उन्होंने 'कलकत्ता में हुए अद्भुत बदलाव पर हार्दिक बधाई' दी और कहा कि पंजाब को उनकी 'सहयोगपूर्ण उपस्थिति' की आवश्यकता है। गांधीजी ने अगले दिन उत्तर दिया: 'मैं यहीं फंस गया हूँ। नोआखली

में मेरी उपस्थिति अनिवार्य है। बिहार में भी कुछ दिन लगेंगे। इन परिस्थितियों में मुझे नहीं पता कि मैं पंजाब कब जा पाऊँगा। आप मेरा मार्गदर्शन करें।' इस पर नेहरू ने उत्तर दिया: 'मैं आपसे तुरंत पंजाब जाने का अनुरोध नहीं कर रहा हूँ। हमें अभी स्थिति का सामना करना होगा। बाद में मैं आपसे वहाँ जाने का अनुरोध कर सकता हूँ।' उन्होंने पंजाब की स्थिति पर एक अत्यंत चिंताजनक रिपोर्ट भी भेजी: 'दक्षिणी जिले, जो अब तक किसी बड़ी समस्या से मुक्त थे, हमारी जानकारी के अनुसार अप्रत्याशित रूप से अशांत हो गए। विशेष रूप से होशियारपुर और जालंधर जिलों में कुछ भयानक कृत्य और मुसलमानों का बड़े पैमाने पर नरसंहार हुआ है। मारे गए लोगों की संख्या का अनुमान लगाना बिल्कुल असंभव है। हालांकि, मेरा अनुमान है कि पिछले महीने पूर्वी पंजाब में मारे गए लोगों की संख्या 7 से 8 हजार तक हो सकती है।' ये आंकड़े पूरी तरह से गलत हो सकते हैं, क्योंकि ये अनुमान पर आधारित हैं।
पश्चिमी पंजाब में मृतकों की संख्या शायद बहुत कम है, संभवतः अन्य आंकड़ों की आधी। यह बात केवल हाल के हफ्तों पर लागू होती है, रावलपिंडी और मुल्तान में हुई पिछली हत्याओं पर नहीं। पूर्वी पंजाब की तुलना में पश्चिमी पंजाब में कहीं अधिक आगजनी और लूटपाट हुई है। यह हत्या का सिलसिला पूरी तरह से पागलपन की हद तक पहुंच गया है और बड़ी संख्या में लोग अपने घर छोड़कर पश्चिम या पूर्व की ओर पलायन कर रहे हैं। जैसा कि आप जानते हैं, पिछले महीनों में बड़ी संख्या में लोग पश्चिमी पंजाब छोड़ चुके थे। अब यह प्रक्रिया दोनों तरफ दोहराई जा रही है। वर्तमान समस्या लगभग तीन सप्ताह पहले अमृतसर के ग्रामीण इलाकों में शुरू हुई थी। सिखों ने हमला किया था। एक सप्ताह के भीतर लाहौर ने जवाबी कार्रवाई की, जिसमें मुसलमान हमलावर थे। तब से यह

दोनों तरफ फैल गई है, शायद पूर्वी पंजाब में अधिक, जहां अच्छी तरह से हथियारों से लैस गिरोह, मुख्य रूप से सिख, कुछ हद तक हिंदू, घूम रहे हैं और मुख्य रूप से मुस्लिम गांवों पर हमला कर रहे हैं। आम तौर पर मुसलमान उन गांवों में सुरक्षित रहते हैं जहां वे अल्पसंख्यक होते हैं। उनके पड़ोसी उन पर हमला नहीं करते। हथियारों से लैस गिरोह विशेष रूप से पूर्वी पंजाब के मुस्लिम बहुल गांवों को निशाना बनाते हैं। पश्चिमी पंजाब में भी कुछ ऐसा ही हुआ था... ऐसा लगता है कि ज्यादातर छोटे-मोटे सरकारी अधिकारी, जिनमें पुलिसकर्मी भी शामिल हैं, इस धंधे में शामिल होते हैं। कभी-कभी सैनिक भी। यह सब बेहद घिनौना है। नेहरू ने आगे कहा कि उन्होंने स्थिति के बारे में उन्हें पत्र लिखने में संकोच किया था क्योंकि वे उनकी चिंताओं को और बढ़ाना नहीं चाहते थे। लेकिन अब वह समय आ गया था जब गांधीजी को जानना आवश्यक था। फिलहाल इसमें कोई संदेह नहीं है कि मुस्लिम लीग के नेता और सिख नेता दोनों ही नरसंहार और आगजनी को रोकने का प्रयास कर रहे हैं, क्योंकि उन्होंने ही पहले आग लगाई थी। मुझे पूरा विश्वास है कि हम अगले कुछ दिनों में इस मामले को समाप्त कर देंगे, कम से कम प्रमुख घटनाओं के मामले में तो ऐसा ही होगा। लेकिन यह कितनी भयानक विरासत होगी! पंजाब, पश्चिम और पूर्व दोनों ओर, एक बर्बाद प्रांत बन जाएगा और बड़ी संख्या में लोग बेघर हो जाएंगे।
गांधी जी को पंजाब की स्थिति के बारे में अन्य स्रोतों से भी जानकारी मिल रही थी। कलकत्ता में बसे पंजाबियों के एक प्रतिनिधिमंडल ने 24 अगस्त को गांधी जी से मुलाकात की और उन्हें पंजाब में घटी भयावह घटनाओं के बारे में बताया। उसी दिन गांधी जी ने नेहरू को पत्र लिखकर प्रतिनिधिमंडल द्वारा बताई गई

बातों का जिक्र किया: 'कलकत्ता में रहने वाले पंजाबियों ने मुझ पर तुरंत पंजाब जाने का दबाव डाला है। वे मुझे एक भयानक कहानी सुना रहे हैं। हजारों लोग मारे गए हैं! कुछ हजार लड़कियों का अपहरण कर लिया गया है! हिंदू पाकिस्तान क्षेत्र में नहीं रह सकते, न ही मुसलमान दूसरे हिस्से में। इसके अलावा, यह जानकारी भी मिली है कि सेना के दोनों गुटों ने अलग-अलग गुट बना लिए और जमकर उत्पात मचाया! क्या इनमें से कुछ भी सच हो सकता है! ... आपको क्या लगता है कि मुझे पंजाब कब जाना चाहिए, अगर जाना ही है तो? मुझे अभी भी कलकत्ता में काम है, फिर नोआखली और बिहार में। लेकिन अगर जरूरी हुआ तो पंजाब जाने के लिए सब कुछ छोड़ा जा सकता है।'
इस बीच नेहरू पूर्वी पंजाब के अपने दूसरे दौरे पर गए थे। 25 अगस्त की सुबह लौटते ही उन्होंने गांधीजी को पत्र लिखा: 'अपने पिछले पत्र में मैंने आपको पंजाब की स्थिति का कुछ अंदाजा दिया था। आम तौर पर, भयंकर दंगों के बाद भी ज्यादातर लोग अपने घरों में ही रहते हैं। अब पाकिस्तान के अस्तित्व में आने से, खतरनाक क्षेत्र से भागने की सामान्य इच्छा के साथ-साथ इससे बाहर निकलने की इच्छा भी बढ़ गई है। पंजाब में सीमा के दोनों ओर लोग इसी तरह प्रभावित हैं और बड़े पैमाने पर पलायन हो रहा है। ये पलायन काफी हद तक स्वतःस्फूर्त हैं। निश्चित रूप से इसका परिणाम लाखों लोगों के लिए कष्टदायी होगा और आगे भी होगा। इसका अर्थ दोनों ओर की सभी संबंधित प्रांतीय और केंद्रीय सरकारों पर भारी बोझ भी होगा।'
अमृतसर जिले के मुसलमानों ने, यानी जो बच गए, मुझे बताया कि जिले में उनके 50,000 लोग मारे गए। यह निश्चित रूप से एक अतिशयोक्ति है। लेकिन अगर पूर्वी पंजाब में 10,000 तक लोग मारे गए हों तो

हमें आश्चर्य नहीं होना चाहिए। दोनों तरफ से बड़े पैमाने पर हत्याएं हुई हैं और बड़ी संख्या में शरणार्थियों का नरसंहार किया गया है। पूर्वी पंजाब में शायद अकाली सिखों ने सबसे ज्यादा हत्याएं की हैं। हत्याओं से भी बदतर दोनों तरफ महिलाओं पर हुए भयानक अत्याचार हैं... यह कहा जाता है और सही भी है कि लाहौर और अमृतसर शांत हैं। सच्चाई यह है कि वहां मारे जाने के लिए ज्यादा लोग बचे ही नहीं हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि लाहौर लगभग पूरी तरह से मुस्लिम शहर बन गया है और अमृतसर एक हिंदू-सिख शहर।
पूर्वी और पश्चिमी पंजाब दोनों में ही, आदतन कानून तोड़ने वाले तत्व सक्रिय होते जा रहे हैं और वे नेताओं की बात सुनने को तैयार नहीं हैं। दोनों प्रांतों में आंतरिक संघर्ष भी चल रहे हैं। पश्चिमी पंजाब में मुख्यमंत्री ममदोत और फिरोज खान नून के बीच टकराव है। नून लीग के उग्र तत्वों को बढ़ावा देते नजर आ रहे हैं। पूर्वी पंजाब में सिखों और हिंदुओं के बीच काफी तनाव है। अकाली दल, या उनमें से कुछ, इस अशांति के परिणामस्वरूप सिख राज्य की स्थापना की बात करने से नहीं हिचकिचाते। उनका तर्क काफी अच्छा है, लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं है कि उनमें से कई लोगों को यह अस्पष्ट उम्मीद है कि अगर अशांति जारी रही तो उन्हें कुछ लाभ मिल सकता है। इनमें से कुछ सोचते हैं कि वे भारत को पाकिस्तान के साथ युद्ध करने के लिए मजबूर कर सकते हैं। उनका मानना है कि ऐसे युद्ध में पाकिस्तान की हार निश्चित है और फिर सिखिस्तान अस्तित्व में आएगा। हालांकि, मास्टर तारा सिंह और ज्ञानी करतार सिंह शांति बहाल करने का प्रयास कर रहे हैं। उनका प्रभाव उतना व्यापक नहीं है जितना कुछ लोगों ने सोचा था। अकाली

दल के कुछ उग्र तत्वों ने आरएसएस के कुछ लोगों के साथ हाथ मिला लिया है।
नेहरू गांधी जी के पंजाब जाने को लेकर अभी भी अनिश्चित थे। लेकिन माउंटबेटन 'एक-व्यक्ति सीमा बल' के महत्व और अहिंसा के सामरिक महत्व को समझ चुके थे। नेहरू ने अपने पत्र का समापन करते हुए लिखा: 'आज सुबह संयुक्त रक्षा परिषद की बैठक में माउंटबेटन ने मुझसे आग्रह किया कि मैं आपसे पंजाब जाने का अनुरोध करूं और उन्हें उम्मीद थी कि आप वहां भी कलकत्ता वाला चमत्कार दोहराएंगे। मैंने उनसे कहा कि मैं खुद इस बारे में निश्चित नहीं हूं। मुझे लगता है कि आपको जाना चाहिए, लेकिन अभी नहीं।' अगस्त के आखिरी सप्ताह में पटेल को सुशीला नायर का एक संकटपूर्ण फोन आया, जिन्हें गांधी जी ने नैतिक समर्थन के लिए वाह शरणार्थी शिविर में छोड़ दिया था। उन्होंने लिखा: 'मैं वहाँ रुकी रही, इस बात से पूरी तरह आश्वस्त थी कि हिंदुओं और सिखों का पाकिस्तान से भागना गलत था। वे पीढ़ियों से इस भूमि पर बसे हुए थे और उन्हें वहाँ रहने का अधिकार था। अगर भारतीय दक्षिण अफ्रीका में अपने अधिकारों के लिए लड़ सकते हैं, तो क्या उन्हें पाकिस्तान में अपने घर छोड़ने चाहिए?'
मैंने शरणार्थियों के सामने अपने विचार रखे। कुछ ने उनकी सराहना की, कुछ नाराज़ थे। उन्होंने कहा कि वे बंधकों की तरह जीवन जीने को तैयार नहीं हैं। वे पाकिस्तान में बड़े जमींदार बनने की बजाय भारतीय संघ में भिखारी बनना पसंद करेंगे, जहाँ उनकी महिलाओं की इज्जत तक सुरक्षित नहीं है। मैंने उन्हें समझाने की कोशिश की कि हमारे लिए सही काम यही होगा कि हम अपनी इज्जत की रक्षा में मर जाएं, बजाय इसके कि हम धौंस खाकर भाग जाएं... मैंने कुछ ऐसे गांवों का दौरा किया जहाँ से लोग भागे थे।

उपायुक्त आए और उन्होंने मुझे आश्वासन दिया कि शरणार्थी पूरी तरह सुरक्षित रहेंगे और जल्द ही उनका पुनर्वास संभव हो जाएगा। फिर अप्रत्याशित घटना घटी। दोबारा मुसीबतें शुरू हो गईं। पूर्वी पंजाब में रावलपिंडी का बदला लेने की खबरें आईं और पश्चिमी पंजाब में भी पूर्वी पंजाब की घटनाओं का बदला लेने के लिए हिंसा भड़क उठी। लगभग 10 अगस्त को पूर्वी और पश्चिमी पंजाब में अमानवीय कृत्यों की खबरें आने लगीं। हमारे आसपास के इलाकों से सांप्रदायिक हिंसा के शिकार कई लोग शिविर के अस्पताल में आने लगे... उनमें से एक लगभग सत्रह साल की युवती थी—उन चौहत्तर महिलाओं के समूह में अकेली जीवित बची, जिन्होंने अपनी इज्जत बचाने के लिए कुएं में छलांग लगा दी थी। उसके पिता सरदार प्रताप सिंह पहले ही शिविर में आ चुके थे। उन्होंने और उनके साथियों ने अपने गांव पर हमला करने वाली मुस्लिम भीड़ का हथियारों से मुकाबला किया था। तीन दिनों तक उन्होंने हमलावरों को रोके रखा। जब आखिरकार उनका गोला-बारूद खत्म हो गया, तो उन्हें आत्मसमर्पण करना पड़ा। उनके नेता समेत कई लोग घायल हो गए, कुछ अन्य की मौत हो गई। जीवित बची महिलाओं को बताया गया कि उन्हें तुरंत इस्लाम में परिवर्तित कर दिया जाएगा। उन्होंने अगले दिन तक की मोहलत मांगी।
अगले दिन गुंडे कैंची और रेज़र लेकर आए और अपने शिकारों के बाल काटने और दाढ़ी मुंडवाने लगे, जो इस्लाम में धर्मांतरण का प्रतीक था... कुछ महिलाओं को धर्मांतरण के लिए बाहर आने का आदेश दिया गया। बाकी महिलाओं की ओर से एक बुजुर्ग महिला ने कहा कि आत्मसमर्पण करने से पहले वे आखिरी बार नमाज़ पढ़ना चाहती हैं और कुएँ का पानी पीना चाहती हैं... उनकी विनती मान ली गई। इसके बाद चौहत्तर महिलाएं और लड़कियां उस परिसर में दाखिल हुईं जहाँ

कुआँ था। उन्होंने रस्म के अनुसार स्नान किया और फिर नमाज़ पढ़ने लगीं। उनके मुस्लिम अपहरणकर्ता बेसब्री से उन्हें जल्दी करने के लिए चिल्ला रहे थे। महिलाओं की नेता ने पलटकर कहा, "हिम्मत है तो आओ। तुम हमें ज़िंदा नहीं छू पाओगे।" और इतना कहकर वह कुएँ में कूद गई, उसके पीछे-पीछे बाकी चौहत्तर महिलाएं भी कूद गईं। इस वीर बलिदान ने गुंडों को इतना प्रभावित किया कि वे वहीं जड़वत खड़े रह गए और सिर झुकाकर एक-एक करके चले गए, उन पुरुषों और बच्चों को अछूता छोड़कर जिन्हें उन्होंने धर्मांतरण के लिए इकट्ठा किया था। सिखों ने परिसर में प्रवेश किया और कुएँ में कूदी महिलाओं के शव बाहर निकाले। सरदार प्रताप सिंह की बेटी को छोड़कर सभी मृत थीं। रात में उन पर एक और मुस्लिम भीड़ ने हमला किया, लेकिन एक सैन्य गश्ती दल उनकी मदद के लिए आया और उन्हें वाह शिविर तक पहुँचाया। अस्पताल में घायलों की संख्या बढ़ती गई। एक दिन लगभग मृत और मरणासन्न लोगों से भरा एक ट्रक पहुँचा। एक दिन शिविर पर आसन्न हमले की सूचना मिली। रात में सेना आई और शिविर पर नियंत्रण रखने वाले रणनीतिक बिंदुओं पर मोर्चा संभाल लिया। मैं बहुत थका हुआ बिस्तर पर गया था। कुछ लोग दौड़ते हुए मेरे पास आए। "कृपया उठो। हमलावर आ रहे हैं।" मैंने थके हुए स्वर में उत्तर दिया, "जब वे यहाँ आ जाएँ तो मुझे बताना।" वे एक पल के लिए अवाक रह गए और फिर चले गए। थोड़ी देर बाद शिविर परिसर में मेरे साथ काम कर रहे कुछ सामाजिक कार्यकर्ताओं ने मुझे जगाया। "बैरक में दहशत फैली हुई है।" सैन्य जीपें चल रही थीं। जिस क्षेत्र में वे मोर्चा संभाल रहे थे, वहाँ से तेज रोशनी आ रही थी। मैं चिंतित हो गया। "मान लीजिए हमला हो जाए, तो मैं इन लोगों की रक्षा कैसे करूँगा? इन्हें गांधीजी पर भरोसा था और गांधीजी ने इन्हें मेरे हवाले किया था।

उन्होंने कहा था कि मुझे इन लोगों को कोई नुकसान पहुँचने से पहले मर जाना चाहिए। मरना आसान था, लेकिन क्या मुझे वह मौका मिलेगा? क्या मैं उस परीक्षा में खरा उतर पाऊँगा?" एक साथी ने मुझसे पूछा, "आप उनसे अहिंसक तरीके से आत्मरक्षा करने की उम्मीद कैसे करते हैं? उन्हें वास्तव में क्या करना चाहिए?" मेरे जवाब से उसे यकीन नहीं हुआ। अहिंसक आत्मरक्षा एक पल में नहीं सीखी जा सकती। अगर मैं अहिंसक तरीके से अपनी जान देकर एक उदाहरण पेश कर सकूँ, तो शायद इससे मदद मिले... जब हम बैरक पहुँचे, तो हमले की खबर सबसे पहले लाने वाले लोग वहाँ पहले से ही मौजूद थे। उन्होंने उन्हें बताया होगा कि कैसे उन्होंने मुझे उस भयानक अफवाह के बावजूद सोते हुए पाया था। इससे उन्हें तसल्ली मिली होगी। हमने उनसे थोड़ी देर बात की और फिर वापस आ गए। उस रात शिविर पर कोई हमला नहीं हुआ। जब इसी तरह की अफवाहों के कारण अगली दो रातों में सैन्य गतिविधि हुई, तो घबराहट काफी कम थी।
अगस्त के आखिरी हफ्ते में, पटेल को वाह शिविर से आए एक सिख सैन्य अधिकारी के माध्यम से सुशीला नायर से निम्नलिखित रिपोर्ट मिली: 'हम पूरी तरह से अलग-थलग पड़ गए हैं। यहाँ कोई भी डाक यहाँ से आती-जाती नहीं है। यहाँ के लोग हर पल मौत के डर में जी रहे हैं। मैं उनका मनोबल बनाए रखने की पूरी कोशिश कर रही हूँ। वे मुझे यहाँ से जाने नहीं दे रहे हैं... शिविर कमांडर का कहना है कि तीन-चार दिन पहले शिविर पर हमला होने वाला था। लेकिन हमला नहीं हुआ। आपको यहाँ की सही स्थिति की जानकारी देने के लिए किसी विश्वसनीय व्यक्ति को भेजना चाहिए... कुछ हिंदू शरणार्थी जो मुसलमानों का वेश बनाकर यहाँ पहुँचे हैं, उन्होंने बताया कि गुजरांवाला, वज़ीराबाद, गुजरात और लालामुसा जल रहे हैं। सियालकोट में भी कल से आग लगी हुई है। रावलपिंडी के पास

गुजराखान से भी ऐसी ही रिपोर्ट आई है। कहा जा रहा है कि रेलवे ट्रैक के दोनों ओर शव बिखरे पड़े हैं। परसों सैन्य पुलिस की मौजूदगी से रावलपिंडी जिले के सुखोके गाँव पर हुए हमले को टाल दिया गया।' कल फिर 500 मुसलमानों ने हमला किया, जिसमें 15 हिंदू मारे गए।
हालात बिगड़ते जा रहे हैं। यह कहना मुश्किल है कि मुस्लिम समुदाय कब फिर से बेकाबू हो जाएगा... आशंका है कि गैर-मुस्लिम सैनिकों की वापसी के बाद इस शिविर पर हमला हो सकता है। बताया जा रहा है कि तक्षशिला स्टेशन पर मुस्लिम सेना और पुलिस की मौजूदगी में अलार्म चेन खींचकर एक यात्री ट्रेन को रोक दिया गया। दो सिख मारे गए और दो-तीन घायल हो गए। बाद के स्टेशनों पर सेना को हत्यारों को बधाई देते हुए सुना गया... सवाल यह है कि शरणार्थी कब तक इस शिविर में रह पाएंगे। उनकी हालत बिल्कुल भी संतोषजनक नहीं है। सिविल सर्जन ने कुछ दिन पहले शिविर का दौरा किया। उन्होंने शरणार्थियों से राहत संगठनों में जाने को कहा। "ये आपके अपने रिश्तेदार हैं।" एक अन्य मुस्लिम अधिकारी को यह कहते हुए सुना गया, "हम कब तक इन लोगों को अपने साथ रखेंगे?" शरणार्थियों के प्रति न तो कोई सहानुभूति है और न ही जो हुआ है उस पर कोई शर्मिंदगी।
पटेल ने तुरंत लियाकत अली खान से इस मुद्दे पर बात की और उनसे वाह में शरणार्थियों की सुरक्षा और भलाई सुनिश्चित करने को कहा। खान ने ग़ज़नाफ़र अली और पश्चिमी पंजाब के प्रधानमंत्री को उचित कदम उठाने का निर्देश दिया। सुशीला की रिपोर्ट गांधी को भेजते हुए पटेल ने टिप्पणी की: 'मुझे आपके सुशीला को पीछे छोड़ने पर बहुत चिंता है। आज एक विशेष सैन्यकर्मी उसका पत्र लेकर आया है। मैं इसे आपको भेज रहा हूँ। पंजाब की स्थिति बहुत

खराब हो गई है... शहर और गाँव जलाए जा रहे हैं। लोगों के टुकड़े- टुकड़े किए जा रहे हैं... खबरें आ रही हैं कि इसमें सेना और पुलिस शामिल हैं। हजारों लोग भाग रहे हैं और जहाँ भी जाते हैं दहशत फैलाते हैं। पुलिस बल का 85 प्रतिशत हिस्सा मुसलमान है। पंजाब में क्या हो रहा है, इसकी सटीक जानकारी प्राप्त करना मुश्किल हो गया है। सैकड़ों-हजारों लोग भाग रहे हैं। आज जवाहरलाल जालंधर और अमृतसर गए हैं। लीग के मंत्री भी वहाँ होंगे। लेकिन ऐसा लगता है कि जनता उनके नियंत्रण से बाहर हो गई है। पंजाब भेजे गए टेलीग्राम वहाँ नहीं पहुँच रहे हैं। रेल संचार व्यवस्था ठप हो गई है। स्थिति अत्यंत कठिन है।' पंजाब की स्थिति को अन्य स्थानों पर फैलने से रोकने के लिए बहुत ही कठिन प्रयास करने होंगे। पंजाब से भागकर दिल्ली में शरणार्थियों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है। वे दिन-रात चैन से नहीं बैठते। वे क्रोध और दहशत से व्याकुल हैं और उन्हें संभालना बेहद मुश्किल है।
पटेल ने 27 अगस्त को गांधीजी को फिर लिखा: 'राजकुमारी अमृत कौर लेडी माउंटबेटन के साथ पंजाब के तीन दिवसीय दौरे पर गई थीं। वह आज सुबह 8 बजे लौटीं। उन्होंने एक भयानक खबर दी है। उनकी मुलाकात सुशीला से भी हुई। मैंने लेडी माउंटबेटन से उन्हें अपने साथ वापस लाने का अनुरोध किया था। सुशीला तैयार हो गई थीं। लेकिन शिविर में लोग रोने-धोने लगे। इसलिए वह वहीं रुकी हुई हैं। इस शिविर को कोई खतरा नहीं है। हमने अब कुछ और भोजन की व्यवस्था भी कर ली है। वह बिल्कुल स्वस्थ हैं। इसलिए चिंता की कोई बात नहीं है। बाकी सब तो ईश्वर के हाथों में है।'
पटेल ने पंजाब में शांतिपूर्ण समाधान और सह-अस्तित्व की उम्मीद छोड़ दी थी; उन्होंने यह तय कर लिया था कि एकमात्र समाधान आबादी

का आदान-प्रदान ही है। भोलेपन में उन्होंने यह मान लिया था कि विभाजित पंजाब के गलत हिस्से में फंसे बड़ी संख्या में हिंदू और मुसलमान बस उठकर चले जाएंगे, हिंदू पूर्वी पंजाब और मुसलमान पश्चिमी पंजाब। पटेल ने गांधी से पूछा, 'पंजाब जाकर आप क्या करेंगे? आप आग बुझाने के लिए कुछ नहीं कर सकते। हिंदू, सिख और मुसलमानों का एक साथ रहना संभव नहीं है; हिंदू शायद भविष्य में कभी वहां रह पाएं, आज नहीं। लेकिन सिखों और मुसलमानों के एक साथ रहने की कल्पना भी दूर भविष्य में नहीं की जा सकती। सेना पूरी तरह से संक्रमित हो चुकी है। लाखों लोग सीमा के दोनों ओर से भाग रहे हैं। शिविरों में आतंक का माहौल है। भागने वालों पर हमला किया जा रहा है और उन्हें मार डाला जा रहा है। उनकी सुरक्षित निकासी की कोई व्यवस्था नहीं है।'
29 तारीख को गांधी ने नेहरू को फिर लिखा: 'यह सरदार अजीत सिंह का पत्र है। आप देखेंगे कि वे मुझ पर बिना किसी देरी के पंजाब जाने का दबाव डाल रहे हैं। आप ही तय करें कि मुझे क्या करना चाहिए। क्या मेरे जाने का कोई फायदा होगा जब जान-माल का भारी नुकसान हो चुका है? क्या यह एक मज़ाक नहीं होगा? मैं अपने मन में उठ रहे विचारों को आपके विचार के लिए प्रस्तुत करता हूँ। मुझे तीन तार मिले हैं जो मुझ पर पंजाब जाने का दबाव डाल रहे हैं।' नेहरू ने उसी दिन जवाब में तार भेजा: 'मुझे अब भी लगता है कि आपके लिए पंजाब जाने का समय नहीं आया है, लेकिन पंजाब की स्थिति से अवगत रहने और हमें सलाह देने के लिए दिल्ली में आपकी उपस्थिति अत्यंत आवश्यक है।' अगले दिन पटेल ने पंजाब की स्थिति पर एक और रिपोर्ट भेजी, लेकिन यह स्पष्ट था कि न तो वे और न ही नेहरू गांधी के पंजाब जाने के पक्ष में थे: 'कल लाहौर में एक बैठक हुई। परिणाम संतोषजनक रहा। जिन्ना और अन्य लीग सदस्य उपस्थित थे।

सभी प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित किए गए। लेकिन आग बुझाने में समय लगेगा।' आज से जवाहरलाल और लियाकत अली ने एक साथ पंजाब का दौरा शुरू कर दिया है। यह दौरा एक सप्ताह तक चलेगा। अन्य लोगों ने भी इसी तरह दौरा शुरू कर दिया है। सभी लोग पूरी कोशिश कर रहे हैं। बाकी सब भगवान की मर्जी है।
पटेल के पत्र में दिखाई देने वाली आत्मसंतुष्टि से गांधीजी विचलित थे। उनके सहकर्मी स्थिति की गंभीरता को समझ नहीं पा रहे थे। वे अपने सहकर्मियों को अनावश्यक हस्तक्षेप से शर्मिंदा नहीं करना चाहते थे, फिर भी उन्हें लगा कि उन्हें अंतिम चेतावनी देना अपना कर्तव्य है। 30 अगस्त को उन्होंने नेहरू को लिखा: 'पंजाब जाने के बारे में, मैं आपकी और वल्लभभाई की इच्छा के बिना नहीं जाऊँगा। मैं यह कहना चाहता हूँ कि मुझ पर प्रतिदिन पंजाब जाने का दबाव डाला जा रहा है, इससे पहले कि बहुत देर हो जाए। यदि आप चाहें तो मैं आपको इस संबंध में जो भी जानकारी मिलेगी, वह भेज दूँगा ताकि आप सही निर्णय ले सकें... यदि मैं पंजाब नहीं जा रहा हूँ, तो क्या दिल्ली में सलाहकार या परामर्शदाता के रूप में मेरा कोई विशेष योगदान होगा? मुझे लगता है कि मैं उस तरह का व्यक्ति नहीं हूँ। मेरी सलाह का महत्व तभी है जब मैं वास्तव में किसी विशेष कार्य पर काम कर रहा हूँ। मैं केवल तभी हस्तक्षेप कर सकता हूँ जब मैं भोजन, वस्त्र, सैन्य उपयोग जैसे विषयों पर अकादमिक सलाह देता हूँ। जितना अधिक मैं इस बारे में सोचता हूँ, उतना ही मुझे यह राय सही लगती है।' अगर मुझे अपने हाल पर छोड़ दिया जाता, तो मैं शायद पंजाब के लिए निकल पड़ता और ज़रूरत पड़ने पर युद्धरत तत्वों को आत्महत्या करने से रोकने के प्रयास में अपनी जान तक दे देता। लॉर्ड माउंटबेटन के एक पत्र से भी मुझे यही आभास होता है। वे मेरे तुरंत पंजाब जाने का स्वागत

करेंगे... इस तरफ मेरे पास कुछ काम है जिससे आप सभी को मदद मिलनी चाहिए।
पटेल ने गांधी के पत्रों को नेहरू को भेज दिया, जो लियाकत अली खान के साथ पंजाब के दोनों राज्यों का दौरा कर रहे थे। वहाँ उन्होंने जो देखा, और शायद लॉर्ड माउंटबेटन की सलाह ने उन्हें निर्णय लेने में मदद की। 31 अगस्त को उन्होंने गांधी को तार भेजा: 'पंजाब की समस्या व्यापक और गंभीर है। मुझे अब लगता है कि पंजाब में आपकी उपस्थिति वांछनीय है और इस तबाह और दुखी प्रांत को शांति और सांत्वना देने में सहायक होगी। मैं 4 तारीख को दिल्ली लौट रहा हूँ। कुछ समय रुकने के बाद पंजाब वापस आ रहा हूँ।' 2 सितंबर को उन्होंने एक और तार भेजा: 'मुझे अब पूरा विश्वास है कि आपको जल्द से जल्द पंजाब आना चाहिए।'
अब ऐसा लग रहा था कि गांधी जी तुरंत पंजाब के लिए रवाना होंगे और कलकत्ता में अब तक जो कुछ उन्होंने किया था, उसे यहाँ भी करने का प्रयास करेंगे। लेकिन भाग्य को कुछ और ही मंजूर था; कलकत्ता में विद्रोह छिड़ने वाला था।
प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस के दंगों के बाद, हिंदू महासभा और आरएसएस जैसे प्रमुख हिंदू दक्षिणपंथी संगठनों ने खुद को हिंदुओं के रक्षक के रूप में पेश किया और कई लोग उग्र हिंदूवाद के प्रभाव में आ गए। विभाजन के बाद जब दंगे भड़के, तो इन हिंदू चरमपंथियों ने अपने गढ़ों और शरणार्थी शिविरों में भर्ती केंद्र स्थापित कर लिए। युद्ध के बाद के परिदृश्य में, हथियार और गोला-बारूद आसानी से उपलब्ध थे, और इसलिए - मुस्लिम लीग के नेशनल गार्ड्स की तरह - हिंदू महासभा और आरएसएस के उग्रवादी भी हथियारबंद हो गए और प्रतिशोधियों के गिरोह बना लिए। ये समूह, जो बड़ी संख्या में कलकत्ता में घुसपैठ कर चुके थे, ने बैरकपुर और

कांचरापारा में अशांति फैलाने का प्रयास किया, लेकिन असफल रहे। अब उन्हें पंजाब में हुए नरसंहार को लेकर कलकत्ता में पंजाबी और सिख समुदायों के भीतर व्याप्त आक्रोश का समर्थन मिल गया। स्थिति को और बिगाड़ते हुए, कई हिंदू और सिख संगठनों के साथ-साथ कलकत्ता में हिंदू महासभा के प्रमुख को डाक से केवल कुछ चूड़ियाँ भेजी गईं। 1 सितंबर तक उनका हताशा चरम पर पहुँच गया था।
प्यारेलाल नैयर ने उस मनहूस रात हैदरी हवेली में घटी घटना का वर्णन इस प्रकार किया: 'चारू और मैं व्यापार के सिलसिले में शहर गए थे। जब हम हैदरी हवेली लौटे, तो दस बज चुके थे। हमें उम्मीद थी कि सब सो रहे होंगे। लेकिन इसके विपरीत, इमारत रोशनी से जगमगा रही थी। गेट पर खड़े कुछ युवकों ने हमारी कार को यह कहते हुए रोकने की कोशिश की, "आप कौन हैं—हिंदू या मुसलमान?"'
हम अपनी कार से बाहर निकले। नेता को झटकते हुए चारू ने कहा कि उस समय बच्चों को बिस्तर पर होना चाहिए। "नोआखली में हमारे लड़के अधिक परिपक्वता दिखाते हैं। हम गांधी शिविरों में सख्त अनुशासन लागू करते हैं।"
प्रदर्शनकारियों ने संवाद सुनने की उत्सुकता में घेरा तोड़ दिया था और अव्यवस्थित ढंग से हमारे चारों ओर जमा हो गए थे। हमने उन्हें एक तरफ हटाया और अंदर चले गए। चारों ओर भीड़ ही भीड़ थी। कुछ उपद्रवी पहले से ही मुख्य हॉल के अंदर थे। और भी लोग अंदर आ रहे थे। पूरी घटना की जानकारी हमें अगले दिन ही मिली।
रात दस बजे से कुछ पहले, कुछ उत्तेजित युवकों का एक जुलूस निकला और वे एक व्यक्ति को, जिसके शरीर पर भारी पट्टियाँ बंधी थीं, गांधीजी के आवास पर ले आए। वे उसे कैसे लाए और प्रदर्शन का

आयोजन किसने किया, यह शायद कभी पता नहीं चल पाएगा। कई विरोधाभासी बातें सामने आईं। एक कहानी यह थी कि वह ट्राम से गिर गया था। दूसरी कहानी यह थी कि सड़क पर एक शराबी ने उसे रोका और "पाकिस्तान जिंदाबाद" के नारे लगाने को कहा। उसके इनकार करने पर हाथापाई हुई, जिसमें उसे मामूली चोटें आईं। कुछ सांप्रदायिक कट्टरपंथियों ने घटना की खबर सुनकर उसका पीछा किया और उसे बिस्तर से खींच लिया। एक अन्य कहानी के अनुसार, मुस्लिम इलाके में मुसलमानों ने उस पर चाकू से हमला किया था। उसके हमलावरों का पता नहीं चल सका। बाद में मुख्यमंत्री डॉ. प्रफुल्ल घोष ने कथित तौर पर चाकू से हमला किए गए पीड़ित की जांच करवाई। डॉक्टर की रिपोर्ट में पाया गया कि उसके शरीर पर चाकू के निशान नहीं थे। हालांकि, चोट के विवरण का कोई महत्व नहीं था। असल में महत्वपूर्ण बात यह थी कि इन युवकों ने कानून को अपने हाथ में ले लिया था और एक ही व्यक्ति में न्यायाधीश, जूरी और जल्लाद की भूमिका निभा रहे थे।
गांधीजी सो चुके थे। रात के करीब 10 बजे (कलकत्ता समय) का समय था। वे ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगे। मेरी नींद टूट गई, लेकिन मैं चुपचाप लेटी रही, मुझे समझ नहीं आ रहा था कि क्या हो रहा है। मैंने खिड़कियों के शीशे टूटने की आवाज़ सुनी। मेरे दोनों ओर दो बहादुर लड़कियाँ थीं, आभा और मनु। उन्होंने मुझे नींद से नहीं जगाया, लेकिन मेरी जानकारी के बिना—क्योंकि मेरी आँखें बंद थीं—वे भीड़ के बीच गईं और उन्हें शांत करने की कोशिश की। भगवान का शुक्र है, भीड़ ने उन्हें कोई नुकसान नहीं पहुँचाया।”... दोनों लड़कियों की विनतियों का उपद्रवियों पर कोई असर नहीं हुआ। वे हॉकी स्टिक से फर्नीचर, तस्वीरों के फ्रेम और झूमर तोड़ने लगे और पत्थर फेंकने लगे। दो समूह थे—एक

उपद्रवियों को भड़काने की कोशिश कर रहा था, दूसरा उन्हें शांत करने की। समझदार समूह ने दोनों लड़कियों की रक्षा करने की पूरी कोशिश की और उनसे अंदर जाने की विनती की। गांधीजी के दल का एक सदस्य पायजामा पहने हुए था। उसे मुसलमान समझकर उस पर हमला कर दिया गया।
गांधीजी के कथन को आगे बढ़ाते हुए: "घर में रहने वाली एक बुजुर्ग मुस्लिम महिला, जिन्हें प्यार से बी अम्मा (मां) कहा जाता था, और एक युवक मेरी चटाई के पास खड़े थे, शायद मुझे नुकसान से बचाने के लिए। शोर बढ़ता ही जा रहा था। कुछ लोग केंद्रीय हॉल में घुस आए थे और कई दरवाजों को खटखटाने लगे थे। मुझे लगा कि मुझे उठकर इस भीड़ का सामना करना चाहिए। मैं एक दरवाजे की दहलीज पर खड़ा हो गया। मित्रवत चेहरों ने मुझे घेर लिया और मुझे आगे नहीं बढ़ने दिया।"
'भारी-भरकम डॉ. दिनशॉ मेहता घर में मौजूद थे, लेकिन बेचारे दिनशॉ क्या कर सकते थे? उन्हें भाषा का ज्ञान नहीं था। इसके अलावा, "ऐसे हालात में तो हरक्यूलिस जैसी ताकत भी काम नहीं आती।" गांधीजी ने उपद्रवियों को संबोधित करते हुए कहा, "ये कैसी पागलपन है? तुम मुझ पर हमला क्यों नहीं करते? मैं खुद हमले के लिए तैयार हूँ।" उन्होंने यह बात तीन बार दोहराई और अपनी बंगाली पोती आभा से अपने शब्दों का अनुवाद करने को कहा। "सब व्यर्थ। उनके कान तर्क के लिए बंद थे। मैंने हिंदू रीति से हाथ जोड़े। कुछ भी नहीं हुआ, खिड़की के शीशे और चटकने लगे।"
“वह बदमाश सुहरावर्दी कहाँ है?” भीड़ में से किसी ने चिल्लाकर पूछा। ऐसा लगता है कि वे सुहरावर्दी को पीट-पीटकर मार डालना चाहते थे। सौभाग्य से वह घर पर नहीं था। वह नोआखली के लिए मेरे

साथ रवाना होने की तैयारी करने घर गया था। उसे न पाकर उन्होंने अपना गुस्सा मुझ पर निकाला। वहाँ अफरा-तफरी मच गई।”
तभी गांधीजी जिस घर में ठहरे हुए थे, उसके दो मुस्लिम सदस्य उग्र भीड़ से बचने के लिए दौड़ते हुए अंदर आए। उनमें से एक बुरी तरह घायल था और खून बह रहा था। उसने गांधीजी के पीछे शरण ली। उसे देखकर किसी ने उस पर ईंट फेंकी। ईंट पास खड़े एक मुस्लिम को लगी। एक भारी लाठी गांधीजी के सिर के पास से गुजरी और सामने वाली दीवार से टकरा गई, जिससे किसी को चोट नहीं आई। अगर वह लाठी गांधीजी को लग जाती, तो उनका अंत हो जाता।
अंत में गांधीजी ने भारी स्वर में कहा: "मेरे ईश्वर मुझसे पूछते हैं, 'आप किस ओर हैं?' मैं अत्यंत दुखी हूँ। क्या 15 अगस्त को स्थापित शांति की यही वास्तविकता है?"
कुछ ही मिनटों बाद पुलिस प्रमुख और उनके अधिकारी आए और स्थिति को अपने नियंत्रण में ले लिया। उन्होंने गांधीजी से पीछे हटने की अपील की। मैंने उनसे धीरे से अनुरोध किया कि वे उपद्रवियों के खिलाफ बल प्रयोग न करें, यह जानते हुए कि इससे गांधीजी पर क्या प्रभाव पड़ेगा। कुछ समय बाद वे इमारत को भीड़ से खाली कराने में सफल रहे।
गांधीजी ने चारू और मुझे अपने पास बुलाया और कहा: "इस घटना के बाद नोआखली जाने का मेरा इरादा टूट गया है। आप लोग मानेंगे कि इन परिस्थितियों में मैं नोआखली या कहीं और नहीं जा सकता। मैं चाहता हूं कि आप लोग इस बारे में सोच-विचार करें और फिर मुझे बताएं। मुझे नहीं पता कि ईश्वर ने मेरे लिए आगे क्या तय किया है। लेकिन फिलहाल नोआखली जाना तो नामुमकिन सा लगता है।"

यह बातचीत अभी खत्म ही हुई थी कि मुख्यमंत्री डॉ. प्रफुल्ल घोष आ गए। उन्होंने गांधीजी से पूछा, "क्या हमें हिंदू महासभा के नेताओं को गिरफ्तार कर लेना चाहिए?"
गांधीजी: "नहीं। इसके बजाय, आपको शांति बनाए रखने का भार और जिम्मेदारी उन पर डालनी चाहिए। उनसे पूछें कि वे शांति चाहते हैं या लड़ाई। उन्हें बताएं कि आपको उनके सहयोग की आवश्यकता है और उनके जवाब की प्रतीक्षा करें।"
'जब गांधीजी सोने गए तब साढ़े बारह बज रहे थे। लेकिन बाहर सड़कों पर भीड़ काफी देर तक मंडराती रही। अंततः पुलिस को उसे तितर-बितर करने के लिए आंसू गैस का इस्तेमाल करना पड़ा। जब तक पूरी तरह शांति बहाल हुई, तब तक सुबह के साढ़े एक बज चुके थे। दो बजे तक सभी लोग सो नहीं सके।'
रात भर की घटनाओं की खबर शहर में जंगल की आग की तरह फैल गई। सुबह से ही चिंतित आगंतुकों का तांता हैदरी हवेली में उमड़ पड़ा। चारू चौधरी और प्यारेलाल को आशंका थी कि अगर कलकत्ता में अशांति फैली तो नोआखली में गंभीर प्रतिक्रिया हो सकती है। उन्होंने हिंदू महासभा के नेताओं से संपर्क करने और उनसे सहयोग की गुहार लगाने का फैसला किया।
सबसे पहले वे हिंदू महासभा के नेता और भारतीय जनसंघ के संस्थापक डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी से मिले। उन्होंने मुखर्जी को बताया कि यदि नोआखली में, या यूं कहें कि पूरे पूर्वी बंगाल में अल्पसंख्यक समुदाय को अकल्पनीय खतरे से बचाना है, तो कलकत्ता की स्थिति को तुरंत नियंत्रण में लाना होगा। डॉ. मुखर्जी ने उनकी बात बड़े ध्यान से सुनी। अंत में उन्होंने कहा: 'मैं निश्चित रूप से एक अपील जारी करूंगा और इसके अलावा आप जो भी सुझाव देंगे, वह करूंगा।' उन्होंने उनसे एक घंटे

बाद लौटने को कहा, जब वे अपना बयान तैयार कर लेंगे। इसके बाद वे दोनों हिंदू महासभा के दूसरे नेता एन.सी. चटर्जी के निवास पर गए, लेकिन उनसे मिल नहीं पाए। वे डॉ. मुखर्जी के घर लौट आए, जहां उन्होंने उन्हें आश्वासन दिया कि वे चटर्जी को मनाने की कोशिश करेंगे और उन्हें अपना बयान सौंप दिया। जब चौधरी और प्यारेलाल हैदरी हवेली लौटे, तो उन्होंने गांधीजी को डॉ. मुखर्जी को पत्र लिखते हुए पाया, जिसमें वे उनसे पूछ रहे थे कि क्या अब कलकत्ता के हिंदुओं से अपील जारी करने का समय नहीं आ गया है। जब प्यारेलाल ने गांधीजी को डॉ. मुखर्जी का मसौदा बयान सौंपा तो उनका चेहरा चमक उठा। कुछ मामूली बदलावों के साथ इसे अगले दिन प्रेस को जारी कर दिया गया: 'पश्चिम बंगाल और पूर्वी बंगाल में शांतिपूर्ण स्थिति का बने रहना भारत में शांति के लिए आवश्यक है। कलकत्ता इस स्थिति की कुंजी है। यदि वहां शांति है, तो इसका प्रभाव पूर्वी बंगाल पर अवश्य पड़ेगा। पूरे बंगाल में शांति का प्रभाव पूरे पंजाब पर भी पड़ेगा। बंगाल के बहुसंख्यक समुदाय को यह समझना होगा कि अल्पसंख्यक समुदाय के निर्दोष सदस्यों पर किया गया निरर्थक उत्पीड़न लाभकारी नहीं है और एक दुष्चक्र पैदा करता है जिसे तोड़ना असंभव है। समुदायों के नेताओं के एकता प्रयासों से ही यह संभव हो पाएगा।'
दोपहर करीब दो बजे खबर आई कि शहर के कई हिस्सों में एक साथ हिंसक सांप्रदायिक दंगे भड़क उठे हैं। हर कुछ मिनट में घटनाओं की नई-नई खबरें आ रही थीं। गांधी ने बिगड़ती स्थिति पर पटेल को लिखा: 'आज हर जगह लड़ाई की तैयारी के संकेत दिख रहे हैं। मैं अभी-अभी दो मुसलमानों के शव देखकर लौटा हूँ। मैंने सुना है कि कई जगहों पर दंगे भड़क उठे हैं। जिसे "कलकत्ता चमत्कार" कहा जा रहा था, वह नौ दिनों का तमाशा बनकर रह गया है। मैं सोच रहा हूँ कि इन

परिस्थितियों में मेरा क्या कर्तव्य है। मैं यह पत्र लगभग शाम छह बजे लिख रहा हूँ। यह पत्र कल डाक से जाएगा। इसलिए मैं इसमें एक परिशिष्ट जोड़ पाऊँगा। जवाहरलाल का तार आया है कि मुझे पंजाब जाना चाहिए। मैं अभी कैसे जा सकता हूँ? मैं अपने भीतर गहराई से खोज रहा हूँ। इसमें मौन ही सहारा देता है।'
बहुत विचार-विमर्श और कुछ प्रतिनिधिमंडलों से मुलाकात के बाद, गांधीजी को पता चल गया था कि उन्हें क्या करना है। उन्होंने ग्लूकोज मिले गर्म पानी का एक घूंट पिया और अपने निर्णय की घोषणा करते हुए बयान लिखवाया। जब राजजी उस रात दस बजे उनसे मिलने आए, तो गांधीजी ने उन्हें बयान का मसौदा दिखाया। इसे पढ़ने के बाद राजजी ने टिप्पणी की, 'क्या आप मुझसे अपने प्रस्तावित कदम को स्वीकार करने की उम्मीद करते हैं?' वे हिंसा के खिलाफ गांधीजी के उपवास के निर्णय का जिक्र कर रहे थे। दोनों ने मिलकर इस मुद्दे पर विस्तार से चर्चा की। राजजी ने उन्हें कुछ समय तक स्थिति पर नजर रखने की सलाह दी, लेकिन गांधीजी ने अपना निर्णय ले लिया था। उन्होंने कहा, 'उपवास अभी करना होगा, नहीं तो कभी नहीं। बाद में बहुत देर हो जाएगी। अल्पसंख्यक समुदाय को इस खतरनाक स्थिति में नहीं छोड़ा जा सकता। अगर मेरा उपवास सफल होना है, तो यह निवारक होना चाहिए। मुझे पता है कि अगर मैं कलकत्ता को नियंत्रित कर लेता हूँ, तो मैं पंजाब को भी संभाल लूँगा। लेकिन अगर मैं अभी लड़खड़ा गया, तो आग फैल सकती है, और जल्द ही मुझे स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहा है, दो या तीन शक्तियाँ हम पर टूट पड़ेंगी और इस तरह स्वतंत्रता का हमारा अल्पकालिक सपना समाप्त हो जाएगा।'
जब राजाजी अंतिम बयान लेकर निकले तब ग्यारह बज चुके थे और उसी रात इसे प्रेस को जारी कर दिया गया। 31 अगस्त की रात हैदरी

हवेली में हुई अशांति का जिक्र करते हुए बयान में आगे कहा गया: 'इस घटना से क्या सबक मिलता है? मुझे स्पष्ट है कि यदि भारत को अपनी बहुप्रयासों अर्जित स्वतंत्रता को बरकरार रखना है, तो सभी पुरुषों और महिलाओं को लिंचिंग कानून को पूरी तरह से भुला देना चाहिए। जो प्रयास किया गया वह उसी का एक भद्दा अनुकरण था। यदि सभ्य समाज के मूलभूत नियम का पालन नहीं किया जाता है तो कलकत्ता या कहीं और शांति बनाए रखना असंभव है। कानून को अपने हाथ में न लेने के सुनहरे नियम का कोई अपवाद नहीं है।'
'शांति के पहले दिन से, यानी पिछले साल 14 अगस्त से, मैं कहता आ रहा हूँ कि यह शांति शायद अस्थायी ही हो। कोई चमत्कार नहीं हुआ। क्या मेरी आशंका सच साबित होगी और क्या कलकत्ता फिर से अराजकता के चंगुल में फंस जाएगा? आशा है ऐसा न हो, हम सर्वशक्तिमान ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि वह हमारे हृदयों को स्पर्श करे और इस पागलपन की पुनरावृत्ति को रोके।'
'जब से यह लिखा गया है, कुछ स्थान जो कल, 31 अगस्त तक सुरक्षित थे, अचानक असुरक्षित हो गए हैं। कई मौतें हुई हैं। मैंने दो बेहद गरीब मुसलमानों के शव देखे... मैंने अपने मित्रों को, जिन्होंने मुझे देखा, उनका कर्तव्य बताया है। इसे रोकने के लिए मेरी क्या भूमिका हो सकती है? सिखों और हिंदुओं को यह नहीं भूलना चाहिए कि पूर्वी पंजाब ने इन कुछ दिनों में क्या किया है। अब पश्चिमी पंजाब के मुसलमानों ने पागलपन भरा अभियान शुरू कर दिया है। कहा जाता है कि कलकत्ता के सिख और हिंदू पंजाब की घटनाओं से क्रोधित हैं... अब जब कलकत्ता का भ्रम टूटता दिख रहा है, तो मैं किस चेहरे के साथ पंजाब जाऊं? मेरे लिए अब तक जो हथियार अचूक साबित हुआ है, वह है उपवास। चिल्लाती भीड़ के सामने उपस्थित होना हमेशा कारगर नहीं होता। कल रात तो बिल्कुल नहीं हुआ। जो मेरे व्यक्तिगत

शब्दों से नहीं हो सकता, वह शायद मेरे उपवास से हो जाए। यह पंजाब के सभी युद्धरत तत्वों के दिलों को छू सकता है, और यह तभी समाप्त होगा जब कलकत्ता में समझदारी लौट आएगी।' मैं हमेशा की तरह, व्रत के दौरान पीने के लिए पानी में नमक और सोडा बाइकार्ब मिला सकता हूँ। यदि कलकत्ता के लोग चाहते हैं कि मैं पंजाब जाऊं और वहाँ के लोगों की मदद करूं, तो उन्हें मुझे यथाशीघ्र व्रत तोड़ने की अनुमति देनी होगी।
राजजी के प्रेस को बयान जारी करने के लिए चले जाने के बाद, गांधी ने आभा और मनु को जगाया और उन्हें बताया कि उसी शाम 8.15 बजे से उन्होंने उपवास शुरू कर दिया है, जो तब तक चलेगा जब तक शहर में सांप्रदायिक हिंसा जारी रहेगी। 'यह करो या मरो की स्थिति होगी। या तो शांति होगी या मैं मर जाऊंगा। उपवास के दौरान मेरी देखभाल करने की जिम्मेदारी तुम दोनों पर है। तुम हमेशा की तरह खाना खाओ और आराम करो। अगर तुम खुद को स्वस्थ नहीं रखोगी, तो तुम अपने कर्तव्य का निर्वाह नहीं कर पाओगी।'
शहर में व्याप्त सांप्रदायिक उन्माद ने गांधीवादी शांति कार्यकर्ताओं को भी नहीं बख्शा। गांधी जी ने अपने कार्यकर्ताओं से सर्वोच्च बलिदान की मांग की थी: शांति स्थापित करने के प्रयासों में, उनमें से दो ने ऐसा किया। सचिन मित्रा कलकत्ता विश्वविद्यालय से कला स्नातक थे, जिनकी उम्र अड़तीस वर्ष थी। वे एक अनुभवी सत्याग्रही और समर्पित खादी कार्यकर्ता थे। नोआखली में उन्होंने गांधी शांति मिशन में ठक्कर बप्पा के साथ काम करते हुए अपनी निडरता और समर्पण से प्रशंसा अर्जित की थी। 1 सितंबर को, शहर में हिंसा की खबर सुनकर, सचिन अपने कुछ हिंदू और मुस्लिम मित्रों से मिले और दंगों को रोकने के प्रयास में हस्तक्षेप करने का फैसला किया। वे नखोदा मस्जिद क्षेत्र की

ओर चल पड़े, जो शहर के सबसे खतरनाक स्थानों में से एक माना जाता था। चितपुर रोड और कैनिंग स्ट्रीट के चौराहे पर, समूह को एक शत्रुतापूर्ण मुस्लिम भीड़ ने घेर लिया और उन पर हमला किया। हिंदुओं को अलग कर दिया गया और उनकी पिटाई की गई। सचिन को सीने और पेट में बार-बार चाकू मारा गया। पुलिस ने आखिरकार उन्हें बचाने में कामयाबी हासिल कर ली, लेकिन सचिन की हालत गंभीर थी और अस्पताल ले जाने से पहले ही उसने दम तोड़ दिया।
स्मृतिश बनर्जी, जिनकी उम्र भी तीस के दशक के अंत में थी, एक समर्पित शांति कार्यकर्ता थे। शांति जुलूस पर हमले की खबर सुनकर वे तुरंत उनकी मदद के लिए दौड़े। आगे क्या हुआ, यह तो ज्ञात नहीं है, लेकिन जब जुलूस पर हमला हुआ, तो प्रत्यक्षदर्शियों ने बताया कि उन्होंने स्मृतिश को लड़कियों के एक समूह को सुरक्षित स्थान पर ले जाते हुए देखा। उन्होंने दावा किया कि उनकी कमीज खून से लथपथ थी। बाद में जब मुर्दाघर में उनके शव की पहचान हुई, तो मृत्यु का कारण 'छाती और पेट पर पांच गहरे चाकू के घावों से अत्यधिक रक्तस्राव' बताया गया। गांधी जी ने उनकी मृत्यु पर शोक व्यक्त करने से इनकार कर दिया। सचिन की युवा पत्नी अंगशु रानी मित्रा को हिंदी में एक संदेश में उन्होंने लिखा: 'प्यारेलाल जी ने अभी मुझे खबर दी है कि आपके पति, जो दूसरों की रक्षा करते हुए घातक रूप से घायल हो गए थे, आज अपने घावों के कारण दम तोड़ चुके हैं। इसे शोक का अवसर न बनने दें, बल्कि केवल आनंद का अवसर बनने दें। सचिन अमर हो गए हैं। आपको शोक नहीं करना चाहिए, बल्कि उनके अनुकरण में सेवा में स्वयं को समर्पित कर देना चाहिए।'
गांधी ने 2 सितंबर को पटेल को सूचित किया: 'कल आपको पत्र लिखने के बाद से बहुत सी खबरें आई हैं। कई लोग मुझसे मिलने आए हैं। मैं

पहले से ही मन ही मन सोच रहा था कि मेरा कर्तव्य क्या है। मुझे जो खबर मिली, उससे मेरा फैसला पक्का हो गया। मैंने उपवास करने का निर्णय लिया। यह कल शाम 8.15 बजे शुरू हुआ। राजाजी कल रात आए थे। मैंने धैर्यपूर्वक उनकी सारी बातें सुनीं। उन्होंने अपने सारे तर्क लगा दिए, लेकिन उनके कोई भी तर्क मुझे समझ नहीं आए। किसी को भी विचलित नहीं होना चाहिए। विचलित होने से कोई लाभ नहीं होगा। यदि नेता सच्चे हैं, तो हत्याएं रुकेंगी और उपवास समाप्त होगा, और यदि हत्याएं जारी रहीं तो मेरे जीवन का क्या लाभ? यदि मैं लोगों को हिंसक होने से नहीं रोक सकता, तो मेरे पास करने के लिए और क्या बचा है? यदि ईश्वर इस शरीर से काम लेना चाहता है, तो वह लोगों के हृदयों में प्रवेश करेगा, उन्हें विवेक की ओर लाएगा और मेरे शरीर को सहारा देगा। केवल उन्हीं के नाम पर मैंने उपवास किया है। ईश्वर आप सभी को सहारा और सुरक्षा प्रदान करें। इस भीषण आग में दूसरे लोग ज्यादा मदद नहीं कर पाएंगे।' नेहरू को उन्होंने लिखा: 'कलकत्ता में भड़के तनाव के कारण मैं आज लाहौर के लिए रवाना नहीं हो सका। अगर हालात शांत नहीं हुए, तो पंजाब जाना व्यर्थ होगा। मेरा आत्मविश्वास टूट जाएगा। अगर कलकत्ता की दोस्ती झूठी साबित हुई, तो मैं पंजाब की स्थिति को कैसे सुधार सकता हूँ? इसलिए कलकत्ता से मेरा प्रस्थान पूरी तरह से कलकत्ता के उपवास के परिणाम पर निर्भर करता है। उपवास को लेकर दुखी या क्रोधित न हों।'
2 सितंबर की सुबह जलते हुए कलकत्ता पर छा गई। शांति सेना ने शहर की सड़कों पर गश्त शुरू कर दी थी, लेकिन हिंसा, आगजनी, लूटपाट और हत्याएं बेरोकटोक जारी थीं। प्राकृतिक रोग विशेषज्ञ डॉ. दिनशॉ मेहता द्वारा किए गए चिकित्सा परीक्षण में गांधीजी की हृदय गति अनियमित पाई गई। डॉक्टर ने उन्हें प्रतिदिन कम से कम चार पौंड

पानी पीने की सलाह दी। गांधीजी ने उत्तर दिया, 'मैं कोशिश करूंगा। लेकिन अगर राम का नाम मेरे हृदय में है, तो मुझे पानी की भी आवश्यकता नहीं होगी। आप देखिए, मैं आज कितना शांत हूं। इससे पहले तो मुझे रात में भी मुश्किल से नींद आती थी।'
गांधी जी ने अपनी नियमित दिनचर्या का पालन करते हुए धीरे-धीरे आठ औंस सादा गर्म पानी पिया, जिसमें उन्हें एक घंटा लग गया। इस बार उनकी कमजोरी बहुत तेजी से बढ़ने लगी। दोपहर तक उनमें बढ़ती कमजोरी के लक्षण दिखने लगे, उनकी आवाज लगभग धीमी होकर सुनाई देने वाली फुसफुसाहट में बदल गई। डेढ़ बजे, लगभग एक घंटे आराम करने के बाद, उन्होंने फिर से आठ औंस गर्म पानी पिया। दोपहर में एक सहकर्मी ने खबर दी कि ज़ाकारिया स्ट्रीट में बड़े पैमाने पर लूटपाट और गोलीबारी हो रही है। सशस्त्र पुलिस एक मस्जिद में घुस गई थी और वहां शरण लिए मुसलमानों को परेशान कर रही थी। दोपहर भर दूर से गोलियों की आवाजें सुनाई देती रहीं।
नोआखली में गांधीजी के दुभाषिए रहे प्रोफेसर निर्मल बोस राष्ट्रवादी नेता शरत बोस से मिलने गए थे। उनकी रिपोर्ट में दावा किया गया कि ये उपद्रव मुख्य रूप से सिखों और बिहारियों द्वारा किए गए थे, और बंगाली भी अब बड़े पैमाने पर लूटपाट और आगजनी में शामिल हो गए थे। सियालदह रेलवे स्टेशन के पास एक मुस्लिम के होटल में आग लगा दी गई थी। कई जगहों पर पुलिस की लापरवाही की खबरें थीं। शरत बोस के अनुसार, यह हिंसा आम गुंडों का काम नहीं थी। ऐसा प्रतीत होता था कि यह आरएसएस और हिंदू महासभा जैसे संगठनों के मार्गदर्शन और समर्थन से सुनियोजित तरीके से अंजाम दी गई थी। मुख्यमंत्री डॉ. प्रफुल्ल घोष ने उपद्रवों के लिए सिखों को दोषी ठहराया। उन्होंने सुझाव दिया कि मौजूदा उपद्रवों को रोकने और स्थिति को जल्द से जल्द सामान्य

करने के लिए आवश्यक उपायों पर चर्चा करने हेतु तत्काल एक सर्वदलीय बैठक बुलाई जानी चाहिए। इसी बीच, वे गांधीजी के बयान को हिंदी, उर्दू और बंगाली में छपवा रहे थे; इन्हें बाद में शहर और आसपास के इलाकों में व्यापक रूप से वितरित किया जाएगा। कुछ समय बाद शरत बोस गांधीजी से मिलने आए। जब से गांधीजी ने बोस के संयुक्त संप्रभु बंगाल के प्रस्ताव से अपना समर्थन वापस लिया था, तब से बोस उनके प्रति द्वेष रखते थे। गांधीजी के कलकत्ता आने के बाद यह उनकी पहली मुलाकात थी। गांधीजी ने हंसते हुए कहा कि बोस के उनसे मिलने आने के लिए उन्हें उपवास करना पड़ा।
बोस ने जवाब देते हुए कहा, 'मुझे पहले से ही आभास था कि अब आपको मेरी परवाह नहीं है। लेकिन मैं आपकी ताकत की परीक्षा नहीं लूंगा। क्या आपको बोलने की अनुमति है?'
गांधी ने कहा, 'मुझे कम से कम उस उद्देश्य की पूर्ति के लिए तो उपवास करना ही होगा जिसके लिए मैं उपवास कर रहा हूं।'
बोस ने कहा, 'मैं हमेशा से विभाजन का विरोधी रहा हूं। मैंने अपने विचारों को कभी छिपाया नहीं है। मैं एक स्पष्टवादी व्यक्ति हूं। मैं पहले इसलिए उपस्थित नहीं हुआ क्योंकि, जैसा कि मैंने पहले ही कहा है, मुझे यह आभास था कि आपको मेरी कोई खास आवश्यकता नहीं है।'
गांधी ने आगे कहा, 'सभी समूहों और पार्टियों के प्रतिनिधि मेरे पास आए और मुझसे पूछा कि मैंने आपको क्यों नहीं बुलाया। उनमें से कुछ ने कहा कि उन्हें शक था कि फॉरवर्ड ब्लॉक (जिसकी स्थापना शरत बोस के छोटे भाई नेताजी सुभाष चंद्र बोस ने की थी) के लोग इन गड़बड़ियों के पीछे थे। मैंने उनसे कहा कि शरत बोस जानते हैं कि मेरा दरवाजा उनके लिए हमेशा खुला है। जब भी उन्हें उचित लगेगा,

वे आ सकते हैं।' गांधी की इस टिप्पणी से बोस आहत हुए; उन्होंने कहा, 'अपने प्रार्थना भाषण में आपने कहा था कि मैं भ्रष्टाचार में पानी की तरह पैसा लुटा रहा हूँ।'
इस पर गांधी ने कहा, 'क्या तब यह आपका स्पष्ट कर्तव्य नहीं था कि आप मेरे पास आकर मेरे संदेह दूर करें—यदि वे निराधार थे? मित्रता का यही अधिकार है कि बिना किसी डर के खुलकर अपने मन की बात कहें। अन्यथा मित्रता का क्या अर्थ? यहां तक कि आपके सुहरावर्दी [जो अपने फिजूलखर्ची के लिए भी जाने जाते हैं] ने भी कहा है कि आप पानी की तरह पैसा खर्च करते हैं। लेकिन अगर आपको इस बात से कोई शिकायत थी, तो आपने सार्वजनिक रूप से इसका खंडन क्यों नहीं किया? या आप मुझे पत्र लिख सकते थे। तब मैं या तो आपको समझा देता कि मेरा क्या मतलब था, या आप मेरी गलतफहमी दूर कर देते। तब मैं अपनी टिप्पणी वापस ले लेता। यही सच्ची मित्रता की मांग है।' तब बोस ने उनसे पुरानी बातों को भूल जाने को कहा और गांधी से पूछा कि फॉरवर्ड ब्लॉक के खिलाफ उनकी क्या शिकायतें हैं।
गांधी ने कहा, 'हिंदू महासभा के लोग कहते हैं कि इस नरसंहार के पीछे फॉरवर्ड ब्लॉक के लोग हैं। मेरा यह कर्तव्य है कि मैं उनके इस आरोप को आपके समक्ष रखूं।'
शरत बोस ने जवाब दिया, 'आप चाहें तो इस पर विश्वास कर सकते हैं। लेकिन मैं आपको बता दूं, इस मामले के पीछे हिंदू महासभा के कई लोग हैं। वही लोग सिखों को भड़का रहे हैं और उनसे कह रहे हैं कि पंजाब को जलते हुए चुपचाप देखते रहना उनकी मर्दानगी के खिलाफ है। सिखों से कहा गया कि वे अपने कड़े की जगह चूड़ियाँ पहनें। मैं नाम भी बता सकता हूँ।'

गांधी ने बोस से कहा कि आपसी आरोप-प्रत्यारोप से कोई लाभ नहीं होगा। उन्होंने आगे कहा कि उनका उपवास लोगों से आत्मनिरीक्षण करने की अपील है, और अब समय आ गया है कि वे यह समझ लें कि पुलिस और सेना की मदद से वे अब और अधिक समय तक इस स्थिति को नहीं संभाल सकते।
गांधी जी की पुलिस और सेना के बारे में की गई टिप्पणी का जिक्र करते हुए, जिसका सुहरावर्दी ने समर्थन किया था, बोस ने कहा, 'बंगाल में हालात सुहरावर्दी द्वारा पंजाब से सशस्त्र बलों की तैनाती के बाद बिगड़ने लगे। क्या अब वह अंग्रेजों को वापस बुलाना चाहते हैं?' गांधी जी ने सुहरावर्दी पर किए गए इस कटाक्ष को नजरअंदाज कर दिया। उन्होंने समझाया, 'नहीं, उन्होंने अंग्रेजों का जिक्र नहीं किया। उन्होंने सिर्फ मिश्रित शासन की बात कही थी। लेकिन इस बात पर भी मुझे उनसे असहमति है। अगर हमारे स्वयंसेवकों के दिल शुद्ध हो जाएं, तो शांति तुरंत लौट आएगी। इसके लिए नेताओं के दिलों का शुद्ध होना जरूरी है। तभी वे जनता को स्पष्ट दिशा दिखा पाएंगे। आज यही कमी है। आपको पहले यह घोषित करना चाहिए कि आप किस बात के लिए खड़े हैं और फिर उचित व्यक्तिगत उदाहरण से उसका समर्थन करना चाहिए। अगर इस प्रक्रिया में कुछ उच्च पदस्थ नेता मारे जाते हैं, तो मुझे कोई दुख नहीं होगा... शांति जुलूस अपने आप में एक खोखला प्रदर्शन होंगे, अगर नेताओं और आम कार्यकर्ताओं के इरादों में बुनियादी ईमानदारी नहीं है।' यदि अहिंसा के प्रति समर्पित और एकता एवं शांति की प्राप्ति के लिए सर्वोच्च बलिदान देने को तैयार ऐसा कोई स्वयंसेवी संगठन कार्य करना शुरू कर दे, तो मुझे शहर से पूरी पुलिस बल वापस बुला लिए जाने से कोई आपत्ति नहीं होगी। और यदि इसके परिणामस्वरूप पूरा कलकत्ता खून से लथपथ हो जाए, तो भी

मुझे कोई भय नहीं होगा। क्योंकि यह निर्दोषों के रक्त का स्वेच्छा से किया गया बलिदान होगा। मैं जानता हूँ कि ऐसी स्थिति से कैसे निपटना है... मुझे इस कार्य में आप सभी के सच्चे और पूर्ण सहयोग से संतोष होगा। तब हम पंजाब में भी स्थिति को नियंत्रित कर सकेंगे।'
गांधी ने आगे कहा, 'मैंने अधिकारियों से अपने आवास पर तैनात सशस्त्र पुलिस बल को हटवा दिया था। दुर्भाग्य से, यह फिर से वापस आ गया है। मैंने इसे अपने लिए नहीं बल्कि सुहरावर्दी के हित में रहने दिया है। वह घबराए हुए हैं। अगर 31 अगस्त की रात को वह सौभाग्यवश नोआखली की यात्रा की तैयारी के लिए बाहर न गए होते, तो कौन जानता है कि उनके साथ और परिणामस्वरूप मेरे साथ क्या होता? मैंने अक्सर पूछा है कि अब जब लीग और जिन्ना को उनकी मनचाही चीज़ मिल गई है, तो और अधिक परेशानी क्यों होनी चाहिए? काश जिन्ना ने राजजी फॉर्मूले में निहित मेरे प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया होता, तो यह सब टाला जा सकता था। मैं इससे भी आगे जाने को तैयार था। अगर अंग्रेजों के जाने के बाद भी भारत की सामूहिक बुद्धिमत्ता और दूरदर्शिता शांतिपूर्ण समाधान प्राप्त करने में असमर्थ रहती, तो मैं मुस्लिम लीग को सरकार की बागडोर संभालने के लिए आमंत्रित करता। अगर मैंने उनसे कहा होता तो कांग्रेस के मंत्री उनके लिए रास्ता छोड़ देते। पंडित नेहरू और सरदार पटेल ने मुझसे कहा था कि अगर मैं कमान संभालता हूँ तो वे मेरे आदेशों का पालन करेंगे।'
गांधी जी के भाषण समाप्त होते ही डॉ. प्रफुल्ल घोष अपने कुछ मंत्रियों के साथ अंदर आए। घोष ने शिकायत करते हुए कहा, 'आपने मंत्रालय को विश्वास में लिए बिना उपवास करवाकर उनके साथ बहुत अन्याय किया है।'

गांधी ने उत्तर दिया, 'शायद आप सही कह रहे हैं। लेकिन आग इतनी तेज़ी से फैल रही थी कि हर पल कीमती था। ज़रा सी भी देरी से निर्दोष लोगों की और भी जानें जा सकती थीं।' गांधी को बोलते हुए एक घंटा हो चुका था और अब वे थके हुए लग रहे थे। यह देखकर घोष ने कहा, 'मैं बहस को लंबा नहीं खींचना चाहता,' जिस पर गांधी ने जवाब दिया, 'यह तो बिल्कुल आपकी आदत है। मुझे आपसे यही उम्मीद थी।' हार न मानने वाले घोष ने कहा, 'लेकिन एक बात मुझे खटकती है। आपने अपना उपवास ऐसे समय में शुरू किया है जब हिंदुओं का एक वर्ग आपको अपना दुश्मन समझने लगा है। वे मूर्खतापूर्ण ढंग से सोचते हैं कि जब दूसरा पक्ष सारी हिचक छोड़ चुका है, तब उनसे अहिंसा का पालन करने के लिए कहकर आप उनके साथ बहुत अन्याय कर रहे हैं। अगर आपने मंत्रालय के किसी गलत काम के लिए उपवास किया होता तो मुझे कुछ नहीं कहना होता।'
गांधी ने कहा, 'यह सब सरासर गलत है। क्या आप नहीं देखते कि इससे मुझे मुसलमानों के खिलाफ भी उपवास करने का अधिकार मिल जाता है। मेरा उपवास दोनों समुदायों की सेवा के लिए है। जिस क्षण हिंदू यह समझ जाएंगे कि वे मुझे किसी और शर्त पर जीवित नहीं रख सकते, कलकत्ता में शांति लौट आएगी।'
डॉ. घोष ने कहा, 'आपका उपवास हम पर सबसे अधिक बोझ डाल रहा है। आपके उपवास के इस भारी बोझ तले हम प्रभावी ढंग से काम कैसे कर सकते हैं?' हालांकि, गांधी ने उन्हें बताया कि यह चीजों को देखने का गलत तरीका है। उन्होंने कहा कि उनका उपवास जनता को सशक्त बनाने के उद्देश्य से था। इस पर सुहरावर्दी ने हस्तक्षेप करते हुए कहा कि हिंदू और मुस्लिम दोनों पक्षों के प्रतिनिधियों को एक संयुक्त बैठक के लिए बुलाया जाना चाहिए। यह तय किया गया कि बैठक मुख्यमंत्री के आवास पर होगी। इसके बाद, घोष ने गांधी को

अपनी सरकार द्वारा प्रेस को जारी की गई कड़ी चेतावनी के बारे में बताया: भड़काऊ प्रचार में लिप्त किसी भी अखबार को तत्काल निलंबित कर दिया जाएगा।
3 सितंबर को, गांधी जी के अनशन के दूसरे दिन, डॉ. मेहता उनका हालचाल जानने आए। ऐसे कठिन समय में भी, गांधी जी अपनी नियमित दिनचर्या के अलावा, प्रतिदिन बंगाली पाठ का अभ्यास करते रहे। गांधी जी ने उन्हें बताया कि उनकी रात बहुत शांतिपूर्ण गुजरी और कहा, 'मुझे अपना अनशन समाप्त करने की बिल्कुल भी जल्दी नहीं है। इस गति से भले ही शरीर कमजोर हो जाए, लेकिन मुझे लगता है कि मैं एक महीने तक अनशन जारी रख सकता हूँ।'
खबर मिली थी कि शहर में आधी रात तक लूटपाट जारी रही, लेकिन फिर शांत हो गई और उसके बाद से सब कुछ ठीक रहा। धीरे-धीरे गांधीजी के अनशन से प्रेरित शांति कार्यकर्ताओं और राजनीतिक नेताओं के प्रयासों का असर दिखने लगा। कलकत्ता विश्वविद्यालय के छात्रों ने शांति समितियाँ बनाईं और शांति जुलूस हैदरी हवेली की ओर उमड़ने लगे, लेकिन वहाँ रहने वाले व्यक्ति ने दृढ़ निश्चय किया कि वे अपना अनशन तभी तोड़ेंगे जब उन्हें पूरा विश्वास हो जाएगा कि सभी के दिलों में एकता स्थापित हो गई है।
उसी शाम साढ़े छह बजे, हिंदू और मुस्लिम दोनों समुदायों के सदस्यों का एक जुलूस हैदरी हवेली पहुंचा। दोनों समुदायों के दो-दो सदस्यों को उस कमरे में जाने की अनुमति दी गई जहां गांधी जी लेटे हुए थे। मुसलमानों में से एक, जो बंगाल मुस्लिम लीग के एक प्रतिष्ठित सदस्य थे, ने गांधी जी से अपना अनशन तोड़ने की विनती करते हुए कहा, 'मैंने खिलाफत आंदोलन के दौरान आपके साथ काम किया था। मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि इस क्षेत्र का कोई भी मुसलमान फिर कभी शांति भंग नहीं करेगा। हमारे बीच आपकी

उपस्थिति ही हमारे लिए एक वरदान है। यह हमारी सुरक्षा की गारंटी है। हमें इससे वंचित न करें।' दोनों हिंदू सदस्यों ने भी गांधी जी को यही आश्वासन दिया। गांधी जी ने उत्तर दिया, 'ऐसा लगता है कि उनके लिए मेरे वचन का कोई महत्व नहीं रह गया है। मेरा अनशन तभी टूटेगा जब यह आग बुझ जाएगी और पिछले पंद्रह दिनों की गौरवशाली शांति लौट आएगी। यदि मुसलमान वास्तव में मुझसे प्रेम करते हैं और मुझे अपना वरदान मानते हैं, तो वे मेरे प्रति अपनी आस्था को प्रतिशोध और बदले की भावना के आगे न झुककर प्रदर्शित कर सकते हैं, भले ही पूरा कलकत्ता पागल हो जाए। इस बीच, मेरी यह कठिन परीक्षा जारी रहनी चाहिए।'
उस शाम, सवा सात बजे, राजाजी ने खबर दी कि पिछले दिन की तुलना में शहर में उल्लेखनीय शांति थी और स्वयंसेवकों के साथ-साथ पुलिस भी दोनों समुदायों के सदस्यों को प्रभावी सुरक्षा प्रदान कर रही थी।
गुरुवार, 4 सितंबर, उपवास का तीसरा दिन, गांधीजी के शारीरिक स्वास्थ्य में तेज़ी से गिरावट के साथ शुरू हुआ। उनकी आवाज़ मुश्किल से सुनाई दे रही थी, बस एक धीमी फुसफुसाहट से थोड़ी ही तेज़। उनकी नाड़ी तेज़ और अनियमित थी, और खड़े होने की कोशिश करने पर उन्हें चक्कर आने लगते थे। उस सुबह गांधीजी के घर एक अप्रत्याशित मेहमान आया। नोआखली के पुलिस अधीक्षक अब्दुल्ला हैदरी हवेली में आ पहुँचे। उन्हें देखकर गांधीजी थोड़े प्रसन्न हुए और बोले, 'क्या ही अजीब संयोग है! मैं आपके बारे में सोच रहा था, और सोच रहा था कि हम कैसे मिल सकते हैं और आप यहाँ हैं!' यह अब्दुल्ला के साथ गांधीजी की आखिरी मुलाकात थी, जो कुछ समय बाद पूर्वी पाकिस्तान में सेवा करने के लिए लौट गए।

गांधीजी की हत्या के बाद, एक स्मारक कोष स्थापित किया गया और पहला योगदान 1,000 रुपये अब्दुल्ला ने दिया।
उनसे थोड़ी देर बातचीत करने के बाद, गांधी ने हरिजन के अगले अंक का संपादन शुरू किया, जिसे उन्होंने अपने पूरे उपवास के दौरान जारी रखा।
फिर, जैसा कि हमेशा होता था, परिस्थितियाँ बदलने लगीं। जैसे- जैसे उपवास का असर उस कमज़ोर बूढ़े व्यक्ति पर पड़ने लगा, वैसे- वैसे लोगों पर इसका गहरा प्रभाव पड़ा। दोपहर में, मध्य कलकत्ता के निवासी सत्ताईस लोगों का एक समूह उनसे मिलने आया। वे उन समूहों के सदस्य थे जिन्हें 'प्रतिरोध समूह' के रूप में जाना जाने लगा था—हिंदुओं के वे समूह जो मुस्लिम लीग द्वारा प्रायोजित प्रत्यक्ष कार्रवाई दिवस के दौरान हुए नरसंहारों का बदला लेना चाहते थे। उन्होंने गांधीजी से क्षमा मांगी और उनसे उपवास तोड़ने की विनती की। गांधीजी ने उनकी या हैदरी हवेली में आए अन्य लोगों की विनती पर कोई ध्यान नहीं दिया।
साढ़े पाँच बजे गांधीजी को राजाजी का एक पत्र मिला, जिसमें शहर में तनाव कम होने की सूचना थी। गांधीजी ने कुछ देर आराम किया; जब वे उठे तो उन्होंने देखा कि सुहरावर्दी, एन.सी. चटर्जी और सरदार निरंजन सिंह तालिब उनसे मिलने के लिए इंतज़ार कर रहे थे। उन्होंने गांधीजी को बताया कि दंगों से तबाह हुए इलाकों का दौरा करने के बाद उन्होंने पाया कि वहाँ हालात सामान्य हो रहे हैं। उन्होंने गांधीजी से अपना उपवास तोड़ने का अनुरोध किया। गांधीजी ने कहा, 'आपके अनुरोध को स्वीकार करने से पहले, मैं आपसे दो प्रश्न पूछना चाहता हूँ: पहला, क्या आप पूरी ईमानदारी से मुझे आश्वस्त कर सकते हैं कि कलकत्ता में फिर कभी ऐसी अशांति नहीं होगी? क्या आप कह सकते हैं कि नागरिकों के हृदय में सचमुच

परिवर्तन आया है, जिससे वे सांप्रदायिक उन्माद को न तो बर्दाश्त करेंगे और न ही बढ़ावा देंगे? यदि आप यह आश्वासन नहीं दे सकते, तो बेहतर होगा कि आप मुझे यह उपवास जारी रखने दें। इससे मुझे कोई हानि नहीं होगी। जब कोई व्यक्ति इस तरह उपवास करता है, तो उसे पीने के पानी से नहीं, बल्कि ईश्वर से शक्ति मिलती है; और दूसरा, अगर कोई मुसीबत आती है—चूंकि आप सर्वशक्तिमान या सर्वज्ञ नहीं हैं—तो क्या आप मुझे वचन देंगे कि आप असफलता की खबर देने के लिए जीवित नहीं रहेंगे, बल्कि जिनकी सुरक्षा का वचन आप दे रहे हैं, उनकी रक्षा के प्रयास में अपनी जान दे देंगे? आपको यह भी याद रखना चाहिए कि अगर आप मुझे वचन देने के बाद उसे तोड़ते हैं, तो आपको मेरी ओर से बिना शर्त आमरण अनशन का सामना करना पड़ेगा... अगर आप मुझे धोखा देते हैं... तो मेरी मृत्यु आपके सिर पर होगी। मुझे स्पष्ट और सीधा जवाब चाहिए। आपका आश्वासन लिखित में होना चाहिए।
कमरे में मौजूद सभी लोगों को यह स्पष्ट था कि गांधी जी अपनी कही हर बात पर अडिग थे। चर्चा के उत्तरार्ध में आए राजजी और आचार्य कृपलानी ने प्रस्ताव रखा कि वे गांधी जी को कुछ देर के लिए अकेला छोड़ दें ताकि वे आपस में विचार-विमर्श कर सकें। जैसे ही प्रतिनिधिमंडल कमरे से बाहर निकलने लगा, नारकेलडांगा, शीतलतला, मानिकटोला और कंकुरगाछी क्षेत्रों के लगभग चालीस हिंदू और मुस्लिम निवासियों के प्रतिनिधियों द्वारा हस्ताक्षरित एक संयुक्त घोषणापत्र लाया गया। उन्होंने प्रतिज्ञा की कि भविष्य में उनके इलाकों में कोई अप्रिय घटना नहीं होगी।
भाषण देने के तनाव ने गांधीजी की बची-खुची ऊर्जा भी खत्म कर दी थी। नेता बगल के कमरे में गए और शांति प्रतिज्ञा का मसौदा तैयार करने लगे। चर्चा संक्षिप्त रही। राजाजी ने प्रतिज्ञा का मसौदा

लिखवाया, जिस पर सबसे पहले हिंदू महासभा के एन.सी. चटर्जी और डी.एन. मुखर्जी ने हस्ताक्षर किए, उसके बाद पश्चिम बंगाल की मुस्लिम लीग संसदीय दल के नेता शहीद सुहरावर्दी, पंजाबी नेता आर.के. जैदका और सिख नेता निरंजन सिंह तालिब ने हस्ताक्षर किए। हस्ताक्षर होते ही नेता गांधीजी के कमरे में लौट आए, जहां प्रतिज्ञा गांधीजी को पढ़कर सुनाई गई: 'हम, नीचे हस्ताक्षर करने वाले, गांधीजी से वादा करते हैं कि कलकत्ता में एक बार फिर शांति और स्थिरता बहाल हो गई है, इसलिए हम शहर में कभी भी सांप्रदायिक कलह नहीं होने देंगे और इसे रोकने के लिए मृत्यु तक संघर्ष करेंगे।'
'लेकिन महोदय, क्या इस दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर करने से कोई लाभ होगा?' सुहरावर्दी ने गांधीजी से कहा। 'मुझे कभी भी पाकिस्तान बुलाया जा सकता है और तब मेरे वचन का क्या होगा?'
गांधी ने उत्तर दिया, 'ऐसी स्थिति में आपको यह विश्वास रखना चाहिए कि जिन्हें आप पीछे छोड़ रहे हैं वे अपना काम बखूबी करेंगे। इसके अलावा, आप वापस भी आ सकते हैं।'
अपना व्रत तोड़ने से पहले गांधीजी ने सभा को हिंदुस्तानी में कुछ शब्द कहे, “मैं यह व्रत इसलिए तोड़ रहा हूँ ताकि पंजाब के लिए कुछ कर सकूँ। मैंने आपके आश्वासन को अक्षरशः स्वीकार किया है। मैं आशा और प्रार्थना करता हूँ कि मुझे कभी इसका पछतावा न हो। मैं निश्चित रूप से भारत और मानवता की सेवा करना चाहता हूँ, लेकिन मैं अपने जीवन को लंबा खींचने के धोखे में नहीं आना चाहता। मुझे आशा है कि मुझे कलकत्ता की शांति के लिए फिर कभी व्रत नहीं रखना पड़ेगा। इसलिए मैं आपको आगाह करता हूँ कि आप अपनी सतर्कता में ढील न दें। आज कलकत्ता पूरे भारत की शांति की कुंजी है। अगर यहाँ कुछ होता है, तो उसका असर अन्य जगहों पर भी

पड़ेगा। इसलिए आपको दृढ़ संकल्प लेना चाहिए कि भले ही पूरी दुनिया आग की लपटों में घिर जाए, कलकत्ता उस आग से अछूता रहेगा। आपने अभी-अभी “ईश्वर और अल्लाह तेरा नाम है” गीत सुना है। ईश्वर आप और मेरे बीच साक्षी रहे।”
4 सितंबर को रात 9:15 बजे, उपवास शुरू होने के 73 घंटे बाद, गांधीजी ने सुहरावर्दी द्वारा दिए गए संतरे के रस का एक गिलास धीरे-धीरे पीकर अपना उपवास तोड़ा। राहत महसूस कर रहे नेताओं के जाने से पहले ही, गांधीजी ने राजाजी को अपने पास बुलाया और उनके कान में फुसफुसाते हुए कहा, 'मैं कल पंजाब जाने की सोच रहा हूँ।' राजाजी असमंजस में पड़ गए। एक बार गांधीजी ने मन बना लिया तो उन्हें रोकना मुश्किल था, लेकिन वे यात्रा करने की स्थिति में नहीं थे। सुहरावर्दी ने तुरंत मदद करते हुए कहा, 'महोदय, आप कलकत्ता के नागरिकों को सार्वजनिक प्रार्थना और धन्यवाद समारोह में शामिल होने का अवसर दिए बिना कलकत्ता नहीं छोड़ सकते। अगर हमने कल कोशिश की, तो बेकाबू भीड़ को संभालना नामुमकिन होगा। जल्द से जल्द परसों ही जा सकते हैं।'
गांधी जी ने 6 सितंबर को उपवास समाप्त करने के बाद अपनी पहली सार्वजनिक प्रार्थना सभा आयोजित की। उन्होंने हर हाल में शांति की अपील दोहराई। उन्होंने अगले दिन शाम को पंजाब जाने की योजना की घोषणा की। सुहरावर्दी ने गांधी जी की अपील का समर्थन करते हुए घोषणा की कि वे पंजाब में गांधी जी के शांति मिशन में उनके साथ जाएंगे। उन्होंने स्वयं को पूरी तरह से 'महात्माजी' के आदेशों के अधीन कर दिया था। इसके बाद वे उनके निर्देशों का पालन करेंगे।
7 सितंबर को गांधी जी कलकत्ता के पास स्थित बेलूर स्टेशन से दिल्ली जाने वाली ट्रेन में सवार हुए। उन्होंने दिल्ली में

उतरकर नेहरू और पटेल से परामर्श करने के लिए एक दिन बिताने और फिर पंजाब रवाना होने का निर्णय लिया था। ट्रेन राष्ट्रीय राजधानी की ओर रफ़्तार से चल रही थी, शांति के दूत को लेकर उस शहर की ओर जिसे अब 'मृतकों का शहर' कहा जा रहा था।

11

मृतकों का शहर

'इन बदमाशों ने पूरे शहर में अराजकता फैला दी है। अब हम पाकिस्तान से क्या कहें?' जवाहरलाल नेहरू ने दिल्ली की स्थिति पर खेद व्यक्त किया।

गांधी जी 9 सितंबर की सुबह दिल्ली पहुंचे; लेकिन उनकी किस्मत में यही लिखा था कि वे फिर कभी दिल्ली नहीं लौटेंगे। रेलवे स्टेशन पर गंभीर मुद्रा में खड़े पटेल ने उनका स्वागत किया। गांधी जी ने गौर किया कि मंत्रियों और कांग्रेस नेताओं की हमेशा की तरह दिखने वाली भीड़ आज वहां मौजूद नहीं थी। उनके आगमन की खबर लगभग सभी से गुप्त रखी गई थी।
राजधानी की सुनसान सड़कों पर तेज़ी से दौड़ती कार में, पटेल ने उन्हें बताया कि 4 सितंबर से राजधानी में सांप्रदायिक दंगे भड़क उठे हैं। गांधीजी के लिए एक और चौंकाने वाली बात थी: उन्हें दिल्ली में उनके सामान्य निवास हरिजन कॉलोनी नहीं ले जाया गया, बल्कि सेठ घनश्यामदास बिरला के आवास पर ले जाया गया। पटेल ने समझाया कि कॉलोनी में पश्चिमी पंजाब से आए शरणार्थी रह रहे थे, और अगर वे वहाँ रहने पर ज़ोर देते, तो उन्हें वहाँ से हटाना पड़ता।
जैसे ही गांधी बिरला हाउस पर कार से उतरे, नेहरू गाड़ी लेकर आ गए। उनके चेहरे पर चिंता और नींद की कमी साफ झलक रही थी। उन्होंने गांधी को राजधानी की स्थिति के बारे में बताया: शहर में चौबीस घंटे का कर्फ्यू लगा दिया गया था; सबसे ज्यादा प्रभावित इलाकों में सेना तैनात कर दी गई थी, लेकिन आगजनी, लूटपाट और हत्याएं अभी भी बेरोकटोक जारी थीं और सड़कें

पीड़ितों के शवों से भरी पड़ी थीं। नेहरू बेहद गुस्से में थे। 'इन बदमाशों ने पूरे शहर में अराजकता फैला दी है। अब हम पाकिस्तान से क्या कहें?'
गांधी जी ने पूछा, 'गुस्से में रहने का क्या फायदा?'
नेहरू ने जवाब दिया, 'मुझे खुद पर गुस्सा आ रहा है। हम भारी सुरक्षा व्यवस्था के तहत सशस्त्र गार्डों के साथ घूमते हैं। यह शर्मनाक है। राशन की दुकानें लूट ली गई हैं। फल, सब्जियां और अन्य खाद्य सामग्री मिलना मुश्किल हो गया है। आम नागरिकों की क्या हालत होगी? डॉ. जोशी, जो हिंदू और मुसलमान में कोई भेद नहीं करते थे और दोनों की समान रूप से सेवा करते थे, एक बीमार मुस्लिम मरीज का इलाज करने के लिए दौड़ते समय एक मुस्लिम घर से उन पर गोली चलाई गई और उनकी मौत हो गई।'
गांधी जी को राहत नहीं मिली। नेताओं के साथ एक सम्मेलन हुआ, जिसमें उन्हें राजधानी और उसके आसपास की स्थिति से अवगत कराया गया। पश्चिमी पंजाब से शरणार्थियों की भीड़ उमड़ने से दिल्ली का माहौल लगातार तनावपूर्ण होता जा रहा था। पंजाब में सीमा के दोनों ओर कट्टरपंथियों का कब्जा था; दोनों तरफ अल्पसंख्यकों पर हमले हो रहे थे; प्रशासन और उसके विभिन्न विभाग निष्क्रिय हो गए थे और स्थिति को अराजकता में तब्दील होते देख वे केवल मूकदर्शक बने रहे। सभ्य समाज की संरचना ही खतरे में थी। दिल्ली आने वाले शरणार्थी अपने साथ क्रूरता की भयावह कहानियां लेकर आए थे: हिंदुओं का बड़े पैमाने पर नरसंहार; उनकी संपत्ति और सामान की लूट; पूरे गांवों और समुदायों का सफाया; महिलाओं के साथ बलात्कार, अपहरण, लूट के माल के रूप में अदला-बदली, कभी-कभी सबसे ऊंची बोली लगाने वाले को बेचना; बच्चों को आग में झोंकना और निर्मम भाले से मार डालना; भागते हुए शरणार्थी काफिलों और

ट्रेनों पर हमले। पश्चिमी पंजाब में बड़े पैमाने पर सामूहिक धर्मांतरण भी हो रहा था: हिंदुओं और सिखों को दो विकल्प दिए गए थे—इस्लाम या मौत। कई बार कहानियों को बहुत बढ़ा-चढ़ाकर और सनसनीखेज तरीके से पेश किया जाता था ताकि लोगों को बदला लेने के लिए उकसाया जा सके। और वे इसमें सफल भी हुए: दिल्ली में ऐसी बर्बरता भड़क उठी जो अफगान आक्रमणकारी नादिर शाह के आक्रमण के दौरान राजधानी में हुए नरसंहारों की याद दिलाती थी।
भारत और पाकिस्तान में मंत्रियों ने सीमा बल के कमानधारी ब्रिटिश अधिकारियों पर निष्क्रियता और मिलीभगत का आरोप लगाया। ब्रिटिश अधिकारियों ने शिकायत की कि उनके अधीन सैनिकों ने अपने सहधर्मियों पर गोली चलाने या उनके खिलाफ कार्रवाई करने से इनकार कर दिया, भले ही वे हत्या, आगजनी और बलात्कार जैसे अपराधों में लिप्त थे। 29 अगस्त को संयुक्त रक्षा परिषद ने पंजाब सीमा बल को 31 अगस्त की मध्यरात्रि से समाप्त करने का निर्णय लिया, क्योंकि यह अपने गठन के उद्देश्य के लिए अनुपयोगी पाया गया था। अब शांति बनाए रखने की जिम्मेदारी संबंधित सरकारों पर आ गई। माउंटबेटन, जिनकी अंतिम कार्यकारी जिम्मेदारी समाप्त हो चुकी थी, दस दिनों के विश्राम के लिए शिमला रवाना हो गए। उनका विश्राम और मनोरंजन तब भंग हो गया जब उन्हें दिल्ली से एक तत्काल बुलावा आया। वे 5 सितंबर की दोपहर को राजधानी लौटे। उसी दिन सरकार ने स्थिति से निपटने के लिए माउंटबेटन की अध्यक्षता में मंत्रिमंडल की एक आपातकालीन समिति गठित करने का निर्णय लिया। भारत सरकार द्वारा एक अधिसूचना जारी कर दिल्ली प्रांत को अशांत क्षेत्र घोषित किया गया। पुलिस और सशस्त्र बलों को आदेश दिया गया कि वे कानून तोड़ने वालों पर गोली चलाते समय उन्हें जान से मार दें। अधिसूचना में हत्या के

प्रयास, अपहरण, गुंडागर्दी, डकैती और लूटपाट जैसे अपराधों के लिए मृत्युदंड का प्रावधान किया गया।
प्यारेलाल लिखते हैं: पूर्वी पंजाब में पहले नरसंहार के प्रकोप को काबू में करने के बाद, राजधानी में ही एक बेहद खतरनाक समस्या खड़ी हो गई, जहाँ एक समय हर चौथा व्यक्ति शरणार्थी था। प्रशासन के सामने एक अत्यंत कठिन परिस्थिति थी। उग्र भावनाओं के बवंडर में व्यक्तिगत इच्छाओं का कोई महत्व नहीं रह गया था। लाखों लोग विस्थापित होकर एक अशांत उथल-पुथल में फंस गए थे, मानो उष्णकटिबंधीय तूफान में फंसे जंगल के पत्ते बिखर गए हों। इतिहास में सबसे बड़ा जनसंख्या पलायन चल रहा था। पंजाब में सीमा के दोनों ओर लगभग दस मिलियन लोग पलायन कर रहे थे। सरकार ने इतने बड़े पैमाने पर ऐसे प्रकोप की कल्पना नहीं की थी। दोनों पंजाबों में नागरिक प्रशासन पंगु हो गया था।
भारत सरकार ने एक सैन्य निकासी संगठन की स्थापना की थी, जिसने सितंबर के पहले सप्ताह में नागरिक अधिकारियों से शरणार्थियों को निकालने का कार्यभार संभाला। इस उद्देश्य के लिए परिवहन के सभी साधनों का उपयोग किया गया—ट्रेनें, मोटरगाड़ियाँ और हवाई जहाज। बाद में गणना की गई कि 27 अगस्त से 6 नवंबर के बीच 673 ट्रेनें चलाई गईं, जिनमें 2,799,000 से अधिक लोगों को भारत के भीतर और सीमा पार ले जाया गया। इसी अवधि के दौरान 1,200 सैन्य और नागरिक वाहनों का उपयोग करके मोटर परिवहन द्वारा 427,000 से अधिक गैर-मुस्लिमों और 217,000 से अधिक मुसलमानों को स्थानांतरित किया गया। 15 सितंबर से 7 दिसंबर के बीच 962 उड़ानों में सरकारी चार्टर्ड विमानों द्वारा लगभग 27,000 विस्थापितों को भारत लाया गया। लेकिन ये उपाय विस्थापित लोगों की एक बहुत छोटी संख्या के लिए ही पर्याप्त थे। इतनी बड़ी

संख्या में लोगों को स्थानांतरित करने का सबसे प्रभावी तरीका पैदल मार्च था। पूर्व और पश्चिम की ओर पैदल चल रहे शरणार्थियों के लंबे काफिले पंजाब के उपजाऊ मैदानों को पार करते हुए आगे बढ़े।
विस्थापित हुए इन लाखों लोगों को बुनियादी ज़रूरतों की न्यूनतम आवश्यकताएँ भी मुहैया कराना एक बहुत बड़ा काम था। खराब स्वच्छता सुविधाओं और चिकित्सा कर्मचारियों व आपूर्ति की कमी के कारण महामारियों के फैलने का खतरा हमेशा बना रहता था। शरणार्थियों के काफिलों के विपरीत दिशाओं में जाने से हिंसक झड़पों का खतरा भी बना रहता था। दुख और कष्टों से व्याकुल होकर आए शरणार्थियों और दोनों ओर रह गए अल्पसंख्यक समुदायों के सदस्यों के बीच झड़पों ने नागरिक और प्रशासनिक सेवाओं के लिए एक ऐसी स्थिति पैदा कर दी थी जो लगभग असंभव लग रही थी। आपातकालीन समिति की बैठक के दौरान माउंटबेटन ने दूरदर्शी शब्दों में कहा था, 'अगर हम दिल्ली में हार गए तो हमारा काम तमाम हो जाएगा', जो सरकार के सामने मौजूद संकट की गंभीरता को दर्शाता है।
परेशान सरकार और कांग्रेस नेताओं के पास केवल एक ही उम्मीद थी— गांधी जी। क्या वे कलकत्ता में किए गए चमत्कार को दोहरा पाएंगे? अब सभी मार्गदर्शन के लिए उनकी ओर देख रहे थे। अंततः उन्होंने एकत्रित नेताओं को संबोधित किया। उन्होंने घोषणा की कि दिल्ली कलकत्ता नहीं है। 'मुझे दिल्ली में कोई ऐसा व्यक्ति नहीं मिला जो मेरे साथ चल सके और मुसलमानों को नियंत्रित कर सके। सिखों या आरएसएस में भी ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है। मुझे नहीं पता कि मैं यहां क्या कर पाऊंगा। लेकिन एक बात स्पष्ट है। जब तक दिल्ली में शांति बहाल नहीं हो जाती, मैं इस स्थान को नहीं

छोड़ूंगा।' एकत्रित नेताओं ने राहत की सांस ली। उन्होंने पहले भी उनकी मदद की थी, और उन्हें पूरा विश्वास था कि उन पर भरोसा किया जा सकता है।
उस दोपहर प्रेस को जारी एक बयान में गांधी ने कहा: "मनुष्य जो सोचता है, ईश्वर वही करता है" यह कहावत मेरे जीवन में कई बार सच साबित हुई है, और शायद कई अन्य लोगों के जीवन में भी। पिछले रविवार को जब मैं कलकत्ता से निकला था, तब मुझे दिल्ली की दयनीय स्थिति के बारे में कुछ भी पता नहीं था। लेकिन राजधानी पहुँचने के बाद से, मैं दिनभर दिल्ली की आज की दयनीय कहानी सुनता रहा हूँ। मैंने कई मुस्लिम मित्रों से मुलाकात की है जिन्होंने मुझे अपनी दुखभरी कहानी सुनाई है। मैंने इतना कुछ सुन लिया है कि मुझे यह चेतावनी मिल गई है कि जब तक दिल्ली फिर से अपनी पूर्व शांतिपूर्ण स्थिति में नहीं आ जाती, तब तक मुझे दिल्ली छोड़कर पंजाब नहीं जाना चाहिए।
मुझे इस तनावपूर्ण माहौल को शांत करने के लिए अपना छोटा सा योगदान देना होगा। मुझे भारत की राजधानी में "करो या मरो" का पुराना सिद्धांत लागू करना होगा। मुझे यह कहते हुए खुशी हो रही है कि दिल्ली के निवासी इस निरर्थक विनाश को नहीं चाहते हैं। मैं उन शरणार्थियों के गुस्से को समझने के लिए तैयार हूं, जिन्हें नियति ने पश्चिम पंजाब से भगा दिया है। लेकिन गुस्सा क्षणिक पागलपन है... प्रतिशोध कोई समाधान नहीं है। यह मूल बीमारी को और भी बदतर बना देता है। इसलिए, मैं उन सभी से, जो निरर्थक हत्या, आगजनी और लूटपाट में लिप्त हैं, अपने हाथ रोकने का आग्रह करता हूं।
दोपहर को खबर आई कि शरणार्थी किंग्सवे शरणार्थी शिविर के सामने स्थित टीबी अस्पताल पर हमला करने वाले हैं, जहां बड़ी संख्या

में मुस्लिम मरीजों का इलाज चल रहा था। डॉ. सुशीला नायर, जिन्हें शरणार्थियों के साथ वाह शरणार्थी शिविर से निकाला गया था, कुछ दिन पहले ही दिल्ली पहुंची थीं। गांधीजी ने उन्हें तुरंत अस्पताल जाने का निर्देश दिया और कहा: 'रास्ते में सचिवालय में रुककर सरदार और जवाहरलाल को सूचित करना कि मैं तुम्हें कहां भेज रहा हूं।'
सचिवालय में सुशीला को पटेल नहीं मिले, लेकिन उन्हें नेहरू दिखे, जिन्होंने उन्हें अपनी कार में साथ चलने के लिए कहा। टाउन हॉल में उन्होंने उपायुक्त से अस्पताल में एक गार्ड भेजने का अनुरोध किया; हालांकि, उपायुक्त ने असमर्थता व्यक्त करते हुए कहा कि सभी गार्ड ड्यूटी पर हैं। नेहरू ने उनकी ओर मुड़कर कहा, 'ठीक है, मैं सुशीला को उनकी सुरक्षा के लिए भेज देता हूं।' और इतना कहकर उन्होंने सुशीला को अपनी कार में विदा कर दिया। अस्पताल जाते समय उन्होंने एक मस्जिद को आग की लपटों में घिरा देखा। वह यह देखने के लिए रुकीं कि कहीं कोई घायल तो नहीं है या आग में फंसा तो नहीं है। 'आग की लपटों के कारण हम सभी कमरों की जांच नहीं कर पाए। जब मैं वहां खड़ी थी, तभी सामने वाली इमारत से गोलियों की बौछार हुई।' यह आरएसएस का गढ़ था। गोलियां उन सभी मुसलमानों पर चलाई जा रही थीं जो आग की लपटों से बचने की कोशिश कर रहे थे और बचाव कार्य में लगे किसी भी व्यक्ति को हतोत्साहित करने के लिए थीं।
अस्पताल पहुँचकर सुशीला ने देखा कि लेडी माउंटबेटन की मदद से मरीज़ों को जामा मस्जिद ले जाया गया था। अस्पताल में किंग्सवे कैंप के शरणार्थी लूटपाट कर रहे थे। सुशीला ने कुछ शरणार्थियों का पीछा किया जो पलंग, बिस्तर और अस्पताल का अन्य सामान ले जा रहे थे। उसने देखा कि अस्पताल के दरवाजे पर एक पुलिसकर्मी खड़ा

सब कुछ देख रहा है। सुशीला ने पुलिसकर्मी पर चिल्लाते हुए कहा, 'आप यहाँ क्या कर रहे हैं? क्या आपको नहीं दिख रहा कि वे अस्पताल का सामान लूट रहे हैं? क्या आप इसे रोक नहीं सकते?' पुलिसकर्मी ने कंधे उचकाते हुए जवाब दिया, 'मुझसे बड़े लोग भी इसे नहीं रोक सकते। मैं क्या कर सकता हूँ?'
तभी नेहरू अस्पताल पहुँचे। जब सुशीला ने उन्हें लूटपाट के बारे में बताया, तो वे बेहद क्रोधित हो गए। अपनी कार में बैठकर वे सीधे किंग्सवे शरणार्थी शिविर की ओर चल पड़े। शिविर पहुँचते ही, लूट के सामान से लदे शरणार्थियों का एक समूह अंदर आ रहा था। उन्होंने उनका सामना करते हुए कहा, 'मैंने सोचा था कि हम अपने पीड़ित भाइयों की मदद कर रहे हैं। मुझे नहीं पता था कि हम चोरों और डाकुओं को पनाह दे रहे हैं।' भीड़ भड़क उठी और किसी ने गुस्से से उनसे पूछा कि क्या उन्हें पता है कि उन्होंने क्या-क्या सहा है। नेहरू अपना गुस्सा रोक नहीं पाए और उस आदमी की गर्दन पकड़ ली। सुशीला चिंतित हो गईं, उन्हें डर था कि भीड़ बेकाबू हो सकती है। तब उस युवक ने धीरे से कहा, 'जी पंडित जी, बोलिए। आपके हाथों मरने से बेहतर किस्मत और क्या हो सकती है?' यह सुनकर नेहरू का गुस्सा मानो पिघल गया। उन्होंने कहा, 'यह समय नहीं है कि मैं आपको बताऊँ कि मैं आप सबके लिए कितना दुखी हूँ और आपके कष्टों को देखकर मेरा दिल कितना पीड़ा से भरा है। लेकिन मैं आपसे बस इतना ही कहना चाहता हूँ: क्या इन मुसलमानों ने आपको कोई नुकसान पहुँचाया है?' अगर नहीं, तो आपको उन्हें नुकसान नहीं पहुंचाना चाहिए। हमें न्यायसंगत होना चाहिए। अगर न्याय की मांग हो और यह आवश्यक हो, तो हम पाकिस्तान के साथ युद्ध कर सकते हैं और आप सेना में भर्ती हो सकते हैं। लेकिन इस तरह की हरकतें अपमानजनक और कायरतापूर्ण हैं।'

दुखी तो हैं, लेकिन निराश नहीं हैं। उन्होंने यह भी कहा कि स्थिति को नियंत्रण में लाने के लिए सरकार द्वारा किए जा रहे प्रयासों से वे संतुष्ट हैं। उन्होंने यह भी कहा कि गांधी जी के राजधानी पहुंचने से प्रशासन में नई ऊर्जा आ गई है।
अपने अगले पड़ाव, देवन हॉल हिंदू शरणार्थी शिविर में, गांधीजी का सामना एक क्रोधित भीड़ से हुआ। शिविर पश्चिमी पंजाब से आए शरणार्थियों से भरा हुआ था, जिनमें हिंदू और सिख दोनों शामिल थे, जिन्हें सताया गया था, परेशान किया गया था और उनके घरों से निकाल दिया गया था। उनमें से कुछ ने गांधीजी पर कठोर हृदय होने का आरोप लगाया, और कहा कि वे मुसलमानों के प्रति उनसे अधिक सहानुभूति रखते हैं। इन आरोपों से गांधीजी को गहरा दुख हुआ, लेकिन उन्होंने कहा कि लोगों को क्रोधित होने का अधिकार है क्योंकि असली पीड़ित तो वे ही हैं। इसके बाद वे रेलवे स्टेशन के पास स्थित वेवेल कैंटीन ट्रांजिट कैंप गए, जो पाकिस्तान भेजे जाने की प्रतीक्षा कर रहे मुस्लिम शरणार्थियों से खचाखच भरा हुआ था। 41 मील की दूरी तय करने के बाद, उनके दिन के यात्रा कार्यक्रम का अंतिम पड़ाव किंग्सवे शरणार्थी शिविर था। नेहरू के पिछले दिन के दौरे के बाद से वहां स्थिति काफी हद तक शांत हो गई थी।
उस शाम, शाम की प्रार्थना सभा में उपस्थित लोगों को संबोधित करते हुए गांधीजी ने कहा कि वे पाकिस्तान जाकर जिन्ना के दावों की सच्चाई स्वयं देखना चाहते हैं। जिन्ना ने कहा था कि पाकिस्तान के हिंदू उनके भाई हैं। क्या ये केवल खोखले शब्द थे? लेकिन दिल्ली में अशांति के कारण वे वहां नहीं जा सके। प्रत्येक राज्य को अपने निवासियों के कार्यों के लिए पूरी तरह से जिम्मेदार होना चाहिए। उन्होंने कहा कि यही बात भारतीय संघ

पर भी लागू होती है। क्या केंद्रीय मंत्री अपनी विफलता स्वीकार कर लें और दुनिया के सामने बेशर्मी से यह मान लें कि दिल्ली के लोग या शरणार्थी स्वेच्छा से देश के नियमों का पालन नहीं करेंगे? दिल्ली में सामान्य स्थिति बहाल करके उन्हें पंजाब भेजना जनता के हाथ में था। दिल्ली में कर्फ्यू क्यों लगा है? दिल्ली को 'मृतकों का शहर' क्यों कहा जाता है?
राजधानी में मुस्लिम विरोधी भय का माहौल छा गया था। दिल्ली पुलिस बल का अधिकांश हिस्सा मुस्लिम था, लेकिन उनमें से कई वर्दी और हथियारों के साथ भाग गए थे। इससे बचे हुए पुलिसकर्मियों की ईमानदारी और वफादारी पर तुरंत संदेह पैदा हो गया। पटेल ने पश्चिम बंगाल से गोरखा पुलिसकर्मियों की टुकड़ियाँ भेजने के लिए बंगाल को तार भेजा। मध्य प्रांत के मुख्यमंत्री ने 250 कांस्टेबल और सब-इंस्पेक्टरों की एक टुकड़ी भेजी। अफवाहें थीं कि मुस्लिम प्रशासन पर कब्ज़ा करने के लिए तख्तापलट की योजना बना रहे हैं। पुलिस द्वारा कुछ मुस्लिम घरों की तलाशी में बम, हथियार और गोला-बारूद के जखीरे मिले। मुसलमानों ने दावा किया कि मुस्लिम समुदाय को बदनाम करने और हिंदुओं में आक्रोश भड़काने के लिए खाली पड़े मुस्लिम घरों में हथियार रखे गए थे। वास्तव में, इसी तरह के हथियार पूरे देश में हिंदू घरों और हिंदू चरमपंथी संगठनों के कार्यालयों में भी पाए गए थे। लेकिन दिल्ली और पंजाब में, मुसलमानों और हिंदुओं के बीच हुई कुछ भीषण झड़पों और मुसलमानों द्वारा हिंदुओं पर किए गए कुछ हमलों में, इन्हीं हथियारों का इस्तेमाल किया गया था। हिंदू सांप्रदायिक तत्वों ने सुनियोजित दुष्प्रचार के ज़रिए लोगों को भड़काया था, जिसमें मुसलमानों के पास से बरामद अवैध हथियारों, विस्फोटकों और गोला-बारूद की मात्रा को बढ़ा-चढ़ाकर

पेश किया गया था। मुसलमान भी इसके लिए ज़िम्मेदार थे; उनमें से कई अवैध हथियार जमा कर रहे थे। यहां तक कि जब अंग्रेजों ने 1857 में स्वतंत्रता की पहली लड़ाई के बाद भारतीयों के हथियार रखने पर प्रतिबंध लगा दिया था, तब भी मुसलमानों ने अवैध हथियार जमा कर रखे थे। गांधी जी मुसलमानों से अपने हथियार सौंपने की अपील करते रहे थे, लेकिन उनकी सलाह को अनसुना कर दिया गया और हिंदू कट्टरपंथियों को आग में घी डालने का मौका मिल गया।
दूसरी ओर, सिखों को सरकार के उस फैसले पर आपत्ति थी जिसमें सुरक्षा कारणों से नौ इंच से अधिक लंबी कृपाण ले जाने पर रोक लगा दी गई थी। उनके प्रतिनिधियों ने गांधीजी से मुलाकात की और शिकायत की कि इस तरह का कोई भी प्रतिबंध उनके धर्म में हस्तक्षेप है। गांधीजी ने उत्तर दिया, 'लेकिन मुझे आज कहीं भी धर्म का कोई प्रमाण नहीं दिखता। और यदि यह एक धार्मिक प्रतीक है, तो इसके आकार पर प्रतिबंध का कोई महत्व नहीं होना चाहिए।' सिख संतुष्ट नहीं हुए और अपने तर्क के समर्थन में प्रिवी काउंसिल के एक पुराने फैसले का हवाला दिया, जिसमें कृपाण को किसी भी आकार की तलवार के रूप में व्याख्यायित किया गया था। गांधीजी ने उनसे कहा कि स्वस्थ संयम को तोड़ने के लिए कानूनी मिसालों का हवाला देना पूरी तरह से अप्रासंगिक और अनुचित है, क्योंकि केवल इन्हीं संयमों के तहत समाज स्वतंत्र रूप से विकसित हो सकता है। कृपाण, जिसे सिख धर्म अपने अनुयायियों को धारण करने का आदेश देता है, पवित्रता और आत्मसंयम का प्रतीक है। यह घोर प्रतिकूल परिस्थितियों में अत्याचार के विरुद्ध निर्दोष महिलाओं, बच्चों और वृद्ध एवं विकलांग व्यक्तियों की रक्षा का हथियार है। कृपाण कभी भी आक्रमण का हथियार नहीं होना चाहिए और न ही इसका प्रयोग निहत्थी महिलाओं और बच्चों के

विरुद्ध प्रतिशोध के लिए किया जाना चाहिए। हाल ही में कृपाण का प्रयोग पूरी तरह से अनुचित उद्देश्यों के लिए किया गया था और जिसने भी इसका गलत तरीके से प्रयोग किया, वह इसे रखने का अधिकार खो बैठा।
12 सितंबर, शुक्रवार के दिन, गांधी जी जामा मस्जिद गए, जहाँ लगभग पाँच हज़ार मुसलमानों ने शरण ली थी। गंदगी की परवाह किए बिना, गांधी जी ने अंदर जाने से पहले अपनी चप्पलें उतार दीं। हज़ारों लोग शुक्रवार की नमाज़ अदा करने के लिए इकट्ठा हुए थे। गांधी जी ने कुछ शरणार्थियों से मुलाकात की और स्वच्छता के प्रति उनकी लापरवाही के लिए उन्हें फटकारा।
उसी दिन आरएसएस प्रमुख गांधीजी से मिलने आए। यह सर्वविदित था कि राजधानी, पूर्वी पंजाब और देश के उन हिस्सों में जहां मुस्लिम विरोधी अभियान चलाए जा रहे थे, वहां हुई हत्याओं के पीछे आरएसएस का हाथ था। आरएसएस प्रमुख ने इन आरोपों का स्पष्ट खंडन करते हुए कहा कि संगठन की स्थापना हिंदू धर्म की रक्षा के लिए की गई थी, मुसलमानों को मारने के लिए नहीं; उन्होंने कहा कि वे किसी के प्रति शत्रुतापूर्ण नहीं हैं— आरएसएस शांति का पक्षधर है। यह दावा अविश्वसनीय और अविश्वसनीय था। लेकिन गांधीजी ने नोआखली में मुस्लिम कट्टरपंथियों के पश्चाताप के दावों पर जो असीम विश्वास दिखाया था, उसी विश्वास के साथ उन्होंने महसूस किया कि उन्हें स्थिति स्पष्ट करने का मौका दिया जाना चाहिए। प्रमुख से एक सार्वजनिक बयान जारी करने का अनुरोध किया गया जिसमें वे अपने ऊपर लगे आरोपों का खंडन करें और शहर में मुसलमानों की हत्या और उत्पीड़न की खुलेआम निंदा करें, जो पहले हो चुका था और अभी भी जारी है। बयान देने के दबाव से बचने के लिए, प्रमुख ने सुझाव दिया कि गांधीजी को यह बयान देना

शरणार्थियों के लिए निर्धारित राशन की चोरी कर रहे थे और उसे भारी मुनाफे पर काला बाजार में बेच रहे थे।
कुछ मुस्लिम पुलिसकर्मी जो अपने हथियारों के साथ भाग गए थे, उन्होंने इन शिविरों में शरण ली थी। पटेल ने एक बार तो लगभग सेना की एक बटालियन को शिविर में भेजकर अवैध हथियारों को जब्त करने का आदेश दे दिया था। 13 तारीख को जब गांधीजी शिविर में गए, तो सैकड़ों शरणार्थी उनकी कार की ओर दौड़े और उसे घेर लिया। गांधी-विरोधी नारे लगाए गए और किसी ने गांधीजी को कार से बाहर खींचने की कोशिश की। घबराए हुए ड्राइवर ने एक्सीलरेटर दबा दिया और कार तेजी से आगे बढ़ गई। हालांकि, गांधीजी ने उसे रुकने का आदेश दिया, क्योंकि वे क्रोधित भीड़ का सामना करने के लिए दृढ़ थे। गांधीजी फिर कार से बाहर निकले और भीड़ से शांत होने का अनुरोध किया। उनमें से अधिकांश लोग निहत्थे और असुरक्षित बुजुर्ग व्यक्ति के इस निर्भीक कार्य से चकित थे। क्या वे उन्हें चुनौती दे रहे थे या उन्हें उन पर भरोसा था कि वे उन्हें कोई नुकसान नहीं पहुंचाएंगे? गांधीजी की कुछ टिप्पणियों पर शरणार्थियों ने कठोर और क्रोधित प्रतिक्रियाएं दीं। उन्होंने उनसे शांत रहने और अपना क्रोध और भय त्यागने की विनती की। उनकी आवाज़ में व्याप्त भावुकता और स्पष्ट दुःख देखकर शरणार्थियों को एहसास हुआ कि अन्य 'नेताओं' और 'हमदर्दों' के विपरीत, यह एक ऐसा व्यक्ति था जो उनके दुख को समझता था। उन्होंने गहरी सहानुभूति से उनकी बातें सुनीं और अन्याय को दूर करने के लिए अपनी पूरी कोशिश करने का वादा किया।
उस दिन गांधी जी ने ईदगाह और मोतिया खान स्थित दो और मुस्लिम शरणार्थी शिविरों का दौरा किया। बाद में गांधी जी को सूचना मिली कि राष्ट्रवादी मुस्लिम डॉ. अंसारी की बेटी और दामाद को

दरियागंज स्थित उनके घर से निकाल दिया गया है। गांधी जी पहले भी कई बार अंसारी परिवार के दरियागंज स्थित आवास पर मेहमाननवाज़ी का आनंद ले चुके थे। स्थानीय नेताओं द्वारा उकसाए गए कुछ सिख शरणार्थियों ने घर को घेर लिया और जान से मारने की धमकी देकर दंपति को घर छोड़ने और एक होटल में जाने के लिए मजबूर कर दिया। उस शाम प्रार्थना सभा में गांधी जी ने कहा, 'क्या यह शर्म की बात नहीं है कि कांग्रेस के एक स्तंभ और हिंदू-मुस्लिम एकता के लिए अथक रूप से काम करने वाले व्यक्ति की बेटी को इस तरह घर से निकाल दिया गया है?' मुझे इस बात का बहुत दुख है कि यह ऐतिहासिक शहर, जहाँ कभी इंद्रप्रस्थ स्थित था, जिसने इतने सारे राजवंशों और सभ्यताओं के उत्थान और पतन को देखा है, जहाँ कौरवों, पांडवों और मुगलों ने शासन किया था, जहाँ मुसलमानों ने स्वामी श्रद्धानंद को जामा मस्जिद से संबोधित करने का अनुरोध करके सम्मानित किया था और जिसे स्वामीजी ने अपनी शहादत से पवित्र किया था, आज इस तरह कलंकित हो गया है।
कुछ मुसलमानों ने गांधीजी को दिल्ली के किसी मुस्लिम इलाके में रहने का न्योता दिया, जैसा कि उन्होंने कलकत्ता में किया था। उनका कहना था कि अगर वे उनके बीच रहेंगे तो उन्हें सुरक्षा का एहसास होगा। गांधीजी ने उनका प्रस्ताव मान लिया और आसफ अली के घर में रहने का फैसला किया, जो एक ऐसे इलाके में स्थित था जहाँ लगातार दंगे होते रहते थे। उसी सुबह पटेल ने गांधीजी को बताया कि आसफ अली के घर के काफी करीब एक इमारत की छत से रात भर गोलीबारी होती रही। सशस्त्र पुलिस बल ने चार बार इमारत पर धावा बोलने की नाकाम कोशिश की। आखिरकार जब वे कामयाब हुए, तो स्नाइपर आसपास की इमारतों की छतों से कूदकर भाग निकले। छत से भारी मात्रा में हथियार और गोला-बारूद बरामद हुआ।

गांधीजी को आमंत्रित करने वाले मुस्लिम मित्रों को स्थिति से अवगत कराया गया। यदि एक भी गोली गांधीजी को लग जाती या उन्हें घायल भी कर देती, तो पूरे देश में मुसलमानों का नरसंहार हो जाता; क्या वे यह जोखिम उठाने को तैयार थे? मुसलमानों ने स्थिति की गंभीरता को समझा; उनकी सुरक्षा के लिए, उन्हें उनके इलाके में सेना की एक टुकड़ी तैनात करने का प्रस्ताव दिया गया। हालांकि गांधीजी ने आसफ अली के आवास पर न जाने का फैसला किया, लेकिन वे निवासियों की सुरक्षा के लिए किए गए वैकल्पिक इंतजाम से असंतुष्ट थे। उन्होंने हमेशा दोहराया था कि यदि उनके बस में होता, तो वे शहर से पूरी पुलिस और सेना को वापस बुला लेते। भारत में कई लोगों का मानना था कि शरणार्थियों के पुनर्वास का सबसे अच्छा उपाय उन्हें खाली पड़े मुस्लिम घरों में बसाना था। हिंदू सांप्रदायिकों ने खुले तौर पर इस विकल्प का समर्थन किया और आने वाले शरणार्थियों को न केवल मुसलमानों के खाली घरों पर कब्जा करने के लिए उकसाया, बल्कि पीछे रह गए लोगों को भी भगाकर उन घरों पर भी कब्जा करने के लिए प्रेरित किया। हिंदू सांप्रदायिकों के इसी समूह ने योजनाबद्ध और जबरन जनसंख्या स्थानांतरण की वकालत की। गांधी जी ने इस सुझाव का विरोध किया और चेतावनी दी कि एक बार यह सिद्धांत स्वीकार कर लिया गया, तो इसका प्रयोग केवल दो पंजाब तक ही सीमित नहीं रहेगा, बल्कि दोनों राष्ट्रों पर पूरी तरह लागू होगा। तब यदि कोई मुस्लिम भारत में और कोई गैर-मुस्लिम पाकिस्तान में नहीं रह सकता, तो दोनों देशों के बीच अलगाव स्थायी हो जाएगा और अंततः एक परस्पर विनाशकारी युद्ध होगा। इसलिए उन्होंने सुझाव दिया कि घृणा, हत्या और आगजनी के इस दुष्चक्र को कहीं न कहीं तोड़ा जाना चाहिए, गैर-मुस्लिम शरणार्थियों द्वारा मुसलमानों को जबरन बेदखल करना बंद

होना चाहिए और जो लोग अस्थायी रूप से भागकर शरणार्थी शिविरों में शरण लिए हुए हैं, उनके घरों की रक्षा की जानी चाहिए। सरकार को इन संपत्तियों के असली मालिकों की ओर से तब तक न्यासी की भूमिका निभानी चाहिए, जब तक कि मालिक वापस न लौट आएं या उन्हें वापस न लाया जा सके।
हिंदू और सिख शरणार्थियों ने तर्क दिया कि चूंकि उन्हें पाकिस्तान से निकाल दिया गया था, इसलिए किसी भी मुसलमान को भारत में, या कम से कम दिल्ली में रहने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। गांधी ने स्पष्ट किया कि उन्होंने भारतीय सरकार को पाकिस्तान में हिंदुओं और सिखों के साथ हो रहे दुर्व्यवहार को अनदेखा करने की सलाह नहीं दी थी। लेकिन भारतीय सरकार को पाकिस्तान में अल्पसंख्यकों पर हो रहे अत्याचारों के मामलों को पाकिस्तानी सरकार के समक्ष उठाने के लिए यह साबित करना होगा कि भारत में अल्पसंख्यक सुरक्षित हैं।
गांधी जी ने 18 सितंबर की शाम को दरियागंज के मुस्लिम बहुल इलाके का दौरा किया। निवासियों ने उनसे पुलिस और सैन्य कर्मियों के पक्षपातपूर्ण व्यवहार की शिकायत की, जिसके कारण उन्हें अपने घर और जन्मभूमि छोड़कर भागना पड़ सकता था। गांधी जी ने उन्हें किसी भी परिस्थिति में न छोड़ने की सलाह देते हुए कहा, 'अगर पुलिस और सेना आप पर गोलीबारी भी करें, तो गोलियों की बौछार का सामना करें और बहादुरी से मर जाएं, लेकिन अपने घरों से न भागें।' गांधी जी ने कुचा ताराचंद के निवासियों को भी ऐसी ही सलाह दी, जो चारों ओर से बड़ी मुस्लिम आबादी से घिरा एक हिंदू बहुल इलाका था। निवासियों ने दावा किया कि हजारों पठान, पूरी तरह से हथियारों से लैस, हिंदुओं का नरसंहार करने के लिए तस्करी करके लाए गए थे।

इस पूरे समय गांधी जी हिंदुओं और मुसलमानों दोनों से हथियार डालने की अपील करते रहे थे। अगले दिन, कुछ मौलाना उनसे मिलने आए और कुछ जंग लगे हथियार पेश करते हुए दावा किया कि मुसलमानों ने उनकी अपील के जवाब में स्वेच्छा से ये हथियार डाल दिए हैं। गांधी जी ने उनसे कहा कि यह दिखावा मात्र है और इससे उनके समुदाय के हृदय परिवर्तन का कोई संकेत नहीं मिलता। उन्होंने उन्हें कड़े शब्दों में चेतावनी दी, 'खुद को धोखा मत दो। अगर मुसलमान अपने हृदय को पूरी तरह से शुद्ध नहीं करते हैं, तो मेरा यहाँ रहना उनके लिए व्यर्थ होगा।'
दिल्ली के कुछ सबसे घनी आबादी वाले मुस्लिम बहुल इलाकों जैसे पुल बंगश, बड़ा हिंदू राव, खारी बावली और चांदनी चौक के दौरे के दौरान गांधीजी ने पाया कि वे इलाके लगभग सुनसान थे। जहाँ भी वे गए, मुसलमानों ने उनका जोरदार स्वागत किया, जबकि कुछ हिंदू युवकों ने उनके खिलाफ हिंसक प्रदर्शन किया और उनकी कार पर हमला करने की कोशिश की। बाद में पुलिस ने पटेल को बताया कि ये युवक स्थानीय हिंदू महासभा इकाई के उग्र कार्यकर्ता थे।
लगातार शारीरिक तनाव का असर अब गांधीजी के स्वास्थ्य पर पड़ने लगा था। उन्हें काली खांसी हो गई थी और नींद नहीं आती थी। उन्होंने बताया कि उन्होंने सपने में देखा कि हिंदू युवकों की भीड़ उनके कमरे में घुस आई। उनमें से एक ने उन्हें गाली देना शुरू कर दिया और ऐसा लगा जैसे वह उन पर हमला करना चाहता हो। 'मैंने उन्हें शांत करने के लिए भगवान राम का नाम जपना शुरू कर दिया।' एक और बार जब उनकी नींद इसी तरह भंग हुई, तो उन्होंने बताया कि उन्होंने सपना देखा कि वे मुसलमानों की भीड़ से घिरे हुए हैं और उन्हें उनके कर्तव्य का पाठ पढ़ाने की कोशिश कर रहे हैं। 'जागते या सोते हुए, मैं इसके अलावा कुछ और नहीं सोच सकता,'

उन्होंने आगे कहा। उन्होंने डॉक्टरों को निर्देश दिया कि उन्हें किसी भी प्रकार की शराब या प्रतिबंधित दवाओं के इंजेक्शन न दिए जाएं। 'अगर कोई ऐसा करने की कोशिश करेगा तो मैं जीवन के साथ सहयोग करने से इनकार कर दूंगा। मैं किसी भी तरह से जीवित नहीं रहना चाहता। मुझे अपनी आस्था को बरकरार रखते हुए मरना पसंद होगा।'
2 अक्टूबर 1947 स्वतंत्र भारत में गांधीजी का पहला और आखिरी जन्मदिन था। सुबह से ही उनके कमरे में लगातार आगंतुकों का तांता लगा रहा। उन्होंने हमेशा की तरह उपवास, प्रार्थना और अतिरिक्त चरखा चलाकर अपना जन्मदिन मनाया। उन्होंने बताया कि उपवास आत्म-शुद्धि के लिए था और चरखा चलाना ईश्वर की सृष्टि में सबसे निचले और उपेक्षित लोगों की सेवा के लिए अपना जीवन समर्पित करने के अपने संकल्प के नवीनीकरण का प्रतीक था। उन्होंने अपने जन्मदिन के उत्सव को चरखे के पुनर्जन्म के उत्सव में बदल दिया था और इसे 'रेंटिया बारस' के रूप में याद किया जाता है (हिंदू पंचांग के अनुसार, गांधीजी का जन्म पूर्णिमा के बारहवें दिन हुआ था)। उनके लिए चरखा अहिंसा का प्रतीक था। स्नान करके जब वे बाहर निकले, तो उनके प्रिय मित्रों का एक छोटा समूह उपस्थित था, जिसमें पटेल, नेहरू, घनश्यामदास बिरला, उनके मेज़बान और दिल्ली में बिरला परिवार के सदस्य शामिल थे। मीराबेन ने फूलों से कलात्मक क्रॉस, 'राम' और पवित्र अक्षर 'ओम' बनाकर उनकी वेदी को सजाया था। लेडी माउंटबेटन इंग्लैंड से उनके नाम भेजे गए पत्रों और टेलीग्रामों का एक बंडल लेकर आईं। उन्होंने सभी से प्रार्थना करने का अनुरोध किया कि 'या तो यह वर्तमान आग बुझ जाए या ईश्वर मुझे अपने पास बुला लें। मैं नहीं चाहता कि मेरा एक और जन्मदिन ऐसे भारत में आए जो अभी भी आग की

लपटों में घिरा हो।' पटेल की बेटी, मणिबेन ने अपनी डायरी में लिखा: 'उनका दुख असहनीय था। हम उनसे प्रसन्नतापूर्वक मिलने गए थे; भारी मन से घर लौटे।'
भारत में पाकिस्तान के उच्चायुक्त ज़ाहिद हुसैन के संदेशों में से एक में कहा गया है: 'आज भारत के लोग - जिनमें मैं पाकिस्तान को भी शामिल करता हूँ - घृणा और संघर्षों के कारण असहनीय पीड़ा और अभाव झेल रहे हैं। देश पर छाए इस अभूतपूर्व संकट में सभी की निगाहें महात्मा गांधी पर टिकी हैं। भारत अनेक मायनों में मानव जाति के भविष्य की कुंजी है और हम सभी आशा और प्रार्थना करते हैं कि महात्मा गांधी के आदर्शों से प्रेरित होकर वह अपनी भूमिका को सत्यनिष्ठा से और बखूबी निभाएगी।' गांधी जी इस बात से व्याकुल थे कि यद्यपि कई दंगाई, लुटेरे और हत्यारे गिरफ्तार किए गए थे, फिर भी रिकॉर्ड बताते हैं कि उनमें से अधिकांश को किसी न किसी बहाने से रिहा कर दिया गया था। यह तर्क दिया गया कि ब्रिटिश प्रशासन को विस्थापित करने वाली जनता की सरकार में 'दृढ़ता' की कमी थी; उन्होंने आम जनता में भय उत्पन्न नहीं किया, जो सरकार को 'अपनी' मानती थी, जिससे डरने की आवश्यकता नहीं थी। गांधी जी का मानना था कि यह बात आंशिक रूप से ही सत्य थी, क्योंकि जनता की सरकार के पास विदेशी शासक द्वारा प्रयोग की गई शारीरिक शक्ति की तुलना में कहीं अधिक नैतिक शक्ति थी।
गांधी जी ने शरणार्थी समस्या को अपनी विशेष चिंता का विषय बनाया। यद्यपि उन्होंने अपने दल-पतियों की संख्या कम कर दी थी और अब उनके साथ बहुत कम कर्मचारी थे, फिर भी गांधी जी ने कुरुक्षेत्र शरणार्थी शिविर में चिकित्सा सहायता की व्यवस्था करने और स्वच्छता के उचित तौर-तरीकों को सिखाने, प्रोत्साहित

करने और लागू करने के लिए डॉ. सुशीला नायर को भेजा। कुरुक्षेत्र शिविर में पश्चिमी पंजाब से आए शरणार्थियों की सबसे बड़ी संख्या में से एक थी।
'तरीके, योजना और लगभग उत्तम स्वच्छता के लिए, मुझे एक सैन्य शिविर दे दीजिए। मैंने कभी सेना की आवश्यकता को नहीं समझा। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि इससे कुछ भी अच्छा नहीं निकल सकता। यह अनुशासन, सामूहिक जीवन, स्वच्छता और हर उपयोगी गतिविधि के लिए उचित प्रावधानों के साथ एक सटीक समय-सारणी के मूल्यवान सबक देता है। ऐसे शिविरों में लगभग सन्नाटा छाया रहता है। यह कुछ ही घंटों में टेंट से बना एक शहर होता है। मैं चाहता हूँ कि हमारे शरणार्थी शिविर उस आदर्श के करीब पहुँचें। ये शिविर कम खर्च में बनाए जा सकते हैं, बशर्ते इन टेंट शहरों के निर्माण सहित सारा काम शरणार्थियों द्वारा स्वयं किया जाए। आपको अपने स्वयं के सफाईकर्मी, सड़क निर्माता, खाई खोदने वाले, रसोइया, कपड़े धोने वाले आदि बनना होगा। तब कोई भी शरणार्थी जहाँ भी जाए, दूसरों पर बोझ नहीं बनेगा।'
चूंकि सर्दी का मौसम नजदीक आ रहा था, गांधी जी ने शरणार्थियों के लिए कंबल और ऊनी कपड़े भेजने की अपील की और इन्हें भेजने के तरीके के बारे में स्पष्ट निर्देश दिए। 'कपड़े और कंबल भेजने से पहले धोकर, यदि आवश्यक हो तो उनकी मरम्मत कर लेनी चाहिए। रजाई का यह लाभ है कि उन्हें खोलकर, कपड़े को धोकर, सूती धागे को हाथ से ढीला करके फिर से भरा जा सकता है।' प्रतिक्रिया तुरंत और जबरदस्त थी। कश्मीर, श्रीलंका और बर्मा जैसे दूर-दराज के स्थानों से कंबल, ऊनी कपड़े, रजाई, साटन और फर, कीमती कालीन, रेशम, महंगे शॉल, कढ़ाई वाले कपड़े, रेशमी पर्दे और चादरें आने लगीं।

इस समय तक सिंध अपेक्षाकृत शांत और अमन से रहा था, लेकिन दोनों पंजाबों में चल रही अशांति का असर यहाँ भी दिखने लगा था। आचार्य कृपलानी ने गांधीजी से पूछा, 'मारवाड़ी और गुजराती तो सिंध से बाहर अपने-अपने घरों में लौट गए हैं; बेचारे सिंधी हिंदू और सिख कहाँ जाएँगे?' गांधीजी ने जवाब दिया, 'अगर मुझसे पूछा जाए, तो मैं कहूँगा कि किसी को भी अपना घर-बार नहीं छोड़ना चाहिए। इससे पाकिस्तान की परीक्षा होगी।' सिंध के कांग्रेस नेता एन.आर. मलकानि ने पाकिस्तान की स्थापना के बाद अपना मत व्यक्त करते हुए कहा, 'मैं पाकिस्तान को अस्वीकार नहीं करता। मैं सिंध और पाकिस्तान में रहूँगा, क्योंकि सिंध मेरी मातृभूमि है। इसलिए मैं पाकिस्तान के प्रति विश्वासघात नहीं करूँगा। मैं इसे एक अच्छा और मजबूत राज्य बनाने का प्रयास करूँगा। मैं इसे कमजोर करने की कोशिश नहीं करूँगा और किसी भी हालत में इसका विध्वंसक नहीं बनूँगा... एक सिंधी और पाकिस्तानी होने के नाते, मैं नागरिकता के सभी अधिकारों का दावा करूँगा, क्योंकि मैं भी अन्य लोगों की तरह पाकिस्तानी बन गया हूँ।' यदि आवश्यक हुआ तो मैं पाकिस्तान में एक पाकिस्तानी और सिंध में एक सिंधी के रूप में इन अधिकारों के लिए लड़ूंगा... मैं अब कभी भी भारतीय ध्वज, चाहे पुराना हो या नया, नहीं फहराऊंगा। मैं उसे लपेटकर अपने हृदय के एकांत में एक पवित्र स्मृति के रूप में रखूंगा। मैं पाकिस्तान के ध्वज को राजकीय ध्वज के रूप में स्वीकार करूंगा। लेकिन मैं अपने घर पर तब तक कोई ध्वज नहीं फहराऊंगा जब तक वह मुझे प्रिय न हो जाए... यदि मुझे नागरिकता के पूर्ण अधिकार नहीं दिए गए, तो मैं खुलकर विरोध करूंगा और जब मुझे अपना विरोध व्यर्थ और यहाँ जीवन अपमानजनक लगेगा, तब मैं पाकिस्तान और अपने सिंध को छोड़कर चला

जाऊंगा और दूसरों को भी ऐसा करने के लिए प्रेरित करूंगा। मुझे आशा है कि वह बुरा दिन कभी नहीं आएगा।
लेकिन परिस्थितियाँ उनके लिए बहुत प्रतिकूल साबित हुईं। पाकिस्तान के नारे में निहित मुस्लिम आकांक्षाओं का गहन विश्लेषण करते हुए, आर.जी. केसी ने अपनी पुस्तक 'एन ऑस्ट्रेलियन इन इंडिया' में लिखा है: '...मुस्लिम लीग के राजनीतिक नेतृत्व ने पाकिस्तान की मांग केवल राजनीतिक वर्चस्व, समृद्धि और निजी जागीरें बनाने के उद्देश्य से उठाई थी। उनके प्रांतों में अल्पसंख्यक समुदाय आसान निशाना थे। जहां खुलेआम सांप्रदायिक दंगे भड़काए जा सकते थे, वहां उन्होंने पश्चिम पंजाब और पूर्वी बंगाल में ऐसा किया और अल्पसंख्यकों को सफलतापूर्वक मार डाला या भगा दिया तथा पीछे छूटी संपत्ति को आपस में बांट लिया। लेकिन सिंध में स्थिति अलग थी; स्थानीय मुसलमान अपने साथी सिंधी हिंदू या सिख के खिलाफ कार्रवाई करने को तैयार नहीं थे, इसलिए कोई "लोकप्रिय" दंगा नहीं भड़काया जा सका, लेकिन पूर्वी पंजाब से आए शरणार्थियों की मदद से आतंक का एक सुनियोजित अभियान चलाया गया। गैर-मुस्लिम घरों और संपत्तियों को राज्य की आवश्यकता के रूप में चुनिंदा रूप से अधिग्रहित किया गया। शरणार्थियों को गैर-मुस्लिम घरों पर जबरन कब्जा करने और घर मालिकों को बाहर निकालने के लिए प्रोत्साहित किया गया।' प्रशासन की अनदेखी करते हुए अल्पसंख्यकों के खिलाफ धमकियां, गुंडागर्दी और छेड़छाड़ को सुनियोजित तरीके से अंजाम दिया गया। अल्पसंख्यक समुदाय का मनोबल पूरी तरह से गिर चुका था। फिर पूर्वी पंजाब से आए शरणार्थियों के आगमन ने स्थिति को और बिगाड़ दिया।

पूर्वी पंजाब से बड़ी संख्या में शरणार्थियों को जबरन सिंध में पुनर्वास के लिए भेजा गया। पूर्वी पंजाब में अपने पैतृक घरों से बेदखल किए जाने और फिर पश्चिमी पंजाब में भी जगह न मिलने से ये शरणार्थी बेहद गुस्से में थे। उन्हें दयनीय परिस्थितियों में रखा गया और बताया गया कि सिंध में बड़ी संख्या में गैर-मुस्लिम होने के कारण सरकार को उन्हें बसाने में कठिनाई हो रही है। इस घटना ने उनके अंदर की भावनाओं को भड़काने का काम किया। शरणार्थियों ने खुद ही मोर्चा संभालने का फैसला किया और प्रशासन की मदद से गैर-मुस्लिमों पर बेरहमी से हमला किया। कराची और हैदराबाद में नरसंहार हुए। एक गुरुद्वारे में शरण लिए सिखों के एक समूह को धुआं उड़ाकर बाहर निकाला गया और एक-एक व्यक्ति को मार डाला गया। हैदराबाद के एक शिक्षण संस्थान में शरण लिए बड़ी संख्या में हिंदुओं का भी कत्लेआम किया गया। गैर-मुस्लिमों के व्यवसायों और व्यावसायिक संपत्तियों को जला दिया गया। घरों को बख्श दिया गया, लेकिन उनमें रहने वालों को बेरहमी से मार डाला गया। जो बच गए, वे जो कुछ भी बचा सके, उसे लेकर भारत भाग गए। शरणार्थियों की यह नई लहर अक्टूबर में भारत पहुंची। सिंध में सबसे बुरी हालत हरिजन समुदाय की थी। उन्हें अपने शरीर पर अपनी जाति के प्रतीक चिन्ह धारण करने के लिए मजबूर किया गया था। उन्हें बताया गया कि यह उनकी सुरक्षा के लिए है, ताकि उनके मुस्लिम रक्षक उन्हें पहचान सकें। लेकिन इससे वे आसानी से निशाना बन गए। कई लोगों की बेरहमी से हत्या कर दी गई और उनके जबरन धर्म परिवर्तन की खबरें भी आईं। जल्द ही यह स्पष्ट हो गया कि उनकी जाति का कलंक इस्लाम में भी कायम है। पाकिस्तान में भी उनके साथ हीन व्यवहार किया जाता था।

सदस्य ट्रेन में घुसते, चिह्नित डिब्बों में जाते और अंदर यात्रा कर रहे मुसलमानों को बाहर खींच लेते। मुस्लिम पुरुषों को यह पुष्टि करने के लिए अपनी लुंगी या पायजामा उतारने का आदेश दिया जाता कि क्या उनका खतना हुआ है। फिर उन्हें तलवार से काटकर या गोली मारकर मौत के घाट उतार दिया जाता था। लेकिन इन पीड़ितों की हत्या का सबसे क्रूर तरीका था पहले उन्हें चाकू मारना और फिर आग लगा देना। इन महिलाओं की दुर्दशा पाकिस्तान में हिंदू महिलाओं जैसी ही थी, फर्क सिर्फ इतना था कि पाकिस्तान में उन्हें युद्ध की ट्रॉफी मानकर उनके अपहरणकर्ताओं के परिवारों में ले जाया गया था। हिंदू कट्टरपंथियों का शिकार बनी मुस्लिम महिलाओं के साथ बलात्कार किया गया और फिर उनकी हत्या कर दी गई। शहीद सुहरावर्दी, गांधी जी के दिल्ली आने के तुरंत बाद उनसे जुड़ गए थे। उनका उद्देश्य पाकिस्तान में मुस्लिम लीग सरकार के सदस्यों से मध्यस्थ के रूप में कार्य करना था। उनका इरादा एक ऐसा संवाद शुरू करना था जिससे दोनों देशों के बीच शांति और दोनों ही देशों में अल्पसंख्यकों की सुरक्षा सुनिश्चित हो सके। पाकिस्तानी नेताओं के साथ अपने पुराने संबंधों के कारण सुहरावर्दी को शांति के प्रयासों में एक विशेष लाभ प्राप्त था। गांधी जी ने उन्हें जल्दबाजी न करने की चेतावनी दी। उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा कि सुहरावर्दी को कराची तभी जाना चाहिए जब उनका हृदय पूर्वाग्रहों से मुक्त हो। उनकी उपयोगिता इस बात पर निर्भर करेगी कि वे अपने पुराने सहयोगी, क़ायद-ए-आज़म को अल्पसंख्यकों के संबंध में अपनी ही घोषणा का सामना करने के लिए राजी कर सकें। यदि शहीद स्वयं दृढ़ विश्वास से रहित थे, या यदि उनका मन पूर्वाग्रहों से ग्रसित था, तो उनकी यात्रा लाभ से अधिक हानि पहुँचाएगी।

गांधी जी के आश्वस्त होने के बाद ही उन्होंने सुहरावर्दी को कराची भेजा। सुहरावर्दी ने कराची से गांधी जी को छह संदेश भेजे, जिनमें उन्होंने मुस्लिम लीग के नेताओं के साथ हुई अपनी बातचीत की रिपोर्ट दी: 'गुलाम मोहम्मद और लियाकत अली खान दोनों मेरे मसौदे से सहमत हैं। अब मुझे (कायद-ए-आजम से मिलने के बाद) उनके साथ, माउंटबेटन, नेहरू, लियाकत अली, बलदेव सिंह, तारा सिंह, करतार सिंह, पटेल और आप (गुलाम मोहम्मद का मानना है कि मुझे भी वहाँ होना चाहिए) के साथ एक सम्मेलन आयोजित करना है ताकि शर्तों और भविष्य की कार्ययोजना तैयार की जा सके... मुझे यह जानकर खुशी हुई कि दोनों इस बात से सहमत हैं कि 'पश्चाताप' किया जाए, जनसंख्या का आदान-प्रदान न हो (पंजाब को छोड़कर जहाँ यह हो चुका है, और इसे कोई भी शक्ति रोक नहीं सकती - मैं इसके बारे में बाद में लिखूंगा, क्योंकि मुझे लगता है कि हिंदू और मुसलमान एक साथ आ सकते हैं, सिखों के मामले में यह असंभव लगता है), और शरणार्थियों को वापस लाने के लिए दृढ़ प्रयास किया जाए (पंजाब के सिखों को छोड़कर)'।
कुछ दिनों बाद, अक्टूबर के पहले सप्ताह में, सुहरावर्दी गांधी द्वारा अनुमोदित अपने प्रस्ताव के मसौदे के साथ जिन्ना से मिलने कराची गए। मुलाकात में, जिन्ना ने अपना रुख बदल दिया और सुहरावर्दी से कहा कि वह गांधी के बहकावे में आ गए थे। सुहरावर्दी ने लौटने पर गांधी को यह बात बताई; गांधी ने जवाब दिया कि वह किसी को धोखा देने या किसी का बुरा चाहने में असमर्थ हैं। सुहरावर्दी ने बताया कि जिन्ना नेहरू का बहुत सम्मान करते थे।
गांधी ने कहा, 'हो सकता है। उन्होंने कभी सार्वजनिक रूप से ऐसा नहीं किया। लेकिन इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। न तो पंडित नेहरू

और न ही सरदार को प्रशंसा या निंदा की परवाह है। अगर आप जिन्ना को सही काम करने के लिए मना सकें, तो दोनों राज्यों के बीच शांति बहाल हो सकती है।'
सुहरावर्दी ने जवाब दिया, 'जिन्ना कहते हैं कि उन्होंने कभी हिंदुओं को पाकिस्तान से बाहर जाने के लिए नहीं कहा।'
गांधी ने कहा, 'आप मुझे आश्चर्यचकित करते हैं। आप जिन्ना और लियाकत अली के सामने खुलकर क्यों नहीं बोलते? आप तथ्यों को जानते हैं। क्या आपके "शांति मिशन" के लिए यह आवश्यक नहीं है कि आप सत्य और न्याय को निडरता और साहस के साथ हर कीमत पर कायम रखें?'
सुहरावर्दी ने जवाब दिया, 'आपको पता नहीं है कि पाकिस्तान सरकार जनता के बीच कितनी अलोकप्रिय हो गई है। कुछ लोग तो जिन्ना और लियाकत अली को भी गाली दे रहे हैं।' इस पर गांधी ने कहा कि इससे उन दोनों का कोई लेना-देना नहीं है। उन्होंने सुहरावर्दी को याद दिलाया कि कराची जाने का उनका मकसद यह बताना नहीं था कि कौन किसे गाली दे रहा है, बल्कि उन्हें जो तथ्य पता हैं उन्हें जिन्ना के सामने रखना था और उनसे पूछना था कि दोनों देशों के बीच हुए समझौतों को लागू करने के लिए वे क्या कदम उठाएंगे। उन्होंने आगे कहा, 'दोनों तरफ के अल्पसंख्यकों को अपने मूल घरों में रहने का अधिकार होना चाहिए। मुख्य बात यह है कि पाकिस्तान सरकार अपने वादों को अपने कार्यों से मेल खाए।'
11 अक्टूबर को जिन्ना को लिखे पत्र में गांधी ने कहा: 'शहीद साहब ने मुझे आपके द्वारा उनके द्वारा तैयार किए गए सुझावों पर मेरी सहमति पर आपकी प्रतिक्रिया के बारे में बताया है। मुझे यह जानकर खेद हुआ... मेरी राय में, शहीद साहब द्वारा सुझाए गए ऐसे किसी समझौते को दोनों राज्यों के बीच हार्दिक सहयोग की दिशा

में कोई भी कदम उठाने से पहले होना चाहिए। निस्संदेह, जो आवश्यक है वह दोनों के बीच एक जैसी सोच, एक जैसे वचन और एक जैसे कर्म हैं।' जिन्ना ने इस पत्र का न तो उत्तर दिया और न ही इसकी पुष्टि की।
गांधी जी ने अपने प्रभाव के बल पर समुदायों के बीच मेल-मिलाप कराने और भारतीय उपनिवेश में मुसलमानों की सुरक्षा सुनिश्चित करने का प्रयास किया, वहीं पाकिस्तान के नेता इस स्थिति से राजनीतिक लाभ उठाने की कोशिश में लगे रहे। पुनर्वास के लिए धन की मांग करते हुए जिन्ना द्वारा जारी एक बयान ने उनके और पूरे पाकिस्तानी नेतृत्व के रवैये को उजागर किया: 'भारतीय उपनिवेश के विभिन्न हिस्सों में हमारे लोगों पर जो अत्याचार हुए हैं, उनकी भयावहता बेमिसाल है।' जिन्ना ने पाकिस्तान के गैर-मुस्लिम नागरिकों द्वारा मुसलमानों के हाथों झेले गए और झेले जा रहे अत्याचारों के लिए खेद या खेद का एक शब्द भी व्यक्त नहीं किया। पाकिस्तान का नेतृत्व लगातार ऐसी भाषा का प्रयोग करता रहा जो भारतीय संघ के प्रति मित्रता का संकेत नहीं देती थी। प्यारेलाल ने महात्मा गांधी: द लास्ट फेज वॉल्यूम में इस स्थिति का सार प्रस्तुत किया है। भाग II: 'कायद-ए-आजम में उस गहरी शारीरिक और आध्यात्मिक बीमारी के लक्षण दिखने लगे थे, जिसने पाकिस्तान की स्थापना के तीन महीने के भीतर ही उनसे उनका आत्मविश्वास छीन लिया था और उन्हें "छोटे से छोटा निर्णय लेने में भी असमर्थता... उदास चुप्पी... चिड़चिड़ेपन के विस्फोटों से भरी... एक आध्यात्मिक सुन्नता, जिसके नीचे घबराहट छिपी थी" से ग्रसित कर दिया था। उन्होंने खुद को स्वार्थी अवसरवादियों और प्रतिक्रियावादियों की दया पर पाया, जिन्होंने पाकिस्तान को अस्तित्व में लाने में उनकी मदद की थी और अब अपना बदला मांग रहे

थे। हालाँकि, उनके पिछले कार्यों के तर्क ने उन्हें उन लोगों को दबाने के लिए मजबूर किया, जिनके चरित्र और ईमानदारी को वे महत्व देते थे और जो उनके अपने घर को व्यवस्थित करने में उनकी मदद कर सकते थे, लेकिन अपनी ईमानदारी के कारण ही वे उनके राजनीतिक संगठन में शामिल नहीं हो सके। स्वभाव और दृढ़ विश्वास से उदार और प्रगतिशील होने के बावजूद, उन्हें कट्टरपंथी मुल्लाओं और राजनीतिक अंधविश्वासियों के तौर-तरीकों को अपनाना पड़ा, जिनके बारे में वे अक्सर पंडित नेहरू के पिता, मोतीलाल पंडित से कहते थे: "पंडित, मैं उनकी किसी भी बकवास में विश्वास नहीं करता, लेकिन किसी तरह मुझे इन मूर्खों को अपने साथ ढोना ही होगा!" हर लिहाज़ से, 1947-48 की सर्दियों में जिन्ना एक बेहद बीमार व्यक्ति थे—उन जुनूनों और ताकतों के कैदी जिन्हें उन्होंने खुद पैदा किया था और जिन पर अब उनका कोई नियंत्रण नहीं था। "खुश तो बिल्कुल नहीं", मूल रूप से एक डरा हुआ व्यक्ति जो "अपनी नफरतों को पालकर अपने डर को दूर करने की कोशिश कर रहा था", ये कुछ ऐसे वर्णन थे जो उनसे पाकिस्तान के गवर्नर-जनरल बनने के तुरंत बाद मिलने वालों ने उनके बारे में दिए थे।
सुहरावर्दी जिन्ना का विरोध करने में असमर्थ और अनिच्छुक होने के कारण अपने शांति मिशन में असफल रहे। अक्टूबर के अंतिम सप्ताह में कराची की अपनी एक असफल यात्रा के बाद, गांधी ने अपने मौन दिवस पर यह लिखा: 'मैं यह समझने में असमर्थ हूँ कि पाकिस्तान वास्तव में क्या चाहता है—क्या वे हिंदुओं को वहाँ रहने देना चाहते हैं या नहीं... कृपया याद रखें कि अल्पसंख्यकों के लिए यह जीवन-मरण का प्रश्न है। मीठे शब्दों या कागज़ पर लिखे प्रभावशाली घोषणाओं से कोई लाभ नहीं होगा। यदि आप पाकिस्तानी अधिकारियों को अपनी घोषणाओं को व्यवहार में लाने के लिए

प्रेरित कर सकते हैं, तो आप भारतीय मुसलमानों की सबसे बड़ी सेवा करेंगे। मेरा दावा है कि यद्यपि भारतीय संघ में अनेक जघन्य घटनाएँ घटी हैं, फिर भी केंद्र सरकार ने मुसलमानों को पूर्ण सुरक्षा और संरक्षण सुनिश्चित करने के लिए कोई प्रयास नहीं किया है... सरदार और पंडित नेहरू ने अराजकता को दबाने में स्वयं को थका दिया है... आप नहीं जानते कि सरदार कितने बीमार हैं। फिर भी वे अपने दृढ़ संकल्प से आगे बढ़ रहे हैं।' मुझे नहीं पता कि पाकिस्तान सरकार की नीति क्या है, लेकिन मुझे पता है कि पाकिस्तान में अल्पसंख्यकों के साथ क्या हो रहा है—पंजाब में, सिंध में और सीमांत प्रांत में... लेकिन मुझे विश्वास है। मैंने स्वयं को पूरी तरह से उस पर समर्पित कर दिया है, इसलिए मुझे शांति है।
गांधी ने 27 अक्टूबर 1947 को सुहरावर्दी को लिखे एक पत्र में कहा:
मेरे प्रिय शहीद,
मैं आपसे स्पष्ट रूप से बात कर रहा हूँ। मैं चाहूँगा कि यदि संभव हो तो आप अपना कठोर लहजा छोड़ दें। यदि आपको लगता है कि आपमें कोई कठोर लहजा नहीं है, तो मैं अपनी टिप्पणी वापस लेता हूँ।
हिंदू और मुसलमान दो राष्ट्र नहीं हैं। मुसलमान कभी हिंदुओं के गुलाम नहीं होंगे और न ही हिंदू मुसलमानों के। इसलिए, हम दोनों को मिलकर उन्हें मित्र और भाईचारे के रूप में बसाने के प्रयास में अपनी जान देनी होगी, क्योंकि वे वास्तव में मित्र और भाई हैं। चाहे दूसरे कुछ भी कहें, हम दोनों को सिखों और अन्य सभी को भारत का हिस्सा मानना होगा। यदि उनमें से कोई भी इससे इनकार करता है, तो यह उनका अपना मामला है।

मैं इस निष्कर्ष से बच नहीं सकता कि गड़बड़ी कायद-ए-आजम के समय से शुरू हुई और अभी भी जारी है। मैं यह बात आपको सुधारने के लिए नहीं, बल्कि अपनी बात स्पष्ट करने के लिए कह रहा हूँ। मेरे पास केवल एक ही रास्ता है—दोनों को एक करने के प्रयास में जान देना या मर जाना।
आपका,
बापू
गांधी ने सुहरावर्दी की ईमानदारी की फिर से परीक्षा ली और उनसे कश्मीर पर तथाकथित कबीलेवासियों द्वारा किए गए आक्रमण में पाकिस्तान की भूमिका की निंदा करने को कहा। या तो सभी परिस्थितिजन्य साक्ष्यों के अनुसार इसके पीछे पाकिस्तान का हाथ था, या नहीं। यदि पाकिस्तान शामिल था, तो क्या एक भारतीय नागरिक के रूप में सुहरावर्दी का यह कर्तव्य नहीं था कि वे अपने विश्वास को प्रकट करें? दूसरी ओर, यदि कश्मीर में इतनी मजबूत संगठित ताकतों के सामने भी शहीद यह कहते रहे कि इसमें पाकिस्तान का कोई हाथ नहीं है, तो क्या यह उनका कर्तव्य नहीं था कि वे पता लगाएं कि वास्तव में इसके लिए कौन जिम्मेदार था? 'मैं आपसे कहना चाहता हूं कि सच्चाई का पता लगाना आपका कर्तव्य है। मुझे इससे अधिक प्रसन्नता किसी बात से नहीं होगी कि मैं गलत था और आप सही थे।' सुहरावर्दी गांधी की कही हर बात से सहमत थे, लेकिन उन्होंने कुछ नहीं किया।
सुहरावर्दी के साथ हुई कई निष्फल मुलाकातों में से एक के बाद गांधी ने टिप्पणी की कि यद्यपि उन्हें डर था कि शहीद न तो भारत और न ही पाकिस्तान के किसी काम के हैं, फिर भी वे उन्हें छोड़ना नहीं चाहते थे। 'उनमें निस्संदेह प्रतिभा है। यदि उनमें इच्छाशक्ति हो, तो वे भारतीय संघ, जिसके वे नागरिक होने का दावा

करते हैं, और भारतीय मुसलमानों की महान सेवा कर सकते हैं। लेकिन वह इच्छाशक्ति पूरी तरह से गायब है। फिर भी मुझे उन पर विश्वास है।' कई लोगों ने गांधी को चेतावनी दी कि उन्हें खुली और असीमित पहुँच देकर वे सुहरावर्दी को उन पर और केंद्र सरकार पर जासूसी करने की अनुमति दे रहे हैं। गांधी ने उत्तर दिया कि उन्हें जासूसी किए जाने से कोई आपत्ति नहीं है क्योंकि उनके पास कोई रहस्य नहीं है; वास्तव में वे चाहते थे कि सुहरावर्दी उन पर और उनसे मिलने आने वालों पर कड़ी नज़र रखें और फिर जो कुछ भी देखें और सुनें, उसकी रिपोर्ट जिन्ना को दें। दिसंबर 1947 में जब प्यारेलाल नोआखली से लौटे, तो गांधी ने उनसे कहा, 'उनका स्वभाव नहीं बदला है, लेकिन मैं अब भी उनकी देखभाल करता हूँ।'
जहां उत्तर-पूर्व में अशांति फैली हुई थी और उत्तर-पश्चिम में भीषण आग लगी हुई थी, वहीं देश के कुछ अन्य हिस्सों में भी तनाव बढ़ने लगा था। जूनागढ़ की स्थिति बिगड़ती जा रही थी—यह उन तीन रियासतों में से एक थी जिन्होंने सत्ता हस्तांतरण के समय भारत में विलय का निर्णय नहीं लिया था। जूनागढ़ चारों ओर से काठियावाड़ की अन्य रियासतों से घिरा हुआ था, जो भारत में विलय हो चुकी थीं। मुस्लिम नवाब—जो अपनी विलासिताओं पर बेहिसाब पैसा खर्च करते थे, जैसे कि मोटरगाड़ियां, पोलो और पालतू कुत्ते — बहुसंख्यक हिंदू आबादी पर शासन करते थे।
मई 1947 में, सत्ता हस्तांतरण से कुछ महीने पहले, कराची के मुस्लिम लीग समर्थक शाह नवाज़ भुट्टो को जूनागढ़ का दीवान और प्रधानमंत्री नियुक्त किया गया और उन्होंने रियासत की बागडोर संभाली। उन्होंने जूनागढ़ के पाकिस्तान में विलय के लिए जिन्ना के साथ गुप्त वार्ता शुरू की। सत्ता हस्तांतरण के दो दिन बाद, 17 अगस्त को, यह सार्वजनिक किया गया कि जूनागढ़

पाकिस्तान में शामिल हो गया है। न तो नवाब और न ही उनके दीवान ने अपनी प्रजा से परामर्श करने की जहमत उठाई, जिन्होंने भारी बहुमत से भारत में शामिल होने के पक्ष में मतदान किया होता। पाकिस्तान में शामिल होकर नवाब ने अन्य काठियावाड़ी राजकुमारों से किए गए अपने वादे का उल्लंघन किया, जिसमें उन्होंने उनके विलय के निर्णय का समर्थन करने का वादा किया था, साथ ही भारत और पाकिस्तान दोनों के नेताओं द्वारा सहमत भौगोलिक निकटता के सिद्धांत का भी उल्लंघन किया। भारत सरकार ने तुरंत प्रतिक्रिया दी और पाकिस्तान सरकार से जूनागढ़ के पाकिस्तान में विलय के संबंध में अपना रुख स्पष्ट करने को कहा। बार-बार याद दिलाने के बावजूद चुप्पी साधने के बाद, 13 सितंबर को पाकिस्तान ने घोषणा की कि उसने जूनागढ़ के विलय को स्वीकार कर लिया है।
ब्रिटिश शासन के दौरान, मंग्रोल के शेख और बाबरियावाड़ की रियासत जूनागढ़ के अधीन थे। 19 सितंबर को मंग्रोल ने अपने 'अधिपति' से अलग होकर भारत में विलय कर लिया। जूनागढ़ के दीवान ने उन्हें चौबीस घंटे के भीतर अपना विलय वापस लेने के लिए मजबूर कर दिया। मंग्रोल को पीछे हटने के लिए मजबूर करने के बाद, जूनागढ़ ने बाबरियावाड़ में अपनी सेना भेज दी, जो पहले ही भारत में विलय कर चुका था। अपने पड़ोसियों पर बल प्रयोग करने के कारण, जिन पर संप्रभुता का दावा सर्वोच्चता समाप्त होने के साथ ही खत्म हो गया था, काठियावाड़ के अन्य राजकुमारों ने भारतीय संघ सरकार से हस्तक्षेप करने की अपील की। भारत सरकार ने पाकिस्तान को पत्र लिखकर जूनागढ़ को मंग्रोल और बाबरियावाड़ से पीछे हटने का आदेश देने का अनुरोध किया, जो भारत में विलय कर

चुके थे। पाकिस्तान सरकार ने पीछे हटने पर सहमति जताई, लेकिन कोई कार्रवाई नहीं की गई।
सितंबर 1947 के तीसरे सप्ताह में काठियावाड़ में जूनागढ़ की जनता की ओर से अंतरिम सरकार गठित करने का आंदोलन जोर पकड़ने लगा। गांधीजी को उम्मीद थी कि यह आंदोलन अहिंसक रहेगा और एक बार जब जनता अपनी इच्छा के विरुद्ध किसी भी सत्ता को स्वीकार करने से इनकार कर देगी, तो शासक उनके फैसले के आगे झुक जाएगा। उन्होंने कहा, 'इतना ही नहीं, इस तरह जूनागढ़ कश्मीर राष्ट्रीय सम्मेलन के लिए मार्ग प्रशस्त कर सकता है और इस प्रकार कश्मीर समस्या का स्वतः समाधान हो जाएगा।'
1 नवंबर को, पाकिस्तान समर्थित कबायली लोगों द्वारा कश्मीर में लूटपाट के एक सप्ताह बाद, भारतीय सेना ने प्रवेश किया और मंग्रोल और बाबरियावाड़ दोनों को मुक्त करा लिया। जूनागढ़ में जन आंदोलन फैल रहा था। काठियावाड़ के व्यापारियों ने इसका बहिष्कार कर दिया था, और राज्य में रसद और आवश्यक वस्तुओं की कमी हो गई थी। 'अस्थायी सरकार' की सेनाएँ एक के बाद एक मोर्चा संभालती हुई आगे बढ़ रही थीं। हार को भांपते हुए शाह नवाज़ भुट्टो ने 8 नवंबर को भारत सरकार को पत्र लिखकर राज्य के विलय से जुड़े मुद्दों के निपटारे तक राज्य का प्रशासन अपने हाथ में लेने का अनुरोध किया, ताकि इसे पूर्ण अराजकता से बचाया जा सके। उन्होंने पाकिस्तान के प्रधानमंत्री को यह भी सूचित किया कि उन्होंने जनता की राय, राज्य परिषद के अधिकार और स्वयं नवाब (जो कुछ दिन पहले अपने खजाने, कुत्तों और हरम के साथ कराची भाग गए थे) के समर्थन से भारत सरकार के हस्तक्षेप का अनुरोध करने का निर्णय लिया है।

भारत सरकार ने दीवान का अनुरोध स्वीकार कर लिया और राजकोट स्थित अपने क्षेत्रीय आयुक्त को राज्य प्रशासन का कार्यभार संभालने का आदेश दिया। लेकिन कराची भाग जाने के तुरंत बाद, भुट्टो ने भारतीय संघ की सरकार द्वारा जूनागढ़ पर अवैध और जबरन कब्ज़ा करने के आरोप लगाने शुरू कर दिए। पाकिस्तानी सरकार ने भारत द्वारा की गई इस कार्रवाई को 'पाकिस्तानी क्षेत्र का स्पष्ट उल्लंघन और अंतरराष्ट्रीय कानून का उल्लंघन' बताया। जहाँ एक ओर नवाब द्वारा अपनी प्रजा की इच्छा के विरुद्ध जाकर पाकिस्तान में विलय करने के समय उनकी संप्रभुता को स्वीकार किया गया था, वहीं अब पाकिस्तानी सरकार ने उनकी प्रजा की इच्छा के आगे झुकने के अधिकार को चुनौती देते हुए दावा किया कि पाकिस्तान में विलय के बाद नवाब या उनके दीवान को किसी भी मुद्दे पर स्वयं या अपनी प्रजा की ओर से निर्णय लेने का कोई अधिकार नहीं है, और इसलिए पाकिस्तान में विलय वापस लेना अमान्य है।
गांधी जी ने जूनागढ़ पर अपना रुख स्पष्ट किया। उन्होंने कहा, 'स्वतंत्र भारत में पूरा देश जनता का है, इसका कोई भी हिस्सा व्यक्तिगत रूप से राजकुमारों का नहीं है। इसलिए जूनागढ़ के नवाब का पाकिस्तान में विलय शुरू से ही अमान्य था। जूनागढ़ की जनता की ओर से अंतरिम सरकार की कार्रवाई में कुछ भी गैरकानूनी नहीं है और काठियावाड़ में शांति बनाए रखने के लिए केंद्र सरकार द्वारा अपनी सेना की सेवाएं देना भी अवैध नहीं है। जूनागढ़ के विलय का प्रश्न जनमत संग्रह द्वारा तय किया जाएगा।' गांधी जी की हत्या के कुछ ही सप्ताह बाद, फरवरी 1948 में एक जनमत संग्रह कराया गया। परिणामों से पता चला कि कुल मतदान में से 190,779 वोट भारत में विलय के पक्ष में थे; केवल 91 वोट

पाकिस्तान के पक्ष में थे। हालांकि, पाकिस्तान ने जनमत संग्रह के फैसले को मानने से इनकार कर दिया। आज तक, जब भी पाकिस्तान कश्मीर का जिक्र करता है, तो अक्सर जूनागढ़ के मुद्दे का भी जिक्र करता है।
जूनागढ़ विवाद के परिणामों में से एक यह था कि आरएसएस और हिंदू महासभा के चरमपंथी तत्वों ने जन आंदोलन में घुसपैठ कर ली और स्थिति नियंत्रण में आने से पहले ही हत्या, लूटपाट और आगजनी की घटनाएं बड़े पैमाने पर हुईं। इसके चलते काठियावाड़ के मुस्लिम व्यापारी समुदाय का पलायन हुआ, जिसका असर सिंध तक फैल गया। तब तक सिंध प्रांत की सरकार हिंदू व्यापारी समुदाय की रक्षा करती आ रही थी, जिसका एक कारण यह भी था कि सरकार को डर था कि हिंदू व्यापारी समुदाय की सूझबूझ के बिना सिंध की अर्थव्यवस्था चरमरा जाएगी। लेकिन काठियावाड़ के व्यापारियों के आने से यह आवश्यकता पूरी हो गई और सिंध सरकार की हिंदू व्यापारियों पर निर्भरता समाप्त हो गई। इसके स्थान पर उत्पीड़न, दुर्व्यवहार और हमले शुरू हो गए; कुछ 'उदाहरण' स्थापित किए गए ताकि यह संदेश दिया जा सके कि हिंदू व्यापारियों को या तो पलायन करना होगा या उन्हें निष्कासित कर दिया जाएगा। इसके बाद पाकिस्तान से शरणार्थियों के आप्रवास की एक और लहर आई, जिससे भारतीय संघ में पहले से ही तनावपूर्ण स्थिति और बिगड़ गई।
गांधी जी ने काठियावाड़ में मुसलमानों के खिलाफ हुए अत्याचारों की कड़ी निंदा की। कुछ लोगों ने शिकायत की कि मुसलमानों द्वारा लगाए गए अपुष्ट आरोपों पर टिप्पणी करके वे जल्दबाजी कर रहे हैं, जिससे पाकिस्तान को भारतीय संघ के खिलाफ अपने दुष्प्रचार में इसका इस्तेमाल करने का मौका मिल जाएगा। गांधी जी ने जवाब दिया कि वे इस खतरे से अनभिज्ञ नहीं थे, लेकिन

इससे उन्हें कोई फर्क नहीं पड़ता था। उन्होंने समझाया कि अगर उन्होंने पाकिस्तान के प्रधानमंत्री द्वारा समर्थित प्रभावशाली पाकिस्तानी पत्रिकाओं में लगाए गए आरोपों को नजरअंदाज कर दिया होता, तो उनकी उदासीनता के कारण मुस्लिम जगत उन रिपोर्टों को अक्षरशः सत्य मान लेता। 'अब तो सबसे समझदार मुस्लिम भी सच्चाई पर संदेह करने लगे हैं... हमें कभी यह गलती नहीं करनी चाहिए कि हम कभी कोई गलती नहीं करते। सबसे कड़ा आलोचक भी इसलिए कड़वा होता है क्योंकि उसके मन में हमारे प्रति कोई द्वेष होता है, चाहे वह काल्पनिक हो या वास्तविक।' यदि हम उसके साथ धैर्य रखें और जब भी अवसर मिले, उसे उसकी गलती का एहसास कराएं या अपनी गलती को सुधारें, तो हम उसे सही राह पर ले आएंगे। आज के अशांत माहौल में, जब एक-दूसरे पर आरोप-प्रत्यारोप लगाए जा रहे हैं, तो यह सोचना मूर्खता होगी कि हम कोई गलती नहीं कर सकते। प्रकृति ने हमें इस प्रकार बनाया है कि हम अपनी पीठ नहीं देख सकते; यह दूसरों के देखने के लिए आरक्षित है। इसलिए, जो वे देखते हैं उससे लाभ उठाना बुद्धिमानी है।
उन्होंने मुसलमानों से कहा कि यदि उनका उद्देश्य, जैसा कि उन्होंने समझा, काठियावाड़ और भारतीय संघ के हिंदुओं को बदनाम करना नहीं बल्कि सत्य को उजागर करना और मुसलमानों के जीवन, सम्मान और संपत्ति की रक्षा करना है, तो यह सब सत्य का कड़ाई से पालन करके और हस्ताक्षरकर्ताओं के ज्ञात हिंदू मित्रों से संपर्क करके ही संभव हो सकता है। 'काठियावाड़ के कार्यकर्ता, जिनमें कोई सांप्रदायिक पूर्वाग्रह नहीं है, सत्य तक पहुँचने और मुसलमानों के साथ हुए हर अन्याय का निवारण करने का प्रयास कर रहे हैं, जो उनके लिए उतने ही प्रिय हैं जितने स्वयं। क्या वे (मुसलमान) इस प्रक्रिया में सहयोग करेंगे?'

गांधी जी ने अपने भतीजे शामलदास गांधी को पत्र लिखकर उन्हें जूनागढ़ के 'अस्थायी महाराज' के रूप में संबोधित किया। शामलदास ने नवाबों के पाकिस्तान में विलय के फैसले के खिलाफ जन आंदोलन का नेतृत्व किया था। हालांकि, सत्ता का घमंड उन पर हावी हो गया और वे तानाशाह की तरह व्यवहार करने लगे। गांधी जी तक कई शिकायतें पहुंची थीं। गांधी जी ने लिखा, 'मैं आपको जूनागढ़ के बारे में एक तार भेज रहा हूं जो मुझे प्राप्त हुआ है। यदि इसमें वर्णित तथ्य सत्य हैं, तो आप एक गंभीर चूक के दोषी हैं। दूसरी ओर, यदि आरोप निराधार हैं, तो मैंने जो कहा है वह व्यर्थ हो जाता है। मुझे हिंदुओं से कई पत्र मिले हैं जिनमें कहा गया है कि आप केवल तलवार की बात करते हैं। काठियावाड़ की समस्या उतनी सरल नहीं है जितनी आप सोचते हैं... यदि नेता स्वार्थ और अहंकार से मुक्त नहीं होंगे, तो काठियावाड़ को कोई लाभ नहीं होगा। स्वराज जीतना आसान था, लेकिन उसे बनाए रखना कहीं अधिक कठिन है।'
गांधी जी ने अपने दो भरोसेमंद कार्यकर्ताओं को काठियावाड़ में तथ्यों की पड़ताल करने के लिए भेजा। इन कार्यकर्ताओं ने, बंबई और काठियावाड़ के कार्यकर्ताओं के साथ मिलकर, स्थानीय मुसलमानों से जानकारी साझा करने के बाद गांधी जी को तार भेजा और स्वीकार किया कि कुछ अत्याचार हुए थे, लेकिन कई रिपोर्टें सरासर बढ़ा-चढ़ाकर पेश की गई थीं। इसका गांधी जी से शिकायत करने वाले स्थानीय मुस्लिम नेताओं पर तत्काल प्रभाव पड़ा। उन्होंने स्वीकार किया कि बहुत बढ़ा-चढ़ाकर बातें की गई थीं और पाकिस्तान के अखबारों में काठियावाड़ की स्थिति के बारे में जो छपा था वह गलत था: 'हमारा तार उन रिपोर्टों का परिणाम था जिनकी अभी तक पुष्टि नहीं हुई है... हमें इस बात का संतोष है कि उतना

नुकसान नहीं हुआ जितना शुरू में आशंका थी... अकल्पनीय या अभूतपूर्व अन्याय का कोई सवाल ही नहीं है। कृपया चिंता न करें।' यह गांधीजी की प्रचार-प्रसार की तकनीक का एक बेहतरीन उदाहरण था। उन्होंने इससे मिलने वाली सीख को स्पष्ट किया: झूठे प्रचार से कोई लाभ नहीं होता; 'सही तरीका यही है कि असत्य पर सत्य की विजय पाई जाए'। उन्होंने हरिजन में लिखा: 'जब प्रासंगिक हो, तो सत्य को बोलना ही चाहिए, चाहे वह कितना भी अप्रिय क्यों न हो... संघ में हिंदुओं के कुकर्मों का ढिंढोरा हिंदुओं को ही पीटना होगा, तभी पाकिस्तान में मुसलमानों के कुकर्मों को रोका या गिरफ्तार किया जा सकता है'।
गांधी जी कश्मीर को लेकर हमेशा चिंतित रहते थे और उन्होंने दोनों राज्यों के बीच शांति स्थापित करने में कश्मीर को बाधा बनने से रोकने के लिए हर संभव प्रयास किया था। जुलाई 1947 के मध्य में माउंटबेटन ने कश्मीर के महाराजा को जनता की इच्छा जानने के बाद दोनों राज्यों में से किसी एक में शामिल होने का निर्णय लेने और 15 अगस्त से पहले अपना फैसला सुनाने के लिए मनाने की कोशिश की थी। पटेल के नेतृत्व में राज्य विभाग ने लॉर्ड माउंटबेटन के माध्यम से महाराजा को आश्वस्त करने का भरसक प्रयास किया कि यदि कश्मीर पाकिस्तान में शामिल होने का निर्णय लेता है, तो केंद्र सरकार इसे 'अमित्रतापूर्ण कार्य' नहीं मानेगी। लेकिन महाराजा निर्धारित तिथि तक कोई निर्णय नहीं ले पाए। उन्होंने कहा कि उन्हें निर्णय लेने के लिए और समय चाहिए। यह केवल इस बात का सवाल नहीं था कि उन्हें किस राज्य में शामिल होना चाहिए; बल्कि यह कहीं अधिक महत्वपूर्ण था कि 'क्या दोनों राज्यों और मेरे राज्य के हित में स्वतंत्र रहना उचित नहीं है'। इस अनिर्णय का उन्हें भारी खामियाजा भुगतना पड़ा। सत्ता

हस्तांतरण से तीन दिन पहले महाराजा ने पाकिस्तान के साथ एक वर्ष के लिए यथास्थिति समझौता कर लिया। उन्होंने भारतीय संघ के साथ भी इसी तरह का समझौता करने की इच्छा जताई थी, लेकिन इस संबंध में बातचीत जारी रहने के दौरान ही पाकिस्तान ने एक तरह से घेराबंदी लागू करके दबाव बनाना शुरू कर दिया। कश्मीर तक संचार और परिवहन का मुख्य मार्ग पश्चिमी पंजाब से होकर गुजरता था, जो अब पाकिस्तान का एक प्रांत है। आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति और लकड़ी एवं फलों के निर्यात का मार्ग भी पाकिस्तान से होकर ही था। पाकिस्तान सरकार ने अपने क्षेत्र से कश्मीर को चीनी, नमक, अनाज, दवाइयाँ और ईंधन जैसी आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति रोक दी। कश्मीर के प्रधानमंत्री एम.सी. महाजन ने 15 अक्टूबर को पाकिस्तान के गवर्नर जनरल को एक तार भेजा: '15 अगस्त से, 14 अगस्त को हुए समझौते के बावजूद, पश्चिमी पंजाब से पेट्रोल, तेल, खाद्य पदार्थ, नमक, चीनी और कपड़े की आपूर्ति में ही नहीं, बल्कि डाक व्यवस्था में भी कठिनाइयाँ आ रही हैं। बचत बैंक खातों का संचालन बंद कर दिया गया है। डाक प्रमाणपत्र भुनाए नहीं जा रहे हैं, पश्चिमी पंजाब के बैंकों में जारी किए गए चेक मान्य नहीं हो रहे हैं।' लाहौर मुद्रा कार्यालय से धन प्रेषण में विफलता के कारण इंपीरियल बैंक को भी दायित्वों को पूरा करने में कठिनाई का सामना करना पड़ा। राज्य में पंजीकृत मोटर वाहन रावलपिंडी में अटके रहे। सियालकोट से जम्मू तक रेल यातायात ठप रहा। ऐसा प्रतीत होता है कि रेडियो ऑफ पाकिस्तान को दुर्भावनापूर्ण, मानहानिकारक और झूठे प्रचार की खुली छूट मिल गई है। छोटे सामंती राज्य कश्मीर राज्य में सशस्त्र हस्तक्षेप की धमकी देने और यहां तक कि हस्तक्षेप करने के लिए उकसाए गए हैं।

कश्मीर सरकार इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए बाध्य है कि यह सब स्थानीय अधिकारियों की जानकारी और मिलीभगत से हो रहा है। कश्मीर सरकार इन कृत्यों को अत्यंत शत्रुतापूर्ण, बल्कि शत्रुतापूर्ण मानती है। अंत में, सरकार यह स्पष्ट करना चाहती है कि इस रवैये को अब और बर्दाश्त नहीं किया जा सकता है। राज्यपाल-जनरल और प्रधानमंत्री से व्यक्तिगत रूप से इस मामले की जांच करने और सभी प्रकार के अन्याय को रोकने का अनुरोध किया जाता है। दुर्भाग्यवश, यदि इस अनुरोध पर ध्यान नहीं दिया जाता है, तो सरकार को पूरी उम्मीद है कि पाकिस्तान के राज्यपाल-जनरल और प्रधानमंत्री इस बात से सहमत होंगे कि मैत्रीपूर्ण सहायता मांगना न्यायसंगत होगा और वे अपने मौलिक अधिकारों के अतिक्रमण का विरोध करेंगे।
पाकिस्तान की ओर से जवाब यह था:
'आपकी "सहायता मांगने" की धमकी सुनकर हम स्तब्ध हैं, जिसका अर्थ संभवतः किसी बाहरी शक्ति से सहायता मांगना है। आपके द्वारा सुनिश्चित की गई इस बाहरी शक्ति के हस्तक्षेप का एकमात्र उद्देश्य मुसलमानों को पूरी तरह से दबाना है, ताकि आप अपने राज्य की 85 प्रतिशत आबादी की घोषित और सर्वविदित इच्छा के विरुद्ध तख्तापलट करके भारतीय उपनिवेश में शामिल हो सकें... यदि इस नीति को नहीं बदला गया और इस नीति को लागू करने के लिए आप जो तैयारियां और सक्रिय कदम उठा रहे हैं, उन्हें नहीं रोका गया, तो इसके गंभीर परिणाम होंगे, जिसके लिए आप स्वयं जिम्मेदार होंगे।'
24 अगस्त को डॉन अखबार में प्रकाशित एक संपादकीय में कश्मीर के महाराजा को कड़ी चेतावनी दी गई: 'अब समय आ गया है कि कश्मीर के महाराजा को बता दिया जाए कि उन्हें अपना फैसला लेना होगा और

पाकिस्तान को चुनना होगा।' संपादकीय में चेतावनी दी गई कि यदि कश्मीर पाकिस्तान में शामिल होने में विफल रहता है, तो 'सबसे गंभीर संकट अवश्य उत्पन्न होगा।'
23 अक्टूबर को, सीमांत प्रांत के कबायली कहे जाने वाले लोगों के एक समूह ने, जिसका नेतृत्व पाकिस्तानी सेना के नियमित सैनिक कर रहे थे, जो कथित तौर पर 'छुट्टी पर' थे, एबटाबाद-मनसेरा से बड़े पैमाने पर आक्रमण किया। आधुनिक हथियारों, जिनमें ब्रेंन गन, मशीनगन, मोर्टार और फ्लेम थ्रोअर शामिल थे, से लैस इस आक्रमणकारी दल को सीमांत प्रांत और पश्चिमी पंजाब के राशन कोटे से जारी पेट्रोल से भरे सौ ट्रकों में लाया गया था; वे तेजी से घाटी से होते हुए राजधानी श्रीनगर की ओर बढ़े। रास्ते भर उन्होंने आगजनी, लूटपाट और हत्याएं कीं, महिलाओं के साथ सामूहिक बलात्कार किया गया और उन्हें युद्ध की ट्रॉफी के रूप में ले जाया गया।
24 तारीख को भारतीय सेना की खुफिया जानकारी के अनुसार, तथाकथित कबीलेवासियों को सेना द्वारा रावलपिंडी रोड के रास्ते ले जाया जा रहा था। 25 तारीख को पांच हजार से अधिक हमलावरों के एक समूह ने मुजफ्फरबाद और डोमेल पर कब्जा कर लिया; श्रीनगर मात्र पैंतीस मील दूर था। राज्य की सेनाएं पूरी तरह पीछे हट रही थीं, स्थिति गंभीर थी। कश्मीर सरकार घबरा गई। महाराजा ने स्थिति को संभालने के लिए सशस्त्र सहायता हेतु भारत सरकार से अनुरोध किया। केंद्र सरकार ने लॉर्ड माउंटबेटन की सलाह पर यह कहते हुए इनकार कर दिया कि वे कश्मीर की सुरक्षा के लिए अपनी सेना तब तक नहीं भेज सकते जब तक कि भारत में राज्य के विलय के कारण यह अपरिहार्य दायित्व न बन जाए। राज्य मंत्रालय के सचिव वी.पी. मेनन 25 तारीख को महाराजा को भारत सरकार का निर्णय बताने के लिए

कश्मीर गए। वे अगले दिन कश्मीर के भारत में विलय के विधिवत हस्ताक्षरित पत्र के साथ दिल्ली लौट आए। अंततः महाराजा ने आत्मसमर्पण कर दिया। विभाजन परिषद द्वारा तय शर्तों के अनुसार, विलय संधि पर हस्ताक्षर करके कश्मीर भारतीय संघ का हिस्सा बन गया। पत्र में लिखा था: 'मेरे राज्य की वर्तमान परिस्थितियों और मौजूदा गंभीर स्थिति को देखते हुए, मेरे पास भारतीय डोमिनियन से सहायता मांगने के अलावा कोई विकल्प नहीं है। स्वाभाविक रूप से, वे मेरे द्वारा मांगी गई सहायता तब तक नहीं भेज सकते जब तक मेरा राज्य भारत के डोमिनियन में शामिल न हो जाए। इसलिए मैंने ऐसा करने का निर्णय लिया है और विलय पत्र को आपकी सरकार द्वारा स्वीकृति के लिए संलग्न कर रहा हूँ।' महाराजा ने भारतीय संघ की सरकार को सूचित किया कि 'मेरा इरादा तुरंत एक अंतरिम सरकार गठित करने और शेख अब्दुल्ला को इस आपात स्थिति में मेरे प्रधानमंत्री के साथ जिम्मेदारी संभालने के लिए कहने का है।' 29 सितंबर को महाराजा ने शेख अब्दुल्ला और उनकी कश्मीर राष्ट्रीय सम्मेलन के अन्य सदस्यों को रिहा करने का आदेश दिया। रिहाई के बाद एक रैली को संबोधित करते हुए शेख अब्दुल्ला ने घोषणा की: 'मैंने कभी पाकिस्तान के नारे पर विश्वास नहीं किया... लेकिन इसके बावजूद पाकिस्तान एक वास्तविकता है... मैं भारतीय राज्य जन सम्मेलन का अध्यक्ष हूं, जिसकी नीति स्पष्ट है। पंडित नेहरू मेरे सबसे अच्छे मित्र हैं और मैं गांधीजी का बहुत आदर करता हूं। यह भी सच है कि कांग्रेस ने राज्य में लोकतांत्रिक सरकार के लिए हमारे आंदोलन में हमारी बहुत मदद की है। लेकिन इन सबके बावजूद, मेरा व्यक्तिगत विश्वास किसी भी डोमिनियन के पक्ष में स्वतंत्र निर्णय लेने में बाधा नहीं बनेगा। भारत या पाकिस्तान में शामिल होने का हमारा विकल्प जम्मू और कश्मीर में

रहने वाले चार मिलियन लोगों के कल्याण पर आधारित होगा। और अगर हम पाकिस्तान में शामिल भी हो जाते हैं, तो भी हम दो राष्ट्र सिद्धांत पर विश्वास नहीं करेंगे, जिसने इतना जहर फैलाया है।' नेशनल कॉन्फ्रेंस और शेख अब्दुल्ला ने भारतीय सरकार से विलय स्वीकार करने और आक्रमणकारियों को खदेड़ने के लिए सेना भेजने का अनुरोध किया। इस प्रकार, विलय केवल शासक का ही निर्णय नहीं था, बल्कि इसे एक लोकतांत्रिक संगठन द्वारा अनुमोदित किया गया था, जिसके पीछे जनमत का समर्थन था। सत्ता हस्तांतरण के कुछ ही हफ्तों बाद, पाकिस्तान द्वारा किए गए दबाव और कश्मीर के लोगों पर हुए अत्याचारों के कारण, उनमें से किसी के लिए भी नवगठित पाकिस्तानी राज्य में शामिल होने की कोई संभावना नहीं थी। भारतीय संघ के विलय को स्वीकार करते हुए, भारतीय संघ की सरकार ने घोषणा की कि वे कश्मीर के महाराजा के निर्णय को कश्मीर की जनता के साथ अनुमोदित करना चाहते हैं: 'जैसे ही कश्मीर में कानून-व्यवस्था बहाल हो जाएगी और आक्रमणकारियों का खात्मा हो जाएगा, राज्य के विलय का प्रश्न जनता के समक्ष विचाराधीन होगा।' 27 तारीख की सुबह, प्रथम सिख बटालियन के तीन सौ तीस अधिकारियों और जवानों को श्रीनगर भेजा गया ताकि उन कबीलेियों को रोका जा सके जो बारामूला को लूटने के बाद राजधानी श्रीनगर के बाहरी इलाकों तक पहुँच रहे थे। यहीं से सबसे सुनियोजित सैन्य अभियानों में से एक की शुरुआत हुई। रसद व्यवस्था कठिन थी क्योंकि आपूर्ति और संचार लाइनें नहीं थीं। सैनिकों, आपूर्ति, हथियारों और उपकरणों को पहुँचाने का एकमात्र तरीका हवाई मार्ग था। सभी सैन्य और नागरिक विमानों को अपने नियंत्रण में लेकर एक निरंतर आपूर्ति संपर्क स्थापित किया गया। विमानों ने श्रीनगर की एकमात्र हवाई पट्टी पर सैनिकों, हथियारों और आपूर्ति को

पहुँचाया। आक्रमणकारियों को खदेड़ने की लड़ाई हवाई अड्डे की परिधि के ठीक बाहर लड़ी जा रही थी; जैसे ही सैनिक उतरे, वे लड़ाई में शामिल हो गए। द्वितीय विश्व युद्ध के बहुसम्मानित नायक लॉर्ड माउंटबेटन ने टिप्पणी की, 'सैन्य अभियान के रूप में 27 अक्टूबर को की गई हवाई घुसपैठ की गति ने दक्षिण पूर्व एशिया कमान के प्रयासों को निष्फल कर दिया।' इसने पाकिस्तानी युद्ध मशीन को भी ध्वस्त कर दिया।
हमलावर पूरी तरह से अप्रत्याशित स्थिति में थे, लेकिन स्थिति बेहद नाजुक थी; चौबीस घंटे और बीत जाते तो सब कुछ खत्म हो जाता। दरअसल, हमलावरों की हार का एक कारण बारामूला में लूटपाट में बिताया गया समय भी था। वहां नौ दिनों तक आगजनी और लूटपाट जारी रही। न तो हिंदुओं को बख्शा गया और न ही मुसलमानों को; कबाली कहलाने वाले इन आक्रमणकारियों ने पुरोहितों को भी नहीं छोड़ा। उन्होंने सेंट जोसेफ कॉन्वेंट को तहस-नहस कर दिया, वेलफेयर अस्पताल को लूटा और जला दिया; मदर सुपीरियर को गोली मारकर घायल कर दिया और कई ननों का बलात्कार किया। हालांकि, इन नौ दिनों ने नेशनल कॉन्फ्रेंस के कार्यकर्ताओं को हमलावरों के खिलाफ बचाव के लिए स्थानीय जनसमुदाय संगठित करने का समय दिया। श्रीनगर में कोई प्रशासन नहीं था। सलाह पर महाराजा जम्मू स्थित अपने ग्रीष्मकालीन महल में चले गए थे। न तो सेना थी, न पुलिस; मोहोर स्थित बिजली स्टेशन में आग लगने के बाद से बिजली गुल थी। फिर भी, आश्चर्यजनक रूप से, श्रीनगर बिना किसी दहशत के चलता रहा। नेशनल कॉन्फ्रेंस के नेताओं और उनके कार्यकर्ताओं ने कमान संभाली; कश्मीर के हिंदू और मुसलमान अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए एकजुट हो गए।

जल्द ही हमलावर भागने लगे। उरी पर पुनः कब्जा कर लिया गया, पुंछ की चौकी को मुक्त कर दिया गया और जब तक युद्धविराम की घोषणा हुई, कश्मीर रणनीतिक रूप से सुरक्षित हो चुका था और घाटी पर मंडरा रहा खतरा टल गया था।
कश्मीर पर कब्ज़ा करना जिन्ना का निजी लक्ष्य था। कहा जाता है कि उन्होंने ईद के त्योहार पर कश्मीर की राजधानी में विजयी प्रवेश करने के लिए एबटाबाद में डेरा डाला था, ताकि वे अतीत के विजेताओं की याद दिलाने वाले जुलूस का नेतृत्व कर सकें। जब उन्हें भारत के सैन्य हस्तक्षेप और घुसपैठियों की हार की खबर मिली, तो वे बेहद क्रोधित हुए। उन्होंने पाकिस्तानी सेना को तुरंत हस्तक्षेप करने का आदेश दिया। पाकिस्तानी सेना के कार्यवाहक कमांडर-इन-चीफ जनरल ग्रेसी ने सर्वोच्च कमांडर सर क्लाउड ऑचिनलेक को इसकी सूचना दी। सर क्लाउड ने जिन्ना को सलाह दी कि महाराजा की मदद की गुहार के जवाब में कश्मीर में सेना भेजना भारतीय संघ का पूर्ण अधिकार था। यदि पाकिस्तान अपनी सेना के साथ हस्तक्षेप करता है, तो इससे दोनों राज्यों के बीच युद्ध छिड़ सकता है। उन्होंने जिन्ना को चेतावनी दी कि इससे दोनों पक्षों से सभी ब्रिटिश अधिकारियों को वापस बुला लिया जाएगा। जिन्ना इसके लिए तैयार नहीं थे, इसलिए उन्होंने अपने पहले के आदेश वापस ले लिए।
पाकिस्तान सरकार ने कश्मीर के भारत में विलय की निंदा की और आरोप लगाया कि यह 'धोखाधड़ी और हिंसा' के बल पर किया गया था। 2 नवंबर को लाहौर में हुई एक बैठक में माउंटबेटन ने जिन्ना को बताया कि यद्यपि कश्मीर का भारत में विलय 'बल और हिंसा' के बल पर हुआ था, लेकिन हिंसा कबीलों द्वारा की गई थी, जिसके लिए पाकिस्तान जिम्मेदार था, न कि भारत। 'यह बहस एक दुष्चक्र में

फंस गई... जिन्ना ने पलटवार करते हुए कहा कि उनके विचार में भारत ने ही सेना भेजकर हिंसा की थी, जबकि माउंटबेटन अपनी बात पर अड़े रहे कि हिंसा कबीलों के बीच ही हुई थी। यह सिलसिला तब तक चलता रहा जब तक कि जिन्ना माउंटबेटन की इस अज्ञानता पर अपना गुस्सा छुपा नहीं सके।'
पाकिस्तान सरकार ने कश्मीर पर कथित तौर पर 'कबीलेवासियों' द्वारा किए गए आक्रमण में किसी भी प्रकार की संलिप्तता से स्पष्ट इनकार किया। उन्होंने पाकिस्तान से होकर उनके प्रवेश को रोकने में अपनी असमर्थता का हवाला दिया। पाकिस्तान के प्रधानमंत्री ने कहा कि कश्मीर से आक्रमणकारी कबीलों को खदेड़ने में मदद करने का एकमात्र तरीका यह था कि पाकिस्तानी सेना के नियमित सैनिकों को कश्मीर में प्रवेश करने की अनुमति दी जाए। जब माउंटबेटन ने उन्हें कश्मीर में भारतीय सशस्त्र बलों की ताकत, अगले कुछ हफ्तों में होने वाली संभावित सैन्य तैनाती और कश्मीर को 'किसी भी कीमत पर' अपने कब्जे में रखने के भारत के दृढ़ संकल्प के बारे में बताया, तो जिन्ना ने 'पूरी योजना रद्द करने' की पेशकश की। स्पष्ट रूप से प्रधानमंत्री और पाकिस्तान के गवर्नर जनरल के बयान एक-दूसरे से भिन्न थे। कश्मीर के भारत में विलय के समय, कश्मीर में तीन से दस हजार गैर-कश्मीरी घुसपैठियों की संख्या का अनुमान था। वर्ष के अंत तक, राज्य के भीतर उनकी संख्या बढ़कर पचास हजार हो गई थी। सीमा के पाकिस्तानी हिस्से में एक लाख और घुसपैठिए जमा हो रहे थे। इसके जवाब में, भारत उस समय कश्मीर की रक्षा के लिए अपने सशस्त्र बलों के सोलह हजार जवानों को तैनात कर सका। संख्या में कम होने के बावजूद, इन बहादुर जवानों ने पाकिस्तान के खतरे को रोकने में पर्याप्त साबित हुए।

गांधी जी कश्मीर में हो रहे घटनाक्रमों पर गहरी नजर रखे हुए थे और इस बात से बेहद दुखी थे कि यह मामला दोनों नवजात राष्ट्रों के बीच एक नासूर बन चुका था। उन्होंने अपने एक प्रार्थना भाषण में भी यही बात दोहराई थी कि सभी राज्यों के असली शासक उनकी प्रजा होती है। कश्मीर की जनता को बिना किसी दबाव या बल प्रयोग के, चाहे वह आंतरिक हो या बाहरी, इस मुद्दे का फैसला स्वयं करना चाहिए। पाकिस्तान सरकार कश्मीर पर पाकिस्तान में शामिल होने का दबाव डाल रही थी। इसलिए, जब संकट में घिरे महाराजा ने शेख अब्दुल्ला के समर्थन से संघ में शामिल होने की इच्छा जताई, तो भारतीय गवर्नर-जनरल इस प्रस्ताव को अस्वीकार नहीं कर सके। गांधी जी ने कहा कि अगर केवल महाराजा ही शामिल होना चाहते, तो वे इस विलय का बचाव नहीं कर सकते थे। लेकिन असल में, महाराजा और शेख अब्दुल्ला दोनों ने जम्मू-कश्मीर की जनता की ओर से यह अनुरोध किया था।
जूनागढ़ के विलय के मामले में पहले यह रुख अपनाते हुए कि शासक को विलय के मुद्दे पर निर्णय लेने का 'पूर्ण कानूनी अधिकार' है, कश्मीर के शासक द्वारा अपने राज्य के संबंध में उसी विशेषाधिकार का प्रयोग करने पर पाकिस्तान सरकार की आपत्ति निराधार ही मानी जा सकती है। कश्मीर में लोकतांत्रिक अधिकारों के लिए संघर्ष कर रहे अंतर-सामुदायिक लोकप्रिय राजनीतिक संगठन कश्मीर नेशनल कॉन्फ्रेंस की भागीदारी और महाराजा के अनुरोध ने कश्मीर के विलय को भारत सरकार की स्वीकृति को वैध बना दिया और पाकिस्तान के आक्रमण को विफल करने के लिए अपनी सेना भेजने को पूरी तरह से उचित ठहराया।
कश्मीर की रक्षा में वीरतापूर्ण बलिदानों की भरमार रही। भारतीय सेना के मुस्लिम अधिकारी ब्रिगेडियर उस्मान नौशेरा में

अपनी टुकड़ियों का नेतृत्व करते हुए वीरतापूर्वक शहीद हो गए। उन्हें 'नौशेरा का शेर' के नाम से याद किया जाता है। बारामूला में नेशनल कॉन्फ्रेंस के युवा मुस्लिम नेता मीर मकबूल शेरवानी, जो आक्रमणकारियों के खिलाफ लोगों को संगठित करने में लगे थे, बारामूला पर कब्जा करने वाले आक्रमणकारियों द्वारा बंदी बना लिए गए। उन्होंने शेरवानी से कश्मीर नेशनल कॉन्फ्रेंस को त्यागने और तथाकथित आज़ाद कश्मीर सरकार के प्रति निष्ठा की शपथ लेने को कहा। शेरवानी ने साहसपूर्वक ऐसा करने से इनकार कर दिया और आक्रमणकारियों से कहा कि उनकी जीत क्षणिक है क्योंकि भारतीय सेना जल्द ही बारामूला पर पुनः कब्जा कर लेगी और घुसपैठियों को खदेड़ देगी। उन्हें गद्दार करार दिया गया। घुसपैठियों ने उनकी हथेलियों और पैरों में कीलें ठोंक दीं और उन्हें जीवित लक्ष्य के रूप में इस्तेमाल किया। हर सीधी गोली लगने पर शेरवानी कराह उठते थे। उन्हें चौदह गोलियां लगीं। घुसपैठियों ने शेरवानी के शरीर को क्षत-विक्षत करके और उस पर मल त्याग करके अपनी बर्बरता का प्रदर्शन किया। शेरवानी की अंतिम भविष्यवाणी अड़तालीस घंटों के भीतर सच हो गई: भारतीय सेना ने घुसपैठियों को बारामूला से खदेड़ दिया। युवा शहीद की दृढ़ता और अदम्य साहस को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए गांधीजी ने कहा, 'यह ऐसी शहादत थी जिस पर कोई भी - हिंदू, सिख, मुसलमान या कोई भी अन्य - गर्व करेगा।'
कश्मीर मुद्दे को सुलझाने के लिए गवर्नर जनरलों और प्रधानमंत्रियों के बीच बातचीत विफल होने के बाद, लॉर्ड माउंटबेटन ने नेहरू की सहमति से एटली को तार भेजकर उपमहाद्वीप में मध्यस्थता के लिए आने का निमंत्रण दिया। एटली ने हस्तक्षेप करने से इनकार कर दिया और सुझाव दिया कि दोनों पक्ष इस मामले को

संयुक्त राष्ट्र में ले जाएं। तदनुसार, भारत सरकार ने माउंटबेटन की सलाह पर कार्रवाई करते हुए विवाद को संयुक्त राष्ट्र में भेजने पर सहमति व्यक्त की। नेहरू ने इसे 'विश्वास का कार्य' बताया। आवश्यक प्रारंभिक कदम के रूप में, उन्होंने 22 दिसंबर को लियाकत अली खान को अपनी आधिकारिक शिकायत पत्र सौंपी। गांधी जी किसी भी भारत-पाकिस्तान विवाद को मध्यस्थता के लिए किसी बाहरी संगठन में ले जाने के पक्ष में नहीं थे। उन्होंने चेतावनी दी कि इससे केवल 'बंदरों का न्याय' ही होगा। क्या केंद्र और पाकिस्तान को अपने विवादों को सुलझाने के लिए हमेशा किसी तीसरे पक्ष पर निर्भर रहना होगा? उन्होंने 25 दिसंबर को अपने प्रार्थना के बाद के संबोधन में पूछा। क्या केंद्र और पाकिस्तान के प्रतिनिधि एक साथ बैठकर कश्मीर मुद्दे को सुलझा नहीं सकते, जैसा कि उन्होंने पहले ही कई अन्य मामलों में किया है? या फिर, क्या वे अपने बीच से अच्छे, सच्चे व्यक्तियों का चयन नहीं कर सकते थे जो उनका मार्गदर्शन कर सकें? इसके लिए पहली आवश्यक शर्त अतीत की गलतियों का 'खुले और सच्चे दिल से स्वीकारोक्ति' थी। सच्चे पश्चाताप से अपराधबोध कम होता है और सही समझ का मार्ग प्रशस्त होता है।
चार दिन बाद उन्होंने फिर कहा, 'क्या पाकिस्तान सरकार और केंद्र सरकार निष्पक्ष भारतीयों की सहायता से एकजुट होकर सौहार्दपूर्ण समझौता नहीं करेंगी? या फिर क्या भारत से निष्पक्षता गायब हो गई है? मुझे यकीन है कि ऐसा नहीं हुआ है।' 30 दिसंबर 1947 को भारत सरकार ने कश्मीर में पाकिस्तान की आक्रामकता के संबंध में संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में औपचारिक रूप से एक प्रस्ताव रखा। गांधी जी ने एक बार फिर सार्वजनिक रूप से कहा कि इस विषय पर उनके विचार अपरिवर्तित

हैं। 4 जनवरी को बोलते हुए, गांधी जी ने पाकिस्तान सरकार से अपील की कि वह अपने नाम के अनुरूप 'पाक' बनी रहे। उन्होंने कहा कि हिंदू और मुसलमान दोनों ने ही क्रूरतापूर्ण कृत्य किए हैं और गंभीर गलतियाँ की हैं। उन्होंने मित्रता और सद्भावना की अपील की, जिससे संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में केंद्र सरकार का प्रस्ताव सम्मानपूर्वक वापस लिया जा सके, जिसका संयुक्त राष्ट्र भी स्वागत करेगा। हालांकि, सबसे महत्वपूर्ण बात थी हृदय परिवर्तन। यह समझ सच्ची होनी चाहिए। घृणा पालना युद्ध से भी बदतर होगा।
कश्मीर का भारतीय संघ में विलय, धर्मनिरपेक्ष राज्य के आदर्श के लिए भारतीय संघ के संघर्ष में एक निर्णायक कारक बन गया। गांधी ने इसका उपयोग भारतीय जनता को विवेक की वापसी की अत्यावश्यकता को समझाने के लिए किया, जिससे वे उस समय तक विमुख प्रतीत होते थे। नए भारतीय संघ से कश्मीर जाने वाले कई जमीनी मार्ग पाकिस्तान से होकर गुजरते थे। कश्मीर और पूर्वी पंजाब को जोड़ने वाली एक संकरी पट्टी थी। यदि मुसलमान पूर्वी पंजाब से सुरक्षित रूप से गुजर नहीं सकते थे, तो कश्मीर का भारत के साथ व्यापार कैसे संभव था? उन्होंने चेतावनी दी कि यदि पूर्वी पंजाब में यह पागलपन जारी रहा, तो कश्मीर का संघ में विलय निरर्थक हो जाएगा। हालांकि, उन्होंने आशा व्यक्त की कि पूर्वी पंजाब में भी विवेक का संचार होगा।
यह कहना गलत होगा कि कश्मीर सांप्रदायिक उन्माद से अछूता था। पंजाब में हुई अशांति के बाद, अक्टूबर 1947 में, जम्मू से बाहर जा रहे मुस्लिम शरणार्थियों के काफिलों पर आरएसएस कार्यकर्ताओं द्वारा निर्देशित और हथियारबंद गैर-मुसलमानों ने हमला किया और उनका नरसंहार किया। इन नरसंहारों में महाराजा

की सेना ने बेहद शर्मनाक भूमिका निभाई। जब इन घटनाओं की जानकारी गांधी जी को दी गई, तो उन्होंने कहा कि महाराजा, निरंकुश शासक होने के नाते, इन घटनाओं की जिम्मेदारी से मुक्त नहीं हो सकते; उन्होंने कहा कि महाराजा शासन जारी रखने के योग्य नहीं हैं। उन्होंने महाराजा को सलाह दी कि या तो वे पद त्याग दें या केवल नाममात्र के शासक बने रहें, 'ठीक वैसे ही जैसे ब्रिटिश राजा हैं'; पूर्ण सत्ता, कानूनी और वास्तविक रूप से, जनता के सच्चे प्रतिनिधियों को हस्तांतरित कर दी जाए।
भारतीय सरकार के कुछ सदस्यों को शेख अब्दुल्ला के अंतिम उद्देश्यों पर संदेह था; उन्हें पीछे रह गए सभी भारतीय मुसलमानों की वफादारी पर शक था। उनका मानना था कि शेख को शक्ति देना एक बहुत बड़ा राजनीतिक जोखिम था और वे मौजूदा परिस्थितियों में हिंदू महाराजा पर भरोसा करने को तैयार थे। मंत्रिमंडल इस मुद्दे पर विभाजित था। गांधी जी को भी आशंकाएं थीं, लेकिन उन्होंने कहा कि किसी सिद्धांत के लिए सब कुछ दांव पर लगा देना, किसी बड़े से बड़े जोखिम के डर से अपने सिद्धांतों से समझौता करने से कहीं बेहतर है।
'यदि शेख अब्दुल्ला मंत्रिमंडल प्रमुख के रूप में या एक सच्चे मुसलमान के रूप में अपने कर्तव्य निर्वाह में कोई चूक कर रहे हैं, तो उन्हें निश्चित रूप से पद छोड़ देना चाहिए और किसी बेहतर व्यक्ति को उनकी जगह सौंप देनी चाहिए। कश्मीर की धरती पर इस्लाम और हिंदू धर्म का संतुलन स्थापित हो रहा है। यदि दोनों सही दिशा में अपना-अपना योगदान दें, तो दोनों धर्मों को गौरव प्राप्त होगा और उनकी संयुक्त उपलब्धि पर कोई आंच नहीं आएगी। मेरी एकमात्र आशा और प्रार्थना है कि कश्मीर इस अंधकारमय उपमहाद्वीप के लिए एक प्रकाशस्तंभ बने।'

महाराजा को कड़ी सजा दिलाने के मामले में गांधी जी कश्मीर के नेताओं से भी कहीं अधिक दृढ़ थे। उन्होंने अंत तक इसके लिए संघर्ष जारी रखा। पाकिस्तान सरकार ने कश्मीर मुद्दे का इस्तेमाल भारत-विरोधी भावनाओं को भड़काने के लिए किया। उन्होंने भारतीय संघ के काफिरों के खिलाफ जिहाद का आह्वान किया और कबायली तथा अन्य इस्लामी कट्टरपंथियों को इस अभियान में शामिल होने के लिए उकसाया।
कश्मीर फ्रीडम लीग के अध्यक्ष बनकर एक व्यक्ति ने लाहौर से गांधीजी को पत्र लिखा कि कश्मीर दोनों राज्यों के बीच तनाव का मूल कारण है, इसलिए कश्मीर से 'आक्रामक' भारतीय सैनिकों की वापसी और इसे 'जिसके भी अधिकार में हो' उसे सौंपने से दोनों देशों के बीच सुलह हो सकेगी और हिंदू-मुस्लिम एकता की स्थापना का मार्ग प्रशस्त होगा, जो गांधीजी के दिल के बेहद करीब थी। इस तर्क की भोलीपन ने गांधीजी को आहत किया। उन्होंने कभी भी अपने सिद्धांतों की कीमत पर उदारता नहीं सीखी थी। उनकी अहिंसा कठोर थी और परोक्ष उदारता के लिए उनके मन में कोई जगह नहीं थी। गांधीजी ने पूछा कि क्या कश्मीर मुद्दे के हल होने तक मुसलमान हिंदुओं और सिखों पर अविश्वास करते रहेंगे और इसके विपरीत भी? भारतीय संघ की सेना अपनी मर्जी से कश्मीर में दाखिल नहीं हुई थी; वे राज्य के शासक और कश्मीरी जनता के नेताओं के आह्वान पर वहाँ गए थे। 'यदि आक्रमणकारी, कबीलेवासी और अन्य लोग पीछे हट जाते हैं और बिना किसी बाहरी सहायता के पुंछ और शेष कश्मीर में विद्रोहियों पर मामला छोड़ देते हैं, तो भारतीय सैनिकों को वापस बुलाने का समय आ जाएगा।'
उन्होंने आगे कहा कि कश्मीर को उसके वास्तविक अधिकार प्राप्त व्यक्ति को सौंपने का सुझाव बिल्कुल सही था। कश्मीर के असली

मालिक कौन थे? महाराजा वहाँ मौजूद थे और भारत सरकार उनकी अनदेखी नहीं कर सकती थी। अंततः, कश्मीर की जनता को ही अपने भाग्य का फैसला करना था। इसलिए, भारत सरकार ने एकतरफा निर्णय लिया था कि जैसे ही इसके लिए आवश्यक परिस्थितियाँ अनुकूल होंगी, उनकी इच्छा का पता लगाया जाएगा।
भारत और पाकिस्तान दोनों में विभाजन के कुछ समर्थकों ने कश्मीर के विभाजन का प्रस्ताव रखा; उनका सूत्र—जो आश्चर्यजनक रूप से हाल के दिनों में भारतीय जनता पार्टी के नेताओं द्वारा प्रस्तावित सूत्र से मिलता-जुलता था—यह था कि हिंदू बहुल आबादी वाला जम्मू भारत को और मुस्लिम बहुल आबादी वाली कश्मीर घाटी पाकिस्तान को सौंप दी जाएगी। गांधी जी ने इस प्रस्ताव को 'बेतुका' बताया। उन्होंने आक्रोशपूर्वक पूछा कि क्या भारत का दो भागों में बँटना ही काफी नहीं था? कोई सोच सकता था कि ईश्वर द्वारा बनाए गए देश को मनुष्य विभाजित नहीं कर सकता। फिर भी ऐसा हुआ और कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों ने इसे स्वीकार कर लिया, हालांकि दोनों ने अपने-अपने कारणों से। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं था कि विभाजन की प्रक्रिया को और आगे बढ़ाया जाए। यदि कश्मीर का विभाजन होना था, तो अन्य राज्यों का क्यों नहीं? यह प्रक्रिया कहाँ जाकर रुकेगी?
कुछ ही समय में, कश्मीर मुद्दे को संयुक्त राष्ट्र आयोग को सौंपे जाने को लेकर उनकी आशंकाएँ सच साबित हुईं। लगातार इनकार और टालमटोल के बाद, पाकिस्तान को अंततः यह स्वीकार करना पड़ा कि उसके सैनिकों ने कश्मीर पर आक्रमण में भाग लिया था। संयुक्त राष्ट्र आयोग ने अपने निष्कर्षों को दर्ज किया कि कश्मीर की धरती पर पाकिस्तान ने भारत की संप्रभुता का उल्लंघन किया था। लेकिन संयुक्त राष्ट्र आयोग ने पाकिस्तान को 'आक्रमणकारी'

घोषित नहीं किया। पाकिस्तान ने भारत के खिलाफ कई जवाबी शिकायतें दर्ज कीं, जिनमें 'नरसंहार' की शिकायत भी शामिल थी, जिन्हें भारत की शिकायतों के बराबर माना गया, जिसके परिणामस्वरूप पाकिस्तान 'पीड़ित' पक्ष के रूप में सामने आया। संयुक्त राष्ट्र में ब्रिटिश प्रतिनिधि ने एंग्लो-मुस्लिम लीग के सहयोग की पुरानी ब्रिटिश परंपरा का पालन करते हुए पाकिस्तान का पक्ष लिया। इस प्रकार भारत कटघरे में खड़ा हो गया।
इस बीच, भारत में ही रहने का फैसला कर चुके मुसलमानों का उत्पीड़न जारी रहा, जिसने अनेक घिनौने रूप धारण कर लिए। देश के कुछ हिस्सों में उन्हें हिंदुओं के समान वस्त्र पहनने को कहा गया और उनकी महिलाओं को अपना चेहरा नकाब उतारने के लिए मजबूर किया गया। शिकायतें आ रही थीं कि मुसलमानों को मांसाहारी भोजन पकाने की अनुमति नहीं दी जा रही थी, यह बहाना बनाकर कि उसकी गंध हिंदुओं को अप्रिय लगती है। यह बात विचित्र थी, क्योंकि स्वयं हिंदुओं का एक बड़ा प्रतिशत मांसाहारी था। गांधी जी स्वयं शाकाहारी थे और कस्तूरबा तो शाकाहार और रूढ़िवादी हिंदू रीति- रिवाजों का और भी दृढ़ता से पालन करती थीं। फिर भी, अपनी एक समुद्री यात्रा के दौरान, जब कस्तूरबा के लिए एक निजी रसोईघर की व्यवस्था करने का सुझाव दिया गया, ताकि उन्हें मांसाहारी भोजन के दृश्य और गंध से बचाया जा सके, तो गांधी जी ने यह कहते हुए इनकार कर दिया कि यह जहाज के उन साथियों का अपमान होगा जो उनके प्रति इतने दयालु और आतिथ्यपूर्ण रहे थे।

गांधी जी ने शरणार्थी संकट को अपनी प्राथमिकता बनाए रखा। पानीपत में मुस्लिम शरणार्थियों से मिलने के दौरान, वे शरणार्थी शिविरों की दयनीय स्थिति देखकर स्तब्ध रह गए।

पश्चिमी पंजाब से लगभग बीस हजार हिंदू शरणार्थी वहाँ थे और उनकी हालत बेहद दयनीय थी: शिविर अव्यवस्थित, अपर्याप्त सुविधाओं से लैस और बेहद गंदे थे। उसी शाम, प्रार्थना के बाद अपने भाषण में, गांधी जी ने अधिकारियों की कड़ी आलोचना की। पंजाब के मुख्यमंत्री एक अनुभवी कांग्रेसी और पुराने सहयोगी थे, लेकिन गांधी जी ने कहा कि अगर पानीपत की स्थिति उनकी प्रशासनिक क्षमताओं का नमूना थी, तो यह उनके और उनकी सरकार की क्षमताओं पर एक दुखद दाग था। शरणार्थियों को बिना किसी पूर्व सूचना के कहीं भी क्यों छोड़ दिया गया? उनके स्वागत की व्यवस्था अपर्याप्त क्यों थी? अधिकारियों को पहले से यह जानकारी क्यों नहीं दी गई थी कि कितने लोग आ रहे हैं और उन्हें क्या-क्या सुविधाएँ प्रदान करनी हैं? उन्हें यह जानकर और भी अधिक चिंता हुई कि गुड़गांव जिले से डेढ़ लाख से अधिक मुसलमानों को उनके घरों से निकाल दिया गया था। उन्हें सड़क किनारे डेरा डाले रखा गया था और उनके रहने या पाकिस्तान जाने की कोई व्यवस्था नहीं थी। उन्हें कड़ाके की ठंड में तीन सौ मील की पैदल यात्रा करनी थी।
चार महीने के अंतराल के बाद एआईसीसी की बैठक हुई, जिसमें भविष्य की योजनाएँ बनाई गईं; उनके निर्णयों पर ही नवजात राष्ट्र और उसके लोगों का भविष्य निर्भर था। शरणार्थियों के पुनर्वास या स्वदेश वापसी का मुद्दा सभी के मन में सर्वोपरि था। कांग्रेस इस मुद्दे पर बुरी तरह विभाजित थी कि क्या पश्चिमी पंजाब से आए हिंदू और सिख शरणार्थियों को भारत में स्थायी रूप से बसाया जाना चाहिए, या सरकार को ऐसी परिस्थितियाँ बनाने के लिए काम करना चाहिए जहाँ वे अपने मूल घरों में लौट सकें। गांधी जी को विश्वास था कि उनके लिए वापस लौटना संभव है, बशर्ते ऐसी स्थिति

बनाई जाए जिससे पाकिस्तान गए मुसलमान अपनी सुरक्षा और आत्मसम्मान की गारंटी के साथ भारत में अपने घरों में लौट सकें। अंततः, यद्यपि केंद्रीय समिति ने एआईसीसी के समक्ष रखे जाने वाले विषय पर कोई निश्चित प्रस्ताव पारित नहीं किया, फिर भी गांधी जी ने 6 नवंबर को अपनी प्रार्थना सभा में यह घोषणा की कि समिति सर्वसम्मति से इस निष्कर्ष पर पहुंची है कि कांग्रेस, जो अपनी स्थापना से ही पूर्ण सांप्रदायिक सद्भाव के लिए खड़ी रही है, किसी भी परिस्थिति में उस आदर्श से पीछे नहीं हट सकती। समिति का यह भी मत था कि भले ही कांग्रेस कुछ समय के लिए अल्पमत में आ जाए, उसे इस चुनौती का सहर्ष सामना करना चाहिए, न कि प्रचलित उन्माद के आगे झुकना चाहिए।
दो दिन बाद, 8 नवंबर को, गांधी ने आखिरी बार एआईसीसी को संबोधित किया। प्यारेलाल लिखते हैं: 'पच्चीस साल से भी अधिक समय पहले इसकी स्थापना के बाद से, चाहे वे उपस्थित रहे हों या नहीं, इसका मार्गदर्शन उन्हीं ने किया था। राष्ट्रपिता के सीधे-सादे भाषण को सदन के सभी वर्गों ने पूरे सम्मान के साथ सुना। हर वाक्य उनकी अंतरात्मा पर एक करारा प्रहार था, जिसका उद्देश्य कांग्रेस की पुरानी परंपरा और उन आदर्शों की लौ को प्रज्वलित करना था, जिन्होंने कांग्रेस को देश में एक अद्वितीय शक्ति बनाया था...'
मैंने इतना देख लिया है कि मुझे यह एहसास हो गया है कि यद्यपि हम सभी पागल नहीं हुए हैं, फिर भी काफी संख्या में लोगों ने अपना मानसिक संतुलन खो दिया है... यह मेरे लिए स्पष्ट है कि यदि हम इस पागलपन से खुद को नहीं सुधारते हैं, तो हम अपनी जीती हुई स्वतंत्रता खो देंगे। आपको हमारी दुर्दशा की गंभीरता को समझना और स्वीकार करना होगा... आप भारतीय मानवता के विशाल सागर का

प्रतिनिधित्व करते हैं। आप यह नहीं होने देंगे कि कांग्रेस मुट्ठी भर लोगों की पार्टी है जो देश पर शासन करती है। कम से कम मैं तो ऐसा नहीं होने दूंगा... जब हम अपनी स्वतंत्रता के लिए लड़ रहे थे, तब हम पर भारी जिम्मेदारी थी। लेकिन आज, जब हमने स्वतंत्रता प्राप्त कर ली है, तो हमारी जिम्मेदारी सौ गुना बढ़ गई है... ऐसे कई स्थान हैं जहाँ एक मुसलमान सुरक्षित नहीं रह सकता... यदि आप यह कहते हैं कि इसमें कुछ नहीं किया जा सकता था या इसमें आपकी कोई भूमिका नहीं है, तो मैं संतुष्ट नहीं होऊंगा... कांग्रेस का मूल सिद्धांत यह है कि भारत मुसलमानों का घर है, उतना ही जितना हिंदुओं का... मुझे अपने दावे के समर्थन में कांग्रेस के संविधान का हवाला देने की आवश्यकता नहीं है।
कुछ लोग कहते हैं कि अगर हम यहाँ मुसलमानों पर पाकिस्तान में हिंदुओं और सिखों पर हुए अत्याचारों से भी बदतर अत्याचार करें, तो इससे पाकिस्तान के मुसलमानों को सबक मिलेगा। उन्हें सबक तो मिलेगा, लेकिन इस बीच आपका क्या होगा? दुष्ट अपने ही कर्मों के बोझ तले दब जाते हैं; क्या हमें भी उनके साथ डूबना चाहिए? ... मुझे यह असंभव लगता है कि साढ़े तीन करोड़ (पैंतीस करोड़) मुसलमानों को पाकिस्तान भेज दिया जाए। उन्होंने ऐसा क्या अपराध किया है? मुस्लिम लीग दोषी हो सकती है, लेकिन हर मुसलमान नहीं... पाकिस्तान भागने के लिए मजबूर हुए सभी मुसलमानों को वापस बुलाना आपका कर्तव्य है। भारत इतना बड़ा है कि उन्हें और पाकिस्तान से भागकर आए सभी हिंदू और सिख शरणार्थियों को भी शरण दे सकता है। बेशक, जो मुसलमान पाकिस्तान में विश्वास रखते हैं और वहाँ अपना सुख पाना चाहते हैं, उनका वहाँ प्रवास करने के लिए स्वागत है। उनके लिए कोई रोक नहीं है...

उन्हें 'देश की कठिन परिश्रम से प्राप्त स्वतंत्रता के लिए खतरा' बताया गया। उनसे ऐसी गतिविधियों को बंद करने की अपील की गई और केंद्र एवं प्रांतीय सरकारों से यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक कदम उठाने को कहा गया। एक अन्य प्रस्ताव में नागरिकों से ऐसा माहौल बनाने में मदद करने की अपील की गई जिससे दोनों क्षेत्रों से विस्थापित लोग अपने पूर्व घरों में वापस लौट सकें। दुर्भाग्य से, एआईसीसी के प्रस्ताव का कोई प्रभाव नहीं पड़ा: शरणार्थियों की एक नई लहर अपने साथ अपनी दुखभरी कहानियाँ लेकर आई और हिंसा एक बार फिर भड़क उठी।
गांधी जी को सूचना मिली थी कि एआईसीसी के कुछ सदस्य, जिन्होंने प्रस्तावों के पक्ष में मतदान किया था, बेईमान थे। प्यारेलाल को लिखे पत्र में गांधी जी ने लिखा, 'मुझे लगता है कि मेरी लड़ाई दिल्ली में ही लड़नी और जीतनी होगी। मुझे यहां बहुत कुछ करना है... इस बार अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के छह प्रस्ताव व्यावहारिक रूप से मेरे ही थे... अब देखना यह है कि इन्हें कैसे लागू किया जाता है।'
आचार्य कृपलानी ने कांग्रेस अध्यक्ष पद से इस्तीफा देने की इच्छा व्यक्त की। उन्होंने कहा कि पार्टी अध्यक्ष बनने के बाद से वे सरकार में अपने कई कांग्रेस सहयोगियों के साथ काम करने में असमर्थ रहे हैं। उनका मानना था कि यदि वे पद पर बने रहे, तो पार्टी कार्यकारिणी और सरकार के बीच असामंजस्य पार्टी को कमजोर करेगा और केंद्र में कांग्रेस सरकार के लिए बाधा उत्पन्न करेगा, इसलिए उनके लिए पद छोड़ना ही सर्वोत्तम होगा। गांधी जी ने उनके इस निर्णय का समर्थन किया। कांग्रेस के लगभग सभी दिग्गज नेता सरकार में थे। पार्टी की अध्यक्षता कौन संभालेगा? कुछ लोगों ने सुझाव दिया कि इन परिस्थितियों में गांधी जी को यह

जिम्मेदारी लेनी चाहिए। हालांकि, गांधी जी ने कहा कि उन्हें यकीन नहीं है कि उनके कड़े कदम किसी को पसंद आएंगे। वे चाहते थे कि कोई कांग्रेसी समाजवादी नेता ही यह जिम्मेदारी संभाले, क्योंकि वे नहीं चाहते थे कि पार्टी कार्यकारिणी सत्ताधारी सरकार की मात्र कठपुतली बनकर रह जाए। उन्होंने आचार्य नरेंद्र देव का नाम सुझाया, लेकिन कुछ कांग्रेस नेताओं को उनकी उम्मीदवारी स्वीकार्य नहीं थी। अंततः, उन्होंने डॉ. राजेंद्र प्रसाद को नियुक्त करने का निर्णय लिया, जिन्होंने सरकार से इस्तीफा दे दिया और कांग्रेस अध्यक्ष पद का कार्यभार संभाला। रियासतों के भारतीय संघ में विलय और एकीकरण का प्रश्न एक ऐसा मुद्दा था जिसके लिए गहन कूटनीति की आवश्यकता थी। सरकार इस मामले को बखूबी संभाल रही थी, लेकिन कुछ अड़चनें अभी भी बनी हुई थीं। हैदराबाद के निज़ाम एकीकरण की प्रक्रिया में बाधा डालने और उसे पटरी से उतारने के लिए हर संभव प्रयास कर रहे थे। वे बहुसंख्यक हिंदू आबादी पर शासन करते थे जो भारतीय संघ में शामिल होने के लिए उत्सुक थी, लेकिन उनके और उनके साथियों की योजनाएँ कुछ और ही थीं। उन्होंने हठपूर्वक न तो भारतीय सरकार में शामिल होने से इनकार कर दिया और न ही किसी लोकप्रिय सरकार को सत्ता सौंपने से। उनका तर्क था कि हैदराबाद एक स्वतंत्र देश है और एक देश के रूप में संगठित है। भारत सरकार ने इस तर्क को सिरे से खारिज कर दिया।
12 अगस्त को माउंटबेटन ने निज़ाम को विलय के मुद्दे पर समझौता करने के लिए दो महीने का समय दिया। निज़ाम ने ऊपरी तौर पर विशेष शर्तों पर भारतीय संघ में शामिल होने की इच्छा व्यक्त की और बातचीत जारी रखी; हालाँकि, सरकार को बाद में पता चला कि वह चेकोस्लोवाकिया के साथ हथियार खरीदने के लिए उन्नत बातचीत कर

रहे थे। उसी समय, मुस्लिम उग्रवादी संगठन इत्तेहाद-उल-मुसल्मीन और उसके अर्धसैनिक विंग रजाकारों ने हैदराबाद की हिंदू आबादी के बीच आतंक और दमन का अभियान चलाया। उन्होंने निज़ाम को विलय पर निर्णय टालने का बहाना देने के लिए हैदराबाद में भारत विरोधी प्रदर्शन किए।
निज़ाम ने घटनाओं को इस तरह से अंजाम दिया कि उसके असली इरादे संदेह से भर गए। पता चला कि उसने पाकिस्तान के साथ संपर्क बनाए रखा था और पुर्तगाल के साथ भी बातचीत कर रहा था ताकि गोवा में स्थित उसकी कॉलोनी के साथ एक संघ बना सके और इस तरह अपने चारों ओर से ज़मीन से घिरे राज्य के लिए समुद्र तक पहुँच सुनिश्चित कर सके। उसने भारतीय सरकार को धमकी दी कि यदि उसकी विशेष शक्तियों और विशेषाधिकारों की मांग पूरी नहीं की गई तो वह पाकिस्तान में शामिल हो जाएगा। कश्मीर आक्रमण के कारण भारतीय सरकार व्यस्त थी और निज़ाम ने इसका भरपूर फायदा उठाया।
माउंटबेटन के प्रेस अटैची ने अपनी डायरी में निज़ाम की धूर्तता का ज़िक्र करते हुए लिखा: 'हैदराबाद के निज़ाम कोई अंतिम निर्णय लेने से पहले कश्मीर की स्थिति देखने के लिए समय ले रहे हैं... जिस इत्तेहाद को उन्होंने शुरू में बढ़ावा दिया था, वह अब एक विकृत रूप ले चुका है...' अंततः, निज़ाम ने 29 नवंबर को एक वर्ष के लिए यथास्थिति समझौते पर हस्ताक्षर किए, जिसके दौरान एक स्थायी समझौता किया जाना था। समझौते पर हस्ताक्षर करने से तीन दिन पहले, रजाकार नेता कासिम रिज़वी गांधीजी से मिले। इस मुलाकात का इस उद्दंड रजाकार प्रमुख पर कोई खास असर नहीं हुआ। वह और भी महत्वाकांक्षी हो गए और लाल किले में अपना वर्चस्व स्थापित करने तक चैन से न बैठने की घोषणा करके उन्होंने बेतुके दावे करना जारी रखा। यह उन कई उग्र मुस्लिम नेताओं का आम दावा था जो

खुद को आधुनिक मुगल सम्राट मानते थे और इसलिए लाल किले को भारत पर शासन करने के अपने सपने का प्रतीक मानते थे। आठ महीने बाद, केंद्र सरकार की 'पुलिस कार्रवाई' द्वारा हैदराबाद को मुक्त कराए जाने के बाद, रिज़वी ने खुद को लाल किले में स्थापित पाया, लेकिन एक कैदी के रूप में। कासिम रिजवी पर राजद्रोह का आरोप लगाया गया और उन्हें देशद्रोही के रूप में जेल में डाल दिया गया।
इसी बीच सिंध में हिंसा भड़क उठी। 17 दिसंबर को सिंध के हैदराबाद में एक हिंसक दंगा हुआ, जिसमें गैर-मुसलमानों को निशाना बनाया गया। पूर्वी पंजाब से आए शरणार्थियों को आश्रय देने के बहाने सरकार ने गैर-मुसलमानों द्वारा संचालित शिक्षण संस्थानों पर जबरन कब्जा करना शुरू कर दिया; अल्पसंख्यकों के पूजा स्थलों को भी नहीं बख्शा गया। सरकार ने गैर-मुसलमानों की संपत्ति की बिक्री या हस्तांतरण में कई बाधाएं खड़ी कर दीं, जिसका कारण प्रांत से गैर-मुसलमानों के पलायन को रोकना था। जिन गैर-मुसलमान सरकारी कर्मचारियों ने अपने परिवारों को दूर भेज दिया था, उन्हें वापस बुलाने के लिए मजबूर किया जा रहा था ताकि सरकार उन्हें बंधक बनाकर उनकी वफादारी सुनिश्चित कर सके। गांधी ने सार्वजनिक रूप से पाकिस्तान सरकार को चेतावनी दी कि यदि वे गैर-मुसलमानों को सिंध में स्वतंत्र नागरिक के रूप में रहने से रोकते हैं, तो उनके कार्यों के गंभीर परिणाम होंगे। उन्होंने सरकार को सलाह दी कि पलायन को रोकने का एकमात्र उपाय अल्पसंख्यकों का विश्वास फिर से जीतना है। उनकी सलाह अनसुनी कर दी गई। 5 जनवरी 1948 तक, कुल 14 लाख सिखों और हिंदुओं में से लगभग 5 लाख लोग सिंध छोड़ चुके थे। शुरुआत में उत्तर भारत और पूर्वी पंजाब से भागकर आए मुस्लिम शरणार्थी पश्चिमी पंजाब के

शरणार्थी शिविरों में बस गए थे, लेकिन इन शिविरों की स्थिति दयनीय थी। सर्दियों के आगमन के साथ ही इन शरणार्थियों की हालत और भी खराब हो गई और सिंध की ओर पलायन शुरू हो गया। जनवरी के मध्य तक यह पलायन एक बड़ी लहर में बदल गया। लगभग ढाई लाख शरणार्थियों का एक बड़ा समूह पंजाब-सिंध सीमा पर स्थित मुल्तान पहुँच गया।
सिंध में अल्पसंख्यक भयभीत थे, क्योंकि उन्हें पता था कि यह नया आगमन इस बात का संकेत है कि उनके खिलाफ एक बार फिर आतंक फैलाया जाएगा। और ठीक यही हुआ। 6 जनवरी को सिंध की राजधानी कराची में दंगे भड़क उठे। 64 सिख, जिन्हें पहले उनके घरों से निकाल दिया गया था और जिन्होंने एक गुरुद्वारे में शरण ली थी, उन पर मुस्लिम भीड़ ने हमला किया और उनकी बेरहमी से हत्या कर दी। कराची में लगभग 70 प्रतिशत गैर-मुस्लिम संपत्ति - घर, दुकानें और व्यावसायिक परिसर - लूट ली गई। विभाजन से पहले कराची में हिंदू और सिखों की संयुक्त आबादी साढ़े तीन लाख थी, लेकिन 13 जनवरी 1948 तक सभी बचे हुए सिख देश छोड़कर चले गए थे और केवल 90 हजार हिंदू ही रह गए थे। पाकिस्तान सरकार ने स्थिति से निपटने में अपनी असमर्थता व्यक्त की, गांधी ने उन्हें सलाह दी कि यदि वे अपने नागरिकों को सुरक्षा प्रदान करने में असमर्थ हैं तो वे देश छोड़ दें। उन्होंने कहा, 'इससे कुछ समय के लिए स्थिति और खराब हो सकती है, लेकिन अंततः हालात सुधर जाएंगे।' दिल्ली में भी उन्होंने सरकार को यही सलाह दी।
प्यारेलाल लिखते हैं: 'पूर्वी बंगाल से पलायन जारी रहा। इसमें बहावलपुर (पाकिस्तान) राज्य से भी पलायन जुड़ गया। इससे बंबई, काठियावाड़, मध्य प्रदेश, दिल्ली और उत्तर प्रदेश तथा बंगाल, असम, बिहार और उड़ीसा में बेसहारा शरणार्थियों की संख्या में

भारी वृद्धि हुई। आने वाले शरणार्थियों के मन में सीमा पार रहने वाले उन लोगों के प्रति कोई मित्रतापूर्ण भावना नहीं थी, जिनके धर्मवासियों ने उन्हें उनके घर से बेदखल कर दिया था और उन्हें उनकी जन्मभूमि से लगभग निर्धन और कंगाल कर दिया था, जिसे वे अत्यंत प्रिय मानते थे। इस प्रकार भारत में, विशेष रूप से दिल्ली में, एक भयावह स्थिति उत्पन्न होने लगी।'
इस स्थिति में कांग्रेस हाई कमांड असहाय महसूस कर रही थी। वे न तो पलायन को रोक सकते थे और न ही शरणार्थियों के बढ़ते दबाव और बिगड़ती स्थिति से उत्पन्न उग्र भावनाओं को नियंत्रित कर सकते थे। इसका परिणाम केवल एक ऐसी भयावह आपदा हो सकता था जो न केवल उन मूल्यों को खतरे में डालती जिनके लिए कांग्रेस और भारतीय संघ खड़े थे, बल्कि स्वयं स्वतंत्रता को भी। और गांधीजी ने स्वयं से यह प्रतिज्ञा की थी कि वे इसे अपने जीवनकाल में नहीं देखेंगे। मुस्लिम लीग के कई नेता और समर्थक, जो जिन्ना के विचारों से सहमत नहीं थे, भारतीय संघ में ही रुके रहे। यहाँ उन पर कड़ी नज़र रखी जा रही थी: एक बार जब उन्होंने देश के साथ विश्वासघात किया था और अलगाववादियों का साथ दिया था, तो अब उनकी वफ़ादारी किसके प्रति थी? हमेशा व्यावहारिक रहने वाले पटेल ने उन्हें चेतावनी दी: 'मैं स्पष्टवादी होने में विश्वास रखता हूँ। मैं मुसलमानों से साफ़-साफ़ कहना चाहता हूँ कि इस नाज़ुक मोड़ पर, यह आपका कर्तव्य है कि आप हमारे साथ एक ही नाव में सवार हों और हमारे साथ मिलकर आगे बढ़ें या डूबें। आप दो घोड़ों पर सवार नहीं हो सकते। आपको एक घोड़ा चुनना होगा, जो भी आपको सबसे अच्छा लगे।' संविधान सभा में मुस्लिम लीग पार्टी के नेता खालिक-उज़-ज़मान ने सीमा पार अपने पूर्व सहयोगियों से कहा कि वे अपने काम से काम रखें और भारतीय मुसलमानों को अकेला छोड़ दें। उड़ीसा विधानसभा

में मुस्लिम लीग पार्टी के नेता ने भारतीय मुसलमानों से अपील की: 'आइए अब हम दो-राष्ट्र सिद्धांत को भूल जाएं और भारतीय संघ के प्रति निष्ठा रखें... पाकिस्तानियों के खोखले वादों के बावजूद, वे हमारी सुरक्षा के लिए कुछ नहीं कर सकते और उनके संरक्षण की ओर देखना व्यर्थ होगा।' गांधी जी को यह स्पष्ट था कि मुस्लिम लीग, अन्य गैर-मुस्लिम सांप्रदायिक संगठनों की तरह, अब एक राजनीतिक संगठन के रूप में कायम नहीं रह सकती। 'वे आंतरिक धार्मिक सुधार के लिए धार्मिक संगठनों के रूप में कार्य कर सकते हैं, ताकि अपने धर्म में जो सर्वोत्तम है उसे खोजा जा सके और उस पर अमल किया जा सके।'
विभाजन योजना के अनुसार, विभाजित प्रांतों के सरकारी कर्मचारियों और केंद्र सरकार के अधीन कार्यरत कर्मचारियों को भारतीय संघ या पाकिस्तान में सेवा करने का विकल्प दिया गया था। परिणामस्वरूप, मुसलमानों ने पाकिस्तान को और हिंदुओं ने भारतीय संघ को चुना। लेकिन डाक और रेलवे में कार्यरत कुछ मुस्लिम, जिन्होंने पहले पाकिस्तान को चुना था, अब अपना विचार बदल चुके थे। उन्होंने दावा किया कि उनका पहले का निर्णय लोकलुभावनवाद और दुष्प्रचार पर आधारित था और अब वे अपने मूल पदों पर बने रहना चाहते थे। कुछ अन्य मुस्लिम कर्मचारियों ने शिकायत की कि उन्हें उनके पदों से बर्खास्त कर दिया गया था, संभवतः हिंदू विरोधी पूर्वाग्रह के संदेह के आधार पर। गांधी ने उनसे कहा कि यद्यपि उनकी सहानुभूति उनके साथ है, फिर भी उनके लिए सही मार्ग यह है कि वे 'क्षमा योग्य संदेह' का विरोध न करें, भले ही व्यक्तिगत मामलों में यह अनुचित हो। 'जब तक हावी और विनाशकारी सांप्रदायिक जहर समाप्त नहीं हो जाता, तब तक मेरा मानना है कि मुसलमानों के लिए सरकारी नौकरियों में मिलने वाले

सुख-सुविधाओं के पीछे न भागना आवश्यक और गरिमापूर्ण है। सत्ता सच्ची सेवा से आती है। वास्तविक प्राप्ति अक्सर धारक को नीचा दिखाती है।'
दिल्ली में हुए दंगों के दौरान कई मस्जिदों में तोड़फोड़ की गई और शरणार्थियों ने उन पर जबरन कब्जा कर लिया। कुछ मस्जिदों को मंदिरों में बदल दिया गया था। गांधी जी ने पटेल का ध्यान इस ओर दिलाया और उनसे सुनिश्चित करने को कहा कि ऐसी घटनाएं दोबारा न हों। गांधी जी ने सुझाव दिया कि उनका विभाग केंद्र सरकार की ओर से यह घोषणा करे कि मस्जिदों के संबंध में किसी भी प्रकार की बेअदबी बर्दाश्त नहीं की जाएगी और यदि कोई क्षति होती है, तो उसकी मरम्मत सरकार द्वारा कराई जाएगी। दिल्ली प्रशासन ने एक विज्ञप्ति जारी कर मस्जिदों पर कब्जा करने वाले गैर-मुसलमानों को सात दिन का नोटिस दिया कि वे मस्जिदें खाली कर दें, अन्यथा पुलिस उन्हें बलपूर्वक बाहर निकाल देगी।
प्यारेलाल लिखते हैं: मुसलमानों ने सरदार पटेल और उनके अधिकारियों पर गंभीर आरोप लगाए। उनका आरोप था कि अधिकारी मुस्लिम दुकानों की लूटपाट को नज़रअंदाज़ कर रहे थे। कार्रवाई का दिखावा करते हुए, वे वास्तव में शरणार्थियों की भीड़ को बड़ी संख्या में आने के लिए उकसा रहे थे ताकि पुलिस बाद में 'अधिक संख्या' के सामने बेबसी का बहाना बना सके। गांधीजी ने अपने सामने इस पूरे मामले पर चर्चा करने के लिए उनके प्रवक्ताओं और मंत्रिमंडल के तीन वरिष्ठ सदस्यों के बीच एक बैठक आयोजित की। यह बैठक 25 दिसंबर को दोहराई गई, जिसमें दिल्ली के पुलिस प्रमुख भी उपस्थित थे। गांधीजी परिणाम से संतुष्ट नहीं थे। दिल्ली में तैनात पुलिस और सैन्य कर्मियों का एक बड़ा हिस्सा पश्चिमी पंजाब और सीमा प्रांत (जो अब पाकिस्तान का हिस्सा है) में रहता

था। कुछ को आपातकालीन उपाय के रूप में शरणार्थियों में से भर्ती किया गया था... मुसलमानों के प्रति गहरा आक्रोश और कड़वाहट व्याप्त थी। स्वाभाविक रूप से, महिलाएं पुरुषों की तुलना में कहीं अधिक व्यथित और आक्रोशित थीं। पुलिस ने सरकार के आदेशों का खुले तौर पर उल्लंघन नहीं किया। लेकिन अक्सर वे अपनी गहरी व्यक्तिगत कड़वाहट को अपने कर्तव्य और अनुशासन की भावना पर हावी होने देते हैं।
ये वे माध्यम थे जिनके ज़रिए प्रशासन चलाना था। सरदार पटेल बहुत परेशान और बीमार थे। उनके अधीन शासन प्रणाली को एक विशेष तरीके से ही चलाया जा सकता था। उन्हें अपने अधिकारियों पर भरोसा करना पड़ता था... वे उन पर अत्यधिक दबाव डालकर उनकी वफादारी खोने का जोखिम नहीं उठा सकते थे, और न ही वे उन कठिन समयों में उनके मनोबल को गिरने दे सकते थे जिनसे वे गुज़र रहे थे। गांधीजी स्वयं को एक बहुत ही विचित्र स्थिति में पाते थे। वे सरकार में नहीं थे। कार्यों की गति इतनी तेज़ थी कि सामान्य माध्यमों से कार्य करने का समय ही नहीं बचता था। तत्काल और अत्यावश्यक समस्याओं से निपटने के लिए, जिनमें देरी की गुंजाइश नहीं थी, उन्हें अक्सर अपने प्रार्थना भाषणों के प्रसारण का सहारा लेना पड़ता था। ये प्रसारण जनता और सभी संबंधितों के लिए अनौपचारिक आदेश बन गए थे। साथ ही, वे ऐसा कुछ भी नहीं करना चाहते थे जिससे हस्तक्षेप या दखलंदाज़ी का आभास भी हो। एक बार हमने उन्हें सरदार पटेल को लिखते हुए पाया: "रंधावा (दिल्ली के उपायुक्त) से मिलने के बाद मुझे लगा कि अगर मैं उन्हें सीधे लिखूँ तो आपका समय बचेगा। क्या यह उचित होगा?"
सन् 1942 में, जब सरकार युद्ध के तनाव से घबरा गई थी, मीराबेन ब्रिटिश सैन्य अधिकारियों से कुछ बहुत ही उपयोगी संपर्क

स्थापित करने में सफल रहीं। उन्होंने गांधीजी से पूछा कि क्या वह दिल्ली में स्थिति को सुधारने के लिए कुछ ऐसा ही नहीं कर सकतीं। गांधीजी का उत्तर महत्वपूर्ण था: "ये पुराने दिन नहीं हैं। अब हालात बहुत जटिल हैं। इन सैन्य अधिकारियों को मित्रवत चेहरों के अलावा और कुछ न समझकर आप कोई उपयोगी सेवा नहीं कर सकतीं। ये लोग आपका गर्मजोशी से स्वागत तो करेंगे, लेकिन इससे ज्यादा कुछ नहीं।"
“लोग मुझसे बहुत उम्मीदें रखते हैं,” उन्होंने अपनी एक प्रार्थना सभा में कहा, “लेकिन उन्हें यह समझना चाहिए कि सरकार मैं नहीं चला रहा हूँ।” सत्ता में बैठे लोग उनके मित्र थे, लेकिन उन्होंने आगे कहा कि वे नहीं चाहते कि कोई भी उनकी सलाह केवल मित्रता या सम्मान के कारण माने। उन्हें ऐसा तभी करना चाहिए जब वह सलाह उनके लिए उपयोगी हो... मंत्रियों को ब्रिटिश शासकों से पुरानी व्यवस्था विरासत में मिली थी और वे उसका सर्वोत्तम उपयोग कर रहे थे।
मंत्रिमंडल के भीतर भी तनाव और मतभेद थे। पंडित नेहरू और सरदार पटेल के स्वभाव में हमेशा से ही अंतर रहा था। इसके अलावा, विभिन्न मुद्दों पर उनके दृष्टिकोण में भी भिन्नता थी। सरदार पटेल व्यक्तिगत रूप से पंडित नेहरू का बहुत सम्मान करते थे और उनकी बुद्धि और हृदय के अद्वितीय गुणों की सराहना करते थे। लेकिन उन्होंने शिकायत की कि उनके प्रमुख ने अपने चारों ओर बुरे सलाहकारों को रखा हुआ है, उन पर पर्याप्त भरोसा नहीं दिखाया है और अमूर्त और सामान्य बातों में उलझे रहते हैं, जिससे उनके नेक इरादे विफल हो जाते हैं। पंडित नेहरू भी सरदार पटेल के विभिन्न मुद्दों को संभालने के तरीके से असंतुष्ट थे, हालांकि उनकी तीक्ष्ण बुद्धि, प्रशासनिक क्षमता, दृढ़ता और अद्वितीय

योद्धा गुणों की प्रशंसा करने में वे किसी से कम नहीं थे। सरदार और पंडित नेहरू दोनों ही बारी-बारी से गांधीजी के विभिन्न मुद्दों पर दृष्टिकोण से असहमत होते रहे थे। लेकिन दोनों ही गांधीजी के बिना नहीं रह सकते थे, और गांधीजी इस निष्कर्ष पर पहुंचे थे कि देश को सरकार में दोनों की सेवाओं की आवश्यकता है। अपने मतभेदों के बावजूद, दोनों ने स्वतंत्रता संग्राम के दौरान लगभग तीस वर्षों तक अनुशासित सैनिकों और वफादार दोस्तों और साथियों के रूप में सहयोग किया था... लेकिन स्वतंत्रता के बाद से, ये मतभेद धीरे-धीरे व्यावहारिक रूप लेने लगे थे और यहां तक कि उनके व्यक्तिगत संबंधों को भी प्रभावित करने लगे थे। प्रधानमंत्री की शक्तियों और कार्यों का उनके मंत्रिमंडल के सहयोगियों के संबंध में स्पष्ट परिसीमन कभी नहीं किया गया था। क्या प्रधानमंत्री को अन्य सभी मंत्रालयों के लिए "समन्वयक और पर्यवेक्षक" के रूप में कोई विशेष कार्य सौंपा गया था? यदि हाँ, तो अन्य मंत्रालयों के कामकाज में हस्तक्षेप किए बिना उस कार्य का निर्वहन कैसे किया जाता था? इससे पंडित नेहरू और सरदार पटेल के बीच संबंधों पर विशेष प्रभाव पड़ा... मंत्रिमंडल में दो शक्तिशाली सहयोगियों के बीच नीतिगत मतभेदों का समाधान आमतौर पर उनके बीच टकराव के माध्यम से किया जाता है—यदि मतभेदों का समाधान संभव न हो तो दोनों में से एक दूसरे को पद से हटा देता है। लेकिन गांधीजी के अहिंसा के सिद्धांत ने भारतीय राजनीति में एक नया आयाम स्थापित किया। उन्होंने यह सिद्ध किया कि स्वयं सत्ता में आए बिना भी सत्ता का मार्गदर्शन करना संभव है। पंडित नेहरू और सरदार पटेल दोनों ही अपने आप में इतने महान थे कि देश में अपनी स्थिति के लिए उन्हें पद पर निर्भर रहने की आवश्यकता नहीं थी। एक दूसरे को हटाने की कोशिश करने के बजाय,

दोनों ही सरकार के सुचारू संचालन के हित में एक दूसरे के पक्ष में स्वयं को पद से हटाने के लिए तैयार थे और दोनों ने इस संबंध में गांधीजी को पत्र भी लिखा था।
गांधीजी को डर था कि कांग्रेस नेताओं के बीच बढ़ती दरार का फायदा पाकिस्तान उठा लेगा। ऐसा लग रहा था मानो पाकिस्तान फूट का फायदा उठा रहा हो और मौके की तलाश में था। गांधीजी के लिए व्यक्तिगत रूप से इससे भी ज्यादा दुख की बात यह थी कि गवर्नर-जनरल को भी इन कलह में घसीटा जा रहा था। उन्होंने एक कांग्रेसी सहयोगी से कहा, "माउंटबेटन को हमारे पारिवारिक झगड़ों में इतनी दिलचस्पी लेने की इजाजत क्यों दें—भले ही उनकी मंशा कितनी भी अच्छी क्यों न हो?" यह माउंटबेटन के व्यक्तित्व पर कोई सवाल नहीं था। गांधीजी को उन पर पूरा भरोसा था। लेकिन यह भारत के लिए अपमानजनक था। गांधीजी अपने तरीके से इन मतभेदों को पाटने की कोशिश कर रहे थे और पार्टियों की स्थिति को देखते हुए उन्हें अंतिम परिणाम के बारे में जरा भी संदेह नहीं था। वे दोनों ही सच्चे देशभक्त थे... दिल्ली में उनसे दोबारा मिलने के कुछ ही समय बाद, गांधीजी ने एक दिन मुझसे कहा: "सरदार जी, पंडित नेहरू और माउंटबेटन, तीनों ही अपनी-अपनी भूमिका पूरी कुशलता से निभा रहे हैं—शुद्ध इरादों से और अपने-अपने दृष्टिकोण से भारत की सेवा करने के एकमात्र उद्देश्य से। जैसा कि मैं भी निभा रहा हूँ," उन्होंने आगे कहा, "और अंत में यही विजयी होगा। भारत का उद्धार मेरे मार्ग के सिवा और किसी मार्ग से नहीं हो सकता। माउंटबेटन ने कम से कम यह तो देख लिया है।"
कश्मीर में हालात दिन-ब-दिन बिगड़ते जा रहे थे। गांधी जी ने कश्मीर की स्थिति की तुलना भूसे के ढेर में जलती हुई माचिस की तीली से की। उन्होंने कहा, 'कब यह भड़क उठेगी और सब कुछ आग की

लपटों में घिर जाएगा, यह कोई नहीं बता सकता।' महाराजा के राज्याभिषेक के बाद उन्हें दी गई विशेष शक्तियों का प्रश्न एक विवादास्पद और जटिल मुद्दा बनता जा रहा था। गांधी जी चाहते थे कि केंद्र सरकार का किसी भी राजकुमार या प्रांत के साथ कोई विशेष समझौता न हो। उन्हें आशा थी कि भारतीय संघ उन सिद्धांतों पर कायम रहेगा जिन पर इसकी स्थापना हुई थी, जहां 'अल्पसंख्यकों को पूर्ण न्याय और समान व्यवहार मिले और अपराधियों को बिना किसी डर या पक्षपात के दंडित किया जाए।'
हालात और भी बदतर हो गए क्योंकि हर दिन कोई न कोई नई समस्या सामने आती रही। इनमें से एक समस्या अविभाजित भारत के नकद भंडार में पाकिस्तान का हिस्सा थी, जो एक लंबा और विवादित मुद्दा बन गया। अंततः, सत्ता हस्तांतरण के दिन 375 करोड़ रुपये के नकद भंडार में से पाकिस्तान को 20 करोड़ रुपये का भुगतान किया गया। दोनों सरकारों के बीच बातचीत के बाद पाकिस्तान के हिस्से का निर्धारण होना था। पाकिस्तान के स्वतंत्र होने के बाद, पाकिस्तान सरकार के प्रतिनिधियों और पटेल एवं नेहरू सहित केंद्र सरकार के वरिष्ठ नेताओं के बीच इस समझौते पर हस्ताक्षर किए गए। लंबी बातचीत के बाद 75 करोड़ रुपये की राशि पर सहमति बनी। दो स्वतंत्र देशों के बीच एक द्विपक्षीय संधि पर हस्ताक्षर किए गए, जिसके तहत भारत ने पाकिस्तान को 55 करोड़ रुपये का भुगतान करने पर सहमति जताई।
भारत पर दबाव बनाने और अपनी जनता का दिल जीतने के लिए, पाकिस्तानी नेताओं ने मीडिया के सामने विजयी घोषणा की कि उन्होंने भारत को उसका हिस्सा चुकाने के लिए 'मजबूर' कर दिया है। कश्मीर में हो रहे घटनाक्रम और पाकिस्तानी क्षेत्रों से आए शरणार्थियों के पुनर्वास के मद्देनजर यह बात भारतीय जनता को

रास नहीं आई। अपनी इज्जत बचाने के लिए, भारतीय नेताओं ने बयान जारी कर कहा कि उन्होंने इस बात पर जोर दिया था कि हिसाब-किताब का अंतिम निपटारा और बकाया राशि का भुगतान तभी किया जाएगा जब दोनों देशों के बीच सभी मुद्दे सुलझ जाएंगे। पाकिस्तानी नेताओं ने इस बात से इनकार किया कि उन्होंने ऐसी कोई शर्त थोपी थी या स्वीकार की थी। संधि के पाठ में भी इसका कोई जिक्र नहीं था। बढ़ती आलोचना का सामना करते हुए, भारतीय सरकार ने एकतरफा फैसला लेते हुए बकाया राशि का भुगतान 'सभी मुद्दों के हल होने तक' टाल दिया। पाकिस्तान ने तुरंत आक्रामक रुख अपनाया। पाकिस्तान के वित्त मंत्री ने इस कदम को 'आक्रमण का कार्य' करार दिया। भारतीय सरकार ने अपने फैसले को यह कहकर सही ठहराया कि वे कश्मीर में भारत के खिलाफ पाकिस्तान के आक्रमण को वित्त पोषित करने के लिए तैयार नहीं हैं। लेकिन जब समझौता हुआ था, तब कश्मीर में आक्रमण शुरू हो चुका था, लेकिन उसमें ऐसी कोई शर्त शामिल नहीं थी। नेहरू ने भारतीय सरकार की कार्रवाई को उचित ठहराते हुए एक बयान जारी किया: 'ऐसी परिस्थितियों में कोई भी देश दूसरे पक्ष की साख को निष्क्रिय कर देता है। हमने उस अर्थ में कुछ भी निष्क्रिय नहीं किया है। हमने केवल इतना कहा है कि हम इस समझौते को स्वीकार करते हैं, लेकिन एक समग्र समाधान होना चाहिए और हम उसका पूरी तरह से पालन करेंगे।' यह तर्कसंगत था, लेकिन इसे संधि में शामिल किया जाना चाहिए था। इसके अलावा, इस समझौते के अनुसार, जब आक्रमण हो ही चुका था, तो संधि, समझौता, या जो भी इसे कहा जाए, उस पर हस्ताक्षर क्यों किए गए?
6 जनवरी को, दिल्ली की समग्र स्थिति पर चर्चा के लिए गांधीजी से मुलाकात के दौरान, माउंटबेटन ने सरकार के रुख पर अपनी चिंता व्यक्त की। गांधीजी ने माउंटबेटन से उनकी स्पष्ट और बेबाक राय

पूछी। माउंटबेटन ने जवाब दिया कि यदि पाकिस्तान द्वारा दावा की गई नकद राशि का भुगतान रोक दिया जाता है, तो यह भारतीय केंद्र सरकार का 'पहला अपमानजनक कार्य' होगा। इस बातचीत के बाद गांधीजी ने इसका जिक्र किया और यह भी कहा कि विभाजन पर सहमत होकर भारत ने पाप किया है। एक नैतिक प्रतिबद्धता, यानी समझौते का उल्लंघन करके, भारत अपने पाप को और बढ़ाएगा और उसके बाद उसका वचन अर्थहीन हो जाएगा। उन्होंने केंद्र सरकार के निर्णय की वैधता पर सवाल नहीं उठाया। उन्होंने सहमति व्यक्त की कि वे केंद्र सरकार पर कानून के सख्त प्रावधानों से परे जाने का दबाव नहीं डालेंगे। लेकिन उन्होंने उम्मीद जताई कि भारत अपने उस रिवाज का पालन करेगा कि वादा तोड़ने से पहले मर जाना ठीक नहीं है।

□□□□□□ 3

12

लाल किला मुकदमा

'अगर आखिरी क्षण में मेरे होंठ मेरे हमलावर के खिलाफ गुस्से या अपशब्दों का एक भी शब्द निकाल दें, तो मुझे धोखेबाज करार दिए जाने से कोई आपत्ति नहीं होगी।'
– MAHATMA GANDHI

30 जनवरी 1948 को शाम 5:17 बजे बिरला हाउस के लॉन में गांधीजी की हत्या होते ही, उनके हत्यारे नथुराम विनायक गोडसे को गिरफ्तार कर लिया गया। गांधीजी के साथ मौजूद एक व्यक्ति और हत्या के चश्मदीद गवाह नंदलाल मेहता ने तुगलक रोड पुलिस स्टेशन में हत्या की प्रथम सूचना (एफआईआर) दर्ज कराई। मूल एफआईआर हिंदुस्तानी भाषा में उर्दू लिपि में लिखी गई थी। इसका अनुवाद नीचे दिया गया है।
प्रथम सूचना रिपोर्ट (एफआईआर) और कार्रवाई रिपोर्ट (एक्शन टेकन रिपोर्ट)
महात्मा गांधी की हत्या: पुलिस स्टेशन: तुगलक
रोड, जिला नई दिल्ली
एफ.आई.आर. संख्या 68 (मूल उर्दू लिपि में, अंक 14 से पहले आते हैं)
हस्तलिखित संख्या 68)*
1. घटना की तिथि और स्थान (समय सहित): 30-1-1948; शाम 5.10 बजे (शाम 5.17 बजे)
2. रिपोर्ट किए जाने की तिथि और समय: 30-1-1948, शाम 9.45 बजे।
3. सूचनादाता एवं शिकायतकर्ता का नाम एवं पता: नंदलाल मेहता पुत्र।

नाथलाल मेहता, समुदाय: हिंदुस्तानी। पता: कनॉट सर्कस, लाला सरजू प्रसाद बिल्डिंग, एम ब्लॉक, नई दिल्ली।
4. अपराध का संक्षिप्त विवरण और यदि कोई संपत्ति ले जाई गई हो तो उसका विवरण: 302
आईपीसी.
5. अपराधी का नाम एवं पता: —
6. जांच के संबंध में उठाए गए कदम और देरी का स्पष्टीकरण रिकॉर्डिंग संबंधी जानकारी: कोई देरी नहीं हुई है। शिकायत संख्या 50, नोटबुक संख्या 1।
7. पुलिस स्टेशन से प्रेषण की तिथि और समय: विशेष निर्देश देखें प्रतिवेदन।
एएसआई डालू राम की पुत्री के हस्ताक्षर।
नंदलाल मेहता पुत्र का बयान. नाथलाल मेहता, कम्यूनिटी हिंदुस्तानी, निवासी कनॉट सर्कस, बिल्डिंग लाला सरजू प्रसाद, नई दिल्ली:
मैं आज बिरला हाउस में उपस्थित था। शाम लगभग 5 बजकर 10 मिनट पर गांधीजी उठे और बिरला हाउस स्थित अपने कमरे से प्रार्थना स्थल के लिए रवाना हुए। उनके साथ उनकी 'सहायक' श्रीमती आभाबेन गांधी और सुश्री मनुबेन गांधी भी थीं। महात्मा गांधी दोनों बहनों के कंधों पर हाथ रखकर उनके बीच चल रहे थे। श्री बृजकिशन चांदीवाला, जो संसद स्ट्रीट स्थित नरेंद्र पैलेस नंबर 1 के निवासी थे, और सरदार गुरबचन सिंह, जो दिल्ली के मीनारपुर के निवासी थे, उनसे कुछ कदम पीछे चल रहे थे। बिरला परिवार की कुछ महिलाएं और उनके दो-तीन कर्मचारी भी उनके साथ थे। बगीचे से गुजरने के बाद, गांधीजी प्रार्थना स्थल जाने के लिए पत्थर से बनी सीढ़ियों पर चढ़े। जैसे ही गांधीजी सीढ़ियां चढ़े, प्रार्थना स्थल पर

उपस्थित लोग खड़े हो गए और तीन फुट चौड़ा रास्ता बना दिया, जिससे गांधीजी गुजर सकें। गांधीजी ने हाथ जोड़कर अभिवादन किया और मंच की ओर उस रास्ते पर चलने लगे। प्रार्थना स्थल की ओर गांधीजी ने अभी मुश्किल से छह-सात कदम ही बढ़ाए थे कि भीड़ में से एक युवक निकला और उनका रास्ता रोक दिया। बाद में पता चला कि उस युवक का नाम नारायण (वास्तव में नाथूराम) विनायक गोडसे था, जो पुणे का निवासी था। युवक गांधीजी के पास पहुंचा और जब वे उनसे दो-तीन फीट की दूरी पर थे, तभी उसने पिस्तौल निकाली और गांधीजी पर लगातार तीन गोलियां चलाईं। गोलियां गांधीजी के पेट और सीने में लगीं, घावों से खून बहने लगा। गांधीजी "राम....राम....राम....राम" कहते हुए जमीन पर गिर पड़े। हमलावर को पिस्तौल समेत तुरंत पकड़ लिया गया। महात्मा गांधी को बेहोशी की हालत में उठाकर बिरला हाउस स्थित उनके कमरे में ले जाया गया। वहां पता चला कि गांधीजी का निधन हो चुका है। पुलिस हत्यारे को थाने ले गई। हस्ताक्षर: एन. एल. मेहता, 30-1-48
की गई कार्रवाई: गांधीजी की हत्या की खबर सुनते ही मैं तुरंत बिरला हाउस पहुंचा। महात्मा गांधी का पार्थिव शरीर बिरला हाउस के एक कमरे में रखा था। मैंने नंदलाल मेहता साहब से मुलाकात की, जिन्होंने प्रत्यक्षदर्शी बयान दिया था। उनके बयान का पाठ उन्हें पढ़कर सुनाया गया, और सही होने की पुष्टि करने के बाद उन्होंने उस पर हस्ताक्षर किए। मुझे उसकी एक प्रति दी गई; आरोपी के बारे में पूछताछ करने पर मुझे बताया गया कि एएसआई डालू राम उसे पुलिस स्टेशन ले गए हैं। चूंकि यह आईपीसी की धारा 302 का मामला था, इसलिए घटनास्थल की जांच की गई, साक्ष्य एकत्र किए गए, प्रत्यक्षदर्शियों के बयान दर्ज किए गए और यह सब विधिवत प्रक्रिया के तहत तुगलक रोड पुलिस स्टेशन में दर्ज किया गया।

पुलिस स्टेशन से संबंधित वरिष्ठ अधिकारियों को तत्काल एक विशेष रिपोर्ट भेजी जानी चाहिए। हस्ताक्षर।
इस प्रकार, सभी बयानों, जांच रिपोर्टों और रजिस्टरों में दर्ज प्रासंगिक प्रविष्टियों की प्रतियों वाली एक फाइल डीएसपी नई दिल्ली, जसवंत सिंह के कार्यालय को भेज दी गई है। विशेष रिपोर्ट 30-1-1948 को एएसआई डालू राम द्वारा संबंधित अधिकारियों को भेजी गई थी।
एसआई कुलदीप सिंह द्वारा लिखित
गांधी जी की हत्या के राजनीतिक नतीजों में केंद्रीय गृह मंत्री सरदार पटेल पर तीखे हमले हुए। उन पर आरोप था कि उनके अधीन काम करने वाला पुलिस विभाग गांधी जी की सुरक्षा करने में नाकाम रहा। कांग्रेस में नेहरू समर्थकों ने इसे भारत के लौह पुरुष सरदार पटेल पर हमला करने और उन्हें कमजोर करने का मौका समझा। ये हमले बेहद तीखे थे। इनका पटेल के राजनीतिक और शारीरिक स्वास्थ्य दोनों पर भयानक प्रभाव पड़ा। 6 फरवरी 1948 को गांधी जी की हत्या पर चर्चा के लिए संसद के विशेष सत्र में सवाल उठाए गए और गृह मंत्री को कड़ी आलोचना का सामना करना पड़ा। (निम्नलिखित अनुवाद, संसद की वास्तविक कार्यवाही के लेखक द्वारा हिंदी से किया गया है।)
बालकृष्ण शर्मा, सांसद: क्या यह सच है कि प्रार्थना सभाओं के दौरान एक पुलिस अधीक्षक को उपस्थित रहने के लिए नियुक्त किया गया था, लेकिन उस दुर्भाग्यपूर्ण दिन वह अनुपस्थित थे?
माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल: वहां बड़ी संख्या में सशस्त्र पुलिसकर्मी मौजूद थे। लेकिन मुझे इस बात की जानकारी नहीं है कि अधीक्षक उपस्थित थे या नहीं। मैं इस बात की पुष्टि नहीं कर सकता कि अधिकारी उपस्थित थे या नहीं। लेकिन मैं इसकी जांच करूंगा।

बीएस: बम विस्फोट वाले दिन मरीना होटल में तलाशी ली गई और वहां से कुछ कपड़े मिले जिन पर 'एन.वी.जी.' (नाथूराम विनायक गोडसे का) का लॉन्ड्री मार्क था। इस सूचना के आधार पर पुलिस मुंबई गई और मुंबई पुलिस से उस व्यक्ति को ढूंढने का अनुरोध किया। मुंबई पुलिस ने पुलिसकर्मियों को यह कहकर वापस भेज दिया कि वे मामले की जांच करेंगे। क्या यह सच है कि मुंबई पुलिस नाथूराम विनायक गोडसे को ढूंढकर गिरफ्तार करने में असफल रही?
एसवीपी: जांच के अधीन मामलों पर बात करना या उनका खुलासा करना कठिन और अनुचित है। मैं केवल इतना कह सकता हूं कि बम विस्फोट करने वाले पहले व्यक्ति की गिरफ्तारी और पूछताछ के बाद, दिल्ली से एक अधिकारी को तुरंत मुंबई भेजा गया ताकि वहां की सीआईडी से संपर्क किया जा सके। विचार-विमर्श के बाद यह तय किया गया कि कुछ लोगों को गिरफ्तार किया जाना चाहिए; लेकिन यह महसूस किया गया कि तत्काल गिरफ्तारी अनुचित होगी, इससे साजिश में शामिल अन्य लोग सतर्क हो जाएंगे, वे फरार हो जाएंगे या इससे भी बदतर, भूमिगत हो जाएंगे और अपनी नापाक गतिविधियों को जारी रखेंगे। इसलिए विचार-विमर्श के बाद मुंबई पुलिस और दिल्ली सीआईडी ने फैसला किया कि मामले की गोपनीय रूप से जांच की जाए और गिरफ्तारी से पहले पूरी साजिश और उसमें शामिल सभी लोगों का पर्दाफाश किया जाए। यह सच है कि पुलिस इन लोगों की तलाश में थी, लेकिन उनमें से सभी मुंबई में नहीं थे।
बीएस: यदि यह जानकारी चल रही जांच को प्रभावित नहीं करती है, तो क्या मैं पूछ सकता हूं कि क्या यह सच है कि नाथूराम गोडसे विमान से दिल्ली वापस आया था?
एसवीपी: मुझे लगता है कि जिस मामले की वर्तमान में जांच चल रही है, उसके बारे में विवरण प्रकट करना अनुचित है।

देशबंधु गुप्ता, सांसद: यदि यह सच है कि पहले गिरफ्तार किए गए व्यक्ति ने हत्यारे का नाम कबूल किया था, तो क्या दिल्ली सीआईडी के लिए बॉम्बे से उसकी तस्वीर प्राप्त करना संभव नहीं था? फिर प्रार्थना सभा में व्यवस्थाओं की देखरेख कर रहे लोगों के बीच तस्वीर की प्रतियां वितरित की जा सकती थीं और वे हत्या को रोकने के लिए समय रहते हत्यारे को पकड़ सकते थे?
एसवीपी: सूचना मिलने के बाद दिल्ली पुलिस ने इन लोगों का पता लगाने की कोशिश की। लेकिन सभी आरोपी एक जगह पर नहीं थे और उनकी तस्वीरें लेना संभव नहीं था।
सांसद एल. कृष्णस्वामी भारती: क्या यह सच है कि बॉम्बे पुलिस ने इस सरकार को सूचित किया था कि साजिश में शामिल एक 'अपराधी' बॉम्बे से आ रहा था?
एसवीपी: यह सच नहीं है।
सांसद एच.बी. कामथ: क्या सरकार इस बात से अवगत है कि हम पर आई विपत्ति के बाद, कुछ स्वार्थी तत्व और लोग सारा दोष माननीय गृह मंत्री पर मढ़ रहे हैं और इस प्रकार मंत्रिमंडल में फूट डालने और लोगों के मन में संदेह पैदा करने की कोशिश कर रहे हैं? वक्ता: चुप रहो। दूसरा प्रश्न।
सांसद रोहिणी कुमार चौधरी: क्या मैं पूछ सकती हूं कि क्या पुलिस उन लोगों की सुविधा का ध्यान रखती है जिनकी सुरक्षा का जिम्मा उन्हें सौंपा गया है? सच्चाई यह है कि सुरक्षा के मामले में न तो राज्यपाल की सुविधा का ध्यान रखा जाता है और न ही राज्यपाल-महानिदेशक की।
एसवीपी: जहां तक मौजूदा मामले से संबंधित मुद्दे का सवाल है, संबंधित व्यक्ति एक अलग श्रेणी का था और उसके मामले में पुलिस के लिए उसकी सलाह लिए बिना कार्रवाई करना असंभव था।

आरकेसी: लेकिन इस घटना के मद्देनजर क्या माननीय मंत्री यह सुनिश्चित करेंगे और ऐसी प्रक्रियाएं लागू करेंगे जिससे सुरक्षा व्यवस्था के मामले में पुलिस ही पूरी तरह से जिम्मेदार हो?
वक्ता: शांत रहो, मौन रहो। सदस्य, आपने बहस शुरू कर दी है। आरकेसी: मेरा सुझाव केवल यह है कि भविष्य में सभी सुरक्षा संबंधी निर्णय बिना किसी हस्तक्षेप के पुलिस के विवेक और क्षमता पर छोड़ दिए जाने चाहिए।
वक्ता: यह स्पष्ट है कि यह काफी हद तक संबंधित व्यक्ति पर निर्भर करेगा।
बीएस: माननीय गृह मंत्री ने स्वयं सदन को सूचित किया है कि हमारे मंत्रियों की सुरक्षा के मामले में उनकी चिंताओं और इच्छाओं को ध्यान में रखा जाता है। मैं निवेदन करना चाहूंगा कि हमारे कुछ मंत्री ऐसे हैं जिनकी सहमति और इच्छाओं पर विचार नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि...
वक्ता: यह न तो कोई प्रश्न है और न ही सत्य तक पहुँचने का प्रयास, आप तो बहस कर रहे हैं।
आरकेसी: महोदय, क्या मैं पूछ सकता हूँ कि रघु माली हत्यारे को पकड़ने वाले पहले व्यक्ति कैसे बने? उन्होंने हत्यारे से हाथापाई की और उसे नीचे गिरा दिया। पुलिस मौके पर कुछ देर बाद पहुँची। उस समय पुलिस कहाँ थी?
एसवीपी: मैं यह नहीं कह सकता कि पुलिस पहले पहुंची या माली। ये सभी निराधार समाचार पत्र रिपोर्ट हैं।
★
हत्या के बाद पूरे केंद्र शासित प्रदेश में बड़े पैमाने पर गिरफ्तारियां हुईं। मीडिया ने कई अलग-अलग बातें प्रकाशित कीं,

जिससे भ्रम और बढ़ गया। इसके चलते कथित तौर पर संलिप्त लोगों के खिलाफ कई प्रतिशोधात्मक कार्रवाईयां हुईं और एक विस्फोटक स्थिति उत्पन्न हो गई। इसने कई प्रांतीय सरकारों को हत्या की जांच से संबंधित किसी भी समाचार के प्रकाशन पर प्रतिबंध लगाने के लिए मजबूर कर दिया। हत्या का बदला लेने की आड़ में, गिरोहों ने बंबई राज्य और कोल्हापुर रियासत में कुछ ब्राह्मणों के साथ तोड़फोड़ की और उनकी हत्या कर दी। पटेल ने जनता से अपील की: 'इस त्रासदी की घड़ी में यदि हम प्रतिशोध और जवाबी हिंसा की भावना में बह जाते हैं तो हम गांधीजी के योग्य नहीं होंगे। मैं जनता को आश्वस्त करता हूं कि सरकार ऐसी गतिविधियों में लिप्त लोगों के खिलाफ कड़ी कार्रवाई करेगी... यह जनता के लिए उचित है कि वे जांच की जिम्मेदारी सरकार पर छोड़ दें... मैं सभी लोगों से शांत रहने और दृढ़ रहने तथा जल्द से जल्द अपने काम और पेशे पर लौटने की अपील करता हूं। उन्हें कानून को अपना कर्तव्य निभाने देना चाहिए और जवाबी हिंसा नहीं करनी चाहिए।'
अभियुक्तों का मुकदमा दिल्ली के लाल किले में आयोजित होने वाला तीसरा मुकदमा था। लाल किला सत्रहवीं शताब्दी में यमुना नदी के किनारे मुगल सम्राटों द्वारा निर्मित किया गया था। किले से कुछ सौ गज की दूरी पर राजघाट में गांधीजी के पार्थिव शरीर का अंतिम संस्कार किया गया था। जिस भवन में अदालत की सुनवाई होनी थी, उसे अंग्रेजों ने अपने सैनिकों के रहने के लिए बनवाया था। किले की एक समीपवर्ती बैरक में दो साल पहले भारतीय राष्ट्रीय सेना के अधिकारियों का मुकदमा चलाया गया था। पहला मुकदमा 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के बाद अंतिम मुगल सम्राट, कवि बहादुर शाह 'जफर' का था।

हत्या को दो महीने बीत चुके थे और चारों ओर अटकलें लगाई जा रही थीं। आखिरकार, अप्रैल 1948 के दूसरे सप्ताह में खबर आई कि कानपुर के जिला एवं परिपथ न्यायाधीश, आत्मचरण आईसीएस, इस मामले की सुनवाई करेंगे। दिल्ली से अपुष्ट खबरें आ रही थीं कि सुनवाई मई में शुरू होगी और एक विशेष अदालत में चलेगी। चूंकि सरकार की ओर से इन अटकलों की कोई पुष्टि नहीं हुई थी, इसलिए अफवाहें तेजी से फैल रही थीं। हिंदू उग्रवादी गुट को उम्मीद थी कि मुकदमा जल्द शुरू नहीं होगा। उन्हें बचाव रणनीति बनाने के लिए समय चाहिए था। लेकिन जैसे ही जल्द सुनवाई की संभावना मजबूत होने लगी, उन्होंने एक 'रक्षा कोष' की स्थापना की, जिसका उद्देश्य आरोपियों के लिए सर्वश्रेष्ठ बचाव दल नियुक्त करने और उनके आश्रितों की वित्तीय जरूरतों को पूरा करना था। हिंदू महासभा और आरएसएस के सभी सदस्यों ने अपने समर्थकों और शुभचिंतकों से चंदा इकट्ठा किया। इस गतिविधि में बंगाल हिंदू महासभा ने अग्रणी भूमिका निभाई।
8 मई 1948 को सरकार ने बॉम्बे लोक सुरक्षा उपाय अधिनियम, 1947 की धारा 10 और 11 के तहत दिल्ली प्रांत में विस्तारित अधिसूचना संख्या 54/1/48—राजनीतिक, भारत सरकार, गृह मंत्रालय, दिनांक 4 मई 1948 प्रकाशित की और अधिसूचना संख्या 54/1/48—राजनीतिक, भारत सरकार, गृह मंत्रालय, दिनांक 13 मई 1948 के तहत मामले को न्यायालय को सुनवाई के लिए सौंप दिया गया। लाल किले के एक विशेष रूप से नामित क्षेत्र में स्थित एक इमारत को अधिसूचना संख्या 54/6/48—राजनीतिक, भारत सरकार, गृह मंत्रालय, दिनांक 15 मई 1948 के तहत कारागार घोषित किया गया।
मुकदमे में देरी इसलिए हुई क्योंकि अभियोजन पक्ष यह तय नहीं कर पा रहा था कि सावरकर पर गोडसे और अन्य आरोपियों के साथ मुकदमा

चलाया जाए या अलग-अलग। अंततः, सभी आरोपियों पर एक साथ मुकदमा चलाया गया। त्वरित सुनवाई की सुविधा के लिए बॉम्बे लोक सुरक्षा उपाय अधिनियम, 1947 की धारा 10 और 11 को दिल्ली प्रांतों में भी लागू करने का निर्णय लिया गया। इससे पीठासीन न्यायाधीश को गवाहों के विस्तृत बयान दर्ज करने और इसी तरह की समय लेने वाली प्रक्रियाओं से छूट मिल गई। हालांकि, इस निर्णय की काफी आलोचना हुई क्योंकि कुछ लोगों का मानना था कि एक से अधिक न्यायाधीशों वाली 'संविधान पीठ' अधिक उपयुक्त होती। 15 मई 1948 को भारत सरकार ने एक विशेष राजपत्र प्रकाशित किया और घोषणा की कि गांधी हत्याकांड के नौ आरोपियों पर भारत सरकार की ओर से भारतीय दंड संहिता की धारा 109, 114, 115, 120B और 302 के तहत मुकदमा चलाया जाएगा। विस्फोटक पदार्थ अधिनियम, 1908 की धारा 3, 4, 5 और 6 तथा शस्त्र अधिनियम, 1878 की धारा 19(डी) और 19(एफ) के तहत।
जिन नौ आरोपियों पर मुकदमा चलाया जाना था, वे थे:
1) नाथूराम विनायक गोडसे: हिंदू, 37, संपादक, हिंदू राष्ट्र, शनिवार
पेठ, पुणे।
2) Narayan Dattatreya Apte: Hindu, 34, Director, H.R. Prakashan Ltd.,
22, Budhwar Peth, Poona.
3) विष्णु रामकृष्ण करकरे: हिंदू, 37, मालिक, एल.एंडबी. घर, Pardeshi Aali, Ahmednagar.
4) दिगंबर रामचंद्र बैज (अनुमोदक): हिंदू, 39 वर्ष, मालिक, Shastra Bhandar, 300, Narayan Peth, Poona.
5) मदनलाल कश्मीरीलाल पाहवा: हिंदू, 20, (पंजाबी शरणार्थी), विसापुर

शरणार्थी शिविर, अहमदनगर।
6) शंकर किस्तय्या: हिंदू, 20, घरेलू नौकर (येल्लम्मा पेठ, Sholapur) 300, Narayan Peth, Poona.
7) गोपाल विनायक गोडसे: हिंदू, 27 वर्ष, स्टोरकीपर, एम.टी.एस.एस. डिपो,
किरकी, पुणे।
8) Vinayak Damodar Savarkar: Hindu, 65, Landlord, Savarkar Sadan,
शिवाजी पार्क रोड, मुंबई।
9) दत्तात्रेय सदाशिव परचुरे: हिंदू, 40, मेडिकल प्रैक्टिशनर, स्टेशन रोड, ग्वालियर।
गुजरात के तीन और आरोपियों को फरार घोषित किया गया है:
10) Gangadhar Sakharam Dandavate
11) Gangadhar Jadhav
12) Suryadev Sharma and others.
आरोप पत्र
आठ आरोपियों के खिलाफ निम्नलिखित अलग-अलग श्रेणियों के आरोप तय किए गए:
a) नाथूराम विनायक गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु रामकृष्ण करकरे, मदनलाल के. पाहवा, शंकर किस्तय्या, गोपाल वी गोडसे, विनायक दामोदर सावरकर और दत्तात्रेय एस. परचुरे पर आरोप लगाए गए।
भारतीय दंड संहिता की धारा 120 (षड्यंत्र) के तहत धारा 302 के साथ पढ़ा जाए। 9
हत्या)।
b) नाथूराम वी. गोडसे, नारायण आप्टे, करकरे, मदनलाल, शंकर

□□□□□□□□□□ □□ □□□□□ □□□□□ □□ □□□□ 19(□□) □□ □□□ □□ □□□□ □□□□ □□ □□□
□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 19(□□) □□ □□□□ □□ □□□ □□□□ □□□
□□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 109 □□ 114, □□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 19(□□) □□ □□□□ 19(□□)
□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□, □□□□ 114 □□□□□□ □□□ □□□□□□, 4(□□), □□□□□□□□ □□ □□□ □□□□ □□□
□□□□□□ □□□□□□□, □□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 6 □□ □□□ □□□□ □□□; □□□□ 5 □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□; □□ □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 5
□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 6 □□ □□□ □□□□ □□□□
□) □□□□□□ □□ □□□□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 3 □□ □□□ □□□ □□ □□□□ □□□□ □□□ □□□
Substances Act. Nathuram Godse, Apte, Karkare, Shankar Kistayya and
□□□□ □□□□ □□ □□□□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 3 □□ □□□ □□ □□□□ □□□□ □□ □□□
□□□□□□ □□□□□□□, □□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 6 □□ □□□ □□□□□□ d) □□□□□□□ □□□□□, □□□□□, □□□□□, □□□□□□, □□□□ □□□□□□□□, □□□□□ □□□□ □□ □□.□□. □□□□□□ □□ □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 115 □□ □□□ □□ □□□□ □□□□ □□ □□□
□□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 302 □□ □□□ □□□□ □□□□
□) □□□□□□ □□□□□ □□ □□□□□ □□ □□□□ 19(□□) □□ □□□ □□ □□□□ □□□□ □□ □□□
□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□□

g) [illegible], [illegible] or [illegible] [illegible] or [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible]
[illegible] [illegible] [illegible] or [illegible] 19(or) or [illegible], [illegible] 114 [illegible]
[illegible] [illegible] or [illegible] [illegible] [illegible] (or) [illegible] [illegible] or [illegible] 19(or)
or [illegible] [illegible] or [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible] [illegible] [illegible]
h) [illegible] or [illegible] or [illegible] [illegible] [illegible] or [illegible] 19(or) or
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]
[illegible], [illegible] 114 [illegible] [illegible] [illegible] or [illegible] [illegible] [illegible]
i) [illegible] or [illegible] or [illegible] or [illegible] or [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] or [illegible]
302 or [illegible] or [illegible] [illegible] or [illegible]
[illegible] or [illegible]
or) [illegible] or [illegible] or [illegible] [illegible] [illegible] or [illegible] 302 or [illegible] or
[illegible] [illegible] or [illegible]
([illegible]), [illegible] 114 [illegible] [illegible] [illegible] ([illegible] [illegible] [illegible])
or [illegible] [illegible] [illegible] k) [illegible], [illegible] [illegible], [illegible] [illegible],
[illegible] [illegible] or
[illegible] [illegible] or or [illegible] [illegible] or [illegible] 302 or [illegible]
[illegible] [illegible] or [illegible]
[illegible] [illegible] or [illegible] 109 or [illegible]
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] or [illegible], [illegible] or
[illegible] [illegible] or [illegible] or [illegible] [illegible] [illegible] or [illegible] [illegible]
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] or [illegible] [illegible].or.
[illegible] or [illegible] [illegible] or [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] or
[illegible] [illegible] [illegible] or [illegible] or [illegible] [illegible] or [illegible] [illegible] or
or or [illegible] or [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

मित्र के अनुरोध को ठुकरा नहीं सके और सावरकर के लिए व्यक्तिगत रूप से पेश होने के लिए सहमत हो गए। बचाव पक्ष के सबसे वरिष्ठ अधिवक्ता होने के नाते, उन्हें विभिन्न आरोपियों का बचाव करने वाले अधिवक्ताओं की टीम का नेतृत्व करने के लिए चुना गया। महाराष्ट्र क्षेत्रीय हिंदू महासभा की कार्यकारी समिति ने एक कानूनी सहायता समिति का गठन किया और एक कानूनी सहायता कोष स्थापित किया। बचाव समिति की अध्यक्षता भोपटकर ने की, जिसमें रामभाऊ मंडलिक संयोजक और जी.वी. केतकर कोषाध्यक्ष थे। समिति ने 2 मई 1948 को कार्य शुरू किया। 6 जून को इसकी पुणे में एक बार फिर बैठक हुई और बारह सदस्यों वाली एक अखिल भारतीय बचाव समिति का गठन किया गया। समिति ने डॉ. जयकर से सावरकर का बचाव करने का अनुरोध किया, लेकिन उन्होंने इनकार कर दिया। रक्षा समिति ने बॉम्बे की प्रांतीय सरकार से अधिवक्ता वासुदेव बलवंत गोगेट को क्षमादान या पैरोल देने की अपील की, जिन्हें करकरे के अनुरोध पर येरवदा जेल में कैद किया गया था। प्रांतीय सरकार ने यह अनुरोध ठुकरा दिया।
रक्षा समिति ने दो उप-समितियों का गठन किया जिन्हें बचाव पक्ष के वकीलों की परिवहन और आवास संबंधी आवश्यकताओं की व्यवस्था करने का कार्य सौंपा गया था। इन उप-समितियों में चालीसगांव के जोगलेकर, बाबराव काले और बरसी के वी.के. महेंद्रले सदस्य थे। अखिल भारतीय रक्षा समिति के सदस्यों की सूची निम्नलिखित है: 1) एल.बी. भोपटकर, अध्यक्ष
2) लाला नारायण दत्त, कोषाध्यक्ष, 13 बाराखंभा रोड, नई दिल्ली 3) जी.वी. केतकर (तिलक के पोते), कोषाध्यक्ष, केसरी कार्यालय, पूना
4) रामभाऊ मंडलिक, संयोजक
5) जमुनादासा मेहता

6) Devendrakumar Mukherjee
7) Captain Keshavchandra
8) पंचनाथन
9) गणपति अय्यर
10) Lakshmishankar Verma
11) डॉ. एल.बी. परंजपे, नागपुर
12) आर.ए. कनितकर, बुलढाणा
मुकदमे की तैयारियां पूरी लगन से शुरू हो गईं। ऐतिहासिक लाल किला एक बार फिर पूरी दुनिया की निगाहों का केंद्र बन गया। एक दो मंजिला पत्थर की इमारत की ऊपरी मंजिल पर सौ फीट लंबा और तेईस फीट चौड़ा एक कमरा विशेष अदालत के लिए चुना गया। यह इमारत पहले ब्रिटिश सैन्य पुलिस का मुख्य शिविर हुआ करती थी। इमारत के चारों ओर आठ फीट ऊंची कांटेदार तार की बाड़ लगाई गई। इमारत में प्रवेश और निकास के लिए दो द्वार बनाए गए थे, जिन पर सुरक्षाकर्मी तैनात थे। आरोपियों को रखने के लिए पास में ही बैरकें बनाई गईं। दिल्ली केंद्रीय जेल से मजबूत लोहे के दरवाजे और खिड़कियों की ग्रिल मंगवाकर कोठरियों के दरवाजों और खिड़कियों में लगाई गईं। एक ऊंचा लकड़ी का चबूतरा न्यायाधीश और अदालत के रिपोर्टर के बैठने की जगह थी। कमरे के दाहिनी ओर तीन लकड़ी की बेंचें आरोपियों के लिए कटघरे का काम करती थीं। गवाहों के लिए चबूतरा बाईं ओर था। कार्यवाही देखने के इच्छुक प्रेस पत्रकारों और विशेष पास धारकों के लिए कमरे में दो सौ कुर्सियां लगाई गईं। अदालत कक्ष के दोनों ओर गलियारों में बने कमरों में कक्ष उपलब्ध कराए गए। यहां जज का कक्ष, कोर्ट रिपोर्टर का कमरा, बचाव पक्ष और अभियोजन पक्ष के वकीलों के

कक्ष, पुलिस अधिकारी का कमरा और एक कैंटीन स्थित थे। प्रेस रूम में दो टेलीफोन लगे हुए थे।
भूतल पर एक बड़ा हॉल बॉम्बे पुलिस के लिए आरक्षित था। इसके बगल में महिला गवाहों के लिए कमरा था। बॉम्बे राज्य के महाधिवक्ता और उनके सहायकों को एक सटा हुआ कमरा दिया गया था। अन्य सभी पुलिसकर्मियों और गवाहों को बगल वाले विंग के एक कमरे में ठहराया गया था। न्यायालय के रजिस्ट्रार ने 19 मई को एक अधिसूचना जारी की, जिसमें कहा गया था कि केवल वैध प्रवेश पास धारकों को ही न्यायालय परिसर में प्रवेश की अनुमति दी जाएगी। 24 मई को गोडसे, सावरकर और अन्य आरोपियों को बॉम्बे पुलिस के एक बड़े दल के साथ अलग-अलग विमानों से बॉम्बे से दिल्ली लाया गया। उन्हें हवाई अड्डे से सीधे लाल किले में स्थित उनकी कोठरियों में ले जाया गया, जिसे मुकदमे की अवधि के दौरान अधिकतम सुरक्षा वाली जेल में बदल दिया गया था।
बॉम्बे लोक सुरक्षा उपाय अधिनियम, 1947, जिसे 'गुंडा अधिनियम' के नाम से भी जाना जाता है, और इसके कुछ विशेष न्यायालयों से संबंधित अनुभागों को त्वरित सुनवाई सुनिश्चित करने के लिए दिल्ली में भी लागू किया गया था। यह अधिनियम 1947 में बॉम्बे प्रांत में हुए सांप्रदायिक दंगों के आरोपियों की त्वरित सुनवाई सुनिश्चित करने के लिए बनाया गया था। इस अधिनियम का पांचवा भाग विशेष न्यायालयों के गठन के नियमों से संबंधित है। इसमें निम्नलिखित अनुभाग शामिल हैं:
धारा 10: सरकार, सरकारी राजपत्र में विधिवत अधिसूचना प्रकाशित करने के बाद संघ के किसी भी भाग में विशेष न्यायालय की स्थापना कर सकती है।

धारा 11: सरकार किसी भी उच्च न्यायालय या किसी भी परिपथ न्यायालय के न्यायाधीश को, जिसके पास कम से कम दो वर्ष का अनुभव हो, ऐसे न्यायालय का प्रमुख नियुक्त कर सकती है।
धारा 12: विशेष आदेश जारी करके सरकार ऐसे विशेष न्यायालयों के पीठासीन न्यायाधीश से विशेष परीक्षण करने के लिए कह सकती है। धारा 13-1-2: यदि निचली अदालतों द्वारा मामला परिपथ न्यायालय को नहीं भेजा गया है, तब भी विशेष न्यायालय उसे सौंपे गए मामलों पर विचार कर सकता है। न्यायालय को गवाहों के बयानों के केवल प्रासंगिक अंशों को ही नोट करने की अनुमति है। यदि आरोपी से परामर्श करने के बाद न्यायालय यह निर्णय लेता है कि किसी गवाह को गवाही देने की आवश्यकता नहीं है, तो वह ऐसे गवाह को बुलाने से इनकार कर सकता है। यदि पीठासीन न्यायाधीश को लगता है कि न्याय प्रदान करने के लिए यह आवश्यक नहीं है, तो वह किसी अन्य कारण से भी मामले की कार्यवाही स्थगित करने से इनकार कर सकता है।
धारा 14: इन दो उपधाराओं और धारा 10 से 20 के अंतर्गत आने वाली धाराओं के अतिरिक्त, अन्य सभी दंड संहिताएं जो इनके विपरीत न हों, विशेष न्यायालय पर लागू होंगी। न्यायालय को परिपथ न्यायालय के रूप में मान्यता प्राप्त होगी। यदि पीठासीन न्यायाधीश चाहें, तो किसी भी गवाह का बयान एकल सदस्यीय आयोग द्वारा दर्ज किया जाएगा।
धारा 15: हत्या के प्रयास के आरोपी किसी भी व्यक्ति को फांसी की सजा दी जा सकती है और चाकू मारकर हत्या करने के आरोपी को फांसी की सजा या आजीवन कारावास की सजा दी जा सकती है।
धारा 17: विशेष न्यायाधीश को कानून द्वारा निर्धारित कोई भी दंड देने का अधिकार है। जुर्माना लगाए जाने की स्थिति में न्यायालय जुर्माने की राशि जुटाने के लिए आरोपी की सभी चल और

अचल संपत्तियों को जब्त करने, ज़ब्त करने और बेचने के लिए वारंट जारी कर सकता है।
धारा 18: विशेष न्यायालय द्वारा सजा सुनाए गए व्यक्ति को पंद्रह दिनों के भीतर उच्च न्यायालय में अपील करने का अधिकार है। ऐसी अपीलों पर विचार करते समय उच्च न्यायालय मुकदमे से संबंधित सभी दस्तावेज मांग सकता है और उसे अन्य अपील न्यायालयों के समान विशेषाधिकार प्राप्त होंगे, लेकिन किसी भी न्यायालय को इस विशेष न्यायालय से किसी अन्य सर्किट न्यायालय में मामला स्थानांतरित करने या इस विशेष न्यायालय के कामकाज को प्रभावित करने वाले आदेश पारित करने का अधिकार नहीं होगा। कोई भी न्यायालय इस विशेष न्यायालय के कामकाज में किसी भी प्रकार से हस्तक्षेप नहीं कर सकेगा।
धारा 20: इस विशेष न्यायालय के समक्ष मामले के लिए कोई जूरी या मूल्यांकनकर्ता नियुक्त नहीं किया जाएगा।
एक अध्यादेश पारित करके सरकार ने बॉम्बे लोक सुरक्षा उपाय अधिनियम में कुछ संशोधन किए। इस संशोधन के तहत विशेष न्यायालय में मुकदमे की सुनवाई कर रहे विशेष न्यायाधीश को यह अधिकार दिया गया कि वे मामले से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े किसी भी व्यक्ति को सशर्त क्षमादान दे सकते हैं और उनके बयान दर्ज कर सकते हैं। शर्त यह थी कि वह व्यक्ति साजिश और उसमें शामिल लोगों के बारे में अपने सभी ज्ञान को स्वीकार करे।
पहली तीन प्रारंभिक सुनवाई
अंततः, गांधी की हत्या के चार महीने बाद, बहुप्रतीक्षित मुकदमे की कानूनी कार्यवाही 27 मई को शुरू हुई। 27 मई, 3 जून और 14 जून 1948 को हुई पहली तीन सुनवाईयों में प्रारंभिक प्रक्रियाओं पर विचार किया गया।

पहले दिन की कार्यवाही में उस तरह का माहौल, सम्मान, मर्यादा और महत्व नहीं झलक रहा था जिसकी उम्मीद इतने चर्चित मामले में की जाती है। दर्शकों और प्रेस की सुविधा के लिए अदालत में लगाया गया लाउडस्पीकर सिस्टम इतना खराब था कि पहले दिन पत्रकार सिर्फ दर्शक बनकर रह गए; न तो जज और न ही वकीलों की कोई बात सुनाई दे रही थी। कार्यवाही बेहद अनौपचारिक तरीके से चल रही थी। एक समय तो दोनों पक्षों के दस-बारह वकील जज आत्मचरण के चारों ओर जमा हो गए और एक साथ बोलने लगे। चूंकि अदालत कक्ष लंबा था, चौबीस फीट चौड़ा और सौ फीट लंबा, इसलिए यह किसी गलियारे जैसा लग रहा था। अदालत के बिल्कुल आखिरी छोर पर बैठे लोगों के लिए कार्यवाही को समझना नामुमकिन हो गया था।
एक अनुरोध पर, न्यायाधीश आत्मचरण ने फोटोग्राफरों को अदालत के साथ-साथ आरोपियों की तस्वीरें लेने की अनुमति दी। कार्यवाही के दौरान इस्तेमाल किए गए एक मूवी कैमरे में कुछ आरोपी आपस में बातचीत करते और मुस्कुराते हुए दिखाई दे रहे हैं, वहीं सावरकर बेहद तनावग्रस्त, उदास और कमजोर दिख रहे हैं, और हत्यारा नाथूराम गोडसे गंभीर भावों के साथ नजर आ रहा है। आप्टे और अन्य लोग फोटोग्राफरों के लिए खुशी-खुशी पोज दे रहे थे। पहले दिन की तस्वीरें पूरे भारत और विदेशों में व्यापक रूप से प्रकाशित हुईं। आरोपियों की तस्वीरें लेना और उन्हें प्रेस में प्रकाशित करना पहचान की कार्यवाही को खतरे में डाल सकता था, लेकिन इसकी किसी को परवाह नहीं थी।
पानी परोसने वालों की लगातार आवाजाही ने अव्यवस्था को और बढ़ा दिया। सिर पर मिट्टी के घड़े और हाथों में धातु के गिलास लिए, वे लगातार अदालत में घूमते हुए प्यासे लोगों को पानी पिला रहे थे। मई की गर्मी भी सुनवाई के दौरान माहौल को और गरमा रही थी। लेकिन

ऐसा प्रतीत नहीं हो रहा था कि इस मुकदमे ने भारत की जनता की जिज्ञासा को जगाया हो, जो कुछ ही महीने पहले गांधीजी के अंतिम संस्कार में लाखों की संख्या में उमड़ी थी। पहले दिन, लगभग सौ पत्रकारों को छोड़कर, अदालत में आम जनता का कोई भी सदस्य मौजूद नहीं था। न कोई आम आदमी, न कोई वीआईपी, न गांधीजी का कोई 'राजनीतिक उत्तराधिकारी', न ही कोई 'गांधीवादी' कार्यवाही में दिलचस्पी लेता हुआ प्रतीत हुआ। लाल किले के आसपास का इलाका भी सुनसान था, सिवाय 250-300 वर्दीधारी और सादे कपड़ों वाले पुलिसकर्मियों द्वारा प्रवेश और निकास द्वारों के चारों ओर लगाए गए घेरे के।
पहले दिन अदालत की कार्यवाही केवल दो घंटे चली, सुबह 10 बजे से दोपहर 12 बजे तक। आरोपियों को सुबह 9 बजे बैरक में लाया गया, जहां अदालत कक्ष स्थित है, और कार्यवाही शुरू होने से दस मिनट पहले, सुबह 9:50 बजे अदालत कक्ष में लाया गया। किसी भी आरोपी को हथकड़ी या बेड़ी नहीं पहनाई गई थी। सबसे पहले नथुराम कटघरे में दाखिल हुए। पायजामा और लंबी बाजू की कमीज पहने नथुराम पहली पंक्ति में बीच में बैठे। आप्टे और करकरे उनके दोनों ओर सामने वाली बेंच पर बैठे; करकरे रेशमी कमीज और धोती पहने हुए थे। आप्टे और गोपाल गोडसे नथुराम की तरह ही कपड़े पहने हुए थे। सावरकर, किस्तय्या और परचुरे ने काली टोपी पहनी हुई थी, जो महाराष्ट्र के ब्राह्मणों का पारंपरिक सिर का पहनावा है और हिंदू महासभा (आरएसएस) की वर्दी का भी हिस्सा है। बैज, गोपाल गोडसे और मदनलाल पाहवा उनके बाद दाखिल हुए और दूसरी पंक्ति में बेंच पर बैठे। आखिरी पंक्ति में किस्तय्या, सावरकर और परचुरे बैठे थे; यह एक संयोग था, लेकिन मुकदमे के पहले दिन आखिरी पंक्ति में बैठे सभी लोग बरी हो गए।

भोपटकर ने अदालत को बताया कि सावरकर कमज़ोर हैं और उनकी सेहत ठीक नहीं है, इसलिए उन्होंने अपने मुवक्किल के लिए एक आरामदायक, गद्देदार कुर्सी उपलब्ध कराने का अनुरोध किया। अदालत ने तुरंत एक कुर्सी मंगवाने का आदेश दिया। सावरकर सुनवाई के दौरान कटघरे के बाहर इसी कुर्सी पर बैठे रहे। इससे वे अन्य आरोपियों से अलग-थलग हो गए। सावरकर के बचाव में भोपटकर की रणनीति यह थी कि उन्हें अन्य आरोपियों से अलग किया जाए और हर संभव तरीके से यह साबित किया जाए कि सावरकर हत्या या साजिश में किसी भी तरह से शामिल नहीं थे।
फोटो सेशन के बाद, अभियोजन पक्ष के वकील दफ्तरी ने पुलिस द्वारा सभी आरोपियों के खिलाफ दायर आरोपपत्र पढ़कर सुनाया। आरोपों में हत्या, हत्या का प्रयास, हत्या की साजिश, हत्या में सहायता, अवैध हथियार रखना और विस्फोटक रखना एवं परिवहन करना आदि शामिल थे। इसके बाद अदालत ने आरोपियों से पूछा कि क्या उनके बचाव के लिए पर्याप्त व्यवस्था की गई है। आरोपियों को इच्छा होने पर सरकारी सहायता की पेशकश की गई। गोडसे और छह अन्य आरोपियों ने अदालत को बताया कि वे भोपटकर की मदद से अपना बचाव स्वयं करेंगे। मदनलाल और बैज ने अदालत को बताया कि उन्हें वकील की सेवाओं की आवश्यकता नहीं होगी। शुरुआत में, किस्तय्या ने सरकार से अपने बचाव की व्यवस्था करने का अनुरोध किया था। लेकिन कुछ समय तक हिचकिचाने और विचार-विमर्श करने के बाद उन्होंने भी अदालत को बताया कि वे भोपटकर के माध्यम से अपना बचाव स्वयं करेंगे, लेकिन वे अपना विचार बदल सकते हैं।
सावरकर और नाथूराम को छोड़कर बाकी सभी लोग मुस्कुराते और आपस में मजाक करते नजर आए। गंभीर मुद्रा में बैठे सावरकर कार्यवाही को ध्यान से सुन रहे थे। नाथूराम ने किसी भी आरोपी से कोई

बातचीत नहीं की। वरिष्ठ पत्रकार डॉ. कृष्णलाल श्रीधरानी, जो उस दिन अदालत में मौजूद थे, ने दोनों का वर्णन इस प्रकार किया: 'नाथूराम गोडसे इस नाटक का मुख्य पात्र है। वह दुबला-पतला है और उसका व्यवहार बेहद गंभीर और संजीदा है। उसने धोती और कुर्ता पहना हुआ था। वह तरोताजा और साफ-सुथरा दिख रहा था, क्योंकि उसने पिछले दिन दाढ़ी और बाल कटवाए थे। उसकी ठुड्डी उसके दृढ़ संकल्प की झलक है और उसकी नाक बाज की चोंच की तरह नुकीली है। लंबे समय तक जेल में रहने के कारण उसकी छोटी और चमकीली आंखों के नीचे काले घेरे हैं। वह स्पष्ट रूप से बोल रहा था और उसके लहजे और व्यवहार में किसी प्रकार का पछतावा या अफसोस नहीं झलक रहा था। इस घिनौने नाटक का दूसरा मुख्य पात्र बूढ़े सावरकर थे। वे इतने बूढ़े और कमजोर हैं कि उन्हें कुर्सी पर बिठाकर अदालत में लाना पड़ा।' [यह विवरण एक अन्य हिंदी पत्रकार की अदालत डायरी से भिन्न है, जिसका अदालत में घटित होने वाला दैनिक विवरण बाद में बनारस के ज्ञानमंडल लिमिटेड द्वारा 'गांधी हत्याकांड' शीर्षक से प्रकाशित किया गया था।] यह बहुत ही चौंकाने वाला था। इस वीर देशभक्त ने अनेक वीरतापूर्ण कार्य किए थे; एक समय वे हर घर में पूजनीय थे। आज वे स्वतंत्र भारत की प्रथम सरकार द्वारा अभियोजित आरोपियों के बीच कटघरे में खड़े हैं। लोग अपने जीवन में ऊंचाइयों से इतनी गहराई तक गिर जाते हैं। सावरकर अचंभित दिखे।
अदालत में अभियुक्तों द्वारा बोली और समझी जाने वाली भाषाओं को लेकर विवाद उत्पन्न हो गया। बैज और करकरे ने अदालत को बताया कि वे केवल मराठी बोल और समझ सकते हैं। किस्तय्या ने कहा कि वह केवल तेलुगु बोलता और समझता है। भोपटकर ने अदालत के प्रश्नों

का मराठी में अनुवाद किया, जबकि एक तेलुगु भाषी प्रेस रिपोर्टर ने किस्तय्या के लिए अनुवाद किया।
आरोपपत्र पढ़े जाने के बाद, सावरकर के वकील भोपटकर ने अदालत को बताया कि दंड संहिता की धारा 21 के तहत वारंट कार्यवाही के अनुसार, प्रारंभिक जांच के आधार पर आरोपों को सिद्ध किया जाना चाहिए और मामले को सर्किट कोर्ट को सौंपा जाना चाहिए, तभी कार्यवाही शुरू होगी। न्यायाधीश ने उन्हें सूचित किया कि दंड संहिता के अध्याय 23 के प्रावधानों के अनुसार, विशेष कानून लागू होने के बाद मुकदमा चलाया जा रहा है। भोपटकर ने अदालत से सुनवाई को दो महीने के लिए स्थगित करने का अनुरोध किया, ताकि बचाव पक्ष को तैयारी के लिए समय मिल सके। न्यायाधीश आत्मचरण ने अनुरोध अस्वीकार कर दिया, लेकिन 14 जून तक सुनवाई स्थगित करने पर सहमति जताई।
दूसरी सुनवाई, 3 जून
दूसरे दिन अदालत केवल एक घंटे और कुछ मिनट चली। इसने आरोपियों को दी गई सुविधाओं और उनके बचाव के लिए किए गए इंतज़ामों के बारे में पूछताछ की और फैसला किया कि दैनिक कार्यवाही 22 जून से शुरू होगी। मदनलाल और करकरे, जो पहले दिन बेहद खुश और हंसमुख थे, आज चिंतित और उदास लग रहे थे। नाथूराम, जो पहले दिन शांत और गंभीर रहे थे, आज अपेक्षाकृत प्रसन्न थे। दिन की कार्यवाही नाथूराम ने शुरू की। धाराप्रवाह अंग्रेजी में बोलते हुए उन्होंने शिकायत की कि उनके साथ 'सी' श्रेणी के कैदियों जैसा व्यवहार किया जा रहा है। उन्होंने आरोप लगाया कि बार-बार अनुरोध करने के बावजूद उन्हें दो-तीन दिनों तक नहाने के लिए पानी नहीं दिया गया। लेकिन उन्होंने स्वीकार किया कि उन्हें इससे भी कठोर व्यवहार की उम्मीद थी और वे इसके लिए तैयार थे, और

अतिरिक्त भोजन तैयार करवाने और पत्र प्राप्त करने, समाचार पत्र, किताबें और पत्रिकाएं मंगवाने की अनुमति दी। भोपटकर ने अदालत से अनुरोध किया कि बचाव पक्ष के वकीलों को जेल में आरोपियों से स्वतंत्र रूप से मिलने की अनुमति दी जाए। अदालत ने घोषणा की कि अभियोजन पक्ष के 150 गवाहों के बयानों का सारांश बचाव पक्ष को दे दिया गया है। पेट्टीगारा ने अदालत को सूचित किया कि बचाव पक्ष पांच या छह और गवाहों को पेश करेगा; उनके बयानों का सारांश उचित समय पर बचाव पक्ष को दे दिया जाएगा। पेट्टीगारा ने अदालत से बंबई के प्रेसिडेंसी मजिस्ट्रेट को पत्र लिखकर अदालत की सेवा के लिए एक मराठी और एक तेलुगु अनुवादक भेजने का अनुरोध किया। उन्होंने अदालत से बंबई और ग्वालियर से कुछ गवाहों के बयान और जांच रिकॉर्ड प्राप्त करने का भी अनुरोध किया। यह भी तय किया गया कि अदालत की कार्यवाही अंग्रेजी में संचालित और दर्ज की जाएगी। विशेष न्यायालय अधिनियम के प्रावधान के बावजूद, जिसमें केवल बयान का सारांश दर्ज करने की अनुमति थी, गवाहों के बयान उनकी बोली जाने वाली भाषा में लिखे जाएंगे।
न्यायाधीश आत्मचरण ने भोपतकर से बचाव पक्ष के वकीलों की सूची प्रस्तुत करने को कहा। भोपतकर ने एक सप्ताह का समय मांगा, लेकिन आत्मचरण ने कहा कि कानून के प्रावधानों के तहत वे समय नहीं बढ़ाएंगे। हालांकि, उन्होंने यह भी कहा कि वे अदालत की कार्यवाही 14 जून के बजाय 21 जून से शुरू करने के अनुरोध पर विचार करेंगे। पेट्टीगारा ने अदालत को सूचित किया कि चूंकि माउंटबेटन 21 जून 1948 को भारत छोड़ रहे थे, इसलिए पुलिस उनकी सुरक्षा व्यवस्था में व्यस्त होने की संभावना थी। इसके बाद सुनवाई की तारीख 22 जून 1948 तय की गई।

मुकदमे की सुनवाई के पहले दिन मदनलाल ने वकील की सेवाएं लेने से इनकार कर दिया था, लेकिन अब वह चाहते थे कि भोपटकर उनका केस लड़ें। किस्तय्या भी चाहते थे कि अदालत उनकी रक्षा के लिए एक सक्षम वकील नियुक्त करे।
सुनवाई 14 जून को होगी।
प्रारंभिक कार्यवाही की अंतिम सुनवाई 14 जून 1948 को हुई और यह लगभग तीस मिनट तक चली। भोपटकर ने बचाव पक्ष के वकीलों की अंतिम सूची प्रस्तुत की और अदालत को आश्वासन दिया कि वे सभी 22 जून को उपस्थित रहेंगे। उन्होंने आगे कहा कि बैरिस्टर ओक नाथूराम की ओर से और मनियार गोपाल गोडसे का बचाव करेंगे। अभियोजन पक्ष के गवाहों के बयानों के संक्षिप्त सारांश की प्रतियां आरोपियों को सौंप दी गईं। किस्तय्या और करकरे, जो अंग्रेजी नहीं समझते थे, उन्हें अनुवाद उपलब्ध कराए गए।
अभियुक्त का संक्षिप्त परिचय
1. नाथूराम विनायक गोडसे *: 36, हिंदू ब्राह्मण, कुंवारा; प्रधानाचार्य
आरोपी। गांधी की हत्या के तुरंत बाद उन्हें घटनास्थल से गिरफ्तार कर लिया गया था। उनके पास सिलाई का डिप्लोमा है; उन्होंने पुणे में दर्जी के रूप में काम किया। 1937 में उनकी मुलाकात वी.डी. सावरकर से हुई। उन्होंने सावरकर के निजी सचिव के रूप में उनके साथ देशव्यापी दौरे पर यात्रा की। वे राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) के पूर्व सदस्य हैं। उन्होंने 1944 में पुणे से मराठी दैनिक 'अग्रनी' का प्रकाशन शुरू किया। 'अग्रनी' के बंद होने पर वे 'हिंदू राष्ट्र' के संपादक बन गए।
2. नारायण दत्तात्रेय आप्टे: 35, बीएससी, बी.टी., हिंदू ब्राह्मण, विवाहित।

उन्होंने अहमदनगर में लेक्चरर के रूप में काम किया। उन्होंने अहमदनगर में एक राइफल क्लब की शुरुआत की।
3. विष्णु रामकृष्ण करकरे: 35, हिंदू, विवाहित। से भी
अहमदनगर में उनका एक होटल है।
4. दिगंबर रामचंद्र बैज: 35 वर्ष, हिंदू, विवाहित। हथियारों का कारोबार करता है।
'शास्त्र भंडार' नाम की दुकान, जो चाकू, तलवार और कटार जैसे हथियार बेचती है, जिसके लिए लाइसेंस की आवश्यकता नहीं होती; साथ ही एक धातु की जैकेट भी बनाती है जो पहनने वाले को चाकू के वार से बचा सकती है। अब वह मुखबिर बन गया है।
5. मदनलाल कश्मीरीलाल पाहवा: 23, लगभग। हिंदू, बैचलर.
पश्चिमी पंजाब से आया शरणार्थी। गांधीजी की हत्या से दस दिन पहले, गांधीजी के बैठने की जगह से पचास गज की दूरी पर एक बम फटा।
बम फटने के तुरंत बाद मदनलाल को उसी जगह के पास से गिरफ्तार कर लिया गया; एक चश्मदीद ने उसकी पहचान बम हमलावर के रूप में की। धमाके के बाद तलाशी लेने पर उसके पास से एक हथगोला बरामद हुआ।
गिरफ्तारी के बाद वह बार-बार कहता रहा, 'वो फिर आएगा'।
6. Shankar Kistayya: Hindu, Bachelor from Sholapur. Servant and shop
बैज के लिए काम करने वाला सहायक।
7. गोपाल विनायक गोडसे: 32 वर्ष, हिंदू ब्राह्मण, विवाहित। छोटा भाई
नथुराम गोडसे के पुत्र। प्रथम विश्व युद्ध के दौरान औपनिवेशिक सेना में सेवा की।
8. विनायक दामोदर सावरकर, 65 वर्ष, हिंदू ब्राह्मण, विवाहित। पूर्व

हिंदू महासभा के अध्यक्ष। युवावस्था में उन्होंने अनेक वीरतापूर्ण कार्य किए। पूना कॉलेज के छात्र रहते हुए ही उन्होंने ब्रिटिश औपनिवेशिक प्रशासन को उखाड़ फेंकने के लिए क्रांतिकारी गतिविधियाँ शुरू कीं। लंदन से बैरिस्टर बने, लेकिन वकालत से बेदखल कर दिए गए। सम्राट के विरुद्ध युद्ध छेड़ने की साजिश में सहभागी होने के आरोप में उन्हें गिरफ्तार किया गया। यह मामला 'नासिक षड्यंत्र' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। भारत ले जाते समय, जब जहाज मार्सिले बंदरगाह पर रुका हुआ था, तब वे एक खिड़की से निकल गए। एक मील समुद्र में तैरकर वे तट पर पहुँचे। उन्हें तुरंत पुनः गिरफ्तार कर लिया गया। फ्रांसीसी संप्रभु भूमि पर उनकी गिरफ्तारी के तरीके को लेकर फ्रांस और इंग्लैंड के बीच विवाद उत्पन्न हुआ। अंततः यह मामला हेग स्थित अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय को भेजा गया। आखिरकार उन्हें भारत लाया गया। उन पर मुकदमा चलाया गया और उन्हें अंडमान द्वीप पर स्थित पोर्ट ब्लेयर की सेलुलर जेल में आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई। इस कारावास को कुख्यात रूप से 'काला पानी' कहा जाता था। उन्होंने वहाँ चौदह वर्ष की सजा काटी। क्षमा याचना प्रस्तुत करने और ब्रिटिश विरोधी गतिविधियों में भाग न लेने का आश्वासन देने पर, सावरकर को भारतीय मुख्य भूमि पर लाया गया और दक्षिण-पश्चिम महाराष्ट्र के कोंकण प्रांत में स्थित तटीय शहर रत्नागिरी में नजरबंद कर दिया गया। 1937 में जब बंबई प्रांत में पहली कांग्रेसी प्रांतीय सरकार चुनी गई, तो उनका पहला कार्य सावरकर को बिना शर्त क्षमादान देना था। रिहाई के बाद सावरकर हिंदू महासभा में शामिल हुए और उसके अध्यक्ष चुने गए। मराठी साहित्य के एक महान लेखक, एक समाज सुधारक और एक सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में प्रसिद्ध।

9. डॉ. दत्तात्रेय सदाशिव परचुरे: 49, हिंदू ब्राह्मण, विवाहित। ए
ग्वालियर में प्राकृतिक चिकित्सा और होम्योपैथी का अभ्यास करने वाले डॉक्टर। ग्वालियर हिंदू महासभा के अध्यक्ष और हिंदू राष्ट्र सेना के तानाशाह, जो एक कट्टरपंथी हिंदू कमांडो समूह है।
विशेष न्यायालय
अदालत की अध्यक्षता न्यायाधीश एच. आत्मचरण आईसीएस ने की, और निम्नलिखित वकील उपस्थित थे:
1) चंद्र किशन दफ्तरी, एडवोकेट जनरल, बॉम्बे प्रांत, मुख्य अभियोजक।
2) एन.के. पेट्टीगारा, बॉम्बे।
3) N.G. Vyavharkar, Bombay.
4) Raibahadur Jwalaprasad, Punjab.
5) Pandit Thakurdas *, Delhi.
बॉम्बे के पुलिस उपायुक्त जमशेद दोराबजी नागरवाला 'जिमी' विशेष जांच अधिकारी थे।
रक्षा वकील
वकीलों की सूची में मुख्य बचाव पक्ष के वकील और सावरकर के वकील, एल.बी. भोपटकर, पुणे; नाथूराम गोडसे के लिए बैरिस्टर वी.वी. ओक, बॉम्बे (हालांकि बाद में, 'साक्ष्य दर्ज करना' अनुभाग के तहत यह कहा गया है कि नाथूराम ने अपना मामला खुद लड़ा); नारायण आप्टे के लिए के.एच. मेंगले और जी.के. दुआ, बॉम्बे; विष्णु करकरे के लिए अधिवक्ता नरहर दाजी डांगे और जी.के. दुआ, बॉम्बे; बैज सरकारी गवाह बन गया और उसे न्यायिक क्षमादान दिया गया; मदनलाल पाहवा के लिए पुरंचन्द्र बैनर्जी; शंकर किस्तय्या के लिए हंसराज आर.

मेहता, सीमा प्रांत से, सरकार द्वारा नियुक्त; गोपाल गोडसे के लिए मोहनलाल बी. मनियार, बॉम्बे; वी.डी. सावरकर के लिए एल.बी. भोपटकर, पुणे; बैरिस्टर जमनादास मेहता, बॉम्बे; गणपत राय, दिल्ली शामिल थे। कुंजबिहारी एल. भोपटकर, पुणे (गांधी हत्याकांड मुकदमे में सावरकर की बचाव टीम में तीन और नाम जोड़े गए हैं: बी. बनर्जी, जे.पी. मित्तर और एन.पी. अय्यर। बाद में गांधी हत्याकांड मुकदमे में 'साक्ष्यों की रिकॉर्डिंग' के तहत दावा किया गया है कि पटना के पी.आर. दास ने सावरकर की ओर से पैरवी की थी)। परचुरे के लिए, पी.एल. इनामदार, ग्वालियर। (गांधी हत्याकांड मुकदमे में परचुरे की बचाव टीम में एस.एन. जौहरी को फिर से जोड़ा गया है। पी.एल. इनामदार ने अपनी पुस्तक 'द रेड फोर्ट ट्रायल' में दावा किया है कि वे परचुरे की ओर से पेश होने वाले एकमात्र वकील थे)।
साक्ष्यों का अभिलेखन
अभियोजन पक्ष के साक्ष्यों की रिकॉर्डिंग 24 जून 1948 को शुरू हुई और 6 नवंबर तक चली। एक सौ उनतालीस गवाहों से पूछताछ की गई और उनके साक्ष्य 720 पृष्ठों में दर्ज किए गए। अभियोजन पक्ष ने 404 दस्तावेजी और 80 भौतिक साक्ष्य प्रस्तुत किए। आरोपियों के बयानों की रिकॉर्डिंग 8 नवंबर को शुरू हुई और 22 नवंबर तक चली, जिसमें 106 पृष्ठ शामिल थे। शंकर किस्तय्या को छोड़कर सभी आरोपियों ने लिखित बयान दाखिल किए, जो 297 पृष्ठों में थे। बचाव पक्ष ने अभियोजन पक्ष के गवाहों के माध्यम से 119 दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत किए। बचाव पक्ष की दलीलों की सुनवाई 1 दिसंबर 1948 को शुरू हुई और 30 दिसंबर तक चली।
मुकदमा शुरू: बैज धारक ही अनुमोदक बन गया

गांधी जी की हत्या के चार महीने और तीन सप्ताह बाद, दैनिक सुनवाई शुरू हुई। कार्यवाही की शुरुआत पीठासीन न्यायाधीश द्वारा सभी आरोपियों से यह पूछने से हुई कि क्या वे सक्षम बचाव वकील नियुक्त कर पाए हैं या उन्हें कुशल बचाव वकील उपलब्ध कराए गए हैं। इसके बाद उन्होंने छह पृष्ठों की आरोपपत्र पढ़ी। मराठी संस्करण बॉम्बे प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेट कोर्ट में कार्यरत अनुवादक एम.ए. नवलकर द्वारा पढ़ा गया, जबकि तेलुगु अनुवाद बेल्लारी की एम. कमलम्मा द्वारा पढ़ा गया। पंजाबी और हिंदुस्तानी अनुवादक एम.आर. हांडा को भी नियुक्त किया गया था। प्रत्येक प्रश्न और उसके उत्तर का अंग्रेजी, गुजराती, हिंदुस्तानी, मराठी, पंजाबी और तेलुगु में अनुवाद करना आवश्यक था। इस प्रक्रिया के कारण कार्यवाही की अवधि बढ़ गई। उस दिन दो मंत्रिमंडल मंत्री, खनिज एवं खान मंत्री गाडगिल और विधि मंत्री बैरिस्टर अंबेडकर, उनकी पत्नी और गृह सचिव आर.एन. बनर्जी, जे.पी. हाथीसिंह और श्रीमती बी.आर. अयंगर के अलावा न्यायालय में उपस्थित थे।
बैज को क्षमादान मिल जाने के बावजूद, मुकदमे की पूरी अवधि के लिए उसे सुरक्षा हिरासत में रखने का निर्णय लिया गया। आरोपपत्र पढ़ने के बाद आत्मचरण ने घोषणा की कि बैज अब 'अभियोजन पक्ष का गवाह' है, और यह भी बताया कि उसे सशर्त क्षमादान दिया गया था। उन्होंने आदेश दिया कि बैज को तुरंत आरोपियों से अलग करके सुरक्षा हिरासत में रखा जाए। बैज के प्रति काफी शत्रुतापूर्ण रवैया अपनाया गया और बचाव पक्ष के वकीलों की रणनीति में भी बदलाव आया। हालांकि यह संदेह था कि आरोपियों में से एक मुखबिर बन गया है और पुलिस को वह सारी जानकारी दे रहा है जिसके आधार पर अभियोजन पक्ष आरोपियों के खिलाफ मामला बना सकता है, लेकिन

'मुखबिर' की पहचान को लेकर केवल अटकलें ही लगाई जा रही थीं। बचाव पक्ष ने गोपाल गोडसे, परचुरे और मदनलाल पाहवा को सबसे संभावित 'मुखबिर' माना। जैसे ही बैज को मुखबिर घोषित किया गया, बचाव पक्ष ने उसकी गवाही को अविश्वसनीय साबित करने और यह सिद्ध करने के लिए अपने सारे प्रयास केंद्रित कर दिए कि वह आदतन और सुधरने वाला नहीं है और उसकी गवाही अविश्वसनीय है।
इसके बाद आत्मचरण ने आरोपियों से पूछा कि क्या उन्हें अपने ऊपर लगे आरोप समझ आ गए हैं और यदि हां, तो क्या वे अपना जुर्म कबूल करेंगे या वे चाहते हैं कि अदालत उनकी बेगुनाही साबित करने के लिए मुकदमा चलाए। सभी आठ आरोपियों ने खुद को निर्दोष बताया। नाथूराम गोडसे ने अदालत से कहा, 'मेरी सुनवाई कीजिए।' शुरू में किस्तय्या ने अपना जुर्म कबूल किया, लेकिन जब उन्हें तेलुगु में आरोप समझाए गए तो उन्होंने कहा कि वे जो कुछ भी जानते हैं, सब कबूल कर लेंगे और अदालत से अपनी बेगुनाही साबित करने के लिए मुकदमा चलाने का अनुरोध किया। सावरकर ने भी खुद को निर्दोष बताया और आप्टे, गोपाल गोडसे और परचुरे ने भी। मदनलाल ने अदालत में एक लिखित बयान दिया, जिसमें कहा गया था: 'मैं खुद को निर्दोष मानता हूं। महात्मा गांधी को नुकसान पहुंचाने की कोई साजिश नहीं थी। मैं कभी भी ऐसी किसी साजिश का हिस्सा नहीं था। 20 जनवरी की घटना केवल महात्मा गांधी द्वारा उन दिनों अपनाई गई मुस्लिम तुष्टीकरण की नीति के कारण देश में व्याप्त गुस्से को प्रदर्शित करने के लिए थी। इसमें इससे ज्यादा कुछ नहीं था। उस घटना में मेरे अलावा कोई और शामिल नहीं था।'
आरोप गढ़े गए
अभियोजन पक्ष के बयान के आधार पर आरोपी के खिलाफ लगाए गए आरोपों का पूरा विवरण परिशिष्ट I में है। आरोपी ने 'दोषी नहीं' होने का

दावा किया और 'मुकदमे की मांग' की, जबकि परचुरे ने आगे दलील दी कि वह ग्वालियर राज्य का नागरिक है और अदालत के अधिकार क्षेत्र के अधीन नहीं है।
अभियोजन पक्ष के गवाहों के बयान दर्ज करना
24 जून 1948: दिन की कार्यवाही शुरू होने से पहले, आत्मचरण, दफ्तरी और भोपटकर, आप्टे, करकरे, मदनलाल और गोपाल गोडसे के साथ बिरला हाउस गए। आत्मचरण ने पूरे प्रार्थना स्थल और उस कमरे का बारीकी से निरीक्षण किया जहाँ गांधीजी ने अपने जीवन के अंतिम पाँच महीने बिताए थे। दोपहर 2 बजे अदालत ने अभियोजन पक्ष के गवाहों के बयान दर्ज करना शुरू किया। अभियोजन और बचाव पक्ष की सहमति से यह तय किया गया कि आत्मचरण स्वयं गवाहों के बयान अंग्रेजी में दर्ज करेंगे। उस दिन बहुत कम लोग आए थे।
सबसे पहले जिस गवाह से पूछताछ की गई, वह तीस वर्षीय हिंदू ब्राह्मण, ग्वालियर राज्य के हेड कांस्टेबल ईश्वरदत्त मुलचंद थे। हालांकि वे अंग्रेजी समझते और बोलते थे, फिर भी उन्होंने अदालत में हिंदी में बोलना पसंद किया। वे पिछले नौ वर्षों से ग्वालियर राज्य पुलिस में थे और पिछले पांच वर्षों से इंस्पेक्टर मंडलिक के अधीन सीआईडी में तैनात थे। अभियोजन पक्ष ने अदालत को यह साबित करने के लिए उनकी पूछताछ की कि तीन आरोपियों को अदालत द्वारा भगोड़ा घोषित किया जा चुका है। बचाव पक्ष ने अपने तर्कों के माध्यम से यह साबित करने की कोशिश की कि जांच के दौरान ग्वालियर राज्य और ब्रिटिश भारत को अलग-अलग इकाई माना गया था, और इसलिए, परचुरे को प्रत्यर्पित किए बिना किसी भी भारतीय अदालत के पास उस पर मुकदमा चलाने का अधिकार क्षेत्र नहीं था, लेकिन अदालत ने बचाव पक्ष के सवालों को खारिज कर दिया। अभियोजन पक्ष की ओर से दफ्तरी ने गवाह से पूछताछ की, और बचाव

पक्ष की ओर से पहले डांगे और फिर परचुरे के वकील इनामदार ने उनसे सवाल किए।
इनामदार द्वारा कुछ प्रश्न पूछे जाने के बाद गवाह को जाने की अनुमति दे दी गई। गवाह ने ग्वालियर राज्य राजपत्र से कुछ अंश प्रस्तुत किए जिनमें यह दर्शाया गया था कि गंगाधर दंडवते, गंगाधर जाधव और सूर्यदेव शर्मा को 'फरार' घोषित करने वाला कोई नोटिस प्रकाशित नहीं हुआ था।
चाय के विराम के बाद, मदनलाल के वकील बनर्जी ने अदालत से निवेदन किया कि अभियोजन पक्ष पहले उनके मुवक्किल के खिलाफ साजिश का आरोप और फिर हत्या का आरोप साबित करे। उन्होंने यह भी अनुरोध किया कि अभियोजन पक्ष घटनाओं को कालानुक्रमिक क्रम में प्रस्तुत करे और 1944 से लेकर अब तक के गवाहों को पेश करे। अदालत ने उनके तर्कों को मानने से इनकार कर दिया। न्यायाधीश आत्मचरण ने अंत में टिप्पणी की, 'यदि वे मुझे किसी साजिश के अस्तित्व के बारे में आश्वस्त करने में विफल रहते हैं, तो मैं उनकी गवाही रोक दूंगा।'
अगले गवाह दिल्ली के फतेहपुरी स्थित शरीफ हिंदू होटल के महाप्रबंधक रामलाल दत्त थे। वे पाकिस्तान से आए शरणार्थी गोकुलचंद मेहता के 55 वर्षीय पुत्र थे। उन्होंने अदालत को बताया कि 17 से 19 जनवरी 1948 तक होटल के कमरा नंबर 2 में तीन लोग ठहरे थे। उन्होंने अदालत को उन तीनों के नाम समेत सारी जानकारी दी, जिनके साथ उन्होंने चेक-इन किया था। अदालत के आदेश पर रामलाल ने मदनलाल और करकरे की पहचान की। इसके बाद अभियोजन पक्ष शांताराम आत्माराम आमचेकर नामक एक व्यक्ति को अदालत में लाया, जिसकी पहचान तीसरे व्यक्ति के रूप में हुई। रामलाल ने गोपाल गोडसे की ओर इशारा करते हुए उसकी पहचान होटल में आए

आगंतुक के रूप में की। अदालत ने रामलाल को आरोपी की पहचान करते समय अपना चश्मा हटाने का आदेश दिया, जिसे उन्होंने मान लिया। कुछ और सवालों के बाद, अदालत की कार्यवाही दिन भर के लिए स्थगित कर दी गई।
25 जून 1948: परचुरे के वकील इनामदार ने अदालत में एक निवेदन प्रस्तुत किया। आत्मचरण ने उत्तर दिया, 'आपने षड्यंत्र के आरोप को और अधिक विस्तार से समझाने का अनुरोध किया है। मुझे लगता है कि आरोप अत्यंत स्पष्टता से निर्धारित किए गए हैं... मैं और कोई स्पष्टीकरण नहीं दूंगा...' रामलाल की पूछताछ जारी रही। दफ्तरी यह साबित करना चाहता था कि 20 जनवरी को असफल प्रयास से पहले दो आरोपी होटल में रह चुके थे और तीसरा आरोपी उनसे मिलने आया था। करकरे के वकील डांगे ने रामलाल से पूछताछ की और उनके बयान को गलत साबित करने का प्रयास किया। दोनों के बीच काफी तीखी बहस हुई, जिसमें डांगे ने उनसे पूछा कि होटल रजिस्टर में प्रविष्टि संख्या सैंतालीस क्यों बदली गई थी। रामलाल ने बताया कि मेहमानों के नाम गलत दर्ज होने के कारण उनके साथी ने बदलाव किए थे।
बैनर्जी द्वारा रामलाल से पूछताछ समाप्त करने के बाद, गोपाल गोडसे ने कहा कि वह रामलाल से पूछताछ शुरू करने से पहले अपने वकील मनियार को जानकारी देना चाहता है। मनियार ने रामलाल से पूछा कि क्या उसने पुलिस को दिए अपने बयान में उल्लेख किया था कि गोपाल गोडसे शरीफ होटल में मदनलाल से मिलने गया था। रामलाल ने जवाब दिया कि वह गोपाल को पहचान सकता है।
मनियार: 'क्या पुलिस ने अपनी रिपोर्ट में यह लिखा था?'

इस पर आत्मचरण ने हस्तक्षेप करते हुए कहा, 'रामलाल इसका जवाब कैसे दे सकता है? यह जरूरी नहीं है कि पुलिस बयान को शब्दशः लिख ले।'
मनियार: 'गोपाल गोडसे कब आया था? जब गोपाल गोडसे मदनलाल और व्यास से मिलने आया था, तब क्या आपके साथ कोई था?'
रामलाल: 'दोपहर में गोपाल गोडसे मदनलाल से मिलने आया था। मेरा साथी मेरे साथ था।'
मनियार: 'मैं कहता हूं कि जब आप यह दावा करते हैं कि गोपाल गोडसे आपके होटल में आया था, तो आप झूठ बोल रहे हैं।'
रामलाल: 'अगर आप कहते हैं कि गोपाल वी गोडसे मदनलाल और व्यास से मिलने होटल नहीं आया था, तो यह झूठ है।' इसके बाद रामलाल को जाने की अनुमति मिल गई।
इसके बाद अदालत ने रामलाल के साथी शांतिप्रकाश को बुलाया, जिन्होंने करकरे और फिर गोपाल गोडसे को आगंतुक के रूप में पहचाना। जब डांगे ने उनसे पूछताछ की, तो शांतिप्रकाश ने जवाब दिया कि उन्होंने होटल में बहुत कम समय बिताया और मुख्य रूप से बिल वसूली और खातों का काम संभाला। उन्होंने कहा कि उन्हें 'व्यास' याद है क्योंकि 19 तारीख को दोनों ने लगभग आधे घंटे तक बातचीत की थी।
उस दिन चाय के लिए अदालत की कार्यवाही स्थगित होने से पहले, आधे घंटे में बारह बार बिजली गुल हो गई।
कार्यवाही जारी रही और मानसिंह के पुत्र रामसिंह से पूछताछ की गई। रामसिंह शरीफ होटल में बेयरर और खानसामा था और उसने बताया कि वह वहां के छह कमरों का प्रभारी था। उसने करकरे और मदनलाल की पहचान की। अगला गवाह तीस वर्षीय अमचेकर था, जो करकरे और मदनलाल के साथ शरीफ होटल में रुका था। अमचेकर बंबई प्रांत के

सावंतवाड़ी के हिरलोक का निवासी था। वह एक महत्वपूर्ण गवाह था। वह कराची से शरणार्थी था, जहां उसकी सरकारी नौकरी थी। उसने अदालत को बताया कि वह 15 जनवरी 1948 को रात 9.15 बजे बंबई से चलने वाली पेशावर एक्सप्रेस के तीसरे दर्जे के डिब्बे में सवार हुआ था और ट्रेन में मदनलाल और करकरे से मिला था। वह 17 जनवरी की शाम से 19 जनवरी की शाम तक उनके साथ शरीफ होटल में रुका था। यात्रा के दौरान करकरे ने उसे बताया था कि वह हिंदू महासभा का कार्यकर्ता है और महासभा के काम के लिए दिल्ली जा रहा है। अमचेकर के बयान के अनुसार: 'मैं कराची में कार्यरत एक सरकारी कर्मचारी हूँ। विभाजन के बाद, मैं 12 जनवरी को बॉम्बे पहुँचा। मैं वर्ली शरणार्थी शिविर में रुका, जहाँ से मैंने दिल्ली का टिकट लिया और पाकिस्तान से भारत में अपनी सरकारी नौकरी का स्थानांतरण करवाने आया था। अगली सुबह जब मैं ट्रेन में जागा, तो मुझे पता चला कि ट्रेन चार-पाँच घंटे देरी से चल रही है। मैं चिंतित था, क्योंकि मैंने दिल्ली में अपना काम एक दिन में खत्म करके वापस लौटने की योजना बनाई थी। मुझे नहीं पता था कि मैं कहाँ रहूँगा, मैं इसलिए भी चिंतित था क्योंकि मैं मराठी के अलावा कोई और भाषा बोल या समझ नहीं सकता था। तभी मैंने अपने एक सहयात्री को मराठी बोलते सुना, मुझे एहसास हुआ कि वह मेरे ही प्रांत का होगा और मेरी मदद कर सकता है। मैंने उससे पूछा कि वह कहाँ जा रहा है। उसने अपना परिचय करकरे के रूप में दिया और बताया कि वह दिल्ली जा रहा है।' करकरे की ओर इशारा करते हुए अमचेकर ने कहा, 'यही वह व्यक्ति है। मैंने करकरे से अपना परिचय दिया और पूछा कि क्या वह दिल्ली में मेरे रहने की व्यवस्था करने में मेरी मदद कर सकता है।' करकरे ने मुझे आश्वासन दिया कि वह मुझे बिरला मंदिर में रहने की जगह दिलवा देंगे।'

अमचेकर ने मदनलाल की पहचान करते हुए बताया कि उन्हें तब पता चला कि वे दोनों साथ थे जब वे स्टेशन पर उतरे। इसके बाद उन्होंने आगे की घटनाओं का ब्योरा दिया, जिनका जिक्र पहले ही किया जा चुका है।
अदालत की कार्यवाही दिनभर के लिए स्थगित होने से पहले, नथुराम ने निवेदन किया कि बैज और किस्तय्या को आपस में या अन्य आरोपियों से बातचीत करने की अनुमति न दी जाए। उनका निवेदन स्वीकार कर लिया गया।
28 जून 1948: गांधी जी के पोते कानू गांधी उस दिन अदालत में उपस्थित थे, यह पहली बार था जब गांधी परिवार का कोई सदस्य अदालत में पेश हुआ था। अमचेकर के बयान की रिकॉर्डिंग जारी रही। उन्होंने बताया कि होटल के कमरे में एक तीसरा व्यक्ति भी था और पूछे जाने पर उन्होंने गोपाल गोडसे की ओर इशारा किया। उन्होंने आगे कहा कि उन्होंने गोडसे से बात नहीं की थी और जब वे शाम 5 बजे कमरे से निकले तो तीनों वहीं मौजूद थे। इसके बाद उन्होंने आरोपियों के साथ अपने संबंधों का विस्तृत विवरण दिया। उन्होंने कहा, 'पुलिस मुझे आरोपियों की पहचान करने के लिए मेरे गांव से बंबई ले गई थी। मैंने मुख्य अध्यक्षीय मजिस्ट्रेट की उपस्थिति में आरोपियों को देखा था। मैंने इन लोगों को इससे पहले कभी नहीं देखा था।'
नथुराम उठ खड़े हुए और दावा किया कि अदालत में आरोपियों की पहचान सही नहीं हुई है। उनकी तस्वीरें अखबारों में छप चुकी थीं और मुकदमे की फिल्में कई जगहों पर दिखाई जा रही थीं। इन परिस्थितियों में अदालत में आरोपियों की पहचान करना आसान हो गया था। अदालत ने उनकी आपत्ति खारिज कर दी।

डांगे ने मराठी में आमचेकर से जिरह शुरू की, जिस पर न्यायाधीश ने आपत्ति जताते हुए कहा कि वे कुछ सवालों को पूछने की अनुमति नहीं देना चाहते। आमचेकर ने आगे कहा कि उन्हें हिंदू महासभा के बारे में जानकारी तो थी, लेकिन उसके दर्शन और विचारधारा का उन्हें गहन ज्ञान नहीं था। 'मुझे यह नहीं पता था कि करकरे शरणार्थियों के बीच भी काम कर रहे हैं। मुझे यह भी नहीं पता था कि अहमदनगर में उनके कई होटल हैं जहां शरणार्थियों को मुफ्त भोजन दिया जाता है। करकरे से मेरी जान-पहचान नाममात्र की थी।' कुछ देर के विराम के बाद, मदनलाल के वकील ने अदालत को सूचित किया कि उनके मुवक्किल की तबीयत ठीक नहीं है। अदालत ने उन्हें बगल के कमरे में थोड़ी देर आराम करने की अनुमति दी। आरोपी की सुरक्षा में तैनात एक इंस्पेक्टर ने अदालत को बताया कि डॉक्टर को बुलाया गया है। दफ्तरी के अनुरोध पर अदालत ने एक इंस्पेक्टर को गवाह बैज को जेल से लाने का आदेश दिया। अगला गवाह हीरानंदानी था, जो गृह विभाग के अधीन स्थानांतरण ब्यूरो में क्लर्क के रूप में काम करता था। उसने बताया कि उसका ब्यूरो पाकिस्तान में अपनी नौकरी भारत में स्थानांतरित कराने के इच्छुक शरणार्थियों के आवेदन स्वीकार करता था। 'आवेदकों द्वारा आवेदन पूरी तरह भर दिए जाने के बाद मैं उन पर हस्ताक्षर करता हूँ। आवेदन संख्या 5286 शांताराम आमचेकर नामक व्यक्ति द्वारा भरा गया था। रजिस्टर में भी इसकी प्रविष्टि है,' उसने कहा। बचाव पक्ष ने उससे कोई प्रश्न नहीं किया। इसके बाद दिल्ली के मरीना होटल में काम करने वाले रामचंद्र और नारायण सिंह को बुलाया गया, और दोनों ने नाथुराम और आप्टे की पहचान की, जिन्होंने 'एस. देशपांडे' और 'एम. देशपांडे' के रूप में चेक-इन किया था। इसी बीच, मदनलाल को वापस अदालत लाया गया। इसके बाद अभियोजन पक्ष ने कुछ कपड़े सबूत

के तौर पर पेश किए, जिनमें से कुछ पर लॉन्ड्री का 'एनवीजी' मार्क अंकित था।
29 जून 1948: उस दिन पूछताछ के लिए पेश किए गए पहले गवाह भारत सरकार के वन विभाग में सिपाही मेहर सिंह थे। उन्होंने बताया कि जिस दिन गांधी जी की प्रार्थना सभा में बम विस्फोट हुआ, उस दिन वे अपने साथियों प्यारेलाल और कप्तान के साथ अपने क्षेत्र में गश्त कर रहे थे। सुबह करीब 11 बजे उन्होंने पंचकुई (पांच कुओं) के पैदल पुल के पास चार लोगों को देखा। पूछताछ करने पर उन्होंने बताया कि वे पर्यटक थे और दर्शनीय स्थलों की सैर कर रहे थे। उनकी उपस्थिति से मेहर सिंह को थोड़ा संदेह हुआ, क्योंकि बिरला मंदिर और हिंदू महासभा भवन से लगभग तीन फर्लांग पीछे, एक ऐसी जगह पर जहां पर्यटक अक्सर नहीं आते थे, उनका सामना हुआ था। इसके बाद दफ्तरी ने बैज को बुलाया। सरकारी गवाह बनने के बाद यह पहली बार था जब उन्हें अदालत में लाया जा रहा था। मेहर सिंह ने शंकर किस्तय्या, गोपाल वी गोडसे, नारायण डी. आप्टे और दिगंबर आर. बैज की पहचान उन लोगों के रूप में की जिनसे उनका सामना हुआ था। बाइबल की खोज करें
इसके बाद मरीना होटल के मैनेजर सी. पाचेको गवाह के तौर पर पेश हुए। दफ्तरी ने पाचेको के शपथ लेने के लिए बाइबल मांगी। पता चला कि वहां बाइबल उपलब्ध नहीं थी। नाथूराम ने कहा कि उन्होंने जेल में बाइबल देखी थी और उसे लाने के लिए एक पुलिस अधिकारी को भेजा गया, जिससे अदालत की कार्यवाही कुछ देर के लिए रुक गई। इसी दौरान मरीना होटल में काम करने वाले दो वेटर, गोविंदराम और केलाराम से पूछताछ की गई। चाय के विराम के बाद पाचेको को गवाही के लिए बुलाया गया। शपथ लेने के बाद पाचेको ने 20 जनवरी की शाम की घटनाओं का ब्योरा दिया। मदनलाल की ओर इशारा करते हुए पाचेको

ने उसकी पहचान उस व्यक्ति के रूप में की जिसे हथकड़ी लगाकर होटल लाया गया था और फिर उन्होंने नाथूराम और आप्टे की भी पहचान की। 30 जून 1948: दिल्ली के टैक्सी चालक सुरजीत सिंह उस दिन सबसे पहले पूछताछ के लिए पेश हुए। उनकी गवाही चार घंटे तक चली। आत्मचरण ने उस कार का निरीक्षण किया जिसमें आरोपी 20 तारीख को बिरला हाउस गए थे। नीले-हरे रंग की फोर्ड कार की खासियत यह थी कि उसमें एक कैरियर लगा हुआ था। उस समय दिल्ली में इस तरह की यह इकलौती कार थी। आप्टे की ओर इशारा करते हुए सुरजीत सिंह ने कहा, 'उन्होंने मुझसे सब कुछ तय कर लिया था। उन्होंने मुझे आने-जाने के लिए 12 रुपये देने पर सहमति जताई थी। तीन लोग पीछे बैठे थे और दाढ़ी वाला आदमी, बैज, मेरे साथ आगे बैठा था।' उन्होंने गोपाल गोडसे, आप्टे और किस्तय्या की पहचान पीछे बैठे लोगों के रूप में की। इसके बाद सिंह ने अदालत को सारी जानकारी दी। उन्होंने आगे कहा, 'मुझे गांधीजी की हत्या का दिन याद है। हत्या के तीन-चार दिन बाद मैं अपनी टैक्सी से तुगलक रोड पुलिस स्टेशन गया था, पुलिस के साथ मेरा कुछ अधूरा काम निपटाने के लिए।' दो सिख अधिकारियों ने मुझे फोन किया और पूछा कि क्या मैंने 20 तारीख को किसी को बिरला हाउस तक पहुंचाया था। मैंने उसी दिन पुलिस को बयान दिया। चार-पांच दिन बाद मुझे दिल्ली जिला जेल ले जाया गया, जहां मैंने नाथूराम की पहचान की और कुछ दिनों बाद मैंने आप्टे की पहचान की। फिर मुझे बॉम्बे ले जाया गया, जहां मैंने गोपाल गोडसे और बैज की पहचान की।
कुछ देर के विराम के बाद, न्यायाधीश ने अदालत को सूचित किया कि उन्हें शिवनारायण से एक अनुरोध प्राप्त हुआ है कि वह परचुरे के बचाव पक्ष के वकील के रूप में पेश होना चाहते हैं।

1 जुलाई 1948: कार्यवाही सुलोचना देवी के बयान दर्ज करने से शुरू हुई। उन्होंने कहा कि उन्हें स्पष्ट रूप से याद है कि बिरला हाउस में बम विस्फोट कहाँ और कब हुआ था, क्योंकि उनका घर घटनास्थल से मात्र सौ फीट की दूरी पर था। विस्फोट के समय, वह विस्फोट स्थल से मुश्किल से चौदह फीट की दूरी पर खड़ी थीं। विस्फोट के बाद, उन्होंने उस व्यक्ति की ओर इशारा किया जिसने बम रखा था और उसे जलाया था। पुलिसकर्मियों ने तुरंत उस व्यक्ति को पकड़ लिया। सुलोचना ने मदनलाल की पहचान की। उन्होंने बैज, आप्टे और नाथूराम गोडसे की भी पहचान उन लोगों के रूप में की जो उस दिन कार से बिरला हाउस आए थे। इसके बाद दफ्तरी सुलोचना को अदालत के बाहर ले गए और उनसे कार की पहचान करने को कहा, जिसे उन्होंने सही-सही कर लिया। ओक द्वारा जिरह किए जाने पर, उन्होंने जवाब दिया, 'आम तौर पर कोई तांगा या कार बिरला हाउस के पीछे वाले चौराहे पर आकर नहीं रुकती। पुलिस ने बम विस्फोट के कुछ ही मिनट बाद मेरा बयान दर्ज किया। मुझे निश्चित रूप से नहीं पता था कि माचिस की तीली से जिस तार या धागे को मैंने जलते हुए देखा था, वह बम से जुड़ा था या नहीं।' दिल्ली जिला जेल में पहली पहचान परेड में मैंने गोडसे की पहचान की थी। परेड में लगभग पंद्रह लोग थे। सभी ने साधारण कपड़े पहने हुए थे। गोडसे के सिर पर कुछ बंधा हुआ था। मुझे याद नहीं कि वह पट्टी थी, कपड़ा था या तौलिया था। मेंगले के एक सवाल का जवाब देते हुए उन्होंने कहा कि उन्होंने लगभग बीस से पच्चीस मिनट तक कार को देखा था और यात्रियों को उससे बाहर निकलने में लगभग पांच मिनट लगे थे। बनर्जी के सवाल का जवाब देते हुए उन्होंने कहा, 'जब मैंने फुलसिंह को उसकी ओर इशारा किया और वह और पुलिस कांस्टेबल उसकी ओर दौड़े, तब भी उसने भागने की कोशिश नहीं की।'

अगले गवाह के रूप में कार क्लीनर छोटूराम से पूछताछ की गई। उन्होंने कहा, 'जब धमाका हुआ, मैं अपने क्वार्टर से थोड़ी दूरी पर बैठा था।' उन्होंने आगे बताया कि वे फूलसिंह को जानते थे, जो बिरला हाउस में गार्ड का काम करता था। 'फूलसिंह के क्वार्टर और मेरे क्वार्टर के बीच एक कमरा है। बिरला हाउस के पीछे एक खुला मैदान है, जो पिछले गेट से सटा हुआ है। मैंने गहरे हरे रंग की कार को आते और गोलचक्कर पर रुकते देखा। कार गोलचक्कर के बाईं ओर खड़ी थी और उसकी छत पर एक सामान ढोने वाला डिब्बा था। कार रुकते ही मैंने चार लोगों को उससे बाहर निकलते देखा। वे बाईं ओर से निकले और फिर परिसर में प्रवेश कर गए। वहां उनकी मुलाकात तीन-चार अन्य लोगों से हुई और कुछ देर बात करने के बाद वे दो-तीन के समूहों में प्रार्थना स्थल में चले गए। उन्होंने मेरे क्वार्टर का चारों ओर से दो-तीन बार निरीक्षण किया। इसके बाद तीन लोग प्रार्थना स्थल में चले गए और एक व्यक्ति मेरे पास आकर मुझसे बात करने लगा। उसने कहा कि वह वेंटिलेटर की ग्रिल से गांधी जी की तस्वीर लेना चाहता है। मैंने उसे सामने से तस्वीर लेने को कहा।' लेकिन उसके पास कैमरा नहीं था। आखिरकार, मैंने उससे पूछा, "कैमरा कहां है?" उसके पास एक काले कपड़े का थैला था जिसमें कुछ भारी सामान भरा हुआ था। लेकिन उसमें कैमरा नहीं था। वह आदमी कार की तरफ भागा जैसे अपना कैमरा लेने जा रहा हो। फिर वह गेट से बाहर चला गया। मैंने एक आदमी को दीवार पर कुछ रखते और फिर उसे जलाते हुए देखा था। मैंने बम फोड़ने वाले आदमी का हाथ पकड़ लिया। बाद में उस आदमी को बिरला हाउस के बाहर पुलिस चौकी पर भेज दिया गया। मैं खुद वहां गया था। एक अधिकारी ने उसकी तलाशी ली और उसकी कोट की जेब में एक बम मिला। कुछ सैनिकों ने बम को खोलकर निष्क्रिय कर दिया। फिर बम को एक टिन में रखा गया और टिन को

कपड़े में लपेट दिया गया। उन्होंने पैकेट पर बिरला हाउस की मुहर लगा दी। इसके बाद वह गवाह के कटघरे से नीचे उतरा और मदनलाल, करकरे, आप्टे और नाथुराम की पहचान की। उसने कहा कि त्रासदी के बाद वह बीस से तीस मिनट तक हत्या स्थल पर रुका रहा। 'मुझे कुछ चली हुई गोलियां, दो खाली खोल और कंधों पर लिपटा हुआ एक कपड़ा मिला। ये चीजें उस जगह के आसपास बिखरी हुई थीं जहां महात्मा गांधी गिरे थे।' सबूत के तौर पर लाई गई वस्तुओं की पहचान छोटूराम ने की। गांधीजी की हत्या के पांच-छह दिन बाद, छोटूराम ने बम विस्फोट के बाद देखे गए नाथूराम को पांच-छह मिनट तक ध्यान से देखने के बाद उसी व्यक्ति के रूप में पहचान लिया था।
2 जुलाई 1948: छोटूराम से जिरह जारी रही। उन्होंने बताया कि वे गांधीजी की प्रार्थना सभाओं में नियमित रूप से जाया करते थे, लेकिन 20 जनवरी को नहीं जा सके। करकरे की ओर इशारा करते हुए उन्होंने कहा, 'उसने मुझे पांच-दस रुपये रिश्वत देने की कोशिश की ताकि वह मेरे कमरे से गांधीजी की तस्वीर ले सके, इससे मुझे उसके इरादों पर शक हुआ।' उन्होंने कहा कि बम विस्फोट से पहले वे अधिकारियों को अपने संदेह के बारे में सूचित नहीं कर पाए। कुछ देर के विराम के बाद जब अदालत की कार्यवाही शुरू हुई, तो बनर्जी ने अनुरोध किया कि यदि आवश्यक हो तो उन्हें अपने मुवक्किल मदनलाल के अलावा किसी भी अन्य आरोपी से परामर्श करने की अनुमति दी जाए। भोपटकर ने भी यही अनुरोध किया। उन्हें अपना अनुरोध लिखित में प्रस्तुत करने के लिए कहा गया।
चूंकि सभी आरोपियों के बैंक खाते फ्रीज कर दिए गए थे, इसलिए नाथुराम और आप्टे ने अदालत से संयुक्त रूप से अनुरोध किया कि पुणे के प्रेसिडेंसी इंडस्ट्रियल बैंक को आदेश दिया जाए कि उन्हें या उनके एजेंटों को अपने खाते संचालित करने से न रोका

जाए। आत्मचरण ने उनसे कहा कि वे अपने बचाव पक्ष के वकीलों के माध्यम से सीधे बैंक को पत्र लिखें। इसके बाद बिरला हाउस के चौकीदार भुरसिंह का बयान लिया गया, जिन्होंने अदालत को अपने द्वारा देखी गई सभी घटनाओं का विवरण दिया।
5 जुलाई 1948: अदालत ने भुरसिंह की जिरह के साथ सुनवाई फिर से शुरू की। इसके बाद करनाल के मजिस्ट्रेट और शरणार्थी अधिकारी के.एम. साहनी से पूछताछ की गई। गवाह ने अदालत को बताया कि वह 20 जनवरी को ठीक शाम 5 बजे प्रार्थना स्थल पर मौजूद थे। उन्होंने कहा कि 10 जनवरी को उनकी पत्नी की कार दुर्घटना में मृत्यु हो गई थी, इसलिए वह गहरे सदमे में थे और उन्होंने आगे कहा कि 'गांधीजी ने मुझे करनाल वापस जाकर ड्यूटी ज्वाइन करने से पहले उनसे मिलने का अनुरोध किया था।' अपने बयान में उन्होंने कहा कि वह गांधीजी के ठीक सामने, लगभग चार-पांच कदम की दूरी पर बैठे थे। चंद्रगुप्त विद्यालंकार भी उनके साथ थे। सवा पांच बजे एक भयानक धमाका हुआ। गांधीजी ने अपनी प्रार्थना शुरू कर दी होती, लेकिन लाउडस्पीकर खराब हो गए थे।
मेंगले के एक प्रश्न का उत्तर देते हुए उन्होंने कहा, 'मैं कई बार बिरला हाउस गया था और मुझे कई अवसरों पर महात्मा गांधी से बात करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मैंने जितनी भी प्रार्थना सभाओं में भाग लिया, उनमें से केवल एक में ही कुरान की आयतें आरंभ में पढ़ी गईं।' साहनी ने आगे कहा कि 20 तारीख को उन्होंने निजी तौर पर रिपोर्ट दर्ज कराई थी। 'मैं उस शाम लगभग 6:30 बजे तक गांधीजी के साथ था। बम विस्फोट के बाद भी प्रार्थना जारी रही, थोड़ी सी गड़बड़ी हुई। विस्फोट में कोई घायल नहीं हुआ। मदनलाल को मेरी उपस्थिति में महात्मा गांधी के पास नहीं लाया गया। महात्मा गांधी ने उस समय मदनलाल से मिलने की इच्छा व्यक्त नहीं

की। मैंने गांधीजी से बम विस्फोट के बारे में बात नहीं की।' अगले दिन अदालत ने फ्रंटियर हिंदू होटल के प्रबंधक रामप्रकाश का बयान दर्ज किया, जिसके बाद चमनलाल ग्रोवर, जो पहचान परेड और साक्ष्य की बरामदगी के दौरान पुलिस गवाह थे, को तलब किया गया। 7 जुलाई 1948: अदालत ने आगरा निवासी एस.सी. राय से जिरह की, जो भारत सरकार के विस्फोटक कारखाने में विस्फोटक पदार्थों के विशेषज्ञ के रूप में कार्यरत थे। उन्होंने अदालत को बताया कि 9 फरवरी 1948 को उन्हें दिल्ली सीआईडी से भारत सरकार के विस्फोटक विभाग के मुख्य निरीक्षक के कार्यालय के माध्यम से विश्लेषण के लिए कुछ विस्फोटक पदार्थ प्राप्त हुए थे। उन्होंने बताया कि फटे हुए हैंड ग्रेनेड अत्यंत घातक थे। ये ब्रिटिश सरकार द्वारा जारी किए गए एंटी-पर्सनल ग्रेनेड थे। दूसरे पैकेट में फटा हुआ गन कॉटन स्लैब था, जिसे उन्होंने छर्रों के साथ इस्तेमाल करने पर अत्यंत घातक बताया।
अगले दो गवाह पुलिस फोटोग्राफर कुंवर सिंह और नई दिल्ली के टेलीफोन राजस्व विभाग के प्रशासक पी.आर. कैलाश थे। कैलाश ने अदालत को बताया कि उनका कार्यालय दिल्ली से की गई सभी ट्रंक कॉल का रिकॉर्ड रखता है। अदालत में एक नोट पेश किया गया, जिसमें दिखाया गया था कि 19 जनवरी को सुबह 9:20 बजे दिल्ली के टेलीफोन नंबर 8024 से बॉम्बे के नंबर 60201 पर एक ट्रंक कॉल की गई थी। यह कॉल व्यक्ति से व्यक्ति के बीच की गई थी।
दामले या कसिया* के लिए 'अत्यावश्यक' कॉल। दिल्ली का यह नंबर रीडिंग रोड स्थित हिंदू महासभा के मानद कार्यालय सचिव के नाम पर पंजीकृत था। चूंकि अनुरोधित दोनों व्यक्ति उपलब्ध नहीं थे, इसलिए कॉल रद्द कर दी गई और इसके लिए दो रुपये पचहत्तर पैसे का शुल्क लिया गया। बिल का भुगतान 19 मई को किया गया। एल.बी.

भोपटकर, मुकदमे की सुनवाई में पहली बार गवाह से जिरह करने के लिए खड़े हुए। गवाह ने अदालत को बताया कि कॉल रद्द होने के समय बॉम्बे एक्सचेंज में ड्यूटी पर मौजूद ऑपरेटर ने पर्ची तैयार की थी।
भोपटकर ने पर्ची की जांच की और फिर उसे न्यायाधीश को सौंपते हुए कहा, 'कृपया पर्ची के निचले भाग को देखें, कुछ मिटाया गया है और उसके ऊपर नया नाम लिखा गया है।' अदालत ने पर्ची की जांच की और पाया कि 'दलाई' शब्द मिटाया गया था और उसके ऊपर डेमेलो लिखा गया था, दूसरा नाम 'कसिया' प्रतीत होता है।
गवाह के तौर पर अगला व्यक्ति ओल्ड दिल्ली स्टेशन पर कार्यरत टिकट क्लर्क लाला बद्रीनाथ था, जिसे यह साबित करने के लिए लाया गया था कि नाथूराम और आप्टे ने 20 जनवरी 1948 की रात को कानपुर के लिए टिकट खरीदे थे। उसने अदालत को बताया कि 20 जनवरी 1948 को शाम 4 बजे से आधी रात तक अपने ड्यूटी के दौरान उसने कानपुर के लिए केवल तीन प्रथम श्रेणी के टिकट बेचे थे: टिकट संख्या 614 ए, 614 बी और 615।
इसके बाद गवाही देने के लिए ड्राफ्ट्समैन एन.एन. कपूर को बुलाया गया, जिन्होंने पुलिस के आदेश पर बिरला हाउस और प्रार्थना स्थल के दो लेआउट मैप तैयार किए थे।
8 जुलाई 1948: पहला गवाह दिल्ली जंक्शन स्टेशन का बुकिंग क्लर्क सुंदरलाल था, जिसने नाथूराम और आप्टे की पहचान की और बताया कि दोनों 29 जनवरी 1948 को विश्राम कक्ष में रुके थे। उसने करकरे की पहचान उन दोनों के साथ आए व्यक्ति के रूप में की। जूतों की पॉलिश करने वाले लड़के जानू मोची की गवाही महत्वपूर्ण थी क्योंकि उसने पुष्टि की कि दिल्ली जंक्शन स्टेशन के विश्राम

कक्ष के कमरा नंबर 6 में तीन लोग ठहरे थे। उसने नाथूराम, आप्टे और करकरे की ओर इशारा किया।
9 जुलाई 1948: उस दिन आठ गवाहों से पूछताछ की गई। मदनलाल के वकील ने अदालत से निवेदन किया कि वह 'दिल्ली डायरीज़' नामक पुस्तक को स्वीकार करे और उसे गांधीजी के दिल्ली में अंतिम प्रवास के दौरान उनके आंदोलनों, प्रवचनों और लेखों को स्थापित करने के लिए एक मानक संदर्भ के रूप में कानूनी मान्यता दे। सभी गवाहों ने 30 तारीख को गांधीजी की हत्या का प्रत्यक्षदर्शी विवरण दिया। सबसे पहले रॉयल इंडियन एयर फोर्स के सार्जेंट रामचंद्र को बुलाया गया। उन्होंने बताया कि उनका तबादला अंबाला से दिल्ली हो गया था और वे गांधीजी की प्रार्थना सभाओं में नियमित रूप से शामिल होते थे। उन्होंने मदनलाल की पहचान उस व्यक्ति के रूप में की जिसे उन्होंने 20 जनवरी को बम विस्फोट के बाद पकड़ा था।
अगले गवाह तुगलक रोड पुलिस स्टेशन के सब-इंस्पेक्टर अमरनाथ थे, जो प्रार्थना सभाओं के दौरान बिरला हाउस में सुरक्षा के प्रभारी थे। उन्होंने बताया कि जिस दिन गांधीजी की हत्या हुई, उस दिन वे उनके पीछे खड़े थे। 'मैंने एक गोली चलने की आवाज़ सुनी और धुआँ उठता देखा। मैं तुरंत हत्यारे की ओर दौड़ा और उसकी गर्दन और कंधों को पकड़ लिया। लेकिन जब तक मैंने उसे पकड़ा, तब तक वह दो और गोलियां चला चुका था। सार्जेंट देवराज ने हत्यारे की कलाई पकड़ी और उससे पिस्तौल छीन ली। हमें पता चला कि पिस्तौल में चार और गोलियां थीं।' इसके बाद उन्होंने नाथूराम विनायक गोडसे की पहचान गांधीजी की गोली मारकर हत्या करने वाले व्यक्ति के रूप में की।

गांधीजी के साथ आए नंदलाल मेहता से पूछताछ की गई। उन्होंने बताया कि गांधीजी को गोली लगने के बाद उन्होंने उन्हें सहारा दिया और उनका सिर आभाबेन की गोद में रख दिया। 'गांधीजी ने कुछ ही मिनटों में अंतिम सांस ली। उनके शरीर को धोते समय मैंने पाया कि उनके ऊपरी धड़ पर तीन गोलियों के निशान थे। मैंने पुलिस द्वारा तैयार की गई एफआईआर पर हस्ताक्षर किए।' इसके बाद हेड कांस्टेबल काबुल सिंह को बुलाया गया, जिन्होंने अदालत को विभिन्न आरोपियों से पुलिस द्वारा बरामद हथियारों, गोला-बारूद और विस्फोटकों की मात्रा के बारे में बताया। इसके बाद तुगलक रोड पुलिस स्टेशन के कांस्टेबल रतन सिंह और सहायक सब-इंस्पेक्टर धलूराम को बुलाया गया। धलूराम 2 फरवरी 1948 को फिलौर केमिकल टेस्टिंग लेबोरेटरी में कुछ पार्सल ले गए थे। अगले दो गवाह सहायक सब-इंस्पेक्टर परशुराम और हेड कांस्टेबल धर्म सिंह थे। सिंह 30 तारीख को बिरला हाउस में ड्यूटी पर थे और उन्होंने नाथूराम की पहचान उस व्यक्ति के रूप में की जिसने गांधीजी पर गोली चलाई थी।
12 जुलाई 1948: अदालत द्वारा उठाया गया पहला मुद्दा मदनलाल का दिल्ली डायरीज़ से संबंधित आवेदन था। इनमें सितंबर 1947 से जनवरी 1948 तक गांधीजी के दिल्ली प्रवास का विस्तृत विवरण और उनके द्वारा लिखे गए लेखों का पूरा संग्रह तथा उनके व्याख्यानों की प्रतिलिपियाँ शामिल थीं। लोक अभियोजक ने इस पर आपत्ति जताई। अदालत ने फैसला सुनाया कि ऐसा आवेदन तब किया जाना चाहिए जब संबंधित बचाव पक्ष के गवाहों से पूछताछ की जा रही हो। सबसे पहले इरविन अस्पताल के अधीक्षक और सिविल सर्जन लेफ्टिनेंट कर्नल डॉ. पी.एन. तनेजा की जांच की गई। उन्होंने 31 जनवरी को सुबह 8:30 बजे बिरला हाउस में गांधीजी के शव का

निरीक्षण किया था। उन्होंने अदालत को बताया कि, 'गांधीजी की मृत्यु पिस्तौल से चलाई गई गोलियों से हुए आंतरिक रक्तस्राव के कारण लगे सदमे से हुई।' उन्होंने आगे कहा, 'गांधीजी के शव का निरीक्षण मुझसे पहले डॉ. जीवराज मेहता ने भी किया था। मैंने उनके शरीर पर पांच घाव देखे। उनकी छाती के दाहिनी ओर एक गहरा घाव था जिससे अंडाकार गड्ढा बन गया था। बाईं ओर दो घाव थे। प्रवेश घाव 1/4" x 1/6" के थे और उनकी पीठ पर निकास घाव 1/3" x 1/4" के थे। उनकी पीठ पर लगे दो घाव तब हुए जब दो गोलियां उनके शरीर को भेदकर उनकी पीठ से बाहर निकल गईं।' नाथूराम के निर्देशानुसार, बचाव पक्ष ने गवाह से जिरह नहीं की।
ग्वालियर के गवाह
जगदीश प्रसाद गोयल ने बताया कि वह परचुरे को 1941 से जानते थे और उन्होंने उनकी पहचान की। उन्होंने कहा कि परचुरे हिंदू राष्ट्र सेना के प्रमुख थे, जो कट्टरपंथी हिंदू युवाओं का एक समूह था। 'मुझे परचुरे के आदेश पर सेना में शामिल होना पड़ा था और मैं हर सुबह परेड में जाता था। मैं सावरकर के सचिव दामले को भी जानता हूं, जो 1941 में ग्वालियर आए थे। अगली बार मैंने आप्टे को 28 जनवरी 1948 को परचुरे के औषधालय में देखा था।' उन्होंने नाथूराम की ओर इशारा करते हुए कहा कि वह भी उस दिन परचुरे के घर पर मौजूद थे। इसके बाद उन्होंने परचुरे के औषधालय में होने वाली घटनाओं का विस्तृत विवरण दिया। इनामदार द्वारा जिरह किए जाने पर गवाह ने कहा, 'मैं पहले फरार हो गया था। मुझे अप्रैल में झांसी से गिरफ्तार किया गया था।'
दिन के तीसरे गवाह, दिल्ली ट्रंक एक्सचेंज के सुपरवाइजर सरदारीलाल वर्मा को गवाही देने के लिए बुलाया गया। उन्होंने 19

जनवरी 1948 को की गई कॉलों के बारे में गवाही दी। जैसा कि पहले बताया गया है, नंबर था
हिंदू महासभा* के संबंध में गवाह ने बताया कि ट्रंक कॉल रद्द नहीं की गई थी क्योंकि कॉलर से कॉल शुल्क का पच्चीस प्रतिशत वसूला जा चुका था। टिकट के अनुसार शुल्क दो रुपये और बारह आना था, लेकिन शुल्क एक रुपये और पंद्रह आना लिखा गया था। गवाह ने कहा कि उसे इसकी जानकारी नहीं थी।
दिल्ली टेलीफोन एक्सचेंज की सिख महिला ऑपरेटर कुलवंत कौर को गवाही के लिए बुलाया गया। 19 जनवरी 1948 को जब कॉल करने का प्रयास किया गया, उस समय वह स्विचबोर्ड पर ड्यूटी पर थीं। उन्होंने अदालत को बताया कि जिसे कॉल किया गया था वह उपलब्ध नहीं था। उस समय पूछताछ अनुभाग में एक नई ऑपरेटर, सुश्री जी. फर्नेस, ड्यूटी पर थीं, जिन्होंने गलती से टिकट पर 'कैंसल्ड' लिख दिया था। भोपटकर द्वारा जिरह किए जाने पर कौर ने कहा कि उन्हें उस समय बॉम्बे में ड्यूटी पर मौजूद ऑपरेटर का नाम नहीं पता था। अंत में गवाही देने वाली गवाह छब्बीस वर्षीय एंग्लो इंडियन जी. फर्नेस थीं। उन्होंने कहा, 'अपनी गलती का एहसास होने पर मैंने उस शब्द को काट दिया और उसके नीचे हस्ताक्षर कर दिए। गलती से मैंने "12" भी लिख दिया और फिर उसे मिटाने की कोशिश की। मुझे याद नहीं है कि किसने "कैंसल्ड" शब्द को काटा था।'
13 जुलाई 1948: पहला गवाह ग्वालियर का पचास वर्षीय तांगा चालक गरीब था, जो बहुत डरा हुआ लग रहा था। अपने बयान में उसने कहा, 'हत्या से दो-तीन दिन पहले, रात 11:30 बजे मैं ग्वालियर स्टेशन से परचुरे के घर जाने वाले दो लोगों को अपने तांगे में बिठाकर ले गया था। रास्ते में मेरे घोड़े की लगाम टूट गई, इसलिए मैंने उन्हें दूसरे तांगे में बिठा दिया।' उसने नाथूराम और आप्टे

दोनों की पहचान की। गांधी की हत्या के पांच-छह दिन बाद, गरीब ग्वालियर स्टेशन पर सब-इंस्पेक्टर मंडलिक से मिला। 'मंडलिक ने मुझे बताया कि परचुरे के घर पर ठहरे दो लोगों के महात्मा गांधी की हत्या की साजिश में शामिल होने का आरोप महज़ एक अफवाह है। मैंने मंडलिक को बताया कि मैं उन दोनों लोगों को परचुरे के घर तक आधे रास्ते तक ले गया था। दो घंटे बाद मुझे पुलिस स्टेशन बुलाया गया। ग्वालियर स्टेशन पर मेरा बयान दर्ज नहीं किया गया।' मंडलिक मुझे अपने साथ बॉम्बे ले गया, मैं वहां उसके साथ रहा।' दूसरे तांगा चालक ने भी नथुराम गोडसे और नारायण आप्टे की पहचान की।
तीन गवाह: आटकनपुर रेलवे स्टेशन पर कार्यरत रेलवे कर्मचारी इसके बाद कानपुर रेलवे स्टेशन पर काम करने वाले तीन कर्मचारियों, निरीक्षण क्लर्क शिवप्यारेलाल दीक्षित और ए.बी. सक्सेना, और रेलवे विश्राम कक्ष की सफाई की प्रभारी एंजेलीना कोलेस्टोन ने गवाही दी। इन तीनों ने 21 जनवरी 1948 को कानपुर स्टेशन पर नाथूराम और आप्टे को देखा था। दिल्ली रेलवे स्टेशन पर गाइड के रूप में काम करने वाले एक अन्य गवाह रघुपतिराव हांडा, 30 तारीख की शाम को प्रथम श्रेणी के प्रतीक्षा कक्ष में मौजूद थे, जब पुलिस ने वहां से कुछ सामान जब्त किया था। परचुरे के वकील इनामदार यह साबित करने पर तुले हुए थे कि उनके मुवक्किल के खिलाफ कार्यवाही अवैध है क्योंकि वे ग्वालियर राज्य के नागरिक हैं। उन्होंने दावा किया कि उनके मुवक्किल के अपराध को साबित करने के लिए अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत सभी मौखिक या लिखित साक्ष्य भी अवैध हैं, इसलिए उनके मुवक्किल के खिलाफ कार्यवाही रद्द की जानी चाहिए। उन्होंने आगे तर्क दिया कि चूंकि उनके मुवक्किल का इकबालिया बयान एक सिविल जज द्वारा

दर्ज किया गया था, न कि मजिस्ट्रेट द्वारा, इसलिए उसे भी खारिज कर दिया जाना चाहिए। दफ्तरी ने तर्क दिया कि उन्हें यह साबित करने की अनुमति दी जानी चाहिए कि परचुरे ने ग्वालियर में एक मजिस्ट्रेट की उपस्थिति में इकबालिया बयान दिया था और उन्होंने प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेट सैयद अली मजाहर अली रिजवी को गवाह के रूप में पेश होने के लिए बुलाया।
14 जुलाई 1948: उस दिन परचुरे की पत्नी सुशीलाबाई अदालत में मौजूद थीं। वह एक दिन पहले जेल में अपने पति से मिली थीं। अदालत की कार्यवाही में देरी करने के प्रयास में, बनर्जी ने मुकदमे के दौरान रिजवी की उपस्थिति पर आपत्ति जताते हुए एक याचिका दायर की। यह एक बेहद चौंकाने वाला कदम था क्योंकि रिजवी की गवाही का इस्तेमाल केवल साजिश में परचुरे की संलिप्तता साबित करने के लिए किया जाना था; इससे न तो मदनलाल के भाग्य पर और न ही अन्य आरोपियों के भाग्य पर कोई असर पड़ता। इसके बाद गवाही देने वाले गवाह मंजर अली थे, जिन्होंने कहा, 'मुझे याद है कि मैं 27 फरवरी 1948 को आरोपी परचुरे के घर गया था। पुलिस अधीक्षक खिजर मोहम्मद और सीआईडी इंस्पेक्टर मंडलिक मेरे साथ थे। हम पहले रेलवे स्टेशन के पास पार्क होटल गए। एक पुलिस अधिकारी आप्टे को नीचे लेकर आया। आप्टे ने हमें बताया कि वह हमें डॉ. परचुरे के घर की वह दीवार दिखा सकता है जिसका इस्तेमाल निशानेबाजी के अभ्यास के लिए किया जाता था। मेरे साथ डॉ. परचुरे के घर गए दल में बॉम्बे और ग्वालियर के पुलिसकर्मी भी थे। हम पार्क होटल से डॉ. परचुरे के घर एक विशेष कार में गए। कार की खिड़कियों पर गहरे रंग के शीशे लगे थे जो ऊपर की ओर मुड़े हुए थे।' मंजर अली की गवाही पर बचाव पक्ष द्वारा उठाई गई आपत्तियों का जवाब देते हुए, अभियोजन पक्ष के वकील ने कहा कि अली की गवाही

से अदालत को आप्टे और परचुरे के बीच लंबे समय से चले आ रहे संबंधों को समझने में मदद मिलेगी।
उस दिन दूसरा गवाह 22 वर्षीय मधुकर केशव काले था, जो ग्वालियर राज्य प्रशासन में क्लर्क के रूप में कार्यरत था। अपने बयान में उसने कहा, 'मैं 1940-41 से हिंदू राष्ट्र सेना से जुड़ा हुआ हूं। मैं परचुरे को पिछले पांच-सात वर्षों से जानता हूं। मई 1947 से पहले मैं नियमित रूप से परचुरे के घर जाया करता था। उसके बाद मैंने जाना बंद कर दिया क्योंकि मुझे सरकारी नौकरी मिल गई थी। परचुरे सेना में एक महत्वपूर्ण पद पर थे। मैं दंडवते को भी जानता हूं, वह सेना के पदाधिकारी थे। गांधी की हत्या से पहले, जनवरी के महीने में मेरी परचुरे से एक-दो बार मुलाकात हुई थी। 28 जनवरी को बैंक से पैसे निकालने जाते समय, मैं दोपहर लगभग 12:30 बजे परचुरे के घर गया। जब मैं अंदर गया, तो मैंने उन्हें तीन अन्य लोगों के साथ बैठे पाया। उनमें से एक दंडवते थे। बाद में मुझे पता चला कि अन्य दो नाथूराम गोडसे और नारायण आप्टे थे।' उन्होंने आगे बताया कि दोनों ने दो पिस्तौलों के ट्रिगर दबाने की असफल कोशिश की, और जब वे ऐसा करने में विफल रहे, तो उन्होंने दंडवते से बेहतर पिस्तौलें लाने को कहा। इसके बाद, वे आंगन में गए और पिस्तौल चलाने का अभ्यास किया।
काले ने आगे बताया, 'मैं दोपहर करीब 1:30 बजे परचुरे के घर से निकला और बैंक से पैसे निकालने के बाद घर चला गया। 29 तारीख को मेरी परचुरे से मुलाकात नहीं हुई। 30 जनवरी की शाम करीब छह बजे मराठा बोर्डिंग हाउस के सामने मेरी मुलाकात परचुरे से हुई। तब तक मैंने रेडियो पर महात्मा गांधी की हत्या की खबर सुन ली थी। मैंने परचुरे को गांधीजी की मृत्यु के बारे में बताया। परचुरे ने मुझसे पूछा कि गांधीजी की मृत्यु स्वाभाविक थी या उनकी

हत्या की गई थी। मैंने परचुरे को बताया कि मुझे पूरी जानकारी नहीं है। फिर मैं परचुरे के साथ बाजार में उनकी दुकान तक गया। मधुकर खीर नाम का एक व्यक्ति भी उनकी दुकान पर आया। इसके बाद ग्वालियर शहर में महात्मा गांधी की हत्या को लेकर तरह-तरह की अफवाहें फैलने लगीं। तब तक मुझे हत्यारे का नाम भी पता नहीं था। मैंने परचुरे से महात्मा गांधी की मृत्यु के कारण अपनी औषधालय बंद करने को कहा। परचुरे मान गए और औषधालय बंद करने के बाद मैं घर लौट आया।' उन्होंने बताया कि उन्हें अगले दिन पता चला कि गांधी की हत्या नाथूराम ने की थी। '1 तारीख को मैंने पूरी घटना अपनी मां और अपने दोस्तों पटवर्धन और पवार को बताई। पटवर्धन ने मुझ पर ग्वालियर सरकार को सारी जानकारी देने का दबाव डाला। पटवर्धन मुझे अपनी कार में बिठाकर गृह मंत्री घुले के पास ले गए।' इसके बाद काले ने परचुरे की पहचान की।
15 जुलाई 1948: ग्वालियर के बीस वर्षीय छात्र एम.बी. खिरे को गवाही के लिए बुलाया गया। खिरे ने बताया कि वह पिछले पांच-छह वर्षों से परचुरे को जानते थे। गांधीजी की हत्या की खबर सुनकर वह परचुरे के औषधालय गए और उनसे कहा कि अब से उनकी नीतियों और दर्शन का विरोध करना उचित नहीं होगा। 'पर्चुरे बहुत नाराज हो गए और मुझसे पूछा कि जब मैं गांधीजी के विचारों से इतना प्रभावित हूं, तो क्या मैं अपनी पत्नी को गांधीजी के साथ साझा करने की सोच रहा हूं? मैंने परचुरे से पूछा कि महात्मा गांधी की हत्या किस तरह का व्यक्ति कर सकता है। उन्होंने कहा कि वह हम जैसे ही किसी व्यक्ति का काम होगा। तब मैंने घर जाने का सोचा, लेकिन फिर अपना इरादा बदल लिया और परचुरे के साथ राजपूत बोर्डिंग हाउस चला गया। परचुरे रामदयाल सिंह से मिले और कहा, "मैंने अपना काम पूरा कर लिया है, अब तुम अपना काम पूरा करो।"' अंत में खिरे ने कहा कि

गृह मंत्री घुले ने भावे, पटवर्धन या उनसे कोई सवाल नहीं पूछा और न ही उन्होंने काले के बयान को नोट किया।
कुछ देर के विराम के बाद, राजपूत सेवा संघ के अध्यक्ष और 37 वर्षीय जमींदार रामदयाल सिंह को गवाही देने के लिए बुलाया गया। उन्होंने बताया कि उन्हें 30 तारीख को ही हत्या की सूचना मिली और उन्होंने गेस्ट हाउस में शोक सभा आयोजित करने का फैसला किया। सिंह ने कहा, 'पर्चुरे मेरे पास आया और बोला—"आखिरकार एक अच्छा काम हो गया। हिंदू धर्म के एक शत्रु का वध हो गया। गांधीजी की हत्या करने वाला हमारा ही आदमी है। कुछ दिन पहले बम धमाका करने वाला भी हमारा ही आदमी था। यह सच है कि गांधीजी की हत्या में इस्तेमाल की गई बंदूक ग्वालियर से भेजी गई थी। गांधीजी की हत्या करने वाला दक्षिण भारत से ग्वालियर आया और फिर दिल्ली चला गया।"' उन्होंने आगे कहा, 'मैंने भड़काऊ बातों पर कोई प्रतिक्रिया नहीं दी, लेकिन मेरे मित्र जगन्नाथ सिंह ने पर्चुरे पर चिल्लाते हुए कहा—"चुप रहो और यहाँ से चले जाओ।" फिर पर्चुरे और उसके साथी चले गए।'
इसके बाद ग्वालियर के वन ठेकेदार जगन्नाथ सिंह गवाही देने के लिए खड़े हुए। उन्होंने भी रामदयाल सिंह के बयान की पुष्टि की। जगन्नाथ ने सावरकर की ओर इशारा करते हुए उन्हें परचुरे कहा। गवाह के कटघरे में वापस आकर उन्हें अपनी गलती का एहसास हुआ और उन्होंने कहा, 'अरे, डॉ. परचुरे तो उस व्यक्ति के पीछे बैठे हैं।' 16 जुलाई 1948: आज के पहले दो गवाह दिल्ली पुलिस के लंबरदार गुगन सिंह और संसद स्ट्रीट पुलिस स्टेशन के सब-इंस्पेक्टर बिहारीलाल थे। बिहारीलाल ने दिल्ली रेलवे स्टेशन से एक बिस्तर और दो बैग जब्त किए थे। उस दिन अदालत की कार्यवाही केवल पचास मिनट चली।

19 जुलाई 1948: अभियोजन पक्ष ने ग्वालियर के प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेट आर.बी. अटल को गवाही के लिए बुलाया। गवाही देते हुए उन्होंने कहा, '17 फरवरी को अधीक्षक थोरात पाटिल मेरे पास एक पत्र लेकर आए। मुझे बताया गया कि यह पत्र सीआईडी के इंस्पेक्टर बालकृष्णन ने लिखा है। पत्र में अनुरोध किया गया था कि मैं डॉ. डी.एस. परचुरे का बयान दर्ज करूं, जिन्हें ग्वालियर किले में सेना ने हिरासत में रखा हुआ था। मुझे यह पत्र 17 जनवरी की शाम को मिला। मैं थोरात पाटिल, खिजर मोहम्मद और कुछ अन्य पुलिस अधिकारियों के साथ किले गया। जब हम उस कोठरी में गए जहां आरोपी को रखा गया था, तो हमारे साथ किले के कमांडेंट मेजर चत्रे भी थे। हमारी गाड़ी उस बैरक के पास रुकी जहां परचुरे को रखा गया था। हम सीढ़ियां चढ़कर कोठरी तक गए। मेजर पहले कोठरी में दाखिल हुए और फिर हम एक-एक करके अंदर गए। मैंने परचुरे से पूछा कि क्या वह अपना इकबालिया बयान देना चाहते हैं। परचुरे ने सिर हिलाकर हां में जवाब दिया।' इसके बाद अटल ने बैठक का विस्तृत विवरण दिया, जैसा कि पिछले अध्याय में बताया गया है।
परचुरे का इकबालिया बयान पढ़ने के बाद गवाह ने आगे कहा, 'मैं परचुरे का इकबालिया बयान अपने साथ घर लेकर लौटा। दो-तीन दिन बाद मैंने उस बयान को एक लिफाफे में बंद कर दिया और उस पर अपनी मुहर लगा दी। फिर मैंने उस लिफाफे को इंपीरियल बैंक ऑफ इंडिया में जमा कर दिया। 6 अप्रैल 1948 को मैंने उसे ग्वालियर राज्य के विदेश एवं राजनीतिक मामलों के सचिव को सौंप दिया।' इसके बाद अटल ने परचुरे की पहचान की।
परचुरे का मामला बेहद दिलचस्प था। हिंदू महासभा-आरएसएस गठबंधन द्वारा स्थापित राष्ट्रीय रक्षा परिषद और समिति ने उनका बचाव करने से इनकार कर दिया। परचुरे ने गांधीजी की हत्या में अपनी

संलिप्तता का सार्वजनिक रूप से दावा किया था, लेकिन जब उन्हें पुलिस का सामना करना पड़ा, तो उन्होंने कबूलनामा करना शुरू कर दिया! राष्ट्रीय रक्षा परिषद की स्थापना के समय ही यह अफवाह फैल चुकी थी कि कोई व्यक्ति सभी विवरण उपलब्ध करा रहा है, जो सावरकर को भी फंसाने के लिए पर्याप्त थे। जब परचुरे की पत्नी ने राष्ट्रीय रक्षा परिषद से संपर्क किया, तो परिषद ने यह कहते हुए उनका बचाव करने से इनकार कर दिया कि उनका मामला बचाव योग्य नहीं है और उनके कबूलनामे के कारण उन्होंने अपनी मौत का फरमान खुद लिख दिया है। अंततः, उनकी पत्नी को ग्वालियर के वकील इनामदार से विनती करनी पड़ी। शुरुआती हिचकिचाहट के बाद, इनामदार मान गए। मुकदमे के बाद लिखी गई अपनी पुस्तक, 'द स्टोरी ऑफ द रेड फोर्ट ट्रायल' में, इनामदार ने विस्तार से बताया है कि कैसे उन्होंने अपने मुवक्किल के लिए हार के मुंह से जीत छीन ली। गांधी हत्याकांड में उच्च न्यायालय द्वारा परचुरे को बरी करना उनकी निर्दोषता पर आधारित नहीं था, बल्कि उनके वकील की धूर्त चालों पर आधारित था।
परचुरे का स्वीकारोक्ति बयान
इसके बाद गवाह ने ग्वालियर निवासी डॉ. दत्तात्रेय सदाशिव परचुरे का इकबालिया बयान पढ़कर सुनाया, जो आरोपी संख्या नौ था। परचुरे ने अपने बयान में कहा था, 'इस इकबालिया बयान को देने के लिए पुलिस ने मुझे न तो धमकाया है और न ही किसी इनाम का वादा किया है। मैं यह इकबालिया बयान पूरी तरह से स्वेच्छा से, अपनी मर्जी से दे रहा हूं।'
मैं नाथूराम विनायक गोडसे को 1941 से व्यक्तिगत रूप से जानता हूं, लेकिन मैंने गोडसे के बारे में 1939 में ही सुना था। 27 जनवरी 1948 की रात लगभग 11 बजे गोडसे, आप्टे के साथ मेरे घर

आया। गोडसे ने मुझे बताया कि वह एक बहुत ही महत्वपूर्ण मिशन पर आया है। "मैं 2 फरवरी से पहले एक भयानक काम करने जा रहा हूं। मैं महात्मा गांधी की हत्या करने जा रहा हूं।"
'गोडसे के पास एक रिवॉल्वर थी, लेकिन वह एक आधुनिक और भरोसेमंद पिस्तौल खरीदना चाहता था। मैंने उससे कहा कि मैं उसे किसी भी हालत में अपनी लाइसेंसी पिस्तौल नहीं दूंगा, लेकिन मैंने उसे दूसरी पिस्तौल दिलवाने का वादा किया। अगली सुबह, मैंने अपने बेटे नीलकंठ और नौकरानी रूपा को दंडवते को लाने भेजा। जब मैं 28 जनवरी की दोपहर को घर लौटा, तो मैंने देखा कि गोडसे, आप्टे और दंडवते एक देसी रिवॉल्वर का परीक्षण कर रहे थे। वे उसे आज़माने के लिए आंगन में गए। मैं उनके साथ नहीं गया।'
'देर शाम दंडवते मेरे घर लौटा। उसके पास एक स्वचालित पिस्तौल और लगभग ग्यारह या बारह गोलियां थीं। मुझे नहीं पता कि उसे पिस्तौल कहां से मिली। उसने हमें बताया कि पिस्तौल की कीमत 500 रुपये है। आप्टे ने दंडवते को 300 रुपये दिए और बाकी बाद में देने का वादा किया। उसी रात वे तीनों एक तांगे में बैठकर चले गए।'
29 जनवरी को मैंने अपने भाई को बताया कि मैंने गोडसे और आप्टे को पिस्तौल दिलाने में मदद की थी, जिससे वे गांधीजी की हत्या करने की योजना बना रहे थे। यह सुनकर मेरा भाई स्तब्ध रह गया। उसने मुझसे पूछा कि मैंने ऐसा काम क्यों किया। 30 जनवरी 1948 की शाम को जब मुझे महात्मा गांधी की हत्या की खबर मिली, तो मैंने 1 रुपये की मिठाई मंगवाई और उसे अपने परिवार और दोस्तों में बाँट दिया। मैंने हिंदू राष्ट्र सेना के सदस्यों को मिठाई बाँटकर महात्मा गांधी की हत्या का जश्न भी मनाया।

'मुझे नहीं पता कि गोडसे और आप्टे ने ग्वालियर लाए रिवॉल्वर को अपने पास रखा या स्वचालित पिस्तौल के बदले में उसे दंडवते को दे दिया। मेरे पास एक स्टेंगन भी थी। मैंने उसे मुरार में अपने एक दोस्त के पास छोड़ दिया था।'
बैज का साक्ष्य, अनुमोदक
20 जुलाई को अभियोजन पक्ष ने गवाह दिगंबर रामचंद्र बैज को गवाही के लिए बुलाया। बैज पहले आरोपी थे, लेकिन बाद में उन्हें 'माफी का साक्षीदार' कहा गया और उन्हें सशर्त क्षमादान दे दिया गया। बैज के पूरे बयान के लिए परिशिष्ट IV देखें।
21 जुलाई 1948: मदनलाल के वकील बैनर्जी ने अदालत से अनुरोध किया कि गांधीजी द्वारा दिल्ली में अपने अंतिम प्रवास के दौरान दिए गए सार्वजनिक भाषणों की प्रतिलिपियाँ उपलब्ध कराई जाएँ। बैज ने अपनी गवाही में कहा था कि योजना गांधीजी के साथ सुहरावर्दी की हत्या करने की थी, इसलिए बैनर्जी ने कहा कि दोनों के बीच संबंध स्थापित करना आवश्यक है। इनामदार ने अदालत से अनुरोध किया कि बैज के पीछे खड़े दो सशस्त्र पुलिसकर्मियों को तुरंत हटा दिया जाए क्योंकि इससे बैज भयभीत हो सकता है। अभियोजन पक्ष ने जवाब दिया कि उनकी उपस्थिति के दो कारण थे: एक तो यह सुनिश्चित करना कि वह भाग न सके, और दूसरा उसे हत्या या अपहरण से बचाना। बैज ने अपना पूरा बयान दिया और फिर सभी आरोपियों की पहचान की।
अपनी गवाही में बैज ने अदालत को आगे बताया कि 31 जनवरी 1948 को गिरफ्तार किए जाने पर उसने पुलिस को हरबंस सिंह, देशमुख और विधायक खरात के घर दिखाए थे।
बैज की जिरह

भोपटकर के एक प्रश्न का उत्तर देते हुए बैज ने कहा, 'हमें अपनी "दिल्ली यात्रा" के लिए कुर्ला के केवल एक ही स्थान से धनराशि प्राप्त हुई, जो कि काले से थी। एक अन्य स्रोत से हमें 400 रुपये मिले, लेकिन वह मेरे निजी संबंधों और मेरे व्यक्तिगत खर्चों को पूरा करने के लिए थे। मैं इस तथ्य से अवगत हूं कि हिंदू महासभा के कार्यक्रम अखिल भारतीय समिति द्वारा तय किए जाते हैं और कार्य समिति कार्यक्रम को लागू करने के लिए बाध्य है। हिंदू महासभा का अंतिम सम्मेलन दिसंबर 1946 में गोरखपुर में आयोजित हुआ था। सावरकर सम्मेलन में शामिल नहीं हुए थे क्योंकि पिछले तीन-चार वर्षों से उनका स्वास्थ्य खराब है और वे हिंदू महासभा के कामकाज में सक्रिय रूप से भाग नहीं लेते हैं।' उन्होंने आगे कहा कि यह सच नहीं है कि सावरकर पिछले तीन वर्षों से अपने घर से बाहर नहीं निकले हैं, क्योंकि वे अपने घर या आसपास के छोटे निजी सम्मेलनों और सामाजिक सभाओं में भाग लेते थे। 'वे मराठी साहित्य के एक प्रसिद्ध लेखक और कवि हैं।' मुझे यह बात बिल्कुल सच लगती है कि पूरे देश में सावरकर जैसा कोई दूसरा मराठी या अंग्रेजी वक्ता नहीं है। मैं उन्हें सिर्फ हिंदुओं का नेता नहीं मानता। मेरे लिए वे भगवान हैं।'
23 जुलाई 1948: भोपटकर द्वारा पूछे जाने पर बैज ने कहा, 'हिंदू महासभा की नीति विभाजित भारत का पुनर्मिलन कराना है। मंत्रिमंडल मंत्री डॉ. श्यामप्रसाद मुखर्जी ने मंत्रिमंडल में शामिल होने से पहले सावरकर से अनुमति अवश्य ली होगी। मुझे पूरा विश्वास है कि उन्होंने मंत्रिमंडल स्वीकार करने से पहले अखिल भारतीय हिंदू महासभा के अध्यक्ष भोपटकर से परामर्श अवश्य किया होगा। मुझे ज्ञात है कि विभाजन के बाद महासभा ने नेहरू के नेतृत्व वाली कांग्रेस सरकार के साथ घनिष्ठ सहयोग की नीति

अपनाई है। महाराष्ट्र की प्रांतीय हिंदू महासभा के वार्षिक सम्मेलन में भोपटकर ने नेहरू के नेतृत्व वाली सरकार को सहयोग देने का प्रस्ताव रखा था। गोडसे और आप्टे ने इस प्रस्ताव का कड़ा विरोध किया था। भोपटकर ने कहा था कि महासभा को भंग कर दिया जाए और उसे एक राजनीतिक दल के रूप में गठित किया जाए। जब भोपटकर ने यह सुझाव दिया तो नाथूराम गोडसे बेहद उत्तेजित हो गए और चाकू लहराते हुए भोपटकर की ओर दौड़े। आप्टे ने भी गोडसे का समर्थन किया था।' बैज ने दावा किया कि सम्मेलन दिसंबर 1946 में हुआ था। (भोपटकर ने उन्हें सुधारते हुए कहा कि बैज वर्ष भूल गए थे।) आप्टे और गोडसे का दृष्टिकोण स्वतंत्र था। हाँ, कभी-कभी वे महासभा नेतृत्व से परामर्श करते थे। गोडसे और आप्टे कई बार अपने प्रकाशनों में महासभा की नीतियों की आलोचना करते थे, पहले दैनिक अग्रनी में और फिर हिंदू राष्ट्र में।
मैंने नामजोशी से जी.वी. केतकर से मेरे लिए नौकरी की सिफारिश करने को कहा। केतकर ने मुझे हिंदू संगठन निधि और हिंदू अनाथ आश्रम के लिए चंदा इकट्ठा करने का काम दिया। यह धन सभी हिंदुओं के लिए इस्तेमाल किया जाता था, चाहे वे किसी भी राजनीतिक विचारधारा के अनुयायी हों। 1942 में मैंने कुछ फर्नीचर और अन्य पारिवारिक विरासत की वस्तुएं बेच दीं और 75-100 रुपये की पूंजी से शस्त्र भंडार की स्थापना की। मैंने किस्तय्या को काम पर रखा। मैं एम.टी. कुलकर्णी से हथियार खरीदता-बेचता था, जिनकी हिंदू भंडार नाम की हथियारों की दुकान थी।
'जब भी बंबई में हिंदू-मुस्लिम झड़पें और दंगे होते थे, दीक्षित महाराज भारी मात्रा में हथियार, गोला-बारूद और विस्फोटक मंगवाते थे। मैं दीक्षित महाराज को लाइसेंसशुदा और गैर-लाइसेंसशुदा हथियार जैसे पिस्तौल, रिवॉल्वर, गन कॉटन बम और

अन्य विस्फोटक सामग्री की आपूर्ति करता था। उनके पास आवश्यक लाइसेंस नहीं थे, लेकिन इससे उन्हें कभी भी डिलीवरी लेने में कोई बाधा नहीं आई।' इसके बाद बैज ने दादा महाराज के बारे में जानकारी देते हुए कहा, 'मैं विधायक खरात को जानता हूं, लेकिन होनाजी गणपत को नहीं जानता। खरात कांग्रेस समाजवादी थे और मैं उन्हें 1946 में उनकी शादी के बाद से जानता हूं। मैंने 16 जनवरी 1948 की शाम को खरात को विस्फोटक सामग्री के दो पैकेट दिए और उनसे कहा कि वे इन्हें हैदराबाद राज्य कांग्रेस के सदस्यों के अलावा किसी और को न दें। खरात हैदराबाद राज्य कांग्रेस के सक्रिय कार्यकर्ताओं में बाबासाहेब परंजपे, देशमुख, शेषराव और नायक को जानते थे। मैंने खरात को निर्देश दिया था कि वे पैकेट इन चारों में से किसी एक को सौंप दें और वे जो भी राशि दें, उसे स्वीकार कर लें।' कीमत पहले से तय थी और उन्हें यह पता था। जब मैं 22 जनवरी को दिल्ली से पुणे लौटा, तो मेरी मुलाकात खरात से नहीं हुई। मुझे 31 जनवरी को गिरफ्तार किया गया, जो गांधीजी की हत्या के एक दिन बाद था। बीच के नौ दिनों में, मेरी मुलाकात हैदराबाद कांग्रेस के किसी भी कार्यकर्ता से नहीं हुई। एक दोपहर मेरी मुलाकात जी.वी. केतकर से हुई। मुझे गिरफ्तारी का बहुत डर था क्योंकि मुझे पता था कि मदनलाल को गिरफ्तार कर लिया गया है। मुझे एहसास हुआ कि अगर मैं खरात के घर गया, तो वह विस्फोटक के दोनों पैकेट मुझे सौंप देगा और पुलिस मुझे फंसा देगी। 31 जनवरी को एक बहुत गुस्से में
31 जनवरी को एक बेहद क्रोधित और हिंसक भीड़ ने मेरे घर और दुकान पर हमला किया। उन्होंने मेरी दुकान में आग लगा दी। आग में मेरा सारा सामान और खाता-बही नष्ट हो गए। क्रोधित भीड़ ने हिंदू

महासभा के नेताओं और उन लोगों के घरों और दफ्तरों पर भी हमला किया, जिनके बारे में माना जाता था कि वे उनके सहयोगी थे। गांधी की हत्या में शामिल थे।
23 जुलाई 1948: आत्मचरण ने घोषणा की कि उन्हें एक गुमनाम पत्र मिला है जिसमें उन्हें जान से मारने की धमकी दी गई है। दाफ्तरी और बनर्जी ने भी दावा किया कि उन्हें भी जान से मारने की धमकियां मिली हैं। न्यायाधीश ने फैसला सुनाया कि वे किसी भी सुरक्षा प्रक्रिया में कटौती या ढील देने का आदेश नहीं देंगे। बैज के वकील ने अनुरोध किया कि बैज को सर्दी और बुखार होने के कारण उनकी पूछताछ स्थगित कर दी जाए। आत्मचरण ने अनुरोध अस्वीकार कर दिया और कहा कि उन्हें बैठने के लिए कुर्सी दी जाएगी, लेकिन कार्यवाही स्थगित नहीं की जाएगी।
बैज ने आगे बताया, '15 जनवरी को जब मैं आप्टे के साथ दीक्षित महाराज के घर गया, तो आप्टे ने मुझे बताया कि उसके समूह ने 40,000 रुपये के हथियार, गोला-बारूद और विस्फोटक इकट्ठा कर लिए हैं और वे उन्हें कश्मीर ले जा रहे हैं। जब करकरे और मदनलाल "सामान" लेकर दीक्षित महाराज के घर से निकले, तो आप्टे ने मुझे बताया कि हम एक महत्वपूर्ण मिशन पर जा रहे हैं। दो दिन बाद आप्टे ने दीक्षित महाराज को बताया कि हम कश्मीर जा रहे हैं। 20 जनवरी की सुबह, जब मैं दिल्ली में हिंदू महासभा भवन में आप्टे से मिला, तो मैंने कोई पैसा नहीं मांगा। लेकिन मैंने उसे 350 रुपये का हिसाब दिखाया जो उसने मुझे दिए थे। मैंने अपने नौकर शंकर को गांधीजी की हत्या की योजना के बारे में तब तक नहीं बताया था जब तक कि हम सभी 20 जनवरी की दोपहर को मरीना होटल में इकट्ठा नहीं हो गए थे। इसके बाद, हम सभी को हथियार बांटे गए। तभी मैंने शंकर से कहा कि मैं एक आदमी पर ग्रेनेड फेंकूंगा और फिर

उसे गोली मार दूंगा। "तुम्हें भी उस व्यक्ति के साथ ठीक वैसा ही करना है जैसा मैं करता हूं।"' फिर मैंने उसे बताया कि जिसे हम मारने जा रहे थे, वह एक बूढ़ा आदमी था और उसका नाम "गांधी" था। 20 तारीख को मैंने प्रार्थना सभा में सुहरावर्दी को नहीं देखा। बम विस्फोट के कुछ ही मिनटों के भीतर मैं बिरला हाउस से भाग निकला, इसलिए मैं यह नहीं कह सकता कि उसके बाद क्या हुआ। मैंने विस्फोट की आवाज़ सुनी, मैंने मदनलाल को पकड़ा जाते देखा। मेरी घनी दाढ़ी और लंबे बाल होने के कारण मुझे आसानी से पहचाना जा सकता है। मुझे एहसास हुआ कि अगर मैंने उस शाम कुछ भी किया तो मैं पकड़ा जाऊँगा। इसलिए मैंने अपने पास मौजूद हथगोला शंकर को सौंप दिया और उसे आदेश दिया कि जब तक मैं उसे इशारा न करूँ, तब तक वह कुछ न करे। अगर नाथूराम, आप्टे, करकरे या गोपाल गोडसे या उनमें से किसी ने भी पहले अपने पास मौजूद हथगोले फेंके होते, तो मैं शंकर को गांधीजी पर अपने पास मौजूद हथगोले फेंकने का इशारा कर देता। लेकिन जैसे ही मदनलाल ने गन कॉटन बम फोड़ा, चारों प्रार्थना स्थल से बाहर भागे, टैक्सी में बैठे और फरार हो गए। मैं उनके इरादे समझ गया था। उन्होंने मदनलाल, शंकर और मुझे फंसाने की योजना बनाई थी, ताकि वे खुद बिना किसी सजा के बच निकलें।'
27 जुलाई 1948: भोपटकर के एक प्रश्न का उत्तर देते हुए बैज ने कहा, 'मैं जिन हथगोले की आपूर्ति करता हूँ, उन्हें दूसरों से अलग पहचानने के लिए मैं हमेशा उन पर लाल रंग का "X" का निशान लगाता हूँ और उनके चारों ओर लाल टेप चिपका देता हूँ। मैंने अब तक लगभग पचास से साठ हथगोले बेचे हैं। दिल्ली से लौटने पर मैंने अपना पूरा घर साफ कर दिया। मैं किसी भी तरह के आपत्तिजनक सबूत के साथ पकड़ा नहीं जाना चाहता था। मैंने अपने पुराने दोस्तों से भी

संपर्क नहीं किया। 23 से 31 जनवरी तक मैं अपने घर में ही बंद रहा। अगले दिन मुझे गिरफ्तार कर लिया गया और बुधवार पेठ स्थित केंद्रीय जेल में रखा गया। वहाँ से मुझे छावनी पुलिस स्टेशन ले जाया गया। शंकर को मेरे साथ गिरफ्तार नहीं किया गया था। मैंने शंकर को फरवरी के दूसरे सप्ताह में बॉम्बे जेल में देखा। मुझे 4 फरवरी को बॉम्बे जेल में स्थानांतरित कर दिया गया और 24 मई को दिल्ली लाए जाने तक मैं वहीं कैद रहा। मुझे 21 जून 1948 को शाम 5:30 बजे आधिकारिक क्षमादान दिया गया।'
उन्होंने आगे बताया कि उनका बयान दर्ज होने तक उन्हें सीआईडी की बॉम्बे शाखा में लगभग एकांत कारावास में रखा गया था। मेंगले के सवालों का जवाब देते हुए बैज ने कहा, '1947 में मैंने पुणे में वीर सावरकर वाचनालय (पुस्तकालय) खोला। मैं महासभा की विचारधारा से प्रेरित मराठी प्रकाशन और पत्रिकाएँ मंगवाता था। मैं दैनिक अग्रनी (जिसे बाद में हिंदू राष्ट्र नाम दिया गया) द्वारा प्रतिपादित दर्शन से परिचित था। इसने विभाजन का पुरजोर विरोध किया और माना कि कांग्रेस द्वारा अपनाई गई मुसलमानों को खुश करने की नीति और अहिंसा राष्ट्र के लिए हानिकारक थी।'
28 जुलाई 1948: विधि मंत्री डॉ. अंबेडकर और उनकी पत्नी कुछ समय के लिए अदालत में उपस्थित थे। मेंगल ने बैज से पूछा, 'क्या आप्टे ने आपको यह नहीं बताया था कि उनके साथ दिल्ली जाकर आप न केवल प्रदर्शन में भाग ले सकेंगे, बल्कि शरणार्थियों को हथियार और विस्फोटक बहुत ऊँची कीमतों पर बेचकर भारी मुनाफा भी कमा सकेंगे?' बैज ने नकारात्मक उत्तर दिया। एक अन्य प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा कि 20 जनवरी की सुबह जब आप्टे और उन्होंने बिड़ला हाउस का जायजा लिया, तो किसी ने भी उन्हें न तो फटकारा और न ही उनका विरोध किया। उन्होंने कहा, 'मैं द्वितीय विश्व युद्ध

के दौरान कांग्रेस के असहयोग आंदोलन के बारे में जानता हूँ। मैं पुणे के महाराष्ट्र व्यायाम मंडल के बारे में जानता हूँ जहाँ सशस्त्र बलों के लिए अधिकारियों की भर्ती की जाती थी। सरकार इस संगठन को आर्थिक सहायता देती थी और मंडल द्वारा अनुशंसित सभी लोगों को भर्ती करती थी। भोपटकर इसके संस्थापक थे। मुझे हिंदू राष्ट्र सेवक के रूप में जाना जाता था। करकरे अहमदनगर के हैं और डेक्कन गेस्ट हाउस के मालिक हैं। वहाँ हिंदू शरणार्थियों को मुफ्त आवास और भोजन दिया जाता है।' करकरे पूर्वी बंगाल के नोआखली में हिंदू शरणार्थियों की सेवा करने गए थे और अपने साथ सौ कटारें ले गए थे, जो उन्होंने मुझसे खरीदी थीं। 9 जनवरी को करकरे ने मुझे यह नहीं बताया कि मदनलाल, चोपड़ा और ओमप्रकाश कौन थे। बाद में मुझे पता चला कि मदनलाल एक साहसी, बहादुर और उत्साही युवक है। 20 जनवरी को उनकी गिरफ्तारी के बाद ही मुझे अखबारों की खबरों से पता चला कि वह एक शरणार्थी थे।
29 जुलाई 1948: '24 मई को जब मुझे दिल्ली लाया गया, तो मुझे लाल किले में हिरासत में नहीं रखा गया। लगभग 8 फरवरी को मुझे पुणे ले जाया गया, जहाँ मैंने खरात, नागमोडे और शेलार के घरों में पुलिस दल के साथ तलाशी ली। 27 मई को मुझे अदालत में पेश किया गया। जून की शुरुआत में, मैंने बॉम्बे के पुलिस उपायुक्त जे.डी. नागरवाला से मिलने की अनुमति मांगी। वे मुख्य पुलिस अभियोजक थे (नागरवाला मुख्य जांच अधिकारी थे)। मैंने उनसे कहा कि मैं सब कुछ कबूल करना चाहता हूँ। उन्होंने कहा कि मुझे गवाह के रूप में गवाही देनी होगी। लेकिन मैंने कबूलनामा देने पर जोर दिया। जब मैं बॉम्बे पुलिस की हिरासत में था, तो मई में मेरी पत्नी रुक्मणी मुझसे मिलने आई। मैंने उससे कहा, "मेरे सभी वचन पत्र, ऋण और महत्वपूर्ण पत्र ले आओ।" चूंकि वह अनपढ़ थी, इसलिए उसे किसी

ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता थी जो पत्रों को पढ़कर सुनाए ताकि वह तय कर सके कि कौन से पत्र महत्वपूर्ण हैं। पंद्रह दिन बाद वह पत्र लेकर लौटी।' मुझे नहीं पता कि अदालत में प्रदर्श बी.90 के रूप में प्रदर्शित पत्र मेरी पत्नी द्वारा लाया गया था या नहीं। (यह पत्र करकरे ने बैज को मराठी में लिखा था, जिसका अंग्रेजी अनुवाद इस प्रकार है: "जो व्यक्ति आपके पास आया है वह एक भरोसेमंद सज्जन है। मैं कल कुछ कठिनाइयों के कारण नहीं आ सका। मैं विशेष रूप से इस व्यक्ति को भेज रहा हूँ। आपको टेलीग्राफिक मनीऑर्डर द्वारा 400 रुपये प्राप्त हो गए होंगे। आपके द्वारा खरीदी गई पुस्तकों की प्रतियां इस व्यक्ति के साथ भेजी जा सकती हैं, जिसे भुगतान की व्यवस्था के संबंध में निर्देश दिए गए हैं। हर बार दस वस्तुएं सौंपी जानी हैं, और प्रत्येक वस्तु के लिए 15 रुपये का शुल्क लिया जाना है। मैं 2 तारीख को आऊंगा और अपना हिसाब-किताब निपटाऊंगा। पैसे की चिंता न करें। बॉम्बे से आए सज्जन अवश्य ही आ गए होंगे। गड़बड़ी इसलिए हुई क्योंकि आपका टेलीग्राम एक दिन देरी से प्राप्त हुआ।") मैंने यह पत्र पुलिस को नहीं दिया था।
शंकर के वकील मेहता ने दोपहर तीन बजकर दस मिनट पर बैज से जिरह शुरू की। बैज ने कहा, 'मैंने महात्मा गांधी की हत्या की साजिश में स्वेच्छा से और जानबूझकर हिस्सा लिया। मैं अपने कार्यों के परिणामों को जानता था और उनका सामना करने के लिए तैयार था। पुणे में हुए दंगों के कारण मैं चिंतित था, अन्यथा मुझे अपने भविष्य की कोई चिंता नहीं है। मेरी गिरफ्तारी के बाद, मेरे भाई नारायण मेरी पत्नी और परिवार के साथ केवल एक बार बंबई में मुझसे मिलने आए थे। मैं अपना ख्याल रखने और अपने देश की सेवा करने के लिए प्रतिबद्ध था। मैं हिंदुओं को मुफ्त में हथियार देकर हिंदू हित

की सेवा करता था। मैंने कभी पैसे बचाकर अमीर बनने के बारे में नहीं सोचा। अब मेरी पत्नी और बच्चों की देखभाल करने वाला कोई नहीं है।'
30 जुलाई 1948: यह उम्मीद की जा रही थी कि बैज की जिरह उसी दिन समाप्त हो जाएगी। इसके बाद अदालत उनसे उनके बयान पर हस्ताक्षर करवाएगी।
इनामदार ने अदालत का ध्यान इस तथ्य की ओर दिलाया कि अभियोजन पक्ष ने गवाह को अंतिम गवाह के रूप में पेश किया था, जिससे उनके मुवक्किल गोपाल गोडसे के बारे में कई अफवाहें फैल गईं (तब तक इनामदार ने गोपाल गोडसे का प्रतिनिधित्व भी शुरू कर दिया था)। उन्होंने कहा कि उन्हें उम्मीद है कि भविष्य में वे अपने गवाहों को इस तरह पेश करेंगे जिससे उनके मुवक्किल के हितों को नुकसान न पहुंचे। हिंदू महासभा और आरएसएस के हलकों में यह अटकलें तेज हो गई थीं कि गोपाल ने अन्य सभी आरोपियों को फंसाने वाला बयान दिया था और उसे 'कमजोर कड़ी' माना जा रहा था। इन धारणाओं के कारण कई वर्षों तक गोपाल और उनके परिवार को आलोचनाओं का सामना करना पड़ा।
अपने वकील द्वारा बैज से की गई पूछताछ से संतुष्ट न होकर, शंकर किस्तय्या ने एक चौंकाने वाला कदम उठाते हुए अदालत से बैज से पूछताछ करने की अनुमति मांगी। उन्होंने बैज से पूछा कि क्या उन्हें गांधी की हत्या की योजना की जानकारी थी। बैज ने कहा कि शंकर को यह नहीं बताया गया था कि वे पुणे में क्यों थे, और बाद में बॉम्बे या दिल्ली क्यों गए। उन्हें गिरोह के उद्देश्य के बारे में मरीना होटल की सीढ़ियों से उतरते समय बताया गया था। बाद में, बैज ने उस बैग की पहचान की जिसमें वह प्रार्थना सभा में रिवॉल्वर और हैंड ग्रेनेड लेकर गए थे। उन्होंने जिरह के दौरान

कहा था कि आप्टे और नाथूराम स्वतंत्र विचारों वाले थे, लेकिन अक्सर दूसरों से सलाह लेते थे। उन्होंने स्पष्ट किया कि 'अन्य' में अखिल भारतीय हिंदू महासभा के अध्यक्ष, तातायाराव (सावरकर), अन्नाराव भोपटकर और जी.वी. केतकर शामिल थे।
31 जुलाई 1948: बैज की गवाही (अड़सठ पृष्ठ) दर्ज करने और उनसे जिरह करने में नौ दिन लगे। लिखित बयान गवाह को पढ़कर सुनाया गया और फिर उनसे उस पर हस्ताक्षर करने को कहा गया। 30 जनवरी 1948 को, नाथूराम की गिरफ्तारी के समय, उनसे 592 रुपये बरामद किए गए थे, जो आज उन्हें लौटा दिए गए।
2 अगस्त 1948: पूर्वी पंजाब की वैज्ञानिक प्रयोगशाला के निदेशक डॉ. डी.एन. गोयल से बरामद गोलियों, खाली कारतूसों और रिवॉल्वर का विश्लेषण करने का अनुरोध किया गया था। उन्होंने बताया कि खाली कारतूस और गोलियां एक ही रिवॉल्वर से चलाई गई थीं। सभी वकीलों ने उनसे जिरह की। अदालत ने गोयल से कुछ बिंदुओं पर स्पष्टीकरण मांगा: क्या फोरेंसिक प्रयोगशाला सीआईडी के उप महानिरीक्षक के समग्र नियंत्रण में थी; क्या प्रयोगशाला की स्थानीय अध्यक्षता पुलिस प्रशिक्षण विद्यालय के प्रधानाचार्य द्वारा की जाती थी; और अंत में, क्या गवाह को पुलिस विभाग से वेतन मिलता था।
अगले गवाह मरीन ड्राइव स्थित सी ग्रीन होटल के प्रबंधक सत्यवान भीलाजी राले थे। उन्होंने अदालत को उन आरोपियों के बारे में पूरी जानकारी दी, जिन्होंने नारायणराव डी. और वी. कृष्णाजी के नाम से होटल में चेक-इन किया था। राले ने फिर आप्टे की पहचान की। बचाव पक्ष के वकीलों ने उनसे कोई पूछताछ नहीं की।
3 अगस्त 1948: अभिनेत्री शांता भास्कर मोदक, जिन्हें 'बिम्बा' के नाम से जाना जाता था, के गवाही देने के बाद मुकदमे में सनसनी फैल गई। उन्होंने अदालत को बताया कि वह पुणे में रहती थीं और 14

जनवरी को पुणे एक्सप्रेस से द्वितीय श्रेणी के टिकट पर बॉम्बे आई थीं। 'ट्रेन में चढ़ते ही मैं खिड़की वाली सीट ढूंढ रही थी। खिड़की वाली सीट पर बैठे एक सज्जन उठे और मुझे अपनी सीट दे दी। जब ट्रेन चलने लगी, तो एक और आदमी आया और उस व्यक्ति के बगल वाली सीट पर बैठ गया जिसने मुझे अपनी खिड़की वाली सीट दी थी। मुझे ऐसा लगा जैसे दोनों आदमी एक-दूसरे को जानते हों और साथ यात्रा कर रहे हों।' फिर उन्होंने आप्टे और गोडसे की ओर इशारा करते हुए उन्हें अपने सहयात्री बताया। उन्होंने अदालत को बताया कि दादर में ट्रेन से उतरने के बाद, उन्होंने और उनके भाई ने दोनों को सावरकर सदन तक लिफ्ट दी थी। उन्होंने कहा कि चूंकि उनका भाई पास ही रहता था, इसलिए दोनों आरोपियों को छोड़ना उनके लिए सुविधाजनक था। उसने बताया कि वह 12 फरवरी 1948 को अपना बयान दर्ज कराने के लिए पुलिस स्टेशन गई थी। जब वह पुणे में थी, तब पुलिस उसे आरोपियों की पहचान करने के लिए बॉम्बे ले गई थी। अगले गवाह कश्मीरी लाल थे, जो बॉम्बे के एल्फिंस्टन होटल के पार्टनर थे। उनका बयान बेहद अहम था। उस दिन की घटनाओं का ब्योरा पिछले अध्याय में दिया जा चुका है। बॉम्बे लॉन्ड्री के मालिक नरसिंह भागजी, जो अगले गवाह थे, ने नाथूराम को तुरंत पहचान लिया और उनके कपड़ों को भी पहचान लिया, जिन पर लॉन्ड्री का 'एनवीजी' का निशान था। अगले दो गवाह, बॉम्बे के आर्यपथिक आश्रम के मैनेजर गयाप्रसाद दुबे और एल्फिंस्टन एनेक्स होटल में काम करने वाले नौकर गोविंद विश्वनाथ मालेकर ने भी आरोपियों की पहचान की। गयाप्रसाद दुबे ने बताया कि वह आप्टे को पिछले डेढ़ साल से जानते थे, क्योंकि वह अक्सर उनके होटल में ठहरते थे, कभी-कभी अपनी महिला मित्र के साथ। मालेकर ने भी आप्टे और करकरे दोनों को आसानी से पहचान लिया।

5 अगस्त 1948: बॉम्बे के अपोलो होटल में क्लर्क के रूप में कार्यरत कैंडिडो पिंटो ने सबसे पहले गवाही दी। आप्टे और करकरे के विरुद्ध उनकी गवाही महत्वपूर्ण थी। उन्होंने गवाही दी कि दोनों ने 'आर. विष्णु' और 'एन. काशीनाथ' के फर्जी नामों से होटल में चेक-इन किया था। उन्होंने पुष्टि की कि दोनों को होटल से ही गिरफ्तार किया गया था।
प्रोफेसर जगदीश चंद्र जैन का बयान
जलपान के लिए कुछ देर के विराम के बाद, बॉम्बे के शिवाजी पार्क निवासी और बॉम्बे के रामनारायण रुइया कॉलेज में प्रोफेसर जगदीश चंद्र जैन ने गवाही दी। उन्होंने मदनलाल कश्मीरीलाल पाहवा के साथ अपने संबंधों के बारे में बताया, जिन्हें वे अक्टूबर 1947 से जानते थे और कई बार उन्हें नौकरी दिलाने की कोशिश की थी। उन्होंने अदालत को बताया कि जनवरी 1948 के पहले सप्ताह में एक बार मदनलाल उनके घर एक ऐसे व्यक्ति के साथ आए थे जिसे वे 'सेठ' कहते थे। मदनलाल फिर उनके पास यह कहते हुए आए कि उन्होंने 'सेठ' के आदेश पर अहमदनगर में कांग्रेसी नेता राव साहब पटवर्धन के एक सम्मेलन पर हमला किया और उसे बाधित किया। उन्होंने कहा कि पटवर्धन हिंदू-मुस्लिम एकता का उपदेश दे रहे थे और चूंकि पुलिस हिंदू पक्ष के प्रति सहानुभूति रखती थी, इसलिए उन्होंने उनके खिलाफ कुछ नहीं किया, बल्कि केवल उनके पास मौजूद खंजर को जब्त कर लिया। जैन ने आगे बताया, 'मदनलाल ने मुझसे कहा, "हमने अहमदनगर में हिंदुओं की रक्षा के लिए एक हिंदू कमांडो समूह बनाया है और इसके लिए हथियार और विस्फोटक जमा कर रहे हैं। करकरे सेठ मुझे सावरकर से मिलवाने ले गए। मेरे कारनामों से प्रभावित होकर उन्होंने मेरी पीठ थपथपाई और मुझे अच्छा काम जारी रखने के लिए कहा।" जैन ने अदालत को बताया, 'फिर

मदनलाल ने मुझसे कहा, "हमने एक समूह बनाया है और हमारी योजना गांधीजी की हत्या करने की है। हमारी योजना यह है कि मैं गांधीजी द्वारा आयोजित शाम की प्रार्थना सभा में बम विस्फोट करूंगा ताकि दहशत और अराजकता फैल जाए, और इसका फायदा उठाकर हमारे समूह के अन्य सदस्य उन्हें खत्म कर देंगे।" मैंने मदनलाल को समझाने की कोशिश की, मैंने उससे कहा कि वह ऐसे भयानक काम करने के बारे में सोचे भी नहीं, लेकिन वह वापस आने का वादा करके चला गया। वह मुझसे आखिरी बार मिलने आया और कहा कि वह एक महत्वपूर्ण "मिशन" पर दिल्ली जा रहा है और लौटने पर मुझसे मिलेगा।'
जैन ने आगे बताया कि दो दिन बाद जयप्रकाश नारायण सेंट मैरी हॉस्टल में व्याख्यान देने आए थे। उन्होंने मदनलाल द्वारा बताई गई सारी बातें उन्हें बताने का सोचा था, लेकिन भीड़ के भारी दबाव के कारण वे केवल इतना ही बता पाए कि दिल्ली में गांधी जी की हत्या की साजिश रची जा रही है। उन्होंने कहा कि उन्होंने सरदार पटेल को सूचित करने की कोशिश की, लेकिन उन्हें बताया गया कि वे हवाई अड्डे के लिए निकल चुके हैं, और वे बॉम्बे प्रांतीय कांग्रेस के अध्यक्ष एस.के. पाटिल से भी संपर्क नहीं कर पाए। जैन ने आगे कहा, 'मैंने 21 तारीख को शाम 4 बजे बॉम्बे प्रांत के प्रधानमंत्री बाल गंगाधर खेर और गृह मंत्री मोरारजी देसाई से मुलाकात की और उन्हें साजिश के बारे में जो कुछ भी पता था, वह सब बताया।'
5 अगस्त 1948: जैन ने आगे कहा, 'पुलिस से मेरा पहला सामना इसी साजिश के सिलसिले में हुआ, जब वे मेरा बयान दर्ज करने आए थे। पुलिस द्वारा मेरा बयान दर्ज करने के दस दिन बाद, मजिस्ट्रेट की उपस्थिति में इसे फिर से दर्ज किया गया। मैंने अखबारों में पढ़ा था कि भारत पाकिस्तान को देय 55 करोड़ रुपये रोक रहा था और

ऐसा करने में हिचकिचा रहा था क्योंकि उसे डर था कि इस पैसे का इस्तेमाल कश्मीर पर अवैध आक्रमण के वित्तपोषण में किया जाएगा। 1942 में, मुझे औपनिवेशिक सरकार द्वारा भारत छोड़ो आंदोलन में भाग लेने के लिए गिरफ्तार किया गया था। उस समय मैं कांग्रेसी था।'
9 अगस्त 1948: बनर्जी ने जैन से जिरह जारी रखी। जैन ने कहा कि मदनलाल ने उन्हें अहमदनगर के आसपास के जंगलों में छिपाए गए हथियारों और विस्फोटकों के प्रकार और मात्रा के बारे में जानकारी नहीं दी थी। इसके बाद, बॉम्बे के फ्रेडरिक्स होटल के सहायक प्रबंधक जॉन फ्रीटस को बुलाया गया, जिन्होंने पंच गवाह के रूप में काम किया था। उन्होंने बताया कि उन्होंने 14 फरवरी 1948 को बॉम्बे के कोलाबा स्थित लैंड्सडाउन रोड पर अपोलो होटल में आरोपी आप्टे और करकरे की उपस्थिति में पुलिस द्वारा तैयार किए गए पंचनामा पर हस्ताक्षर किए थे।
THE TESTIMONY OF MAHANT SHRI KRISHNAJI MAHARAJ इसके बाद बॉम्बे के माता मंदिर के मुख्य पुजारी, महंत श्रीकृष्ण जीवनजी महाराज, जिन्हें दादा महाराज के नाम से भी जाना जाता है, को बुलाया गया। गवाह वैष्णव संप्रदाय के संस्थापक वल्लभाचार्य के वंशज थे और 1942 से कांग्रेस के सदस्य थे। उनके पास 'ए' श्रेणी का पायलट लाइसेंस था, जिसकी अवधि अब समाप्त हो चुकी थी। उन्होंने बताया कि वे आप्टे को जानते थे और उनकी पहचान भी बताई। उन्होंने यह भी स्वीकार किया कि वे सावरकर से दो बार और नेताजी सुभाष चंद्र बोस से एक बार मिले थे। उन्होंने कहा, 'मैंने सुना था कि आप्टे दिल्ली में होने वाली पाकिस्तान संविधान सभा को उड़ाने की योजना बना रहे हैं, इसलिए मैं उनसे मिलने गया। मैं पंढरपुर की तीर्थयात्रा पर जा रहा था,

इसलिए रास्ते में पुणे में रुका और आप्टे का पता पूछा।' आप्टे ने उन्हें बताया कि गोवा में 4,000 रुपये में दो मोर्टार लॉन्चर उपलब्ध हैं। 'मैंने उनसे कहा कि अगर मैं मोर्टार खरीदने का खर्च नहीं उठा सकता, तो भी वे जिन्ना और लियाकत अली खान को मारने की अपनी योजना पर कायम रहें।' नाथुराम की ओर इशारा करते हुए दादा महाराज ने कहा, 'वह आप्टे के साथ मेरे घर आया था और बाद में मेरी उससे पुणे में मुलाकात हुई।'
10 अगस्त 1948: महाराज ने गोडसे और आप्टे के साथ अपनी सभी मुलाकातों का ब्योरा दिया, जिन्होंने उनसे रिवॉल्वर की मांग की थी। 'तब तक मेरा उन पर से भरोसा उठ चुका था, इसलिए मैंने उनकी और मदद करने से इनकार कर दिया।' भोपटकर के एक प्रश्न का उत्तर देते हुए महाराज ने कहा, '9 अगस्त को, स्वतंत्रता दिवस से कुछ दिन पहले, मैं सावरकर की अध्यक्षता में आयोजित हिंदू सम्मेलन में भाग लेने दिल्ली गया था। मुझे याद नहीं है कि सम्मेलन में नेहरू सरकार को समर्थन देने का कोई प्रस्ताव पारित हुआ था या नहीं। मैंने नेहरू सरकार का विरोध किया था, और भविष्य में भी तब तक करता रहूंगा जब तक वह अपनी नीतियों में बदलाव नहीं लाती। सम्मेलन में अपने भाषण में सावरकर ने कहा था कि हिंदुओं को अपने सदियों पुराने मतभेदों को भुलाकर अपनी मातृभूमि की किसी भी आक्रमण से रक्षा के लिए एकजुट होना चाहिए। हिंदुओं को सरकार को मजबूत करना चाहिए। 1947 में जन्माष्टमी के दिन, मैं बॉम्बे प्रांत के गृह मंत्री श्री मोरारजी देसाई से उनके बॉम्बे स्थित घर पर मिलने गया था।' मैंने उनसे वादा किया था कि मैं पाकिस्तान भाग रहे मुसलमानों के खिलाफ किसी भी हिंसक कार्रवाई में या भारत में रहने का विकल्प चुनने वाले मुसलमानों के नरसंहार की किसी भी साजिश में हिस्सा नहीं लूंगा। मैंने गृह मंत्री को यह

नहीं बताया कि मैंने आप्टे को जिन्ना और लियाकत अली खान को मारने का आदेश दिया था। वे दोनों पहले ही पाकिस्तान जा चुके थे।
गांधीजी की नीतियां नेहरू सरकार की नीतियों से अलग थीं। गांधीजी हमेशा से हमारी मातृभूमि के विभाजन के विरोधी थे। मैंने गीता का अध्ययन किया है और प्रवचन देता हूँ। गीता में लिखा है, "स्वधर्मे निधान श्रेय परधर्मो भयवः"। यहाँ स्व, पर और धर्म तीनों को उनके प्रयोग के संदर्भ में उचित रूप से परिभाषित करना आवश्यक है। धर्म का अर्थ पूजा और कर्तव्य भी है। अहिंसा का अर्थ है किसी को शारीरिक क्रियाओं, मौखिक अपशब्दों या घृणास्पद विचारों से भी चोट न पहुँचाना या कष्ट न देना। सत्याग्रह को निष्क्रिय प्रतिरोध भी कहा जा सकता है। मेरा मानना है कि हरिजनों को मंदिरों में प्रवेश की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। मैं 1946 की दिवाली के बाद नोआखली गया था और वहाँ मैंने 4,000 से अधिक लोगों का शुद्धिकरण किया था जिन्हें जबरन गोमांस खिलाया गया था और वे अपवित्र हो गए थे। मैंने शुद्धिकरण अनुष्ठान किए और उन्हें हिंदू धर्म में वापस लाया। कई लोगों ने सुहरावर्दी सरकार द्वारा किए गए अत्याचारों की शिकायत की। हिंदुओं पर बहुत हिंसा, आतंक और उत्पीड़न हो रहा था, वहाँ हिंदू धर्म खतरे में था।
11 और 12 अगस्त 1948: किस्तय्या की तबीयत खराब होने के कारण दोनों दिन अदालत की कार्यवाही स्थगित कर दी गई। अधिवक्ता एन.एच. पंचनाथन ने बचाव पक्ष के वकील के रूप में पेश होने का अनुरोध करते हुए एक आवेदन प्रस्तुत किया।
13 अगस्त 1948: एयर इंडिया इंटरनेशनल सर्विसेज में कार्यरत एयरहोस्टेस लोर्ना बैनब्रिज ने नाथुराम और आप्टे दोनों की पहचान 27 जनवरी 1948 को बी. नारायणराव और एन. विनायकराव के नाम

से उड़ान भरने वाले यात्रियों के रूप में की। 'मुझे वे इसलिए याद हैं क्योंकि उनमें से एक लगातार कॉफी और जलपान मांग रहा था।'
साजिश की जानकारी पहले से ही ज्ञात थी।
भोपटकर द्वारा बॉम्बे के दलाल अंगद सिंह की गवाही के संबंध में दायर एक आवेदन पर फैसला सुनाते हुए, अदालत ने आदेश दिया कि इसे भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 157 के तहत दर्ज किया जाए। अंगद सिंह ने स्वीकार किया कि वह प्रो. जे.सी. जैन और मदनलाल को जानते थे और 26 अक्टूबर 1947 को मदनलाल से मिले थे। उन्होंने कहा, 'उन दिनों आरएसएस के स्वयंसेवक शिवाजी पार्क में प्रदर्शन कर रहे थे। प्रो. जैन ने कहा कि मुझे मदनलाल को काम ढूंढने में मदद करनी चाहिए।' इसके बाद उन्होंने जैन के घर में 10 या 11 जनवरी को हुई घटनाओं का वर्णन किया, जहां मदनलाल भी मौजूद थे और जहां उन्होंने गांधी की हत्या की साजिश रचने का दावा किया था। भोपटकर के प्रश्न का उत्तर देते हुए अंगद सिंह ने कहा, 'मैं अब समाजवादी पार्टी में शामिल हो गया हूं। बम विस्फोट के तीन दिन बाद, मैंने समाजवादी नेताओं अशोक मेहता और हरीश को सूचित किया कि महात्मा गांधी की हत्या की साजिश रची गई है। पुलिस ने फरवरी के अंतिम सप्ताह में मेरा बयान दर्ज किया।'
16 अगस्त 1948: अंगद सिंह की जिरह शुरू होने से पहले ही अदालत ने घोषणा कर दी कि वह गांधी जी के भाषणों, लेखों और बयानों के लिए 'दिल्ली डायरी' को मान्यता प्राप्त मूल स्रोत के रूप में स्वीकार नहीं करती। अगले दो गवाहों में से पहले, इंपीरियल बैंक ऑफ इंडिया की बॉम्बे शाखा के सेवानिवृत्त पेंशनभोगी गणपतराव भीमराव अफजुलपुरकर ने स्वीकार किया कि वे पिछले पांच वर्षों से हिंदू महासभा के लिए चंदा इकट्ठा करने वाले के रूप में बैज को

जानते थे। दूसरे गवाह, चरणदास मेघजी माथुरदास, बॉम्बे डाइंग मिल्स में साझेदार थे। उन्होंने भी स्वीकार किया कि वे बैज को जानते थे क्योंकि वे चंदे के लिए उनके पास आते थे।
17 अगस्त 1948: बैज और किस्तय्या के अस्वस्थ होने के कारण अदालत की कार्यवाही 20 अगस्त तक के लिए स्थगित कर दी गई।
रघु माली की गवाही, जिसने नथुराम गोडसे को पकड़ा था
20 अगस्त 1948: बिरला हाउस में काम करने वाले माली मूल के माली रघुनाथ नायक ने अदालत को बताया कि गांधी जी की हत्या वाले दिन वह प्रार्थना स्थल पर मौजूद थे। उन्होंने गोलीबारी से पहले और बाद की घटनाओं के बारे में अदालत को जानकारी दी। उनके पास एक हंसिया थी जिससे उन्होंने नाथूराम के सिर पर वार किया था। नाथूराम गोडसे के निर्देश पर बचाव पक्ष के वकीलों ने रघुनाथ से जिरह नहीं की।
दीक्षित महाराज की गवाही
गोस्वामी दीक्षित महाराज, गोस्वामी कृष्णजी महाराज उर्फ 'दादा महाराज' के छोटे भाई थे। उन्होंने बताया कि वे 1939 से सामाजिक कार्य कर रहे थे और 1942 से राजनीति में सक्रिय हुए। 1946 के अंत में, उन्होंने बैज से कटारें खरीदीं और बॉम्बे प्रांत के मुस्लिम रियासतों की सीमाओं पर रहने वाले ग्रामीणों में उनकी सुरक्षा के लिए वितरित कीं। उन्होंने स्वीकार किया कि आप्टे कई बार उनसे मिलने आए थे और उन्होंने हैदराबाद की स्थिति पर चर्चा की थी। दीक्षित महाराज ने अदालत को कई विवरण दिए, जैसा कि पिछले अध्याय में बताया गया है। उनकी गवाही अगले दिन भी जारी रही। उन्होंने कहा, 'जनवरी 1948 के अंतिम सप्ताह में, मैंने जैसलमेर संकट पर एक बैठक में भाग लिया, यह बैठक माता मंदिर में हुई थी। मेरी खराब सेहत के कारण, मुझे एक रिक्लाइनर कुर्सी पर बैठक में

ले जाया गया था। गोडसे (नथुराम) बैठक में मेरे पास आए और पूछा कि क्या मैंने उन्हें मांगे गए हैंडगन उपलब्ध कराने की व्यवस्था की है। मैंने नकारात्मक उत्तर दिया।' जनवरी 1948 में मेरे पास वैध पिस्तौल लाइसेंस था। महात्मा गांधी की हत्या के सात दिन बाद दादा महाराज बनारस से लौटे। मैंने उनसे पूछा, "क्या आप उस गोडसे को जानते हैं जिसे महात्मा गांधी की हत्या के आरोप में गिरफ्तार किया गया है?" दादा ने मुझे उसकी पहचान बताई। हथियारों को तबला और दुग्गा के अंदर छिपाया गया था।
दीक्षित महाराज ने आगे कहा, 'अगस्त क्रांति आंदोलन के दौरान समाजवादी नेता अच्युत पटवर्धन तीन दिन माता मंदिर में रुके थे, मैं भी वहीं रहता था। मैं हिंदू महासभा की कुछ नीतियों और मान्यताओं से सहमत नहीं हूं, लेकिन हिंदुओं और उनके अधिकारों की रक्षा करने के उनके दर्शन से सहमत हूं।' दीक्षित महाराज ने बताया कि बैज तबले और दुग्गों में खंजर छिपाकर लाता था क्योंकि बंबई के पुलिस आयुक्त ने लाठी ले जाना भी गैरकानूनी बना दिया था।
नथुराम गवाह से जिरह करता है
डांगे द्वारा दीक्षित महाराज से पूछताछ पूरी करने के बाद, नाथूराम ने अदालत से कुछ प्रश्न पूछने की अनुमति मांगी। नाथूराम के एक प्रश्न का उत्तर देते हुए दीक्षित ने कहा, 'मेरे कई समाजवादी नेताओं से घनिष्ठ संबंध हैं। मैं जानता था कि वे हिंदू वर्चस्ववादी विचारधारा और उग्र हिंदूवाद के व्यवहार का समर्थन नहीं करते। लेकिन हैदराबाद में उनके काम को देखकर मैंने मान लिया था कि वे हिंदुओं को मजबूत करने के लिए ऐसा कर रहे हैं। मुझे अपनी मातृभूमि के विभाजन का विचार कभी पसंद नहीं आया। मुझे नहीं पता कि बॉम्बे में एआईसीसी के सम्मेलन के दौरान भारत

के विभाजन को स्वीकार करने वाले प्रस्ताव पर बहस में कांग्रेस के भीतर समाजवादी गुट तटस्थ रहा था या नहीं।'
23 अगस्त 1948: मदनलाल के वकील, बनर्जी ने अदालत में एक आवेदन प्रस्तुत किया, जिसमें कहा गया था, '21 अगस्त को दीक्षित महाराज की जिरह के दौरान, मेरे हिंदू महासभा का सदस्य होने के संदर्भ में कुछ बयान दिए गए थे। मैं यह बिल्कुल स्पष्ट करना चाहता हूं कि न तो मैं हिंदू महासभा का सदस्य हूं और न ही कभी रहा हूं। मैं हर घटना या परिस्थिति पर एक शरणार्थी के रूप में ही विचार करता था, न कि किसी राजनीतिक दल के सदस्य के रूप में।'
'मुझे इस बात से गहरा दुख हुआ कि गांधीजी ने भारत सरकार को पाकिस्तान को 55 करोड़ रुपये देने के लिए मजबूर किया था। मुझे लगा कि गांधीजी दिल्ली के मुसलमानों की दबी-दबी आवाज़ें सुन सकते थे। लेकिन राष्ट्रपिता और भारत सरकार के "तानाशाह" के कान लाखों हिंदू शरणार्थियों की दिल दहला देने वाली चीखों के प्रति बहरे थे। मैंने 20 जनवरी को बम विस्फोट किया, ताकि शरणार्थियों की चीखें गांधीजी के उन बहरे कानों तक पहुँच सकें।'
गृह मंत्री मोरारजी देसाई का बयान
भोपतकर ने अभियोजन पक्ष द्वारा मोरारजी देसाई को भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 157 के तहत प्रो. जैन की गवाही की पुष्टि करने के लिए बुलाए जाने पर आपत्ति जताते हुए एक आवेदन प्रस्तुत किया। आवेदन में दावा किया गया कि, चूंकि बचाव पक्ष जैन की गवाही की वैधता पर विवाद कर रहा था, इसलिए अधिनियम की उक्त धारा के अनुसार, गांधी हत्याकांड में इसकी स्वीकार्यता को चुनौती दे रहा था, इसलिए बचाव पक्ष ने अदालत से अनुरोध किया कि ऐसी गवाही को न सुना जाए, जिसे केवल एक अमान्य गवाही की पुष्टि के लिए सुना जा रहा था। आपत्ति खारिज कर दी गई। देसाई ने कहा,

'मैं बॉम्बे प्रांत सरकार का गृह मंत्री हूं। मैं गृह और राजस्व विभागों का प्रभारी हूं। मैं अपने काम के लिए आर्थिक मुआवजा लेता हूं। आपराधिक जांच के सभी विभाग गृह मंत्रालय के अंतर्गत आते हैं। मुझे अभी पता चला है कि प्रो. जगदीश चंद्र जैन कौन हैं। मैंने उन्हें पहली बार 21 जनवरी 1948 को लगभग शाम 4 बजे देखा था, जब बी.जी. खेर ने मुझे अपने कक्ष में बुलाया था। जैन ने मुझे पूरी कहानी सुनाई।' मैंने उसी रात अहमदाबाद जाने से पहले रेलवे स्टेशन पर नागरवाला से मुलाकात की और उन्हें तुरंत बुलाया। मैंने उन्हें तीन विशेष आदेश दिए: पहला, करकरे को तुरंत गिरफ्तार करना; दूसरा, सावरकर के घर और उनकी गतिविधियों पर कड़ी नजर रखना; और तीसरा, साजिश में शामिल लोगों के बारे में अधिक से अधिक जानकारी जुटाना। देसाई ने आगे बताया कि पटेल को 22 जनवरी को इस साजिश की जानकारी दी गई थी।
24 अगस्त 1948: देसाई ने आगे कहा कि उन्होंने नागरवाला को अपने मुखबिर की पहचान नहीं बताई। 'गांधीजी की हत्या के तीन-चार दिन बाद प्रो. जैन ने मुझे बताया कि अब उन्हें कोई खतरा नहीं दिख रहा है और वे जांच में खुलकर सहयोग करने को तैयार हैं। तब मैंने उनका परिचय नागरवाला से कराया।' देसाई ने भोपटकर को बताया कि उन्होंने विधानसभा भवन स्थित अपने कार्यालय में पुलिस को अपना बयान दिया था। मेंगले के एक प्रश्न का उत्तर देते हुए देसाई ने कहा, 'मैं पिछले अठारह वर्षों से कांग्रेसी हूं। मैं कांग्रेस के दिग्गज नेताओं सरदार वल्लभभाई पटेल, पंडित जवाहरलाल नेहरू, डॉ. राजेंद्र प्रसाद, राजकुमारी अमृत कौर, मौलाना अबुल कलाम आजाद और डॉ. अंबेडकर को जानता हूं। मैंने अखबारों में पढ़ा था कि गांधीजी ने 13 जनवरी से उपवास शुरू किया है। मैं गांधीजी का आदर करता हूं और इसलिए उनके स्वास्थ्य और कुशलक्षेम को लेकर

बहुत चिंतित था।' देसाई ने आगे कहा कि बंबई प्रांत की सरकार शरणार्थियों के कल्याण को लेकर बहुत चिंतित थी और उन्हें याद नहीं है कि करकरे ने अहमदनगर में 5,000 शरणार्थियों को बसाने का कोई विशेष प्रस्ताव दिया हो। ओक द्वारा पूछे गए एक प्रश्न का उत्तर देते हुए उन्होंने कहा, 'मैं पिछले सत्रह वर्षों से एआईसीसी का सदस्य हूं। 1942 में मैंने बंबई और इलाहाबाद में हुए एआईसीसी के दोनों सम्मेलनों में भाग लिया था। मुझे याद नहीं है कि सी. राजगोपालाचारी ने मुसलमानों को आत्मनिर्णय का अधिकार देने का कोई प्रस्ताव रखा था या नहीं। मुझे याद है कि मतभेदों के कारण राजगोपालाचारी को कांग्रेस छोड़नी पड़ी थी। वे मुस्लिम राजनेताओं के साथ समझौता करने के पक्ष में थे, लेकिन कांग्रेस इसके लिए तैयार नहीं थी। मैं सूरत ग्रामीण हिंदू निर्वाचन क्षेत्र से बंबई प्रांतीय विधानसभा के लिए निर्वाचित हुआ था। मेरा मानना है कि हिंदू महासभा एक सांप्रदायिक संगठन है और मुस्लिम लीग भी।' उन्होंने आगे कहा कि वे 1947 में हुए एआईसीसी सम्मेलन में उपस्थित थे, जहां 3 जून के विभाजन प्रस्ताव पर चर्चा हुई थी। विभाजन योजना को लेकर न तो कोई आम असंतोष था और न ही इसे अपनाने पर कोई खुशी। यह एक तयशुदा बात थी। देसाई से अगले दिन भी जिरह जारी रही। उन्होंने कहा, 'कई समाजवादियों ने विभाजन योजना के पक्ष में मतदान नहीं किया। महात्मा गांधी सम्मेलन की शुरुआत में उपस्थित नहीं थे। वे बाद में आए। मुझे लगता है कि उन्होंने अपने भाषण में इस योजना का समर्थन किया था। मुझे याद नहीं है कि किसी ने भी पंजाब, कलकत्ता और नोआखली में हुए दंगों को नियंत्रित करने में केंद्र सरकार की विफलता की निंदा की हो और इस प्रकार यह आशंका व्यक्त की हो कि भारत के विभाजन की स्थिति में हालात और बिगड़ जाएंगे।'

इसके बाद ठाणे निवासी और छात्र वसंत जोशी को बुलाया गया। उन्होंने बताया कि उनके पिता शिवाजी मुद्रणालय के स्वामी थे। उन्होंने कहा कि वे करकरे, आप्टे और नाथुराम को जानते थे क्योंकि तीनों 25 जनवरी 1948 को उनके घर आए थे। उन्होंने अपने घर पर घटी घटनाओं का विस्तृत विवरण दिया। उन्होंने गोपाल गोडसे को भी जानने का दावा किया। वसंत ने आगे बताया कि आप्टे और करकरे बीच के दो दिनों को छोड़कर 13 फरवरी तक उनके घर में ही रहे थे। 26 अगस्त 1948: टैक्सी चालक ऐतप्पा कृष्ण कोटियन ने अदालत को बताया कि कैसे उन्होंने नाथुराम, आप्टे, शंकर और बैज को विक्टोरिया टर्मिनस से लालबाग, दादर और कुर्ला तक पहुंचाया था। उन्होंने आगे बताया कि उन्होंने आप्टे और अन्य लोगों को मरीन ड्राइव स्थित ग्रीन होटल (सी ग्रीन होटल) तक पहुंचाया था। कोटियन ने 17 जनवरी की घटनाओं का विस्तृत वर्णन किया और अदालत को उन स्थानों के बारे में बताया जहाँ वह आरोपियों को ले गया था, यहाँ तक कि उसने आप्टे और गोडसे को सांताक्रूज़ हवाई अड्डे पर छोड़ा था। उसने अदालत को यह भी बताया कि जब उसने अंततः बैज और शंकर को छोड़ा, तो बैज ने उससे 6.25 रुपये के भुगतान की रसीद मांगी।
अगले गवाह बॉम्बे प्रांतीय विधानसभा के हरिजन विधायक गणपत संभाजी खरात थे। उन्होंने इस बात की पुष्टि की कि वे बैज को जानते थे और बैज ने जनवरी महीने में उनके पास दो 'बंडल' छोड़े थे।
30 अगस्त 1948: दिल्ली के एक व्यापारी गुरबचन सिंह को गवाही देने के लिए बुलाया गया। वे गांधीजी की प्रार्थना सभाओं में नियमित रूप से उपस्थित रहते थे और 30 जनवरी को भी वहीं मौजूद थे। उन्होंने बताया कि उस दिन भीड़ में गांधीजी के लिए रास्ता

बनाने वाला कोई नहीं था। 'मैं गांधीजी से आगे निकलने और उनके लिए रास्ता बनाने की कोशिश कर रहा था, लेकिन जैसे ही मैं उनके पास पहुँचा, उनके दाहिनी ओर आते ही, मैंने एक गोली चलने की आवाज़ सुनी, फिर दूसरी और फिर एक के बाद एक कई गोलियां चलीं। गांधीजी के सामने एक आदमी हाथ में बंदूक लिए खड़ा था। मैंने तुरंत उसके हाथ पर वार किया; मुझे लगता है कि मेरे वार के बाद उसने तीसरी और आखिरी गोली चलाई।' सिंह फिर कटघरे में गए और नाथूराम गोडसे की ओर इशारा करते हुए कहा, 'यही आदमी महात्मा गांधी का हत्यारा है।' इसके बाद अदालत ने पुणे स्थित जिला मजिस्ट्रेट कार्यालय के क्लर्क प्रभाकर लक्ष्मण अफले की गवाही सुनी, जिन्होंने अग्रानी, हिंदू राष्ट्र और एच.आर. प्रिंटिंग प्रेस पर लगाए गए सभी जुर्माने का ब्योरा दिया। ग्वालियर स्टेशन के टिकट चेकर मधुसूदन गोलवलकर ने अदालत को वहां से आने-जाने वाली ट्रेनों के समय के बारे में जानकारी दी।
31 अगस्त 1948: पुणे स्थित उद्यम इंजीनियरिंग लिमिटेड के प्रबंधक, पांडुरंग विनायक गोडबोले ने गवाही दी। उन्होंने बताया कि उन्होंने उस कंपनी में तब काम किया था जब दत्तात्रेय विनायक गोडसे इसके मालिक थे, जो नाथूराम के भाई थे। 'दत्तात्रेय गोडसे के तीन भाई हैं - नाथूराम, गोपाल और गोविंद। मैं 1942 से ही उन सभी को चेहरे से जानता हूँ। मैं नारायण दत्तात्रेय आप्टे को भी चेहरे से पहचानता हूँ। इंजीनियरिंग फर्म गोडसे भाइयों के पिता विनायक गोडसे के घर के परिसर में स्थित है। 30 जनवरी 1948 से आठ-दस दिन पहले, गोपाल रात साढ़े नौ या दस बजे मेरे घर आया और कहा कि वह मेरे घर पर दो रिवॉल्वर और गोलियां छोड़ना चाहता है। सामान एक कपड़े के थैले में था, जिसे मैंने एक ट्रंक में रख दिया। 30 जनवरी को मुझे खबर मिली कि नाथूराम गोडसे ने महात्मा

गांधी की हत्या कर दी है। मुझे इस मामले में फँसने का डर सताने लगा।' उस दिन मेरा दोस्त गोपाल विष्णु काले मेरे घर आया। मैंने उसे हथियारों के बारे में बताया और हमने तुरंत बैग से छुटकारा पाने का फैसला किया। लेकिन मैं बहुत डरा हुआ था और मैंने अपने दोस्त से बैग को ठिकाने लगाने को कहा।
'8 फरवरी को, जैसे ही मैं अपने घर में प्रवेश करने वाला था, मैंने गोपाल गोडसे को कुछ पुलिस अधिकारियों के साथ एक कार से उतरते देखा। उसने मुझसे पूछा कि मैंने हैंडगन और गोलियों से भरे बैग का क्या किया। मैंने उन्हें बताया कि मैंने उन्हें अपने दोस्त काले को दे दिया था। पूछे जाने पर, काले ने कहा कि उसने बैग को फर्ग्यूसन कॉलेज के पास सड़क किनारे फेंक दिया था। हम मौके पर गए लेकिन उसका कोई निशान नहीं था। मुझे जून के तीसरे सप्ताह तक सार्वजनिक सुरक्षा अध्यादेश के तहत हिरासत में रखा गया।' अस्सीवें गवाह पुणे के सदाशिव पेठ निवासी गोविंद विष्णु काले थे, जो सैन्य लेखा विभाग में कार्यरत थे। उन्होंने अदालत को बताया, 'मैं पांडुरंग वी. गोडबोले को पिछले दस वर्षों से जानता हूं। 30 जनवरी को, मैं देर शाम उनके घर गया था। मैंने उनसे महात्मा गांधी की हत्या के बारे में बात की। मैंने देखा कि गोडबोले बहुत चिंतित थे, मानो घबराए हुए हों। उन्होंने मुझे बताया कि उनके पास एक रिवॉल्वर है जिसे वे फेंकना चाहते हैं। मैंने उनसे कहा कि मैं उनके लिए उसे फेंक दूंगा। उन्होंने मुझे एक कपड़े का थैला दिया, जिसमें एक रिवॉल्वर और पांच गोलियां थीं। मैंने 3 या 4 फरवरी को फर्ग्यूसन कॉलेज रोड के पास गोलियां फेंक दीं और 7 फरवरी 1948 को रिवॉल्वर फेंक दी।'
'8 फरवरी को गोडबोले और गोपाल गोडसे पुलिसकर्मियों के साथ मेरे घर आए। गोडबोले ने मुझसे रिवॉल्वर वापस देने को कहा। मैंने उसे

बताया कि मैंने उसे ठीक एक दिन पहले फेंक दिया था। मैं पुलिस को उस जगह ले गया जहाँ मैंने रिवॉल्वर और गोलियां फेंकी थीं, लेकिन हमें वे वहाँ नहीं मिलीं।'
2 सितंबर 1948: नई दिल्ली के प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेट कृष्ण चंद्र ने उस दिन गवाही दी। उन्होंने 7 और 28 फरवरी 1948 को दो पहचान परेड आयोजित की थीं। उन्होंने कहा कि आप्टे और करकरे की पहचान परेड के दौरान कोई भी पुलिस अधिकारी मौजूद नहीं था। चंद्र ने आगे कहा कि जेल अधीक्षक ने पहचान परेड से पहले करकरे की ओर इशारा किया था। उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि परेड में कोई बाहरी व्यक्ति क्यों शामिल नहीं था, जबकि उन्होंने स्वयं बारह कैदियों को आरोपियों के साथ परेड में खड़ा किया था।
बॉम्बे बड़ौदा एवं मध्य भारतीय रेलवे के कर्मचारी रमनलाल देसाई को गवाही देने के लिए बुलाया गया। उन्होंने यात्रियों से टिकट एकत्र करने और फिर हर दो घंटे में उनके नंबर रजिस्टर में दर्ज करने की प्रक्रिया का विस्तार से वर्णन किया। उन्होंने पहले टिकटों को उल्लिखित स्टेशनों के अनुसार वर्गीकृत किया और फिर नंबर दर्ज किए। उन्होंने बताया कि 30 जनवरी को उन्हें दादर से विले पार्ले स्टेशन के लिए जारी किए गए टिकट प्राप्त हुए, जिनके सीरियल नंबर 05830 से 05940 तक थे। टिकट नंबर 05891 आप्टे की गिरफ्तारी के बाद तलाशी में बरामद हुआ था, जिसे गवाह को दिखाया गया। देसाई ने कहा कि उस दिन वे सीरियल नंबर 05830 से 05834 तक के टिकटों का हिसाब नहीं दे पाए थे। उन्होंने आगे बताया कि चौबीस घंटे के भीतर बरामद सभी टिकटों को एक साथ बांधकर बॉम्बे सेंट्रल स्टेशन भेजा जाता है, जहां से उन्हें अजमेर भेजा जाता है। किसी यात्री से टिकट बरामद होने के बाद किसी को भी वह टिकट किसी अन्य व्यक्ति को देने का अधिकार नहीं होता है।

टिकट नंबर 05891 तृतीय श्रेणी का टिकट था। देसाई ने आगे कहा कि आप्टे से बरामद टिकट पर पंच नहीं लगा था, इसलिए इसे रजिस्टर में दर्ज करने के बाद, लेकिन बंडल बनाकर पंच लगाने से पहले ही हटा दिया गया होगा।
6 सितंबर 1948: बीबी एंड सीआईआर के सहायक लेखा अधिकारी, नथुराम अग्रवाल ने गवाही दी। उन्होंने कहा कि अजमेर स्थित उनके विभाग को 30 जनवरी 1948 को विले पार्ले स्टेशन पर यात्रियों से एकत्र किए गए टिकटों की वसूली रिपोर्ट प्राप्त हुई थी। 'यह संभव नहीं है कि एक ही सीरियल नंबर वाले दो टिकट एक ही दिन जारी किए गए हों। प्रत्येक स्टेशन के लिए एक लाख टिकट छापे जाते हैं, यहां तक कि भारी यात्री यातायात वाले स्टेशनों पर भी, यह मात्रा कम से कम दो महीने तक चलती है। औसतन बेचे गए टिकटों में से लगभग पंद्रह प्रतिशत वसूल नहीं हो पाते हैं।'
इकट्ठे किए गए टिकट कहाँ गायब हो गए?
इसके बाद ठाणे स्टेशन पर टिकट कलेक्टर के रूप में कार्यरत जयप्रकाश कुदेसिया को गवाही के लिए बुलाया गया, लेकिन मेंगले ने उनकी गवाही पर आपत्ति जताई क्योंकि वे 2 फरवरी 1948 को ठाणे स्टेशन से बरामद किए गए क्रमांक 2131 वाले ट्रेन टिकट के बारे में बात करने वाले थे। दाफ्तरी ने अदालत को समझाया कि आरोपियों ने ऐसे कई रेलवे टिकट जमा किए थे, जो उनके पास नहीं होने चाहिए थे। उन्होंने कहा, 'आरोपी ने 30 जनवरी से 14 फरवरी तक के ट्रेन टिकट इसलिए जमा किए ताकि वह खुद को एक पुख्ता सबूत के तौर पर साबित कर सके कि 30 जनवरी 1948 को वह हत्या के घटनास्थल पर मौजूद नहीं था।' अदालत ने मेंगले की आपत्ति स्वीकार कर ली। बॉम्बे कोऑपरेटिव इंश्योरेंस सोसाइटी के मुख्य एजेंट और कुलकर्णी एंड कंपनी में साझेदार दत्तात्रेय रामचंद्र काले को

गवाही देने के लिए बुलाया गया। वे उस समय उपस्थित थे जब पांचों आरोपियों - मदनलाल, करकरे, नाथुराम गोडसे, नारायण आप्टे और गोपाल गोडसे - ने गवाह की उपस्थिति में अपनी लिखावट के नमूने दिए थे।
8 सितंबर 1948: राजगोपालाचारी के भाषण के संबंध में मदनलाल के वकील द्वारा उठाई गई आपत्तियों का मामला अदालत में उठाया गया। मदनलाल के वकील ने कहा कि चूंकि उन्हें पता चला था कि हैदराबाद को मुक्त कराने के प्रयास जारी हैं और मदनलाल इसमें भाग लेने के इच्छुक थे, इसलिए उन्होंने अपने वकील को राजगोपालाचारी के राष्ट्र के नाम संबोधन की विषयवस्तु के बारे में पहले उठाई गई आपत्तियों को वापस लेने का निर्देश दिया था।
एक कोट और पतलून जिसमें असामान्य रूप से बड़ी जेबें हैं
104 वें गवाह पुणे स्थित टेलरिंग फर्म डबके एंड कंपनी के मालिक नारायण गणेश डबके थे। उन्होंने अदालत को बताया, 'मैं आप्टे को जानता हूं क्योंकि वह पिछले तीन वर्षों से अपने सारे कपड़े मुझसे ही सिलवाते आ रहे हैं। उनका घर मेरी दुकान से बस एक मिनट की दूरी पर है।'
अदालत में एक ऊनी सूट लाया गया और डबके को दिखाया गया, जिन्होंने उसे तुरंत पहचान लिया। उन्होंने कहा, 'यह मेरी दुकान में सिला गया था। इसका ऑर्डर 19 नवंबर 1946 को दिया गया था और सूट 5 दिसंबर 1946 को डिलीवर किया गया था। आप्टे ने सिलाई के लिए 30 रुपये दिए थे। हमें कोट और ट्राउजर दोनों में बड़ी जेबें बनाने के लिए कहा गया था, जो असामान्य था। पुलिस 17 अप्रैल 1948 को आप्टे को मेरी दुकान पर लाई और मैंने उन्हें बताया कि मैंने ही यह सूट सिला था। लगभग दस महीने पहले, आप्टे ने मुझे गांधीजी की प्रार्थना सभाओं का विरोध करने और उन्हें बाधित करने के

उद्देश्य से एक स्वयंसेवक के रूप में उनके साथ चलने के लिए कहा था।'
9 दिसंबर 1948: ग्वालियर के पुलिस अधीक्षक दिनकर पांडुरंग थोरात पाटिल को गवाही देने के लिए बुलाया गया। उन्होंने कहा, 'मैं पिछले ग्यारह वर्षों से ग्वालियर राज्य का कर्मचारी हूँ। जनवरी-फरवरी के दौरान, मैं मध्य भारत की शीतकालीन राजधानी लश्कर का पुलिस अधीक्षक था। मैं डॉ. परचुरे को जानता हूँ; वे ग्वालियर हिंदू महासभा के अध्यक्ष और हिंदू राष्ट्र संघ के संयोजक थे। नागरिक शांति स्थापना अध्यादेश के तहत हिरासत में लिए गए चालीस व्यक्तियों की सूची में उनका नाम सबसे ऊपर था; उन्हें 3 फरवरी 1948 की सुबह गिरफ्तार किया गया था। आईजी के आदेश पर, परचुरे को सैन्य कर्मियों को सौंप दिया गया ताकि उन्हें ग्वालियर किले में हिरासत में रखा जा सके। मैं गंगाधर जाधव, गंगाधर सखाराम दंडवते और सूर्यदेव शर्मा को जानता हूँ। वे फरार हैं।'
बॉम्बे के मुख्य प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेट ओ.एच. ब्राउन को गवाही देने के लिए बुलाया गया। उन्होंने अदालत को विस्तार से बताया कि उनके द्वारा पहचान परेड कैसे आयोजित की जाती थी और बयान दर्ज करने की प्रक्रिया क्या थी।
14 सितंबर 1948: दिल्ली पुलिस के सीआईडी इंस्पेक्टर दासवंदा सिंह ने अदालत को बताया कि 20 जनवरी 1948 को जब वे बिरला हाउस गए थे, तब उन्होंने मदनलाल को वहाँ देखा था। 'उनकी तलाशी के दौरान, मैंने मदनलाल के कोट की दाहिनी जेब से एक हथगोला बरामद किया। मैं उन्हें उस जगह ले गया जहाँ बम फटा था। विस्फोट के कारण दीवार पर 38 इंच लंबी और 19 इंच गहरी दरार पड़ गई थी।' सिंह

ने मरीना होटल और हिंदू महासभा कार्यालय की अपनी यात्रा के बारे में भी गवाही जारी रखी।
आयोग भेजने के लिए प्रार्थना
अभियोजन पक्ष ने अदालत से जे.एस. परंजपे की गवाही दर्ज करने के लिए बॉम्बे में एक आयोग भेजने का अनुरोध करते हुए एक आवेदन प्रस्तुत किया था। बैज के इकबालिया बयान के आधार पर, जी.जी. शेलार और एन.टी. नागमोडे के घरों से कुछ विस्फोटक बरामद किए गए थे। गोडसे के कमरे में एक चिपचिपा पदार्थ मिला था, जिस पर विस्फोटक होने का संदेह था। इन विस्फोटक पदार्थों का विश्लेषण परंजपे ने किया था। आवेदन में कहा गया था कि विस्फोटक पदार्थों का परीक्षण करते समय उन्हें गंभीर चोटें आई थीं, इसलिए बॉम्बे में एक टीम भेजी जानी चाहिए। (परंजपे को 23 सितंबर 1948 को गवाही देनी थी। लेकिन चूंकि वे अदालत में पेश होने के लिए स्वस्थ नहीं थे, इसलिए उनकी गवाही दर्ज नहीं की गई।)
इसी बीच, दासवंदा सिंह ने आगे बताया, 'जब मैंने आरोपी नथुराम गोडसे को देखा तो उसके सिर पर पट्टी नहीं बंधी थी। उसे तुगलक रोड पुलिस स्टेशन के एक छोटे से कमरे में रखा गया था। 27 फरवरी को आप्टे को दिल्ली से ग्वालियर ले जाया गया और अगले दिन वापस लाया गया। 30 जनवरी को (यह शायद एक गलती है) मैं मदनलाल को जांच के लिए विस्फोट स्थल पर ले गया था। क्षतिग्रस्त दीवार की मरम्मत कर दी गई थी। मुझे नहीं पता कि मरम्मत के लिए पहले से अनुमति ली गई थी या नहीं। मुझे सरदार पटेल या मोरारजी देसाई से जांच के संबंध में कोई जानकारी नहीं मिली। प्रार्थना स्थल पर कानून व्यवस्था बनाए रखने के लिए एक हेड कांस्टेबल और चार सिपाही तैनात थे। 20 जनवरी को हेड कांस्टेबल धर्म सिंह वहां ड्यूटी पर थे।'

16 सितंबर 1948: दिल्ली पुलिस के उप अधीक्षक सरदार जसवंत सिंह को गवाही देने के लिए बुलाया गया। 'तुगलक रोड और छावनी के पुलिस स्टेशन मेरे अधिकार क्षेत्र में थे। 20 जनवरी 1948 को मुझे पता चला कि प्रार्थना स्थल पर बम विस्फोट हुआ है। मैं बिरला हाउस गया और वहां के एक कमरे में मदनलाल से पूछताछ की।' सिंह ने इसके बाद मरीना होटल और हिंदू महासभा भवन की अपनी यात्रा और वहां की गई तलाशी के बारे में विस्तृत जानकारी दी। उन्होंने बताया कि मदनलाल को सिविल लाइंस पुलिस स्टेशन भेजा गया था, जहां उन्हें 3 फरवरी तक एकांत कारावास में रखा गया था। 'मुझे पता चला कि गांधीजी की हत्या 31 जनवरी 1948 की शाम सवा पांच बजे हुई थी।' (जसवंत सिंह ने अपनी गवाही में बहुत ही लापरवाही बरती क्योंकि गांधी की हत्या 30 जनवरी को शाम 5:17 बजे हुई थी। एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी होने के नाते इतने महत्वपूर्ण मामले में उनकी लापरवाही भरी गवाही देना कुछ अजीब लगता है; खासकर तब जब अपराध उनके अधिकार क्षेत्र में हुआ हो।) सिंह फिर बिरला हाउस के आसपास गए और कहा कि उन्होंने वहां नाथूराम को नहीं देखा। (यह भी आश्चर्यजनक है कि अधिकारी ने उस व्यक्ति को देखने की जहमत नहीं उठाई जिसे रंगे हाथों पकड़ा गया था और परिसर में रखा गया था।) 'मैंने उसे पहली बार शाम सात बजे पार्लियामेंट स्ट्रीट स्टेशन पर देखा। मैंने नाथूराम को देखने के लिए एक चिकित्सा अधिकारी भेजा था क्योंकि उसने मुझे सिर में लगी चोट के बारे में लिखित शिकायत दी थी। 31 जनवरी की सुबह 9:30 बजे देवदास गांधी ने मुझे बिरला हाउस में एक खाली गोली दी।' (अन्य अभिलेखों में उल्लेख है कि देवदास गांधी ने अपने पिता के शरीर को स्नान कराते समय, पिछली शाम को अपने ऊपरी शरीर पर ओढ़े खादी के कपड़े की तहों में वह गोली पाई थी जो उनके पिता के शरीर से आर-पार हो गई थी। बताया

जाता है कि देवदास गांधी 30 तारीख की देर रात संसद स्ट्रीट पुलिस स्टेशन गए और स्टेशन प्रभारी को गोली सौंप दी। नाथूराम ने अपने संस्मरण में दावा किया है कि उन्होंने उस रात देवदास गांधी को देखा और उनसे बात की।) 11 फरवरी 1948 तक नाथूराम गोडसे को जिला जेल में रखा गया। 'मुझे याद है कि ओम बाबा (हिंदू महासभा के एक कार्यकर्ता) ने जनवरी 1948 में उपवास किया था (यह गांधी द्वारा किए गए उपवास का विरोध करने के लिए किया गया था) और उन्हें तुगलक रोड पुलिस स्टेशन में हिरासत में लिया गया था। यह कहना सही नहीं होगा कि जब ओम बाबा की हालत लॉकअप में बिगड़ी तो उन्हें हिंदू महासभा भवन में रखा गया था। उन्हें 20 जनवरी से पहले रिहा कर दिया गया था।' भवन के कमरा नंबर 3 की जांच करने पर ओम बाबा वहां नहीं पाए गए। (कपूर आयोग की रिपोर्ट में कहा गया है कि 20 तारीख की रात को जब पुलिस ने कमरे की जांच की तो ओम बाबा वहां सो रहे थे।)
20 सितंबर 1948: नारायण आप्टे, विष्णु करकरे और गोपाल गोडसे की पत्नियां अदालत में मौजूद थीं। जसवंत सिंह ने अपनी गवाही जारी रखते हुए कहा, 'मदनलाल से दिल्ली के पुलिस अधीक्षक पी. जगन्नाथ और नई दिल्ली के पुलिस अधीक्षक ए.एन. भाटिया दोनों ने पूछताछ की थी। सिविल लाइंस पुलिस स्टेशन मेरे अधिकार क्षेत्र में नहीं आता। मैंने 30 जनवरी 1948 को घावों (संभवतः गोडसे के) के बारे में एक रिपोर्ट तैयार की थी।'
अगले गवाह अरुण करमचंद गांधी थे। अरुण करमचंद गांधी पुणे के इंजीनियरिंग कॉलेज के छात्र थे और उन्होंने 8 फरवरी 1948 को नागमोडे के घर पर तलाशी अभियान के दौरान पंच की भूमिका निभाई थी।

21 सितंबर 1948: पुणे सीआईडी के उप अधीक्षक एन.वाई. देउलकर ने गवाही देते हुए कहा कि उन्हें आईजी बॉम्बे से गांधी की हत्या की जांच करने का आदेश मिला था। 'मैंने नाथूराम गोडसे को पहली बार 8 फरवरी को तुगलक रोड पुलिस स्टेशन के लॉकअप में देखा था। उस समय उसके सिर पर पट्टियां नहीं बंधी थीं। 11 फरवरी को जब मैंने शंकर किस्तय्या को देखा, तो उनके साथ नागरवाला भी थे। उन्होंने अपने द्वारा चलाए गए तलाशी अभियानों का विवरण दिया। उन्होंने यह भी बताया कि उनका कर्तव्य था कि वे सभी मराठी समाचार पत्र एकत्र करें और नाथूराम द्वारा लिखे गए संपादकीयों की प्रतियां, यदि आपत्तिजनक पाई जाती थीं, तो अदालत में प्रस्तुत की जाती थीं। बचाव पक्ष के वकीलों ने आपत्ति जताते हुए कहा कि ये संपादकीय मुकदमे पर अनुचित प्रभाव डालेंगे। हालांकि, अदालत ने इस मामले पर फैसला लंबित रखा। देउलकर ने आगे कहा कि वे परचुरे को जानते थे।
22 सितंबर 1948: देउलकर से जिरह जारी रही। उन्होंने कहा कि ग्वालियर में गांधी हत्याकांड की जांच के दौरान उन्होंने किसी के खिलाफ कोई मामला दर्ज नहीं किया था। उन्होंने काले और एन.डी. परचुरे से पूछताछ की थी। उन्होंने यह भी कहा कि उन्होंने एक स्टेंगन की बरामदगी के ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए थे और आरोपी परचुरे और के.एस. परचुरे की पत्नी से पूछताछ की थी।
शाही ज्योतिषी की गवाही
ग्वालियर के राजपरिवार के ज्योतिषी ने गवाही देने के लिए अगला कदम उठाया। सूर्यनारायण व्यास ने कहा, 'मैं ग्वालियर, नवनगर, कश्मीर और बड़ौदा के राजाओं का पारिवारिक ज्योतिषी हूँ और उज्जैन में स्थायी रूप से रहता हूँ।' उन्हें एक ज्योतिषीय

कुंडली दिखाई गई, और उन्होंने उसे ग्वालियर के सदाशिव परचुरे के पिता की कुंडली के रूप में पहचान लिया।
अपनी गवाही शुरू होने से पहले, भोपटकर ने अदालत में एक आवेदन प्रस्तुत किया, जिसमें कहा गया था, 'अभियोजन पक्ष ने सावरकर को सूचित किया था कि वे गांधी हत्याकांड के मुकदमे में सबूत के तौर पर सावरकर की जब्त फाइलों से 143 पत्र प्रस्तुत करेंगे। कहा जाता है कि सावरकर को प्राप्त इन 143 पत्रों में से 74 नाथूराम गोडसे के, 27 नारायण आप्टे के और 11 दत्तात्रेय परचुरे के हैं। परचुरे के पत्र 1940 से 1943 के बीच के हैं। गोडसे और आप्टे के पत्र 1938 से 1943 के बीच के हैं। इनमें से किसी भी पत्र में आरोपियों द्वारा 1946 और 1947 के दौरान लिखे गए पत्र शामिल नहीं हैं। अभियोजन पक्ष 143 पत्रों में से 29 पत्रों पर अधिक भरोसा कर रहा है। शेष पत्रों से वे सावरकर और अन्य आरोपियों गोडसे, आप्टे और परचुरे के बीच संबंध स्थापित करने की योजना बना रहे हैं। सावरकर का मानना है कि अभियोजन पक्ष का यह रवैया सही नहीं है।' इस षड्यंत्र की अवधि 1 दिसंबर 1947 से 30 जनवरी 1948 तक है। 1 दिसंबर 1947 से पहले जो कुछ भी हुआ, उसका उपयोग आरोपियों के इरादों को साबित करने के लिए नहीं किया जा सकता है। ज्योतिषी ने अदालत को बताया कि जन्म कुंडली से यह स्पष्ट नहीं होता कि यह परचुरे के पिता की जन्म कुंडली है। उसमें सदाशिव गोपाल परचुरे के माता-पिता के नाम का उल्लेख नहीं था। (यह बात सही नहीं है क्योंकि आमतौर पर व्यक्ति का मध्य नाम पिता का नाम होता है और इस मामले में गोपाल सदाशिव के पिता का नाम था।) इसके बाद अभियोजन पक्ष ने दो गवाहों को पेश किया जिनकी गवाही से यह साबित करने में मदद मिली कि गोडसे और आप्टे 17 और 27 जनवरी को

दिल्ली गए थे। पुणे के एक अन्य गवाह ने यह साबित करने के लिए सबूत पेश किए कि एस.जी. परचुरे दक्कन कॉलेज के छात्र थे।
27 सितंबर 1948: बॉम्बे पुलिस के इंस्पेक्टर बी.एस. हल्दिपुर ने अदालत को बताया, 'मैं 1947-48 के दौरान भ्रष्टाचार विरोधी विभाग में था। 12 फरवरी को मैं पुलिस उपायुक्त नागरवाला के आदेश पर ग्रीन होटल (सी ग्रीन होटल) गया था और वहां पूछताछ की थी।' उन्होंने आगे बताया कि वे अपोलो होटल में अतिथि रजिस्टर की जांच करने और कुछ पूछताछ करने गए थे। उन्होंने पाया कि रजिस्टर में दर्ज सभी नामों में से दो व्यक्ति होटल में मौजूद नहीं थे। उन्होंने उनके आने का इंतजार किया और आप्टे और करकरे को गिरफ्तार कर लिया।
28 सितंबर 1948: हल्दिपुर ने अपनी गवाही जारी रखते हुए कहा कि उन्होंने आरोपियों के हस्तलेख के नमूने लिए थे और हस्ताक्षर करवाने से पहले पंचनामा पढ़कर सुनाते या समझाते थे। इस मामले की जांच के आदेश 28 जनवरी 1948 को जारी किए गए थे। 'जब मैं "इस मामले" की बात करता हूं, तो मेरा तात्पर्य बम विस्फोट और फिर महात्मा गांधी की हत्या से है। (अपनी गलती का एहसास होने पर गवाह ने तुरंत स्पष्टीकरण दिया। 28 जनवरी 1948 को मुझे बम विस्फोट मामले की जांच में सहायता करने का आदेश दिया गया था और 31 जनवरी 1948 को मुझे हत्या मामले की जांच में सहायता करने का आदेश दिया गया था।) मैं इस मामले के सिलसिले में 5 अप्रैल 1948 के आसपास दिल्ली आया था। मैं ठीक-ठीक नहीं कह सकता कि आरोपियों को सीआईडी कार्यालय किस तारीख को लाया गया था। मुझे याद है कि आरोपियों को अंततः मई के तीसरे सप्ताह में दिल्ली लाया गया था।' 29 सितंबर 1948: हल्दिपुर से जिरह जारी रही। 'मैंने आरोपियों को पुलिस हिरासत में भेजने के लिए बंबई के मुख्य प्रेसीडेंसी

मजिस्ट्रेट के न्यायालय में पेश किया था, लेकिन हिरासत का आवेदन मेरे वरिष्ठ अधिकारी ने प्रस्तुत किया था। मैंने यह पता नहीं लगाया कि आरोपियों के खिलाफ इस मामले में आरोपपत्र कब दायर किया गया था। मैंने इस मामले की एफआईआर भी नहीं देखी है और न ही मैं इस मामले के सिलसिले में पुणे गया हूं। जहां तक मुझे पता है, उमर खान इस मामले की जांच में नागरवाला की सहायता करता था।'
इसके बाद, अभियोजन पक्ष को एक गवाह को पेश करना था जिसकी गवाही से यह साबित हो सके कि सावरकर के अन्य आरोपियों से संबंध थे। बचाव पक्ष के वकीलों ने गवाह की विश्वसनीयता पर सवाल उठाए और आपत्ति जताई। दफ्तरी ने तर्क दिया कि भारतीय गवाह अधिनियम की धारा 11 के तहत गवाही वैध है और गवाह को सावरकर के उस बयान को गलत साबित करने के लिए बुलाया जा रहा है जिसमें उन्होंने कहा था कि उनके आरोपियों से कोई संबंध नहीं हैं। यह बयान अदालत के प्रमाणित रिकॉर्ड का हिस्सा है। भोपटकर ने कहा कि जिन परिस्थितियों में यह बयान दिया गया था, उन्हें भी ध्यान में रखा जाना चाहिए।
इससे पहले, दफ्तरी ने तीन आवेदन प्रस्तुत किए। पहले आवेदन में उन्होंने अदालत से करकरे के वकील डांगे को करकरे से जब्त किए गए कुछ पत्र और सामान दिखाने का अनुरोध किया। दूसरे आवेदन में उन्होंने इस बात से इनकार किया कि पुणे के कलेक्टर एस.जी. बर्वे ने आप्टे के घर से कोई सामान या पत्र लिया था। आप्टे के घर की तलाशी में जब्त की गई सभी चीजें अदालत में पेश कर दी गई थीं। दो 'अन्य स्थानों' से जब्त किए गए दो पत्र पुलिस के पास थे और उन्हें बचाव पक्ष के वकीलों को दिखाया जा सकता था। तीसरे आवेदन में अनुरोध किया गया कि देउलकर के उस बयान को अदालत द्वारा

स्वीकार किया जाए, जिसमें उन्होंने कहा था कि परचुरे ने स्वेच्छा से इकबालिया बयान देने की इच्छा व्यक्त की थी और उन्होंने किसी भी प्रकार के उत्पीड़न या दुर्व्यवहार की शिकायत नहीं की थी, क्योंकि अदालत ने पहले उनके बयान के इस हिस्से को अस्वीकार कर दिया था।
भोपतकर ने एक आवेदन प्रस्तुत किया जिसमें सावरकर के उस बयान के बारे में स्पष्टीकरण मांगा गया था जिसमें उन्होंने दावा किया था कि 'मेरा किसी भी आरोपी से किसी भी रूप में कोई संपर्क नहीं रहा है'। भोपतकर ने स्पष्ट किया कि हिंदू महासभा के साथ काम करने के कारण सावरकर का गोडसे, आप्टे, परचुरे और बैज के साथ लंबे समय से संबंध था, लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि उन्होंने गांधी की हत्या के लिए आरोपियों के साथ कोई साजिश रची थी। उनकी गिरफ्तारी के बाद, जब पुलिस ने सभी आरोपियों की एक सामूहिक तस्वीर ली थी, तो सावरकर ने उसमें शामिल होने पर आपत्ति जताई थी। दफ्तरी ने जोर देकर कहा कि सावरकर के अन्य आरोपियों के साथ किस हद तक संपर्क थे, यह तब पता चलेगा जब सावरकर के घर से जब्त किए गए पत्रों की अदालत द्वारा जांच की जाएगी।
30 सितंबर 1948: गवाह के तौर पर पूना पुलिस के सीआईडी इंस्पेक्टर ए.आर. प्रधान उपस्थित हुए। सावरकर के वकील भोपतकर की उस याचिका पर सुनवाई करते हुए, जिसमें उन्होंने सावरकर और कुछ आरोपियों के बीच हुए पत्राचार को अदालत द्वारा प्रामाणिक साक्ष्य के रूप में मान्यता दिए जाने पर आपत्ति जताई थी, न्यायाधीश आत्मचरण ने फैसला सुनाया कि आप्टे और गोडसे द्वारा सावरकर को लिखे गए माने जाने वाले उनतीस पत्र कुछ हद तक प्रासंगिक हैं और उन्हें प्रामाणिक साक्ष्य माना जा सकता है। गवाह ने अदालत को बताया कि बॉम्बे प्रांत के डीआईजी राणा ने

उन्हें इस मामले की जांच में नागरवाला की सहायता करने का आदेश दिया था। 21 फरवरी 1948 को उन्हें सावरकर के आवास से जब्त की गई फाइलों की सामग्री पढ़ने का आदेश दिया गया था। उन्होंने कहा कि कई फाइलें पढ़ने के बाद उन्हें पता चला कि नाथुराम और आप्टे ने संयुक्त रूप से या स्वतंत्र रूप से कई पत्र लिखे थे, और सावरकर ने भी उनका जवाब दिया था। नाथुराम द्वारा लिखे गए सत्रह पत्रों को अदालत ने मुख्य साक्ष्य के रूप में स्वीकार किया। जब प्रधान पूना और अहमदनगर गए थे, तब उनके साथ कोई वरिष्ठ पुलिस अधिकारी नहीं था। वह कुछ गुप्त फाइलें वापस लाने के लिए अहमदनगर गया था। इन फाइलों में आरोपियों द्वारा लिखी गई फाइलों के अलावा, सावरकर को अन्य लोगों द्वारा लिखे गए पत्र भी थे और प्रधान ने बताया कि उन फाइलों में लगभग 10,000 पत्र थे।
मेंगले ने सात पत्रों का चयन किया और उन्हें मुख्य साक्ष्य के रूप में न्यायालय में प्रस्तुत किया। बनर्जी ने न्यायालय को सूचित किया कि गांधी द्वारा सावरकर को उनके 61 वें जन्मदिन पर लिखा गया पत्र भी फाइल में मौजूद है। गोडसे ने अक्टूबर 1946 में सावरकर को अपना अंतिम पत्र लिखा था, जो फाइल में मौजूद था। भोपटकर ने सावरकर द्वारा नाथूराम को लिखे गए छह पत्रों का चयन किया और न्यायालय से इन्हें मुख्य साक्ष्य के रूप में स्वीकार करने का अनुरोध किया। 1942 में सीडब्ल्यूसी की गिरफ्तारी पर सावरकर द्वारा जारी किया गया बयान और कस्तूरबा की मृत्यु पर गांधी को लिखा गया शोक पत्र भी इसमें शामिल थे।
अब सीआईडी के सब-इंस्पेक्टर सी.आर. प्रधान ने अपनी गवाही दी। नागरवाला ने उन्हें शिवाजी पार्क स्थित सावरकर के घर और कुछ अन्य प्रतिष्ठानों पर नज़र रखने का आदेश दिया था, साथ ही करकरे को गिरफ्तार करने का भी आदेश दिया था। वे 8 फरवरी को गोपाल

गोडसे और बैज के साथ गोडबोले और जी.पी. काले के पते पता करने के लिए पुणे गए थे। मारुति मंदिर परिसर की तलाशी के दौरान उन्हें कुछ विस्फोटक पदार्थ मिले थे। उन्होंने गवाही दी कि 23 मई 1948 को बैज की पत्नी उनसे बॉम्बे स्थित सीआईडी कार्यालय में मिलने आई थीं। बैज के पास जाने से पहले उनसे पूछा गया कि क्या वे अपने साथ कुछ लाई हैं। उन्होंने बताया कि वे एक पत्र लाई हैं। बाद में पता चला कि पत्र आठ टुकड़ों में फटा हुआ था, जिसे प्रधान ने खुद जोड़ा था। प्रधान ने दावा किया कि उन्होंने शंकर किस्तय्या को गिरफ्तार किया था।
भुलेश्वर, 6 फरवरी 1948।*
महाबावड़ी पुलिस स्टेशन का हवाई हमले की स्थिति में निकासी के लिए एक लेआउट प्लान बनाया गया था। शंकर की गिरफ्तारी के स्थान को दर्शाने के लिए इसे अदालत में प्रस्तुत किया गया था। पूछताछ किए जाने पर गवाह ने कहा, 'मैंने नक्शा नहीं बनाया है। नक्शा सटीक है, लेकिन मैंने इसे तराजू से नहीं नापा है। मैं इस क्षेत्र को बहुत अच्छी तरह जानता हूँ। मैं इस क्षेत्र में कभी नक्शे के साथ नहीं घूमा हूँ। मुझे यह भी नहीं पता कि नक्शा किसने बनाया है। 25 फरवरी को जब आप्टे और करकरे को बॉम्बे लाया गया, तो विमान में उनके चेहरे ढके नहीं गए थे। दिल्ली में उन्हें एक सैन्य लॉरी में ले जाया गया, जो चारों ओर से कैनवास से ढकी हुई थी। बॉम्बे में उन्हें एक सैन्य एम्बुलेंस में ले जाया गया, जो भी चारों ओर से ढकी हुई थी। 20 जनवरी 1948 को नागरवाला ने मुझे दिल्ली में उन्हें गिरफ्तार करने का आदेश दिया था। 'दरार।' *
अगले गवाह ग्वालियर के सीआईडी इंस्पेक्टर मंडलिक थे। उन्होंने अदालत को बताया कि कैसे उन्होंने एक तांगेवाले से सुना था कि

उन्होंने 27 जनवरी की रात को दो लोगों को परचुरे के घर पहुँचाया था। इसके बाद मंडलिक ने ग्वालियर में अपने द्वारा की गई विभिन्न पुलिस कार्रवाइयों का विवरण दिया।
अगले गवाह बॉम्बे के एस.के. भावनगरी के विस्फोटक निरीक्षक थे। उन्होंने अदालत को उन विभिन्न विस्फोटक सामग्रियों के बारे में जानकारी दी जो उनके कार्यालय को प्राप्त हुई थीं और जिन्हें विश्लेषण के लिए विभिन्न प्रयोगशालाओं में भेजा गया था। उन्होंने अदालत को उस दुर्घटना का भी वर्णन किया जिसमें उप-निरीक्षक वाई.एस. परंजपे गंभीर रूप से घायल हो गए थे। नागरवाला की गवाही
मुकदमे में 132 वें गवाह मुख्य जांच अधिकारी, बॉम्बे सीआईडी के उपायुक्त जमशेद डी. नागरवाला थे। गवाही देते हुए उन्होंने कहा, 'मैंने 2 फरवरी 1937 को भारतीय पुलिस सेवा में प्रवेश लिया। मैंने नासिक केंद्रीय पुलिस प्रशिक्षण विद्यालय से पुलिस प्रशिक्षण प्राप्त किया। मुझे 'हूर विद्रोह' के दमन और पुलिस एवं हूरों के बीच झड़पों के सिलसिले में तीन साल तक सिंध में तैनात किया गया था। मैंने कई मौकों पर हथगोले फोड़े हैं।' पुलिस ने साजिश का पर्दाफाश कैसे किया?
नागरवाला ने बताया कि बंबई में अपने कर्तव्यों के साथ-साथ उन्हें दिल्ली में विशेष पुलिस अधीक्षक के रूप में भी नियुक्त किया गया था। उन्हें बम विस्फोट मामले और गांधी हत्याकांड की जांच करनी थी।
उन्हें बॉम्बे सेंट्रल स्टेशन पर मोरारजी देसाई से मिलने के लिए कहा गया था।
मद्रास मेल के प्रस्थान के बाद नागरवाला ने पिछले अध्याय में वर्णित विवरण देना जारी रखा। उन्होंने उसी दिन रात 9:30 बजे से

सावरकर के घर पर कड़ी निगरानी रखने का आदेश दिया और करकरे की गिरफ्तारी का आदेश दिया।
उन्होंने बताया कि उन्होंने यह पता लगाया था कि क्या अहमदनगर पुलिस ने करकरे को गिरफ्तार किया है।** 'दिल्ली पुलिस के उप अधीक्षक सरदार जसवंत सिंह और एक अन्य निरीक्षक 22 जनवरी 1948 को मुझसे मिलने बॉम्बे आए थे। वे करकरे और उसके साथियों को गिरफ्तार करना चाहते थे। वे 23 जनवरी की दोपहर तक रुके रहे। इस दौरान वे करकरे और उसके साथियों की तलाश करते रहे। इससे पहले बॉम्बे पुलिस को इसकी जानकारी नहीं थी।
करकरे के पूर्वजों के बारे में।†
उन्होंने आगे बताया कि राणा 27 जनवरी 1948 को बंबई आए थे और उन्हें स्थिति और चल रही जांच के बारे में जानकारी दी गई थी। उन्होंने कहा कि 30 तारीख को बंबई प्रांत के गृह मंत्री ने उन्हें सूचित किया कि गांधी जी की हत्या कर दी गई है। नागरवाला ने कहा, '31 जनवरी 1948 की सुबह, बंबई के पुलिस आयुक्त ने मुझे सूचित किया कि सावरकर ने मदद मांगी है, और उन्होंने तुरंत मुझे एक दल के साथ सावरकर के घर जाने का आदेश दिया। जैसे ही मैं उनके दूसरी मंजिल के आवास में दाखिल हुआ, सावरकर अपने कमरे से बाहर आए और मुझसे मिले। मैं तब हैरान रह गया जब वे आगे आए और बोले, "तो आप महात्मा गांधी की हत्या के आरोप में मुझे गिरफ्तार करने आए हैं।" उनकी आवाज में बहुत अपराधबोध झलक रहा था; मुझे यह भी लगा कि वे केवल बीमार होने का नाटक कर रहे हैं। मैंने उनसे कहा कि मैं केवल उनके घर की तलाशी लेने आया हूं। सावरकर निश्चित रूप से बहुत निराश और भयभीत दिख रहे थे।' इसके बाद नागरवाला ने टैक्सी चालक कोटियन और शांता भास्कर मोदक से हुई बातचीत का विवरण दिया।

आप्टे गिरफ्तार
नागरवाला ने आगे बताया कि मनोरमा साल्वी के पिता के टेलीफोन की गुप्त रूप से टैपिंग करके और आप्टे और मनोरमा के बीच हुई बातचीत को सुनकर आप्टे और करकरे को पाइर्के के अपोलो होटल से गिरफ्तार किया गया था। उन्होंने आगे कहा कि सावरकर और परचुरे को छोड़कर बाकी सभी को 24 मई 1948 को दिल्ली लाया गया था। कैदी पहचान अधिनियम की धारा 4 के अनुसार, सभी आरोपियों की एक सामूहिक तस्वीर ली गई थी।
6 अक्टूबर 1948: नागरवाला की गवाही जारी रही। 'मैंने लापता पतलून की तलाश में आप्टे के घर की तलाशी के लिए पुणे में एक पुलिस दल भेजा, लेकिन वह नहीं मिली। सूचना मिलने पर, मैंने तीन पंचों को बुलाया और उनकी उपस्थिति में हमने उस कमरे की तलाशी ली जहाँ आप्टे को रखा गया था। आप्टे ने अपना संदूक खोला और पतलून मुझे सौंप दी। बरामदगी का बयान तैयार किया गया, जिस पर मैंने हस्ताक्षर किए।' (नागरवाला का यह दावा हास्यास्पद था क्योंकि यह मानना बहुत मुश्किल है कि पुलिस हिरासत में मौजूद एक आरोपी अपने पास एक बंद संदूक रख सका और पुलिस को कई दिनों बाद तक उस संदूक या उसके अंदर रखी चीज़ों के बारे में पता नहीं चला, जबकि उसकी गिरफ्तारी के समय उसके पास से ट्रेन टिकट भी बरामद हुए थे और उनका रिकॉर्ड भी रखा गया था। अदालत ने इस बेतुके दावे पर विश्वास करने से इनकार कर दिया, क्योंकि आप्टे ने दावा किया था कि उसने मदनलाल से बरामद जैकेट चेंबूर शरणार्थी शिविर में शरणार्थियों को दान कर दी थी और वहीं से वह जैकेट मदनलाल के पास आई होगी। पुलिस ने आप्टे का कोट मदनलाल से उसकी गिरफ्तारी के समय बरामद किया था; अगर वे यह साबित कर पाते कि मैचिंग ट्राउजर भी आप्टे से बरामद हुई थी तो आप्टे और मदनलाल के बीच संबंध

स्थापित हो जाता। लेकिन नागरवाला के इस दयनीय प्रयास को अदालत ने सिरे से खारिज कर दिया। बेशक, मदनलाल और आप्टे दोनों को बम विस्फोट मामले और उसके बाद हुए हत्या मामले से जोड़ने वाले और भी सबूत थे, इसलिए इस चूक से ज्यादा नुकसान नहीं हुआ। लेकिन इसने बचाव पक्ष को पुलिस की विश्वसनीयता पर सवाल उठाने और उनकी सत्यनिष्ठा पर संदेह पैदा करने का मौका दिया, जिससे उन्हें अंततः जीत हासिल करने में मदद मिली।) सावरकर बरी हो गए। नागरवाला ने आगे बताया, 'मैंने अपने कमरे में केवल मिस मोदक की गवाही दर्ज की थी। जब मुझे इस मामले की जांच का आदेश मिला, तो मैंने अपनी सुविधा के लिए बॉम्बे में सीआईडी कार्यालय की नई इमारत की पूरी दूसरी मंजिल खाली करवा ली थी। भूतल पर लिफ्ट के प्रवेश द्वार पर एक संतरी तैनात किया गया था। मैंने लिफ्टमैन को चेतावनी दी थी कि वह मेरे आदेश के बिना किसी को भी ऊपरी मंजिल पर न ले जाए। मैं अपने कमरे में बहुत कम लोगों से मिलता था। जिन कमरों में आरोपियों को रखा गया था, उनकी खिड़कियां और दरवाजे बंद और ताले लगे रहते थे। जिन कमरों में गोपाल गोडसे और नारायण आप्टे को रखा गया था, उनके दरवाजे खुले थे, लेकिन हमने उन पर पर्दे लगा रखे थे। मैं सूर्यदेव शर्मा, जी.एस. दंडवते और जी. जाधव को जानता हूं। मैंने उनकी तलाश के लिए 3,000 रुपये का भत्ता लिया था। मैंने देश भर के कई पुलिस अधिकारियों को आदेश दिए थे। हमने एक बार जोगिंदर सिंह चोपड़ा को ढूंढ लिया था, लेकिन तब से वह लापता है। वह अभी तक नहीं मिला है।' मैंने जब्त किए गए दस्तावेजों और आरोपी के हस्तलेख के नमूने को हस्तलेख विशेषज्ञ के पास विश्लेषण के लिए भेजा था।'
नागरवाला ने कहा कि जांच के दौरान उन्हें इस बात का पूरा यकीन हो गया था कि आप्टे के नाम से भेजा गया टेलीग्राम न तो उन्होंने

भेजा था और न ही वह उनकी लिखावट में था। मनोरमा साल्वी टेलीग्राम के संबंध में गवाही दे सकती थीं, लेकिन उन्होंने अपना रुख बदल लिया और बचाव पक्ष के वकील से पत्राचार किया। नागरवाला ने आगे कहा कि उन्हें इस बात की जानकारी थी कि वकील जमनादास मेहता और व्यास को भी हिरासत में लिया गया था, लेकिन अन्य लोगों के बारे में उन्हें कोई जानकारी नहीं थी। गांधी की हत्या के बाद, 'पाकिस्तान विरोधी लीग' के सदस्य यत्ते नाम के एक व्यक्ति ने पुलिस स्टेशन में शरण ली और दावा किया कि एक हिंसक भीड़ उसे पीट-पीटकर मार डालना चाहती है। ये सभी महासभा (आरएसएस) की विचारधारा को मानते थे।
8 अक्टूबर 1948: नागरवाला ने कहा कि मोरारजी देसाई ने उन्हें उस पत्र के बारे में सूचित नहीं किया था जो करकरे ने शरणार्थियों के संबंध में उन्हें लिखा था।
'मुझे पक्का नहीं पता कि मदनलाल की रिमांड के लिए दायर आवेदन पर मैंने हस्ताक्षर किए थे या मेरे आदेश पर मेरे किसी अधीनस्थ अधिकारी ने। मैंने मोरारजी देसाई से उनकी सूचना के स्रोत के बारे में नहीं पूछा। इससे पहले, जांच के दौरान, मैंने आरोपी को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने के लिए कोई अनुमति नहीं मांगी थी। मैंने लांस नायक कदम को निलंबित कर दिया था क्योंकि उन्होंने आप्टे द्वारा मनोरमा साल्वी को लिखे पत्र को जेल से बाहर तस्करी करके पहुंचाया था। पुलिस आयुक्त ने स्थायी आदेश जारी किया था कि आरोपी के कई हस्तलेख नमूने लिए जाएं ताकि हस्तलेख विशेषज्ञ के पास तुलना करने और सटीक विश्लेषण करने के लिए पर्याप्त सामग्री हो।' नागरवाला की गवाही यहीं समाप्त हुई और विजया दशमी और बकरीद के कारण अदालत को 18 अक्टूबर 1948 तक के लिए स्थगित कर दिया गया।

18 और 20 अक्टूबर 1948: नौ दिन के अवकाश के बाद 18 अक्टूबर को अदालत की कार्यवाही फिर से शुरू हुई। हालांकि, कुछ ही समय बाद, इसे फिर से स्थगित कर दिया गया क्योंकि आत्मचरण को कुछ निजी काम से कानपुर जाना पड़ा।
21 अक्टूबर 1948: पुणे प्रांतीय सीआईडी इकाई के मुख्य हस्तलेख विशेषज्ञ गजजर को बुलाया गया। उन्होंने बताया कि उन्हें 17 मार्च 1948 को गांधी हत्याकांड से संबंधित कुछ दस्तावेजों का विश्लेषण करने का आदेश मिला था। हल्दिपुर ने उन्हें कुछ विवादित दस्तावेज दिए थे और उन्हें जांच की अवधि तक बंबई में रहने के लिए कहा गया था। यह ध्यान देने योग्य है कि दस्तावेज अंग्रेजी और मराठी में थे। कई बार आरोपियों को हल्दिपुर द्वारा बताई गई बातों को साफ कागजों पर लिखने के लिए कहा गया था। इस प्रक्रिया की पुष्टि अभियोजन पक्ष द्वारा अदालत में पेश किए गए कई गवाहों की गवाही से हुई थी। ये सभी दस्तावेज और कागजात विश्लेषण और जांच के लिए गजजर को सौंप दिए गए थे। गजजर की गवाही शुरू होने से पहले, मदनलाल के वकील ने अदालत में एक आवेदन प्रस्तुत किया, जिसमें कहा गया कि उनके मुवक्किल को हिरासत में रहते हुए पांच बार हस्तलेख के नमूने देने के लिए मजबूर किया गया था। जब तक गजजर की गवाही में इसका विशेष उल्लेख नहीं किया जाता, तब तक इसे साक्ष्य के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता। गज्जर ने अदालत को बताया, 'आरोपी के हस्तलेख का नमूना मुझे भेजा गया था। कानपुर रेलवे स्टेशन पर 21 जनवरी 1948 को यात्री रजिस्टर में दर्ज की गई प्रविष्टि की लिखावट नाथूराम की लिखावट से हूबहू मेल खाती थी। इसी तरह, बॉम्बे के एल्फिंस्टन एनेक्स होटल के अतिथि रजिस्टर में 24 जनवरी 1948 को दर्ज की गई प्रविष्टि की लिखावट भी मेल खाती थी।'

25 अक्टूबर 1948: गजजर ने आगे कहा, 'सी ग्रीन होटल के अतिथि रजिस्टर में 2 फरवरी 1948 को दर्ज प्रविष्टियाँ करकरे द्वारा की गई थीं; इसी प्रकार फ्रंटियर हिंदू होटल के रजिस्टर में 20 जनवरी 1948 को जी.एम. जोशी द्वारा और शरीफ हिंदू होटल के अतिथि रजिस्टर में 17 जनवरी 1948 को बी.एम. व्यास द्वारा भी प्रविष्टियाँ करकरे द्वारा की गई थीं; इन सभी की मैंने बारीकी से जाँच की। मैंने पाया कि कलम पकड़ने का तरीका, स्ट्रोक की विशेषताएँ, निब के कोण और अक्षरों का निर्माण, ये सभी विष्णु करकरे द्वारा प्रदान किए गए हस्तलेख के नमूने के समान थे। ओरिएंटल गवर्नमेंट सिक्योरिटी लाइफ इंश्योरेंस की दो बीमा पॉलिसियाँ
नाथुराम के हस्ताक्षर। * गवाह के रूप में चिह्नित बॉक्स में दिखाई देने वाले हस्ताक्षर निश्चित रूप से नारायण आप्टे के हैं।
ओक के एक प्रश्न का उत्तर देते हुए गज्जर ने कहा, 'नाथूराम की लिखावट का विश्लेषण करते समय मुझे एक विशिष्ट विशेषता बार-बार देखने को मिली। जब वे "मैं" लिखते हैं, तो ऊर्ध्वाधर रेखा हमेशा झुकी हुई होती है, कभी सीधी नहीं होती। बेशक, इसमें कुछ मामूली भिन्नताएं थीं जो स्वाभाविक हैं। नाथूराम की लिखावट में "मैं" बहुत ही विशिष्ट है।'
27 अक्टूबर 1948: गोपाल गोडसे के वकील इनामदार द्वारा पूछे गए एक प्रश्न का उत्तर देते हुए गजजर ने कहा, 'मैंने संबंधित दस्तावेजों में लिखी लिखावट की तुलना पुलिस द्वारा प्राप्त आरोपी के लिखावट के नमूने से की है। मैंने गहन विश्लेषण और अपने निष्कर्षों से संतुष्ट होने के बाद ही अपनी राय दी है। पुलिस ने बैज की लिखावट का नमूना देवनागरी लिपि में लिया था। मैं

संबंधित दस्तावेजों और पुलिस द्वारा प्राप्त प्रामाणिक लिखावट के नमूने में जो भी अंतर देखता था, उसे नोट करता था, लेकिन उनमें बहुत कम अंतर थे।'
सीआईडी इंस्पेक्टर पिंटो का बयान
इसके बाद बॉम्बे पुलिस के सीआईडी इंस्पेक्टर चार्ल्स एंथोनी पिंटो को गवाही देने के लिए बुलाया गया। उन्होंने बताया कि वे 29 जनवरी 1948 से बॉम्बे सीआईडी की विशेष शाखा से जुड़े हुए थे। उनका पहला काम बैज और करकरे का पता लगाना था। उन्होंने 5 फरवरी को गोपाल गोडसे को गिरफ्तार किया, लेकिन उनके खिलाफ कोई भी आपत्तिजनक सबूत नहीं मिला। आप्टे और करकरे को जिला जेल के अधिकारियों को सौंपे जाने के एक दिन बाद, उन्हें प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेट किशनचंद्र के साथ दिल्ली और नई दिल्ली के कई स्थानों पर ले जाया गया, जो उनके दर्ज किए गए बयानों के संबंध में किया जा रहा था। उनकी पहचान गुप्त रखने के लिए सभी आवश्यक सावधानियां बरती गईं।
28 अक्टूबर 1948: पिंटो ने कहा कि जब वह 5 अप्रैल 1948 को नाथूराम को दिल्ली लाए थे, तब आप्टे और करकरे उनके साथ नहीं थे। उन्होंने इस मामले की जांच में नागरवाला की सहायता की और उन्हें याद नहीं है कि पुलिस को करकरे का नाम और पता कब पता चला। उन्होंने परंजपे को जानने या उससे कभी पूछताछ करने से इनकार किया।
29 अक्टूबर 1948: गांधी हत्याकांड के मुकदमे में गवाह संख्या 139 ग्वालियर के 78 वर्षीय सेवानिवृत्त मेजर दादाभाई मानेकजी थे। उन्होंने कहा, 'मैं 1895 में ग्वालियर गया और उसी वर्ष ग्वालियर सेना में भर्ती हो गया। मैंने ग्वालियर के दिवंगत राजा के निजी कर्मचारियों के रूप में भी सेवा की।

सदाशिव गोपाल गोडसे के नाम से जाने जाने वाले। * मैं उन्हें 'मास्टर साहब' कहकर पुकारता था। उनसे मेरी पहली मुलाकात 1895 में उज्जैन स्टेशन पर हुई थी। वे उज्जैन के महादेव कॉलेज में लेक्चरर या प्रोफेसर थे। 1906 के बाद, मैं प्रतिदिन राजा के महल, राजप्रसाद में तीन से चार घंटे बिताता था। एस.जी. परचुरे के पाँच पुत्र और एक पुत्री थी। मैं उनके पुणे स्थित घर भी गया था। वे पुणे के ब्राह्मणों की तरह कपड़े पहनते थे। मुझे याद है कि कई पदों पर सेवा करने के बाद उन्होंने शिक्षा विभाग में उप महानिरीक्षक के रूप में अपना करियर समाप्त किया। उनकी मृत्यु के दिन मेरी उनसे मुलाकात हुई थी। मुझे उनकी मृत्यु की सही तारीख याद नहीं है और मुझे नहीं पता कि ग्वालियर में उनका कोई घर या संपत्ति थी या नहीं, लेकिन मुझे याद है कि उन्होंने दिवंगत राजा से घर खरीदने के लिए ऋण का अनुरोध किया था। मैंने न तो परचुरे, आरोपी से मुलाकात की है और न ही उनसे बात की है। मुझे ग्वालियर के एक पुलिस अधिकारी, एस.आर. मंडलिक, दिल्ली लेकर आए थे।
ग्वालियर से प्रकाशित होने वाले अखबार जियाजी प्रताप के संपादक रामप्रसाद मुकदमे में अंतिम गवाह थे। यह प्रक्रिया चार महीने तक चली। एक सौ तैंतालीस गवाहों ने गवाही दी और लगभग पांच सौ वस्तुओं को अदालत में 'प्रामाणिक साक्ष्य' के रूप में स्वीकार किया गया।
5 नवंबर 1948: अभियोजन पक्ष द्वारा अदालत में अतिरिक्त गवाह पेश किए गए। बॉम्बे विश्वविद्यालय के मुख्य क्लर्क, विनायक रघुनाथ दर्शेतकर ने वर्ष 1880-81, 1884-85 और 1885-86 के विश्वविद्यालय कैलेंडर; 1876-77 की मैट्रिक परीक्षा के परिणाम पत्र; और 1881-82 और 1891-92 की बी.ए. परीक्षा के परिणाम पत्र

अदालत में प्रस्तुत किए। उन्होंने 1886 में आरोपी परचुरे के पिता एस.जी. परचुरे को दिए गए प्रमाण पत्र पर बॉम्बे विश्वविद्यालय की मुहर की जांच और पुष्टि की। दूसरे गवाह ग्वालियर के अभिलेख विभाग के अधीक्षक राघवन थे। उन्होंने ग्वालियर का सैन्य एवं नागरिक अभिलेख प्रस्तुत किया जिसमें एस.जी. परचुरे का उल्लेख उनके हस्ताक्षर के साथ था। तीसरे गवाह ग्वालियर राज्य के लश्कर पुलिस स्टेशन के थाना प्रभारी केशव थे। थोरात पाटिल के आदेश पर उन्होंने 29 और 30 अक्टूबर को परचुरे के घर की तलाशी ली थी और वहां से एस.जी. परचुरे की जन्म कुंडली, एक तस्वीर और छह भू-राजस्व रसीदें जब्त की थीं। जब्त किए गए कुछ दस्तावेजों को अदालत में सबूत के तौर पर पेश किया गया। ग्वालियर के एक पुराने निवासी श्याम बहादुर ने अपनी गवाही में कहा, '29 और 30 अक्टूबर तथा 2 और 3 नवंबर को जब परचुरे के घर की तलाशी ली गई, तब मैं वहां मौजूद था।' उन्होंने अगले दिन भी अपनी गवाही जारी रखी। उन्होंने बताया कि वे 1940 से लश्कर में रह रहे हैं और 1934 से परचुरे को डॉक्टरी करते हुए देखा है। अंततः गवाहों से पूछताछ समाप्त हो गई।
नाथूराम विनायक गोडसे का बयान
'मैंने अकेले ही गांधीजी की हत्या की।'
8 नवंबर को जब अदालत की कार्यवाही शुरू हुई, तो मुख्य अभियोजक दाफ्तरी ने कहा कि वे अब और कोई गवाह पेश नहीं करेंगे। अदालत ने मुख्य आरोपी नथुराम गोडसे से पूछा कि क्या वह अदालत के समक्ष कुछ कहना चाहता है। नथुराम ने जवाब दिया कि वह तिरानवे पन्नों का एक लंबा बयान पढ़ना चाहता है।
उन्होंने सुबह 10:15 बजे अपना बयान पढ़ना शुरू किया। बयान पढ़ने से पहले उन्होंने कहा, 'मैंने अपने बयान को छह भागों में

बांटा है। पहला भाग षड्यंत्र और उससे संबंधित मामलों से संबंधित है; दूसरा भाग गांधीजी की राजनीति (प्रारंभिक चरण) पर प्रकाश डालेगा; तीसरा भाग उनकी राजनीति (अंतिम चरण) पर केंद्रित होगा; चौथा भाग गांधीजी और भारतीय स्वतंत्रता से संबंधित है; पांचवा भाग स्वतंत्रता के सपने के चकनाचूर होने से संबंधित है; और अंतिम भाग तुष्टीकरण की राष्ट्रविरोधी नीति के चरम से संबंधित है।' इसके बाद उन्होंने प्रेस रिपोर्टरों से अपील की कि वे उनके बयान का संदर्भ से हटकर और असंगत तरीके से उल्लेख न करें। दाफ्तरी ने इस पर आपत्ति जताते हुए कहा कि बयान के वे भाग जो मामले से संबंधित नहीं हैं और निर्णय तक पहुंचने में अनुपयोगी हैं, उन्हें रिकॉर्ड से हटा दिया जाना चाहिए।
सुबह 11 बजे, अपना बयान पढ़ते समय नथुराम को चक्कर आने लगे और वे गिर पड़े। थोड़ी देर आराम करने के बाद उन्होंने फिर से पढ़ना शुरू किया। पूरा बयान पढ़ने में उन्हें लगभग पाँच घंटे लगे। इस दौरान वे पानी पीते रहे और लौंग चबाते रहे। उन्होंने अपना बयान 'अखंड भारत अमर रहे, वंदे मातरम' के नारे के साथ समाप्त किया। नथुराम द्वारा अपना बयान पढ़ने के बाद, दफ्तरी ने कुछ आपत्तियाँ उठाईं और कहा कि बयान के कई हिस्से मुकदमे के लिए अप्रासंगिक हैं और उन्हें अदालत के रिकॉर्ड में शामिल नहीं किया जाना चाहिए। उन्होंने उदाहरण के तौर पर उस हिस्से का हवाला दिया जिसमें नथुराम ने कहा था—'मुझे भारत की वर्तमान सरकार के लिए कोई सम्मान नहीं है, क्योंकि यह मुसलमानों के प्रति पक्षपातपूर्ण है।' हालांकि, आत्मचरण ने जवाब दिया कि वे लिखित बयान के कुछ हिस्सों को हटाने का आदेश नहीं दे सकते। वे वकील के लिए अप्रासंगिक हो सकते हैं, लेकिन नथुराम के लिए वे आवश्यक हो सकते हैं। उन्होंने आगे कहा कि संयुक्त प्रांत में

महत्वपूर्ण मुकदमों में लिखित बयान हमेशा स्वीकार किए जाते थे।
उस दिन अदालत कक्ष लगभग खचाखच भरा हुआ था।
गोडसे के बयान का एक अंश इस पुस्तक में 'अपील और फांसी' शीर्षक वाले अध्याय में शामिल किया गया है। नाथूराम ने पंजाब उच्च न्यायालय में अपनी अपील का इस्तेमाल एक बार फिर अपना गुस्सा निकालने के लिए किया। मुकदमे के दौरान, भारत सरकार ने जल्दबाजी में प्रतिक्रिया देते हुए नाथूराम के बयान के प्रकाशन पर प्रतिबंध लगा दिया, जब उसे खचाखच भरे न्यायालय में प्रेस के सामने नाटकीय ढंग से सुनाया गया था। सरकार की इस कार्रवाई ने एक कट्टरपंथी के उन्मादी बयान को विश्वसनीयता प्रदान की, जिसने तथ्यों को तोड़-मरोड़ कर पेश किया, घटनाओं को संदर्भ से बाहर निकालकर तर्क दिए और जनता की भावनाओं का शोषण किया। गोडसे के राजनीतिक उत्तराधिकारी आज भी इन्हीं हथकंडों का इस्तेमाल करते हैं। नाथूराम के भाई गोपाल ने अपने भाई के बयान को 'मे इट प्लीज योर ऑनर' नामक पुस्तक में प्रकाशित किया। इस पुस्तक पर सरकार ने प्रतिबंध लगा दिया, जिससे एक बार फिर वैसी ही सहानुभूति मिली जो अक्सर शहीदों के लिए होती है। कांग्रेस सरकार की यह गलती तब और बढ़ गई जब गोपाल गोडसे ने अदालतों के माध्यम से प्रतिबंध हटवा दिया। आज संघ परिवार, जो गोडसे के वैचारिक मार्गदर्शक, समर्थक और उसके कृत्यों को बढ़ावा देने वाले थे, गांधी की हत्या को उचित ठहराने के लिए "माननीय महोदय, कृपया" वाक्यांश का उपयोग करते हैं।
इस बयान की भाषा से यह निष्कर्ष निकलता है कि इसका अधिकांश भाग या तो महान वक्ता और शब्द-शिल्पी वी.डी. सावरकर की कलम से सीधा निकला है या निश्चित रूप से उनके द्वारा अलंकृत किया गया है।

सावरकर को शब्दों पर जादुई पकड़ प्राप्त थी। भले ही यह पूरी तरह से सावरकर द्वारा न लिखा गया हो, लेकिन अंतिम मसौदे पर उन्होंने निश्चित रूप से काम किया था, जिससे यह एक अत्यंत भावनात्मक दस्तावेज बन गया। यद्यपि वे कटु लेखन में निपुण माने जाते थे, नाथूराम लोगों की भावनाओं को अपने शब्दों से प्रभावित करने की क्षमता नहीं रखते थे। उनकी कलम अपशब्दों और कटुतापूर्ण भाषा का प्रयोग करने की आदी थी। यह ज्ञात था कि जेल में आरोपी आपस में परामर्श करने के लिए स्वतंत्र थे और कई मौकों पर गार्डों को आरोपियों के संदेशों को बाहर ले जाते हुए पकड़ा गया था। यह मानने का कोई कारण नहीं है कि नाथूराम इतने प्रसिद्ध थे कि उन्होंने अपने गुरु और मार्गदर्शक, वी.डी. सावरकर से उस दस्तावेज को परिष्कृत करने में मदद ली, जिसे आज नाथूराम के वैचारिक वंशज उनकी अंतिम वसीयत के रूप में संदर्भित करते हैं। मैंने अपनी दूसरी पुस्तक में गांधीजी के जीवन के अंतिम वर्षों के बारे में लिखा है, जो यह साबित करता है कि आरएसएस-हिंदू महासभा गठबंधन द्वारा उनके खिलाफ चलाया गया अभियान कितना झूठा है।
9 नवंबर 1948: न्यायाधीश ने नथुराम से अट्ठाईस प्रश्न पूछे; आरोपी ने कटघरे में खड़े होकर उन सभी प्रश्नों के उत्तर दिए।
1. गोडसे ने बैज से अपने कार्यालय में मिलने के दावे का खंडन किया।
पुणे में प्रकाशित पत्रिका को पत्र लिखकर उसे आदेशित हथियार पहुंचाने का निर्देश दिया गया।
14 जनवरी को बंबई स्थित हिंदू महासभा कार्यालय में विस्फोटक सामग्री भेजी गई। 2. नाथूराम ने स्वीकार किया कि उन्होंने गोपाल गोडसे और नारायण को नामांकित किया था।

आप्टे की पत्नियों को उनकी जीवन बीमा पॉलिसियों का लाभार्थी बनाया गया था। 3. गोडसे ने स्वीकार किया कि मिस मोदक उनके साथ पुणे से यात्रा कर चुकी थीं।
बॉम्बे में उसी डिब्बे में और उसने उन्हें वहाँ से लिया था दादर स्टेशन से सावरकर के घर तक, अपने भाई की जीप में। 4. गोडसे ने इस बात से इनकार किया कि वह हिंदू अखबार में आप्टे के साथ बैज से मिला था।
14 जनवरी को दादर स्थित महासभा कार्यालय में, जहां यह आरोप लगाया गया था कि
बैज अपने साथ एक बैग में कुछ सामान ले जा रहा था। उसने इस बात का खंडन भी किया।
यह आरोप कि बाद में वह इन सभी लोगों को लेकर चला गया था
सावरकर के घर पर, और वहीं उन्होंने बैज और शंकर को इंतजार करने के लिए कहा था।
उनके लिए बाहर का इंतज़ार किया जा रहा था जबकि बाकी लोग अंदर जाकर आठ लोगों से बातचीत करने लगे।
बाहर आने से पहले दस लोग।
5. उन्होंने इस आरोप का खंडन किया कि वे दीक्षित महाराज के घर गए थे।
बैज और आप्टे के साथ; उन्होंने इस बात से भी इनकार किया कि वे एक बैग छोड़कर गए थे जिसमें कुछ था।
वहां हथियार और विस्फोटक मौजूद हैं।
6. गोडसे ने कहा, 'मैंने बैज को यात्रा व्यय के रूप में 50 रुपये नहीं दिए। मैंने इसे नोट कर लिया है।'
मैंने अपनी डायरी में "बंदोभाऊ" को 50 रुपये दिए थे। "बंदोभाऊ"

जिसका जिक्र हो रहा है वह बैज नहीं है, वह मेरे कार्यालय में काम करने वाला एक कर्मचारी है।
पूना'। उन्होंने दावा किया कि यह संक्रांति का दिन था, 'मैंने 2000 रुपये भी दिए थे।'
मैंने अपने भाई गोपाल को 250 रुपये दिए हैं। मैंने इसे अपनी डायरी में लिख लिया है।'

7. गोडसे ने दावा किया कि यह सरासर झूठ है कि 15 जनवरी को, 'मैं साथ में...'
आप्टे, मदनलाल और बैज दीक्षित महाराज के घर से सामान लेने गए थे।
सामान से भरा बैग, और उनकी बातचीत के दौरान
उन्होंने खुलासा किया था कि उन्होंने महात्मा गांधी को खत्म करने का फैसला कर लिया था।
पंडित नेहरू और सुहरावर्दी।
8. नथुराम ने इस बात से इनकार किया कि 16 जनवरी को उनकी मुलाकात पुणे में बैज से हुई थी और
बैज से कहा कि वह उनके साथ दिल्ली चले और एक नया रिवॉल्वर ले आए। उसने अपनी पुरानी रिवॉल्वर का आदान-प्रदान किया। उसने दावा किया, 'मैं 16 तारीख को बैज से नहीं मिला था।'
जनवरी में तो बिलकुल भी नहीं।
9. गोडसे ने स्वीकार किया कि 17 जनवरी को वह आप्टे और बैज के साथ थे।
उसने तीन-चार लोगों के घरों से पैसे लेने जाने से इनकार किया। उस दिन सावरकर से मुलाकात होने के बाद।
10. यह आरोप कि वह आखिरी बार तात्याराव सावरकर से मिलने गए थे 17 जनवरी को आप्टे के साथ सावरकर सदन में और तात्याराव ने गोडसे के अनुसार, 'यशस्वी हौन या' कहकर उन्हें आशीर्वाद दिया गया था।
सरासर झूठ।
11. गोडसे ने स्वीकार किया कि उसने आप्टे के साथ विमान से यात्रा की थी, यह मानकर कि वह उनके साथ विमान से गया था।

उन्होंने नामों का उल्लेख किया, लेकिन इस बात से इनकार किया कि आप्टे ने दादा महाराज के सामने उनका नाम बताया था।
— 'Prateeksha karo aur dekho hum kya karte hain', 'Wait and see what we
उन्होंने कहा कि आप्टे ने अदालत में उन्हें उनके यात्रा करने के बारे में सूचित किया था।
छद्म नामों के तहत।
12. नथुराम ने स्वीकार किया कि वे 17 तारीख से मरीना होटल में रुके थे।
और 20 जनवरी को, उसने फर्जी नामों का इस्तेमाल किया था, और उसने कुछ जानकारी दी थी।
कमरे के परिचारक को कपड़े तुरंत धोने के लिए दिए गए। 13. नाथुराम ने हिंदू आश्रम जाने के अभियोजन पक्ष के दावे का खंडन किया।
19 जनवरी को आप्टे और करकरे के साथ महासभा भवन और
वहां बैज और मदनलाल से मुलाकात हुई।
14. नथुराम ने इस बात से इनकार किया कि 20 जनवरी को गोपाल ने उसकी रिवॉल्वर की मरम्मत करवाई थी।
उनकी उपस्थिति में मरीना होटल का कमरा और आप्टे, करकरे, बैज और मदनलाल ने गन कॉटन विस्फोटक में फ्यूज और डेटोनेटर लगाए थे। उन्होंने बैज से यह कहने से भी इनकार किया-'हा अमचा शेवात्चा प्रयासना,
महनुं तैयारी करताना कालजी घ्या', 'यह हमारा अंतिम प्रयास है, इसलिए ले लो
सब कुछ तैयार करते समय सावधानी बरतें। गोडसे ने दावा किया कि वह पीड़ित था।

सिरदर्द के कारण वह कहीं बाहर नहीं गया था। बैज और आप्टे प्रार्थना सभा में प्रदर्शन के बारे में बात करते हुए, मैंने उनसे कहा—"जाओ"
अगर आप बात करना चाहते हैं तो अगले कमरे में चले जाइए, मुझे सिरदर्द हो रहा है और मैं कुछ देर आराम करना चाहता हूँ।
अकेला छोड़ दिया"।
15. नथुराम ने अन्य आरोपियों को हथियार बांटने से इनकार किया। उन्होंने कहा कि यह कहना गलत है कि योजना के अनुसार आप्टे और वह केवल
वह दूसरों को संकेत दे रहा होगा। मदनलाल बम विस्फोट करेगा और... बाकी लोग गांधी पर ग्रेनेड फेंकेंगे और गोली चलाएंगे। 16. नाथूराम ने कहा—'मैं 20 जनवरी को प्रार्थना सभा में नहीं गया था,
मुझे यह भी नहीं पता कि वहाँ क्या हुआ और क्या नहीं हुआ। 17/18. सत्रहवें और अठारहवें प्रश्न के उत्तर में
न्यायाधीश नथुराम ने भी वही जवाब दिया और इस बात से इनकार किया कि वह उस समय उपस्थित थे।
प्रार्थना सभा का स्थल।
19. गोडसे ने अदालत को बताया, 'मैं आप्टे के साथ उनसे मिलने नहीं गया था।'
Badge at the Hindu Mahasabha Bhavan, nor did Badge tell us, "Chalte
"व्हा, अम्हाला तुमच्याशी कहिही डेने गेने नहीं", "दफा हो जाओ, मैं चाहता हूं
आप के साथ कुछ नहीं करना"।'

20. गोडसे ने इस तथ्य को स्वीकार किया कि 20 जनवरी की रात को, 'मैंने यात्रा की थी।'
मैंने ट्रेन से फर्स्ट क्लास में कानपुर तक का सफर किया और वहाँ एक विश्राम कक्ष आरक्षित किया था।
कानपुर रेलवे स्टेशन पर 21 तारीख को।
21. गोडसे ने स्वीकार किया कि वह 24 जनवरी से 27 जनवरी तक वहीं रुका था।
बॉम्बे के एल्फिंस्टन एनेक्स होटल में आप्टे के साथ। लेकिन कहा, 'गोपाल
और करकरे मुझसे वहां मिलने नहीं आए।'
22. गोडसे ने स्वीकार किया कि उसने एयर इंडिया लिमिटेड के साथ दो टिकट आरक्षित किए थे।
25 जनवरी को और यह कि आप्टे और वह उसी विमान से दिल्ली गए थे। 27 जनवरी को झूठी पहचान अपनाकर।
23. गोडसे ने यह बात स्वीकार की कि वह माता मंदिर गया था (मोटा मंदिर) में 26 जनवरी को आप्टे के साथ मुलाकात की, लेकिन उन्होंने इस बात से इनकार किया कि उन्होंने कोई मांग की थी। दादा महाराज से रिवॉल्वर मिली। 'मैं वहां सिर्फ दीक्षित से मिलने गया था।'
महाराज, जो उस समय बीमार थे। उनके बीच जो बातचीत हुई...
यह केवल हथियार और विस्फोटक इकट्ठा करने की आवश्यकता से संबंधित था।
सीमावर्ती क्षेत्रों में हो रहे अत्याचारों का मुकाबला करने के लिए
हैदराबाद राज्य।

24. गोडसे ने कहा, '27 जनवरी को, बंबई से दिल्ली की यात्रा करने के बाद...'
नारायणराव और विनायकराव के छद्म नामों का उपयोग करते हुए, आप्टे और मैं विमान से रवाना हुए।
हम 27 तारीख की रात को ग्वालियर के लिए रवाना हुए। अगले दिन सुबह हम वहाँ पहुँच गए।
सुबह वे निकले और स्टेशन के पास एक धर्मशाला में रुके। 25. गोडसे ने यह बात स्वीकार की कि 28 जनवरी को वे डॉ. परचुरे के यहाँ थे।
घर पर, सुबह 7:30 बजे और शाम 4:00 बजे, लेकिन कहा, 'यह सच नहीं है कि पिस्तौल
हमने कथित तौर पर इसे वहाँ से प्राप्त किया, यह गोयल का था या मैंने इसे गोयल से प्राप्त किया था
through Dandavate'.
26. गोडसे ने इस तथ्य को स्वीकार किया कि विनायकराव की छद्म पहचान के तहत,
उन्होंने दिल्ली रेलवे स्टेशन पर चौबीस घंटे के लिए एक विश्राम कक्ष किराए पर लिया था।
स्टेशन पर पहुंचकर, उन्होंने इस बात से इनकार किया कि करकरे और आप्टे उस कमरे में मौजूद थे।
उनके साथ। उन्होंने कहा कि उन्होंने 29 या 30 तारीख को आप्टे या करकरे को नहीं देखा था।
जनवरी। आप्टे मुझसे ग्वालियर में ही अलग हो गए थे। 27. गोडसे ने स्वीकार किया कि उसने गांधी पर तीन बार गोली चलाई थी। उसने वर्णन किया

कुछ मिनट पहले और कुछ मिनट बाद उनकी मानसिक स्थिति का ग्राफिक चित्रण किया गया।
गांधी की हत्या के बाद।
28. गोडसे ने कहा, 'जैसे ही गांधीजी प्रार्थना के लिए बरामदे के पास पहुँचे,
मैं वहीं पर उसके सामने कूद पड़ा। मैंने गांधीजी को गोली मारने का फैसला कर लिया था।
इस तरह से कि किसी और को चोट न लगे। मैंने गांधीजी का अभिवादन किया।
मैंने हथेलियाँ जोड़ रखी थीं, लेकिन पिस्तौल को अपनी हथेलियों के बीच छिपा रखा था।
मैंने सेफ्टी कैच हटा दिया। मुझे लगा कि मैंने दो बार गोली चलाई है, मुझे पता चला
पुलिस ने मुझे बताया कि मैंने तीन बार गोली चलाई थी। मैं उत्तेजित हो गया और चिल्लाने लगा।
बार-बार "पुलिस! पुलिस!!" चिल्लाते हुए। गोली चलाने के बाद मैंने पाया कि
लोग सदमे से स्तब्ध रह गए थे। मुझे याद है कि सबसे पहले मुझे ही पकड़ा गया था।
एक पुलिस कांस्टेबल ने उसे रोका। बाद में दूसरा आया। फिर कोई और आया।
मेरे हाथ से पिस्तौल छीन ली।
गोडसे ने आगे बताया, 'एक आदमी मेरे पीछे से आया और मेरे सिर के पिछले हिस्से पर वार किया, जिससे खून बहने लगा। मैंने उससे कहा कि मैंने वही किया है जो मैंने करने का ठान लिया था और मुझे अपने किए पर कोई पछतावा नहीं है। मैंने उस व्यक्ति को चेतावनी दी

जिसने मेरे हाथ से पिस्तौल छीनी थी कि यह स्वचालित पिस्तौल है और मैंने इसका सुरक्षा लॉक हटा दिया है, इसलिए इसे सावधानी से संभाले, अन्यथा यह चल सकती है और किसी और को घायल या मार सकती है। वह व्यक्ति मेरी ओर मुड़ा और बोला, "मैं तुम्हें गोली मार दूंगा।" मैंने उससे कहा, "मुझे गोली मारो, मैं मरने के लिए तैयार हूं।" दो घंटे बाद मैंने अपने दिल और नाड़ी की जांच करवाई।' अंत में नाथूराम विनायक गोडसे ने कहा, 'गांधीजी की मृत्यु निश्चित रूप से मेरे हाथ में मौजूद पिस्तौल से चलाई गई गोलियों के कारण हुई।'
10 नवंबर 1948: आत्मचरण द्वारा पूछे गए प्रश्नों का उत्तर देते हुए नाथुराम ने कहा, '20 जनवरी 1948 को मैंने मरीना होटल के कमरा नंबर 40 में करकरे और शंकर के साथ चाय नहीं पी थी। न ही हमें शराब परोसी गई थी। करकरे मुझसे वहां नहीं मिले थे। मैंने अपने जीवन में कभी चाय नहीं पी है, हां, कभी-कभार कॉफी जरूर पी है।' उन्हें उनके पत्र और लिखावट के नमूने दिखाए गए। उन्होंने स्वीकार किया कि दोनों उनके अपने थे और कहा, 'जब मुझे बॉम्बे में सीआईडी के कार्यालयों में मराठी में लिखावट का नमूना देने के लिए कहा गया, तो मुझे विशेष रूप से अक्षरों के ऊपर एक रेखा खींचने के लिए कहा गया था। 20 जनवरी 1948 को प्रार्थना सभा स्थल पर मुझे देखने की गवाही देने वाले चार गवाहों ने पुलिस के दबाव में ऐसा किया होगा। ग्वालियर के एक गवाह के बारे में भी मेरी ऐसी ही शिकायत है।'
दादा महाराज और दीक्षित महाराज की गवाही के बारे में बात करते हुए, जो उनके खिलाफ गई थी, गोडसे ने कहा, 'संभवतः उन्होंने मेरे खिलाफ ऐसी गवाही इसलिए दी क्योंकि उन्हें डर था कि अन्यथा पुलिस उन्हें भी इस मामले में झूठा फंसा देगी।' बैज की गवाही के

बारे में उन्होंने कहा, 'बैज हथियारों और विस्फोटकों का धंधा करता था। मुझे यह सब पता था। कुछ मौकों पर उसने मुझे हथियार, बम और विस्फोटक भी दिए, जो मैंने हैदराबाद राज्य के खिलाफ लड़ने वालों को दे दिए। फिर बैज अक्सर मुझसे 100 रुपये से कम की रकम मांगता रहता था। कुछ समय बाद मुझे उसके व्यवहार से खतरा महसूस होने लगा। महात्मा गांधी की हत्या के बाद महाराष्ट्र में ब्राह्मणों के खिलाफ आम तौर पर गुस्सा था। बैज ब्राह्मण नहीं है। मुझे लगता है कि इन्हीं कारणों से बैज ने मेरे खिलाफ गवाही दी।' उन्होंने यह बात स्वीकार की कि 30 जनवरी को उन्होंने अपनी तस्वीर खिंचवाई थी, जो उन्होंने आप्टे को भेजी थी। 'इससे पहले मैंने कभी किसी को प्रकाशन के लिए अपनी तस्वीर लेने की अनुमति नहीं दी थी।'
10 नवंबर 1948: दूसरे आरोपी नारायण दत्तात्रेय आप्टे ने उस दिन अदालत में अपना बाईस पन्नों का बयान पढ़ा। उन्होंने कहा, 'मैं निर्दोष हूं। हत्या के समय मैं घटनास्थल पर मौजूद नहीं था। महात्मा गांधी की हत्या में सहभागी होने और उनकी हत्या को उकसाने, योजना बनाने और उसमें सहायता करने के मेरे ऊपर लगाए गए सभी आरोपों को मैं सिरे से नकारता हूं।' उन्होंने आरोप लगाया कि, 'मेरे खिलाफ मामला बनाने के प्रयास में मेरे खिलाफ बहुत सारे सबूत गढ़े गए हैं और कई गवाहों को मेरे खिलाफ गवाही देने के लिए सिखाया-पढ़ाया गया है। जब मैंने पुलिस को दिल्ली में हिंदू महासभा भवन के पीछे और ग्वालियर में "पर्चुरे वाडा" की जगह दिखाई, तो पुलिस ने मुझे बंधक बना लिया और मैं पूरी तरह उनकी दया पर था। वे जो चाहते थे, मुझे मौत की धमकी या मेरे परिवार को प्रताड़ित करने की धमकी देकर जबरदस्ती करवाते थे।'

अपने पृष्ठभूमि के बारे में बताते हुए आप्टे ने कहा, 'मुझे हिंदू होने पर बहुत गर्व है। हिंदुओं को एकजुट और शक्तिशाली बनना चाहिए... मुझे पूरा विश्वास है कि गांधीजी की अहिंसा ने हिंदू धर्म के अस्तित्व को गंभीर खतरा पहुँचाया था।' आप्टे ने स्वीकार किया कि वे 20 जनवरी को दिल्ली में मौजूद थे। उन्होंने कहा, 'मैं शाम को प्रार्थना स्थल गया था। मैंने तय किया था कि मैं उस शाम गांधीजी से मिलूंगा और उनसे पूछूंगा— "पाकिस्तान को 55 करोड़ रुपये न देने के अपने फैसले को बदलने और अब तुरंत देने का वादा करने में भारत सरकार के प्रभाव का कितना योगदान है?" उस शाम माइक्रोफोन काम नहीं कर रहा था, इसलिए मुझे लगा कि प्रदर्शन को अपनी योजना के अनुसार करना असंभव होगा। यह सच है कि मैं 15 जनवरी को बैज से मिला था। उन्होंने दिल्ली में प्रदर्शन में भाग लेने की पेशकश की थी। मैंने बैज को दिल्ली में किसी भी प्रकार के हथियार, बम और विस्फोटक ले जाने से मना किया था, क्योंकि हम शांतिपूर्ण प्रदर्शन करने वाले थे। लेकिन वे अपने साथ बम और विस्फोटक ले आए और उनमें से कुछ शरणार्थियों में बाँट दिए; मदनलाल भी उनमें मौजूद थे।'
'जब मुझे बैज से मदनलाल की गिरफ्तारी के बारे में पता चला, तो मैं भी दिल्ली छोड़कर बंबई चला गया। वहाँ मेरी मुलाकात गोडसे से हुई और हम दोनों ने फिर से दिल्ली में शांतिपूर्ण प्रदर्शन करने का फैसला किया। चूंकि हमारे पास बंबई से प्रदर्शन के लिए स्वयंसेवकों को लाने के लिए पर्याप्त धन नहीं था, इसलिए हम स्वयंसेवकों को लेने के लिए ग्वालियर में डॉ. परचुरे के घर गए। लेकिन वे हमारी मदद नहीं कर सके क्योंकि उनके अधिकांश स्वयंसेवक गिरफ्तार हो चुके थे और बाकी छिप गए थे। नाथूराम ने मुझे बंबई जाने और कम से कम वहाँ से दिल्ली में प्रदर्शन के लिए

कुछ स्वयंसेवकों की व्यवस्था करने की कोशिश करने के लिए कहा। इस प्रकार मैं 28 जनवरी को बंबई गया और गोडसे दिल्ली चला गया।' आप्टे ने आगे कहा, 'मैं 30 जनवरी को बॉम्बे पहुँचा और पूरा दिन धन जुटाने और स्वयंसेवकों की व्यवस्था करने में बिताया। उसी शाम मुझे गांधीजी की हत्या और नाथूराम गोडसे की गिरफ्तारी की खबर मिली। मैंने तुरंत दिल्ली जाने का फैसला किया, लेकिन यह सोचकर रुक गया कि गोडसे का दोस्त होने के नाते पुलिस मुझे गिरफ्तार कर लेगी। यह झूठ है कि 15 जनवरी को मैंने बैज को बताया था कि सावरकर ने महात्मा गांधी, पंडित नेहरू और सुहरावर्दी की हत्या का फैसला किया था और यह जिम्मेदारी हमें सौंपी थी। ये सब बिल्कुल मनगढ़ंत कहानियां हैं।'
आप्टे ने अभियोजन पक्ष के इस दावे को भी खारिज कर दिया कि गिरफ्तारी के समय उनके पास से बरामद ट्रेन टिकट चोरी के थे। उन्होंने कहा कि यह उनकी मनगढ़ंत कहानी है। 'यह एक बार फिर पूरी तरह से मनगढ़ंत और निराधार तर्क है।'
अंत में आप्टे ने कहा, 'अभियोजन पक्ष मेरे खिलाफ लगाए गए किसी भी आरोप को साबित करने में विफल रहा है। मैं पूरी तरह निर्दोष हूं, इसलिए मुझे जल्द से जल्द रिहा किया जाना चाहिए।'
11 नवंबर 1948: आप्टे को न्यायाधीश आत्मचरण द्वारा पूछे गए प्रश्नों का उत्तर देना था। आप्टे ने स्वीकार किया कि वह बैज को पिछले चार वर्षों से जानते थे और उन्होंने यह भी माना कि बैज ने उन्हें हैदराबाद संघर्ष में उपयोग के लिए हथियार, बम और विस्फोटक सामग्री की आपूर्ति की थी। उन्होंने नवंबर 1947 और जनवरी 1948 के बीच बैज से मिलने से इनकार किया। आप्टे ने कहा, 'यह कहना असत्य है कि मैं 10 जनवरी 1948 को बैज को हिंदू राष्ट्र कार्यालय ले गया था और उनसे 14 जनवरी 1948 को दादर स्थित हिंदू

महासभा कार्यालय में दो गन कॉटन और पांच हैंड ग्रेनेड देने के लिए कहा था।' उन्होंने इस तथ्य को सहजता से स्वीकार किया कि नाथूराम ने अपनी और गोपाल गोडसे की पत्नियों को अपनी जीवन बीमा पॉलिसियों में नामांकित किया था और उन्होंने पॉलिसी दस्तावेजों पर गवाह के रूप में हस्ताक्षर किए थे। उन्होंने शांता मोदक और नाथूराम के साथ पुणे से बॉम्बे की यात्रा करने और उनके द्वारा सावरकर सदन में छोड़े जाने की बात भी स्वीकार की, लेकिन उस रात बैज से मिलने से इनकार किया।
अगले प्रश्न का उत्तर देते हुए आप्टे ने कहा, 'गवाह का यह बयान कि मैं नथुराम गोडसे, शंकर और बैज के साथ दीक्षित महाराज के घर गया था, झूठा है। यह भी सच नहीं है कि बैज हथियारों, बमों और विस्फोटकों से भरा थैला लाया था, जिसके लिए गोडसे ने उसे 50 रुपये दिए थे। 15 जनवरी 1948 की सुबह, मैं हिंदू महासभा के दादर कार्यालय में बैज से मिला था। मदनलाल और करकरे के साथ नहीं, जैसा कि अभियोजन पक्ष के गवाहों ने दावा किया है।' आप्टे ने बैज के इस बयान का खंडन किया कि सावरकर ने गांधी, नेहरू और सुहरावर्दी की हत्या का आदेश दिया था। आप्टे ने इस बात से भी इनकार किया कि उन्होंने दीक्षित महाराज से रिवॉल्वर लेने के लिए बातचीत की थी। उन्होंने कहा, 'मैं ऐसे व्यक्ति से रिवॉल्वर मांगने का जोखिम क्यों उठाऊंगा, जिसे मैं केवल सामान्य रूप से जानता हूं और जिससे मेरी कोई जान-पहचान नहीं है?' 17 जनवरी 1948 को नाथूराम और खुद के फर्जी नामों से यात्रा करने के कारणों का खुलासा करते हुए उन्होंने बताया कि वे बुकिंग कार्यालय गए थे और वहां उनकी मुलाकात एक ऐसे व्यक्ति से हुई जो उनके टिकट रद्द कर रहा था। उस व्यक्ति ने आप्टे से पूछा कि क्या वे टिकट खरीदना चाहते हैं। यही एकमात्र कारण था कि हमें फर्जी पहचान के साथ

यात्रा करनी पड़ी। लेकिन अगर मैंने सीधे कार्यालय से भी टिकट खरीदे होते, तो भी मैं फर्जी नामों का ही इस्तेमाल करता। कारण यह था कि हिंदू राष्ट्र के संपादकीयों का लहजा लगातार आक्रामक होता जा रहा था और सरकार ने हमें चेतावनी दी थी कि अगर हमने कोई ऐसा लेख लिखा और प्रकाशित किया जो सांप्रदायिक नफरत को बढ़ावा देता हो और लोगों को हिंसा के लिए उकसाता हो, तो वे हम पर मुकदमा चलाएंगे। 17 तारीख को, नाथूराम और मैं वीटी में बैज से मिले। उन्होंने कहा कि यह गवाही कि उनके साथी और वे सावरकर से आखिरी बार मिलने उनके घर गए थे, पूरी तरह से मनगढ़ंत और झूठ है। आप्टे ने अभियोजन पक्ष के इस दावे को खारिज कर दिया कि वह 20 जनवरी की सुबह प्रार्थना सभा स्थल पर गए थे या उन्होंने हिंदू महासभा भवन के पीछे जंगल में रिवाल्वर का परीक्षण किया था। 20 जनवरी को प्रदर्शन करने की योजना छोड़ने का कारण बताते हुए आप्टे ने कहा, 'मैं शाम 4:30 बजे बिरला हाउस के लिए निकला। रास्ते में मेरी मुलाकात शंकर और बैज से हुई और मैं उन्हें टैक्सी में अपने साथ ले गया। नाथूराम तेज सिरदर्द के कारण मरीना होटल में ही रुक गए।' प्रार्थना स्थल पर पहुँचने पर उन्होंने देखा कि सुबह जिन शरणार्थियों से उनकी मुलाकात हुई थी, उनमें से कोई भी नहीं आया था। 'मैंने सोचा कि ऐसे अवसर पर नाथूराम गोडसे की उपस्थिति आवश्यक है। इसलिए मैं शंकर के साथ मरीना होटल लौट आया। बैज की अपनी इच्छा थी कि वह वहीं रुकें। होटल पहुँचकर मैंने गोडसे को पूरी घटना सुनाई।'
'यह झूठ है कि उस रात मेरी मुलाकात बैज से हिंदू महासभा भवन में हुई थी। वह प्रार्थना सभा से होटल आया और उसने हमें बम विस्फोट के बारे में बताया। बैज का व्यवहार बहुत अजीब था और वह चिंतित दिख रहा था। ऐसा इसलिए था क्योंकि उसने गन कॉटन विस्फोटक

मदनलाल को दिया था, जिसे प्रार्थना सभा में विस्फोट करने के आरोप में गिरफ्तार किया गया था। जब मैंने उसे फटकारा, तो उसने तुरंत पुणे लौटने की इच्छा व्यक्त की। हमें लगा कि मदनलाल कबूल कर लेगा कि बैज ने उसे विस्फोटक दिए थे, और बैज हमें फंसा देगा, इसलिए हमारे लिए दिल्ली में और अधिक समय तक रहना खतरनाक होगा।' 12 नवंबर 1948: आप्टे ने कहा, 'यह कहना गलत है कि 25 जनवरी को गोडसे और मैं जी.एम. जोशी के घर गए थे और वहां हमारी मुलाकात करकरे और गोपाल गोडसे से हुई थी। दरअसल, गोविंद मालेकर ने मुझे उसी समय एल्फिंस्टन होटल में देखा था। मेरी मुलाकात गोपाल गोडसे से वहां नहीं हुई थी।'
आप्टे ने दिल्ली आने की बात स्वीकार करते हुए कहा, 'गोडसे और मैंने 25 जनवरी को बॉम्बे में 27 जनवरी की उड़ान के लिए टिकट बुक किए थे। हमने "डी. नारायणराव" और "एन. विनायकराव" के फर्जी नामों से टिकट बुक किए थे।'
आप्टे ने स्वीकार किया कि वह 26 जनवरी को माता मंदिर गए थे, लेकिन उन्होंने दादा महाराज या दीक्षित महाराज से रिवॉल्वर देने की मांग नहीं की।
एक अन्य प्रश्न का उत्तर देते हुए आप्टे ने कहा, 'गोडसे और मैं 27 जनवरी को दोपहर 1 बजे हवाई जहाज से दिल्ली पहुंचे। हम उस दोपहर कुछ शरणार्थी शिविरों में गए और रात को ग्वालियर के लिए रवाना हो गए।'
'ग्वालियर में हम स्टेशन के सामने स्थित श्री कृष्ण धर्मशाला में रुके थे। ग्वालियर में हमारी मुलाकात गरीब, गोयल या काले से नहीं हुई।'
आप्टे ने कहा, 'अभियोजन पक्ष द्वारा यह साबित करने का प्रयास करना निंदनीय है कि हम ग्वालियर बंदूक खरीदने गए थे। वास्तव

में, अगर हमें बंदूक की जरूरत होती तो हम आसानी से पुणे या मुंबई से ही खरीद सकते थे।'
ग्वालियर जाने का हमारा उद्देश्य केवल दिल्ली में आयोजित होने वाले प्रदर्शनों में भाग लेने के लिए स्वयंसेवकों की भर्ती करना था। हम गिरफ्तारी से पहले प्रदर्शन करना चाहते थे। हमें अपनी गिरफ्तारी का डर सता रहा था, क्योंकि हमारा मानना था कि अगर बैज को बम विस्फोट मामले में गिरफ्तार किया गया, तो वह जाने- अनजाने हमें भी फंसा देगा।
'मैंने बॉम्बे में प्रदर्शनों के सिलसिले में ही डॉ. परचुरे से मिलने का फैसला किया था, क्योंकि परचुरे ने मोती महल पैलेस में अपने स्वयंसेवकों के साथ एक सफल प्रदर्शन किया था। ग्वालियर में हमें सफलता नहीं मिली, इसलिए हमने बॉम्बे जाने का फैसला किया, लेकिन गोडसे ने मुझे बॉम्बे जाने के लिए कहा और बोला कि वह दिल्ली जाएगा। अगर हम अलग-अलग जगहों पर कोशिश करें तो शायद हमें स्वयंसेवक जुटाने में सफलता मिल जाए, और शायद इससे हमें फायदा भी हो।'
आप्टे ने अभियोजन पक्ष के इस दावे को झूठ करार दिया कि उन्हें 29 जनवरी को दिल्ली स्टेशन के बुकिंग कार्यालय के पास गोडसे के साथ देखा गया था और अगले दिन गवाहों ने उन्हें दिल्ली स्टेशन के रिटायरिंग रूम में गोडसे और करकरे के साथ देखा था।
प्रश्नों का उत्तर देते हुए आप्टे ने कहा, 'मैं 28 जनवरी को ग्वालियर से निकला था। अगली सुबह मैंने इटारसी से बंबई के लिए ट्रेन पकड़ी। मैं 30 जनवरी को बंबई पहुंचा। बंबई पहुंचते ही मैं प्रदर्शनों के लिए शरणार्थियों को भर्ती करने के लिए चेंबूर शरणार्थी शिविर गया। उसी रात मैंने पुणे जाने का फैसला किया, लेकिन विक्टोरिया टर्मिनस स्टेशन पर मुझे पता चला कि

नाथूराम गोडसे ने महात्मा गांधी की हत्या कर दी है। चारों ओर बहुत अशांति थी, इसलिए मैंने स्टेशन पर ही रुकना उचित समझा।' अगली सुबह मेरी मुलाकात विक्टोरिया टर्मिनस स्टेशन पर करकरे से हुई। मैंने श्रीमती मनोरमा साल्वी से दिल्ली स्थित हिंदू महासभा के कार्यालय को एक टेलीग्राम भिजवाया, जिसमें उनसे नाथूराम गोडसे के बचाव की व्यवस्था करने का अनुरोध किया गया था। मेरी मुलाकात एक वकील से हुई, जिन्होंने मुझे सलाह दी कि तुरंत दिल्ली जाना व्यर्थ होगा। उसी शाम मेरी मुलाकात जमुनादास मेहता से हुई।
अतिरिक्त प्रश्नों का उत्तर देते हुए आप्टे ने कहा, 'मैं 31 जनवरी और 1 फरवरी 1948 को चेंबूर शरणार्थी शिविर में रुका था। 2 और 3 फरवरी को मैं सी ग्रीन होटल में रुका था। 3 से 5 फरवरी तक मैं एल्फिंस्टन एनेक्स होटल में रुका था। मैंने वह होटल नहीं छोड़ा क्योंकि पुलिस मेरी तलाश कर रही थी।'
'5 फरवरी 1948 से 13 फरवरी 1948 तक मैं जी.एम. जोशी के घर पर रुका। इस दौरान करकरे मुझसे चार बार मिले। मैं पुणे गया और 8 से 10 फरवरी तक वहाँ रुका, लेकिन पुणे छोड़ दिया क्योंकि वहाँ मेरी गिरफ्तारी की संभावना बहुत अधिक थी, क्योंकि सभी जानते थे कि मैं गोडसे से घनिष्ठ रूप से जुड़ा हुआ था। यह सच है कि 13 फरवरी को करकरे और मैंने "आर. विष्णु" और "एन. काशीनाथ" के फर्जी नामों का इस्तेमाल करते हुए पिरके के अपोलो होटल में चेक-इन किया।' आप्टे ने अभियोजन पक्ष के इस दावे का खंडन किया कि उनकी पतलून बॉम्बे स्थित सीआईडी कार्यालय में उनसे बरामद की गई थी। उन्होंने कहा, 'पुलिस मेरे कमरे में एक संदूक लेकर आई और मुझे दो चाबियां दीं। उन्होंने मुझसे संदूक से एक पतलून निकालने को कहा। मुझे नहीं पता कि मेरी पतलून संदूक के अंदर कैसे पहुंची।'

'मुझे दिल्ली लाए जाने से पहले, मेरी मुलाकात बॉम्बे स्थित सीआईडी कार्यालय में करकरे और गोपाल गोडसे से हुई थी। उन्होंने मुझे पुलिस के निर्देशों का पालन करने और उनके साथ पूरा सहयोग करने की सलाह दी, अन्यथा मुझे भी गोपाल और करकरे की तरह ही बेरहमी से प्रताड़ित किया जाएगा। जब मुझे ग्वालियर में डॉ. परचुरे के घर ले जाया गया, तो पुलिस ने हम सभी को पिछवाड़े में जाने को कहा। मुझे पिछवाड़े का रास्ता नहीं पता था, मैं दाईं ओर मुड़ा लेकिन पुलिस ने मुझे बाईं ओर मुड़ने को कहा। मैं इस बात से इनकार करता हूं कि हमने उस जगह पर रिवॉल्वर का परीक्षण किया था।'
13 नवंबर 1948: न्यायाधीश आत्मचरण ने आप्टे से जिरह जारी रखी। आप्टे ने कहा कि वे 17 जनवरी से पहले नाथूराम गोडसे, गोपाल गोडसे, सावरकर, करकरे और बैज को जानते थे। उन्होंने दिल्ली में शंकर किस्तय्या से भी मुलाकात की थी, लेकिन मदनलाल पाहवा को बिल्कुल भी नहीं जानते थे। उन्हें उनकी लिखावट का नमूना और विभिन्न रजिस्टरों में दर्ज दस्तावेज दिखाए गए और उन्होंने उसे अपनी लिखावट के रूप में स्वीकार किया। उन्होंने कहा कि 20 जनवरी और 30 जनवरी की घटनाएं आपस में संबंधित नहीं थीं। पहली घटना के बाद भी उन्होंने सपने में भी नहीं सोचा था कि गांधी की हत्या की साजिश रची जा रही है। आप्टे ने कहा, 'यह पता लगाने के लिए कि क्या इस साजिश में विदेशी संलिप्तता थी, पुलिस ने मुझे कुछ दस्तावेज दिखाए थे। पुलिस को शक था कि इस साजिश में ग्रेट ब्रिटेन और रूस शामिल थे। बाद में उन्हें एहसास हुआ कि उनका अनुमान पूरी तरह गलत था। उन्होंने हिंदू महासभा और आरएसएस के कई सदस्यों को गिरफ्तार किया और पुख्ता सबूत पेश करने के लिए कई

गवाह जुटाए।' अदालत ने आप्टे से पूछा कि क्या वे अपने बचाव में कोई गवाह पेश करना चाहते हैं। आप्टे ने इनकार कर दिया।
15 नवंबर 1948: गांधी हत्याकांड के तीसरे आरोपी विष्णु रामचंद्र करकरे ने मराठी में अपना सैंतीस पन्नों का बयान पढ़ते हुए दावा किया कि वह पूरी तरह निर्दोष हैं। 'मे नीरदोष आहे, ह्या कतत मजा हथ नाहिन, मला फसावला गेला आहे', 'मैं बिल्कुल निर्दोष हूँ, माननीय न्यायाधीश।' उन्होंने कहा कि साजिश का आरोप बहुत अस्पष्ट और अनिश्चित है, और अदालत की शक्तियों और अधिकार क्षेत्र को चुनौती देते हुए उन्होंने कहा कि अदालत को आरोपियों के खिलाफ लगाए गए आरोपों पर फैसला सुनाने और निर्णय देने के लिए कानूनी शक्तियां नहीं दी गई हैं।
आप्टे की तरह करकरे ने भी कहा कि वे गांधी की हत्या के समय वहां मौजूद नहीं थे और न ही वे किसी भी तरह से इस साजिश में शामिल थे। उन्होंने कहा कि उन्हें इसके बारे में कुछ लोगों से पता चला और फिर उन्होंने अखबारों में इसके बारे में पढ़ा।
करकरे 1938 में हिंदू महासभा में शामिल हुए और बाद में अहमदनगर जिले के सचिव बने। उन्होंने बताया कि अहमदनगर में उनकी मुलाकात मदनलाल से हुई। 'मुझे पता था कि मुसलमान मुझसे नाराज़ हैं और पुलिस भी मुझ पर कड़ी नज़र रख रही थी। मैं जनवरी के दूसरे सप्ताह में बंबई गया। वहां से लौटने पर मुझे पता चला कि पुलिस मुझे लोक सुरक्षा अध्यादेश के तहत गिरफ्तार करने वाली है। मदनलाल ने सुझाव दिया कि मैं उनके साथ दिल्ली जाकर गांधीजी की मुस्लिम समर्थक नीतियों के खिलाफ प्रदर्शन करूं। मैं मान गया।' उन्होंने स्वीकार किया कि वे 20 जनवरी को बिड़ला हाउस गए थे, लेकिन मदनलाल की गिरफ्तारी की खबर सुनकर डर गए और दिल्ली छोड़कर मथुरा चले गए; दो दिन बाद वे बंबई के लिए रवाना हो गए।

'मैं बंबई में आप्टे से मिला और 14 तारीख को पुलिस ने मुझे गिरफ्तार कर लिया।'
बैज की गवाही का खंडन करते हुए उन्होंने कहा, 'बैज झूठा है, वह अविश्वसनीय है और मनगढ़ंत कहानियां गढ़ने की आदत रखता है; उसके बारे में जितना कम कहा जाए उतना ही अच्छा है।' उन्होंने कहा कि यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि उसके जैसा व्यक्ति हिंदुस्तान में पैदा हुआ। मामले में उसकी संलिप्तता साबित करने के लिए गवाही देने वाले पैंतालीस गवाहों का जिक्र करते हुए करकरे ने स्पष्ट रूप से कहा, 'उन सभी ने झूठ बोला है; उन्होंने उलझी हुई, अतिरंजित और अविश्वसनीय गवाहियां दी हैं।'
उन्होंने लिखावट विशेषज्ञ के विश्लेषण को खारिज करते हुए कहा, 'यह न्याय का घोर उल्लंघन है कि पहले पीड़ित के हस्ताक्षर और लिखावट के नमूने लिए जाएं और फिर उनका इस्तेमाल अदालत में उसे दोषी ठहराने के लिए किया जाए। यह न्याय के स्थापित सिद्धांतों के खिलाफ है।' गिरफ्तारी के समय उनसे बरामद स्थानीय ट्रेन टिकटों के बारे में उन्होंने एक गवाह के बयान का हवाला दिया, जिसने कहा था कि व्यस्त समय में, जब यात्रियों की भीड़ होती है, तो कुछ यात्री बिना टिकट दिए स्टेशन से बाहर चले जाते हैं। पहचान परेड के बारे में भी उन्होंने कहा, 'बंबई के मुख्य प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेट ब्राउन ने स्वीकार किया है कि वे पहली बार पहचान परेड आयोजित कर रहे थे। मुझे न तो हिंदी आती है और न ही अंग्रेजी। यह जानते हुए भी, श्री ब्राउन ने मेरी उपस्थिति में तैयार किए गए बयान का मराठी में अनुवाद करने की जहमत नहीं उठाई ताकि मैं समझ सकूं कि उसमें क्या लिखा है। परेड जांच प्रक्रियाओं का मजाक थी और इसे हमारे अपराध को साबित करने के लिए सबूत के तौर पर इस्तेमाल नहीं किया जाना चाहिए।'

उन्होंने आगे कहा कि अगर अभियोजन पक्ष ने 265 गवाहों का दावा किया था, तो अदालत में केवल 149 को ही क्यों पेश किया गया? बाकी 116 का क्या हुआ? अभियोजन पक्ष ने उन्हें अदालत में पेश करने का अपना इरादा क्यों बदल दिया? उन्होंने दावा किया कि कई गवाहों के बयानों में विसंगतियां थीं। उन्होंने कहा कि उनके खिलाफ गवाही संदिग्ध और अस्पष्ट थी और उन्हें संदेह का लाभ दिया जाना चाहिए; अदालत को उन्हें 'निर्दोष' घोषित करना चाहिए और उनकी तत्काल रिहाई का आदेश देना चाहिए।
न्यायाधीश करकरे से प्रश्न पूछते हैं
करकरे द्वारा मराठी में अपना बयान पढ़कर समाप्त करने के बाद अदालत ने उनसे कुछ सवाल पूछे।
प्रश्न: 'इस बात के प्रमाण मौजूद हैं कि आपने 29 मई 1947 को बैज को एक पत्र लिखा था, जिसमें आपने उनसे कुछ बम उपलब्ध कराने का अनुरोध किया था। जुलाई और दिसंबर 1947 के बीच उन्होंने आप्टे और आपको 3,000 रुपये मूल्य के विस्फोटक पदार्थ उपलब्ध कराए थे। इस दौरान उन्होंने आपको एक स्टेंगन भी बेची थी।'
उत्तर: 'मैंने बैज को ऐसा कोई पत्र नहीं लिखा है। मैं पत्र लिखने के लिए हमेशा अपने होटल के लेटरहेड का उपयोग करता हूँ। मैंने बैज से कोई हथियार, विस्फोटक या स्टेंगन नहीं खरीदा है। मैं बैज को जानता भी नहीं हूँ।'
प्रश्न: '9 जनवरी 1948 को आप, मदनलाल, ओमप्रकाश और चोपड़ा पुणे में बैज की दुकान पर कुछ विस्फोटक और बमों का निरीक्षण करने गए थे। बैज ने आपको कुछ हथियार दिखाए।'
उत्तर: 'यह सरासर झूठ है।'
प्रश्न: 'जनवरी के पहले सप्ताह के अंत में आप मदनलाल के साथ प्रोफेसर जे.सी. जैन से मिलने गए थे। मदनलाल ने जैन से आपका

परिचय "सेठ" के रूप में कराया। इस पर आपकी क्या प्रतिक्रिया है?'
उत्तर: 'यह झूठ है। 8 से 10 जनवरी तक बताई गई अवधि के दौरान मैं चेंबूर शरणार्थी शिविर में काम कर रहा था।'
प्रश्न: 15 जनवरी 1948 को आप नथुराम गोडसे, मदनलाल, आप्टे और बैज के साथ दीक्षित महाराज के घर गए थे। कमरे में एक थैला लाया गया और आपकी उपस्थिति में खोला गया। उसमें से हथियार, बम और विस्फोटक निकाले गए। बैज और दीक्षित महाराज ने दिखाया कि उनका उपयोग कैसे किया जाना है। फिर उस "सामान" को थैले में वापस पैक कर दिया गया और आप्टे ने आपको यह निर्देश देते हुए थैला सौंप दिया कि आप उसी शाम इसे लेकर दिल्ली के लिए रवाना हो जाएं। उत्तर: 'ये सब सरासर झूठ और असत्य हैं।'
प्रश्न: 15 जनवरी 1948 को दीक्षित महाराज के घर जाने से पहले, गोडसे, आप्टे, शंकर और बैज शिवाजी प्रेस के पास आपसे मिले। आपने, गोडसे और आप्टे ने जी.एम. जोशी से बात की। इसके बाद आप सभी दादर स्थित हिंदू महासभा भवन गए। आप, गोडसे, आप्टे, मदनलाल और बैज टैक्सी से दीक्षित महाराज के घर गए। मदनलाल का बिस्तर टैक्सी में ही रखा हुआ था। इस पर आपकी क्या राय है?
उत्तर: 'पूरी तरह झूठ।'
प्रश्न: '15 जनवरी को मदनलाल और आप रात में एक्सप्रेस ट्रेन से दिल्ली के लिए रवाना हुए और 17 जनवरी को दोपहर में दिल्ली पहुंचे। रास्ते में आपकी अमचेकर से बातचीत हुई। आपने उन्हें बताया कि आप हिंदू महासभा के कार्यकर्ता हैं और सभा के काम से दिल्ली जा रहे हैं। दिल्ली पहुंचने पर आपने मदनलाल का परिचय अमचेकर से कराया।'

उत्तर: 'यह सच है कि मदनलाल मुझे 15 जनवरी को बॉम्बे से दिल्ली लाए थे। मैं उनकी शादी में सहायता और भाग लेने के लिए उनके साथ दिल्ली गया था। बाद में, मदनलाल ने मुझे बताया कि दिल्ली में रहने वाले पंजाबी शरणार्थी गांधीजी से मिलने के लिए एक प्रतिनिधिमंडल भेजने की योजना बना रहे हैं, और उन्होंने मुझसे उनके साथ शामिल होने का अनुरोध किया। लेकिन चूंकि पुलिस मेरे पीछे पड़ी थी, इसलिए मैं खुले तौर पर प्रतिनिधिमंडल में शामिल नहीं होना चाहता था। मैंने उनसे कहा कि मैं केवल एक पर्यवेक्षक के रूप में रहूंगा। ट्रेन के दिल्ली स्टेशन पहुंचने तक मैंने अमचेकर को नहीं देखा। इसी बीच मदनलाल स्टेशन पर तांगा लेने की कोशिश कर रहे थे। मैंने अमचेकर से पूछा, "आप कहां जा रहे हैं?" मैंने उनसे कहा कि वे हमारे साथ एक होटल में रुक सकते हैं। मैं उन्हें तांगे की ओर ले गया; मदनलाल वहां खड़े थे और मैंने उन्हें बताया कि अमचेकर भी एक शरणार्थी हैं।'
करकरे ने 19 तारीख की देर शाम गोडसे और आप्टे के साथ हिंदू महासभा भवन जाने से इनकार किया। उन्होंने वहां शंकर, गोपाल गोडसे या बैज से मिलने, मरीना होटल में आप्टे और गोडसे से मिलने जाने और 20 तारीख की सुबह हिंदू महासभा भवन जाने से भी इनकार किया। करकरे ने 29 और 30 जनवरी को दिल्ली स्टेशन के विश्राम कक्ष में आप्टे और गोडसे के साथ होने से इनकार करते हुए कहा कि यह पूरी तरह से झूठ है और किसी की मनगढ़ंत कहानी है। उन्होंने दावा किया कि वे उस समय बॉम्बे में थे।
'15 जनवरी को दिल्ली रवाना होने से पहले मैं गोडसे को नहीं जानता था। मैं आप्टे को 1936 से जानता हूं। मैं मदनलाल से दिसंबर 1947 में मिला था। मैं शंकर किस्तय्या या बैज को नहीं

जानता था। मैंने सावरकर को सार्वजनिक सभाओं में देखा था, लेकिन मैं उनसे व्यक्तिगत रूप से कभी नहीं मिला।'
16 नवंबर 1948: करकरे ने स्वीकार किया कि सीआईडी मुख्यालय में लिए गए हस्तलेख के नमूने उनके थे, लेकिन उन्होंने इस बात से इनकार किया कि होटल फ्रंटियर, सी ग्रीन और एल्फिंस्टन एनेक्स के रजिस्टरों में दर्ज प्रविष्टियाँ उनकी थीं।
'31 जनवरी को मेरी मुलाकात आप्टे से वीटी स्टेशन पर हुई थी। नाथूराम गोडसे द्वारा गांधीजी की हत्या की खबर सुनकर वे स्तब्ध रह गए थे।' अंत में करकरे ने कहा, 'मुझे पुलिस ने केवल इसलिए गिरफ्तार कर लिया है और इस साजिश में फंसा दिया है क्योंकि मैं 17 जनवरी 1948 को दिल्ली में मौजूद था।'
मदनलाल का बयान
इसके बाद, गांधी हत्याकांड के चौथे आरोपी मदनलाल कश्मीरीलाल पाहवा ने अपना लिखित बयान पढ़ा। 'मैं स्वीकार करता हूं कि 20 जनवरी 1948 को, जब गांधीजी बिरला हाउस में अपनी शाम की प्रार्थना सभा कर रहे थे, मैंने गन कॉटन विस्फोटक से बना बम विस्फोट किया।'
मदनलाल ने अदालत में अपना इक्कीस पन्नों का बयान पढ़कर सुनाया। उन्होंने कहा कि उन्होंने यह सुनिश्चित करने के लिए हर संभव सावधानी बरती थी कि विस्फोट से गांधी जी को किसी भी तरह की चोट न पहुंचे। उन्होंने बताया कि बैज ने उन्हें हथगोला और गन कॉटन बम दिया था। मदनलाल ने कहा कि उन्हें लगा कि यह परेशान शरणार्थियों की गुहार सुनने का एक अच्छा तरीका है। 'मैं यह सुनिश्चित करना चाहता था कि इस कार्रवाई का सारा श्रेय मुझे मिले। मेरा मानना था कि मेरी यह कार्रवाई सत्याग्रह के समान थी।'

12 जनवरी को जब मैं दिल्ली में थी, तब मुझे पता चला कि गांधीजी दिल्ली में मुसलमानों के पुनर्वास के लिए अधिकारियों पर दबाव बनाने हेतु आमरण अनशन पर जा रहे हैं। यह खबर सुनकर मुझे बहुत दुख हुआ। 24 जनवरी की रात को मुझे पता चला कि गांधीजी के अनशन के दबाव के कारण भारत सरकार को पाकिस्तान को 55 करोड़ रुपये देने पड़े। इसी दौरान मेरे पिता ने मुझे पत्र लिखकर कहा कि मैं तुरंत जालंधर पहुँचकर अपनी शादी की योजना को अंतिम रूप दूँ। लेकिन घटते हालातों से विवश होकर मैंने पहले दिल्ली जाने और फिर जालंधर जाने का फैसला किया। नई दिल्ली में मुझे लगा कि महात्मा गांधी हमेशा मुसलमानों से घिरे रहते थे, इसलिए वे शरणार्थियों की पुकार नहीं सुन पा रहे थे। इसलिए मैंने ठान लिया कि किसी भी तरह से उन्हें शरणार्थियों की पुकार सुनाऊँगी और उनके अनशन के खिलाफ अपना विरोध जताऊँगी।
'मैं पाकिस्तान के मोंटगोमरी जिले की पाकपट्टन तहसील का निवासी था। कुछ समय तक मैंने वायरलेस ऑपरेटर के रूप में काम किया। मातृभूमि के विभाजन के बाद मुझे अपना जन्मस्थान छोड़ना पड़ा। किसी तरह मैं दिल्ली पहुँच गया।' इसके बाद उन्होंने फल बेचने के अपने शुरुआती व्यवसायों और बाद में प्रोफेसर जैन की किताबें बेचने के बारे में बताया।
गवाह बैज का यह बयान कि मुझे गन कॉटन बम फोड़ने के बाद गांधीजी पर हथगोले से हमला करना था, सरासर झूठ है। यह साबित हो चुका है कि गन कॉटन बम की बत्ती जलाने के बाद बम फटने तक डेढ़ मिनट का समय बीता था। अगर बैज के बयान पर यकीन किया जाए कि मुझे विस्फोट के बाद महात्मा गांधी पर हमला करना था, तो मेरे पास गांधीजी के पास पहुँचने और उन पर हमला करने के लिए पर्याप्त समय था। अदालत के लिए यह स्पष्ट है कि मैंने ऐसा कुछ नहीं किया। इससे ही

अभियोजन पक्ष का यह आरोप पूरी तरह से खारिज हो जाता है कि मैं महात्मा गांधी की हत्या की साजिश में शामिल था।
अपने बयान के अंत में उन्होंने कहा, 'महात्मा गांधी की हत्या की कोई साजिश नहीं थी। अगर ऐसी कोई साजिश थी भी, तो उसमें मेरी कोई संलिप्तता नहीं थी।'
मदनलाल से पूछताछ की गई
अपना बयान पढ़कर समाप्त करने के बाद न्यायाधीश ने मदनलाल से पूछताछ की।
प्रश्न: अक्टूबर 1947 में डॉ. जे.सी. जैन से आपके परिचय के संबंध में गवाही सुनी गई है। अंगद सिंह की उपस्थिति में यह निर्णय लिया गया था कि आप उनकी पुस्तकें पच्चीस प्रतिशत कमीशन पर बेचेंगे। आपको डॉ. जैन के पते पर भी पत्र प्राप्त हुए थे। इस प्रकार प्राप्त दो पत्र आपको आपके अहमदनगर के पते पर भेज दिए गए थे।
उत्तर: 'यह सही है।'
प्रश्न: 'जनवरी के पहले सप्ताह में, आप करकरे को डॉ. जैन से मिलवाने ले गए और उनका परिचय "सेठ" के रूप में कराया। दो-तीन दिन बाद आपकी डॉ. जैन से लंबी बातचीत हुई, जिसके कुछ अंशों में अंगद सिंह भी उपस्थित थे। जैन ने अपने बयान में आपके कारनामों, सावरकर से आपकी मुलाकात और महात्मा गांधी की हत्या की साजिश का जिक्र किया है। इस पर आपका क्या कहना है?'
उत्तर: 'ये सब झूठ और असत्य हैं।'
17 नवंबर 1948: मदनलाल से पूछताछ जारी रही।
प्रश्न: 'यह प्रमाणित हो चुका है कि दो दिन बाद आपकी मुलाकात डॉ. जे.सी. जैन से हुई थी। उन्होंने आपसे पूछा था कि क्या आपने उनकी सलाह पर विचार किया है। आपने उत्तर दिया था कि करकरे से परामर्श

किए बिना आप कुछ नहीं कर सकते और आप करकरे को पिता तुल्य मानते हैं। एक-दो दिन बाद आपकी फिर से डॉ. जैन से मुलाकात हुई और आपने उन्हें बताया कि आप दिल्ली जा रहे हैं।'
उत्तर: 'ये सरासर झूठ हैं।'
एक अन्य प्रश्न का उत्तर देते हुए मदनलाल ने इस आरोप का खंडन किया कि 9 जनवरी को वह करकरे और अन्य लोगों के साथ पुणे में बैज की दुकान पर गए थे, जहाँ शंकर ने उन्हें कुछ विस्फोटक दिखाए थे और कहा था, 'मैं इनका इस्तेमाल कर सकता हूँ।' उन्होंने कहा, 'मैं उस दिन पुणे में नहीं था, मैं वास्तव में हैदराबाद राज्य की सीमा पर स्थित खदरा गाँव में था। मैंने वहाँ कुछ कांग्रेस कार्यकर्ताओं से बात की थी और सुझाव दिया था कि हमें उन चार पुलों को उड़ा देना चाहिए जिनका इस्तेमाल रजाकार भारतीय संघ के सीमावर्ती गाँवों पर हमला करने के लिए कर रहे थे।'
प्रश्न: '15 जनवरी 1948 को जब आप दादर स्थित हिंदू महासभा भवन में थे, तब बैज, आप्टे, गोडसे, करकरे और शंकर आपसे मिले। शंकर को छोड़कर आप सभी आप्टे द्वारा लाई गई टैक्सी में बैठ गए। आपने अपना बिस्तर भी टैक्सी में ही रख दिया। फिर आप सभी दीक्षित महाराज के घर गए। आपने अपना बिस्तर हॉल में रखा और फिर आप सभी घर के भीतरी कमरे में चले गए। क्या यह सही है?'
उत्तर: 'ये सब झूठ है। दरअसल, मैं नथुराम गोडसे, आप्टे और शंकर से पहली बार 14 फरवरी 1948 के आसपास बॉम्बे स्थित सीआईडी कार्यालय में मिला था। मैं उनसे वहां पुलिस के साथ मिला था।'
प्रश्न: 'दीक्षित महाराज के घर पर एक थैला लाया गया, जिसमें दो गन कॉटन विस्फोटक, पाँच हथगोले और कुछ अन्य सामान थे। दीक्षित महाराज और बैज ने प्रदर्शन किया। फिर बैज ने वह थैला आप्टे को दिया और आप्टे ने उसे करकरे को सौंप दिया। करकरे ने वह थैला

आपको दिया और उसे अपने बिस्तर के अंदर बांधने को कहा। फिर करकरे और आप कमरे से बाहर चले गए।'
उत्तर: 'ये सब झूठ है। मैं 1947 में डॉ. जैन के साथ दीक्षित महाराज के घर गया था। उन्होंने मुझे शरणार्थियों के लिए कुछ कपड़े दिए थे। मैं नवंबर 1947 में दो-तीन बार फिर उनके पास गया था। मैंने जनवरी 1948 में दीक्षित महाराज से मुलाकात नहीं की थी।'
एक सवाल के जवाब में आरोपी ने कहा, 'मैं 17 जनवरी को करकरे के साथ दिल्ली पहुंचा था। मुझे याद नहीं कि शांताराम ए. आमचेकर हमारे डिब्बे में सफर कर रहे थे या नहीं। मैंने दिल्ली स्टेशन पर तांगा स्टैंड पर करकरे के साथ एक आदमी को देखा था; करकरे ने मेरा उससे परिचय कराया था।'
प्रश्न: 'करकरे, अमचेकर और आप तांगे से यात्रा करते हुए पहले हिंदू महासभा भवन गए, फिर बिरला मंदिर गए और अंत में शरीफ हिंदू होटल पहुंचे।'
उत्तर: 'ये सभी आरोप सरासर झूठ हैं। हम सीधे शरीफ होटल गए थे। 16 जनवरी को मेरे एक रिश्तेदार मुझसे होटल में मिलने आए थे। मुझे इस बात की जानकारी नहीं है कि अमचेकर को उनके द्वारा ट्रांसफर ब्यूरो ले जाया गया था। मैंने गोपाल गोडसे को पहली बार बॉम्बे स्थित सीआईडी कार्यालय में देखा था। मैंने अमचेकर को बताया था कि मैं अपनी आगामी सगाई के सिलसिले में अपने रिश्तेदार के घर रुकने जा रहा हूँ।' आरोपी ने 17 से 19 जनवरी तक शरीफ होटल में रुकने और होटल के रजिस्टरों में अंग्रेजी में लिखने की बात स्वीकार की। उसने कहा, 'बाद में मैं अपनी होने वाली दुल्हन के परिवार के साथ रुका था।'

प्रश्न: 20 जनवरी को आप गोपाल गोडसे, नाथूराम गोडसे, आप्टे, शंकर और बैज के साथ मरीना होटल के कमरा नंबर 40 में मौजूद थे। गोपाल गोडसे ने एक रिवॉल्वर की मरम्मत की। आप, आप्टे और करकरे बाथरूम में गए और इस्तेमाल के लिए गन कॉटन विस्फोटक तैयार किए। इस समय नाथूराम गोडसे ने कहा, "बैज, यह हमारा आखिरी प्रयास होगा, काम पूरा होना चाहिए।" इसके बाद हथियार, बम और विस्फोटक बांटे गए। यह भी तय किया गया कि नाथूराम गोडसे और आप्टे दूसरों को संकेत देंगे और आप गन कॉटन बम की बत्ती जला देंगे। बम विस्फोट के परिणामस्वरूप मची अफरा-तफरी और भगदड़ का फायदा उठाकर, बाकी लोग गांधीजी पर हथगोले फेंकेंगे और उन पर गोलियां चलाएंगे।
उत्तर: 'यह एक शानदार मनगढ़ंत कहानी है, झूठ का पुलिंदा है। अपना अनशन तोड़ने के दो दिन बाद, 20 जनवरी को, मुझे पता चला कि गांधीजी उस शाम प्रार्थना सभा में शामिल होंगे। मैं शरणार्थी शिविर में बैज से मिला; उसने मुझे बताया कि वह शरणार्थियों को हथियार और विस्फोटक बेचने के लिए दिल्ली आया है। उसने मुझे नमूने के तौर पर एक गन कॉटन स्लैब और एक हैंड ग्रेनेड दिया। मैंने सोचा कि मुझे गांधीजी से सुरक्षित दूरी पर गन कॉटन स्लैब को विस्फोट करना चाहिए, ताकि उन्हें कोई चोट न लगे और इस तरह मैं गिरफ्तार हो जाऊं।'
आरोपी ने दावा किया कि वह बिरला हाउस मरीना होटल से नहीं बल्कि सब्जी मंडी इलाके से आया था। 'मेरे पास एक गन कॉटन बम और एक हैंड ग्रेनेड था। जब मुझे गिरफ्तार किया गया तो मैंने वह कोट नहीं पहना था जो प्रामाणिक सबूत का हिस्सा है। उस समय कोई भी आरोपी मेरे साथ नहीं था।'

प्रश्न: 'गिरफ्तारी के बाद आपको बिरला हाउस के बाहर पुलिस शिविर में ले जाया गया। आपकी तलाशी ली गई और आपके पहने हुए कोट की अंदरूनी जेब से एक हथगोला बरामद हुआ। क्या यह सही है?'
उत्तर: 'यह सही है। दरअसल, मैंने पुलिस को सूचित किया था कि मेरे पास एक अप्रयुक्त हैंड ग्रेनेड है। गिरफ्तारी के बाद मैंने पुलिस से मुझे महात्मा गांधी से मिलवाने के लिए कहा। लेकिन वे मुझे पार्लियामेंट स्ट्रीट पुलिस स्टेशन ले गए। पुलिस ने वहां मुझसे पूछताछ की और बेरहमी से मेरी पिटाई की। मैंने पुलिस को बताया कि मुझे विस्फोटक बैज से मिले थे, जो शरणार्थी शिविर में रह रहा था। उसके साथी मरीना होटल में ठहरे हुए थे। पुलिस मुझे वहां ले गई, लेकिन वे लोग वहां से गायब हो चुके थे। फिर मुझे वापस पार्लियामेंट स्ट्रीट पुलिस स्टेशन लाया गया। मैं 15 जनवरी 1948 को दिल्ली के लिए रवाना हुआ। तब मैं केवल करकरे को जानता था, मैं नाथूराम गोडसे, आप्टे, बैज, शंकर किस्तय्या और सावरकर में से किसी को नहीं जानता था।'
'पहचान परेड के दौरान मेरी पहचान करने वाले गवाहों के खिलाफ मैं कुछ नहीं कहना चाहता। लेकिन मैं यह जरूर कहूंगा कि मुझे बॉम्बे स्थित सीआईडी कार्यालय की दूसरी मंजिल पर रखा गया था, और वह जगह आम जनता के लिए खुली थी। इसलिए कई लोग आए और मुझे देखा।'
आगे पूछताछ किए जाने पर मदनलाल ने कहा, 'मुझे 20 फरवरी से 3 मार्च 1948 तक सिविल लाइंस पुलिस स्टेशन में रखा गया था। इस दौरान एक इंस्पेक्टर अक्सर कागजात लेकर मुझसे मिलने आता था और आरोप लगाता था कि मैंने जालंधर और अमृतसर के संघियों, आरएसएस के सदस्यों के साथ मिलकर महात्मा गांधी की हत्या की साजिश रची थी।' 4 फरवरी 1947 (वास्तव में 1948) को मैंने बॉम्बे में सीआईडी पुलिस के दफ्तर में बैज को देखा। मैंने तुरंत पुलिस को बताया कि

इस व्यक्ति ने मुझे दिल्ली में गन कॉटन एक्सप्लोसिव और हैंड ग्रेनेड दिए थे। पुलिस ने मुझे बताया कि मैं नाथूराम गोडसे, आप्टे और सावरकर के साथ हत्या की साजिश में शामिल था, लेकिन मैंने इस आरोप से इनकार किया। तब पुलिसकर्मियों ने मुझे धमकी दी, "अगर तुम साजिश के अस्तित्व और उसमें अपनी संलिप्तता को स्वीकार नहीं करोगे, तो हम तुम्हारा मुंह गोमांस से भर देंगे।" यह बहुत भयानक था; इससे मेरा धर्म कलंकित हो जाता और मुझे हमेशा के लिए नरक में जाना पड़ता। मैं टूट गया और मजिस्ट्रेट की उपस्थिति में कबूलनामा करने के लिए सहमत हो गया।
'मैं अभियोजन पक्ष के आरोपों के खिलाफ या अपनी निर्दोषता के बचाव में और कुछ नहीं कहना चाहता।'
18 नवंबर 1948: न्यायाधीश आत्मचरण ने साजिश में उसकी संलिप्तता का पता लगाने के लिए पांचवें आरोपी शंकर किस्तय्या से पूछताछ शुरू की।
शंकर अशिक्षित था, इसलिए पहले चार आरोपियों के विपरीत, उसने अभियोजन पक्ष द्वारा लगाए गए आरोपों को स्वीकार या खंडन करने या गवाहों की गवाही को स्वीकार या खंडन करने के लिए कोई लिखित बयान तैयार नहीं किया था। वह केवल तेलुगु और टूटी-फूटी मराठी बोल सकता था, इसलिए अनुवादक की सहायता ली गई।
शंकर ने अदालत को बताया, 'मेरी उम्र लगभग बीस वर्ष है। मैं एक घरेलू नौकर हूं और शोलापुर का निवासी हूं।'
बनर्जी की याचिका पर प्रतिक्रिया देते हुए, पूछताछ शुरू होने से पहले ही अदालत ने गवाह बैज, शंकर के नियोक्ता और जेल अधिकारियों को अदालत कक्ष से बाहर निकालने का आदेश दिया। शंकर ने बताया, 'मुझे 1946 में बैज ने काम पर रखा था और तब से मैं उनके नौकर के रूप में काम करता आ रहा हूँ। शुरू में मैं कई बार

बैज के घर से बॉम्बे तक हथियार और विस्फोटक ले जाया करता था। मैं उनके कपड़े भी धोता था। इसके अलावा, मैं उनकी हथियार की दुकान की देखभाल करता था और उनके छोटे-मोटे काम करता था। जुलाई से दिसंबर 1947 तक, बैज ने आप्टे और करकरे को बड़ी मात्रा में हथियार, बम और विस्फोटक की आपूर्ति की। वे कई बार बैज के घर से सामान लेने आते थे। 9 जनवरी 1948 को रात लगभग 8:30 बजे, करकरे, मदनलाल और दो अन्य लोग बैज की दुकान पर आए। मैंने दो थैले निकालकर बैज को दिए और फिर मैं दूसरे कमरे में चला गया। उसके बाद क्या हुआ, मुझे नहीं पता।'
हथियार, बम और विस्फोटक पिछवाड़े में ईंटों और पत्थरों के ढेर के नीचे छिपाकर रखे गए थे। मैंने बैज को जो दो थैले दिए थे, उनमें से एक जूट का और दूसरा खाकी कपड़े का था। दोनों थैले आपस में बंधे हुए थे। मेरी मौजूदगी में ये थैले कभी नहीं खोले गए। बैज ने मुझे आदेश दिया था कि जब भी वह मांगे, मैं उन्हें निकाल कर दे दूं। 13 जनवरी को बैज ने मुझे कुछ हथियार, बम और विस्फोटक एक थैले में पैक करने को कहा। अगले दिन बैज और मैं बॉम्बे के लिए रवाना हुए; हम उसी दिन शाम 7:15 बजे दादर पहुंचे। हम दोनों ट्रेन के अलग-अलग डिब्बों में बैठे थे। उसने मुझे दादर में उतरकर स्टेशन के बाहर मिलने का आदेश दिया था। जब मैंने उससे पूछा कि हम दादर क्यों जा रहे हैं, तो उसने बताया कि हम आप्टे और नाथूराम गोडसे को हथियार, बम और विस्फोटक पहुंचाने के लिए बॉम्बे जा रहे हैं।
बैज और मैं दादर स्थित हिंदू महासभा कार्यालय गए। हम वहां लगभग पंद्रह मिनट तक इंतजार करते रहे। जब हम सीढ़ियों से नीचे उतरने लगे, तो हमने आप्टे को देखा। उसी समय मैंने देखा कि नाथूराम लगभग दस कदम दूर खड़े थे। उन्होंने मुझे कार्यालय में रुकने के

लिए कहा और वे सब चले गए। 10:30 बजे वे सब एक कार में वापस आए और हम दीक्षित महाराज के घर गए। बैज ने मुझे बैग बाहर लाने का आदेश दिया। वे तीनों घर के अंदर चले गए। जब वे बाहर आए तो उनके पास बैग नहीं था। बैज और मैं हिंदू महासभा कार्यालय लौट आए।
15 जनवरी को नथुराम गोडसे, आप्टे और बैज शिवाजी प्रिंटिंग प्रेस में करकरे से मिलने गए। मैं भी उनके साथ गया था। बैज और मैं उसी रात पुणे के लिए रवाना हो गए। 16 तारीख को नथुराम गोडसे बैज के घर दो बार आए, उन्हें ढूंढते हुए, लेकिन दोनों बार बैज घर पर नहीं थे। जब बैज घर लौटे तो मैंने उन्हें नथुराम के आने के बारे में बताया। 17 जनवरी को सुबह 2:30 बजे बैज और मैं बॉम्बे के लिए रवाना हुए। बैज ने मुझे बॉम्बे ले जाने के लिए एक पिस्तौल और चार गोलियां दीं। उस दिन बैज, आप्टे, नथुराम गोडसे और मैं एक टैक्सी में शिवाजी पार्क गए। मुझे नहीं पता था कि वह किसका घर था। (अभियोजन पक्ष के अनुसार यह सावरकर का घर था।) मुझे टैक्सी में बैठा छोड़कर बाकी लोग उतर गए। मुझे टैक्सी का नंबर याद नहीं है, लेकिन जिस ड्राइवर ने इस अदालत में गवाही दी, वही उस दिन हमें घुमाने ले गया था।
'मुझे नहीं पता कि बाहर आने के बाद उन्होंने आपस में क्या बातें कीं। वे मराठी और अंग्रेजी में बात करते थे। मैं 18 जनवरी को बैज के साथ बोरीबंदर स्टेशन पहुंचा। उन्होंने दो टिकट खरीदे और हम अगले दिन शाम 9:30 बजे दिल्ली पहुंचे और हिंदू महासभा भवन गए। हमें रहने के लिए एक कमरा दिखाया गया। कमरे में एक बत्ती जल रही थी और उसमें तीन लोग थे। उनमें से एक की दाढ़ी बैज जैसी थी; वह सो रहा था। बाकी दो मदनलाल और गोपाल गोडसे थे। दोनों अपने- अपने बिस्तरों पर बैठे बातें कर रहे थे। बैज ने मेरा उनसे परिचय कराया था। लगभग बीस मिनट बाद नाथूराम गोडसे, आप्टे और करकरे

वहां आए। वे बैज को बाहर ले गए और उनसे बात की। उन्होंने क्या बातें कीं, मुझे नहीं पता।'
अगले दिन, सुबह-सुबह बैज ने मुझसे अपने कपड़े धोने को कहा। आप्टे और करकरे वापस आ गए। करकरे ने मुझे बताया कि उन्होंने मदनलाल को लकड़ी खरीदने के लिए कुछ पैसे दिए हैं। फिर करकरे और आप्टे चले गए, लेकिन थोड़ी देर बाद लौट आए। बैज, आप्टे और मैं बिरला हाउस चले गए, जबकि करकरे वहीं रुक गए।
'बिरला हाउस के गेट पर एक पुलिसकर्मी ने हमें रोक लिया। उसने पूछा कि हम किससे मिलना चाहते हैं। आप्टे ने एक पर्ची पर कुछ लिखा और उसे दे दिया। उस समय दो लोग बिरला हाउस के अंदर जा रहे थे। आप्टे ने उनमें से एक की ओर इशारा करते हुए बैज से कुछ कहा, लेकिन मुझे समझ नहीं आया। हम बिरला हाउस के पीछे गए और प्रार्थना स्थल में प्रवेश किया। आप्टे ने अपनी जेब से एक डोरी निकाली, कुछ चीजों को नापा और बैज से बात की। मैंने उससे पूछा कि वे किस बारे में बात कर रहे हैं, लेकिन बैज ने कहा कि इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। फिर हम वापस हिंदू महासभा भवन चले गए।'
इसके बाद शंकर ने हिंदू महासभा भवन के पीछे जंगल में घटी घटनाओं का वर्णन किया। 'भवन में वापस आकर, करकरे ने मदनलाल से अपने बिस्तर से थैला हटाने को कहा। मदनलाल ने थैला निकाला और करकरे के साथ चले गए। गोपाल ने एक सफेद थैला निकाला; आप्टे, गोडसे, बैज और मैं मरीना होटल गए, उस समय गोपाल सफेद थैला लिए हुए था।'
19 नवंबर 1948: किस्तय्या से पूछताछ जारी रही। 'यह सही है कि गोपाल गोडसे, आप्टे, बैज और मैं हिंदू महासभा भवन से मरीना होटल गए थे। गोपाल गोडसे ने वहां अपनी रिवॉल्वर ठीक करवाई। उन्होंने आपस में थोड़ी देर बात की। करकरे ने अपनी मूंछें और भौहें रंगीं और माथे पर बड़ा सा तिलक लगाया।' किस्तय्या ने आगे बताया कि वे

बिरला हाउस कैसे गए। उन्होंने मदनलाल को गिरफ्तार होते देखा और फिर बैज और वह दोनों चुपके से निकलकर वापस हिंदू महासभा भवन चले गए। उन्होंने आगे बताया, 'बैज उस समय बहुत चिंतित लग रहा था। उसके आदेश पर मैंने भवन के पीछे पत्थरों और ईंटों के नीचे हथगोले दबा दिए और बाकी सामान ठिकाने लगा दिया, लेकिन बैग अपने पास रख लिया। लौटते समय मैंने आप्टे और नाथूराम गोडसे को जाते देखा और मैंने बैज से पूछा कि क्या बात है। वह बहुत गुस्से में था और उसने मुझे ज़ोर से थप्पड़ मारा। हम थाने गए जहां बैज ने बॉम्बे के लिए दो टिकट खरीदे।' वहाँ से मैं शोलापुर गया और पुणे लौटने पर मुझे पता चला कि बैज गिरफ्तार हो गया है। मैं बंबई में दीक्षित महाराज के घर गया और उनके घरेलू नौकर से मिला। वह मुझे बंबई सीआईडी के कार्यालय ले गया। वहाँ नागरवाला ने मुझे ज़ोरदार थप्पड़ मारा और पूछा, "तुमने क्या किया है?" मैंने उसे सब कुछ बता दिया।
'मैं पहचान परेड के बारे में कुछ नहीं कहना चाहता। मैं बैज का नौकर था। इसीलिए मैं उनके साथ दिल्ली गया था। मुझे साजिश के बारे में कुछ नहीं पता। मैं अभियोजन पक्ष के दावों का खंडन करने या अपने बयान का समर्थन करने के लिए कोई गवाह पेश नहीं करना चाहता।'
अपने बयान में छठे आरोपी गोपाल विनायक गोडसे ने इस बात से स्पष्ट शब्दों में इनकार किया कि गांधी की हत्या किसी साजिश या षड्यंत्र का परिणाम थी।
उन्होंने अपना पंद्रह पन्नों का बयान पढ़कर सुनाया। '1 दिसंबर 1947 से 30 जनवरी 1948 के बीच मैंने महात्मा गांधी की हत्या जैसे किसी भी अवैध कृत्य को अंजाम देने के लिए किसी भी स्थान या समय पर कोई साजिश या षड्यंत्र नहीं रचा।' उन्होंने इस बात से

इनकार किया कि 10 से 20 जनवरी 1948 के बीच किसी साजिश या षड्यंत्र के तहत उन्होंने दिल्ली में किसी भी प्रकार का अवैध या अन्य हथियार, बम या विस्फोटक भेजने की व्यवस्था की थी और उनके पास कोई विस्फोटक सामग्री या कोई घातक हथियार नहीं था। उन्होंने 17 से 25 जनवरी के बीच पुणे, मुंबई या दिल्ली में होने से भी इनकार किया। गोपाल ने आगे कहा, 'अभियोजन पक्ष के दावों के विपरीत, मुझे 5 फरवरी को उक्सान से गिरफ्तार नहीं किया गया था। मेरी सुरक्षा के बहाने पुलिस मुझे मुंबई ले गई और कहा कि मुझे महात्मा गांधी की हत्या में संलिप्तता के आरोप में गिरफ्तार किया जा रहा है।' त्रासदी के समय किसी अन्य स्थान पर होने के अपने दावे के समर्थन में उन्होंने कहा कि उन्होंने अपने भाई नाथूराम की किसी भी राजनीतिक गतिविधि में कभी भाग नहीं लिया और न ही गांधीजी सहित किसी भी धार्मिक समूह या व्यक्ति के प्रति कोई दुर्भावना या घृणा रखी। उन्होंने कहा कि वे सरकार के एक समर्पित सेवक थे। 'बम विस्फोट के दिन मैं अपने पैतृक गांव उक्सान में था और गांधीजी की हत्या के दिन मैं किरकी स्थित सैन्य आयुध डिपो में अपने कार्यालय में काम कर रहा था।' उन्होंने लिखावट विशेषज्ञ गजजर की गवाही को खारिज करते हुए कहा कि जिन गवाहों ने उनकी पहचान की थी, उन्हें पहचान परेड से पहले उन्हें 'अच्छी तरह से देखने' की अनुमति दी गई थी। 'पुलिस ने बॉम्बे में मेरी तस्वीरें ली थीं। मुकदमे के पहले दिन प्रेस और कैमरामैन ने मेरी तस्वीरें ली थीं। अखबारों में छपी तस्वीरों और सिनेमाघरों में दिखाई गई मुकदमे की फिल्म के कारण सभी ने मुझे पहचान लिया था।'
अंत में, मैं पूरी ईमानदारी से यह कहना चाहता हूँ कि मुझ पर लगाए गए सभी आरोपों से मैं निर्दोष हूँ। मैं इस न्यायालय से विनती

करता हूँ कि वह मेरे साथ न्याय करे और मेरी प्रतिष्ठा को बेदाग रखते हुए और मेरे सम्मान को बहाल करते हुए मुझे रिहा करने का आदेश दे।
पूछताछ किए जाने पर गोपाल ने इस बात से इनकार किया कि उसे नाथूराम द्वारा अपनी पत्नी को बीमा पॉलिसी में नामांकित करने की कोई जानकारी थी।
प्रश्न: 'आप 19 जनवरी को शरीफ होटल [दिल्ली] गए थे। आपने वहां पता लगाया कि मदनलाल किस कमरे में ठहरे हुए हैं। आप मदनलाल और करकरे के साथ शाम तक वहीं रुके रहे।'
उत्तर: 'यह सही नहीं है। साथ ही, मैं 19 जनवरी की रात को हिंदू महासभा भवन में नहीं रुका था। मैंने मदनलाल, शंकर और बैज को पहली बार बॉम्बे स्थित सीआईडी कार्यालय में देखा था।'
इसके बाद उनसे मरीना होटल जाने, रिवॉल्वर की मरम्मत कराने, टैक्सी से बिरला हाउस जाने और फ्रंटियर हिंदू होटल के रजिस्टर में अपने हाथ से प्रविष्टियाँ करने से संबंधित प्रश्न पूछे गए। गोपाल ने सभी आरोपों से इनकार किया। उन्होंने कहा, 'मैं 24 से 26 जनवरी के बीच नाथूराम से नहीं मिला। न ही मैंने आप्टे और करकरे को बॉम्बे के एल्फिंस्टन एनेक्स होटल में देखा।'
गोपाल ने स्वीकार किया कि लिखावट के नमूने उसी के थे, लेकिन पुलिस के दबाव में आकर उसे एक विशेष तरीके से लिखने के लिए मजबूर किया गया था। 'पुलिस ने मुझसे यह कबूल करवाने की कोशिश की कि मैंने नाथूराम को पिस्तौल मुहैया कराई थी। जब मैंने इनकार किया, तो मुझे बेरहमी से पीटा गया और तीन दिनों तक अमानवीय यातनाएं दी गईं।'
'मैं अभियोजन पक्ष द्वारा लगाए गए आरोपों का खंडन करने या अपने बयान के समर्थन में कोई भी सबूत पेश नहीं करना चाहता।'

20 नवंबर 1948: 'मैं पूर्ण सत्यनिष्ठा और दिल से कहता हूँ कि मुझ पर अभियोजन पक्ष द्वारा लगाए गए सभी आरोपों से मैं निर्दोष हूँ। मैं किसी भी प्रकार की साजिश या षड्यंत्र में शामिल नहीं हूँ; न ही मुझे ऐसी किसी अवैध कार्रवाई या साजिश की पूर्व जानकारी थी। मेरे खिलाफ दायर आरोपों में जो आरोप लगाए गए हैं, मैंने वह कुछ भी नहीं किया है; मेरे लिए किसी भी प्रकार की साजिश में भागीदार या संरक्षक के रूप में शामिल होने का कोई कारण नहीं था।' ये गांधी हत्याकांड के सातवें आरोपी विनायक दामोदर सावरकर, जिन्हें 'स्वतंत्रवीर' भी कहा जाता है, के बयान की प्रारंभिक पंक्तियाँ थीं।
अदालत में अपना सत्तावन पन्नों का बयान पढ़ते हुए, सावरकर ने अपने जीवन का विस्तृत विवरण दिया, ताकि वे अपने विचार को पूर्ण विश्वास के साथ व्यक्त कर सकें। फिर उन्होंने हिंदू महासभा के बारे में बात शुरू की। उन्होंने कहा, 'दस साल पहले मैंने एक दो मंजिला मकान बनवाया और उसका नाम सावरकर सदन रखा। मेरे मकान के भूतल पर स्थित एक हॉल हिंदू संगठन को उसके कार्यालय के लिए स्थायी रूप से दे दिया गया है। पिछले कुछ वर्षों से ए.एस. भिडे हॉल के दाहिनी ओर किराएदार के रूप में रहते हैं और बाईं ओर मेरे सचिव जे.बी. दामले अपने परिवार के साथ रहते हैं। मैं अपने परिवार के साथ पहली मंजिल पर रहता हूँ। मैं पहली बार 1937 में हिंदू महासभा का अध्यक्ष चुना गया और अगले छह वर्षों तक इस पद पर रहा। अंत में, मैंने खराब स्वास्थ्य के कारण पद से इस्तीफा दे दिया। सभा का उद्देश्य हिंदुओं को संगठित और एकजुट करना तथा उन्हें योद्धा बनाना है।'
भारत में हिंदू बहुसंख्यक हैं। मेरी पार्टी का मत था कि भारत एक धर्मनिरपेक्ष लोकतंत्र बने, जिसमें सभी नागरिकों को धर्म, जाति

या लिंग के भेदभाव के बिना समान अधिकार और विशेषाधिकार प्राप्त हों। लेकिन मेरी पार्टी हिंदुओं को उनके अधिकारों और विशेषाधिकारों से वंचित करने और मुसलमानों के प्रति पक्षपात दिखाने की प्रथा के खिलाफ थी। मुझ पर लगाए गए आरोप दो अस्पष्ट वाक्यों पर आधारित हैं। मैंने गोडसे और आप्टे के अखबार अग्रानी के लिए लिखने से इनकार कर दिया था। मैंने एक बार उनकी आर्थिक मदद की थी, लेकिन बाद में आगे कोई सहायता देने से मना कर दिया था। कई मौकों पर मैंने गोडसे को अपनी यात्राओं में साथ आने से मना कर दिया था। संभव है कि आप्टे ने बैज से झूठ बोला हो जब उन्होंने उसे बताया कि "सावरकर ने नेहरू, सुहरावर्दी और गांधी की हत्या का आदेश दिया था"। हो सकता है कि वह हिंदू संगठनों की नजरों में मुझे बदनाम करने की कोशिश कर रहा हो। अभियोजन पक्ष ने आप्टे को दुर्भावनापूर्ण इरादों वाला व्यक्ति साबित कर दिया है। फर्जी पहचान अपनाने, फर्जी नामों से यात्रा करने, होटलों में गलत पते देने और अवैध रूप से प्रतिबंधित हथियार बेचने में माहिर आप्टे को गिरगिट जैसी क्षमताओं वाले व्यक्ति के रूप में चित्रित किया गया है। आप्टे इस बात से इनकार करते हैं कि उन्होंने बैज से ऐसी कोई बात कही थी। अगर बैज को सावरकर पर इतना भरोसा था और वह उनके प्रति इतने समर्पित थे, तो उन्होंने अपनी जान बचाने के लिए दिल्ली से क्यों भाग गए? हो सकता है कि पुलिस किसी बड़े नाम को फंसाकर वाहवाही बटोरना चाहती हो?
'मैंने पिछले पचास वर्षों में अपनी मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए लड़े गए कई युद्धों में एक सैनिक के रूप में भूमिका निभाई है। मैंने अपनी पीढ़ी के किसी भी स्वतंत्रता सेनानी से कम बलिदान नहीं दिया है। गांधीजी ने अपनी पुस्तक 'यंग इंडिया' में मेरी बहुत प्रशंसा की थी।'

सावरकर ने आगे कहा, 'मैं नाथूराम गोडसे, नारायण आप्टे, डॉ. परचुरे, करकरे और बैज को केवल इसलिए जानता हूँ क्योंकि वे हिंदू महासभा के कार्यकर्ता हैं। नाथूराम से मेरा परिचय विशेष रूप से कराया गया था। आप्टे का परिचय मुझे एक पत्र के माध्यम से कराया गया था, जिसमें बताया गया था कि वे अहमदनगर में सभा के कार्यकर्ता हैं। डॉ. परचुरे ग्वालियर में हिंदू महासभा के नेता के रूप में मेरे संपर्क में आए। करकरे हिंदू महासभा के टिकट पर अहमदनगर नगरपालिका के अध्यक्ष चुने गए थे। बैज ने मुझे एक पत्र लिखकर अपना परिचय हिंदू सभा के सदस्य के रूप में दिया था और कहा था कि वे हथियार बेचते हैं जिसके लिए किसी लाइसेंस की आवश्यकता नहीं होती है।'
'अगर आप्टे, गोडसे और मेरे बीच हुए पत्राचार का विश्लेषण किया जाए तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि इसमें कोई भी अवैध सामग्री नहीं है और पत्राचार के आधार पर हमारा संबंध पूरी तरह से वैध है। आप्टे और गोडसे एक मराठी दैनिक शुरू करने के लिए मुझसे निवेश और नैतिक समर्थन चाहते थे। मैंने उन्हें 15,000 रुपये दिए। यह धनराशि गोडसे-आप्टे का प्रकाशन होने के कारण नहीं बल्कि हिंदू महासभा का प्रकाशन होने के कारण दी गई थी। गोडसे और आप्टे को प्रकाशन के दर्शन और संपादकीय नीतियों के बारे में निर्णय लेने का पूर्ण अधिकार था। मेरा उन पर या उनके प्रकाशन पर कोई प्रभाव नहीं था।'
'मेरी यात्राओं के दौरान गोडसे प्रेस प्रतिनिधि के रूप में मेरे साथ रहते थे। यह संबंध केवल हिंदू महासभा के पदाधिकारी होने के कारण था। इस अनौपचारिक और विशुद्ध रूप से औपचारिक संपर्क को हास्यास्पद हद तक खींचकर महात्मा गांधी की हत्या में मुझे साजिशकर्ता साबित करने का पर्याप्त सबूत मानना सरासर

बेतुका होगा। मैंने गोपाल गोडसे, मदनलाल और शंकर के नाम कभी नहीं सुने और मैं उन्हें बिल्कुल नहीं जानता।'
बैज ने अपनी गवाही में कहा है कि मैंने 1946 में सावरकर सदन में एक अनौपचारिक बैठक के दौरान भाषण दिया था, जिसमें मैंने कहा था, "कांग्रेस द्वारा अपनाई गई नीतियां हिंदुओं के कल्याण के लिए हानिकारक हैं। मुसलमानों का आर्थिक बहिष्कार आयोजित किया जाना चाहिए। यदि मुसलमान हिंदुओं पर हमला करते हैं, तो हिंदुओं को बदला लेना चाहिए और ऐसे हमलों से बचाव के लिए खुद को तैयार करना चाहिए।" यह उनकी कल्पना की उपज है, झूठ का पुलिंदा है। ऐसी कोई बैठक कभी नहीं हुई। अगर हम कुछ समय के लिए यह मान भी लें कि ऐसी कोई बैठक हुई थी और मैंने बैज की गवाही में कही गई सारी बातें कही थीं, तो भी इससे मेरा हत्या की साजिश से कोई संबंध साबित नहीं होता।
बैज ने कहा है कि वह आप्टे और गोडसे के साथ सावरकर सदन गया था। वह बाहर इंतजार करता रहा और बाकी दोनों अंदर चले गए। इसका यह मतलब कैसे निकाला जा सकता है कि अंदर जाने के बाद वे बाहर आने से पहले मुझसे मिले थे? आप्टे और गोडसे अपने दोस्तों और सहकर्मियों से मिलने अंदर गए होंगे। इस घटना की पुष्टि करने वाला कोई विश्वसनीय गवाह नहीं है।
बैज का दावा है कि आप्टे ने उन्हें दिल्ली चलने के लिए कहा था। आप्टे ने उनसे कहा कि तात्याराव ने ऐलान किया है कि महात्मा गांधी, पंडित नेहरू और सुहरावर्दी को खत्म करना है और यह काम उन्हें सौंपा गया है। यह बयान सरासर झूठा है। आप्टे ने हिंदू महासभा के स्वयंसेवकों को अपने नापाक कामों में शामिल करने के लिए यह घिनौना झूठ गढ़ा होगा। इस घिनौने झूठ को विश्वसनीयता

देने के लिए मेरे नाम का इस्तेमाल किया गया होगा। आप्टे और गोडसे ने मेरे ऊपर लगे आरोपों का पुरजोर खंडन किया है।
बैज का दावा है कि मैंने कहा था, "यशस्वी हौन या", यानी "सफलता प्राप्त करने के बाद लौट आना"। इस बारे में मुझे बस इतना ही कहना है कि आप्टे और गोडसे 17 जनवरी 1948 को या उसके आसपास किसी भी दिन मुझसे नहीं मिले थे। अगर यह मान भी लिया जाए कि वे सावरकर सदन आए होंगे, तो भी ऐसा कोई विश्वसनीय गवाह नहीं है जो यह साबित कर सके कि वे मुझसे मिले और हत्या की साजिश के बारे में कोई चर्चा की। बैज की गवाही का अधिकांश हिस्सा मनगढ़ंत और झूठा है और बाकी का हिस्सा मेरे खिलाफ इस्तेमाल नहीं किया जा सकता, क्योंकि उसमें विश्वसनीयता और सच्चाई की कमी है।
अभिनेत्री शांता भास्कर मोदक की गवाही के बारे में उन्होंने कहा कि चूंकि उन्होंने आप्टे और गोडसे को सावरकर सदन में प्रवेश करते हुए नहीं देखा था, इसलिए उनकी गवाही से यह साबित नहीं किया जा सकता कि वे उनसे मिले थे। 'डॉ. जैन की गवाही मदनलाल द्वारा उन्हें बताई गई बातों पर आधारित है, इसलिए यह स्वीकार्य नहीं है। बॉम्बे प्रांत के गृह मंत्री मोरारजी देसाई की गवाही कुछ तकनीकी खामियों के कारण मेरे खिलाफ इस्तेमाल नहीं की जा सकती।'
'दस हजार पत्रों में से भी उन्हें कोई आपत्तिजनक बात नहीं मिली। अन्य आरोपियों से जान-पहचान होना ही साजिश में मेरी संलिप्तता साबित करने का पर्याप्त आधार नहीं है। अभियोजन पक्ष द्वारा मुझ पर लगाए गए सभी आरोप सुनी-सुनाई बातों और मात्र आरोप हैं; वे इनमें से किसी को भी संदेह से परे साबित करने में विफल रहे हैं। अतः, माननीय न्यायाधीश, मैं पूरी तरह निर्दोष हूँ और मुझे सम्मानपूर्वक बरी किया जाना चाहिए।'

अंत में सावरकर ने अदालत में वे प्रेस विज्ञप्तियां प्रस्तुत कीं जिनमें उन्होंने 1940 में नेहरू की गिरफ्तारी और 1942 में गांधी और नेहरू की गिरफ्तारी की निंदा की थी। उन्होंने 1943 में गांधी से अनशन समाप्त करने का अनुरोध और जिन्ना पर हुए जानलेवा हमले की आलोचना भी प्रस्तुत की। उन्होंने वह बयान भी पेश किया जिसमें उन्होंने गांधी की हत्या की स्पष्ट और सशक्त शब्दों में निंदा की थी। 'समय-समय पर मेरे द्वारा दिए गए इन बयानों से स्पष्ट है कि मैं विभिन्न दलों के नेताओं का कितना सम्मान करता हूं। अपनी मातृभूमि की मुक्ति देखने के लिए जीवित रहना मेरे लिए सौभाग्य की बात है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि मेरे जीवन के एक सपने का एक हिस्सा अभी भी अधूरा है। लेकिन मैंने अपने सपने को साकार करने के प्रयास नहीं छोड़े हैं। सिंधु से लेकर समुद्र तक मेरी मातृभूमि का एकीकरण अभी तक नहीं हुआ है। इसे प्राप्त करने के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि हम सभी को एकजुट और मजबूत करें। मैंने हमेशा नागरिकों से आग्रह किया है कि वे केंद्र सरकार के साथ मजबूती से खड़े रहें, चाहे सरकार किसी भी दल की हो।' मैंने नया राष्ट्रीय ध्वज स्वीकार कर लिया है। महासभा की कार्यकारी समिति ने केंद्र सरकार के समर्थन में एक प्रस्ताव पारित किया है। महासभा के एक नेता, श्यामप्रसाद मुखर्जी, केंद्रीय मंत्रिमंडल में मंत्री हैं।
'एक हिंदू संगठन का गठन असंतुष्ट सदस्यों द्वारा किया गया था, जो महासभा के कुछ निर्णयों का विरोध कर रहे थे। उनका दावा था कि भारतीय संघ को मान्यता देकर महासभा ने पाकिस्तान के गठन को स्वीकार कर लिया था। पश्चिम पंजाब और पूर्वी बंगाल में लाखों हिंदुओं के जीवन और संपत्ति की रक्षा करने में विफल रही सरकार का समर्थन करके हिंदू महासभा ने हिंदू हितों के साथ विश्वासघात

किया था। आप्टे और गोडसे प्रतिद्वंद्वी संगठन में शामिल हो गए थे। वे हिंदू वर्चस्ववादी विचारधारा के कट्टर अनुयायी थे और इसलिए वे हर उस चीज़ की कड़ी आलोचना करते थे जो उनके विश्वासों के विरुद्ध जाती थी और जिसे वे हिंदू हितों के प्रति नरमी मानते थे। 1942 में कई कांग्रेस कार्यकर्ताओं ने गांधीजी द्वारा दिए गए अहिंसा के वचन का उल्लंघन किया और गांधीजी के नाम का इस्तेमाल करते हुए तोड़फोड़ और हिंसा की घटनाओं को अंजाम दिया। लेकिन अंग्रेजों ने भी इसके लिए गांधीजी पर मुकदमा नहीं चलाया।'
अपने बयान के अंत में सावरकर ने कहा, 'अभियोजन पक्ष मेरे खिलाफ लगाए गए किसी भी आरोप को साबित करने में विफल रहा है। इसलिए मेरी रिहाई का आदेश जल्द से जल्द दिया जाना चाहिए।'
सावरकर को अपना सत्तावन पृष्ठ लंबा बयान पढ़ने में लगभग ढाई घंटे लगे। हालांकि उनका स्वास्थ्य बेहद नाजुक था, फिर भी उन्होंने खड़े होकर, स्पष्ट स्वर में अपना बयान पढ़ा। अपने बयान के इक्यावनवें पृष्ठ के सत्ताईसवें अनुच्छेद को पढ़ते समय, जहां भारत के विच्छेदन का जिक्र था, उनका गला भर आया और उनकी आंखों से आंसू बहने लगे। वे कुछ देर तक बोल नहीं पाए; उन्होंने रुमाल से अपने आंसू पोंछे और फिर गरिमापूर्ण ढंग से अपना बयान पढ़ना जारी रखा।
चतुर वकील और रणनीतिकार ने अपने बचाव में एक बेहद सक्षम रणनीति तैयार की थी। अभियोजन पक्ष द्वारा उनके खिलाफ बनाए गए कमजोर मामले का फायदा उठाते हुए, सावरकर आसानी से अपने खिलाफ सबूतों और गवाहों की गवाही को निराधार साबित करने में सफल रहे। उन्होंने अपने खिलाफ गवाही पर संदेह पैदा करने के लिए पर्याप्त आधार स्थापित कर लिए। गांधीजी की हत्या की साजिश में उनकी

संलिप्तता का सच उनके और उनके शिष्यों के बीच चुप्पी के समझौते में छिपा रहा; विनायक दामोदर सावरकर, नाथूराम विनायक गोडसे और नारायण दत्तात्रेय आप्टे सच्चाई जानते थे लेकिन उन्होंने इसे कभी उजागर नहीं किया। सावरकर के बयान से यह साबित हो गया कि उनके खिलाफ अभियोजन पक्ष का मामला ठोस नहीं था; लेकिन यह उनकी निर्दोषता को साबित करने के लिए पर्याप्त नहीं था।
उनके बयान के बाद अदालत ने उनसे कुछ सवाल पूछे।
प्रश्न: गवाहों ने बताया है कि जनवरी 1948 के पहले सप्ताह में मदनलाल ने डॉ. जैन को बताया कि आपने अहमदनगर में उनके कारनामों की रिपोर्ट सुनी थी। आपने उन्हें मिलने के लिए बुलाया था। आपने उनसे लगभग दो घंटे बात की थी, और समय-समय पर उनकी पीठ थपथपाकर उनकी वीरता पर जोर से "शाबाश" कहकर बधाई दी थी।
उत्तर: 'ये सरासर झूठ हैं।'
प्रश्न: '14 जनवरी 1948 को रात 9 बजे, नाथूराम गोडसे और नारायण आप्टे आपके घर आए। उनके पास विस्फोटक और बमों से भरा एक थैला था। कुछ समय बाद वे आपके घर से चले गए।'
उत्तर: 'ये सब झूठ हैं।'
प्रश्न: '15 जनवरी 1948 की सुबह, दीक्षित महाराज के घर के परिसर में, आप्टे ने नाथूराम गोडसे की उपस्थिति में बैज से कहा कि आपने यह तय कर लिया है कि महात्मा गांधी, पंडित नेहरू और सुहरावर्दी को खत्म कर दिया जाना है। और आपने यह कार्य उन्हें सौंपा था।'
उत्तर: 'मैंने आप्टे, गोडसे या किसी अन्य व्यक्ति से कभी ऐसी कोई बात नहीं कही है।'

प्रश्न: '17 जनवरी को नथुराम, आप्टे और बैज आपके घर गए। लगभग दस मिनट बाद आप्टे और गोडसे बाहर आए। आप भी उनके पीछे-पीछे बाहर गए। आपने कहा "यशस्वी हो या", "सफल हो जाओ और वापस आ जाओ"।' उत्तर: 'यह सच नहीं है।'
प्रश्न: 'बाद में टैक्सी में आप्टे ने सबको बताया कि आपने भविष्यवाणी की थी कि महात्मा गांधी के सौ वर्ष अब समाप्त हो चुके हैं।'
उत्तर: 'मैंने यह बात कभी किसी से नहीं कही। उनके बीच जो कुछ भी हुआ, मैं उसके बारे में कुछ नहीं कह सकता।'
प्रश्न: '19 जनवरी की सुबह दिल्ली से दामले या कासर के लिए एक ट्रंक कॉल किया गया। दामले आपके सचिव हैं और कासर आपके अंगरक्षक हैं।'
उत्तर: 'मुझे उस टेलीफोन कॉल के बारे में कोई जानकारी नहीं है। हां, दामले मेरी सचिव हैं और कासर मेरे अंगरक्षक हैं।' प्रश्न: '31 जनवरी को आपके घर की तलाशी के दौरान कई पत्र और दस्तावेज बरामद हुए। इनमें से कुछ पर आपके और गोडसे तथा आप्टे के हस्ताक्षर हैं।'
उत्तर: 'हां, वे करते हैं।'
प्रश्न: '17 जनवरी 1948 से पहले, आपको नाथूराम गोडसे, आप्टे, करकरे, परचुरे, बैज और मदनलाल से बहुत करीबी रूप से परिचित दिखाया गया है। क्या यह सही है?'
उत्तर: 'मैं हिंदू महासभा के लिए उनके काम के सिलसिले में गोडसे और आप्टे को अच्छी तरह जानता था। मैंने करकरे, परचुरे और बैज के नाम सुने थे, लेकिन मैं उन्हें व्यक्तिगत रूप से नहीं जानता था। मदनलाल को मैं नहीं जानता था।'

पूछे जाने पर सावरकर ने कहा, 'मैं अपने बचाव में और कुछ नहीं कहना चाहता और न ही कोई गवाह पेश करना चाहता हूं।'
इसके बाद आठवें आरोपी डॉ. दत्तात्रेय सदाशिव परचुरे ने अदालत में अपना पंद्रह पन्नों का बयान पढ़ा।
'न तो किसी तथ्य के आधार पर और न ही किसी घटना के आधार पर यह विशेष न्यायालय मेरे खिलाफ मुकदमा चला सकता है। मैं ग्वालियर रियासत की सरकार का एक देशभक्त नागरिक हूं। मेरा जन्म लश्कर में हुआ और मैंने वहीं शिक्षा प्राप्त की। मैं अपने जीवन में कभी भी ब्रिटिश भारत में नहीं रहा। इसलिए मेरे खिलाफ कार्यवाही अवैध है।'
उन्होंने गांधीजी की हत्या के लिए किसी भी व्यक्ति या संगठन के साथ किसी भी प्रकार की संधि करने और उसे मंजूरी देने से पूरी तरह इनकार किया। उन्होंने यह मानने से भी इनकार कर दिया कि गांधीजी की हत्या किसी साजिश का परिणाम थी।
उन्होंने इस बात से इनकार किया कि गोडसे और आप्टे ग्वालियर स्थित उनके घर पर रुके थे। उन्होंने कहा, 'सच तो यह है कि वे 28 जनवरी की सुबह तड़के 7:30 बजे मेरे घर आए थे। उन्हें देखकर मुझे थोड़ी झुंझलाहट हुई, लेकिन शिष्टाचारवश मैंने उनसे बात की, उन्हें चाय पिलाई और बताया कि मुझे औषधालय जाना है। मैं सुबह 8:00 बजे अकेला ही घर से निकला। वे उसी दिन दोपहर करीब 4 बजे वापस आए। बातचीत के दौरान आप्टे ने बताया कि वे ग्वालियर इसलिए आए थे ताकि दिल्ली में होने वाले अपने प्रदर्शन में भाग लेने के लिए कुछ स्वयंसेवकों की व्यवस्था करने में मेरी मदद मांग सकें। मैंने साफ इनकार कर दिया।'
'मैं गोडसे को जानता था; वह आरएसएस कार्यकर्ता था और संघ का प्रमुख आयोजक रह चुका था। वह अपने अखबार 'हिंदू राष्ट्र' में

संघ की गतिविधियों का प्रचार करता था। मुझे यह पसंद नहीं था क्योंकि संघ हमेशा हिंदू महासभा से अलग रहता था, इसलिए मैंने स्वयंसेवक देने से इनकार कर दिया। मैंने उन्हें उस शाम अपने साथ भोजन करने के लिए आमंत्रित किया था, लेकिन वे नहीं आए। उसके बाद मैंने उन्हें लश्कर में फिर कभी नहीं देखा। यह आरोप कि उन्होंने मेरे साथ या मेरी उपस्थिति में रिवॉल्वर खरीदने के बारे में चर्चा की थी, सरासर झूठ है। उन्होंने मेरे घर में रिवॉल्वर का परीक्षण नहीं किया।'
अपने 'कबूलनामे' का हवाला देते हुए उन्होंने कहा कि उन्हें जबरन एक तैयार बयान पर हस्ताक्षर करने के लिए मजबूर किया गया था। उन्होंने बताया कि उन्हें सत्रह दिनों तक पत्थर की दीवारों वाली एक कोठरी में एकांत कारावास में रखा गया था। ग्वालियर पुलिस के एक सीआईडी अधिकारी, खिजर मोहम्मद ने उनसे कहा था, 'अब मैं बदला लूंगा क्योंकि तुम ग्वालियर में हिंदू महासभा के नेता हो।'
मुझे बैरक में रखे जाने के दौरान भी अपमानित किया गया। देउलकर कभी मुझे धमकाता, कभी सलाह देता। उसने मुझे बताया कि मेरे परिवार के सभी सदस्यों को गिरफ्तार कर लिया गया है और उनके साथ एक जैसा बर्ताव किया जा रहा है। सभी पुलिस अधिकारी लगातार मुझे सलाह देते रहे कि मैं उनके द्वारा तैयार किए गए बयान पर हस्ताक्षर कर दूं ताकि मेरी सारी परेशानियां खत्म हो जाएं। जब मैंने इनकार किया, तो उन्होंने मुझसे कहा, "अपने परिवार के बारे में सोचो, तुम्हारे इनकार की वजह से उन्हें भुगतना पड़ेगा।" 'अंततः मैंने अपने परिवार की दुर्दशा और सबसे महत्वपूर्ण रूप से अपनी अस्सी वर्षीय मां के बारे में सोचने के बाद पुलिस के आदेशों के अनुसार बयान पर हस्ताक्षर करने का फैसला किया।'

'एक दिन सुबह तड़के मजिस्ट्रेट अटल कुछ अधिकारियों के साथ मुझसे मिलने आए। उन्होंने मेरे सामने कुछ कागज़ रखे और मुझे उन पर हस्ताक्षर करने को कहा। उन्होंने जहाँ भी हस्ताक्षर करने को कहा, मैंने हस्ताक्षर कर दिए। यह सच नहीं है कि उन्होंने मुझसे कोई सवाल पूछा या मेरा बयान दर्ज किया। चूंकि उपर्युक्त हस्ताक्षरित बयान मेरा "स्वीकारोक्ति बयान" नहीं है, इसलिए इसे स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए और इस पर कोई कार्रवाई नहीं की जानी चाहिए।'
अपने बयान के अंत में परचुरे ने कहा, 'मेरे खिलाफ लगाए गए आरोपों के संदर्भ में, मुझे केवल इतना ही कहना है कि मैं निर्दोष हूं और मुझे तुरंत बरी किया जाना चाहिए।'
22 नवंबर 1948: न्यायाधीश द्वारा पूछे गए प्रश्नों का उत्तर देते हुए परचुरे ने कहा, 'गोडसे और आप्टे 26 जनवरी को मेरे घर नहीं आए थे, न ही उन्होंने मेरे यहाँ रात बिताई थी। उन्होंने मेरे पिछवाड़े में किसी पिस्तौल का परीक्षण नहीं किया था। यह कहना गलत है कि मैंने दंडवते के माध्यम से उनके लिए पिस्तौल की व्यवस्था की थी। आरोपी दंडवते भगोड़ा घोषित है। गांधीजी की हत्या की खबर सुनकर मैंने यह नहीं कहा कि बहुत अच्छा काम हुआ है और अब हिंदू धर्म खतरे से बाहर है।' उन्होंने आगे कहा, 'मैजिस्ट्रेट की उपस्थिति में मैंने जो बयान दिया था, उस पर मेरे हस्ताक्षर हैं, लेकिन मैंने उन परिस्थितियों का वर्णन किया है जिनके तहत मैंने बयान पर हस्ताक्षर किए थे।'
अदालत ने उनसे अदालत में मुकदमा चलाने का कारण पूछा। उन्होंने जवाब दिया, 'कुछ लोगों ने पुलिस के दबाव में आकर मेरे खिलाफ झूठी और दुर्भावनापूर्ण गवाही दी, जबकि कुछ ने व्यक्तिगत दुश्मनी के कारण मेरे खिलाफ गवाही दी है।' उन्होंने शिकायत की कि ग्वालियर

के मजिस्ट्रेट अटल को अचानक 100 रुपये की वेतन वृद्धि के साथ पदोन्नति मिल गई - 'ये दोनों ही इस मामले में मेरे खिलाफ गवाही देने के बदले में इनाम थे।'
अंत में उन्होंने कहा, 'मैं अपनी निर्दोषता के बारे में गवाही देने या अपने बयान के समर्थन में किसी भी गवाह को बुलाना नहीं चाहता।'
1 दिसंबर 1948: गांधी हत्याकांड मुकदमे का तीसरा चरण शुरू हुआ। मुख्य अभियोजक सी.के. दाफ्तारी ने अपना सारांश प्रस्तुत करना शुरू किया।
'इस विशेष न्यायालय और विशेष न्यायाधीश आत्मचरण को इस मामले की सुनवाई करने का अधिकार दिया गया है। एक विशेष अध्यादेश द्वारा विशेष न्यायाधीश को गवाह को सशर्त क्षमादान देने का अधिकार दिया गया था। अब इस अध्यादेश को अधिनियम में परिवर्तित कर दिया गया है।'
सभी आरोपियों के खिलाफ अभियोजन पक्ष द्वारा लगाए गए आरोपों का जिक्र करते हुए दफ्तरी ने कहा, 'महात्मा गांधी की हत्या नाथूराम गोडसे का व्यक्तिगत कृत्य नहीं है। उसे उकसाया और प्रोत्साहित किया गया था और एक साजिश रची गई थी। बैज का आप्टे से 1947 से संबंध था। वह हिंदू राष्ट्र के कार्यालय में आप्टे से मिलता था और उन्हें हथियार, बम और विस्फोटक बेचता था। बैज का नौकर शंकर भी उस समय मौजूद रहता था। मदनलाल 10 जनवरी को करकरे के साथ प्रोफेसर जैन से मिला; उसने करकरे का परिचय उनसे 'सेठ' के रूप में कराया था। दो-तीन दिन बाद मदनलाल फिर से प्रोफेसर जैन से मिला और अहमदनगर में अपने कारनामों के बारे में बताया। उस समय उसने जैन को महात्मा गांधी की हत्या की साजिश के बारे में बताया।'

13 और 14 जनवरी 1948 बहुत महत्वपूर्ण तारीखें हैं। अदालत को इन पर ध्यान देना चाहिए। 13 तारीख को नथुराम गोडसे ने आप्टे की पत्नी को अपनी एक जीवन बीमा पॉलिसी में लाभार्थी के रूप में नामित किया और 14 जनवरी को उन्होंने अपने भाई गोपाल की पत्नी को दूसरी पॉलिसी में लाभार्थी के रूप में नामित किया। नथुराम और आप्टे ने इस अदालत में कई बातें कही हैं, लेकिन यह नहीं बताया कि ये नामांकन क्यों किए गए थे।
14 जनवरी को आप्टे और गोडसे पुणे से बंबई आए। बैज और शंकर भी हथियारों और विस्फोटकों के साथ बंबई गए। गोपाल गोडसे ने भी किरकी में 15 तारीख से छुट्टी के लिए आवेदन दिया था। इसका मतलब है कि उन सभी ने 15 तारीख को बंबई में मिलने की योजना बनाई थी। मदनलाल और करकरे भी 15 तारीख को बंबई में थे। सावरकर और परचुरे को छोड़कर बाकी सभी आरोपी बंबई में जगह-जगह घूमते रहे। उनके पास हथियारों और विस्फोटकों से भरा एक थैला था। मदनलाल और करकरे, गोडसे, आप्टे, बैज और शंकर अलग-अलग दिनों में दिल्ली के लिए रवाना हुए। दिल्ली पहुंचने के बाद वे अलग-अलग जगहों पर रुके। गोपाल गोडसे पहले से ही दिल्ली में था।
दाफ्तरी ने दिल्ली में उनके मिलने, जंगल में रिवाल्वर से अभ्यास करने, 20 जनवरी की सुबह बिरला हाउस जाने और मरीना होटल में हुई उनकी बातचीत का वर्णन किया। उन्होंने कहा, 'गांधीजी की हत्या का उनका प्रयास 20 तारीख को विफल हो गया, क्योंकि बैज, जिसे गांधीजी की हत्या का जिम्मा सौंपा गया था, समझ गया था कि बाकी सभी ने अपनी जान बचा ली है और केवल वही रंगे हाथों पकड़ा जाएगा। मदनलाल ने योजना के अनुसार गन कॉटन बम विस्फोट किया, लेकिन बैज ने शंकर को कुछ न करने का इशारा किया और खुद भी कुछ नहीं किया। बाकी सभी घबरा गए और घटनास्थल से भाग गए। पुलिस ने

मदनलाल को गिरफ्तार कर लिया। बैज और शंकर हिंदू महासभा भवन गए। उन्होंने अपने साथ लाए बम और विस्फोटक फेंक दिए और उसी रात बंबई के लिए रवाना हो गए। बाकी सभी भी दिल्ली छोड़कर चले गए।'
आप्टे और गोडसे ने मुंबई में फर्जी पहचान का इस्तेमाल करते हुए कई होटलों में ठहरते हुए अपना सफर तय किया। 27 जनवरी को वे फिर मुंबई से दिल्ली के लिए विमान में सवार हुए। उसी दिन वे रात की ट्रेन से ग्वालियर गए और परचुरे के घर पर रुके। परचुरे की मदद से उन्होंने एक पिस्तौल हासिल की। 28 जनवरी को दोनों दिल्ली लौट आए। 30 जनवरी को करकरे को भी उनके साथ दिल्ली रेलवे स्टेशन पर देखा गया। तीनों उसी शाम प्रार्थना स्थल गए। नाथूराम गोडसे ने महात्मा गांधी पर तीन गोलियां चलाईं। हत्या में इस्तेमाल किया गया हथियार और कुछ बिना इस्तेमाल किए गए कारतूस नाथूराम गोडसे से बरामद किए गए और उसे हिरासत में ले लिया गया। 14 फरवरी को आप्टे और करकरे को मुंबई के अपोलो होटल से गिरफ्तार किया गया। बाद में, अन्य आरोपियों को भी अलग-अलग तारीखों पर गिरफ्तार किया गया। (यह गलत है; करकरे और आप्टे से पहले अन्य सभी आरोपियों को गिरफ्तार कर लिया गया था। बैज को 31 जनवरी को गिरफ्तार किया गया था, गोपाल को 5 फरवरी को गिरफ्तार किया गया था; शंकर बॉम्बे स्थित सीआईडी कार्यालय में खुद चलकर गए और उन्हें 6 फरवरी को गिरफ्तार कर लिया गया। सावरकर और परचुरे को पहले ही सुरक्षात्मक हिरासत में ले लिया गया था।)
दाफ्तरी ने कहा, 'सावरकर और परचुरे को छोड़कर, बाकी सभी आरोपियों के बीच घनिष्ठ जान-पहचान थी। सावरकर और परचुरे अलग तरह के सहयोगी हैं। जनवरी के दूसरे सप्ताह में, गोडसे, आप्टे, करकरे, मदनलाल, बैज और शंकर को समय-समय पर एक साथ देखा गया था। 20 तारीख को यह समूह प्रार्थना सभा में एक साथ देखा गया था। इससे

मेरे मन में कोई संदेह नहीं रह जाता कि महात्मा गांधी की हत्या की साजिश रची गई थी। जिस तरह से आरोपी दिल्ली पहुंचे, विभिन्न होटलों में ठहरे और फिर दिल्ली से चले गए, उससे उनके इरादों पर संदेह पैदा होता है। यदि उनके इरादे दुर्भावनापूर्ण नहीं थे, यदि उनका इरादा कोई गैरकानूनी काम करने का नहीं था, तो उन्होंने फर्जी पहचान का इस्तेमाल क्यों किया, फर्जी नामों से क्यों रहे?'
आरोपी के मरीना होटल में हुई बैठक के बारे में दाफ्तरी ने इस बात से सहमति जताई कि आरोप पूरी तरह से बैज की गवाही पर आधारित था। 'यह आवश्यक नहीं है कि केवल एक चश्मदीद गवाह ही साजिश के अस्तित्व को साबित कर सके। आमतौर पर, किसी समझौते के आधार पर किसी सह-अपराधी को माफ़ कर दिया जाता है, वह साजिश और साजिशकर्ताओं के बारे में कबूलनामा करता है और फिर उसे अदालत में गवाही देने के लिए कहा जाता है। यह सच है कि किसी मुखबिर की गवाही को हर संभव तरीके से, और विशेष रूप से महत्वपूर्ण पहलुओं में, साबित किया जाना चाहिए। लेकिन अगर किसी आरोपी के पिछले व्यवहार पर पुनर्विचार किया जा रहा है, तो अदालत मुखबिर की गवाही पर भरोसा कर सकती है। अदालत अपराध में शामिल किसी सह-अपराधी की गवाही के आधार पर आरोपी को सजा सुना सकती है, लेकिन यह अपराध की प्रकृति, अपराधियों के चरित्र और गवाह के महत्व पर निर्भर करता है।'
डॉ. जैन की गवाही, जिसकी पुष्टि अंगद सिंह और मोरारजी देसाई की गवाही से भी हुई है, यह साबित करती है कि मदनलाल महात्मा गांधी की हत्या की साजिश से भली-भांति परिचित थे। मदनलाल ने इस बारे में डॉ. जैन को भी सूचित किया था। यह मानना असंभव है कि 20 जनवरी

तक, जब शंकर किस्तय्या बैज के साथ दिल्ली से लौट रहे थे, तब तक वे दिल्ली यात्रा के उद्देश्य से पूरी तरह अनभिज्ञ रहे।
इसके बाद दाफ्तरी ने बैज की गवाही का जिक्र किया, जिसमें बैज का नाथूराम गोडसे और आप्टे के साथ सावरकर के घर जाना और शांता भास्कर मोदक की गवाही शामिल थी, जिसमें उन्होंने गोडसे और आप्टे को सावरकर के घर की ओर जाते हुए देखा था। दाफ्तरी ने कहा कि इन बातों को नजरअंदाज नहीं किया जाना चाहिए।
बैज की गवाही में कहा गया है कि नाथूराम गोडसे ने उन्हें बताया था कि गोपाल गोडसे ने उनकी दिल्ली यात्रा की व्यवस्था की थी। इसकी पुष्टि हो चुकी है; गोपाल ने 14 जनवरी को एक सप्ताह की छुट्टी के लिए आवेदन किया था।
2 दिसंबर 1948: दफ्तारी ने जंगल में रिवॉल्वर के परीक्षण के संबंध में बैज की गवाही का हवाला देते हुए अपनी बात शुरू की। 'उस दिन तीन से चार वन रक्षकों ने आरोपी को जंगल में देखा था और उन्होंने अदालत में गवाही दी है। बैज ने गवाही दी है कि गोपाल ने रक्षकों से पंजाबी में कुछ कहा था, लेकिन उन्होंने हिंदुस्तानी में बात की थी। कुछ पंजाबी शब्दों का प्रयोग किया गया हो सकता है या हिंदुस्तानी को पंजाबी लहजे में बोला गया हो सकता है।'
इसके बाद दफ्तारी ने बैज की गवाही में आरोपी व्यक्तियों के बीच 20 तारीख को बिरला हाउस जाने से पहले मरीना होटल में हुई बातचीत के संदर्भ में बात की। उन्होंने कहा, 'अभियोजन पक्ष यह साबित करना चाहता है कि आरोपी व्यक्तियों ने झूठे नाम अपनाए थे।' उन्होंने अदालत में अन्य गवाहों की गवाही के अंश प्रस्तुत किए, जो इस बात की पुष्टि करते हैं और बैज की गवाही के इस हिस्से को सत्य साबित करते हैं। उन्होंने आगे कहा, 'नथुराम गोडसे ने अपनी

डायरी में लिखा था कि उन्होंने 'बंदोभाऊ' को 50 रुपये दिए थे। आप्टे 'कर्मकार' नाम से दिल्ली गया था। मरीना होटल में बैज ने 'बंदोभाऊ' नाम चुना और आप्टे ने खुद को 'कर्मकार' कहना शुरू कर दिया। आरोपी व्यक्तियों के लिए झूठे नाम अपनाना और झूठी पहचान का इस्तेमाल करना कोई नई बात नहीं थी।'
दाफ्तरी ने फिर टैक्सी चालक सुरजीत सिंह की गवाही का हवाला दिया। उसने 20 जनवरी की शाम को आरोपियों को बिरला हाउस तक पहुंचाया था। 'इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वे सभी मरीना होटल में इकट्ठा हुए थे और बिरला हाउस जाने के इरादे से टैक्सी स्टैंड गए थे। बैज ने अपनी गवाही में यही कहा है।'
दाफ्तरी ने आगे कहा कि आप्टे गिरोह का सरगना था; मुख्य षड्यंत्रकारी। उसने 20 तारीख की सुबह बैज और शंकर को बिड़ला हाउस ले जाकर दिखाया कि गांधीजी प्रार्थना सभा के दौरान कहाँ बैठे थे। 'उसी शाम वह उन्हें बिड़ला हाउस ले गया और निर्देश दिए। अगर वे किसी खास मकसद से दिल्ली नहीं आए थे, तो उन्हें कैसे पता चला कि बाकी लोग कहाँ ठहरे हुए हैं?'
दाफ्तरी ने माना कि गवाही में कुछ विसंगतियां और कुछ निराधार आरोप थे, लेकिन परिस्थितियों को देखते हुए यह स्वाभाविक ही था। 'जब मेरे गवाह किसी एक घटना के बारे में गवाही देते हैं, तो गवाहों की घटना को याद करने और उसका वर्णन करने की क्षमता के आधार पर उनकी गवाही में अंतर होना स्वाभाविक है।' फिर उन्होंने नथुराम, आप्टे और गोपाल गोडसे के सुरजीत सिंह की टैक्सी में बैज और शंकर को वहीं छोड़कर वापस भागने का जिक्र किया। इसके बाद अपने निष्कर्षों के समर्थन में, दाफ्तरी ने जिरह के दौरान बैज की गवाही के मुख्य बिंदुओं का वर्णन किया। 'जिरह में कहा गया था कि हिंदू महासभा भवन में रहने के लिए अनुमति लेनी पड़ती है। अगर

यह सच है, तो शंकर और बैज को वहां रहने की अनुमति मिली होगी, अन्यथा यह मानना पड़ेगा कि अनुमति लेने की कोई आवश्यकता नहीं थी।' आप्टे और दीक्षित महाराज तथा आप्टे और बैज के बीच हुई मुलाकातों के समय को लेकर कुछ विसंगतियां प्रतीत होती हैं, लेकिन साथ ही साथ बैठक के समय दीक्षित महाराज के खराब स्वास्थ्य और गवाही के दौरान बैठक और उसके संदर्भ के बीच बीते समय को भी ध्यान में रखना चाहिए।
बचाव पक्ष की इस दलील का जवाब देते हुए कि बैज की गवाही महत्वहीन थी, दाफ्तरी ने कहा, 'बैज एक साधारण व्यक्ति है, जो बहुत साधारण काम करता है और उसका व्यक्तित्व बहुत प्रतिभाशाली नहीं है। न ही वह बहुत विद्वान है, लेकिन अदालत केवल इन विशेषताओं के आधार पर उसकी गवाही को अविश्वसनीय नहीं मान सकती।'
20 तारीख की शाम को आरोपियों को अपनी पूर्व योजना में बदलाव करना पड़ा क्योंकि बैज ने छोटूराम के कमरे में जाने से इनकार कर दिया और कहा कि वह महात्मा गांधी पर सामने से गोली चलाना पसंद करेगा। यह बहुत स्वाभाविक है कि बैज ने कमरे में फंसने और पकड़े जाने के डर से ऐसा कहा होगा।
'आरोपियों ने अपने बयानों में आरोप लगाया है कि उनके साथ दुर्व्यवहार किया गया, उन्हें परेशान किया गया और यातनाएं दी गईं। बचाव पक्ष के वकीलों को पुलिस अधिकारियों पर ऐसे आरोप लगाने से बचना चाहिए, क्योंकि अधिकारियों को आरोपों का जवाब देने का अवसर नहीं दिया गया।' इसके बाद उन्होंने बैज की जिरह का जिक्र करते हुए कहा कि पूछे गए सवालों से पता चलता है कि सबूतों के बारे में कुछ पूर्वकल्पित धारणाएं बना ली गई थीं। 'बचाव पक्ष के एक वकील ने बैज से पूछा था कि क्या यह सच नहीं है कि 19 जनवरी

की शाम को हिंदू महासभा भवन में आप्टे ने उन्हें स्वयंसेवकों को न लाने के लिए कड़ी फटकार लगाई थी, जबकि उन्हें पैसे दिए जा चुके थे। इस सवाल से तीन निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं। पहला, वे सभी हिंदू महासभा भवन गए थे; दूसरा, उनकी एक बैठक हुई थी; और तीसरा, कुछ पैसे दिए गए थे। बैज ने अद्भुत याददाश्त दिखाई है, वे साहस और आत्मविश्वास से भरे हुए हैं। सात दिनों तक उन्होंने लगातार सवालों की बौछार का सामना किया और एक बार भी विचलित नहीं हुए।' यदि उसकी गवाही झूठी और असत्य पर आधारित होती, यदि वह षड्यंत्रकारियों के गिरोह का सदस्य नहीं होता, तो वह घटनाओं को इतने सजीव और सटीक रूप से याद नहीं कर पाता, वह जिरह के दौरान एक बार भी लड़खड़ाए बिना अपने दावों को कायम नहीं रख पाता।
3 दिसंबर 1948: दाफ्तरी ने अदालत को बताया कि अन्य गवाहों की गवाही के अंशों का उपयोग करके वह उनके बीच संबंध साबित करेंगे। 'शांता मोदक 14 जनवरी की शाम को पुणे से बंबई के लिए रवाना हुईं, आप्टे और गोडसे उनके साथ गए थे। बैज ने यह भी कहा था कि आप्टे और गोडसे उसी दिन बंबई आए थे और बाद में उसी रात आप्टे, गोडसे और बैज सावरकर के घर गए थे।'
'रक्षा पक्ष के वकीलों ने शांता मोदक की गवाही को चुनौती नहीं दी थी। दीक्षित महाराज की गवाही से पुष्टि होती है कि (1) 15 जनवरी को दीक्षित महाराज के घर पर हथियारों और विस्फोटकों का निरीक्षण किया गया; (2) एक या दो रिवॉल्वर की मांग की गई; (3) दीक्षित महाराज से एक रिवॉल्वर उपलब्ध कराने को कहा गया; (4) बैज ने दीक्षित महाराज से रिवॉल्वर की खरीद के लिए धन देने को कहा; (5) तीस से चालीस हजार रुपये मूल्य के हथियार और विस्फोटक कश्मीर भेजे जाने के लिए प्राप्त किए गए; (6) ये लोग एक महत्वपूर्ण मिशन पर जा रहे थे।'

दफ्तरी ने कहा, 'यह सब सत्य सिद्ध हो चुका है, हालांकि तिथियों को लेकर कुछ विसंगतियां थीं। इसका कारण यह हो सकता है कि दीक्षित महाराज कुछ घटनाओं को स्पष्ट रूप से याद नहीं कर पाए, क्योंकि वे इस षड्यंत्र में शामिल नहीं थे।'
26 जनवरी को एक बार फिर रिवॉल्वर की मांग की गई। उस दिन आप्टे और गोडसे दीक्षित महाराज से मिलने गए थे। बचाव पक्ष ने जिरह के दौरान इस मुलाकात से संबंधित गवाही पर कोई आपत्ति नहीं जताई। मुलाकात के दौरान हुई बातचीत के बारे में कोई सवाल नहीं पूछा गया।
इसके बाद उन्होंने इस तर्क का जिक्र किया कि दीक्षित महाराज की गवाही पुलिस के दबाव का नतीजा थी। 'बचाव पक्ष जिरह के दौरान दीक्षित महाराज से पूछ सकता था कि क्या उन्होंने पुलिस के दबाव में गवाही दी थी। लेकिन ऐसा नहीं किया गया। दीक्षित ने स्वीकार किया कि उन्होंने अवैध हथियार और विस्फोटक खरीदे और बांटे तथा बंबई में हिंदुओं को उनकी रक्षा के लिए तलवारें और खंजर मुहैया कराए। उस समय कई लोगों का मानना था कि यह सही था। दीक्षित महाराज एक समुदाय के आध्यात्मिक प्रमुख हैं। इसलिए हमें उनकी गवाही को सच मानना चाहिए। आरोप लगाया गया कि उन्होंने अपनी जान बचाने के लिए गवाही दी होगी। लेकिन वे किससे खुद को बचाने की कोशिश कर रहे थे? वे किसी साजिश का हिस्सा नहीं थे। अब कहा जा रहा है कि चूंकि दीक्षित महाराज कांग्रेस समर्थक हैं, इसलिए वे आरोपियों के खिलाफ गवाही दे रहे हैं, लेकिन उन्होंने इस आरोप का खंडन किया है। उन्होंने भारत छोड़ो आंदोलन में भाग लिया था, लेकिन कई गैर-कांग्रेसी भारतीयों ने भी ऐसा किया था। जिरह के दौरान भी उनसे इस तरह के किसी आरोप का सामना नहीं कराया गया। इन

सब से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि दीक्षित महाराज और बैज की गवाहियों में समानता है।'
दादा महाराज की गवाही का हवाला देते हुए दफ्तरी ने कहा, 'आप्टे ने दादा महाराज से मिलने के लिए पंढरपुर में एक व्यक्ति को भेजा था। संभवतः वह करकरे ही था। दादा महाराज आप्टे और करकरे को अच्छी तरह जानते थे। अगर आप्टे और गोडसे दिल्ली में शांतिपूर्ण प्रदर्शन करने का इरादा रखते थे, तो आप्टे ने दादा महाराज से यह क्यों कहा, "जब हम यह काम करेंगे, तब आपको पता चल जाएगा"? आप्टे और दादा महाराज ने ट्रेनों, पुलों और पाकिस्तान की राष्ट्रीय सभा को उड़ाने की बात की थी। इसलिए दादा महाराज का यह मानना स्वाभाविक था कि कुछ बड़ा होने की योजना बनाई जा रही है। आप्टे भी किसी बड़ी घटना की ओर इशारा कर रहा था, जिसे वह उस समय प्रकट नहीं करना चाहता था।'
दाफ्तरी ने फिर आमचेकर की गवाही का हवाला दिया। 'यह आरोप लगाया गया है कि नागरवाला ने अपने प्रभाव का इस्तेमाल करके आमचेकर को नौकरी दिलवाई। आमचेकर से जिरह के दौरान यह सवाल पूछा जाना चाहिए था, लेकिन बचाव पक्ष के वकीलों ने ऐसा नहीं किया। नागमोडे, शेलार और खरात ने बैज द्वारा दी गई सामग्री का जिक्र किया है। कई गवाहों ने गवाही दी है कि उन्होंने 17 से 20 जनवरी के बीच आरोपियों को दिल्ली में देखा था। उस शाम सुलोचना देवी ने भी गोडसे, आप्टे, बैज और मदनलाल को देखा था। सुलोचना ने वास्तव में मदनलाल को गन कॉटन बम की बत्ती जलाते हुए देखा था। बम विस्फोट केवल मदनलाल का काम नहीं था। विस्फोट के समय उस दिन प्रार्थना सभा स्थल पर सभी आरोपियों की उपस्थिति, बैज की गवाही के साथ-साथ कई गवाहों की गवाही से यह साबित होता है कि महात्मा गांधी की हत्या की एक बड़ी साजिश रची गई थी।'

दाफ्तरी ने फिर छोटूराम का जिक्र किया, जिसके बारे में आरोप था कि उसने पुलिस के दबाव में आकर अपना जुर्म कबूल किया था; हालांकि, यह नहीं बताया गया कि उस पर दबाव क्यों डाला गया था। 4 दिसंबर 1948: दफ्तरी ने अपना सारांश जारी रखा। उन्होंने बिरला हाउस के संतरी, भुरसिंह की गवाही का हवाला दिया, जिसने 20 तारीख की शाम को प्रार्थना सभा स्थल पर नाथूराम गोडसे, मदनलाल, बैज और गोपाल गोडसे को देखा था। उसने मदनलाल द्वारा गिरफ्तारी के समय पहने गए कोट की भी पहचान की थी, जिसे प्रामाणिक साक्ष्य का हिस्सा बनाया गया था। 'मदनलाल ने अदालत में दिए गए अपने लिखित बयान में कोट का कोई जिक्र नहीं किया है। लेकिन पूछताछ किए जाने पर उसने जवाब दिया कि गिरफ्तारी के समय उसने वह कोट नहीं पहना था। हालांकि, जब पुलिस ने एक हथगोले के साथ कोट जब्त किया था, तब मजिस्ट्रेट साहनी और सब-इंस्पेक्टर दासवंदा सिंह मौजूद थे।'
'आप्टे ने स्वीकार किया है कि वह 20 जनवरी की शाम को प्रार्थना सभा में गया था; उसका कहना है कि वह टैक्सी में नहीं बल्कि निजी कार में था। बिरला हाउस जाते समय उसने बैज और शंकर को पैदल चलते देखा, इसलिए वह रुका और उनसे कार में बैठने और उसके साथ चलने के लिए कहा। बचाव पक्ष जिरह के दौरान इस गवाही को संतोषजनक ढंग से साबित करने में विफल रहा है। कई अन्य गवाहों ने भी 20 तारीख की शाम को प्रार्थना सभा स्थल पर आरोपियों को देखने की गवाही दी है। इससे यह निर्विवाद रूप से साबित होता है कि वे एक सामान्य उद्देश्य की प्राप्ति के लिए सभा स्थल पर मौजूद थे।'
दाफ्तरी ने शरीफ होटल और मरीना होटल के गवाहों की गवाही का हवाला देते हुए दिल्ली में नाथूराम गोडसे, नारायण आप्टे, करकरे, बैज, अमचेकर और गोपाल गोडसे की उपस्थिति और उनके ठहरने के

स्थानों को स्थापित किया, जिससे यह संकेत मिलता है कि वे एक सामान्य उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए दिल्ली में एकत्रित हुए थे।
विस्फोट के बाद, आप्टे और नथुराम गोडसे कानपुर चले गए; बैज और शंकर बॉम्बे और फिर पुणे के लिए रवाना हो गए; और करकरे और गोपाल गोडसे दिल्ली के फ्रंटियर हिंदू होटल गए, जिसकी पुष्टि होटल के प्रबंधक ने की है। गोपाल गोडसे ने जानबूझकर फ्रंटियर हिंदू होटल के अतिथि रजिस्टर में गलत समय दर्ज किया। यह संभव है कि 20 जनवरी की दोपहर को जब बैज मरीना होटल के कमरा नंबर 40 के बाथरूम में गन कॉटन विस्फोटकों में फ्यूज लगा रहा था, तो वह गोपाल और नथुराम गोडसे के बीच हुई बातचीत को देख नहीं पाया और इसलिए उसने अपनी गवाही में इसका जिक्र नहीं किया।
6 दिसंबर 1948: अपने अंतिम बयान के पाँचवें दिन दाफ्तरी ने कहा: 'घटनाक्रम से यह स्पष्ट होता है कि गांधी की हत्या की साजिश निश्चित रूप से रची गई थी। पाँच आरोपियों ने स्वीकार किया है कि वे 20 तारीख की शाम को विभिन्न कारणों से बिड़ला हाउस गए थे। मुझे यह समझ नहीं आता कि वे सभी बिना किसी योजना या पूर्व समझौते के लगभग एक साथ बिड़ला हाउस कैसे पहुँच गए।'
यह निर्विवाद रूप से सिद्ध हो चुका है कि आरोपी हथियारों, बमों और विस्फोटकों की खरीद-बिक्री में लिप्त थे। सभी घटनाओं को एक साथ देखने पर एक व्यापक षड्यंत्र का अस्तित्व स्थापित होता है। साक्ष्यों के साथ-साथ यह भी सिद्ध हुआ है कि आप्टे, नाथूराम गोडसे, करकरे और मदनलाल सभी एक समान विचारधारा के अनुयायी थे। वे सभी गांधी के दर्शन के विरोधी थे।
जैन की गवाही का हवाला देते हुए उन्होंने कहा, 'मदनलाल ने भी स्वीकार किया है कि डॉ. जैन उन्हें जानते थे। यह पूरी तरह संभव

है कि अपनी कम उम्र और आवेगपूर्ण स्वभाव के कारण मदनलाल ने अहमदनगर में अपने कारनामों, वहां जमा किए गए हथियारों के जखीरे और महात्मा गांधी की हत्या की साजिश में अपनी संलिप्तता के बारे में डॉ. जैन को शेखी मारी हो। अहमदनगर में अपने कारनामों के सिलसिले में ही उनकी मुलाकात सावरकर से हुई थी और सावरकर ने उनकी सराहना करते हुए उनकी पीठ थपथपाई थी। डॉ. जैन एक प्रोफेसर और शांतिप्रिय व्यक्ति हैं। उनका हथियारों, बमों और विस्फोटकों से कोई लेना-देना नहीं है। वे मदनलाल के खिलाफ झूठी गवाही क्यों देंगे, जिन्हें वे जानते थे और जिनसे उन्हें स्नेह था?'
दाफ्तरी ने कहा कि बचाव पक्ष ने जैन की याददाश्त पर संदेह पैदा करने की कोशिश की, यह कहकर कि उन्हें बॉम्बे प्रांत के राज्यपाल का नाम और उनके पदभार ग्रहण करने की तारीख याद नहीं थी। बचाव पक्ष डॉ. जैन की याददाश्त पर संदेह पैदा करने के लिए उनकी इस सामान्य ज्ञान की कमी का फायदा उठा रहा था। डॉ. जैन, अंगद सिंह और मोरारजी देसाई की गवाही से यह निष्कर्ष निकलता है कि महात्मा गांधी की हत्या की एक सुनियोजित साजिश रची गई थी, और यह 20 जनवरी 1948 से पहले ही तैयार हो चुकी थी।
अपनी दलीलें जारी रखते हुए दफ्तारी ने कहा, '23 जनवरी 1948 के बाद आप्टे और गोडसे अलग-अलग फर्जी नामों से कई होटलों में ठहरते रहे। आप सभी को यह समझना चाहिए कि उन्होंने फर्जी नामों का इस्तेमाल क्यों किया। 25 जनवरी को आप्टे, गोडसे, करकरे और गोपाल गोडसे को वसंत जोशी के घर पर देखा गया था। आप्टे 5 से 13 फरवरी तक वसंत जोशी के घर पर रुके थे। बचाव पक्ष ने आरोप लगाया है कि जोशी ने पुलिस के दबाव में गवाही दी। गवाह ने जिस सरल और स्पष्ट तरीके से गवाही दी है, उसे ध्यान में रखना चाहिए।'

बैज एक रिवॉल्वर लेकर आया और गोपाल गोडसे दूसरी। दोनों रिवॉल्वर खराब थीं। इसलिए दीक्षित महाराज से अच्छी रिवॉल्वर उपलब्ध कराने की मांग की गई। अगर वे बंबई में रिवॉल्वर हासिल करने में सफल हो जाते, तो ग्वालियर क्यों जाते? बंबई में अच्छी रिवॉल्वर न मिलने के कारण ही वे डॉ. परचुरे की मदद से रिवॉल्वर लेने ग्वालियर गए थे।
ग्वालियर में उनके आगमन के बारे में दो मत हैं। (1) वे 27 जनवरी 1948 को रात 9.30 बजे ग्वालियर पहुंचे; और (2) वे 28 जनवरी को भोर में ग्वालियर पहुंचे। लेकिन अभियोजन पक्ष के गवाहों, दो तांगा चालकों ने अपनी गवाही में कहा है कि उन्होंने 27 जनवरी की आधी रात के आसपास आरोपियों को डॉ. परचुरे के घर पहुंचाया था। ग्वालियर के एक मजिस्ट्रेट की उपस्थिति में दर्ज किए गए इकबालिया बयान का हवाला देते हुए, दफ्तरी ने कहा, 'डॉ. परचुरे ने भी अपने इकबालिया बयान में कहा है कि आप्टे और गोडसे 27 जनवरी 1948 को रात 11.30 बजे एक कारगर रिवॉल्वर प्राप्त करने के इरादे से उनके घर आए थे।'
'बचाव पक्ष ने आरोप लगाया है कि ग्वालियर के सभी गवाहों ने पुलिस के दबाव में गवाही दी थी। इनमें से काले, खीर और गोयल से नाथूराम के वकील ने जिरह भी नहीं की। इससे पता चलता है कि "पुलिस के दबाव में गवाही देने" का उनका आरोप कितना निराधार है।' इसके बाद उन्होंने 29 जनवरी 1948 को दिल्ली रेलवे स्टेशन पर मौजूद गवाहों का जिक्र किया, जिन्होंने बताया था कि गांधीजी की हत्या वाले दिन नाथूराम गोडसे, नारायण आप्टे और विष्णु करकरे दिल्ली में मौजूद थे। '30 जनवरी से 2 फरवरी के बीच करकरे की गतिविधियों के बारे में जानकारी नहीं है। लेकिन अगर यह मान लिया जाए कि

करकरे ने दिल्ली से बॉम्बे तक ट्रेन से यात्रा की थी, तो वे उन दिनों यात्रा कर रहे होंगे।'
7 दिसंबर 1948: दफ्तरी ने अदालत को 30 जनवरी से लेकर 14 फरवरी 1948 को बॉम्बे पुलिस द्वारा आप्टे और करकरे की गिरफ्तारी तक की गतिविधियों के बारे में बताया। मदनलाल की गिरफ्तारी के समय बरामद कोट का जिक्र करते हुए दफ्तरी ने कहा, 'मदनलाल ने आरोप लगाया है कि वह कोट, जिसे प्रामाणिक साक्ष्य का हिस्सा बनाया गया है, वह नहीं है जो उसने बम विस्फोट के बाद गिरफ्तारी के समय पहना था। आप्टे को जिस कमरे में रखा गया था, वहां से बरामद पतलून से पता चलता है कि उसे पुणे के डबके एंड संस में सिला गया था। डबके ने इसकी पुष्टि की है। लेकिन पुलिस अधिकारियों का बयान बिल्कुल अलग है।'
आप्टे का दावा है कि उन्होंने सूट मुंबई के शरणार्थी शिविर में रह रहे शरणार्थियों को दान कर दिया था और उन्हें नहीं पता कि पुलिस को यह कहाँ से मिला। अगर अपोलो होटल से उनकी गिरफ्तारी के समय सूट जब्त नहीं किया गया था, तो सीआईडी कार्यालय में उनके पास सूट और पतलून कैसे पहुँची? यह साबित हो चुका है कि हिरासत के दौरान आप्टे को उनके रिश्तेदारों द्वारा लाए गए कपड़े पहनने की अनुमति दी गई थी, जिनकी जाँच उन्हें देने से पहले नहीं की गई थी। जाँच के दौरान पता चला कि मदनलाल से बरामद कोट से मेल खाने वाली पतलून आप्टे की पतलून में थी, इसलिए मुंबई स्थित सीआईडी कार्यालय में आप्टे के हिरासत कक्ष की तलाशी ली गई और पतलून बरामद की गई।
'आप्टे की गवाही संदेह पर आधारित है। आप्टे और मदनलाल एक-दूसरे को 20 जनवरी से बहुत पहले से जानते थे। यह मानना बेहद जटिल है कि आप्टे मदनलाल को शरणार्थी के रूप में जानते थे और उन्होंने उसे

अपना कोट पहनने के लिए दिया था, जबकि पतलून आप्टे के पास ही रह गई। यह मानना भी बहुत मुश्किल है कि पुलिस ने मदनलाल के पास कोट रखा और दावा किया कि उन्होंने उसे उसकी गिरफ्तारी के समय बरामद किया; फिर उसी कोट से मिलती-जुलती पतलून एक ट्रंक में रख दी और संयोग से उसे आप्टे के कमरे में "ढूंढ" लिया। यह सब बेतुका लगता है।'
'बचाव पक्ष ने अभियोजन पक्ष के दावों को गलत साबित करने की कोशिश नहीं की है, इसलिए अभियोजन पक्ष के बयान को ही सत्य माना जाना चाहिए।'
दफ्तरी ने आगे कहा कि जांच के दौरान आरोपियों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाते समय और एक लॉकअप से दूसरे लॉकअप में स्थानांतरित करते समय उनकी पहचान गुप्त रखने के लिए हर संभव सावधानी बरती गई। 'एक-दो व्यक्तियों को छोड़कर, बचाव पक्ष ने इस बात की शिकायत नहीं की है कि पहचान परेड से पहले आरोपियों को गवाहों के सामने लाया गया था। गोडसे ने स्वयं बताया कि जब उसे तुगलक रोड पुलिस लॉकअप में रखा गया था, तो उसके दरवाजे पर एक कंबल लटका दिया गया था। लेकिन गोडसे ने शिकायत की कि टैक्सी चालक सुरजीत सिंह को उसे देखने का मौका मिला था। बचाव पक्ष के वकील ने इस संबंध में गवाह सुरजीत सिंह से कोई पूछताछ नहीं की।' 'बचाव पक्ष ने दिल्ली के मजिस्ट्रेट लाला किशनचंद से पहचान परेड आयोजित करने की व्यवस्था के बारे में कोई सवाल नहीं पूछा और उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा कि किसी भी पुलिस अधिकारी को वहां उपस्थित रहने की अनुमति नहीं थी।' उन्होंने आगे कहा कि यदि अभियोजन पक्ष के गवाहों की गवाही को सत्य मान लिया जाए, तो इसमें कोई संदेह नहीं रह जाएगा कि 20 और 30 जनवरी की घटनाएं एक ही साजिश का हिस्सा थीं। नाथूराम गोडसे पर लगे आरोपों पर

विस्तार से बताते हुए दफ्तरी ने कहा, 'गोडसे ने अपने बयान में गांधीजी की हत्या स्वीकार की है। कानून किसी को भी दूसरे की हत्या करने की अनुमति नहीं देता। हत्या को उचित ठहराने वाला कोई भी तर्क कानून के अनुसार अर्थहीन है। गोडसे ने बार-बार पाकिस्तान को 55 करोड़ रुपये के भुगतान का जिक्र किया है। 20 और 30 जनवरी के बीच कोई महत्वपूर्ण घटना नहीं घटी जिसके कारण नाथूराम गोडसे क्रोधित होकर गांधीजी की हत्या कर बैठा। यह एक पूर्व नियोजित, योजनाबद्ध और स्वैच्छिक कृत्य है। यह एक अमानवीय, अन्यायपूर्ण और जानबूझकर की गई हत्या है।'
दाफ्तरी ने नथुराम गोडसे द्वारा आप्टे को लिखे पत्र का हवाला दिया, जिसमें उन्होंने दावा किया था कि उनका धैर्य अब सहन करने की सीमा से परे हो गया था। 'मैं पूछता हूँ कि 20 और 30 तारीख के बीच ऐसा क्या हुआ जिसने नथुराम को इस हद तक क्रोधित कर दिया? साजिश के अस्तित्व के संबंध में अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य भी बहुत ठोस हैं। गोडसे ने यह साबित करने का भरसक प्रयास किया है कि वह अन्य आरोपियों को बचाने के लिए अकेले ही कार्रवाई कर रहा था।'
उन्होंने अदालत से अपील की कि जिरह के दौरान बचाव पक्ष द्वारा पूछे गए सवालों के तरीके और नाथूराम गोडसे के बयान को ध्यान में रखा जाए। 'मुंबई, पुणे और दिल्ली में आरएसएस और हिंदू महासभा के स्वयंसेवकों की कोई कमी नहीं है, इसलिए गोडसे का यह दावा कि वह स्वयंसेवकों की भर्ती के लिए ग्वालियर गया था, बेतुका है!' दफ्तरी ने दावा किया कि हत्या के बाद नाथूराम गोडसे द्वारा अपनी नब्ज और हृदय गति की चिकित्सकीय जांच कराने पर जोर देना केवल दिखावे की बात थी। उन्होंने उन गवाहों की गवाही का हवाला दिया जिन्होंने दूसरे आरोपी नारायण आप्टे को मुंबई, दिल्ली और

ग्वालियर में देखा था। उन्होंने आप्टे के बयान के कुछ अंश पढ़कर सुनाए और उसमें मौजूद स्पष्ट विसंगतियों को उजागर किया। दफ्तरी ने आप्टे के इस दावे को खारिज कर दिया कि गांधी की हत्या के समय वह दिल्ली में नहीं बल्कि मुंबई में था, जिसकी पुष्टि उसकी गिरफ्तारी के समय उसके पास से मिले टिकटों से हुई थी।
8 दिसंबर 1948: दाफ्तरी ने आप्टे के बयान का हवाला दिया, जिसमें उन्होंने कहा था कि पुलिस ने उन्हें कुछ दस्तावेज़ दिखाए थे और उनसे पूछा था कि क्या गांधी की हत्या में उन्हें ब्रिटेन या रूस से कोई मदद मिली थी। उन्होंने कहा कि बचाव पक्ष ने जिरह के दौरान अभियोजन पक्ष के किसी भी गवाह से इस पहलू पर सवाल नहीं किया था।
आरोपी ने बताया कि 31 तारीख को आप्टे ने मनोरमा साल्वी से बॉम्बे से दिल्ली टेलीग्राम भिजवाया था। इस पर दाफ्तरी ने कहा, 'बचाव पक्ष ने संबंधित टेलीग्राम पेश नहीं किया है। दूसरी बात, आप्टे का कहना है कि वह टेलीग्राम कार्यालय में थे, लेकिन उन्होंने साल्वी से टेलीग्राम भिजवाया, जो बहुत अजीब लगता है।' उन्होंने आप्टे के उस बयान का हवाला दिया जिसमें उन्होंने कहा था कि 31 जनवरी को उन्होंने नाथूराम के बचाव के संबंध में अपने कुछ वकील मित्रों से सलाह ली थी। 'अगर यह सच है, तो बचाव पक्ष ने आप्टे की बेगुनाही साबित करने के लिए वकीलों को गवाह के तौर पर क्यों नहीं बुलाया? यह दावा किया गया है कि 30 और 31 जनवरी को आप्टे और करकरे बॉम्बे में अपने मित्रों से मिलने गए थे। क्या उन्हें एक भी ऐसा मित्र नहीं मिला जो उनके दावे का समर्थन कर सके? अब अदालत को यह तय करना है कि अभियोजन पक्ष द्वारा पेश किए गए गवाह पर्याप्त हैं या नहीं।' आप्टे ने उक्त तिथियों पर बॉम्बे में अपनी उपस्थिति के बारे में एक मनगढ़ंत कहानी गढ़ने

की कोशिश की है और बचाव पक्ष के बयानों से यह तथ्य साबित नहीं हो पाया है कि दोनों बॉम्बे में थे।
'गोडसे द्वारा आप्टे को लिखा गया पत्र बॉम्बे में आप्टे की उपस्थिति साबित करने के लिए पर्याप्त नहीं है। फिर से, पत्र की सामग्री की सत्यता का समर्थन या प्रमाण देने के लिए कोई गवाह पेश नहीं किया गया है। लिफाफे पर 30 जनवरी की डाक टिकट भी नहीं है।' करकरे की भूमिका के बारे में अभियोजन पक्ष द्वारा पेश किए गए कई गवाहों की गवाही के बारे में बोलते हुए उन्होंने कहा, 'करकरे महात्मा गांधी की हत्या की साजिश में सहयोगी है। मदनलाल ने अपने बयान में स्वीकार किया है कि वह करकरे के साथ डॉ. जे.सी. जैन से मिलने गया था। अभियोजन पक्ष के कई गवाहों ने भी कहा है कि उन्होंने करकरे को साजिशकर्ताओं के साथ देखा था। मदनलाल ने यह भी स्वीकार किया है कि उसने दिल्ली और अहमदनगर में प्रदर्शनों में भाग लिया था। यह मानना मुश्किल है कि मदनलाल ने शरणार्थियों की कठिनाइयों की ओर गांधीजी का ध्यान आकर्षित करने के लिए बम विस्फोट किया था। वह प्रार्थना सभा में खड़े होकर अपनी शिकायतें जोर से बोल सकता था और गांधीजी निश्चित रूप से उसे सुनते। शंकर ने स्वीकार किया है कि वह बैज के साथ था। वह 20 जनवरी को अन्य आरोपियों के साथ बिड़ला हाउस गया था।' यह बैज की गवाही की पुष्टि करता है। लेकिन शंकर ने इस बात से इनकार किया है कि उसे उनके इरादों की जानकारी थी। उसने बैज की इस गवाही को स्वीकार नहीं किया है कि उसने शंकर को योजना के बारे में तब बताया था जब वे मरीना होटल में अपने कमरे से बिरला हाउस जा रहे थे। और यह मानना असंभव है कि होटल में विस्फोटकों को संभालने के बाद भी, उसे इस बात की जानकारी नहीं थी कि उनका इस्तेमाल किस लिए किया जाएगा। विस्फोटक उसे बैज का नौकर होने

के कारण नहीं दिए गए थे, बल्कि इसलिए दिए गए थे क्योंकि वह साजिशकर्ताओं में से एक था। इस प्रकार शंकर को बिरला हाउस में वे क्या करने वाले थे, इसकी पूरी जानकारी थी।
गोपाल गोडसे के खिलाफ अभियोजन पक्ष द्वारा जुटाए गए सबूतों के बारे में बात करते हुए दफ्तरी ने कहा, 'गवाहों के बयानों से साबित होता है कि गोपाल गोडसे भी साजिश में शामिल था। अगर यह मान लिया जाए कि उसने अपनी छुट्टी का पूरा समय अपने गांव में बिताया, तो बचाव पक्ष आसानी से गांव से गवाह पेश करके इस बयान का समर्थन कर सकता था, लेकिन ऐसा नहीं किया गया।' सावरकर के खिलाफ गवाहियों के बारे में बात करते हुए दफ्तरी ने कहा, 'सावरकर की मुलाकात बैज से 1944-45 में हुई थी। सावरकर मुस्लिम विरोधी था, हिंदू महासभा का अध्यक्ष था और हिंदू सम्मेलन की अध्यक्षता भी कर चुका था। एक गवाह ने गवाही दी है कि नाथूराम गोडसे और नारायण आप्टे 14 जनवरी की शाम को कार से सावरकर के घर गए थे। बैज ने भी अपनी गवाही में इसका जिक्र किया है। उसकी गवाही के अनुसार, सावरकर ने गांधीजी की हत्या का काम आप्टे और गोडसे को सौंपा था। इससे पता चलता है कि वह भी साजिश में शामिल था। सावरकर के खिलाफ आरोप तथ्यों और कानून के प्रावधानों पर आधारित हैं।'
इसके बाद, दफ्तरी ने विभिन्न गवाहों के बयानों के अंश पढ़े, जिनमें परचुरे और उनके राजनीतिक विचारों के बारे में कई बातें कही गई थीं। उन्होंने बताया कि एक गवाह यह साबित करता है कि गोडसे और आप्टे परचुरे के घर पर रुके थे और वहीं उन्होंने पिस्तौल खरीदी थी। परचुरे के इकबालिया बयान का हवाला देते हुए उन्होंने कहा, 'यह बयान उनके अपराध की स्वीकारोक्ति है। अगर अदालत संतुष्ट है कि बयान कानूनी और वैध है, तो यह कहना पर्याप्त होगा कि यह दबाव में नहीं लिया गया है।' दफ्तरी ने अटल

के बयान के कुछ अंश पढ़े, जिनमें कहा गया था कि इसे दर्ज करने से पहले सभी कानूनी प्रक्रियाओं और औपचारिकताओं का पालन किया गया था। 'यह मानना मुश्किल है कि हिरासत में रहते हुए परचुरे को पुलिस द्वारा उत्पीड़न और दबाव का शिकार बनाया गया था। अगर यह सच होता, तो बचाव पक्ष के वकीलों ने इस संबंध में ग्वालियर के गवाहों से पूछताछ क्यों नहीं की? अगर परचुरे बीमार थे, तो उनका चिकित्सकीय उपचार किया गया होता, और यह किले में मौजूद रजिस्टर में दर्ज होता। बचाव पक्ष अपने दावे के समर्थन में रजिस्टर पेश कर सकता था। ऐसा क्यों नहीं किया गया?' दाफ्तरी ने कहा, 'यह इस बात की स्वीकृति है कि परचुरे ने अपराध किया और उसने आप्टे और गोडसे को महात्मा गांधी की हत्या में मदद की।'
अंत में उन्होंने बचाव पक्ष द्वारा दिए गए इस तर्क का उल्लेख किया कि चूंकि परचुरे ग्वालियर रियासत के नागरिक थे, इसलिए विशेष न्यायालय उन पर मुकदमा चलाने के योग्य नहीं था। उन्होंने कहा, 'डॉ. परचुरे पुणे निवासी एस.जी. परचुरे के पुत्र हैं। इस प्रकार, वे ब्रिटिश भारत के नागरिक हैं। डॉ. परचुरे की नागरिकता की पुष्टि के लिए, उनके पिता के जन्मस्थान का पता लगाना आवश्यक है।' दाफ्तरी ने इस संबंध में कुछ उच्च न्यायालयों के निर्णयों का हवाला दिया।
9 दिसंबर 1948: 'डॉ. परचुरे पर उन्हीं कानूनों के तहत मुकदमा चलाया जा सकता है, जो किसी भी भारतीय नागरिक पर लागू होते हैं। जब तक वे स्थायी निवासी नहीं बन जाते और नागरिक के रूप में अन्य अधिकार प्राप्त नहीं कर लेते, तब तक वे भारतीय नागरिक बने रहते हैं। उनके पिता पुणे में जन्म और शिक्षा प्राप्त करने के कारण ब्रिटिश भारत के नागरिक थे। ब्रिटिश कानून के अनुसार, ब्रिटिश क्षेत्र में जन्मा व्यक्ति ब्रिटिश नागरिक बन जाता है। ऐसे

व्यक्ति की संतान भी ब्रिटिश नागरिक बन जाती है। इस प्रकार, ब्रिटिश भारत का कोई भी नागरिक, चाहे वह रियासतों में रहने लगे, ब्रिटिश भारत का नागरिक ही रहता है। नए डोमिनियन के गठन पर, भारत का अर्थ डोमिनियन ऑफ इंडिया हो जाता है, जिसमें ब्रिटिश भारत और रियासतें शामिल होती हैं। यदि हम यह भी मान लें कि डॉ. परचुरे ग्वालियर राज्य के नागरिक हैं, तब भी वे भारत के नागरिक ही रहते हैं क्योंकि ग्वालियर की रियासत भारतीय डोमिनियन में शामिल हो गई है।' अपने इस कथन की पुष्टि के लिए उन्होंने विभिन्न दस्तावेजों और पत्रों का हवाला दिया, जिन्हें अदालत के रिकॉर्ड में प्रामाणिक साक्ष्य के रूप में स्वीकार किया गया। दफ्तरी ने एस.जी. परचुरे की जीवनी के अंश भी उद्धृत किए। 'मेजर जल की जीवनी और गवाही, तथा विभिन्न दस्तावेजों में उल्लिखित जानकारी से एस.जी. परचुरे के बारे में कुछ तथ्य सिद्ध होते हैं। भले ही लेखक की मृत्यु हो चुकी है, न्यायालय इसे प्रामाणिक साक्ष्य के रूप में स्वीकार कर सकता है, क्योंकि इसमें सही जन्म स्थान और जन्म तिथि दी गई है।' बॉम्बे से दिल्ली अवैध रूप से हथियार ले जाने के आरोप का जिक्र करते हुए दफ्तरी ने कहा, 'गवाहों ने न्यायालय में गवाही दी है कि उन्होंने आरोपी को हथियार, बम और विस्फोटक ले जाते हुए देखा था। यद्यपि अभियोजन पक्ष इस आरोप को साबित करने के लिए और भी कई गवाह पेश कर सकता था, लेकिन हमने ऐसा नहीं किया क्योंकि अन्य सभी गवाह केवल वही दोहराते जो गवाह पहले ही न्यायालय में शपथ लेकर कह चुके हैं। अभियोजन पक्ष का मानना है कि उसने आरोपी के खिलाफ लगाए गए सभी आरोपों को सफलतापूर्वक साबित कर दिया है। अभियोजन पक्ष से यह पूछा जा सकता है कि दादा महाराज और दीक्षित महाराज को भी आरोपी क्यों नहीं बनाया गया। ऐसा इसलिए है क्योंकि उन्होंने अपराध

में प्रत्यक्ष रूप से भाग नहीं लिया था, और इसलिए उन्हें छोड़ दिया गया है।' उन्होंने अपने बयान के समर्थन में कुछ उच्च न्यायालय के फैसलों का भी हवाला दिया।
अंत में, आठ दिनों तक चली अपनी दलीलों को समाप्त करते हुए दाफ्तरी ने कहा, 'मामले को किसी भी दृष्टिकोण से देखें और इस तथ्य को ध्यान में रखें कि अभियोजन पक्ष ने अकाट्य सबूत और विश्वसनीय गवाह पेश किए हैं, अदालत को यह स्वीकार करना होगा कि अभियोजन पक्ष ने सभी आरोपियों का अपराध साबित कर दिया है। उनके खिलाफ सभी आरोप संदेह से परे सिद्ध हो चुके हैं। माननीय न्यायाधीश, अदालत को आरोपियों को उनके द्वारा लगाए गए आरोपों के अनुसार दोषी घोषित करना चाहिए।'
10 दिसंबर 1948: बचाव पक्ष की दलीलें आप्टे के वकील मेंगले के साथ शुरू हुईं।
'मुझे उम्मीद है कि अभियोजन पक्ष द्वारा बिछाई गई बाधाओं को पार करते हुए मैं बचाव पक्ष की नाव को सुरक्षित बंदरगाह तक ले जाऊंगा। यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि बचाव पक्ष ने आरोप पत्र में मूल रूप से सूचीबद्ध 250 गवाहों में से केवल 149 को ही पेश किया है।'
'आपराधिक मामले में, आरोप साबित करने का भार अभियोजन पक्ष पर होता है। अभियोजन पक्ष ने आरोप लगाया है कि बचाव पक्ष ने अपने पक्ष को मजबूत करने के प्रयास में आरोपियों के बयानों में कई अतिरिक्त बातें जोड़कर उन्हें पुख्ता किया है। यह भी पूछा गया है कि बचाव पक्ष ने अपने तर्कों को मजबूत करने के लिए किसी भी गवाह को क्यों नहीं बुलाया। अगर हम एक पल के लिए भी अभियोजन पक्ष द्वारा आरोपियों पर लगाए गए सभी आरोपों को सही मान लें, तो भी अभियोजन पक्ष को सभी आरोपों को संदेह से परे साबित करना होगा

और गवाह पेश करने होंगे। आपराधिक मुकदमे में बचाव पक्ष को कुछ भी साबित करने की आवश्यकता नहीं होती है। यदि विशेष परिस्थितियों के कारण कोई आरोपी जिरह के दौरान उपस्थित नहीं हो पाता है, तो क्या यह उसे दोषी ठहराने का पर्याप्त आधार बन जाता है? आरोपियों के बयान और बचाव पक्ष द्वारा अभियोजन पक्ष के गवाहों की जिरह, बचाव पक्ष के दावों को साबित करने के लिए पर्याप्त से अधिक हैं। मैं अपने तर्कों से साबित करूँगा कि मेरे मुवक्किल ने जो कहा है वह सत्य है।' उन्होंने सावरकर के घर से मिले पत्र और 1938 में आप्टे द्वारा अहमदनगर में राइफल प्रशिक्षण क्लब की स्थापना का जिक्र किया। मावलंकर और एन.वी. गाडगिल ने आप्टे के इस कार्य की प्रशंसा की थी। उन्होंने बताया कि उनके मुवक्किल द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान सहायक तकनीकी भर्ती अधिकारी थे। 1944 में, वे हिंदू महासभा की विचारधारा का प्रचार करने वाली पत्रिका अग्रानी के प्रबंधक बने, जिसके संपादक नाथूराम गोडसे थे। उन्होंने यह स्वीकार किया कि आप्टे ने पंचगनी में गांधी के विरुद्ध विरोध प्रदर्शन का नेतृत्व किया था और उनकी प्रार्थना सभाओं को बाधित करने का प्रयास किया था।
1947-48 के दौरान देश की सामान्य स्थिति के बारे में बात करते हुए, मेंगले ने कहा, 'देश का एक दर्दनाक विभाजन हुआ। पाकिस्तान में फंसे हिंदुओं और सिखों को असहनीय कष्टों का सामना करना पड़ा, कश्मीर पर हमला हुआ और आक्रमण का प्रयास किया गया। भारत सरकार ने शुरू में पाकिस्तान को 55 करोड़ रुपये देने से इनकार कर दिया क्योंकि उन्हें डर था कि पाकिस्तान इसका इस्तेमाल कश्मीर पर आक्रमण के लिए करेगा। लेकिन गांधीजी के उपवास पर बैठने के कारण उन्हें झुकना पड़ा। उस समय आप्टे पुणे में थे।

उन्होंने महसूस किया कि यह कार्रवाई अक्षम्य है और इसलिए उन्होंने गांधीजी की दादागिरी भरी रणनीति के खिलाफ शांतिपूर्ण प्रदर्शन करके अपना गुस्सा जाहिर करने का फैसला किया, और दिल्ली में उनकी प्रार्थना सभा को बाधित किया।' मेंगले ने अदालत से कानूनी दृष्टिकोण से दो बातों को ध्यान में रखने का अनुरोध किया: (1) भारत का विभाजन; और (2) पाकिस्तान में हिंदुओं का उत्पीड़न।
उन्होंने अदालत का ध्यान उन अभियोजन पक्ष के गवाहों की गवाही की ओर दिलाया जिन्होंने गांधीजी के अनशन और उस समय के समाचार पत्रों में प्रकाशित खबरों का जिक्र किया था। 'पाकिस्तान को पैसे के भुगतान ने आप्टे को दिल्ली में प्रदर्शन करने के लिए प्रेरित किया। प्रस्तावित प्रदर्शन के लिए धन और स्वयंसेवकों को इकट्ठा करने के उद्देश्य से वह 14 जनवरी को नाथूराम गोडसे के साथ बंबई गए थे।'
अदालत में कोई गवाह पेश नहीं किया गया जिससे यह साबित हो सके कि आप्टे और गोडसे 14 से 17 जनवरी के बीच बॉम्बे में कहां ठहरे थे। केवल एक ही गवाह था जो इस पर प्रकाश डाल सकता था—सी ग्रीन होटल के प्रबंधक वाडिया। हैरानी की बात है कि अभियोजन पक्ष ने उन्हें गवाही देने के लिए नहीं बुलाया। बैज ने अपनी गवाही में कहा कि आप्टे और गोडसे 14 तारीख की रात को दीक्षित महाराज के घर गए थे। अगर वाडिया को पेश किया जाता, तो वे गवाही देते कि वे उस समय होटल में थे।
इसके बाद मेंगल ने कई गवाहों की गवाही के अंशों का इस्तेमाल करते हुए यह साबित करने की कोशिश की कि आप्टे और गोडसे दिल्ली में प्रस्तावित प्रदर्शन के लिए धन और स्वयंसेवक जुटाने के लिए बॉम्बे गए थे। उन्होंने 17 तारीख को आप्टे और गोडसे के सावरकर

सदन दौरे और वहां हुई घटनाओं के बारे में बैज की गवाही को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि यह अस्पष्ट और विरोधाभासी है और इस पर भरोसा नहीं किया जा सकता।
अपनी दलीलें जारी रखते हुए मेंगले ने कहा, 'अभियोजन पक्ष गवाहों के बयानों के माध्यम से यह साबित करने में विफल रहा है कि महात्मा गांधी ने 17, 18 और 19 जनवरी 1948 को प्रार्थना के बाद भाषण दिए थे या नहीं। केवल मदनलाल ने अपने बयान में यह बात कही है। एक गवाह यह साबित करता है कि गांधीजी ने 18 जनवरी को अपना उपवास तोड़ा था। यह बहुत संभव है कि उन दिनों कमजोरी के कारण उन्होंने प्रार्थना के बाद भाषण न दिए हों। आप्टे ने कहा है कि वह 20 तारीख की शाम को एक निजी कार से बिरला हाउस गए थे; बिरला हाउस जाते समय उनकी मुलाकात बैज और शंकर से हुई और उन्होंने उन्हें लिफ्ट दी। आप्टे ने प्रदर्शन नहीं किया क्योंकि लाउडस्पीकर खराब हो गए थे, कोई भी स्वयंसेवक नहीं आया था और नाथूराम गोडसे अचानक बीमार पड़ जाने के कारण नहीं आए थे। मैं पूछना चाहता हूं, आप्टे वहां से क्यों चले गए? अचानक बम विस्फोट हुआ। आप्टे को लगा कि कुछ अप्रिय होने वाला है और इसलिए वे वहां से चले गए।'
फिर मेंगले ने आप्टे के उन कार्यों का जिक्र किया जिन पर कोई विवाद नहीं था। 'आप्टे और गोडसे ग्वालियर क्यों गए थे? क्योंकि जनवरी में ग्वालियर हिंदू महासभा के अध्यक्ष डॉ. परचुरे ने मोती महल पैलेस में प्रदर्शन किया था। आरोपियों को बॉम्बे और पुणे से स्वयंसेवक जुटाने में कठिनाई हो रही थी। इसलिए उन्होंने ग्वालियर जाने का फैसला किया, इस उम्मीद में कि वहां स्वयंसेवक मिल जाएंगे। यदि अभियोजन पक्ष बचाव पक्ष के इस दावे को हास्यास्पद मानता है कि आरोपी ग्वालियर स्वयंसेवकों की

भर्ती के लिए गए थे, तो बचाव पक्ष भी अभियोजन पक्ष के इस दावे को बेतुका मानता है कि आरोपी ग्वालियर हथियार खरीदने के लिए गए थे।'
'यह दावा कैसे किया जा सकता है कि एन. राव और वी. राव काल्पनिक नाम हैं? ये नाथूराम और विनायकराव के संक्षिप्त रूप हैं। ये उनके असली नाम हैं। अभियोजन पक्ष द्वारा दावा किया गया है कि 27 जनवरी को उनके ग्वालियर पहुंचने का समय रात 11.00 या 11.30 बजे था, जो कि गलत है, क्योंकि उस समय ग्वालियर कोई ट्रेन नहीं पहुंचती।' पिस्तौल खरीदने के आरोप के संबंध में, मेंगले ने आरोप लगाया कि ग्वालियर के गवाह अविश्वसनीय थे और आरोपी के प्रति पक्षपाती थे। उन्होंने कहा, 'मधुकर काले मई 1947 के बाद से डॉ. परचुरे के घर नहीं गए हैं।' यह पूछे जाने पर कि आप्टे अपने ठिकाने को साबित करने के लिए कोई ठोस सबूत क्यों नहीं दे सके, मेंगले ने कहा, 'आप्टे 30 और 31 तारीख को शरणार्थी शिविरों में रह रहे थे, लेकिन वे किसी भी शरणार्थी को नाम से नहीं जानते थे, इसलिए उनमें से किसी को भी बुलाना संभव नहीं था।' लेकिन अदालत को यह निष्कर्ष नहीं निकालना चाहिए कि इसका मतलब यह था कि आप्टे उस जगह पर नहीं थे जहां होने का उन्होंने दावा किया था या वह कहीं और थे।'
मेंगले ने कहा, '14 फरवरी को, उनकी गिरफ्तारी के समय, आप्टे से बरामद लोकल ट्रेन के टिकट और 31 जनवरी को मुंबई से दिल्ली भेजे गए टेलीग्राम के सबूत यह साबित करने के लिए पर्याप्त हैं कि 30 और 31 जनवरी को आप्टे बॉम्बे में थे, दिल्ली में नहीं। अभियोजन पक्ष ने स्वीकार किया है कि टिकट असली हैं और चोरी के नहीं हैं; इससे यह साबित होता है कि मेरा मुवक्किल कहाँ था।'

13 दिसंबर 1948: मेंगल ने अपनी दलील जारी रखी। 'नाथूराम गोडसे द्वारा 30 तारीख को आप्टे को उनके पुणे स्थित पते पर कथित रूप से लिखे गए पत्र की लिखावट विशेषज्ञ द्वारा जांच की जानी चाहिए ताकि यह साबित हो सके कि यह वास्तव में नाथूराम द्वारा ही लिखा गया है। जिस लिफाफे में पत्र भेजा गया था, उस पर 30 जनवरी की नई दिल्ली की और 2 फरवरी की पुणे की डाक टिकट लगी हुई है। अभियोजन पक्ष का दावा है कि यह साबित नहीं हुआ है कि उक्त पत्र उसी लिफाफे में भेजा गया था। हमारा यह बयान कि पत्र अधिकारियों के हाथ न लगे इसलिए आप्टे के कार्यालय के पते पर भेजा गया था, उसे भी अविश्वास के दायरे में लाया गया है। यह पत्र निर्विवाद रूप से साबित करता है कि मेरे मुवक्किल, नारायण डी. आप्टे, हत्या के समय दिल्ली में मौजूद नहीं थे। महात्मा गांधी की हत्या केवल नाथूराम वी. गोडसे का ही काम था।' मराठी में लिखे इस पत्र में लिखा है, "आप सभी को यह पत्र पाकर आश्चर्य होगा। इससे पहले के सभी प्रदर्शन निष्फल सिद्ध हुए हैं। मैं अपने आप पर नियंत्रण खो रहा हूँ। मैं एक-दो दिन में अंतिम समाधान लागू करूँगा।" इस पर आत्मचरण ने हस्तक्षेप करते हुए कहा, "यदि यह पत्र आप्टे के भाई ने खोला होता, तो आप उन्हें अदालत में गवाही देने के लिए बुला सकते थे। आपने ऐसा कोई गवाह नहीं बुलाया। इस अदालत में तीन गवाहों ने गवाही दी है कि उन्होंने उन दिनों आप्टे को दिल्ली में देखा था। संभव है कि आप्टे दिल्ली में ही थे और गोडसे ने उनके लिए एक झूठी गवाही तैयार करने के लिए यह पत्र लिखा और भेजा।" जवाब में मेंगले ने कहा, "यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि हम अपने दावों को साबित करने के लिए कोई गवाह पेश नहीं कर सके। आप्टे के भाई ने भी गवाही देने से इनकार कर दिया। जिस पहचान परेड में सुंदरीलाल ने आप्टे की पहचान की थी, वह दिल्ली में

आयोजित नहीं की गई थी। आप्टे और गोडसे ने शिकायत की थी कि वे गवाहों के सामने बेनकाब हो गए थे, और सुंदरीलाल की गवाही संदिग्ध है।" बैज कालाबाजारी करने वाला, झूठा, बदमाश और पीठ में छुरा घोंपने वाला धूर्त है। अभियोजन पक्ष ने ओमप्रकाश और चोपड़ा को गवाही के लिए नहीं बुलाया; अगर वे बुलाते, तो बैज की गवाही बेनकाब हो जाती। अभियोजन पक्ष ने दीक्षित महाराज के नौकर को भी गवाही के लिए नहीं बुलाया। वह एक बहुत महत्वपूर्ण गवाह था। उसकी गवाही से बैज की गवाही में बहुत फर्क पड़ सकता था। अभियोजन पक्ष ने जोशी को भी नहीं बुलाया; इसके बजाय उन्होंने उसके बेटे को गवाही देने के लिए कहा, जिसका बयान सुनी-सुनाई बातों पर आधारित है। नागरवाला लाल किले में जोशी से चार-पांच बार मिला था, लेकिन उसे नहीं बुलाया गया। यदि सभी सबूतों को सच मान लिया जाए, तो दीक्षित महाराज को भी साजिशकर्ता माना जाना चाहिए और इसलिए उसकी गवाही बेकार है। बैज का 20 तारीख की सुबह बिड़ला हाउस ले जाए जाने का दावा उसकी कल्पना मात्र लगता है। चमनलाल की गवाही के अनुसार, जंगल से बरामद गोली रिवॉल्वर में इस्तेमाल के लिए है और पिस्तौल में फिट नहीं होती। मेहर सिंह का कहना है कि आरोपी जंगल में घूम रहे थे, जबकि बैज का बयान इससे बिल्कुल अलग है।
14 दिसंबर 1948: गांधी की हत्या की कोई साजिश नहीं थी और यह साबित करने के लिए कि आप्टे 30 जनवरी को दिल्ली में नहीं थे, मेंगल ने अपनी दलीलें जारी रखीं। उन्होंने कहा कि जंगल में तैनात गार्ड ने अपनी गवाही में आरोपियों के जंगल में अभ्यास करने के बारे में कुछ नहीं कहा था। 'अभियोजन पक्ष के पास इसे साबित करने के लिए कोई गवाह नहीं है। गोडसे और आप्टे ने बॉम्बे में पहचान परेड से पहले मजिस्ट्रेट ब्राउन से शिकायत की थी कि

कई गवाहों ने उन्हें देखा था। उनमें से एक मेहर सिंह थे। इस प्रकार, सिंह द्वारा आरोपियों की पहचान संदिग्ध है। बैज को सिंह के सामने गवाही देने के लिए बुलाया जाना चाहिए था, लेकिन ऐसा नहीं किया गया। इस प्रकार बचाव पक्ष महत्वपूर्ण बिंदुओं पर उनसे जिरह नहीं कर सका। साथ ही, केवल एक गार्ड को ही क्यों बुलाया गया, बाकी तीन को क्यों नहीं?'
उन्होंने मरीना होटल में आरोपियों के बीच हुई कथित बैठक का जिक्र करते हुए कहा कि यह कैसे साबित किया जा सकता है कि वहां केवल वही लोग मौजूद थे जिनका जिक्र बैज ने किया था और कोई और नहीं। बैज द्वारा लगाए गए आरोपों के अनुसार, आरोपियों द्वारा हथियारों, विस्फोटकों और बमों के वितरण और छद्म नामों को अपनाने के बारे में मेंगले ने कहा कि यह बैज की कल्पना की उपज है, क्योंकि मरीना होटल के किसी भी गवाह ने इस बयान की पुष्टि नहीं की है।
इस प्रकार, अभियोजन पक्ष के गवाहों की गवाही के विरुद्ध अपनी दलीलें समाप्त करते हुए मेंगले ने कहा, 'अभियोजन पक्ष का पूरा मामला बैज की गवाही पर टिका है, जो चरित्रहीन, आदतन झूठा है और उसकी गवाही बेकार है।' इसके बाद उन्होंने अपने मुवक्किल आप्टे के बयान का हवाला देते हुए अभियोजन पक्ष के गवाह की गवाही पर बहस की। उन्होंने कहा, 'अभियोजन पक्ष ने दादा महाराज और दीक्षित महाराज की गवाही पर भरोसा करते हुए यह साबित करने की कोशिश की है कि आप्टे ने 17 जनवरी को दादा महाराज से कहा था, "जब हम अपना काम पूरा कर लेंगे, तब तुम्हें सब पता चल जाएगा।" 26 जनवरी को आप्टे ने दादा महाराज से रिवॉल्वर की मांग की थी। यह गवाही मेरे मुवक्किल आप्टे के कुटिल स्वभाव को दर्शाने के इरादे से दी गई थी। लेकिन गवाही की सत्यता पर निर्णय लेने से पहले, दादा महाराज

के चरित्र को समझना आवश्यक है।' मेंगले ने कहा कि दादा हिंदुओं में हथियार बांटते थे ताकि वे मुसलमानों का वध कर सकें। वह चाहता था कि आप्टे उस ट्रेन को उड़ा दे जिसमें जिन्ना और लियाकत अली पाकिस्तान जा रहे थे। 'ऐसे अवैध कामों में शामिल होने के कारण दादा महाराज पुलिस की नजरों में अच्छा बने रहना चाहते थे। अपनी जान बचाने के लिए, क्या ऐसा व्यक्ति कुछ झूठ नहीं बोलेगा? अगर हम मान लें कि आप्टे और गोडसे में कम से कम कुछ बुनियादी बुद्धि तो है ही, तो क्या यह मानना सही है कि वे इतने सारे लोगों से घिरे हवाई अड्डे पर दादा महाराज जैसे व्यक्ति से ऐसी बात कहेंगे?'
दीक्षित महाराज का जिक्र करते हुए मेंगले ने कहा कि वह भी अपने भाई की तरह अवैध हथियारों का व्यापारी था और उसकी गवाही अविश्वसनीय थी।
'तो फिर आप्टे ने क्या किया?' मेंगले ने पूछा। '17 जनवरी को आप्टे हैदराबाद में आंदोलन और हिंदू राष्ट्र के लिए चंदा इकट्ठा करने निकले थे। केवल बैज ने आरोप लगाया है कि आप्टे 20 जनवरी की सुबह बिरला हाउस गए थे; और उन पर भरोसा नहीं किया जा सकता। आप्टे ने स्वीकार किया है कि वे 20 तारीख की शाम को बिरला हाउस गए थे, लेकिन केवल इसलिए कि वे खुद देखना चाहते थे कि क्या वे वहां शांतिपूर्ण प्रदर्शन कर सकते हैं। आप्टे ने टैक्सी ड्राइवर सुरजीत सिंह से कहा था, "चलो जल्दी गाड़ी स्टार्ट करो, गाड़ी स्टार्ट करो", यह बात उनकी बेगुनाही साबित करती है। बम विस्फोट बिल्कुल अप्रत्याशित था। इसने आप्टे को बुरी तरह डरा दिया था।'
हिंदू महासभा भवन के पीछे के जंगल से हथियार बरामद होने के अभियोजन पक्ष के दावे का जिक्र करते हुए, जो आप्टे द्वारा दी गई

जानकारी पर आधारित था, मेंगले ने कहा कि आप्टे पूरी तरह से पुलिस के नियंत्रण में था और पुलिस की हर मांग पूरी करता था। आप्टे के पास मिले संदूक से मिलती-जुलती पतलून बरामद होने के संदर्भ में, मेंगले ने कहा कि अभियोजन पक्ष ने यह साबित करने के लिए कोई गवाह पेश नहीं किया है कि संदूक आप्टे के पास कैसे पहुंचा, और 14 फरवरी को उसकी गिरफ्तारी के समय संदूक का कोई जिक्र नहीं था।
अपनी दलीलें समाप्त करते हुए मेंगले ने कहा, 'अभियोजन पक्ष मेरे मुवक्किल नारायण डी. आप्टे के खिलाफ लगाए गए आरोपों को संदेह से परे साबित करने में विफल रहा है।'
इसके बाद शंकर किस्तय्या के बचाव पक्ष के वकील मेहता ने अपनी दलीलें शुरू कीं। मेहता ने कहा, 'शंकर बैज का वफादार नौकर था। जब सभी आरोपी मिलते थे, तो शंकर को हमेशा अलग रखा जाता था, इसलिए संभव है कि उसे उक्त साजिश की जानकारी न हो। वह हथियार, बम और विस्फोटक पदार्थ पहुँचाता था, लेकिन केवल अपने मालिक के आदेश पर। मेरे मुवक्किल का कोई राजनीतिक विचार नहीं है और न ही वह किसी राजनीतिक विचारधारा को मानता है। अभियोजन पक्ष यह साबित करने में विफल रहा है कि शंकर महात्मा गांधी की हत्या क्यों करना चाहता था।'
15 दिसंबर 1948: मेहता ने अपनी दलीलें जारी रखीं। न्यायाधीश आत्मचरण ने कहा, 'बैज ने अपनी गवाही में कहा है कि शंकर बहुत जिद्दी था।' मेहता ने कहा, 'शंकर ने कई बातें स्वीकार की हैं, लेकिन अदालत द्वारा जिरह के दौरान उसने कहा कि बैज ने उसे साजिश के बारे में कुछ नहीं बताया था, बल्कि सिर्फ सामान ठिकाने लगाने का निर्देश दिया था। जब शंकर ने उससे दूसरी बार पूछा, तो बैज इतना क्रोधित हो गया कि उसने शंकर को थप्पड़ मार दिया। अगर शंकर

की गवाही के अन्य कथनों पर विश्वास किया जाए, तो साजिश से उसकी बेगुनाही को भी मानना पड़ेगा।' अपनी दलीलें समाप्त करते हुए मेहता ने कहा, 'हो सकता है कि शंकर दोषी हो, लेकिन उसके दोष पर विचार करते समय यह ध्यान रखना होगा कि शंकर बैज का नौकर है।' नथुराम गोडसे ने अपना बचाव स्वयं करने की इच्छा व्यक्त की, लेकिन इस शर्त पर कि इससे उनके वकील की स्थिति पर कोई असर न पड़े। आत्मचरण ने कहा कि इस संबंध में उनके वकील वी.वी. ओक निर्णय लेंगे।
नथुराम विनायक गोडसे ने अपने ऊपर लगे हत्या के आरोप को चुनौती नहीं दी, लेकिन उन्होंने कहा कि बैज के बयान में कई ऐसे आरोप थे जो गवाहों की गवाही से साबित नहीं हुए क्योंकि वे निराधार झूठ थे। 'बैज ने कहा कि वह 10 जनवरी को हिंदू राष्ट्र के कार्यालय में मुझसे, नथुराम गोडसे से मिला था, लेकिन अभियोजन पक्ष ने उस समय कार्यालय में मौजूद किसी भी कर्मचारी को इसकी पुष्टि के लिए तलब नहीं किया। इस बात के पुख्ता सबूत हैं कि बैज 14 जनवरी को शंकर किस्तय्या के साथ पुणे से मुंबई गया था। यह वही दिन था जब आप्टे और मैं मुंबई गए थे। लेकिन यह नहीं बताया गया है कि दोनों ने किस ट्रेन से यात्रा की थी। बैज का कहना है कि उसने उसी ट्रेन से यात्रा की जिसमें हमने की थी, लेकिन यह अजीब बात है कि अपने बयान में उसने मुझे देखने का जिक्र नहीं किया।'
13 और 14 जनवरी को अपनी जीवन बीमा पॉलिसियों में किए गए नामांकनों का जिक्र करते हुए गोडसे ने कहा, 'मैं समझ नहीं पा रहा हूं कि अभियोजन पक्ष क्या साबित करना चाहता है। मेरी पॉलिसी में दूसरों के नामांकन का कथित साजिश में मेरी संलिप्तता से क्या संबंध है? क्या अभियोजन पक्ष यह कहना चाह रहा है कि मैंने आप्टे और गोपाल को साजिश में शामिल करने के इरादे से उनकी

पत्नियों को नामांकित किया था? शांता मोदक की गवाही के आधार पर, अभियोजन पक्ष यह साबित करने की कोशिश कर रहा है कि बॉम्बे पहुंचने पर, आप्टे और मैं 14 जनवरी की शाम को सावरकर सदन गए थे। शांता मोदक ने हमें अंदर जाते हुए नहीं देखा, और यह साबित करने के लिए कि हम अंदर गए थे या नहीं, अभियोजन पक्ष किसी निवासी को तलब कर सकता था, लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया।' नाथूराम ने आगे कहा, 'गांधीजी की हत्या से बहुत पहले से ही पुलिस सावरकर के घर पर नजर रख रही थी; उन्होंने हमें सावरकर सदन में जाते हुए कैसे नहीं देखा?'
बैज ने अपने बयान में कहा है कि दादर में ट्रेन से उतरने के बाद वे हिंदू महासभा के कार्यालय गए, जहाँ उन्हें पता चला कि आप्टे और गोडसे भी उसी शाम आने वाले हैं। बैज को हमारे आने की सूचना किसने दी थी? बैज के बयान के इस हिस्से की पुष्टि के लिए उस व्यक्ति को तलब किया जा सकता था। उसे क्यों नहीं तलब किया गया? नथुराम ने अपनी डायरी में लिखी उन बातों का हवाला दिया, जिनमें उन्होंने बंदोभाऊ को 50 रुपये और गोपाल गोडसे को 200 रुपये देने का जिक्र किया था। 'अभियोजन पक्ष ने 'बंदोभाऊ' के इस जिक्र को आधार बनाया और इसे मरीना होटल में बैज द्वारा अपनाए गए कथित उपनाम से जोड़कर यह निष्कर्ष निकाला कि मैंने कुछ समय से साजिश रची थी। अगर यह मान भी लिया जाए कि मेरी डायरी में जिस बंदोभाऊ का जिक्र है, वह बैज ही है, तो भी मैं उसी डायरी में गोपाल गोडसे का नाम नहीं लिखता, जिससे वह साजिश में फंस जाता। गोपाल मेरे लिए बैज से कहीं ज्यादा कीमती है।'
'14, 15 और 17 जनवरी को बंबई में मेरी गतिविधियों का जिक्र तो किया गया है, लेकिन 16 जनवरी को पुणे में मैंने जो किया, उसका कोई जिक्र नहीं है। बैज की गवाही कि मैंने उससे पिस्तौल मांगी

थी, किसी गवाह द्वारा प्रमाणित नहीं की गई है। मैं 17 जनवरी को आप्टे के साथ सावरकर सदन नहीं गया था। अभियोजन पक्ष का दावा पूरी तरह से बैज की गवाही पर आधारित है, और यह प्रमाणित नहीं हुई है। हम अभियोजन पक्ष के दावों का खंडन करने के लिए गवाह पेश कर सकते थे, लेकिन महात्मा गांधी की हत्या के बाद हमारे कई लोगों को गिरफ्तार कर लिया गया। कौन कह सकता है कि हिरासत में रहते हुए पुलिस ने उन्हें तरह-तरह से धमकाया नहीं?'
'अभियोजन पक्ष के एक गवाह ने दावा किया कि बम विस्फोट से तीन दिन पहले हम मरीना होटल में थे; लेकिन अभियोजन पक्ष का कहना है कि उस दिन हम दिल्ली में थे। (यह एक अजीब तर्क है क्योंकि दिल्ली में भी एक मरीना होटल है।) मरीना होटल के किसी भी गवाह ने बैज की गवाही का समर्थन नहीं किया है कि 20 जनवरी की दोपहर को हमारी कमरा नंबर 40 में बैठक हुई थी। मैं उस दिन बीमार था, बैज ने भी इसका जिक्र किया है, और मैं उस शाम बिरला हाउस नहीं गया था।' नाथूराम ने आगे कहा, 'एक गवाह, गोविंद मालेकर ने कहा कि आप्टे, गोपाल गोडसे और मैं 25 जनवरी 1948 को रात 9 बजे बॉम्बे के एल्फिंस्टन होटल में मिले थे। जबकि एक अन्य गवाह, वसंत जोशी ने दावा किया है कि उसने आप्टे, गोपाल गोडसे, करकरे और मुझे 25 जनवरी 1948 को रात 9 बजे ठाणे में देखा था, जो बॉम्बे से पच्चीस किलोमीटर दूर है। यह कैसे संभव है? साथ ही, वसंत जोशी के पिता जी.एम. जोशी को गवाही देने के लिए क्यों नहीं बुलाया गया?' बॉम्बे में आयोजित पहचान परेड में वसंत से आरोपियों की पहचान करने के लिए क्यों नहीं कहा गया?
दादा महाराज की गवाही का हवाला देते हुए नाथुराम ने कहा, 'उन्होंने गैरकानूनी काम किए। ऐसे व्यक्ति पर कैसे भरोसा किया जा सकता है? यह कैसे सुनिश्चित किया जा सकता है कि अपनी जान

बचाने और पुलिस से सद्भावना प्राप्त करने के लिए उन्होंने अदालत में झूठ नहीं बोला होगा? हमें दादा महाराज से किसी प्रकार की आर्थिक सहायता की उम्मीद नहीं थी; हम तो बस उनसे एक रिवॉल्वर लेना चाहते थे, जो उन्होंने हमें लंबे समय से नहीं दी थी।'
16 दिसंबर 1948: नथुराम ने अपनी दलीलें जारी रखीं। उन्होंने अभियोजन पक्ष के इस दावे की ओर ध्यान दिलाया कि गोपाल गोडसे 20 जनवरी की दोपहर को मरीना होटल से चुपके से फ्रंटियर हिंदू होटल गया होगा और फिर वापस लौट आया होगा। 'बैज ने भी अपनी गवाही में गोपाल गोडसे के मरीना होटल से कहीं जाने का ज़िक्र नहीं किया है। बैज ने कहा है कि उसने गोपाल को रिवॉल्वर ठीक करते देखा था, और बैज खुद बाथरूम में हथगोले और विस्फोटकों में फ्यूज और डेटोनेटर लगाने गया था। जब बैज बाथरूम से बाहर आया तो उसने गोपाल को वहाँ खड़ा देखा। उसके बाद गोपाल बाकी सभी के साथ बिरला हाउस चला गया। यह तर्क कि बैज अपने काम में मग्न होने के कारण गोपाल गोडसे की गतिविधियों को नहीं देख पाया, काफी बेतुका है।' (नथुराम के तर्क निराधार हैं क्योंकि कोई भी विस्फोटक विशेषज्ञ इस बात से सहमत होगा कि किसी भी प्रकार के विस्फोटक के साथ काम करना अत्यंत खतरनाक होता है और इसके लिए पूर्ण एकाग्रता की आवश्यकता होती है; एकाग्रता में थोड़ी सी भी चूक घातक साबित हो सकती है। मनोहर मुलगांवकर द्वारा अपनी पुस्तक 'द मेन हू किल्ड गांधी' में इस घटना के वर्णन के अनुसार, जब बैज विस्फोटक तैयार कर रहे थे, तब आप्टे और करकरे ने एक फ्यूज तार को प्रज्वलित करके उसका परीक्षण करने का प्रयास किया। कमरे में धुएं के बादल छा गए और धुआं लॉबी में फैल गया, जिससे एक वेटर सतर्क हो गया, जो यह देखने के लिए कमरे में भागा कि सब ठीक है या नहीं। आप्टे बड़ी

मुश्किल से उसे यह समझाने में कामयाब हुए कि यह केवल सिगरेट का जमा हुआ धुआं था। इन परिस्थितियों में यह बहुत संभव है कि बैज, जो विस्फोटकों की विनाशकारी शक्ति और तात्कालिक विस्फोटक उपकरणों की अस्थिरता को जानते थे, उन्हें संभालते समय बहुत सतर्क रहे होंगे और बाकी सब बातों से बेखबर रहे होंगे।) फ्रंटियर हिंदू होटल के मालिक ने अपने बयान में दावा किया है कि उन्होंने 20 जनवरी को शाम 4 बजे गोपाल को अपने होटल में देखा था और उनका नाम अतिथि रजिस्टर में दर्ज है। मालिक को यह याद नहीं है कि गोपाल ने होटल में कब चेक-इन किया था, लेकिन उन्हें गोपाल के लौटने का समय आसानी से याद है। यह ध्यान देने योग्य है कि फ्रंटियर हिंदू होटल और मरीना होटल के बीच की दूरी पाँच मील है। मालिक ने यह नहीं बताया कि गोपाल के आने के बाद उन्होंने होटल के बाहर कोई कार खड़ी देखी थी या नहीं। जब होटल में एक घंटे के ठहरने का भी शुल्क लिया जाता है, तो यह कैसे संभव है कि मालिक को गोपाल के होटल पहुंचने का समय पता न हो? उनका बयान संदिग्ध और कुछ हद तक अटपटा है।
मुझे आश्चर्य है कि अभियोजन पक्ष ने इस गवाह को तलब किया, जिसकी गवाही अभियोजन पक्ष के मुख्य गवाह बैज की गवाही से भिन्न है। मेरा मानना है कि इससे केवल यही पता चलता है कि अभियोजन पक्ष अपनी साजिश की थ्योरी को साबित करने के लिए गोपाल गोडसे की 20 तारीख को दिल्ली में मौजूदगी को सिद्ध करने के लिए बेताब है। एक अन्य गवाह गोडबोले ने कहा है कि गांधीजी की हत्या से आठ-दस दिन पहले गोपाल ने उसे पुणे में छिपाने के लिए एक रिवॉल्वर और कुछ गोलियां दी थीं। अगर हम मान लें कि उसका मतलब दस दिन था, तो यह साबित होता है कि गोपाल 20 जनवरी को दिल्ली में मौजूद नहीं था। अगर उसका मतलब आठ या नौ दिन था, और अगर हम अभियोजन पक्ष के इस

दावे पर विश्वास करें कि गोपाल 20 जनवरी को दिल्ली में मौजूद था, तो सवाल उठता है कि गोपाल इतने कम समय में दिल्ली से पुणे कैसे पहुंचा, वह भी ट्रेन से। अभियोजन पक्ष ने यह दावा नहीं किया है कि गोपाल हवाई जहाज से यात्रा कर सकता था। अगर इन सभी गवाहों की गवाहियों को एक साथ पढ़ा जाए, तो आप पाएंगे कि वे विरोधाभासी हैं और हमारे खिलाफ लगाए गए आरोपों को साबित नहीं करती हैं।
नथुराम ने स्वीकार किया कि वह 27 जनवरी को आप्टे के साथ बॉम्बे से दिल्ली के लिए हवाई जहाज से गए थे। 'अभियोजन पक्ष का दावा है कि हम उसी दिन रात 11 बजे ग्वालियर पहुंचे, लेकिन तांगावाले का कहना है कि हम बॉम्बे एक्सप्रेस से ग्वालियर पहुंचे थे। बॉम्बे जाने वाली कोई भी ट्रेन उस समय ग्वालियर नहीं पहुंचती। इसके अलावा, यह असंभव है कि तांगावाले को याद रहा हो कि हम उस रात उसके तांगे में बैठे थे।' (नथुराम का यह तर्क भी मान्य नहीं है, क्योंकि उन दिनों लंबी दूरी की ट्रेनें समय पर नहीं चलती थीं। तांगावाले की याददाश्त की बात करें तो, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि रास्ते में उसकी लगाम टूट गई और उसके यात्री दूसरे तांगे में सवार हो गए, यह घटना उसे अवश्य याद रही होगी।) अभियोजन पक्ष का दावा है कि डॉ. परचुरे ने अपने इकबालिया बयान में कहा था कि उनके मेरे साथ संबंध अच्छे नहीं थे; फिर भी यह दावा किया गया है कि मैंने डॉ. परचुरे से महात्मा गांधी की हत्या के लिए पिस्तौल मुहैया कराने को कहा था। बचाव पक्ष का यह तर्क कि आप्टे और मैं दिल्ली में होने वाले विरोध प्रदर्शन के लिए स्वयंसेवकों की भर्ती करने ग्वालियर गए थे, अभियोजन पक्ष ने हास्यास्पद बना दिया है। लेकिन अगर यह हास्यास्पद है, तो मेरे द्वारा डॉ. परचुरे से महात्मा गांधी की हत्या के लिए

पिस्तौल मुहैया कराने को कहना, जबकि उनके साथ मेरे अच्छे संबंध नहीं थे, और भी हास्यास्पद लगता है।
फिर नथुराम ने सुंदरीलाल और हरिकृष्णा की गवाहियों का हवाला दिया। 'उनके बयान परस्पर विरोधी हैं और इसलिए उनका कोई महत्व नहीं है। सुंदरीलाल का दावा है कि 30 जनवरी को उन्होंने हमें दिल्ली रेलवे स्टेशन पर विश्राम कक्ष खाली करने के लिए कहा था, लेकिन परिचारक हरिकृष्णा ने अपनी गवाही में सुंदरीलाल का नाम तक नहीं लिया। इसके अलावा, हरिकृष्णा आसानी से आप्टे, करकरे और मुझे पहचान सकते थे, लेकिन वे पहचान परेड में और अदालत में भी आप्टे और करकरे दोनों को सही ढंग से पहचानने में विफल रहे।' बचाव पक्ष द्वारा गवाह पेश न कर पाने का कारण बताते हुए नथुराम ने कहा, 'यह पहला मुकदमा है जिसमें सरकार और जनता एक तरफ हैं और आरोपी दूसरी तरफ। हालांकि भगत सिंह के कृत्य हिंसक थे, लेकिन कांग्रेस ने कराची अधिवेशन के दौरान एक प्रस्ताव पारित करके उनकी प्रशंसा की थी और उनके कार्यों का समर्थन किया था।' नथुराम ने अपने तर्क का समापन इस बात को बार-बार दोहराते हुए किया कि उन्होंने मातृभूमि और हिंदू धर्म को बचाने के लिए यह कार्य किया। उन्होंने कहा, "भारत माता के विभाजन के बाद उत्पन्न हुई स्थिति और गांधीजी के दबाव में झुकने वाली भारत सरकार के अस्थिर रवैये को देखते हुए, जिसने पाकिस्तान को 55 करोड़ रुपये का भुगतान रोकने का निर्णय लिया; इन परिस्थितियों में यद्यपि कानून की दृष्टि में मैं अपराधी हूँ, परन्तु भारतीय जनता, आने वाली पीढ़ियाँ और भविष्य के ईमानदार इतिहासकार इस बात से सहमत होंगे कि गांधीजी की हत्या करना आवश्यक था।"
'चूंकि मैंने जिस व्यक्ति की हत्या की, उसके प्रति मैंने कोई दया नहीं दिखाई, इसलिए मुझे दया की भीख मांगने का अधिकार नहीं

है। मैंने गांधीजी की हत्या करके अपना उद्देश्य प्राप्त कर लिया है, इसलिए मुझे और कुछ नहीं कहना है। एक समय आएगा जब दुनिया देशभक्ति का उसी तरह उपहास करेगी जैसे आज धार्मिक गौरव का करती है।'
अपने समापन भाषण में बड़े गर्व से यह घोषणा करने के बाद कि उसका दया की भीख मांगने का कोई इरादा नहीं है, स्वयं को शहीद घोषित करने वाले उस व्यक्ति ने सजा सुनाए जाने के बाद ठीक यही किया, सर्वोच्च प्राधिकरण, प्रिवी काउंसिल के समक्ष भी।
करकरे के वकील द्वारा प्रस्तुत तर्क
इसके बाद, करकरे के बचाव पक्ष के वकील डांगे ने अपनी दलीलें शुरू कीं। उन्होंने कहा, 'अभियोजन पक्ष के केवल छियालीस गवाहों की गवाही मेरे मुवक्किल करकरे से संबंधित है। इनमें से छब्बीस गवाहियाँ पूरी तरह से अप्रासंगिक हैं। अभियोजन पक्ष ने भारत संघ के किसी भी मुस्लिम नागरिक को गवाह के रूप में पेश नहीं किया। बैज कोई बहुत महत्वपूर्ण गवाह नहीं है। अदालत में गवाही देने वालों में से केवल पाँच गवाह ही इस मामले के लिए महत्वपूर्ण हैं। मरीना होटल के गवाहों की गवाही का मेरे मुवक्किल करकरे के खिलाफ लगाए गए आरोपों से कोई संबंध नहीं है।' 'आरोपी के दोष को साबित करने का दायित्व पूर्णतः अभियोजन पक्ष पर है। न्यायालय अनुमानों और अटकलों के आधार पर अपना निर्णय नहीं दे सकता। बचाव पक्ष के लिए गवाह पेश करना अनिवार्य नहीं है। आपराधिक न्याय प्रणाली इस सिद्धांत पर आधारित है कि यदि दस दोषी व्यक्ति भी सजा से बच जाते हैं, तो एक भी निर्दोष व्यक्ति को दंडित नहीं किया जाना चाहिए।' इसके बाद डांगे ने करकरे के बयान के कुछ अंश पढ़े, जिनसे उनके बचपन और शिक्षा पर प्रकाश पड़ा।

17 दिसंबर 1948: डांगे ने डॉ. जे.सी. जैन और मदनलाल के बीच संबंधों का जिक्र किया; उन्होंने उल्लेख किया कि मदनलाल ने करकरे का परिचय 'अहमदनगर का सेठ' के रूप में कराया था। डांगे ने मदनलाल द्वारा जैन को लिखे गए उन पत्रों का भी जिक्र किया जिनमें मदनलाल ने करकरे को 'साहब' कहा था, न कि 'सेठ'।
अभियोजन पक्ष ने करकरे को "सेठ" कहकर एक धनी व्यवसायी के रूप में चित्रित करने का प्रयास किया है, लेकिन यह आवश्यक नहीं है कि केवल धनी ही सामाजिक कार्य करें। सामाजिक कार्य करने के लिए व्यक्ति का ईमानदार और प्रभावशाली होना ही पर्याप्त है। इसलिए अभियोजन पक्ष द्वारा करकरे को "सेठ" कहना गलत है। अहमदनगर में शरणार्थियों के आगमन के कारण मुस्लिम निवासियों को भारी नुकसान उठाना पड़ा, उसी समय करकरे की लोकप्रियता भी चरम पर पहुंच गई। मुसलमानों को यह बात बुरी लगी और उन्होंने सरकार से शिकायत की कि करकरे शरणार्थियों को दंगा भड़काने के लिए उकसा रहे हैं। मुसलमानों की शिकायतों पर कार्रवाई करते हुए सरकार ने करकरे की गिरफ्तारी का आदेश दिया। यही वह कारण था जिसके चलते करकरे को "व्यास" उपनाम का प्रयोग करना पड़ा।
सरदार पटेल के बयान के विरुद्ध आपत्तियाँ
इससे पहले, परचुरे और गोपाल के बचाव पक्ष के वकील इनामदार ने अदालत का ध्यान एक समाचार पत्र की रिपोर्ट की ओर दिलाया, जिसमें कहा गया था कि रायपुर में कांग्रेस के सम्मेलन में बोलते हुए केंद्रीय गृह मंत्री पटेल ने कहा था कि गांधी की हत्या में इस्तेमाल की गई पिस्तौल ग्वालियर में खरीदी गई थी। इनामदार ने कहा, 'जब तक मुकदमा चल रहा है, ऐसे बयान सार्वजनिक रूप से नहीं दिए जाने चाहिए।'

डांगे ने कहा, 'अगर करकरे और मदनलाल किसी साजिश के तहत दिल्ली आए थे, तो वे आमचेकर जैसे अजनबी को अपने साथ क्यों रखते? इसके अलावा, एक गवाह ने गवाही दी कि मदनलाल 20 जनवरी को एक सभा में गए थे, जहां जयप्रकाश नारायण ने भाषण दिया था। कहा जाता है कि मदनलाल ने नारे लगाए और सभा में बाधा डालने की कोशिश की। क्या कोई साजिशकर्ता इस तरह का व्यवहार करेगा? इसलिए अभियोजन पक्ष का यह आरोप कि आरोपी किसी साजिश के सिलसिले में दिल्ली में इकट्ठा हुए थे, सरासर झूठ है।' इसके बाद डांगे ने मरीना होटल के गवाहों की गवाही ली। 'एक गवाह ने बॉम्बे में आयोजित पहचान परेड में करकरे की पहचान की थी। यह अजीब बात है कि जो व्यक्ति रोजाना सैकड़ों लोगों को चाय पिलाता है, उसे इतने लंबे समय बाद भी एक व्यक्ति का चेहरा याद रहा और इतने सारे लोगों के बीच उसे पहचान लिया। मरीना होटल के एक अन्य गवाह ने होटल में आप्टे, नाथूराम गोडसे और गोपाल गोडसे की मौजूदगी का जिक्र किया है, लेकिन करकरे का नाम नहीं लिया। उनके बयान के अनुसार, करकरे उस समय बॉम्बे में थे।' अतः वह गवाही बैज की गवाही के विपरीत है।'
डांगे ने आगे कहा, 'बिरला हाउस के दो गवाहों, छोटूराम और भूरे सिंह के बयान भी परस्पर विरोधी हैं। छोटूराम ने कहा कि करकरे ने गांधीजी की तस्वीर लेने की अनुमति के लिए उनसे संपर्क किया था, उन्होंने पहचान परेड के दौरान आप्टे और करकरे की पहचान की, लेकिन यह नहीं बताया कि दोनों में से किसने उनसे तस्वीर लेने का अनुरोध किया था।'
भूर सिंह ने दावा किया कि 20 जनवरी को दो व्यक्ति आए थे, उनमें से एक ने तस्वीर लेने की अनुमति मांगी थी। लेकिन वह यह नहीं बता पाए कि किसने अनुमति मांगी थी। डांगे ने आगे कहा, 'अभियोजन पक्ष ने दावा किया है कि नाथूराम गोडसे, नारायण आप्टे और मेरे

मुवक्किल विष्णु करकरे 30 जनवरी 1948 को दिल्ली में मौजूद थे, जिस दिन महात्मा गांधी की हत्या हुई थी। दिल्ली स्टेशन पर काम करने वाले टिकट विक्रेता सुंदरीलाल ने नाथूराम गोडसे और नारायण आप्टे को पहचाना। उन्होंने कहा कि वे 29 जनवरी को दिल्ली स्टेशन पर मौजूद थे और उन्होंने करकरे को उस व्यक्ति के रूप में पहचाना जो 30 जनवरी को दिल्ली स्टेशन के विश्राम कक्ष में नाथूराम और आप्टे के साथ देखा गया था। सुंदरीलाल द्वारा आरोपियों की पहचान संदिग्ध है। उन्हें 8 फरवरी को दिल्ली में हुई पहचान में शामिल होने के लिए क्यों नहीं कहा गया? उन्हें दिल्ली में हुई पहचान तक इंतजार कराने का मतलब है कि अभियोजन पक्ष उन्हें सिखा रहा था। सुंदरीलाल ने कहा था कि उन्होंने आप्टे और नाथूराम को बैठे हुए देखा था जबकि करकरे खड़े थे।' लेकिन करकरे को क्यों खड़ा होना चाहिए? वह न तो उनका नौकर था और न ही उनसे कमतर। अभियोजन पक्ष यह साबित नहीं कर पाया है कि करकरे दिल्ली कैसे पहुंचा, इसलिए संदेह का लाभ मेरे मुवक्किल विष्णु रामचंद्र करकरे को मिलना चाहिए।
'बैज की गवाही अविश्वसनीय है, जब तक कि सहायक गवाहों द्वारा इसकी पुष्टि न हो जाए, किसी अनुमोदक की गवाही पर भरोसा नहीं किया जा सकता है।'
18 दिसंबर 1948: अपनी दलीलों को जारी रखते हुए डांगे ने बॉम्बे सीआईडी के कार्यालय में बैज की पत्नी से पुलिस द्वारा बरामद पत्र का उल्लेख किया।
जब बैज की पत्नी सीआईडी कार्यालय आईं, तो पुलिसकर्मियों द्वारा मांगे जाने पर उन्होंने वह पत्र सौंप दिया। यह समझना मुश्किल है कि श्रीमती बैज वह विशेष पत्र क्यों लाईं, जबकि बैज ने उन्हें लाने के लिए नहीं कहा था।

कुछ भी हो; यह पूरा मामला बेहद संदिग्ध है।
डांगे ने कहा कि यह पत्र बैज के लेटरहेड पर भी नहीं लिखा गया था। (कारकरे बैज के लेटरहेड पर बैज को पत्र क्यों लिखेगा?) 'पत्र का कागज फटा हुआ था और उसे चिपकाया गया था। पुलिस ने लिखावट का मिलान कारकरे की लिखावट से किया था। आरोपियों को एक विशेष तरीके से लिखने के लिए मजबूर किया गया था। लिखावट विशेषज्ञ ने दावा किया है कि पत्र की लिखावट और तुलना के लिए दिए गए नमूने की लिखावट एक ही व्यक्ति की थी, इस मामले में कारकरे की। लेकिन दबाव या बहला-फुसलाकर लिया गया नमूना प्रामाणिक साक्ष्य के रूप में इस्तेमाल नहीं किया जा सकता।'
डांगे ने कहा, 'पत्र में किताबों और लेखों का जिक्र लोहे की जैकेटों के लिए सांकेतिक भाषा में किया गया था, न कि हथियारों और विस्फोटकों के लिए। करकरे ने नोआखली में राहत कार्य के लिए रवाना होने से पहले एक लोहे की जैकेट खरीदी थी। महात्मा गांधी की हत्या में कोई साजिश नहीं थी। बैज अपने हथियार बेचने के लिए दिल्ली आया था। आप्टे ने उससे एक शांतिपूर्ण प्रदर्शन में शामिल होने का अनुरोध किया था, इसलिए उसने एक तीर से दो निशाने साधने का फैसला किया।'
अभियोजन पक्ष ने आरोप लगाया है कि मरीना होटल में यह तय किया गया था कि जब मदनलाल गन कॉटन बम विस्फोट करेगा, तो करकरे, गोपाल गोडसे और शंकर छोटूराम के कमरे से गांधीजी पर हथगोले से हमला करेंगे। लेकिन बैज ने योजना में बदलाव कर दिया। करकरे को इसकी जानकारी नहीं थी। अगर करकरे इस साजिश का हिस्सा थे तो उन्हें इसकी जानकारी होनी चाहिए थी। इससे साबित होता है कि करकरे पर लगे सभी आरोप निर्दोष हैं और
कोई साजिश नहीं थी।

'मोरारजी देसाई, डॉ. जे.सी. जैन और अंगद सिंह के बयान परस्पर विरोधी हैं और कई जगहों पर उनके मूल बयानों से भटक गए हैं, इसलिए उनके बयानों को मुकदमे के रिकॉर्ड से हटा दिया जाना चाहिए।' 'करकरे की गिरफ्तारी के समय उनके पास से 31 जनवरी की उपनगरीय रेलवे टिकटें बरामद हुईं। इससे यह साबित होता है कि मेरे मुवक्किल विष्णु रामचंद्र करकरे गांधीजी की हत्या के दिन बंबई में मौजूद थे, न कि दिल्ली में।'
डांगे ने बॉम्बे में पहचान परेड की आलोचना करते हुए कहा, 'जब मुख्य प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेट ने बॉम्बे में पहचान परेड का आयोजन किया, तो कोई मराठी अनुवादक उपलब्ध नहीं कराया गया जो करकरे को कार्यवाही समझा सके।'
अंत में उन्होंने कहा, 'मेरे मुवक्किल ने कोई अपराध नहीं किया है, उन्हें संदेह का लाभ दिया जाना चाहिए और तुरंत रिहा कर दिया जाना चाहिए।'

दास ने सावरकर की ओर से दलीलें पेश कीं।
इसके बाद पी.आर. दास ने वी.डी. सावरकर के बचाव में दलीलें शुरू कीं। उन्होंने कहा, 'हमें दो बातों पर विचार करना होगा। पहली, क्या महात्मा गांधी की हत्या की कोई साजिश थी? दूसरी, अगर साजिश थी, तो सावरकर उसमें किस हद तक शामिल थे? अभियोजन पक्ष के बयानों के अनुसार, महात्मा गांधी की हत्या का अंतिम निर्णय 20 जनवरी 1948 की दोपहर को मरीना होटल के कमरा नंबर 40 में लिया गया था। बचाव पक्ष का कहना है कि महात्मा गांधी की हत्या की कोई साजिश नहीं थी, और अगर ऐसा आरोप लगाया जाता है, तो यह बहुत दुखद निष्कर्ष होगा क्योंकि अन्य आरोपियों ने प्रार्थना सभा के दौरान केवल शांतिपूर्ण प्रदर्शन करने की योजना बनाई थी। 30 जनवरी की घटना नाथूराम गोडसे की व्यक्तिगत कार्रवाई थी। अगर साजिश थी तो गांधीजी की हत्या 20 जनवरी को ही क्यों नहीं की गई? उस दिन, सात लोग इस कृत्य को अंजाम देने के लिए हथियारों और विस्फोटकों से पूरी तरह लैस थे। इस संबंध में अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत गवाहियां गवाह बैज की गवाही की पुष्टि नहीं करती हैं; वास्तव में, कई जगहों पर वे उनके दावों को ध्वस्त कर देती हैं।' अभियोजन पक्ष ने ऐसे साक्ष्य भी प्रस्तुत किए हैं जिनमें दावा किया गया है कि 20 जनवरी को असफल प्रयास के बाद आरोपियों ने मुलाकात की और महात्मा गांधी की हत्या करने के अपने संकल्प को दोहराया।
दास ने काउंसिल ऑफ लॉर्ड्स और इलाहाबाद उच्च न्यायालय के फैसलों का हवाला देते हुए दावा किया कि अभियोजन पक्ष द्वारा चलाए जा रहे मामले में कई संदेह अभी भी बने हुए हैं। यह अभियोजन पक्ष की जिम्मेदारी थी कि वह मुकदमे को बिना किसी संदेह या शंका के संचालित करे। उन्होंने आगे कहा, 'क्या अभियोजन पक्ष सही है

या बचाव पक्ष? 20 जनवरी को केवल एक बम फटा था। क्या इसका मतलब यह है कि अभियोजन पक्ष ने अपना दावा संदेह से परे साबित कर दिया है? क्या अभियोजन पक्ष के पास कोई ठोस सबूत है कि आरोपियों ने 20 तारीख को ही साजिश को अंजाम क्यों नहीं दिया?'
उन्होंने आगे कहा, 'बैज की गवाही पूरी तरह से प्रमाणित नहीं हुई होगी, लेकिन मुख्य बिंदु प्रमाणित हो गए हैं। अब फैसला अदालत को करना है।'
बैज ने स्वीकार किया है कि वह आप्टे और करकरे को हथियार, बम और विस्फोटक बेच रहा था। ये लेन-देन महात्मा गांधी की हत्या से संबंधित नहीं थे, बल्कि निज़ाम के हैदराबाद राज्य में रहने वाले हिंदुओं की सुरक्षा के लिए हथियार जुटाने के उद्देश्य से किए गए थे।
'नवंबर 1947 में, आप्टे ने बैज से पूछा कि क्या हथियार तैयार हैं। उन्होंने बैज को यह भी बताया कि करकरे एक-दो दिन में हथियारों का जखीरा लेने आएंगे। ये हथियार हैदराबाद अभियान में भी इस्तेमाल होने थे। 10 जनवरी को, बैज को पुणे स्थित हिंदू राष्ट्र कार्यालय में बुलाया गया और उनसे दो गन कॉटन विस्फोटक, दो रिवॉल्वर और पांच हथगोले उपलब्ध कराने को कहा गया। उन्हें 14 जनवरी को दादर, बॉम्बे स्थित हिंदू महासभा कार्यालय में ये सामान पहुंचाने के लिए कहा गया।' दास ने कहा कि बैज के बयान के इस हिस्से की पुष्टि किसी भी गवाह ने नहीं की है।
जब बैज और शंकर 14 जनवरी को बॉम्बे पहुँचे, तो बैज "सामान" को दीक्षित महाराज के घर ले गया और उनके नौकर को सौंप दिया। बैज हथियारों को वहाँ क्यों ले गया? क्योंकि वहाँ हथियार थे... हैदराबाद अभियान के लिए चंदा दीक्षित महाराज के घर पर एकत्र किया गया था।*

दीक्षित महाराज के नौकर को अदालत में तलब नहीं किया गया था। बैज की गवाही केवल दीक्षित के इस बयान से पुष्ट नहीं होती कि "बैज ने 'सामान' वाला थैला मेरे नौकर के पास छोड़ दिया था"। दीक्षित के खिलाफ पुलिस अधिनियम के तहत मामला दर्ज किया जा सकता था, लेकिन बॉम्बे प्रांत की सरकार ने इस दिशा में कोई कदम नहीं उठाया। यह बहुत संभव है कि खुद को बचाने के लिए उन्होंने अधिकारियों के साथ कोई समझौता किया हो और अभियोजन पक्ष के निर्देशों के अनुसार इस मामले में गवाही देने के लिए सहमत हो गए हों। इस प्रकार, उनकी गवाही संदिग्ध हो जाती है और महत्वहीन हो जाती है। उस समय हैदराबाद का सवाल सबके मन में था। क्या ये हथियार हैदराबाद भेजने के लिए बंबई लाए गए थे या किसी निहत्थे बूढ़े व्यक्ति की हत्या के लिए? अभियोजन पक्ष का दावा है कि ये सामान महात्मा गांधी की हत्या के लिए दिल्ली ले जाया जाना था। क्या गांधीजी को मारने के लिए इतने सारे हथियारों और विस्फोटकों की आवश्यकता थी?
'आरोपी और गवाह के बीच ग्राहक और व्यापारी जैसा नाममात्र का संबंध था। अभियोजन पक्ष के बयानों से स्पष्ट है कि जब भी आरोपी सावरकर से गुप्त बैठक करते थे, बैज को दूर रखा जाता था। जब आप्टे ने बैज से पूछा कि क्या वह उनके साथ दिल्ली जाकर महात्मा गांधी और सुहरावर्दी की हत्या में शामिल होगा, और कहा कि सावरकर ने हत्या का आदेश दिया है, तो बैज बिना किसी झिझक के सहमत हो गया। यह बेहद आश्चर्यजनक है कि बैज ने इस बारे में पुलिस को सूचित करने पर विचार नहीं किया। जब आप्टे और गोडसे अंतिम बार सावरकर का आशीर्वाद लेने गए, तो उन्होंने फिर से बैज को बाहर ही छोड़ दिया। यह और भी चौंकाने वाली बात है कि तथाकथित साजिशकर्ताओं को बैज पर भरोसा नहीं था और फिर भी उन्होंने उसे महात्मा गांधी

की हत्या की साजिश के बारे में बताया।' 20 जनवरी की सुबह बिरला हाउस की यात्रा का जिक्र करते हुए दास ने कहा, 'अभियोजन पक्ष बैज की गवाही की पुष्टि करने वाला कोई भी टैक्सी ड्राइवर पेश करने में विफल रहा है।'
20 दिसंबर 1948: अपनी दलीलें जारी रखते हुए दास ने कहा, 'अभियोजन पक्ष ने यह नहीं कहा है कि 20 तारीख को असफल प्रयास के बाद साजिश 30 जनवरी तक जारी रही। बिरला हाउस के गवाहों ने परस्पर विरोधी बयान दिए हैं, जो बैज के बयान से भिन्न हैं। कानून के अनुसार पहचान करना आवश्यक है, लेकिन क्या यह संभव है कि कोई व्यक्ति पहचान के दौरान यह कह दे कि उसने किसी खास व्यक्ति को छह अन्य लोगों के साथ घूमते देखा था? सुलोचना और सुरजीत सिंह के बयानों का खंडन करते हुए अभियोजन पक्ष को यह स्वीकार करना चाहिए कि नाथूराम गोडसे 20 जनवरी को बिरला हाउस में मौजूद नहीं था, और गांधी की हत्या की कोई साजिश नहीं थी।' जज ने पूछा, 'अभियोजन पक्ष का कहना है कि आप्टे और अन्य लोग घबराहट में टैक्सी में बैठकर बिरला हाउस से भाग निकले। अगर उनका इरादा सिर्फ शांतिपूर्ण प्रदर्शन करना था, तो वे घबरा क्यों गए?' दास ने जवाब दिया, 'घबराहट में भागने की बात को ज़रूरत से ज़्यादा महत्व नहीं देना चाहिए। अगर उनका मकसद उस दिन गांधीजी की हत्या करना होता, तो उनमें से कोई न कोई, यहां तक कि मदनलाल भी, ऐसा कर देता, लेकिन ऐसा कुछ नहीं हुआ। साजिश की योजना और उसे अंजाम देने में पूरी गोपनीयता बरती जाती है। यहां तक कि अभियोजन पक्ष भी यह नहीं कहता कि 20 तारीख के बाद कोई साजिश रची गई थी।'
न्यायाधीश ने पूछा, 'यदि कोई षड्यंत्र किसी विशेष दिन विफल हो जाता है, तो क्या उसका अस्तित्व समाप्त हो जाता है? जैन की

गवाही को अतिशयोक्तिपूर्ण बताया गया है। यदि ऐसा होता, तो जिरह के दौरान वह अपनी अतिशयोक्तियों का शिकार हो जाता।'
दास ने कहा, 'अगर मोरारजी देसाई महात्मा गांधी की हत्या की साजिश के बारे में जानते थे, तो उन्होंने इसे उजागर करने और रोकने के लिए कदम क्यों नहीं उठाए? इस मामले में अधिकारियों का ढुलमुल रवैया अभूतपूर्व है। अगर यह मान भी लिया जाए कि साजिश थी और जैन की गवाही सच थी, तब भी उन्होंने देसाई को केवल मदनलाल और करकरे के नाम ही बताए थे। उनका बयान सुनी-सुनाई बातों पर आधारित था, इसलिए अदालत को इसे स्वीकार नहीं करना चाहिए। 20 जनवरी की रात, जब बैज ने गोडसे और आप्टे से बहस की, तब साजिश का अंत हो गया था।'
21 दिसंबर 1948: दास ने अपनी दलीलें जारी रखीं। 'अभियोजन पक्ष ने वसंत जोशी की गवाही के अनुसार यह साबित करने की कोशिश की है कि चार आरोपी थाने में इकट्ठा हुए थे। अगर इसे सच भी मान लिया जाए तो कैसे एक साथ इकट्ठा होना किसी साजिश में शामिल होने का पर्याप्त सबूत हो सकता है? वास्तव में अभियोजन पक्ष को वसंत के पिता जी.एम. जोशी को गवाही के लिए बुलाना चाहिए था। हालांकि वे पंद्रह दिनों तक लाल किले में मौजूद थे, लेकिन उन्हें गवाही देने के लिए नहीं कहा गया। यह कहा गया है कि 25 जनवरी को आप्टे को उनके पुणे स्थित पते पर एक टेलीग्राम भेजा गया था, लेकिन मालेकर की गवाही के अनुसार आप्टे
उस दिन वह बॉम्बे में था।*
'अपनी मातृभूमि के लिए इतना बलिदान देने वाले सावरकर जैसे महान व्यक्ति भला गोडसे और आप्टे जैसे लोगों के साथ साजिश कैसे रच सकते थे? पुलिस ने उनके आवास से 140 फाइलों से 10,000 पत्र बरामद किए, लेकिन उन सभी पत्रों में एक भी ऐसा शब्द नहीं मिला

जिससे यह माना जा सके कि सावरकर गांधीजी के प्रति द्वेष रखते थे। 1947 के दौरान आप्टे, गोडसे और सावरकर के बीच कोई पत्राचार नहीं हुआ था। अगस्त 1947 में, सावरकर ने महाराष्ट्र हिंदू महासभा के फतवे का उल्लंघन करते हुए अपने घर की छत पर तिरंगा फहराया था। आप्टे, गोडसे और करकरे ने उनके इस कार्य की आलोचना की थी। क्या बैज का यह दावा विश्वसनीय है कि आप्टे ने दीक्षित महाराज के घर के आंगन में उन्हें बताया था कि सावरकर ने गांधीजी, पंडित नेहरू और सुहरावर्दी को खत्म करने का आदेश दिया था? क्या किसी के घर के आंगन में ऐसी बातें बताई जा सकती हैं? क्या पता आप्टे ने सावरकर के नाम का गलत इस्तेमाल किया हो?' अगर इस तरह की गवाही अदालत में मान ली गई, तो कोई भी कभी सुरक्षित नहीं रहेगा। 1947-48 के दौरान आप्टे और गोडसे कभी सावरकर से नहीं मिले, तो फिर उन्होंने अचानक सावरकर के घर जाकर उन्हें गांधीजी की हत्या की बात बताने का फैसला क्यों किया? यह असंभव लगता है। न तो जैन, न मोरारजी देसाई और न ही अंगद सिंह ने सावरकर को इस साजिश में फंसाया है। आप्टे और गोडसे 24 से 27 जनवरी तक बंबई में थे। इन दिनों में उनमें से कोई भी सावरकर के घर नहीं गया। उन्होंने हिंदू महासभा की स्थापना की थी और उन्हें यह जरूर पता होगा कि गांधीजी की हत्या का मतलब महासभा का अंत होगा। वे ऐसा क्यों करेंगे? बैज और दीक्षित महाराज की गवाहियां मेल नहीं खातीं। सभी आरोप संदेह के घेरे में हैं, इसलिए संदेह का लाभ आरोपियों को ही दिया जाना चाहिए।
मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि सावरकर को निर्दोष घोषित कर रिहा कर दिया जाएगा। लेकिन न्यायालय को यह भी घोषित करना होगा कि उन्हें उनकी प्रतिष्ठा और सम्मान को बरकरार रखते हुए रिहा किया जा रहा है।'

मदनलाल के वकील द्वारा प्रस्तुत तर्क
इसके बाद मदनलाल के वकील बनर्जी ने अपनी दलीलें शुरू कीं। उन्होंने अपनी इस मांग को दोहराया कि अदालत को गांधीजी के भाषणों और उनके द्वारा लिखे गए लेखों को अदालत के रिकॉर्ड में शामिल करना चाहिए, साथ ही इस 'तथ्य' को भी शामिल करना चाहिए कि गांधीजी के कारण सरकार को पाकिस्तान को 55 करोड़ रुपये देने पड़े थे।
ग्वालियर मजिस्ट्रेट द्वारा दर्ज किया गया इकबालिया बयान मान्य नहीं है।
इस न्यायालय द्वारा कानूनी रूप से स्वीकार किया जाए।
22 दिसंबर 1948: अटल द्वारा दर्ज किए गए परचुरे के इकबालिया बयान का जिक्र करते हुए बैनर्जी ने कहा, 'रियासतों के मजिस्ट्रेटों को इकबालिया बयान दर्ज करने के साथ-साथ अदालत में गवाह के रूप में भी गवाही देनी चाहिए।'
आर.बी. अटल ने अदालत में केवल इकबालिया बयान पढ़ा था।
अपने तर्क को स्थापित और पुष्ट करने के लिए बनर्जी ने कई कानूनी अधिनियमों का हवाला दिया। उन्होंने अभी तक अपने मुवक्किल मदनलाल के बचाव में अपनी दलीलें शुरू नहीं की थीं। 'कथित साजिश के अस्तित्व में आने के संबंध में कई अलग-अलग तारीखें बताई गई हैं। गवाहों की गवाही से यह साबित हो गया है कि मदनलाल 9 जनवरी तक कथित साजिश का हिस्सा नहीं थे। यदि यह साजिश अहमदनगर में रची गई थी, तो मदनलाल को इसका हिस्सा नहीं कहा जा सकता क्योंकि वह वहां मौजूद नहीं थे। दीक्षित महाराज की गवाही से भी यह साबित नहीं होता कि मदनलाल साजिश में शामिल थे। उन्होंने कहा है कि जब अन्य लोग हथियारों और विस्फोटकों का परीक्षण कर रहे थे, तब वह

अलग-थलग और निष्क्रिय रहे। अगर वह वहां मौजूद नहीं होते तो ऐसा नहीं होता।
वह इस साजिश में शामिल था। †
मरीना होटल के गवाहों ने मदनलाल की वहां मौजूदगी के बारे में कुछ नहीं कहा है। वह 20 जनवरी 1948 की देर शाम पुलिस को कमरा नंबर 40 में ले गया, लेकिन आरोपी द्वारा पुलिस को दिए गए बयान पर विचार नहीं किया जा सकता। अभियोजन पक्ष के अनुसार, जैन को मदनलाल ने बताया था कि महात्मा गांधी की हत्या की साजिश रची गई थी। यह कैसे संभव है कि कोई साजिशकर्ता किसी अजनबी को इतना बड़ा रहस्य बता दे? जैन की गवाही का मोरारजी देसाई और अंगद सिंह की गवाही से समर्थन नहीं मिला है। इन सभी तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, यह कहना सही है कि गांधीजी की हत्या की कोई साजिश नहीं थी, और अगर थी भी, तो मेरे मुवक्किल मदनलाल उसमें शामिल नहीं थे। 'अगर अभियोजन पक्ष द्वारा लगाए गए सभी आरोपों को सच भी मान लिया जाए, तो मेरे मन में एक सवाल उठता है—जब मोरारजी देसाई को महात्मा गांधी की हत्या की साजिश की जानकारी थी, तो उन्होंने साजिशकर्ताओं को गिरफ्तार करने और गांधीजी की जान बचाने के लिए कोई कदम क्यों नहीं उठाया? जैन से जानकारी मिलने पर मोरारजी देसाई ने अपने स्रोत का खुलासा किए बिना सारी बात नागरवाला को बता दी। यह इस बात का पर्याप्त प्रमाण है कि देसाई को जैन द्वारा दी गई जानकारी पर संदेह था और उन्होंने कोई विशेष निर्देश जारी नहीं किए।' जैन की गवाही का हवाला देते हुए बनर्जी ने कहा, 'संभव है कि अखबारों में 20 जनवरी के बम हमले की खबर पढ़ने के बाद जैन को लगा हो कि गांधीजी की हत्या की साजिश रची जा रही है।'

23 दिसंबर 1948: अपनी दलीलें जारी रखते हुए, बैनर्जी ने कहा, 'अंगद सिंह और मोरारजी देसाई की गवाहियाँ जैन के कथन को पूरी तरह से खारिज करती हैं। नागरवाला ने भी जैन की गवाही को प्रासंगिक नहीं माना है। जब दिल्ली के एक पुलिस अधिकारी ने उन्हें जानकारी दी, तो उन्होंने बैज के खिलाफ गिरफ्तारी वारंट जारी कर दिया।'
अगर मदनलाल और करकरे बॉम्बे से दिल्ली तक ट्रेन के भीड़भाड़ वाले तीसरे दर्जे के डिब्बे में वह सामान ले जा सकते थे, तो बैग दादर स्थित हिंदू महासभा के कार्यालय में रखा जा सकता था। इसे दीक्षित महाराज के घर पर क्यों रखा गया? बैज और दीक्षित महाराज दोनों की गवाही में विरोधाभास हैं। अगर गांधी, नेहरू और सुहरावर्दी की हत्या की साजिश थी, तो नेहरू और सुहरावर्दी को मारने की कोशिश क्यों नहीं की गई? अभियोजन पक्ष ने इस बात पर कोई प्रकाश नहीं डाला है कि गांधीजी के साथ अन्य दो लोगों को मारने की योजना कब रद्द की गई। और, अगर कोई साजिश थी तो ये लोग दिल्ली में हिंदू महासभा भवन जैसी सार्वजनिक जगह पर क्यों रुके होते?
'20 जनवरी की सुबह आप्टे बैज को बिरला हाउस क्यों ले गए? अगर कोई साजिश थी तो उन्हें मदनलाल को ले जाना चाहिए था। इस बारे में कुछ नहीं कहा गया है। 20 तारीख की सुबह बैज को कोई काम नहीं सौंपा गया था। तो फिर सिर्फ उन्हें ही बिरला हाउस क्यों ले जाया गया? दो मील दूर स्थित मरीना होटल को हथियारों के वितरण के लिए क्यों चुना गया?
क्या यह कार्य हिंदू महासभा भवन में ही नहीं किया गया था?*
तो फिर गोपाल गोडसे हिंदू महासभा भवन क्यों लौटा? ऐसा लगता है कि यह सब पुलिस ने फरवरी के मध्य में रचा था। बैज को 31 जनवरी को

गिरफ्तार किया गया था, लेकिन उसका बयान 21-22 फरवरी को ही दर्ज किया गया। पुलिस ने प्रो. जैन से 4-5 फरवरी को मुलाकात की, लेकिन उनका बयान 17 फरवरी को ही दर्ज किया गया। अदालत को यह समझना चाहिए कि घटनाओं को जानबूझकर गढ़ा जा रहा था। मामले की सुनवाई के दौरान भी अदालत में कहानी को सुधारने और उसमें बदलाव करने की कोशिशें की गईं। मुकदमा 24 जून को शुरू हुआ। गवाह को 21 जून को माफी दे दी गई, लेकिन उसका बयान, जो शुरू में ही लिया जाना चाहिए था, जुलाई के मध्य में ही दर्ज किया गया।
आरोप लगाया गया है कि नाथुराम ने बैज से कहा था, "हा आमचा शेवाचा प्रयत्न आहे", यानी यह हमारा आखिरी प्रयास है। पहला प्रयास कब हुआ था? अगर आप्टे और गोडसे इस साजिश के पीछे थे, तो उन्होंने बैज द्वारा सुझाए गए हथियारों और विस्फोटकों के वितरण में बदलाव को क्यों स्वीकार किया? सुलोचना और बैज की गवाही में भी विरोधाभास हैं। अगर कोई साजिश थी भी, तो यह साबित नहीं हुआ है कि मदनलाल उसमें शामिल थे।
24 दिसंबर 1948: बनर्जी ने अपनी दलीलें जारी रखीं। पहचान परेड के गवाहों की गवाही का हवाला देते हुए बनर्जी ने कहा, 'बंबई के मुख्य प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेट ब्राउन के पास आरोपियों की पुलिस रिमांड पर फैसला सुनाने का अधिकार तब तक नहीं था जब तक कि उन्होंने मामले की फाइल में उनके पुलिस रिमांड के कारणों का उल्लेख न कर दिया हो। पुलिस अधिनियम उन्हें आरोपियों के पुलिस हिरासत में रहते हुए पहचान परेड आयोजित करने का अधिकार नहीं देता है। इसलिए अपनाई गई प्रक्रिया पूरी तरह से अवैध थी। आरोपियों को जांच और पूछताछ के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाया गया, यह कानून के तहत अनुमत है, लेकिन पुलिस ने यह एक ऐसी साजिश गढ़ने और स्थापित करने के इरादे से किया, जो अस्तित्व में

ही नहीं थी। अभियोजन पक्ष ने यह स्पष्ट नहीं किया है कि मदनलाल द्वारा योजना के अनुसार बम विस्फोट करने के बाद गिरोह के अन्य सदस्य अपनी निर्धारित कार्रवाई करने में क्यों विफल रहे। इस प्रकार साजिश का आरोप न तो सिद्ध हुआ है और न ही साबित हुआ है।' तब बनर्जी ने ऐसे मामले की सुनवाई करने के न्यायालय के अधिकार को चुनौती दी। कानून के प्रचलित प्रावधानों के अनुसार, आरोपी के खिलाफ मामले की सुनवाई करने का अधिकार न्यायालय के पास है, इसलिए यह न्यायालय मामले को सत्र न्यायालय में भेजने के बजाय उसकी सुनवाई कर सकता है।
उचित प्रक्रिया यह होती कि मुकदमे को समन के आधार पर सुनवाई के बजाय वारंट के आधार पर सुनवाई के रूप में स्वीकार किया जाता, जैसा कि अभी किया जा रहा है। इस प्रकार के मुकदमे की कार्यवाही के संबंध में कानून में कोई स्थापित मिसाल या दिशानिर्देश नहीं हैं, इसलिए मौजूदा कानून में खामी है। पूरा मुकदमा अवैध रूप से चलाया गया है, यहां तक कि आरोपियों के खिलाफ लगाए गए आरोप भी स्थापित कानूनी प्रक्रियाओं के अनुरूप नहीं हैं।
'मदनलाल की गिरफ्तारी के समय उससे जब्त किया गया कोट आप्टे का नहीं है, जैसा कि पुलिस और अभियोजन पक्ष ने दावा किया है। कोट बरामदगी की कहानी मनगढ़ंत है ताकि मदनलाल और अन्य लोगों के बीच संबंध स्थापित किया जा सके और फिर यह साबित किया जा सके कि इस तरह एक साजिश रची गई थी। आप्टे से पतलून बरामद करने के हालात भी संदिग्ध हैं।'
'अहमदनगर से किसी गवाह को क्यों नहीं बुलाया गया? अभियोजन पक्ष ने आरोप पत्र में उनका जिक्र किया था। मैं मानता हूं कि गवाह के तौर पर किसे पेश करना अभियोजन पक्ष का अधिकार है। लेकिन जिन

गवाहों की गवाही मामले के लिए बेहद जरूरी है, उन्हें बुलाया जाना चाहिए।'
अब अदालत को यह तय करना है कि महत्वपूर्ण गवाहों को अदालत में गवाही देने के लिए पेश न करके अभियोजन पक्ष ने गलती की है या नहीं। अभियोजन पक्ष ने प्रोफेसर जैन की गवाही के आधार पर अहमदनगर में मदनलाल के कृत्यों का उल्लेख किया है, लेकिन उनकी गवाही केवल सुनी-सुनाई बातों पर आधारित है।
बनर्जी ने आरोपी को देखने वाले गवाहों की गवाही स्वीकार किए जाने पर आपत्ति जताई। उन्होंने कहा, 'यदि इन गवाहों की गवाही स्वीकार नहीं की जाती है, तो मदनलाल और आप्टे के बीच उक्त संबंध के बारे में बैज का बयान प्रमाणित नहीं होता है।'
अभियुक्तों के बयानों का हवाला देते हुए बनर्जी ने कहा, 'अभियुक्तों ने अपने बयानों में कुछ दावे किए हैं, अभियोजन पक्ष ने उनसे गवाह पेश करके अपने बयानों को पुष्ट करने को कहा है। आरोपों को साबित करना अभियोजन पक्ष की जिम्मेदारी है। अभियुक्तों को अपनी निर्दोषता साबित करने की आवश्यकता नहीं है।'
जैन ने कहा है कि जब मदनलाल उनसे मिलने आए थे तब यह षड्यंत्र अस्तित्व में था। यह नहीं कहा जा सकता कि षड्यंत्र की शुरुआत तब हुई जब मदनलाल, ओमप्रकाश और चोपड़ा के साथ शस्त्र भंडार गए और वहां की सामग्री की जाँच की। यदि यह गांधीजी के उपवास के कारण था तो यह कहा जा सकता है कि इसकी शुरुआत 14 जनवरी को हुई।
जब तक अभियोजन पक्ष यह साबित नहीं कर देता कि साजिश क्यों, कब और किन परिस्थितियों में अस्तित्व में आई, तब तक वह अदालत से यह उम्मीद कैसे कर सकता है कि वह किसी साजिश को मानेगी?

20 और 30 जनवरी की घटनाएं आपस में जुड़ी हुई नहीं हैं। नाथूराम गोडसे प्रार्थना स्थल पर मौजूद नहीं थे। अभियोजन पक्ष का दावा है कि 20 जनवरी को साजिश नाकाम हो गई और नाथूराम गोडसे वहां मौजूद थे। लेकिन 30 जनवरी को नाथूराम ने जो किया, उससे अभियोजन पक्ष के दावे साबित नहीं होते।
27 दिसंबर 1948: बनर्जी ने दावा किया, 'पुलिस को आरोपी से पूछताछ करने का कोई अधिकार नहीं है। आरोपी स्वेच्छा से बयान दे सकता है। इस मामले में पुलिस ने पहले आरोपी से पूछताछ की, जो कानून के अनुसार अवैध है। यहां तक कि अदालत भी पहले आरोपी से जिरह नहीं कर सकती।'
पहचान परेड के संचालन और मजिस्ट्रेट द्वारा बयान दर्ज करने के संबंध में बोलते हुए, बनर्जी ने कहा, 'पहचान परेड आयोजित करने वाले मजिस्ट्रेट द्वारा दर्ज किए गए बयान उन्हें निचली अदालत को भेजे जाने चाहिए थे, लेकिन ऐसा नहीं किया गया। रिमांड आदेश एक ऐसे मजिस्ट्रेट द्वारा जारी किए गए थे जिनके पास आरोपी पर कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था।'
इस मुकदमे में अभियोजन पक्ष ने अदालत से साजिश की कल्पना करने और फिर गवाहों के बयानों को स्वीकार करने के लिए कहा है। किसी भी गवाह की गवाही के बिना आरोपपत्र जारी करना अदालत के लिए गैरकानूनी है। इसके अलावा, मुकदमा शुरू होने के बाद पुलिस द्वारा ग्वालियर में डॉ. परचुरे के आवास पर छापा मारना और तलाशी लेना उचित नहीं है। इस तरह अभियोजन पक्ष ने ऐसे काम किए हैं जिनकी उच्च न्यायालयों ने कड़ी निंदा की है।
'स्थापित कानूनों के अनुसार न्यायालय को आरोप तय करने का कोई अधिकार नहीं है, जो कि इस न्यायालय ने किया है।' बैनर्जी ने अपने

तर्क के समर्थन में इस मामले पर प्रिवी काउंसिल का एक फैसला प्रस्तुत किया।
मदनलाल ने प्रोफेसर जैन को जो बताया था, उससे एक साजिश के अस्तित्व का अनुमान लगाया गया था, इस बारे में बैनर्जी ने कहा, 'यह महज एक संयोग था, इसका किसी साजिश के अस्तित्व से कोई संबंध नहीं था।'
कुछ गवाहों की गवाही का हवाला देते हुए बैनर्जी ने कहा, 'मेरे मुवक्किल के संबंध में ये गवाहियां प्रमाणित नहीं हुई हैं, इसलिए इनका उनके मामले पर कोई असर नहीं पड़ता।'
अपने तर्कों का समापन करते हुए बनर्जी ने कहा, 'आरोपियों के खिलाफ बेहद गंभीर आरोप लगाए गए हैं। पीढ़ियों तक वकील और न्यायाधीश इस अदालत के फैसले पर बहस और चर्चा करेंगे, इसकी आलोचना और प्रशंसा दोनों होगी, इसे लाखों लोग पढ़ेंगे।'
गोपाल गोडसे के वकील द्वारा प्रस्तुत तर्क
इसके बाद, गोपाल गोडसे और डॉ. परचुरे के बचाव पक्ष के वकील इनामदार ने अपनी दलीलें शुरू कीं।
इनामदार ने कहा, 'अभियोजन पक्ष ने मेरे मुवक्किल गोपाल गोडसे के खिलाफ जिस तरह से मामला गढ़ा है, उससे मुझे लगता है कि यह सब बाद में सोच-समझकर किया गया है।' अवैध हथियारों और विस्फोटकों की तस्करी के आरोप के बारे में बोलते हुए उन्होंने कहा, 'अभियोजन पक्ष द्वारा पेश किए गए सभी गवाहों की गवाही से मुझे एक भी ऐसा वाक्य नहीं मिला, जिससे यह साबित हो सके कि मेरे मुवक्किल गोपाल गोडसे ने अवैध रूप से बिना लाइसेंस वाली रिवॉल्वर दिल्ली पहुंचाई थी।'

□□□□ □□□□□□ □□□ □□□□□ □□ □□□□□ □□□□□ □□ □□ □□□□□□□□□ □□ □□□□□□□□□ □□□□ □□ □□ □□□ □□□□□□ □□ □□□ □□ □□□□□ □□□□ □□□□

गांधी जी की अस्थियों वाले कलश।

उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री जी.बी. पंत, प्रधानमंत्री नेहरू, उत्तर प्रदेश की राज्यपाल सरोजिनी नायडू, मौलाना अबुल कलाम आजाद और सरदार पटेल सहित अन्य गणमान्य व्यक्ति गांधी जी के अस्थि कलश को ले जा रही विशेष ट्रेन के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

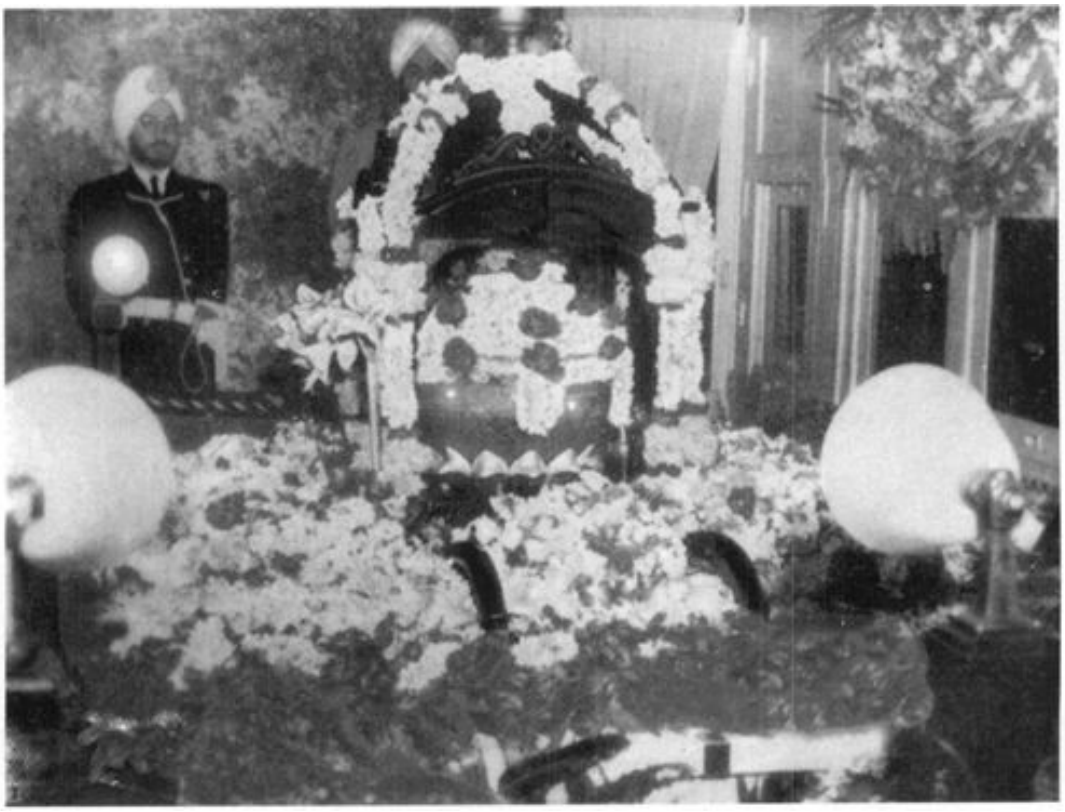

□□ □□□ □□ □□□□□ □□□□□ □□□ □□ □□ □□□□□□□□ □□ □□□ □□□

प्रधानमंत्री नेहरू, देवदास गांधी और रामदास गांधी, हाथ में कलश लिए हुए, विसर्जन के लिए त्रिवेणी संगम की ओर जा रहे हैं।

त्रिवेनी संगम पर वीआईपी और मीडियाकर्मियों को ले जाने वाली नावें दिखाई दे रही हैं, जबकि लाखों लोग नदी के किनारे उमड़ पड़े हैं।

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

भीलारे गुरुजी, वह व्यक्ति जिन्होंने पंचगनी में नाथूराम गोष्ठी द्वारा गांधीजी पर किए गए हमले के दौरान उनकी जान बचाई थी।

पंजाब उच्च न्यायालय में अपील की सुनवाई करने वाली तीन न्यायाधीशों की पीठ के सदस्य न्यायमूर्ति जी.डी. खोसला।

[redacted] [redacted], [redacted] [redacted] [redacted]

न्यायमूर्ति अच्च्रुराम ने उच्च न्यायालय की अपील की संयुक्त सुनवाई की।

Conspirators and killers. (Sitting) from L. to R. Narayan Apte, V.D. Savarkar,Nathuram Godse and Vishnu R. Karkare. (Standing) from L. to R. Shankar Kistayya, Gopal Godse, Madanlal Kashmirilal Pahwa and Badge. The one missing member of the gang is Dr. Sadashiv Parchure.

कटघरे में आरोपी. आगे की पंक्ति में बाएं से आर. नाथूराम वी. गोडसे, नारायण आप्टे और विष्णु करकरे। मध्य पंक्ति में L से R. रामचन्द्र बैज, मदनलाल K. पहवांड गोपाल गोडसे। पीछे की पंक्ति एल से आर तक शंकर किस्तैया, वी.डी. सावरकर और डॉ. परचुरे को अलग से देखा।

10½ بجے دن - نمبر 3 - اِس وقت معہ انسپکٹر صاحب دفتر پولیس
سی - آئی - ڈی ہوا ڈی ٹیکسی پہنچے - مسٹر نکروالا صاحب کی خدمت میں
پیش ہوئے - جن کو پھر دوبارہ جملہ حالات مقدمہ ھذا بتلائے گئے - ایک یادداشت
انگریزی جس میں مختصر بیان مدن لال ملزم انگریزی میں درج ہے - اور
اِس کے نیچے یادداشت S. P. صاحب نیو دھلی کی درج ہے - جناب نکروالا
صاحب کی خدمت میں پیش کی گئی - جنہوں نے اِس یادداشت کو بغور پڑھا
اور اپنے پاس یادداشت رکھی - تحریری نوٹ متعلقہ مقدمہ ھذا واپس دی - جو کہ
نقل ھذا ہے - جناب نکروالا صاحب کو Karkra کے متعلق تمام حالات واضح کئے
گئے اور مزید یہ بھی عرض کیا گیا کہ مدن لال ملزم نے یہ بھی بتلایا تھا
کہ ہمراہی ملزمان میں سے ایک ملزم جس کا نام نہیں جانتا - ہندو راشٹریہ
یا اگرنی اخبار کا ایڈیٹر تھا - جس کا رنگ سانولہ ، عمر 33/34 سال - قد تقریباً
5' 6" بیان کرتا تھا - یہ معلوم نہیں کہ وہ ایڈیٹر بمبئی یا پونہ کا ہے - اِس کے
علاوہ دیگر تین مرہٹہ و راجہ صاحب جو کہ اپنے ہمراہی ملزم بیان کرتا تھا- کے
حلیئے بتلائے گئے - ایڈیٹر ہندو راشٹریہ یا اگرنی اخبار اور Karkra ساکن احمدنگر
کے متعلق مسٹر نکروالا صاحب کی خدمت میں خاص طور پر زور دیا گیا - کہ
اِن کا ذکر ملزم کے بیان میں صاف طور پر آ چکا ہے - اِن کی گرفتاری کی
پہلے کوشش کی جاوے - تاکہ اِن سے دریافت عمل میں لائی جا سکے -

[redacted]

1666-A

Madan Lal s/o Pishori Lal [illegible]
Pahwa of Pakpattan Dist Montgomery
West Punjab Aged 20/21.

Refugee went to Bombay in
Middle of November

Contacted Mahasabha workers
for employment

Met Karkare who introduced to
the active workers or President of the
Sabha. Karkare also proprietor of a
hotel + Deccan Guest House.
Karkare having come to know that
the accused were a member of
RSS worked a plan to [illegible]
kill Mahatma Gandhi who [illegible] is
enemy of Hindus

Came to [illegible] Delhi with Karkare
reaching here about 17.1.48

Stayed at Hindu Shanti Hotel
Room No. 2. Servant Ram Singh took
his and Karkare's clothes for washing to
a laundry. The accused gave Rs 15/-
for sewing charges of pant and for
washing charges

Left the hotel on 19.1.48 in
the evening. Karkare met Sham Deshpande
and in the Hindu Mahasabha
Bhawan and got Room No 3 where
they placed their luggage.

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible].

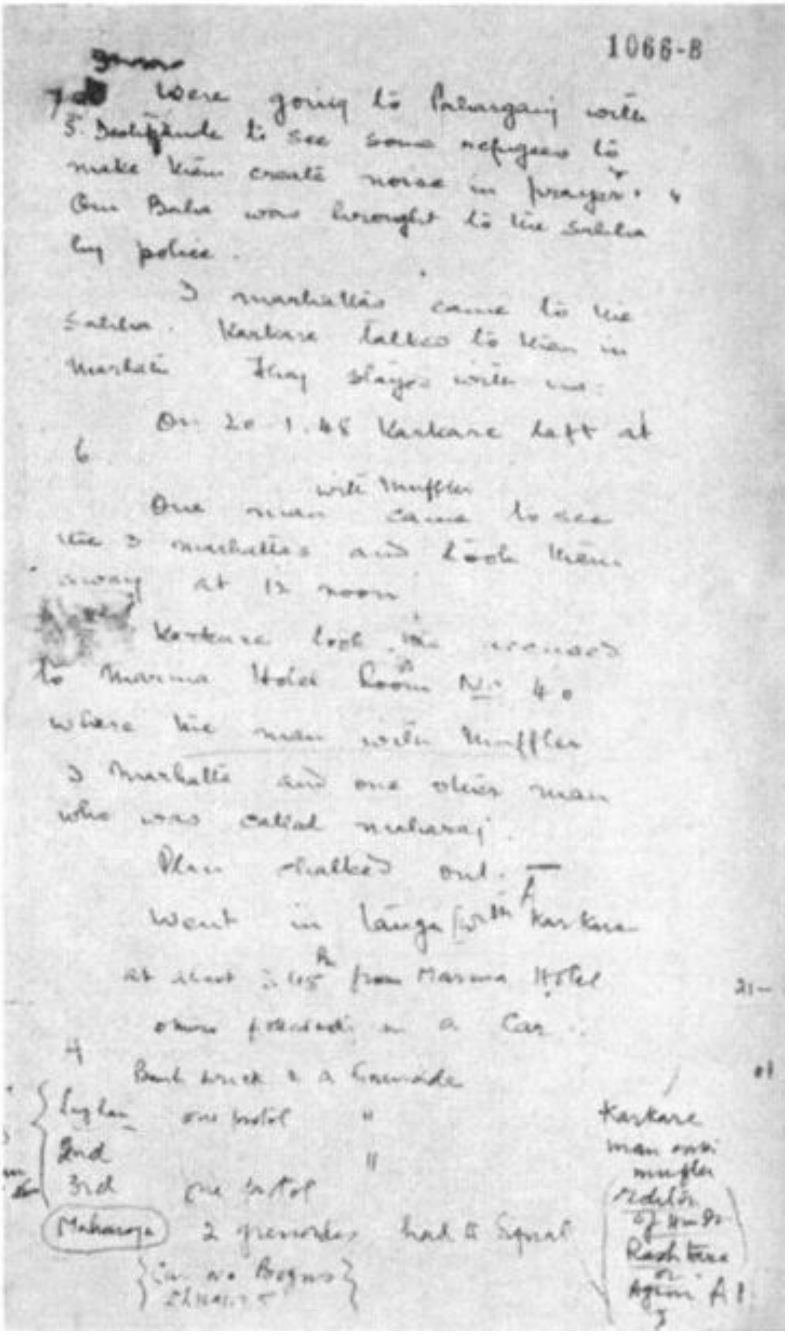
1066-B

We are going to Palangaj with 5. Dedigunde to see some refugees to make them create noise in prayer. One Baba was brought to the Sukha by police.

3 marshalls came to the Sukha. Karkare talked to them in Marathi. They stayed with us.

On 20.1.48 Karkare left at 6

One man with muffler came to see the 3 marshalls and took them away at 12 noon.

Karkare took the remand to Marina Hotel Room No. 40 where the man with muffler 3 marshalls and one other man who was called Nathuraj.

Then talked and went in Tanga with Karkare at about 2.45 from Marina Hotel 21-

other proceeded in a Car.

Bank truck & Gwalior

Gwalior one motor "

2nd "

3rd one motor

Maharaja 2 grenades had a signal

Karkare man with muffler

[illegible]

Again A.I.

[illegible] [illegible] [illegible] [

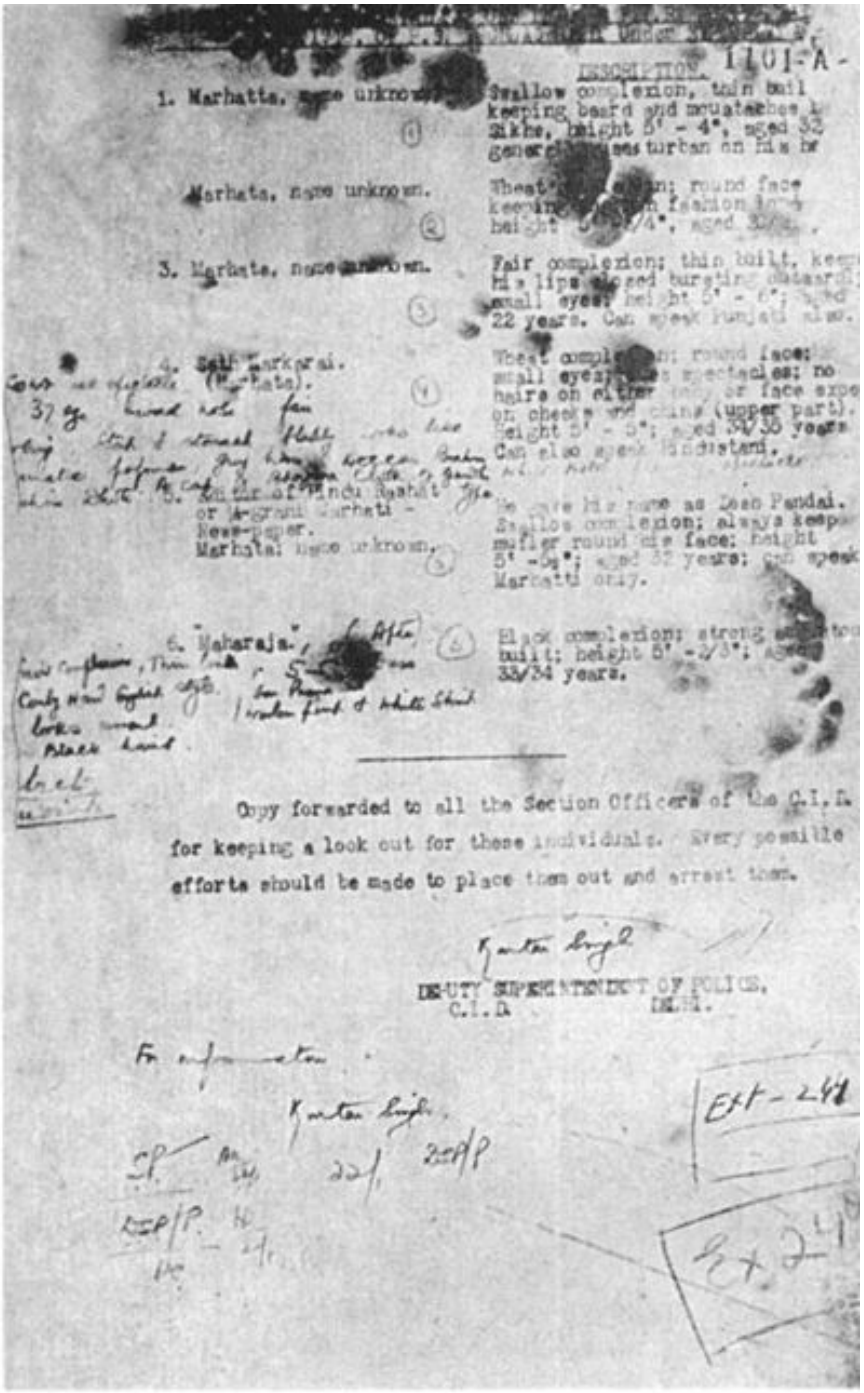

DESCRIPTION. 1101-A -

1. Marhatta, name unknown. Swallow complexion, thin built keeping beard and moustaches & Sikhs, height 5' - 4", aged 32 generally wears turban on his he

2. Marhatta, name unknown. Wheat[illegible] complexion; round face keeping [illegible] fashion [illegible] height [illegible]/4", aged 3[illegible].

3. Marhatta, name unknown. Fair complexion; thin built, keep his lips closed bursting cheeks; small eyes; height 5' - 6"; aged 22 years. Can speak Punjabi also.

4. Sahib Markarai. (Marhatta). 37 yrs. [illegible] complexion; round face; small eyes; wears spectacles; no hairs on either [illegible] or face expe on cheeks and chins (upper part). Height 5' - 5"; aged 34/35 years Can also speak Hindustani.

5. Editor of Hindu Rashtri or Organ Marhati - News-paper. Marhata: name unknown. He gave his name as Deen Pandai. Swallow complexion; always keeps muffler round the face; height 5' -0"; aged 32 years; can speak Marhatti only.

6. Maharaja. [illegible] After [illegible] complexion, Thin [illegible] Curly Hair Fighter style. [illegible] wears Khaki Suit & White Shirt [illegible] Black hand [illegible]

Black complexion; strong and [illegible] built; height 5' - 2/3"; aged 33/34 years.

Copy forwarded to all the Section Officers of the C.I.B. for keeping a look out for these individuals. Every possible efforts should be made to place them out and arrest them.

Kanta Singh
DEPUTY SUPERINTENDENT OF POLICE,
C.I.B. DELHI.

For information.

Kanta Singh.

SP 22/ ZSP

ZSP/P.

Ext - 248

Ext 2-41

[illegible] 24 [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

notice question No.*864 put
A.J.Boddameti.

Will the Hon'ble Minister for
me and Revenue be pleased to
ate -

(1) whether it is a fact that the
lot for the assassination of
ahatma Gandhi and plans for the
ssassination of other high-ranking
dia leaders were hatched in the
mbay Province;

(2) whether reports regarding the
xistence of such a plot had reached
overnment, prior to the assassina-
ion of Mahatma Gandhi;

(3) if so, what precautionary
easures were taken by Government to
revent the tragedy that followed;

(4) what is the number (district-
ise) of the members of the R.S.S.
o far arrested in the Province in
onnection with the ~~xxxx~~ assassina-
ion of Mahatma Gandhi?

Proposed reply.

(1) As the investigation into the alleged conspiracy ~~to assassinate Mahatma Gandhi and other Indian leaders~~ is still not complete, it is too early to give any information on the question asked in this clause.

(2) ~~No~~ A report from Arafat received last on 21st Jan re. such a plot

(3) ~~Does not arise.~~ [illegible] Bombay Govt. [illegible] Police on 22nd morning & the C.I.D. [illegible] Bombay Govt. [illegible] Mahatma [illegible] Protected persons.

(4) Some persons have been arrested in connection with the assassinati of Mahatma Gandhi. It is not possi to say at this stage how many of them are members of the R.S.S. Sangh.

Ex 167
7/6/68

[See para. 4.8]

गांधी की हत्या पर हुई बहस के दौरान बॉम्बे प्रांतीय परिषद में दाखिल किए गए जवाब की प्रति। (पूर्व 167, कपूर आयोग)।

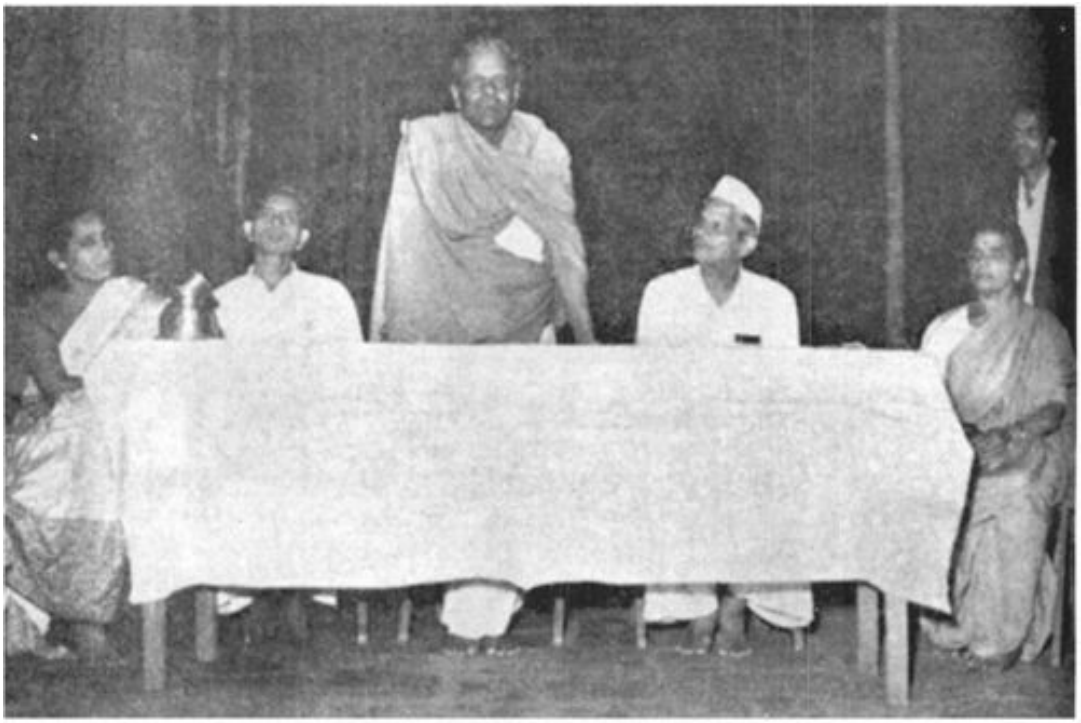

एल से आर तक सिंधुताई गोडसे, गोपाल गोडसे, जी.वी. सत्य विनायक पूजा में केतकर, विष्णु करकरे और श्रीमती एस. करकरे।

(1) गोपाल वी. गोडसे,
(2) जी.वी. केतकर,
(3) वी.आर. ठाकुर,
(4) वी.आर. करकरे,
(5) श्रीमती एस. करकरे,
(6) Smt. D.H. Thatte at the Satya Vinayak Puja.

जी.वी. केतकर गोपाल गोडसे (बाएं) और विष्णु आर. करकरे (दाएं) को सम्मानित करने के लिए बैठक को संबोधित कर रहे थे।
इसके बाद इनामदार ने अदालत द्वारा अभियुक्तों के खिलाफ मामले की सुनवाई करने के अधिकार को चुनौती दी। उन्होंने कहा, 'जब तक यह साबित नहीं हो जाता कि मेरे मुवक्किल ने बिना लाइसेंस वाली रिवॉल्वर का परिवहन किया था, तब तक अभियुक्तों को मामला खारिज करवाने और रिहा होने का अधिकार है।'
28 दिसंबर 1948: इनामदार ने अपनी दलीलें जारी रखते हुए कहा, 'यह बहुत अजीब बात है कि गांधी जैसे व्यक्ति की हत्या की साजिश के बारे में जानने के बाद भी बॉम्बे पुलिस ने उनकी सुरक्षा के लिए कोई उपाय नहीं किए।'
'जब गांधीजी की हत्या हुई, तो नागरवाला ने प्रो. जैन का बयान तुरंत दर्ज करने के बजाय 16 फरवरी को मोरारजी देसाई का बयान दर्ज किया। उसके बाद ही उन्होंने प्रो. जैन का बयान दर्ज किया। तब तक आप्टे और करकरे को छोड़कर बाकी सभी आरोपियों को गिरफ्तार किया जा चुका था। जैन का बयान इस तरह से दर्ज किया गया जिससे इस बात की पुष्टि हो सके कि...'
मोरारजी देसाई का बयान.' *
1. मदनलाल एक मूर्ख है और इसीलिए उसने साजिश का खुलासा किया।
प्रो. जैन।
2. प्रो. जैन तो उससे भी बड़ा मूर्ख है।
3. मोरारजी देसाई और सरदार पटेल अपने पदों के लिए अयोग्य हैं।
4. नागरवाला भी अयोग्य है क्योंकि उसने बयान दर्ज नहीं किया।
प्रोफेसर जैन की ओर से 21 जनवरी को ही।
इसके बाद इनामदार ने पुलिस द्वारा अपनाई गई जांच पद्धति पर आपत्ति जताई। उन्होंने कहा, 'पुलिस ने आरोपियों को जिस स्थान पर

रखा था, यानी बॉम्बे सीआईडी मुख्यालय के कार्यालय भवन में, वह आम जनता के लिए आसानी से सुलभ था, जिससे वे जनता की नजरों के सामने आ गए और उन्हें आसानी से अपराधी के रूप में पहचाना जा सका।'
पुलिस ने गवाहों के बयान दर्ज करने से पहले ही उन्हें हिरासत में रखा; मधुकर काले और जगदीश गोयल ऐसे ही दो गवाह हैं। ऐसे गवाहों से सच बोलने की उम्मीद कैसे की जा सकती है? पी.एल. गोडबोले ने पहले तो गोपाल गोडसे को देखने से इनकार किया, फिर भी पुलिस उनसे मिलने गई। जी.बी. काले को भी पुलिस हिरासत में रखा गया था। कौन विश्वास कर सकता है कि पुलिस ने गवाहों पर दबाव नहीं डाला?
इसके बाद इनामदार ने परचुरे के घर पर पुलिस द्वारा की गई तलाशी का जिक्र किया। 'परचुरे को 17 फरवरी को गिरफ्तार किया गया था। ये सारी तलाशी किसके आदेश पर की गई थी? मैं अदालत में इन बातों का जिक्र सिर्फ इसलिए कर रहा हूं ताकि अदालत को पुलिस के व्यवहार की जानकारी हो सके। आप्टे और गोपाल गोडसे को हिरासत में रहते हुए उनसे एक पतलून और एक बैग बरामद किया गया था। अदालत को इन बरामदगी से कोई निष्कर्ष नहीं निकालना चाहिए।'
'गवाहों की गवाही के बाद बैज से जिरह की गई, जिसका मेरे मुवक्किलों के मुकदमे पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा।'
पहचान परेड का जिक्र करते हुए इनामदार ने शिकायत की, 'गोविंद्रम को दो महीने बाद आरोपियों की पहचान करने के लिए कहा गया था।' गोपाल गोडसे द्वारा जमा किए गए अवकाश आवेदनों का हवाला देते हुए इनामदार ने कहा, 'यह मानने के पर्याप्त कारण हैं कि गोपाल गोडसे अपने अवकाश की पूरी अवधि के दौरान अपने गांव में ही रहे। उन्होंने 26 जनवरी को ड्यूटी पर वापसी की थी। जब उन्हें पता चला

कि उनके बड़े भाई ने गांधीजी की हत्या कर दी है और उनकी पत्नी को गांधीजी के एक अहिंसक अनुयायी द्वारा जान से मारने की धमकी दी गई है, तो उन्होंने तुरंत पुलिस के सामने आत्मसमर्पण कर दिया। पुलिस के अनुसार, वह किरकी से उक्सान गए और उन्हें वहीं गिरफ्तार किया गया।'
इनामदार ने कहा, 'गोविंद्रम ने गवाही दी है कि उसने मरीना होटल में बम विस्फोट से तीन दिन पहले बैज और गोपाल गोडसे को देखा था। गोपाल 16 जनवरी को किरकी में था, किसी ने भी यह गवाही नहीं दी है कि वह 17 जनवरी को विमान से दिल्ली गया था। इसलिए गोविंदराम की गवाही बेकार है।'
'हिंदू महासभा भवन से किसी भी गवाह को नहीं बुलाया गया, जो गोपाल की वहां मौजूदगी की गवाही दे सकता था। वन रक्षक ने भी हिंदू महासभा भवन के पीछे जंगल में गोपाल को देखने के बारे में कुछ स्पष्ट रूप से नहीं कहा।'
'जिस दिन मेरे मुवक्किल को पहचान परेड के लिए ले जाया गया, उस दिन मजिस्ट्रेट के समक्ष उस प्रक्रिया के संबंध में शिकायत दर्ज कराई गई जिस पर विचार किया जाना चाहिए था। इस संबंध में पुलिस का व्यवहार बेहद संदिग्ध है।'
'चूंकि सुरजीत सिंह के पास टैक्सी चलाने का लाइसेंस नहीं था, इसलिए उनकी आजीविका पुलिस की नजरों में अच्छा बने रहने पर निर्भर थी, इसलिए उनकी गवाही पुलिस द्वारा काफी हद तक प्रभावित हो सकती थी।'
'अदालत को इस तथ्य से कोई निष्कर्ष नहीं निकालना चाहिए कि 20 जनवरी को बम विस्फोट के बाद आरोपी घबराहट की स्थिति में घटनास्थल से भाग गया था।'

29 दिसंबर 1948: इनामदार ने कहा, 'गवाह भूर सिंह ने 20 तारीख को पुलिस को जिस व्यक्ति के साथ छोटूराम से बात करते हुए देखा था, उसका जो विवरण दिया था, वह अदालत में दिए गए उसके बयान से बिलकुल अलग है। अभियोजन पक्ष का दावा है कि वह व्यक्ति करकरे था, भूर सिंह ने उसे दुबला-पतला और कमजोर बताया है, जबकि करकरे बहुत हट्टा-कट्टा और तगड़ा है। इसलिए अदालत को भूर सिंह के बयान पर विश्वास नहीं करना चाहिए। इसके अलावा, बिरला हाउस में नौकर होने के नाते वह पूरी तरह से पुलिस के नियंत्रण में है। भूर सिंह ने गोपाल गोडसे की पहचान भी की है, लेकिन उसके बयान में मौजूद विरोधाभासों और विसंगतियों को देखते हुए गोपाल गोडसे की उसकी पहचान का कोई महत्व नहीं है। इसके अलावा, भूर सिंह और सुलोचना से आरोपियों की पहचान काफी समय बाद करवाई गई थी।' फ्रंटियर हिंदू होटल के मैनेजर रामप्रकाश ने बताया कि 20 तारीख को शाम 4 बजे एक व्यक्ति उनके होटल में आया और उसने एक कमरा बुक कराया। उन्होंने उसी व्यक्ति को उसी रात 9 बजे रेडियो सुनते हुए फिर देखा। क्या यह किसी ऐसे व्यक्ति का व्यवहार लगता है जो बम विस्फोट स्थल से भाग गया हो?
इसके अलावा, हस्तलेख विशेषज्ञ ने अपने बयान में कहा है कि होटल के रजिस्टर में लिखा नाम "राजगोपालन" पुलिस द्वारा उपलब्ध कराए गए गोपाल गोडसे के हस्तलेख के नमूने से मेल खाता है। हस्तलेख विशेषज्ञ ने अपने बयान में कहा है कि "राजगोपालन" कलम की एक ही धारा में लगातार लिखा गया है। लेकिन जिरह के दौरान उसने स्वीकार किया कि हस्ताक्षर करते समय कलम बीच में ही उठ गई थी। विशेषज्ञ झूठा है। वह पुलिस कर्मचारी है और उसने अपने वरिष्ठों को खुश करने के लिए बयान दिया है।

'हस्ताक्षर में कुछ सुधार और बदलाव किए गए थे, स्याही में भी अंतर था। अगर इन सभी बातों को ध्यान में रखा जाए तो अभियोजन पक्ष का यह दावा कि गोपाल गोडसे दिल्ली में मौजूद था, पूरी तरह से संदिग्ध है।'
इसके बाद इनामदार ने गोडबोले की गवाही में मौजूद परस्पर विरोधाभासों का हवाला दिया। उन्होंने कहा, 'किसी व्यक्ति का एक ही दिन बॉम्बे और ठाणे में मौजूद होना संभव नहीं है, इसलिए अदालत को इस आधार पर मेरे मुवक्किल के खिलाफ कोई निष्कर्ष नहीं निकालना चाहिए।'
'गोपाल गोडसे से रिवॉल्वर जिस तरीके से बरामद की गई वह गैरकानूनी है। उसकी तलाशी से पहले पंचों की नियुक्ति की जानी चाहिए थी। गोडबोले और काले पुलिस हिरासत में थे, इसलिए उन्हें पंच नहीं माना जा सकता, क्योंकि पुलिस ने उन पर दबाव डाला होगा।' 'गोपाल गोडसे से बरामद बताया जा रहा बैग असल में बैज का है। बैज की गिरफ्तारी के बाद उसके घर की तलाशी नहीं ली गई। अगर तलाशी ली गई होती, तो संभव था कि बैग वहीं मिल जाता। इसलिए बैग के संबंध में सभी गवाहों के बयान खारिज कर दिए जाने चाहिए।'
अभियोजन पक्ष ने आरोप लगाया है कि गोपाल गोडसे ने दिल्ली यात्रा के लिए छुट्टी मांगी थी। लेकिन उसने उक्सान से एक भी गवाह पेश नहीं किया जो यह गवाही दे सके कि उस दौरान गोपाल गोडसे उक्सान में मौजूद नहीं थे। इसलिए अदालत को बचाव पक्ष के इस तर्क को स्वीकार करना होगा कि गोपाल गोडसे उक्सान में मौजूद थे। इनामदार ने नथुराम गोडसे द्वारा गोपाल गोडसे की पत्नी को अपनी बीमा पॉलिसी में नामांकित करने के पीछे का कारण बताते हुए कहा, 'यह कहना ही काफी है कि गोपाल गोडसे अपने वेतन से कुछ भी बचत

करने में असमर्थ थे, इसलिए नथुराम ने अपने भाई के परिवार के लिए कुछ व्यवस्था करने का सोचा।'
फिर इनामदार ने परचुरे के अतीत पर प्रकाश डाला। 'परचुरे हिंदू सभा के अध्यक्ष थे और उन्होंने कांग्रेस के खिलाफ प्रदर्शन किए थे, इसलिए यह बहुत संभव है कि कांग्रेस ने द्वेषवश उन्हें इस मामले में झूठा फंसाया हो।'
30 दिसंबर 1948: इनामदार ने अपनी दलीलें जारी रखीं। उन्होंने कहा, 'ग्वालियर के गवाह मधुकर काले और खीरे के बयान परस्पर विरोधी हैं। काले का दावा है कि गांधीजी की हत्या की खबर सुनकर उन्होंने परचुरे को अपना औषधालय बंद करने को कहा था, जबकि खीरे का कहना है कि परचुरे ने यह काम अपनी मर्जी से किया था। क्या गांधीजी की मृत्यु चाहने वाला व्यक्ति इस तरह का व्यवहार करेगा?'
परचुरे के इकबालिया बयान के बारे में बात करते हुए इनामदार ने कहा, 'मैजिस्ट्रेट अटल को ऐसा करने का अधिकार नहीं था। किले में जाकर अटल ने अपनी मजिस्ट्रेटीय शक्ति खो दी थी।'
इसके अलावा, ग्वालियर पुलिस के महानिरीक्षक मार्श स्मिथ ने परचुरे को सैन्य हिरासत में रखने का आदेश दिया था। शासक के सिवा किसी को भी ऐसे आदेश पारित करने का अधिकार नहीं है। इसलिए डॉ. परचुरे की सैन्य हिरासत अवैध थी।
मजिस्ट्रेट अटल ने कहा है कि उन्हें इकबालिया बयान तैयार करने और दर्ज करने में तीन घंटे लगे। सात पन्नों का बयान सिर्फ तीन घंटे में कैसे दर्ज किया जा सकता है? इसका मतलब है कि परचुरे ने इकबालिया बयान नहीं दिया; मजिस्ट्रेट अटल पहले से लिखा हुआ बयान लाए और परचुरे से उस पर हस्ताक्षर करवा लिए। जिस परिस्थितियों में बयान दर्ज किया गया और अभियोजन पक्ष द्वारा

बयान की प्रामाणिकता की पुष्टि करने के लिए कोई विश्वसनीय गवाह पेश न किए जाने से अभियोजन पक्ष की कहानी पर विश्वास नहीं होता। ग्वालियर के सभी गवाह संदिग्ध हैं। इसलिए मेरे मुवक्किल को रिहा किया जाना चाहिए।
अभियोजन पक्ष का यह तर्क कि 20 और 30 तारीख के बीच ऐसी कोई घटना नहीं घटी जिससे गोडसे का गुस्सा भड़क सकता था, और इसलिए यह मान लेना चाहिए कि गांधी की हत्या आकस्मिक नहीं बल्कि एक सुनियोजित साजिश का हिस्सा थी, निराधार है। इस पूरे घटनाक्रम का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया जाना चाहिए। परचुरे से स्वयंसेवक न मिलने के बाद गोडसे निराश और हताश हो गया था।
'नाथूराम एक अखबार के संपादक थे, भावुक, संवेदनशील, अविवाहित और अपने परिवार से अलग रहते थे। उन्हें अपने विचारों के कारण कारावास भी सहना पड़ा। दिल्ली पहुँचने पर गोडसे ने शरणार्थियों की दुर्दशा देखी और पाया कि गांधीजी के दबाव बनाने के हथकंडों के सामने भारत सरकार पूरी तरह से लाचार और शक्तिहीन थी। क्या यह नाथूराम को क्रोधित करने के लिए पर्याप्त कारण नहीं था?'
'परचुरे के पिता, एस.जी. परचुरे, ग्वालियर आकर बस गए थे। आरोपी परचुरे का जन्म ग्वालियर में हुआ था और जन्म से ही वे वहीं रहते आए हैं। इसलिए इस बात में कोई संदेह नहीं है कि परचुरे ग्वालियर रियासत के नागरिक हैं।' अंत में इनामदार ने कहा, 'अभियोजन पक्ष का पूरा मामला संदिग्ध और संदेहास्पद है।'
इसके साथ ही बचाव पक्ष के वकीलों की दलीलें समाप्त हो गईं। अभियोजन पक्ष और बचाव पक्ष दोनों ने न्यायाधीश को बधाई दी।

अभियोजन पक्ष की ओर से दाफ्तरी और बचाव पक्ष की ओर से भोपटकर ने मामले की धैर्यपूर्वक सुनवाई करने के लिए न्यायाधीश को धन्यवाद और बधाई दी।
इस प्रकार गांधी हत्याकांड की सुनवाई समाप्त हुई। न्यायाधीश आत्मचरण ने एक महीने के भीतर फैसला सुनाने का वादा किया। अभियोजन पक्ष के गवाहों के बयानों की रिकॉर्डिंग चौरासी दिनों तक चली। ये बयान 696 पृष्ठों के थे। प्रत्येक प्रश्न और उत्तर अंग्रेजी में लिखे गए थे और उनका तेलुगु, मराठी और हिंदुस्तानी में अनुवाद किया गया था। कुछ गवाहों ने गुजराती और पंजाबी में भी अपने बयान दिए थे।
अभियोजन पक्ष ने अदालत में 354 दस्तावेज प्रस्तुत किए और बचाव पक्ष ने 118 दस्तावेज प्रस्तुत किए। मुकदमे से संबंधित अन्य अस्सी वस्तुएं अदालत में जमा की गईं।
एक उल्लेखनीय पहलू यह था कि बचाव पक्ष की पूरी दलील इस बात को साबित करने पर आधारित थी कि कोई साजिश नहीं थी और यह कृत्य पूरी तरह से नाथूराम गोडसे का था, जो उसने अपने गुस्से में आकर क्षणिक पागलपन में किया था। आरोपियों और उनके बचाव पक्ष के वकीलों ने मुकदमे के दौरान लगातार आरएसएस-हिंदू महासभा के इस आरोप को दोहराया कि गांधी भारत के विभाजन के लिए जिम्मेदार थे। रणनीति यह थी कि गांधी के हत्यारों के लिए सहानुभूति और समर्थन जुटाया जाए और संघ और महासभा की हिंदू वर्चस्ववादी विचारधारा का प्रचार किया जाए।
शहीद भगत सिंह और उनके साथी क्रांतिकारियों ने अपने मुकदमे का इस्तेमाल अपनी देशभक्ति की विचारधारा का प्रचार करने के लिए किया था। गोडसे और उसके कट्टरपंथियों ने भले ही कभी आज़ाद, भगत सिंह, बिस्मिल और अशफाकुल्ला खान के कार्यों का अनुकरण नहीं

किया, लेकिन उन्होंने उनकी रणनीति अपनाई और मुकदमे का इस्तेमाल नफरत और कट्टरता का अपना उपदेश फैलाने के लिए किया।
निर्णय
10 फरवरी 1949 को सुबह 11:30 बजे न्यायाधीश आत्मचरण ने गांधी हत्याकांड के मुकदमे में फैसला सुनाया।
उन्होंने गांधीजी के हत्यारे नाथूराम वी. गोडसे और उसके साथी नारायण डी. आप्टे को फांसी की सजा सुनाई।
विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा, शंकर किस्तय्या, गोपाल वी. गोडसे और डॉ. दत्तात्रेय एस. परचुरे को आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई। (भारत में इसका मतलब अधिकतम चौदह वर्ष का कारावास था।)
न्यायाधीश ने विनायक दामोदर सावरकर को 'निर्दोष' पाया और उनकी तत्काल रिहाई का आदेश दिया।
गवाह बैज को भी उसे दी गई सशर्त माफी के अनुसार रिहा कर दिया गया।
जैसे ही प्रत्येक आरोपी को सजा सुनाई गई, वे खड़े हो गए। कटघरे से ले जाने से पहले सभी आरोपियों ने अदालत में नारे लगाए
— 'हिंदू धामी की जय', 'हिंदू धर्म जिंदाबाद', 'पाकिस्तान तोड़ के रहेंगे, भारत केवल हिंदी भाषी हिंदुओं का देश होगा', और ये नारे तब तक लगाए गए जब तक उन्हें ले जाया नहीं गया।
न्यायाधीश ने आरोपियों को सूचित किया कि वे पंद्रह दिनों के भीतर उच्च न्यायालय में अपनी सजा के खिलाफ अपील करने के लिए स्वतंत्र हैं।
न्यायाधीश ने सिफारिश की कि शंकर किस्तय्या की सजा को आजीवन कारावास से घटाकर सात साल के कठोर कारावास में बदल दिया जाए। उस दिन अदालत में जो दृश्य हुआ उसका वर्णन

अदालत खचाखच भरी हुई थी। लाल किले के आसपास के इलाके को प्रतिबंधित क्षेत्र घोषित कर दिया गया था और कानून व्यवस्था बनाए रखने के लिए भारी संख्या में पुलिसकर्मियों और सैनिकों को तैनात किया गया था। सुबह 11:20 बजे कटघरे से सटे कमरे को खोला गया और नाथूराम गोडसे के नेतृत्व में आठों आरोपी अंदर दाखिल हुए। केवल सावरकर के चेहरे पर गंभीर भाव थे। अन्य आरोपी, विशेषकर गोडसे, आप्टे और करकरे, हंसमुख दिख रहे थे और अदालत में मौजूद अपने परिवार और परिचितों को देखकर मुस्कुराते और सिर हिलाते रहे।
न्यायाधीश आत्मचरण, अपने नियमित काले सूट में, ठीक 11:30 बजे न्यायालय में दाखिल हुए। न्यायालय में उपस्थित सभी लोग खड़े हो गए। न्यायाधीश ने सबसे पहले नाथूराम गोडसे को बुलाया; वे खड़े हो गए। फैसला सुनने के बाद वे बैठ गए। फिर आप्टे, करकरे, मदनलाल, शंकर किस्तय्या, गोपाल गोडसे और डॉ. परचुरे को बुलाया गया और उन्हें सजा सुनाई गई। अंत में न्यायाधीश आत्मचरण ने वी. डी. सावरकर को बुलाया और घोषणा की कि उन्होंने विनायक डी. सावरकर को 'निर्दोष' पाया है। उन पर लगे सभी आरोपों से उन्हें बरी कर दिया गया। न्यायाधीश ने आदेश दिया कि यदि उनकी आवश्यकता न हो तो उन्हें तुरंत रिहा कर दिया जाए। न्यायाधीश को सजा सुनाने में बीस मिनट लगे।
न्यायाधीश आत्मचरण ने आरोपियों को सूचित किया कि वे फैसले की एक प्रति अदालत के क्लर्क के पास ले लें, और फिर अदालत से चले गए। दो मिनट बाद आरोपियों को कटघरे से बाहर निकाल लिया गया। अदालत की कार्यवाही समाप्त होने के बाद यह घोषणा की गई कि दिल्ली के जिला मजिस्ट्रेट ने दिल्ली प्रांत में सार्वजनिक सुरक्षा अध्यादेश लागू कर दिया है। उन्होंने आदेश दिया है कि

कानून व्यवस्था बनाए रखने के लिए सावरकर को कुछ समय के लिए लाल किले में रखा जाए।
सभी जब्त किए गए हथियार, गोला-बारूद, विस्फोटक और बम सुरक्षित रखे जाने थे। गांधी की हत्या में इस्तेमाल की गई पिस्तौल और बरामद की गई गोलियां भी सुरक्षित रखी जानी थीं। न्यायाधीश ने आदेश दिया कि केंद्र सरकार से परामर्श किए बिना इन पर कोई निर्णय नहीं लिया जा सकता। इन्हें राष्ट्रीय संग्रहालय में प्रदर्शन के लिए मांगा जा सकता है।
यह फैसला 204 पन्नों का था।
सावरकर को अगले तीन महीनों के लिए दिल्ली में प्रवेश करने से प्रतिबंधित किया गया है।
10 फरवरी 1949 की शाम को, पंजाब लोक सुरक्षा अधिनियम के अनुसार, दिल्ली के जिला मजिस्ट्रेट ने वी. डी. सावरकर को तुरंत दिल्ली छोड़ने और अगले तीन महीनों तक दोबारा प्रवेश न करने का आदेश दिया।
जज अत्माचरण ने पुलिस को फटकार लगाई
न्यायाधीश आत्मचरण ने केंद्र सरकार का ध्यान इस त्रासदी को रोकने में पुलिस द्वारा दिखाई गई लगभग आपराधिक लापरवाही की ओर दिलाया। उन्होंने लिखा, 'मैं केंद्र सरकार का ध्यान 20-30 जनवरी 1948 के बीच मामले की जांच में पुलिस द्वारा प्रदर्शित चौंकाने वाली अक्षमता और पहल की कमी की ओर आकर्षित करता हूं। मदनलाल की गिरफ्तारी के बाद, दिल्ली पुलिस के पास मदनलाल द्वारा दिए गए एक विस्तृत बयान में गांधीजी की हत्या की साजिश के बारे में विस्तृत जानकारी थी। डॉ. जे.सी. जैन ने माननीय मंत्री मोरारजी देसाई को महात्मा गांधी की हत्या की साजिश के बारे में सूचित किया था, और यह सारी जानकारी तुरंत बॉम्बे पुलिस को दे दी गई थी।

इन दोनों बयानों के आधार पर, दिल्ली और बॉम्बे पुलिस के बीच तुरंत संपर्क स्थापित किया गया। लेकिन पुलिस इन दोनों बयानों से कोई लाभ नहीं उठा पाई। यदि उस समय उचित लगन और थोड़ी सी उद्यमशीलता के साथ जांच की गई होती, तो संभवतः इस त्रासदी को टाला जा सकता था।'
यह पीठासीन न्यायाधीश द्वारा पुलिस पर लगाया गया एक अत्यंत गंभीर आरोप था और इसे फैसले का हिस्सा बनाया गया था। हैरानी की बात यह है कि किसी भी पुलिसकर्मी पर कोई कार्रवाई नहीं की गई। सेनजेवी और राणा को सम्मानपूर्वक सेवानिवृत्त होने की अनुमति दी गई, जबकि अन्य को पदोन्नति से पुरस्कृत किया गया। जमशेद डी. नागरवाला भारत के शीर्ष पुलिस अधिकारी के रूप में सेवानिवृत्त हुए। नागरवाला ने पुलिस बल से सेवानिवृत्त होने के काफी समय बाद भी यह दावा किया कि उन्हें पूरा विश्वास था कि गांधी की हत्या की साजिश में सावरकर की मदद और सक्रिय भागीदारी के बिना हत्यारे सफल नहीं हो पाते।
निर्णय
आरोप I:
अपराध और सजाएँ
'यह कि आप नाथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा, शंकर किस्तय्या, गोपाल वी. गोडसे, विनायक डी. सावरकर और दत्तात्रेय एस. परचुरे ने 1 दिसंबर, 1947 और 30 जनवरी, 1948 के बीच पुणे, बॉम्बे, दिल्ली और अन्य स्थानों पर अपने और दिगंबर आर. बैज, जिन्हें क्षमादान दिया जा चुका है, गंगाधर एस. दंडवते, गंगाधर जाधव और सूर्यदेव शर्मा, जो अन्य अज्ञात या फरार लोगों के साथ मिलकर एक अवैध कृत्य करने या करवाने के लिए सहमत और षड्यंत्र रचा।' अर्थात्, मोहनदास करमचंद

गांधी, जिन्हें "महात्मा गांधी" के नाम से अधिक जाना जाता है, की हत्या करना और यह कृत्य, अर्थात् महात्मा गांधी की हत्या, उक्त समझौते और षड्यंत्र के अनुसरण में 30 जनवरी 1948 को दिल्ली में किया गया था, और इस प्रकार भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी के तहत दंडनीय अपराध किया गया था और यह न्यायालय के संज्ञान में आता है।
यह पहले ही सिद्ध हो चुका है कि महात्मा गांधी की हत्या की साजिश रची गई थी, और यह साजिश जनवरी 1948 की शुरुआत में निश्चित रूप से अस्तित्व में थी और 30-1-1948 तक जारी रही। यह साजिश पुणे, मुंबई, दिल्ली, ग्वालियर और अन्य स्थानों पर हुई थी और साजिशकर्ताओं में कम से कम नथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा, शंकर किस्तय्या, गोपाल वी. गोडसे और दत्तात्रेय एस. परचुरे के साथ दिगंबर आर. बैज भी शामिल थे। ये आरोपी अलग-अलग स्थानों और अलग-अलग समय पर इस साजिश में शामिल हुए थे। इन परिस्थितियों में, नाथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा, शंकर किस्तय्या, गोपाल वी. गोडसे और दत्तात्रेय एस. परचुरे का अपराध स्पष्ट रूप से भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी के साथ संहिता की धारा 302 के दायरे में आता है।
'नाथूराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा, शंकर किस्तय्या, गोपाल वी. गोडसे और दत्तात्रेय एस. परचुरे भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी और धारा 302 के तहत स्पष्ट रूप से 'दोषी' हैं।'
आरोप II:
उक्त समझौते और षड्यंत्र के अनुसरण में 13 जनवरी, 1948 और 20 जनवरी, 1948 के बीच आप नाथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे,

विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा, शंकर किस्तय्या, गोपाल वी. गोडसे, साथ ही दिगंबर आर. बैज ए (1) ने बिना लाइसेंस के दिल्ली में हथियार और गोला-बारूद, अर्थात् कारतूस सहित 2 रिवॉल्वर, भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 10 के प्रावधानों के उल्लंघन में ले जाकर भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(घ) के तहत दंडनीय अपराध किया, जो न्यायालय के संज्ञान में है;
(2) उपर्युक्त अपराध करने में एक दूसरे को उकसाया और इस प्रकार भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(घ) के तहत भारतीय दंड संहिता की धारा 109 और 114 के साथ पढ़े जाने पर दंडनीय अपराध किया तथा न्यायालय के संज्ञान में है;
बी(एल) दिल्ली में, बिना लाइसेंस के आपके कब्जे में और आपके नियंत्रण में हथियार और गोला-बारूद, अर्थात् कारतूस सहित 2 रिवॉल्वर, भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 14 और 15 के प्रावधानों के उल्लंघन में रखे थे और इस प्रकार भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(एफ) के तहत भारतीय दंड संहिता की धारा 114 के साथ पढ़े जाने वाले और न्यायालय के संज्ञान में आने वाले अपराध का अपराध किया था;
(2) दिल्ली में, उन्होंने उपरोक्त अपराध करने में एक दूसरे को उकसाया और इस प्रकार भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(एफ) के तहत भारतीय दंड संहिता की धारा 114 के साथ पढ़े जाने वाले और न्यायालय के संज्ञान में आने वाले अपराध को अंजाम दिया।
'जिन दो रिवॉल्वरों को दिल्ली ले जाया गया था और हिंदू महासभा भवन के पीछे जंगल में आजमाया गया था, उन्हें बरामद कर लिया गया है, लेकिन अदालत के समक्ष पेश नहीं किया गया है। इन परिस्थितियों में, यह तय करना संभव नहीं है कि दिल्ली ले जाए गए और हिंदू महासभा भवन के पीछे जंगल में आजमाए गए "सामान" की

वास्तविक प्रकृति क्या थी। इसलिए, नाथूराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा, शंकर किस्तय्या और गोपाल वी. गोडसे के खिलाफ आरोप को सिद्ध मानना उचित नहीं होगा।'
आरोप III:
उक्त समझौते और षड्यंत्र के अनुसरण में, 10 जनवरी, 1948 और 20 जनवरी, 1948 के बीच दिल्ली में, आप नाथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा, शंकर किस्तय्या और गोपाल वी. गोडसे, दिगंबर आर. बैज ए (1) के साथ, आपके कब्जे में और आपके नियंत्रण में विस्फोटक पदार्थ, अर्थात् 2 गन-कॉटन-स्लैब और 5 हैंड-ग्रेनेड, डेटोनेटर और बत्ती सहित, थे; इनके माध्यम से जीवन को खतरे में डालने या किसी अन्य व्यक्ति को इनके माध्यम से जीवन को खतरे में डालने में सक्षम बनाने के इरादे से, और इस प्रकार आपने विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 4 (ख) के तहत धारा 6 के साथ पढ़े जाने पर दंडनीय अपराध किया है और यह न्यायालय के संज्ञान में है;
बी (1) आपके कब्जे में और आपके नियंत्रण में विस्फोटक पदार्थ, अर्थात् 2 गन-कॉटन-स्लैब और 5 हैंड-ग्रेनेड, डेटोनेटर और बत्ती सहित, ऐसी परिस्थितियों में थे जिससे यह उचित संदेह उत्पन्न होता है कि आपने उन्हें किसी वैध उद्देश्य के लिए अपने कब्जे में या अपने नियंत्रण में नहीं रखा था और इस प्रकार आपने विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के तहत दंडनीय अपराध किया है और न्यायालय के संज्ञान में है;
(2) उन्होंने उपरोक्त अपराध करने में एक दूसरे का सहयोग किया और इस प्रकार विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के साथ अधिनियम

की धारा 6 के तहत दंडनीय अपराध किया तथा न्यायालय के संज्ञान में है।
दिल्ली में आरोपियों के पास से बरामद दो कॉटन स्लैब और पांच हैंडग्रेनेड में से एक कॉटन स्लैब और चार हैंडग्रेनेड बरामद कर लिए गए हैं, और इस संबंध में सबूत अदालत के समक्ष पेश किए गए हैं। बरामद विस्फोटकों में से एक हैंडग्रेनेड मदनलाल के. पाहवा के पास से बरामद किया गया था, जबकि एक कॉटन स्लैब और तीन हैंडग्रेनेड शंकर किस्तय्या की सूचना पर हिंदू महासभा भवन के पीछे से बरामद किए गए थे।
उपरोक्त निष्कर्ष यह है कि 20-1-1948 को दिल्ली में आरोपियों के पास दो गन-कॉटन स्लैब और पांच हैंड ग्रेनेड थे। मदनलाल के. पाहवा ने बिरला हाउस में एक गन-कॉटन स्लैब में विस्फोट किया था। इस संबंध में आरोप का विषय चतुर्थ है। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, मेरा सामान्य अनुमान यह है कि वास्तव में दिगंबर आर. बैज को छोटूराम के कमरे में भेजकर खिड़की की जाली में बने छेद से महात्मा गांधी पर हैंड ग्रेनेड फेंकवाना था। हालांकि, दिगंबर आर. बैज कमरे में जाने के लिए राजी नहीं हुए। इन परिस्थितियों में, नथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा, शंकर किस्तय्या और गोपाल वी. गोडसे द्वारा उस हैंड ग्रेनेड के संबंध में किया गया अपराध स्पष्ट रूप से विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 4(ख) के अंतर्गत आता है, जिसे अधिनियम की धारा 6 के साथ पढ़ा जाना चाहिए, और शेष विस्फोटकों के संबंध में, यह स्पष्ट रूप से विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के अंतर्गत आता है, या वैकल्पिक रूप से विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के अंतर्गत आता है, जिसे अधिनियम की धारा 6 के साथ पढ़ा जाना चाहिए।

आरोप स्थापित
नाथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा, शंकर किस्तय्या और गोपाल वी. गोडसे इस प्रकार विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 4(बी) के तहत अधिनियम की धारा 6 के साथ पढ़े जाने पर और वैकल्पिक रूप से विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के तहत अधिनियम की धारा 6 के साथ पढ़े जाने पर स्पष्ट रूप से 'दोषी' हैं।
आरोप IV:
उक्त समझौते और षड्यंत्र के अनुसरण में, 20 जनवरी, 1948 को, दिल्ली के बिरला हाउस में, आपने (एल) मदनलाल के. पाहवा ने गैरकानूनी और दुर्भावनापूर्ण ढंग से एक विस्फोटक पदार्थ, अर्थात् गन कॉटन स्लैब, में विस्फोट किया, जो विस्फोट जीवन को खतरे में डालने और संपत्ति को गंभीर क्षति पहुंचाने की क्षमता का था, और इस प्रकार आपने अधिनियम की धारा 6 के तहत दंडनीय अपराध किया है, जो न्यायालय के संज्ञान में है।
(2) नथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, शंकर किस्तय्या और गोपाल वी. गोडसे ने दिगंबर आर. बैज के साथ मिलकर मदनलाल के. पाहवा को उपरोक्त अपराध करने में सहायता की और इस प्रकार विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 3 के साथ धारा 6 के तहत दंडनीय अपराध किया, जो न्यायालय के संज्ञान में आता है। उपरोक्त निष्कर्षों के अनुसार, मदनलाल के. पाहवा ने 20-1-1948 को बिरला हाउस की पिछली चारदीवारी के ऊपर गन-कॉटन स्लैब विस्फोट किया था। उनका यह कृत्य निःसंदेह गैरकानूनी और दुर्भावनापूर्ण था। विस्फोट से जान को भी खतरा हो सकता था। इन परिस्थितियों में मदनलाल के. पाहवा का अपराध विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 3 के अंतर्गत आता है, और नाथुराम वी. गोडसे,

नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, शंकर किस्तय्या और गोपाल वी. गोडसे का अपराध विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 3 और धारा 6 के अंतर्गत आता है।
इस प्रकार मदनलाल के. पाहवा विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 3 के तहत स्पष्ट रूप से 'दोषी' हैं और नाथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, शंकर किस्तय्या और गोपाल वी. गोडसे विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 3 के साथ अधिनियम की धारा 6 के तहत स्पष्ट रूप से 'दोषी' हैं।
चार्ज V:
20 जनवरी, 1948 को दिल्ली के बिरला हाउस में हुए उक्त समझौते और षड्यंत्र में, आप नाथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा, शंकर किस्तय्या, गोपाल वी. गोडसे और विनायक डी. सावरकर ने दिगंबर आर. बैज के साथ मिलकर एक दूसरे को महात्मा गांधी की हत्या करने के अपराध में उकसाया, जो कि मृत्युदंड या आजीवन कारावास से दंडनीय अपराध है, और यह अपराध उकसावे के परिणामस्वरूप नहीं किया गया था, और इस प्रकार आपने भारतीय दंड संहिता की धारा 115 और धारा 302 के तहत दंडनीय अपराध किया है, जो न्यायालय के संज्ञान में आता है।
पहला प्रयास विफल
उपरोक्त निष्कर्षों से यह सिद्ध होता है कि यद्यपि 20-1-1948 को बिरला हाउस में महात्मा गांधी की हत्या का प्रयास किया गया था, लेकिन अंततः यह असफल रहा क्योंकि दिगंबर आर. बैज छोटूराम के कमरे में प्रवेश करने के लिए सहमत नहीं हुए। इन परिस्थितियों में, नथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा, शंकर किस्तय्या और गोपाल वी. गोडसे का अपराध भारतीय दंड संहिता की धारा 115 और धारा 302 के अंतर्गत आता है।

'□□□□□□□□ □□. □□□□□□, □□□□□□□ □□. □□□□□□, □□□□□□□ □□. □□□□□□, □□□□□□□ □□. □□□□□□, □□□□ □□□□□□□□□□ □□ □□□□□□ □□. □□□□□□ □□□□□□□ □□□□ □□□□□□□ □□ □□□□□ 115 □□ □□□□□ 302 □□ □□□□ □□□□□□□ □□□□ □□ □□□□□ □□□□□' □□□□ VI:

□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□□□□□□ □□ □□□□□□□ □□□□ 28 □□□□□□, 1948 □□ 30 □□□□□□, 1948 □□ □□□□, □□ (□.) □□□□□□□ □□. □□□□□□ □□ □□□□□□□ □□. □□□□□□ □□ □□□□□ □□□□□□□□ □□ □□□□□□□□□ □□ □□□□□□□ □□□□ □□□□□□□ □□ □□□□□-□□□□□□, □□□□□□□□ □□□□□□□□□ □□□□□□□□ □□□□□□□ 606824 □□□□□□□ □□□□□, □□□□□□□ □□□□□□□ □□□□□□□□ □□ □□□□□ 6 □□ □□□□□□□□□□□□ □□ □□□□□□□□ □□□□□ □□□□ □□□□ □□ □□ □□□□□□□ □□□□□□□ □□□□□□□ □□□□□□□□ □□ □□□□□ 19(□□) □□ □□□□ □□□□□□□ □□□□□□ □□□□□, □□ □□□□□□□□□ □□ □□□□□□□□ □□□□ □□;

(2) □□□□□□□ □□. □□□□□□, □□□□□□□ □□. □□□□□□ □□ □□□□□□□□□□□□ □□. □□□□□□□ □□ □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□ □□□□ □□□ □□ □□□□□□ □□ □□□□□□ □□□□□ □□ □□ □□□□□□□ □□□□□□□ □□□□□□□ □□□□□□□□ □□ □□□□□ 19(□□) □□ □□□□ □□□□□□□ □□□□ □□□□□□□ □□ □□□□□ 114 □□ □□□□ □□□□□ □□□□□ □□ □□□□□□□ □□□□□□ □□□□□ □□□□ □□□□□□□□□ □□ □□□□□□□□ □□□□ □□;

□□(□□) □□□□□□□ □□□□ □□□□□□□□ □□□□□ □□□□□□ □□ □□□□□□ □□□□ □□□□□ □□□□□□ □□□□ □□ □□□□□ □□□□□□□□□ □□□□ □□□□□□□ □□ □□□□□-□□□□□□, □□□□□□□□ □□□□□□□ □□□□□ □□□□□□□□□ □□□□□□□□ □□□□□□□ 606824, □□□□□□□ □□□□□□□ □□□□□□□□ □□ □□□□□ 14 □□ 15 □□ □□□□□□□□ □□□□ □□ □□ □□ □□ □□□□□□□ □□□□□ □□□□□□□ □□□□□□□ □□□□□□□□ □□ □□□□□ 19(□□) □□ □□□□ □□□□□□□ □□□□□□ □□□□□ □□ □□ □□ □□ □□□□□□□□□ □□ □□□□□□□□ □□□□ □□;

(2) □□□□□□□ □□. □□□□□□ □□ □□□□□□□ □□. □□□□□□ □□ □□□□□□□ □□□□ □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□ □□□□ □□ □□□□□□ □□ □□□□□□□ □□ □□ □□□□□□□ □□□□□□□ □□□□□□□

□□□□□□□□ □□ □□□□□ 19(□□) □□ □□□□ □□□□□□□ □□□□ □□□□□□□ □□ □□□□□ 114 □□ □□□□ □□□□□□□ □□□□□□ □□□□□ □□□□ □□□□□□□□□□ □□ □□□□□□□□ □□□□ □□□□ □□□□□□□□ □□□□□□□□□□□□□ □□ □□□□□□□, □□□□□□□□ □□. □□□□□□ □□ □□□□□□□ □□. □□□□□□ □□ 28-1-1948 □□ 29-1-1948 □□ □□□□ □□□□□ □□□□□□□□ □□ □□□□□□□□□ □□ □□□□□□□ □□□□ □□□□□□□ □□ □□□□□-□□□□□□, □□□□□□□□ □□□□□□□□□ □□□□□□□□ □□□□□□□ 606824 □□□□□□□ □□□□□, □□□□ □□□□ □□ □□□□□□□□□□□□□□ □□□□, □□□□□□□□ □□. □□□□□□ □□ □□□□□□□ □□. □□□□□□ □□ □□□□□□ □□□□□□□ □□□□ □□ □□□□□□□ □□□□□□□ □□□□□□□□ □□ □□□□□ 19(□□) □□ □□□□□□□□ □□□□ □□, □□ □□□□□□□□□ □□□□ □□ □□□□□□□ □□□□ □□□□□□□ □□ □□□□□ 114 □□ □□□□ □□□□□□□ □□□□□□□ □□□□□□□□ □□ □□□□□ 19(□□) □□ □□□□□□□□ □□□□ □□□□
□□□□□□□ □□□□□□□ □□□□□□□□ □□ □□□□□□
□□□□□□□□□□□ □□. □□□□□□□□ □□ □□ □□□□□□ □□□□ □□ □□□□ □□ □□□□□, □□ □□□□□□□□□ □□ □□ □□□□□□ □□□□□□□ □□□□□□□ □□□□□□□□ □□□□□ □□□□□ □□□□ □□□□□ □□ □□ □□□□□ □□□□□□□□ □□□□□ □□ □□□□□ □□□□□ □□□□ □□ □□□□□□□□□□□□□□ □□□□, □□□□□□□□□□□□ □□. □□□□□□□□ □□ □□□□□□□ □□□□□□□ □□□□□□□□ □□ □□□□□ 19(□□) □□ □□□□ □□□□□□□ □□□□□□ □□ □□□□□□ □□□□□ □□□□ □□□□□□□ □□□□□ □□ □□□□□ □□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□□□
□□□□ □□ □□□□□ □□□□ □□ □□□□□ □□□□ □□ 30-1-1948 □□ □□□□□□□ □□. □□□□□□ □□ □□□□ □□□□□□□ □□□□□ □□□□□□□□□ □□□□□□□□ □□□□□□□ 606824 □□ □□ □□ □□□□ □□□□□□□ □□. □□□□□□ □□ □□□□□□□ □□. □□□□□□ □□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□□□□ □□. □□□□□□ □□ □□□□ □□□□□□ □□□□ □□ □□□□□□□□□□□□□□ □□□□ □□□□□□□ □□. □□□□□□ □□ □□□□□□ □□□□□□□ □□□□□□□ □□□□□□□□ □□ □□□□□ 19(□□) □□ □□□□□□□□ □□□□ □□ □□ □□□□□□□ □□. □□□□□□ □□ □□□□□□□ □□. □□□□□□ □□ □□□□□□ □□□□□□□ □□□□ □□□□□□□ □□ □□□□□ 114 □□ □□□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□□ 19(□□) □□ □□□□□□□□ □□□□ □□□□

इस प्रकार, नथुराम वी. गोडसे भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 1(सी) के तहत या वैकल्पिक रूप से भारतीय दंड संहिता की धारा 114 के साथ भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(सी) और भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(एफ) के तहत स्पष्ट रूप से 'दोषी' हैं, नारायण डी. आप्टे भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(सी) के तहत या वैकल्पिक रूप से भारतीय दंड संहिता की धारा 114 के साथ भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(सी) और भारतीय दंड संहिता की धारा 114 के साथ भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(एफ) के तहत स्पष्ट रूप से 'दोषी' हैं और विष्णु आर. करकरे भारतीय दंड संहिता की धारा 114 के साथ भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(एफ) के तहत स्पष्ट रूप से 'दोषी' हैं।
सातवां आरोप:
उक्त समझौते और षड्यंत्र के अनुसरण में 30 जनवरी, 1948 को बिरला हाउस, दिल्ली में, आपने (1) नथुराम वी. गोडसे ने जानबूझकर और जानते हुए "महात्मा गांधी" की हत्या की और इस प्रकार भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के तहत दंडनीय अपराध किया तथा न्यायालय के संज्ञान में है।
(2) नारायण डी. आप्टे और विष्णु आर. करकरे ने नाथुराम वी. गोडसे को उपरोक्त अपराध करने में सहायता की, जो अपराध आपकी उपस्थिति में किया गया था और इस प्रकार भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के साथ धारा 114 के तहत दंडनीय अपराध किया गया था और न्यायालय के संज्ञान में था;
(3) मदनलाल के. पाहवा, शंकर किस्तय्या, गोपाल वी. गोडसे, विनायक डी. सरवरकर और दत्तात्रेय एस. परचुरे ने दिगंबर आर. बैज के साथ मिलकर नाथुराम वी. गोडसे को उपरोक्त अपराध करने में सहायता की और इस प्रकार भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और धारा 109 के तहत

दंडनीय अपराध किया तथा यह अपराध न्यायालय के संज्ञान में आता है।
उपरोक्त निष्कर्ष यह है कि नाथूराम वी. गोडसे ने जानबूझकर और सोच-समझकर 30-1-1948 को महात्मा गांधी की हत्या की। इन परिस्थितियों में नाथूराम वी. गोडसे का अपराध स्पष्ट रूप से भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अंतर्गत आता है।
बिरला हाउस में महात्मा गांधी की हत्या के समय नारायण डी. आप्टे और विष्णु आर. करकरे की उपस्थिति अभियोजन पक्ष की ओर से साबित नहीं हो पाई है। उनकी ओर से केवल यही साक्ष्य प्रस्तुत किया गया है कि नारायण डी. आप्टे और विष्णु आर. करकरे, 30-1-1948 को दोपहर तक नाथुराम वी. गोडसे के साथ दिल्ली मुख्य रेलवे स्टेशन पर मौजूद थे। इन परिस्थितियों में नारायण डी. आप्टे और विष्णु आर. करकरे का अपराध भारतीय दंड संहिता की धारा 109 और धारा 302 के अंतर्गत स्पष्ट रूप से आता है।
मदन लाल की स्थिति
मदनलाल के. पाहवा और शंकर किस्तय्या का मामला बिल्कुल अलग है। विस्फोट की घटना के तुरंत बाद मदनलाल को 20-1-1948 को पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया था और तब से वे लगातार हिरासत में रहे। अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य से ही यह स्पष्ट होता है कि 20-1-1948 को बिड़ला हाउस में हुई घटना के बाद दिगंबर आर. बैज बेहद क्रोधित हुए और शंकर किस्तय्या के साथ हिंदू महासभा भवन लौट आए। दिगंबर आर. बैज ने शंकर किस्तय्या से कमरे में रखा सारा सामान फेंक देने को कहा। इसके बाद नाथूराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे हिंदू महासभा भवन आए और उनसे घटना के बारे में पूछा। दिगंबर आर. बैज ने उन्हें अपशब्द कहे और बाहर जाने को कहा। इसके बाद दिगंबर आर. बैज और शंकर किस्तय्या तथा नाथुराम वी. गोडसे,

नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे और गोपाल वी. गोडसे के बीच "षड्यंत्र" के संबंध में किसी भी प्रकार का कोई संचार नहीं हुआ। इन तथ्यों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि बिरला हाउस में जो कुछ हुआ उसके बाद दिगंबर आर. बैज और शंकर किस्तय्या ने स्वयं को "षड्यंत्र" से पूरी तरह अलग कर लिया था और उनके लिए 'षड्यंत्र' 20-1-1948 को समाप्त हो गया था। इन परिस्थितियों में मदनलाल के. पाहवा और शंकर किस्तय्या को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के तहत दंडनीय अपराध को अंजाम देने में सहायता करने के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता।
मामले के रिकॉर्ड में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि 20-1-1948 को बिरला हाउस में हुए विस्फोट की घटना के बाद गोपाल वी. गोडसे ने "षड्यंत्र" से खुद को पूरी तरह अलग कर लिया था। दूसरी ओर, मामले के रिकॉर्ड में मौजूद साक्ष्य यह दर्शाते हैं कि गोपाल वी. गोडसे ने 24-1-1948 को बॉम्बे में नथुराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे से मुलाकात की थी और 25-1-1948 को नथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे और गोपाल वी. गोडसे ठाणे स्थित जी.एम. जोशी के घर पर मिले थे। दत्तात्रेय एस. परचुरे 27-1-1948 को "षड्यंत्र" में शामिल हुए, जब उन्होंने नथुराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे के लिए पिस्तौल की व्यवस्था करने पर सहमति जताई। इन परिस्थितियों में गोपाल वी. गोडसे और दत्तात्रेय एस. परचुरे का अपराध स्पष्ट रूप से भारतीय दंड संहिता की धारा 109 और धारा 302 के अंतर्गत आता है।
ऊपर यह पहले ही कहा जा चुका है कि दत्तात्रेय एस. परचुरे "भारत में अधिवासित ब्रिटिश नागरिक" हैं। यदि तर्क के लिए यह मान भी लिया जाए कि वे ग्वालियर राज्य के नागरिक हैं, तब भी उन पर

दिल्ली में मुकदमा चलाया जा सकता है, क्योंकि हत्या का अपराध दिल्ली में ही पूरा हुआ था। 13 सीआर. एल.जे. 426 और 29 सीआर. एल.जे. 1089 इस दृष्टिकोण का समर्थन करते हैं।
इस प्रकार, नथुराम वी. गोडसे भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के तहत स्पष्ट रूप से "दोषी" हैं और नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, गोपाल वी. गोडसे और दत्तात्रेय एस. पचुरे भारतीय दंड संहिता की धारा 109 के साथ धारा 302 के तहत स्पष्ट रूप से "दोषी" हैं।
'नाथूराम वी. गोडसे तदनुसार दोषी हैं (1) भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी के तहत, संहिता की धारा 302 के साथ पढ़ा जाए। (2) भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(सी) के तहत या वैकल्पिक रूप से भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 114 के तहत, (3) भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(एफ) के तहत, (4) विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के तहत या वैकल्पिक रूप से विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के तहत, अधिनियम की धारा 6 के साथ पढ़ा जाए,
(5) विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 4(बी) के तहत, अधिनियम की धारा 6 के साथ पढ़ा जाए, (6) विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 3 के तहत, अधिनियम की धारा 6 के साथ पढ़ा जाए; (7) भारतीय दंड संहिता की धारा 115 के साथ भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के तहत और (8) भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के तहत।
नारायण डी. आप्टे तदनुसार निम्नलिखित अपराधों के लिए दोषी हैं:
(1) भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी के साथ धारा 302 का पाठ,
(2) भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(सी) के तहत या वैकल्पिक रूप से भारतीय दंड संहिता की धारा 114 के साथ धारा 19(सी) का पाठ, (3) भारतीय दंड संहिता की धारा 144 के साथ धारा 19(एफ) का पाठ, (4) विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के तहत या वैकल्पिक

□□□ □□ □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 5 □□ □□□ □□□□ 6 □□ □□□, (5) □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 4(□□) □□ □□□ □□□□ 6 □□ □□□, (6) □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 3 □□ □□□ □□□□ 6 □□ □□□, (7) □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 115 □□ □□□ □□□□ 302 □□ □□□□ □□ (8) □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 109 □□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 302 □□ □□□□

□□□□□□ □□. □□□□□ □□□□□□□ □□□□ □□□ (1) □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 120-□□ □□ □□□, □□□□□□ □□ □□□□ 302 □□ □□□ □□□□ □□□, (2) □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 114 □□ □□□, □□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 19 (□□) □□ □□□ □□□□ □□□, (3) □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 5 □□ □□□ □□ □□□□□□□□ □□□ □□ □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 5 □□ □□□, □□□□□□□ □□ □□□□ 6 □□ □□□ □□□□ □□□, (4) □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 4(□□) □□ □□□, □□□□□□□ □□ □□□□ 6 □□ □□□ □□□□ □□□, (5) □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 3 □□ □□□, □□□□□□□ □□ □□□□ 6 □□ □□□ □□□□ □□□, (6) □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 115 □□ □□□, □□□□□□ □□ □□□□ 302 □□ □□□ □□□□ □□□ □□ (7) □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 109 □□ □□□, □□□□□□ □□ □□□□ 302 □□ □□□ □□□□ □□□□

□□□□□□ □□. □□□□□ □□□□□□□ □□□□ □□□ (1) □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 120-□□ □□ □□□, □□□□□□ □□ □□□□ 302 □□ □□□ □□□□ □□□□ (2) □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 5 □□ □□□ □□ □□□□□□□□ □□□ □□ □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 5 □□ □□□, □□□□□□□ □□ □□□□ 6 □□ □□□ □□□□ □□□□ (2) □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 4(□□) □□ □□□, □□□□□□□ □□ □□□□ 6 □□ □□□ □□□□ □□□□ (4) □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 3 □□ □□□ □□ (5) □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 115 □□ □□□, □□□□□□ □□ □□□□ 302 □□ □□□ □□□□ □□□□

□□□□ □□□□□□□□□ □□□□□□□ □□□□ □□□ (1) □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 120-□□ □□ □□□, □□□□□□ □□ □□□□ 302 □□ □□□ □□□□ □□□, (2) □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 5 □□ □□□ □□ □□□□□□□□ □□□ □□ □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 3 □□ □□□, □□□□□□□ □□ □□□□ 6 □□ □□□ □□□□ □□□, (3) □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 4(□□) □□ □□□, □□□□□□□ □□ □□□□ 6 □□ □□□ □□□□ □□□, (4) □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 3 □□ □□□, □□□□□□□ □□ □□□□ 6 □□ □□□ □□□□ □□□ □□ (5) □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 115 □□ □□□, □□□□□□ □□ □□□□ 302 □□ □□□ □□□□ □□□□

□□□□□□□ □□□□□ □□. □□□□□ □□□□ □□□ (1) □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 120-□□ □□ □□□, □□□□□□ □□ □□□□ 302 □□ □□□ □□□□ □□□, (2) □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 5 □□ □□□, □□□□□□□ □□ □□□□ 6 □□ □□□ □□□□ □□□, (3) □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 4(□□) □□ □□□, □□□□□□□ □□ □□□□ 6 □□ □□□ □□□□ □□□, (4) □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 3 □□ □□□□□□□□ □□□ □□ □□□□ 5 □□ □□□, □□□□□□□ □□ □□□□ 6 □□ □□□ □□□□ □□□, (5) □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 115 □□ □□□, □□□□□□ □□ □□□□ 302 □□ □□□ □□□□ □□□ □□ (6) □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 109 □□ □□□, □□□□□□ □□ □□□□ 362 □□ □□□ □□□□ □□□□

□□□□□□□□□□ □□. □□□□□□ □□□□□□□ □□□□ □□□ (1) □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 120-□□ □□ □□□, □□□□□□ □□ □□□□ 302 □□ □□□ □□□□ □□□ □□ (2) □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 109 □□ □□□, □□□□□□ □□ □□□□ 302 □□ □□□ □□□□ □□□□

□□□□□□□□□□ □□ □□□□□□□ □□□□□ □□□□□ □□□□□ □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 120-□□ □□ □□□ □□□□ 302 □□ □□□, □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 115 □□ □□□ □□□□ 302 □□ □□□ □□ □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□

302 या धारा 109 के तहत धारा 302 के साथ हैं। अभियुक्तों के विरुद्ध सिद्ध सहायक अपराध भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19 और विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 3, 4(बी) और 5 के तहत हैं। भारतीय दंड संहिता के अध्याय V-A, जिसमें धारा 120-A और 120-B शामिल हैं, को 1913 के भारतीय दंड संहिता संशोधन अधिनियम द्वारा अधिनियमित किया गया था और इसका उद्देश्य भारतीय दंड संहिता को अंग्रेजी दंड संहिता के अनुरूप बनाना था। अंग्रेजी दंड संहिता के अनुसार, यदि कोई अपराध किया जाता है, तो उसे अपराध में ही समाहित कर लिया जाता है। इसलिए, बचाव पक्ष की ओर से यह तर्क दिया गया है कि आरोपी को भारतीय दंड संहिता की धारा 120-B और धारा 302 के तहत तथा धारा 109 और धारा 302 के तहत दोषी नहीं ठहराया जा सकता।
हैरिसन ने अपनी पुस्तक 'लॉ ऑफ कॉन्स्पिरेसी' (संस्करण 1924) के पृष्ठ 73 पर निम्नलिखित बातें लिखी हैं:
यदि किसी अपराध को अंजाम देने की साजिश वास्तव में पूरी हो जाती है, तो साजिश अपराध में समाहित नहीं होती, और तकनीकी रूप से यह संभव है कि आरोपी पर दो बार अभियोग लगाया जाए, एक बार साजिश के लिए और एक बार अपराध के लिए (जैसा कि लॉर्ड कैंपबेल ने ओ'कोनेल बनाम रेग. (1844) II CI. और F. 155 में स्पष्ट किया है), लेकिन न्यायाधीश इसे आरोपी के प्रति अन्यायपूर्ण मानते हुए हतोत्साहित करते हैं (देखें आर.वी. बोल्टन (1871) 12 कॉक्स 87)। हालाँकि, यह नियम किसी गंभीर अपराध को अंजाम देने की साजिशों पर लागू नहीं होता, और यदि समझौता पूरा हो जाता है और गंभीर अपराध वास्तव में किया जाता है, तो विधि 14 और 15 विक्ट, सी.100, धारा 12 के अनुसार साजिश उसमें समाहित हो जाती है।

भारत में ऐसा कोई कानून लागू नहीं किया गया है। दूसरी ओर, अभियोजन पक्ष की ओर से आए फैसले यह दर्शाते हैं कि भारत में अदालतों द्वारा अब तक अपनाई गई प्रथा यह रही है कि षड्यंत्र के अपराध और षड्यंत्र द्वारा उकसाने के अपराध दोनों के लिए एक या दोनों को दोषी ठहराया जाए, लेकिन सजा केवल बाद वाले अपराध के लिए ही दी जाए। 35 सीआर. एल.जे. 322 और 39 सीआर. एल.जे. 452 स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि एक आरोपी को षड्यंत्र और षड्यंत्र द्वारा उकसाने दोनों के लिए दोषी ठहराया जा सकता है, लेकिन षड्यंत्र के लिए अलग से सजा देना आवश्यक नहीं है। बचाव पक्ष ने मेरा ध्यान 39 सीआर. एल.जे. 266 की ओर दिलाया है, जिसमें निम्नलिखित प्रावधान है:
दंड संहिता की धारा 120-बी केवल तभी लागू होती है जब वास्तव में कोई अपराध न हुआ हो, और केवल बाद के दुर्लभ मामलों में ही, जब किसी आपराधिक षड्यंत्र के अनुसरण में कोई अपराध न हुआ हो, तो कार्यवाही शुरू करने की अनुमति आवश्यक होती है ताकि तुच्छ अभियोजन से बचाव किया जा सके। हालांकि, जहां मामला केवल षड्यंत्र के चरण से आगे बढ़ चुका हो और उसके अनुसरण में वास्तव में अपराध किए जाने का आरोप हो, वहां धारा 120-ए और 120-बी पूरी तरह से अप्रासंगिक हो जाती हैं। षड्यंत्र उकसाने का एक रूप है और जहां दो से अधिक व्यक्तियों द्वारा अपराध किए जाने का आरोप हो, उनमें से जिन्होंने वास्तव में अपराध करने में भाग लिया है, उन पर मूल अपराध का आरोप लगाया जाना चाहिए, जबकि जिन पर षड्यंत्र द्वारा उकसाने का आरोप है, उन पर दंड संहिता की धारा 109 के तहत उकसाने के अपराध का आरोप लगाया जाना चाहिए।
यह मद्रास उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश का निर्णय है, जबकि अभियोजन पक्ष की ओर से लाहौर उच्च न्यायालय की खंडपीठ और

प्रिवी काउंसिल के निर्णयों का हवाला दिया गया है। अतः न्यायालय धारा 35 सीआर.एल.जे. 322 और 39 सीआर.एल.जे. 452 से बाध्य है।
कुछ आरोपियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी और धारा 302 के तहत तथा धारा 115 और धारा 302 के तहत दोषी ठहराया गया है, और कुछ अन्य आरोपियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी और धारा 302 के तहत, धारा 115 और धारा 302 के तहत तथा धारा 109 के तहत दोषी ठहराया गया है। ऐसी परिस्थितियों में, धारा 120-बी और धारा 302 के तहत अलग-अलग सजा सुनाने की आवश्यकता नहीं है, यदि किसी व्यक्ति को धारा 120-बी और धारा 302 के साथ-साथ धारा 109 के तहत भी दोषी ठहराया गया हो। इसी सिद्धांत के आधार पर, मेरी राय में, उन मामलों में भी अलग-अलग सजाएं देने की आवश्यकता नहीं है जहां किसी व्यक्ति को भारतीय दंड संहिता की धारा 115 और धारा 302 के तहत तथा धारा 109 और धारा 302 के तहत दोषी ठहराया गया हो। हालांकि, एक बिल्कुल अलग स्थिति तब उत्पन्न होती है जब किसी व्यक्ति को भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी और धारा 302 के तहत तथा धारा 115 और धारा 302 के तहत दोषी ठहराया गया हो। भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी और धारा 302 के तहत दी जाने वाली न्यूनतम सजा "आजीवन कारावास" है, लेकिन धारा 115 और धारा 302 के तहत, जहां कोई चोट नहीं पहुंचाई गई हो, दी जाने वाली अधिकतम सजा "सात वर्ष" है।
एक जानबूझकर किया गया कृत्य
महात्मा गांधी की हत्या करने का नाथूराम वी. गोडसे का कृत्य जानबूझकर और सोची-समझी साजिश थी। उनकी ओर से कोई भी बचाव का कारण नहीं बताया गया है और न ही बताया जा सकता है। इन

परिस्थितियों में भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के तहत उन्हें दी जाने वाली एकमात्र सजा मृत्युदंड है।
नारायण डी. आप्टे द्वारा महात्मा गांधी की हत्या में सहायता करना किसी भी तरह से कम जघन्य अपराध नहीं है। उन्होंने अपराध के हर चरण में मुख्य भूमिका निभाई और सबसे महत्वपूर्ण क्षण में या तो घटनास्थल से भाग गए या वहां से अनुपस्थित रहे। यदि उनकी योजना न होती तो महात्मा गांधी की हत्या शायद कभी नहीं होती। इन परिस्थितियों में भारतीय दंड संहिता की धारा 109 और धारा 302 के तहत उन्हें दी जाने वाली एकमात्र सजा मृत्युदंड है। विष्णु आर. करकरे, गोपाल वी. गोडसे और दत्तात्रेय एस. परचुरे के संबंध में, मेरी राय में न्यायसंगत यही होगा कि उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 109 और धारा 302 के तहत आजीवन कारावास की सजा दी जाए। यह भारतीय दंड संहिता की धारा 109 और धारा 302 के तहत दी जाने वाली न्यूनतम सजा है।
अब सवाल यह उठता है कि मदनलाल के. पाहवा और शंकर किस्तय्या को भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी और धारा 302 के तहत क्या सजा दी जानी चाहिए। मेरे विचार से, न्यायसंगत यही होगा कि उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी और धारा 302 के तहत आजीवन कारावास की सजा दी जाए। यह भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी और धारा 302 के तहत दी जाने वाली न्यूनतम सजा है। मामले के रिकॉर्ड में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह पता चले कि भारतीय दंड संहिता की धारा 115 और धारा 302 के तहत दंडनीय अपराध के प्रति नरम रुख क्यों अपनाया जाए। इन परिस्थितियों में मदनलाल के. पाहवा और शंकर किस्तय्या को भारतीय दंड संहिता की धारा 115 और धारा 302 के तहत सात-सात साल के कठोर कारावास की सजा सुनाई जानी चाहिए। शंकर के प्रति नरमी

शंकर किस्तय्या दिगंबर आर. बैज का सेवक है, उसने जो कुछ भी किया वह कमोबेश अपने मालिक दिगंबर आर. बैज के आदेशों का पालन करते हुए किया। यदि दिगंबर आर. बैज न होता तो अन्य आरोपी उससे साजिश में शामिल होने के लिए संपर्क न करते। इन परिस्थितियों में शंकर किस्तय्या निश्चित रूप से कुछ नरमी का पात्र है। इसलिए मैं सिफारिश करता हूं कि भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी और धारा 302 के तहत आजीवन कारावास की सजा को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 401 और 402 के तहत सात साल के कठोर कारावास में परिवर्तित किया जाए।
मेरे विचार में, न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति तभी होगी जब नाथूराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे को भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(सी) के तहत दो वर्ष के कठोर कारावास की सजा सुनाई जाए या वैकल्पिक रूप से भारतीय दंड संहिता की धारा 114 के साथ भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(सी) के तहत सजा सुनाई जाए, यदि नाथूराम वी. गोडसे को भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(एफ) के तहत दो वर्ष के कठोर कारावास की सजा सुनाई जाए और यदि नारायण डी. आप्टे और विष्णु आर. करकरे को भारतीय दंड संहिता की धारा 114 के साथ भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(एफ) के तहत दो वर्ष के कठोर कारावास की सजा सुनाई जाए।
मेरे विचार से, न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति तभी होगी जब नथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा, शंकर किस्तय्या और गोपाल वी. गोडसे को विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के तहत तीन वर्ष के कठोर कारावास की सजा दी जाए या वैकल्पिक रूप से विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के साथ धारा 6 के तहत पांच वर्ष के कठोर कारावास की सजा दी जाए, या यदि नथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर.

करकरे, शंकर किस्तय्या और गोपाल वी. गोडसे को विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 3 के साथ धारा 6 के तहत सात वर्ष के कठोर कारावास की सजा दी जाए और यदि मदनलाल के. पाहवा को विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 3 के तहत दस वर्ष के कठोर कारावास की सजा दी जाए।
उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि
अब सवाल यह उठता है कि क्या मृत्युदंड की सजा माननीय उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि के अधीन है। जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है, इस मामले की सुनवाई बॉम्बे लोक सुरक्षा उपाय अधिनियम के प्रावधानों के तहत हुई है, जिसे दिल्ली प्रांत में लागू किया गया है। अधिनियम की धारा 16 में कहा गया है कि 'एक विशेष न्यायाधीश कानून द्वारा अधिकृत कोई भी सजा सुना सकता है।' अधिनियम की धारा 19 में कहा गया है कि संहिता और उस समय लागू किसी अन्य कानून के प्रावधान, जहां तक वे लागू हों और जहां तक वे धारा 10 से 20 के प्रावधानों के साथ असंगत न हों, धारा 11 के तहत नियुक्त विशेष न्यायाधीश द्वारा सुनवाई से संबंधित, उससे उत्पन्न या उसके परिणामस्वरूप होने वाले सभी मामलों पर लागू होंगे। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 31 में कहा गया है कि 'एक सत्र न्यायाधीश कानून द्वारा अधिकृत कोई भी सजा सुना सकता है।' इस प्रकार, एक विशेष न्यायाधीश द्वारा सुनाई गई मृत्युदंड की सजा उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि के अधीन नहीं है।
संहिता का यह प्रावधान बॉम्बे लोक सुरक्षा उपाय अधिनियम की धारा 16 के प्रावधानों के विपरीत है, जिसे दिल्ली प्रांत में लागू किया गया है, जिसमें केवल यह कहा गया है कि "एक विशेष न्यायाधीश कानून द्वारा अधिकृत कोई भी सजा सुना सकता है।" इस

प्रकार, एक विशेष न्यायाधीश द्वारा सुनाई गई मृत्युदंड की सजा उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि के अधीन नहीं होती है।
इस मामले को देखने का एक और तरीका भी है। बॉम्बे लोक सुरक्षा उपाय अधिनियम की धारा 18(3), जिसे दिल्ली प्रांत में विस्तारित किया गया है, में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि "कोई भी न्यायालय ... जब तक कि इसमें अन्यथा प्रावधान न हो, किसी विशेष न्यायाधीश की कार्यवाही के संबंध में किसी भी प्रकार का क्षेत्राधिकार नहीं रखेगा।" अधिनियम की धारा 18(2) उच्च न्यायालय को किसी न्यायाधीश की कार्यवाही के संबंध में केवल दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 423, 426, 427 और 428 के तहत शक्ति प्रदान करती है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 376 के तहत मृत्युदंड की पुष्टि करने की शक्ति इसमें नहीं है। यदि मृत्युदंड पुष्टि के अधीन होता तो ऐसी शक्ति निश्चित रूप से होती। निस्संदेह, अधिनियम की धारा 18 के समक्ष हाशिये पर "अपील, पुनरीक्षण और पुष्टि" की बात लिखी है, लेकिन अधिनियम की व्याख्या के प्रयोजनों के लिए हाशिये पर लिखी टिप्पणी का संदर्भ नहीं लिया जा सकता।
अंतिम आदेश
Nathuram V. Godse
भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी के तहत धारा 302 के साथ, भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(सी) के तहत या वैकल्पिक रूप से भारतीय दंड संहिता की धारा 114 के तहत धारा 19(3) के साथ, भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(एफ) के तहत, विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के तहत या वैकल्पिक रूप से विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के तहत धारा 6 के साथ, विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 4(बी) के तहत धारा 6 के साथ, विस्फोटक पदार्थ

अधिनियम की धारा 3 के तहत धारा 6 के साथ, भारतीय दंड संहिता की धारा 115 के तहत धारा 302 के साथ और भारतीय दंड संहिता की धारा के तहत उसे दोषी पाया गया है और उसे (1) भारतीय दंड संहिता की धारा 19(सी) के तहत दो वर्ष के कठोर कारावास की सजा सुनाई गई है। शस्त्र अधिनियम, (2) भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(एफ) के तहत दो वर्ष के कठोर कारावास, (3) विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के तहत धारा 6 के साथ पढ़े जाने पर तीन वर्ष के कठोर कारावास, (4) विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 4(बी) के तहत धारा 6 के साथ पढ़े जाने पर पांच वर्ष के कठोर कारावास, (5) विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 3 के तहत धारा 6 के साथ पढ़े जाने पर सात वर्ष के कठोर कारावास और (6) भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के तहत मृत्युदंड—उसे गर्दन से तब तक लटकाया जाएगा जब तक उसकी मृत्यु न हो जाए: कारावास की सजाएँ साथ-साथ चलेंगी।
'उन्हें आरोप में निर्दिष्ट शेष अपराधों के लिए 'दोषी नहीं' पाया गया है और उन्हें इसके तहत बरी कर दिया गया है।'
नारायण डी. आप्टे
भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी के तहत, धारा 302 के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 120-बी, भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(सी) के तहत या वैकल्पिक रूप से भारतीय दंड संहिता की धारा 114 के तहत, धारा 19(एफ) के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 114 के तहत, विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 4(बी) के तहत, धारा 6 के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 4(बी), धारा 115 के तहत, धारा 302 के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 115 के तहत, धारा 109 के तहत, धारा 302 के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 109 के तहत दोषी पाया जाता है और उसे
(1) भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(सी) के तहत दो वर्ष के कठोर कारावास की सजा सुनाई जाती है। भारतीय दंड संहिता की धारा

114 □□ □□□ □□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 19(□□) □□ □□□ □□□□ □□□, (2) □□ □□□□ □□ □□□□ □□□□□□□ □□ □□□, (3) □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 5 □□ □□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 6 □□ □□□ □□□□ □□□, (4) □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 4(□□) □□ □□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 6 □□ □□□ □□□□ □□□, (5) □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 3 □□ □□□ □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 6 □□ □□□ □□□□ □□□, □□□ □□□□ □□ □□□□ □□□□□□□ □□ □□□ □□ (6) □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 109 □□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 302 □□ □□□ □□□□ □□□, □□ □□□ □□□□□ □□ □□ □□ □□□□□□ □□□□□ □□ □□ □□□□ □□□□□□ □ □□ □□□: □□□□□□□ □□ □□□□□ □□□-□□□ □□□□□□□

'□□□□□□ □□□□ □□□ □□□□□□□□□ □□□ □□□□□□□ □□ □□□ '□□□□ □□□□' □□□□ □□□ □□ □□ □□□□□□ □□□□ □□□ □□□ □□ □□□□ □□□ □□□'

□□□□□□ □□. □□□□□

□□□□□□ □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 120-□□ (□□□□ 302 □□□□), □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 114 (□□□□ 19(□□) □□□□), □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 5 (□□ □□□□□□□□ □□□ □□ □□□□ 5 (□□□□ 6 □□□□), □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 4(□□) (□□□□ 6 □□□□), □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 3 (□□□□ 6 □□□□), □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 115 (□□□□ 302 □□□□) □□ □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 109 (□□□□ 302 □□□□) □□ □□□ □□□□ □□□□ □□□ □□ □□ □□□□□□ □□□ □□□□□ □□ □□□ (1) □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 114 □□ □□□ □□ □□□□ □□ □□□□ □□□□□□□ □□ □□□, □□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 19(f) □□ □□□ □□□□ □□□, (2) □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 5 □□ □□□ □□□ □□□□ □□ □□□□ □□□□□□□ □□ □□□ □□ □□□□ □□□□□□ □□ □□□ □□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 5 □□ □□□, (3) □□□□□□□□ □□□□□□ □□□□□□□ □□ □□□□ 4(b) □□ □□□ □□□□ □□□□ □□ □□□□ □□□□□□□ □□ □□□, □□□□□□□ □□ □□□□ 6 □□ □□□

पढ़ी जाए, (4) विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 3 के तहत सात वर्ष के कठोर कारावास की सजा, अधिनियम की धारा 6 के साथ पढ़ी जाए और (5) भारतीय दंड संहिता की धारा 109 के तहत आजीवन कारावास की सजा, संहिता की धारा 302 के साथ पढ़ी जाए; कारावास की सजाएं आजीवन कारावास की सजा के साथ समवर्ती और समवर्ती चलेंगी। 'उन्हें आरोप में निर्दिष्ट शेष अपराधों के लिए "दोषी नहीं" पाया गया है, और उन्हें इसके तहत बरी कर दिया गया है।'
मदनलाल के. पाहवा
उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी के तहत, धारा 302 के साथ पठित, विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा के तहत या वैकल्पिक रूप से विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के तहत, धारा 6 के साथ पठित, विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 4(बी) के तहत, धारा 6 के साथ पठित, विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 3 के तहत और भारतीय दंड संहिता की धारा 115 के तहत, धारा 302 के साथ पठित, दोषी पाया जाता है और उसे (1) भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी के तहत, धारा 302 के साथ पठित, आजीवन कारावास, (2) विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के तहत, धारा 6 के साथ पठित, तीन वर्ष के कठोर कारावास, (3) भारतीय दंड संहिता की धारा 3 के तहत पांच वर्ष के कठोर कारावास की सजा सुनाई जाती है। विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 6 के साथ पढ़ा जाए, (4) विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 3 के तहत दस वर्ष के कठोर कारावास और (5) भारतीय दंड संहिता की धारा 115 के तहत सात वर्ष के कठोर कारावास के साथ पढ़ा जाए, संहिता की धारा 302 के तहत; कारावास की सजा आजीवन कारावास की सजा के साथ-साथ चलेगी।
उन्हें आरोप में निर्दिष्ट शेष अपराधों के लिए "दोषी नहीं" पाया गया है और उन्हें इसके तहत बरी कर दिया गया है।

Shankar Kistayya
उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी के तहत, धारा 302 के साथ पठित, विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के तहत या वैकल्पिक रूप से विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के साथ अधिनियम की धारा 6 के तहत, विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 4(एफ) के साथ अधिनियम की धारा 6 के तहत, विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 3 के तहत या वैकल्पिक रूप से विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के साथ अधिनियम की धारा 6 के तहत और भारतीय दंड संहिता की धारा 115 के तहत, धारा 302 के साथ पठित, दोषी पाया जाता है और उसे (1) भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी के तहत, धारा 302 के साथ पठित, आजीवन कारावास, (2) विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के तहत या वैकल्पिक रूप से तीन वर्ष के कठोर कारावास की सजा दी जाती है। अधिनियम की धारा (3) के विकल्प स्वरूप विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 4(ख) के तहत पांच वर्ष के कठोर कारावास के लिए अधिनियम की धारा 6 के साथ पढ़ा जाए, (4) विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 3 के तहत अधिनियम की धारा 6 के साथ पढ़ा जाए सात वर्ष के कठोर कारावास के लिए और (5) भारतीय दंड संहिता की धारा 115 के तहत संहिता की धारा 302 के साथ पढ़ा जाए सात वर्ष के कठोर कारावास के लिए इस सिफारिश के साथ कि भारतीय दंड संहिता की धारा 120-ख के तहत संहिता की धारा 302 के साथ पढ़े जाने वाले आजीवन कारावास की सजा को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 401 और 402 के तहत सात वर्ष के कठोर कारावास में परिवर्तित किया जाए: कारावास की सजाएं आजीवन कारावास की सजाओं के साथ समवर्ती और समवर्ती चलेंगी।
'उन्हें आरोप में निर्दिष्ट शेष अपराधों के लिए 'दोषी नहीं' पाया गया है और उन्हें इसके तहत बरी कर दिया गया है।'

गोपाल वी. गोडसे
उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी के तहत धारा 302 के साथ, विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के तहत या वैकल्पिक रूप से विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के साथ धारा 6 के तहत, विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 4(बी) के तहत धारा 6 के साथ, विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 3 के तहत धारा 6 के साथ, भारतीय दंड संहिता की धारा 115 के तहत धारा 302 के साथ और भारतीय दंड संहिता की धारा 109 के तहत धारा 302 के साथ दोषी पाया जाता है और उसे सजा सुनाई जाती है (1) विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के तहत या वैकल्पिक रूप से विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के तहत धारा 6 के साथ तीन साल के कठोर कारावास की सजा। (2) विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 4(ख) के तहत धारा 6 के साथ पढ़े जाने पर पांच वर्ष के कठोर कारावास की सजा, (3) विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 3 के तहत धारा 6 के साथ पढ़े जाने पर सात वर्ष के कठोर कारावास की सजा और (4) भारतीय दंड संहिता की धारा 109 के तहत धारा 302 के साथ पढ़े जाने पर आजीवन कारावास की सजा; कारावास की सजाएं आजीवन कारावास की सजा के साथ-साथ चलेंगी।
'उन्हें आरोप में निर्दिष्ट शेष अपराधों के लिए "दोषी नहीं" पाया गया है, और उन्हें इसके तहत बरी कर दिया गया है।' दत्तात्रेय एस. परचुरे
उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 120-बी के साथ धारा 302 और धारा 109 के तहत दोषी पाया गया है और उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 109 के तहत आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई है। उन्हें आरोप में निर्दिष्ट शेष अपराधों के लिए "दोषी नहीं" पाया गया है और उन्हें इसके तहत बरी कर दिया गया है।

Vinayak D. Savarkar
उन्हें अभियोग में निर्दिष्ट अपराधों के लिए "दोषी नहीं" पाया गया है और उन्हें बरी कर दिया गया है। वे हिरासत में हैं और यदि अन्यथा आवश्यक न हो तो उन्हें तत्काल रिहा कर दिया जाए। 'दिगंबर आर. बैज ने अपनी क्षमादान की शर्त पूरी कर ली है, और जब तक अन्यथा आवश्यक न हो, उन्हें तत्काल हिरासत से रिहा कर दिया जाए।'
नथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा, शंकर किस्तय्या, गोपाल वी. गोडसे और दत्तराया एस. परचुरे को सूचित किया जाता है कि यदि वे इस आदेश के विरुद्ध अपील करना चाहते हैं तो उन्हें आज से पंद्रह दिनों के भीतर ऐसा करना चाहिए। निर्णय की प्रतियां तैयार हैं और आवेदन करने पर अभी प्राप्त की जा सकती हैं।
मैं केंद्र सरकार के ध्यान में 20-1-1948 और 30-1-1948 के बीच इस मामले की जांच में पुलिस की ढिलाई लाना चाहता हूं। दिल्ली पुलिस ने मदनलाल के. पाहवा से 20-1-1948 को उनकी गिरफ्तारी के तुरंत बाद एक विस्तृत बयान प्राप्त किया था। बॉम्बे पुलिस को डॉ. जे.सी. जैन का वह बयान भी सूचित किया गया था जो उन्होंने 21-1-1948 को माननीय मोरारजी देसाई को दिया था। इन दोनों बयानों के बाद दिल्ली पुलिस और बॉम्बे पुलिस ने एक-दूसरे से संपर्क किया था। फिर भी पुलिस इन दोनों बयानों से कोई लाभ उठाने में बुरी तरह विफल रही। यदि उस समय मामले की जांच में थोड़ी सी भी तत्परता दिखाई गई होती तो शायद इस त्रासदी को टाला जा सकता था। मैं अभियोजन पक्ष के वकील और बचाव पक्ष के वकील दोनों का अदालत के साथ पूरे सहयोग के लिए हार्दिक धन्यवाद करता हूं। उनके

पूर्ण सहयोग के बिना इस तरह के मामले का निपटारा इतने कम समय में संभव नहीं हो पाता।
'न्यायालय के कर्मचारियों के प्रति भी मेरा आभार है। वे संयुक्त प्रांत के विभिन्न जिलों से आए थे और दिल्ली में अपने पूरे प्रवास के दौरान उन्होंने शानदार ढंग से काम किया।' मामले के अभिलेख में लाए गए सभी हथियार, गोला-बारूद और विस्फोटक तथा उनसे संबंधित वस्तुएं दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 527 के तहत सरकार द्वारा जब्त की जाती हैं। प्रदर्श 14, 28, 29 और 30 वे हथगोले हैं जो 20-1-1948 को मरीना होटल में वितरित किए गए थे। प्रदर्श 39 वह स्वचालित पिस्तौल है जिससे महात्मा गांधी को 30-1-1948 को गोली मारी गई थी। प्रदर्श 9, 10 और 55 वे खाली कारतूस हैं जो 30-1-1948 को महात्मा गांधी पर दागे गए थे। प्रदर्श 11 और 12 वे गोलियां हैं जो 30-1-1948 को महात्मा गांधी के शरीर के आर-पार हो गई थीं। केंद्र सरकार से परामर्श किए बिना इस संबंध में कोई कार्रवाई न की जाए। संभवतः इन्हें राष्ट्रीय संग्रहालय के लिए रखा जा सकता है।
(sd) आत्मचरण,
आई.सी.एस.,
विशेष न्यायालय के न्यायाधीश
लाल किला, दिल्ली
10 फरवरी, 1948

— — — — — — — — — — — — — — —

* कोष्ठक में लिखे सभी शब्द इटैलिक में हैं और लेखक द्वारा लिखे गए हैं।

* अदालती कार्यवाही के लिए मैंने जिस पुस्तक का संदर्भ लिया है, उसमें आरोपियों की उम्र में विसंगति है।
मेरा अनुमान है कि ये या तो प्रिंटर की गड़बड़ी के कारण सामने आए हैं या फिर कई बार उपयोग किए जाने के कारण।
इस बेहद विस्तृत पुस्तक के लिए सभी जानकारी विभिन्न स्रोतों से ली गई है।
एकत्रित किया गया। गांधी हत्याकांड के मुकदमे से संबंधित सभी विवरणों का मेरा स्रोत काफी हद तक गांधी पर आधारित है। Hatyakand in Hindi; Gandhi Murder Trial in English published by Dewan Ram Prakash for
टैगोर मेमोरियल पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली द्वारा मार्च 1949 में प्रकाशित; दूसरा संस्करण, मार्च 1949, मुद्रित।
हिंद यूनियन प्रेस, नई दिल्ली; और न्यायमूर्ति खोसला द्वारा लिखित पुस्तक, 'द मर्डर ऑफ ए'
महात्मा और पंजाब उच्च न्यायालय के अन्य मामलों में, जिन्होंने आरोपी की अपील सुनी थी
दो अन्य न्यायाधीशों के साथ, जो नाथूराम गोडसे और नारायण की फांसी के गवाह थे।
आप्टे.
* गांधी हत्याकांड के मुकदमे में अभियोजन पक्ष की टीम में पंडित ठाकुरदास का उल्लेख नहीं है, बल्कि इसके बजाय अन्य लोगों के नाम दिए गए हैं।
जे.सी. शाह। इसमें गांधी हत्याकांड की तरह एन.जी. के बजाय व्यावाकर को एम.जी. के रूप में सूचीबद्ध किया गया है।
* यह कासर होना चाहिए था, अप्पा कासर, एक कुशल कारीगर जो वी.डी. सावरकर के लिए काम करता था।

* इससे पहले, जब न्यू यॉर्क के टेलीफोन राजस्व विभाग के प्रशासक ने
दिल्ली, आर.आर. कैलाश से जिरह की जा रही थी, यह उल्लेख किया गया है कि बॉम्बे नंबर था
मुख्य रक्षा वकील भोपटकर के नाम पर सूचीबद्ध एक अन्य संख्या 60210 है।
हिंदू महासभा में पेश किए गए विधेयक में उल्लिखित होने के कारण। ये भ्रामक और
परस्पर विरोधी गवाहियों को कभी स्पष्ट नहीं किया गया और अंततः इससे उन महत्वपूर्ण सबूतों की विश्वसनीयता खत्म हो गई जो उन्हें आपस में जोड़ते थे।
सावरकर इस मामले में शामिल हुए।
मनोहर मुलगांवकर ने अपनी पुस्तक "द मेन हू किल्ड गांधी" में लिखा है कि बैज एक क्रूर व्यक्ति था।
और वह कंजूस मालिक, जो किस्तय्या को प्रताड़ित और दुर्व्यवहार करता था।
** यह अभियोजन पक्ष का वकील होना चाहिए, क्योंकि बैज के पास कोई वकील नहीं था क्योंकि उसे एक
क्षमादान।
* अपनी पुस्तक 'द मेन हू किल्ड गांधी' में मनोहर मालगांवकर लिखते हैं कि शंकर भटकते रहे थे।
अपने गुरु बैज की गिरफ्तारी के बाद वह व्याकुल होकर इधर-उधर भटकता रहा। अंततः वह दीक्षित महाराज के पास पहुंचा।
भूलेश्वर स्थित घर पर शंकर को सीआईडी कार्यालय जाने के लिए कहा गया था। शंकर वहां इधर-उधर भटकता हुआ पाया गया।

कार्यालय में मौजूद था और पूछताछ किए जाने पर उसने अपनी पहचान उजागर कर दी। मालगांवकर के अनुसार, नागरवाला
उसने शंकर के कार्यालय में पहुँचते ही उसे जोरदार थप्पड़ मारा।
* यह एक गलती होनी चाहिए; आदेश 21 जनवरी को बॉम्बे में दिए गए थे। नागरवाला और अन्य
पुलिस अधिकारियों को भविष्य देखने की क्षमता प्राप्त नहीं थी, क्योंकि बम को संभालने में उनकी अक्षमता स्पष्ट थी।
विस्फोट की घटना से पता चलता है कि उनमें दूरदर्शिता की भी कमी थी! और पुलिस रिकॉर्ड के अनुसार
नागरवाला 21 जनवरी को मुंबई में ही मौजूद थे।
* यह आश्चर्यजनक है क्योंकि देसाई उसी रात अहमदाबाद के लिए रवाना होने वाले थे। मद्रास मेल को इसकी जानकारी नहीं है। अहमदाबाद जाने के लिए, यह विक्टोरिया टर्मिनस से रवाना होती है, जिसे अब छत्रपति शिवाजी टर्मिनस के नाम से जाना जाता है।
टर्मिनस। या तो यह हिंदी पुस्तक गांधी हत्याखंड में छपाई की गड़बड़ी है या फिर कोई गलती हुई है।
नागरवाला द्वारा अपनी गवाही में।
कपूर आयोग के समक्ष गवाही देते हुए नागरवाला ने दावा किया कि उन्होंने करकरे के बारे में पूछताछ की थी।
डीएसपी से संपर्क न हो पाने के कारण, अहमदनगर में उनके भाई से संपर्क करके उनके ठिकाने का पता लगाने की कोशिश की गई।
† नागरवाला का यह बयान भी पेचीदा है। अपनी गवाही की शुरुआत में नागरवाला ने कहा है कि
उन्होंने कहा कि जब उन्होंने अहमदनगर पुलिस को करकरे को गिरफ्तार करने का निर्देश दिया था, तो उन्होंने यह भी पूछा था कि क्या

[illegible]
[illegible]
[illegible]
* [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
Parchure and Gopal Vinayak Godse have merged to become Sadashiv Gopal Godse.
* [illegible]
[illegible]
[illegible]
* [illegible]
[illegible]
[illegible]

वेंटिलेटर के जरिए गांधी पर एक हैंड ग्रेनेड फेंको और वेंटिलेटर की ग्रिल के जरिए उन पर गोली चलाओ।
* एक और बेतुका दावा। बैज हथियारों से भरा बैग दीक्षित महाराज के घर ले गया था।
क्योंकि, उनके बयान के अनुसार, आप्टे और गोडसे हथियारों को वहां जमा करने में सक्षम नहीं थे।
Savarkar Sadan.
* यहाँ दास चतुराई से काम ले रहे हैं, क्योंकि टेलीग्राम करकरे द्वारा संपर्क पुनः स्थापित करने के प्रयास में भेजा गया था। अपने आपराधिक साथियों के साथ। अगर उसे बॉम्बे में आप्टे की मौजूदगी के बारे में पता होता तो वह ऐसा नहीं करता।
पुणे को एक टेलीग्राम भेजा।
* बैनर्जी, हालांकि मदनलाल के वकील थे, ऐसा प्रतीत होता था कि वे खुद को मुखिया मान रहे थे।
बचाव पक्ष के वकील ने अन्य कई आरोपियों के खिलाफ मामले के संबंध में लगातार टिप्पणियां कीं।
यह बचाव पक्ष द्वारा कार्यवाही को अस्पष्ट करने और लंबा खींचने के लिए अपनाई गई एक चाल थी।
मुकदमे को जटिल बनाने और उसमें बाधा डालने के लिए।
बैनर्जी को यहाँ स्मृतिभ्रंश के लक्षण दिखाई दे रहे हैं। अदालत में गवाही देते समय, पढ़ने के अलावा
पारचुरे के इकबालिया बयान के अलावा, मजिस्ट्रेट आर.बी. अटल, पी.डब्ल्यू. 56 ने भी विस्तार से वर्णन किया था।
बयान दर्ज करने के लिए अपनाई गई पूरी प्रक्रिया, अपनाई गई प्रक्रिया के बारे में घटनाओं का विस्तृत विवरण।

पुलिस द्वारा उसे किले और बैरकों के साथ-साथ उस कोठरी का भी विवरण दिया गया था जिसमें वह था।
पारचुर आयोजित किया गया।
† बैनर्जी यह बात आसानी से भूल जाते हैं कि मदनलाल को उस गिरोह के सरगनाओं ने फटकार लगाई थी।
सुबह देर से उठने और आलसी होने के कारण मदनलाल का रूठना स्वाभाविक था।
फटकार लगाई गई है।
* बैनर्जी ने अपने पहले के इस तर्क को आसानी से भुला दिया कि हिंदू महासभा भवन एक सार्वजनिक स्थान था।
जगह; यह स्वाभाविक ही था कि गिरोह के सदस्य तैयारी के लिए होटल के कमरे की गोपनीयता चाहते थे।
विस्फोटक पदार्थों की सफाई, हथियारों की मरम्मत और उन्हें साफ करना, और अंतिम योजना बनाना, ये सब होटल के कमरे की गोपनीयता में किया जाता है।
इनामदार का यह कहना गलत है कि 16 फरवरी तक आप्टे और करकरे को गिरफ्तार नहीं किया गया था। दोनों को गिरफ्तार किया जा चुका था।
14 फरवरी को गिरफ्तार किया गया।

13

अपील और निष्पादन

'पहले भी मेरी जान को खतरा हुआ है, लेकिन ईश्वर ने मुझे अब तक बचाए रखा है और हमलावरों ने अपने कृत्य पर पश्चाताप किया है। लेकिन अगर कोई मुझे इस विश्वास में गोली मार दे कि वह किसी बदमाश से छुटकारा पा रहा है, तो वह असली गांधी को नहीं, बल्कि उस गांधी को मारेगा जो उसे बदमाश प्रतीत होता है।'
— MAHATMA GANDHI

गांधी हत्याकांड मामले में दोषी ठहराए गए सभी लोगों ने विशेष न्यायालय द्वारा सजा सुनाए जाने के चार दिनों के भीतर पंजाब उच्च न्यायालय में अपील दायर की। पंजाब के मुख्य न्यायाधीश ने आरोपियों की अपील सुनने के लिए तीन न्यायाधीशों की पीठ का गठन किया, जिसमें न्यायमूर्ति ए.एन. भंडारी, न्यायमूर्ति अच्चरुराम और न्यायमूर्ति जी.डी. खोसला शामिल थे।
उच्च न्यायालय में अपील का वर्णन करते हुए, न्यायमूर्ति जी.डी. खोसला द्वारा लिखित पुस्तक 'द मर्डर ऑफ द महात्मा' और विशेष रूप से 'नाथुराम के अपराध' नामक अध्याय से सामग्री का व्यापक रूप से उपयोग किया गया है। मुकदमे की तैयारी का वर्णन करते हुए न्यायमूर्ति खोसला लिखते हैं: 'उच्च न्यायालय के नियमों और आदेशों के अनुसार, हत्या के मामले में अपील की सुनवाई दो न्यायाधीशों की खंडपीठ द्वारा की जाती है, लेकिन मृतक की विशिष्ट स्थिति, विचार और मूल्यांकन किए जाने वाले साक्ष्यों की जटिलता और मात्रा तथा मामले में उत्पन्न अभूतपूर्व रुचि के कारण, मुख्य न्यायाधीश ने गोडसे और उसके साथियों की अपील की सुनवाई के लिए तीन न्यायाधीशों की पीठ गठित करने का निर्णय

लिया। न्यायाधीश न्यायमूर्ति ए.एन. भंडारी, न्यायमूर्ति अच्चूराम और मैं स्वयं थे।' हमने यह निर्णय लिया कि एक विशेष उपाय के रूप में हमें विग पहनने की पुरानी प्रथा को फिर से शुरू करना चाहिए, और अदालत कक्ष में प्रवेश करते समय, पुराने दिनों की तरह, हमारे आगे चांदी की छड़ियों से सुसज्जित वर्दीधारी द्वारपाल चलेंगे।
उस समय पंजाब उच्च न्यायालय शिमला में स्थित था, जिसे 1947 की शरद ऋतु में जल्दबाजी में स्थापित किया गया था, क्योंकि अन्य कोई उपयुक्त स्थान उपलब्ध नहीं था। भारत सरकार ने हमें "पीटरहॉफ" नामक एक विशाल हवेली उपलब्ध कराई थी, जो पूर्व में वायसराय का ग्रीष्मकालीन निवास हुआ करती थी। यह रमणीय परिवेश में स्थित एक सुंदर घर था, जहाँ से दूर स्थित पहाड़ियों की बर्फ से ढकी चोटियों का मनोरम दृश्य दिखाई देता था। लेकिन यह उच्च न्यायालय के लिए शायद ही उपयुक्त था। वायसराय के शयनकक्ष, जिनमें भव्य साज-सज्जा और चांदी की परत चढ़ी साज-सज्जा हटा दी गई थी, दिखावटी सादगी का आभास देते थे, लेकिन उनमें से सबसे बड़ा भी एक ऐसे न्यायालय के लिए पर्याप्त नहीं था, जिसमें न्यायाधीश और उनके पाठक के अलावा, आधा दर्जन वकील और उनके क्लर्क दिन में कई घंटे बिताते थे; और अक्सर विचाराधीन मामले के पक्षकार भी यह देखने आते थे कि उनके वकील उनकी परेशानियों और उम्मीदों को कैसे संभाल रहे हैं और न्यायाधीश उनकी ओर से प्रस्तुत दलीलों पर क्या प्रतिक्रिया दे रहे हैं। न्यायाधीश के लिए एक मेज होनी चाहिए, उनके पाठक और स्टेनोग्राफर के लिए एक अलग मेज, और वकीलों के लिए एक अलग मेज जिस पर वे अपने दस्तावेज और उद्धृत कानून की किताबें रख सकें। और जब दीवारों के किनारे कानून संबंधी

रिपोर्टों और अन्य संदर्भ पुस्तकों को रखने के लिए कुछ अलमारियां लगाई गईं, तो आम जनता के लिए कोई जगह नहीं बची।
'हमें लगातार घुटन का एहसास होता था, और हालात सुधारने के लिए हम कुछ भी नहीं कर सकते थे। चंडीगढ़ और विशाल उच्च न्यायालय भवन, जिसमें हम 1955 की शुरुआत में स्थानांतरित हुए थे, तब भी एक कल्पना मात्र ही था। सौभाग्य से शिमला की आम जनता, जो मुकद्दमेबाजी में शामिल नहीं थी, उच्च न्यायालय की कार्यवाही में दिलचस्पी नहीं रखती थी, और हमारे पास शायद ही कभी कोई आगंतुक आता था। लेकिन गांधी हत्याकांड मामले में अपील की सुनवाई से व्यापक रुचि पैदा होने और प्रतिदिन बड़ी संख्या में वकीलों, पत्रकारों और दर्शकों के अदालत में आने की उम्मीद थी, और एक भी अदालत कक्ष ऐसा नहीं था जो अपील पर सुनवाई में लगे व्यक्तियों को भी समायोजित कर सके।'
भूतल पर स्थित भोज कक्ष का उपयोग प्रथम मंजिल पर स्थित न्यायालय कक्षों तक जाने के मार्ग के रूप में किया जा रहा था। भारत सरकार का मुख्यालय कलकत्ता से शिमला स्थानांतरित होने के दौरान ग्रीष्म ऋतुओं में उपसभापति के मनोरंजन के लिए निर्मित यह विशाल हॉल ठंडा और हवादार था। हालांकि, कुछ मामूली बदलाव और एक छोर पर एक चबूतरा जोड़ने के बाद, यह एक शानदार न्यायालय कक्ष में परिवर्तित हो गया। विशेष रूप से निर्मित चबूतरे तक जाने वाली विशाल सागौन की लकड़ी की सीढ़ियाँ उन न्यायाधीशों की गरिमा को दर्शाती थीं, जो छह सप्ताह की अवधि तक प्रतिदिन अपने वस्त्रों और विगों से सुसज्जित दरबारियों के साथ, लाल और सुनहरे रंग की वर्दी में सजे और चांदी की मूठ वाले लंबे डंडे लिए हुए, इस सीढ़ी से होकर गुजरते थे— जो कानून के त्रिविध स्वरूप के प्रतीक थे। लाहौर में अपने पुराने मुख्यालय को

छोड़ने के लिए मजबूर होने के बाद से शरणार्थी उच्च न्यायालय में ऐसी भव्यता और वैभव का नजारा नहीं देखा गया था। बलि के डंडे एक भंडारगृह में रख दिए गए थे क्योंकि शयनकक्षों के बीच संकरे गलियारे जुलूस की रस्मों के लिए जगह नहीं देते थे, और यहाँ तक कि विग भी पहनना बंद कर दिया गया था क्योंकि कई वकील सुरक्षा के लिए भागते समय उन्हें लाहौर में ही छोड़ आए थे; और शिमला में उन्होंने इस संबंध में पोशाक नियमों में ढील देने का औपचारिक अनुरोध किया था। इसलिए, अपील के उद्घाटन दिवस पर उनका पुनः प्रकट होना और भी अधिक प्रभावशाली था।
सुनवाई 2 मई 1949 को शुरू हुई। वह एक सुहाना दिन था, सूरज की सुनहरी किरणें पीटरहॉफ के लॉन पर हल्की-हल्की फैली हुई थीं। हवा में हल्की ठंडक थी और बॉलरूम में लगभग एक दर्जन इलेक्ट्रिक हीटर जल रहे थे। प्रवेश द्वार पर पुलिसकर्मी पहरा दे रहे थे और अदालत कक्ष में प्रवेश रजिस्ट्रार द्वारा जारी किए गए पासों के माध्यम से नियंत्रित किया जा रहा था। यह आंशिक रूप से सुरक्षा कारणों से, लेकिन मुख्य रूप से हमारे कर्मचारियों के धैर्य की परीक्षा लिए बिना या कार्यवाही में बाधा डाले बिना, समायोजित किए जा सकने वाले व्यक्तियों की संख्या को सीमित करने के लिए किया गया था। जब हम मंच पर अपनी सीटों पर बैठे, तो मैंने देखा कि कमरा पूरी तरह से भरा हुआ था। काले कोट और गाउन पहने सभी वकील, जो अन्य न्यायाधीशों के समक्ष अपने मामलों की पैरवी में व्यस्त नहीं थे, विशेषाधिकार प्राप्त अग्रिम पंक्तियों में एक बड़े काले घेरे की तरह फैले हुए थे। उनके पीछे शिमला के संभ्रांत लोग बैठे थे, जो पास प्राप्त करने के लिए अपने प्रभाव का पर्याप्त उपयोग करने में सफल रहे थे। पत्रकारों और पत्रकारों के लिए अलग-अलग सीटें थीं, और मंच के दाहिनी ओर लगभग बीस कुर्सियाँ विशेष

अतिथियों के लिए आरक्षित थीं। इनमें माननीय न्यायाधीशों और उच्च सरकारी अधिकारियों की पत्नियाँ और बेटियाँ शामिल थीं। मंच के सामने एक लंबी मेज पर अपीलकर्ताओं और राजा का प्रतिनिधित्व करने वाले वकीलों की एक प्रभावशाली पंक्ति बैठी थी। इनमें आप्टे और मदनलाल पाहवा के लिए कलकत्ता के वरिष्ठ अधिवक्ता श्री बनर्जी, करकरे के लिए श्री डांगे, पंजाब उच्च न्यायालय के श्री अवस्थी (जिन्हें सरकारी खर्च पर किस्तय्या का प्रतिनिधित्व करने के लिए नियुक्त किया गया था, क्योंकि किस्तय्या वकील की फीस देने में असमर्थ थे), और परचुरे और गोपाल गोडसे के लिए बॉम्बे से श्री इनामदार (परचुरे और गोपाल गोडसे के वकील इनामदार ग्वालियर से थे) शामिल थे। नाथूराम गोडसे ने वकील द्वारा प्रतिनिधित्व किए जाने से इनकार कर दिया था और प्रार्थना की थी कि उन्हें स्वयं उपस्थित होकर अपनी अपील पर बहस करने की अनुमति दी जाए। उनकी यह प्रार्थना स्वीकार कर ली गई थी, और इसलिए वे एक विशेष रूप से निर्मित कटघरे में खड़े थे। उनकी छोटी, दृढ़ आकृति, चमकती आँखों और छोटे-छोटे बालों के साथ, उनके साथियों का प्रतिनिधित्व करने वाले शांत और समृद्ध दिखने वाले वकीलों की लंबी पंक्ति के विपरीत एक उल्लेखनीय और तुरंत ध्यान देने योग्य दृश्य प्रस्तुत कर रही थी। गरीबी का बहाना बनाकर गोडसे ने व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होने का अनुरोध किया था, लेकिन यह मात्र एक बहाना था। इस चाल के पीछे असली वजह उसकी अपनी पतन की प्रक्रिया को प्रत्यक्ष रूप से देखने की विकृत इच्छा थी, साथ ही खुद को एक निडर देशभक्त और हिंदू विचारधारा के प्रबल समर्थक के रूप में प्रदर्शित करना भी था। वह अपने जघन्य अपराध के प्रति बिल्कुल भी पश्चातापहीन था, और चाहे अपने विश्वासों में गहरी आस्था के कारण हो या केवल अंतिम सार्वजनिक

माफी मांगने के लिए, उसने गुमनामी में विलीन होने से पहले अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन करने का यह अवसर तलाशा था।
'सामने की पंक्ति के दाहिनी ओर अभियोजन पक्ष की ओर से पेश होने वाले चार वकील बैठे थे - बॉम्बे के एडवोकेट-जनरल श्री दफ्तरी, बॉम्बे से ही श्री पेटिगारा और श्री व्यवहारकर, और हमारे अपने उच्च न्यायालय के श्री करतार सिंह चावला।'
खोसला की किताब से स्पष्ट है कि सुनवाई के पहले ही दिन तीनों न्यायाधीशों के बीच मतभेद हो गया। इस प्रकार तीन न्यायाधीशों की पीठ नियुक्त करने का निर्णय व्यर्थ सिद्ध हुआ। पीठ में दरार इतनी गहरी और व्यापक थी कि अपील की सुनवाई में अलग-अलग फैसले सुनाए गए। खोसला द्वारा वर्णित इस दरार का कारण यह था:
मैंने यह नियम बना रखा है कि सुनवाई शुरू होने से पहले मैं किसी भी मामले का गहन अध्ययन नहीं करता। मैं आमतौर पर अपील किए गए फैसले को पढ़ता हूँ ताकि मुख्य तथ्यों से परिचित हो सकूँ और मुझे जिस मामले से निपटना है उसका एक समग्र अंदाजा लग सके। मेरा हमेशा से यह मानना रहा है कि सबूतों का बहुत गहन पूर्व-अध्ययन और उसमें शामिल बारीकियों पर पूरी तरह से पकड़ निष्पक्ष और तटस्थ सुनवाई में बाधा डालती है, क्योंकि अदालत के खुले माहौल से दूर और दोनों पक्षों के दृष्टिकोण के बिना, मन पूरे मामले की व्याख्या अपने व्यक्तिगत पूर्वाग्रहों के आधार पर करने लगता है। इससे वकीलों की दलीलों के प्रति एक अचेतन प्रतिरोध पैदा हो जाता है, क्योंकि हालांकि न्यायाधीश हमेशा सच्चे न्यायिक दिमाग की उल्लेखनीय लचीलता और किसी मामले में अंतिम शब्द कहे जाने तक खुले रहने की क्षमता का प्रचार करते रहते हैं, लेकिन प्रतिष्ठित न्यायाधीश कुख्यात रूप से हठी होते हैं और उन्हें अपने विश्वासों और दृढ़ मान्यताओं से हटाना मुश्किल होता है।

मैंने ऐसे न्यायाधीशों को भी जाना है जो पक्षों द्वारा नियुक्त वकीलों से भी अधिक पूरी तैयारी के साथ अदालत में आते हैं। मुझे संदेह है कि वे ऐसा आंशिक रूप से अपने उच्च कर्तव्य की भावना से, और साथ ही अपनी परिश्रमशीलता और विद्वत्ता का प्रदर्शन करने की इच्छा से भी करते हैं। न्यायाधीश चाहे कितना भी विद्वान और अनुभवी क्यों न हो, यदि उसने किसी मामले का गहन अध्ययन किया है, तो अदालत में आने से पहले ही वह उसके गुण-दोषों के बारे में अपनी राय बना लेगा। इसलिए, वह पूर्वाग्रह के साथ ही शुरुआत करेगा और उसे अपने इस मत से हटाना कठिन होगा, क्योंकि उसका अवचेतन मन यह मानने से इनकार कर देगा कि मामले के गहन अध्ययन में कोई महत्वपूर्ण बात छूट गई है या किसी साक्ष्य की गलत व्याख्या की गई है। वास्तव में लचीला मन होना उच्च न्यायिक अधिकारियों में बहुत दुर्लभ है।
मेरे मित्र और सहकर्मी न्यायमूर्ति अच्चरुराम हमेशा से ही अत्यंत कर्मठ वकील रहे हैं। न्यायाधीश बनने से पहले ही उनका वकालत का व्यापक और सफल अनुभव रहा था, और वे अपने साथ अथक परिश्रम करने की अद्वितीय क्षमता और दीवानी कानून का गहरा ज्ञान लेकर आए थे। आपराधिक कानून और प्रक्रिया उनके लिए अपेक्षाकृत अपरिचित रहे थे, हालांकि वे अक्सर आपराधिक मामलों से निपटने वाली पीठ में बैठते रहे थे। गोडसे और उसके साथियों की अपील की सुनवाई से कई सप्ताह पहले, वे उन भारी-भरकम किताबों का अध्ययन कर रहे थे जिनमें मौखिक और दस्तावेजी, सभी साक्ष्य मौजूद थे। कुल मिलाकर 1,131 बड़े अक्षरों वाले मुद्रित पृष्ठ और साइक्लोस्टाइल किए गए बड़े अक्षरों वाले कागज के 115 पृष्ठों का एक पूरक खंड था। उन्होंने मुकदमे के कुछ कानूनी पहलुओं से संबंधित कई रिकॉर्ड किए गए मामलों को देखने में काफी

मेहनत की थी और इन निर्णयों को नोट किया था। इसलिए, जब वह 2 मई की सुबह अदालत में आया, तो उसने मामले के तथ्यों के साथ-साथ अपील के ज्ञापनों में उठाए गए कानूनी बिंदुओं की पूरी समझ दिखाई। 'मैंने अपने सहकर्मी के प्रति, एक वकील और एक न्यायाधीश दोनों के रूप में, हमेशा से गहरा सम्मान रखा है और मैं उनकी विद्वत्ता का सम्मान करता रहूंगा, लेकिन उनकी परिश्रमशीलता का गोडसे अपील के पहले दिन एक बेहद दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम निकला। मामले की पैरवी श्री बैनर्जी ने की, जिन्होंने यह तर्क देते हुए शुरुआत की कि साजिश के उद्देश्य की पूर्ति के बाद साजिश का आरोप टिक नहीं सकता, और साजिशकर्ताओं पर महात्मा गांधी की हत्या की साजिश रचने और उनकी हत्या करने के कई आरोपों में मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। उन पर हत्या और हत्या के लिए उकसाने (अत्याचार करने) का मुकदमा चलाया जाना चाहिए था। श्री बैनर्जी का तर्क था कि इस गंभीर अनियमितता के कारण सभी अपीलकर्ताओं का मुकदमा दूषित हो गया। जैसा कि वकील कहते हैं, यह एक सूक्ष्म मुद्दा था, और इसके पक्ष और विपक्ष में बहुत कुछ कहा जा सकता था; लेकिन श्री बैनर्जी के कुछ वाक्य बोलने के तुरंत बाद, न्यायमूर्ति अच्चूराम ने भारत के विभिन्न उच्च न्यायालयों के कई निर्णयों की ओर उनका ध्यान आकर्षित करते हुए उन्हें बीच में ही रोक दिया।' श्री बनर्जी ने अपने विवेक के अनुसार इस विषय पर कानून की व्याख्या करने का व्यर्थ प्रयास किया। उनके तर्क का समर्थन करने वाले किसी भी निर्णय का उल्लेख करने मात्र से ही विपरीत निर्णयों की बौछार हो गई। मेरे मित्र न्यायमूर्ति भंडारी, पीठ के सबसे वरिष्ठ न्यायाधीश होने के नाते, यह महसूस करते थे कि कार्यवाही का मार्गदर्शन और नियंत्रण उन्हीं को करना चाहिए, जो दिनभर के दौरान एक जीवंत संवाद में तब्दील हो गई और श्री बनर्जी

को केवल कुछ संक्षिप्त और मामूली भाषण देने की अनुमति मिली। न्यायमूर्ति भंडारी सुनवाई के असामान्य रुख को लेकर बहुत चिंतित थे और उनका मानना था कि पीठ एक ऐसे मामले में अपने न्यायिक रवैये का गरिमाहीन प्रदर्शन कर रही है जो व्यापक रूप से ध्यान आकर्षित कर रहा है। उन्हें डर था कि कहीं हम यह धारणा न बना दें कि हमने पूरे मामले के बारे में अपना मत बना लिया है और दोषी व्यक्तियों की ओर से दिए गए किसी भी तर्क की खूबियों की जांच करने की हमारी कोई इच्छा नहीं है।
दिन की कार्यवाही समाप्त होने के बाद वह मेरे कक्ष में आए और उन्होंने मुझे दिन की कार्यवाही पर अपनी झुंझलाहट और मामले के भविष्य के संचालन के बारे में अपनी आशंकाएं बताईं। उन्होंने मुझसे पूछा कि उन्हें इस स्थिति से कैसे निपटना चाहिए। मैं उनसे सहमत था कि वह दिन बहुत ही असामान्य था, और अगर बड़ी संख्या में उपस्थित दर्शकों के चेहरों को देखें तो ऐसा लगता है कि हमने दर्शकों का भरपूर मनोरंजन किया था।
"लेकिन वह मामले को आगे नहीं बढ़ने दे रहा है। गोपाल, हम ऐसे नहीं चल सकते। वकील को अपना पक्ष रखने की अनुमति दी जानी चाहिए।"
"हम्म, हाँ। लेकिन, आप जानते हैं, कुछ न्यायाधीशों को बात करना पसंद होता है। जब वकील बहस कर रहे होते हैं तो वे बीच में बोलने से खुद को रोक नहीं पाते। ऐसा इंग्लैंड में भी होता है।"
"क्या आपको नहीं लगता कि मुझे उससे बात करनी चाहिए? देखिए, हमने इस मामले पर पांच घंटे बिता दिए हैं और हम एक कदम भी आगे नहीं बढ़ पाए हैं।"
"अच्छा, आप उससे इस बारे में बात कर सकते हैं। उसे यह पसंद नहीं आएगा।"

न्यायमूर्ति अच्चरुराम को यह पसंद नहीं आया। वास्तव में, उन्हें इस पर बहुत आपत्ति थी, और अगले कुछ दिनों तक पीठ के दोनों सदस्यों के बीच संबंध सौहार्दपूर्ण नहीं रहे। वे मुश्किल से ही एक-दूसरे से बात करते थे, और दोनों एक-दूसरे को तिरछी नजरों से देखते थे।
न्यायमूर्ति खोसला ने बड़ी चतुराई से अपने सहयोगी न्यायमूर्ति अच्चरुराम की योग्यता पर संदेह व्यक्त करते हुए कहा कि यद्यपि वे दीवानी मामलों में बहुत सक्षम हैं, लेकिन आपराधिक मामलों और प्रक्रियाओं में उन्हें अनुभव की कमी है।
अपील की सुनवाई की पूरी प्रक्रिया छब्बीस बैठकों तक चली। बनर्जी ने बचाव पक्ष की ओर से कार्यवाही शुरू की। उन्होंने प्रो. जे.सी. जैन द्वारा लिखित पुस्तक 'बापू को ना बचा सका' के प्रकाशन पर आपत्ति जताई। उन्होंने दावा किया कि पुस्तक लिखकर और प्रकाशित करके लेखक ने न्यायालय की अवमानना की है। उन्होंने साजिश के आरोपों और हत्या में सह-अपराधी होने के साथ-साथ हत्या की साजिश रचने के दोहरे आरोपों की अस्वीकार्यता पर तर्क दिया। उनके तर्क 4 मई तक जारी रहे। 5 मई को बनर्जी की तबीयत ठीक नहीं थी, इसलिए नाथूराम को अपना बयान देने के लिए कहा गया। नाथूराम ने न्यायालय में जो कहा, उस पर लिखने या टिप्पणी करने के बजाय, मैं न्यायमूर्ति खोसला की पुस्तक से उद्धृत कर रहा हूँ: हमारे समक्ष अपील का मुख्य बिंदु नाथूराम गोडसे द्वारा अपने बचाव में दिया गया भाषण था। उन्होंने कई घंटों तक भाषण दिया, जिसमें उन्होंने सबसे पहले मामले के तथ्यों और फिर महात्मा गांधी की हत्या के लिए प्रेरित करने वाले कारणों पर चर्चा की। उन्होंने निचली अदालत में दायर अपने लंबे लिखित बयान में भी

यही रुख अपनाया था, और इस बयान से लिए गए निम्नलिखित अंश उनके विचारों और दृष्टिकोणों का कुछ संकेत देंगे।
एक धर्मनिष्ठ ब्राह्मण परिवार में जन्म लेने के कारण, मेरे मन में स्वाभाविक रूप से हिंदू धर्म, हिंदू इतिहास और हिंदू संस्कृति के प्रति श्रद्धा का भाव उत्पन्न हुआ। मुझे समग्र रूप से हिंदू धर्म पर अत्यंत गर्व था। फिर भी, जैसे-जैसे मैं बड़ा हुआ, मेरे मन में किसी भी राजनीतिक या धार्मिक 'वाद' के प्रति अंधविश्वासपूर्ण निष्ठा से मुक्त होकर स्वतंत्र चिंतन की प्रवृत्ति विकसित हुई। यही कारण है कि मैंने अस्पृश्यता और जन्म आधारित जाति व्यवस्था के उन्मूलन के लिए सक्रिय रूप से कार्य किया। मैंने सार्वजनिक रूप से जाति-विरोधी आंदोलनों में भाग लिया और यह तर्क दिया कि सभी हिंदुओं को सामाजिक और धार्मिक अधिकारों के मामले में समान दर्जा मिलना चाहिए, और उनका उत्थान या पतन केवल उनकी योग्यता के आधार पर होना चाहिए, न कि किसी विशेष जाति या पेशे में जन्म के संयोग से। मैं सार्वजनिक रूप से संगठित जाति-विरोधी भोजों में भाग लेता था, जिनमें हजारों हिंदू, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, चमार और भंगी जाति नियमों को तोड़कर एक-दूसरे के साथ भोजन करते थे।
मैंने दादाभाई नौरोजी, विवेकानंद, गोखले, तिलक की रचनाओं के साथ-साथ भारत के प्राचीन और आधुनिक इतिहास और इंग्लैंड, फ्रांस, अमेरिका और रूस जैसे विश्व के कुछ प्रमुख देशों के इतिहास की पुस्तकें पढ़ी हैं। इतना ही नहीं, मैंने समाजवाद और साम्यवाद के वर्तमान सिद्धांतों का भी अच्छी तरह अध्ययन किया है। लेकिन सबसे बढ़कर मैंने वीर सावरकर और गांधीजी के लेखन और कथनों का बहुत गहराई से अध्ययन किया है, क्योंकि मेरे विचार में इन दोनों विचारधाराओं ने पिछले लगभग पचास वर्षों में आधुनिक भारत के

विचार और कार्यों को आकार देने में किसी भी अन्य एक कारक की तुलना में कहीं अधिक योगदान दिया है।
"इन सभी अध्ययनों और चिंतन ने मुझे इस बात पर दृढ़ विश्वास दिलाया कि सर्वोपरि, एक देशभक्त और मानवतावादी के रूप में हिंदू धर्म और हिंदू जनता की सेवा करना मेरा पहला कर्तव्य है। क्या यह सच नहीं है कि लगभग तीस करोड़ हिंदुओं की स्वतंत्रता और उनके न्यायसंगत हितों की रक्षा करना मानव जाति के एक-पांचवें हिस्से की स्वतंत्रता और कल्याण है? इसी दृढ़ विश्वास ने मुझे स्वाभाविक रूप से नई हिंदू संगठनवादी विचारधारा और कार्यक्रम के प्रति समर्पित कर दिया, जिसके बारे में मेरा मानना था कि केवल यही मेरी मातृभूमि, हिंदुस्तान की राष्ट्रीय स्वतंत्रता को प्राप्त कर सकता है और उसे संरक्षित कर सकता है, तथा उसे मानवता की सच्ची सेवा करने में सक्षम बना सकता है।"
सन् 1946 के आसपास, सुहरावर्दी के सरकारी संरक्षण में नोआखली में मुसलमानों द्वारा हिंदुओं पर किए गए अत्याचारों ने हमारा रक्त उबाल दिया। हमारी शर्म और आक्रोश की कोई सीमा नहीं रही, जब हमने देखा कि गांधीजी उसी सुहरावर्दी का बचाव करने के लिए आगे आए और अपनी प्रार्थना सभाओं में भी उन्हें 'शहीद साहब'—एक शहीद आत्मा!—कहने लगे। इतना ही नहीं, दिल्ली आने के बाद गांधीजी भंगी कॉलोनी के एक हिंदू मंदिर में प्रार्थना सभाएं करने लगे और वहां के हिंदू उपासकों के विरोध के बावजूद, प्रार्थना के दौरान कुरान के अंश पढ़ते रहे। बेशक, मुस्लिम विरोध के बावजूद उन्होंने मस्जिद में गीता पढ़ने की हिम्मत नहीं की। वे जानते थे कि अगर उन्होंने ऐसा किया होता तो मुसलमानों की कितनी भयानक प्रतिक्रिया होती। लेकिन वे सहिष्णु हिंदू की भावनाओं को कुचलने में सहज थे। इस धारणा को गलत साबित करने के लिए मैंने

गांधीजी को यह सिद्ध करने का निश्चय किया कि जब किसी हिंदू के सम्मान का अपमान होता है तो वह भी असहिष्णु हो सकता है।
इसके तुरंत बाद पंजाब और भारत के अन्य हिस्सों में मुस्लिम कट्टरपंथ का भयानक प्रकोप फैल गया। कांग्रेस सरकार ने बिहार, कलकत्ता, पंजाब और अन्य स्थानों पर मुस्लिम ताकतों का विरोध करने वाले हिंदुओं को सताना, उन पर मुकदमा चलाना और उन्हें गोली मारना शुरू कर दिया। हमारे सबसे बुरे डर सच होते दिख रहे थे; फिर भी यह हमारे लिए कितना दर्दनाक और शर्मनाक था कि 15 अगस्त 1947 को रोशनी और उत्सवों के साथ मनाया गया, जबकि पूरा पंजाब मुसलमानों द्वारा आग में झुलसा दिया गया था और हिंदुओं का खून नदियों की तरह बह रहा था। मेरे जैसे हिंदू महासभा के सदस्यों ने उत्सवों और कांग्रेसी सरकार का बहिष्कार करने और मुस्लिम हमलों को रोकने के लिए एक जुझारू कार्यक्रम शुरू करने का फैसला किया।
"पांच करोड़ भारतीय मुसलमान अब हमारे देशवासी नहीं रहे; पश्चिमी पाकिस्तान में लगभग सभी गैर-मुस्लिम अल्पसंख्यक या तो सबसे क्रूर हत्याओं द्वारा या सदियों पुरानी अपनी जड़ों से जबरन और दुखद रूप से बेदखल करके समाप्त कर दिए गए हैं; पूर्वी पाकिस्तान में भी यही प्रक्रिया तेजी से चल रही है। एक सौ दस करोड़ लोगों को उनके घरों से बेदखल कर दिया गया है, जिनमें से कम से कम चार करोड़ मुसलमान हैं, और जब मैंने पाया कि ऐसे भयानक परिणामों के बाद भी गांधीजी तुष्टीकरण की उसी नीति का पालन करते रहे, तो मेरा खून खौल उठा और मैं उन्हें और बर्दाश्त नहीं कर सका। मेरा इरादा गांधीजी के खिलाफ व्यक्तिगत रूप से कठोर शब्दों का प्रयोग करने का नहीं है, न ही मैं उनकी नीति और तरीकों की बुनियाद से अपनी घोर असहमति और अस्वीकृति को छिपाना चाहता

हूं। वास्तव में गांधीजी वही करने में सफल हुए जो अंग्रेज अपनी 'बांटो और राज करो' की नीति के तहत हमेशा से करना चाहते थे। उन्होंने भारत को बांटने में उनकी मदद की और यह अभी तक निश्चित नहीं है कि उनका शासन समाप्त हुआ है या नहीं।"
32 वर्षों के बढ़ते उकसावे, जो उनके अंतिम मुस्लिम समर्थक अनशन में चरम पर पहुँचे, ने अंततः मुझे इस निष्कर्ष पर पहुँचाया कि गांधीजी के अस्तित्व को तत्काल समाप्त कर देना चाहिए। भारत लौटने पर उन्होंने एक ऐसी व्यक्तिपरक मानसिकता विकसित कर ली थी जिसके तहत वे ही सही-गलत के अंतिम निर्णायक थे। यदि देश को उनका नेतृत्व चाहिए था तो उसे उनकी अचूकता को स्वीकार करना ही था; यदि नहीं, तो वे कांग्रेस से अलग होकर अपने तरीके से आगे बढ़ते। ऐसे रवैये के विरुद्ध कोई मध्यमार्गी रास्ता नहीं हो सकता; या तो कांग्रेस को अपनी इच्छा उनके आगे समर्पित करनी पड़ती और उनकी सभी विलक्षणताओं, सनक, दार्शनिक विचारों और आदिम दृष्टि के आगे झुकना पड़ता, या फिर उन्हें उनके बिना आगे बढ़ना पड़ता। वे ही हर किसी और हर चीज के निर्णायक थे; वे सविनय अवज्ञा आंदोलन के मार्गदर्शक थे; उस आंदोलन की तकनीक किसी और को नहीं पता थी; केवल वे ही जानते थे कि इसे कब शुरू करना है और कब बंद करना है। आंदोलन सफल हो सकता है या असफल; यह अनगिनत आपदाएँ और राजनीतिक उथल-पुथल ला सकता है। असफलताएँ तो मिलीं, लेकिन महात्मा गांधी की अचूकता पर कोई फर्क नहीं पड़ा। 'सत्याग्रही कभी असफल नहीं हो सकता' यही उनका अपनी अचूकता घोषित करने का सूत्र था और उनके सिवा कोई नहीं जानता था कि सत्याग्रही कौन होता है। इस प्रकार गांधीजी अपने मामले में स्वयं न्यायाधीश और वकील बन गए। उनकी ये बचकानी बातें और हठधर्मिता, जीवन की कठोर तपस्या, अथक परिश्रम और उच्च चरित्र ने गांधीजी को दुर्जेय और अजेय बना

दिया। कई लोगों को उनकी राजनीति तर्कहीन लगी, लेकिन उन्हें या तो कांग्रेस से अलग होना पड़ा या अपनी बुद्धि उनके चरणों में अर्पित करनी पड़ी ताकि वे उसका जो चाहें उपयोग कर सकें। ऐसी पूर्णतः गैर-जिम्मेदारी की स्थिति में गांधीजी एक के बाद एक भूल, एक के बाद एक असफलता और एक के बाद एक आपदा के दोषी रहे। उनके 33 वर्षों के राजनीतिक प्रभुत्व के दौरान एक भी राजनीतिक जीत का श्रेय उन्हें नहीं दिया जा सकता।
जब तक गांधीवादी पद्धति का प्रभुत्व बना रहा, तब तक निराशा ही एकमात्र अपरिहार्य परिणाम थी। उन्होंने निरंतर हर उत्साही क्रांतिकारी, कट्टरपंथी और सशक्त व्यक्ति या समूह का विरोध किया और अपने चरखे, अहिंसा और सत्य का प्रचार किया। गांधीजी के 34 वर्षों के अथक प्रयासों के बाद भी, चरखे से मशीन से चलने वाले वस्त्र उद्योग में 200 प्रतिशत से अधिक की वृद्धि ही हुई। यह आज भी देश की एक प्रतिशत आबादी को भी वस्त्र प्रदान करने में असमर्थ है। अहिंसा की बात करें तो, 40 करोड़ लोगों से इतने उच्च स्तर पर अपने जीवन को व्यवस्थित करने की अपेक्षा करना हास्यास्पद था और यह सिद्धांत 1942 में सबसे स्पष्ट रूप से विफल हो गया। सत्य की बात करें तो, मैं कम से कम इतना ही कह सकता हूँ कि औसत कांग्रेसी की सत्यनिष्ठा आम आदमी की सत्यनिष्ठा से किसी भी तरह से श्रेष्ठ नहीं है, और अक्सर यह वास्तव में असत्य ही होता है, जिसे झूठी सत्यनिष्ठा के पतले आवरण से ढका जाता है। गांधीजी की अंतरात्मा की आवाज, उनकी आध्यात्मिक शक्ति और अहिंसा का उनका सिद्धांत, जिसकी इतनी प्रशंसा की जाती है, श्री जिन्ना की दृढ़ इच्छाशक्ति के आगे धराशायी हो गया और शक्तिहीन साबित हुआ। यह जानते हुए कि वे अपनी आध्यात्मिक शक्तियों से श्री जिन्ना को प्रभावित नहीं कर सकते, गांधीजी को या तो अपनी

नीति बदलनी चाहिए थी या अपनी हार स्वीकार कर लेनी चाहिए थी और श्री जिन्ना और मुस्लिम लीग से निपटने के लिए अलग-अलग राजनीतिक विचारों वाले अन्य लोगों को रास्ता देना चाहिए था। लेकिन गांधीजी इतने ईमानदार नहीं थे कि ऐसा कर सकें। वे राष्ट्रीय हित के लिए भी अपने अहंकार या स्वार्थ को नहीं छोड़ सके। इस प्रकार, जब हिमालय जितनी बड़ी गलतियाँ हो रही थीं, तब व्यावहारिक राजनीति के लिए कोई गुंजाइश नहीं बची थी।
जो लोग मुझे व्यक्तिगत रूप से जानते हैं, वे मुझे शांत स्वभाव का व्यक्ति मानते हैं। लेकिन जब गांधीजी की सहमति से कांग्रेस के शीर्ष नेताओं ने देश को विभाजित और खंडित किया—जिसे हम पूज्य देवता के समान मानते हैं—तो मेरा मन भयंकर क्रोध से भर गया। संक्षेप में, मैंने मन ही मन सोचा और यह पूर्वाभास किया कि यदि मैं गांधीजी की हत्या कर दूं तो मेरा पूर्ण पतन हो जाएगा और जनता से मुझे केवल घृणा ही प्राप्त होगी, और मैं अपना सारा सम्मान खो दूंगा, जो मेरे जीवन से भी अधिक मूल्यवान है। लेकिन साथ ही मुझे यह भी आभास हुआ कि गांधीजी की अनुपस्थिति में भारतीय राजनीति निश्चित रूप से व्यावहारिक होगी, प्रतिशोध लेने में सक्षम होगी और सशस्त्र बलों के साथ शक्तिशाली होगी। निःसंदेह, मेरा अपना भविष्य पूर्णतः नष्ट हो जाएगा, लेकिन राष्ट्र पाकिस्तान के आक्रमणों से बच जाएगा। लोग मुझे बुद्धिहीन या मूर्ख भी कह सकते हैं, लेकिन राष्ट्र तर्क पर आधारित उस मार्ग का अनुसरण करने के लिए स्वतंत्र होगा जिसे मैं सुदृढ़ राष्ट्र निर्माण के लिए आवश्यक मानता हूं। इस प्रश्न पर पूरी तरह विचार करने के बाद, मैंने इस मामले में अंतिम निर्णय लिया, लेकिन मैं मैंने इस बारे में किसी से भी बात नहीं की। मैंने दोनों हाथों में साहस भरकर 30 जनवरी 1948 को बिरला हाउस

विषय एक धर्मात्मा व्यक्ति का कर्तव्य, हिंदू धर्मग्रंथों में वर्णित उसका धर्म था। उन्होंने ऐतिहासिक घटनाओं का मार्मिक उल्लेख किया और हिंदुओं से अपनी मातृभूमि को बचाने और उसकी रक्षा करने तथा उसके लिए अपने प्राणों की आहुति देने की भावुक अपील की। उन्होंने भगवद्गीता के श्लोकों का पाठ करते हुए अपने भाषण का समापन भावपूर्ण ढंग से किया।
श्रोतागण स्पष्ट रूप से भावुक थे। उनके बोलने के बाद गहरी खामोशी छा गई। कई महिलाएं रो रही थीं और पुरुष खांस रहे थे और अपने रुमाल ढूंढ रहे थे। बीच-बीच में किसी के सिसकने या दबी हुई खांसी की आवाज से खामोशी और भी गहरी और तीव्र हो गई। मुझे ऐसा लगा जैसे मैं किसी मेलोड्रामा या हॉलीवुड फिल्म के किसी दृश्य में हिस्सा ले रहा हूँ। एक-दो बार मैंने गोडसे को टोका और उनकी बातों की निरर्थकता की ओर इशारा किया, लेकिन मेरे सहकर्मी उन्हें सुनने के लिए उत्सुक लग रहे थे और श्रोतागण निश्चित रूप से यही सोच रहे थे कि गोडसे का प्रदर्शन ही इस लंबी कार्यवाही का एकमात्र सार्थक हिस्सा था। प्रभाव और प्रतिक्रिया के परस्पर संबंध को देखने की एक लेखक की जिज्ञासा ने मुझे इस मामले में अधिक गंभीर होने से रोक दिया। मैंने मन ही मन कहा: "यह आदमी जल्द ही मरने वाला है। अब वह किसी को नुकसान नहीं पहुंचा सकता। उसे आखिरी बार अपनी भड़ास निकालने देनी चाहिए।"
'हालांकि, मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि यदि उस दिन उपस्थित दर्शकों को एक जूरी के रूप में गठित किया जाता और उन्हें गोडसे की अपील पर निर्णय लेने का कार्य सौंपा जाता, तो वे भारी बहुमत से "दोषी नहीं" का फैसला सुनाते।'
नाथुराम ने न्यायाधीशों द्वारा दिखाई गई उदारता का चतुराई से फायदा उठाकर एक बार फिर नफरत और असहिष्णुता के अपने दर्शन का

प्रचार किया। इस स्वघोषित देशभक्त ने यह मानने से इनकार कर दिया कि सदियों से भारत में रहने वाले गैर-हिंदू भी भारतीय राष्ट्र का हिस्सा हैं और उनके खिलाफ नफरत का अभियान चलाना राजद्रोह के समान है। नाथुराम एक कट्टरपंथी और संकीर्ण मानसिकता वाला व्यक्ति था और उसमें अपने विश्वास से भिन्न किसी अन्य दृष्टिकोण को समझने की क्षमता नहीं थी। उसने उच्च न्यायालय में अपील के अवसर का उपयोग करके एक बार फिर नफरत के अपने सिद्धांत का प्रचार किया। उसका बयान झूठ और अर्ध-सत्य का एक चालाकी से गढ़ा गया संकलन था, जिसमें वास्तविक घटनाओं का अत्यधिक अतिरंजित वर्णन भी शामिल था, जिसने इसे एक ऐसे व्यक्ति के खिलाफ एक अत्यंत भड़काऊ भाषण बना दिया जो अपना बचाव करने के लिए जीवित नहीं था। लेकिन जब कोई गांधी के अंतिम चार वर्षों के इतिहास का अध्ययन करता है, तो गोडसे के झूठ को तुरंत समझा जा सकता है।
गोडसे का बयान 11 मई तक चला; इसके बाद बैनर्जी ने अपनी दलीलें जारी रखीं, और किस्तय्या के वकील अवस्थी ने 24 मई को अपनी दलीलें समाप्त कीं। 25 मई को दाफ्तरी ने अभियोजन पक्ष की ओर से दलीलें पेश कीं, जिसके बाद डांगे ने अपनी दलीलें दीं। अंत में, बैनर्जी द्वारा दिए गए जवाबों के बाद, 6 जून को अपील की सुनवाई समाप्त हुई।
पीठासीन न्यायाधीशों के बीच मतभेद दूर न हो पाने के कारण सर्वसम्मत निर्णय पर पहुँचना असंभव था। न्यायमूर्ति अच्छुर्रम ने न्यायमूर्ति ए.एन. भंडारी और न्यायमूर्ति जी.डी. खोसला से अलग-अलग अपना फैसला सुनाया। परचुरे को बरी कर दिया गया क्योंकि उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों ने उनके इकबालिया बयान को स्वैच्छिक बयान मानने से इनकार कर दिया। किस्तय्या को भी बरी

कर दिया गया क्योंकि न्यायाधीशों का मानना था कि वह केवल बैज के नौकर के रूप में कार्य कर रहा था और इसलिए उसे सह-अपराधी के रूप में दोषी नहीं ठहराया जा सकता। न्यायाधीश आत्मचरण ने भी यही सिफारिश की थी, हालांकि उन्होंने हल्की सजा की सिफारिश की थी। उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों ने गोपाल गोडसे की कम उम्र को देखते हुए सरकार से उसके प्रति नरमी बरतने की सिफारिश की। नाथूराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे और मदनलाल के. पाहवा की सजा को बरकरार रखा गया। फैसला 21 जून 1949 को सुनाया गया।
हालांकि उच्च न्यायालय केवल विशेष न्यायालय के फैसले के खिलाफ अपील की सुनवाई कर रहा था, न्यायमूर्ति अच्छुरम ने जांच पुलिस की धूमिल छवि को सुधारने का बीड़ा उठाया और उन्हें सभी दोषों से बरी कर दिया तथा न्यायाधीश आत्मचरण द्वारा की गई आलोचनात्मक टिप्पणियों को अनावश्यक बताया। एक ओर जहां अच्छुरम और भंडारी ने पुलिस को सभी दोषों से बरी कर दिया और कर्तव्य से बढ़कर कार्य करने के लिए उनकी प्रशंसा की, वहीं डॉ. परचुरे के मामले में अच्छुरम ने उनकी तुलना नरक के राक्षसों से की और परचुरे को जबरन कबूलनामा पर हस्ताक्षर करवाने के लिए क्रूर तरीकों का इस्तेमाल करने की आलोचना की। इसी मामले में न्यायाधीश ने पुलिस को योग्यता प्रमाण पत्र से सम्मानित किया और उन्हें नाज़ी करार दिया। न्यायाधीशों ने परचुरे के कबूलनामे को स्वैच्छिक मानने से इनकार कर दिया और उन्हें बरी कर दिया, इस तथ्य को नजरअंदाज करते हुए कि उनकी मदद के बिना नाथूराम गोडसे और नारायण आप्टे ग्वालियर से बंदूक हासिल नहीं कर पाते। यदि पारचुर बंदूक हासिल करने में मदद करने का दोषी नहीं था, तो फिर कौन दोषी था?

न्यायमूर्ति ए.एन. भंडारी और न्यायमूर्ति जी.डी. खोसला द्वारा दिए गए 315 पृष्ठों के लंबे फैसले को न्यायमूर्ति भंडारी ने पढ़कर सुनाया।
प्रिवी काउंसिल से अपील
आरोपी नथुराम गोडसे, नारायण आप्टे, विष्णु करकरे, गोपाल गोडसे और मदनलाल पाहवा ने पंजाब उच्च न्यायालय के फैसले के खिलाफ प्रिवी काउंसिल में अपील की। यह अपील 'गरीब अधिनियम' के तहत की गई थी, जिसका उद्देश्य उन लोगों को न्याय व्यवस्था का लाभ उठाने की सुविधा प्रदान करना था जो इसके लिए पैसे खर्च नहीं कर सकते थे। देशभक्तों के इस समूह ने अपने देश की अदालतों के फैसले के खिलाफ औपनिवेशिक न्याय व्यवस्था में अपील करने का विकल्प चुना। जॉन मेगा आरोपियों की ओर से पेश हुए। अपील के मुख्य तर्क इस प्रकार थे:
(1) गवाह को दी गई न्यायिक क्षमा अवैध रूप से दी गई थी और अनुचित तरीके से। इस प्रकार सभी गवाहों ने गवाही की पुष्टि की। अनुमोदक को अवैध घोषित कर अस्वीकार कर देना चाहिए।
(2) कानून के अनुसार षड्यंत्र का आरोप टिकाऊ नहीं था।
विभिन्न आरोपों को एक साथ जोड़ दिया गया जो सिद्धांतों के विरुद्ध थे।
आपराधिक कानून का उल्लंघन करते हुए कई गवाहियों को दर्ज किया गया।
भारतीय गवाह अधिनियम के तहत।
(3) भारत में न्यायालयों ने स्थापित करने की उचित प्रक्रियाओं का पालन नहीं किया था
किसी आपराधिक मामले में दोषी ठहराया जाना।
(4) मदनलाल के विरुद्ध षड्यंत्र का आरोप निराधार था, क्योंकि वह

उन्हें साजिश से संबंधित एक अन्य आरोप में निर्दोष पाया गया। प्रिवी काउंसिल की न्यायिक समिति ने अपील सुनने से इनकार कर दिया और 12 अक्टूबर को इसे वापस लौटा दिया।
राज्यपाल जनरल से अपील
प्रिवी काउंसिल द्वारा अपील खारिज किए जाने के बाद, 26 अक्टूबर 1949 को दिल्ली के विशेष न्यायाधीश एस.एस. दुलार ने नाथूराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे के लिए मृत्यु वारंट जारी किया। फांसी की तारीख 15 नवंबर 1949 तय की गई थी, जो अंबाला जेल में होनी थी।
नाथूराम गोडसे के माता-पिता ने राज्यपाल जनरल से अपने बेटे के लिए दया की अपील की, जैसा कि नारायण आप्टे और उनकी पत्नी ने भी किया। 7 नवंबर को सुबह 11:30 बजे राज्यपाल जनरल के कार्यालय ने एक संक्षिप्त प्रेस विज्ञप्ति जारी की, जिसमें कहा गया कि 'राज्यपाल जनरल ने इस मामले में हस्तक्षेप करने से इनकार कर दिया है।' नाथूराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे का भाग्य अब तय हो चुका था। उन्हें सजा के अनुसार 'फांसी पर लटकाकर मृत्युदंड दिया जाएगा'।
कार्यान्वयन
न्यायमूर्ति जी.डी. खोसला ने नाथूराम गोडसे और नारायण आप्टे की फांसी का प्रत्यक्षदर्शी विवरण दिया है। मैंने उनके द्वारा वर्णित फांसी का विवरण नीचे दिया है:
इस दुखद कहानी का अंतिम अध्याय हमें अंबाला की केंद्रीय जेल ले जाता है, जहाँ 15 नवंबर, 1949 की सुबह नाथूराम गोडसे और आप्टे को फाँसी दी गई थी। मुकदमे की समाप्ति के बाद उन्हें वहाँ उनकी अपील के फैसले की प्रतीक्षा करने के लिए भेजा गया था। आप्टे ने भारतीय दर्शन के कुछ पहलुओं पर एक ग्रंथ लिखना शुरू किया, जिसे

उन्होंने अपनी फाँसी से एक-दो दिन पहले पूरा किया। गोडसे ने कई किताबें पढ़कर अपना समय व्यतीत किया। दोनों फाँसीशुदा कैदियों को उनके हाथों में हथकड़ी लगाकर उनकी कोठरियों से बाहर लाया गया। गोडसे आगे-आगे चल रहे थे। उनके कदम कभी-कभी लड़खड़ाते थे। उनके हाव-भाव और सामान्य रूप से उनकी घबराहट और भय स्पष्ट था। उन्होंने इससे लड़ने और कुछ सेकंड में "अखंड भारत" का नारा लगाकर एक साहसी बाहरी रूप बनाए रखने की कोशिश की। लेकिन उनकी आवाज में थोड़ी कर्कशता थी, और जिस जोश के साथ उन्होंने मुकदमे और उच्च न्यायालय में अपना पक्ष रखा था, वह लगभग समाप्त हो चुका था। आप्टे ने उस बेताब पुकार को आगे बढ़ाते हुए "अमर रहे" का नारा लगाया। उनकी बुलंद और दृढ़ आवाज गोडसे की कभी-कभी लगभग कमजोर सी लगने वाली आवाज से बिलकुल विपरीत थी।
जेल अधीक्षक और अंबाला के जिला मजिस्ट्रेट, जो उच्च न्यायालय के आदेश के विधिवत निष्पादन को प्रमाणित करने आए थे, ने देखा कि गोडसे के विपरीत, आप्टे पूरी तरह से संयमित थे और उनमें घबराहट का जरा भी संकेत नहीं था। वे दृढ़ कदमों से कंधे पीछे करके और सिर ऊंचा करके चल रहे थे। गोडसे से कई इंच लंबे होने के कारण, वे उन पर हावी प्रतीत होते थे। उनके चेहरे पर चुनौती या अपने किए का औचित्य साबित करने का भाव नहीं था, बल्कि एक आंतरिक संतुष्टि का भाव था, उस कार्यवाही के उचित अंत की आशा थी जिसने इतना शोर और आक्रोश पैदा किया था। बाद में कहा गया कि गोडसे ने जेल में अपने अंतिम दिनों में अपने कृत्य पर पश्चाताप किया था और घोषणा की थी कि यदि उन्हें एक और मौका दिया जाए तो वे अपना शेष जीवन शांति को बढ़ावा देने और अपने देश की सेवा में व्यतीत करेंगे। दूसरी ओर, आप्टे का रवैया अडिग रहा। अंत तक उन्होंने अपना अपराध स्वीकार करने से इनकार कर दिया, न ही उन्होंने पराजित शत्रु की

तरह गिड़गिड़ाते हुए अपनी निर्दोषता का दावा किया। भगवद्गीता के अध्ययन और दर्शन पर ग्रंथ लिखने के उनके स्वयं के प्रयोग ने शायद उन्हें विरोध या प्रार्थना की निरर्थकता का ज्ञान कराया हो, या शायद यह उनका स्वाभाविक संयमी स्वभाव हो, लेकिन वे अपने अंत की ओर उस आत्मविश्वास और भरोसे के साथ बढ़े, मानो उन्हें अपने कर्तव्य के फल के रूप में अपेक्षित और उचित पुरस्कार ही मिलने वाला हो।
दोनों को फांसी देने के लिए एक ही फांसी का तख्ता तैयार किया गया था। ऊंचे चौखट से समानांतर रेखाओं में दो रस्सियां लटकी हुई थीं, जिनमें से प्रत्येक में एक फंदा था। गोडसे और आप्टे को अगल-बगल खड़ा किया गया, उनके सिर पर काले कपड़े के थैले डाले गए और उनकी गर्दन पर बांध दिए गए। फंदों को ठीक करने के बाद, जल्लाद चबूतरे से नीचे उतरा और लीवर खींचकर फांसी के तख्ते को दोनों के पैरों के नीचे से नीचे गिरा दिया।
'आप्टे की लगभग तुरंत ही मृत्यु हो गई और उसका बेजान शरीर धीमी गति से दोलन करने लगा, लेकिन गोडसे, हालांकि बेहोश और भावनाहीन था, पंद्रह मिनट तक छटपटाता रहा और अपने पैरों के कांपने और शरीर के ऐंठन से जीवन के संकेत प्रदर्शित करता रहा।'
'लाशों का अंतिम संस्कार जेल के अंदर ही किया गया, जिस जमीन पर चिताएं बनाई गई थीं उसे जोतकर मिट्टी और राख को घग्गर नदी में ले जाकर एक सुनसान जगह पर गुप्त रूप से विसर्जित कर दिया गया।' इस प्रकार जो त्रासदी के रूप में शुरू हुआ था, उसका अंत भी त्रासदी के रूप में हुआ, जिसमें दो युवा जिंदगियां बर्बाद हो गईं। नाथूराम गोडसे और नारायण आप्टे के साथ जो हुआ, वह उनके पीड़ितों को मंजूर नहीं होता। मुकदमे के दौरान, गांधी जी के दूसरे बेटे मनीलाल गांधी ने प्रधानमंत्री पंडित नेहरू से

आरोपियों को माफ करने की अपील की। उनके छोटे भाई रामदास गांधी ने भी क्षमा मांगने के लिए पत्र लिखा।
न्याय के नाम पर, एक जान के बदले दूसरी जान लेने की आदिम प्रथा को लागू किया गया।
गोपाल गोडसे, विष्णु करकरे और मदनलाल पाहवा को चौदह वर्ष की सजा काटने के बाद 12 अक्टूबर 1964 को रिहा कर दिया गया। पुणे में हिंदू महासभा ने उनकी रिहाई का जश्न मनाया। एम.जी. घैसास द्वारा एक निमंत्रण भेजा गया, जिसमें लिखा था: 'श्री गजानन प्रसन्ना। सप्रेम नमस्कार, आदर और प्रेम सहित—देशभक्त स्वर्गीय श्री नाथूराम वी. गोडसे के भाई श्री गोपालराव गोडसे, श्री विष्णुपंत करकरे और श्री मदनलाल पाहवा की जेल से रिहाई पर प्रसन्नता व्यक्त करने के लिए, हम (उनके मित्र) श्री सत्य विनायक पूजा करने और उन्हें बधाई देने के लिए उन्हें यहाँ आमंत्रित कर रहे हैं: अतः आपसे अनुरोध है कि आप इस समारोह में उपस्थित रहें। आपका, एम.जी. घैसास। समय: गुरुवार 12-11-1964, शाम 5.30 बजे से 7.30 बजे तक। स्थान: उद्यान मंगल कार्यालय, 61, शनिवार पेठ, पुणे-2।' घैसास को समारोह आयोजित करने के आरोप में गिरफ्तार किया गया था। बॉम्बे उच्च न्यायालय में दायर अपने हलफनामे में घैसास ने कहा कि लगभग पचास निमंत्रण भेजे गए थे और घर वापसी करने वाले 'नायकों' के स्वागत समारोह में लगभग 125 से 200 लोग शामिल हुए थे।
विष्णु करकरे रिहाई के बाद अहमदनगर लौट आए, जहाँ उन्होंने अपना शेष जीवन होटल व्यवसायी और कला प्रदर्शन के संरक्षक के रूप में बिताया। उनका निधन 4 अप्रैल 1974 को हुआ, उनकी पत्नी का 2003 में निधन हो गया। अहमदनगर में स्थित डेक्कन गेस्ट हाउस का संचालन उनकी दत्तक पुत्री द्वारा किया जाता है।

मदनलाल पाहवा मुंबई में रहते थे और कपास और कागज के कचरे के व्यापारी के रूप में एक छोटा व्यवसाय चलाते थे, जिसकी आपूर्ति वे पेपर एंड बोर्ड मिल्स को करते थे। जब भी उन्हें कोई ऐसा व्यक्ति मिल जाता जो उन्हें कुछ पेय और भोजन पिलाने को तैयार होता, मदनलाल ग्वालियर में अपने कारनामों और गांधीजी की हत्या में अपनी भूमिका के बारे में विस्तार से बताते थे। उनका निधन वर्ष 2001 में हुआ और उनके परिवार में उनकी पत्नी हैं।
बैज को मुंबई में पुलिस आयुक्त कार्यालय के परिसर में एक कमरा दिया गया था, जहां वह अपनी मृत्यु तक सुरक्षा में रहे। बैज अपने ग्राहकों के लिए चेन मेल जैकेट और बाघ के पंजे बनाते रहे। बैज, उनकी पत्नी और बच्चों का क्या हुआ, यह अज्ञात है।
बरी होने के बाद दत्तात्रेय परचुरे ग्वालियर में अपने चिकित्सा पेशे में लौट आए। अस्सी के दशक में पार्किंसंस रोग से पीड़ित होने के कारण उनका निधन हो गया। बरी होने के बाद से लेकर अपनी मृत्यु तक उन्होंने साजिश में शामिल होने से इनकार किया। ग्वालियर में परचुरे वाडा आज भी मौजूद है।
शंकर किस्तय्या को बरी किए जाने के बाद वे गरीब भारतीय जनता की गुमनामी में गुम हो गए। 1949 में उच्च न्यायालय द्वारा बरी किए जाने के बाद उनके जीवन के बारे में कुछ भी ज्ञात नहीं है। नाथूराम गोडसे के आदरणीय छोटे भाई गोपाल गोडसे हत्यारों के गिरोह के अंतिम जीवित सदस्य थे और अपने परिवार के साथ पुणे में रहते थे। जेल से रिहा होने के बाद, उन्हें साठ के दशक के मध्य में एक बार फिर जेल भेज दिया गया। सत्तर के दशक में गुमनामी में रहने के बाद, अस्सी और नब्बे के दशक में गोपाल संघ परिवार की हिंदू दक्षिणपंथी पार्टियों के प्रतीक बन गए। उन्होंने कुछ समय के लिए प्रसिद्धि का आनंद लिया। गोपाल का निधन वृद्धावस्था

के कारण 26 नवंबर 2005 को हुआ। गोपाल गोडसे के परिवार में उनकी पत्नी सिंधुताई, बेटियां और पोते-पोतियां हैं, जो गर्व से नाथूराम गोडसे की विरासत को आगे बढ़ा रहे हैं।
नारायण आप्टे की प्रेमिका मनोरमा साल्वी के बारे में कुछ भी पता नहीं है, और न ही यह कि क्या उन्होंने उनके बच्चे को जन्म दिया था। अगर दिया था, तो उस बच्चे का क्या हुआ? क्या दुर्भाग्यशाली मनोरमा अविवाहित माँ होने के कलंक को सह पाईं? नारायण आप्टे ने अपनी आदत के अनुसार, अपने निजी जीवन में भी कई अनसुलझे रहस्य छोड़े हैं। आप्टे परिवार ने अपनी पहचान गुप्त रखी है।
हिंदू महासभा के विचारक, कट्टरपंथी हिंदू धर्म के जनक और गांधीजी की हत्या के मुख्य सूत्रधार वी.डी. सावरकर को बरी कर दिया गया क्योंकि अभियोजन पक्ष ने उनके खिलाफ मामले को सख्ती से आगे नहीं बढ़ाया। उन्हें बरी करना एक राजनीतिक आवश्यकता भी थी। पटेल ने स्वीकार किया था कि सरकार ने 'मुसलमानों को नाराज कर दिया था, और हम हिंदुओं को भी नाराज नहीं कर सकते थे।' यदि सावरकर दोषी पाए जाते और उन्हें सजा सुनाई जाती, तो इससे हिंदू चरमपंथियों की भारी प्रतिक्रिया होती, जिसका सामना करने से कांग्रेस डरती थी। जांच अधिकारी नागरवाला ने यह मानने से इनकार कर दिया कि सावरकर हत्या की साजिश में शामिल नहीं थे। तत्कालीन पुलिस आयुक्त भरूचा ने सावरकर से मुलाकात के बाद बंबई के गृह मंत्री मोरारजी देसाई को बताया कि गांधीजी की हत्या के बाद सावरकर का व्यवहार बेहद संदिग्ध था। लिमये, जिसे पहले ही हिरासत में लिया गया था, ने पुलिस को बताया कि अगर नाथूराम गोडसे हत्यारा था, तो आप्टे उसके साथ जरूर रहा होगा और उन्होंने सावरकर से सलाह जरूर ली होगी। वी. डी. सावरकर ने 27 फरवरी 1966

को अपनी मृत्यु तक कट्टरपंथी हिंदू धर्म के अपने संस्करण का प्रचार करना जारी रखा।
नई दिल्ली के राजघाट स्थित गांधी राष्ट्रीय संग्रहालय परिसर में स्थित एक सीलबंद अलमारी में बेरेटा 9 मिमी स्वचालित पिस्तौल संख्या 606824 आज भी बंद है—हत्याओं का सिलसिला यहीं समाप्त होता है। इटली में जन्म लेने के बाद इसने यूरोप, अफ्रीका और एशिया से होते हुए एक लंबा सफर तय किया और अंत में एक अलमारी में सड़ने के लिए पड़ी रही। अपने छोटे से कार्यकाल में इसने पिछली सदी के सबसे भीषण युद्धों में से एक—द्वितीय विश्व युद्ध—में भाग लिया, कई हाथों से गुजरी और अंततः 28 जनवरी को एक कट्टर हत्यारे के हाथों में पहुँच गई। छोटी नली से निकली तीन गोलियां गांधीजी को बेहद करीब से लगीं। इसके बाद फोरेंसिक विशेषज्ञों द्वारा बंदूक की जांच की गई और फिर उसे पैक करके सीलबंद कर दिया गया।

14

कपूर आयोग

'षड्यंत्र एक काला, शातिर रहस्य है, जो एक धुंधले प्रेत की तरह मायावी और भ्रामक है, जिसे कहना आसान है, लेकिन साबित करना मुश्किल है।'
- तपन घोष, गांधी हत्या मुकदमा

[प्रामाणिकता सुनिश्चित करने और कपूर आयोग की गरिमा बनाए रखने के लिए, उद्धरणों की भाषा में कोई संशोधन नहीं किया गया है।]

12 अक्टूबर 1964 को गोपाल वी. गोडसे, विष्णु आर. करकरे और मदनलाल के. पाहवा गांधी जी की हत्या में अपनी भूमिका के लिए आजीवन कारावास की सजा काटने के बाद रिहा हुए। जब गोपाल गोडसे और विष्णु करकरे पुणे पहुंचे तो उनके दोस्तों ने उनका नायकों की तरह स्वागत करने का फैसला किया। उनके सम्मान में और उनके इस नेक काम को याद करने के लिए एक समारोह आयोजित किया गया।
12 नवंबर 1964 को उद्यान कार्यालय में सत्य विनायक पूजा का आयोजन किया गया था और निमंत्रण एम.जी. घैसास के नाम से भेजे गए थे। मराठी निमंत्रण का अंग्रेजी अनुवाद निम्नलिखित है: 'श्री गजानन प्रसन्ना। प्रेम के सम्मान में—देशभक्त और देशभक्त स्वर्गीय श्री नाथूराम वी. गोडसे, श्री विष्णुपंत करकरे और श्री मदनलाल पाहवा के भाई श्री गोपालराव गोडसे की जेल से रिहाई की खुशी में, हम उनके मित्र श्री सत्य विनायक पूजा करने और उन्हें बधाई देने के लिए उन्हें यहाँ आमंत्रित कर रहे हैं: अतः आपसे अनुरोध है कि आप अपने मित्रों के साथ इस समारोह में उपस्थित रहें। आपका, एम.जी. घैसास। समय: गुरुवार, 12-11-1964,

शाम 5.30 बजे से 7.30 बजे तक, स्थान: उद्यान कार्यालय, 61 शनिवार पेठ, पुणे-2।'
बॉम्बे उच्च न्यायालय में दायर एक हलफनामे में, समारोह के परिणामस्वरूप हिरासत में लिए गए एम.जी. घैसास ने कहा कि लगभग पचास निमंत्रण भेजे गए थे, लेकिन खुफिया रिपोर्टों में कहा गया है कि समारोह में 125 से 200 लोग शामिल हुए थे।
लोकमान्य तिलक के पोते, केसरी और तरुण भारत के पूर्व संपादक और हिंदू महासभा के विचारक जी.वी. केतकर ने समारोह की अध्यक्षता की। पूजा के बाद, गोपाल गोडसे और करकरे द्वारा अपने कारागार के अनुभवों को सुनाए जाने के बाद, केतकर ने खुलासा किया कि उन्हें गांधीजी की हत्या की योजना की जानकारी बहुत पहले से थी और यह बात उन्हें स्वयं नाथूराम गोडसे ने बताई थी। उन्होंने कहा कि गोडसे ने शिवाजी मंदिर में आयोजित एक जनसभा में गांधीजी की 125 वर्ष की आयु तक जीने की बार-बार दोहराई जाने वाली इच्छा का जिक्र करते हुए अपने इरादे का संकेत दिया था। बताया जाता है कि नाथूराम ने मराठी में कहा था, 'पान तुम्हाला जागु देनार कौन? तुम्हें तब तक कौन जीने देगा?' केतकर ने दावा किया कि उन्होंने और एक अन्य अनुभवी वक्ता बलुकाका केनिटकर ने नाथूराम के भाषण का यह हिस्सा सुना और इससे वे विचलित हो गए थे। केतकर ने बलुकाका को आश्वासन दिया कि वह नथ्या से बात करके पता लगाएंगे कि क्या उसका मतलब गांधी की हत्या करना था, और यदि उसका यही मतलब था, तो वह उसे ऐसी किसी भी योजना पर आगे बढ़ने से रोकेंगे। इसी बीच, उन्होंने बलुकाका को सुझाव दिया कि वह सरकार को पत्र लिखकर सूचित करें। गोपाल गोडसे ने केतकर की बात काटते हुए उन्हें सावधान रहने को कहा, लेकिन केतकर टस से मस नहीं हुए। उन्होंने कहा कि उन्होंने नाथूराम से बात की थी और उनसे पूछा था कि क्या

उनका मतलब गांधी की हत्या करना था। नाथूराम ने हाँ कहा था और यह सुनिश्चित किया था कि गांधी आगे कोई और परेशानी न खड़ी करें। केतकर ने यह भी कहा कि वह बैज से परिचित थे और 20 जनवरी 1948 को गांधी पर हुए बम हमले के बाद, उनकी मुलाकात बैज से हुई थी, जिसने उन्हें बताया था कि आप्टे, गोडसे, करकरे और बैज इस हमले में शामिल थे; योजना गांधी की हत्या करने की थी और गोडसे और आप्टे उन्हें मारने के लिए वापस आ रहे थे। उन्होंने कहा कि वे सफलता प्राप्त करने के लिए बहुत दृढ़ थे।
इस बैठक और केतकर के भाषण की खबरें मुंबई के अखबारों में विस्तार से छपीं। पुणे स्थित इंडियन एक्सप्रेस के संवाददाता ने केतकर का साक्षात्कार लिया और एक विस्तृत रिपोर्ट भेजी, जो प्रकाशित हुई। खबरों के अनुसार, लोगों ने नाथूराम की तस्वीर पर माला चढ़ाई। गीता और भगवजेंदा (हिंदू महासभा का भगवा पेंडेंट) प्रदर्शित किए गए, जिनके बारे में दावा किया गया कि नाथूराम ने फांसी के समय इन्हें धारण किया था। फांसी के समय उनके द्वारा पहनी गई धोती भी प्रदर्शित की गई। कहा जाता है कि केतकर ने सम्मान के प्रतीक के रूप में अपनी धोती उतारकर नाथूराम द्वारा पहनी गई धोती पहन ली।
केतकर के शेखी बघारने के कारण उन्हें और गोपाल गोडसे को काफी परेशानी का सामना करना पड़ा। केतकर, घैसास और गोपाल गोडसे को गिरफ्तार कर जेल में डाल दिया गया। गोपाल गोडसे को एक ही अपराध के लिए दो बार जेल हुई। महाराष्ट्र विधानसभा और संसद में इस पर बहस हुई। परिणामस्वरूप, सरकार ने 22 मार्च 1965 को सांसद गोपाल स्वरूप पाठक की अध्यक्षता में एक जांच आयोग का गठन किया। 21 नवंबर 1966 को पाठक को मंत्री नियुक्त किए जाने पर, भारत के सर्वोच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीश जे.एल. कपूर को

उनके स्थान पर नियुक्त किया गया। आयोग के कार्यक्षेत्र इस प्रकार थे:
(ए) क्या कोई व्यक्ति, विशेष रूप से श्री गजानन विश्वनाथ केतकर, का
पुणे को नाथूराम विनायक की साजिश की पूर्व सूचना थी।
(ख) क्या गोडसे और अन्य लोगों ने महात्मा गांधी की हत्या की साजिश रची थी; (ख) क्या इनमें से किसी व्यक्ति ने उक्त सूचना दी थी?
बंबई सरकार या सरकार के किसी भी प्राधिकरण
भारत; विशेष रूप से क्या उपर्युक्त श्री केतकर ने यह सूचना दी थी
यह जानकारी तत्कालीन प्रधानमंत्री स्वर्गीय बाल गंगाधर खेर को दी गई थी।
बम्बई, स्वर्गीय बालुकाका कानिटकर के माध्यम से;
(ग) यदि हां, तो बंबई सरकार द्वारा क्या कार्रवाई की गई थी?
यह विशेष रूप से स्वर्गीय बाल गंगाधर खेर और भारत सरकार द्वारा अनुमोदित है।
उक्त जानकारी के आधार पर।
इस अधिसूचना को अधिसूचना संख्या 31/28/68-Pll.I(A) दिनांक 28 अक्टूबर 1968 द्वारा संशोधित किया गया था, जिसमें खंड (c) को इस प्रकार पढ़ा गया: (c) यदि हां, तो बंबई सरकार द्वारा क्या कार्रवाई की गई, विशेष रूप से
दिवंगत बाल गंगाधर खेर, भारत सरकार और अन्य द्वारा
उक्त सूचना के आधार पर उक्त सरकारों के अधिकारियों को।
आयोग की सहायता के लिए महाराष्ट्र सरकार द्वारा जी.एन. वैद्य को नियुक्त किया गया था और भारत सरकार की ओर से बैरिस्टर के.एस.

चावला को नियुक्त किया गया था। बाद वाली सरकार ने अपने वकील को हटाकर बी.बी. लाल को वकील नियुक्त किया, जो 10 फरवरी 1968 से आयोग के समक्ष पेश हुए। जी.एन. वैद्य को पदोन्नत किए जाने पर आर.बी. कोटवाल ने उनका स्थान ग्रहण किया। आयोग ने 101 गवाहों से पूछताछ की और दोनों सरकारों तथा आयोग के समक्ष उपस्थित गवाहों द्वारा 407 दस्तावेज प्रस्तुत किए गए। गवाहों की पूछताछ 162 दिनों तक चली और गवाहों की सुविधा के लिए आयोग को विभिन्न स्थानों पर बैठकें करनी पड़ीं - मुंबई, नई दिल्ली, धारवाड़, नागपुर, पुणे, बड़ौदा और चंडीगढ़।
रिपोर्ट छह खंडों में है। आयोग द्वारा दर्ज किए गए साक्ष्य पाँच खंडों में और आयोग के समक्ष प्रस्तुत किए गए दस्तावेज़ अन्य पाँच खंडों में संकलित हैं। इसके अतिरिक्त, न्यायाधीश आत्मचरण के समक्ष हुई कार्यवाही का रिकॉर्ड भी देखना आवश्यक था क्योंकि कुछ बयान आयोग के समक्ष साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किए गए थे। दिल्ली पुलिस द्वारा बम कांड और हत्या कांड की जांच की केस डायरी, बॉम्बे पुलिस की अपराध रिपोर्ट, साथ ही भारत सरकार के खुफिया ब्यूरो निदेशक और दिल्ली पुलिस महानिरीक्षक द्वारा प्रस्तुत कुछ फाइलें भी रिकॉर्ड में शामिल की गई हैं। आयोग की रिपोर्ट के अध्याय II, जिसका शीर्षक 'जांच - दिल्ली' है, के पैरा 3.3 में लिखा है: अंत्येष्टि के बाद, 31 जनवरी, 1948 की शाम को गृह मंत्री के घर पर बहुत ही कम समय के पूर्व सूचना पर एक बैठक बुलाई गई। पाठक के समक्ष गवाह संख्या 17 के रूप में आर.एन. बनर्जी के बयान के अनुसार, निम्नलिखित लोग उपस्थित थे: प्रधानमंत्री नेहरू, उप प्रधानमंत्री सरदार पटेल, बॉम्बे के प्रधानमंत्री बी.जी. खेर, पश्चिम बंगाल के राज्यपाल राजगोपालाचारी और बनर्जी तथा संजीव। डी.डब्ल्यू. मेहरा के नोट

(प्रदर्शनी 10-ए, दिनांक 1 फरवरी, 1948) में इन नामों के अलावा राजकुमारी अमृत कौर, मोरारजी देसाई, मुख्य आयुक्त और स्वयं उनके नाम भी दिए गए हैं।
संजेवी ने मदनलाल पाहवा का इकबालिया बयान पढ़कर सुनाया और कहा कि उन्होंने इसकी एक प्रति दो पुलिस अधिकारियों के साथ बॉम्बे भेजी थी, जिन्हें 21 जनवरी 1948 को दिल्ली से बॉम्बे भेजा गया था। संजेवी ने शिकायत की कि दोनों पुलिस अधिकारी दो-तीन दिन बाद लौट आए और शिकायत की कि बॉम्बे पुलिस ने उन्हें दिल्ली वापस जाने के लिए कहा था।
खुफिया विभाग के निदेशक ने तत्कालीन प्रधानमंत्री और गृह मंत्री की उपस्थिति में भारत के प्रधानमंत्री और गृह मंत्री को यही बात बताई थी। यह एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी द्वारा अपने अधीनस्थ पुलिस अधिकारी पर लगाया गया एक गंभीर आरोप था। इस आरोप का शिकार हुए पुलिस अधिकारी जमशेद 'जिमी' नागरवाला थे, जो सहायक पुलिस आयुक्त और बॉम्बे सीआईडी के प्रमुख थे। नागरवाला ने आयोग के समक्ष अपनी गवाही में इस बात से इनकार किया कि मदनलाल का इकबालिया बयान उन्हें दिया गया था। जिस समय आयोग ने कार्यवाही शुरू की, उस समय संजीवी का निधन हो चुका था और नागरवाला और पुणे के एक अन्य वरिष्ठ पुलिस अधिकारी यू.एच. राणा अपने कार्यों का बचाव करने के लिए आयोग के समक्ष उपस्थित हुए।
बैठक में यह खुलासा हुआ कि संजीवी ने 20 जनवरी के बाद की जांच के संबंध में न तो दिल्ली के उपायुक्त को और न ही बैनर्जी को कोई जानकारी दी। बैनर्जी ने टिप्पणी की: 'मैं संजीवी की घोर अक्षमता और सुस्ती को इसका कारण मानता हूँ कि उन्होंने न तो मुझे सूचित किया और न ही बॉम्बे पुलिस को यह याद दिलाया कि वे क्या कार्रवाई कर रहे थे।'

आयोग के समक्ष गवाही देते हुए बनर्जी ने कहा कि जिन सज्जनों का उन्होंने पहले उल्लेख किया था, उनके अलावा शंकरराव देव भी बैठक में उपस्थित थे। उन्होंने कहा, 'यह पहली सूचना थी जो पंडित नेहरू से लेकर सभी को मिली कि एक इकबालिया बयान था और उसमें कुछ ऐसी जानकारी थी जिसका सही उपयोग करने पर महात्मा गांधी की हत्या में शामिल व्यक्तियों की गिरफ्तारी हो सकती थी। बयान में उन व्यक्तियों के विवरण और ठिकाने दिए गए थे जिन पर बाद में हत्या का आरोप लगाया गया और उन्हें दोषी ठहराया गया। यदि पुलिस सतर्क होती, तो उनके लिए उन व्यक्तियों को गिरफ्तार करना संभव होता।'
बनर्जी ने आगे कहा, 'हममें से किसी को भी इस साजिश की जानकारी नहीं थी। संजीव ने हमें इसके बारे में कभी कोई सूचना नहीं दी। जब उनसे पूछा गया कि उन्होंने ऐसा क्यों नहीं किया, तो उन्होंने बस इतना कहा, "मुझे खेद है कि उन्होंने ऐसा नहीं किया।" मैं इसे संजीव की अक्षमता और सुस्ती के कारण मानता हूँ कि उन्होंने न तो बॉम्बे पुलिस को सूचित किया, न ही उन्हें अपने आदमियों को यहाँ भेजने का आदेश दिया, और न ही बॉम्बे पुलिस को भेजी गई सूचना के संबंध में याद दिलाया।'
एक वरिष्ठ अधिकारी का यह बयान बेहद चौंकाने वाला है। केंद्रीय गृह मंत्री सरदार पटेल और प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू के बीच विवाद इसलिए शुरू हुआ था क्योंकि नेहरू गृह मंत्रालय के मामलों में लगातार दखल देते थे। पटेल ने इस बारे में गांधी जी से भी शिकायत की थी। हैरानी की बात यह है कि 20 जनवरी को हुए बम हमले के बाद 30 जनवरी तक प्रधानमंत्री कार्यालय ने न तो जांच की प्रगति के बारे में पूछताछ की और न ही गिरफ्तार व्यक्ति से मिली जानकारी जानने की कोशिश की। ऐसा लगता है कि अचानक प्रधानमंत्री

कार्यालय ने गृह मंत्रालय से अपना हाथ खींच लिया। वह भी गांधी जी पर जानलेवा हमले से जुड़े मामले में।
नागरवाला द्वारा बंबई में कराई गई जांच के बारे में लिखते हुए आयोग पैरा 2.34 में कहता है: 'अब दृश्य बंबई की ओर मुड़ता है, जहां प्रोफेसर जैन द्वारा दी गई सूचना के आधार पर 21 जनवरी से 30 जनवरी 1948 के बीच जांच की गई। यह चूके अवसरों, की गई गलतियों और स्वयं के बारे में अतिरंजित धारणाओं का एक दुर्भाग्यपूर्ण अध्याय है। बम विस्फोट के बाद रुइया कॉलेज के प्रोफेसर जैन थोड़े घबरा गए थे क्योंकि मदनलाल ने दिल्ली जाने से पहले उन्हें बताया था कि वह और उसके साथी महात्मा गांधी की हत्या करने जा रहे हैं, जिसे उन्होंने केवल एक शेखी समझा था, हालांकि वास्तव में उन्होंने इस मामले को इतनी हल्के में नहीं लिया था। लेकिन वे झिझकते रहे, दुविधा में रहे और किसी भी अधिकारी को यह जानकारी देने में असफल रहे।'
पैरा 2.36 में बताया गया है कि प्रो. जैन द्वारा मोरारजी देसाई को दी गई जानकारी मिलने पर नागरवाला ने क्या किया: 'नागरवाला ने तुरंत अपने संपर्कों और मुखबिरों से संपर्क किया और उन्हें करकरे और उसके साथियों का पता लगाने का निर्देश दिया। उसे अहमदनगर से पता चला कि करकरे वहां नहीं है।'
पैरा 2.37 में कहा गया है: 'इस स्तर पर नागरवाला ने क्या किया या क्या कदम उठाए, इसका संक्षिप्त विवरण देना आवश्यक नहीं है। संक्षेप में, उन्हें पता चला कि शेर-ए-पंजाब होटल के बलराज मेहता और अवतार सिंह इस षड्यंत्र में शामिल थे। अहमदनगर से सूचना मिली थी कि पुणे का बैज, जो अवैध हथियारों का व्यापारी था, करकरे का करीबी सहयोगी था; और उसके संपर्कों ने उसे बताया कि सावरकर ही इस षड्यंत्र का असली सूत्रधार था और उसकी बीमारी का

नाटक रचा गया था। सावरकर के घर पर कड़ी निगरानी रखी गई। नागरवाला के मुखबिरों ने उसे बताया कि कई अन्य षड्यंत्रकारी भी थे, लगभग 20 पंजाबी और महाराष्ट्रीयन, जिनके बड़ी संख्या में अनुयायी थे। उन लोगों के ठिकानों का पता लगाने के प्रयास किए गए। 22 तारीख से पुलिस ने करकरे और बैज का पता लगाने की कोशिश की, विशेष रूप से परेल स्थित हिंदू महासभा भवन में। आर्य पथिक आश्रम पर भी नजर रखी गई, जहां दो संदिग्ध दिखने वाले पंजाबी ठहरे हुए थे।' उन पर बलराज मेहता के सहयोगी होने का संदेह था। पैरा 2.38 में कहा गया है: 'डी.आई.जी. (सीआईडी) राणा 27 तारीख को बॉम्बे पहुंचे और नागरवाला के साथ ठहरे, जिन्होंने उन्हें अब तक उठाए गए कदमों के बारे में बताया। दोनों ने डी.आई.बी. संजीव से लंबी दूरी की बातचीत की और फिर उन्हें अब तक की गई पूरी कार्रवाई का विवरण दिया। राणा अपने साथ मदनलाल का बयान लेकर आए थे, जिसे उन्होंने नागरवाला को दिखाया। नागरवाला ने एक-दो पन्ने पढ़े, लेकिन राणा ने यह कहते हुए बयान वापस ले लिया कि यह बहुत लंबा है और पुणे से एक प्रति भेजने का वादा किया, जो उन्होंने कभी नहीं किया।'
पैरा 2.39 में कहा गया है: 'हत्या के बाद जब नागरवाला को नाथूराम गोडसे का नाम पता चला, तो उसने विभिन्न संदिग्धों को गिरफ्तार किया और सावरकर के सचिव दामले और उनके अंगरक्षक कासर से पूछताछ की। पहले से हिरासत में लिए गए लिमाये ने पुलिस को बताया कि अगर नाथूराम गोडसे हत्यारा था, तो आप्टे उसके साथ जरूर रहा होगा और उन्होंने सावरकर से सलाह जरूर ली होगी।'
महाराष्ट्र सरकार के वकील वैद्य ने बैनर्जी से जिरह की। बैनर्जी ने बताया कि अंतिम संस्कार से लौटने के बाद अचानक एक बैठक बुलाई गई, जिसमें सभी लोग शोक में डूबे हुए थे। 'सरदार पटेल

ने संजीव से पूछा कि क्या हुआ था, तो संजीव ने आरोप लगाया कि नाम बॉम्बे पुलिस को भेज दिए गए थे, लेकिन वहां कुछ नहीं किया गया। संजीव ने इसी बात पर विशेष जोर दिया।' बैनर्जी ने आगे कहा कि सरदार पटेल बहुत दुखी थे और हम सब भी, लेकिन मैंने सरदार पटेल से कहा कि वे पुलिस को सतर्क रहने के लिए कहने के अलावा और कुछ नहीं कर सकते थे।
पैरा 3.9 में बनर्जी ने कहा कि 30 जनवरी के बाद, सरकार को आरएसएस के खिलाफ निवारक या दंडात्मक कार्रवाई न करने के लिए काफी अपराधबोध महसूस हुआ; अंत्येष्टि के बाद हुई बैठक में एक अनौपचारिक निर्णय लिया गया कि आरएसएस पर तत्काल प्रतिबंध लगा दिया जाना चाहिए और उसी रात प्रांतीय सरकारों को गुप्त निर्देश भेज दिए गए, लेकिन किसी न किसी तरह प्रतिबंध की खबर लीक हो गई और आंदोलन के नेता भूमिगत हो गए।
यह इस बात का संकेत था कि हिंदू चरमपंथी सरकार और प्रशासन में कितनी गहराई तक घुसपैठ कर चुके थे, कि कुछ बहुत वरिष्ठ मंत्रियों और गृह विभाग और पुलिस के वरिष्ठ अधिकारियों की उपस्थिति में एक बंद कमरे में हुई बैठक में लिया गया निर्णय भी लीक हो गया।
बॉम्बे प्रांतीय परिषद में सवाल उठाए गए। सदस्यों ने गृह मंत्री मोरारजी देसाई से तीखे सवाल किए। एक सदस्य ने गृह मंत्री से पूछा कि क्या पुलिस ने नाथूराम गोडसे का पता खो दिया है? मंत्री ने जवाब दिया कि मदनलाल की गिरफ्तारी के बाद उसके बयान की एक प्रति बॉम्बे सीआईडी को भेजी गई थी। गिरफ्तारी इसलिए नहीं की गई क्योंकि इसे अनुचित समझा गया, क्योंकि ऐसा करने से अन्य साजिशकर्ता भूमिगत हो जाते। इसलिए बॉम्बे और दिल्ली पुलिस के बीच परामर्श के बाद यह निर्णय लिया गया कि

फिलहाल कोई गिरफ्तारी न की जाए। बॉम्बे पुलिस साजिशकर्ताओं का पता लगा रही थी, लेकिन वे सभी बॉम्बे में नहीं थे।
पूछे जाने पर कि क्या उन व्यक्तियों की तस्वीरें प्राप्त की जा सकती थीं, जवाब मिला कि वे सभी एक ही स्थान पर नहीं थे। हालांकि, नारायण आप्टे, नाथुराम गोडसे और विष्णु करकरे की तस्वीरें उस समय पुलिस रिकॉर्ड में मौजूद थीं।
ये प्रांतीय विधानसभा में पूछे गए प्रश्न और उत्तर थे। इनसे स्पष्ट रूप से पता चलता है कि देसाई सदन से झूठ बोल रहे थे। पुलिस ने दावा किया था कि हत्या के बाद तक उन्हें साजिशकर्ताओं की पहचान के बारे में कोई जानकारी नहीं थी, इसलिए जब गृह मंत्री ने कहा कि पुलिस साजिशकर्ताओं का पता लगा रही है, तो उनका इशारा किसकी ओर था?
नागरवाला ने इस बात से पुरजोर इनकार किया कि दोनों पुलिस अधिकारियों ने उन्हें मदनलाल का बयान दिखाया था। उन्होंने दावा किया कि उन्होंने उन्हें सिर्फ एक पर्ची दिखाई थी जिस पर उर्दू में कुछ शब्द लिखे थे। उन्होंने यह भी इनकार किया कि राणा ने उन्हें रिपोर्ट दी थी। नागरवाला को हत्या के बाद पहली बार नाथूराम गोडसे की पहचान पता चली। लेकिन गृह मंत्री दावा कर रहे थे कि पुलिस साजिशकर्ताओं का पता लगा रही है। उनका यह अनुमान किस आधार पर था?
जब न्यायाधीश आत्मचरण ने अपने फैसले में पुलिस के खिलाफ प्रतिकूल टिप्पणी की, तो भारत सरकार ने दोषी पुलिस अधिकारियों से स्पष्टीकरण मांगा। इन जवाबों से दिल्ली और मुंबई दोनों जगह बम कांड की जांच की प्रक्रिया और न्यायाधीश की प्रतिकूल टिप्पणियों के जवाब में पुलिस की प्रतिक्रिया का पता चलता है। आयोग ने पहले संजीवी के स्पष्टीकरण पर विचार किया और फिर मुंबई

में जांच प्रक्रिया के संबंध में नागरवाला के बयानों पर गौर किया।
कपूर आयोग ने हत्या को रोकने के लिए साजिशकर्ताओं का समय पर पर्दाफाश करने में किस पुलिस विभाग की चूक हुई, यह पता लगाने के लिए कई गोपनीय रिकॉर्डों की जांच की। इसके निष्कर्षों से एक चौंकाने वाला परिदृश्य सामने आता है। 20 तारीख को हुए बम हमले के बाद जांच में शामिल सभी विभागों ने गंभीर गलतियां कीं और जांच में दक्षता और बुद्धिमत्ता की स्पष्ट कमी दिखाई: उनका रवैया ढुलमुल था। चारों संबंधित विभाग आपराधिक लापरवाही और अविश्वसनीय गलतियों के दोषी थे; जांच का जिम्मा संभालने वाले तीन वरिष्ठ अधिकारी सबसे अधिक दोषी थे: मद्रास में एक मजबूत प्रतिष्ठा बनाने के बाद दिल्ली आए संजीव, बंबई के गृह मंत्री के चहेते नागरवाला और पुणे सीआईडी के वरिष्ठ अधिकारी यू.एच. राणा। कपूर आयोग के निष्कर्ष पुलिस और विशेष रूप से इन तीनों अधिकारियों की बेहद दयनीय छवि पेश करते हैं।
केंद्रीय गृह मंत्रालय को लिखे अपने पत्र में संजीव ने दावा किया कि दिल्ली पुलिस ने अपनी तरफ से हर संभव प्रयास किया था और सभी गड़बड़ियों के लिए बॉम्बे पुलिस को दोषी ठहराया। पैरा 3.34 में कहा गया है: 'संजीवी ने स्वयं घटनास्थल का दौरा किया और नई दिल्ली के पुलिस अधीक्षक से पूछताछ की। अगले दिन उन्होंने दो पुलिस अधिकारियों को बॉम्बे जाने का आदेश दिया ताकि वे बॉम्बे के पुलिस उपायुक्त नागरवाला और पुणे के सहायक पुलिस महानिदेशक (सीआईडी) राव साहब गुरतू से संपर्क कर सकें। वे अपने साथ प्रदर्श 5-ए ले गए, जिसे विधि आयोग के अधिकारियों ने कुछ प्रयास के बाद बम कांड की मूल केस डायरी के साथ दिल्ली जिला अभिलेख कक्ष में कहीं पड़ा हुआ पाया। (प्रदर्श 5-ए 20 और 21 जनवरी, 1948

की रात को मदनलाल पाहवा द्वारा दिए गए पहले इकबालिया बयान का अनुवाद है)'।
आयोग की रिपोर्ट के पैरा 3.35 में कहा गया है: 'दिल्ली पुलिस ने अपनी जांच जारी रखी और अपने सी.आई.डी. को उन साजिशकर्ताओं की तलाश करने का आदेश दिया, जिनका विवरण दस्तावेज़ एक्स. 244 में दिया गया था, जो सुधारों और विरोधाभासी विवरणों का एक पुलिंदा है और इसे देखने मात्र से ही इसकी निरर्थकता स्पष्ट हो जाती है।'
पैरा 3.37 में कहा गया है: 'नोट में आगे बॉम्बे में उठाए गए कदमों का वर्णन है। इसमें बताया गया है कि मदनलाल द्वारा दिल्ली पुलिस को दी गई सभी सूचनाओं के साथ दोनों अधिकारी बॉम्बे के लिए रवाना हुए और यूनिवर्सल नेशनल रेस्टोरेंट में ठहरे। अगले दिन वे नागरवाला से मिले और उन्हें अपने पास मौजूद सभी जानकारी दी। नागरवाला ने उन्हें बताया कि उन्हें भी इस मामले की सूचना मिली है और उन्होंने वांछित व्यक्तियों का पता लगाने के लिए विशेष कर्मियों को तैनात किया है। उन्होंने उन्हें चेतावनी दी कि बॉम्बे में उनकी उपस्थिति के बारे में किसी को पता नहीं चलना चाहिए, इसलिए उन्हें शहर में नहीं रुकना चाहिए क्योंकि यदि संदिग्ध व्यक्तियों को उनके आगमन का पता चल गया तो उनकी गिरफ्तारी की पूरी योजना "बर्बाद" हो जाएगी। उन्होंने पुलिस अधिकारियों को सादे कपड़ों में घूमने का आदेश दिया। जब दोनों अधिकारी नागरवाला से उनके कार्यालय में मिले, तो उनका दावा है कि उन्होंने उन्हें मामले के तथ्य बताए और मदनलाल के बयान पर लिखे नोट को भी दिखाया, जिसमें से नागरवाला ने अंश लिए थे। नागरवाला इस बात से पूरी तरह इनकार करते हैं।' दिल्ली पुलिस के अधिकारियों ने उन्हें बताया कि आरोपियों में से एक 'अग्रनी' या

'हिंदू राष्ट्र' अखबार का संपादक था। मदनलाल द्वारा बताए गए सभी आरोपियों का विवरण उन्हें दे दिया गया था। पुलिस अधिकारी नागरवाला से दोबारा मिले और उन्होंने बताया, "उन्हें जानकारी मिली है कि इस साजिश में और भी लोग शामिल हैं। उन्होंने कहा कि लगभग 20 लोग हैं। उन्होंने आगे बताया कि उन्होंने करकरे के लिए मुंबई, पुणे और अहमदनगर में विशेष व्यवस्था की है। इस मामले से जुड़े अन्य लोगों के बारे में उन्होंने कहा कि उन्होंने तीन-चार लोगों का पता लगा लिया है।" उन्होंने उन्हें सभी अपराधियों का पता लगाने और उनकी एक साथ गिरफ्तारी करने की योजना के बारे में भी बताया, जिसका कारण यह था कि यदि केवल कुछ ही गिरफ्तार किए गए, तो बाकी लोग भूमिगत हो जाएंगे। उन्होंने यह भी बताया कि आवश्यक जानकारी मिलते ही वह उनके साथ अहमदनगर चलेंगे और अपने एक इंस्पेक्टर को उनके ठहरने की व्यवस्था करने के लिए कहा ताकि किसी को भी उनकी उपस्थिति के बारे में पता न चले। उन्होंने उन्हें होटल में अपना दिल्ली का पता न देने के लिए भी कहा और बताया कि वह अपने गृह मंत्री से परामर्श करेंगे और आरोपियों के खिलाफ आगे की कार्रवाई करेंगे। उसी दिन वे फिर बॉम्बे सी.आई.डी. कार्यालय गए, जहाँ एक इंस्पेक्टर ने उन्हें बताया कि अब उनकी उपस्थिति की आवश्यकता नहीं है। इंस्पेक्टर ने उन्हें यह भी बताया कि बॉम्बे के अधिकारियों को उन अन्य संदिग्धों को गिरफ्तार करने के लिए भेजा गया है, जिनका अभी तक पता नहीं चल पाया है। करकरे और "अग्रनी" या "हिंदू राष्ट्र" के संपादक के संबंध में, उन्होंने उन्हें बताया कि अहमदनगर से एक इंस्पेक्टर अगले दिन बॉम्बे आ रहा है, और वे तब उनकी गिरफ्तारी की व्यवस्था करेंगे।

पैरा 3.39 में कहा गया है: 'अगले दिन, यानी 23 जनवरी, 1948 को, जैसा कि नोट में लिखा है, दिल्ली पुलिस के अधिकारी उपायुक्त के कार्यालय गए लेकिन उनसे मिल नहीं सके। एक सी.आई.डी. इंस्पेक्टर ने उन्हें बताया कि अहमदनगर से इंस्पेक्टर आ गए हैं और उन्हें "अग्रनी" या "हिंदू राष्ट्र" के संपादक की तलाश करने के लिए कहा गया है, जो कि दिल्ली के अधिकारियों द्वारा गलत बयान या गलतफहमी प्रतीत होती है। इसके बाद उप अधीक्षक जसवंत सिंह ने करकरे और उनके सहयोगियों के बारे में जानकारी मांगी और बॉम्बे सी.आई.डी. इंस्पेक्टर ने उन्हें करकरे के सहयोगियों के रूप में निम्नलिखित नाम बताए:
i) पूना का बैज।
ii) अवतार सिंह, अमृतसर के पंजाबी सिख।
iii) कराची का तलवार, जो उस समय बंबई में था।
iv) Balraj Mehta of Lahore, then in Shivaji Park in Bombay.' पैरा 3.40: 'दोपहर लगभग 12.30 बजे पहुंचे नागरवाला ने पुलिस अधिकारियों से कहा कि वे वांछित व्यक्तियों को गिरफ्तार करने के लिए हर संभव प्रयास कर रहे हैं और बॉम्बे में दिल्ली पुलिस की उपस्थिति आवश्यक नहीं है, इसलिए उन्होंने पुलिस को वापस लौटने का आदेश दिया। इस पर दिल्ली के पुलिस उपाधीक्षक जसवंत सिंह ने नागरवाला का ध्यान मदनलाल के उस बयान की ओर दिलाया जिसमें करकरे और "अग्रनी" या "हिंदू राष्ट्र" के संपादक का जिक्र था, और उनसे अनुरोध किया कि जैसे ही उन्हें गिरफ्तार किया जाए, उन्हें दिल्ली भेज दिया जाए। दिल्ली के अधिकारियों ने सी.आई.डी. इंस्पेक्टर को मामले पर एक संक्षिप्त नोट सौंपा, जिसमें वांछित आरोपियों के नाम और विवरण थे, जहाँ तक उस समय तक जानकारी थी।' इस नोट को सौंपे जाने का इस संक्षिप्त विवरण के

अलावा कोई सबूत नहीं है। नागरवाला से कोई प्रश्न नहीं पूछा गया, हालांकि उनसे कई दिनों तक लंबी पूछताछ की गई और उनकी जांच की गई। आयोग की प्रश्नावली के जवाब में दिए गए एक हलफनामे में नागरवाला ने अपने अधिकारियों को ऐसा कोई दस्तावेज दिए जाने से इनकार किया।
दिल्ली के अधिकारी दिल्ली लौट आए और उन्होंने संजीवी से बंबई में अपने साथ हुए दुर्व्यवहार की शिकायत की। केंद्रीय गृह मंत्री के सचिव वी. शंकर ने एक नोट में आश्चर्य व्यक्त किया कि दिल्ली के अधिकारी बंबई में जांच में सहयोग करने के लिए क्यों नहीं रुके। आयोग के समक्ष अपने बयान में, सीआईडी के पुलिस अधीक्षक राय साहब ऋखीकेश ने कहा कि ये अधिकारी बंबई में बहुत लंबे समय तक रुके रहे और उन्हें पहले ही लौट जाना चाहिए था। पैरा 3.42: 'पुलिस उप महानिरीक्षक (सी.आई.डी.), पुणे, यू.एच. राणा दिल्ली में थे। उन्हें दिल्ली सी.आई.डी. के अधीक्षक की उपस्थिति में संजीवी ने तलब किया। डी.आई.जी. को दिल्ली पुलिस के दो अधिकारियों की रिपोर्ट दी गई और फरार आरोपी का पता लगाने के महत्व की ओर उनका ध्यान दिलाया गया। मदनलाल के विस्तृत बयान की एक प्रति उन्हें दी गई। उन्होंने और संजीवी दोनों ने उसका अध्ययन किया, और डी.आई.जी. को बॉम्बे जाने के लिए कहा गया, लेकिन वे नहीं गए, क्योंकि वे ऐसा नहीं कर सकते थे। (यदि वे नहीं जा सकते थे, तो यह सोचा जा सकता था कि बयान नागरवाला को देने के लिए किसी अन्य अधिकारी को हवाई मार्ग से भेजा जा सकता था)। वे इलाहाबाद होते हुए ट्रेन से रवाना हुए और 27 तारीख की शाम को ही बॉम्बे पहुंचे।'
पैरा 3.43 में कहा गया है: 'इस घुमावदार रास्ते पर यह सहमति राणा के इस कथन की पुष्टि करती है कि "किसी को भी साजिशकर्ताओं

द्वारा इतनी जल्दी हमला करने की उम्मीद नहीं थी, निश्चित रूप से संजीवी को तो बिल्कुल भी नहीं।"'
27 तारीख की शाम, संभवतः जिमी नागरवाला द्वारा दी गई भव्य मेहमाननवाज़ी की जानकारी से प्रेरित होकर, राणा सीधे उनके घर गए। संजीवी ने राणा और नागरवाला से प्राप्त फोन कॉल का वर्णन किया है। '27 तारीख की शाम राणा ने मुझे बॉम्बे से फोन किया और बताया कि उन्होंने नागरवाला से मुलाकात की है, और नागरवाला मुझे बॉम्बे में दो दिल्ली पुलिस अधिकारियों के साथ हुई घटना का स्पष्टीकरण देंगे। नागरवाला ने मुझे बताया कि उनके पास दो दिल्ली पुलिस अधिकारियों को बॉम्बे में स्वतंत्र रूप से घूमने की अनुमति न देने का ठोस कारण था। उन्होंने मुझे महात्मा गांधी के अपहरण की साजिश के बारे में मिली जानकारी के बारे में बताया। उन्होंने मुझे बताया कि यह एक बहुत बड़ा संगठन था जिसमें लगभग 20 मुख्य साजिशकर्ता थे, जिनमें से प्रत्येक को 20 लोगों का सहयोग प्राप्त था और उनके पास भारी मात्रा में आग्नेयास्त्र और अन्य घातक हथियार थे। मैंने उनसे फरार आरोपियों के बारे में पूछा जिनके नाम या विवरण मदनलाल ने दिल्ली पुलिस को दिए थे। नागरवाला ने मुझे बताया कि वह अगले दिन हवाई मार्ग से बॉम्बे शहर और प्रांत के अन्य हिस्सों में की गई जांच पर एक विस्तृत रिपोर्ट भेजेंगे।' (गांधी की हत्या के एक दिन बाद, 31 जनवरी 1948 को यह रिपोर्ट संजीव के डेस्क पर पड़ी थी।)
इस नोट में यह नहीं बताया गया है कि क्या संजीवी ने नागरवाला से पूछा था कि क्या उन्हें मदनलाल द्वारा नामित व्यक्तियों के नाम और विवरण दिए गए थे। नागरवाला ने भी इस बारे में कोई उल्लेख नहीं किया है, सिवाय इसके कि वे अगले दिन हवाई मार्ग से प्रगति रिपोर्ट भेजेंगे। ऐसा कोई प्रमाण नहीं है कि संजीवी ने

नागरवाला पर दबाव डाला हो कि क्या उन्होंने मदनलाल द्वारा नामित व्यक्तियों का पता लगाने के लिए कुछ किया था, न ही उन्होंने उनकी गिरफ्तारी के बारे में कोई चिंता दिखाई और न ही यह जानने की कोशिश की कि वे कौन थे या उनका पता लगाया गया था या नहीं। दूसरी ओर, 6 फरवरी 1948 को संविधान सभा में पटेल के उत्तरों से पता चलता है कि बॉम्बे और दिल्ली पुलिस उठाए गए कदमों और कुछ आरोपियों को भूमिगत होने से रोकने के लिए एक साथ गिरफ्तारियां करने के प्रस्ताव पर सहमत थीं। केंद्रीय गृह मंत्री से झूठ कौन बोल रहा था?
पैरा 3.45 में कहा गया है: 'नोट में आगे कहा गया है कि नागरवाला ने संजीव को पत्र नहीं लिखा था। 30 तारीख को उन्होंने एक पत्र भेजा जो 3 फरवरी को संजीव तक पहुंचा, और उस पत्र की एक प्रति एक अधिकारी के माध्यम से प्राप्त हुई जो 1 फरवरी को बॉम्बे से हवाई मार्ग से आया था।'
आयोग की रिपोर्ट का पैरा 3.50 संजीवनी के नोट-11 के पैरा 11 से संबंधित है। अब यह निश्चित रूप से ज्ञात है कि 23 से 28 जनवरी तक गोडसे बंबई में था। वह 28 जनवरी की सुबह बंबई हवाई अड्डे से दिल्ली के लिए रवाना हुआ। 22 से 28 जनवरी तक का समय बंबई पुलिस के लिए यह पता लगाने के लिए पर्याप्त था कि अग्रनी या हिंदू राष्ट्र का संपादक कौन था। जब तक दिल्ली पुलिस के पास इस व्यक्ति की पहचान और सही विवरण के संबंध में पूरी जानकारी नहीं थी, तब तक वे दिल्ली पहुंचने पर उसे पहचान नहीं सकते थे। उसने अपने कपड़े पूरी तरह बदल लिए थे, और 30 जनवरी की शाम को उसने मिलिट्री खाकी जैकेट पहनी हुई थी, और वहां एकत्रित भारी भीड़ के साथ प्रार्थना स्थल में चला गया। इन परिस्थितियों में, दिल्ली पुलिस ने वह सब कुछ किया जो संभव था। दुर्भाग्य से, न्यायाधीश

ने अपने अवलोकन में दिल्ली और बंबई पुलिस के बीच अंतर नहीं किया है। उन्हें वास्तविक स्थिति की जानकारी नहीं थी। उन्हें यह जानकारी नहीं थी कि बॉम्बे पुलिस ने दिल्ली से मिली सूचना पर सभी आवश्यक कार्रवाई नहीं की थी। उनके सामने मौजूद साक्ष्यों के आधार पर भी दिल्ली पुलिस के विरुद्ध उनकी टिप्पणियां उचित नहीं ठहराई जा सकतीं।
यदि संजीव ने गांधी जी का जीवन बचाने में वही उत्साह दिखाया होता जो उन्होंने अपने विभाग की प्रतिष्ठा की रक्षा में दिखाया, तो इतिहास कुछ और होता। कपूर आयोग की रिपोर्ट में कहा गया है—'संजीवी जी दुर्भाग्यवश अब इस दुनिया में नहीं हैं और महात्मा गांधी के जीवन और सुरक्षा के संबंध में उन्होंने जो कुछ किया या नहीं किया, उसका यही एकमात्र रिकॉर्ड है।'
गृह मंत्रालय के सचिव एच.वी.आर. अयंगर ने संजीवी और नागरवाला से प्राप्त स्पष्टीकरणों पर एक टिप्पणी में लिखा: 'दूसरा, यह स्पष्ट है कि बॉम्बे पुलिस ने करकरे और बैज को गिरफ्तार करने के लिए हर संभव प्रयास किया, लेकिन ऐसा प्रतीत नहीं होता कि उन्होंने गोडसे पर कोई ध्यान दिया हो। यह स्वीकार किया जाता है कि मदनलाल के बयान में उनका नाम नहीं था, लेकिन उनका वर्णन "हिंदू राष्ट्र" या "अग्रनी" के संपादक के रूप में किया गया था। डी.आई.बी. (संजीवी) की रिपोर्ट के अनुसार, दिल्ली से जांच अधिकारी 21 जनवरी को बॉम्बे एक बयान (डी.आई.बी. की रिपोर्ट का अनुलग्नक V—स्लिप 'T') लेकर गए थे, जिसमें इस अखबार के संपादक का उल्लेख था। नागरवाला का कहना है कि इन अधिकारियों ने उन्हें करकरे की तलाश के अलावा कोई अन्य जानकारी नहीं दी। यह एक विसंगति है जिसका आगे की जांच के बिना समाधान नहीं हो सकता।'

'मैंने दिल्ली पुलिस के समक्ष यह विचार रखा है कि जैसे ही यह स्पष्ट हुआ कि पुणे, अहमदनगर और आसपास के इलाकों के कुछ महाराष्ट्रीयन ब्राह्मणों द्वारा हत्या की साजिश रची जा रही है, बॉम्बे प्रांत के उस हिस्से से सादे कपड़ों में पुलिसकर्मियों को दिल्ली बुलाया जाना चाहिए था, इस उम्मीद में कि अगर वे बिरला हाउस आते तो शायद वे इन व्यक्तियों की पहचान कर पाते। संजीवी कहते हैं कि चूंकि बॉम्बे पुलिस ने हत्या की साजिश को गंभीरता से नहीं लिया, इसलिए वास्तव में जिम्मेदारी उनकी थी। व्यक्तिगत रूप से मैं इस विचार से सहमत नहीं हूं और मेरा मानना है कि दिल्ली में इस सावधानी पर जोर न देने में चूक हुई। हो सकता है कि इससे हत्या को रोकने में सफलता न मिली हो, लेकिन कोशिश करना निश्चित रूप से उचित था।'
'मेरा मानना है कि बॉम्बे पुलिस अधिक गंभीर रूप से दोषी है क्योंकि उन्होंने हत्या की साजिश के विचार को गंभीरता से लेने से इनकार कर दिया, हालांकि सामान्य ज्ञान का हर नियम उसी ओर इशारा करता था।'
केंद्र सरकार में कार्यरत सबसे वरिष्ठ नौकरशाहों में से एक की यह बहुत ही कड़ी टिप्पणी थी, जिसमें दोनों पुलिस विभागों की कड़ी आलोचना की गई थी।
नागरवाला के दो पत्र, जिनकी तारीखें 30 और 31 जनवरी हैं, एक हत्या वाले दिन और दूसरा उसके एक दिन बाद, पढ़ने में दिलचस्प हैं; वे दिखाते हैं कि कैसे एक हठी दिमाग वास्तविकता को स्वीकार करने से इनकार करता है।
पहले पत्र से पता चलता है कि मदनलाल के प्रेस में दिए गए बयान, जिसमें उन्होंने कहा था कि "वह बॉम्बे से आए थे", के कारण बॉम्बे में जांच शुरू हुई। प्रारंभिक जांच के दौरान बलराज मेहता,

करकरे, तलवार, बैज, अवतार सिंह (शेर-ए-पंजाब होटल के मालिक), चव्हाण और सोमनाथ कपूर के नाम सामने आए, जिनमें से अवतार सिंह और चव्हाण हिरासत में थे। बलराज की पहचान हो चुकी थी और उसके खिलाफ कार्रवाई शुरू कर दी गई थी। करकरे और बैज, बलराज और सोमनाथ कपूर के दो महाराष्ट्रीयन साथी थे, जो दोनों पंजाबी थे। बैज को तीन दिन पहले (यह नागरवाला और उनके अधीनस्थों द्वारा की गई जांच की सटीकता को दर्शाता है। बैज उस समय पुणे में छिपा हुआ था। मुकदमे के दौरान नागरवाला ने कहा था कि वे 24 तारीख से बैज की तलाश कर रहे थे, लेकिन वह पुणे में छिपा हुआ था।) यानी 27 तारीख को अहमदनगर में देखा गया था और अहमदनगर से उन मुखबिरों को बॉम्बे लाने की व्यवस्था की गई थी जो करकरे और बैज दोनों को जानते थे। इसका उद्देश्य बैज और करकरे की पहचान कर उन्हें गिरफ्तार करना था। पुलिस को बॉम्बे में करकरे के ठिकाने की जानकारी थी और अगर वह बॉम्बे आता तो उसे गिरफ्तार कर लिया जाता, लेकिन तलवार की पहचान नहीं हो पाई थी और पूछताछ जारी थी।
जांच से पता चला है कि इस साजिश में 21 पंजाबी और महाराष्ट्रीयन शामिल थे और हर एक के अधीन 20 कार्यकर्ता थे। गिरोह का उद्देश्य भारत से मुसलमानों को निकालना था। इसी उद्देश्य से उन्होंने हथियार और गोला-बारूद जमा किया था। यह भी पता चला है कि भारतीय राष्ट्रीय सेना के कर्नल मोहन सिंह ने गिरोह का गठन किया था और उन्हें अकाली नेता मास्टर तारा सिंह का समर्थन प्राप्त था। हालांकि, इस जानकारी की अभी पुष्टि नहीं हुई है। यह भी संकेत मिला है कि गिरोह ने अपने एक सिख शरणार्थी को उत्तर प्रदेश विधानसभा अध्यक्ष श्री पुरुषोत्तमदास टंडन के पास अपनी योजना के संबंध में आगे की सलाह-मशविरा करने के लिए भेजा था। गिरोह के सदस्यों का मानना था कि दिल्ली पुलिस को अपने पक्ष में करना

आसान था और उनका उद्देश्य गांधीजी का अपहरण करना था। लेकिन पत्र में स्पष्ट किया गया है कि यह केवल एक जानकारी है जो एकत्र की गई है, और इसकी सत्यता की अभी जांच की जानी बाकी है। अभी तक किसी को गिरफ्तार नहीं किया गया है, लेकिन जांच में काफी प्रगति हुई है।
नागरवाला द्वारा प्रस्तावित सामान्य नीति यह थी (और राणा उनसे सहमत थे) कि वे करकरे और बैज को गिरफ्तार कर सकते हैं, जिससे किसी प्रकार का संदेह उत्पन्न होने की संभावना नहीं थी क्योंकि मदनलाल ने करकरे का नाम लिया था और बैज हमेशा करकरे के साथ रहता था तथा पुलिस उन्हें अच्छे मित्र मानती थी। राणा नागरवाला से सहमत थे कि अन्य लोगों की गिरफ्तारी तब तक स्थगित कर दी जानी चाहिए जब तक दिल्ली पुलिस, पुणे प्रांतीय सी.आई.डी. और बॉम्बे शहर सी.आई.डी. द्वारा एकत्रित सूचनाओं को एक साथ संकलित नहीं कर लिया जाता। बॉम्बे के गृह मंत्री और राणा ने बॉम्बे प्रांत के लिए यह मामला नागरवाला को सौंपा था और नागरवाला ठोस परिणाम प्राप्त करने की आशा कर रहे थे।
31 जनवरी के पत्र में कहा गया था कि नागरवाला ने बलराज मेहता, सोमनाथ कपूर, सावरकर के अंगरक्षक कासर और उनके सचिव दामले को गिरफ्तार कर लिया था। यह भी पता चला था कि गोडसे ने दिल्ली जाने से एक दिन पहले सावरकर को आप्टे के साथ देखा था। कासर और दामले ने यह नहीं बताया कि 40 मिनट के साक्षात्कार के दौरान सावरकर से उनकी क्या बातचीत हुई, लेकिन उन्होंने यह स्वीकार किया था कि उन्हें सावरकर के घर में बिना किसी रोक-टोक के आने-जाने की अनुमति थी। अगर मदनलाल को बॉम्बे लाया जाता, तो वे मदनलाल को बाहर निकाल कर उससे सभी तथ्य और विवरण निकलवा सकते थे।

कपूर आयोग की रिपोर्ट में नागरवाला के पत्र का विस्तृत विश्लेषण किया गया है और उसमें पाई गई विसंगतियों को उजागर किया गया है।
मदनलाल के बॉम्बे से होने के बारे में प्रेस में बयान छपने के बाद जांच शुरू की गई। इसमें न तो मोरारजी देसाई के आदेशों का जिक्र है और न ही जैन ने देसाई को क्या बताया था।
इसमें मदनलाल के उस बयान का जिक्र है जिसमें करकरे का उल्लेख किया गया था।
इसमें उल्लेख किया गया है कि करकरे और बैज, बलराज और सोमनाथ कपूर के दो महाराष्ट्रीयन साथी थे, और करकरे और बलराज अच्छे मित्र थे।
इसके बाद इसमें कहा गया है कि बैज को लगभग 27 जनवरी को अहमदनगर में देखा गया था, लेकिन वह वहां से जा चुका था और अहमदनगर से दो मुखबिरों को बुलाया गया था जो करकरे और बैज की पहचान करने और उनकी गिरफ्तारी में मदद करेंगे। अब अगर बैज पुणे का और करकरे अहमदनगर का निवासी था, तो भले ही वे दोस्त थे, यह उम्मीद की जा सकती थी कि पुणे से भी मुखबिरों को बुलाया गया होगा।
पत्र में उल्लेख है कि भारतीय नौसेना के कर्नल मोहन सिंह द्वारा रची जा रही साजिश में बड़ी संख्या में पंजाबी और महाराष्ट्रीयन शामिल थे। इस सज्जन से आयोग द्वारा पूछताछ की गई (गवाह संख्या 86) और उन्होंने इस गिरोह के बारे में किसी भी जानकारी से इनकार किया। यह कल्पना करना कठिन है कि कर्नल मोहन सिंह महात्मा गांधी की हत्या या अपहरण को बढ़ावा देने में शामिल रहे होंगे। और यह और भी आश्चर्यजनक होगा यदि तत्कालीन उत्तर प्रदेश विधानसभा अध्यक्ष श्री पुरुषोत्तमदास टंडन इस योजना में शामिल होने के लिए राजी हो गए हों। भले ही उद्देश्य

मुसलमानों को निष्कासित करना था, अध्यक्ष द्वारा इस तरह की किसी भी कार्रवाई को अपना समर्थन देने की संभावना नहीं थी। 'हालांकि पत्र में करकरे और बैज को गिरफ्तार करने की योजना का उल्लेख है, लेकिन इस बात का कोई संकेत नहीं है कि योजना को अंजाम देने के लिए कौन से ठोस कदम उठाए गए थे।'
सबसे महत्वपूर्ण चूक "अग्रनी" या "हिंदू राष्ट्र" के संपादक या स्वामी का उल्लेख न होना है, क्योंकि संजीवी के नोट में इस पर बार-बार जोर दिया गया प्रतीत होता है। इससे पता चलता है कि या तो इन व्यक्तियों का तब तक कभी उल्लेख नहीं किया गया था या नागरवाला ने जानबूझकर उन्हें छोड़ दिया था। परिस्थितियों को देखते हुए बाद वाली संभावना अधिक प्रतीत होती है।
नोट में ऐसा कोई संकेत नहीं है कि नागरवाला से टेलीफोन पर हुई बातचीत में संजीवी ने इन दोनों व्यक्तियों का जिक्र किया हो। नोट में उन्होंने सिर्फ इतना लिखा है, "मैंने उनसे फरार आरोपी के बारे में पूछा, जिसका नाम या विवरण मदनलाल ने दिल्ली पुलिस को दिया था, और नागरवाला ने विस्तृत नोट भेजने का वादा किया।" यह अनुमान लगाया जा सकता था कि अगर अखबार के संपादक का जिक्र होता, तो संजीवी संपादक और/या मालिक के बारे में स्पष्ट पूछताछ जरूर करते।
'इसके अलावा, इस नोट में ऐसा कुछ भी नहीं है कि जब नागरवाला ने महात्मा गांधी के अपहरण की साजिश का जिक्र किया, तो संजीवी ने उन्हें फटकारा या उनसे कहा कि यह सिद्धांत या विचार ही बेतुका था।'
'आयोग यह पता लगाने में असमर्थ रहा है कि नागरवाला ने अपने पत्र में मदनलाल के बयान की प्रेस रिपोर्ट को अपनी जांच का आधार क्यों बनाया, जबकि उन्हें मोरारजी देसाई द्वारा दी गई सूचना या

आदेश का उपयोग करना चाहिए था, जिसे अस्वीकार नहीं किया गया है और षड्यंत्र मामले में निचली अदालत और उच्च न्यायालय दोनों ने स्वीकार किया था। दुर्भाग्य से, यह मामला आयोग के समक्ष नागरवाला के सामने नहीं रखा गया।'
मदनलाल के सह-साजिशकर्ताओं के नाम, विवरण, व्यवसाय या निवास स्थान का उल्लेख न होना अभी तक अस्पष्ट बना हुआ है।
नागरवाला द्वारा 30 तारीख को संजीवी को लिखा गया पत्र अत्यंत गोपनीय था और मोरारजी देसाई द्वारा दी गई जानकारी या उनके द्वारा पारित आदेश के बारे में संजीवी को बताने में कोई अंतर्निहित खतरा नहीं हो सकता था।
बॉम्बे के पुलिस महानिरीक्षक एन.एम. कामटे और सी.आई.डी. डीआईडी. यू.एच. राणा के बीच हुए पत्राचार से राणा की घोर लापरवाही का पता चलता है। 6 फरवरी 1948 को राणा को लिखे एक पत्र में कामटे ने लिखा कि उन्होंने मदनलाल का बयान ध्यानपूर्वक पढ़ा है जिससे यह स्पष्ट होता है कि पुणे के कुछ लोगों द्वारा गांधी की हत्या की साजिश रची गई थी और उन्हें राणा से दो मामलों पर जानकारी चाहिए थी:
(1) उन्हें तुरंत गिरफ्तार करने के लिए उनके द्वारा क्या कदम उठाए गए; और (2) दिल्ली की तलाशी लेने के लिए दिल्ली में आदमी भेजने के लिए क्या कदम उठाए गए?
उन्हें वहीं गिरफ्तार कर लें।
राणा ने 24 फरवरी 1948 को इस पत्र का उत्तर दिया, जिसमें उन्होंने घटनाक्रम और अपने द्वारा की गई कार्रवाई का उल्लेख किया। राणा का एक बेहद चौंकाने वाला दावा है: '21 तारीख की सुबह जब दिल्ली पुलिस के दो अधिकारियों ने उनसे मुलाकात की और उन्हें अब तक मिली जानकारी दी, तो उन्होंने (राणा ने) तुरंत उनसे

कहा कि यह गिरोह डॉ. सावरकर के अनुयायी होने चाहिए और सुझाव दिया कि दो अधिकारियों को बॉम्बे भेजा जाए ताकि वे बॉम्बे में नागरवाला और पुणे में राव साहब गुरतू से संपर्क कर सकें।' यह दावा निराधार है: जांच रिपोर्टों में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि संजीवी द्वारा बॉम्बे भेजे गए दो अधिकारियों के दिल्ली लौटने और बॉम्बे पुलिस के असहयोग और नागरवाला के हठधर्मिता की शिकायत करने के बाद राणा को संजीवी ने इस मामले में शामिल किया था। राणा ने आगे कहा: 'जब तक दिल्ली पुलिस बॉम्बे पहुंची, बॉम्बे पुलिस को करकरे के बारे में कुछ जानकारी मिल चुकी थी और कुछ पूछताछ की जा चुकी थी' या जैसा कि उन्होंने कहा, 'यह जानकारी बॉम्बे नगर पुलिस द्वारा पहले ही जुटाई जा चुकी थी।' दिल्ली पुलिस के अधिकारी नेशनल होटल में जाकर रुके, जो शेर-ए-पंजाब होटल के पास ही स्थित था, जिसके मालिक अवतार सिंह को बॉम्बे सिटी पुलिस ने हिरासत में ले लिया था और जिसका नाम महात्मा गांधी की हत्या की साजिश रचने वालों में से एक के रूप में सामने आया था।
कामते की इच्छा के अनुसार अपने कार्यों का स्पष्टीकरण देने के बजाय, राणा ने बॉम्बे पुलिस की कार्रवाइयों का विस्तृत विवरण दिया। अपनी कार्रवाइयों के बारे में राणा कहते हैं कि वे 28 तारीख को पुणे के लिए रवाना हुए और पुणे के डीएसपी से अपने एलआईबी इंस्पेक्टर अंगारकर को बख्शने का अनुरोध किया। 29 तारीख को उन्हें सूचना मिली कि अंगारकर को बुखार है। राणा ने तब वायरलेस संदेश भेजकर डिप्टी एसपी देउलकर को वापस बुला लिया, जो उस समय कोलाबा जिले में थे। देउलकर 30 तारीख की रात को लौटे। तुरंत ही चार अधिकारियों को विमान से भेजा गया क्योंकि यह आशंका थी कि ये लोग केंद्रीय मंत्रिमंडल के अन्य मंत्रियों पर

हमला कर सकते हैं। बाद में सामने आए तथ्यों से पता चला कि अपराधी 28 तारीख की सुबह बॉम्बे से चुपके से निकल गए थे।
राणा का कामते को दिया गया जवाब टालमटोल और बहानेबाजी से भरा था, और दूसरों द्वारा शुरू और अंजाम दिए गए कार्यों का श्रेय खुद लेने की कोशिश लग रही थी। कामते ने 6 मार्च 1948 को लिखे एक जवाब में उन्हें पकड़ लिया। इस पत्र में कामते ने अपने द्वारा पूछे गए दो सवालों को दोहराया, जिनके बारे में उनके अनुसार राणा का जवाब संतोषजनक नहीं था। फिर उन्होंने राणा से कुछ विशिष्ट मामलों पर अपनी राय देने को कहा, जो इस प्रकार थे: (1) 21 तारीख को दोनों पुलिस अधिकारियों ने उन्हें (राणा को) क्या बताया था? पत्र से पूरी तरह स्पष्ट नहीं हो पाया?
(2) उन्होंने अपनी ही सीआईडी से जांच करने के लिए क्यों नहीं कहा, जबकि दो अधिकारियों ने
क्या दिल्ली से आए लोग बॉम्बे या पुणे में ज्यादा प्रगति नहीं कर पाएंगे? (3) इन पुलिस अधिकारियों द्वारा नागरवाला से संपर्क करने का उद्देश्य यह नहीं था
कहा गया।
(4) मदनलाल का बयान उसे (राणा को) 25 तारीख को दिया गया था। क्या 27 तारीख की शाम तक उसने क्या कार्रवाई की? (उसने क्या कार्रवाई की होगी?)
क्या उसे ले जाया गया था? वह इलाहाबाद होते हुए बॉम्बे की अपनी इत्मीनान यात्रा पर था।) (5) नागरवाला को सहयोगियों के बारे में एक स्रोत से जो जानकारी मिली
मदनलाल का कहना सही नहीं था क्योंकि उसे केवल इतना ही पता था करकरे का नाम और अन्य जानकारी बहुत अस्पष्ट थी। लेकिन
मदनलाल का बयान, पृष्ठ 7, 16, 18 आदि, उसमें दिया गया विवरण

इससे पता चला कि अन्य आरोपी गोडसे, आप्टे, बैज आदि थे। ऐसा क्यों था?
क्या 25 तारीख की शाम से उन्हें गिरफ्तार करने का कोई प्रयास नहीं किया गया? (6) यद्यपि 27 तारीख को उसने (राणा ने) डीआईबी को फोन करके बताया था कि वह उन्हें गिरफ्तार करने जा रहा है। गांधी की सुरक्षा के लिए एहतियात बरतते हुए, वह अपने किसी प्रतिनिधि को नियुक्त कर सकते थे।
मदनलाल के बयान से पता चला कि वहाँ एक
बॉम्बे प्रांत के लोगों द्वारा गांधी की हत्या की योजना। (7) कामते इस प्रस्ताव से सहमत नहीं हो सके कि बॉम्बे पुलिस उन्होंने एहतियात के तौर पर हर संभव प्रयास किया था। सबसे अच्छी बात यह थी कि
राणा 29 तारीख को राव साहब को बुलवा सकते थे।
गुरतु, उस अधिकारी को हरकत में लाओ।
(8) कामते के सुझाव पर हवाई मार्ग से दिल्ली में लोगों को भेजा गया था, न कि
जिसका श्रेय राणा को बिल्कुल भी नहीं मिल सका।
इस पत्र में आलोचना के कुछ महत्वपूर्ण बिंदु उठाए गए हैं—(क) राणा ने दिल्ली पुलिस अधिकारियों को भेजने के बजाय अपनी खुद की सीआईडी को जांच के लिए क्यों नहीं भेजा; (ख) उन्होंने गांधी की सुरक्षा के लिए अपनी खुद की सीआईडी को दिल्ली क्यों नहीं भेजा; और (ग) उन्होंने 29 जनवरी को भी गुरतू को क्यों नहीं पकड़ा। राणा ने आगे कोई कार्रवाई नहीं की क्योंकि उनका मानना था कि गिरोह बॉम्बे में ही होगा और दिल्ली में उनके पास एक सी.आई.डी. हेड कांस्टेबल यादव थे, जिन्हें दिल्ली में घूमकर रेलवे स्टेशनों का दौरा करने और करकरे का पता लगाने का निर्देश दिया

गया था, जिसे हेड कांस्टेबल "अहमदनगर के एक कम्युनिस्ट" के रूप में जानते थे (यह एक और गलत विवरण है; करकरे कम्युनिस्ट नहीं थे, वे एक कट्टर सांप्रदायिक थे)। राणा ने बॉम्बे से दिल्ली में किसी विशेष व्यक्ति को भेजना आवश्यक नहीं समझा। आगे कुछ न करने के लिए राणा का स्पष्टीकरण यह था कि उन्होंने बॉम्बे और पुणे में क्या करना है, इस संबंध में दिल्ली पुलिस अधिकारियों को निर्देश दे दिए थे। यह भी झूठ है। जांच रिकॉर्ड से पता चलता है कि मदनलाल के विस्तृत इकबालिया बयान की प्रति मिलने के बाद से 30 तारीख तक राणा ने बिल्कुल कुछ नहीं किया; उनका यह दावा कि उन्होंने 21 तारीख को स्वयं दिल्ली पुलिस को जानकारी दी थी, सरासर झूठ है, यह आश्चर्य की बात है कि उनसे पूछताछ तो दूर, फटकार भी नहीं लगाई गई।
दिल्ली से बॉम्बे जाते समय राणा को बुखार हो गया। वह सीधे नागरवाला के पास गए, जिन्होंने उन्हें जांच के बारे में बताया और मदनलाल का बयान दिखाया जो सावरकरवाड़ी समूह की जानकारी से मेल खाता था। राणा ने उन्हें बताया कि पुणे पहुंचते ही वह मदनलाल के बयान की एक प्रति भेज देंगे ताकि बॉम्बे में आगे की जांच शुरू की जा सके। नागरवाला ने उनसे पुणे पुलिस अधिकारियों को भेजने को कहा ताकि उन लोगों की पहचान करने में मदद मिल सके और उन्होंने विशेष रूप से अंगारकर को बुलाया। लेकिन राणा बुखार होने के कारण पुणे नहीं जा सके।
राणा ने दावा किया कि चूंकि टेलीफोन लाइनें भरोसेमंद नहीं थीं, इसलिए उन्होंने नागरवाला या संजीवी को अपनी जानकारी देने के लिए उनका इस्तेमाल नहीं किया। उन्होंने उदाहरण देते हुए बताया कि 31 तारीख को हत्या के बाद जब वे नागरवाला से बात कर रहे थे, तो

उन्होंने ऑपरेटरों को दोनों पुलिसकर्मियों की बातें सुनते हुए हंसते हुए सुना था।
राणा के बहाने जारी हैं: 'यह गलत है कि राणा को गोडसे, आप्टे और बैज के नाम पता थे और यह बात नागरवाला को भी पता थी। असल बात तो यह है कि जहाँ तक मेरा सवाल है, मुझे पुणे पहुँचने तक यह नहीं पता था कि हिंदू राष्ट्र का संपादक और मालिक कौन है।' यह बयान ही दिखाता है कि पुणे में तैनात सीआईडी के प्रमुख के तौर पर राणा कितने अक्षम थे: उन्हें उन लोगों की पहचान का पता ही नहीं था जिन पर उनका विभाग सक्रिय रूप से नज़र रख रहा था। फिर अगर उन्हें पुणे पहुँचने पर अग्रानी और हिंदू राष्ट्र के संपादक और मालिक की पहचान पता चल भी गई थी, तो उन्होंने इस जानकारी को क्यों दबाए रखा? वे गांधी की हत्या से चालीस घंटे से भी ज़्यादा पहले, 28 तारीख की शाम को पुणे पहुँच गए थे। राव साहब गुर्टू और किसी अन्य अधिकारी को पुणे से दिल्ली भेजने के लिए पर्याप्त समय था, जो 30 तारीख की सुबह तक दिल्ली पहुँच सकते थे और उन्हें नाथूराम, आप्टे और करकरे को देखने का मौका मिल सकता था, जो 30 तारीख को दो बार बिड़ला हाउस गए थे।
कपूर आयोग की रिपोर्ट में कहा गया है: 'जहां तक आयोग देख सका है, राणा ने उनकी पहचान जानने या उन्हें गिरफ्तार करने के लिए कोई प्रयास नहीं किया।'
अपने पत्र के अंतिम अनुच्छेद में राणा ने अपनी निष्क्रियता को उचित ठहराते हुए लिखा: 'उन्होंने (राणा ने) 29 जनवरी 1948 को अपने पास उपलब्ध थोड़े समय में ही अपने अधिकारियों को कार्रवाई में लगा दिया था। हालांकि, मैं इसे और स्पष्ट करना चाहता हूं। जब डीएसपी पुणे को बुलाया गया था तब राव साहब गुरतू वहां मौजूद थे और आप्टे, गोडसे और बैज के नाम राव साहब गुरतू से ही ज्ञात

थे। मैंने उनसे यह भी पूछा था कि क्या अंगारकर इन तीनों को जानता है, जिसका उत्तर उन्होंने हां में दिया था। गुरतू और पुणे में मौजूद अन्य लोगों को कार्रवाई में लगाने का कोई सवाल ही नहीं था क्योंकि अपराधी बंबई में छिपे हुए थे और बंबई स्पेशल ब्रांच उन पर नजर रख रही थी।' पत्र का अंत इस वाक्य से हुआ: 'यह वास्तव में शर्मनाक है कि हम इसे रोकने में असमर्थ रहे, और अब मुझे आश्चर्य होता है कि क्या हम वास्तव में सीआईडी के रूप में अपने अस्तित्व को उचित ठहरा सकते हैं।' लेकिन पश्चाताप से भरे राणा, जिन्हें अचानक अपनी अक्षमता का एहसास हुआ, ने अपने पश्चाताप पर अमल करते हुए इस्तीफा नहीं दिया।
कामते ने राणा की आलोचना जारी रखते हुए कहा: 'यदि टेलीफोन पर बातचीत को अवांछनीय माना जाता था, तो डीआईजी को सिविल सिफर कोड टेलीग्राम भेजना चाहिए था।'
कामते लिखते हैं: 'डी.आई.जी. को पुणे सी.आई.डी. से संपर्क न करने और मदनलाल के बयान से जिन व्यक्तियों के नाम या विवरण ज्ञात हुए थे, उन्हें गिरफ्तार करने के निर्देश न देने की गलती से बरी नहीं किया जा सकता। दिल्ली पुलिस अधिकारियों पर दोष मढ़ना व्यर्थ था। डी.आई.जी. को तुरंत राव साहब गुरतू को सूचित करना चाहिए था। अगर डी.आई.जी. को बुखार भी होता, तो भी वे राव साहब गुरतू को सांकेतिक संदेश भेज सकते थे और डी.आई.बी. को उनका फोन करना मुद्दा नहीं था। 'एकमात्र तथ्य' यह था कि मदनलाल का बयान मिलने के तुरंत बाद उन्होंने कार्रवाई नहीं की। पुणे पहुँचने पर राणा को ए.डी.आई.जी. से उन व्यक्तियों को गिरफ्तार करने के लिए कहना चाहिए था जिनके नाम और विवरण मदनलाल के बयान में सामने आए थे।'

राणा की लापरवाही और घोर अक्षमता की कड़ी आलोचना करने के बाद, कामते अचानक अपने निष्कर्ष में नरम पड़ जाते हैं: 'लेकिन इसके बाद जो कहा गया है, वह आलोचना की तीव्रता को कम कर देता है क्योंकि इसमें कहा गया है, 'उन्हें इस बात का एहसास न होने के लिए सुधारा जा रहा था ताकि भविष्य में वे ये गलतियाँ दोबारा न करें।' न्यायमूर्ति कपूर आगे कहते हैं: 'दुर्भाग्य से, गांधी जैसे लोग बार-बार नहीं हो सकते, कम से कम निकट भविष्य में तो नहीं, और इसलिए यह चेतावनी पूरी तरह से निरर्थक थी।'
आयोग की राय में, कामते का आकलन सही था और यदि डी.आई.जी. ने केवल इतना ही बुनियादी कदम उठाया होता कि अपने सी.आई.डी. पुणे से करकरे या मदनलाल के साथियों की पहचान के बारे में पूछा होता, तो संभवतः उन्हें पता चल जाता कि वे कौन थे। किसी भी हालत में, यदि हत्या के बाद केंद्रीय मंत्रिमंडल के मंत्रियों की सुरक्षा के लिए पुणे से अधिकारियों को भेजा जा सकता था, तो बम फेंके जाने और मदनलाल के 24 या 25 जनवरी के बयान के उपलब्ध होने के बाद भी यही तरीका सफलतापूर्वक अपनाया जा सकता था।
चौथी जांच बॉम्बे प्रांतीय विधानसभा में पेश किए गए एक कटौती प्रस्ताव के रूप में हुई। मोरारजी देसाई ने सवालों के जवाब दिए और बॉम्बे प्रांतीय सरकार की कार्रवाई की रिपोर्ट दी। उन्होंने विधानसभा को बताया कि प्रो. जैन ने उन्हें 21 जनवरी 1948 को क्या बताया था, लेकिन उन्होंने इस बात से इनकार किया कि प्रो. जैन ने उन्हें बताया था कि उन्होंने यह जानकारी जयप्रकाश नारायण को भी दी थी। जैन का नाम 30 तारीख तक पुलिस को नहीं बताया गया था क्योंकि जैन ने उनसे ऐसा न करने का अनुरोध किया था। इसके बाद उन्होंने कहा कि उन्हें जो भी जानकारी मिली थी, वह उन्होंने अहमदाबाद में पटेल को बता दी थी। देसाई के बयान में दो

विसंगतियां हैं। एक यह कि कपूर आयोग के सामने गवाही देते समय पटेल के सचिव शंकर और पटेल की बेटी मणिबेन दोनों ने कहा था कि उन्हें याद नहीं है कि देसाई ने सरदार को जैन की जानकारी के बारे में बताया था। दूसरी, देसाई पटेल को सूचित करने के लिए अहमदाबाद नहीं गए थे, यह यात्रा किसी और उद्देश्य से थी। पटेल अहमदाबाद में एक अस्पताल के शिलान्यास समारोह में शामिल होने के लिए सहमत हुए थे। देसाई उस ट्रस्ट के न्यासी थे जो अस्पताल का निर्माण कर रहा था। सवाल उठता है कि आखिर किस वजह से उन्होंने सभा को गुमराह किया? देसाई ने दावा किया कि उन्होंने गांधी जी को अपनी जान के खतरे के बारे में सूचित किया था और उनसे अनुरोध किया था कि पुलिस को उनकी सुरक्षा के लिए उचित कदम उठाने की अनुमति दी जाए, लेकिन गांधी जी ने इनकार कर दिया था। इसके बाद देसाई ने अपने पुलिस अधिकारियों का बचाव करते हुए कहा: 'मैंने पुलिस अधिकारी को कहा था कि जो भी संदिग्ध लगे, उसके खिलाफ कार्रवाई की जाए। जैन ने यह नहीं कहा कि उन्होंने मुझे दो अन्य व्यक्तियों के नाम दिए थे जो अंततः साजिश में शामिल पाए गए और जिनका अपराध से कोई लेना-देना नहीं था... मैंने पुलिस बल द्वारा उठाए गए कदमों का विवरण दिया है। मुझे यह सब इसलिए पता है क्योंकि मैं घटना से पहले ही नहीं, बल्कि बाद में भी जब अपराध की जांच चल रही थी, तब भी पुलिस अधिकारी से लगातार पूछताछ कर रहा था कि क्या किया जा रहा है, क्योंकि मैं उन्हें अपने विचार और ज्ञान से अवगत कराना चाहता था। मैंने पाया कि वे लगातार ड्यूटी पर तैनात थे। आधी रात को भी वे ड्यूटी पर थे। मैंने देखा कि पुलिस अपने खाने-पीने की भी परवाह नहीं कर रही थी। वे अपने काम में इतने मग्न थे। इसीलिए मैं यह नहीं कह सकता कि वे अपने कर्तव्य में विफल रहे।'

जब कपूर आयोग ने मनु गांधी को गवाही देने के लिए बुलाया, तो देसाई ने उन्हें बुलाया और निर्देश दिया कि वे कहें कि गांधी की हत्या के समय वे बहुत छोटी थीं, इसलिए उन्हें कुछ याद नहीं है। मनुबेन ने उनसे कहा कि वे 'बापू की बेटी हैं और केवल सच ही बोलेंगी, न कम न ज्यादा।' देसाई को किस बात का डर था?
नागरवाला से उनके कार्यों का स्पष्टीकरण मांगा गया। उनका स्पष्टीकरण 25 मार्च 1949 को लिखे पत्र के साथ देहेजिया द्वारा भारत सरकार को भेजा गया। नागरवाला ने उस जांच में उठाए गए कदमों का ब्यौरा दिया, जो उन्होंने देसाई द्वारा करकरे आदि के बारे में जानकारी दिए जाने के बाद बंबई में की थी। यह वास्तव में 20-30 जनवरी 1948 की अपराध रिपोर्ट की एक प्रति है। इस पत्र के साथ उन्होंने 30 जनवरी 1948 को संजीवी को लिखा अपना पत्र भी संलग्न किया। उन्होंने कुछ अन्य दस्तावेज भी संलग्न किए: उस अवधि के दौरान निगरानी किए गए स्थानों और व्यक्तियों के नामों की सूची; अदालत में उनका बयान, इंस्पेक्टर पिंटो और डीएसपी जसवंत सिंह के बयानों के अंश।
जब सचिवालय में उनका स्पष्टीकरण प्राप्त हुआ, तो उस पर कुछ ऐसी टिप्पणियां थीं जो नागरवाला द्वारा किए गए कार्यों के प्रतिकूल थीं। कार्यालय ने जांच में पाई गई विभिन्न खामियों की ओर इशारा किया जो उल्लेख करने योग्य थीं।
(1) बैज को पूना के डीएसपी अच्छी तरह जानते थे। उनसे संपर्क क्यों नहीं किया गया?
करकरे को मुख्य पात्र क्यों बनाया गया और मामला किससे शुरू हुआ?
मदनलाल?

(2) दिल्ली पुलिस ने 22 जनवरी को मदनलाल का बयान क्यों नहीं पेश किया?
1948?
(3) दिल्ली से संपर्क स्थापित करने के लिए क्या प्रयास किए गए और क्या कार्रवाई की गई
क्या राणा ने मदनलाल के बयान को स्वीकार किया?
(4) क्या नागरवाला ने पूना के एनवीजी नाम के एक संपादक को देखा था जो
मदनलाल का साथी?
(5) क्या नागरवाला मदनलाल के वहाँ के संपर्कों की तलाश में अहमदनगर गया था?
अहमदनगर और पुणे में जांच कौन संभाल रहा था?
बैज को तीन दिन पहले अहमदनगर में देखा गया था और उस पर संदेह किया गया था।
कोई कार्रवाई क्यों नहीं की गई?
जब यह पत्र मोरारजी देसाई के पास पहुंचा, तो उन्होंने अपने सचिव के साथ चर्चा की और अंततः यह निर्णय लिया गया कि इसे सभी संलग्नकों के साथ भारत सरकार को भेजा जाएगा।
नागरवाला ने आयोग पर आपत्ति जताई और पुलिस के आचरण, अर्थात् उसकी कमियों, निष्क्रियता, जानबूझकर की गई गलतियों या चूक, बम मामले की जांच में उसकी लापरवाही की जांच करने के उसके अधिकार क्षेत्र को चुनौती दी। आयोग के अधिकार क्षेत्र के विरुद्ध नागरवाला का मुख्य तर्क यह था कि न्यायाधीश आत्मचरण द्वारा दिए गए कड़े निर्देशों के बाद उच्च न्यायालय अलग-अलग निष्कर्षों पर पहुंचा; और यह कि एक बार जब कोई न्यायालय या सक्षम न्यायाधिकरण किसी आपराधिक मामले में विवादित बिंदु पर किसी निष्कर्ष पर

पहुंच जाता है, तो वह निर्णय अंतिम हो जाता है और उस पर पुनर्विचार नहीं किया जा सकता। यह निर्णय सभी बाद की कार्यवाही में बाध्यकारी और निर्णायक होता है। यह नागरवाला का एक हताश प्रयास प्रतीत होता है। न्यायमूर्ति कपूर ने आयोग के अधिकार क्षेत्र की वैधता स्थापित करने के लिए पूर्व निर्णयों और मिसालों का हवाला दिया।
7.5 मुकदमे की सुनवाई के दौरान, या अपील के चरण में, पुलिस ने किसी मामले की ठीक से जांच की या नहीं, यह कोई महत्वपूर्ण मुद्दा नहीं हो सकता क्योंकि किसी मामले की कुशल जांच पर किसी आरोपी व्यक्ति का बरी होना या न होना निर्भर नहीं करता, हालांकि कुछ न्यायक्षेत्रों में यह निर्णय दिया गया है कि अनुचित तरीके से एकत्र किए गए या अवैध रूप से प्राप्त साक्ष्य किसी दोषसिद्धि को बरकरार नहीं रख सकते। इस आयोग के समक्ष जांच में, विवाद के विषय हैं: (1) क्या बम मामले में जांच उचित थी या अनुचित; (2) क्या इसके परिणामस्वरूप, या उस मामले को ध्यान में रखे बिना भी, पुलिस ने महात्मा गांधी को उचित सुरक्षा प्रदान की थी; (3) क्या अनुचित या लापरवाहीपूर्ण जांच के कारण आरोपियों को दिल्ली लौटने और हत्या करने की अनुमति दी गई थी; और (4) क्या पुलिस द्वारा पर्याप्त उपाय किए जाने पर हत्या को रोका जा सकता था। यह इस बात पर निर्भर हो सकता है कि क्या शाम 4.15 बजे बम फेंके जाने के समय से की गई जांच... (यह एक त्रुटि है, मदनलाल ने शाम 5.15 बजे गन कॉटन स्लैब में विस्फोट किया था।) 20 जनवरी से 30 जनवरी 1948 के बीच हुई जांच प्रभावी थी या नहीं; और इस प्रश्न पर कि क्या पुलिस ने अपनी निष्क्रियता और अनुचित जांच के कारण षड्यंत्र में शामिल व्यक्तियों को भागने और पकड़े न जाने दिया। आयोग की राय में, यह मामला उच्च न्यायालय के समक्ष

नहीं था और उच्च न्यायालय द्वारा दिया गया कोई भी निर्णय, प्रीतम सिंह के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित नियम के अंतर्गत पुनः स्थापित नहीं होता है। इसके अलावा, जांच आयोग के समक्ष कोई विवाद नहीं है।
7.6 'पुलिस द्वारा जांच और किसी मामले में पूछताछ या मुकदमे का संचालन दंड प्रक्रिया संहिता में दो अलग-अलग खंड हैं और न्यायालयों को, संहिता में दिए गए प्रावधानों को छोड़कर, पुलिस जांच पर कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है, जैसा कि प्रिवी काउंसिल और ख्वाजा नजीर अहमद के मामले में स्पष्ट किया गया था। 71 आई.ए. 203; ए.आई.आर. 1945 पी.सी. 18'।
7.7 'न्यायाधीश आत्मचरण ने पुलिस को निष्क्रियता का दोषी पाया था और इसलिए महात्मा गांधी की मृत्यु को रोकने में विफल रहने का दोषी पाया था। उच्च न्यायालय ने माना कि वे टिप्पणियाँ उचित नहीं थीं, यद्यपि उन टिप्पणियों को हटाने के लिए उच्च न्यायालय में कोई याचिका दायर नहीं की गई थी।'
7.8 यह ध्यान देने योग्य है कि आपराधिक मामलों में रेस ज्यूडिकाटा (न्याय का अंतिम निर्णय) दोहरे दंड को रोकता है, अर्थात् बरी किए गए व्यक्ति पर उसी अपराध के लिए दोबारा मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। लेकिन संप्रभु को यह सुनिश्चित करने से कोई नहीं रोकता कि दोषसिद्धि अनुचित तरीके से प्राप्त नहीं की गई थी, ताकि वह अपनी दया की शक्तियों का प्रयोग कर सके या गलत व्यक्ति को मुआवजा दे सके। इसी प्रकार, यदि किसी आरोपी को अनुचित साधनों से बरी किया गया है, तो संप्रभु अवैधता का पता लगाने का प्रयास कर सकता है।
7.9 उच्च न्यायालय में पुलिस की लापरवाही या अन्यथा के प्रश्न पर विचार करने के बाद, न्यायमूर्ति भंडारी ने कहा: 'रिकॉर्ड पर

मौजूद साक्ष्य मुझे संतुष्ट करते हैं (क) कि पुलिस को उन परिस्थितियों को स्पष्ट करने का कोई अवसर नहीं दिया गया, जिनके कारण वे 30 जनवरी से पहले नाथूराम को गिरफ्तार नहीं कर सके और इस प्रकार महात्मा गांधी का जीवन नहीं बचा सके; (ख) कि मदनलाल पुलिस को षड्यंत्रकारियों के नाम बताने में विफल रहा; (ग) कि यदि वे नाम बता भी दिए जाते, तो भी पुलिस के लिए नाथूराम को गिरफ्तार करना अत्यंत कठिन, यदि असंभव नहीं, होता, जो फर्जी नामों से जगह-जगह घूम रहा था और महात्मा गांधी की हत्या करने के लिए अपनी जान जोखिम में डालने को भी तैयार था।'
न्यायमूर्ति अच्चरुराम ने कहा: 'निष्कर्ष से पहले मैं विद्वान विशेष न्यायाधीश द्वारा 20 से 30 जनवरी 1948 के बीच जांच में दिखाई गई ढिलाई के संबंध में की गई कुछ टिप्पणियों पर ध्यान दिलाना चाहता हूं, जिसके बिना विद्वान न्यायाधीश के विचार में यह त्रासदी रोकी जा सकती थी। मुझे कहना होगा कि मुझे इन टिप्पणियों का कोई औचित्य नहीं मिला है, जो मेरे विचार में पूरी तरह से अनुचित थीं।'
न्यायमूर्ति खोसला ने कहा: 'मैं अपने विद्वान साथियों भंडारी और अच्छरू राम न्यायमूर्ति द्वारा निकाले गए निष्कर्षों से सहमत हूं।'
कपूर आयोग की रिपोर्ट में इस बात का विस्तृत सारांश दिया गया है कि न्यायमूर्ति भंडारी ने पुलिस को क्यों दोषमुक्त किया; न्यायमूर्ति अच्चरुराम ने कोई नए कारण नहीं दिए।
7.12 'यह आयोग उच्च न्यायालय के विरुद्ध अपील न्यायालय के रूप में कार्य नहीं कर रहा है और न ही इसे उच्च न्यायालय के निर्णयों में त्रुटि निकालने का अधिकार है, और न ही उच्च न्यायालय द्वारा पहले से निपटाए गए मामलों पर पुनर्विचार करने

का। यह सिद्धांत उन मामलों पर लागू होता है जो अभियुक्त के अपराध या निर्दोषता से संबंधित हैं या ऐसे मामले जो उस प्रश्न के निर्णय से इस प्रकार जुड़े हैं कि वे उसका हिस्सा हैं, लेकिन उन मामलों पर नहीं जो पूरी तरह से गौण हैं और मामले के गुण-दोष को प्रभावित नहीं करते हैं, जैसे कि अपराध का होना और उसे करने वाले। इसलिए, संप्रभु या राज्य के लिए यह पता लगाना खुला है कि क्या उसकी सुरक्षात्मक और जांच प्रणाली महात्मा गांधी की सुरक्षा के लिए उचित रूप से तैयार थी। आयोग की राय में, जांच की गुणवत्ता के बारे में उच्च न्यायालय का निर्णय उस पर बाध्यकारी नहीं है, क्योंकि यह मुकदमे के दौरान कोई ऐसा मुद्दा नहीं था जो मूल रूप से या यहां तक कि अप्रत्यक्ष रूप से भी विचाराधीन हो और जो सांबासिवम मामले में बताए गए रेस ज्यूडिकाटा के नियम के अंतर्गत आता हो।'
7.13 'जैसा कि कहा गया है, रेस ज्यूडिकाटा का नियम लागू नहीं होता है और औचित्य या निष्पक्षता का ऐसा कोई नियम नहीं है जो ऐसी जांच को रोक सके।'
7.14 'अत: अधिकार क्षेत्र की कमी के आधार पर आपत्ति खारिज की जाती है।'
8.3 आगे यह आरोप लगाया गया है कि पुलिस ने अक्षमता, अकुशलता और लापरवाही से काम किया और बंबई के गृह मंत्री उदासीन थे। यदि उन्होंने प्रो. जैन द्वारा दी गई जानकारी पुलिस को दी भी थी, तो भी उन पर जांच की निगरानी करने और उस पर कड़ी नज़र रखने का दायित्व था। जांच के मामले में पुलिस की अक्षमता के लिए मंत्री उत्तरदायी हैं। इसके अलावा, मंत्री को मदनलाल और प्रो. जैन द्वारा नामित व्यक्तियों की गिरफ्तारी का आदेश देना चाहिए था और यह सुनिश्चित करना चाहिए था कि उनकी गिरफ्तारी हो और उनके

सहयोगियों को शीघ्रता से ढूंढकर गिरफ्तार किया जाए। यदि पुलिस ने लापरवाही बरती है, तो कम से कम इसकी जिम्मेदारी मंत्री की है। पुलिस की विफलता 'विधानमंडल के प्रति मंत्री के उत्तरदायित्व' के अंतर्गत आती है।
आयोग ने इस मुद्दे पर दो गवाहों की टिप्पणियों का हवाला दिया है, जिनमें से एक प्रख्यात राजनेता और संवैधानिक वकील के.एम. मुंशी और दूसरे भारत सरकार के गृह सचिव रहे आर.एन. बनर्जी, आईसीएस हैं।
आयोग की रिपोर्ट के अनुच्छेद 8.15 में कहा गया है: 'के.एम. मुंशी की राय को शब्दशः उद्धृत किया जा सकता है:
'यदि मंत्री के रूप में मुझे किसी के जीवन को खतरे में होने की सूचना मिलती है, तो सबसे पहले मैं उस रिपोर्ट को पुलिस महानिरीक्षक को उसकी सत्यता की जांच करने के लिए सौंपूंगा और उनसे कानून के अनुसार आवश्यक कदम उठाने का अनुरोध करूंगा। यदि जांच में उन्हें रिपोर्ट निराधार लगती है, तो वे कुछ नहीं कर सकते। यदि उन्हें रिपोर्ट में कुछ सच्चाई मिलती है, तो वे कार्रवाई कर सकते हैं और मंत्री को सूचित करते रहेंगे।'
'यदि मंत्री महोदय शिकायतों के आधार पर लोगों की गिरफ्तारी का आदेश देते हैं, तो देश में कानून-व्यवस्था पूरी तरह से चरमरा जाएगी। मैं ऐसा नहीं करूंगा। गृह मंत्री केवल अपने पुलिसकर्मियों को मामले की जिम्मेदारी सौंप सकते हैं; वे सत्यापन और कार्रवाई के लिए पुलिस तंत्र का उपयोग करने के अलावा और कुछ नहीं कर सकते।'
8.16 आर.एन. बनर्जी की राय इस प्रकार है:
'यदि कोई जानकारी वैसी ही दी गई होती जैसा कि अब कहा जा रहा है कि प्रोफेसर जैन द्वारा दी गई थी, तो सचिव या पुलिस प्रमुख को उचित

निर्देश दिए जाने चाहिए थे और उनसे एक निश्चित समय सीमा के भीतर अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए कहा जाना चाहिए था तथा जांच की प्रगति पर नजर रखी जानी चाहिए थी और पुलिस क्या कर रही है, इस पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए था।'
'जहां तक मैं देख सकता हूं, बॉम्बे सरकार को नागरवाला की क्षमता पर पूरा भरोसा था। अगर गृह मंत्री ने उन्हें निर्देश दिए होते तो यह कहना सही होता कि उन्होंने वही किया जो उन्हें करना चाहिए था, यानी मामले को नागरवाला जैसे सक्षम अधिकारी के हाथों में सौंप दिया।'
8.17 आयोग द्वारा उनसे पूछा गया कि क्या उन्हें मदनलाल के मामले में जिन पुलिस अधिकारियों को सूचना दी गई थी, उन्हें बुलाकर यह पूछना आवश्यक नहीं लगता कि वे क्या कर रहे हैं, तो उनका उत्तर था:
'ये वो दिन थे जब मंत्रीगण अभी-अभी आए थे। जहाँ तक मुझे याद है, मैंने इस मामले पर विशेष ध्यान देने का सुझाव देते हुए एक नोट तैयार किया होगा। मेरे पास वह रिकॉर्ड नहीं है, इसलिए मैं ठीक-ठीक नहीं कह सकता कि मैंने क्या लिखा था। लेकिन यह सही है कि हमने पुलिस की कार्यकुशलता पर भरोसा किया था, जो गलत साबित हुई।'
8.20 हत्या के मामले के बाद बम मामले की प्रगति का पता लगाने में जिस प्रकार पर्याप्त रुचि दिखाई गई, उस प्रकार बम मामले की प्रगति का पता लगाने में रुचि क्यों नहीं दिखाई गई, इस प्रश्न के उत्तर में बनर्जी ने कहा:
'मेरा आकलन यह है कि उन्होंने उस समय मामले को इतनी गंभीरता से नहीं लिया और उन्होंने जांच के प्रभारी उच्च पुलिस अधिकारियों

पर भरोसा किया और उन्हें लगा कि ऐसे उच्च पुलिस अधिकारी अपना कर्तव्य निभाएंगे।'
आयोग ने नागरवाला से पूछा:
प्रश्न: किसी को गिरफ्तार करने का आदेश देने का अधिकार मंत्री के पास क्या है?
उत्तर: यदि कोई मंत्री किसी विशेष व्यक्ति को गिरफ्तार करने का आदेश देता है और मैं मामले पर विचार करने के बाद यह समझता हूं कि परिस्थितियों के अनुसार यह एक उचित आदेश है, तो मैं बिना किसी संकोच के इसका पालन करूंगा।

कपूर आयोग की रिपोर्ट का अध्याय 9 गांधी जी पर हुए पिछले जानलेवा हमलों से संबंधित है। चूंकि मैंने इन पर पिछले अध्याय में चर्चा की है, इसलिए मैं यहां कुछ चुनिंदा अंशों को छोड़कर इन्हें दोहराऊंगा नहीं। पंचगनी हमले के संबंध में आयोग ने अग्रानी से एक अंश उद्धृत किया है: 9.29 (संक्षेप 52) 23 जुलाई 1944 के अग्रानी का एक अंश है। इसमें भी घटना का उल्लेख है, जो कि राजजी के 'शिवाजी की इस भूमि में पाकिस्तान के अधार्मिक फार्मूले' के खिलाफ हिंदुओं द्वारा आयोजित प्रदर्शन की है। आप्टे कहते हैं: 'गांधीजी, आपने पाकिस्तान फॉर्मूले पर सहमति देकर राष्ट्र को छुरा घोंपने का अपराध किया है। आप स्वयं स्वीकार कर चुके हैं कि आपको हिंदुओं की ओर से बोलने का कोई अधिकार नहीं है। आज हम हिंदू युवाओं की ओर से शांतिपूर्ण ढंग से अपना विरोध प्रदर्शन कर रहे हैं। कृपया ध्यान रखें कि यदि आप अपना व्यवहार नहीं बदलते हैं तो और भी कठिन परिस्थितियाँ और बदनामी आपका इंतजार कर रही हैं। हम उन गद्दारों को सबक सिखाएंगे जो हमारी मातृभूमि को टुकड़ों में बांटने की कोशिश करेंगे। इस बयान के माध्यम से हम राष्ट्रप्रेमी लोगों से गांधी-राजजी फॉर्मूले को इसी तरह से स्वीकार करने का आह्वान करते हैं।'
हालांकि कपूर आयोग ने निष्कर्ष निकाला कि पंचगनी में हुआ हमला जानलेवा नहीं था, बल्कि महज एक प्रदर्शन था, लेकिन इसी तरह का रुख गोडसे और आप्टे के उन लोगों के प्रति रवैये पर प्रकाश डालता है जिनके विचार उनसे भिन्न थे। यह बात लाल किला मुकदमे के दौरान बैज की जिरह में बताई गई थी। मुख्य बचाव पक्ष के वकील भोपटकर अदालत में मौजूद थे। न तो नाथुराम और न ही भोपटकर ने बैज की

कहानी को चुनौती दी। इससे यह माना जा सकता है कि बैज ने जो बताया वह सच था।
कपूर आयोग ने पुलिस की गवाहियों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला है कि पंचगनी और सेवाग्राम दोनों हमले मात्र विरोध प्रदर्शन थे, न कि हत्या के प्रयास। यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि उस समय पुलिस ब्रिटिश शासन के अधीन थी और भारतीयों द्वारा एक-दूसरे के साथ किए गए व्यवहार के प्रति शायद ही चिंतित होती। अगर कोई भारतीय गांधी की हत्या कर देता तो अंग्रेजों के लिए यह बहुत सुविधाजनक होता; वे एक उपद्रवी से छुटकारा पा लेते और उन पर कोई दोषारोपण नहीं होता।

अध्याय X में वर्धा हमले का वर्णन है और अध्याय XI में गांधी स्पेशल ट्रेन के पटरी से उतरने का। मैंने इस विषय पर एक अन्य अध्याय में चर्चा की है और कपूर आयोग की रिपोर्ट में भी यही बात कही गई है, इसलिए मैं इन अध्यायों पर दोबारा चर्चा नहीं करूंगा।
खंड II अध्याय XII में दिल्ली की स्थितियों का वर्णन है; 'भारत का विभाजन; विभाजन से पहले की घटनाएँ और विभाजन के बाद के परिणाम'। मैंने इस विषय पर पहले विस्तार से चर्चा की है, इसलिए मैं यहाँ केवल कुछ प्रासंगिक अंश ही प्रस्तुत करूँगा।
डॉ. सुशीला नायर को कपूर आयोग द्वारा बुलाया गया था; वह गवाह संख्या 53 थीं। उनका बयान इस प्रकार है:
12 ए.29 महात्मा गांधी की निजी चिकित्सक डॉ. सुशीला नायर (गवाह संख्या 53) ने उपवास से पहले और उसके दौरान की परिस्थितियों का वर्णन इस प्रकार किया है: महात्मा गांधी ने हिंसा के दोषी व्यक्तियों को दोषी ठहराया और बहुसंख्यक समुदाय को अल्पसंख्यकों के प्रति उचित व्यवहार करने की सलाह दी, जिससे शरणार्थियों में कुछ असंतोष उत्पन्न हुआ और उन्होंने बिड़ला हाउस के बाहर नारे लगाए। महात्मा गांधी ने उपवास इसलिए किया क्योंकि दोनों पक्षों द्वारा बातों को बढ़ा-चढ़ाकर पेश करने के कारण वातावरण अत्यधिक दमनकारी हो गया था और महात्मा गांधी चिंतित थे कि यहां अल्पसंख्यकों को उचित सुरक्षा प्रदान की जाए ताकि पाकिस्तान में भी अल्पसंख्यक सुरक्षित महसूस कर सकें। उन्होंने कहा कि जब तक भारत स्वयं उचित व्यवहार नहीं करता, तब तक वे पाकिस्तान से उचित व्यवहार करने के लिए नहीं कह सकते। 'बुराई को सोने के तराजू में नहीं तोला जाता।' आगे उन्होंने कहा: 'जब महात्मा जी ने उपवास किया, तो पहले दो-तीन दिनों तक

शरणार्थियों पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। इसके विपरीत, वे "गांधीजी को मरने दो, हमें घर दो" के नारे लगाने लगे।' लेकिन चार-पाँच दिन बाद जब गांधीजी का स्वास्थ्य बिगड़ने लगा तो दिल्ली के हिंदू और मुसलमान दोनों के मन में पूर्ण परिवर्तन आ गया। गांधीजी से अनशन तोड़ने की विनती करने के लिए लोगों की लंबी कतारें लगने लगीं; उनकी आँखों से आंसू बह रहे थे। वहाँ पुरुष, महिलाएं, हिंदू, मुसलमान, बुर्का पहनी मुस्लिम महिलाएं, शरणार्थी और गैर-शरणार्थी सभी मौजूद थे। इसका दिल्ली की पूरी जनता पर गहरा प्रभाव पड़ा।
12 ए.30 उन्होंने आगे बताया कि जब महात्मा गांधी ने अनशन किया, तब शरणार्थी गुस्से में थे। सुरक्षा उपायों के बारे में उन्होंने कहा कि बम धमाके के बाद बिरला हाउस के आसपास सादे कपड़ों में पुलिसकर्मियों की संख्या बढ़ा दी गई थी, लेकिन उन्हें यह नहीं पता था कि वे प्रार्थना सभाओं में भी शामिल होते थे या नहीं। एक पुलिसकर्मी ने कहा, 'एक बूढ़े आदमी की मौत से क्या फर्क पड़ता है? इतना हंगामा क्यों?' उन्होंने कहा कि सुरक्षा व्यवस्था के बारे में उनसे सलाह नहीं ली गई थी।
12 ए.56 उसी पुस्तक के पृष्ठ 685-686 पर, प्यारेलाल ने कहा है कि महात्मा गांधी चिड़चिड़े हो गए थे और वे इसे दबाने की कोशिश कर रहे थे। अचानक वे कहते थे, 'क्या तुम नहीं देखते? मैं अपनी अंतिम संस्कार की चिता पर बैठा हूँ?' कभी-कभी वे कहते थे, 'तुम्हें पता होना चाहिए कि यह एक शव है जो तुम्हें यह बता रहा है।'
12 ए.77 जे.एन. साहनी, एक जाने-माने पत्रकार, ने आगे बताया कि अलवर के प्रधानमंत्री डॉ. एन.बी. खरे जैसे लोग हिंसा भड़काने वाले भड़काऊ भाषण देते थे और पुणे के अन्य लोग भी इसी तरह के भाषण दे रहे थे। इनमें से अधिकतर मराठी अखबार थे। उन्होंने

संपादकों के सम्मेलन के सदस्य के रूप में यह जानकारी प्राप्त की। उन्होंने बताया कि कुछ पंजाबी अखबार भी इसी तरह की बातें लिख रहे थे और इन मामलों की जानकारी भी सम्मेलन को दी जाती थी। उन दिनों यह खुलेआम चर्चा में था कि लगभग छह लाख स्वयंसेवक एक गुप्त संगठन का हिस्सा थे जो तख्तापलट की साजिश रच रहे थे। इस संगठन की भारत के विभिन्न हिस्सों—पंजाब, दक्षिण भारत, महाराष्ट्र आदि में गुप्त इकाइयाँ थीं।
12 ए.85 साहनी का ध्यान तब पुस्तक के पृष्ठ 223 की ओर इस प्रकार आकर्षित किया गया:
प्रश्न: अब मैं आपका ध्यान मौलाना आजाद की पुस्तक, इंडिया विन्स फ्रीडम, पृष्ठ 223 की ओर आकर्षित करना चाहता हूँ, जिसमें उन्होंने कहा है कि जयप्रकाश नारायण ने सरदार पटेल पर आरोप लगाया था कि भारत सरकार के गृह मंत्री महात्मा गांधी की हत्या की जिम्मेदारी से बच नहीं सकते।
ए. मुझे ये शब्द ठीक से याद नहीं हैं। लेकिन मुझे याद है कि जिम्मेदार हलकों में यह भावना काफी प्रचलित थी कि सरकार इस त्रासदी को टालने के लिए उचित सावधानी न बरतने की जिम्मेदारी से बच नहीं सकती, खासकर बम कांड के बाद।
2 ए.92 अखिल भारतीय राज्य हिंदू महासभा की बैठक 29, 30 नवंबर और 1 दिसंबर 1947 को बंबई में हुई (प्रदर्श 275-ए)। वक्ताओं में अकाली नेता मास्टर तारा सिंह भी थे। उन्होंने एक जोशीला भाषण दिया जिसमें उन्होंने कहा कि पंजाब में मुसलमानों द्वारा सैकड़ों-हजारों सिखों का वध किया गया और फिर भी सरकार मुसलमानों के हितों की रक्षा कर रही है जबकि दिल्ली में हिंदू और सिख शरणार्थी ठंड से मर रहे हैं। गांधीजी को उनके लिए कोई सहानुभूति नहीं थी। उन्हें मुसलमानों की अधिक चिंता थी और वे

उनसे भारत न छोड़ने का अनुरोध कर रहे थे। उन्होंने कहा कि अंग्रेजों ने हिंदुओं और मुसलमानों के बीच चिरस्थायी शत्रुता को जन्म दिया था...जिन्ना ने कहा था कि जब तक इस्लाम रहेगा, वे एक भी सिख को पाकिस्तान में रहने नहीं देंगे। उन्होंने (मास्टर तारा सिंह ने) जवाब दिया कि जब तक हिंदू धर्म जीवित रहेगा, वे 'एक भी मुसलमान को जीवित नहीं रहने देंगे (जोरदार तालियाँ)'। उन्होंने कहा कि आजकल कई मुसलमान खुद को राष्ट्रवादी कहते हैं लेकिन कोई भी मुसलमान कभी हिंदू-प्रेमी नहीं हो सकता। वह दिल से हमेशा मुसलमान ही रहेगा, भले ही वह राष्ट्रवादी होने का दिखावा करे। उसने आगे कहा कि वे भारत में सभी धर्मों को रहने की अनुमति देंगे, लेकिन वे मुसलमानों द्वारा उनकी गर्दन काटे जाने को बर्दाश्त नहीं कर सकते। वह चाहता था कि सभी मुसलमानों को पाकिस्तान भेज दिया जाए।
12 ए.93 सावरकर (जो उस बैठक में भी उपस्थित थे) ने कांग्रेस में शामिल हो रहे मुसलमानों से उत्पन्न खतरे की ओर जनता का ध्यान आकर्षित किया। उन्होंने कहा, 'एक मुस्लिम लीग का सदस्य रातोंरात राष्ट्रवादी कैसे बन सकता है?' मुसलमान भारत में एक और पाकिस्तान बनाना चाहते थे। उन्होंने कहा कि राजाजी उनके अगले शत्रु हैं और हिंदुओं के प्रति कांग्रेस की दमनकारी नीति जनता के दिलों में 'हिंदुत्व' की भावना को जागृत करेगी।
अनुच्छेद 12 बी.10 'हिंदू मामले' शीर्षक के अंतर्गत यह उल्लेख किया गया था कि रूढ़िवादी हिंदू कांग्रेस की तुष्टीकरण नीति की आलोचना कर रहे थे। दिल्ली प्रांतीय हिंदू सभा के तत्वावधान में 27 तारीख को कनॉट प्लेस में आयोजित एक बैठक में वी.जी. देशपांडे, महंत दिग्विजय नाथ और प्रोफेसर राम सिंह ने कहा कि गांधीजी के रवैये ने पाकिस्तानियों को मजबूत किया है। उन्होंने भारत

सरकार की सांप्रदायिक नीति और गांधीजी द्वारा भारतीय मंत्रिमंडल को पाकिस्तान को 55 करोड़ रुपये देने के लिए मजबूर करने हेतु उठाए गए कदमों की आलोचना की। महंत दिग्विजय नाथ ने सभा में उपस्थित लोगों से महात्मा गांधी और अन्य हिंदू विरोधी तत्वों को देश से बाहर निकालने का आह्वान किया। प्रोफेसर राम सिंह ने भी गांधीजी की नीति का विरोध किया।
12 सी.7 जयप्रकाश नारायण, डॉ. राम मनोहर लोहिया और श्रीमती कमलादेवी चट्टोपाध्याय जैसे कुछ समाजवादी नेताओं ने एक प्रेस कॉन्फ्रेंस में बयान जारी कर कहा कि 'हत्यारा कोई एक व्यक्ति नहीं था, बल्कि इसके पीछे एक व्यापक षड्यंत्र और संगठन था।' उन्होंने महात्मा गांधी की हत्या के लिए हिंदू महासभा, आरएसएस, मुस्लिम लीग और ऐसे ही अन्य संगठनों को दोषी ठहराया। उन्होंने सरकार पर महात्मा गांधी को 'छिपे हुए हत्यारे' से बचाने में विफल रहने का आरोप लगाया। उन्होंने सरकार के पुनर्गठन की मांग की और कहा कि गृह मंत्रालय ऐसे व्यक्ति को सौंपा जाना चाहिए जिसके पास कोई अन्य पोर्टफोलियो न हो और जो सांप्रदायिक नफरत फैलाने वाले संगठनों और पंथों पर अंकुश लगा सके। पुनर्गठित सरकार में सांप्रदायिक तत्वों के लिए कोई जगह नहीं होनी चाहिए और विशेष रूप से गृह मंत्री को सरकारी सेवाओं को सभी सांप्रदायिक तत्वों से मुक्त करने और कर्मचारियों को राष्ट्रीय नागरिकता की शिक्षा देने के कार्यक्रम को तेजी से आगे बढ़ाना चाहिए।
12 सी.19 इसके अलावा, पुलिस गवाहों का यह साक्ष्य कि पूना से बॉम्बे प्रांतीय पुलिस को बुलाया जाना चाहिए था, सामान्य ज्ञान पर आधारित है और आयोग का यह मत है कि ऐसा भी किया जाना चाहिए था,

हालांकि डी.डब्ल्यू. मेहरा, गवाह संख्या 23 और यू.एच. राणा, गवाह संख्या 3, दोनों डी.आई.जी. के अनुसार, यह अप्रभावी होता।
12 सी.22 यह कहना उचित होगा कि विभाजन के बाद से लेकर अनशन किए जाने तक दिल्ली की स्थिति अत्यंत अशांत और चिंताजनक थी। पुराने शहर में हिंदू-मुस्लिम दंगे हुए और शहर के आसपास के इलाकों में भी अशांति फैली रही। गवाह संख्या 10, वी. शंकर के अनुसार, जिला मजिस्ट्रेट का अधिकांश समय कानून-व्यवस्था की समस्याओं में ही व्यतीत होता था, और तत्कालीन जिला मजिस्ट्रेट एम.एस. रंधावा ने भी राजधानी की स्थिति के इस पहलू पर जोर दिया है।
इसके बाद आयोग ने उन प्रमुख गवाहों से पूछताछ की जो बम विस्फोट और गांधी की हत्या के समय गृह मंत्रालय से जुड़े हुए थे। इन गवाहों में पटेल के निजी सचिव वी. शंकर (आईसीएस), गृह मंत्रालय के सचिव आर.एन. बनर्जी (आईसीएस) और पटेल की पुत्री सांसद सुश्री मणिबेन पटेल शामिल थीं।
12 डी.2 वी. शंकर, गवाह संख्या 10 ने बताया कि खुफिया रिपोर्टों के साथ-साथ बॉम्बे के प्रधानमंत्री और गृह मंत्री के बीच हुई चर्चाओं से सरदार को पता था कि 'महात्मा गांधी की हत्या की साजिश रची जा रही है और शायद उस आंदोलन का केंद्र पुणे में है', लेकिन गवाह को उस सूचना देने वाले किसी विशेष व्यक्ति के बारे में जानकारी नहीं थी। उस समय अस्पष्ट अफवाहें और संदेह थे, लेकिन बम कांड पहला ठोस सबूत था जिसके आधार पर कार्रवाई की जा सकी।
12D.5 सामान्य निर्देश यह थे कि संदिग्धों पर विशेष रूप से कड़ी निगरानी रखी जाए और पहला ठोस सबूत जिसके आधार पर कोई प्रभावी कार्रवाई की जा सकती थी, मदनलाल का इकबालिया बयान था। इससे पहले केवल अफवाहें थीं। सरदार, खेर और मोरारजी देसाई को

पता था कि साजिश रची जा रही है, लेकिन यह नहीं पता था कि इसमें कौन-कौन शामिल है। यहां तक कि एन.सी. केलकर जैसे व्यक्ति का भी नाम सामने आ रहा था।
12D.12 शंकर से इस आयोग ने 10 अप्रैल, 1967 को पूछताछ की थी। उन्हें बालुकाका कनितकर के माध्यम से केतकर द्वारा सूचना दिए जाने के बारे में कुछ भी पता नहीं था, लेकिन पुणे में 'केसरी स्कूल' नामक एक शत्रुतापूर्ण शिविर के अस्तित्व की जानकारी थी, जो गांधी के विरुद्ध था और सावरकर इसके प्रेरणास्रोत थे। लेकिन उनकी गतिविधियों पर बॉम्बे स्पेशल ब्रांच की नज़र थी, जो ब्रिटिश काल से ही राजनीतिक मामलों से निपटती थी और यह कोई साधारण सी.आई.डी. नहीं थी। गवाह ने कहा कि सरदार ने 25 जनवरी को मदनलाल द्वारा दिया गया बयान अवश्य देखा होगा। इससे पहले भी, मदनलाल द्वारा समय-समय पर दिए गए बयानों का सार डी.आई.बी. द्वारा उन्हें बताया जाता था और गवाह को स्पष्ट रूप से याद है कि सरदार ने मदनलाल द्वारा उल्लिखित व्यक्तियों पर नज़र रखने का आदेश दिया था।
12 डी.17 आर.एन. बैनर्जी, आईसीएस (सेवानिवृत्त) उस समय केंद्रीय सरकार के गृह सचिव थे, जिनकी परीक्षा पाठक ने 22 जनवरी 1966 को ली थी।
12D.18 ... इसके अलावा बैठक में (31 जनवरी, 1948 की शाम को) सभी लोग पुलिस की निष्क्रियता से निराश थे और बैनर्जी ने के.एल. पंजाबी द्वारा लिखित पुस्तक 'द सिविल सर्वेंट्स इन इंडिया' में एक लेख में अपना पक्ष रखा, जिसमें उन्होंने निम्नलिखित बातें कही थीं:
फिर भी सचिवालय प्रशासन में काफी हद तक अस्थायी विघटन हुआ। दिल्ली प्रांत (जिसकी स्थापना 1912 में हुई थी और तब से इसमें

कभी भी पूर्णकालिक पुलिस महानिरीक्षक नहीं रहा) में पुलिस बल अव्यवस्थित और कमजोर हो गया; और एक ओर मुख्य आयुक्त और गृह विभाग तथा दूसरी ओर जिला प्रशासन के बीच न्यूनतम समन्वय बनाए रखना भी मुश्किल हो गया। 30 जनवरी 1948 को महात्मा गांधी की हत्या आंशिक रूप से इसी अव्यवस्थित स्थिति का परिणाम थी। दाह संस्कार के बाद 31 जनवरी की शाम को सरदार पटेल के आवास पर एक बैठक हुई और पहली बार यह खुलासा हुआ कि 21 जनवरी की सुबह तक दिल्ली पुलिस के पास मदनलाल (जिसने 20 जनवरी की शाम को बिड़ला हाउस में महात्मा गांधी की प्रार्थना सभा में हैंडग्रेनेड विस्फोट किया था और रात भर पुलिस के सामने कबूलनामा किया था) का बयान था, जिसमें साजिश का पूरा ब्यौरा दिया गया था। दिल्ली पुलिस ने एक मामले में अपना काम किया, वह यह कि उन्होंने मदनलाल का बयान 21 जनवरी की शाम को बॉम्बे पुलिस को भेज दिया, लेकिन कागजात बॉम्बे पुलिस के पास ही रहे। गोडसे और आप्टे दोनों को 23 तारीख को बॉम्बे में उनके दो ठिकानों में से किसी एक पर पकड़ा जा सकता था। दुर्भाग्य से मदनलाल के इस बयान पर किसी ने कोई कार्रवाई नहीं की और दिल्ली पुलिस ने बॉम्बे पुलिस को इसकी याद तक नहीं दिलाई। दिल्ली मजिस्ट्रेट और गृह सचिवालय को भी इस बयान की जानकारी नहीं थी (क्योंकि दिल्ली पुलिस प्रमुख ने उन्हें कभी सूचित नहीं किया)।
12 डी.22 यह पूछे जाने पर कि अगर जुलाई 1947 में ही बॉम्बे सरकार को यह सूचना दी गई होती कि गांधी के जीवन को खतरा है, तो क्या किया जाना चाहिए था, बैनर्जी ने कहा कि सरकार को उन व्यक्तियों को निगरानी में रखने का आदेश देना चाहिए था और दिल्ली पुलिस को भी सूचित करना चाहिए था।

12D.32 आरएसएस के संबंध में गवाह ने शिकायत की कि जब आरएसएस पर प्रतिबंध लगाने के संबंध में निर्णय लिए गए, तो खबर लीक हो गई और अगली सुबह प्रेस में छपी और इस प्रकार आरएसएस के प्रमुख कार्यकर्ता 1 फरवरी की सुबह तड़के ही भूमिगत हो गए... महात्मा गांधी के मामले में मंत्री और सचिवालय ने पुलिस और मजिस्ट्रेट को निर्देश जारी करना शुरू कर दिया क्योंकि उन्हें एहसास हुआ कि पुलिस ने ठीक से काम नहीं किया था।
12 डी.37 अगला गवाह जिसकी गवाही भारत सरकार के संबंध में प्रासंगिक है, वह सरदार पटेल की बेटी सुश्री मणिबेन पटेल हैं, गवाह संख्या 79।
12D.44 .... 'हम जानते थे कि महात्मा गांधी का जीवन खतरे में था और मानवीय दृष्टि से जो भी सावधानी बरती जा सकती थी, वह बरती गई। लेकिन मैं इतना कह सकता हूँ कि मुझे इस बात का बिल्कुल भी अंदाजा नहीं था कि महात्मा गांधी की हत्या की साजिश रची जा रही थी। उस समय कम से कम मुझे यही लगा था कि महात्मा गांधी के जीवन को खतरा मुसलमानों से होने की अधिक संभावना थी....'
12D.45 .... पुणे या अहमदनगर में महात्मा गांधी के खिलाफ हिंसा की आशंका जताने वाली घटनाओं और भाषणों के बारे में उन्हें कुछ भी पता नहीं था। उन्हें याद था कि हत्या से दो हफ्ते पहले पुणे के एक अखबार के संपादक, जिनके अखबार से सुरक्षा राशि मांगी गई थी, सुबह 5 बजे उनके पिता से मिलने आए थे, लेकिन उस समय अंधेरा होने के कारण वे उन्हें पहचान नहीं पाईं। लेकिन उन्हें याद था कि उन्होंने अपने अखबार से सुरक्षा राशि की मांग के बारे में बात की थी। उन्होंने शिकायत की थी कि मोरारजी देसाई ने उनके साथ अन्याय किया है। (यह नाथूराम गोडसे ही होना चाहिए क्योंकि उनका अखबार ही एकमात्र ऐसा अखबार था जिससे सुरक्षा राशि मांगी गई थी

और अदालत में भी जब मोरारजी देसाई गवाह के रूप में पेश हुए थे, तब नाथूराम ने उन पर गुस्से से चिल्लाते हुए आरोप लगाया था कि देसाई ने बदले की भावना से उन्हें परेशान किया है। इसका मतलब है कि बम हमले से कुछ ही दिन पहले नाथूराम गोडसे केंद्रीय गृह मंत्री सरदार वल्लभभाई पटेल से मिले थे।)
12D.46 महात्मा गांधी की हत्या से पहले उनके पिता उनसे मिलने गए थे। वह भी उनके साथ गई थीं। उन्होंने कई विषयों पर बातचीत की, लेकिन उन्होंने प्रार्थना सभाओं में आने वाले लोगों की तलाशी का मुद्दा नहीं उठाया। घर लौटने के तुरंत बाद बृज किशन चांदीवाला ने उन्हें हत्या की खबर दी।
12D.48 उसने आगे बताया कि जयप्रकाश नारायण द्वारा आयोजित एक सभा में उसके पिता पर सार्वजनिक रूप से हत्या का आरोप लगाया गया था। मौलाना आजाद भी उस सभा में उपस्थित थे, लेकिन उन्होंने कोई विरोध नहीं किया, जिससे उसके पिता को गहरा सदमा लगा।
12D.49 ... उसे याद नहीं था कि हत्या के बाद उसके पिता और बालासाहेब खेर के बीच महात्मा गांधी के जीवन को खतरे के बारे में पहले से मिली जानकारी के बारे में कोई बातचीत हुई थी या नहीं।
'प्र. क्या आपको याद है कि बालासाहेब खेर ने कभी आपके पिता से इस बात का जिक्र किया था कि उनके मन में यह बात खटक रही थी कि उन्हें पहले दी गई कुछ जानकारी पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया गया था?'
ए. मैं निश्चित रूप से कह सकता हूँ कि ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। बालासाहेब ने न तो स्वयं को लापरवाही का दोषी माना और न ही मेरे पिता पर कोई आरोप लगाया गया। मैं बालासाहेब को अच्छी तरह जानता

था और उन्होंने महात्माजी के जीवन को खतरे की सूचना को संभालने के मामले में कभी भी स्वयं को लापरवाही का दोषी नहीं ठहराया। 12D.53 ... उन्होंने इस आरोप को सरासर झूठा बताया कि उनके पिता महात्मा गांधी को पद से हटाने के प्रयासों के कारण उनकी रक्षा नहीं कर रहे थे। दूसरी ओर, उन्होंने कहा कि उनके पिता मंत्रिमंडल में बने रहना नहीं चाहते थे और उन्होंने महात्मा गांधी को अपना इस्तीफा भेज दिया था। वास्तव में, गांधीजी ने राज्य की प्रतिष्ठा बनाए रखने के लिए बिड़ला हाउस में पुलिसकर्मियों की उपस्थिति का विरोध किया था।
12D.54. गांधीजी ने (प्रार्थना के बाद) एक भाषण दिया, जो 25 जनवरी 1948 के हरिजन में प्रकाशित हुआ था। उसमें उन्होंने कहा था: 'मुझे आश्चर्य है कि मेरे इस कथन की पृष्ठभूमि को जानते हुए भी कोई मेरे उपवास को पुलिस या गृह मंत्रालय की निंदा कहने का साहस करेगा। यदि ऐसा कोई व्यक्ति है, तो मैं उससे केवल इतना ही कह सकता हूँ कि वह स्वयं को अपमानित और चोट पहुँचाएगा, सरदार या मुझे कभी नहीं...।'
12D.56 .... सरदार ने कहा कि ब्रजकिशन और अरुणा भी उसे हटाने की साजिश में शामिल थे और जयप्रकाश ने बंबई और सूरत में उस पर हमला करना शुरू कर दिया था।
12D.57. अगले दिन यानी 5 मार्च को सरदार पटेल को दिल का दौरा पड़ा। उस दिन शाम 4 बजे उन्होंने सुशीला नायर से कहा कि उन्हें गांधीजी के साथ जाना है जो अकेले आगे चले गए थे।
12D.58 डायरी से पता चलता है कि सरदार कह रहा था कि उसे मरना होगा और गांधी के पास जाना होगा।

12D.62 2 फरवरी, 1948 को संजीवी ने सरदार पटेल को चेतावनी दी कि उन्हें सुबह टहलने के लिए बाहर नहीं जाना चाहिए क्योंकि इससे उनके और पंडितजी के जीवन को खतरा है।
12D.63 3 फरवरी, 1948 को एक व्यक्ति अपनी बेटी के साथ आया, जो टेलीफोन कार्यालय में कार्यरत थी। बेटी ने अलवर का एक नंबर दिया और टेलीफोन पर सुनी हुई बात दोहराई। संजीवी को बुलाया गया और उनसे अलवर में इस मामले की जांच करने को कहा गया। (दुर्भाग्यवश, बेटी ने क्या सुना, इसका कोई उल्लेख नहीं है।) 12 ई.2 जाहिर तौर पर केंद्रीय सरकार के गृह सचिव, जो कानून और व्यवस्था तथा सुरक्षा के संबंध में प्रशासन के मान्यता प्राप्त केंद्र रहे हैं, को अनभिज्ञ रखा गया था और ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह पता चले कि अपराध की गंभीरता के बारे में उन्हें सूचित किया गया था या उन्होंने स्वयं को जांच की प्रगति या दिल्ली पुलिस क्या कर रही थी या गृह मंत्री या उनके निजी सचिवालय को क्या जानकारी मिल रही थी, इसकी जानकारी रखी थी।
12 ई.6 मोरारजी देसाई ने यह भी कहा कि महात्मा गांधी को आरएसएस और हिंदू महासभा से खतरा था। उन्होंने इस मामले को इस प्रकार रखा:
'मैं निश्चित रूप से यह नहीं कह सकता कि महात्मा गांधी को नुकसान पहुंचाने वाले लोग कौन होंगे। लेकिन मेरे पास जो जानकारी है, उसके आधार पर मैं कह सकता हूं कि वे या तो शरणार्थी होंगे या आरएसएस और हिंदू महासभा के सदस्य, लेकिन जरूरी नहीं कि पुणे से ही हों। यह भी संभव है कि वे मुस्लिम कट्टरपंथी हों और इस तरह के लोग पूरे देश में फैले हुए थे और वे मुंबई की तुलना में उत्तर भारत में अधिक थे।'

12 ई.7 खदिलकर, गवाह संख्या 97, ने कहा कि महात्मा गांधी को हिंदू राष्ट्र दल से खतरा था। वी. शंकर के अनुसार, सरदार पटेल आरएसएस से महात्मा गांधी को होने वाले खतरे से अवगत थे।
12E.8 वी. शंकर, गवाह संख्या 10, ने कहा है: 'मेरी धारणा यह है कि पुणे में एक शत्रुतापूर्ण शिविर के अस्तित्व की जानकारी थी, जिसे उस समय गांधीजी के विरुद्ध केसरी विचारधारा के रूप में जाना जाता था और डॉ. सावरकर इस विचारधारा के प्रेरक थे और जहाँ तक मुझे पता है, उनकी गतिविधियों पर बॉम्बे स्पेशल ब्रांच द्वारा कड़ी निगरानी रखी जाती थी', जिससे यह पता चलता है कि पुणे की विचारधारा गांधीजी के विरुद्ध थी और संभावित खतरे का स्रोत थी। जे.एन. साहनी, गवाह संख्या 95, के अनुसार, दिल्ली में दो विचारधाराएँ थीं, एक सांप्रदायिक संगठनों पर प्रतिबंध लगाने के पक्ष में और दूसरी उनके विरुद्ध। बी.बी.एस. जेटली, गवाह संख्या 55, को 14 जनवरी 1969 को दोबारा बुलाए जाने पर उन्होंने बताया कि स्वतंत्रता के कुछ महीनों बाद आरएसएस के खिलाफ 600 से 700 मामलों की सूची थी, जिन पर हथियार जमा करने, गांवों पर हमला करने और व्यक्तियों पर हमला करने का आरोप था, और उन्होंने आरएसएस पर प्रतिबंध लगाने की सिफारिश की। वे वास्तव में सी.आई.डी. से मिलने गए थे। लखनऊ में मुख्यमंत्री गोविंद वल्लभ पंत (जो उस समय उत्तर प्रदेश के प्रधानमंत्री थे) और गृह मंत्री लाल बहादुर शास्त्री से मुलाकात की और उन्हें आरएसएस पर प्रतिबंध लगाने की सिफारिश की। वे उनसे सहमत तो हुए, लेकिन कहा कि उन्हें सरदार पटेल से परामर्श करना होगा। इस संगठन पर प्रतिबंध लगा दिया गया, लेकिन एक हत्या के बाद। उन्होंने यह भी कहा कि आरएसएस पर प्रतिबंध लगाना मुश्किल था क्योंकि मुसलमान

पहले से ही इसके खिलाफ थे और वे नहीं चाहते थे कि हिंदुओं का एक वर्ग भी इसके खिलाफ हो जाए।
12E.9 डॉ. सुशीला नायर, गवाह संख्या 53, ने आरएसएस के संबंध में महात्मा गांधी की प्रतिक्रिया इस प्रकार दी है। जब उन्होंने महात्मा गांधी के समक्ष रावलपिंडी के पास स्थित एक शरणार्थी शिविर, वाह में आरएसएस स्वयंसेवकों के कार्यों की प्रशंसा की, तो उन्होंने कहा कि वह उन्हें नहीं जानतीं। वे काले कमीजों, फासीवादियों और नाजियों जैसे हैं।
12 ई.12 राजजी ने भारतीय विद्या भवन द्वारा प्रकाशित अपनी पुस्तक 'गांधीजी की शिक्षाएं और दर्शन' के पृष्ठ 20-22 पर निम्नलिखित लिखा है: 'जब 30 जनवरी 1948 को गोडसे ने गांधीजी की हत्या कर दी, तो सरदार वल्लभभाई पटेल को लगा कि गांधीजी की हत्या की साजिश उनके प्रति हिंदुओं के उस आक्रोश के कारण रची गई थी, जो पाकिस्तान सरकार को भारी धनराशि देने की उनकी सलाह के कारण उत्पन्न हुआ था, जब वह हमारे विरुद्ध एक क्रूर सैन्य अभियान चला रही थी। उस समय शत्रु की पचास करोड़ (वास्तव में 55 करोड़ रुपये) रुपये से सहायता करना हमारी मूर्खता थी, जिसे अक्षम्य माना गया और गांधीजी विरोधी महाराष्ट्र के छोटे उग्रवादी समूह ने इसे राष्ट्र के प्रति गांधीजी की घोर निंदा समझा और इस 'मूर्ख संत' का अंत करने का निश्चय किया, जिससे राष्ट्र अन्यथा छुटकारा नहीं पा सकता था।' उसका प्रभाव इतना अधिक था और लोग इतनी मूर्खतापूर्वक उसकी पूजा करते थे और उसकी आज्ञा का पालन करते थे कि सरदार के अनुसार, इन षड्यंत्रकारियों ने सोचा कि हत्या के अलावा कोई और रास्ता नहीं बचा है।
इस हत्या के बाद पटेल लगातार इस बात पर ज़ोर देते रहे कि गांधी जी द्वारा पाकिस्तान को भुगतान करने की ज़िद ही उनकी हत्या का

मुख्य कारण थी। पटेल शायद यह भूल गए थे कि अविभाजित भारत की संयुक्त राजधानी को भारत और पाकिस्तान द्वारा साझा किए जाने वाले समझौते पर उन्होंने और नेहरू ने हस्ताक्षर किए थे। अपने अधीन पुलिस विभाग की अक्षम्य अक्षमता के चलते पटेल को निराधार आरोप लगाकर ध्यान भटकाकर वास्तविक मुद्दे को धुंधला करने के लिए मजबूर होना पड़ा। गांधी जी का अंतिम उपवास पाकिस्तान को भुगतान के लिए नहीं था; यदि ऐसा होता तो भारतीय मंत्रिमंडल द्वारा भुगतान की घोषणा के बाद भी वे चार दिन और उपवास जारी नहीं रखते। गांधी जी ने उत्तर-पश्चिमी भारत और दिल्ली में शांति स्थापित करने के लिए उपवास किया था।
12 ई.16 अगले गवाह संख्या 18, एम.एस. रंधावा, जो हत्या के समय दिल्ली के उपायुक्त थे, की गवाही ली गई। उन्होंने बताया कि सितंबर 1947 से 20 जनवरी 1948 तक उन्हें कभी यह जानकारी नहीं हुई कि गांधी जी की जान को खतरा है। यहां तक कि वे उन्हें बिना किसी विशेष सावधानी के एक गांव में पंचायत घर का उद्घाटन कराने भी ले गए थे।
12E.18 रंधावा ने अपने स्पष्टीकरण पत्र, प्रदर्श 140(7) दिनांक 7 फरवरी 1948 का हवाला दिया, जिसमें उन्होंने बताया कि उन्होंने 24 जनवरी 1948 को अधिवक्ता मेहता पूरन चंद को मदनलाल से मिलने की अनुमति क्यों दी। उन्होंने आगे कहा, 'मुझे नई दिल्ली के पुलिस अधीक्षक की एक गंभीर चूक का उल्लेख करना होगा कि उन्होंने मुझे इस मामले की जांच की प्रगति से अवगत नहीं कराया और मुझे उनसे एक भी रिपोर्ट नहीं मिली जिससे यह संकेत मिलता कि आरोपी मदनलाल महात्मा गांधी की हत्या की साजिश में शामिल था।' बम कांड के संबंध में एक विशेष रिपोर्ट 26 जनवरी को साइक्लोस्टाइल की गई और उसकी एक प्रति 27 जनवरी को उनके

कार्यालय भेजी गई। 'मुझे यह आभास था कि मदनलाल ने महात्मा गांधी के विचारों के विरोध में ही पटाखा या बम फोड़ा था और वह हत्या की साजिश में शामिल नहीं था...' उनके इस स्पष्टीकरण को गृह मंत्रालय ने स्वीकार नहीं किया और इसे 'स्पष्ट रूप से असंतोषजनक' बताया। यहां एक और दिलचस्प चूक है। मदनलाल, जो गांधी की हत्या की साजिश का एकमात्र सुराग था और जिससे दिल्ली पुलिस पूछताछ कर रही थी, उसे पुलिस हिरासत में रहते हुए एक वकील से बात करने की अनुमति दी गई। वह व्यक्ति मोहरा हो सकता था और साजिश में शामिल अन्य लोगों को बचाने के लिए मदनलाल की हत्या कर सकता था। वह मदनलाल को पुलिस को गुमराह करने वाली जानकारी देने के लिए निर्देश भी दे सकता था।
12E.20 जब उनसे पूछा गया कि अगर उन्हें इस षड्यंत्र के बारे में पता होता तो वे क्या करते, तो उन्होंने कहा कि वे गृह मंत्री के पास जाते और आपातकालीन समिति की बैठक बुलाकर उचित कार्रवाई करने के उपाय निकालते। उन्हें पुलिस अधीक्षक की विशेष रिपोर्ट (Ex. 84) की एक प्रति दिखाई गई, लेकिन उन्होंने कहा कि उन्हें याद नहीं है कि उन्होंने इसे पढ़ा था या नहीं, और न ही यह कि यह उन तक पहुंची थी या नहीं।
12 ई.23 उन्होंने आगे कहा, 'मैं प्रार्थना सभाओं को रोक देता चाहे महात्मा गांधी को पसंद हो या न हो, क्योंकि उनका जीवन बहुत महत्वपूर्ण था और मैं व्यक्तिगत रूप से एक नेता के रूप में उनका बहुत सम्मान करता था।'
उन्होंने आगे बताया कि उन्होंने एम.ए. जिन्ना और मुस्लिम लीग के अन्य नेताओं की जान बचाई थी जब खाकसारों ने इंपीरियल होटल में उन पर हमला किया था। यह संभवतः मई 1946 की बात है। उन्होंने यह

भी कहा, 'मैं प्रार्थना सभाओं में आने वाले लोगों को नियंत्रित करता था।'
12F.1 बृज कृष्ण चांदीवाला, गवाह संख्या 11, ने बताया कि शरणार्थी गुस्से में थे। एक बार उन्होंने गांधीजी के सामने ही उन्हें अपशब्द कहे। एक अन्य अवसर पर एक जुलूस बिरला हाउस के सामने 'खून का बदला खून से लेंगे' के नारे लगाते हुए आया। जब गांधीजी ने अपना उपवास तोड़ा, तो लोगों के मन और हृदय शुद्ध नहीं थे, और इसीलिए 20 जनवरी 1948 को उनकी प्रार्थना समाप्त होने के बाद एक जोरदार धमाके के साथ एक हैंडग्रेनेड फटा और गांधीजी बाल-बाल बच गए। इस घटना के बाद गिरफ्तारियां हुईं। लगभग 2 या 3 लोगों को गिरफ्तार किया गया। उस दिन से हम बहुत सतर्क हो गए और गांधीजी की विशेष देखभाल करने लगे। तीन-चार दिन बाद एक पुलिस अधिकारी मुझसे मिलने आया और उसने बताया कि 20 तारीख की घटना गांधीजी की हत्या की साजिश थी और इसमें शामिल 9 लोगों के नाम हमें पता चले हैं... मुझे लगा कि पुलिस तुरंत उन लोगों को गिरफ्तार कर लेगी और डरने की कोई वजह नहीं बची थी। गांधीजी की भी यही राय थी कि यह उनकी हत्या की साजिश थी। उन्होंने आगे कहा कि वे कल्पना भी नहीं कर सकते थे कि साजिश की जानकारी होने के बावजूद पुलिस इतनी लापरवाह हो सकती है कि गांधीजी की हत्या कर दी जाए। 'जब हमें पता चला कि पुलिस मामले की जांच कर रही है, तो हमने कुछ नहीं किया।'
12F.4 उन्हें कभी संदेह नहीं हुआ कि पुणे के लोग किसी प्रकार का अत्याचार करेंगे। उन्हें अन्य व्यक्तियों पर संदेह था। यद्यपि चंडीवाला को पता चल गया था कि मदनलाल ने बम फेंका था, फिर भी उसने यह पता लगाने की कोशिश नहीं की कि इस अपराध के पीछे कौन था।

12F.8 डॉ. सुशीला नायर, गवाह संख्या 53, से इसके बाद पूछताछ की गई। उन्होंने बताया कि आश्रम (बापू के दल) में किसी को भी यह कल्पना करने की हिम्मत नहीं थी कि कोई महात्मा गांधी को नुकसान पहुंचा सकता है। उनका मानना था कि जब तक ईश्वर चाहता है कि महात्मा गांधी देश की सेवा करें, वे करते रहेंगे। ऐसी अफवाहें थीं कि महात्मा गांधी की जान को खतरा हो सकता है और इसीलिए बिरला हाउस में सादे कपड़ों में सुरक्षाकर्मी तैनात किए गए थे और सादे कपड़ों में पुलिसकर्मियों को महात्मा गांधी की नजरों से बचने के लिए झाड़ियों के पीछे छिपना पड़ता था।
12F.12 प्यारेलाल, गवाह संख्या 54 ने कहा, 'जब महात्मा गांधी को बम के बारे में पता चला तो उन्होंने तुरंत कहा कि उनकी हत्या की साजिश रची जा रही है।' इससे पहले उन्हें लगा था कि यह सिर्फ एक सैन्य अभ्यास है।
12F.14 वह जानता था कि मदनलाल को गिरफ्तार कर लिया गया है और गांधीजी ने कहा था कि उसे (मदनलाल को) परेशान नहीं किया जाना चाहिए।
12F.15 महात्माजी को पूरा विश्वास था कि कोई षड्यंत्र रचा गया है, लेकिन उन्हें उसकी सीमा या प्रकृति का ज्ञान नहीं था। गवाह पुलिस द्वारा मदनलाल द्वारा उल्लिखित लोगों का समय पर पता लगाने में विफलता को कभी भी स्वीकार नहीं कर पाया था। या तो यह अक्षमता थी या इच्छाशक्ति की कमी।
गांधी जी के बेहद करीबी लोगों की ये तीन गवाहियाँ एक और चूक को उजागर करती हैं जिसने उनके हत्यारे को आसानी से अपना काम करने में मदद की। इस बार सबसे भरोसेमंद लोगों ने ही उन्हें धोखा दिया। गांधी जी के साथ रहने वाले या व्यवस्थाओं के प्रभारी लोगों की गवाही के अनुसार, जब भी वे प्रार्थना सभा में जाते थे,

स्वयंसेवकों की एक श्रृंखला उन्हें घेरे रहती थी। मजबूत आश्रमवासी और स्वयंसेवक उनके आगे चलकर रास्ता बनाते थे, बाकी लोग उनके चारों ओर एक अभेद्य घेरा बना लेते थे ताकि उन्हें छूने और उनका आशीर्वाद प्राप्त करने की उत्सुक भीड़ उनके रास्ते में बाधा न डाले या उन्हें ठोकर न पहुँचाए। बम हमले के बाद, आश्रमवासियों और स्वयंसेवकों ने इस व्यवस्था को इतना कम कर दिया कि केवल चंदीवाला और गुरदयाल सिंह ही गांधी जी के आगे चलकर रास्ता बनाते थे। उस दुर्भाग्यपूर्ण दिन, चंदीवाला और गुरदयाल सिंह दोनों ही ऐसा नहीं कर रहे थे। नाथूराम गोडसे बिना किसी परेशानी के बापू के करीब पहुँच गया और तीन फीट से भी कम दूरी से उन्हें गोली मार दी। इस बात का कभी संतोषजनक जवाब नहीं मिला कि एक ऐसी प्रथा को अचानक क्यों बंद कर दिया गया, जिस पर स्वयं महात्मा गांधी ने भी कोई आपत्ति नहीं जताई थी।
अगली गवाह गांधीजी के भाई की पोती मनुबेन गांधी थीं। मनुबेन उन लड़कियों में से एक थीं जिन्हें गांधीजी की 'सहारा' के रूप में जाना जाता था, और महात्मा गांधी की हत्या के समय वे उनके सबसे करीबी लोगों में से एक थीं। एक रोचक किस्सा है। जब कपूर आयोग ने मनुबेन को तलब किया, तो मोरारजी देसाई ने उन्हें बुलाया और कहा — 'मनु, आपको आयोग को सिर्फ इतना बताना है कि गांधीजी की हत्या के समय आप बहुत छोटी थीं और तब से बहुत समय बीत चुका है, इसलिए आपको कुछ याद नहीं है।' मनुबेन ने जवाब दिया, 'मैं गांधीजी की बेटी हूं और मुझे सच बोलना सिखाया गया है और मैं सिर्फ सच ही बोलूंगी।' यह घटना मुझे (लेखक को) हाल ही में एक ऐसे व्यक्ति ने सुनाई जो उस समय कमरे में मौजूद था जब मोरारजी देसाई मनुबेन से बात कर रहे थे।

12F.16 मनुबेन गांधी, गवाह संख्या 99, ने कहा कि बम हमले के बाद तक उन्हें महात्मा के जीवन को खतरे के बारे में कोई जानकारी नहीं थी।
12F.17 बम धमाके के बाद महात्मा गांधी के दल के सदस्यों को लगभग दो-तीन दिन तक खतरा महसूस हुआ, लेकिन उसके बाद सब ठीक हो गया। महात्मा गांधी विशेष सुरक्षा के लिए सहमत नहीं हुए और उन्होंने सरदार को संतुष्ट करने के लिए ही गार्ड तैनात करने की अनुमति दी। वे ईश्वर की सुरक्षा में विश्वास रखते थे। उन्होंने यह भी बताया कि आगंतुकों की तलाशी पर महात्मा जी की प्रतिक्रिया यह थी कि वे इसकी अनुमति देने के बजाय मरना पसंद करते।
12F. 18 यह साक्ष्य यह नहीं दर्शाता कि बिरला हाउस के निवासी और महात्मा गांधी के आसपास रहने वाले लोग उनके जीवन को होने वाले खतरे के प्रति इतने सचेत थे कि उनमें से एक को यह भी नहीं पता था कि मदनलाल को गिरफ्तार किया गया था या नहीं, या एक व्यक्ति को गिरफ्तार किया गया था या एक से अधिक व्यक्तियों को, और उन्हें कभी पता नहीं चला कि उन्होंने कोई बयान दिया था या क्या बयान दिया था। जहाँ तक उनका संबंध था, उन्होंने महात्मा गांधी की सुरक्षा के लिए किसी भी प्रकार की कोई सावधानी नहीं बरती। 12F.22 यह मानते हुए भी कि पुलिस लापरवाह, अत्यंत लापरवाह या अक्षम थी, यह साधारण सावधानी (उनके चारों ओर चार से पांच लोगों की सुरक्षा) किसी भी हालत में बरती जानी चाहिए थी, कम से कम उन लोगों को रोकने के लिए जो अति उत्साही थे। यह और भी आश्चर्यजनक है कि कांग्रेस स्वयंसेवकों (सेवा दल) को भी कहा गया कि महात्मा गांधी की सुरक्षा की जिम्मेदारी अब उनकी नहीं है, जो आयोग की राय में एक गंभीर चूक थी।

12F.38 गवाह संख्या 11 बृज कृष्ण चांदीवाला ने कहा कि एक बार एक युवक उत्तेजित अवस्था में उनके पास आया और उसने कहा कि वह महात्माजी से मिलना चाहता है और यदि उसे ऐसा करने की अनुमति नहीं दी गई तो गवाह को खेद होगा। वह (चांडीवाला) यह नहीं बता सके कि वह युवक कौन था; हो सकता है कि वह गांधीजी को बताना चाहता हो कि उसकी जान को खतरा है या वह स्वयं हत्यारा बन गया हो। गवाह ने दोहराया कि वह यह कल्पना भी नहीं कर सकते कि पुलिस गांधीजी की सुरक्षा न करने में इतनी लापरवाह हो सकती है।
112F.41 इस गवाह के बयान से यह स्पष्ट नहीं होता कि गांधीजी के शिविर में रहने वालों को महात्मा गांधी के जीवन को खतरे का एहसास था। ऐसा भी प्रतीत होता है कि उन्हें सही जानकारी नहीं मिल रही थी, जैसा कि गवाह के इस कथन से पता चलता है कि 20 तारीख को दो या तीन लोगों को गिरफ्तार किया गया था और बाद में एक पुलिसकर्मी ने उन्हें बताया था कि नौ लोगों के नाम पता चल चुके हैं और उनकी तलाश की जा रही है।
12F.56 प्यारेलाल नायर, गवाह संख्या 54, ने कहा कि सरदार पटेल ने कहा था कि मुसलमान भारत में रह सकते हैं और उन्हें सुरक्षा मिलेगी, लेकिन उन्हें दोहरी निष्ठा नहीं रखनी चाहिए। महात्मा गांधी ने मुसलमानों से हिंदू महिलाओं के अपहरण की निंदा करने और उन्हें उनके परिवारों को वापस सौंपने का आग्रह किया था। उन्होंने मुसलमानों से सार्वजनिक बयान जारी करने को कहा था कि उन महिलाओं को उनके परिवारों को सौंप दिया जाए, लेकिन गवाह के अनुसार किसी भी संगठित मुस्लिम समाज ने ऐसी कोई अपील जारी नहीं की, हालांकि व्यक्तियों ने ऐसा किया हो सकता है। महात्मा गांधी ने कहा था कि अगर नेताओं द्वारा उन्हें दी गई सभी श्रद्धाओं के बावजूद, वे एक दिन कहें, 'हम इस बूढ़े आदमी से तंग आ चुके हैं: यह

हमें अकेला क्यों नहीं छोड़ देता?' तो उन्हें आश्चर्य नहीं होगा। यह कांग्रेस के खेमे में आई गिरावट और कांग्रेसियों में बढ़ते भ्रष्टाचार तथा अहिंसा के मार्ग से उनके भटकने के संदर्भ में था, जिसे महात्मा गांधी ने पाया था।
12F.77 गवाह संख्या 3 विश्वनाथ शाह ने पांडे के समक्ष गवाही देते हुए कहा—बिरला हाउस में एक महिला ने उन्हें बताया कि कुछ लोग बिरला हाउस के आसपास घूमते रहते थे जिन पर उसे शक था। वह एक ड्राइवर की पत्नी थी, संभवतः सुलोचना देवी, जो एक महत्वपूर्ण प्रत्यक्षदर्शी थीं जिन्होंने मदनलाल की पहचान बम हमलावर के रूप में की और उसके साथियों को भी देखा। गवाह ने पुलिस को इस बारे में बताया। महिला ने मदनलाल पाहवा की पहचान की और कहा कि वह और उसके साथी बिरला हाउस के आसपास घूमते रहते थे।
12F.79 गवाह संख्या 99, मनुबेन गांधी ने आयोग को बताया: जब हमने महात्मा गांधी को उनके जीवन पर खतरे के बारे में बताया, तो वे बस हंस पड़े और बोले, 'यदि ईश्वर की इच्छा है कि मैं जीवित रहूँ, तो मैं जीवित रहूँगा और यदि उनकी इच्छा नहीं है कि मैं जीवित रहूँ, तो वे मुझे अपने पास बुला लेंगे।' बम फेंके जाने के बाद लेडी माउंटबेटन महात्मा गांधी को बधाई देने आईं। महात्मा गांधी ने लेडी माउंटबेटन से कहा, 'इस अवसर पर मैंने कोई वीरता नहीं दिखाई है। यदि कोई मुझ पर बिल्कुल करीब से गोली चलाए और मैं मुस्कुराते हुए, मन में राम का नाम जपते हुए उसकी गोली का सामना करूँ, तो मैं वास्तव में बधाई का पात्र होऊंगा।'
12F.82 इस गवाह के बयान का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा 30 जनवरी 1948 को नाथूराम गोडसे की यात्रा के बारे में उसका बयान है। मनुबेन ने दावा किया कि दोपहर के करीब नाथूराम गोडसे बिड़ला हाउस आया। किसी ने उसे नहीं रोका क्योंकि लोग अक्सर ऐसे ही आते

थे और 'हमें नहीं लगा कि कोई खास व्यक्ति आया है'। वह पिछले दरवाजे से आया होगा; कई लोग ऐसा ही करते थे। जब नाथूराम आया, उस समय महात्मा गांधी धूप में बाहर सो रहे थे और अगर वह चाहता तो उन्हें वहीं गोली मार सकता था। उसे पूरा यकीन था कि नाथूराम गोडसे ही आया था क्योंकि जब उसने जानलेवा गोलियां चलाईं, तब वह वहीं मौजूद थी और उसने उसे उसी व्यक्ति के रूप में पहचाना जो उस दिन आया था। उसका मानना था कि दोपहर में आने पर वह महात्मा गांधी की उपस्थिति से ही भयभीत हो गया था।
12F.85 उनसे पूछा गया कि क्या महात्मा गांधी अपने आसपास हो रही घटनाओं से दुखी थे, उनका उत्तर था 'हाँ'। जब उनसे पूछा गया कि क्या महात्मा गांधी देश में हो रही घटनाओं या विभाजन के परिणामों के कारण दुखी थे, तो उनका उत्तर था 'दोनों के कारण; दोनों ने उन्हें प्रभावित किया।' उनसे पूछा गया कि क्या महात्मा गांधी सरकार के दुर्व्यवहार या जनता के दुर्व्यवहार या दोनों के दुर्व्यवहार के कारण दुखी थे? उनका उत्तर फिर से था: 'दोनों के कारण।'
12F.88 उनसे पूछा गया कि क्या महात्मा को जनवरी 1948 में धमकी भरे पत्र मिलते थे, उनका जवाब सकारात्मक था।
12F.89 उसने कहा कि वह उसी व्यक्ति को महात्मा गांधी को रोकते देखकर हैरान और नाराज़ थी, क्योंकि वह सुबह भी वहाँ मौजूद था। लेकिन उसे उस व्यक्ति से कोई खतरा नहीं लगा क्योंकि उसने दोनों हाथ जोड़े हुए थे और उसे लगा कि वह महात्मा गांधी को श्रद्धांजलि देने जा रहा है। नाथूराम गोडसे ने अदालत में अपने बयान में कहा था कि उसके हाथ में रिवॉल्वर थी। अगर ऐसा है, तो यह आश्चर्य की बात है कि जुलूस का नेतृत्व करने वालों सहित दर्शकों में से किसी ने भी उसे नहीं देखा। (नाथूराम का दावा

संदिग्ध लगता है, मैंने (लेखक ने) नाथूराम द्वारा इस्तेमाल की गई बेरेटा सेमी-ऑटोमैटिक पिस्टल को देखा है। कोई भी व्यक्ति पिस्तौल को हथेलियों में नहीं छिपा सकता, यह इतनी बड़ी और भारी है कि इसे इस तरह से पकड़ना असंभव है। संभावना यह है कि नाथूराम ने पहले अपनी हथेलियाँ जोड़ीं, फिर मनुबेन पर हमला किया और उसी दौरान अपनी जेब से बंदूक निकालकर गांधी जी को गोली मार दी।) 12F.91 मनुबेन एक महत्वपूर्ण गवाह हैं। वे महात्मा गांधी की करीबी रिश्तेदार थीं और उनसे घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई थीं। वे उन दो लड़कियों में से एक थीं जो महात्मा गांधी को प्रार्थना सभाओं में ले जाती थीं और हत्या के समय वे महात्मा गांधी से कुछ आगे थीं। और जब वे 21 साल बाद यह बयान देती हैं कि नाथूराम बिना किसी रोक-टोक के बिरला हाउस आया था और उसे वे स्थान दिखाए गए थे जहाँ महात्मा गांधी सोते, काम करते और भोजन करते थे और उसने वास्तव में उन्हें परिसर में सोते हुए देखा था, तो आयोग को इसे नजरअंदाज करने में संकोच करना चाहिए।
12F.96 महात्मा गांधी को यह अहसास हो गया था कि कांग्रेस अहिंसा के प्रति केवल दिखावटी सहानुभूति दिखा रही है और उन्हें बोझ समझा जा रहा है। प्यारेलाल, जिनकी अवलोकन क्षमता और सटीकता उनकी पुस्तक में वर्णन की स्पष्टता से झलकती है, ने महसूस किया कि दिल्ली पुलिस में गांधी-विरोधी भावनाएँ और आरएसएस समर्थक तत्व घुसपैठ कर रहे थे।
12G.3 बम कांड के बाद पुलिसकर्मियों की संख्या बढ़ा दी गई और बिरला हाउस में एक बड़ी पुलिस टुकड़ी तैनात की गई। प्रदर्श 10 से यह भी पता चलता है कि बम कांड के बाद पुलिसकर्मियों की संख्या तुरंत बढ़ाकर एक सहायक सब-इंस्पेक्टर, दो हेड कांस्टेबल और सोलह फुट कांस्टेबल कर दी गई थी। इसके अतिरिक्त, सादे कपड़ों

में एक सब-इंस्पेक्टर, चार हेड कांस्टेबल और दो फुट कांस्टेबल तैनात थे, जो सभी रिवॉल्वर से लैस थे। बिरला हाउस से प्रार्थना सभा स्थल तक जाने वाले रास्ते पर तीन सादे कपड़ों में पुलिसकर्मियों को तैनात किया गया था, और परिसर के चारों ओर गश्त के लिए सैनिकों की एक छोटी टुकड़ी भी तैनात की गई थी।
12G.7 डी.डब्ल्यू. मेहरा, दिल्ली के डी.आई.जी., गांधीजी के उपवास प्रारंभ के समय स्वयं उनके साथ उपस्थित थे और गांधीजी ने उनसे हिंदू-मुस्लिम संबंधों को सुधारने के लिए उठाए जाने वाले कदमों पर चर्चा की। गांधीजी के उपवास और चार महीने के निरंतर परिश्रम के कारण मानसिक तनाव से ग्रस्त मेहरा 16 जनवरी 1946 को इन्फ्लूएंजा से बीमार पड़ गए और चार दिनों तक बिस्तर पर रहे। इसके बावजूद वे 21 जनवरी को महात्माजी के पास गए और उन्होंने उनकी सभी प्रार्थना सभाओं में शामिल होने का संकल्प लिया। वे 24 जनवरी को फिर बीमार पड़ गए और 30 जनवरी को उस भीषण त्रासदी के बाद बिड़ला हाउस चले गए।
12 जी.8 यह भी तय किया गया था कि पुलिस अधीक्षक ए.एन. भाटिया को व्यक्तिगत रूप से महात्मा गांधी की सभाओं में उपस्थित होना चाहिए और उन्होंने ऐसा करना जारी रखा, लेकिन दुर्भाग्यपूर्ण दिन, 30 जनवरी को, वे सीपीडब्ल्यूडी की संभावित हड़ताल के कारण अनुपस्थित थे।
12 जी.17 एम.एस. रंधावा, गवाह संख्या 18, ने यह भी कहा है कि 'मुस्लिम पुलिसकर्मियों के बड़ी संख्या में पाकिस्तान चले जाने के कारण दिल्ली में पुलिस संगठन गंभीर रूप से कमजोर हो गया था और इस कमी को पूरा करने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों से पुलिसकर्मियों की जल्दबाजी में भर्ती करनी पड़ी। उन्हें ठीक से प्रशिक्षित नहीं किया गया था।'

12G.23 मदनलाल के बयान के बाद क्या कार्रवाई की जानी चाहिए थी, इस बारे में पूछे जाने पर एम.के. सिन्हा ने कहा: 'मुझे अब भी लगता है कि अगर मदनलाल के बयान में वर्णित व्यक्तियों का पता लगाने के लिए पर्याप्त और त्वरित कार्रवाई की गई होती, तो हत्या को रोका जा सकता था। जब मैं यहाँ था, तब मैंने अफवाहें सुनी थीं कि बंबई में साजिश की चर्चाएँ चल रही थीं और यहाँ तक कि अधिकारियों को भी इसकी जानकारी थी।'
12 जी. 31 आयोग के समक्ष जांच किए जाने पर, बैनर्जी ने कुछ महत्वपूर्ण मामलों के बारे में बयान दिए, जिन्हें इस प्रकार गिना जा सकता है:
6. न तो संजीव और न ही मेहरा ने बॉम्बे पुलिस की निष्क्रियता के बारे में उनसे कभी शिकायत की थी। उसी बैठक (31 जनवरी 1948 को) में संजीव ने कहा था कि उन्होंने मदनलाल का इकबालिया बयान बॉम्बे भेजा था, जिसका सार यह था कि आप्टे और गोडसे बॉम्बे में अपने दो या तीन ठिकानों में से किसी एक पर वापस चले गए होंगे।
8. बनर्जी ने कहा कि प्रचलित प्रथा के अनुसार भी संजीवी को बम कांड के बारे में उनसे चर्चा करनी चाहिए थी, लेकिन दुर्भाग्यवश मदनलाल के बयान की प्रति पहली बार उनके समक्ष महात्मा गांधी के अंतिम संस्कार के बाद हुई बैठक में ही रखी गई। बनर्जी को स्वयं उस बैठक से पहले मदनलाल के गंभीर अपराध के बारे में कोई विस्तृत जानकारी नहीं थी और इसी कारण गृह सचिवालय निष्क्रिय रहा। 12G.32 जब आर.एन. बनर्जी को याद दिलाया गया, तो उन्होंने बताया कि बम विस्फोट की खबर उन्हें दिल्ली में उसी शाम मिली जिस शाम बम फटा था और अगले दिन सुबह अखबारों में भी छपी थी। उनकी अपनी प्रतिक्रिया यह थी कि यह किसी कट्टरपंथी व्यक्ति का कृत्य था और उन्हें कभी यह ख्याल नहीं आया कि इसके पीछे कोई और हो सकता

है, हालांकि उन्होंने अखबारों में पढ़ा था कि मदनलाल के साथी बच निकले थे। हालांकि उन्हें लगा कि बम विस्फोट एक गंभीर मामला है, फिर भी उन्होंने जांच में हस्तक्षेप नहीं किया, क्योंकि यह जांच मद्रास से आए एक उच्च पदस्थ पुलिस अधिकारी के हाथों में सौंपी गई थी, जिनकी पेशेवर प्रतिष्ठा बहुत अच्छी थी।
12G.34 बैनर्जी ने कहा: 'यह कहा जा सकता है कि वास्तव में गृह मंत्रालय की कार्यप्रणाली और कामकाज ही वह कारण था जिसके चलते मेरे लिए संजीवी से जांच की प्रगति के बारे में सवाल करना मुश्किल हो गया था।' उनके साक्ष्य का यह अंश दर्शाता है कि गृह मंत्रालय के कामकाज में कुछ गड़बड़ी थी जिसके कारण मंत्रालय के मुखिया, यानी गृह सचिव, काफी हद तक अप्रभावी हो गए थे। यदि गृह सचिव संजीवी से जांच की प्रगति के बारे में सवाल नहीं कर सके, तो किसी और के लिए ऐसा करना असंभव है।
12 एच. 4 जी.के. हांडू, गवाह संख्या 48, ने कहा कि चूंकि हिंदू महासभा पूरे देश में प्रभावशाली थी और विभाजन ने सांप्रदायिक भावनाएं पैदा कर दी थीं, इसलिए यदि वह सुरक्षा के प्रभारी होते, तो वह उन सभी प्रांतों से सी.आई.डी. पुलिसकर्मियों को बुलाते जहां हिंदू महासभा मजबूत थी और उन्हें प्रार्थना सभाओं में विशेष निगरानी के लिए तैनात करते।
12H.11 30 जनवरी 1948 को पुलिस अधीक्षक ए.एन. भाटिया अनुपस्थित थे। सहायक सब-इंस्पेक्टर अमर नाथ शाम 4:30 बजे ड्यूटी पर आए। अदालत में माली रघुनाथ नायक (पी.डब्ल्यू.76) के बयान से पता चलता है कि हमलावर को उन्होंने, एक सेनाकर्मी और 2 पुलिस कांस्टेबलों ने पकड़ा था, जिससे यह स्पष्ट होता है कि उस समय पुलिस मौजूद थी।

12H.18 को आयोग ने बी.बी.एस. जेटली से पूछा कि जब वायसराय किसी जिले या पुलिस रेंज में जाते थे तो उनकी सुरक्षा कैसे की जाती थी। उन्होंने जवाब दिया कि स्थानीय पुलिस व्यवस्थाओं को संभालने में सक्षम नहीं थी, इसलिए सादे और वर्दीधारी पुलिसकर्मियों को बाहर से बुलाकर सभी रणनीतिक स्थानों पर तैनात करना पड़ता था और जिस जगह वे ठहरे थे, वहां भी कड़ी सुरक्षा रखी जाती थी। उन्होंने यह भी बताया कि वे महात्मा गांधी के पास गए और उन्हें आरएसएस से जब्त किए गए हथियार दिखाए और गृह मंत्री को बताया कि आरएसएस की ओर से कुछ गंभीर हो सकता है। उनका मतलब केवल महात्मा गांधी को होने वाली किसी घटना से नहीं था, बल्कि जवाहरलाल नेहरू और सरदार पटेल जैसे केंद्रीय मंत्रियों को होने वाली किसी भी घटना से था।
जी.के. हांडू का यह कथन कि गोडसे ने उनसे स्वीकार किया था कि उनका अगला निशाना प्रधानमंत्री नेहरू होते, और जे.एन. साहनी का यह कथन कि नेहरू की जान भी खतरे में थी, दिल्ली में पुलिस हिरासत में रहते हुए गोडसे को लिखे गए एक गुमनाम हिंदी पत्र से पुष्ट होते हैं। इस पत्र पर कलकत्ता के बारा बाजार की मुहर लगी है, जो निस्संदेह हत्या के बाद की तारीख का है। यह पत्र इंटेलिजेंस ब्यूरो फाइल प्रदर्शनी 224 ए के पृष्ठ 77-78 पर मौजूद है। इसमें महात्मा गांधी की हत्या के लिए गोडसे की प्रशंसा की गई है और नेहरू के प्रति कड़ा विरोध जताया गया है, जिन्हें इसमें 'हिंदू समुदाय का संहारक' कहा गया है। पत्र का अंत इस वाक्य से होता है, 'ईश्वर करे जवाहरलाल नेहरू का अंत हो।'
12H.23 उनसे पूछा गया कि बिरला हाउस पर बम फेंके जाने के बाद क्या इंतज़ाम किए जाने चाहिए थे। उनका जवाब था कि योजना के अनुसार सुरक्षा व्यवस्था की जानी चाहिए थी, यानी एक आंतरिक और

एक बाहरी घेरा बनाया जाना चाहिए था, साथ ही बॉम्बे प्रांत से खोजकर्ताओं और निगरानी दल को संभावित हमलावरों की पहचान के लिए तैनात किया जाना चाहिए था। जब उनसे पूछा गया कि महात्मा गांधी के उपवास पर जाने की स्थिति में वे क्या करते, तो उन्होंने कहा कि महात्मा गांधी को इसके बारे में पता ही क्यों चलता। पुलिस बॉम्बे से आती। आंतरिक और बाहरी घेरे के लोग महात्मा गांधी के आसपास मौजूद कांग्रेस स्वयंसेवकों की तरह ही कपड़े पहने होते और निगरानी दल के लोग माली या अन्य घरेलू नौकरों के वेश में होते और किसी को पता भी नहीं चलता। उन्होंने यह भी कहा कि वे रेलवे स्टेशनों, हवाई अड्डों, टर्मिनल मार्गों, धर्मशालाओं और अन्य स्थानों पर निगरानी रखने की व्यवस्था करते जहाँ लोगों के आने-जाने की संभावना होती है।
12H.25 महात्मा गांधी के विषय में उन्होंने इस प्रकार कहा: महात्मा गांधी और उनकी सुरक्षा के मामले में, ऐसा प्रतीत होता है कि दिल्ली पुलिस या खुफिया ब्यूरो द्वारा कोई सुस्पष्ट या सुनियोजित सुरक्षा उपाय, चाहे शारीरिक हों या आंतरिक, नहीं किए गए थे। यह स्वीकार किया जाता है कि विस्तृत और सावधानीपूर्वक सुरक्षा उपायों की मांग करने और उन्हें लागू करने की मुख्य जिम्मेदारी कांग्रेस पार्टी की थी, लेकिन यदि वे स्थिति की गंभीरता और खतरे को समझने में विफल रहे, तो यह निस्संदेह दिल्ली पुलिस या खुफिया ब्यूरो का कर्तव्य था, विशेष रूप से 20 जनवरी 1948 को गांधीजी की प्रार्थना सभा में मदनलाल द्वारा गन कॉटन स्लैब विस्फोट करने की घटना के बाद। इसके अलावा, घटना के तुरंत बाद मदनलाल द्वारा दिए गए बयान को देखते हुए, दिल्ली पुलिस के लिए यह अनिवार्य हो गया था कि वह तुरंत बॉम्बे और पुणे (आई.जी. पुलिस बॉम्बे और डी.आई.जी., सी.आई.डी. पुणे) को वायरलेस संदेश

भेजकर बुद्धिमान और जानकार पुलिस अधिकारियों की एक सादी वर्दी वाली टीम को तुरंत भेजे, जो गांधीजी की हत्या की साजिश रचने वाले महाराष्ट्र के युवकों की पहचान करने में मदद करेगी। 'सबसे दुर्भाग्यपूर्ण बात यह है कि गांधीजी के जीवन को खतरे की जानकारी होने के बावजूद और मदनलाल की गिरफ्तारी के बाद भी, बॉम्बे पुलिस ने मदनलाल द्वारा वर्णित मराठा युवकों की पहचान में सहायता के लिए अपने जानकार सादे कपड़ों वाले पुलिसकर्मियों को भेजने की पेशकश नहीं की। यदि बॉम्बे या पुणे के पुलिसकर्मी पहुँच जाते और यदि दिल्ली पुलिस ने रेलवे स्टेशनों, होटलों, धर्मशालाओं और राजनीतिक दलों के मुख्यालयों के साथ-साथ बिरला हाउस और प्रार्थना सभा के प्रवेश और निकास द्वारों पर उन्हें उचित और सावधानीपूर्वक समूहों में तैनात किया होता, तो संभवतः हत्यारे के लिए सफल होना बहुत मुश्किल हो जाता, क्योंकि आखिरकार सुरक्षा कभी भी अचूक नहीं होती, बल्कि यह हमेशा खुफिया जानकारी और हत्यारे के लिए इसे और अधिक कठिन बनाने का एक अथक प्रयास होता है।'
121.5 राजगोपालाचारी ने आगे कहा था कि चाहे हत्या 550 मिलियन रुपये के भुगतान के कारण हुई हो या किसी पुरानी दुश्मनी का नतीजा हो, गांधीजी ने जोर देकर कहा था कि भारत को अपने समझौते का पालन करना चाहिए और वादे तोड़कर अपनी स्वतंत्रता की राह शुरू नहीं करनी चाहिए। भारत अपनी नैतिक शक्ति खो देता, गांधीजी किसी हिंदू की रिवाल्वर से नहीं बल्कि दिल टूटने से मर जाते। 550 मिलियन रुपये का दान भारत की नैतिक प्रतिष्ठा को बचाकर उसमें और इजाफा करता है।

कपूर आयोग की रिपोर्ट का अध्याय XIII अलवार में हुई जांचों से संबंधित है।
13.1 देश भर में यह अफवाह ज़ोरों से फैली हुई थी कि सावरकर और उनके हिंदू कट्टरपंथियों में शामिल केसरी समूह ने भारत के कई पूर्व राजकुमारों के साथ एक समझौता किया था। इस समझौते के तहत वे एक गठबंधन बनाएंगे जो तख्तापलट करके लोकतांत्रिक सरकार को उखाड़ फेंकेगा और भारत को हिंदू राष्ट्र घोषित करेगा। इसके बाद राजकुमार एक परिषद का गठन करेंगे जो 'हिंदू राष्ट्र' के रक्षक के रूप में शासन करेगी। गांधीजी की हत्या इस साजिश का कारण बनेगी। अलवर, भरतपुर, भोपाल, बड़ौदा और ग्वालियर के राजकुमारों को इस षड्यंत्र का हिस्सा बताया जा रहा था। खुफिया रिपोर्टों में छह लाख सैनिकों के एक मजबूत समूह का जिक्र था जो विद्रोह करने के लिए तैयार था। नागरवाला का वह सिद्धांत भी इस परिदृश्य से मेल खाता है जिसमें बीस सदस्यों के एक मुख्य समूह को बीस से अधिक स्वयंसेवकों का समर्थन प्राप्त था और जो पूरे देश में फैले हुए थे। कई राजा भारतीय उपनिवेश में शामिल होने के लिए उन पर अपनाई गई बल प्रयोग की रणनीति से आहत थे और वे किसी भी ऐसी योजना का समर्थन करने को तैयार थे जिससे उनकी सामंती शक्तियां और जागीरों पर उनका नियंत्रण बना रहे।
13.2 दिनांक 10 फरवरी, 1948 की प्रति (प्रस्तुति 96) में यू.सी. मल्होत्रा की केस डायरी है, जिन्हें अलवर राज्य का मुख्य पुलिस अधिकारी नियुक्त किया गया था। दिनांक 8 फरवरी, 1948 की केस डायरी संख्या 2 में निम्नलिखित जानकारी है: (1) हिंदी में मुद्रित एक पोस्टर, जिसकी हस्तलिखित प्रति (प्रस्तुति 105) है। उन्होंने जनता को महात्मा गांधी की हत्या करने, उनके टुकड़े- टुकड़े करने के लिए उकसाया।

उसके मांस को कुत्तों और कौवों को खिला दो। यह एक गुमनाम पोस्टकर्ता का संदेश था।
यह स्पष्ट नहीं हो पा रहा था कि यह कहाँ छपा था। (2) नागपुर के एक नाथूराम शुक्ला ने अंत में अलवर का दौरा किया था।
दिसंबर 1947 में उन्होंने हिंदू अखबार से भाषण दिए।
महासभा का मंच। उनका कद 5-6 इंच बताया गया है।
गेहूं के रंग का, छोटी मूंछों वाला, हिंदी में अच्छा बोलने वाला।
स्पष्टतः यह नाथूराम गोडसे के वर्णन से मेल नहीं खाता। (यह अवश्य ही
यह नोट किया गया कि इस बात का प्रबल संदेह था कि यह व्यक्ति वास्तव में
नाथुराम गोडसे, वह भेष बदल सकता था, या किसी हमदर्द की मदद ले सकता था।
पुलिसकर्मी ने भ्रामक विवरण लिख दिया होगा।
इससे इस धारणा को बल मिलता है कि पुलिस कभी भी उसका पता नहीं लगा पाई।
नाथुराम शुक्ला के बाद ऐसा लगा मानो वह हवा में ही विलीन हो गए हों।
(अलवर में भाषण देते हुए।)
(3) एक विदेशी साधु के वेश में अलवर आया और गिरधर के साथ ठहरा सिद्ध, स्थानीय हिंदू सभा के सचिव थे। वे अपने साथ एक वस्तु लाए थे।
एक पत्र जिसमें हत्या की खबर देने वाला मुद्रित पत्र शामिल है। महात्मा गांधी। यह खबर अलवर में दोपहर 3 बजे प्रसारित हुई जबकि

हत्या वास्तव में शाम 5.17 बजे दिल्ली में हुई थी। (4) मिठाइयाँ वितरित की गईं; प्रधानमंत्री खरे ने सभाओं को संबोधित किया था। गांधीजी पर ब्राह्मण होने का श्राप बरसाया गया। हिंदू महासभा और
डॉ. खरे ने आरएसएस को प्रोत्साहित किया।
13.4 एक समाचार पत्र के संपादक रिखी जैमुनी कौशिक ने एक मुद्रित लेख प्रकाशित किया जिसमें निम्नलिखित जानकारी थी: (क) अलवर में गांधी-विरोधी मोर्चा पार्टी ने एक पर्चा वितरित किया जिसमें हिंदुओं से महात्मा गांधी की मृत्यु के लिए उपवास और प्रार्थना करने का अनुरोध किया गया था।
Gandhi.
(ख) अलवर में आरएसएस ने महात्मा गांधी के पर्व पर मिठाई बांटी और पिकनिक का आयोजन किया था।
हत्या का दिन।
(ग) महात्मा गांधी की हत्या से कुछ दिन पहले, डॉ. खरे ने कहा था कि वह गांधी विरोधी मोर्चे का आदमी था।
13.16 आयोग द्वारा पूछताछ किए जाने पर डॉ. खरे ने कहा कि वे गांधी विरोधी थे, यानी उनकी विचारधारा के विरोधी थे, लेकिन व्यक्तिगत रूप से गांधी विरोधी नहीं थे। उन्हें यह जानकारी नहीं थी कि क्या किसी मंत्री ने आरएसएस को पूर्ण सुविधाएँ प्रदान की थीं। आरएसएस प्रमुख गोलवलकर प्रधानमंत्री रहते हुए राज्य में आए थे और नागपुर निवासी होने के कारण उन्होंने उनकी सभाओं में भाग लिया था। संभवतः उन्होंने सभा को संबोधित भी किया था। उन्होंने सभाओं में गांधीवाद की निंदा की और 'गुरुजी' (गोलवलकर) ने भी ऐसा ही किया। जब उनसे पूछा गया कि क्या उन्होंने आरएसएस स्वयंसेवकों को 'सामंत इन्फैंट्री' में प्रशिक्षण लेने

की अनुमति दी थी, तो उन्होंने कहा कि उन्हें इसकी कोई याद नहीं है।
13.24 पन्नालाल चौबे, गवाह संख्या 47, अब मथुरा में रहते हैं। वे 1952 तक सी.आई.डी. के मुखबिर थे। उन्होंने बताया कि हत्या से तीन महीने पहले अलवर के गृह मंत्री हकीम राय ने परचुरे और गोडसे को अलवर बुलाया था। वहाँ एक निजी बैठक हुई जिसमें वे (पन्नालाल) भी उपस्थित थे। डॉ. खरे भी वहाँ मौजूद थे और उन्होंने कहा कि महात्मा गांधी ने उनके साथ अन्याय किया था और उनकी राय में महात्मा गांधी भारत के लिए खतरा थे और उनके संबंध में कुछ किया जाना चाहिए। डॉ. खरे अखिल भारतीय हिंदू राष्ट्रीय मोर्चा अलवर के अध्यक्ष थे, जो महात्मा गांधी के कट्टर विरोधी थे।
13.26 गोडसे और पारचुरे महल में स्थित शस्त्र संग्रहालय गए और वहाँ से पिस्तौलें ले जाना चाहते थे। संग्रहालय के क्यूरेटर ने उन्हें एक पुरानी माउसर पिस्तौल दिलवाने में मदद की। पिस्तौल ले ली गई, लेकिन बेकार होने के कारण गोडसे और पारचुरे ने उसे लौटा दिया।
13.29 अलवर में हत्या की साजिश रची गई जिसमें डॉ. एन.बी. खरे ने प्रमुख भूमिका निभाई। डॉ. खरे ने कहा कि महात्मा गांधी का जीवित रहना देश के हित में नहीं है और केवल गोडसे ही गांधी की हत्या कर सकता है। इस पर गोडसे ने जवाब दिया, 'चिंता मत करो, मैं यह सब कर दूंगा।'
13.32 हकीम राय ने उन्हें बताया कि गोडसे और परचुरे हिंदू महासभा के बड़े नेता थे।
13.33 उन्हें नहीं लगता था कि गोडसे और परचुरे वास्तव में महात्मा गांधी की हत्या कर देंगे।

13.34 उसने गोडसे और परचुरे के बारे में पुलिस के अलावा किसी को भी सूचित नहीं किया।
13.36 वह गोडसे से दो बार मिला—एक बार उस बैठक में जो तीन घंटे तक चली और दूसरी बार वह उससे दिल्ली में प्रोफेसर राम सिंह के घर पर हत्या से लगभग डेढ़ महीने पहले मिला।
13.42 राजस्थान के पुलिस महानिरीक्षक ने प्रश्नावली के उत्तर में कहा है कि रिकॉर्ड में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह पता चले कि पन्नालाल चौबे अलवार राज्य में पुलिस मुखबिर के रूप में काम कर रहे थे, लेकिन वे कभी-कभी पुलिस महानिरीक्षक से और बाद में कुछ अन्य पुलिस अधिकारियों से पैसे लेते थे। पन्नालाल चौबे हिंदू महासभा से जुड़े थे, लेकिन पुलिस को यह जानकारी नहीं है कि वे रायजादा हकीम राय से भी जुड़े थे।
कपूर आयोग ने पन्नालाल चौबे की गवाही पर विश्वास नहीं किया। आयोग का तर्क था कि वह पुलिस मुखबिर था, इसलिए आयोग का मानना था कि हिंदू महासभा के नेता उस पर भरोसा नहीं कर सकते थे कि वह महात्मा गांधी की हत्या जैसे महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा के दौरान उपस्थित रह सकता था। तथ्य यह है कि अलवर के एक गवाह की गवाही के अनुसार, परचुरे और गोडसे दिसंबर 1947 में अलवर में एक पिस्तौल की तलाश में थे। जनवरी के अंतिम सप्ताह में जब नाथूराम एक विश्वसनीय पिस्तौल प्राप्त करने में असफल रहा, तो उसने तुरंत परचुरे के बारे में सोचा और ग्वालियर के लिए रवाना हो गया, जहाँ वह निकट दूरी से हत्या करने के लिए सबसे कुशल पिस्तौलों में से एक प्राप्त करने में सफल रहा। बेरेटा पिस्तौल परचुरे की मदद से खरीदी गई थी। अलवर और ग्वालियर की घटनाओं को महज़ संयोग मानकर खारिज नहीं किया जा सकता।

आयोग ने इसके बाद एम.एल. हूजा (गवाह संख्या 59) की जांच की, जो 1948 में खुफिया ब्यूरो के सहायक निदेशक थे। उन्होंने अलवर रियासत में आरएसएस की गतिविधियों पर एक रिपोर्ट प्रस्तुत की थी।
13.50 हूजा ने अपनी जांच दो बिंदुओं पर केंद्रित की (1) महात्मा गांधी की हत्या की साजिश में स्थानीय लोगों की संभावित संलिप्तता और (2) आरएसएस संगठन को राज्य द्वारा संरक्षण और सहायता।
13.51 आरएसएस को राज्य द्वारा संरक्षण और सहायता प्रदान करने के पर्याप्त प्रमाण मिले। मई-जून 1947 में आरएसएस अधिकारियों के प्रशिक्षण शिविर और रैली के लिए सभी सुविधाएं उपलब्ध कराई गईं। यह प्रधानमंत्री डॉ. खरे और गृह मंत्री रायज़ादा हकीम राय के सीधे आदेशों के तहत, जाहिर तौर पर शासक की जानकारी में किया गया था। प्रधानमंत्री और गृह मंत्री दोनों ने आरएसएस की गतिविधियों में प्रमुख भूमिका निभाई और प्रधानमंत्री इसकी सभी स्थानीय गतिविधियों के साथ निरंतर संपर्क में रहे और इसे पूर्ण संरक्षण प्रदान किया।
13.55 महात्मा गांधी की हत्या से जुड़े षड्यंत्र की जांच में पता चला कि जबलपुर के नाथू राम शुक्ला (रिपोर्ट में अन्यत्र उन्हें नागपुर का बताया गया है) राज्य के संरक्षण में आए थे और राज्य के विभिन्न हिस्सों का दौरा किया था। लोगों को संदेह था कि वास्तव में वही नाथूराम गोडसे थे।
13.56 दुर्भाग्य से जांच में इस तथ्य से बाधा उत्पन्न हुई कि स्थानीय पुलिस अविश्वसनीय थी और यहां तक कि आई.जी.पी. भी एक 'कट्टर राजपूत' थे।

13.58 एम.एल. हूजा की 23 फरवरी, 1948 की एक अन्य रिपोर्ट में यह दोहराया गया है कि नाथू राम शुक्ला को वही मानस नाथूराम गोडसे होने का संदेह था।
13.68 आयोग अलवर के संबंध में भारत सरकार की आशंकाओं को समझता है, जहाँ सांप्रदायिक रंग और कांग्रेस-विरोधी तथा प्रजा मंडल-विरोधी झुकाव वाली ये सभी गतिविधियाँ संचालित की गईं। इसके अलावा, डॉ. एन.बी. खरे स्वयं महात्मा गांधी की निंदा करने में काफी उग्र थे, यहाँ तक कि उन्होंने श्राप देने की प्राचीन प्रथा का सहारा लिया और 12 अक्टूबर, 1947 को 'एक ब्राह्मण का श्राप' (Ex. 88) जारी करके महात्मा गांधी को श्राप दिया। उन्होंने कहा है कि वे गांधीजी की राजनीति के विरोधी थे, न कि उनके व्यक्तित्व के। (गांधीजी को 'ब्राह्मण का श्राप' देते समय, यह उनकी राजनीति पर नहीं, बल्कि उनके व्यक्तित्व पर लक्षित था।) उन्होंने गोडसे या परचुरे के अलवर से किसी भी संबंध से इनकार किया। लेकिन हत्या के बाद एकत्रित की गई जानकारी वाली पुलिस रिपोर्टों में एक अलग ही कहानी है।
13.70 अन्य दस्तावेजों से पता चलता है कि दशहरा के दिन 3 अक्टूबर, 1938 को डॉ. खरे ने गांधीजी के खिलाफ खुले विद्रोह का झंडा फहराया और उन पर और उनके दर्शन पर अभिशाप दिया।
13.73 इन सभी साक्ष्यों को मिलाकर यह स्पष्ट होता है कि अलवार राज्य में कांग्रेस-विरोधी और गांधी-विरोधी वातावरण निर्मित हो गया था; हालांकि यह विशुद्ध रूप से गांधी-विरोधी आंदोलन था या नहीं, यह कहना आसान नहीं है। फिर भी, डॉ. खरे का पिछला रिकॉर्ड और आरएसएस तथा उग्रवादी हिंदू महासभा के नेताओं को उनका प्रोत्साहन उन परिस्थितियों के निर्माण का संकेत था जो सशक्त गांधी-विरोधी गतिविधियों के लिए अनुकूल थीं।

अध्याय 14 ग्वालियर में हुई जांचों से संबंधित है। यहां यह ध्यान देने योग्य है कि ग्वालियर भेजे गए जांच अधिकारी कुख्यात यू.एच. राणा थे। दिल्ली और बॉम्बे के बीच यात्रा में समय लेने के बावजूद, राणा ने कई गलतियां कीं, जिनके परिणामस्वरूप नाथूराम गोडसे को गांधी की हत्या करने में कोई बाधा नहीं आई।
14.1 गोपी कृष्ण कटारे, जिन्होंने लगभग 30 वर्षों तक ग्वालियर में सक्रिय राजनीतिक कार्यकर्ता होने का दावा किया है, ने अपने हलफनामे (प्रदर्श संख्या 91) में कहा है कि महात्मा गांधी की हत्या से एक या दो महीने पहले, हिंदू महासभा के मुखपत्र, एक साप्ताहिक पत्रिका में एक प्रमुख लेख प्रकाशित हुआ था जिसमें कहा गया था कि महात्मा गांधी और पंडित नेहरू की हत्या कर देनी चाहिए, और हिंदू महासभा को ग्वालियर सरकार का पूर्ण संरक्षण प्राप्त था। उन्होंने यह भी कहा कि महात्मा गांधी की हत्या से लगभग पखवाड़े भर पहले, गांधी हत्याकांड के एक आरोपी को 65,000 रुपये का चेक दिया गया था ताकि गुंडों को संगठित किया जा सके और ग्वालियर में जिम्मेदार सरकार की मांग कर रहे कांग्रेस कार्यकर्ताओं पर घातक हमला करने के लिए हथियार खरीदे जा सकें, और इसी धनराशि से वह पिस्तौल खरीदी गई थी जिससे हत्यारे ने गांधीजी को गोली मारी थी। जब ये मामले सामने आए तो सरदार पटेल ने इन्हें दबा दिया क्योंकि ग्वालियर की महारानी ने 'क्षमा की गुहार लगाई' थी। उन्होंने आगे कहा कि यह एक त्रासदी है कि हत्या की साजिश रचने वाले असली अपराधियों पर मुकदमा नहीं चलाया गया। 14.4 कटारे द्वारा उल्लिखित चेक डॉ. परचुरे को दिया गया था। महाराजा का मानना था कि राष्ट्रीय आंदोलन एक खतरा है जिससे लड़ना आवश्यक है। कटारे ने राज्य के प्रधान मंत्री बनने के बाद

लीला धर जोशी को चेक के बारे में बताया था और कहा था कि कोई भी कदम उठाने से पहले वे सरदार पटेल से परामर्श करेंगे। बाद में उन्हें बताया गया कि महाराजा के राज्याभिषेक के बाद कोई कार्रवाई आवश्यक नहीं है। गवाह को कुछ समय के लिए देश से बाहर कर दिया गया और लौटने पर उनकी मुलाकात एक ऐसे व्यक्ति से हुई जो कांग्रेस विरोधी था और कांग्रेस विरोधी प्रचार कर रहा था। उसने गोडसे का बयान प्रकाशित करवाया था और कहा था कि इसका वित्तपोषण सरदार आंग्रे के पुत्र ने किया था। उसका नाम गोखले था और वह पुणे का रहने वाला था।
14.7 जेटली, डी.आई.जी., गवाह संख्या 55, ने ग्वालियर मामलों की जांच की थी। वह ग्वालियर इसलिए गए थे क्योंकि यह अफवाह फैली थी कि मराठा राजकुमारों का गांधीजी की हत्या के लिए जिम्मेदार मराठा गुट से कुछ संबंध था।

अध्याय पंद्रह में पुणे का वर्णन है। आयोग ने 1947 से पुणे की स्थिति का विस्तृत अध्ययन किया है। पुणे को हिंदू महासभा का गढ़ बताया गया है। गांधी हत्याकांड में आरोपित आठ लोगों में से मुख्य चार आरोपी पुणे के निवासी थे; वी.आर. करकरे उनके करीबी सहयोगी थे और वी.डी. सावरकर उनके मार्गदर्शक और प्रेरणास्रोत थे।
15.14 बॉम्बे प्रोविंशियल वीकली लेटर, प्रति 155, दिनांक 5 जुलाई 1947, से पता चलता है कि 26 जून 1947 को पुणे शहर में बम विस्फोट हुआ था। यह मामला प्रधानमंत्री बी.जी. खेर तक पहुंचा और 9 जुलाई 1947 को उन्होंने कहा, 'क्या अग्रानी के संपादक को गिरफ्तार नहीं किया गया था? मैं इस मामले की प्रगति जानना चाहता हूं।' अग्रानी को किस आधार पर जांच के दायरे में लाया गया, यह मोरारजी देसाई के बयान से स्पष्ट होता है कि ऐसी जानकारी मिली थी जिससे संपादक का संबंध विध्वंसक गतिविधियों से होने का संकेत मिलता था। इस पर बॉम्बे के गृह विभाग ने 12 जुलाई 1947 को पुणे के जिला मजिस्ट्रेट को एक पत्र भेजा (प्रति 156), जिसमें जांच की प्रगति के बारे में पूछा गया था। इसमें यह भी पूछा गया था कि क्या अग्रानी के संपादक को भी इस संबंध में गिरफ्तार किया गया था, और यह भी कहा गया था कि सरकार को इस मामले की जांच के बारे में सूचित किया जाना चाहिए। पत्र के लगभग दो सप्ताह बाद, जिला मजिस्ट्रेट ने 29 जुलाई को बम विस्फोट के संबंध में अपना उत्तर (प्रदर्शनी 157) भेजा और उसके साथ पुणे के जिला मजिस्ट्रेट की 23 जुलाई 1947 की रिपोर्ट (प्रदर्शनी 157 ए) संलग्न की, जिसमें 26 जून के बम विस्फोट का विवरण दिया गया था, जिसके अनुसार पुणे नगर हिंदू महासभा के सचिव एन.आर. अठावले को बम विस्फोट के संबंध में गिरफ्तार किया गया था; कि उन्होंने

धारा 164 सीआरपीसी के तहत एक इकबालिया बयान दिया था कि बम (हैंड ग्रेनेड) उन्हें अग्रानी के एन.डी. आप्टे ने दिया था; कि उन्होंने (अठावले ने) पुस्तकालय की दूसरी मंजिल से बम फेंका था; कि अठावले के घर की तलाशी ली गई थी लेकिन कुछ भी आपत्तिजनक नहीं मिला था। और अथवाले और आप्टे के खिलाफ विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 4 के तहत सूचना दर्ज की गई थी (प्रदर्शनी 157 और 157 ए) और 'उनके मुकदमे की प्रतीक्षा की जा रही थी'।
15.17 3 सितंबर 1947 को जिला मजिस्ट्रेट एस.जी. बर्वे ने धारा 494, दंड प्रक्रिया संहिता के तहत अथवाले और आप्टे के खिलाफ मामला वापस लेने की मंजूरी दी। लोक अभियोजक को वापसी के लिए आवेदन प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया, जो उन्होंने किया और इस प्रकार मामला वापस ले लिया गया।
गांधीजी हत्याकांड के संदर्भ में यह मामला अत्यंत महत्वपूर्ण है। बाद में अहमदनगर से संबंधित अध्याय में यह उल्लेख किया गया है कि पुणे में अठावले द्वारा इस्तेमाल किया गया हथगोला, जिसे उसने कबूल किया था कि उसे आप्टे ने दिया था, उसी जत्थे का था जिसका इस्तेमाल अहमदनगर के कपड़ा बाजार में हुए विस्फोट में हुआ था, जिसमें विष्णु करकरे और मदनलाल पाहवा की संलिप्तता का संदेह था। इस प्रकार पुणे के गोडसे और आप्टे तथा अहमदनगर के करकरे और पाहवा के बीच संबंध स्थापित हुआ। बम कांड से यह तथ्य भी सिद्ध हुआ कि अग्रानी के गोडसे और आप्टे विरोध के तरीके के रूप में आगजनी का इस्तेमाल करते थे। लेकिन एक और संबंध, जो लगभग एक दशक पुराना है, इस बम विस्फोट को महात्मा गांधी से और भी करीब से जोड़ता है। अठावले ने अपने कबूलनामे में कहा था कि उसे पुस्तकालय की दूसरी मंजिल से हथगोला फेंकने के लिए कहा गया था। 1935 में पुणे के नगर निगम सभागार में गांधीजी को ले जा रहे

काफिले पर बम फेंका गया था। गांधीजी बच गए क्योंकि उन्हें और कस्तूरबा को ले जा रही कार को चौराहे पर कुछ मिनटों के लिए रोक दिया गया था। जब आगे वाली कार सभागार पहुंची तो यह मान लिया गया कि गांधी जी आ गए हैं, बैंड ने स्वागत गीत बजाना शुरू कर दिया, तभी दूसरी मंजिल की छत से एक हथगोला फेंका गया। इस घटना का वर्णन एक प्रत्यक्षदर्शी ने किया है। दोनों मामलों में कार्यप्रणाली एक समान है और महात्मा गांधी की हत्या के दोषी व्यक्ति का नाम एक घटना में सामने आया है।
15.18 आयोग के समक्ष पुणे के डीएसपी गवाह संख्या 38 के रूप में उपस्थित थे और आयोग उनके साक्ष्य से संतुष्ट नहीं है। उन्होंने कहा कि अग्रानी या हिंदू राष्ट्र हिंसा का प्रचार नहीं करता था और उन्हें इस बात की कोई जानकारी नहीं थी कि अग्रानी को रोका गया था या नहीं। उन्हें कभी यह जानकारी नहीं मिली कि आप्टे या नाथूराम गोडसे ने हिंसा का प्रचार किया हो या किसी अवैध गतिविधि में लिप्त रहे हों। लेकिन रिकॉर्ड में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह पता चले कि बम की उत्पत्ति, कब्जे और उपयोग या दुरुपयोग की गहन जांच के लिए कोई ठोस कदम उठाए गए थे या नहीं। इसके बाद आयोग ने कपूर आयोग के प्रति आधिकारिक तंत्र के रवैये को उजागर करते हुए एक बेहद चौंकाने वाला आरोप लगाया है। रिपोर्ट के पैरा 15.20 के अंत में उल्लेख किया गया है कि
— 'यद्यपि आयोग के अधिकारी दिल्ली कलेक्ट्रेट के अभिलेख कक्षों में सफलतापूर्वक तलाशी लेने में सक्षम थे, लेकिन वे पुणे और अहमदनगर में ऐसा करने में असमर्थ रहे।'
15.28 अग्रानी और हिंदू राष्ट्र के दो अंकों में हिंसा भड़काने के स्पष्ट संकेत मिलते हैं। उदाहरण संख्या 233-ए, अग्रानी के 12 अप्रैल, 1947 के अंक में, एक शीर्षक है 'महात्मा गांधी,

आत्महत्या कर लें' और उनके लिए 'उनकी कायरतापूर्ण विचारधारा', 'उनकी कायर और व्यर्थ अहिंसा' जैसे विशेषणों का प्रयोग किया गया था। उन्हें 'सोकाजी' भी कहा गया और यह कहा गया कि उन्हें आत्महत्या कर लेनी चाहिए। यदि वे ऐसा नहीं करते हैं, तो उन्हें भारतीय राजनीति को हमेशा के लिए अलविदा कह देना चाहिए।
15.29 हिंदू राष्ट्र के उसी अंक, अंक संख्या 233, 7 सितंबर, 1947 में कहा गया था, 'और यदि किसी के मन में वास्तव में अखंड हिंदुस्तान (यानी अविभाजित भारत) की तीव्र इच्छा है और इसके लिए अपना प्राण बलिदान करने की भावना उत्पन्न हुई है, तो गलत जगह पर प्रहार न करें! भारतीय वीरता की बाढ़ देखते ही देखते पूरे भारत को एक कर देगी।'
15.30 यह सब दर्शाता है कि अग्रानी या हिंदू राष्ट्र में लिखे गए लेख गांधी-विरोधी थे, लेकिन मराठी में इस तरह से लिखे गए थे कि वे भारतीय दंड संहिता के दायरे में नहीं आते थे, यानी हत्या के लिए उकसाना।
15.31 कुछ भाषण भड़काऊ भी थे। डॉ. परचुरे ने अपने भाषण, प्रदर्शनी 131 में कहा कि 'यदि गांधीजी और नेहरू का रवैया जारी रहा तो वे जल्द ही अपने पापों का फल भोगेंगे।'
15.32 अगले दिन, यानी 3 दिसंबर, 1947 को हुई एक अन्य बैठक में (उदाहरण 206), जी.वी. केतकर ने अध्यक्षता की और उन्होंने कहा कि उन्हें गांधीवाद-सह-झूठे राष्ट्रवाद को अपना सर्वोपरि शत्रु मानना चाहिए। केतकर का यह भाषण गांधी के दर्शन के प्रति उनके दृष्टिकोण को भी दर्शाता है, हालांकि इसे गांधी के विरुद्ध नहीं कहा जा सकता।
HINDU RASHTRA DAL

15.34 1942 में हिंदू राष्ट्र दल नामक एक संगठन का गठन हुआ, जिसके मुखिया वी.डी. सावरकर थे (प्रविष्ट पत्र 34, दिनांक 1 अगस्त 1944)। इसके मूल आयोजक दाते, गोगटे, एन.डी. आप्टे और एन.वी. गोडसे थे। इस आंदोलन का उद्देश्य हिंदू सभा की गतिविधियों को आगे बढ़ाना था। इस दस्तावेज़ से यह भी पता चलता है कि मई 1943 में आप्टे और गोडसे ने इसका दूसरा वार्षिक प्रशिक्षण शिविर आयोजित किया, जिसमें विभिन्न मराठा जिलों, बंबई शहर और सांगली, मिराज और इंदौर जैसे मराठा राज्यों के स्वयंसेवक उपस्थित थे। इससे यह भी पता चलता है कि सावरकर दल के मुख्य सूत्रधार और प्रेरक शक्ति थे। उन्होंने नीति निर्धारित की और स्वयंसेवकों से आग्रह किया कि वे एकमात्र निदेशक के रूप में उनके प्रति पूर्ण निष्ठा दिखाएं और रखें।
15.36 22 मई, 1947 को, दस्तावेज़ संख्या 54, जो हिंदू राष्ट्र दल से संबंधित है, राव साहब गुरतू द्वारा डीआईजी, सीआईडी, पुणे के सभी डीएसपी और जिला मजिस्ट्रेटों को जारी किया गया था। इस दस्तावेज़ का उद्देश्य जिला अधिकारियों को दल को पुनर्जीवित करने और उसे नई ऊर्जा देने के प्रयासों के प्रति आगाह करना था। 3 जुलाई, 1947 को तिलक स्मारक मंदिर (दस्तावेज़ संख्या 112) में पुणे नगर हिंदू सभा के तत्वावधान में एक सभा आयोजित की गई, जिसमें लगभग 5000 लोग विभाजन-विरोधी दिवस को 'काला दिवस' के रूप में मनाने के लिए उपस्थित थे। पुणे के एल.बी. भोपटकर ने सभा की अध्यक्षता की। वक्ताओं में जी.वी. केतकर और एन.वी. गोडसे के अलावा हिंदू सभा आंदोलन के अन्य स्थानीय नेता शामिल थे। केतकर ने काला दिवस के सफल आयोजन पर संतोष व्यक्त किया और गोडसे ने कहा कि अब कार्रवाई का समय आ गया है।

15.38 8 अगस्त 1947 को सरकार द्वारा पुणे के डी.आई.जी., सी.आई.डी. और बंबई के पुलिस आयुक्त को एक पत्र (प्रदर्श 113) जारी किया गया, जिसमें आरएसएस के अधिकारियों और सदस्यों तथा हिंदू महासभा संगठनों के नेताओं की सूची मांगी गई और उन्हें इन दोनों आंदोलनों की गतिविधियों पर कड़ी निगरानी रखने तथा इस संबंध में रिपोर्ट भेजने का निर्देश दिया गया। यह पत्र बी.जी. खेर और देसाई के 7 अगस्त 1947 के नोट (प्रदर्श 177) पर आधारित प्रतीत होता है। इसके बाद एक सूची तैयार की गई और 19 अगस्त 1947 को (प्रदर्श 114) भेजी गई।
15.39 इसी प्रकार अहमदनगर के बारे में भी एक ऐसी ही सूची (Ex.ll4A) तैयार की गई थी, जो एक अत्यंत महत्वपूर्ण दस्तावेज है। पुणे में हिंदू सभा के कार्यकर्ताओं में एन.वी. गोडसे और एन.डी. आप्टे शामिल थे, जिनमें से बाद वाले को संभावित रूप से खतरनाक और हिंदू राष्ट्र दल के कट्टर सावरकरवादी आयोजक के रूप में दर्शाया गया था। पहले वाले की गतिविधियाँ भी इसी प्रकार की थीं। अन्य सदस्यों में जी.वी. केतकर थे, जो एक कट्टर सावरकरवादी, मराठा पत्रिका के संपादक और केसरी मराठा ट्रस्ट के न्यासी थे और जिन्हें हिंदू सभा की गतिविधियों का सूत्रधार बताया गया था। एक अन्य सदस्य एन.आर. अठावले थे, जिन्हें एन.डी. आप्टे के सहकर्मी के रूप में संभावित रूप से खतरनाक बताया गया था और जिन्हें विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 3 के तहत गिरफ्तार किया गया था। एक अन्य व्यक्ति डी.आर. बैज थे, जिन्हें बिना लाइसेंस वाले हथियारों का कारोबार करने वाले हिंदू शस्त्र भंडार के स्वामी के रूप में दर्शाया गया है। वे एक कट्टर हिंदू महाभारतवादी थे और उनके खिलाफ शस्त्र अधिनियम के तहत दो मुकदमे दर्ज किए गए थे और उन्हें भी संभावित रूप से खतरनाक माना गया

था। पुणे जिला हिंदू महासभा के नेताओं की एक और सूची भी है। उसमें एन.वी. गोडसे, एन.डी. आप्टे, जी.वी. केतकर, एन.आर. अठावले और कई अन्य महाराष्ट्रीयन नेता शामिल हैं।
15.40 पुनरावृत्ति का जोखिम उठाते हुए भी यह कहा जा सकता है कि यह एक ऐसा दस्तावेज़ है जो आप्टे, गोडसे, बैज और अन्य लोगों के सक्रिय सावरकर समूह के साथ घनिष्ठ संबंध को दर्शाता है, जो वास्तव में 1942 और 1944 से संबंधित दस्तावेजों में दिखाई गई जानकारी का ही पुनरावर्तन है। इस प्रकार यह संबंध पुराना था। JAYPRAKASH NARAYAN'S SPEECH:
15.44 26 नवंबर, 1947 को किरकी बाज़ार में एक सभा आयोजित की गई, जिसमें लगभग एक हज़ार लोग उपस्थित थे। इस सभा को समाजवादी नेता जयप्रकाश नारायण ने संबोधित किया (प्रक्षेप 122)। अपने भाषण में नारायण ने शस्त्रागार और गोला-बारूद कारखाने के श्रमिकों को तत्कालीन प्रचलित राजनीति से अवगत कराना चाहा। उन्होंने कहा कि मुस्लिम लीग ने गरीब मुसलमानों की कीमत पर पाकिस्तान हासिल किया है और धनी पूंजीपति मुसलमान पाकिस्तान भाग गए हैं। उन्होंने दूसरों से आग्रह किया कि वे मुसलमानों को देश से बाहर न निकालें और इस प्रकार और अधिक शत्रु न पैदा करें। उन्होंने कहा कि भारतीय राज्यों के शासक, राजा और महाराजा, हिंदू और मुस्लिम मजदूरों के बीच अशांति पैदा करने की कोशिश कर रहे थे ताकि वे अपनी स्थिति मजबूत कर सकें। उन्होंने आगे कहा कि सेना के जवान देश के नागरिक हैं और उन्हें राजनीति में भाग लेने का अधिकार है। उन्होंने सांप्रदायिकता की बुराई का वर्णन किया, जो उनके अनुसार अभी भी सेना में व्याप्त थी, जिसका निष्कर्ष उन्होंने सशस्त्र बलों द्वारा किए जा रहे दंगों और हत्याओं से निकाला। यह एक ऐसा मामला है जिस पर आयोग को अपनी राय व्यक्त

करने की आवश्यकता नहीं है, लेकिन शायद रक्षा बलों को अपने खिलाफ यह आरोप पसंद नहीं आएगा।
परचुरे का भाषण:
15.45 2 दिसंबर 1947 को पुणे के तिलक स्मारक मंदिर में एक सभा हुई (Ex.131)। मुख्य वक्ता ग्वालियर के डॉ. डी.एस. परचुरे थे, जिन्हें गांधी हत्याकांड में दोषी ठहराया गया था, लेकिन अपील पर बरी कर दिया गया था। उन्हें दूसरा सावरकर कहा जाता था और उनका प्रभाव इतना अधिक था कि ग्वालियर की हर मस्जिद पर भगव ध्वज फहराता था। अपने भाषण में डॉ. परचुरे ने ग्वालियर की स्थिति का जिक्र करते हुए अपनी इच्छाओं को पूरा करने के लिए बल प्रयोग का समर्थन किया। उन्होंने यह भी कहा कि ग्वालियर की सेना में बहुसंख्यक मुसलमान हैं और राज्य मुस्लिम तत्वों को बढ़ा रहा है। उन्होंने यह भी कहा कि सलाहकार श्रीनिवासन ने शासक को सलाह दी थी कि परचुरे और उनके अनुयायी 'कुत्तों के समान' हैं। भाषण का रुझान कांग्रेस-विरोधी और घोर मुस्लिम-विरोधी था। उन्होंने कश्मीर के संबंध में पंडित नेहरू की नीति की आलोचना की और मुस्लिम आक्रामकता के सामने हिंदुओं की निष्क्रियता की ओर इशारा किया। अंत में उन्होंने एक महत्वपूर्ण टिप्पणी की, जिसका महत्व शायद उस समय पूरी तरह से समझा नहीं गया था, कि 'गांधी और नेहरू को जल्द ही अपने पापों का फल भुगतना पड़ेगा।' यह भाषण हिंदी में दिया गया था और पुलिस में कोई हिंदी शॉर्टहैंड रिपोर्टर न होने के कारण इसे शब्दशः लिखा नहीं जा सका और उपस्थित पुलिस रिपोर्टरों ने इसे अपनी स्मृति से दोहराया। जब इसकी रिपोर्ट सरकार को भेजी गई तो उन्होंने भाषण की अधिक प्रामाणिक रिपोर्ट मांगी, लेकिन भाषण मराठी में न होने के कारण इससे बेहतर कुछ नहीं हो सका।

केतकर का भाषण:
3 दिसंबर 1947 को दोपहर 3:47 बजे जी.वी. केतकर की अध्यक्षता में एक बैठक हुई (प्रस्तुति 206)। अपने भाषण में उन्होंने गांधीवाद को सर्वोपरि शत्रु बताया, जिससे यह स्पष्ट होता है कि गांधीवादी दर्शन के प्रति उनका दृष्टिकोण सावरकर समूह के अन्य सदस्यों से बहुत अलग नहीं था। बेशक, इसका यह अर्थ नहीं है कि वे हिंसा के उतने ही बड़े समर्थक या हत्या के पैरोकार थे।
15.48 27 दिसंबर 1947 की खुफिया जानकारी (Ex.121) के सारांश से पता चलता है कि 18 दिसंबर को पूना पुलिस ने आर.एस. खानोलकर के करीबी संपर्क रखने वाले आर.जे. देशमुख के घर पर छापा मारा और वहां से स्टेंगन कारतूस, राइफल कारतूस, रिवॉल्वर कारतूस, बम और हैंड ग्रेनेड के गोले तथा आर्सेनिक ट्राई-क्लोराइड नामक विस्फोटक पदार्थ से भरी एक बोतल बरामद की। इस बरामदगी के संबंध में पांच लोगों को गिरफ्तार किया गया और जांच की गई, लेकिन रिपोर्ट के दूसरे पैराग्राफ में कहा गया है कि हथियारों और गोला-बारूद का संग्रह हैदराबाद संघर्ष में शामिल लोगों की सहायता के लिए किया गया था, जो कि गोडसे आदि से संबंधित इस समूह द्वारा हथियारों के संग्रह को छुपाने का एक आसान बहाना था और उनके असली इरादों और उद्देश्यों को छिपाने का एक सरल तरीका था। 15.49 22 मार्च 1947 को नव वर्ष दिवस (हिंदू पंचांग) की पूर्व संध्या पर, गुड़ी पड़वा नामक एक आपत्तिजनक पर्चा, एक्स. 265 ए, जिसमें सावरकर प्रकार के आतंकवाद की वकालत की गई थी, शिवाजी नगर और देहू रेलवे स्टेशनों पर वितरित किया गया था, लेकिन पुलिस यह पता नहीं लगा सकी कि वे कहाँ मुद्रित हुए थे और किसने वितरित किए थे।
GOPAL GODSE:

15.50 गोपाल गोडसे, गवाह संख्या 33, ने महात्मा गांधी की हत्या के संबंध में कुछ लेख प्रकाशित किए हैं। अगस्त 1966 के मासिक पत्रिका 'पैंजन' में प्रकाशित प्रतिलेख 56 में उन्होंने कहा है कि अधिकारियों के लिए यह सोचना मुश्किल था कि गांधीजी की हत्या में एक बार असफल हो चुका व्यक्ति एक व्यक्ति की गिरफ्तारी और कुछ ही दिनों में अन्य लोगों की संभावित गिरफ्तारी तथा गांधीजी के चारों ओर सुरक्षाकर्मियों के कड़े घेरे के कारण दोबारा प्रयास करने की हिम्मत नहीं करेगा। उन्होंने आगे कहा है कि 20 से 30 जनवरी 1948 के बीच सुरक्षा पुलिस ने जांच में लापरवाही बरती। 'पुलिस जैन और मदनलाल के बयानों से कोई लाभ नहीं उठा पाई। अगर उन्होंने जांच में तत्परता दिखाई होती तो यह त्रासदी टाली जा सकती थी। तमाम सावधानियों के बावजूद भाग्य, संयोग या परिस्थितियों का अनुकूल होना जैसी चीजें होती हैं। किसी व्यक्ति को कई बार मौका महज़ भाग्य से मिल जाता है।'
15.51, सितंबर 1966 के उस पत्रिका के अंक 57 में इस विषय पर चर्चा की गई है कि यह षड्यंत्र कब रचा गया होगा। नवंबर-दिसंबर 1966 के उस पत्रिका के अंक 55 में 'गांधी हत्याकांड और मौलाना आजाद' शीर्षक के अंतर्गत गोपाल गोडसे ने कहा है कि नाथूराम गोडसे गांधीजी की हत्या से दुखी थे और विभाजन को रोकने और गांधीजी के जीवन की रक्षा के लिए वे और आप्टे दोनों ही अपनी जान कुर्बान कर देते। उन्होंने मौलाना आजाद पर गांधीजी के माध्यम से सरदार पटेल और पंडित नेहरू के बीच कलह पैदा करने का आरोप लगाया। उन्होंने मौलाना आजाद पर महात्मा गांधी द्वारा अनशन तोड़ने के लिए रखी गई शर्तों का सूत्रधार होने का भी आरोप लगाया।
REPLY TO JAYPRAKASH NARAYAN'S SPEECH:

15.53, उदाहरण 71, 28 नवंबर, 1947 को शाम 6:30 बजे शिवाजी मंदिर में आयोजित हिंदू महासभा की बैठक की कार्यवाही का विवरण है, जिसमें लगभग 2000 लोग उपस्थित थे। वक्ता वी.बी. गोगटे और एन.वी. गोडसे थे और भाषणों का विषय 'हिंदू राष्ट्र और जयप्रकाश नारायण' था। वक्ताओं ने जयप्रकाश नारायण के समाजवाद पर कटाक्ष किया और हिंदू महासभा और आरएसएस पर उनके हमले का उपहास उड़ाया। उन्होंने समाजवादियों पर पाखंड का आरोप लगाया और हिंदू महिलाओं पर मुसलमानों के अत्याचारों के बारे में भी बात की और समाजवादियों पर पाकिस्तान के निर्माण और भारत के विभाजन और उसके परिणामों में मदद करने का आरोप लगाया।
15.54 उन्होंने कश्मीर को एक हिंदू राजा से छीनकर शेख अब्दुल्ला को सौंपे जाने का भी विरोध किया। वहां यह भी कहा गया कि आरएसएस और हिंदू महासभा पर पंडित नेहरू की हत्या की साजिश रचने का आरोप है। महात्मा गांधी का भी जिक्र किया गया।
पुणे में गवाहों के बयान
15.63 एन.एम. कामटे, सेवानिवृत्त पुलिस महानिरीक्षक, गवाह संख्या 4, की आयोग द्वारा तीन बार और पाठक के समक्ष एक बार पूछताछ की गई। उन्होंने कहा कि पुणे में हिंदू महासभा आंदोलन मौजूद था, लेकिन वे यह नहीं कह सकते कि यह एक सशक्त आंदोलन था या नहीं। इसका उद्देश्य हिंदुओं को एकजुट करना और उनके हितों की रक्षा करना था, और हिंदू महासभा और कांग्रेस के बीच प्रतिद्वंद्विता थी। पुणे में हिंदू राष्ट्र दल का नेतृत्व चितपावन ब्राह्मणों द्वारा किया जाता था।
15.64 हालाँकि हिंदू महासभा विभाजन को लेकर बहुत उत्साहित नहीं थी, लेकिन पश्चिमी पंजाब में जो कुछ हो रहा था उसकी खबर आने पर वह उत्साहित हो गई।

15.67 उन्होंने अखबारों में बम फेंके जाने की खबर पढ़ी। उन्हें इस बारे में किसी ने सूचित नहीं किया था। वे मदनलाल को पुणे के किसी भी व्यक्ति से नहीं जोड़ सके और न ही यह बता सके कि पुणे पुलिस को पता था कि मदनलाल अहमदनगर में रह रहा है। कामते प्रोफेसर जैन को नहीं जानते थे। बम विस्फोट और महात्मा गांधी की हत्या के बीच उन्हें पता नहीं था कि साजिशकर्ता कौन थे और उनके पास पुणे के लोगों की संलिप्तता का संदेह करने का कोई कारण नहीं था। उन्हें इस तथ्य की जानकारी तब मिली जब 30 जनवरी, 1948 की शाम को संजीव ने उन्हें फोन करके हत्या के बारे में बताया। 15.69 पूना पुलिस 20 से 30 जनवरी 1948 तक जांच में शामिल नहीं थी, सिवाय इसके कि राणा दिल्ली में था और उसे कुछ जानकारी दी गई थी और साथ ही मदनलाल के 24 जनवरी 1948 के बयान की एक प्रति भी दी गई थी, जिसे राणा ने हत्या के एक या दो दिन बाद उसे (कामते को) दिखाया था।
15.74 हत्या की सूचना मिलते ही उन्होंने राणा को बुलवाया और मदनलाल का बयान मांगा, जो राणा ने उन्हें दिखाया। कामते ने तब राणा से पूछा कि उन्होंने तुरंत कार्रवाई क्यों नहीं की, पुणे आकर गुरतू को सूचना क्यों नहीं दी। राणा ने जवाब दिया कि वे इंस्पेक्टर अंगारकर का इंतजार कर रहे थे, जो उस समय छुट्टी पर थे। कामते को नहीं लगता था कि पुणे पुलिस साजिशकर्ताओं या आरएसएस के प्रति सहानुभूति रखती है।
15.78 कामते ने पहले कहा कि उन्हें यह नहीं पता था कि षड्यंत्रकारियों का इरादा महात्मा गांधी का अपहरण करना था। उन्हें नागरवाला द्वारा 30 जनवरी 1948 को संजीवी को लिखे पत्र में उल्लिखित तथ्यों की कोई जानकारी नहीं थी। (प्रदर्श 8)। फिर कामते ने आगे कहा कि उन्हें धुंधला सा याद है कि 'नागरवाला ने

शायद मुझे अपहरण के सिद्धांत के बारे में बताया था'। उनका मानना था कि यह एक मनगढ़ंत सिद्धांत था।
एक अन्य प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा: 'सतर्कता संबंधित व्यक्तियों के विरुद्ध संदेह पर निर्भर करेगी। इस मामले में, संदेह महात्माजी की हत्या का नहीं था, बल्कि यह था कि पुणे में कुछ लोग महात्माजी के पाकिस्तान को 55 करोड़ (550 मिलियन) रुपये देने के विचार के विरुद्ध थे। यदि गुरतू को मदनलाल के बयान के बारे में पता चल जाता, तो वह आसानी से इस निष्कर्ष पर पहुँच सकता था कि ये वही लोग हैं जो महात्माजी की हत्या की साजिश रच रहे थे।'
15.82 .... यदि कामते को पता होता कि षड्यंत्र में शामिल लोग बंबई प्रांत से हैं, तो वे महात्मा गांधी के आसपास बंबई से 20 या 25 लोगों को तैनात कर देते ताकि षड्यंत्रकारी उनके पास न पहुँच सकें। गोडसे आदि पुणे सी.आई.डी. के परिचित थे। उन्हें निगरानी में न रखने का कोई ठोस कारण रहा होगा। एक बार किसी व्यक्ति का नाम 'ब्लैक लिस्ट' में आ जाता था, तो 24 घंटे उसकी निगरानी की जाती थी। गोडसे आदि के नाम सूची में न होने का अर्थ है कि सी.आई.डी. को यह जानकारी नहीं थी कि वे खतरनाक हैं।
यह रुख बेहद विचित्र प्रतीत होता है। छह महीने से भी कम समय पहले आप्टे पुणे में हुए बम हमले में आरोपी थे। गोडसे आप्टे का करीबी सहयोगी माना जाता था, फिर भी सभी पुलिसकर्मी यही कहते रहे कि उन्हें नहीं लगता था कि ये लोग संभावित रूप से खतरनाक थे। 15.84 जिरह के दौरान उन्होंने (कामते ने) कहा कि यदि बयान (प्रदर्शनी 1) उन्हें पहले दिखाया गया होता, तो वे उसमें उल्लिखित व्यक्तियों पर नज़र रखते और उन पर निरंतर निगरानी रखते। यदि बयान से हत्या की साजिश का पता चलता, तो वे पुलिस को

उन्हें तुरंत गिरफ्तार करने का आदेश देते और यदि उन्हें बताया गया होता कि एक व्यक्ति पुणे स्थित हिंदू राष्ट्र का संपादक है और दूसरा शास्त्र भंडार का मालिक है, तो वे अपने अधीनस्थ कर्मचारियों के माध्यम से उन व्यक्तियों की पहचान तुरंत पता लगा लेते। हत्या से पहले उन्होंने आप्ते या नाथूराम गोडसे के बारे में नहीं सुना था। यदि उन्होंने उन्हें गिरफ्तार किया होता, तो वे उनके करीबी सहयोगियों पर नज़र रख सकते थे या नहीं भी रख सकते थे।
15.87 संजीव को लिखे अपने 20 अप्रैल 1948 के पत्र (प्रदर्श 97) में कामते ने राणा की लापरवाही की शिकायत की थी। उन्होंने कहा था कि उनका इरादा राणा को तत्काल कदम उठाने की आवश्यकता का एहसास कराना था। उन्हें मदनलाल के बयान की एक प्रति मिली थी और उनकी इच्छा थी कि राणा दोबारा ऐसी गलती न करें। इससे पता चलता है कि कामते की राय में, राणा ने मदनलाल के उस बयान का उपयोग न करके बड़ी गलती की थी जो उन्हें 25 जनवरी 1948 को दिल्ली में सौंपा गया था। लेकिन क्या भविष्य में गांधी जैसा कोई और व्यक्ति होगा जिसे संरक्षण की आवश्यकता होगी?
यू.एच. राणा, विट. 3
15.90 यू.एच. राणा, डी.आई.जी., सी.आई.डी. गवाह संख्या 3, से 7 फरवरी 1967 को पूछताछ के दौरान पूछताछ की गई। उन्होंने बताया कि विस्फोट के अगले दिन संजीव ने उन्हें बुलाया था और बताया था कि मदनलाल ने कुछ जानकारी दी थी जिससे पता चलता है कि उनके साथी बॉम्बे की तरफ से थे, लेकिन यह नहीं बताया कि वे कहाँ के थे। उन्होंने यह नहीं बताया था कि वे पुणे के थे, लेकिन उन्होंने सावरकर का जिक्र किया था। राणा को यह भी बताया गया कि मदनलाल ने कहा था कि उनमें से एक दाढ़ी वाला साधु था, दूसरा उसका नौकर शंकर

था और तीसरा एक अखबार का संपादक था, लेकिन उन्होंने यह नहीं बताया कि अखबार कहाँ से प्रकाशित होता था। सावरकर का जिक्र होने के कारण, राणा ने तुरंत यह निष्कर्ष निकाला कि वे सावरकर के अनुयायी होंगे।
15.94 जब वे पुणे में डीआईजी, सीआईडी थे, तब उन्होंने गोडसे और अन्य लोगों के पंचगनी जाने की खबर नहीं सुनी। नाथूराम गोडसे, आप्टे, बैज या उनके समूह की गतिविधियों के बारे में, या उनके हिंसात्मक इरादों के बारे में, उन्हें कोई महत्वपूर्ण जानकारी नहीं मिली। जिन पुलिस रिपोर्टरों का काम बैठकों की कार्यवाही या राजनेताओं द्वारा दिए गए भाषणों की रिपोर्ट करना था, उन्होंने भी ऐसी कोई रिपोर्ट नहीं बनाई। ये लोग ब्लैक लिस्ट में नहीं थे, जिन पर नज़र रखी जानी थी। न ही उन्हें पता था कि केसरी समूह एक उग्रवादी समूह था। उन्हें यह भी नहीं पता था कि जी.वी. केतकर, भगवान और अन्य लोग हिंदू महासभा से जुड़े थे। 15.97 उन्हें करकरे और मदनलाल को हिरासत में लिए जाने के आदेश की कोई जानकारी नहीं थी। जब उनसे पूछा गया कि क्या उन्होंने करकरे और मदनलाल के बारे में सब-इंस्पेक्टर बलकुंडी की 4 जनवरी 1948 की रिपोर्ट (प्रदर्शनी 66) देखी थी, तो उन्होंने जवाब दिया कि उन्होंने इसे अवश्य देखा होगा क्योंकि इस पर 14 जनवरी की उनकी टिप्पणी थी। लेकिन हिरासत की सिफारिश करना या न करना उनके अधिकार क्षेत्र में नहीं था। वे क्षेत्रीय स्तर पर प्रतिष्ठित व्यक्ति नहीं थे। वे जनवरी में अहमदनगर में तैनात नहीं थे, बल्कि ए.डी.आई.जी. (अपराध) वहां तैनात थे।
15.99 राणा से अहमदनगर में हुई विभिन्न बम घटनाओं के संबंध में पूछताछ की गई और उन्होंने कहा कि उन्होंने रिपोर्टें देखी थीं और 12 दिसंबर 1947 को इंस्पेक्टर रजाक को भेजा था। यदि अहमदनगर

की घटनाओं के संबंध में लिखित रिपोर्टें भेजी गई थीं और उन पर उनके हस्ताक्षर हैं, तो उन्होंने उन्हें अवश्य देखा होगा। उन्हें मदनलाल आदि की गतिविधियों के बारे में इंस्पेक्टर रजाक की रिपोर्ट दिखाई गई, लेकिन उन्होंने कहा कि यह उनके संज्ञान में नहीं आई, हालांकि यह उनके कार्यालय तक पहुंची हो सकती है। न ही उन्हें यह पता था कि करकरे, आप्टे और गोडसे के साथ बैठकें कर रहे थे। उनके ज्ञान के अनुसार, न तो गोडसे और न ही आप्टे प्रांतीय या अंतरप्रांतीय स्तर पर महत्वपूर्ण थे। उन्हें यह सूचना नहीं दी गई थी कि गोडसे और आप्टे अहमदनगर में करकरे से मिल रहे थे।
15.100 उन्होंने प्रतिपत्र संख्या 67, बलकुंडी उप-निरीक्षक की 29 जनवरी 1948 की मदनलाल की पहचान संबंधी रिपोर्ट नहीं देखी थी। यदि डीएसपी को मदनलाल के संबंध में सामान्य प्रक्रिया के दौरान कोई सूचना प्राप्त हुई होती, तो उन्हें यह सूचना मदनलाल को भेजनी चाहिए थी। पुणे और अहमदनगर में हिंसक गतिविधियाँ हुई थीं, लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं था जिससे यह पता चले कि वे गांधी- विरोधी थीं। वे मुस्लिम-विरोधी थीं।
15.106 जब मुंशी के सावरकर के नेतृत्व वाले पूना स्कूल ऑफ थॉट के बारे में दिए गए बयान के बारे में पूछा गया, तो उन्होंने कहा कि यह मौजूद तो था, लेकिन ऐसी कोई जानकारी नहीं थी कि इसकी हिंसा महात्मा गांधी के खिलाफ निर्देशित होगी और न ही उन्हें पता था कि केसरी समूह महात्मा गांधी के खिलाफ था।
15.110 राणा ने कहा:—
'मैंने संजीव को सुबह लगभग 9:30 या 10:00 बजे देखा। उन्होंने बताया कि मदनलाल ने बोलना शुरू कर दिया था और उन्होंने कहा कि वे बंबई से आए थे; सावरकर से मिले थे; और एक करकरे का नाम भी

बताया और एक साधु का जिक्र किया जिसके पास एक नौकर था। संजीव ने मुझे अग्रानी या उसके मालिक या संपादक का नाम नहीं बताया, न ही हिंदू राष्ट्र का नाम, न ही उसके मालिक या संपादक का। मैं फिर से दोहराना चाहूंगा कि उन्होंने (संजीवी ने) अग्रानी और हिंदू राष्ट्र, दोनों अखबारों या उनके मालिकों या संपादकों के नाम नहीं बताए।'
15.112 मदनलाल द्वारा बॉम्बे लाए गए बयान में अग्रानी या हिंदू राष्ट्र का उल्लेख था। संपादक और स्वामी का भी जिक्र था। गवाह के मन में कुछ भ्रम प्रतीत होता है क्योंकि अग्रानी नाम का उल्लेख नहीं है। उसने नागरवाला के घर से पुणे फोन नहीं किया क्योंकि नागरवाला ने उसे बताया था कि एक बड़ा संगठन सक्रिय है और वे एक साथ गिरफ्तारियां करना चाहते हैं। नागरवाला की सूचना के अनुसार, वे महात्मा गांधी का अपहरण करना चाहते थे। इसलिए, उसने पुणे स्थित अपने कार्यालय को अग्रानी के संपादक के संबंध में कोई सावधानी बरतने के लिए सूचित नहीं किया। इसके अलावा, वह अगली सुबह पुणे जा रहा था और उसने सोचा कि वहाँ पहुँचने पर वह कार्रवाई करेगा।
15.114 उन्हें नहीं लगता था कि अपराधी तुरंत लौटकर अपनी योजना को अंजाम देंगे। संजेवी भी इसी राय के थे, खासकर इसलिए क्योंकि उनमें से एक को गिरफ्तार कर लिया गया था।
15.117 राणा से एक विशिष्ट प्रश्न पूछा गया कि क्या पूना सीआईडी को अपराधियों के बारे में यह जानकारी थी कि वे हिंसक गतिविधियों में भाग लेने की संभावना रखते हैं। उन्होंने उत्तर दिया:—

'अब मैं कह सकता हूं कि उनमें से आप्टे, गोडसे, करकरे, अथावले और बैज संभावित उपद्रवी थे जो हिंसक गतिविधियों में भाग ले रहे थे।'
15.118 उनसे पूछा गया कि क्या बॉम्बे पुलिस को भेजने से इस त्रासदी को टाला जा सकता था? उन्होंने उत्तर दिया कि प्रश्न में कई धारणाएँ निहित हैं, जैसे कि वही व्यक्ति अपराध करेगा, वही स्थान चुनेगा या वहाँ भेजे गए लोग उनकी पहचान कर सकेंगे। उन्होंने कहा कि जनवरी तक उन्हें यह जानकारी नहीं थी कि मदनलाल ने करकरे और सावरकर के अलावा किसी अन्य व्यक्ति का नाम लिया था। उन्हें यह नहीं बताया गया था कि मदनलाल ने 20 जनवरी 1948 की मध्यरात्रि को पुलिस को बयान दिया था। संजीवी ने उन्हें बताया कि मदनलाल के बॉम्बे पक्ष में अन्य सहयोगी थे और उनमें से एक दाढ़ी वाला साधु था, लेकिन उन्होंने यह नहीं बताया कि उनमें से एक राष्ट्र समाचार पत्र का प्रबंधक या संपादक था। न ही संजीवी ने यह बताया कि मदनलाल ने अपने छह साथियों का विवरण अपने सह-षड्यंत्रकारियों के रूप में दिया था।
15.121 उसने मदनलाल का बयान नागरवाला के पास नहीं छोड़ा क्योंकि (1) नागरवाला को गृह मंत्री से पहले ही जानकारी मिल चुकी थी, (2) उसे करकरे और सावरकर के बारे में सूचित किया गया था,
(3) नागरवाला का पूना से कोई लेना-देना नहीं था, और (4) वह स्वयं अगले दिन पूना जा रहा था और वह स्वयं कार्रवाई करेगा।
अगले दिन, राणा को संयोगवश बुखार हो गया और इसलिए उसने पुणे लौटने का अपना फैसला टाल दिया।
15.128 वह (राणा) 28 तारीख की सुबह गृह मंत्री से मिलने गए। उनका उद्देश्य यह पता लगाना था कि उनका मुखबिर कौन था, जिसका पता नागरवाला नहीं लगा पाए थे। यदि पहचान बता दी जाती, तो शायद

उन्हें कुछ और जानकारी मिल पाती। वह 2 फरवरी को हत्या के बाद दिल्ली पहुंचे। श्रीमती बर्वे द्वारा उल्लेखित साठे के बारे में उन्हें कुछ भी पता नहीं था।
15.129 जिरह के दौरान उन्होंने (राणा ने) कहा कि जब वे 21 तारीख को संजीवी के पास गए, तो वहाँ कुछ अन्य पुलिस अधिकारी भी थे, जिनमें से एक ऋखीकेश और दूसरा भाटिया थे, जो बम कांड के जांच अधिकारी थे। उनमें से किसी के पास भी मदनलाल का बयान नहीं था और बातचीत मौखिक थी, किसी दस्तावेज़ का हवाला नहीं दिया गया और न ही किसी ने अग्रानी या हिंदू राष्ट्र या किसी अन्य समाचार पत्र के संपादक का ज़िक्र किया, न ही संजीवी ने उनसे किसी समाचार पत्र के बारे में पता लगाने को कहा। उन्हें बताया गया कि मदनलाल ने तीन व्यक्तियों का ज़िक्र किया था - करकरे, एक साधु और उसका नौकर, और अन्य साथी बंबई की तरफ से मराठा थे। बंबई के मराठों का ज़िक्र होते ही, उन्हें (राणा को) सावरकर और उनके समूह पर शक हुआ। उन्होंने संजीवी से बंबई का ज़िक्र इसलिए किया क्योंकि सावरकर वहाँ रहते थे और पुणे का ज़िक्र इसलिए किया क्योंकि वह हिंदू महासभा समूह का गढ़ था। उन्होंने यह नहीं सुना था कि बंबई जाने वाले अधिकारियों ने मदनलाल के बयान का सारांश लिया था। उन्हें बताया गया कि मदनलाल का बयान उर्दू में था; इसका अनुवाद किया जा रहा था ताकि बॉम्बे में चल रही जांच में उन्हें और बॉम्बे पुलिस को मदद मिल सके।
15.131 इस तथ्य से कि संजीवी को पता था कि राणा ट्रेन से यात्रा कर रहा है, उसे यह आभास हुआ होगा कि षड्यंत्रकारियों में से एक के गिरफ्तार हो जाने के कारण, अन्य लोग जल्द ही वापस आकर कोई और अपराध नहीं करेंगे। संजीवी ने उससे कहा कि बंबई और पुणे पहुँचने पर आवश्यक कार्रवाई करना पर्याप्त होगा और उसे

सावधानीपूर्वक और गुप्त रूप से आगे बढ़कर एक ही बार में सभी को पकड़ लेना चाहिए। 25 तारीख को संजीवी ने उससे कहा कि षड्यंत्रकारियों में से एक अखबार का संपादक था, लेकिन उसने उस व्यक्ति का नाम या अखबार के प्रकाशन का स्थान नहीं बताया। 15.136 नागरवाला ने उसे यह भी बताया कि उसने अहमदनगर से पूछताछ की थी और उसे पता चला था कि करकरे अब वहां नहीं है और उसने अपने आदमियों को बॉम्बे में करकरे की तलाश में तैनात कर दिया है। साथ ही, वह पुणे से कुछ पुलिस अधिकारियों को बैज की पहचान करने के लिए भी चाहता था, जो अवैध हथियारों का एक कुख्यात तस्कर था। नागरवाला ने उसे बताया कि उसका मानना था कि यह महात्मा गांधी के अपहरण का प्रयास था। उसने यह निष्कर्ष अपने मुखबिरों से मिली जानकारी के आधार पर निकाला था। नागरवाला ने उसे बताया कि इसमें 20 मुख्य सरगना थे और उनमें से प्रत्येक के अधीन कई लोग काम करते थे और नागरवाला को विश्वास था कि यह जानकारी सही है। 15.137 जब नागरवाला बोल रहे थे, 'मैं उन्हें सुन रहा था और उनसे इस बारे में कुछ सवाल भी पूछ रहा था। मुझे यह सिद्धांत बेतुका नहीं लगा; बल्कि मैंने उनसे कहा कि वे डी.आई.बी. को टेलीफोन पर सूचित करें।'
15.141 जब वह पुणे गए तो उन्होंने अंगारकर के बारे में पूछा, लेकिन वह बीमार थे। फिर उन्होंने देउलकर के बारे में पूछा, लेकिन वह भी अलीबाग में होने के कारण उपलब्ध नहीं थे और उन्हें तुरंत वायरलेस द्वारा वापस बुला लिया गया। राव साहब गुरतू मदनलाल द्वारा बताए गए सभी अपराधियों के नाम जानते थे। पुणे में अन्य अधिकारी भी मौजूद थे, लेकिन राणा केवल अंगारकर या देउलकर को ही चाहते थे क्योंकि वे ही करकरे के साथियों के नाम और उनके छिपने के स्थानों को जानते थे। उन्होंने पुणे में उन

लोगों की उपस्थिति के बारे में किसी से नहीं पूछा। बाद की पूछताछ से पता चला कि जब वह पुणे पहुंचे, तो आप्टे और गोडसे वहां नहीं थे और उन्हें खुद बैज के ठिकाने का पता नहीं था। उन्हें पता चला कि करकरे को महाराज कहा जाता था। हत्या के बाद संजीवी ने कामते से बंबई से कुछ पुलिस अधिकारियों को भेजने के लिए कहा और उन्हें 31 जनवरी को सैन्य विमान से भेजा गया, लेकिन वह नहीं जानते थे कि वे कौन थे। ऐसा इसलिए था क्योंकि यह आशंका थी कि केंद्रीय मंत्रिमंडल के मंत्रियों पर भी हमला हो सकता है। जब राणा को जांच की निगरानी के लिए दिल्ली वापस भेजा गया तो वह संजीव के साथ रहे और तीसरे दिन सुबह दोनों ने एक-दूसरे से बात की लेकिन संजीव ने उन्हें यह नहीं बताया कि नागरवाला ने गलत दिशा में काम किया था।
राव साहब गुरुतु. विट. 22.
15.146 राव साहब गुरतु, गवाह संख्या 22, पुणे में सहायक डी.आई.जी., सी.आई.डी. थे। उन्होंने बताया कि डी.एस.पी. अहमदनगर ने 1947 के अंत में या उसके आसपास मदनलाल के बारे में उल्लेख किया था, जिन्होंने शरणार्थियों की एक सभा को संबोधित किया था, जिसके परिणामस्वरूप अशांति फैल गई थी। गवाह करकरे के बारे में भी जानते थे, जो अहमदनगर में एक प्रमुख हिंदू महासभा नेता थे। 15.147 नाथूराम गोडसे, करकरे, आप्टे और बैज तथा कई अन्य व्यक्तियों के समूह की सांप्रदायिक गतिविधियों के बारे में खबरें आती रहती थीं, जिनके नाम उन्हें याद नहीं थे, लेकिन वे हिंदू सभा आंदोलन के नाम से जाने जाते थे। ऐसी खबरें थीं कि हिंदू महासभा आंदोलन के कुछ कार्यकर्ता बम तैयार कर रहे थे, लेकिन महात्मा गांधी की हत्या करने की उनकी कोई मंशा नहीं थी।

15.153 गवाह को करकरे का एक जब्त किया गया पत्र (Ex.43) दिखाया गया, जो पुणे के विभिन्न समाचार पत्रों को प्रकाशन के लिए भेजा गया था। उसने कहा कि उसे इसके बारे में पता चल गया होगा क्योंकि इस पर उसकी सहमति थी। उसे करकरे की हिरासत के आदेशों की जानकारी थी, लेकिन वह यह नहीं बता सका कि ये आदेश क्यों जारी किए गए थे। 15.154 गोडसे की गतिविधियों पर भी पुलिस की नजर थी, लेकिन यह निगरानी लगातार नहीं थी ताकि वह बच न सके। अगर पुणे पुलिस को किसी का नाम पता होता, तो उसे गिरफ्तार करने के लिए कदम उठाए जाते। उन्हें 20 जनवरी से 30 जनवरी 1948 के बीच नागरवाला से हुई किसी भी बातचीत की याद नहीं थी। अगर गवाह को बताया जाता कि मदनलाल द्वारा बताए गए व्यक्तियों में से एक अग्रानी या हिंदू राष्ट्र का संपादक है, तो वह उसे तुरंत गिरफ्तार कर लेता। जब उनसे पूछा गया कि मदनलाल द्वारा नामित व्यक्तियों को वह कैसे गिरफ्तार करते, जबकि करकरे पर वारंट प्रभावी ढंग से तामील नहीं किए जा सकते थे, तो उनका जवाब था कि यह काम जिला पुलिस कर रही थी, न कि सीआईडी।
15.155 जिरह के दौरान उन्होंने बताया कि डी.आई.जी. द्वारा डी.एस.पी. से प्राप्त रिपोर्टों को संकलित करके प्रत्येक सप्ताह डी.आई.बी. को रिपोर्टें भेजी जाती थीं, जिनमें गोडसे, आप्टे, करकरे, सावरकर और ग्वालियर के डॉ. परचुरे के नाम शामिल थे। यद्यपि 15 अगस्त 1947 से स्थानीय पुलिस द्वारा कुछ हिंदू महासभा और आरएसएस कार्यकर्ताओं पर निगरानी रखी जा रही थी, लेकिन नवंबर 1947 में यह निगरानी बंद कर दी गई। PRAVINSINHJI VIJAYSINHJI, WIT. 38.
गवाह संख्या 38, प्रवीणसिंहजी विजयसिंहजी, जुलाई 1947 से मई 1949 के बीच पुणे के डीएसपी थे और बाद में बंबई के पुलिस

[redacted] 1947 [redacted]
15.165 [redacted]
15.167 [redacted]

हिंसा करने की संभावना रखने वाले हर व्यक्ति की गतिविधियों की जानकारी रखने का प्रयास करती थी। लेकिन उसे आप्टे और गोडसे की गतिविधियों के बारे में कोई जानकारी नहीं थी।
15.170 हिंदू राष्ट्र दल के बारे में गवाह ने कहा कि इसकी गतिविधियों और इसके सदस्यों की गतिविधियों पर नजर रखने के लिए एक परिपत्र जारी किया गया था, लेकिन उसे याद नहीं था कि इसके सदस्य कौन थे।
यह ध्यान देने योग्य है कि प्रवीणसिंहजी विजयसिंहजी ने पुणे में हुए बम विस्फोट को, जिसमें अठावले और आप्टे को हिरासत में लिया गया था, महत्वहीन बताया, क्योंकि उनके अनुसार यह किसी विशिष्ट व्यक्ति को निशाना बनाकर नहीं किया गया था। बम विस्फोट में एक युवक के घायल होने और एक वाहन के क्षतिग्रस्त होने तथा शहर के मध्य भाग में विस्फोट होने से उन्हें कोई फर्क नहीं पड़ा।
जी.पी. अंगारकर. गवाह. 68
15.187 पुलिस उप अधीक्षक जी.पी. अंगारकर, गवाह संख्या 68, जुलाई 1947 से जनवरी 1948 के अंत तक संबंधित अवधि के दौरान खुफिया शाखा में कार्यरत थे। पुलिस के संक्षिप्त संवाददाता बैठकों की कार्यवाही उन्हें भेजते थे और वे इसे उच्च अधिकारियों को भेज देते थे। जिन लोगों के भाषणों की रिपोर्ट देनी होती थी, उनमें कुछ हिंदू सभा कार्यकर्ता थे, लेकिन सूची में कोई आरएसएस कार्यकर्ता नहीं था। पूर्व कार्यकर्ताओं में बैरिस्टर सावरकर और एल.बी. भोपटकर शामिल थे। सावरकर हिंदू महासभा के अध्यक्ष थे, नाथूराम गोडसे उनके अंगरक्षक जैसे थे, लेकिन वे कोई विशेष रूप से प्रमुख व्यक्ति नहीं थे। आप्टे एक समय सरकारी कर्मचारी और अहमदनगर में भारतीय सेना में मानद भर्ती अधिकारी थे। (वास्तव

में आप्टे द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान पुणे में रॉयल इंडियन एयर फोर्स के मानद भर्ती अधिकारी थे।) बैज का एक शस्त्र भंडार था जिस पर कई बार छापा मारा गया। बैज द्वारा अन्य जिलों में हथियार भेजने पर उन जिलों को भी रिपोर्ट भेजी जाती थी। लेकिन उन्हें खतरनाक नहीं माना जाता था, इसलिए पुणे से उनकी अनुपस्थिति पर किसी का ध्यान नहीं गया।
15.196 अग्रानी की नीति गांधी-विरोधी और कांग्रेस-विरोधी थी और यह अखबार स्पष्ट रूप से एक सांप्रदायिक अखबार था।
15.199 विभाजन के बाद पुणे में भी हिंदू-मुस्लिम तनाव था। वह यह नहीं कह सकते थे कि बरामद हथियारों का हिंदू महासभा से कोई संबंध था या नहीं। बाबासाहेब परंजपे की गिरफ्तारी के बाद गवाह को पता चला कि हथियार हैदराबाद भेजे जा रहे थे। छापेमारी में एक खाता बही मिलने पर उन्हें हिंदू महासभा के हथियारों से संबंध का पता चला। आप्टे और गोडसे को गिरफ्तार नहीं किया गया क्योंकि वे उस घर में मौजूद नहीं थे जहां छापेमारी की गई थी।
15.203 सरकार या सी.आई.डी. द्वारा उन खतरनाक व्यक्तियों की सूची बनाई जाती थी जिन पर नज़र रखी जानी थी। वे उन लोगों पर भी नज़र रखते थे जिन्हें वे खतरनाक मानते थे और जो सूची में शामिल नहीं थे। बैज उनमें से एक था। उस पर नज़र इसलिए रखी जाती थी क्योंकि वह हथियारों का व्यापार करता था। उसकी गतिविधियों पर नज़र रखने के लिए तैनात एक व्यक्ति को दूसरों की गतिविधियों पर भी नज़र रखने का काम सौंपा जाता था। वह पता लगाता था कि उससे कौन मिलने आता है और वह खुद कहाँ जाता है।
15.204 बैज की पहचान आसानी से की जा सकती थी। उसकी लंबी दाढ़ी और लंबे बाल थे। उसके घर की कई बार तलाशी ली गई। हिंदू-मुस्लिम तनाव के संदर्भ में उसे खतरनाक माना जाता था।

15.205 आप्टे के घर की तलाशी 1947 में दो बार और नाथूराम गोडसे के घर की एक बार ली गई थी।
15.206 यदि उन्हें पता होता कि अग्रानी का संपादक बिड़ला हाउस पर बम फेंकने की साजिश में शामिल था, तो वे निश्चित रूप से उसे गिरफ्तार कर लेते और यदि वह पुणे में नहीं होता, तो वे उसका पता लगाने की कोशिश करते और फिर उसका पीछा करते। यदि उन्हें पता होता कि वह बंबई गया है, तो वे उसका पीछा करते हुए वहाँ तक पहुँच जाते। वे जहाँ भी होता, उसका पता लगाने की कोशिश करते और यहाँ तक कि नई दिल्ली तक उसका पीछा करते। यदि उन्हें पता होता कि गोडसे मदनलाल के साथियों में से एक था, तो वे तुरंत आप्टे को उससे जोड़ देते क्योंकि वे घनिष्ठ मित्र थे। अठावले को भी एक साथी माना जाता।
15.207 खादिलकर, सांसद ने आयोग के समक्ष कहा था कि इंस्पेक्टर अंगारकर 'उनके बीच' हुआ करते थे, यानी वे उनसे काफी दोस्ताना थे और सब कुछ जानते थे, इसलिए उन्होंने महात्मा गांधी के जीवन को खतरे के बारे में पुलिस को कोई रिपोर्ट नहीं दी।
15.214 जुलाई-अगस्त 1947 में उन्हें इस बात की कोई जानकारी नहीं थी कि गांधीजी का जीवन खतरे में है। खादिलकर ऐसा कह सकते हैं, लेकिन गवाह के पास ऐसी कोई जानकारी नहीं थी।
के.एम. मुंशी, विट. 82
15.218 के.एम. मुंशी, एक प्रख्यात अधिवक्ता, जिन्होंने सरकार में हर तरह के उच्च पद धारण किए हैं और एक प्रसिद्ध कांग्रेस नेता बन गए हैं, ने अपने बयान (गवाह संख्या 82) में कहा कि महात्मा गांधी के खिलाफ राजनीतिक विचार का एक समूह था, जिसे संक्षेप में केसरी समूह के रूप में जाना जाता है।

15.219 इस समूह का नेतृत्व सावरकर ने किया था, जिन्होंने छात्र जीवन से ही हिंसा की वकालत की और राजनीतिक हत्याओं में विश्वास रखते थे।
15.211 आई.बी. फाइल संख्या 8/सीए/48-II के पृष्ठ 18 पर सी.आई.डी. की एक रिपोर्ट से पता चलता है कि केसरी समूह, सावरकर समूह से भिन्न था। इस दस्तावेज़ से पता चलता है कि जब अगस्त 1943 तक वी.डी. सावरकर को लगभग 2,19,514 रुपये नकद प्राप्त हुए, तो केसरी समूह को आशंका हुई कि सावरकर अंततः लोकमान्य तिलक को पीछे छोड़ सकते हैं।
15.222 महाराष्ट्र में 'केसरी' विचारधारा के राजनीतिक तौर-तरीकों में इस संघर्ष के परिणामस्वरूप महात्मा गांधी के प्रति व्यक्तिगत पूर्वाग्रह उत्पन्न हुए। लेकिन गांधीजी के 'भारत छोड़ो' आंदोलन से उपजे भावनात्मक देशभक्ति के सैलाब और इसके प्रभाव का सामना करने में असमर्थता के कारण, कोई भी गांधी- विरोधी होने का कलंक लेने को तैयार नहीं था। लेकिन सावरकर ने कभी अपना झंडा नहीं झुकाया; वे राजनीतिक हत्या में विश्वास रखते रहे। हालांकि, जब देश गांधीजी के 'भारत छोड़ो' आंदोलन की लहर में बह रहा था, तब वे शांत रहे और पृष्ठभूमि में चले गए। केसरी विचारधारा में लोगों का एक ऐसा वर्ग था जो वास्तव में मानता था कि हिंदुओं को मुस्लिम आक्रामकता का सामना करने के लिए एक मजबूत संगठन की आवश्यकता है और वे धर्मनिरपेक्षता समूह की कमजोर नीति से आशंकित थे।
15.223 गवाह ने आगे कहा कि देश में उत्पन्न परिस्थितियों में विभाजन अपरिहार्य था; लेकिन गांधीजी इसके विरोधी थे, जिसके परिणामस्वरूप जवाहरलाल नेहरू और सरदार पटेल के साथ उनके संबंध तनावपूर्ण हो गए। मुंशी का मत था कि यदि उस समय भारत का विभाजन न

हुआ होता, तो हर स्तर पर गृहयुद्ध छिड़ जाता, जिसके परिणामस्वरूप हर शहर में और रक्षा सेवाओं और पुलिस के बीच भी झड़पें होतीं; लेकिन उत्तर भारत में आम तौर पर हिंदुओं के बीच यह भावना बनी रही कि विभाजन के लिए महात्मा गांधी जिम्मेदार थे। हिंदुओं की यही भावना थी कि यदि महात्मा गांधी ने पाकिस्तान को सौंपकर मुसलमानों को खुश न किया होता, तो हिंदू उन कष्टों से बच जाते जिनका उन्हें सामना करना पड़ा।
15.224 आयोग की राय में, यह उस समय देश में, विशेष रूप से महाराष्ट्र में और भारत के उत्तरी प्रांतों में प्रचलित राजनीतिक चिंतन का निष्पक्ष और सही आकलन है। पुणे में घटी घटनाओं के संदर्भ में इस पर चर्चा की गई है क्योंकि पुणे केसरी समूह का केंद्र था और पुणे के आसपास के महाराष्ट्रीयन जिलों में व्याप्त चरम हिंदू विचारधाराओं की गतिविधियों का भी केंद्र था। आयोग को इस संबंध में और भी बहुत कुछ कहना है और मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्यों पर भी चर्चा करनी है। लेकिन इतना कहना पर्याप्त होगा कि केसरी समूह के सदस्यों में गांधी- विरोधी भावना प्रबल थी। इस मामले में, सावरकर पर षड्यंत्र के सदस्य के रूप में मुकदमा चलाया गया था, लेकिन उन्हें बरी कर दिया गया था। आयोग के समक्ष यह कहा गया है कि प्रेरणा सावरकर से ही मिली थी और उन्होंने मदनलाल को उनके प्रस्तावित कार्य के लिए शाबाशी भी दी थी।
श्रीमती सरला कलर्स, गवाह संख्या 39
15.225 श्रीमती बर्वे, गवाह संख्या 39, ने अपने लिखित बयान (प्रदर्श 72) में कहा कि उनके पति, जो पुणे के जिला मजिस्ट्रेट थे, हिंदू महासभा के सदस्यों की अवैध गतिविधियों के बारे में जानते थे और इसीलिए उनकी गतिविधियों पर नज़र रखी जाती थी।

उन्होंने अधिकारियों पर उचित ध्यान न देने का आरोप लगाया। उनके अनुसार, 20 जनवरी 1948 को बम फेंकना किसी गंभीर घटना, जैसे हत्या, का पूर्व संकेत था। उन्होंने यह भी कहा कि उनके पति को दिल्ली में होने वाली संभावित अशांति के बारे में कुछ जानकारी थी और इसी कारण उन्होंने मोरारजी देसाई को फोन करके इसकी सूचना दी थी।
15.226 उन्होंने बताया कि महात्मा गांधी की हत्या से दो-तीन दिन पहले साठे नाम का एक व्यक्ति उनके घर आया था, लेकिन चूंकि उनके पति वहां मौजूद नहीं थे, इसलिए उसने उन्हें बताया कि पुणे के कुछ लोग महात्मा गांधी की हत्या करने के लिए दिल्ली गए हैं। उन्होंने यह कहानी अपने पति को भी सुनाई थी। उन्होंने साठे से पूछा कि वह कहां रहता है, तो उसने बताया, 'सदाशिव पेठ' और वह एक सेवानिवृत्त स्कूल शिक्षक है।
15.227 27 जनवरी 1948 को, उसने अपने पति को काफी बेचैन पाया। उसने उसे कमरे से बाहर जाने के लिए कहा और फिर पुलिस महानिरीक्षक कामते को फोन किया। थोड़ी देर बाद उसने अपने पति को बताया कि साठे ने उसे क्या बताया था, जिससे उसका पति और भी बेचैन, चिंतित और गंभीर हो गया और उसके बाद से वह लगभग हर समय फोन करता रहता था।
GOPAL GODSE, WIT. 33
15.229 गोपाल गोडसे ने आयोग के समक्ष अपने बयान में कहा कि, नाथूराम गोडसे और आप्टे हैदराबाद संकट के लिए हथियार जमा कर रहे थे जिसे प्रांतीय सरकार की मंजूरी प्राप्त थी।
15.236 यदि कड़ी निगरानी रखी गई होती और अहमदनगर, पूना या बॉम्बे की पुलिस ने नाथूराम या करकरे या आप्टे की गतिविधियों

पर कड़ी नज़र रखी होती, तो संभव है कि यह हत्या उनके द्वारा न की गई होती।
15.244 नाथुराम और आप्टे अहमदनगर जाया करते थे।
15.245 सभी षड्यंत्रकारी बंदूक की आवाज के पांच मिनट के भीतर प्रार्थना सभा से बाहर निकल गए। 20 तारीख को बिड़ला हाउस में कई पुलिसकर्मी मौजूद थे, लेकिन किसी ने भी उस टैक्सी को रोकने की कोशिश नहीं की जिसमें षड्यंत्रकारी भाग निकले।
15.246 पुणे की स्थिति और परिस्थितियों के बारे में गवाही देने वाले अन्य गवाह श्रीमान एस. आर. भगवत (गवाह संख्या 69), आर. के. खादिलकर (सांसद) (गवाह संख्या 97) और जी. वी. केतकर (गवाह संख्या
1) हैं। इसके अतिरिक्त पुलिस द्वारा दर्ज किए गए बलुकक कनितकर के बयान (प्रदर्श 81), उनके लेख (प्रदर्श 11), भारत के महामहिम गवर्नर जनरल को लिखे उनके पत्र और पुरुषार्थ (प्रदर्श 166) में उनके लेख भी हैं। इन पर अलग-अलग अध्यायों में चर्चा की गई है, जहां वे उचित रूप से आते हैं।
आर.के. खाडिलकर, गवाह 97
15.247 जैसा कि गवाह संख्या 1, जी.वी. केतकर ने कहा था कि उन्होंने आर.के. खादिलकर से अपने देखे और सुने गए तथ्यों और गोडसे द्वारा उन्हें बताई गई बातों के बारे में बात की थी, आयोग ने खादिलकर से पूछताछ करना आवश्यक समझा, जिन्होंने आयोग के समक्ष उपस्थित होने के लिए सहर्ष सहमति दी। इस मामले पर उनका बयान बहुत ही खुलासा करने वाला है।
15.248 जब केतकर द्वारा उनके साथ बातचीत के बारे में पूछे जाने पर, खादिलकर का जवाब था कि उन्हें केतकर के साथ यात्रा करने या केतकर द्वारा उन्हें गोडसे द्वारा कही गई बातों के बारे में सूचित करने की कोई याद नहीं है।

15.250 उन्होंने गवाही दी है कि 20 जनवरी 1948 को पहले प्रयास से पहले ही पुणे में गांधीजी पर हमले की साजिश रचे जाने की अफवाहें थीं। अफवाहें इस प्रकार थीं कि गांधीजी के साथ कुछ बुरा होगा। लोग उनकी निंदा कर रहे थे और कह रहे थे, 'अता वाचनार नहीं', 'अब उनके लिए कोई बचाव नहीं बचा था'।
15.253 पुणे का वातावरण महात्मा गांधी के प्रति अत्यंत विषैला और शत्रुतापूर्ण था और लोगों का मानना था कि यदि वे जीवित रहे तो वे पाकिस्तान को खुश करने के लिए देश का सौदा कर देंगे। खादिलकर ने दोहराया कि: पुणे पुलिस की खुफिया जानकारी "उनके साथ" थी। इस गवाह का ध्यान बॉम्बे गृह विभाग के सचिव धेजिया के उस कथन की ओर दिलाया गया कि पुणे में हिंसक प्रचार मुस्लिम विरोधी था। इस पर उनका उत्तर था कि यह कहना गलत है कि मुसलमान इस आक्रोश या हिंसा के लिए उकसाने का निशाना थे; यह कहना अधिक सही होगा कि यह असंतोष और आक्रोश मुख्य रूप से कांग्रेस और विशेष रूप से महात्मा गांधी के विरुद्ध निर्देशित था।
एस.आर. भागवत, विट. 69
15.257 एस.आर. भगवत, गवाह संख्या 69, ने एम.जी. कनितकर को लिखे पत्र, प्रदर्शनी 115 ए में कहा कि स्वर्गीय बलुकाका कनितकर ने स्वर्गीय बी.जी. खेर और स्वर्गीय सरदार पटेल को महात्मा गांधी की हत्या की साजिश के बारे में सूचित किया था, लेकिन किसी ने भी उन पर विश्वास नहीं किया।
15.258 भागवत ने इस आयोग के समक्ष कहा कि बलुकाका कनितकर ने अपने एक भाषण में कहा था कि नाथूराम गोडसे के रिश्तेदार और मित्र कह रहे थे कि महात्मा गांधी मुसलमानों के पक्षधर हैं और हिंदू हितों की रक्षा नहीं कर रहे हैं। इसलिए उन्हें 'हटा दिया जाना चाहिए'। उन्हें कोई भी ऐसा पद या स्थान नहीं दिया जाना

चाहिए जहाँ वे पाकिस्तान से संबंधित निर्णयों को प्रभावित कर सकें, लेकिन उन्होंने यह नहीं कहा कि लोग कह रहे थे कि महात्मा गांधी की हत्या कर दी जानी चाहिए।
15.260 उसने (भगवत) हत्या से पहले बी.जी. खेर से मुलाकात की और उसने गवाह से कहा कि उसे विश्वास नहीं था कि गांधीजी का जीवन खतरे में है और 'मैं कल्पना कर रहा था'।
निष्कर्ष
15.265 मोटे तौर पर कहें तो, पुणे में राजनीतिक विचारधारा का एक सशक्त समूह था जो हिंदू महासभा से जुड़ा हुआ था, उसका एक हिस्सा था, फिर भी वैचारिक रूप से उससे भिन्न था। इस समूह को के.एम. मुंशी ने संक्षेप में सावरकर के नेतृत्व वाला केसरी समूह कहा है। कामते ने इसे चितपावन ब्राह्मणों का समूह बताया है, लेकिन यह वास्तव में गांधी-विरोधी नहीं था। इस समूह में भी कुछ लोग राजनीतिक हत्या करने को तैयार थे और कुछ ऐसे भी थे जिनकी गतिविधियाँ भले ही मुस्लिम-विरोधी प्रचार तक सीमित रही हों, लेकिन वे राजनीतिक विरोधियों की हत्या करने तक नहीं जाते थे। 15.266 (1) पूना में हिंदू महासभा मजबूत थी; (2) बम विस्फोट की घटनाएं हुईं; और (3) हथियारों का जखीरा मिला, जिसके संबंध में कई बार तलाशी ली गई।
कार्रवाई की गई और लोगों को गिरफ्तार किया गया।
लेकिन ये सभी गतिविधियां मुसलमानों को भारत से बाहर निकालने और उन्हें पाकिस्तान जाने के लिए मजबूर करने के उद्देश्य से की गई थीं।
15.268 गोपाल गोडसे ने तो यहाँ तक कह दिया था कि अगर नाथूराम गोडसे, आप्टे और करकरे को गिरफ्तार भी कर लिया जाता, तो भी उनकी जगह लेने वाले और महात्मा गांधी को खत्म करने वाले दूसरे लोग

होते, जिससे यह पता चलता है (हालाँकि उसने सीधे तौर पर नहीं कहा) कि महात्मा गांधी की हत्या की साजिश के दूरगामी परिणाम थे, जो पुलिस की जाँच से पता नहीं चले थे या न्यायाधीश आत्मचरण की अदालत में मुकदमे के दौरान सामने नहीं आए थे।
15.269 हत्या की साजिश में वास्तव में भाग लेने वाला समूह हिंदू महासभा कार्यकर्ताओं में सबसे उग्रवादी समूह था। उन्होंने हिंदू राष्ट्र दल नामक एक अलग संगठन बनाया था, जो आयोग के समक्ष प्रस्तुत साक्ष्यों के आधार पर संभवतः आरएसएस से भी अधिक उग्रवादी था और वी. डी. सावरकर द्वारा प्रचारित 'जैसे को तैसा' की विचारधारा में पूर्ण विश्वास रखता था।

अध्याय सोलह में अहमदनगर की स्थिति का वर्णन किया गया है। 16.1 अहमदनगर से संबंधित दस्तावेजी साक्ष्य दर्शाते हैं कि करकरे 1947 की शुरुआत में भी हिंदू महासभा के प्रमुख सदस्यों में से एक थे। वे नोआखली गए और वहां की घटनाओं पर भड़काऊ भाषण दे रहे थे। स्थिति इतनी गंभीर थी कि जिला मजिस्ट्रेट ने उनके और एक अन्य व्यक्ति के खिलाफ धारा 144 दंड प्रक्रिया संहिता के तहत आदेश जारी किए। एक पत्र से पता चलता है कि वे हथियार आयात कर रहे थे।
16.2 बंबई सरकार द्वारा हिंदू महासभा और आरएसएस नेताओं की सूची संकलित करने के लिए पारित आदेश अहमदनगर पर भी लागू था। उदाहरण 114 ए इसी जिले से संबंधित है और उसमें वी.आर. करकरे का नाम भी शामिल था। यह अगस्त 1947 तक की स्थिति है।
16.5 दिनांक 22 जनवरी 1948 का दस्तावेज़ संख्या 266, जिला मजिस्ट्रेट की साप्ताहिक गोपनीय रिपोर्ट का एक अंश है। इसमें दर्शाया गया है कि वी.आर. करकरे हिंदू महासभा के भावी कार्यों के बारे में हिंदू महासभा के नेताओं से परामर्श करने और यह शिकायत करने गए थे कि स्थानीय हिंदू महासभा कार्यकर्ता शरणार्थियों के बीच उनकी गतिविधियों के कारण उनके साथ सहयोग नहीं कर रहे थे। यह रिपोर्ट गलत प्रतीत होती है क्योंकि अन्य साक्ष्य यह दर्शाते हैं कि करकरे 10 जनवरी 1948 से पहले ही अहमदनगर से गायब हो गए थे और महात्मा गांधी की हत्या के घृणित कार्य में लगे हुए थे, न कि हिंदू महासभा के भावी कार्यों के बारे में नेताओं से परामर्श करने में। दिनांक 31 जनवरी का दस्तावेज़ संख्या 227 दर्शाता है कि करकरे पिछले 12 या 13 दिनों से अहमदनगर से बाहर थे और उन्होंने चेंबूर स्थित शरणार्थी शिविर का दौरा किया था और बंबई में घूम रहे थे। 228 एक

हानिरहित प्रकार की रिपोर्ट है जो दर्शाती है कि करकरे को हिरासत आदेश के तहत गिरफ्तार नहीं किया गया था क्योंकि वह अहमदनगर से फरार हो गया था।
16.6 प्रदर्श 67, दिनांक 29 जनवरी, 1948, उप-निरीक्षक बलकुंडी की डी.आई.जी. को दी गई रिपोर्ट है, जिसमें कहा गया है कि मदनलाल वही व्यक्ति प्रतीत होता है जो अहमदनगर में सक्रिय था और वह वी.आर. करकरे के साथ 'लगभग 15 दिन पहले' चला गया था और अहमदनगर वापस नहीं लौटा था। मदनलाल आरएसएस का कट्टर सदस्य था। लेकिन यह रिपोर्ट, चाहे इसकी प्रामाणिकता कुछ भी हो, एक विलंबित दस्तावेज थी।
16.7 26 जनवरी, 1948 को इंस्पेक्टर रजाक ने अहमदनगर और पुणे के डीएसपी को एक रिपोर्ट भेजी, जिसमें एस.वी. केतकर और अन्य व्यक्तियों द्वारा नामित व्यक्तियों की सूची शामिल थी। ये नाम संभवतः जांच के दौरान सी.आई.डी. के इंस्पेक्टर सावंत की मदद से प्राप्त किए गए थे। रजाक के पत्र के साथ संलग्न इस रिपोर्ट (प्रस्तुति 58) में 25 व्यक्तियों के नाम हैं, जिनमें एस.वी. केतकर, वी.आर. करकरे, आर.एस. रेखी और डी.वी. गोडसे शामिल थे। इनमें से केतकर, करकरे और रेखी को चरमपंथी विचार रखने वाले व्यक्ति माना जाता था, चाहे उस शब्द का जो भी अर्थ हो। इनमें से दो, डी.वी. गोडसे और चंदेकर, पुणे के निवासी बताए गए थे। एस.वी. केतकर और रेखी करकरे के गेस्ट हाउस से जुड़े थे और डी.वी. गोडसे, नाथूराम गोडसे के भाई थे, और अन्य लोग करकरे की शौकिया नाट्य मंडली के सदस्य थे।
16.13 मदनलाल का संपर्क विष्णु आर. करकरे से हुआ, जो महात्मा गांधी की हत्या की साजिश में आरोपी था। करकरे अहमदनगर में एक होटल का मालिक और संचालक था और उसने शरणार्थियों को जुलूस

निकालने और मुस्लिम विरोधी गतिविधियों में शामिल होने के लिए उकसाने में अपने पद और प्रभाव का भरपूर इस्तेमाल किया। उसकी रणनीति अहमदनगर के मुसलमानों को डरा-धमकाकर भगाना और उनके घरों और व्यवसायों को शरणार्थियों को सौंप देना था। इस तरह उसने फल मंडी में मुसलमानों के स्वामित्व वाली कई दुकानें हथिया लीं और उनमें से एक मदनलाल को भी दे दी।
16.23 गवाहों के साक्ष्य और आयोग के समक्ष प्रस्तुत दस्तावेजों से पता चलता है कि 24 नवंबर 1947 और 26 दिसंबर 1947 के बीच अहमदनगर कस्बे में चार बम फेंके गए थे।
इन बम धमाकों के संबंध में जिला अधिकारियों द्वारा सरकार को सूचना भेजी जा रही थी। 8 दिसंबर 1947 को जिला मजिस्ट्रेट ने बंबई सरकार के मुख्य सचिव को एक पत्र लिखकर वसंत टॉकीज में हुए बम धमाके और उससे हुए नुकसान का विवरण दिया। पत्र की एक प्रति पुणे स्थित सी.आई.डी. के डी.आई.जी. को भी भेजी गई थी। इसके बाद सी.आई.डी. के इंस्पेक्टर रजाक, गवाह संख्या 34, को बम धमाकों की जांच में सहायता के लिए अहमदनगर भेजा गया। तब तक दो धमाके हो चुके थे। इंस्पेक्टर रजाक ने आकर अपनी जांच की और उनके साक्ष्य से पता चलता है कि बम धमाके हिंदू महासभा के कार्यकर्ताओं द्वारा किए गए थे, लेकिन किसी को गिरफ्तार नहीं किया गया था, हालांकि गांधी हत्याकांड में आरोपी करकरे और मदनलाल पर इन धमाकों में शामिल होने का संदेह था। 18 दिसंबर 1947 को उन्होंने एक रिपोर्ट (पूर्व संख्या 61) बनाई जिसमें उन्होंने कहा कि कप्पड़ बाजार में फेंके गए एक बम को छोड़कर, जो अलग था, बाकी सभी बम एक ही प्रकार के थे, जो 3 जून 1947 को बॉम्बे में वासन पुष्पसेन के स्वामित्व वाली एक बम फैक्ट्री में मिले बमों के समान थे। इस फैक्ट्री का पता बॉम्बे सीआईडी ने लगाया था और

इनमें से एक बम पुलिस अधिकारी इंस्पेक्टर रणभिस द्वारा पुणे लाया गया था। इस खोज के सिलसिले में कुछ गुजरातियों को गिरफ्तार किया गया था। उनके अनुसार, इससे एक ही स्रोत और एक ही एजेंसी के संचालन का संकेत मिलता है। 24 दिसंबर 1947 (पूर्व संख्या 62) को मुस्लिम लीग के सचिव और मुस्लिम नेशनल गार्ड्स के कैप्टन के घरों की तलाशी ली गई, लेकिन कुछ भी आपत्तिजनक नहीं मिला। इसकी रिपोर्ट पूर्व संख्या 62 है। यह दस्तावेज़ यह भी दर्शाता है कि स्थानीय सचिव सप्तर्षि सहित कांग्रेस नेताओं की जान को खतरा था और मुहर्रम के जुलूस में फेंका गया बम पुणे के शनिवार पेठ में हुए बम के समान था।
मदनलाल कश्मीरीलाल पाहवा, वासेन पुष्पसेन फायरवर्क्स में काम करता था, जहाँ कारखाने के गुप्त हिस्से में हथगोले बनाए जाते थे। पुलिस की छापेमारी से कुछ ही मिनट पहले वह भागने में कामयाब हो गया था। यही एक कारण था कि वह अहमदनगर चला गया था। वह अपने साथ बड़ी मात्रा में हथगोले ले जाने के लिए जाना जाता था। 16.33 5 जनवरी, 1948 को रावसाहेब पटवर्धन हिंदू-मुस्लिम एकता को बढ़ावा देने के लिए कांग्रेस की एक सभा को संबोधित कर रहे थे। मदनलाल पाहवा कई हिंदू महासभा कार्यकर्ताओं के साथ वहां पहुंचे और सभा में बाधा उत्पन्न की। गांधी हत्याकांड के मुकदमे के दौरान अपने ही बयानों के अनुसार, उन्होंने रावसाहेब पटवर्धन की गर्दन पकड़कर उन्हें मंच से धक्का दे दिया था। इस संबंध में पुलिस रिपोर्टों में विरोधाभास है। सहायक पुलिस अधिकारी राणे के अनुसार, मदनलाल उग्र स्वभाव के थे और सभा के दौरान नारे लगा रहे थे तथा सभा को बाधित करने की धमकी दे रहे थे। सहायक पुलिस अधिकारी बलकुंडी ने कहा कि मदनलाल और उनके साथियों ने सभा के दौरान गड़बड़ी की, लेकिन यह बात सही नहीं है कि मदनलाल ने

पटवर्धन को पकड़ा था और उन पर चाकू से हमला करने की कोशिश की थी। करकरे भी वहां पहुंचे और उन्होंने भी चिल्लाना शुरू कर दिया तथा मांग की कि उन्हें और मदनलाल को बोलने दिया जाए। उन्होंने मंच से माइक छीनने की कोशिश की। इसके बाद सभा समाप्त हुई और जब श्रोता तितर-बितर हो गए, तब मदनलाल और दो अन्य लोगों को गिरफ्तार कर लिया गया। मदनलाल को कुछ समय के लिए लॉकअप में रखा गया और बताया गया कि मदनलाल अक्सर उपद्रव करता था। इंस्पेक्टर रजाक ने बताया कि मदनलाल और करकरे दोनों को पुलिस स्टेशन लाया गया और वहाँ उनसे पूछताछ की गई, लेकिन कोई उपयोगी जानकारी नहीं मिली। उस समय मदनलाल ने हिंसक आंदोलनों में भाग न लेने का वचन दिया और उसे छोड़ दिया गया। सब-इंस्पेक्टर बलकुंडी ने गवाही दी कि लगभग 6 जनवरी 1948 को मदनलाल और करकरे दोनों अहमदनगर से गायब हो गए और पुलिस को उनके ठिकाने के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। सब-इंस्पेक्टर देशमुख दोनों की तलाश में थे।
16.34 उस समय अहमदनगर में पुलिस शॉर्टहैंड रिपोर्टर रहे एक अन्य गवाह सब-इंस्पेक्टर एल.एन. जोशी (गवाह 36) की गवाही से पता चलता है कि मदनलाल ने उन्हें बताया था कि वह शादी करने के लिए दिल्ली जा रहा है। यह घटना लगभग 10 जनवरी 1948 को हुई थी। 16.36 9 जनवरी को इंस्पेक्टर रजाक ने देशमुख को मदनलाल और करकरे दोनों की हिरासत की सिफारिश करने की सलाह दी। एस.आई. बलकुंडी ने कहा है कि उन्होंने मदनलाल और करकरे को हिरासत में लेने या देश से बाहर निकालने की सिफारिश की थी।
16.37 8 जनवरी 1948 की रिपोर्ट पर एस.एम. दलाई ने 11 जनवरी को और वी.टी. दाहेजिया ने 12 जनवरी को समर्थन दिया, और उसी दिन गृह मंत्री मोरारजी देसाई ने आदेश दिया कि रिपोर्ट में उल्लिखित

व्यक्तियों को गिरफ्तार किया जाना चाहिए और पूछा कि जिला मजिस्ट्रेट ने ऐसा पहले क्यों नहीं किया।
इन तथ्यों के आधार पर यह मानना अविश्वसनीय है कि पुलिसकर्मियों, गृह मंत्री और खुफिया अधिकारियों को दस दिन बाद ही सामूहिक रूप से सब कुछ भूल जाने की बीमारी हो गई। जब प्रो. जैन ने मोरारजी देसाई को मदनलाल के इकबालिया बयान के बारे में बताया, तो देसाई को याद नहीं आया कि उन्होंने दस दिन पहले ही मदनलाल और अहमदनगर के करकरे दोनों के लिए हिरासत आदेशों पर हस्ताक्षर किए थे।
16.41 डीएसपी का बयान है कि उन्हें यह बात अचानक से याद नहीं आई कि दिल्ली में गिरफ्तार किया गया मदनलाल वही व्यक्ति है जिसे अहमदनगर में गिरफ्तार किया गया था, लेकिन उन्हें धुंधला सा याद है कि इंस्पेक्टर रजाक और सब-इंस्पेक्टर देशमुख ने मदनलाल की पहचान को लेकर अपने संदेह का जिक्र किया था। उन्होंने उनसे कहा कि अगर ऐसा है तो मदनलाल से दिल्ली पुलिस ने पूछताछ की होगी और उन्हें सब पता चल जाएगा। उन्होंने देशमुख से कहा कि अगर वह दिल्ली जाना चाहते हैं तो जा सकते हैं और रजाक से भी कहा कि पुणे लौटने पर वे इस संदेह के बारे में सीआईडी के डीआईजी को बता दें। हैरानी की बात यह है कि उन्होंने न तो सीआईडी के डीआईजी को फोन करना उचित समझा और न ही जिला मजिस्ट्रेट को इसकी सूचना दी। 16.48 साक्ष्यों से यह प्रतीत होता है कि सहायक जांचकर्ता बलकुंडी करकरे और मदनलाल की गतिविधियों से अवगत थे। यह भी प्रतीत होता है कि उन्हें संदेह था कि बम फेंकने वाला मदनलाल वही व्यक्ति था जो अहमदनगर में सक्रिय था, लेकिन किसी कारणवश उन्होंने अपने संदेह को लिखित रूप में दर्ज नहीं किया और जब उन्होंने ऐसा किया तो उसका कोई लाभ नहीं हुआ। यह भी प्रतीत होता

है कि इसी गवाह ने करकरे का विवरण पुणे सीआईडी को दिया था और आई.बी. फाइल में मौजूद तस्वीर भी उसी ने उपलब्ध कराई थी।
16.50 सब-इंस्पेक्टर बलकुंडी ने बताया कि नाथूराम गोडसे और आप्टे दोनों अहमदनगर आते थे, उनकी मुलाकात करकरे से होती थी और वह तथा उनके कर्मचारी इन दोनों की गतिविधियों पर नजर रख रहे थे, हालांकि इस खुफिया जानकारी से कुछ भी हासिल नहीं हुआ। उन्होंने यह भी बताया कि उन्हें नहीं पता था कि करकरे गोडसे और आप्टे को कोई पैसा भेज रहे थे या नहीं। लेकिन उन्हें यह जरूर पता था कि करकरे हिंदू महासभा के संरक्षण में काम कर रहे थे। उन्होंने आगे बताया कि जब मदनलाल और करकरे जनवरी 1948 के दूसरे सप्ताह के आसपास अहमदनगर छोड़कर चले गए क्योंकि वहां का मौसम उनके लिए बहुत गर्म हो गया था, तो उन्हें लगा कि वे कोल्हापुर जाकर जेरे के साथ रहने लगे होंगे, जो हिंदू महासभा के वेतनभोगी कार्यकर्ताओं में से एक था। अब यह एक महत्वपूर्ण सबूत है क्योंकि 6 फरवरी 1948 की व्याख्या में भी उन्होंने कहा है कि करकरे, जैसा कि पता चला था, कोल्हापुर गया था और संभवतः जेरे के पास शरण लेने वाला था जो नगर (अहमदनगर) में काम कर रहा था और यह जानकारी इंस्पेक्टर रजाक को दे दी गई थी जो इस पर काम कर रहे थे, लेकिन दुर्भाग्य से यह 7 फरवरी 1948 को हुआ था।
16.51 मदनलाल द्वारा बम फेंकने के बाद, करकरे को संबोधित एक पत्र सब-इंस्पेक्टर देशमुख ने पकड़ लिया। पत्र के लेखक का पता नहीं चल सका, लेकिन उसमें लिखा था कि बंबई में एक इमारत का निर्माण करना है जो करकरे की मदद के बिना संभव नहीं है। देशमुख यह पत्र डीएसपी को लेकर गए और उन्हें बताया कि इसका अर्थ सतही तौर पर दिखने से कहीं अधिक गहरा है। दूसरे शब्दों में, यह सांकेतिक भाषा में लिखा गया था। डीएसपी ने उस पत्र की एक प्रति

डीआईजी, सीआईडी को भेजी और बंबई में जांच करने का अनुरोध किया। देशमुख ने डीएसपी को सुझाव दिया कि वे (देशमुख) करकरे के ठिकाने का पता लगाने के लिए बंबई और पुणे जाएं और वे एक रेक्टोफोटो मशीन खरीदने के बहाने बंबई के लिए रवाना हो गए। वे अपने साथ सब-इंस्पेक्टर एल.एन. जोशी को भी ले गए, क्योंकि जोशी पुणे के रहने वाले थे और आप्टे और गोडसे को जानते थे। वे अग्रानी प्रेस गए और आप्टे और गोडसे के बारे में पूछताछ की। यह 29 जनवरी 1948 की बात है। उन्हें बताया गया कि दोनों में से कोई भी पुणे में नहीं है। तब वे किसी बहाने से आप्टे के घर गए और श्रीमती चंपाताई आप्टे से आप्टे के बारे में पूछा। उन्होंने बताया कि आप्टे ग्वालियर गए हैं। जोशी पुणे में ही रहे और देशमुख दादर की एक मिल में काम करने वाले करकरे के भाई के बारे में पता लगाने के लिए बंबई गए। उन्होंने रात करीब 9 बजे तक करकरे के बारे में पूछताछ की, तभी उन्हें महात्मा गांधी की हत्या की खबर मिली।
16.52 देशमुख की साप्ताहिक डायरी के एक अंश से पता चलता है कि वह 28 जनवरी 1948 को पुणे पहुंचे और रात 11 बजे तक गोपनीय पूछताछ की। 29 जनवरी को उन्होंने और गोपनीय पूछताछ की और सुबह 11:30 बजे पुणे से रवाना हुए, शाम 4 बजे बॉम्बे पहुंचे और कुर्ला जाकर वहां पूछताछ की और फिर दादर लौट आए। अगले दिन, यानी 30 जनवरी को, वह बायकुला, वी.टी., कालबादेवी, दादर और परेल क्षेत्रों में घूमे और गोपनीय पूछताछ की। इस रिपोर्ट में यह नहीं बताया गया है कि वह किस प्रकार की गोपनीय पूछताछ कर रहे थे या किसके बारे में, लेकिन इस गवाह की गवाही के इस हिस्से से एक या दो महत्वपूर्ण बातें सामने आती हैं। (1) देशमुख करकरे की तलाश में पुणे गए थे; और यदि ऐसा था

इसलिए यह कल्पना करना मुश्किल है कि वह अग्रानी क्यों गया होगा।
प्रेस से उनके बारे में पूछा और फिर उन्होंने वहां पूछताछ की। आप्टे और गोडसे के ठिकाने के बारे में। यह अभी भी बहुत आश्चर्यजनक है कि देशमुख
और एल.एन. जोशी को श्रीमती आप्टे के पास जाकर पता लगाना चाहिए था कि उनकी
पति था और फिर इस गवाह (देशमुख) को वहां से चले जाना चाहिए था। करकरे की तलाश में बॉम्बे जाना। यह सब कुछ समझ से परे है और प्रतीत भी नहीं होता।
बहुत तार्किक बनें। अगर करकरे की तलाश की जा रही थी तो गवाह को... उन्होंने बताया कि उन्होंने अग्रानी प्रेस से उनके बारे में जानकारी प्राप्त की।
और श्रीमती आप्टे से, जिसका उन्होंने उल्लेख नहीं किया है। और यह संबंध।
करकरे और अग्रानी प्रेस के बीच या श्रीमती आप्टे को उपस्थित होना चाहिए
कम से कम आयोग के समक्ष साक्ष्य में कहीं न कहीं। (2) इससे पता चलता है कि गवाह करकरे को आप्टे और गोडसे से जोड़ रहा था। कारण स्पष्ट नहीं है। उन्होंने अपने साक्ष्य में कहीं भी यह नहीं कहा है कि
उनकी जानकारी के अनुसार, गोडसे और आप्टे, करकरे के साथ मेलजोल रख रहे थे।
अहमदनगर, हालांकि सब-इंस्पेक्टर बलकुंडी ने कहा है कि दोनों गोडसे और आप्टे अहमदनगर में करकरे से मिला करते थे।

(3) यदि करकरे ने जेरे के साथ कोल्हापुर में शरण ली थी, तो उसे क्यों रखा जा रहा था?
पुणे में क्या खोजा जा रहा था? इसके अलावा, कोल्हापुर में पुलिस क्यों नहीं थी?
क्या आपने उनके बारे में संपर्क किया है?
(4) द्वारा की गई पूछताछ के लिए कोई ठोस कारण खोजना कठिन है
ये गवाह आप्टे और गोडसे के बारे में हैं, न कि करकरे के बारे में। जैसा कि
जैसा कि ऊपर कहा गया है, घटनाएँ ठीक से मेल नहीं खातीं और तस्वीर अधूरी सी लगती है।
मानो फोकस से बाहर हो गया हो। या तो इन गवाहों के पास जानकारी थी।
क्या करकरे, आप्टे और गोडसे के बीच कोई संबंध था या नहीं?
अगर ऐसा हुआ होता, तो उनसे यही उम्मीद की जाती कि वे सूचित कर देते।
अधिकारियों को इस मामले के बारे में और करकरे के गायब होने के समय के बारे में सूचित किया गया।
अहमदनगर में, उन्होंने उसे उन जगहों पर खोजा होगा जहां आप्टे और गोडसे इस संगठन के बारे में जानते थे या उन्हें इस संगठन के बारे में कोई जानकारी नहीं थी।
16.53 लेकिन इतना तो स्पष्ट है कि सब-इंस्पेक्टर एल.एन. जोशी श्रीमती आप्टे को जानते थे। वास्तव में, उन्होंने बताया है कि उन्होंने करकरे को अपना व्यवसाय शुरू करने में मदद की थी और करकरे प्रकाशन कार्य में आप्टे की मदद कर रहे थे। उन्होंने यह भी बताया है कि देशमुख को संदेह था कि आप्टे और उनके साथी दिल्ली गए हैं, लेकिन उन्होंने इस तथ्य का उल्लेख किसी से नहीं

किया और न ही डीएसपी को सूचित किया। उन्होंने आगे कहा है कि जब उन्होंने आप्टे के बारे में पूछताछ की तो श्रीमती आप्टे को कोई संदेह नहीं हुआ क्योंकि वे एक-दूसरे को कुछ समय से जानते थे। जोशी की आप्टे और करकरे से यह पूर्व परिचय एक भयावह अर्थ रख सकता है और फिर भी कमोबेश हानिरहित भी हो सकता है। जोशी ने कहा है कि उन्हें हिंदू महासभा के प्रति कोई सहानुभूति नहीं थी। एल.एन. जोशी ने यह भी कहा है कि वे देशमुख के साथ इसलिए गए क्योंकि वे पुणे में करकरे के मित्रों को जानते थे और इसी कारण अग्रानी कार्यालय गए थे। इन परिस्थितियों में, शायद देशमुख के लिए एल.एन. जोशी को साथ ले जाना बहुत बुद्धिमानी भरा कदम नहीं था। जोशी उनके साथ।
16.54 लेकिन कोल्हापुर में जेरे के साथ करकरे के छिपने के बारे में उनकी पिछली जानकारी को देखते हुए, उनके पूना और बंबई जाने का कारण एक रहस्य बना हुआ है।
कपूर आयोग ने अहमदनगर पुलिस के कुछ अधिकारियों और करकरे तथा आप्टे-गोडसे गिरोह के बीच सांठगांठ की ओर हल्का सा इशारा किया है। हत्या के बाद, प्यारेलाल ने लिखा कि कई पुलिस अधिकारियों और नौकरशाहों में हिंदू महासभा और आरएसएस के प्रति सहानुभूति थी, और प्रशासन में इन कट्टरपंथी संगठनों के सदस्यों की व्यापक घुसपैठ थी। जब आरएसएस और हिंदू महासभा पर प्रतिबंध लगाने का निर्णय लिया गया, तो यह खबर लीक हो गई और दोनों संगठनों के शीर्ष नेतृत्व भूमिगत हो गए। एक मामले में, एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी ने अपने अधिकार क्षेत्र में आरएसएस और हिंदू महासभा के कार्यकर्ताओं को सलाह दी कि जब तक मामला शांत न हो जाए, तब तक वे कुछ समय के लिए निष्क्रिय रहें। यह आश्चर्य की बात नहीं होगी यदि अहमदनगर के दो पुलिस अधिकारी वास्तव में करकरे, आप्टे और

गोडसे को गिरफ्तार करने के बजाय उन्हें चेतावनी देने के लिए यात्रा पर गए थे कि पुलिस उनके करीब आ रही है।
16.85 गवाह संख्या 36, लक्ष्मण नारायण जोशी, बॉम्बे सीबीआई के सी.आई.डी. से जुड़े एक डी.एस.पी. हैं। वे 1947-50 में डी.एस.पी. अहमदनगर के अधीन सी.आई.डी. अहमदनगर में सब इंस्पेक्टर के रूप में कार्यरत थे।
16.86 10 जनवरी को मदनलाल ने उसे बताया था कि वह शादी करने दिल्ली जा रहा है। जब गांधीजी की सभा में बम फेंके जाने की खबर रेडियो पर आई या अखबारों में छपी, तो गवाह को लगा कि यह वही मदनलाल है जो अहमदनगर में था और उसने अपने संदेह के बारे में सब-इंस्पेक्टर से बात की। लेकिन जाहिर तौर पर इस जानकारी का कोई उपयोग नहीं किया गया, अगर वास्तव में यह दी गई थी। दूसरे, जब मदनलाल के खिलाफ हिरासत के आदेश जारी किए गए और वह फरार हो गया, तो इस गवाह ने उसके फरार होने की जानकारी दी; या उसके दिल्ली जाने की जानकारी दी, यह मानते हुए कि उसे हिरासत के आदेशों की जानकारी थी। वह मदनलाल की तलाश भी कर रहा था। सब-इंस्पेक्टर देशमुख को भी ऐसा ही संदेह था और वह इस मदनलाल की पहचान के बारे में डीएसपी से बात करने गया। यह लगभग 24 जनवरी 1948 को हुआ था। वे दोनों डीएसपी के पास गए लेकिन देशमुख ने बात की, इंस्पेक्टर रजाक भी वहां मौजूद थे। उनके अनुसार डीएसपी ने... गवाह ने कहा कि दिल्ली पुलिस को जांच के लिए आना चाहिए और उन्हें इस मामले में दखल नहीं देना चाहिए बल्कि करकरे को गिरफ्तार करके मदनलाल के बारे में सारी जानकारी हासिल करनी चाहिए। गवाह को यह नहीं पता था कि इसका क्या मतलब था।
16.87 27 या 28 जनवरी को देशमुख ने गवाह को अपने साथ पुणे चलने के लिए कहा। लगभग पाँच दिन बाद क्यों, यह वह नहीं बता सका। चूंकि

वह पुणे में करकरे के कुछ मित्रों को जानता था, इसलिए वे पुणे गए। उन्होंने अग्रानी प्रेस और देशमुख के कुछ मित्रों से मुलाकात की। जब देशमुख पूछताछ कर रहा था, तब यह गवाह बाहर खड़ा रहा। उसे नहीं पता कि वे नाथूराम गोडसे के घर गए थे या नहीं, लेकिन वे लगभग 3:30 या 4:00 बजे आप्टे के घर, आनंद आश्रम गए थे। गवाह अंदर गया और श्रीमती आप्टे से करकरे के बारे में पूछा, तो उन्होंने कहा कि उन्हें करकरे के बारे में कोई जानकारी नहीं है, लेकिन आप्टे सावरकर का साहित्य प्रकाशित करने के लिए नागपुर गए थे और वहाँ से वे ग्वालियर गए होंगे।
16.89 इस गवाह का बयान काफी महत्वपूर्ण है। हालांकि उसे पता था कि मदनलाल दिल्ली गया है, फिर भी उसने सब-इंस्पेक्टर देशमुख को कोई सूचना नहीं दी। अगर मदनलाल और करकरे की गतिविधियों पर नज़र रखी जा रही थी और गवाह मदनलाल को जानता था, जैसा कि वह कहता है, तो यह मानना मुश्किल है कि उसे मदनलाल की गतिविधियों पर नज़र रखे जाने की जानकारी नहीं थी। इसके अलावा, वह करकरे के होटल में खाना खाता था और मदनलाल भी वहीं खाना खाता था।
16.94 गवाह का कहना है कि वह करकरे की गतिविधियों के बारे में नहीं जानता था, हालांकि वह 1937 से उसका मित्र था। उसे यह नहीं पता था कि बम विस्फोट के सिलसिले में करकरे के घर की तलाशी ली गई थी, फिर भी अगले ही क्षण वह कहता है कि उसे पता था कि बम विस्फोटों के सिलसिले में करकरे के घर की तलाशी ली जा रही है और इंस्पेक्टर रजाक इसी सिलसिले में आए थे। उसने स्वीकार किया है कि वह श्रीमती आप्टे और उनके पति को लंबे समय से जानता था और उसका मित्र आप्टे का बीमा करवाना चाहता था, लेकिन उसे यह नहीं पता कि उसका मित्र किस कंपनी का एजेंट था। उसने रजाक और देशमुख को करकरे की गिरफ्तारी के बारे में बात करते हुए सुना था।

16.95 यह गवाह करकरे का मित्र था। उसने होटल शुरू करने में करकरे की मदद की थी। वह दस साल से करकरे का मित्र था और यह मानना मुश्किल है कि उसे करकरे की गतिविधियों के बारे में जानकारी नहीं थी। वह आप्टे को भी जानता था और इस बात से अवगत था कि आप्टे और करकरे मित्र थे। उसे पता था कि करकरे शहर से बाहर है, फिर भी जब पुलिस उसकी तलाश कर रही थी तो उसने पुलिस को इसकी कोई जानकारी नहीं दी। उसे यह भी पता था कि मदनलाल दिल्ली जा रहा है, यह जानकारी भी उसने पुलिस बल में अपने साथियों को नहीं दी। वह करकरे का पता लगाने के लिए पुणे गया था, जहाँ वह उसके कुछ मित्रों को जानता था।
16.96 पुलिस उप अधीक्षक अनंत शामराव बलकुंडी, गवाह संख्या 37, अब औरंगाबाद में सी.आई.डी. के पुलिस उप अधीक्षक हैं। जुलाई 1945 से जुलाई 1948 तक वे अहमदनगर में सी.आई.डी. में उप निरीक्षक थे। 16.98 जब 20 जनवरी को महात्मा गांधी की प्रार्थना सभा के दौरान बिरला हाउस में बम विस्फोट हुआ और यह घटना प्रेस में प्रकाशित हुई, तो इस गवाह को संदेह हुआ कि उसमें वर्णित मदनलाल वही व्यक्ति है जो अहमदनगर में गतिविधियाँ चला रहा था। उसने अपने संदेह इंस्पेक्टर रजाक को बताए, जिन्होंने डीएसपी को सूचित किया, लेकिन डीएसपी ने क्या आदेश दिए, यह गवाह को ज्ञात नहीं है। 16.101 इस गवाह के संबंध में अगला महत्वपूर्ण साक्ष्य 9 फरवरी 1948 का उनका स्पष्टीकरण (Ex.69) है। उन्होंने उसमें कहा (1) कि उन्हें अहमदनगर में डी.आई.जी. के शिविर की जानकारी नहीं थी; (2) कि शहर में अशांति के कारण वे 1 फरवरी 1948 को वेद प्रकाश से पूछताछ की व्यवस्था नहीं कर सके; (3) कि डीएसपी ने उन्हें सूचित किया कि पुणे में करकरे के रिश्तेदारों और नौकरों के बारे में पूरी जानकारी के साथ उनकी, यानी गवाह की, तलाश थी और उस जानकारी

को इकट्ठा करने में वे व्यस्त रहे थे और उन्होंने करकरे की तस्वीर के साथ वह जानकारी उप अधीक्षक चौबल को सौंप दी थी; (4) कि वे साप्ताहिक और विशेष रिपोर्टों के माध्यम से करकरे और मदनलाल की गतिविधियों के बारे में लगातार रिपोर्ट कर रहे थे और अंततः 4 जनवरी 1948 को उन दोनों की हिरासत के बारे में रिपोर्ट दी थी।
(5) कि 6 जनवरी 1948 को रावसाहेब पटवर्धन की बैठक के बाद अहमदनगर का माहौल करकरे और मदनलाल के लिए बहुत तनावपूर्ण हो गया था और इसलिए वे अहमदनगर से गायब हो गए थे; (6) कि करकरे ने अपनी पत्नी को लिखा था कि वह सप्ताह के दौरान आ रहे होंगे और रेलवे स्टेशन और मोटर स्टैंड पर कड़ी निगरानी रखी जा रही थी; (7) कि करकरे कोल्हापुर गए थे जहाँ वे संभवतः एक जेरे के साथ शरण लेंगे।
16.103 इस गवाह के बयान से एक और महत्वपूर्ण सबूत यह निकलता है कि गोडसे और आप्टे दोनों अहमदनगर आकर करकरे से मिलते थे और यह गवाह और उसके कर्मचारी अहमदनगर में आप्टे और गोडसे दोनों की गतिविधियों पर नजर रख रहे थे, हालांकि इस खुफिया जानकारी से कुछ भी हासिल नहीं हुआ। गवाह को यह नहीं पता था कि करकरे गोडसे और आप्टे को कोई पैसा भेज रहे थे या नहीं। और उन्हें अहमदनगर में रची जा रही किसी साजिश की भी कोई जानकारी नहीं थी।
16.136 अहमदनगर से मिले सबूतों से पता चलता है कि अगर दिल्ली पुलिस या बॉम्बे पुलिस ने पहले ही प्रयास किए होते तो करकरे और मदनलाल दोनों का पूरा रिकॉर्ड उपलब्ध होता और अगर अखबारों में उनकी तस्वीर प्रकाशित की गई होती तो अहमदनगर पुलिस को उनके बारे में पता चल जाता और वे जानकारी देने में सक्षम होते। आयोग यह जोड़ना चाहता है कि गिरफ्तार व्यक्तियों की तस्वीरें जारी करना हमेशा जांच का एक समझदारी भरा तरीका नहीं होता क्योंकि

इससे यह आशंका रहती है कि पहचान परेड या गवाहों द्वारा की गई पहचान को बेकार माना जा सकता है। फिर भी, दिल्ली पुलिस को मदनलाल की तस्वीर सभी पुलिस थानों और विशेष रूप से उनके द्वारा बताए गए स्थानों के पुलिस थानों को भेजनी चाहिए थी; यह एक गंभीर चूक थी।
मोरारजी देसाई. विट. 96
नवंबर 1946 में जब कांग्रेस पार्टी ने दोबारा सत्ता संभाली, तब मोरारजी देसाई बंबई सरकार में गृह मंत्री थे और उन्होंने उस अवधि के दौरान यह पद संभाला, जिसमें वे घटनाएँ घटीं जिनसे यह आयोग संबंधित है, और विशेष रूप से अगस्त 1947 के बाद से 1949 तक, जिसमें महात्मा गांधी की हत्या और उनके हत्यारों के मुकदमे और दोषसिद्धि जैसी दुखद घटनाएँ शामिल हैं।
18.12 देसाई ने आगे कहा कि हिंदू महासभा और उसका प्रेस अत्यधिक भड़काऊ सांप्रदायिक प्रचार में लिप्त थे, जिसके परिणामस्वरूप प्रेस आपातकालीन शक्तियां अधिनियम के तहत बाद वाले के खिलाफ कार्रवाई करनी पड़ी। उन्हें याद आया कि 'अग्रनी' नाम का एक अखबार था जिसके संपादक नाथूराम गोडसे थे, जिन्हें वे जानते थे, और मालिक आप्टे थे।
18.14 मोरारजी देसाई से पुणे में, विशेष रूप से शहर के मध्य में हुए बम विस्फोट के बारे में पूछा गया। प्रदर्श संख्या 155 इसी घटना से संबंधित है, जिसमें दर्शाया गया है कि 16 जून, 1947 को पुणे शहर में सिटी लाइब्रेरी के ऊपर और उसके पास से एक बम फेंका गया था, जिसके परिणामस्वरूप एक लड़के को चोटें आईं और एक मोटर ट्रक क्षतिग्रस्त हो गया। एन.आर. अठावले, जो एक हिंदू महासभाई थे, को गिरफ्तार किया गया और उन्होंने धारा 164 दंड प्रक्रिया संहिता के तहत मजिस्ट्रेट के समक्ष अपना बयान दिया कि बम

उन्हें 'द अग्रानी' के एन.डी. आप्टे ने दिया था और उसे ऊंचाई से फेंकने का निर्देश दिया था। उन्होंने स्वीकार किया कि उन्होंने सिटी लाइब्रेरी की दूसरी मंजिल से सड़क पर बम फेंका था। आप्टे को 4 जुलाई, 1947 को गिरफ्तार किया गया था, लेकिन उनके घर की तलाशी में कुछ भी नहीं मिला और न ही कोई आपत्तिजनक सामग्री बरामद हुई।
18.15 यह उल्लेखनीय है कि इस मामले और अहमदनगर के वी.आर. केतकर के घर से भारी मात्रा में हथियार और गोला-बारूद बरामदगी के मामले में काफी समानता है। दोनों ही मामलों में गिरफ्तार किए गए व्यक्तियों ने कबूलनामे दिए, जिनमें प्रमुख हिंदू सभा कार्यकर्ताओं के नाम शामिल थे - पुणे मामले में आप्टे और अहमदनगर मामले में करकरे। दोनों ही मामलों में नामजद व्यक्ति बिना किसी सजा के बच निकले और एक मामले में तो बम फेंकने की बात कबूल करने वाले पर भी मुकदमा नहीं चलाया जा सका। दोनों ही मामलों में कबूलनामे वापस ले लिए गए और पुलिस को प्रमुख कार्यकर्ताओं के खिलाफ कोई अन्य सबूत नहीं मिला। यह समानता स्पष्ट है, भले ही यह हिंदू महासभा की कार्यप्रणाली का एक पैटर्न न दर्शाती हो।
18.16 9 जुलाई को, जब पुणे बम का मामला सचिवालय के विभिन्न स्तरों से गुजरते हुए खेर के पास पहुँचा, तो उन्होंने फाइल पर एक टिप्पणी लिखी, जिसमें उन्होंने कहा, 'क्या अग्रानी के संपादक को गिरफ्तार नहीं किया गया था? मैं प्रगति जानना चाहता हूँ।' मोरारजी देसाई से पूछा गया कि अग्रानी के संपादक का नाम कैसे आया, जबकि प्रदर्श संख्या 155 (बम से संबंधित सामग्री) में अग्रानी और बम फेंकने के बीच कोई संबंध नहीं था, और उन्होंने

जवाब दिया कि अग्रानी का नाम किसी साप्ताहिक पत्र में अवश्य ही आया होगा।
18.17 जब विस्फोटक पदार्थ अधिनियम के तहत अभियोजन की मंजूरी के लिए कागजात मोरारजी देसाई के पास आए, तो उन्होंने 5 अगस्त को एक नोट दर्ज किया कि उनकी जानकारी के अनुसार इकबालिया बयान वापस ले लिया गया था और यदि ऐसा है तो आरोपियों के अपराध को साबित करने के लिए क्या सबूत हैं। इस पर खेर ने लिखा: 'इस मामले को और गंभीरता से लिया जाना चाहिए। हमें डीएसपी पर यह दबाव डालना होगा कि वे मामले की पूरी तरह से जांच करें। अग्रानी ने कहा है कि हिंदू सभा पर बम फेंकने का आरोप लगना उच्च सम्मान की बात है - हिंदू सभा अपनी सुरक्षा वापस कर रही है। क्या आतंकवाद को खुलेआम बढ़ावा देने की अनुमति दी जानी चाहिए? मैं सचिव हिंदू सभा से मिलना चाहता हूं।' यह बम फेंकने की घटनाओं के संबंध में खेर की चिंता को दर्शाता है।
18.19 इसके बाद देसाई से अगस्त 1947 की प्रदर्श संख्या 177 के बारे में पूछा गया, जो खेर का एक आदेश था जिसमें हिंदू महासभा और आरएसएस के सदस्यों की गतिविधियों की सूची तैयार करने और उन पर कड़ी निगरानी रखने का निर्देश था। इस आदेश में देसाई ने यह भी जोड़ा था कि इसे 10 दिनों के भीतर पूरा किया जाए और इसमें शीघ्रता की आवश्यकता बताई जाए। उन्होंने यह भी कहा था कि हिंदू महासभा और आरएसएस एक साथ काम कर रहे थे।
18.21 इसके बाद मोरारजी देसाई से उस पत्र के संबंध में गहन पूछताछ की गई, जिसे जी.वी. केतकर ने बलुकाका कनेतकर के माध्यम से बॉम्बे सरकार को भिजवाने का दावा किया था। उनसे पूछा गया:
'प्र. क्या बालासाहेब खेर ने कभी इस पत्र के बारे में आपसे बात की थी?'

ए. मुझे लगता है, उन्होंने लिखा था, लेकिन जहाँ तक मुझे याद है, उसमें किसी का नाम नहीं था... मुझे नहीं लगता कि मैंने वह पत्र देखा था। बालासाहेब ने मुझे पत्र की विषयवस्तु बताई थी। जहाँ तक मुझे याद है, उसमें किसी का नाम नहीं था।' उन्होंने आगे कहा, 'मेरी याददाश्त के आधार पर मैं कह सकता हूँ कि पत्र से ऐसा प्रतीत होता था कि माहौल बहुत तनावपूर्ण था और महात्मा गांधी के जीवन को खतरा था, जैसा कि कई अन्य लोग भी कह रहे थे और शरणार्थियों द्वारा बनाए गए माहौल के कारण ऐसा महसूस भी हो रहा था।'
गवाह ने इस बात पर जोर दिया कि बलुकाका कनेतकर ने नाथूराम गोडसे का नाम नहीं लिया था।
18.22 इसके बाद उनसे पुरुषार्थ में बलुकाका के लेख (प्रदर्शनी
166) के बारे में पूछा गया, जिसमें बलुकाका द्वारा अधिकारियों को यह सूचित करने की कथित पुनरावृत्ति है कि नाथूराम गोडसे ने कहा था कि महात्मा गांधी को मार डाला जाना चाहिए; मोरारजी देसाई ने कहा कि उन्होंने इसे नहीं देखा था।
18.24 देसाई ने कहा कि बलुकाका कनेतकर ने भी उनसे बात की थी और उन्होंने उन्हें बताया था कि पूना में माहौल बहुत तनावपूर्ण था और महात्मा गांधी के साथ-साथ आम तौर पर कांग्रेस नेताओं के जीवन को भी खतरा था, लेकिन उन्होंने संभावित हमलावरों के किसी भी नाम का उल्लेख नहीं किया और न ही गोडसे या आप्टे के नाम का जिक्र किया।
'मैं इस बात से सहमत नहीं हूं कि कोई लापरवाही बरती गई थी या इन व्यक्तियों के नाम सामने आने पर भी मामले को हल्के में लिया गया होता। वैसे भी लोग चिंतित थे और हम सभी, जिनमें सरदार पटेल, मैं और मेरे प्रमुख बालासाहेब खेर शामिल थे, इस बारे में चिंतित थे।

हमने गांधीजी से इस खतरे के बारे में बात की थी, लेकिन हम इससे ज्यादा कुछ नहीं कर सकते थे, सिवाय इसके कि महात्मा गांधी के आसपास कुछ सादे कपड़ों में पुलिसकर्मियों को तैनात किया जाए।' 18.25 लेकिन उनके अनुसार खतरा केवल पुणे तक ही सीमित नहीं था; यह पूरे देश से था। मोरारजी देसाई ने बलुकाका कनेतकर के इस दावे को स्वीकार नहीं किया कि वे अकेले ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने छह महीने तक उस त्रासदी को रोकने का प्रयास किया जो अंततः देश पर आ पड़ी। पहली बार जब उन्होंने किसी का नाम सुना, तब प्रो. जैन ने 21 जनवरी 1948 को उनसे बात की।
18.31 प्रो. जैन ने मोरारजी देसाई को बताया कि मदनलाल ने उन्हें बताया था कि वह (मदनलाल) और उसके साथी महात्मा गांधी की हत्या करने जा रहे थे, लेकिन उन्होंने इसमें सावरकर को शामिल नहीं किया था।
18.34 जब गवाह से पूछा गया कि पुलिस महानिरीक्षक कामते और पुलिस आयुक्त भरूचा को विश्वास में क्यों नहीं लिया गया, तो उसने उत्तर दिया कि नागरवाला सी.आई.डी. (विशेष शाखा) के प्रभारी थे और इतनी बड़ी संख्या में अधिकारियों के बीच जानकारी वितरित करना संभव नहीं था। इसके अलावा, वह भरूचा को बहुत सक्षम नहीं मानता था और कामते पुणे में थे; और बॉम्बे शहर पर उनका कोई वास्तविक नियंत्रण या अधिकार क्षेत्र नहीं था। यह उल्लेखनीय है कि बाद में जो घटनाक्रम सामने आए और षड्यंत्रकारियों के नामों के खुलासे के आलोक में, प्रांतीय पुलिस पर कामते के नियंत्रण से शायद उनकी सहायता सहायक हो सकती थी।
18.41 गडगिल के लेख में खुलासा हुआ कि उनके एक मित्र, एम.सी.ए. जेधे, 15 जनवरी 1948 को पुणे से दिल्ली आए थे, और उन्हें (जेधे को) पता था कि गोडसे और अन्य लोगों ने पुणे में एक योजना बनाई थी

और उन्हें विदाई दी जा रही थी। अगर जेधे को इसकी जानकारी हो सकती थी, तो प्रांतीय या स्थानीय खुफिया विभाग को भी होनी चाहिए थी क्योंकि खाडिलकर के अनुसार, खुफिया अधिकारी इंस्पेक्टर अंगारकर 'हमारे साथ' थे। दावत की इस घटना की गवाही गडगिल ने दी थी। एक गवाह के रूप में उन्होंने कहा: 'गोडसे और उसके दोस्तों को गांधीजी की हत्या करने के लिए दावत दी जा रही थी और तिलक स्मारक मंदिर में एक समारोह आयोजित किया गया था।'
18.42 मोरारजी देसाई ने कहा था कि पुलिस की खुफिया जानकारी कमजोर थी और यह कमजोरी आज भी कायम है, लेकिन यह इतनी कमजोर और अक्षम तो नहीं हो सकती कि अगर महात्मा गांधी की हत्या करने वालों के सम्मान में दावत दी गई हो तो पुलिस को इसकी भनक तक न लगी हो, जब तक कि यह बेहद गुप्त तरीके से न किया गया हो, जैसा कि साजिशों के मामलों में होता है। ऐसे में जेधे को इसकी जानकारी होना नामुमकिन था, जब तक कि वह उनका करीबी दोस्त या कोई चतुर जासूस न हो।
18.48 मोरारजी देसाई को गवाह संख्या 15 पुरुषोत्तम त्रिकमदास को देखने की धुंधली सी याद थी, लेकिन उन्हें याद नहीं था कि उनके साथ कौन था। जब पुरुषोत्तम का बयान उन्हें पढ़कर सुनाया गया, तो उन्होंने कहा कि उन्हें याद नहीं है कि वह आदमी कौन था और उसने क्या कहा था। अगर उसने कहा होता कि महात्मा गांधी की हत्या की साजिश रची गई थी, तो उसने उस आदमी का नाम पुलिस को बता दिया होता। देसाई ने कहा कि हत्या का असली कारण यह था कि हिंदू महासभा महात्मा गांधी की घोर विरोधी थी, उन्हें हिंदू धर्म का शत्रु मानती थी और इसलिए वे हर बात को उसी नजरिए से देखते थे। उन्होंने कामते के इस सुझाव से सहमति जताई कि सूचना मिलने पर वे क्या करते, सिवाय इसके कि कोई मामला दर्ज नहीं किया जा सकता था

और दिल्ली पुलिस के अनुरोध के बिना बॉम्बे पुलिस को दिल्ली नहीं भेजा जा सकता था।
18.51 अपहरण सिद्धांत—मोरारजी देसाई ने कहा कि वे अपहरण सिद्धांत से सहमत नहीं थे, जिसका वास्तव में उनसे कभी उल्लेख नहीं किया गया था और अगर किया भी गया होता, तो वे इसे कभी स्वीकार नहीं करते क्योंकि यह एक असंभव प्रस्ताव था।

18.53 बलुकाका से हुई बातचीत और अन्य प्राप्त जानकारी के आधार पर, 'मेरे लिए महात्मा गांधी के संभावित हत्यारे के रूप में किसी एक व्यक्ति की पहचान करना संभव नहीं था।' यदि उन्हें षड्यंत्र में शामिल व्यक्तियों के बारे में जरा सा भी आभास होता, तो वे अपने पास मौजूद हर संभव प्रयास से इसे अंजाम देते। 'मैं यह तो नहीं कह सकता कि महात्मा गांधी को नुकसान पहुंचाने वाले सटीक व्यक्ति कौन थे, लेकिन मेरे पास जो जानकारी थी, उसके आधार पर मैं कह सकता था कि वे या तो शरणार्थी थे या आरएसएस और हिंदू महासभा के सदस्य। जरूरी नहीं कि वे पुणे से ही हों।' 18.64 मोरारजी देसाई की राय में, नागरवाला ने वह सब कुछ किया जो संभवतः किया जा सकता था।
18.65 आयोग के प्रश्नों के उत्तर में उन्होंने कहा कि नागरवाला ने उन्हें यह नहीं बताया था कि दिल्ली पुलिस अधिकारियों ने अग्रानी के संपादक का ज़िक्र किया था। दूसरी ओर, वे शिकायत कर रहे थे कि पुलिस अधिकारी सहयोग नहीं कर रहे थे। जैसा कि पहले कहा गया है, यह घटना हत्या के बाद की ही होगी। हत्या से पहले गोडसे और आप्टे के षड्यंत्र में शामिल होने का कोई आभास भी नहीं था। जब हत्या हुई, तब देसाई कल्पना भी नहीं कर सकते थे कि यह पुणे के किसी व्यक्ति द्वारा की गई होगी। वे नाथूराम गोडसे को अग्रानी के संपादक के रूप में जानते थे।
18.66 देसाई ने कहा, 'मैंने वकील से नागरवाला के साक्ष्य के कुछ अंश सुने हैं कि अपहरण के सिद्धांत के संबंध में वह क्या कर रहा था, लेकिन इससे मेरे निर्देशों के तहत की जा रही जांच के महत्व पर कोई असर नहीं पड़ेगा। लेकिन जांच के दौरान नागरवाला ने मुझे अपहरण के बारे में कभी कुछ नहीं बताया, जहां तक मुझे याद है।' नागरवाला ने उन्हें कभी नहीं बताया कि दिल्ली पुलिस

अधिकारियों ने अग्रानी के संपादक का नाम लिया था और हत्या से पहले गोडसे और आप्टे के षड्यंत्र में शामिल होने का जरा भी संकेत नहीं था। नागरवाला ने उन्हें यह भी नहीं बताया कि दिल्ली पुलिस अधिकारियों ने उन्हें अग्रानी के संपादक को गिरफ्तार करने के लिए कहा था। अगर यह नाम लिया गया होता तो सबसे अयोग्य अधिकारी भी उसे गिरफ्तार कर लेता।
वी.टी. देहेजिया. साथ. 84
18.79 बम फेंकने और महात्मा गांधी की हत्या से पहले की घटनाओं के संबंध में एक अन्य महत्वपूर्ण गवाह वी.टी. देहेजिया, आई.सी.एस. (सेवानिवृत्त) हैं - गवाह संख्या 84। प्रासंगिक समय पर, यानी लगभग अगस्त 1947 से हत्या के कुछ समय बाद तक, वे बॉम्बे प्रांत के गृह विभाग में गृह सचिव थे।
18.80 प्रधानमंत्री खेर के निर्देशों और गृह मंत्री तथा सचिवालय के अधिकारियों के साथ हुई चर्चाओं के बाद, प्रांतीय सी.आई.डी. और पुलिस आयुक्त को हिंदू महासभा और आरएसएस के अधिकारियों की सूची तैयार करने का निर्देश भेजा गया। पुणे के लिए तैयार की गई सूची (पूर्व संख्या 114) और अहमदनगर के लिए (पूर्व संख्या 114-ए) पुणे से सरकार को भेजी गई। 19 अगस्त 1947 को देहेजिया को लिखे पत्र (पूर्व संख्या 113-ए) में राणा डी.आई.जी., सी.आई.डी. ने कहा कि आरएसएस और हिंदू महासभा की गतिविधियों पर नजर रखने की व्यवस्था की गई है और समय-समय पर रिपोर्ट भेजी जाएंगी। ऐसा प्रतीत होता है कि बाद में राणा ने सुझाव दिया कि चूंकि गुप्त साप्ताहिक रिपोर्ट भेजी जा रही थीं, इसलिए शायद विशेष रिपोर्ट भेजने की आवश्यकता नहीं थी, जिनका आदेश दिया गया था; जिस पर देहेजिया ने लिखा कि वे आवश्यक थीं। इस मामले को प्रांतीय मंत्रिमंडल की बैठक में रखा गया और इन दोनों

संगठनों पर आवधिक रिपोर्टों को बंद करने का निर्णय लिया गया तथा राणा को इसकी सूचना दे दी गई।
18.81 देहेजिया से विशेष रिपोर्टों के संबंध में इन सभी मामलों पर विस्तार से पूछताछ की गई, उन्होंने कहा है कि चूंकि हिंसा की आशंका थी, जिसका संकेत पाकिस्तान विरोधी दिवस पर दिए गए उग्र भाषणों से मिला था, और साथ ही यह आशंका भी थी कि 15 अगस्त 1947, स्वतंत्रता दिवस पर गड़बड़ी हो सकती है, गवाह ने राणा के सुझाव के बावजूद इन संगठनों पर विशेष रिपोर्टों को जारी रखना आवश्यक समझा।
18.82 जब उनसे पूछा गया कि विशेष रिपोर्ट क्यों आवश्यक थीं, तो उनका जवाब था कि 'पाकिस्तान विरोधी दिवस' के प्रस्तावित आयोजन की रिपोर्ट थी और उस दिन होने वाली गड़बड़ी को रोकने के लिए विशेष रिपोर्ट आवश्यक थीं, लेकिन जाहिर तौर पर खतरा टल गया था और इसलिए अधिकारियों ने सोचा कि अब विशेष रिपोर्ट आवश्यक नहीं हैं।
18.83 आयोग ने जी.वी. केतकर के उस बयान के संबंध में उनसे पूछताछ की, जिसमें उन्होंने पूना में महात्मा गांधी के विरुद्ध कथित रूप से व्याप्त शत्रुतापूर्ण भावनाओं का उल्लेख किया था। उन्होंने उत्तर दिया कि ये भावनाएँ लहरों की तरह उठती थीं। विभाजन के बाद ये भावनाएँ कांग्रेस और महात्मा गांधी के विरुद्ध निर्देशित थीं, और जब उन्होंने अनशन किया, तब भी इसी तरह की भावनाएँ उनके विरुद्ध थीं। इन शत्रुतापूर्ण भावनाओं को मुख्य रूप से हिंदू महासभा और आरएसएस ने भड़काया था।
18.87 जब उनका ध्यान डॉ. परचुरे के उस भाषण की ओर दिलाया गया जिसमें उन्होंने कहा था कि 'नेहरू और गांधी जी थोड़े ही समय में अपने पापों का फल भोगेंगे', तो उन्होंने कहा कि अगर उन्हें इसके

बारे में पता होता तो वे सतर्क हो जाते, लेकिन वे इससे यह निष्कर्ष नहीं निकालते कि गांधीजी और नेहरू की हत्या होने वाली है, लेकिन वे आगे की जाँच किए बिना भाषण को जाने नहीं देंगे। 18.87-ए. दरअसल, सरकार ने जिला मजिस्ट्रेट से डॉ. परचुरे के इस भाषण के बारे में पूछा था, लेकिन जिला मजिस्ट्रेट ने जिला मजिस्ट्रेट की रिपोर्ट के आधार पर जवाब दिया कि भाषण की रिपोर्ट पुलिस रिपोर्टर की स्मृति पर आधारित थी, क्योंकि भाषण हिंदी में था और पुणे पुलिस में कोई हिंदी शॉर्टहैंड रिपोर्टर नहीं था। शायद यही पुलिस की निष्क्रियता या बॉम्बे अधिकारियों की खामोशी का कारण रहा हो, लेकिन वाक्य इतना स्पष्ट है कि पुलिस रिपोर्टर ने ऐसी बातें कहे बिना रिपोर्ट नहीं लिखी होगी। आयोग यह मानकर चलता है कि रिपोर्टर हिंदी जानता था और उसका दिमाग ऐसी बातें गढ़ने या बनाने वाला नहीं था।
18.92 यद्यपि इस गवाह की सचिवालय फाइलों की समीक्षा से विभिन्न समयों पर उत्पन्न समस्याओं की स्पष्ट समझ का पता चलता है, जो एक सतर्क मानसिकता को दर्शाता है, फिर भी आयोग इस गवाह के कुछ कथनों को स्वीकार करने में असमर्थ है, विशेष रूप से इस कथन को कि पुणे में समाचार पत्रों और विभिन्न लोगों द्वारा दिए गए भाषणों से हिंसा का कोई माहौल स्पष्ट नहीं था। श्री केतकर, श्री खादिलकर और स्वर्गीय श्री एन.वी. गाडगिल के साक्ष्य और प्रस्तुत किए गए दस्तावेज़ न केवल हिंसा के सामान्य माहौल को दर्शाते हैं, बल्कि विशेष रूप से कांग्रेस नेताओं और महात्मा गांधी के विरुद्ध निर्देशित हिंसा को भी दर्शाते हैं। महात्मा गांधी के विरुद्ध तीव्र भावनाएँ हिंदुओं की कीमत पर मुसलमानों को तुष्टीकरण करने के कारण उत्पन्न हुई थीं, जिसके विभाजन, गांधीजी के प्रार्थना के बाद के भाषण और 55 करोड़ रुपये का दान

देना प्रत्यक्ष उदाहरण थे। ऐसे मामलों में, गैर-सरकारी लोग, जो गैर-सरकारी हलकों में घूमते हैं और आम तौर पर किसी शहर की सामान्य स्थिति और नागरिकों की भावनाओं से अवगत होते हैं, उन्हें अधिकारियों की तुलना में बेहतर जानकारी होती है। भले ही वे चतुर, सतर्क और सजग हों। यह विशेष रूप से उन गैर-सरकारी सज्जनों के मामले में सच है जो राजनीति में प्रमुख भूमिका निभाते हैं, चाहे वह किसी भी विचारधारा की हो।
KANJI DWARKADAS, WIT. 7
18.93 कांजी द्वारकादास, गवाह संख्या 7, एक मजदूर नेता, श्रीमती बेसंत के अनुयायी और समाजवादी हैं। उन्होंने गवाही दी कि हत्या से दो दिन पहले, बी.जी. खेर महात्मा गांधी के पास गए और उन्हें बताया कि पुणे के ब्राह्मण उन्हें जान से मारने की साजिश रच रहे हैं। चूंकि उस दिन महात्मा गांधी का मौन दिवस था, इसलिए उन्होंने एक कागज पर लिखा, 'अगर मुझे मरना है, तो मैं मर जाऊंगा। मुझे किसी पुलिस सुरक्षा की जरूरत नहीं है।' खेर ने गवाह को यह भी बताया कि नाथूराम गोडसे एक कट्टरपंथी हिंदू महासभा का अखबार चला रहा था और वह जानता था कि ये लोग गांधीजी के पीछे पड़े हैं। दिल्ली सी.आई.डी. ने बॉम्बे पुलिस को विश्वास में नहीं लिया, अन्यथा उन्हें नाथूराम गोडसे के बारे में तुरंत पता चल जाता। उन्होंने यह भी कहा कि मरीना होटल से बरामद कमीज पर धोबी का निशान 'नाथूराम गोडसे' होने के कारण पुलिस को उसका पता लगा लेना चाहिए था। (मरीना होटल से बरामद कमीज पर बना 'धोबी' (लॉन्ड्री) का निशान कांजी द्वारकादास द्वारा बताए गए 'नाथूराम गोडसे' का नहीं था, बल्कि 'एन.वी.जी.' का निशान था, जिसे मदनलाल द्वारा दिए गए अन्य सुरागों के साथ मिलाकर नाथूराम वी. गोडसे से आसानी से जोड़ा जा सकता था।)

18.94 कम्युनिस्ट अखबार पीपुल्स एज अगस्त 1947 से कह रहा था कि महात्मा गांधी की हत्या होने वाली है, कि दिल्ली पुलिस में आरएसएस के लोग घुसपैठ कर चुके हैं और दिल्ली के उपायुक्त रंधावा इस आंदोलन के पीछे हैं और वे महात्मा गांधी के जीवन की रक्षा करने के लिए उत्सुक नहीं हैं।
18.95 उन्होंने आगे बताया कि अलवर राज्य में उनके एक चिकित्सक मित्र, डॉ. एक्स, दिसंबर 1947 के मध्य में महात्मा गांधी के पास गए और उन्हें बताया कि अलवर और भरतपुर राज्य इस षड्यंत्र में शामिल हैं। आचार्य जुगल किशोर ने भी गांधीजी को इस बारे में चेतावनी दी थी। उपर्युक्त चिकित्सक ने आचार्य जुगल किशोर को एक पर्चा भेजा था जिसमें लिखा था कि गांधीजी की हत्या की जानी चाहिए और आचार्य ने चिकित्सक को उत्तर में लिखा कि वे उस पर्चे को गांधीजी और पंडितजी के समक्ष रखेंगे।
JAYPRAKSH NARAYAN, WIT. 98
18.102 ए जयप्रकाश नारायण, गवाह संख्या 98, ने कहा कि उन्हें महात्मा गांधी के जीवन को खतरे के बारे में जानकारी के साथ पुरुषोत्तम के पास किसी व्यक्ति को भेजने की कोई याद नहीं है। 'मुझे याद नहीं कि मैंने उसके पास कोई आदमी भेजा था या नहीं। अगर मैंने उसके पास कोई आदमी भेजा होता तो इसका मतलब यह होता कि मैंने उस जानकारी को गंभीरता से लिया था, जो मैंने नहीं लिया। हो सकता है यह मेरी गलती हो, लेकिन असल में यही हुआ था और मैं यही बता रहा हूं।'
18.102 बी. उन्होंने आगे कहा, 'उस समय यह जानकारी जिसे भी दी गई होगी, उसे यह बहुत अविश्वसनीय लगी होगी।'
18.102 सी. उन्होंने इस जानकारी के बारे में न तो गांधीजी से बात की और न ही सरदार पटेल से। सरदार पटेल के प्रति उनके मन में बहुत

सम्मान था, हालांकि राजनीतिक मामलों पर उनके विचार एकमत नहीं थे। नारायण ने पुलिस पर सतर्कता न बरतने का आरोप लगाया। उन्हें आश्चर्य हुआ कि कोई भारतीय महात्मा गांधी की हत्या कैसे कर सकता है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि वह कहाँ से आया था। उन्हें इस बात की जानकारी नहीं थी कि उग्रवादियों का कोई ऐसा समूह भी है जो महात्मा गांधी के खिलाफ हिंसा कर सकता है। तिलकवादी और गांधीवादी, केसरी समूह और सावरकरवादी समूहों के बीच तीव्र विरोध था, लेकिन यह सब राजनीतिक स्तर पर था। वे कल्पना भी नहीं कर सकते थे कि मतभेदों के बावजूद कोई महात्मा गांधी की हत्या कर सकता है।
कपूर आयोग के समक्ष जयप्रकाश नारायण की गवाही बेहद चौंकाने वाली है। इससे पहले सरदार पटेल के सचिव शंकर और उनकी बेटी मणिबेन दोनों ने गवाही दी थी कि हत्या के तुरंत बाद जयप्रकाश नारायण ने महात्मा गांधी की रक्षा करने में विफल रहने के लिए सरदार पटेल के खिलाफ एक सार्वजनिक अभियान चलाया था, जिसमें उन्होंने यह संकेत दिया था कि गांधीजी की हत्या के लिए सरदार पटेल ही जिम्मेदार थे। इससे पहले, उन्होंने किरकी और अन्य स्थानों पर हिंदू महासभा और आरएसएस की हिंसा और भारतीय संघ को हिंसक रूप से अस्थिर करने के प्रयासों की आलोचना की थी। कपूर आयोग की रिपोर्ट में मौजूद इन तथ्यों की तुलना में जयप्रकाश नारायण की गवाही बहुत ही नरम प्रतीत होती है। यह जयप्रकाश नारायण के स्वभाव से भी बिल्कुल मेल नहीं खाती। यह जानना बेहद महत्वपूर्ण होता कि उनमें इतना बड़ा बदलाव किस वजह से आया। अफसोस की बात है कि जेपी, जैसा कि उन्हें प्यार से याद किया जाता है, अब इस मुद्दे पर प्रकाश डालने के लिए हमारे बीच नहीं हैं। जे.डी. नागरवाला का बयान

18.103 चूंकि तत्कालीन पुलिस उपायुक्त, बॉम्बे, जे.डी. नागरवाला के आचरण की वकीलों द्वारा कड़ी आलोचना की गई है, इसलिए आयोग उनके बयान के उन मुख्य बिंदुओं को प्रस्तुत करना आवश्यक समझता है जो उस जांच या पूछताछ के संदर्भ में प्रासंगिक हैं जो उन्होंने प्रो. जैन द्वारा दी गई सूचना को मोरारजी देसाई द्वारा उन तक पहुँचाए जाने के बाद की थी। नागरवाला का साक्ष्य इस प्रकार है।
18.104 बंबई में शरणार्थियों के आगमन के कारण सांप्रदायिक तनाव था। अंग्रेजों द्वारा कुछ समुदायों के पास हथियार और गोला- बारूद छोड़ दिए गए थे और रॉयल एयर फोर्स द्वारा छोड़े गए ट्रांसमीटरों का उपयोग पाकिस्तान को समाचार भेजने के लिए किया जा रहा था।
18.105 हिंदू महासभा राजनीतिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के साधन के रूप में राजनीतिक हत्या में विश्वास करती थी।
18.107 बम फेंके जाने से पहले बॉम्बे नगर पुलिस को मदनलाल, गोडसे या आप्टे के बारे में कोई जानकारी नहीं थी, और बॉम्बे नगर पुलिस केवल प्रेस रिपोर्टों के आधार पर कोई जांच शुरू नहीं कर सकती थी, जब तक कि उनमें यह न लिखा हो कि मदनलाल बॉम्बे शहर के किसी इलाके में पलायन कर गया था। 21 जनवरी को दिल्ली से बम घटना के बारे में कोई सूचना नहीं मिली थी। सामान्य तौर पर, यह प्रथा थी कि यदि किसी एक प्रांत की पुलिस को दूसरे प्रांत की पुलिस को कोई सूचना भेजनी होती थी, तो वह सीधे पुलिस महानिरीक्षक, डीआईजी या डीएसपी से संपर्क करती थी, और बॉम्बे नगर के मामले में पुलिस आयुक्त या उपायुक्त से संपर्क करती थी।
देसाई ने नागरवाला से क्या कहा?

18.108 आधिकारिक तौर पर नागरवाला को बम के बारे में जानकारी 21 जनवरी को मिली, जब गृह मंत्री ने उन्हें फोन किया और प्रोफेसर जैन द्वारा दी गई जानकारी के बारे में बताया, हालांकि उन्होंने प्रोफेसर जैन का नाम नहीं बताया। उनसे पूछा गया कि मोरारजी देसाई ने उन्हें क्या जानकारी दी थी।
प्र. 'क्या उसने आपको कुछ बताया?'
उत्तर: 'हां, उसने बताया था। उसने मुझे बताया कि महात्मा गांधी की दिल्ली स्थित प्रार्थना सभा में बम विस्फोट करने वाला मदनलाल, अहमदनगर के करकरे का साथी था और मुझे करकरे को गिरफ्तार करने की कोशिश करनी चाहिए।'
देसाई ने उन्हें यह भी सुझाव दिया कि वे बैरिस्टर सावरकर के घर पर नजर रखें। मोरारजी देसाई ने उन्हें जो कुछ भी बताया, उसे उन्होंने अपनी अपराध रिपोर्ट संख्या 1 में सही-सही इस प्रकार दर्ज किया:—
'मुझे महामहिम ने बताया कि उन्हें पुख्ता जानकारी मिली है कि 20-1-48 को दिल्ली के बिरला हाउस में प्रार्थना सभा के दौरान महात्माजी पर हुए हमले को मदनलाल ने अपने साथियों करकरे और अन्य लोगों के साथ मिलकर अंजाम दिया था। उन्होंने यह भी बताया कि करकरे और मदनलाल महात्माजी पर हमला करने के लिए दिल्ली रवाना होने से ठीक पहले सावरकर से मिले थे। उन्होंने मुझे अहमदनगर के निवासी करकरे को पकड़ने और गिरफ्तार करने का आदेश दिया, जिसकी गिरफ्तारी का आदेश उन्होंने अहमदनगर में हुई अन्य मुस्लिम विरोधी घटनाओं के सिलसिले में पहले ही दे दिया था। उन्होंने मुझे मदनलाल और करकरे के साथियों से भी पूछताछ करने और उन्हें गिरफ्तार करने का आदेश दिया।'

18.109 नागरवाला ने यह भी कहा कि उन्होंने देसाई द्वारा दी गई जानकारी के बारे में एक नोट रखा था, लेकिन उन्होंने प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज नहीं की क्योंकि वह कोई जांच नहीं कर रहे थे। उन्होंने कहा:
'मैं जांच अधिकारी नहीं था। ये सरकार द्वारा मुझे दिए गए आदेश थे जिनके आधार पर मैंने अपनी जांच शुरू की।'
18.116 नागरवाला को यह नहीं बताया गया था कि उन पुलिस अधिकारियों को बॉम्बे किसने भेजा था। वह केवल इतना जानता था कि वे करकरे को गिरफ्तार करने आए थे और दिल्ली पुलिस के थे।
अगर नागरवाला की बात पर भी यकीन कर लें कि दिल्ली पुलिस ने उन्हें अंधेरे में रखा था, तो जब उन्हें पता चला कि पुलिस करकरे की तलाश कर रही है, तो उन्होंने पुलिस को यह जानकारी क्यों नहीं दी कि गृह मंत्री ने उनकी गिरफ्तारी के आदेश जारी कर दिए हैं? यह याद रखना जरूरी है कि 20 से 30 जनवरी 1948 के बीच जांच में गड़बड़ी करने वाले अधिकांश अन्य पुलिस अधिकारियों को कपूर आयोग के सामने पेश होकर अपनी गलती सुधारने का मौका मिल गया था। लेकिन संजीवी कपूर आयोग के गठन से पहले ही गुजर चुके थे, इसलिए वे अपना पक्ष नहीं रख सके और उनके सभी साथियों को दोष मढ़ने के लिए एक सुविधाजनक मरणोपरांत बलि का बकरा मिल गया। मैं संजीवी का पक्ष नहीं ले रहा हूँ, लेकिन वे एकमात्र ऐसे अक्षम और गड़बड़ी करने वाले अधिकारी थे जिन्हें बहाने बनाने का मौका नहीं मिला।
18.117 नागरवाला से पूछा गया कि क्या उन्होंने मदनलाल द्वारा दिए गए किसी बयान के बारे में उनसे पूछा था, उनका जवाब था:

'नहीं, मैंने उनसे नहीं पूछा, लेकिन बातचीत के दौरान मुझे पता चला कि उन्हें मदनलाल के कहे या किए गए किसी भी बात की जानकारी नहीं थी।'
उन्होंने मदनलाल के बारे में उनसे कोई पूछताछ नहीं की क्योंकि गृह मंत्री ने उन्हें बताया था कि वह और करकरे साथ थे और बॉम्बे पुलिस पहले से ही करकरे की तलाश कर रही थी। नागरवाला ने दोहराया कि 'अधिकारी मुझे कुछ नहीं बता सकते थे क्योंकि उन्हें इससे ज्यादा कुछ पता ही नहीं था'।
18.118 जब उनसे पूछा गया कि क्या उन्होंने दिल्ली पुलिस की डायरियों का अंग्रेजी अनुवाद करवाया था, तो उन्होंने कहा कि उन्होंने अनुवाद करवाया था, उन्होंने बम कांड की केस डायरियों का अंग्रेजी अनुवाद पढ़ा था। जब उनका ध्यान केस डायरी संख्या 1 के अनुच्छेद 15 की ओर दिलाया गया और बताया गया कि मदनलाल का बयान लेते समय उप अधीक्षक जसवंत सिंह और निरीक्षक बालकृष्ण उपस्थित थे, इसलिए उन्हें पता होना चाहिए था कि उन्होंने क्या बयान दिया था, तो उनका जवाब था कि ऐसा हो भी सकता है और नहीं भी। करकरे के बारे में उन्हें जो भी जानकारी दी गई थी, वह केवल इतनी थी कि वे उसे गिरफ्तार करने आए थे। उन्होंने यह पता लगाने के लिए दिल्ली फोन नहीं किया कि अधिकारियों को किसलिए भेजा गया था, क्योंकि यह उनका काम नहीं था। जांच दिल्ली पुलिस कर रही थी। मदद मांगना उनका काम था। यह मानते हुए कि विशुद्ध कानूनी दृष्टि से यह स्थिति सही है, फिर भी चूंकि मामला महात्मा गांधी जैसे व्यक्ति की सुरक्षा से संबंधित था, इसलिए यह उम्मीद की जानी चाहिए थी कि दिल्ली के उन अधिकारियों को जो कुछ भी पता था, उसे जानने के लिए अधिक जिज्ञासा दिखाई जाएगी। उस स्तर पर एक नीरस कानूनी दृष्टिकोण बॉम्बे 'जांच' के लिए कोई सम्मान की बात नहीं

थी। और अगर दिल्ली पुलिस के अधिकारी उन्हें कोई जानकारी नहीं दे सके, तो राणा या नई दिल्ली के पुलिस अधीक्षक को लंबी दूरी की कॉल करना मददगार साबित हो सकता था।
18.120 मदनलाल के बयान की जानकारी—उन्हें मदनलाल के बयान के बारे में हत्या के बाद पता चला। राणा ने उन्हें यह नहीं बताया कि मदनलाल ने क्या बयान दिया था, लेकिन उन्होंने राणा को बताया कि उन्होंने तब तक जांच के सिलसिले में क्या किया था।
18.121 उन्हें यह जानकारी हत्या के बाद, जांच के दौरान ही मिली कि साजिशकर्ता पुणे के थे, इससे पहले नहीं। गृह मंत्री ने उन्हें बताया था कि करकरे और उनके साथी महात्मा गांधी की हत्या करना चाहते थे।
प्र. 'आपकी जानकारी के अनुसार ये सहयोगी महाराष्ट्रियन थे या पाकिस्तान से आए शरणार्थी?'
उत्तर: 'इस संबंध में हमारे पास जो जानकारी थी, वह मेरी केस डायरी और सरकार को दिए गए मेरे जवाब में दर्ज है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि बॉम्बे सिटी पुलिस का मुख्य संदेह उन लोगों पर था जो बॉम्बे में आकर बस गए थे और जिन्हें शरणार्थी के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है।'
उन्हें अहमदनगर से करकरे के साथियों के बारे में कोई जानकारी नहीं मिली। उनकी जानकारी के अनुसार, करकरे पिछले कुछ दिनों से अहमदनगर में नहीं थे। उन्हें यह भी नहीं पता था कि मदनलाल अहमदनगर चले गए हैं या वहां रह रहे हैं। उन्हें बस इतना पता था कि करकरे अहमदनगर के रहने वाले हैं। लेकिन यह पहली अपराध रिपोर्ट से पूरी तरह मेल नहीं खाता। उन्होंने आगे कहा कि उन्होंने करकरे के साथियों के बारे में अहमदनगर पुलिस से पता

लगाना आवश्यक नहीं समझा। आयोग की राय में यह एक गलत दृष्टिकोण था।
18.122 हत्या के बाद ही उसे पता चला कि करकरे के साथियों में गोडसे, आप्टे और बैज जैसे पुणे के लोग भी शामिल थे। बैज के बारे में उसे पता था कि वह हथियारों का तस्कर था, लेकिन उसने उसे करकरे और मदनलाल के साथी के रूप में नहीं जोड़ा। उसने कहा कि उसने रेलवे स्टेशनों पर निगरानी रखने का आदेश दिया होगा, जिसमें हवाई अड्डा भी शामिल होगा।
यहां नागरवाला ने सरासर झूठ बोला है। जब उन्हें पता ही नहीं था कि किसे ढूंढना है, तो उन्होंने घड़ी क्यों मंगवाई और किसके लिए? उन्होंने स्वीकार किया है कि गृह मंत्री द्वारा करकरे की गिरफ्तारी का आदेश दिए जाने के बाद उन्होंने करकरे के ठिकाने के बारे में कोई जांच नहीं की। इसलिए उनके अपने बयान ही नागरवाला को दोषी ठहराते हैं।
18.123 आयोग के लिए साक्ष्यों के आधार पर यह पता लगाना कठिन है कि हवाई या रेलवे टर्मिनलों पर किस प्रकार की निगरानी रखी गई थी, लेकिन यदि कोई निगरानी रखी भी गई थी तो वह अत्यंत अप्रभावी रही होगी क्योंकि करकरे, आप्टे और गोडसे ने 23 जनवरी से 27 जनवरी 1948 की अवधि के दौरान रेल और हवाई दोनों मार्गों का उपयोग बिना किसी की नज़र में आए किया। निगरानी निरर्थक ही रही होगी, क्योंकि राणा के बयान से पता चलता है कि कोई भी इन लोगों को नहीं जानता था।
18.124 27 जनवरी को दिल्ली से लौटने पर राणा नागरवाला के साथ रुका और नागरवाला ने उसे अपने द्वारा किए गए सभी कार्यों के बारे में बताया और उन्होंने डी.आई.बी. को इसकी सूचना देने का

निर्णय लिया। राणा की उपस्थिति में नागरवाला ने टेलीफोन पर डी.आई.बी. को अपने द्वारा किए गए कार्यों के बारे में बताया। 18.125 नागरवाला ने राणा से मदनलाल के बयान की सामग्री के बारे में नहीं पूछा क्योंकि राणा अपने द्वारा किए गए कार्य से संतुष्ट प्रतीत हो रहे थे। यह एक विचित्र कथन है क्योंकि नागरवाला प्रोफेसर जैन द्वारा दी गई जानकारी पर काम कर रहे थे, जो उन्हें मोरारजी देसाई के माध्यम से मिली थी, और दिल्ली में मदनलाल का बयान उस जानकारी को समझने में सहायक हो सकता था। राणा एक सह-षड्यंत्रकारी से बहुमूल्य जानकारी लाए थे और आयोग को कोई कारण नहीं मिल पाया है कि राणा ने नागरवाला को मदनलाल के बयान की सामग्री क्यों नहीं दी और नागरवाला ने राणा से बयान के बारे में क्यों नहीं पूछा। विशेष रूप से तब जब नागरवाला ने बाद में कहा कि वह मदनलाल को बॉम्बे लाना चाहते थे।
18.126 नागरवाला के बयान के अनुसार, बैज को सावरकर समूह का सदस्य नहीं माना जा सकता क्योंकि वह हथियारों की तस्करी कर रहा था और नागरवाला उसे साजिशकर्ता के रूप में नहीं बल्कि हथियारों के तस्कर के रूप में खोज रहा था।
18.128 उनसे पूछा गया कि उन्होंने अपहरण की साजिश के अपने सिद्धांत पर क्यों जोर दिया, हत्या के सिद्धांत पर क्यों नहीं। उनका जवाब था कि यह उनका सिद्धांत नहीं था, बल्कि जांच के दौरान उन्हें यही पता चला। उन्होंने आगे कहा, 'मेरा मतलब यह है कि मैं गृह मंत्री द्वारा दी गई जानकारी पर काम कर रहा था और साथ ही गृह मंत्री को अपनी जांच के परिणाम भी बता रहा था।'
18.129 ए. उन्होंने इस बात पर ज़ोर दिया कि उन्होंने पहले प्रदर्श 5 ए नहीं देखा था। उनसे पूछा गया कि क्या प्रदर्श 5 ए को पढ़ने से उन्हें उन व्यक्तियों के वर्ग का पता नहीं चल जाता जो

षड्यंत्र में शामिल थे, भले ही उनकी पहचान न पता चले। उनका जवाब था कि उन व्यक्तियों के बारे में सुराग मिल सकता था। इसके अलावा, करकरे का उल्लेख डेक्कन गेस्ट हाउस के मालिक और आरएसएस के सदस्य के रूप में होने से नागरवाला ने महात्मा गांधी की हत्या या अपहरण के षड्यंत्र के संबंध में मामले को स्पष्ट करने का प्रयास किया। उन्होंने कहा:
21 जनवरी 1948 को, बंबई के गृह मंत्री द्वारा मुझे दी गई सूचना, अपराध रिपोर्ट संख्या 1 दिनांक 30-1-1948 में दर्ज है, जो अपराध रिपोर्टों की फाइल नामक दस्तावेज़ में निहित है और जिसे प्रदर्श संख्या 185 के रूप में चिह्नित किया गया है, इसी संख्या से पूरी पुस्तक को आगे संदर्भित किया जाएगा। प्रदर्श संख्या 185 में निहित पहली अपराध रिपोर्ट दिनांक 30-1-1948 में लिखा है: 'गृह मंत्री से बात करने से पहले मेरे पास केवल समाचार पत्र की रिपोर्ट थी जो मैंने पढ़ी थी।' गृह मंत्री से निर्देश प्राप्त होने तक मैंने कोई गतिविधि या जांच शुरू नहीं की। दूसरे शब्दों में, मुझे दी गई सूचना महात्मा गांधी पर जानलेवा हमले की थी। उस अवसर पर मैंने जो दर्ज किया वह यह था: 'गृह मंत्री ने मुझे बताया कि उन्हें पुख्ता सूचना मिली है कि 20-1-1948 को दिल्ली के बिड़ला हाउस में प्रार्थना सभा के दौरान महात्मा जी पर जानलेवा हमला मदनलाल और उसके साथी करकरे और अन्य लोगों द्वारा किया गया था।'
गृह मंत्री ने मुझे केवल इतना बताया था कि 20-1-1948 को मदनलाल, करकरे और अन्य लोगों द्वारा महात्मा गांधी पर जानलेवा हमला करने का प्रयास किया गया था। अपनी जाँच के दौरान मुझे पता चला कि किसी भी स्तर पर यह विचार नहीं किया गया था कि हम अपहरण के सिद्धांत पर आगे बढ़ें और मूल जानकारी को भूल जाएँ। अपहरण की

जानकारी गृह मंत्री द्वारा दी गई सूचना के संबंध में जाँच के दौरान सामने आई। मैंने गृह मंत्री से यह नहीं पूछा कि उनका सूचनादाता कौन था। मैं ऐसा नहीं करता क्योंकि यदि गृह मंत्री मुझे अपने स्रोत का नाम बताना चाहते तो वे बता देते। जिस समय गृह मंत्री ने मुझे यह जानकारी दी, उस समय कानूनी दृष्टि से षड्यंत्र का प्रश्न ही नहीं उठता था। यदि मैं तुगलक रोड पुलिस स्टेशन में इस मामले को एफ.आई.आर. के रूप में दर्ज करता, तो मैं इसे भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के तहत दर्ज करता। इस स्तर पर मैं धारा 120-बी नहीं जोड़ता। पुलिस द्वारा की जाने वाली जांच या पूछताछ उसी तर्ज पर होती, चाहे धारा 120-बी को जोड़ा गया हो या लागू किया गया हो।
नागरवाला का यह बयान भ्रम और टालमटोल का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। उन्होंने मामले को पूरी तरह से उलझा दिया है और आयोग द्वारा पूछे गए सीधे-सादे सवाल का जवाब देने से बचते रहे हैं।
18.134 हालाँकि, आयोग के समक्ष मौजूद साक्ष्य से पता चलता है कि अहमदनगर पुलिस के पास अहमदनगर में करकरे के कार्यों या कुकर्मों का पूरा रिकॉर्ड था, और यदि नागरवाला ने यह जानकारी मांगी होती, तो जिला पुलिस उसे कुछ मूल्यवान जानकारी दे देती, उदाहरण के लिए, करकरे का आप्टे से संबंध, जो उप-निरीक्षक बलकुंडी ने हत्या के तुरंत बाद उप-अधीक्षक चौबल को तब दी थी जब पुणे सी.आई.डी. ने उनसे यह जानकारी मांगी थी। उप-निरीक्षक देशमुख, गवाह संख्या 32, ने कहा है कि यह सारी जानकारी उनके पास थी।
18.135 नागरवाला ने 5 फरवरी 1948 को मदनलाल का पूरा बयान प्राप्त किया।

18.139 बॉम्बे पुलिस बम मामले की जांच नहीं कर रही थी— नागरवाला ने कहा कि बॉम्बे पुलिस बम मामले की जांच नहीं कर रही थी, बल्कि गृह मंत्री से मिली जानकारी के आधार पर पूछताछ कर रही थी। अपराध दिल्ली में हुआ था और जांच दिल्ली पुलिस के हाथ में थी। न तो दिल्ली पुलिस ने बॉम्बे पुलिस से कोई जांच करने को कहा था और न ही दिल्ली पुलिस ने स्वयं जांच की थी। एक जांच अधिकारी को मदद मांगनी पड़ती है, और अगर बम मामले में ऐसा किया गया होता, तो बॉम्बे पुलिस स्वेच्छा से मदद करती। बॉम्बे पुलिस को दिल्ली पुलिस की जांच में स्वतः हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं था और संजीव का यह कथन कि बॉम्बे पुलिस को कोई जांच करनी थी, सही नहीं था (एक बार फिर नागरवाला अपनी जान बचाने के लिए एक मृत व्यक्ति को झूठा कह रहे थे)। उन्होंने आगे कहा कि डी.आई.जी. को सूचित करना उनका कोई कर्तव्य नहीं था। कामते को गृह मंत्री द्वारा दी गई जानकारी का पता नहीं था, लेकिन उन्होंने पुलिस आयुक्त को 22 तारीख को चाय के समय चायघर में गृह मंत्री द्वारा दी गई जानकारी का खुलासा किया, जो इस तरह के मामलों पर चर्चा के दौरान सामान्य प्रथा थी। जब नागरवाला का ध्यान प्रदर्श 8 की ओर दिलाया गया, जिसमें कहा गया था कि जांच नागरवाला को सौंपी गई थी, तो उन्होंने उत्तर दिया कि इस शब्द का प्रयोग लापरवाही से किया गया था।
इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि नागरवाला मोरारजी देसाई का चहेता था, उसमें हर बात को अपने उद्देश्य के अनुरूप मोड़ने की कला थी और उसमें आत्म-धार्मिकता का गुण अत्यधिक था, जो कि मोरारजी देसाई में भी प्रचुर मात्रा में मौजूद था।
18.140 नागरवाला का दृष्टिकोण सही नहीं है। इस मामले के तथ्यों के आधार पर, नागरवाला एक जांच कर रहे थे, जिसका वर्णन 'बॉम्बे

जांच' शीर्षक वाले अध्याय में किया गया है। लेकिन यह मानते हुए कि वे जानकारी जुटाने के लिए पूछताछ कर रहे थे, वे एक पुलिस जासूस के रूप में कार्य कर रहे थे, जिसका कर्तव्य संज्ञेय अपराध के घटित होने या घटित होने की योजना से संबंधित खुफिया जानकारी प्राप्त करना था। साजिश का एक हिस्सा बॉम्बे शहर में रचा गया था और भले ही अपराध शहर के बाहर हुआ हो, नागरवाला, जासूस एजेंसी के प्रमुख के रूप में, एक वैधानिक कर्तव्य का निर्वहन कर रहे थे; अन्यथा यह उनकी ओर से हस्तक्षेप होगा और 24 तारीख को बैज को गिरफ्तार करने का उनका आदेश पूरी तरह से अधिकार क्षेत्र से बाहर होगा।
18.142 संजेवी को ट्रंक कॉल नागरवाला और राणा ने शाम 7 बजे के बाद किया होगा और राणा और नागरवाला दोनों ने संजेवी से बात की। बातचीत का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा यह था कि नागरवाला ने संजेवी को बताया कि स्थिति गंभीर है और महात्मा गांधी के जीवन की रक्षा के लिए प्रभावी कदम उठाए जाने चाहिए। उन्होंने संजेवी को यह भी बताया कि एक गिरोह महात्मा गांधी का अपहरण करने के उद्देश्य से सक्रिय है। उन्होंने यह जानकारी राणा को भी दी। 30 जनवरी, 1948 का पत्र (Ex.8) संजेवी के साथ टेलीफोन पर हुई बातचीत की पुष्टि करता है। (यह बहुत अजीब बात है कि संजेवी, जो नागरवाला और राणा दोनों से उच्च पद पर थे, ने उन्हें बेतुके सिद्धांतों का प्रचार करने के लिए फटकार नहीं लगाई। संजेवी इन दोनों अधिकारियों से कहीं अधिक जानते थे क्योंकि तब तक मदनलाल अपने अधिकारियों के सामने विस्तृत कबूलनामा कर चुके थे। उन्हें नागरवाला और राणा को समय बर्बाद करना बंद करने और जांच शुरू करने का आदेश देने से क्या रोका, यह कभी पता नहीं चल पाएगा।)

18.152 नागरवाला ने दावा किया कि मोरारजी देसाई ने उन्हें हिंदू राष्ट्र या अग्रानी के संपादक के बारे में कोई जानकारी नहीं दी थी। उन्होंने गोडसे का नाम पहली बार तब सुना जब बीबीसी ने 30 जनवरी 1948 को शाम 7.30 बजे (भारतीय समयानुसार) यह खबर प्रसारित की।
18.153 बैज के संबंध में, नागरवाला ने कहा कि वह पुणे के जंगलों में छिपा हुआ था क्योंकि यही जानकारी उसे उसके संपर्कों से मिली थी। जब बैज के इस कथन की ओर उसका ध्यान दिलाया गया कि वह पुणे में अपना सामान्य काम कर रहा था और 23 से 31 जनवरी तक अपने घर में ही रह रहा था, तो नागरवाला ने उत्तर दिया कि 'केस डायरी' में यह दर्ज नहीं होगा कि बॉम्बे में उसके संपर्कों ने उसे सूचित किया था कि बैज पुणे के जंगलों में छिपा हुआ है।
18.156 मोरारजी देसाई के आदेश के बाद जब उन्होंने पूछताछ शुरू की, तो कई स्रोतों से काफी जानकारी मिल रही थी। इसी संदर्भ में बैज की तलाश की जा रही थी। पहली अपराध रिपोर्ट में करकरे और बैज के नाम प्रमुखता से सामने आए। करकरे के संपर्कों का पता चला और बैज की तलाश की जा रही थी। 20 जनवरी के बाद बैज साजिश से पूरी तरह गायब हो गया था। इन सब बातों को देखते हुए बैज के बारे में मिली जानकारी की पुष्टि करना जरूरी था। नागरवाला ने कहा कि वह करकरे को मदनलाल का सहयोगी मान रहे थे, लेकिन ऐसा कोई सबूत नहीं था जिससे यह साबित हो कि बैज भी सहयोगी था।
18.161 जब उनसे पूछा गया कि क्या राणा ने मदनलाल के बयान पर उनसे चर्चा की थी, तो उन्होंने जवाब दिया कि मदनलाल का बयान उन्हें दिया गया था और उन्होंने मुश्किल से एक-दो पन्ने ही पढ़े थे कि राणा ने उसे उनसे वापस ले लिया। उन्होंने राणा को यह भी बताया कि वे अहमदनगर के संपर्क में हैं और करकरे का पता लगाने

के लिए हर संभव प्रयास किया जा रहा है। लेकिन मदनलाल के बयान पर न तो फोन कॉल के बाद और न ही उससे पहले चर्चा हुई।
18.162 नागरवाला ने कहा कि मदनलाल के बयान (प्रदर्शनी 1) को पढ़ने से कोई फर्क नहीं पड़ता, क्योंकि इस संबंध में जो भी कार्रवाई होनी थी, वह पुणे में की जानी थी, जो उनके अधिकार क्षेत्र से बाहर था। जहाँ तक उन्हें याद है, राणा द्वारा लाया गया बयान हल्के रंग के कागज पर टाइप की गई प्रति थी, वह गुलाबी रंग की थी।
18.164 उन्होंने कहा कि अपराधी बॉम्बे में नहीं रहते थे; वे ठाणे आए और सांता क्रूज़ से हवाई मार्ग से भाग गए, लेकिन वहां की पुलिस उनकी पहचान नहीं कर पाई। उन्होंने बताया कि करकरे ठाणे जिले के कल्याण से ट्रेन से रवाना हुआ था और वह (नागरवाला) खुद केवल अपने अधिकार क्षेत्र में ही काम कर रहा था।
ध्यान दें—यह उल्लेख किया जा सकता है कि करकरे कल्याण से नहीं निकले बल्कि सेंट्रल स्टेशन (बॉम्बे सेंट्रल) से दिल्ली के लिए ट्रेन ली और अन्य दो, आप्टे और गोडसे 27 तारीख की सुबह तक बॉम्बे के होटलों में ठहरे हुए थे, जो दोनों नागरवाला के अधिकार क्षेत्र में थे।
18.166 अपराध रिपोर्ट में यह भी बताया गया था कि बैज के बारे में भी पूछताछ की गई थी, लेकिन बैज कभी बंबई नहीं आया, इसलिए उसकी पहचान का सवाल ही नहीं उठा। नागरवाला ने राणा से अपने द्वारा किए गए कार्यों पर चर्चा की, लेकिन मदनलाल के बयान पर कोई बात नहीं हुई। वह एक छोटी डायरी रखता था जिसमें उसने कुछ नाम लिखे थे, जो अपराध रिपोर्ट में भी दर्ज थे। बैज का नाम भी उसमें था। जब कामते को संबोधित राणा के पत्र का एक अंश नागरवाला को पढ़कर सुनाया गया, तो उसने कहा कि मदनलाल द्वारा बताए गए

व्यक्तियों का बंबई में छिपे होने की बात गलत है। उसने कहा कि उसने अपना काम कर दिया है और वह अपने किए से पूरी तरह संतुष्ट है।
नागरवाला को इस बात की कोई परवाह नहीं थी कि अपना काम पूरा करने की संतुष्टि ही काफी हद तक नाथूराम गोडसे को गांधी की हत्या में मदद करने का कारण बनी थी, लेकिन नागरवाला के तर्क के अनुसार, यह कृत्य दिल्ली में हुआ था जो उसके अधिकार क्षेत्र से बाहर था। 18.169 आयोग यह टिप्पणी करना चाहता है कि बैज को हत्या के बाद 31 जनवरी को गिरफ्तार किया गया था और उसके घर की तलाशी ली गई थी। 24 जनवरी को उसकी गिरफ्तारी का आदेश स्पष्ट रूप से इसलिए दिया गया था क्योंकि उस पर करकरे से संबंध होने का संदेह था। यदि उस समय पुणे पुलिस की सहायता ली गई होती तो यह अधिक उपयोगी होता। पहले गिरफ्तारी करना अधिक कारगर साबित होता।
18.171 नागरवाला ने कहा कि यह सही था कि वह दिल्ली पुलिस अधिकारियों से अवतार सिंह से पूछताछ करवाना चाहते थे, लेकिन वे इसके लिए तैयार नहीं थे। वह उन्हें मजबूर नहीं कर सके क्योंकि वे उनके अधीन नहीं थे। उन्होंने 5 फरवरी 1948 को मदनलाल का बयान लिया। उन्होंने यह भी कहा कि सावरकर के घर पर लगातार निगरानी रखी जा रही थी और वह यह नहीं बता सकते कि बंबई के पुलिस आयुक्त भरूचा को यह सूचना कहाँ से मिली कि षड्यंत्रकारियों ने सावरकर के घर का दौरा किया था और फिर भी वे पकड़े नहीं गए।
नागरवाला का दावा है कि सावरकर के घर पर लगातार निगरानी रखी जा रही थी, लेकिन हत्या के बाद 31 तारीख को जब उस पर हमला हुआ, तब निगरानी करने वाले कहाँ थे? चूंकि उनके विभाग को यह पता ही नहीं था कि किसकी निगरानी करनी है, तो उन्हें कैसे पता चलता कि साजिशकर्ताओं ने सावरकर के घर का दौरा किया था या नहीं?

18.178 नागरवाला ने कहा कि उनके पुलिस बयान से ऐसा प्रतीत होता है कि नाथूराम गोडसे और आप्टे दोनों 23 तारीख से, जब वे कलकत्ता पंजाब मेल से बॉम्बे आए थे, 27 तारीख तक, जब वे हवाई जहाज से बॉम्बे से दिल्ली के लिए रवाना हुए थे, एल्फिंस्टन होटल और आर्य पथिक आश्रम में छद्म नामों से रह रहे थे, लेकिन उस समय उन्हें साजिश में उनके होने की कोई जानकारी नहीं थी।
18.179 अतः ऐसा प्रतीत होता है कि बम फेंके जाने के बाद एन.डी. आप्टे के बंबई लौटने पर वे आश्रम में छद्म नाम से रहे, जबकि आश्रम के स्वामी को उनका सही नाम पता था। यह आश्चर्यजनक है कि स्वामी की जानकारी और मिलीभगत से उन्हें ऐसा करने की अनुमति दी गई।
18.181 इस स्तर पर भारत सरकार के वकील ने एक बयान दिया कि उनका मामला यह नहीं था कि करकरे 21 तारीख से लेकर अपनी गिरफ्तारी तक की अवधि में अहमदनगर में थे, बल्कि उनका मामला यह था कि यदि अहमदनगर पुलिस को सूचना दी गई होती तो करकरे का पता अधिक प्रभावी ढंग से लगाया जा सकता था। आयोग इस दृष्टिकोण से पूरी तरह असहमत है। अहमदनगर पुलिस को करकरे के ठिकाने के बारे में कुछ भी पता नहीं था और उन्हें इसकी परवाह भी नहीं थी। लेकिन उनके पास उनकी गतिविधियों का पूरा रिकॉर्ड था और वे जानते थे कि वह एन.डी. आप्टे के सहयोगी थे और यह जानकारी बॉम्बे पुलिस को उपलब्ध कराई जा सकती थी।
18.185 जब उनसे अहमदनगर पुलिस से करकरे के साथियों के बारे में जानकारी लेने के लिए कहा गया, तो उन्होंने बताया कि उन्हें अहमदनगर पुलिस से पता चला कि करकरे वहां नहीं थे और उन्होंने आगे कोई पूछताछ नहीं की, बल्कि बॉम्बे में उनके और उनके साथियों के बारे में अपनी जांच जारी रखी। उन्होंने अपने भाई से करकरे के

साथियों के नाम नहीं मांगे। उन्होंने कहा, 'अगर उन्हें करकरे मिल जाते, तो साथियों का सवाल उठता, क्योंकि जो लोग करकरे से मिलने आए थे, वे उनके साथी नहीं बने थे।' उन्होंने कहा कि अहमदनगर के डीएसपी करकरे के बारे में और अधिक जानकारी नहीं दे सकते थे। उनकी सूची में शामिल लोग जरूरी नहीं कि करकरे के साथी ही हों; वे नाम महात्मा गांधी के विरोधी लोगों के थे जो उनका अपहरण कर सकते थे और उन्हें नुकसान पहुंचा सकते थे। उस समय अपराध रिपोर्ट लिखने का एक मुख्य उद्देश्य यह था कि बाद में यह न कहा जाए कि इस साजिश में सावरकर का नाम जोड़ना बाद का विचार था।
18.188 अपनी जांच के दौरान और प्राप्त जानकारी के आधार पर उन्हें यह मानने का कारण मिला कि कोई गिरोह महात्मा गांधी का अपहरण कर सकता था। वे किसी भी सिद्धांत, विशेषकर अपहरण के सिद्धांत को लेकर अति उत्साही नहीं थे। उन्होंने आगे कहा कि यदि अपहरण से संबंधित जानकारी लगातार आती रहे और विश्वसनीय रूप से सही हो, तो चाहे कोई उससे कितना भी असहमत हो, उस पर काम करना ही होगा। उनकी जानकारी के अनुसार अपहरण का उद्देश्य यह था कि यदि महात्मा गांधी वहां नहीं होते तो पाकिस्तान को 55 करोड़ रुपये का भुगतान नहीं किया जाता।
18.189 उदाहरण 7, अनुच्छेद 8 में, संजेवी ने कहा था:
'मैंने उनसे उन फरार आरोपियों के बारे में पूछा जिनके नाम या विवरण मदनलाल ने दिल्ली पुलिस को दिए थे। नागरवाला ने मुझे बताया कि वह अगले दिन हवाई मार्ग से बॉम्बे शहर और प्रांत के अन्य हिस्सों में की गई जांच पर एक विस्तृत रिपोर्ट मुझे भेजेंगे।'

नागरवाला को इस मामले पर जवाब देने का अवसर दिया गया और उन्होंने जवाब दिया कि अनुच्छेद 8 में दिया गया कथन सही नहीं है और संजीवी ने टेलीफोन पर हुई बातचीत में उनसे किसी भी फरार आरोपी के बारे में नहीं पूछा था। संजीवी से हुई बातचीत में नागरवाला ने मुख्य रूप से महात्मा गांधी के अपहरण की साजिश के बारे में मिली जानकारी का जिक्र किया था। टेलीफोन पर हुई बातचीत की पुष्टि पत्र द्वारा करना उनकी प्रथा थी और इसलिए उन्होंने 30 जनवरी 1948 को संजीवी से हुई बातचीत का सारांश देते हुए एक पुष्टिकरण पत्र भेजा और उन्होंने कहा कि यह पत्र बातचीत का सही रिकॉर्ड है।
18.192 उन्होंने अपहरण के सिद्धांत का जिक्र मोरारजी देसाई से किया था और यदि मोरारजी देसाई कहते हैं कि उन्होंने ऐसा नहीं किया, तो यह उनकी स्मृति की कमी ही होगी। (एक बात जिस पर मोरारजी देसाई पर कोई आरोप नहीं लगा सकता था, वह थी स्मृति की कमी; 98 वर्ष की आयु में अपनी मृत्यु तक, उनकी स्मृति असाधारण रूप से कुशल थी। उन्हें घटनाएँ सूक्ष्मतम विवरणों के साथ याद रहती थीं और वे बातों को बढ़ा-चढ़ाकर बताने या संपादित करने के आदी नहीं थे।) उन्होंने गृह मंत्री द्वारा दी गई जानकारी के संबंध में 20 से 30 जनवरी के बीच गृह मंत्री से कई बार मुलाकात की।
18.197 खुफिया ब्यूरो फाइल संख्या 13/HA(R)/59-II, प्रदर्शनी 224-A में निहित साक्ष्य आयोग के समक्ष प्रस्तुत किए गए हैं, जिनमें कुछ ऐसे दस्तावेज हैं जो यदि पहले प्राप्त कर लिए गए होते तो बॉम्बे में चल रही जांच में अत्यंत सहायक सिद्ध हो सकते थे। डीआईजी, सीआईडी के कार्यालय के चौबल ने हत्या के बाद नागरवाला को एक दस्तावेज भेजा था जिसमें करकरे के रिश्तेदारों और सहयोगियों की सूची थी, जिनमें एन.डी. आप्टे का नाम भी शामिल

था। इसके बाद महत्वपूर्ण दस्तावेज एक पत्र है जिसके साथ वी.आर. करकरे की तस्वीरों की तीन प्रतियां और उनकी भूमिका का विवरण भेजा गया था। करकरे की इस तस्वीर के साथ आप्टे की तस्वीरों की तीन प्रतियां भी भेजी गई थीं, ताकि डीआईजी, सीआईडी, पुणे को दी गई जानकारी नागरवाला की जांच या गृह मंत्री द्वारा उन्हें दी गई जानकारी पर कार्रवाई करने में अत्यंत उपयोगी साबित हो सके। 18.199 अहमदनगर के पुलिस गवाहों के साक्ष्य से पता चलता है कि उनके पास मदनलाल और करकरे की गतिविधियों से संबंधित पूरी फाइल थी। वास्तव में, एस.आई. बलकुंडी ने ही उप अधीक्षक चौबल को करकरे और आप्टे के साथ उसके संबंध के बारे में जानकारी दी थी। यदि अहमदनगर की जिला पुलिस से पूछा गया होता, तो यह न केवल संभव बल्कि संभावित भी लगता है कि हत्या के बाद करकरे की जानकारी और तस्वीर पहले ही उपलब्ध करा दी जाती।
18.201 आयोग इस बात पर विचार कर रहा है कि बॉम्बे पुलिस द्वारा अपहरण के विचार को षड्यंत्रकारियों का उद्देश्य कैसे माना गया। एक संभावित कारण यह हो सकता है कि संपर्ककर्ताओं और मुखबिरों को पंजाबी भाषा की गलत समझ थी, क्योंकि कई पंजाबी शब्द सुनने में एक जैसे लगते हैं, हालांकि वे अलग-अलग शब्द होते हैं, और कभी-कभी एक ही शब्द के अलग-अलग संदर्भों में अलग-अलग अर्थ होते हैं, जैसे 'दस' का अर्थ दस और 'दिखाना' भी होता है। यह एक अत्यधिक अनुमानित व्याख्या हो सकती है, लेकिन अपहरण का सिद्धांत इतना चौंकाने वाला था कि ऐसी ही किसी गलती के कारण इसे उचित समझा गया होगा।
जे.एस. भरुचा का कथन-बुद्धि. 22
18.202 जे.एस. भारूचा, आईपी, पुलिस आयुक्त, बॉम्बे, गवाह संख्या 22, उस अवधि के दौरान जिसके साथ जांच संबंधित है।

18.204 उनकी जानकारी के अनुसार दिल्ली पुलिस बंबई आई थी, लेकिन उन्होंने कुछ खास नहीं किया और नागरवाला ने उन्हें बताया कि उनका कोई खास योगदान नहीं था। हत्या के बाद, उन्होंने (भरूचा) नागरवाला से पूछा कि उन्होंने प्रोफेसर जैन के बारे में उन्हें कुछ क्यों नहीं बताया, और नागरवाला ने जवाब दिया कि मोरारजी देसाई ने उन्हें पूरी बात गोपनीय रखने के लिए कहा था। मोरारजी देसाई ने पुलिस से सीधे बात की, हालांकि पुलिस को आदेश गृह सचिव के माध्यम से आने चाहिए थे।
18.205 उन्हें Ex5-A दिखाया गया और पूछा गया कि क्या वे इससे कुछ समझ सकते हैं। उनका जवाब 'हाँ' था और उन्होंने कहा कि वे विशेष रूप से 'हिंदू राष्ट्र' और 'अग्रनी' के संपादकों और करकरे के संबंध में ऐसा कर सकते हैं। Ex5-A से बॉम्बे पुलिस के लिए पुणे पुलिस से यह पता लगाना संभव होना चाहिए था कि षड्यंत्रकारी कौन थे। वे दो महीने तक पुणे के डीएसपी रहे थे और उस समय उन्हें नाथूराम गोडसे के बारे में कुछ जानकारी अवश्य रही होगी। यदि उन्हें बताया गया होता कि नाथूराम सावरकर से मिले थे, तो वे पुणे पुलिस से संपर्क करके मदनलाल के साथियों का पता लगाने का प्रयास करते। उन्हें नहीं लगता था कि पुणे पुलिस आरएसएस समर्थक थी। यदि बॉम्बे पुलिस, पुणे जिला पुलिस और सीआईडी के बीच सहयोग होता... पूना में, साजिशकर्ताओं की गिरफ्तारी मुश्किल नहीं होती, और अगर बॉम्बे पुलिस अंगारकर, गुर्टू और कामटे से संपर्क कर लेती, तो 'विवाद को शुरू में ही खत्म करना मुश्किल नहीं होता'।
18.208 राणा, जब दिल्ली से लौटे तो उनकी मुलाकात इस गवाह से नहीं हुई और इसलिए उन्हें मदनलाल के बयान के बारे में कभी पता नहीं चला। उनसे पूछा गया कि महात्मा गांधी की सभा में बम फेंके

जाने की जानकारी होने पर उन्हें क्या करना चाहिए था। उनका जवाब इस प्रकार था:
प्रश्न: 'जब आपको पता चला कि महात्मा गांधी की सभा में पश्चिम पंजाब से आए एक शरणार्थी द्वारा बम फेंका गया था, जो उस समय बंबई में रह रहा था, तो क्या यह आपका सामान्य कर्तव्य नहीं होता कि आप पता लगाएं कि वह व्यक्ति कौन था, उसके अन्य सह-साजिशकर्ता कौन थे और मामला कितना गंभीर था?'
ए. 'मेरे पास जो जानकारी थी, उसके आधार पर मुझे नहीं लगा कि यह मामला इतना गंभीर है कि मुझे स्वयं कोई जांच शुरू करनी पड़े। मुझे याद है कि मैंने कुछ नहीं किया। किसी ने भी इसे इतना गंभीर नहीं समझा था जितना यह बाद में निकला।'
18.209 जिरह के दौरान उन्होंने कहा कि उन्हें याद नहीं है कि जब वे पुणे में डीएसपी थे, तब उन्हें हत्या की साजिश के बारे में कुछ पता चला था या नहीं। उन्होंने हैरानी से जवाब दिया, 'मुझे याद नहीं है'। उन्हें यह भी याद नहीं था कि उनके कार्यकाल में आप्टे को गिरफ्तार किया गया था या नहीं। बम कांड की जांच के दौरान उन्हें महात्मा गांधी के अपहरण की साजिश की कोई जानकारी नहीं थी, न ही इस बात की कि उपायुक्त इस पर काम कर रहे थे। उन्हें ठीक से याद नहीं था कि नागरवाला ने उन्हें दिल्ली पुलिस अधिकारियों के दौरे के बारे में क्या बताया था।
18.210 उस समय उन्हें यह जानकारी नहीं थी कि सावरकर के घर पर नज़र रखी जा रही है। चूंकि यह एक महत्वपूर्ण मामला था, इसलिए उन्हें सूचना दी जानी चाहिए थी। हत्या के बाद, वे सावरकर से मिले, जिन्होंने उन्हें (भरूचा को) बताया कि गांधीजी की हत्या में उनका कोई हाथ नहीं है। इससे भरूचा को लगा कि कुछ गड़बड़ है। वे तुरंत मोरारजी देसाई के पास गए और उन्हें बताया कि उन्हें

सावरकर पर शक है और उन्होंने यह भी बताया कि सावरकर ने उनसे क्या कहा था। मोरारजी देसाई ने भरूचा से कहा, 'तुम उसे गिरफ्तार क्यों नहीं करते?' उस समय सावरकर वास्तव में बीमार थे और भरूचा ने मोरारजी देसाई को इस बारे में बताया था। नागरवाला ने गवाही दी थी कि सावरकर बीमारी का बहाना कर रहे थे।

कपूर आयोग की रिपोर्ट का अध्याय XIX सांप्रदायिक हिंदू संगठनों, हिंदू महासभा, आरएसएस और हिंदू राष्ट्र दल से संबंधित है।
19.19 आर.के. खादिलकर, गवाह संख्या 97, ने कहा कि उस समय उन्हें यह आभास हुआ था कि पुणे में हिंदू सभा के सदस्यों के बीच जो कट्टरता फैली हुई थी, वह हिंसा को जन्म दे सकती है। उन्होंने आगे कहा कि महात्मा गांधी को खतरा हिंदू कट्टरपंथियों से था, अर्थात् हिंदू राष्ट्र दल के उस छोटे से गुट से, जो हिंदू महासभा और आरएसएस का हिस्सा था।
19.21 आर.एस. गुरतु, गवाह संख्या 22, ने बताया कि उन्हें नाथूराम गोडसे, करकरे, आप्टे, बैज और कई अन्य लोगों की सांप्रदायिक गतिविधियों के बारे में सूचनाएँ मिली थीं। वे गांधीजी की मुसलमानों से संबंधित नीतियों के विरुद्ध प्रचार करते थे, लेकिन उन्हें याद नहीं है कि महात्मा गांधी को नुकसान पहुँचाने, या उनकी हत्या करने के लिए भी कोई प्रचार किया गया था। उनके द्वारा बम तैयार करने की सूचनाएँ थीं, लेकिन उनका उपयोग महात्मा गांधी के विरुद्ध नहीं किया जाना था। जब उन्होंने बिरला हाउस में बम विस्फोट के बारे में सुना, तो उन्हें हल्का सा संदेह हुआ कि यह हिंदू महासभा और आरएसएस समूह का काम हो सकता है। लेकिन उन्हें यह बिल्कुल भी पता नहीं था कि यह गोडसे समूह का काम था।
19.27 एक अन्य दस्तावेज़ जो नाथूराम गोडसे के रवैये को दर्शाता है, वह है प्रत्युत्तर 71, जो 28 नवंबर 1947 को शाम 6:30 बजे शिवाजी मंदिर में आयोजित हिंदू महासभा की बैठक की कार्यवाही का मराठी रिकॉर्ड है। लगभग दो हजार श्रोता उपस्थित थे और वक्ता वी.बी. गोगटे और एन.वी. गोडसे थे। भाषणों का विषय 'हिंदू राष्ट्र

और जयप्रकाश नारायण' था और यह पुणे में दिए गए जे.पी. नारायण के भाषण का त्वरित उत्तर था। वक्ताओं ने जयप्रकाश नारायण के समाजवाद का उपहास किया और समाजवादियों पर पाकिस्तान के निर्माण और भारत के विभाजन तथा उसके परिणामों में योगदान देने का आरोप लगाया। उस बैठक में नाथूराम गोडसे ने कहा: 'आरोप लगाए गए हैं कि संघ और हिंदू सभा ने पंडित नेहरू की हत्या की साजिश रची है क्योंकि उन्होंने कहा था कि वे सुभाष बाबू को देशद्रोही बताकर ब्रिटिश सरकार की ओर से तलवार लहराएंगे।'
भाषण में महात्मा गांधी का भी जिक्र था और यह भी कहा गया कि समाजवाद गांधीवाद की अनकही संतान है। भाषण का समापन इस वाक्य से हुआ, 'हिंदू महासभा और संघ की आलोचना हुई है। इसका मुख्य कारण यह है कि उन्होंने 'कंस' को देखा।'
दिल्ली में हिंदू महासभा की गतिविधियाँ
19.32 दिनांक 31 जनवरी 1948 की खुफिया जानकारी का सारांश, प्रदर्श 136, हिंदू महासभा की गतिविधियों का भी विवरण देता है। इसमें दर्शाया गया है कि आर्य समाज की वर्षगांठ के उपलक्ष्य में 25 जनवरी को एक जुलूस निकाला गया था। स्वामी धर्मानंद ने कहा कि महात्मा गांधी द्वारा किए गए उपवास ने दिल्ली से मुसलमानों को हटाने के 'प्रयास' को बिगाड़ दिया है।
19.35 प्रो. राम सिंह से आयोग ने गवाह संख्या 75 के रूप में पूछताछ की। उन्होंने हिंदू महासभा का पक्ष इस प्रकार रखा: 'यह विभाजन के विरुद्ध थी और इसके दुष्प्रभावों को दूर करने का प्रयास कर रही थी। यह सभी हिंदुओं को पाकिस्तान से सुरक्षित भारत लाने के पक्ष में थी। यह महात्मा गांधी की मुसलमानों को खुश करने और उन्हें भारत में रखने तथा उन मस्जिदों को खाली कराने की नीति के विरुद्ध थी जिन पर हिंदुओं और सिखों ने कब्जा

कर लिया था और वहां अपने देवी-देवताओं और धार्मिक प्रतीकों को स्थापित कर रखा था। यह उन मुस्लिम घरों को खाली रखने के भी विरुद्ध थी जब हिंदू और सिख बेघर थे और गर्भवती हिंदू महिलाएं बच्चों को जन्म दे रही थीं और उनके पास जाने के लिए कोई जगह नहीं थी। यह कश्मीर युद्ध को जारी रखने के लिए पाकिस्तान को 55 करोड़ रुपये दिए जाने के भी विरुद्ध थी। उन्होंने कहा कि वे महात्मा गांधी की हत्या के पक्ष में नहीं थे और न ही कोई हिंदू सभा का सदस्य था। हिंदू महासभा नेताओं की हत्या के पक्ष में नहीं थी और 'मदनलाल जिंदाबाद' के नारे लगाने के लिए वे जिम्मेदार नहीं थे।' बॉम्बे प्रांत में आरएसएस
19.42 आरएसएस और हिंदू महासभा की गतिविधियों की जानकारी 1947 में बॉम्बे सरकार को अवश्य हुई होगी और इस पर विचार किया गया होगा; क्योंकि हमें गोपनीय गुप्त दस्तावेज (प्रदर्शनी संख्या
177) में तत्कालीन प्रधानमंत्री बी.जी. खेर द्वारा इन संगठनों के संबंध में तीन सुझाव मिलते हैं: (1) आरएसएस के अधिकारियों और सदस्यों की पूरी सूची पुलिस द्वारा संकलित कर सरकार को सौंपी जाए; (ii) हिंदू महासभा संगठनों के नेताओं के संबंध में भी ऐसा ही आदेश जारी किया जाए; और (iii) दोनों संगठनों के संचालन पर कड़ी निगरानी रखी जाए। इस आदेश पर कोई तिथि अंकित नहीं थी, लेकिन 7 अगस्त 1947 को मोरारजी देसाई ने डीआईजी, सीआईडी और बॉम्बे पुलिस आयुक्त को 10 दिनों के भीतर आवश्यक जानकारी प्राप्त करने का आदेश जारी किया; यह जानकारी गोपनीय रूप से प्राप्त की जानी चाहिए और सभी दृष्टियों से सही और पूर्ण होनी चाहिए।
19.45 ऐसा प्रतीत नहीं होता कि डी.आई.जी., सी.आई.डी. द्वारा आरएसएस की कोई अलग सूची तैयार की गई थी, और न ही इस सूची से यह पता चलता है कि इस सूची में दिए गए विभिन्न व्यक्ति आरएसएस के

सदस्य थे। लेकिन इस बात के प्रमाण मौजूद हैं कि आरएसएस के कई सदस्य हिंदू महासभा के सदस्य थे। इस सूची में नाथूराम गोडसे का नाम है, जो एक कट्टर सावरकरवादी के रूप में जाने जाते हैं; एन.डी. आप्टे का नाम है, जिन्हें संभावित रूप से खतरनाक बताया गया है; जी.वी. केतकर का नाम है, जिन्हें एक कट्टर सावरकरवादी और हिंदू सभा की गतिविधियों के पीछे का दिमाग और प्रभावशाली व्यक्ति बताया गया है; एन.आर. अठावले का नाम भी संभावित रूप से खतरनाक और कट्टर सावरकरवादी बताया गया है; और डी.आर. बैज का नाम भी संभावित रूप से खतरनाक और बिना लाइसेंस के हथियारों का व्यापारी बताया गया है।
19.46 में एक और सूची, Ex.ll4-A जोड़ी गई है, जो अहमदनगर की है। इसमें एन.आर. करकरे को हथियार तस्कर, एन.डी. आप्टे का सहकर्मी और संभावित रूप से खतरनाक बताया गया है। लेकिन Ex. 114 और Ex.114-A दोनों प्रांतीय सूचियाँ हैं। अहमदनगर की जिला सूची में यह सारी विस्तृत जानकारी नहीं दी गई है।
19.55 हम दिल्ली में आरएसएस की गतिविधियों से संबंधित साक्ष्यों पर विचार कर सकते हैं। गवाह संख्या 19, बैनर्जी ने कहा है:
'आरएसएस की कुछ गतिविधियों को असामाजिक और आपत्तिजनक माना जाता था और यह भावना थी कि सरकार इस संगठन से निपटने में काफी सुस्ती दिखा रही है।'
19.64 अपनी पुस्तक के पृष्ठ 687 पर प्यारेलाल ने निम्नलिखित कहा है:
आरएसएस एक सांप्रदायिक, अर्धसैनिक, फासीवादी संगठन था, जिसका नियंत्रण महाराष्ट्र से होता था। इसके प्रमुख पदों पर लगभग पूरी तरह से महाराष्ट्रियों का ही कब्जा था। उनका घोषित

उद्देश्य हिंदू राज की स्थापना करना था। उन्होंने 'मुसलमानों को भारत से बाहर निकालो' का नारा अपनाया था। उस समय वे खुले तौर पर बहुत सक्रिय नहीं थे, लेकिन दबे स्वर में यह संकेत दिया जा रहा था कि वे पश्चिमी पाकिस्तान में बसे सभी हिंदुओं और सिखों के निकाले जाने का इंतजार कर रहे हैं। इसके बाद वे पाकिस्तान द्वारा किए गए कृत्यों का बदला भारतीय मुसलमानों से लेंगे। 19.67 लगभग 12 सितंबर 1947 को आरएसएस के प्रमुख ने गांधीजी से मुलाकात की और उनसे कहा कि वे मुसलमानों की हत्या के पक्षधर नहीं हैं, बल्कि हिंदुओं की रक्षा के पक्षधर हैं, अर्थात् वे एक रक्षक शक्ति हैं, न कि विनाशकारी शक्ति, और आरएसएस शांति का समर्थक है। लेकिन जब महात्मा गांधी ने उनसे खुले तौर पर आरोपों का खंडन करने और मुसलमानों की हत्याओं और उत्पीड़न की निंदा करने को कहा, तो उन्होंने कहा कि गांधीजी स्वयं ऐसा कर सकते हैं। कुछ दिनों बाद आरएसएस के नेता गांधीजी को स्वीपर कॉलोनी में आयोजित अपनी एक रैली में ले गए। उन्होंने गांधीजी का स्वागत किया और उन्हें हिंदू धर्म द्वारा निर्मित एक महान व्यक्ति बताया। जवाब में गांधीजी ने कहा कि उन्हें हिंदू होने पर गर्व है, लेकिन उनका हिंदू धर्म असहिष्णु या विशिष्ट नहीं है।
19.72 मणिबेन पटेल की 1 फरवरी 1948 की डायरी के अनुसार, 'आरएसएस के सदस्य आए और सरदार से कहा कि उनका संगठन हत्या में शामिल नहीं था।'
यह एक विचित्र खुलासा है क्योंकि 31 जनवरी की शाम को अंतिम संस्कार के तुरंत बाद मंत्रिमंडल के वरिष्ठ सदस्यों, नौकरशाहों और पुलिस की एक बैठक हुई और आरएसएस और हिंदू महासभा पर प्रतिबंध लगाने का निर्णय लिया गया, फिर भी केंद्रीय गृह

मंत्री की बेटी ने खुलासा किया कि उनके पिता ने अगली सुबह अपने आधिकारिक आवास पर आरएसएस के सदस्यों से मुलाकात की।
19.75 कम्युनिस्ट कार्यकर्ताओं, समाजवादियों आदि की आलोचना ने स्थानीय हिंदू महासभा सदस्यों को 'संदिग्ध काल कोठरी' में धकेल दिया था। आरएसएस कार्यकर्ताओं की गतिविधियाँ बढ़ गई थीं और उनकी सभाओं को कई प्रमुख हिंदुओं ने संबोधित किया, जिन्होंने लोगों से आरएसएस को मजबूत करने का आह्वान किया। इससे यह भी पता चलता है कि पुणे में आरएसएस और हिंदू महासभा के नेता 'कम से कम एक-दूसरे के समान' थे।
हिंदू राष्ट्र दल की गतिविधियाँ
19.82 संक्षिप्त इतिहास। 15 मई 1942 को हिंदू महासभा के अध्यक्ष वी.डी. सावरकर ने पुणे में संगठन के प्रशिक्षण शिविर में स्वयंसेवकों को संबोधित करते हुए गुप्त गतिविधियों के लिए स्वयंसेवी संगठन बनाने की आवश्यकता पर बल दिया, क्योंकि यह कार्य सभा द्वारा नहीं किया जा सकता था। इसके परिणामस्वरूप, एस.आर. दते, वी.वी. गोगटे, एन.डी. आप्टे और एन.वी. गोडसे जैसे हिंदू महासभा के नेताओं ने हिंदू सभा की गतिविधियों में सहायता करने के उद्देश्य से पुणे में हिंदू राष्ट्र दल की स्थापना की। लेकिन उन्होंने दल के आंदोलन को लोकप्रिय बनाने या इसकी सदस्यता बढ़ाने का कोई प्रयास नहीं किया।
19.83 मई 1943 में, एन.डी. आप्टे और एन.वी. गोडसे ने अहमदनगर में दल का दूसरा वार्षिक प्रशिक्षण शिविर आयोजित किया। बंबई प्रांत के मराठी भाषी जिलों और मराठी भाषी भारतीय राज्यों से 70 स्वयंसेवकों ने शिविर में भाग लिया। स्वयंसेवकों को आग्नेयास्त्रों के उपयोग का प्रशिक्षण दिया गया और उन्हें सावरकर विचारधारा से अवगत कराया गया।

19.84 29 मई 1943 को, वी.डी. सावरकर ने पुणे के आनंद आश्रम में हिंदू राष्ट्र दल के साथ निजी चर्चा की। उन्होंने स्वयंसेवकों से कहा कि वे हिंदू महासभा के अध्यक्ष चाहे जो भी हों, उनके प्रति पूर्ण निष्ठा रखें। दल एक स्वतंत्र संगठन बना रहेगा, जिसका प्राथमिक कर्तव्य हिंदू धर्म की रक्षा करना और अपने अधिकारों और धर्म पर अतिक्रमण का विरोध करने वाले प्रत्येक हिंदू संस्थान की सहायता करना होगा। सावरकर की विचारधारा हिंदू धर्म की प्राप्ति, पाकिस्तान का विरोध और भारत की अविभाज्यता थी।
19.85 दल की सदस्यता। दलत पूना के 150 सदस्य थे। पदाधिकारी इस प्रकार थे—
(1) एन.वी. गोडसे, अग्रनी के संपादक, मुख्य आयोजक। (2) काशीनाथ लिमये, सांगली।
(3) एन.डी. आप्टे, सचिव.
(4) फर्ग्यूसन कॉलेज के प्रो. आर.एस. जोग, आयोजक।
19.86 हिंदू राष्ट्र दल की गतिविधियाँ हिंदू महासभा की बैठकों के दौरान व्यवस्था बनाए रखने और हिंदू महासभा के सदस्यों की भर्ती तक ही सीमित थीं। 22 जून 1944 को, एन.डी. आप्टे के नेतृत्व में हिंदू राष्ट्र दल के 15 स्वयंसेवकों ने पंचगनी में गांधीजी के विरुद्ध प्रदर्शन किया। नाथूराम गोडसे ने महात्मा गांधी पर हमला करने का असफल प्रयास किया।
19.88 दल का उद्देश्य 'वीर सावरकर जी द्वारा प्रतिपादित हिंदू राष्ट्रवाद' का प्रचार करना बताया गया था, जिसे सावरकरवाद कहा जाता है।
1989 में सावरकर ने तानाशाही शासन करते हुए सतारा के एस.वी. मोदक और पी.वी. गोथास्कर को अगला तानाशाह और महासचिव नामित

[illegible]

19.92 [illegible] 16 [illegible] 1944 [illegible] 15,000 [illegible] 25 [illegible] 1944 [illegible] 3 [illegible] 1947 [illegible] 5,000 [illegible] 1947 [illegible] 15 [illegible] 1947 [illegible] 31 [illegible] 1948 [illegible] 30 [illegible]

19.93 [illegible]

गया है, इन समाचार पत्रों की गांधी-विरोधी नीति और इसके संपादक, नाथूराम वी. गोडसे की मानसिकता को दर्शाते हैं:
अग्रानी, दिनांक 12 अप्रैल 1947:
'अहिंसा के पैरोकार की रक्तपिपासा अभी तक बुझी नहीं है।' गांधी, जिन्होंने एकतरफा अहिंसा का समर्थन करके हिंदुओं के प्रतिरोध की मानसिकता को नष्ट करना अपने जीवन भर का आदर्श बना लिया था, ने अब प्रार्थना के बाद अपने भाषण में स्पष्ट रूप से कहा है कि वे स्वतंत्र भारत के राष्ट्रपति पद पर बैरिस्टर जिन्ना को विराजमान देखना चाहते हैं। गांधी ने अपने राजनीतिक जीवन की शुरुआत में ही अफगानिस्तान के अमीर को स्वतंत्रता प्राप्त करने के भव्य बहाने से भारत पर आक्रमण करने का निमंत्रण देकर अपनी इस्लाम-समर्थक दासतापूर्ण मानसिकता प्रकट कर दी थी। इसके बाद युद्ध के कारण अराजकता से भारत में किसी धोखेबाज का शासन स्थापित होने की आशंका जताकर, स्वतंत्रता के इस झूठे (नाममात्र के) भक्त और सत्य एवं अहिंसा की पाखंडी पूजा करने वाले व्यक्ति ने निज़ाम के सिर पर भारत की संप्रभुता का मुकुट पहनाने और ऐसे निज़ाम के सम्मान में पंचदीपित थाली घुमाने की उत्सुकता दिखाई। गांधीजी ने राजजी के माध्यम से (बैरिस्टर) जिन्ना को अंतरिम सरकार का प्रधानमंत्री पद देकर सत्ता पुनः जिन्ना को सौंपने का प्रयास किया था, और अब स्वतंत्रता के द्वार पर दस्तक देते हुए यह 'गद्दार' खुलेआम (जिन्ना) को लुभाते हुए कह रहा है, "(बैरिस्टर) जिन्नाभाई, आप केवल पाकिस्तान, यानी भारत का एक तिहाई या एक चौथाई हिस्सा ही क्यों मांग रहे हैं? जब यह विनम्र सेवक आपके चरणों में पूरा भारत अर्पित करने को तैयार है, तो आप इसे क्यों नहीं स्वीकारते?" इससे हमें यह कहने के लिए विवश होना पड़ता है कि इस

'महात्मा' (जिसका अर्थ है 'कामुक आत्मा', संपादक महात्मा उपाधि का उपहास कर रहा है) की हिंदू रक्त की प्यास अभी तक बुझी नहीं है।
★
'गांधी ने आत्महत्या कर ली'
यह तो निर्लज्जता की पराकाष्ठा है कि वह कायर जो अपनी जान बचाने के लिए पुलिस और सैनिकों की सहायता के बिना नहीं रह सकता, जिसके चरणों के स्पर्श से कई अहिल्या मंत्री पद पर आसीन शूर्पणखा बन जाते हैं, जो बमों, तोपों और ब्रिटिश सैनिकों के बिना प्रशासन चलाने में आगे नहीं बढ़ सकता, वह हिंदुओं को बिना प्रतिरोध किए स्वयं को बलिदान करने की सलाह दे रहा है। क्या सत्ता के नशे में अंधा सुल्तान हिंदू जनता के रक्त को एक पैसे के बराबर भी नहीं समझता, कि यह बनिया, जो अपने समुदाय का गद्दार है (अर्थात महात्मा गांधी), कई नदियाँ बहने के बावजूद इन क्रूर आक्रमणकारियों की रक्तप्यास बुझाने के नए-नए तरीके खोज रहा है? क्या वह नोआखली, पंजाब और बिहार में हुए रक्तपात को पर्याप्त नहीं समझता? हम गांधीजी से साफ कहते हैं कि अगर उनके द्वारा बहाई गई हिंदू रक्तधाराओं या उनके द्वारा परोक्ष रूप से दिए गए उन अत्याचारों को, जिनकी वकालत करके उन्होंने इस कायरतापूर्ण विचारधारा को बढ़ावा दिया है, कम से कम आंशिक रूप से भी समाप्त किया जा सके, तो गांधीजी को अपनी कायरतापूर्ण और निरर्थक अहिंसा की हार स्वीकार कर लेनी चाहिए और अपने आत्मसम्मान (यदि थोड़ा बहुत बचा हो) की रक्षा के लिए आत्महत्या कर लेनी चाहिए; अन्यथा, उन्हें भारतीय राजनीति को हमेशा के लिए अलविदा कह देना चाहिए। क्या यह सोकाजी, जो दूसरों के जीवन के प्रति इतने उदार रहे हैं, अपने लाखों देशवासियों के बारे में सोचते हैं? क्या इस

पाखंडी देशभक्त की वास्तविक कीमत का पता लगाना जनता का कर्तव्य नहीं है?
★
हिंदू राष्ट्र, दिनांक 7-6-1947
हिंदू राष्ट्र सेवक बैज गिरफ्तार, पुणे, दिनांक 6-6-1947 — 'पुलिस (बी सब) ने आज रात 8.30 बजे शस्त्र अधिनियम की धारा 19 एफ के तहत महाराष्ट्र शस्त्र भंडार के प्रबंधक हिंदू राष्ट्र सेवक एच.एन. बैज को गिरफ्तार किया। उन्हें तुरंत जमानत पर रिहा कर दिया गया। अब बैज के खिलाफ दूसरी बार अभियोग शुरू किया गया है।'
★
Hindu Rashtra, Dt. 3-7-1947
'अग्रनी को कई पत्र मिले हैं जिनमें अनुरोध किया गया है कि 'इस विषय पर प्रतिदिन कुछ लिखें और इसकी और प्रतियां भेजें।' इसका मतलब है कि वे कांग्रेसियों पर शाप और मुसलमानों के विरोध जैसी बातें लिखवाना चाहते हैं। लेकिन आज के नौजवानों ने ऐसा क्या किया है कि हिंदुत्व के उन अनुयायियों का महिमामंडन किया जाए जिन्होंने वर्षों से कांग्रेस के कायर शासन को सहन किया है।' ★
'आज का यह युवा (?) जो हिंदुत्व का अनुयायी है, प्रतिदिन यह समाचार पढ़ता है कि आज कांग्रेसियों ने और अधिक हिंदुओं को गिरफ्तार किया, जवाहरलाल ने केवल हिंदुओं को मारा; वल्लभभाई ने एक हिंदू महिला के साथ छेड़छाड़ सहन की और गांधी (शाब्दिक रूप से, गांधी का क्या?) वह हर दिन पाकिस्तान में एक नया प्रांत मिलाने के लिए दौरे पर निकलने को हमेशा उत्सुक रहते हैं।'

इस खबर को पढ़ने के बाद हिंदुत्व के अनुयायी युवक ने कांग्रेसियों को कायर और हिंदू विरोधी कहने के अलावा और क्या किया है?
'यदि आप कुछ और नहीं कर सकते, तो जो अस्तित्व में है उसे चुपचाप सहन करते रहें। आपको हिंदुत्व के प्रति अपनी निष्ठा का ढोल-नगाड़ा बिल्कुल नहीं करना चाहिए!'
★
दैनिक अग्रनी, हिंदू राष्ट्र, दिनांक 6 जुलाई 1947 में प्रकाशित भालजी पेंढारकर के 3 जुलाई के काले दिवस के पालन पर दिए गए संदेश का अनुवाद।
'मेरे दुखी, व्यथित और शायद निराश हिंदू भाइयों! यह एक ऐसा काला दिन है, जो हम पर उन लोगों द्वारा थोपा गया है जिन्होंने देश को (एक वस्तु की तरह) काला बाजार बनाकर बेचा है, कि हर हिंदू, हर देशभक्त को इसके खिलाफ तब तक बुलंद आवाज में विरोध करना चाहिए जब तक कि खतरा टूट न जाए और सीना फट न जाए। और यह बड़े शर्म की बात है कि महाराष्ट्र में गलती से पैदा हुए कुछ कमजोर लोग छत्रपति की इस राजधानी में आकर इस विभाजन को जायज ठहरा रहे हैं... अखंड भारत के विभाजनकर्ताओं की सौ बार निंदा हो।' ये शब्द भालजी पेंढारकर ने कोल्हापुर के 'काला दिन' के अवसर पर अपनी बीमारी की हालत में भेजे गए एक पत्र में कहे थे, जो हर हिंदू के दिल को छू गए।
★
दैनिक हिंदू राष्ट्र, दि. 6 सितंबर 1947.
अहिंसा की प्रवृत्ति (जो पशुओं द्वारा आसानी से अपनाई जा सकती है) 'गांधी और उनके अनुयायियों (यानी गांधी के लोग) द्वारा हिंदू समुदाय को भेड़-बकरियों की तरह प्रतिशोधहीन और अहिंसक

प्रवृत्ति आत्मसात कराने के लिए किए गए अथक प्रयास समझ में आते हैं। इसके लिए उन्हें (गांधी और उनके अनुयायियों को) दोष देने का कोई कारण नहीं है। लेकिन जब पंडित जवाहरलाल जैसे नासमझ प्रधानमंत्री के पदचिन्हों पर चलते हुए डॉ. श्यामा प्रसाद भी एक बयान जारी करते हैं और जब बंगाल हिंदू सभा के अध्यक्ष बैरिस्टर चटर्जी और सचिव देवेंद्रनाथ मुखर्जी जैसे स्वयं को हिंदू सभा के नेता कहने वाले लोग गांधी के उस अनशन से दुखी होते हैं जिसमें हिंदुओं के प्रति दुर्भावना है, तो हम इतना कहने को बाध्य हैं कि हिंदू सभा को अपने स्वास्थ्य (यानी संविधान) पर अधिक गंभीरता से विचार करना आवश्यक है।'
दैनिक हिंदू राष्ट्र, दिनांक 7 सितंबर 1947। 'कांग्रेस को जो स्वराज मिला है, वह लियाकत अली के साथ दौरे करने में व्यस्त है, जबकि उसके स्वराज के देवता (महात्मा) गांधी सुहरावर्दी के प्याले में नींबू (यानी मुसंबी) का रस पीकर तमाशा दिखाने में व्यस्त हैं।'
★
और यदि किसी के मन में वास्तव में अखंड हिंदुस्तान (यानी अविभाजित भारत) की तीव्र इच्छा हो और उसके लिए प्राणों का बलिदान करने की भावना उत्पन्न हो, तो गलत जगह पर प्रहार न करें! इन बाधाओं (यानी कांटों) को हटा दें! भारतीय वीरता की बाढ़ क्षण भर में पूरे भारत को एक कर देगी।
बेशक, यह सब चुनाव, सभाओं, प्रचार आदि के शांतिपूर्ण तरीकों से किया जाएगा! इससे अधिक हम और क्या कह सकते हैं?
★
Dainik Hindu Rashtra, dt. 16th December 1947.

कांग्रेस द्वारा हिंदुओं के साथ विश्वासघात के लिए पाकिस्तान द्वारा दिया गया इनाम। 'गांधी, इन सभी कुटिल षड्यंत्रों के जनक, खुलेआम प्रचार कर रहे हैं कि हिंदी राष्ट्रीय भाषा नहीं होनी चाहिए। सत्ता एक नशीला पदार्थ है। इसी प्रकार, बहुमत का समर्थन भी एक नशीला प्रभाव है। कांग्रेसी आज इसी नशे में चूर हो गए हैं।'
★
19.94 'अग्रनी' से कुछ अन्य अंश भी हैं जो इसके संपादक के मत की प्रवृत्ति को दर्शाते हैं। उदाहरण 152, 6 जुलाई 1947 के अंक का है, जिसमें बम कांड के संबंध में हिंदू महासभा के सचिव अठावले की गिरफ्तारी का उल्लेख है। लेख के महत्वपूर्ण अंश इस प्रकार हैं: यह जानकर संतोष होता है कि सरकार को हिंदू महासभा कार्यकर्ताओं के बम षड्यंत्र में शामिल होने का संदेह है, गोडसे सहित अन्य कार्यकर्ताओं के भी इसमें शामिल होने की संभावना है, और कांग्रेस सरकार इन गिरफ्तारियों के माध्यम से हिंदू सभा आंदोलन को बाधित करके संतुष्टि प्राप्त करना चाहती है। 'अग्रनी' भले ही बंद हो जाए, लेकिन 3 जुलाई को मनाया जाने वाला काला दिवस हिंदुत्व के संघर्ष की शुरुआत है।
अध्याय XX में कपूर आयोग की रिपोर्ट में जी.वी. केतकर और अन्य लोगों के बारे में चर्चा की गई है।
20.1 जी.वी. केतकर, गवाह संख्या 1, पुणे के एक प्रतिष्ठित नागरिक हैं। वे महान भारतीय नेता स्वर्गीय बाल गंगाधर 'लोकमान्य' तिलक के पोते (पुत्री के पुत्र) हैं। वे तिलक के समाचार पत्र 'केसरी' के संपादक थे और एक समय बॉम्बे प्रांत की प्रांतीय कांग्रेस समिति के अध्यक्ष भी रह चुके हैं। उन्होंने 1930 में नमक सत्याग्रह (दांडी कूच) में भाग लिया था।

20.30 उनके बयान का एक बहुत महत्वपूर्ण हिस्सा, जो नाथूराम गोडसे के साथ उनके संबंध को दर्शाता है, बल्कि एक घनिष्ठ संबंध को, खंड I के पृष्ठ 15 पर एक प्रश्न के उत्तर में है।
प्र. 'क्या आप इन मामलों (कार्यक्षेत्र की शर्तों) के बारे में कुछ और कहना चाहेंगे?'
ए. 'मुझे नहीं लगता कि मुझे इन मामलों में कुछ और जोड़ने की ज़रूरत है। मुझे बताया गया था कि नाथूराम गोडसे ने अपनी फांसी से पहले अपने रिश्तेदारों और दोस्तों को कुछ पत्र भेजे थे। वे पत्र कभी भी पते पर नहीं पहुंचे। मैंने मार्च 1965 में जेल अधिकारियों को लिखा था, और मुझे बताया गया था कि उन्हें जेल महानिरीक्षक को भेज दिया गया था। मैं चाहता हूं कि अगर कोई पत्र मुझे संबोधित है, तो वह मुझे या आयोग को दिया जाए क्योंकि मुझे पूरा विश्वास है कि इससे मेरा यह बयान पुष्ट होगा कि मैंने उन्हें इस हत्या को अंजाम देने से रोकने की कोशिश की थी।' 20.35 जब उनसे पूछा गया कि बैज के साथ अपनी मुलाकात के बाद उन्होंने आप्टे और गोडसे के बारे में किसी को क्यों नहीं बताया, जबकि इससे पहले उन्होंने मात्र एक अशुभ शब्दों वाले भाषण के आधार पर बलुकाका को गोडसे के इरादे के बारे में सरकार को सूचित करने के लिए कहा था, तो उनका जवाब था—
'मैं उस समय संपादक था। मेरे पास बलुकाका से मिलने जाने का समय नहीं था। बैज ने मुझसे कहा कि बम से हमला करना खुद हत्या का प्रयास था और वे फिर से हमला करने वाले थे। चूंकि मैंने उसे गाली दी थी, इसलिए वह (बैज) भाग गया।'
जब उनसे पूछा गया कि ऊपर उल्लिखित तीनों अवसरों पर हुई बातचीत से उन्होंने क्या निष्कर्ष निकाला, तो उनका उत्तर था—

'महात्मा गांधी को अकेले ही मारा जाना था... मुझे उस जगह का पता नहीं था जहां महात्मा गांधी पर हमला होगा।'
उन्होंने आगे कहा—
'मुझे पता था कि गोडसे महात्मा गांधी की हत्या करने वाला है क्योंकि उसने खुद मुझे बताया था और आप्टे उसका सहायक बनने वाला था। मुझे यह नहीं पता था कि वे हत्या के लिए क्या तरीके अपनाएंगे... मैंने अपनी बातचीत से यह निष्कर्ष नहीं निकाला कि महात्मा गांधी की हत्या की कोई साजिश थी। मुझे तो बस यही लग रहा था कि हत्या को अंजाम देने वाला सिर्फ गोडसे ही था।'
20.36 यह 22 जनवरी 1948 तक की उनकी जानकारी थी। बैज से मिलने के बाद ही उन्हें (केतकर को) पता चला कि हत्या में एक से अधिक लोग शामिल होने वाले थे।
20.50 करकरे और गोपाल गोडसे की रिहाई पर उन्हें सम्मानित करने के लिए आयोजित समारोह में साजिश के बारे में किए गए खुलासे के बाद केतकर द्वारा अपनी हिरासत के संबंध में दायर पुनर्विचार याचिका के अनुच्छेद 33 में, केतकर ने उल्लेख किया कि जब रविवार, 22 नवंबर 1964 की दोपहर को, वह कुछ अमेरिकियों को पूना शहर घुमा रहे थे और जैन मंदिर बस स्टॉप के पास थे, तो कुछ लड़के उनके चारों ओर जमा हो गए और उनके गले में जूतों की माला डाल दी और अमेरिकियों से कहा कि वह (केतकर) एक गद्दार हैं, जिससे यह पता चलता है कि उनके खिलाफ हिंसक प्रचार किया जा रहा था।
20.51 इस याचिका से तीन बातें सामने आती हैं — (1) हत्या से तीन महीने पहले, एन.वी. गोडसे ने केतकर को अपने बारे में बताया था महात्मा गांधी की हत्या का विचार आने पर उन्होंने उसे फटकारा और कोशिश की।

उसे मना लें। हम इसके फायदे और नुकसान पर चर्चा को यहीं छोड़ देते हैं।
murdering Mahatma Gandhi.
(2) उससे कुछ महीने पहले गोडसे ने महात्मा गांधी के जीवन के बारे में एक भाषण दिया था।
125 वर्ष, आदि केतकर ने बालुकाका कानिटकर से मुलाकात की और उन्हें चेतावनी देने का आग्रह किया
बलुकाका द्वारा गठित सरकार के बारे में। उन्होंने बलुकाका से इस बारे में बात की।
भाषण और नाथूराम गोडसे के साथ हुई उनकी निजी बातचीत से इसकी पुष्टि हुई। (3) बम फेंकने के बाद बैज केतकर से मिला और उसने निम्नलिखित लोगों के नाम बताए।
बम फेंकने की घटना में शामिल प्रतिभागियों और उनके वापस लौटने के बारे में भी।
हत्या को अंजाम देने के लिए दिल्ली गया।
20.54 केतकर से पूछा गया कि 14 सितंबर 1965 को इस आयोग को लिखे अपने पत्र (प्रस्तुति 19) में उन्होंने गोडसे के इस विचार को अंजाम देने पर होने वाले भयावह और विनाशकारी परिणामों के बारे में जो कहा था, उसका क्या तात्पर्य था। उनका उत्तर महत्वपूर्ण है; वे कहते हैं, 'मेरा तात्पर्य यह था कि जन आंदोलन होगा। राजनीतिक दल, अर्थात् कांग्रेस और गैर-कांग्रेस दल आपस में लड़ेंगे और ब्राह्मण एवं गैर-ब्राह्मण विवाद भड़क सकता है।' उन्होंने 'भयंकर' शब्द का प्रयोग किया है, जिसका अर्थ है 'अत्यंत विनाशकारी'।
20.60 जिरह के दौरान केतकर ने आयोग को बताया कि उसे हत्या के इरादे की जानकारी थी, योजना की नहीं, और उसे इस बात की जानकारी

तीन बार मिली थी। बैज द्वारा बताए जाने तक उसे आप्टे के इसमें शामिल होने की जानकारी नहीं थी। वह आप्टे को केवल नाम और चेहरे से जानता था, जो आयोग की राय में सत्य के बिल्कुल विपरीत है, जैसा कि इस तथ्य से सिद्ध होता है कि उसने पुस्तकालय बम कांड में आप्टे के लिए ज़मानत दी थी।
20.61 समीक्षा प्राधिकारी के समक्ष केतकर की याचिका खारिज होने के बाद, उन्होंने बॉम्बे उच्च न्यायालय में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 491 के तहत एक याचिका दायर की, लेकिन यह याचिका भी बॉम्बे उच्च न्यायालय के 21 जुलाई 1965 के फैसले द्वारा खारिज कर दी गई। याचिका में उल्लिखित कुछ तथ्य और बॉम्बे उच्च न्यायालय के निष्कर्ष प्रासंगिक हैं और इन्हें यहां प्रस्तुत करना उपयोगी हो सकता है:
— विद्वान न्यायाधीशों ने कहा है, 'उनके (केतकर) अनुसार, दोनों सरकारों को शर्मिंदगी महसूस हुई, क्योंकि याचिकाकर्ता ने उन्होंने खुलासा किया कि उन्होंने तत्कालीन मुख्यमंत्री बी.जी. खेर को इस बारे में सूचित कर दिया था।
बंबई में महात्मा गांधी की हत्या की 'योजना' के बारे में चर्चा हुई, लेकिन अभी तक कोई कार्रवाई नहीं हुई।
अपराध को रोकने के लिए कदम उठाया गया था। महत्वपूर्ण बात यह है कि
निर्णय में 'योजना' शब्द का प्रयोग किया गया है, न कि 'इरादा'। केतकर के जवाब में जिला मजिस्ट्रेट द्वारा दायर हलफनामे में हलफनामे में उन्होंने कहा कि केतकर अमान्य थे क्योंकि वे उस वर्ग से संबंधित थे।
उन व्यक्तियों का समूह जो मानते थे कि नाथूराम गोडसे ने सेवा की थी।

महात्मा गांधी की हत्या करके भारत को धोखा देने वाले सभी व्यक्तियों को दोषी ठहराया जाना चाहिए, और उन सभी व्यक्तियों को भी दोषी ठहराया जाना चाहिए जिन्होंने ऐसा किया।
समारोह में उपस्थित सभी लोगों ने उस विचार को साझा किया जो उसमें परिलक्षित हुआ।
वहां दिए गए भाषण।
केतकर द्वारा दिए गए भाषण से, हलफनामे के अनुसार, यह स्पष्ट हुआ कि...
जिला मजिस्ट्रेट को 'षड्यंत्र' की पूर्व जानकारी थी।
महात्मा गांधी की हत्या की साजिश रची गई।
पूरी संभावना है कि 'इंडियन एक्सप्रेस' का संवाददाता भी
मौजूद हैं, और यह तथ्य कि व्यक्तियों की कई तस्वीरें मौजूद हैं उस समय केतकर समेत मंच पर मौजूद लोगों को ले जाया गया और अदालत के सामने पेश किया गया।
उच्च न्यायालय ने इस बात की पुष्टि की कि समारोह में व्यक्तियों ने भाग लिया था।
आमंत्रित व्यक्तियों के अलावा। ये तस्वीरें आयोग के समक्ष हैं और
यह दर्शाइए कि बैठक और उसकी कार्यवाही को प्रचारित किया गया था, और
चाहे जो भी हो, यह निजी मामला नहीं था।
केतकर को नाथूराम गोडसे के 'विचार', योजना या के बारे में पहले से जानकारी थी
महात्मा गांधी की हत्या का इरादा, और यह कि भले ही उन्होंने लिखा हो

बलुकाका कनितकर के माध्यम से केतकर के हलफनामे में दिए गए बयान को प्रस्तुत किया गया था।
अस्पष्ट है, और उपलब्ध सामग्री और रिकॉर्ड के आधार पर न्यायालय यह निर्णय नहीं दे सकता।
केतकर ने दर्शकों के सामने यह स्पष्ट कर दिया कि उन्हें यह विचार पसंद नहीं था।
'नाथूराम गोडसे महात्मा गांधी की हत्या पर विचार कर रहा है'. जिला मजिस्ट्रेट के अनुसार, द्वारा दिया गया भाषण याचिकाकर्ता का कथन आपत्तिजनक और एक प्रकार से भड़काऊ था। नाथूराम गोडसे को 'देशभक्त' देशभक्त के रूप में चित्रित करना और इस कृत्य के लिए उनकी प्रशंसा करना।
उसके द्वारा किया गया कृत्य कानूनी या हानिरहित गतिविधि नहीं माना जा सकता।
हो सकता है कि शोक संदेश और शोक संदेश के बीच अंतर करना संभव हो। हत्यारे के व्यक्तिगत गुणों और उसके द्वारा किए गए कृत्य की प्रशंसा के लिए
या तो उसे या स्वयं उस कार्य की प्रशंसा। लेकिन यह अंतर किया जा सकता है
बुद्धि, क्षमता और सूक्ष्मता वाले लोगों के लिए यह कठिन है। साधारण लोगों के लिए यह मुश्किल है।
लोगों को दोनों दृष्टिकोणों के बीच सूक्ष्म अंतर को समझने में मदद मिलेगी।
अब, यदि नाथूराम गोडसे की अंधाधुंध प्रशंसा के परिणामस्वरूप, जिला मजिस्ट्रेट को आशंका है कि महात्मा गांधी का हत्यारा शांति भंग होने की संभावना थी।

— न्यायालय ने केतकर के वकील द्वारा प्रस्तुत इस दलील को खारिज कर दिया कि
पारित आदेश दुर्भावनापूर्ण था और यह पूछे गए प्रश्नों का परिणाम था।
विधानसभा और संसद में या कि वे किसी निर्देश का परिणाम थे केंद्र सरकार या राज्य सरकार द्वारा दिया गया था या था
किसी भी दबाव का परिणाम।
इन्हीं आधारों पर उच्च न्यायालय ने केतकर की बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका खारिज कर दी।
बलुकाका कनितकर का बयान
20.102 इस संदर्भ में अगला प्रासंगिक दस्तावेज़ प्रदर्श संख्या 81 है, जो 10 मई 1948 का है और गांधी हत्याकांड में बालुकाका कनितकर द्वारा पुलिस को दिया गया बयान है। उन्होंने बताया कि जुलाई 1947 के दूसरे सप्ताह में एन.डी. आप्टे की अध्यक्षता में नाथूराम गोडसे ने पुणे के शिवाजी मंदिर में एक व्याख्यान दिया, जिसमें बालुकाका सहित हजारों लोग उपस्थित थे। उस व्याख्यान में नाथूराम गोडसे ने कहा कि संवैधानिक तरीके विफल हो गए हैं और हिंदू महासभा के पास चुनाव लड़ने के लिए न तो धन है और न ही आयोजक। उन्होंने सुझाव दिया कि उन्हें गुप्त संगठन बनाने चाहिए और क्रांतिकारी तरीकों का सहारा लेना चाहिए। उन्होंने यह भी संकेत दिया कि कुछ शीर्ष कांग्रेसी नेताओं के नेतृत्व को समाप्त करने का समय आ गया है। वहाँ आरएसएस के कई स्वयंसेवक मौजूद थे और बैठक समाप्त होने के बाद बलुकाका कानिटकर ने उनमें से कुछ को यह कहते सुना कि नाथूराम सही थे और गांधीजी और नेहरू हिंदू राज की स्थापना में काँटे थे, इसलिए उन्हें रास्ते से हटा देना चाहिए। लेकिन बलुकाका कानिटकर उन

स्वयंसेवकों को नहीं जानते थे और न ही उनकी पहचान कर सकते थे। बलुकाका को लगा कि मामला बिगड़ सकता है, इसलिए उन्होंने दिल्ली में मौजूद बी.जी. (बालासाहेब) खेर को एक पंजीकृत पत्र भेजा, जिसमें उन्होंने उपरोक्त बैठक और बंबई में बन रहे माहौल की जानकारी दी। उस पत्र में उन्होंने सुझाव दिया कि कांग्रेस के शीर्ष नेताओं, विशेषकर गांधीजी के जीवन की सुरक्षा के लिए सुरक्षात्मक उपाय किए जाने चाहिए।
आर.के. से जिरह खादिलकर.
आर.के. खादिलकर सांसद और किसान एवं मजदूर पार्टी के सदस्य थे। 20.135 खादिलकर इस बात से बेहद नाराज थे कि कांग्रेस सरकार के सत्ता में रहते हुए महात्मा गांधी के जीवन पर हमला किया गया, क्योंकि कम्युनिस्ट, वामपंथी या किसी भी अन्य विचारधारा के राजनेता में से कोई भी गांधीजी को चोट पहुँचाना नहीं चाहता था, हत्या तो दूर की बात है।
20.137 बम फेंकने से पहले वातावरण दूषित हो गया था और हमले के बाद दहशत फैल गई थी। 'स्थानीय पुलिस खुफिया एजेंसियां लगभग हमारे साथ थीं और उन्हें सब कुछ पता था', इसलिए खादिलकर और उनके साथियों ने अधिकारियों को घटनाक्रम की जानकारी नहीं दी। आयोग की राय में, यह एक अक्षम्य बहाना है।
20.144 जब उनसे पूछा गया कि उन्होंने जनता की सच्ची भावनाओं को अधिकारियों तक क्यों नहीं पहुँचाया, तो उन्होंने कहा कि वे उस समय कांग्रेस के विरोधी थे और उन्हें लगा कि वे उन्हें गंभीरता से नहीं लेंगे।
20.145 उन सभी को पुणे में स्थित हिंदू कट्टरपंथ का समर्थन करने वाले खेमे से गांधीजी को खतरा महसूस हो रहा था। उनसे विशेष रूप से पूछा गया कि क्या वे इस आंदोलन को पुणे, नागपुर, इलाहाबाद,

दिल्ली या किसी अन्य स्थान से जोड़ते हैं, तो उनका उत्तर था 'पुणे'। वे मोरारजी देसाई से सहमत नहीं थे कि गांधीजी को खतरा तीन तरफ से था, अर्थात् हिंदू कट्टरपंथी, शरणार्थी और मुसलमान। जहाँ तक उनकी जानकारी थी, खतरा हिंदू राष्ट्र दल से जुड़े हिंदू कट्टरपंथियों के एक छोटे से समूह से था। पुणे में हिंदू महासभा के अखबार गांधीजी की कड़ी आलोचना कर रहे थे। ये अखबार 'कल', 'त्रिकाल' और 'अग्रनी' या 'हिंदू राष्ट्र' थे।
20.161 अतः, प्रथम संदर्भ बिंदु पर आयोग का निष्कर्ष यह है कि जी.वी. केतकर सहित कुछ व्यक्तियों को महात्मा गांधी के जीवन को खतरे की पूर्व जानकारी थी, लेकिन जी.वी. केतकर के अलावा किसी को भी उस षड्यंत्र के बारे में कोई जानकारी नहीं थी जिसका सूत्रधार नाथूराम गोडसे था। केतकर के अलावा किसी अन्य गवाह ने नाथूराम गोडसे से महात्मा गांधी के जीवन को किसी भी प्रकार के खतरे की संभावना की पुष्टि नहीं की है, और न ही किसी षड्यंत्र की।

अध्याय XXI में इस मुद्दे पर चर्चा की गई है कि क्या किसी को हत्या के बारे में पूर्व सूचना थी। आयोग ने कई गवाहों के बयानों पर भरोसा किया है। मैं सभी बयानों को दोहरा नहीं रहा हूँ, केवल कुछ ऐसे बयान यहाँ दिए गए हैं जिनका पहले उल्लेख नहीं किया गया है।
21.32 जाहिर तौर पर गृह मंत्री सरदार पटेल और उनके निजी कर्मचारियों को पीछा किए जाने और विशेष समूहों द्वारा उनकी तलाश किए जाने की कहानियों से गुमराह किया जा रहा था। बृज किशन चांदीवाला ने आयोग के समक्ष बताया कि एक पुलिस अधिकारी ने उन्हें सूचित किया था कि बम कांड में नौ साजिशकर्ता थे और पुलिस उनकी पहचान करने में सक्षम थी। लेकिन असलियत यह थी कि साजिशकर्ता हर तरह की सुरक्षा और अगर कोई पीछा किया जा रहा था तो उससे बच निकल रहे थे।
एन.वी. गाडगिल, विट. 6 (पी)
21.34 एन.वी. गाडगिल के पूर्व ज्ञान के संबंध में साक्ष्य वास्तव में संविधान सभा के सदस्य केशवराव जेधे द्वारा उन्हें बताई गई बातों से अधिक कुछ नहीं है, और चूंकि गाडगिल केंद्रीय मंत्रिमंडल के सदस्य थे, इसलिए आयोग ने उनके साक्ष्य को 'केंद्रीय सरकार का ज्ञान' शीर्षक के अंतर्गत शामिल करना उचित समझा है।
21.35 स्वर्गीय एन.वी. गाडगिल, जिन्हें स्नेहपूर्वक काका गाडगिल कहा जाता था, केंद्र सरकार में मंत्री थे। वे पुणे के एक प्रमुख निवासी थे। मंत्री बनने से पहले वे पुणे में बार एसोसिएशन के सदस्य थे और पुणे जिला कांग्रेस कमेटी के सचिव थे। वे स्थानीय मामलों से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए थे क्योंकि वे एक समय नगरपालिका के उपाध्यक्ष भी रह चुके थे।

21.36 केशवराव जेधे उनके साथ रहते थे। एक दिन जेधे ने गाडगिल से कहा: 'काका, पुण्यतली लोका कहितारी भयंकर घड़वुन आन्नार आहेत, जपुन रहा।' दुर्भाग्य से, काकासाहेब गाडगिल ने उनसे इस बारे में विस्तार से नहीं पूछा, हालांकि उनका कहना है कि उन्हें पूछना चाहिए था। ऐसा इसलिए क्योंकि उन्होंने कभी सोचा ही नहीं था कि पुणे के लोग गाडगिल के खिलाफ कुछ करेंगे। जेधे 15-1-1948 को पुणे से दिल्ली आए थे। उन्हें पता था कि गोडसे और अन्य लोगों ने पुणे में एक योजना बनाई थी और उन्हें विदाई दी जा रही थी, लेकिन दुर्भाग्य से जेधे ने यह बात काका गाडगिल को 30 तारीख की रात को ही बताई। जब काकासाहेब ने उनसे पूछा कि उन्होंने पहले क्यों नहीं बताया, तो जेधे का जवाब था कि उन्हें लगा था कि काका को पहले से ही पता होगा। इसके बाद उन्होंने तीन-चार व्यक्तियों के नाम और कुछ स्थानों के नाम बताए, लेकिन उन्होंने यह जानकारी 30 जनवरी से पहले उन्हें नहीं दी थी। ऐसा कोई संकेत नहीं है कि गाडगिल ने यह जानकारी पुलिस को दी थी।
21.37 एक और महत्वपूर्ण हिस्सा यह है कि 30 जनवरी 1948 के एक या दो दिन बाद गांधीजी को वर्धा जाना था क्योंकि सरदार का विचार था कि गांधीजी को वर्धा में रहने के लिए राजी किया जाना चाहिए और उन्हें मुसलमानों और मौलानाओं की रोज़ाना की शिकायतों से बचाया जाना चाहिए।
21.38 सौभाग्य से, गाडगिल की मृत्यु से पहले पाठक ने उन्हें छठे गवाह के रूप में पेश किया। वहाँ उन्होंने बताया कि जब जेधे ने उनसे सावधान रहने को कहा, तो गवाह को लगा कि यह उनके खिलाफ कोई व्यक्तिगत बात है और उनका जवाब था, 'मैंने ऐसा क्या किया है जिससे वे नाराज़ हो गए हैं?' और जेधे का जवाब था, 'ठीक है, मैंने तुम्हें वह बता दिया है जो मैंने पुणे में सुना था' और उसके बाद

गवाह ने जेधे से कुछ नहीं सुना। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि गाडगिल ने अपने मेहमान से इस मामले को आगे नहीं बढ़ाया; उन्होंने उनसे यह नहीं पूछा कि उन्होंने जो अस्पष्ट जानकारी दी थी उसका क्या मतलब था और उन्हें इस मामले को वहीं छोड़ देना चाहिए था। लेकिन यही हुआ, दुर्भाग्यपूर्ण चूक की कड़ी में एक और कड़ी।
21.39 गडगिल ने आगे बताया कि 30 जनवरी 1948 को हत्या के बाद रात 8:30 बजे, जेधे नई दिल्ली में गवाह के घर के बरामदे में उससे मिला और वहाँ उसने कहा: 'जिस बात की मैंने तुम्हें चेतावनी दी थी, वही हो गया है।' गवाह ने जेधे से विवरण मांगा और उसका जवाब था: 'गॉडसे और उसके दोस्तों का जश्न मनाया जा रहा था क्योंकि वे गांधीजी की हत्या करने जा रहे थे। तिलक स्मारक मंदिर में एक कार्यक्रम था।' इसके बाद गवाह चुप रहा और कुछ नहीं किया जा सका। गडगिल ने यह भी बताया कि जेधे ने जो बताया उसके अलावा उसके पास कोई और जानकारी नहीं थी।
21.40 गाडगिल ने आगे कहा कि सरदार पटेल 30 जनवरी को शाम 5.20 बजे तक महात्मा गांधी को यह समझाने की कोशिश कर रहे थे कि प्रार्थना सभा में आने वाले कुछ लोगों को सभा में शामिल होने से पहले तलाशी लेने की अनुमति दी जाए, लेकिन महात्मा गांधी का जवाब था, 'नहीं! यह भगवान का घर है और कोई तलाशी नहीं ले सकता।' (यहाँ एक बड़ी विसंगति है; बापू की हत्या 30 जनवरी को शाम 5.17 बजे हुई थी, सरदार पटेल उस दिन लगभग शाम 5.10 बजे तक उनके साथ थे)। 21.49 'द स्टेट्समैन' का 21 जनवरी 1948 का अंक, प्रदर्शनी 106 ए दर्शाता है कि समाचार पत्र ने निम्नलिखित रूप में खबर प्रकाशित की थी—

वर्तमान जांच से पता चलता है कि महात्मा गांधी की जान लेने की एक गंभीर साजिश रची गई थी। एक पुलिस इंस्पेक्टर ने कहा, "बम का उद्देश्य भ्रम पैदा करना था, हालांकि यह कई लोगों को मारने के लिए पर्याप्त शक्तिशाली था। ऐसा प्रतीत होता है कि इस हथगोले का इस्तेमाल स्वयं महात्मा गांधी के खिलाफ किया जाना था।" अन्य समाचार पत्रों में भी यही खबर छपी थी कि बिरला हाउस के पीछे से चार लोग एक छोटी हरी कार में चले गए थे, जिससे यह संकेत मिलता है कि बम फेंकने में एक से अधिक व्यक्ति शामिल थे। (देखें टाइम्स ऑफ इंडिया, 21 जनवरी 1948)।
21.57 आयोग ने जे.एन. शनि का ध्यान एक पर्चे, प्रदर्शनी 105 की ओर दिलाया, जो हिंदी में लिखा एक दस्तावेज है, अमृतसर में प्रकाशित हुआ था और कथित तौर पर अलवर में वितरित किया गया था। आयोग के समक्ष प्रस्तुत किया गया यह दस्तावेज हस्तलिखित था। इस पर कोई तिथि अंकित नहीं है और इसकी शुरुआत 'गांधी मुर्दाबाद' से होती है, जिसका अर्थ है गांधी जी की अपमानजनक मृत्यु। यह गांधी- विरोधी पर्चा है जिसमें गांधीजी पर मुसलमानों और पाकिस्तान की मदद करने का आरोप लगाया गया है और लोगों से प्रार्थना करने को कहा गया है कि गांधी जी की मृत्यु हो जाए। इसमें गांधीजी के उपवास को ढोंग बताया गया है और उन्हें 'नीचात्मा' कहा गया है। शनि का उत्तर इस प्रकार था—
'मैं यह नहीं कहूंगा कि यह पंजाब के हिंदुओं और सिखों की मानसिकता थी, क्योंकि चाहे कुछ भी हुआ हो, वे पंजाब में हिंदुओं और सिखों के संकट के समय उनके द्वारा दी गई सेवाओं को नहीं भूल सकते थे - जलियांवाला बाग और गुरु का बाग इसके उदाहरण हैं - और वे गांधीजी को मारने के बजाय उन्हें धर्म परिवर्तन कराना और उनके प्रभाव का उपयोग करना अधिक पसंद करते थे।'

उन्होंने कहा कि यह दस्तावेज़ उस गुप्त राजनीतिक आंदोलन के अनुरूप था जिसे राजकुमार अपने सरदारों के माध्यम से समर्थन दे रहे थे, ताकि भारत में एक पांचवां स्तंभ बनाया जा सके जो ब्रिटिश सत्ता के हटने के बाद, कम से कम अपने-अपने राज्यों में, जो स्वतंत्र हो जाएंगे, सत्ता संभाल सके। 'मैं विशेष रूप से जैसलमेर, जोधपुर, बड़ौदा, अलवर, भरतपुर, ग्वालियर और भोपाल जैसे राज्यों का उल्लेख कर रहा हूं। इस आंदोलन का नेतृत्व नागपुर से गोलवलकर और पुणे से भोपटकर ने किया था। नेतृत्व का केंद्र नागपुर और पुणे में था।'
बख्शी राम प्रकरण
21.64 जनवरी 1948 के अंतिम सप्ताह में बख्शी राम को भारतीय दंड संहिता की धारा 394 के तहत डकैती के आरोप में गिरफ्तार किया गया और उसे आगरा केंद्रीय जेल में रखा गया। उसने दावा किया कि वह लाहौर के प्रसिद्ध क्रांतिकारी भगत सिंह और बटुकेश्वर दत्त का एक समय का साथी था। यह गिरफ्तारी आगरा के वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक जी.के. हांडू (गवाह संख्या 48) द्वारा कराई गई थी और किसी न किसी तरह बख्शी राम ने हांडू पर कुछ भरोसा दिखाया। हांडू के बयान के अनुसार, लगभग 23 जनवरी को बख्शी राम भूख हड़ताल पर बैठ गया और हांडू से मिलने की जिद करने लगा। जब हांडू उससे मिले, तो बख्शी राम ने उन्हें बताया कि महात्मा गांधी की हत्या बहुत जल्द होने वाली है और उसने अखबारों में पढ़ा है कि गन-कॉटन स्लैब विस्फोट के सिलसिले में मदनलाल को गिरफ्तार किया गया है और मदनलाल उसके और लगभग सात मराठा युवकों (यहां मराठा शब्द का प्रयोग मराठी भाषी व्यक्ति के लिए किया गया है, न कि मराठा समुदाय के लिए) के बीच मध्यस्थ था। मदनलाल ने बख्शी राम को ग्वालियर में उन मराठा युवकों को पिस्तौल चलाने का प्रशिक्षण देने के लिए कहा था, जो

बख्शी राम ने किया था। यह दिसंबर के आसपास या उससे कुछ पहले की बात है। ये मराठा युवक एक-दूसरे को नाम से नहीं पुकारते थे, बल्कि सूबेदार, जमादार आदि सैन्य पदों से एक-दूसरे को संबोधित करते थे। (पाठकों को ध्यान देना चाहिए कि सेवाग्राम में महात्मा गांधी पर हुए हमलों में से एक में, थाट्टे ने नाथूराम की ओर इशारा करते हुए उन्हें अपना 'जमादार' कहा था।) इन युवकों की आपस में हुई बातचीत से बख्शी राम को पता चला कि वे दिल्ली में किसी उच्च पदस्थ व्यक्ति की राजनीतिक हत्या करने के लिए पिस्तौल चलाना सीख रहे थे और जब बख्शी राम ने अखबारों में मदनलाल द्वारा बम विस्फोट के बारे में पढ़ा, तो उन्हें पूरा यकीन हो गया कि शिकार महात्मा गांधी ही होंगे।
21.65 हांडू ने बख्शी राम से जिरह की और पाया कि उनकी कहानी सुसंगत थी। उन्होंने उनका बयान दर्ज किया और उसकी प्रतियां नई दिल्ली स्थित डी.आई.बी., उत्तर प्रदेश के पुलिस महानिरीक्षक बी.एन. लाहिड़ी और मेरठ रेंज के डी.आई.जी. बी.बी.एस. जेटली को भेजीं, जो उस समय आगरा के दौरे पर थे। उन्हें इसके बाद कोई और सूचना नहीं मिली और फिर महात्मा गांधी की हत्या कर दी गई। पुलिस अधिकारियों को भेजे गए उस पत्र में हांडू ने बख्शी राम द्वारा दिए गए विवरण दिए थे। बख्शी राम ने उन्हें यह भी बताया था कि उन युवकों में से एक, जो उनका नेता था, पुणे का एक पत्रकार था, लेकिन उन्हें न तो उसका नाम पता था और न ही उसके अखबार का नाम।
21.76 निरीक्षक बैनर्जी की रिपोर्ट (प्रस्तुति 133) के अनुच्छेद 7 और 9 में यह कहा गया है—
'क्या बख्शी राम को रिहा कर देना चाहिए, जैसा कि सुझाव दिया गया है, और क्या यह जोखिम उठाने लायक होगा? व्यक्तिगत रूप से, जेटली को डकैती के मामले के आगे बढ़ने से कोई आपत्ति नहीं है, बशर्ते

इससे ग्वालियर, भरतपुर राज्यों में रची गई साजिश का पर्दाफाश हो सके... उनका सुझाव है कि जब तक यहां पुलिस के पास इस संबंध में कोई ठोस सबूत न हो, बख्शी राम द्वारा दी गई जानकारी की संभावनाओं की जांच की जानी चाहिए...'
जेटली का मानना है कि बख्शी राम महात्माजी की हत्या से वास्तव में दुखी हैं और जो कुछ भी जानते हैं, उसे बताने के लिए उत्सुक हैं। महात्माजी की मृत्यु के बाद उन्होंने 13 दिनों तक उपवास किया था और वे बहुत दुखी हैं, और यदि उनसे उचित तरीके से बात की जाए, तो संभवतः वे किसी निर्णायक तथ्य का खुलासा कर सकते हैं।
21. 93 जी.के. हांडू, एक उच्च पदस्थ पुलिस अधिकारी, ने सहानुभूति व्यक्त की कि बख्शी राम ने हत्या से पहले उन्हें जानकारी दी थी। 21.94 बख्शी राम इस आयोग के समक्ष उपस्थित होना चाहते थे और उनसे शपथपत्र देने को कहा गया था कि वे क्या बयान देना चाहते हैं, लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया।
बख्शी राम ने जो कहा, वह 20 से 30 जनवरी 1948 के बीच हुई जांच में शायद उतना महत्वपूर्ण नहीं था। लेकिन वरिष्ठ पुलिस अधिकारी जी.के. हांडू, जिन्होंने शुरू में बख्शी राम का बयान दर्ज किया था, अपने इस दावे पर अड़े रहे कि बख्शी राम ने हत्या से पहले प्रारंभिक बयान दिया था, यह महत्वपूर्ण है। बख्शी राम शायद कोई समझौता करने की कोशिश कर रहे थे और भागने का रास्ता भी तलाश रहे थे, लेकिन एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी, जेटली, को लगा कि अगर बख्शी राम साजिश का पर्दाफाश करने में मदद कर सकते हैं, तो उन्हें जेल से रिहा करना जोखिम भरा नहीं होगा। बम हमले और हत्या के बीच के दस दिनों में संजीवी और राणा ने नागरवाला के साथ मिलकर कई गलतियां कीं; दुर्भाग्य से संजीवी और राणा जेटली द्वारा दिखाई गई पहल को विफल करने की स्थिति में थे। बख्शी राम

शायद ज्यादा उपयोगी साबित नहीं हुए, लेकिन यह ध्यान देने योग्य है कि उन्होंने साजिश में उनकी भूमिका के बारे में सार्वजनिक होने से पहले ही डॉ. परचुरे और ग्वालियर का नाम लिया था। केवल यही बात बख्शी राम के बयान को महत्वपूर्ण बनाती है। एक और तथ्य यह है कि बख्शी राम पंजाब के मोंटगोमरी जिले से थे, जो उन्हें मदनलाल से जोड़ता है, जो उसी जिले से थे। मदनलाल भी भारत आने के बाद कुछ समय तक ग्वालियर में सक्रिय रहे थे, जिससे बख्शी राम के बयान को और अधिक विश्वसनीयता मिलती है। यह मानना बहुत मुश्किल है कि जेल में बैठे बख्शी राम ने ऐसी कहानी गढ़ी होगी जिसमें इतने सारे पुष्ट तथ्यों से विश्वसनीय संबंध हों। अफसोस, कई अन्य छूटे हुए अवसरों और अनदेखे सुरागों की तरह यह भी एक रहस्य ही बना रहेगा।

कपूर आयोग की रिपोर्ट का अध्याय XXIII दिल्ली में हुई जांचों से संबंधित है। ये जांचें 20 से 30 जनवरी के बीच की गई थीं। केस डायरी संख्या 3-ए
23.32 इसके बाद, हमारे पास डिप्टी सुपरिटेंडेंट जसवंत सिंह की केस डायरी, क्रमांक 3-ए, में सबसे महत्वपूर्ण प्रविष्टि है, जो बॉम्बे से होने का दावा करते हैं। यह 22 जनवरी को सुबह 8 बजे शुरू होती है और रात 8 बजे समाप्त होती है। इसमें कहा गया है कि सुबह 9.10 बजे ये अधिकारी नागरवाला से उनके घर पर मिले। 'उन्होंने कहा कि उन्हें इस मामले के सभी तथ्यों की जानकारी पहले ही मिल चुकी है और उन्होंने दिल्ली के उच्च अधिकारियों से फोन पर बात कर ली है और उन्होंने रणनीतिक स्थानों पर सी.आई.डी. के विशेष अधिकारियों को तैनात कर दिया है। उन्होंने संदिग्धों का पता लगाने के लिए उचित व्यवस्था की है और रेलवे स्टेशन पर भी लोगों को तैनात किया है...' नागरवाला ने उन्हें यह भी बताया कि वे जहां ठहरे हुए हैं वहां न रुकें क्योंकि वे नहीं चाहते थे कि उनके आने की खबर दूसरों को पता चले जिससे व्यक्तियों की गिरफ्तारी में बाधा उत्पन्न हो सकती है और उन्होंने उन्हें सादे कपड़ों में आने और सी.आई.डी. कार्यालय में उनसे मिलने का आदेश दिया। सुबह 10.30 बजे डायरी में निम्नलिखित प्रविष्टि है: इस समय मैं इंस्पेक्टर के साथ टैक्सी से सी.आई.डी. कार्यालय पहुँचा और नागरवाला से संपर्क किया। मैंने उन्हें मामले के सभी तथ्यों से अवगत कराया और मदनलाल के बयान का सारांश और नई दिल्ली के पुलिस अधीक्षक का नोट (जो नीचे दिया गया था) वाला एक अंग्रेजी नोट नागरवाला साहब को सौंपा। उन्होंने इस नोट को ध्यानपूर्वक पढ़ा और अपने पास रख लिया। उन्होंने इस मामले से संबंधित एक लिखित नोट लौटाया, जो संलग्न है। नागरवाला साहब किरक्री से

संबंधित तथ्यों से भी अवगत थे। यह भी उनके संज्ञान में लाया गया कि आरोपी मदनलाल ने कहा था कि वह अपने साथियों के नाम नहीं जानता, लेकिन उसने बताया था कि वह हिंदू राष्ट्र या अग्रानी अखबार का संपादक था, जो गोरे रंग का था, जिसकी उम्र 33-34 वर्ष थी और कद 5'-6" था। यह ज्ञात नहीं है कि यह संपादक बंबई का है या पुणे का। इसके अलावा, वह तीन अन्य मराठों और 'महाराज' के विवरण से भी परिचित था, जो आरोपी के अनुसार उसके साथी थे। हिंदू राष्ट्र या अग्रानी अखबार के संपादक और अहमदनगर के किरकरी की तत्काल गिरफ्तारी पर विशेष जोर दिया गया, जिनका उल्लेख आरोपी ने अपने बयान में विशेष रूप से किया था: ताकि उनसे पूछताछ की जा सके।
इस डायरी के संदर्भ में ध्यान देने योग्य बात यह है कि करकरे का नाम 'कर्करा' के रूप में लिखा गया है, साथ ही हिंदू राष्ट्र या अग्रानी समाचार पत्र के संपादक का विवरण और पुणे निवासी होने की जानकारी भी दी गई है। इसके अलावा, मदनलाल के अनुसार, उनके सह-षड्यंत्रकारी तीन अन्य मराठों और महाराज का विवरण भी दिया गया है, और विशेष रूप से हिंदू राष्ट्र या अग्रानी के संपादक और अहमदनगर के करकरे की तत्काल गिरफ्तारी पर जोर दिया गया है। 23.35 शाम 7.30 बजे उनके मेज़बान, इंस्पेक्टर करगांवकर और दो अन्य अधिकारियों ने उन्हें सूचित किया कि उन्होंने संदिग्धों का पता लगा लिया है और उनके जवान तैनात कर दिए गए हैं। उन्हें पूरा भरोसा था कि मामला सुलझ जाएगा। लेकिन करकरकर के बारे में उन्होंने कहा कि अहमदनगर से एक पुलिस इंस्पेक्टर आ रहे हैं और करकरकर और अग्रानी (हिंदू राष्ट्र) के संपादक का पूरा पता मिलने के बाद उनकी गिरफ्तारी की रिपोर्ट भेज दी जाएगी। यह डायरी रात 8

बजे समाप्त होती है, जिस समय दोनों अधिकारी सो गए, वहीं शाह बश भी रात के लिए आराम करने चले गए।
केस डायरी संख्या 4-बी, दिनांक 23-1-48, बॉम्बे से
23.40 केस डायरी संख्या 4-बी, जो कि उप अधीक्षक जसवंत सिंह द्वारा बॉम्बे से होने का दावा करते हुए लिखी गई है, प्रदर्शनी संख्या 39 के रूप में चिह्नित है। यह 23 जनवरी 1948 को सुबह 10 बजे से शुरू होती है। इसमें दर्ज है कि नागरवाला ने जसवंत सिंह को उन यात्रियों की सूची दी थी जिन्होंने 13 से 20 जनवरी के बीच बॉम्बे से दिल्ली की यात्रा की थी, लेकिन जसवंत सिंह को उस सूची में कुछ भी उपयोगी नहीं मिला। दोपहर 12 बजे की प्रविष्टि में यह दर्ज है कि इंस्पेक्टर करगांवकर ने उन्हें सूचित किया था कि अहमदनगर से एक पुलिस इंस्पेक्टर आया था और उसने नागरवाला से संपर्क किया था तथा यह भी कि 'किर्करी अहमदनगर में मौजूद नहीं थे'। लेकिन सी.आई.डी. को संपादक की तलाश करने का निर्देश दिया गया था।
23.41 अगली प्रविष्टि यह है कि बॉम्बे स्थित सी.आई.डी. के इंस्पेक्टर से किरक्री (करकरे) के बारे में पूछताछ की गई और उनसे घटना के लिए जिम्मेदार संदिग्धों के बारे में जानकारी देने का अनुरोध किया गया। इंस्पेक्टर ने डिप्टी सुपरिटेंडेंट जसवंत सिंह को बताया कि 'किरक्री' का असली नाम वी. आर. करकरे था और वह अहमदनगर स्थित डेक्कन गेस्ट हाउस का मालिक था तथा हिंदू महासभा का उत्साही कार्यकर्ता था; और उसके सहकर्मी पूना के बैज, अमृतसर के अवतार सिंह, कराची के तलवार और लाहौर के बलराज मेहता थे, जो भी हिंदू महासभा के कार्यकर्ता थे।
23.42 इस प्रकार, इस पुलिस डायरी में कुछ बहुत महत्वपूर्ण बातें कही गई हैं; पहली, दिल्ली पुलिस अधिकारियों को सूचित किया गया

था कि करकरे दक्कन गेस्ट हाउस के मालिक थे, उनके चार सहयोगियों का उल्लेख किया गया था और नागरवाला ने इन अधिकारियों को दिल्ली लौटने का निर्देश दिया था; और उन्होंने नागरवाला को फिर से सूचित किया कि मदनलाल ने करकरे का नाम लिया था और 'अग्रनी' या 'हिंदू राष्ट्र' के संपादक का जिक्र किया था। यह उपायुक्त के समक्ष 'हिंदू राष्ट्र' या 'अग्रनी' के संपादक के उल्लेख की पुनः पुष्टि है।
लाकुना नं. 1
23.135 दिल्ली पुलिस की पहली विफलता यह थी कि उन्होंने महात्मा गांधी की सुरक्षा और निगरानी के लिए बॉम्बे पुलिस को दिल्ली नहीं बुलाया। संजीव ने बॉम्बे प्रांतीय सी.आई.डी. से सीधे संपर्क नहीं किया। उनकी प्रशंसा में यह कहा जा सकता है कि उन्होंने दिल्ली में राणा से संपर्क किया, लेकिन यह प्रयास निष्फल रहा क्योंकि राणा ने धीमी गति से काम किया और संजीव की तरह ही लापरवाह थे। उन्होंने अपनी सी.आई.डी. टीम को नहीं बुलाया और न ही 'हिंदू राष्ट्र' के मालिक के खिलाफ तत्काल कार्रवाई शुरू की, जिसकी पहचान वे पता लगाने में विफल रहे। इस विफलता के लिए उन्हें कहीं अधिक अनुभवी और वरिष्ठ अधिकारी संजीव के साथ दोषी ठहराया जाना चाहिए, जो भारत में सर्वोच्च पुलिस पद - खुफिया ब्यूरो के निदेशक - पर आसीन हो चुके थे। यदि यह नाम पहले ही पता चल जाता, तो पूरा मामला खुल जाता और साजिशकर्ताओं को दिल्ली पहुँचने से पहले ही पकड़ लिया जाता।
लाकुना नं. 2
23.136 यह तर्क दिया गया कि 24 जनवरी 1948 को दिए गए बयान के बाद मदनलाल को दिल्ली पुलिस के साथ बॉम्बे, पुणे और अहमदनगर भेजा जाना चाहिए था। इन सभी स्थानों पर उसका सामना किया जा सकता था

और वहाँ की पुलिस उससे पूछताछ कर सकती थी। अपराध रिपोर्ट संख्या 6 से पता चलता है कि 4 फरवरी 1948 को बॉम्बे पुलिस द्वारा मदनलाल से पूछताछ के दौरान, पुणे से बैज को लाया गया। पहले तो उसने साजिश के बारे में किसी भी जानकारी से इनकार किया। जब उसका सामना आरोपी मदनलाल से कराया गया, जिसने उसे अपने द्वारा संदर्भित सिख मराठा के रूप में पहचाना, और गहन पूछताछ के बाद, बैज टूट गया और उसने पूरी साजिश और उसमें शामिल लोगों के बारे में सब कुछ सच-सच बता दिया। उसने कहा कि 20 जनवरी 1948 को गांधीजी पर हमला इसी साजिश के तहत किया गया था। यह सही कहा गया कि हत्या के बाद जो कुछ भी किया गया, वह 24 जनवरी के बाद किया जाना चाहिए था, यदि 20 जनवरी के बाद नहीं, जब दिल्ली पुलिस के अनुसार Ex.6 बनाया गया था।
23.137 नई दिल्ली के पुलिस अधीक्षक अमर नाथ भाटिया, गवाह संख्या 17, ने कहा कि उन्हें संजीव के मदनलाल को बॉम्बे ले जाने के आदेश के बारे में कुछ भी पता नहीं था। लेकिन डीएसपी करतार सिंह, गवाह संख्या 26, ने कहा कि उन्हें स्पष्ट रूप से याद है कि हत्या से पहले संजीव ने प्रस्ताव रखा था कि मदनलाल को बॉम्बे ले जाया जाए ताकि बॉम्बे पुलिस उससे पूछताछ कर सके और उस प्रस्ताव को अमल में लाने की व्यवस्था भी की गई थी, लेकिन संजीव ने अपने पिछले आदेशों को रद्द कर दिया और मदनलाल को नहीं भेजा गया।
23.140 हत्या के बाद बंबई में हुई जांच की प्रक्रिया और बंबई में जांच के अपेक्षाकृत त्वरित और सफल परिणामों से यह निष्कर्ष निकलता है कि यदि यही प्रक्रिया अपनाई गई होती, तो घटनाक्रम भिन्न हो सकता था। इस बात को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता कि हम इस मामले को 21 साल बाद देख रहे हैं।
लाकुना नं 3

23.141 प्रदर्श 1 में, जो मदनलाल का 24 जनवरी का विस्तृत बयान है, पुणे के समाचार पत्र 'हिंदू राष्ट्र' का नाम और उसके स्वामी का उल्लेख दिया गया है। हालाँकि संजीवी के लिए स्वामी की पहचान पता करना संभव था, लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया। प्रदर्श 198, 199, 199-ए और 201 का संदर्भ लिया जा सकता है। प्रदर्श 198 बॉम्बे की समाचार पत्रों और उनके स्वामियों एवं संपादकों की सूची से लिया गया अंश है और 'अग्रनी' से संबंधित है, जिसमें आप्टे और गोडसे के नाम क्रमशः स्वामी और संपादक के रूप में दिए गए हैं। प्रदर्श 199 भी 'अग्रनी' से संबंधित है। प्रदर्श 199-ए पुणे के मराठी दैनिक 'हिंदू राष्ट्र' से संबंधित अंश है, जिसमें एन. वी. गोडसे को प्रिंटर और प्रकाशक के रूप में दिखाया गया है और समाचार पत्र को सावरकर समूह का समाचार पत्र बताया गया है। इसके स्वामी एन.डी. आप्टे और संपादक एन.वी. गोडसे हैं। प्रदर्शनी संख्या 201 से पता चलता है कि समाचार पत्रों की इस सूची की एक प्रति, जिसे समाचार पत्रों का वार्षिक विवरण कहा जाता है, भारत सरकार के गृह विभाग और सूचना एवं प्रसारण विभाग को भेजी गई थी।
खुफिया ब्यूरो के उप निदेशक एम.के. सिन्हा ने आयोग के समक्ष कहा है कि दिल्ली पुलिस को सी.आई.डी. से एक अखबार के संपादक और मालिक के नाम उपलब्ध हो सकते थे।
लाकुना नं. 4
23.142 दिल्ली पुलिस और खुफिया ब्यूरो मदनलाल से संबंधित महत्वपूर्ण जानकारी होने के बावजूद खुफिया ब्यूरो के रिकॉर्ड का उपयोग करने में विफल रहे। अहमदनगर के इंस्पेक्टर बलकुंडी ने 7/10 दिसंबर, 1947 को खुफिया ब्यूरो को एक रिपोर्ट भेजी थी। यह प्रदर्श संख्या 195 है। यह रिपोर्ट गृह मंत्रालय के सहायक

निदेशक (पी) सूचना ब्यूरो को संबोधित थी। इस पर यह दर्शाने वाले पृष्ठांकन हैं कि हूजा ने 14 जनवरी को और उप निदेशक एम.के. सिन्हा ने भी उसी दिन इस पर कार्रवाई की थी। खुफिया ब्यूरो में मदनलाल के संबंध में इंस्पेक्टर बलकुंडी की रिपोर्ट पर 'अनुक्रमित' शब्द की मुहर लगी हुई थी। यह 'अनुक्रमित' शब्द अहमदनगर से प्राप्त प्रांतीय सी.आई.डी. रिपोर्ट पर भी अंकित है, जिसे अलग से प्रदर्श संख्या 66-ए के रूप में चिह्नित किया गया है। इस रिपोर्ट में मदनलाल के खिलाफ शिकायत शरणार्थियों के जुलूस का नेतृत्व करने और मुसलमानों के खिलाफ तथा 'वीर सावरकर की फाई' के नारे लगाने के संबंध में थी, जिससे यह पता चलता है कि निकाले गए जुलूस का सावरकरवादी जुड़ाव और स्वरूप था।
23.143 एम.के. सिन्हा, गवाह संख्या 44, से इस अनुक्रमित दस्तावेज़ के बारे में पूछा गया। उन्होंने कहा, 'ब्यूरो में हमने इस मदनलाल को मदनलाल कश्मीरीलाल से नहीं जोड़ा... मदनलाल कश्मीरीलाल नाम भ्रामक है और ब्यूरो के लिए किसी विशेष नाम को ब्यूरो में अनुक्रमित नाम से तुरंत जोड़ना संभव नहीं होगा।' इस मामले पर उनसे आगे पूछताछ की गई और उन्होंने निम्नलिखित बयान दिया—
प्रश्न: 'क्या मदनलाल के बंबई से होने के तथ्य से ब्यूरो के सदस्यों को अपनी अनुक्रमण प्रणाली की जांच करने का विचार नहीं आना चाहिए था?'
ए. यदि मैं जांच का प्रभारी होता, तो मैं तुरंत अपने कार्यालय के साथ-साथ विभिन्न प्रांतीय सी.आई.डी. के कार्यालयों से यह पता लगाने के लिए कहता कि विभिन्न बयानों से सामने आए नाम इंडेक्स कार्ड में थे या नहीं।

23.145 एक अन्य प्रश्न के उत्तर में कहा गया कि जब किसी व्यक्ति के लिए कार्ड तैयार किया जाता है, तो उस पर उसकी पहचान और संक्षेप में कारण भी अंकित होते हैं। मदनलाल के कार्ड से पता चलता है कि वह एक शरणार्थी था और उसने अहमदनगर में शरणार्थियों के जुलूस का नेतृत्व किया था। सटीक तिथि नहीं दी गई है। किसी भी स्थिति में, इतना स्पष्ट है कि अहमदनगर में मदनलाल की गतिविधियों के संबंध में अहमदनगर पुलिस द्वारा उसका नाम भेजा गया था। इस दस्तावेज़ को खुफिया ब्यूरो के उच्च अधिकारियों ने देखा और उसका नाम दर्ज किया गया।
23.146 21 जनवरी 1948 के 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के अंक (पृष्ठ 106) में मदनलाल का नाम बम फेंकने वाले व्यक्ति के रूप में दिया गया था और बताया गया था कि उसके साथी कार में भाग गए थे, लेकिन आधी रात तक उन्हें पकड़ा नहीं जा सका था। मदनलाल ने बताया कि वह मोंटगोमरी का रहने वाला था और बंबई में आकर दिल्ली लौट आया था और रेलवे स्टेशन पर ठहरा हुआ था।
23.147 21 जनवरी के 'डेली स्टेट्समैन' (Ex. 106-A) में मदनलाल का नाम दिया गया था, जिसके पास बलबीर सिंह के नाम का राशन कार्ड था। इसमें बताया गया था कि उसके तीन साथी अफरा-तफरी में भाग निकले थे और शहर के सभी निकास मार्गों पर पुलिसकर्मियों को तैनात किया गया था। इसके अलावा, यह भी बताया गया था कि महात्मा गांधी की जान लेने की एक गंभीर साजिश रची गई थी; और मदनलाल के पास से बरामद हथगोला महात्मा गांधी के ही खिलाफ इस्तेमाल किया जाना था।
23.148 21 जनवरी के 'हिंदुस्तान टाइम्स' के अंक (अनुच्छेद 106-बी) में मदनलाल की गिरफ्तारी का विवरण दिया गया है। यह खबर पहले पृष्ठ पर छपी है, लेकिन अपेक्षाकृत कम महत्वपूर्ण स्थान पर और

एक महत्वहीन शीर्षक के साथ: 'प्रार्थना स्थल के पास बम विस्फोट'। वहां भी बम फेंकने की घटना को महात्मा गांधी पर जानलेवा हमले के रूप में लिया गया है। उस समाचार पत्र में मदनलाल के दिए गए बयान से यह स्पष्ट नहीं होता कि वह बंबई गया था या उससे उसका कोई संबंध था।
23.149 इसलिए, यह उम्मीद की जाती है कि खुफिया ब्यूरो के निदेशक बम फेंकने वाले के बारे में किसी भी सुराग के लिए अपने रिकॉर्ड की जांच करवाएंगे और यह भी उम्मीद की जाती है कि उप निदेशक और सहायक निदेशक जैसे दो उच्च अधिकारियों को मदनलाल का नाम याद होगा; फिर भी कुछ ऐसे मामले हैं जिन्हें आयोग नजरअंदाज नहीं कर सकता (1) कि मदनलाल कश्मीरीलाल नाम से उत्तरी भारत के किसी अधिकारी के साथ आसानी से भ्रम हो सकता है जहां पिता का नाम इस तरह नहीं जोड़ा जाता; (2) गिरफ्तार मदनलाल का अहमदनगर से कोई संबंध नहीं था - कम से कम इन दोनों अधिकारियों की जानकारी में तो नहीं। लेकिन यह सब दिल्ली पुलिस और खुफिया ब्यूरो के निदेशक, जो इतने महत्वपूर्ण मामले की जांच के प्रभारी महानिरीक्षक भी थे, को किसी भी संभावित स्रोत से जानकारी प्राप्त करने से छूट नहीं देता है, जिसके बारे में उन्हें जानकारी हो सकती थी या जिसके बारे में उनसे उचित रूप से सोचा जा सकता था; संजीवी को अपने रिकॉर्ड की जांच करवानी चाहिए थी।
लाकुना नं. 5
23.150 कोटवाल ने इस बात पर जोर दिया कि आरोपियों को गिरफ्तार करना दिल्ली पुलिस का कर्तव्य है और वे सहयोग के लिए बाहरी पुलिस से अनुरोध कर सकते हैं। उन्होंने प्रश्नावली के प्रश्न 8 के संबंध में भारत सरकार के उत्तर का उल्लेख किया।

'यह दिल्ली पुलिस की जिम्मेदारी होगी कि नामित व्यक्तियों को गिरफ्तार किया जाए या यदि वे पहले से दिल्ली में नहीं हैं तो उन्हें दिल्ली आने से रोका जाए। जहां तक ऐसी कार्रवाई दिल्ली पुलिस के अधिकार क्षेत्र से बाहर रहने वाले व्यक्तियों से संबंधित है, वहां अन्य संबंधित पुलिस अधिकारियों की भी यह जिम्मेदारी होगी कि वे दिल्ली पुलिस को आवश्यक सहायता और सहयोग प्रदान करें।'
लाकुना संख्या 6
23.151 कोटवाल ने सुझाव दिया कि राणा 20 जनवरी से 25 जनवरी 1948 तक दिल्ली में थे, और यदि मदनलाल से पूछताछ के समय उन्हें उपस्थित रहने के लिए कहा गया होता, तो मदनलाल अधिक जानकारी दे पाते और राणा की उपस्थिति ही इस दिशा में सहायक सिद्ध होती। उन्होंने यह इस तथ्य के आधार पर कहा कि मदनलाल ने अपने बयान (प्रदर्शनी 1, पृष्ठ 29) में उल्लेख किया है कि एक बार अहमदनगर में उन्होंने 500 शरणार्थियों के जुलूस का नेतृत्व किया, जहाँ विभिन्न नारे लगाए गए। इसके बाद आरती बाजार में एक बैठक हुई जिसमें उच्च अधिकारियों ने भाग लिया, जिनमें पुलिस महानिदेशक, सीआईडी, पुणे, राणा और कुछ अन्य शामिल थे। उन्होंने कुछ ही दिनों में शरणार्थियों की सहायता करने का वादा किया, जिसके बाद यह मांग उठाई गई कि नगर निगम के अधिकारी शरणार्थियों के लिए फलों की दुकानों के लिए भूमि आवंटित करें।
23.152 राणा, गवाह संख्या 3, को बड़ौदा में दोबारा बुलाए जाने पर उसने कहा कि वह बैठक में उपस्थित नहीं था। वास्तव में वह उस दिन अहमदनगर में नहीं था। लेकिन वह 18, 19 और 20 दिसंबर, 1947 को अहमदनगर में था और उसने विसापुर शिविर का दौरा किया था। यह कहना बहुत ही कमजोर आधार है कि मदनलाल से पूछताछ में राणा की

भागीदारी से अधिक जानकारी प्राप्त होती। यह अधिक से अधिक एक अनुमान मात्र है और इसे अपने आप में संजीवी की जांच प्रक्रिया में विफलता नहीं माना जा सकता।
लाकुना नं. 7
23.153 दिल्ली पुलिस के अधिकारियों को 21 जनवरी को बॉम्बे भेजा गया। वे 24 जनवरी को वहां से लौटे और 25 जनवरी की सुबह दिल्ली के पुलिस अधीक्षकों से मिले। संजीवी के नोट, प्रदर्श 7 के अनुच्छेद 5 और 6 में दिल्ली पुलिस अधिकारियों द्वारा दिल्ली लौटने पर दी गई रिपोर्ट का विवरण दिया गया है। इन अनुच्छेदों में इस बात पर जोर दिया गया है कि पुलिस अधिकारियों ने नागरवाला को बताया कि मदनलाल द्वारा उल्लिखित आरोपियों में से एक 'अग्रनी' या 'हिंदू राष्ट्र' का संपादक था और वहां के सी.आई.डी. इंस्पेक्टर ने उन्हें बताया कि अहमदनगर से पुलिस इंस्पेक्टर आए थे और उन्हें 'अग्रनी' या 'हिंदू राष्ट्र' के संपादक की तलाश करने के लिए कहा गया था और जब उप पुलिस अधीक्षक जसवंत सिंह ने करकरे और उसके साथियों के बारे में जानकारी मांगी तो उन्हें कुछ नाम दिए गए थे। वे नाम थे पूना के बैज, अमृतसर के अवतार सिंह, कराची के तलवार और लाहौर के बलराज मेहता। पैराग्राफ 6 में यह भी उल्लेख किया गया है कि दिल्ली पुलिस के अधिकारियों ने सी.आई.डी. इंस्पेक्टर को मामले पर एक संक्षिप्त नोट सौंपा था जिसमें वांछित आरोपियों के नाम और विवरण शामिल थे, जहां तक उस समय तक ज्ञात थे, एक ऐसा बिंदु जिस पर नागरवाला से पूछताछ नहीं की गई थी, हालांकि उनसे लंबी जिरह की गई थी।
23.154 यह आश्चर्यजनक है कि डी.आई.बी. को यह शिकायत किए जाने के बाद भी उन्होंने नागरवाला से यह जानने की जहमत नहीं उठाई कि वास्तव में क्या हुआ था। यह सच है कि उन्होंने यू.एच. राणा को

दिल्ली पुलिस अधिकारियों की शिकायत के बारे में बताया था, लेकिन उन्होंने नागरवाला से स्वयं यह पता नहीं लगाया कि वास्तव में क्या हुआ था। जैसा कि कोटवाल ने बताया है, 21 जनवरी, 1948 से 27 जनवरी, 1948 तक, डी.आई.बी., जो दिल्ली के पुलिस महानिरीक्षक भी थे, ने कुछ नहीं किया और मदनलाल के विस्तृत बयान की एक प्रति 25 तारीख को राणा को दिए जाने के बाद भी, उन्होंने पुणे स्थित प्रांतीय सी.आई.डी. से संपर्क करने या 'हिंदू राष्ट्र' के मालिक का पता लगाने के लिए कोई कदम नहीं उठाया। आयोग इस तथ्य को नजरअंदाज नहीं कर रहा है कि राणा स्वयं बॉम्बे के डी.आई.जी. (सी.आई.डी.) थे।
23.155 जब राणा और नागरवाला ने 27 तारीख की शाम को उन्हें फोन किया और राणा ने उन्हें बताया कि नागरवाला के पास बॉम्बे में पुलिस अधिकारियों को आने-जाने की अनुमति न देने के अच्छे कारण थे, और नागरवाला ने महात्मा गांधी के अपहरण के अपने सिद्धांत के संबंध में जानकारी दी, तब भी पैराग्राफ 8 में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह संकेत मिले कि संजीवी ने नागरवाला के इस असामान्य सिद्धांत पर किसी भी तरह से आपत्ति जताई हो या तीखी या हल्की प्रतिक्रिया दी हो। पैराग्राफ 8 में उन्होंने केवल इतना कहा है, 'मैंने उनसे फरार आरोपी के बारे में पूछा, जिसके नाम या विवरण मदनलाल ने दिल्ली पुलिस को दिए थे।' यह पैराग्राफ आगे यह नहीं बताता कि दिल्ली पुलिस अधिकारियों ने नागरवाला को किन नामों या विवरणों की जानकारी दी थी। नागरवाला ने इस तरह के किसी भी प्रश्न के पूछे जाने से इनकार किया है।
23.156 यदि, जैसा कि दावा किया गया है, मदनलाल ने 20 जनवरी के अपने बयान (प्रदर्श 6) में 'हिंदू राष्ट्र' के स्वामी या 'अग्रनी' के संपादक को अपने साथियों में से एक बताया था, तो आयोग को कोई

कारण नहीं मिलता कि डी.आई.बी. ने तुरंत यह पता क्यों नहीं लगाया कि वे व्यक्ति कौन थे और नागरवाला या राव साहब गुर्टू को उन व्यक्तियों को तुरंत गिरफ्तार करने का निर्देश क्यों नहीं दिया, और कुछ महाराष्ट्रीयन पुलिसकर्मियों को रेलवे स्टेशन, हवाई अड्डे और बिड़ला हाउस पर निगरानी रखने के लिए क्यों नहीं भेजा ताकि उन व्यक्तियों को दिल्ली आने पर पहचाना जा सके। लाकुना नं. 8
23.158 राणा और नागरवाला ने 27 जनवरी 1948 की शाम को संजीव से लंबी दूरी के टेलीफोन पर बात की और अपहरण के सिद्धांत के संबंध में सभी जानकारी दी और संजीव ने उस सिद्धांत में कोई गलती नहीं पाई या उसे खारिज नहीं किया और न ही उसने उसके खिलाफ हिंसक प्रतिक्रिया दी।
23.160 प्रदर्श 7-बी में कहा गया है कि दिल्ली के दो पुलिस अधिकारियों को बॉम्बे भेजा गया और उन्होंने नागरवाला से संपर्क किया और उन्हें अब तक ज्ञात सभी तथ्यों की पूरी जानकारी दी। इन अधिकारियों को किसी भी प्रकार की पूछताछ करने या स्वतंत्र रूप से घूमने की अनुमति नहीं दी गई थी, क्योंकि नागरवाला को डर था कि दिल्ली से आए पुलिस अधिकारियों की उपस्थिति फरार व्यक्तियों का पता लगाने के उनके प्रयासों में बाधा उत्पन्न करेगी।
23.161 आयोग को इस शिकायत में कोई खास वैधता नहीं दिखती। इन दोनों पुलिस अधिकारियों को बंबई शहर की बहुत कम जानकारी थी, जो उस समय साढ़े तीन मिलियन की आबादी वाला एक विशाल महानगर था। ये अधिकारी, चाहे कितने भी चतुर और अनुभवी क्यों न हों, बंबई में करकरे को कैसे खोजते और पहचानते, यह समझ से परे है। जांच के

लिहाज से उनकी उपयोगिता लगभग नगण्य थी। तो फिर यह शिकायत क्यों?
23.162 दोनों पुलिस अधिकारी दो दिन बाद लौट आए। 25 जनवरी को संजीवी ने मदनलाल द्वारा 24 तारीख को दिए गए बयान की एक प्रति पुणे स्थित सी.आई.डी. राणा को सौंपी। यह एक विस्तृत बयान था। बंबई पहुँचने पर राणा और नागरवाला ने संजीवी से टेलीफोन पर संपर्क किया और नागरवाला ने अगले दिन सुबह हवाई जहाज से राणा को एक प्रति के साथ पत्र भेजने का वादा किया, लेकिन 30 तारीख को भेजे गए पत्र को छोड़कर कोई अन्य पत्र प्राप्त नहीं हुआ, जिसमें हत्यारों के बारे में कोई जानकारी नहीं थी।
23.163 दुर्भाग्य से, संजीव ने 25 से 30 की सुबह तक मदनलाल के विस्तृत बयान में उल्लिखित व्यक्तियों के संबंध में क्या कार्रवाई की गई, इस बारे में कोई जानकारी प्राप्त करने का प्रयास नहीं किया; और यह और भी दुर्भाग्यपूर्ण है कि मदनलाल द्वारा कथित तौर पर दिए गए 20 जनवरी के बयान में विवरण, नाम और 'अग्रनी' या 'हिंदू राष्ट्र' के संपादक का उल्लेख था, जिसे दिल्ली के पुलिस अधिकारियों के माध्यम से भेजा गया था, फिर भी दिल्ली पुलिस या किसी अन्य उच्च पदस्थ पुलिस अधिकारी ने नागरवाला से संपर्क नहीं किया ताकि उनसे यह पता लगाया जा सके कि उन्होंने उस जानकारी के संबंध में क्या किया था या क्या कर रहे थे और उनसे यह क्यों नहीं पूछा गया कि दिल्ली पुलिस द्वारा उन्हें दी गई कथित जानकारी पर विश्वास क्यों नहीं किया गया।
23.164 यह वाकई एक बेहद पेचीदा मामला है। दिल्ली पुलिस के अनुसार, उन्होंने वह दस्तावेज़ ज़ब्त किया जिसमें करकरे का नाम था; और उसमें 'अग्रनी' या 'हिंदू राष्ट्र' के संपादक का ज़िक्र था, जिसे नागरवाला ने सिरे से और स्पष्ट रूप से नकार दिया है।

इससे भी ज़्यादा हैरानी की बात यह है कि मदनलाल द्वारा 24 जनवरी को दिए गए विस्तृत बयान में, जिसकी एक प्रति 25 जनवरी 1948 को राणा को दी गई थी, 'अग्रनी' नाम का ज़िक्र नहीं है, और न ही हत्या के बाद बॉम्बे में दिए गए उनके पुलिस बयान में इसका उल्लेख है। 'हिंदू राष्ट्र' का ज़िक्र होने के बावजूद, यह आश्चर्यजनक है कि दिल्ली पुलिस ने इस व्यक्ति की पहचान जानने का कोई प्रयास नहीं किया। यह और भी चौंकाने वाली बात है कि 'हिंदू राष्ट्र' का नाम राणा को दिया गया था, हालांकि यह संदेहजनक है कि क्या यह नाम नागरवाला को दिया गया था या नहीं। फिर भी, बॉम्बे या पुणे पहुँचने पर उन्होंने इस व्यक्ति के बारे में पता लगाने और बॉम्बे पुलिस और दिल्ली पुलिस को उसके प्रति सतर्क रहने की चेतावनी देने का कोई प्रयास नहीं किया। यह अविश्वसनीय होगा यदि ऐसा न हुआ होता कि यू.एच. राणा ने संजीवी के साथ मदनलाल का बयान पढ़ा होता, जैसा कि संजीवी के नोट से पता चलता है, और 25 जनवरी को उनमें से किसी ने भी खुफिया ब्यूरो, प्रेस सूचना ब्यूरो या सी.आई.डी. से यह पता लगाने की जरा भी जहमत नहीं उठाई होती कि 'हिंदू राष्ट्र' का मालिक कौन है। यह स्वीकार किया जाता है कि 24 जनवरी को मदनलाल के बयान में इसका उल्लेख था।
23.165 यू.एच. राणा इस बात से इनकार करते हैं कि संजीवी ने उन्हें 'अग्रणी' या 'हिंदू राष्ट्र' के संपादक और स्वामी के बारे में बताया था। उन्होंने ज़ोर देकर कहा कि इन अख़बारों के नाम उन्हें कभी नहीं बताए गए। हालांकि, वे यह ज़रूर बताते हैं कि मदनलाल का बयान उन्हें उपलब्ध कराया गया था और उसी दिन उन्हें 'हिंदू राष्ट्र' दैनिक के संपादक और पुणे स्थित शास्त्र भंडार तथा अहमदनगर के करकरे के स्वामी के बारे में जानकारी मिली। ऐसा लगता है कि राणा के मन में कुछ भ्रम है क्योंकि बयान (प्रदर्श 1)

में 'हिंदू राष्ट्र' के संपादक का ज़िक्र नहीं है, जबकि स्वामी का ज़िक्र है। दस्तावेज़ों के ढेर सारे अध्ययन और 20 वर्षों से अधिक समय बीत जाने के कारण वे इस भ्रम में पड़ गए होंगे। सही स्थिति यह प्रतीत होती है कि 25 जनवरी को राणा को उस व्यक्ति की संलिप्तता का पता चला जो 'हिंदू राष्ट्र' नामक रेस्तरां का मालिक था, जिसका पंजाबियों द्वारा गलत उच्चारण 'राष्ट्रीय' किया जाता है। प्रश्न फिर उठता है कि उस समय उस व्यक्ति की पहचान जानने का प्रयास क्यों नहीं किया गया और हत्या के बाद पुणे से उसकी पूरी जानकारी क्यों नहीं मंगाई गई, जबकि वहाँ से उसकी तस्वीरें भी प्राप्त की गई थीं, जैसा कि सूचना एवं बीमा फाइल संख्या 13/HA(R)/39-ll, प्रदर्श 254-A से पता चलता है।
लाकुना नं. 9
23.166 आर.एन. बनर्जी ने इस आयोग के समक्ष गवाह संख्या 19 के रूप में कहा कि उन्हें महात्मा गांधी की हत्या की साजिश के बारे में 30 जनवरी 1948 से पहले कोई जानकारी नहीं थी, और उन्हें पहली बार इसकी जानकारी 31 जनवरी को अंतिम संस्कार के बाद की सभा में मिली। सामान्यतः, गृह मंत्रालय के सचिव होने के नाते पुलिस को उन्हें साजिश की सूचना देनी चाहिए थी और संजीवनी उनके साथ लगातार संपर्क में थे। उन्होंने आगे कहा कि संजीवनी ने दिल्ली के उपायुक्त को भी इसकी सूचना नहीं दी थी।
23.167 पंजाब पुलिस नियम संख्या 24.15 के अनुसार, महानिरीक्षक द्वारा भारत सरकार के गृह मंत्रालय को विशेष रिपोर्ट भेजी जानी थी, लेकिन स्पष्ट रूप से बैनर्जी को ऐसी कोई रिपोर्ट नहीं भेजी गई। गृह मंत्रालय के संबंध में खुफिया ब्यूरो के निदेशक के कर्तव्यों के बारे में भारत सरकार से पूछे गए प्रश्न संख्या 27 के उत्तर में स्थिति का वर्णन इस प्रकार किया गया था—

खुफिया ब्यूरो के निदेशक का यह कर्तव्य होगा कि वे महात्मा गांधी जैसे महत्वपूर्ण व्यक्तियों को होने वाले खतरे या जोखिम के बारे में गृह मंत्री और गृह मंत्रालय को सूचित करते रहें। उनका यह भी कर्तव्य होगा कि वे अपने अधीन कार्यरत अधिकारियों और कर्मचारियों को ऐसे खतरे या जोखिम के प्रति सतर्क रहने और इस संबंध में आगे की खुफिया जानकारी जुटाने के लिए आवश्यक अन्य उपाय करने के लिए आगाह करें। वे राज्य के खुफिया एजेंसियों को भी ऐसी घटनाओं के बारे में सूचित करेंगे और उन्हें इसकी गंभीरता और तात्कालिकता से अवगत कराएंगे। इन सभी मामलों में वे गृह मंत्रालय को सूचित करते रहेंगे।
23.168 बैनर्जी ने कहा कि अगर उन्हें इस मामले के बारे में कुछ भी पता होता, तो उन्होंने बम मामले की जांच के संबंध में पुलिस जो कुछ भी कर रही थी, उसके बारे में उतनी ही सावधानी बरती होती जितनी उन्होंने हत्या के बाद बरती थी।
23.169 यह तर्क भी दिया गया और सही ही दिया गया कि यदि खुफिया ब्यूरो के निदेशक हत्या के बाद अलवर, आगरा, ग्वालियर में अपने अधिकारियों को भेज सकते थे तो बम फेंकने के बाद वह ऐसा पहले क्यों नहीं कर सकते थे?
23.170 एम.के. सिन्हा ने कहा कि यदि मदनलाल द्वारा अपने बयान में दी गई जानकारी उन्हें सूचना एवं संचार अधिकारी के रूप में मिली होती, तो वे सेक्राफोन के माध्यम से बॉम्बे स्थित सी.आई.डी. से संपर्क करते और उन्हें घटना की जानकारी देते तथा मदनलाल द्वारा दिए गए विवरण के आधार पर व्यक्तियों को गिरफ्तार करने का प्रयास करने का अनुरोध करते। वे पुणे स्थित पुलिस महानिरीक्षक और सी.आई.डी. से भी संपर्क करते और जांच की प्रगति जानने के लिए उनसे लगातार संपर्क में रहते।

लाकुना नं. 10
23.172 इसे संजीवी की स्वयं की विफलता नहीं कहा जा सकता, बल्कि यह दिल्ली पुलिस के आचरण से संबंधित मामला है। संजीवी और नागरवाला द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण पर भारत सरकार के सचिवालय में की गई टिप्पणी (प्रदर्शनी 14) में सरदार पटेल ने टिप्पणी की है कि बॉम्बे में एक पुलिस उपाधीक्षक को भेजना एक गलती थी, जिससे आयोग विशेष रूप से बॉम्बे और दिल्ली पुलिस के पूरे आचरण को देखने के बाद सहमत है। लेकिन केवल यही तथ्य नागरवाला के लिए अधिकारियों से यह जानने की कोशिश न करने का औचित्य नहीं था कि उन्हें क्या पता था या उन्हें क्यों भेजा गया था।
23.173 एक ऐसा मामला है जिसका स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है और जिसके लिए उप अधीक्षक जसवंत सिंह से स्पष्टीकरण नहीं मांगा जा सका क्योंकि उनकी मृत्यु हो चुकी है और निरीक्षक बालकिशन काफी अप्रभावी थे। वह मामला यह है कि बॉम्बे गए दो पुलिस अधिकारियों ने नागरवाला को जो जानकारी देने का दावा किया है और जिसे उन्होंने अपनी पुलिस डायरी संख्या 3-ए और 4-बी में दर्ज किया है, उसके अलावा नागरवाला को मौखिक रूप से वह जानकारी क्यों नहीं दी जो उनके ज्ञान में थी, सिवाय उस जानकारी के जो प्रदर्श 5-ए में दर्ज है। दोनों अधिकारियों को नागरवाला को बताना चाहिए था कि वे स्वयं मदनलाल से पूछताछ के दौरान उपस्थित थे। उन्हें नागरवाला को तथ्यों से अवगत कराना चाहिए था। बम विस्फोट, हैंड ग्रेनेड की बरामदगी और सावरकर की संलिप्तता, ये सभी सावरकर के अनुयायियों द्वारा राजनीतिक हत्या के प्रयास की ओर इशारा करते हैं, न कि पंजाबियों द्वारा अपहरण की ओर, भले ही यह आईएनए के जनरल मोहन सिंह के निर्देश पर किया गया हो, जिसे उस सज्जन ने

[illegible]

कपूर आयोग की रिपोर्ट का अध्याय XXIV इस बात से संबंधित है कि क्या दिल्ली पुलिस ने बॉम्बे पुलिस को मदनलाल का बयान (प्रदर्श 5-ए) दिया था।
चूंकि इस विषय पर पहले विस्तार से चर्चा हो चुकी है, इसलिए कुछ नए तथ्यों को छोड़कर मैंने रिपोर्ट से बहुत कुछ उद्धृत नहीं किया है।
24.23 केस डायरी संख्या 3-ए। जसवंत सिंह की अगली डायरी 3-ए है, जो बॉम्बे, 22 जनवरी, 1948 की है। इसके पैराग्राफ 3 में लिखा है कि दोनों पुलिस अधिकारियों ने सी.आई.डी. कार्यालय में नागरवाला से संपर्क किया, जहां उन्हें मामले के सभी तथ्यों से दोबारा अवगत कराया गया और एक अंग्रेजी नोट, जिसमें मदनलाल के बयान का सारांश और उसके अंत में एसपी, नई दिल्ली का एक नोट शामिल है, नागरवाला साहब को सौंपा गया। उन्होंने इस नोट को ध्यान से पढ़ा और अपने पास रख लिया। उन्होंने इस मामले से संबंधित एक लिखित नोट लौटाया, जो संलग्न है।
'Jinhon ne is yadasht ko baghor parah aur apen pas yadashat rakhi. Tahriri note mutliqa muqadama haza wapis di joke laf haza hai'.
और संलग्न दस्तावेज़ प्रदर्श 5-ए है।
24.24 डायरी संख्या 3-ए का अनुवाद थोड़ा गलत प्रतीत होता है; इसे इस प्रकार पढ़ा जाना चाहिए —
उन्होंने ज्ञापन को ध्यानपूर्वक पढ़ा और उसका एक अंश अपने पास रख लिया। उन्होंने उपरोक्त मामले के संबंध में लिखित नोट (ज्ञापन) लौटा दिया, जो इसके साथ संलग्न है।
यह दस्तावेज़ (प्रतिलेख 5 ए) बिना तिथि और बिना हस्ताक्षर के है। यह मदनलाल द्वारा कथित रूप से दिए गए घटनाक्रम का एक

असंबद्ध विवरण है। यह अव्यवस्थित है और एक फुलस्केप आकार के कागज के दोनों ओर दो अलग-अलग लिखावटों और अलग-अलग स्याही से लिखा गया है।
उदाहरण 5-ए: कब लिखा गया और किसके द्वारा?
24.27 इस संदर्भ में यह देखना अत्यंत आवश्यक है कि प्रदर्श 5 ए कब अस्तित्व में आया और इसे क्यों लिखा गया; क्योंकि यदि यह 21 जनवरी को अस्तित्व में नहीं था, तो इसे बॉम्बे नहीं ले जाया जा सकता था। अतः प्रदर्श 5 ए के लेखकत्व और इसके लिखे जाने की तिथि से संबंधित साक्ष्यों की जाँच करना आवश्यक है। इस बिंदु पर महत्वपूर्ण गवाह क्रमांक 42 आर.सी. भाटिया हैं, जो उस समय पार्लियामेंट स्ट्रीट पुलिस स्टेशन के प्रभारी निरीक्षक थे; क्रमांक 13 राय साहब ऋखीकेश, जो उस समय पुलिस अधीक्षक, सी.आई.डी., नई दिल्ली थे; और क्रमांक 17 अमर नाथ भाटिया, जो उस समय पुलिस अधीक्षक, नई दिल्ली थे; अर्थात् दिल्ली के दो पुलिस अधीक्षक और पार्लियामेंट स्ट्रीट पुलिस स्टेशन के स्टेशन हाउस ऑफिसर। प्रदर्श 5 ए की एक फोटोकॉपी संलग्न है।
आर.सी. भाटिया, विट 42
24.28 गवाह आर.सी. भाटिया का बयान है कि प्रदर्श 5 ए कैसे अस्तित्व में आया। उन्होंने बताया कि मदनलाल से पूछताछ के दौरान, उन्हें याद नहीं कि कब, उनसे 'एक दस्तावेज़ लिखने को कहा गया'। यह मदनलाल की गिरफ्तारी के तीन या चार दिन बाद की बात हो सकती है। उन्हें वह दस्तावेज़ दिखाया गया और उन्होंने कहा कि वह केवल 'योजना तैयार की गई... तांगे में गए' शब्दों तक ही उनकी लिखावट में था, यानी पृष्ठ के पीछे के मध्य तक। 'लगभग 3.45 बजे मरीना होटल से करकरे के साथ' शब्दों से शुरू होने वाला शेष दस्तावेज़ उनकी लिखावट में नहीं है, न ही दस्तावेज़ का वह पिछला

भाग जो लाल पेंसिल की रेखा से घेरा गया था (यह आयोग द्वारा किया गया था)। आर.सी. भाटिया द्वारा अपनी लिखावट में स्वीकार किए गए भाग के अलावा अन्य भाग अलग लिखावट और अलग स्याही में है। और यह, आर.सी. के अनुसार... यह पत्र पुलिस अधीक्षक अमर नाथ भाटिया की लिखावट में है, जिनसे वे परिचित हैं। उन्होंने यह भी कहा कि यह उप अधीक्षक जसवंत सिंह की लिखावट में नहीं है।
24.29 मदनलाल ने बताया कि उनसे कई बार पूछताछ की गई थी और इन्हीं में से एक बार उन्हें ये नोट्स लिखवाए गए थे। उन्हें पक्का पता नहीं था कि प्रदर्श 5 ए में जो लिखा है, वह पूछताछ के दौरान उन्हें दोहराया गया था या नहीं। वे यह भी नहीं बता सके कि नोट क्यों तैयार किया गया था। उन्होंने कहा कि सुपरिटेंडेंट अमर नाथ भाटिया ने ये नोट्स जरूर देखे होंगे, लेकिन उन्हें इस बात का यकीन नहीं था। लेकिन अमर नाथ भाटिया की लिखावट वाले हिस्से को देखकर इस गवाह ने कहा कि ये नोट्स उन्हीं के द्वारा लिखवाए गए होंगे। जब उनका ध्यान डिप्टी सुपरिटेंडेंट जसवंत सिंह की डायरी की ओर दिलाया गया, तो गवाह ने कहा कि ये नोट्स जसवंत सिंह के बॉम्बे जाने से पहले लिखवाए गए होंगे। प्रदर्श 5 ए को लिखने से संबंधित घटनाओं के क्रम, तारीखों और यहां तक कि अवसर के बारे में भी इस गवाह का बयान अस्पष्ट है, लेकिन बीस साल बीत जाने के बाद यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है।
RAI SAHIB RIKHIKESH, WIT. 13
24.30 इस संबंध में अगले गवाह राय साहब रिखीकेश हैं, जो उस समय सी.आई.डी. में पुलिस अधीक्षक थे। दुर्भाग्य से, उनका स्वास्थ्य खराब है और वे देख नहीं सकते क्योंकि उनकी दृष्टि लगभग चली गई है, लेकिन सौभाग्य से वे व्यक्तिगत असुविधा के बावजूद आयोग के समक्ष उपस्थित हुए।

24.31 21 जनवरी 1948 को मदनलाल को सिविल लाइंस पुलिस स्टेशन ले जाया गया, जहाँ आर.एस. ऋखीकेश ने उनसे लगभग तीन या चार घंटे तक पूछताछ की, लेकिन उन्होंने किसी का नाम नहीं बताया। उन्होंने केवल व्यक्तियों का विवरण दिया। गवाह ने यह सब एक कागज पर लिख लिया, जिसे बॉम्बे जाते समय डिप्टी सुपरिटेंडेंट जसवंत सिंह को सौंप दिया गया। यह कार्य डी.आई.बी. संजीवी के आदेशानुसार किया गया था। पुलिस केस डायरी संख्या 2 और 2-ए से पता चलता है कि पूछताछ इंस्पेक्टर जय दयाल ने डिप्टी सुपरिटेंडेंट ऑफ पुलिस के आदेशानुसार की थी। जब प्रदर्श 5, जो प्रदर्श 5 ए की प्रति है, गवाह को पढ़कर सुनाई गई, तो उनका जवाब था कि उन्होंने ऐसा नहीं लिखा था और न ही इसे बॉम्बे भेजा था। दुर्भाग्यवश, उनकी दृष्टि कमजोर होने के कारण उन्हें मूल दस्तावेज नहीं दिखाया जा सका। उन्होंने कहा कि उन्होंने मदनलाल द्वारा दिए गए षड्यंत्रकारियों के विवरण को लिख लिया था, जो पुलिस केस डायरी संख्या 1, पृष्ठ 13, अनुच्छेद 15 (प्रदर्श संख्या 36) में पढ़कर सुनाए गए विवरण के समान था। इस बयान को पाठक ने प्रदर्श संख्या 6 के रूप में चिह्नित किया था। ऋखीकेश को याद था कि मदनलाल ने कहा था कि पार्टी का नेता एक मराठा था जो एक हिंदू समाचार पत्र, संभवतः 'हिंदू राष्ट्र' का संपादक था, लेकिन उन्हें याद नहीं था कि मदनलाल ने 'अग्रनी' का भी उल्लेख किया था या नहीं, लेकिन उन्होंने यह नहीं कहा था कि वह व्यक्ति पुणे का था। डी.आई.बी. ने उन्हें मदनलाल द्वारा उस समय तक दिए गए सभी बयानों की एक टाइप की हुई प्रति देने को कहा, जो उन्होंने दे दी।
24.32 उनसे पूछा गया कि मदनलाल की गिरफ्तारी और करकरे तथा पूना पत्रिका के संपादक का नाम लेने के बावजूद हत्या को रोकने के लिए कोई प्रभावी कदम क्यों नहीं उठाए गए। उनका उत्तर था:—

'हमने अपनी पूरी कोशिश की। साजिशकर्ता महाराष्ट्र से आए थे। हमारे लिए यह पता लगाना बहुत मुश्किल था कि कौन कौन है। भारत के विभिन्न हिस्सों से कई अधिकारी यहां आए और उन्होंने कई संदिग्धों के नाम बताए। उनमें से कुछ को हमने गिरफ्तार कर पूछताछ की; अन्य से हमने सिर्फ पूछताछ की। लेकिन हम इन व्यक्तियों के बारे में कोई उपयोगी जानकारी प्राप्त करने में सफल नहीं हुए। बॉम्बे पुलिस के लिए पूना जर्नल के संपादक को गिरफ्तार करना संभव होना चाहिए था क्योंकि वे उनकी पहचान जानते थे। इसी तरह अहमदनगर में दुकान चलाने वाले करकरे को गिरफ्तार करने में भी कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए थी।'
यह दो व्यक्तियों की पहचान के बारे में स्पष्ट जानकारी पर जोर देता है (i) एक संपादक जिसके विवरण बॉम्बे पुलिस को पता होने चाहिए थे और (ii) अहमदनगर का दूसरा करकरे, इन दोनों को बॉम्बे पुलिस आसानी से गिरफ्तार कर सकती थी।
24.33 गवाह ने बयान दिया है कि मदनलाल से पूछताछ के दौरान उसे निम्नलिखित नाम पता चले:— (1) करकरे का नौकर, लेकिन करकरे का नाम नहीं, जिसका व्यवसाय था
उल्लिखित।
(2) षड्यंत्र का मुखिया पुणे के एक समाचार पत्र का संपादक था।
(3) उल्लेखित एक अन्य व्यक्ति सेना से बर्खास्त अधिकारी था। (4) एक मोटा मराठा जिसने षड्यंत्र को वित्तपोषित किया और चौक पर उसकी एक दुकान थी।
अहमदनगर में हथियारों और गोला-बारूद का व्यापार करते हुए। (5) शंकर। लेकिन यह बताया जा सकता है कि वह नाम न तो पहले में है। मदनलाल के बयान (प्रदर्श 6) और न ही उनके विस्तृत बयान (प्रदर्श
1) में इसका उल्लेख है।

24.34 ऐसा प्रतीत होता है कि इस गवाह ने नामों और विवरणों में भ्रम किया है। शंकर का नाम न तो प्रदर्श 6 में है और न ही प्रदर्श 1 में। सेवामुक्त सेना अधिकारी का उल्लेख गोडसे ने 30 जनवरी 1948 को अपनी गिरफ्तारी के बाद किया था, लेकिन मदनलाल के दोनों बयानों में उसका उल्लेख नहीं है। मदनलाल ने अपने दोनों बयानों में करकरे का नाम लिया है। वास्तव में, मदनलाल द्वारा केवल यही नाम लिया गया है। लेकिन प्रदर्श 1 और 6 में उसका विवरण अलग है।
24.35 'शास्त्र भंडार' नाम का उल्लेख प्रतिपादन 1 में है, लेकिन प्रतिपादन 6 में नहीं। मराठा होने का वर्णन कहीं भी नहीं मिलता।
24.36 यह सब दर्शाता है कि यह स्मृतिभ्रंश का मामला है जो बीस वर्षों के बीत जाने के बाद असामान्य या अप्रत्याशित नहीं है, भले ही इस पुलिस अधिकारी को प्रभावित करने वाली शारीरिक बीमारियों को नजरअंदाज कर दिया जाए।
24.43 चावला द्वारा जिरह के दौरान इस गवाह ने कहा कि उसने नागरवाला के लिए कोई कवरिंग लेटर नहीं दिया था। वह संजीवी के घर पर बैठा था जब जसवंत सिंह आए। जब जसवंत सिंह जा रहे थे, तब उसने (रिकेश ने) उन्हें निर्देश दिए कि उन्हें बंबई में क्या करना है।
24.44 ऋखीकेश ने मदनलाल से लगभग 6 घंटे तक पूछताछ की। उसने शाम करीब 4 या 5 बजे पूछताछ शुरू की और देर रात तक पूछताछ जारी रखी। मदनलाल ने अपने सह-साजिशकर्ताओं का पूरा विवरण और उनके मिलने की संभावित जगहों का ब्यौरा दिया था। लेकिन यह जानकारी सटीक नहीं लगती क्योंकि इतनी विस्तृत जानकारी भी पूर्ण बयान (प्रदर्श 1) में नहीं है। गवाह ने विवरण और पते लिख लिए थे

क्योंकि अधिक विस्तृत जानकारी देने का समय नहीं था। गवाह ने जसवंत सिंह को पूरा बयान नहीं दिया, बल्कि साजिशकर्ताओं के विवरण और पते दिए। अधिकारियों को हवाई मार्ग से भेजने का उद्देश्य तत्काल कार्रवाई करना और गिरफ्तारियां करना था। उसने आगे कहा कि उसने जसवंत सिंह को नागरवाला को मामले के तथ्य समझाने और संजीवी की ओर से यह बताने के लिए सामान्य निर्देश दिए होंगे कि मामला अत्यावश्यक है और उसे मामले में हुई किसी भी प्रगति की सूचना देनी चाहिए, जिसे पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया गया लगता है।
ए.एन. भाटिया. विट. 17
24.45 इस मामले से संबंधित अगला गवाह गवाह संख्या 17, अमर नाथ भाटिया है, जो उस समय नई दिल्ली के पुलिस अधीक्षक थे और अब एक वकील हैं। उन्होंने बताया कि मदनलाल से पार्लियामेंट स्ट्रीट पुलिस स्टेशन में पूछताछ की गई थी, जहां उन्होंने बयान दिया था, प्रदर्श 6। उन्होंने केवल एक व्यक्ति, करकरे का नाम लिया, लेकिन छह व्यक्तियों का विवरण दिया।
24.46 उप अधीक्षक जसवंत सिंह और सी.आई.डी. के इंस्पेक्टर बालकिशन को उनके निर्देशानुसार बॉम्बे भेजा गया था, लेकिन यह निर्णय डी.आई.बी. और पुलिस अधीक्षक ऋखीकेश का था। जब उनसे पूछा गया कि उन्होंने उप अधीक्षक जसवंत सिंह को क्या निर्देश दिए थे, तो उन्होंने कहा:
'हमने डिप्टी सुपरिटेंडेंट जसवंत सिंह को संदिग्ध व्यक्तियों की एक सूची दी थी। सूची से मेरा तात्पर्य मदनलाल के बयान से प्राप्त विवरण से है। मैंने जसवंत सिंह को वह सब कुछ दिया जो हमारे पास था। मैं उन्हें इससे अधिक नहीं दे सकता था। हमने जसवंत सिंह को यह भी बताया था कि उन्हें बंबई के अधिकारियों से

सहायता, सहयोग और निर्देश लेने चाहिए, जो मराठा आरोपियों के बारे में हमसे अधिक जानते होंगे।'
प्र. 'क्या आपने उन्हें बताया कि उन्हें किससे सहायता लेनी चाहिए?'
उत्तर: जहाँ तक मुझे पता है, राणा ने वह सब कुछ करने का दायित्व स्वयं पर ले लिया था जो आवश्यक था।
(आयोग द्वारा) प्रश्न: क्या आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि राणा 25 जनवरी तक दिल्ली से बंबई के लिए रवाना नहीं हुए थे? फिर उन्होंने वह सब कुछ करने का दायित्व कैसे उठाया होगा जो संभव था?
उत्तर: मुझे बस इतना ही पता है कि राणा ने हर संभव प्रयास करने का जिम्मा स्वयं पर लिया था। मुझे नहीं पता कि वह दिल्ली से बंबई कब रवाना हुए।
24.48 फिर उनसे पूछा गया कि उन्होंने जसवंत सिंह को बंबई में उन लोगों को गिरफ्तार करने का आदेश कैसे दिया जिनके नाम और निवास स्थान उन्हें ज्ञात नहीं थे, क्योंकि अधिकारियों के बंबई रवाना होने तक मदनलाल ने केवल करकरे का नाम और अन्य लोगों का कुछ विवरण ही दिया था, तो उनका उत्तर था—
'हमारी एकमात्र चिंता उन व्यक्तियों को गिरफ्तार करवाना था जिनका विवरण मदनलाल ने दिया था।'
जब उन्हें याद दिलाया गया कि विवरण अपर्याप्त थे, तो उनका जवाब था कि मदनलाल से जो भी विवरण प्राप्त हो सके, उन्हें बॉम्बे भेजा गया था और उनकी राय थी कि बॉम्बे पुलिस के सहयोग से उन व्यक्तियों को गिरफ्तार करना संभव होगा।
24.50 ए.एन. भाटिया ने स्वीकार किया कि जसवंत सिंह से जो कुछ भी कहा गया या उन्हें दिया गया, उसका उल्लेख केस डायरी में होना

चाहिए था। उनका ध्यान जसवंत सिंह की 21 जनवरी, 1948 की डायरी संख्या 2 बी की ओर दिलाया गया, जिसमें मदनलाल के बयान या उसके सारांश का कोई उल्लेख नहीं है। जसवंत सिंह ने जवाब दिया कि उन्हें नागरवाला के बारे में तो याद है, लेकिन गुरतू के बारे में कुछ नहीं कह सकते, जो पूछे गए प्रश्न के संदर्भ में शायद ही प्रासंगिक उत्तर था।
24.51 इसके बाद उनका ध्यान जसवंत सिंह की 22 जनवरी की केस डायरी संख्या 3-ए की ओर दिलाया गया और उनसे पूछा गया कि क्या उन्हें इस मामले के बारे में कुछ याद है। उन्होंने कहा कि शायद उन्होंने उन दस्तावेजों में से किसी एक पर कुछ टिप्पणी की हो, लेकिन उन्हें ठीक से याद नहीं आ रहा कि वह क्या थी।
24.52 उन्हें 17 अक्टूबर 1967 को वापस बुलाया गया और उनसे प्रदर्श 5 ए के बारे में पूछताछ की गई। उनसे पूछा गया कि यह दस्तावेज़ कब तैयार किया गया था। उन्होंने कहा कि उन्हें याद नहीं है। उन्होंने कहा—
'मैंने व्यक्तिगत रूप से मदनलाल के बयान का कोई संक्षिप्त विवरण तैयार नहीं कराया था। मुझे याद है कि ऐसा संक्षिप्त विवरण तैयार किया गया था। जो कुछ भी हो रहा था, उसकी मुझे जानकारी थी क्योंकि मुझे चल रही जांच के बारे में लगातार बताया जा रहा था। मुझसे सलाह मांगी गई, जो मैंने दी और जहां मुझे आवश्यक लगा, वहां मैंने निर्देश भी दिए, इस प्रकार अधीनस्थ पुलिस अधिकारियों को मेरी सलाह का लाभ मिला।'
24.53 गवाह को दस्तावेज़ प्रदर्श 5 ए दिखाया गया और उससे पूछा गया —
प्र. क्या आपने यह दस्तावेज़ देखा है?

ए. मैंने इसे लगभग उसी समय देखा होगा जब इसे तैयार किया गया था और संभवतः बाद में जांच के दौरान भी देखा होगा, लेकिन मैंने इसे तब से नहीं देखा है।
24.54 उनका ध्यान 'मेक्ट करकरे, जो सभा के सक्रिय कार्यकर्ता या अध्यक्ष प्रतीत होते थे' और 'एस. देशपांडे, ओम बाबा और करकरे के साथ 20 जनवरी, 1948 को 6.00 बजे चले गए' वाले हिस्से की ओर दिलाया गया; ये पुलिस डायरियों में नहीं हैं और गवाह का जवाब था, 'मैं इसके बारे में कुछ नहीं कह सकता'।
24.56 श्री वैद्य द्वारा जिरह के दौरान उन्होंने कहा—
'...और केस डायरी नंबर 1 को देखने के बाद, मैं अब कह सकता हूँ कि मैंने इंस्पेक्टर से मदनलाल के बयान का अंग्रेजी में सारांश तैयार करने को कहा था। चूंकि यह अधूरा था, इसलिए मैंने कुछ शब्द जोड़े और वे शब्द मैंने पहले ही बता दिए हैं।'
24.61 ए.एन. भाटिया ने मदनलाल के पूर्ण बयान की प्रति (प्रदर्श
1) पर राय साहब ऋखीकेश के पृष्ठांकन (प्रदर्श 1-ए) को प्रमाणित किया, जो संजीवी के नोट (प्रदर्श 7) से संलग्न थी। यह उल्लेख किया जा सकता है कि संजीवी के नोट (प्रदर्श 7) से संलग्न (प्रदर्श 5) की प्रति, जिसे उसमें अनुलग्नक V के रूप में चिह्नित किया गया है, पर निम्नलिखित पृष्ठांकन है—'सच्ची प्रति। निरीक्षक, सीआईडी, एन.डी.'— लेकिन निरीक्षक के हस्ताक्षर नहीं हैं; और इसके नीचे 'टी.जी. संजीवी' द्वारा दिनांक 20-2-49 को हस्ताक्षर किए गए हैं। किस निरीक्षक ने मूल प्रति को सच्ची प्रति प्रमाणित किया, यह आयोग पता नहीं लगा सका है। 24.62 बी.बी. लाई द्वारा जिरह किए जाने पर ए.एन. भाटिया ने कहा कि यह दस्तावेज़ राम चंद (आर.सी. भाटिया) द्वारा उनके आदेश पर तैयार किया गया होगा; उन्होंने इसे केस डायरियों से तैयार किया होगा।

गवाह ने स्वयं प्रदर्श 5 ए के भाग ए-ए में दी गई जानकारी उन अधिकारियों से प्राप्त की थी जो अभियुक्तों से पूछताछ कर रहे थे। उन्होंने आगे कहा, 'वास्तव में भाग ए-ए में जो दिया गया है वह राम चंद द्वारा दो पृष्ठों में लिखी गई बातों का सार है और कुछ जानकारी मेरी अपनी है।'
'मैंने यह छोटा सा नोट ए-अल इसलिए तैयार किया ताकि अगर कोई अधिकारी मुझसे पूछताछ करे तो मैं उसे तुरंत बता सकूं।' उन्होंने दस्तावेज़ को अपनी मेज़ पर रख दिया। वे यह तो नहीं बता सकते थे कि उनके पाठक या स्टेनोग्राफर ने इसे जसवंत सिंह को कब सौंपा था, लेकिन यह 25 जनवरी से पहले ही हुआ होगा। उन्हें दस्तावेज़ की कमी महसूस नहीं हुई क्योंकि उन्हें इसका उपयोग करने का कोई अवसर नहीं मिला था। उन्होंने ज़ोर देकर कहा कि जसवंत सिंह जब बॉम्बे गए थे तो यह दस्तावेज़ उनके साथ नहीं गया होगा और न ही संजीवी ने इसे भेजा होगा।
24.63 आयोग द्वारा पूछताछ किए जाने पर ए.एन. भाटिया ने कहा कि यदि कागजात भेजने में उनका कोई हाथ होता तो वे वह दस्तावेज़ नहीं भेजते। कोई भी अधिकारी ऐसा नहीं करता। वे यह स्पष्टीकरण नहीं दे सके कि जसवंत सिंह ने 25 जनवरी 1948 से पहले इस दस्तावेज़ को फाइल में गलत तरीके से क्यों शामिल किया।
24.64 जहाँ तक ए.एन. भाटिया को याद था, मदनलाल के बयान से जो कुछ भी प्राप्त हुआ था, उसे बॉम्बे भेज दिया गया था। उन्होंने दस्तावेज़ (प्रदर्शनी 5 ए) संजीवी को कभी नहीं दिखाया।
आयोग ने कई गवाहों से पूछताछ की, जिनमें इंस्पेक्टर बालकिशन, डिप्टी एसपी जसवंत सिंह की अदालत में दी गई गवाही, सरदार पटेल के सचिव वी. शंकर, केंद्रीय गृह सचिव आर.एन. बनर्जी, सरदार पटेल की बेटी मणिबेन पटेल, कुख्यात यू.एच. राणा और कई अन्य लोग शामिल

थे, ताकि यह पता लगाया जा सके कि दिल्ली पुलिस द्वारा बॉम्बे भेजे जाने का दावा किए गए दस्तावेज़ 5 ए और कुछ अन्य दस्तावेज़ सही थे या मनगढ़ंत।

कपूर आयोग की रिपोर्ट का अध्याय XXV बंबई में हुई जांचों से संबंधित है।
25.3 22 से 30 की अवधि के बीच दो घटनाएँ घटीं। दिल्ली पुलिस के दो अधिकारी करकरे को गिरफ्तार करने और नागरवाला की सहायता लेने आए। दूसरी घटना यह है कि यू.एच. राणा 27 तारीख की शाम को बॉम्बे पहुँचे। उनके पास मदनलाल का पूरा बयान (प्रतिलेख 1) था, जिसमें अन्य बातों के अलावा 'हिंदू राष्ट्र' के मालिक का उल्लेख षड्यंत्रकारियों में से एक के रूप में किया गया था। राणा और नागरवाला दोनों ने ही इस बयान को नहीं पढ़ा। यह कहना गलत नहीं होगा कि यह व्यवहार अत्यंत आश्चर्यजनक था, क्योंकि यदि नागरवाला जाँच कर भी रहे थे, तो प्रतिलेख 1 में निहित जानकारी उनके लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होनी चाहिए थी।
25.11 नागरवाला को मोरारजी देसाई ने पूरी कहानी बताई, लेकिन सावरकर को गिरफ्तार करने के लिए नहीं कहा क्योंकि उनके खिलाफ कोई सबूत नहीं था। उन्होंने कहा, 'मुझे पक्का यकीन था कि इस साजिश के पीछे सावरकर का हाथ है और इसीलिए मैंने उनके घर पर विशेष निगरानी रखने को कहा था।' मोरारजी देसाई ने जैन की कहानी को सच माना।
25.13 कोटवाल ने तर्क दिया कि यदि ये तथ्य सही थे, अर्थात् मदनलाल और करकरे अहमदनगर के निवासी थे, और हथियारों का जखीरा भी अहमदनगर में था, तो इन तथ्यों की जानकारी पाने और कार्रवाई करने के लिए कहे जाने वाले उचित व्यक्ति पुलिस महानिरीक्षक कामते थे, न कि नागरवाला, क्योंकि कामते का अधिकार क्षेत्र पूरे बॉम्बे प्रांत पर था, जबकि नागरवाला का अधिकार क्षेत्र केवल बॉम्बे शहर तक सीमित था, और नागरवाला उस षड्यंत्र के संबंध में कोई कार्रवाई नहीं कर सकते थे जो बॉम्बे शहर के बाहर, अर्थात्

अहमदनगर में रचा गया था। जैन का नाम उजागर न करने का कुछ औचित्य हो सकता है, जिन्होंने मोरारजी देसाई से ऐसा न करने का अनुरोध किया था क्योंकि वे एक खतरनाक इलाके में रहते थे और यदि उनका नाम उजागर हो जाता तो उनकी हत्या की संभावना थी। (प्रोफेसर जैन शिवाजी पार्क क्षेत्र में रहते थे, जो सावरकर निवास से कुछ ही दूरी पर था। दादर और शिवाजी पार्क को हिंदू महासभा का गढ़ माना जाता था)। लेकिन आयोग की राय में, जांच या पूछताछ का जिम्मा कामते के बजाय नागरवाला को चुनने के लिए देसाई को दोषी ठहराना मुश्किल होगा। इतने समय बाद, जब सारे तथ्य और साजिशकर्ताओं की पहचान पता चल चुकी है, तो यह कहा जा सकता है कि कामते शायद बेहतर होते, लेकिन क्या यही बात 21 जनवरी 1948 को कही जा सकती थी, जब दो नाम अहमदनगर के 'सेठ' करकरे और वी.डी. सावरकर के थे; और उनमें से कौन अधिक महत्वपूर्ण था? चुनाव यहीं पर निर्भर था। (यहाँ मैं आयोग के विचार से असहमत हूँ, देसाई कामते को भी ला सकते थे, जो प्रांतीय पुलिस से निपट सकते थे जबकि नागरवाला बॉम्बे शहर में जांच का जिम्मा संभालते। इतिहास गवाह है कि नागरवाला ने गृह मंत्री द्वारा उन पर रखे गए भरोसे के साथ न्याय नहीं किया।) 25.15 जब के.एम. मुंशी (गवाह संख्या 82) से पूछा गया कि क्या मोरारजी देसाई द्वारा पुलिस उपायुक्त को सूचना देना उचित था, तो उन्होंने उत्तर दिया, 'एक मंत्री के लिए कार्रवाई करने का यही एकमात्र तरीका है। उनसे स्वयं जांच करने की अपेक्षा नहीं की जाती।' मुंशी ने उत्तर प्रदेश के राज्यपाल रहते हुए इसी तरह के एक मामले का उदाहरण दिया। उस समय झांसी में प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू की हत्या की साजिश की सूचना मिली थी। उन्होंने यह सूचना गृह मंत्री को दी, जिन्होंने पुलिस महानिरीक्षक को जांच करने का आदेश दिया, जिससे पता चला कि सूचना निराधार थी।

25.16 कोटवाल ने बॉम्बे पुलिस अधिनियम, 1902 (संख्या IV, 1902), जिसे आगे 'बॉम्बे सिटी अधिनियम' कहा जाएगा, के प्रावधानों का हवाला देते हुए यह तर्क दिया कि नागरवाला को जांच सौंपना एक गलती थी। उपर्युक्त अधिनियम के अनुसार, बॉम्बे सिटी अधिनियम द्वारा प्रदत्त सीमित शक्तियों के कारण नागरवाला न तो अपराध के संबंध में कोई जानकारी प्राप्त कर सकते थे और न ही अपराध को होने से रोक सकते थे। कोटवाल ने अपने तर्क के समर्थन में कई धाराओं और प्रक्रिया संहिताओं का हवाला दिया।
कपूर आयोग ने कोतवाल के तर्कों को स्वीकार नहीं किया।
25.26 आयोग कोतवाल के इस व्यापक तर्क को स्वीकार नहीं कर सकता। यदि उनका तर्क सही है, तो इससे कुछ असाधारण परिणाम निकलेंगे। यदि बॉम्बे शहर पुलिस के किसी अधिकारी को सूचना मिलती है कि उसके अधिकार क्षेत्र में कुछ व्यक्तियों ने किसी अन्य प्रांत या केंद्र सरकार के सदस्यों की हत्या करने के लिए हथियारबंद होकर भाग रहे हैं, तो बॉम्बे शहर पुलिस अधिकारी को इस सूचना पर ध्यान न देने की आवश्यकता नहीं है और वह ऐसा कर भी नहीं सकता। वह निष्क्रिय और उदासीन बना रह सकता है और अपने अधिकार क्षेत्र में व्यक्तियों को तैयारी करने, हथियार इकट्ठा करने और बॉम्बे से अपराध करने के लिए जाने की अनुमति दे सकता है। यदि इसका तार्किक निष्कर्ष निकाला जाए, तो यदि कोई जासूसी गिरोह बॉम्बे में स्थित हो लेकिन बॉम्बे शहर के बाहर से काम कर रहा हो, तो वह बॉम्बे के बाहर स्वतंत्र रूप से काम कर सकता है, वह कोई भी गुप्त और गोपनीय जानकारी चुरा सकता है, वह तोड़फोड़ की कार्रवाई कर सकता है, वह सबसे खतरनाक और विश्वासघाती कृत्य कर सकता है, लेकिन जब तक उसका कार्यक्षेत्र बॉम्बे शहर के बाहर है, बॉम्बे नगर पुलिस असहाय रहेगी, भले ही इन सभी कृत्यों को अंजाम देने के

बाद जासूस बॉम्बे लौट आएं और बॉम्बे पुलिस की जानकारी में वहां छिपे हों, और यहां तक कि जब वे समुद्र या हवाई मार्ग से यात्रा करने का प्रयास करें।
25.34 मोरारजी देसाई द्वारा दी गई जानकारी की दो प्रमुख विशेषताएं थीं: अहमदनगर के वी.आर. करकरे की संलिप्तता और बंबई के वी.डी. सावरकर पर भी उस षड्यंत्र में भागीदार होने का संदेह, जिसके परिणामस्वरूप बम विस्फोट हुआ और महात्मा गांधी की हत्या का प्रयास किया गया। पुलिस को वी.आर. करकरे के बारे में शायद ज्यादा जानकारी न हो, लेकिन वे सावरकर के राजनीतिक दर्शन से पूरी तरह परिचित थे, जिनके अनुयायी बंबई शहर में सक्रिय न होते हुए भी पुणे में काफी सक्रिय थे। यदि प्रयास किया जाता तो अहमदनगर से करकरे की गतिविधियों का पता लगाया जा सकता था। 25.36 करकरे, सावरकर और बैज के कुछ सहयोगियों का समूह और बम फेंकने का सबूत महात्मा गांधी को अपहरण करने के प्रयास का प्रमाण नहीं था, जिससे सावरकर विचारधारा के अनुसार मुस्लिम समर्थक और हिंदू विरोधी मानी जाने वाली उनकी गतिविधियों से उन्हें बचाया जा सके। लेकिन समूह ने हत्या के अपने इरादे का पर्याप्त सबूत दिया था। आयोग की राय में, विशेष शाखा को अहमदनगर से जितनी भी जानकारी मिल सकती थी, उसे प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए था और साथ ही प्रांतीय सी.आई.डी. का पूरा उपयोग करना चाहिए था, जो करकरे और बैज दोनों के संबंध में उपयोगी जानकारी का स्रोत हो सकती थी। यदि पूना के उप अधीक्षक चौबल और बॉम्बे प्रांत के सी.आई.डी. के ए.डी.आई.जी. गुरतु हत्या के बाद उपयोगी जानकारी दे सकते थे, तो वे हत्या से पहले भी ऐसा कर सकते थे। साक्ष्य से पता चलता है कि प्रांतीय सी.आई.डी. 1 फरवरी, 1948 को दिल्ली स्थित डी.आई.बी. को करकरे और आप्टे की तस्वीरें और उनके

आपसी संबंध के सबूत भेजे गए थे। नागरवाला उस समय दिल्ली अधिकारी के रूप में जांच कर रहे थे। बॉम्बे सिटी एक्ट की धारा 32(1)(b) के तहत एक साधारण सी.आई.डी. तथ्य-संग्रह अधिकारी के रूप में भी उन्हें यही जानकारी उपलब्ध होती, जैसे कि वे उस अधिनियम के अध्याय V के तहत कार्य कर रहे होते।
25.38 लेकिन नागरवाला की मुख्य गलती अपहरण के सिद्धांत का अनुसरण करना था, जिसके कारण उसे व्यक्तियों के एक अलग समूह पर संदेह हुआ और इस प्रकार वह एक गतिरोध में फंस गया।
25.46 गृह मंत्री से मामले की जांच करने और मदनलाल और करकरे के सहयोगियों को गिरफ्तार करने के निर्देश मिलने के बाद, नागरवाला ने अपने मुखबिरों और संपर्कों से संपर्क किया और पुलिस अधिकारियों को करकरे और उसके सहयोगियों का पता लगाने का निर्देश दिया।
25.47 22 जनवरी, 1948 तक यह सूचना मिली थी कि शिवाजी पार्क का बलराज मेहता इस षड्यंत्र का सक्रिय सदस्य था। उस पर नज़र रखने के आदेश दिए गए और अहमदनगर स्थित संपर्कों को भी कहा गया कि यदि करकरे वहाँ हो तो उसका पता लगाने का प्रयास करें।
25.52 23 जनवरी को मिली रिपोर्टों के अनुसार, करकरे और बैज बंबई में नहीं थे, और वे दोनों कट्टर हिंदू महासभावादी थे। यदि वे बंबई आते, तो वे परेल स्थित हिंदू महासभा कार्यालय में होते और उस स्थान पर पहले से ही निगरानी रखी जा रही थी। पता चला कि बलराज मेहता महात्मा गांधी रोड स्थित इंडिया कॉफी हाउस में अपने साथियों से मिलते थे। उस कॉफी हाउस में भी निगरानी रखी गई, लेकिन कोई ठोस परिणाम नहीं निकला। सावरकर के घर के मामले में भी यही स्थिति थी। अहमदनगर से यह भी पता चला कि करकरे वहां नहीं थे और उनके ठिकाने का पता नहीं चल पाया था।

25.54 25 जनवरी 1948 को सूत्रों से पता चला कि आर्य पथिक आश्रम के कमरा नंबर 27 में रहने वाले दो पंजाबी बलराज मेहता के करीबी सहयोगी थे और हथियारों का व्यापार करते थे; इन दोनों पंजाबियों का विवरण नीचे दिया गया है। इसे देखते हुए कमरा नंबर 26 में एक निगरानी रखने का निर्णय लिया गया। निगरानी करने वालों ने बताया कि एक संदिग्ध दिखने वाला व्यक्ति कार नंबर BYF 2744 में आश्रम आया था, लेकिन निगरानी करने वाले यह नहीं जानते थे कि वह किससे मिलने आया था। निगरानी करने वाले ने यह भी बताया कि कार का चालक भी संदिग्ध लग रहा था। (आप्टे और गोडसे पिछली शाम ही आर्य पथिक आश्रम से एल्फिंस्टन एनेक्स होटल में स्थानांतरित हुए थे; संदिग्ध पंजाबियों के बारे में सूचना देने वाले पुलिस मुखबिर उन्हें पहचान नहीं पाए थे।) यह भी पता चला कि करकरे का भाई बॉम्बे की एक मिल में दिहाड़ी मजदूर के रूप में काम करता था और नाइगाम में रहता था। उसके घर पर भी निगरानी रखी गई। पता चला कि बलराज मेहता शिवाजी पार्क स्थित पारेख चैंबर्स में दो व्यक्तियों से लंबी बातचीत कर रहे थे, जिनमें से एक सिख और दूसरा पंजाबी था। लेकिन उनकी बातचीत सुनने का प्रयास विफल रहा क्योंकि वे पंजाबी में बात कर रहे थे और देखने वाला उसे समझ नहीं पा रहा था। इन व्यक्तियों का व्यवहार संदिग्ध प्रतीत हुआ। 25.61 31 जनवरी, 1948 को यह जानकारी मिली कि यदि महात्माजी पर हमला नाथूराम गोडसे ने किया था, तो इस साजिश की जानकारी सावरकर, उनके सचिव दामले और अंगरक्षक कासर को भी होगी, जो दोनों सावरकर के घर पर ही रहते थे। यह जानकारी चव्हाण और लिमाये से पूछताछ के परिणामस्वरूप प्राप्त हुई, जो पहले से ही हिरासत में थे। 25.62 एन.वी. लिमाये नामक एक बंदी से कुछ बहुत उपयोगी जानकारी प्राप्त हुई, जिसने बताया कि सावरकर तथ्यों से पूरी तरह अवगत

रहे होंगे और नाथूराम गोडसे ने अपने मिशन को अंजाम देने से पहले उनसे सलाह जरूर ली होगी। डब्ल्यू.बी. चव्हाण ने पुलिस को बताया कि सावरकर ने ही अपराध करवाया होगा और गोडसे के साथ उसका साथी एन.डी. आप्टे भी रहा होगा, क्योंकि गोडसे आप्टे को साथ लिए बिना कभी कोई काम नहीं करता था। इसके बाद दामले और कासर से पूछताछ की गई और सावरकर के घर पर कड़ी निगरानी रखी गई। बलराज मेहता, रामेश्वर सिंह ठाकुर, त्रिलोक नाथ मेहरा, फकीर चंद चोपड़ा, एल.जी. थाट्टे और प्रहलाद दत्त से भी पूछताछ की गई। दरअसल, दत्त पुलिस छापों के दौरान घायल हो गए थे और उन्हें अस्पताल भेजा गया था। दामले और कासर से पता चला कि गोडसे और आप्टे ने बम विस्फोट से पहले सावरकर को दो-तीन बार देखा था और उनकी कहानी से ऐसा प्रतीत होता है कि इन्हीं मौकों पर महात्मा गांधी की हत्या की योजना को अंतिम रूप दिया गया था। उन्होंने यह भी खुलासा किया कि करकरे एक सक्रिय हिंदू महासभाई थे और सावरकर से मिलने आए थे। उनके साथ एक युवा पंजाबी भी था, जिसका नाम बाद में मदनलाल पता चला। उन्होंने सावरकर से एक घंटे तक बातचीत की। लेकिन उनमें से कोई भी सावरकर के घर पर हुई उस मुलाकात के बारे में गवाही देने को तैयार नहीं था। उन्होंने यह भी बताया कि बैज भी सावरकर से मिलने आते थे। दरअसल, आप्टे और गोडसे को सावरकर से मिलने की पूरी छूट थी और वे बिना किसी अपॉइंटमेंट के या नीचे इंतजार किए बिना आ सकते थे।
25.63 बलराज मेहता, अवतार सिंह और अन्य से कोई जानकारी प्राप्त नहीं हो सकी, लेकिन थाट्टे ने खुलासा किया कि आप्टे और गोडसे सावरकर के हिंदू राष्ट्र दल के दो मुख्य आयोजक थे, जिनके सदस्य सावरकर और उनकी विचारधारा में विश्वास रखते थे। इसी आधार पर पुलिस ने सावरकर के घर की तलाशी लेने का फैसला किया। पुलिस के

आने पर सावरकर ने नागरवाला से पूछा कि क्या वह गांधीजी की हत्या के सिलसिले में उन्हें गिरफ्तार करने आए हैं। लेकिन जब उन्हें बताया गया कि यह केवल गांधीजी के मामले के संबंध में तलाशी है, तो सावरकर ने बीमार होने का बहाना बनाया और कमरे में जाकर लेट गए। भीड़ ने उनके घर पर हमला करना शुरू कर दिया, बड़ी संख्या में पुलिस बल के समय पर पहुंचने से ही उनकी और उनकी संपत्ति की जान बच पाई। उन्होंने पुलिस को बताया कि भीड़ का हिंसक व्यवहार दोबारा होने की संभावना है और उन्हें पुलिस सुरक्षा चाहिए। करकरे, बैज और अन्य पर आरोप लगने के कारण पुणे और अहमदनगर पुलिस से संपर्क किया गया और उन्हें उनके आवासों पर तलाशी लेने और गिरफ्तार करने के निर्देश दिए गए।
गांधीजी विरोधी कई हिंदू महासभा सदस्यों को गिरफ्तार किया गया और उनके घरों की तलाशी ली गई, लेकिन कोई महत्वपूर्ण वस्तु बरामद नहीं हुई। कई अन्य लोगों को गिरफ्तार किया गया। ये सभी आरएसएस या हिंदू महासभा के कार्यकर्ता थे।
नागरवाला द्वारा 21 से 30 जनवरी के बीच बम कांड में की गई जांच की लाई ने कड़ी आलोचना की थी।
25.83 लाल ने तर्क दिया कि जब मोरारजी देसाई ने करकरे के साथ सावरकर का नाम लिया था और नागरवाला को यह भी बताया था कि महात्मा गांधी की हत्या की साजिश रची गई थी, तो उन्हें अपना ध्यान महाराष्ट्रीयन ब्राह्मणों, सावरकर और उनके अनुयायियों पर केंद्रित करना चाहिए था, जो अधिकतर पुणे और अहमदनगर में थे, न कि पंजाबियों के बारे में उनके बेबुनियाद दावे और अपहरण के सिद्धांत पर। उन्होंने नागरवाला की इस बात के लिए भी आलोचना की कि उन्होंने अपनी अपराध रिपोर्ट में अपहरण के सिद्धांत का बिल्कुल भी उल्लेख नहीं किया था और वे चाहते थे कि आयोग इससे यह

निष्कर्ष निकाले कि अपराध रिपोर्ट में जो कहा गया था वह तथ्यों का सही चित्रण नहीं था और यह एक झूठा दस्तावेज था। अपराध रिपोर्ट में अपहरण के सिद्धांत का उल्लेख न होने से यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि अपराध रिपोर्ट एक झूठा दस्तावेज है। अपराध रिपोर्ट लिखे जाने तक महात्मा गांधी की हत्या हो चुकी थी, इसलिए नागरवाला जिस सिद्धांत पर काम कर रहे थे, वह गलत साबित हो चुका था, भले ही वह पूरी तरह से निराधार न हो। तब तक उन्हें हत्या की जांच के लिए दिल्ली पुलिस का विशेष अधिकारी नियुक्त किया जा चुका था। उस समय नागरवाला द्वारा अब तक अपनाई गई उस अप्रत्यक्ष जांच दिशा का उल्लेख करना अनावश्यक था, जिसे उन्होंने शायद किसी कारणवश गलत तरीके से अपनाया था। बम हमले के मामले की जांच में उनकी तमाम नाकामियों और वास्तविक हत्या से पहले हत्या की साजिश का पर्दाफाश करने के बावजूद, यह कहना होगा कि नागरवाला ने गांधी हत्याकांड की बहुत ही कुशल जांच की और एक ऐसा मामला खड़ा करने में कामयाब रहे जो विशेष न्यायालय में बचाव पक्ष के वकीलों के कड़े हमलों का सामना कर सका।
25.104 आयोग इस बात पर जोर देना चाहता है कि हत्या की साजिश और अपहरण की साजिश के सिद्धांतों में अंतर यह था कि पहले मामले में जोर पूना के सावरकरवादियों पर होता जो राजनीतिक हत्या में विश्वास करते थे, और दूसरे मामले में जोर मिश्रित भीड़ पर हो सकता था और होता, जैसा कि वास्तव में वर्तमान मामले में था। 25.106 इन सभी तथ्यों को एक साथ देखने पर सावरकर और उसके समूह द्वारा हत्या की साजिश के अलावा कोई भी अन्य सिद्धांत पूरी तरह से खारिज हो जाता है। आयोग की राय में, नागरवाला इसलिए चूक गया क्योंकि शायद उसे उन मुखबिरों और संपर्कों से गलत जानकारी मिली

जिन पर उसे पूरा भरोसा करने का अधिकार था, या फिर उसने कोई गलत निष्कर्ष निकाला था। बेशक, वह कहता है कि यह केवल एक सूचना थी जिसकी पुष्टि होनी बाकी थी; लेकिन क्या इन परिस्थितियों में इसे इतनी गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता थी?
25 114 बंबई में जांच प्रक्रियाओं में एक और चूक का दोष उचित रूप से राणा पर लगाया जा सकता है। वह 28 जनवरी को पुणे पहुंचे और उनके साक्ष्य से पता चलता है कि उन्होंने पुणे के डीएसपी को फोन किया और 29 तारीख के लिए इंस्पेक्टर अंगारकर को बुलाया। राव साहब गुरतू भी वहां मौजूद थे और प्रदर्शनी 30 के अनुसार, कामते को राणा के पत्र में, आप्टे, गोडसे और बैज के नाम 'आर.एस. गुरतू से ज्ञात' थे। आयोग के समक्ष अपनी गवाही में, राणा ने कहा कि पूछे जाने पर गुरतू ने अग्रानी और हिंदू राष्ट्र के संपादक और मालिक तथा शास्त्र भंडार के मालिक के नाम क्रमशः गोडसे, आप्टे और बैज बताए और उन्होंने ये नाम स्मृति से बताए। यह इस तथ्य का संकेत है कि 28 तारीख को भी मदनलाल के साथियों का पता लगाने का कोई प्रयास नहीं किया गया और न ही बैज को गिरफ्तार करने का कोई प्रयास किया गया, जिसकी नागरवाला तलाश कर रहे थे। तब तक मदनलाल का बयान, प्रदर्शनी एक व्यक्ति राणा के साथ था, भले ही वह नागरवाला के साथ न हो। राणा को चाहिए था कि वह दिल्ली और बॉम्बे दोनों को उनके बारे में चेतावनी दे और हत्या के बाद की तरह ही सतर्क पुलिसकर्मियों और सुरक्षाकर्मियों को दिल्ली भेजे। भविष्य के हत्यारे खुलेआम घूम रहे थे और पुणे की तरफ से दिल्ली को चेतावनी देने या निवारक उपाय करने का कोई प्रयास नहीं किया गया। बेशक, 28 जनवरी तक आप्टे और गोडसे दिल्ली में थे और अहमदनगर का रहने वाला करकरे भी दिल्ली में था। इन दोनों की तस्वीरें भी दिल्ली भेजी जा सकती थीं। इस दिशा में कुछ प्रयास

किया जाना चाहिए था, भले ही देर हो गई हो। लेकिन पुलिस यह अनुमान नहीं लगा सकी कि हत्या 30 तारीख को होगी।
अपहरण की साजिश
25.119 महात्मा गांधी के अपहरण की साजिश का सिद्धांत, जिसे विभिन्न रूप से काल्पनिक, बेतुका और यहां तक कि अविश्वसनीय भी बताया गया है, को कोटवाल द्वारा सम्मानजनक बनाने का प्रयास किया गया। उन्होंने तर्क दिया कि यदि नागरवाला ने अपनी जांच के दौरान महात्मा गांधी के अपहरण की साजिश का खुलासा किया और सूचना की सत्यता या असत्यता की जांच करने का प्रयास किया, तो इसमें नागरवाला की कोई गलती नहीं थी।
25.120 नागरवाला ने आयोग के समक्ष अपने बयान में कहा है कि एक पुलिस अधिकारी के रूप में यदि उन्हें महात्मा गांधी का अपहरण करने की योजना बना रहे किसी गिरोह के बारे में जानकारी मिलती, तो वे मामले की गहन जांच करने के लिए कर्तव्यबद्ध होते। उन्होंने आगे कहा कि उनका दृष्टिकोण निष्पक्ष था और वे किसी भी बात से ग्रस्त नहीं थे। आयोग द्वारा अपहरण के सिद्धांत पर उनके गंभीर विश्वास के बारे में पूछे जाने पर, उनका उत्तर था कि वे ऐसा मानते हैं और उन्होंने कहा कि एक पुलिस अधिकारी अपनी पसंद-नापसंद को अपनी जांच में बाधा नहीं बनने देता।
25.122 कोटवाल का कहना है कि इस बात के प्रमाण मौजूद हैं कि अन्य लोगों ने भी इस सिद्धांत को मान्यता दी थी। उन्होंने प्रो. जैन के साक्ष्य का हवाला दिया, जिन्होंने कहा था कि मदनलाल ने उनसे कहा था कि वह एक प्रार्थना सभा में बम फेंकेंगे और इस प्रकार अराजकता पैदा करेंगे जिससे वे गांधीजी पर 'कब्जा' कर सकेंगे।

25.124 अपने अर्ध-सरकारी पत्र, एक्स. 8, दिनांक 30-1-1948 में नागरवाला ने संजीवी को लिखा कि बड़ी संख्या में लोगों ने मुसलमानों को बाहर निकालने के लिए हाथ मिला लिया था और उस उद्देश्य के लिए बमों सहित सभी प्रकार के हथियार एकत्र कर लिए थे, और उनकी राय थी कि इस गिरोह को लगता था कि दिल्ली पुलिस को जीतना और महात्मा गांधी का अपहरण करना आसान होगा।
25.125 तत्कालीन पुलिस महानिरीक्षक कामते ने जब इस बारे में बात की तो उन्होंने कहा, 'अगर मेरे पास वह जानकारी होती जो प्रोफेसर जैन ने गृह मंत्री को दी थी और मंत्री ने महात्मा गांधी के अपहरण के सिद्धांत के संबंध में नागरवाला को दी थी, तो मैं उस सिद्धांत पर काम करता।' लेकिन आयोग की जांच के अनुसार, मंत्री ने अपहरण के संबंध में नागरवाला को कभी कोई जानकारी नहीं दी।
25.126 मोरारजी देसाई से जब इस बिंदु पर पूछताछ की गई तो उन्होंने कहा कि जैन ने उन्हें अपहरण के बारे में सूचित नहीं किया था, अपहरण का विचार काल्पनिक था लेकिन अपहरण का सिद्धांत भी जांच के मार्ग को बाधित नहीं कर सकता था।
25.129 यहां तक कि संजीव ने भी अपहरण के इस सिद्धांत पर कोई आपत्ति नहीं जताई थी। नागरवाला ने गवाही दी कि उन्होंने राणा को इस सिद्धांत के बारे में बताया और डी.आई.बी. को लंबी दूरी का फोन किया गया, जिन्हें अपहरण का सिद्धांत दोहराया गया, लेकिन उन्होंने ऐसा कुछ नहीं कहा जिससे यह लगे कि उन्हें यह सिद्धांत बेतुका लगा हो, न ही उन्होंने इसका खंडन किया और न ही इसकी निंदा की। नागरवाला ने कहा है कि अपहरण के सिद्धांत को लेकर सभी संतुष्ट थे। राणा ने भी कहा कि जब संजीव को लंबी दूरी के फोन पर अपहरण का सिद्धांत बताया गया, तो उन्होंने इस सिद्धांत के

विरोध में कुछ नहीं कहा। नागरवाला ने संजीव से यह भी कहा कि महात्मा गांधी की सुरक्षा व्यवस्था को मजबूत किया जाना चाहिए। 25.132 बंबई के पुलिस महानिरीक्षक कामते ने कहा कि उन्हें इस बात की कोई जानकारी नहीं थी कि षड्यंत्रकारियों का इरादा महात्मा गांधी का अपहरण करना था। उनके विचार में यह एक मनगढ़ंत सिद्धांत था।
25.134 जांच प्रक्रिया का यह पहलू, यानी अपहरण की साजिश, मदनलाल द्वारा प्रो. जैन को दी गई और मोरारजी देसाई के माध्यम से नागरवाला को बताई गई उस निश्चित जानकारी को नजरअंदाज करता है जिसमें कहा गया था कि मदनलाल और उसके साथी महात्मा गांधी नामक एक महान नेता की हत्या करने जा रहे थे, उनके वित्तपोषक करकरे ने अहमदनगर में एक पार्टी बनाई थी जो हिंसा में लिप्त थी, पार्टी के पास हथियारों का जखीरा था और अंत में सावरकर ने मदनलाल की पीठ थपथपाकर उसके कार्यों की सराहना की थी। इसके अलावा, यदि जैन का नाम नागरवाला को पता चल जाता, तो बॉम्बे पुलिस के प्रशिक्षित और अनुभवी पुलिस अधिकारियों द्वारा की गई पूछताछ से हत्या के सिद्धांत के पक्ष में पलड़ा भारी हो जाता और अपहरण का सिद्धांत कमजोर पड़ जाता, या शायद पूरी तरह खारिज ही हो जाता। जैन की अपना नाम उजागर न करने की इच्छा को समझा जा सकता है, लेकिन उन्हें किसी अन्य तरीके से सुरक्षा प्रदान की जा सकती थी और नागरवाला को भी उनका नाम गुप्त रखने के लिए कहा जा सकता था। इसके अलावा, अगर जैन मदनलाल से और अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए दिल्ली जाने को उत्सुक थे, जिससे उसकी पहचान उजागर हो जाती, तो उन्हें नागरवाला के सामने पेश होने से डरना नहीं चाहिए था।
25.135 जैसा कि पहले ही उल्लेख किया जा चुका है, दोनों सिद्धांतों के परिणामों में एक और बड़ा अंतर यह था। अपहरण की

साजिश में, संदिग्ध प्रतिभागियों में बड़ी संख्या में पंजाबी शामिल थे, जिनमें से कुछ के नाम अपराध रिपोर्ट और नागरवाला द्वारा संजीवी को लिखे पत्र में दिए गए हैं; जबकि हत्या की साजिश के सिद्धांत की जांच में, संदिग्ध प्रतिभागी अलग थे, अर्थात् पुणे और बॉम्बे के महाराष्ट्रीयन समुदाय के एक विशेष वर्ग से आने वाले लोग। बेशक, उनकी संख्या उन लोगों से कहीं अधिक हो सकती थी जिन पर मुकदमा चलाया गया था। आयोग के समक्ष मौजूद साक्ष्यों के आधार पर, हत्या की साजिश के मामले में जोर अपेक्षाकृत छोटे महाराष्ट्रीयन समूह पर होगा, न कि बड़ी संख्या में लोगों पर, जिनमें सावरकरवादी और पंजाबी हिंदू शामिल थे, जो देश के विभाजन के बाद के परिणामों के कारण असंतुष्ट थे। दूसरे शब्दों में, हत्या के सिद्धांत की स्थिति में, जांच की ऊर्जा असंतुष्ट, विरोधी महाराष्ट्रीयन सावरकरवादियों की ओर निर्देशित की गई होगी, जो महात्मा गांधी के साथ मजबूत आदर्शवादी और मौलिक मतभेदों के कारण गांधीवादी खतरे को हमेशा के लिए समाप्त करने में संकोच नहीं करेंगे, जो उनके विचार में धर्मनिरपेक्ष भारत के विपरीत एक हिंदू हिंदुस्तान सुनिश्चित करने का एकमात्र तरीका था।
25.136 आयोग के समक्ष प्रस्तुत तथ्यों के आधार पर यह निष्कर्ष निकालना संभव नहीं है कि अपहरण के सिद्धांत को सम्मानजनक बनाने का प्रयास, परिस्थितियों में, सफल हुआ है।
सावरकर के निजी कर्मचारियों से पूछताछ—
25.161 वी.डी. सावरकर के अंगरक्षक अप्पा रामचंद्र कासर का बयान (प्रदर्श संख्या 277), जिसे बॉम्बे पुलिस ने 4 मार्च 1948 को दर्ज किया था, दर्शाता है कि 1946 में भी आप्टे और गोडसे अक्सर सावरकर से मिलने आते थे और करकरे भी कभी-कभी उनसे मिलने जाते

थे। जिस समय भारत के विभाजन पर चर्चा चल रही थी, उस दौरान ये तीनों सावरकर से मिलने जाते थे और उनसे विभाजन के मुद्दे पर चर्चा करते थे। सावरकर आप्टे और गोडसे से कहते थे कि कांग्रेस हिंदुओं के हित में हानिकारक तरीके से काम कर रही है और उन्हें अग्रानी के माध्यम से कांग्रेस, महात्मा गांधी और उनकी तानाशाही नीति के खिलाफ प्रचार करना चाहिए।
25.162 अगस्त 1947 में जब सावरकर एक बैठक के सिलसिले में पूना गए, तो गोडसे और आप्टे हमेशा सावरकर के साथ थे और उनके साथ हिंदू महासभा की भविष्य की नीति पर चर्चा कर रहे थे, सावरकर ने उनसे कहा कि वे बूढ़े हो रहे हैं और उन्हें काम जारी रखना होगा। 25.163 अगस्त 1947 की शुरुआत में, 5 या 6 तारीख को, दिल्ली में अखिल भारतीय हिंदू सम्मेलन हुआ और सावरकर, गोडसे और आप्टे एक साथ विमान से गए। सम्मेलन में कांग्रेस की नीतियों की कड़ी आलोचना की गई। 11 अगस्त को सावरकर, गोडसे और आप्टे तीनों विमान से बंबई लौट आए।
25.164 नवंबर 1947 में माहिम में अखिल भारतीय राज्य हिंदू महासभा का एक सम्मेलन हुआ था और ग्वालियर के डॉ. परचुरे और सूर्य देव ने भी उस बैठक में भाग लिया था।
25.165 दिसंबर 1947 के मध्य में, बैज सावरकर का हालचाल पूछने आए, लेकिन उनसे मिल नहीं सके। लेकिन दो-तीन दिन बाद वे फिर आए और सावरकर से 15 मिनट बात की। करकरे, आप्टे और गोडसे भी उसी महीने में दो-तीन बार उनसे मिले।
25.166 लगभग 13 या 14 जनवरी 1948 को, करकरे एक पंजाबी युवक के साथ सावरकर के पास आए और उन्होंने सावरकर से लगभग 15 या 20 मिनट तक बातचीत की। लगभग 15 या 16 जनवरी 1948 को, आप्टे और गोडसे ने रात 9:30 बजे सावरकर से मुलाकात की। लगभग एक सप्ताह बाद, संभवतः

23 या 24 जनवरी 1948 को, आप्टे और गोडसे फिर से सावरकर के पास आए और सुबह लगभग 10 या 10:30 बजे उनसे लगभग आधे घंटे तक बातचीत की। 25.167 शाम करीब 5.45 बजे जब महात्मा गांधी की हत्या की खबर रेडियो पर प्रसारित हुई, तो कासर ने जाकर सावरकर को सूचना दी। सावरकर ने कहा कि यह बुरी खबर है और फिर चुप रहे। उसी रात 2 बजे दामले और कासर दोनों को गिरफ्तार कर सी.आई.डी. कार्यालय लाया गया। कासर ने कहा कि उन्हें हत्या के बारे में कुछ भी पता नहीं था।
25.168 सावरकर के सचिव गजानन विष्णु दामले से भी 4 मार्च 1948 को बॉम्बे पुलिस ने पूछताछ की। उन्होंने बताया कि वे अग्रानी अखबार के एन.डी. आप्टे को पिछले चार वर्षों से जानते थे। आप्टे ने अहमदनगर में एक राइफल क्लब शुरू किया था और युद्ध के दौरान मानद भर्ती अधिकारी भी थे। आप्टे अक्सर सावरकर के घर आते थे और कभी-कभी गोडसे के साथ भी आते थे। जब अग्रानी अखबार से जमानत मांगी गई थी, तब सावरकर ने आप्टे और गोडसे को अखबार के लिए 15,000 रुपये उधार दिए थे। वह अखबार बंद हो गया और 'हिंदू राष्ट्र' नाम से एक नया अखबार शुरू किया गया। सावरकर इसके निदेशकों में से एक थे और आप्टे और गोडसे प्रबंध एजेंट थे। वे वी.आर. करकरे को भी जानते थे, जो लगभग तीन वर्षों से अहमदनगर में हिंदू महासभा के कार्यकर्ता थे और कभी-कभी सावरकर से मिलने आते थे। बैज भी पिछले तीन वर्षों से उनके परिचित थे। वह भी सावरकर से मिलने आते थे।
25.169 जनवरी 1948 के पहले सप्ताह में, करकरे और एक पंजाबी शरणार्थी लड़का सावरकर से मिलने आए और उन दोनों ने सावरकर के साथ लगभग आधे घंटे या 45 मिनट तक साक्षात्कार किया। उनमें से कोई भी फिर से सावरकर से मिलने नहीं आया।

25.170 आप्टे और गोडसे जनवरी 1948 के मध्य में देर रात सावरकर से मिलने आए थे। बैज ने आखिरी बार दिसंबर 1947 के आखिरी सप्ताह में सावरकर से मुलाकात की थी। डॉ. मूंजे जैसे कई प्रमुख हिंदू महासभा नेता सावरकर से मिलने आते थे।
25.172 जब रेडियो पर खबर की घोषणा हुई, दामले तुरंत सावरकर के पास रिपोर्ट करने गए, जिन्होंने कहा कि वे अगली सुबह प्रेस को बयान देंगे। उसी रात दामले और कासर को गिरफ्तार कर लिया गया। 25.173 इन दोनों गवाहों के बयानों से पता चलता है कि आप्टे और गोडसे बंबई में और सम्मेलनों में सावरकर के अक्सर आगंतुक थे और हर बैठक में वे सावरकर के साथ मौजूद थे। अगस्त 1947 में वे बंबई से दिल्ली और दिल्ली से बंबई तक दोनों यात्राओं में उनके साथ थे। इस साक्ष्य से यह भी पता चलता है कि करकरे भी सावरकर के परिचित थे और अक्सर उनसे मिलने आते थे। बैज भी अक्सर सावरकर से मिलने आते थे। डॉ. परचुरे भी उनसे मिलने आते थे। इन सभी बातों से यह स्पष्ट होता है कि महात्मा गांधी की हत्या में शामिल लोग किसी न किसी समय सावरकर सदन में एकत्रित होते थे और कभी-कभी सावरकर के साथ लंबी बातचीत भी करते थे।
जांच से करकरे और आप्टे के बीच संबंध का पता चलता है—
25.174 इंटेलिजेंस ब्यूरो फाइल संख्या 13/HA(R)/59-11, प्रदर्श 224-A में कुछ महत्वपूर्ण और खुलासा करने वाले दस्तावेज हैं। इस फाइल के पृष्ठ 11 पर जी.एस. चौबल, जो सी.आई.डी. के उप पुलिस अधीक्षकों में से एक थे, द्वारा 3-2-1948 को लिखा गया एक अग्रेषण पत्र संख्या C/3 है। यह पत्र पुणे स्थित डी.आई.जी., सी.आई.डी. के कार्यालय में कार्यरत थे और इसकी एक प्रति गृह मंत्रालय में एम.के. सिन्हा, उप निदेशक, आई.बी. को भी भेजी गई थी। इस पत्र के साथ एक दस्तावेज संलग्न था जिसमें करकरे

के रिश्तेदारों और सहयोगियों की सूची और उनका विवरण दिया गया था। नंबर 10 पर स्थित मित्रों और सहयोगियों में पुणे निवासी एन.डी. आप्टे भी थे। यह पत्र 6 फरवरी को इंटेलिजेंस ब्यूरो में प्राप्त हुआ और एम.के. सिन्हा ने इसे देखा। सिन्हा, उप निदेशक, 9 फरवरी, 1948। महत्वपूर्ण पत्रों की प्राप्ति में ये देरी आश्चर्यजनक होने के साथ-साथ जांच की एक असामान्य विशेषता भी नहीं है।
25. 175 अगला दस्तावेज़ पृष्ठ 13 पर है और चौबल द्वारा दिल्ली के पुलिस महानिरीक्षक को संबोधित है, जिसकी एक प्रति भारत सरकार के सूचना एवं सुरक्षा उप निदेशक को भी भेजी गई है। यह 1 फरवरी 1948 का है। इसमें कहा गया है कि चार हेड कांस्टेबलों को महाराष्ट्रियों की गतिविधियों पर नज़र रखने के लिए भेजा जा रहा है, विशेष रूप से एन.डी. आप्टे पर, जिन्हें एन.वी. गोडसे का अभिन्न अंग माना जाता है और मदनलाल के बयान में पूना के हिंदू राष्ट्र के स्वामी के रूप में संदर्भित व्यक्ति भी हैं। उनका कर्तव्य होगा कि वे इन व्यक्तियों की जानकारी दिल्ली पुलिस को दें ताकि आगे कोई और हिंसा न हो। भेजे गए कांस्टेबल थे— हेड कांस्टेबल कुलकर्णी, कांस्टेबल महाजन, हेड कांस्टेबल जाधव और हेड कांस्टेबल कदम।
पृष्ठ 21 पर 3 फरवरी 1948 का एक अन्य पत्र, जो पुणे के सी.आई.डी. के डी.आई.जी. द्वारा बॉम्बे के पुलिस महानिरीक्षक को लिखा गया था, जिसकी प्रतियां नई दिल्ली के उप निदेशक, आई.बी. और बॉम्बे के पुलिस उपायुक्त को भी भेजी गई थीं, आई.बी. कार्यालय में 9 फरवरी 1948 को प्राप्त हुई थीं। इस पत्र के साथ संलग्न रिपोर्ट 3 फरवरी 1948 की है और इसमें पुणे और लोनावला (पुणे के पास) में की गई कार्रवाई का विवरण है, जिससे पता चलता है कि पुलिस ने जांच

में गंभीरता से रुचि लेना शुरू कर दिया था। यदि करकरे और एन.डी. आप्टे के साथ उनके संबंध के बारे में जानकारी और करकरे और आप्टे दोनों की तस्वीरें सी.आई.डी. के डी.आई.जी. के पास थीं, तो यह आश्चर्य की बात है कि किसी ने पहले इसकी मांग क्यों नहीं की और यह और भी आश्चर्य की बात है कि राणा ने अपने कार्यालय को कम से कम करकरे की तस्वीर, जिसका नाम ज्ञात था, और उसके सहयोगियों के नाम बॉम्बे के नागरवाला या दिल्ली के संजीवी को भेजने का निर्देश क्यों नहीं दिया। नागरवाला आसानी से पुणे स्थित डीआईजी, सीआईडी के कार्यालय से भी यह जानकारी प्राप्त कर सकते थे, जो कि दिल्ली स्थित डीआईबी पर भी समान रूप से लागू होता है, जो उस समय पुलिस महानिरीक्षक भी थे। यदि एन.एम. कामते और आर.एन. बनर्जी के बयान में दिए गए सुझाव के अनुसार पुणे से हेड कांस्टेबलों को पहले ही भेज दिया गया होता, तो शायद इस भयावह घटना को टाला जा सकता था। बेशक, यह केवल एक 'संभावना' है।
25.181 उस फाइल के विभिन्न पृष्ठों पर उन अलग-अलग व्यक्तियों का उल्लेख है जिन्हें गिरफ्तार किया गया और पूछताछ की गई, लेकिन पृष्ठ 52 पर धारा 164 दंड प्रक्रिया के तहत मजिस्ट्रेट के समक्ष देवेंद्र कुमार का बयान है, जो मूल रूप से गोवा निवासी था और मार्च 1937 में हिंदू राष्ट्र दल में शामिल हुआ था। उसने बताया कि उसकी मुलाकात दल के कप्तान एन.वी. गोडसे से हुई थी। बयान से पता चलता है कि उसे बम बनाना, साइकिल और कारों से बंदूकें चलाना और पिस्तौल व रिवॉल्वर चलाना सिखाया गया था। वह दूसरों को भी प्रशिक्षण दे रहा था। अन्य बातों के अलावा उसने खुलासा किया कि महात्मा गांधी, नेहरू, सरदार पटेल, मौलाना आजाद और बलदेव सिंह को मारने की योजना बनाई गई थी क्योंकि वे राष्ट्र

दल के रास्ते में बाधा बन रहे थे। पार्टी इस कार्यक्रम को अंजाम देने के मौके का इंतजार कर रही थी। फिर उसने आगे कहा:—
'हम जनता के मन में इन नेताओं के प्रति नफरत पैदा कर रहे थे और योजना यह थी कि जैसे ही जनता तैयार हो जाए, नेताओं को एक-एक करके मार दिया जाए... जब मैंने गांधीजी के साथ हुई दुखद घटना के बारे में सुना, तो मैं व्याकुल हो गया। मैंने सावरकर को एक पत्र लिखकर धमकी दी कि अगर उन्होंने कार्यक्रम के बाकी हिस्सों को अंजाम देने से नहीं रोका, तो मैं इस साजिश का पर्दाफाश कर दूंगा...'
25.182 महात्मा गांधी की हत्या की साजिश रचने वालों के नामों में उन्होंने देश पांडे, आप्टे, गोडसे, ए. चव्हाण, मोदक, जोग, दामले और कासर (क्रमशः सावरकर के सचिव और अंगरक्षक), केसकर, जोशी, जोगुलकर और चंद्रशेखर अय्यर के नाम शामिल किए। उन्होंने बम निर्माताओं की एक सूची भी दी, जिनमें पुणे के नारायणपेठ निवासी डी.आर. बैज भी शामिल थे। इस बयान का अपराध के संदर्भ में भले ही कोई महत्व न हो, लेकिन इससे यह जरूर पता चलता है कि हत्या के बाद देशभर की पुलिस सक्रिय हो गई थी। देवेंद्र कुमार से उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर में मजिस्ट्रेट द्वारा पूछताछ की गई और जांच बनारस और लखनऊ के अधिकारियों द्वारा की गई। देवेंद्र कुमार को दिल्ली लाया गया और वहां पुलिस ने उनसे पूछताछ की। उनके बयान से हिंदू महासभा और राष्ट्र दल की कार्यप्रणाली की अच्छी जानकारी का पता चलता है। बयान में यह भी बताया गया है कि सावरकर समूह के प्रमुख कार्यकर्ताओं में कासर, एन.डी. आप्टे, एन.वी. गोडसे, करकरे और कई अन्य लोग शामिल थे, जिनके नाम यहां प्रासंगिक नहीं हैं। बयान में बारसी में हुई हिंदू महासभा की एक बैठक का भी जिक्र है, जहां नाथूराम गोडसे ने एक

बेहद जोशीला भाषण दिया और कांग्रेस सरकार के खिलाफ 'मौलाना गांधी मुर्दाबाद', 'गांधीवाद मुर्दाबाद' जैसे बेहद आपत्तिजनक नारे लगाए। गोडसे ने कांग्रेस से लड़ने के लिए हथियार और गोला- बारूद इकट्ठा करने की वकालत भी की और मुख्य निशाने पर 'मौलाना गांधी', पंडित जवाहरलाल नेहरू, सरदार पटेल, मौलाना आजाद और बलदेव सिंह थे। यह घटना जोगेश्वरी मंदिर में हुई हिंदू राष्ट्र दल की बैठक में हुई, जिसमें गोडसे, आप्टे, करकरे, कासर और कई अन्य लोग मौजूद थे।

कपूर आयोग की रिपोर्ट का अध्याय XXVI आयोग के कार्यक्षेत्र से संबंधित निष्कर्षों पर चर्चा करता है। इस अध्याय में आयोग के सभी निष्कर्षों का विस्तार से वर्णन किया गया है, लेकिन चूंकि मैंने जांचों को विस्तार से प्रस्तुत किया है, इसलिए कुछ महत्वपूर्ण बिंदुओं को छोड़कर सभी विवरणों में दोबारा जाने की आवश्यकता नहीं है।
26.3 पुणे के निम्नलिखित सज्जनों को पूर्व सूचना प्राप्त होना आवश्यक माना जाना चाहिए: बलुकाका कनितकर, एस.आर. भागवत, आर.के. खादिलकर, संविधान सभा सदस्य केशवराव जेधे और जी.वी. केतकर। इस श्रेणी में एन.वी. गाडगिल को भी शामिल किया जा सकता है, जिन्हें जेधे ने कुछ जानकारी दी थी, जो अस्पष्ट भाषा में थी और इसलिए लगभग नगण्य है। इन सज्जनों के अलावा, बॉम्बे के बैरिस्टर पुरुषोत्तमदास त्रिकमदास ने गवाही दी है कि एक व्यक्ति उनके पास आया, जिसका नाम उन्हें याद नहीं है, और उसने उन्हें महात्मा गांधी के जीवन को खतरे के बारे में बताया। त्रिकमदास उसे बी.जी. खेर और फिर मोरारजी देसाई के पास ले गए, जिन्हें इसकी कोई याद नहीं है। कांजी द्वारकादास ने भी बी.जी. खेर के पास मौजूद कुछ जानकारी के बारे में साक्ष्य दिया है, लेकिन आयोग उनकी गवाही से अधिक लाभ प्राप्त करने में असमर्थ है।
26.4 यदि 'षड्यंत्र' शब्द को उसके तकनीकी अर्थ में पढ़ा जाए, तो बिरला हाउस में बम विस्फोट से पहले केवल प्रोफेसर जैन और उनके मित्र अंगद सिंह और प्रोफेसर याजनिक को ही षड्यंत्र की जानकारी थी, और बम विस्फोट के बाद जी.वी. केतकर को भी यह जानकारी प्राप्त हुई। अन्य लोगों के बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि उन्हें षड्यंत्र की कोई जानकारी थी। लेकिन प्रोफेसर जैन को नाथूराम

गोडसे के बारे में कोई जानकारी नहीं थी, जबकि जी.वी. केतकर को यह जानकारी थी।
26.5 दूसरे प्रश्न के संबंध में आयोग ने अध्याय 'उप-नाम' जी.वी. केतकर और बलुकाका कनितकर, अर्थात् संदर्भ की पहली शर्त (क) के अंतर्गत चर्चा में पाया है कि जी.वी. केतकर, जिनका नाम संदर्भ की पहली शर्त में विशेष रूप से उल्लेख किया गया है, को अपने स्वयं के कथन के अनुसार महात्मा गांधी के जीवन को खतरे की जानकारी थी, यह जानकारी थी कि नाथूराम गोडसे उनकी हत्या करने के लिए दृढ़ संकल्पित था और महात्मा गांधी की हत्या की साजिश की भी जानकारी थी जिसमें नाथूराम गोडसे के अलावा अन्य प्रतिभागी भी थे, जैसे बैज और आप्टे।
कार्यक्षेत्र की शर्तें (सी)
26.76 इस बात के भी प्रमाण हैं कि अधिकतर पंजाबियों का एक समूह मुसलमानों को देश से निकालने और उन्हें पाकिस्तान जाने के लिए मजबूर करने के उद्देश्य से एकजुट हुआ था। इनमें शेर-ए-पंजाब होटल के अवतार सिंह, जिन्हें हिरासत में लिया गया था, बलराज मेहता, सोमनाथ कपूर और एक चव्हाण शामिल थे, जिन्हें भी हिरासत में लिया गया था। उनके अधीन कई अन्य पंजाबी, सावरकर के अनुयायी और आरएसएस के सदस्य थे। उन्हें सैन्य हथियारों और गोला-बारूद तक आसानी से पहुँच प्राप्त थी और उन्हें असंतुष्ट धनी पंजाबियों का समर्थन प्राप्त था। इस समूह में एक अन्य व्यक्ति एन.वी. लिमाये भी थे, जिन्हें ग्रेटर बॉम्बे में बम विस्फोटों के सिलसिले में गिरफ्तार कर हिरासत में लिया गया था। इस प्रकार, एक संगठन था जिस पर बाद में नागरवाला को महात्मा गांधी पर हुए बम विस्फोट में शामिल होने का संदेह हुआ, लेकिन उनकी सांप्रदायिक गतिविधियों की जानकारी पहले ही बॉम्बे स्पेशल

ब्रांच को मिल चुकी थी और उनमें से कुछ को हिरासत में लिया गया था और अन्य की गतिविधियों पर नजर रखी जा रही थी। इस प्रकार, बॉम्बे में भी एक मुस्लिम विरोधी संगठन था जिसका उद्देश्य मुसलमानों को देश से निकालना था; उन्होंने बम समेत हर तरह के हथियार जमा कर रखे थे, यहाँ तक कि आईएनए के पूर्व कर्नल मोहन सिंह पर भी इसमें शामिल होने का संदेह जताया गया था (नागरवाला ने यह भी दावा किया था कि इस समूह ने उत्तर प्रदेश प्रांतीय विधानसभा के अध्यक्ष पुरुषोत्तमदास टंडन से संपर्क किया था), और यह सब जाने-माने अकाली नेता मास्टर तारा सिंह के कहने पर किया गया था। लेकिन यह साबित नहीं हुआ है कि इस समूह का दिल्ली बम धमाके या गांधी विरोधी प्रचार से कोई संबंध था, और गांधी की हत्या के प्रयास से तो बिल्कुल भी नहीं।
26.102 नागरवाला द्वारा अपनाई गई जांच की गलत दिशा के बावजूद, उन्होंने दूरदर्शिता दिखाते हुए 27 जनवरी को डी.आई.बी. को महात्मा गांधी की सुरक्षा के प्रति सतर्क रहने की चेतावनी दी थी। यह चेतावनी 20 गुना 20 यानी 400 संभावित अपहरणकर्ताओं के आधार पर दी गई थी और यदि दिल्ली में उचित सावधानी बरती जाती, तो हत्यारा शायद सफल नहीं हो पाता या किसी की नजर में नहीं आता। 26.117 बैनर्जी ने सही कहा है कि पुलिस सुस्ती और अक्षमता की दोषी थी और आयोग का मत है कि इन परिस्थितियों में वे सावधानियां बरती जानी चाहिए थीं, जिनका उल्लेख आयोग के समक्ष और पुलिस विशेषज्ञों द्वारा उनके बयानों में किया गया था। लेकिन इसका परिणाम अप्रत्याशित हो सकता है।
26.118 आयोग यह मानने में असमर्थ है कि बॉम्बे पुलिस की विफलता, उनका असहयोग या उनकी गलत जांच पद्धति, दिल्ली पुलिस द्वारा दिखाई गई अक्षमता का कोई औचित्य थी। हालांकि, इससे बॉम्बे

पुलिस को उनकी जांच में खामियों या कठोरता के आरोपों से बरी नहीं किया जा सकता।
26.119 दिल्ली पुलिस की तीन प्रमुख कमियाँ महात्मा गांधी को बिना किसी दखल के सुरक्षा प्रदान करने में विफलता, बॉम्बे पुलिस को सुरक्षा और निगरानी के लिए नियुक्त करने में विफलता, और 'द हिंदू राष्ट्र' के मालिक की पहचान प्राप्त करने और पूना पुलिस को उसका और उसके सहयोगियों का पता लगाने के लिए नियुक्त करने में विफलता थीं।
निष्कर्षों का सारांश
26.120 तीनों संदर्भ बिंदुओं पर आयोग के निष्कर्ष निम्नलिखित हैं:—
कार्यक्षेत्र की शर्तें (ए)—
(i) पूना निवासी जी.वी. केतकर को जीवन को खतरे के बारे में पूर्व सूचना थी।
(ii) महात्मा गांधी के बारे में अक्टूबर या नवंबर 1947 में। (ii) उन्हें नाथूराम गोडसे के षड्यंत्र की जानकारी थी, जो उन्होंने उन्होंने 23 जनवरी 1948 के आसपास डी.आर. बैज के साथ हुई बातचीत से यह जाना। (iii) बैज से मिलने से पहले तक उन्हें यह नहीं पता था कि आप्टे और बैज
महात्मा गांधी की हत्या की साजिश में शामिल थे; लेकिन वह अवश्य ही
नाथूराम गोडसे की संलिप्तता के बारे में उसे पता था क्योंकि नाथूराम ने उसे बताया था
अक्टूबर या नवंबर में उसकी हत्या करने की मंशा या योजना के बारे में बताया गया था।
महात्मा।

यह आयोग का प्रथम संदर्भ बिंदु पर निष्कर्ष है।
26.121 दूसरे बिंदु (ख) पर इसके निष्कर्ष इस प्रकार हैं:— कार्यक्षेत्र (बी)—
(i) जी.वी. केतकर ने सरकार को कोई सूचना नहीं दी।
(ii) विशेष रूप से, केतकर ने स्वर्गीय को कोई सूचना नहीं दी।
बी.जी. खेर ने स्वर्गीय बलुकाका कानिटकर के माध्यम से यह दावा किया था।
यह स्थापित नहीं हुआ है। बलुकाका कनितकर ने यह जानकारी दी। महात्मा गांधी और अन्य शीर्ष नेताओं के जीवन को खतरा कांग्रेस, अपनी मर्जी से और अपनी इच्छा से। 26.122 निष्कर्ष आयोग के तीसरे कार्यकाल के लिए, अर्थात् (सी) निम्नलिखित हैं: संदर्भ की शर्तें (सी)—
(i) बंबई सरकार को दी गई सूचना के आधार पर,
और विशेष रूप से बी.जी. खेर के संबंध में, जानकारी प्राप्त करने का कोई प्रयास नहीं किया गया।
यह सिद्ध हो चुका है कि जाँच बॉम्बे सरकार द्वारा की गई थी या बी.जी. खेर द्वारा। या उस सरकार के अधीन किसी भी प्राधिकरण द्वारा।
आयोग की राय में, जानकारी अस्पष्ट और धुंधली थी।
मामला अस्पष्ट और अनिश्चित है, लेकिन इसे संबंधित अधिकारी के पास भेजा जाना चाहिए था।
पुलिस सी.आई.डी. द्वारा विधिवत जांच और पुष्टि की गई है। इसे जोड़ा जाना चाहिए।
यह अत्यधिक अटकलबाजी और अनुमान पर आधारित होगा।
आयोग को यह बताना होगा कि इस जांच का परिणाम क्या होता।

यह उतना ही अनुत्पादक, बांझ और निष्फल हो सकता था जितना कि वह था।
प्रोफेसर जैन द्वारा दी गई निश्चित जानकारी के आधार पर की गई जांच का परिणाम
या मदनलाल का पुलिस को दिया गया इकबालिया बयान। (ii) दिल्ली सचिवालय या आधिकारिक अभिलेखों से या किसी अन्य स्रोत से कोई साक्ष्य नहीं है।
दिल्ली के गवाहों के साक्ष्य से यह साबित होता है कि दी गई जानकारी
बलुकाका कनितकर द्वारा बी.जी. खेर को लिखा गया पत्र भारत सरकार को भेज दिया गया।
अर्थात् सरदार पटेल, बलुकाका कनितकर ने एक बाद के पत्र, प्रदर्शनी 11 में, ऐसा किया।
उनका कहना है कि बी.जी. खेर ने उन्हें बताया था कि उन्होंने यह जानकारी पहुंचा दी थी।
सरदार। लेकिन इस निराधार बयान की पुष्टि भी कहीं नहीं है।
सरदार के निजी सचिव वी. शंकर या आर. एन. बैनर्जी के साक्ष्य
या मणिबेन पटेल के बारे में। मोरारजी देसाई ने कहा था कि सरदार को पहले से ही पता था।
उन्होंने अपने सूत्रों से इसके बारे में जानकारी प्राप्त की। (iii) बलुकाका कनितकर की सूचना न तो किसी को दी गई थी
न तो बंबई सरकार के किसी अधिकारी को और न ही किसी अन्य अधिकारी को
भारत सरकार।
(iv) मोरारजी देसाई का साक्ष्य है कि बलुकाका द्वारा दी गई जानकारी

स्वागत से संबंधित खतरे को ध्यान में रखा गया था और
दाजी जोशी के अभिनंदन पर चर्चा हुई। उस बैठक में श्री खेर
और वी.टी. देहेजिया और मोरारजी देसाई उपस्थित थे। (v) वी. शंकर का साक्ष्य है कि सरदार के पास जो भी जानकारी थी,
महात्मा गांधी के जीवन को खतरे के संबंध में, चाहे यह जानकारी दी गई हो या नहीं,
यह जानकारी उन्हें मोरारजी देसाई द्वारा दी गई थी या उनके स्वयं के स्रोतों से प्राप्त हुई थी।
प्रांतीय सरकार से संवाद किया गया और चर्चा की गई, जिसके अनुसार,
आयोग की राय में, मौजूदा परिस्थितियों में ऐसा करना उचित था। संविधान।
(vi) बिरला हाउस में बरती गई सावधानियां और उनकी पर्याप्तता अध्याय XII के उप-अध्याय (G) और (H) में इस पर चर्चा की गई है। (x) मदनलाल की गिरफ्तारी के बाद दिल्ली पुलिस की जांच नहीं की गई थी।
यह उच्च पेशेवर स्तर का तो था, लेकिन इसमें जांच कौशल और लगन की कमी थी।
जो कि एक प्रशिक्षित पुलिस बल से अपेक्षित होना चाहिए था और विशेषकर किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति के जीवन को खतरे की स्थिति में
महात्मा गांधी ने इस तथ्य के ज्ञान को ध्यान में रखते हुए महात्मा गांधी की हत्या की साजिश की जानकारी मदनलाल को थी गिरफ्तारी के बाद उसे दिल्ली पुलिस के हवाले कर दिया गया। (xi) ऐसा प्रतीत होता है कि पुणे के सी.आई.डी., डी.आई.जी., यू.एच. राणा ने इस बात को नजरअंदाज कर दिया है।

मदनलाल के विस्तृत बयान (उदाहरण 1) का महत्व और उपयोगिता, जिसमें
'हिंदू राष्ट्र' के स्वामी का उल्लेख एक अत्यंत महत्वपूर्ण जानकारी थी।
अगर उस सुराग का पीछा किया जाता तो आप्टे और उनकी पहचान उजागर हो जाती।
अगर गोडसे ने भी थोड़ी और सतर्कता बरती होती, तो क्या वे ऐसा कर पाते?
उन्हें गिरफ्तार किया गया या नहीं, यह अभी भी अनुमान पर आधारित होगा। (xii) यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि नागरवाला को पढ़ने का अवसर नहीं दिया गया।
मदनलाल के बयान (प्रदर्श 1) का अध्ययन करें, और यह आश्चर्यजनक है कि उन्होंने ऐसा क्यों नहीं किया।
उस कथन में कोई रुचि दिखाना और उसे पूरा पढ़ने पर जोर देना
पता लगाओ कि मदनलाल ने क्या खुलासा किया था। यह कार्रवाई बिल्कुल विपरीत है।
हत्या के बाद की उनकी कार्रवाई के साथ, जब उन्होंने मदनलाल को अपने पास बुलाया।
बॉम्बे में उससे पूछताछ की और काफी देर तक पूछताछ की। इसमें कोई संदेह नहीं कि वह वही था।
प्रमुख अन्वेषक और इससे पहले वे जिसे वे कहते हैं, उस पर काम कर रहे थे।
एक जानकारी। हो सकता है कि उनकी पूछताछ पूरक हो।
दिल्ली पुलिस द्वारा जांच की गई, लेकिन मदनलाल के बयान का अध्ययन किया गया।

हत्या के बाद जितनी सहायता मिली, उतनी ही सहायता तब भी मिलनी चाहिए थी। (xiii) वर्तमान जैसे मामले में पुलिस की कार्रवाई करने की शक्तियाँ जहाँ
बॉम्बे पुलिस को हत्या की साजिश की सूचना दी गई थी।
दिल्ली में महात्मा गांधी के बारे में आयोग के समक्ष बहस हो चुकी है।
यह तर्क दिया गया कि ऐसे मामलों में, तत्कालीन गठित बॉम्बे पुलिस,
वह असहाय था और उसके पास जांच करने और कार्रवाई करने की कोई शक्ति नहीं थी। (xiv) साक्ष्य से पता चलता है कि गोडसे और आप्टे अलग-अलग होटलों में ठहरे हुए थे।
छद्म नामों से। जहाँ होटल मालिक को जानने का कोई साधन नहीं था यदि दिए गए नाम झूठे हैं, तो शायद इसका कोई आसान उपाय न हो। लेकिन
जहां, आर्य पथिक आश्रम के मामले की तरह, प्रबंधक, गया
शंकर दुबे, गवाह संख्या 68, को इस बात की जानकारी थी कि आप्टे ने झूठा नाम दिया था और
फिर भी उन्होंने बिना किसी आपत्ति के ऐसा करने की अनुमति दी, कानून बनाया जाना चाहिए
सख्त कानून लागू किए जाने चाहिए और ऐसे मामलों में होटल मालिक को अधिक जुर्माने के लिए उत्तरदायी बनाया जाना चाहिए।
तब दंड मात्र मामूली जुर्माना होगा।
(xv) अधिकारियों द्वारा उठाए गए उपायों पर विचार करते समय यह महत्वपूर्ण तथ्य
यह बात ध्यान में रखनी होगी कि कांग्रेस सरकारें अभी-अभी सत्ता में आई थीं।

कांग्रेस और उसके समर्थकों द्वारा कई वर्षों के संघर्ष के बाद सत्ता हासिल की।
ब्रिटिश सरकार के खिलाफ, जिसमें पुलिस की सख्ती
नागरिक की स्वतंत्रता में हस्तक्षेप ने बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।
कांग्रेस सरकारें अचानक से इसे अपना नहीं सकती थीं या इसकी अनुमति नहीं दे सकती थीं।
पुलिस द्वारा सख्त उपाय अपनाए जाने, उनके द्वारा पीछा किए जाने और
भारत के नागरिकों पर एक तरह से निगरानी रखना, भले ही वे
वे काफी बुरे नागरिक निकले।
शास्त्री भवन, जे.एल. कपूर, नई दिल्ली, जांच आयोग, 30 सितंबर, 1969 - महात्मा गांधी हत्याकांड की साजिश
कपूर आयोग की रिपोर्ट प्रस्तुत होने के साथ ही राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की हत्या की घिनौनी गाथा का अंतिम अध्याय समाप्त हो गया।

□□□□□□□□□

परिशिष्ट I

'रेक्स बनाम नथुराम गोडसे और आठ आरोपी।'
मैं, आत्माचरण, आप पर नाथूराम गोडसे (37), नारायण आप्टे (34), विष्णु करकरे (37), मदनलाल पाहवा (20), शंकर किस्तय्या (20), गोपाल गोडसे (27), विनायक सावरकर (65) और दत्तात्रेय परचुरे (49) पर आरोप लगा रहा हूं:
मैं
सर्वप्रथम, यह कि आप, नथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा, शंकर किस्तय्या, गोपाल वी. गोडसे, विनायक डी. सावरकर और दत्तात्रेय एस. परचुरे ने 1 दिसंबर, 1947 और 30 जनवरी, 1948 के बीच पुणे, बॉम्बे, दिल्ली और अन्य स्थानों पर अपने और दिगंबर आर. बैज, जिन्हें क्षमादान दिया जा चुका है, के बीच सहमति और साजिश रची। गंगाधर एस. दंडवते, गंगाधर जाधव और सूर्यदेव शर्मा, जो अन्य अज्ञात लोगों के साथ फरार हैं, पर मोहनदास करमचंद गांधी, जिन्हें 'महात्मा गांधी' के नाम से अधिक जाना जाता है, की हत्या करने का आरोप है, और यह आरोप है कि उक्त समझौते और षड्यंत्र के अनुसरण में 30 जनवरी, 1948 को दिल्ली में 'महात्मा गांधी' की हत्या की गई थी, और इस प्रकार उन्होंने भारतीय दंड संहिता की धारा 120(बी) और धारा 302 के तहत दंडनीय अपराध किया है, जो न्यायालय के संज्ञान में आता है।
द्वितीय
दूसरे, उक्त समझौते और साजिश के अनुसरण में 10 जनवरी, 1948 और 20 जनवरी, 1948 के बीच, आप नाथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा, शंकर किस्तय्या और गोपाल वी. गोडसे के साथ दिगंबर आर. बैज भी शामिल थे:

ए(1) भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 10 के प्रावधानों के उल्लंघन में बिना लाइसेंस के दिल्ली में हथियार और गोला-बारूद, अर्थात् कारतूस सहित 2 रिवॉल्वर, का परिवहन किया और इस प्रकार भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(घ) के तहत दंडनीय अपराध किया तथा न्यायालय के संज्ञान में है;
(2) उपर्युक्त अपराध करने में एक दूसरे को उकसाया और इस प्रकार भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(घ) के तहत भारतीय दंड संहिता की धारा 109 और 114 के साथ पढ़े जाने पर दंडनीय अपराध किया, और न्यायालय के संज्ञान में है;
बी(1) दिल्ली में, आपके कब्जे में बिना लाइसेंस के आपके नियंत्रण में हथियार और गोला-बारूद, अर्थात् कारतूस सहित 2 रिवॉल्वर, भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 14 और 15 के प्रावधानों के उल्लंघन में थे और इस प्रकार भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(एफ) के तहत दंडनीय अपराध किया और न्यायालय के संज्ञान में है;
(2) दिल्ली में, उन्होंने उपर्युक्त अपराध करने में एक दूसरे को उकसाया और इस प्रकार भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(एफ) के तहत भारतीय दंड संहिता की धारा 114 के साथ पढ़े जाने पर दंडनीय अपराध किया तथा न्यायालय के संज्ञान में है;
तृतीय
तीसरा, उक्त समझौते और षड्यंत्र के अनुसरण में 10 जनवरी, 1948 और 20 जनवरी, 1948 के बीच दिल्ली में नथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा, शंकर किस्तय्या और गोपाल वी. गोडसे के साथ दिगंबर आर. बैज भी शामिल थे:
ए(1) आपके कब्जे में और आपके नियंत्रण में विस्फोटक पदार्थ थे, जैसे कि 2 गन-कॉटन-स्लैब और पांच हैंड ग्रेनेड, जिनमें डेटोनेटर

और बत्ती शामिल थीं, जिनका उद्देश्य इनके माध्यम से जीवन को खतरे में डालना या किसी अन्य व्यक्ति को जीवन को खतरे में डालने में सक्षम बनाना था, और इस प्रकार आपने विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 4(बी) के तहत दंडनीय अपराध किया और जो न्यायालय के संज्ञान में है;
(2) उपर्युक्त अपराध करने में एक दूसरे को उकसाया और इस प्रकार विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 4(ख) के तहत धारा 6 के साथ पढ़े जाने पर दंडनीय अपराध किया तथा न्यायालय के संज्ञान में है;
बी(1) आपके कब्जे में और आपके नियंत्रण में विस्फोटक पदार्थ, अर्थात् 2 गन-कॉटन-स्लैब और डेटोनेटर और बत्ती सहित 5 हैंड ग्रेनेड, ऐसी परिस्थितियों में थे जिससे यह उचित संदेह उत्पन्न होता है कि आपने उन्हें किसी वैध उद्देश्य के लिए अपने कब्जे में या अपने नियंत्रण में नहीं रखा था और इस प्रकार आपने विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के तहत दंडनीय अपराध किया है और न्यायालय के संज्ञान में है;
(2) उपर्युक्त अपराध करने में एक दूसरे को उकसाया और इस प्रकार विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 5 के साथ अधिनियम की धारा 6 के तहत दंडनीय अपराध किया तथा न्यायालय के संज्ञान में है; चतुर्थ
चौथा, उक्त समझौते और षड्यंत्र के अनुसरण में 20 जनवरी, 1948 को बिरला हाउस, दिल्ली में, आपने (1) मदनलाल के. पाहवा ने गैरकानूनी और दुर्भावनापूर्ण ढंग से एक विस्फोटक पदार्थ, अर्थात् गन-कॉटन-स्लैब, में विस्फोट किया, जो विस्फोट जीवन को खतरे में डालने और संपत्ति को गंभीर क्षति पहुंचाने की संभावना वाला था और इस प्रकार विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 3 के तहत दंडनीय

अपराध किया और न्यायालय के संज्ञान में है; (2) नथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, शंकर किस्तय्या और गोपाल वी. गोडसे ने दिगंबर आर. बैज के साथ मदनलाल के. पाहवा को उपरोक्त अपराध करने में सहायता की और इस प्रकार विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा 3 के साथ अधिनियम की धारा 6 के तहत दंडनीय अपराध किया और न्यायालय के संज्ञान में है;
वी
पांचवीं बात यह है कि उक्त समझौते के अनुसरण में 20 जनवरी, 1948 को बिरला हाउस, दिल्ली में एक षड्यंत्र रचा गया, जिसमें आप नाथूराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा, शंकर किस्तय्या, गोपाल वी. गोडसे और विनायक डी. सावरकर ने दिगंबर आर. बैज के साथ मिलकर एक दूसरे को महात्मा गांधी की हत्या करने के अपराध में उकसाया, जो कि मृत्युदंड या आजीवन कारावास से दंडनीय अपराध है और यह अपराध उकसावे के परिणामस्वरूप नहीं किया गया था और इस प्रकार भारतीय दंड संहिता की धारा 115 के साथ धारा 302 के तहत दंडनीय अपराध किया गया है और यह अपराध न्यायालय के संज्ञान में है;
छठी
छठी बात यह है कि उक्त समझौते और षड्यंत्र के अनुसरण में, 28 जनवरी, 1948 और 30 जनवरी, 1948 के बीच, आपने
ए(1) नथुराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे बिना लाइसेंस के ग्वालियर से दिल्ली हथियार और गोला-बारूद लाए, अर्थात् स्वचालित पिस्तौल संख्या 606824 कारतूस सहित, भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 6 के प्रावधानों का उल्लंघन करते हुए और इस प्रकार भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19 (सी) के तहत दंडनीय अपराध किया और न्यायालय के संज्ञान में है;

(2) नथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे और दत्तात्रेय एस. परचुरे ने भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(सी) के तहत भारतीय दंड संहिता की धारा 114 के साथ पढ़े जाने वाले और न्यायालय के संज्ञान में आने वाले उपरोक्त अपराध को करने में एक दूसरे का सहयोग किया;
बी(1) दिल्ली में नाथुराम बनाम गोडसे के मामले में, आपके कब्जे में और आपके नियंत्रण में हथियार और गोला-बारूद, अर्थात् कारतूस सहित स्वचालित पिस्तौल संख्या 606824, भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 14 और 15 के उल्लंघन में थे और इस प्रकार आपने भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(एफ) के तहत दंडनीय अपराध किया है और यह न्यायालय के संज्ञान में है;
(2) नारायण डी. आप्टे और विष्णु आर. करकरे ने दिल्ली में उपरोक्त अपराध करने में एक दूसरे को उकसाया और इस प्रकार भारतीय शस्त्र अधिनियम की धारा 19(एफ) के तहत भारतीय दंड संहिता की धारा 114 के साथ पढ़ा जाने वाला और न्यायालय के संज्ञान में आने वाला अपराध किया;
सातवीं
सातवीं बात यह है कि उक्त समझौते और षड्यंत्र के अनुसरण में 30 जनवरी, 1948 को बिरला हाउस, दिल्ली में आपने:
ए(1) नथुराम वी. गोडसे ने जानबूझकर और जानते-बूझते 'महात्मा गांधी' की हत्या की और इस प्रकार भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के तहत अपराध किया तथा न्यायालय के संज्ञान में है;
(2) नारायण डी. आप्टे और विष्णु आर. करकरे ने नाथुराम वी. गोडसे को उपरोक्त अपराध करने में सहायता की, जो अपराध आपकी उपस्थिति में किया गया था, और इस प्रकार भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के

□□□ □□□□ 114 □□ □□□ □□□□□□ □□□□□ □□□□ □□ □□□□□□□□ □□ □□□□□□□ □□□ □□;

(3) □□□□□□ □□. □□□□□, □□□□ □□□□□□□□□, □□□□□ □□. □□□□□, □□□□□□ □□. □□□□□□ □□ □□□□□□□□□ □□. □□□□□□ □□ □□□□□□ □□. □□□ □□ □□□ □□□□□ □□□□□□□ □□. □□□□□ □□ □□□□□□□ □□□□□ □□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□ □□ □□□□□□ □□□□□□ □□□ □□□□□□ □□ □□□□ 302 □□ □□□ □□□□ 109 □□ □□□ □□□□□□ □□□□□ □□□□ □□□ □□□□□□□□ □□ □□□□□□□ □□□ □□□

□□. □□□□□□□,

□□.□□.□□., □□□□□□□□□, □□□□□ □□□□□□□□□

22 □□□ 1948, □□□ □□□□, □□□□□□□

परिशिष्ट II

अभियोजन पक्ष के गवाहों की सूची और जिस तारीख को वे अदालत में पेश हुए

1. ईश्वरदत्त मुलचंद - सी.आई.डी., ग्वालियर; 24 जून
2. रामलाल दत्त - प्रबंधक, शरीफ हिंदू होटल, दिल्ली; 24 जून।
3. Shanti Prakash - Partner, Shrif Hindu Hotel, Delhoi; 25th June.
4. रामसिंह - नौकर, शरीफ हिंदू होटल, दिल्ली; 25 जून.
5. शांताराम आमचेकर - शरणार्थी जो शरीफ हिंदू होटल में रुके थे करकरे के साथ। 25 जून।
6. हीरानंदानी - क्लर्क, सरकारी स्थानांतरण ब्यूरो, दिल्ली; 25 जून।
7. रामचन्द्र - क्लर्क, मरीना होटल, दिल्ली; 25 जून.
8. नारायणसिंह - हेड बेयरर, मरीना होटल, दिल्ली; 25 जून।
9. मेहर सिंह - सिपाही, वन विभाग, दिल्ली: 29 जून।
10. कालेराम - बियरर, मरीना होटल, दिल्ली; 29 जून।
11. गोविंद राम - बेयरर, मरीना होटल, दिल्ली; 29 जून।
12. पाचेको - प्रबंधक, मरीना होटल, दिल्ली; 29 जून।
13. मार्टिन थाडियस - क्लर्क, मरीना होटल, दिल्ली; 29 जून।
14. सुरजीत सिंह - टैक्सी चालक, दिल्ली; 30 जून।
15. सुलोचना देवी - गृहिणी, दिल्ली; 1 जुलाई.
16. छोटूराम - नौकर, बिरला हाउस, दिल्ली; 1 जुलाई।
17. भूरेसिंह - चौकीदार, बिरला हाउस, दिल्ली; 2 जुलाई।
18. के.एम. साहनी - शरणार्थी प्रभारी अधिकारी, करनाल; 5 जुलाई।

19. राम प्रकाश - प्रबंधक, फ्रंटियर हिंदू होटल, दिल्ली; 6 जुलाई।
20. चमनलाल ग्रोवर - पंचा, दिल्ली; 6 जुलाई. |
21. एस.सी. राय - विस्फोटक निरीक्षक, आगरा; 7 जुलाई।
22. कुँवर सिंह - पुलिस फोटोग्राफर, दिल्ली; 7 जुलाई.
23. पीआर. कैलाश - अधिकारी टेलीफोन एक्सचेंज, दिल्ली; 7 जुलाई।
24. लाला बद्रीनाथ - टिकट क्लर्क (रेलवे), दिल्ली 7 जुलाई।
25. एन.एन. कपूर - मानचित्रकार, दिल्ली; 7 जुलाई।
26. सुंदरलाल - बुकिंग क्लर्क (रेलवे), दिल्ली स्टेशन; 8 जुलाई
27. हरिकिशन - वाहक, दिल्ली स्टेशन; 8 जुलाई।
28. जानू - मोची, दिल्ली स्टेशन, 4 जुलाई।
29. देवकीनंदन - हेड कांस्टेबल, दिल्ली; 8 जुलाई।
30. फ्लाइट सार्जेंट रामचंद्र - भारतीय वायु सेना, दिल्ली; 9 जुलाई।
31. अमरनाथ - पुलिस उप निरीक्षक, दिल्ली; 9 जुलाई।
32. Nandlal Mehta - Gandhiji's Companion; 9th July.
33. काबुल सिंह - हेड कांस्टेबल, दिल्ली; 9 जुलाई।
34. रतन सिंह - कांस्टेबल, दिल्ली; 9 जुलाई।
35. धलूराम - सहायक सब इंस्पेक्टर, दिल्ली; 9 जुलाई।
36. पराश्रम - सहायक सब इंस्पेक्टर, दिल्ली; 9 जुलाई।
37. धर्म सिंह - हेड कांस्टेबल, दिल्ली; 9 जुलाई।
38. पी.एन. तनेजा - सिविल सर्जन, नई दिल्ली; 12 जुलाई।
39. जगदीश प्रसाद गोयल - ग्वालियर; 12 जुलाई।
40. सरदारीलाल वर्मा - पर्यवेक्षक, टेलीफोन एक्सचेंज, दिल्ली; 12 जुलाई।
41. सुश्री बलवंत कौर - टेलीफोन ऑपरेटर, दिल्ली; 12 जून।

42. सुश्री जी. फर्नेस - टेलीफोन ऑपरेटर, दिल्ली; 12 जुलाई।
43. ग़रीबा - 'टोंगा' हॉर्स कैब ड्राइवर, ग्वालियर; 13 जुलाई.
44. जुम्मा - 'टोंगा' हॉर्स कैब ड्राइवर, ग्वालियर; 13 जुलाई.
45. शिवप्यारेलाल दीक्षित - जांच क्लर्क, कानपुर स्टेशन; 13 जुलाई।
46. ए.बी. सक्सेना - क्लर्क, कानपुर स्टेशन; 13 जुलाई।
47. एंजेलीना कोलेस्टोन - मैट्रन, कानपुर स्टेशन; 13 जुलाई।
48. Raghupatirao Handa - Guide, Delhi Railway Station; 13th July.
49. सैय्यद मंजरअली रिज़वी - मजिस्ट्रेट, ग्वालियर; 14 जुलाई.
50. मधुकर केशव काले - ग्वालियर; 14 जुलाई.
51. मधुकर बालकृष्ण खैरे - ग्वालियर; 15 जुलाई.
52. रामदयाल सिंह - ग्वालियर; 15 जुलाई।
53. जगन्नाथ सिंह - ग्वालियर; 15 जुलाई।
54. Gungansinh - Lambardar, Delhi; 16 July.
55. Biharilal - Thanedar, Delhi; 16th July.
56. आर.बी. अटल - प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेट, ग्वालियर; 19 जुलाई।
57. दिगंबर बैज - अनुमोदक, पुणे; 20 वां, 21 वां, 22 वां, 23 वां, 26 वां,
27, 28, 29, 30, 31 जुलाई।
58. डॉ. डी.एन. गोयल - वैज्ञानिक, निदेशक, पंजाब; 2 अगस्त।
59. Satyavan Bhilaji Rale - Manager, Sea Green Hotel, Bombay; 2nd
अगस्त।
60. कुमारी शांता भास्कर मोदक - अभिनेत्री, पूना, 3 अगस्त।
61. कश्मीरीलाल - एल्फिंस्टोनी होटल, बॉम्बे; 3 अगस्त।

62. Narsinh Bhagaji - Bombay Laundry, Poona. 3rd August.
63. Gayaprasad Dube - Arya Pathik Ashram, Bombay; 3rd August.
64. गोविंद विश्वनाथ मालेकर - नौकर, एल्फिंस्टन होटल, बॉम्बे; 3 अगस्त।
65. कैंडिडो पिंटो - क्लर्क, अपोलो होटल, बॉम्बे; 4 अगस्त.
66. माइकल पैट्रिक केरी - पंचा, बॉम्बे; 4 अगस्त.
67. प्रो. जगदीश चंद्र जैन - रामनारायण रुइया कॉलेज, बॉम्बे; चौथा,
5, 9 अगस्त।
68. जॉन फ्रीटस - पंचा, बॉम्बे; 9 अगस्त।
69. Gosvami Shrikrushnaji Maharaj - Bombay; 9th, 10th August.
70. Shridhar Narayan Vaidya - Insurance Company; Bombay 10th अगस्त।
71. मिस लोरेना बैनब्रिज - एयर होस्टेस, बॉम्बे; 16 अगस्त।
72. अंगद सिंह - एजेंट, बॉम्बे; 13, 16 अगस्त।
73. Ganpat Bhimrao Afzulpurkar - Pensioner, Bombay; 16th August.
74. चरणदास मेघजी मथुरादास - बम्बई; 16 से 20 अगस्त।
75. लेस्ली पर्सीवल पाण्डे - किरकी; 16 से 20 अगस्त।
76. रघुनाथ नायक - माली, बिरला हाउस, दिल्ली; 16 से 20 अगस्त।
77. Gosvami Dixit Maharaj - Bombay; 20th, 21st,23 rd August.
78. मोरारजी देसाई - गृह मंत्री, बंबई; 23, 24, 25 अगस्त।
79. वसंत गजानन जोशी - थाना, बम्बई 25 अगस्त।
80. ऐतप्पा कृष्णा कोटियन - टैक्सी चालक, बॉम्बे; 26 अगस्त।
81. Ganpat Sambhaji Kharat - M. L. A., Bombay; 26th August.
82. गुरबचन सिंह - दिल्ली; 30 अगस्त।

83. Prabhakar Lakshman Afale - Clerk, Poona; 30th August.
84. Madhusudan Gopal Golwalkar - Gwalior; 30th August.
85. पांडुरंग विनायक गोडबोले - पूना; 31 अगस्त.
86. Mahadev Ganesh Kale - Kurla, Bombay; 31st August.
87. Ramchandra Mohiniraj Patankar - Kurla, Bombay; 31st August.
88. गोविंद विष्णु काले - पूना; 31 अगस्त।
89. शिव नागेश शेट्टी - पंचा, बॉम्बे; 1 सितंबर.
90. यशवन्त शान्ताराम बोरकर - पंचा, बम्बई, 1 सितम्बर।
91. Vinaykumar Shantaram Pradhan - Pancha, Bombay; 1st September.
92. कृष्ण चंद्र - मजिस्ट्रेट, दिल्ली; 2 सितंबर.
93. एस.आर. सहगल - कर्मचारी, शरणार्थी अनुभाग, दिल्ली; 2 सितंबर।
94. रमनलाल देसाई - टिकट कलेक्टर, विले पार्ले रेलवे स्टेशन, बंबई, 3 सितंबर।
95. जॉन गोम्स - टिकट कलेक्टर, एल्फिंस्टन रोड रेलवे स्टेशन, बॉम्बे; 3 सितंबर।
96. रघु परमेश्वर नाइक - पंचा, बॉम्बे; 3 सितंबर.
97. नाथूराम अग्रवाल - रेलवे कर्मचारी, अजमेर; 6 सितंबर.
98. जे. मेंडेस - रेलवे कर्मचारी, दादर, बॉम्बे; 6 सितंबर।
99. दत्तात्रेय रामचन्द्र काटे - पंचा, बम्बई; 6 सितंबर.
100. के.पी. पेर्रेरा - पंचा, बॉम्बे; 7 सितंबर. 101. एस.वाई. सर्वे - पंचा, बॉम्बे; 7 सितंबर. 102.बिहारीलाल-लुधियाना, 7 सितम्बर।
103. त्रयंबक हरि जाचक - पंचा, पूना; 8 सितंबर. 104. नारायण गणेश दाबके - दर्जी, पूना; 8 सितंबर. 105. वी.एस. दलवी - पंचा, बॉम्बे; 8

सितंबर. 106. महादेव गोविंद कुलकर्णी - पंचा, पूना; 9 सितंबर.
107. दिनकर पांडुरंग थोराट पाटिल - पुलिस कप्तान, ग्वालियर; 9 सितम्बर।
108. डॉ. पी.डी. गोखले - पंचा, पूना; 10 सितंबर. 109. बालकृष्ण वामन इनामदार - पंचा, पूना; 10 सितंबर. 110. शिवकन्नकुंजा विलचंद - पंचा, बॉम्बे; 10 सितम्बर. 111. फ्रैंक रेबेलो - पंचा, बॉम्बे; 10 सितंबर. 112. जनार्दन दिनकर सावलेकर - कर्मचारी टेलीग्राफ
विभाग, बॉम्बे; 10 सितंबर।
113. Brown - Chief Presidency Magistrate, Bombay; 13th September. 114. Gajanan Balkrushna Kawthankar - Pancha, Bombay; 14th September. 115. Dasvanda Singh - C.I.D., Delhi Police; 14th & 15th September. 116. Jaswant Singh - Police Captain, Delhi; 16th to 20th September. 117. Balkrushna Khanna
- Imperial Bank, Gwalior; 20th September. 118. Namdeo Tayyappa Nagmode - Poona; 20th September. 119. Honaji Ganpat Shelar - Poona; 20th September. 120. Arun Gandhi - Pancha, Poona; 20th September. 121. Shankar Ganpat Ghadge - Bombay; 21 September. 122. Deulkar - Deputy Superintendent C.I.D., Poona; 21st & 22nd
सितम्बर।
123. सूर्यनारायण व्यास - ज्योतिषी, उज्जैन; 21 और 22 सितंबर।
124. एम.के. नेरुरकर - कर्मचारी, पालम हवाई अड्डा, दिल्ली; 21 और 22 सितंबर।
सितम्बर।

125. पी. जयरामन - क्लर्क, वायु सेवा, बॉम्बे; 27 सितंबर। 126. डी.वी. म्हस्कर - क्लर्क, शिक्षा विभाग, पुणे; 27 सितंबर। 127. बी.एस. हल्दिपुर - पुलिस निरीक्षक, बॉम्बे; 27, 28 और 29 सितंबर।
सितम्बर।
128. ए.आर. प्रधान - पुलिस निरीक्षक, सी.आई.डी., पुणे; 30 सितंबर।
129. सी.आर. प्रधान - उप निरीक्षक, सी.आई.डी., बॉम्बे; 1 अक्टूबर।
130. मंडलिक - पुलिस निरीक्षक, सी.आई.डी., ग्वालियर; 1 से 4 अक्टूबर। 131. एस.के. भावनगरी - विस्फोटक निरीक्षक, बॉम्बे; 4 और 5 अक्टूबर। 132. जे.डी. नागरवाला - उपायुक्त, सी.आई.डी., बॉम्बे; 5, 6, 7 अक्टूबर।
8 अक्टूबर।
133. गज्जर - हस्तलेखन विश्लेषक, पूना 21, 25, 26, 27 अक्टूबर।
134. पिंटो - पुलिस निरीक्षक सी.आई.डी., बॉम्बे; 27 और 28 अक्टूबर. 135. राजे - पुलिस फोटोग्राफर, पूना; 28 अक्टूबर. 136. गुलाबचन्द्र - बिल्डर, दिल्ली 28 अक्टूबर। 137. चक्रधर - बुकिंग क्लर्क, रेलवे, दिल्ली; 28 अक्टूबर. 138. भोजाराम - रेलवे प्लेटफार्म इंस्पेक्टर, दिल्ली; 29 अक्टूबर. 139. मेजर दादाभाई मानेकजी - ग्वालियर; 29 अक्टूबर और 5 और 6 तारीख
नवंबर।
140. एच.बी. जरिंदकर - प्रधान क्लर्क, कृषि विभाग, पुणे; 29 वां अक्टूबर।
141. Ramprasad - Information Director, Gwalior; 29th October.
142. Vinayak Raghunath Darshethkar - Head Clerk, University of Bombay;
5 नवंबर।

143. राघवन - अभिलेख अधीक्षक, ग्वालियर; 5 नवंबर. 144. केशव - थानेदार, लश्कर, ग्वालियर; 5 नवंबर. 145. श्यामबहादुर - पंचा, ग्वालियर; 5 और 6 नवंबर. 146. आदित्यराम - ज्योतिषी, दिल्ली; 5 और 6 नवंबर. 147. वीरेन्द्र सिंह - उप. पुलिस निरीक्षक, ग्वालियर; 5 वां और 6 वां
नवंबर।

अस्वीकृत गवाह
148. जयप्रकाश कुदेसिया - टिकट कलेक्टर, थाना रेलवे स्टेशन; 6 सितम्बर।
149. जे.एस. परंजपे - विस्फोटक विशेषज्ञ, बॉम्बे; बुलाया नहीं गया।
गांधी हत्याकांड की साजिश और मुकदमे से जुड़ी महत्वपूर्ण तिथियां
20 जनवरी 1948 - गांधी जी की शाम की प्रार्थना सभा के दौरान बम विस्फोट।
30 जनवरी - गांधी जी की हत्या।
8 मई - दिल्ली में विशेष न्यायालय की स्थापना की गई।
15 मई - आरोपियों के नाम और आरोपपत्र दाखिल किए गए। 27 मई, 3 जून और 14 जून - गांधी हत्याकांड में प्रारंभिक कार्यवाही हुई।
22 जून - बैज को सशर्त क्षमादान की घोषणा की गई, बैज को गवाह घोषित किया गया। आरोप पत्र प्रकाशित किया गया, अभियोजन पक्ष के वकील का बयान। 24 जून - अभियोजन पक्ष के गवाहों की जांच और बयान दर्ज किए गए।
20-31 जून - गवाह बैज का बयान दर्ज किया गया। 6 नवंबर - अभियोजन पक्ष के गवाहों की जांच और बयान दर्ज करने का कार्य समाप्त हुआ।

8-22 □□□□□□ - □□□□□□ □□ □□□□□ □□□□□ □□□□□ □□□□ □□ □□□□□□ □□ □□□□□□□ □□ □□□□
1-9 □□□□□□□ - □□□□□□□□ □□□□□ □□ □□□□□□□ □□ □□□□□□□□ 10-30 □□□□□□□ - □□□□□ □□□□□ □□ □□□□□□□ □□ □□□□□□□□ 10 □□□□□□ 1949 - □□□□□□ □□ □□□□□

परिशिष्ट III

(इसे शब्दशः पुनः प्रस्तुत किया गया है) अभियोजन पक्ष का संस्करण
पुणे से प्रकाशित होने वाले हिंदू राष्ट्र के संपादक नाथूराम वी. गोडसे और प्रबंधक नारायण डी. आप्टे हैं। दोनों हिंदू महासभा के अनुयायी हैं और एक-दूसरे के घनिष्ठ सहयोगी तथा समान राजनीतिक विचारधारा वाले बताए जाते हैं। अहमदनगर निवासी विष्णु आर. करकरे भी हिंदू महासभा के अनुयायी हैं और नाथूराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे को लंबे समय से जानते हैं तथा उनकी भी राजनीतिक विचारधारा एक जैसी है। मदनलाल के. पाहवा पंजाब से आए शरणार्थी हैं। कहा जाता है कि वे सबसे पहले विष्णु आर. करकरे के संपर्क में आए और उनके माध्यम से नाथूराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे से मिले। दिगंबर आर. बैज (गवाह) पुणे में शस्त्र भंडार चलाते हैं और हाल ही में हथियारों, गोला-बारूद और विस्फोटकों की तस्करी में शामिल रहे हैं। वे भी हिंदू महासभा के अनुयायी हैं। शंकर किस्तय्या दिगंबर आर. बैज के नौकर हैं और गोपाल वी. गोडसे नाथूराम वी. गोडसे के भाई हैं। विनायक डी. सावरकर को किसी परिचय की आवश्यकता नहीं है। वे हिंदू महासभा के पूर्व अध्यक्ष हैं और बॉम्बे स्थित सावरकर सदन में रहते हैं। डॉ. दत्तात्रेय एस. परचुरे ग्वालियर में रहते हैं और ग्वालियर में हिंदू सभा के नेता माने जाते हैं। वे ब्रिटिश नागरिक हैं और भारत में निवास करते हैं।
भारत का विभाजन
देश का विभाजन 15 अगस्त 1947 को हुआ और ब्रिटिश भारत 14 अगस्त 1948 को 'डोमिनियन ऑफ पाकिस्तान' और 15 अगस्त 1948 को 'डोमिनियन

ऑफ इंडिया' में विभाजित हो गया। जिन परिस्थितियों में कांग्रेस ने देश के विभाजन पर सहमति जताई, उनका उल्लेख यहाँ आवश्यक नहीं है।
कहा जाता है कि देश का दो डोमिनियनों में विभाजन अभियुक्तों या कम से कम उनमें से कुछ लोगों को बहुत बुरा लगा था। उनका मानना था कि अगर महात्मा गांधी न होते तो देश कभी दो डोमिनियनों में विभाजित न होता। देश के विभाजन के बाद पाकिस्तान डोमिनियन में अल्पसंख्यक समुदाय के साथ जो हुआ वह सर्वविदित है और यहाँ उसका उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है। महात्मा गांधी ने भारत डोमिनियन में अल्पसंख्यक समुदाय पर किसी भी प्रकार के जवाबी हमले को रोकने के लिए हर संभव प्रयास किया। महात्मा गांधी के इस कार्य का भी अभियुक्तों या कम से कम उनमें से कुछ लोगों को गहरा प्रभाव पड़ा।
महात्मा गांधी भारत में अल्पसंख्यक समुदाय के सदस्यों के हितों की रक्षा के लिए जो प्रयास कर रहे थे, उसे देखते हुए, कहा जाता है कि आरोपियों ने उनकी हत्या की साजिश रची। अभियोजन पक्ष का मानना है कि विनायक डी. सावरकर ने नाथूराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे के माध्यम से यह कृत्य करवाया। नाथूराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे ने विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा, गोपाल वी. गोडसे, दत्तात्रेय एस. परचुरे और दिगंबर आर. बैज का समर्थन प्राप्त किया और दिगंबर आर. बैज के माध्यम से अपने सेवक शंकर किस्तय्या का सहयोग लिया। हालांकि, विनायक डी. सावरकर पूरी प्रक्रिया में पर्दे के पीछे ही रहे।
10 जनवरी 1948 को, दिगंबर आर. बैज ने पुणे स्थित हिंदू राष्ट्र कार्यालय में नाथराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे से मुलाकात की और 14 जनवरी 1948 को दादर स्थित हिंदू महासभा कार्यालय में

उन्हें दो गन कॉटन स्लैब और पांच हैंड ग्रेनेड की आपूर्ति करने पर सहमति व्यक्त की।
डॉ. जे.सी. जैन रुइया कॉलेज, बॉम्बे के स्टाफ में थे। मदनलाल के. पाहवा उनसे कई महीनों से परिचित थे और पहली बार एक शरणार्थी के रूप में उनके संपर्क में आए थे। लगभग 12 जनवरी 1948 को मदनलाल के. पाहवा प्रो. जे.सी. जैन के घर आए और उनसे लंबी बातचीत की। बातचीत के दौरान उन्होंने बताया कि उनके दल के सदस्यों ने महात्मा गांधी की जान लेने की साजिश रची थी और उन्हें महात्मा गांधी द्वारा आयोजित प्रार्थना सभा में बम विस्फोट करने का जिम्मा सौंपा गया था।
नीति का नामांकन
पुणे स्थित नाथुराम वी. गोडसे ने 13 जनवरी 1948 को नारायण डी. आप्टे की पत्नी के नाम पर 2,000 रुपये की जीवन बीमा पॉलिसी में नामांकन कराया और 14 जनवरी 1948 को गोपाल वी. गोडसे की पत्नी के नाम पर 3,000 रुपये की दूसरी जीवन बीमा पॉलिसी में नामांकन कराया। गोपाल वी. गोडसे ने 14 जनवरी 1948 को किरकी (पुणे) में 15 जनवरी 1948 से 21 जनवरी 1948 तक सात दिनों के आकस्मिक अवकाश के लिए आवेदन किया। हालांकि, उनका आवेदन अस्वीकृत कर दिया गया। 14 जनवरी 1948 को दिगंबर आर. बैज और शंकर किस्तय्या बंबई के लिए रवाना हुए। वे अपने साथ दो गन कॉटन स्लैब और प्राइमर व डेटोनेटर सहित पांच हैंड ग्रेनेड ले गए थे। बंबई में, उनकी मुलाकात दादर स्थित हिंदू महासभा कार्यालय में नाथूराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे से हुई। नाथूराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे ने दिगंबर आर. बैज को बताया कि 'सामान' को रखने की व्यवस्था करनी होगी। वे उन्हें सावरकर सदन ले गए।

नथुराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे सावरकर सदन के परिसर में दाखिल हुए और दिगंबर आर. बैज को बाहर ही छोड़ दिया। वे दिगंबर आर. बैज द्वारा लाया गया सामान अपने साथ ले गए। कुछ ही देर बाद वे सामान लेकर सावरकर सदन के परिसर से बाहर आ गए। फिर वे दिगंबर आर. बैज के साथ हिंदू महासभा कार्यालय लौट गए। नथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे और दिगंबर आर. बैज, शंकर किस्तय्या के साथ भुलेश्वर स्थित दीक्षित महाराज के घर गए। दीक्षित महाराज सो रहे थे। सामान उनके नौकर के हवाले कर दिया गया। फिर वे हिंदू महासभा कार्यालय लौट आए। नारायण डी. आप्टे ने नथुराम वी. गोडसे के माध्यम से दिगंबर आर. बैज को यात्रा व्यय के रूप में 50 रुपये दिए। नथुराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे ने दिगंबर आर. बैज से कहा कि वे अगली सुबह उनसे मिलेंगे।
बैज की मुलाकात मदनलाल से होती है
दिगंबर आर. बैज की मुलाकात हिंदू महासभा कार्यालय में मदनलाल के. पाहवा से हुई। मदनलाल के. पाहवा उन्हें पहले से जानते थे और उन्होंने उनसे पूछा, 'कब आए?' दिगंबर आर. बैज ने मदनलाल के. पाहवा से पूछा कि विष्णु आर. करकरे कहां हैं? मदनलाल ने बताया कि करकरे ठाणे गए हैं और जल्द ही लौटने वाले हैं।
15 जनवरी 1948 को सुबह लगभग 7.20 बजे, नथुराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे ने 17 जनवरी 1948 को बॉम्बे से दिल्ली के लिए रवाना होने वाली दोपहर की फ्लाइट में 'डी.एन. कर्मकार' और 'एस. मराठे' के नाम से दो सीटें आरक्षित करवा लीं।
15 जनवरी 1948 को सुबह लगभग 8:30 बजे नथुराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे हिंदू महासभा कार्यालय पहुंचे और मदनलाल के. पाहवा, शंकर किस्तय्या और दिगंबर आर. बैज से मिले। मदनलाल के. पाहवा ने तब तक वस्त्र धारण नहीं किए थे। इसके बाद नथुराम वी.

गोडसे, नारायण डी. आप्टे, दिगंबर आर. बैज और शंकर किस्तय्या के साथ शिवाजी प्रिंटिंग प्रेस गए और वहां विष्णु आर. करकरे से मिले। ठाणे के जी.एम. जोशी इस प्रेस के स्वामी हैं। नथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे और दिगंबर आर. बैज ने जी.एम. जोशी से मुलाकात की। शंकर किस्तय्या को प्रेस के बाहर इंतजार करने के लिए कहा गया।
इसके बाद नाथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, वी.आर. करकरे और जी.एम. जोशी कार्यालय में दाखिल हुए। बैज को रिसेप्शन में इंतजार करने को कहा गया। वे तीनों आधे घंटे बाद कार्यालय से बाहर आए। नाथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे और दिगंबर आर. बैज शंकर किस्तय्या के साथ हिंदू महासभा कार्यालय लौट आए। विष्णु आर. करकरे और दिगंबर आर. बैज ने मदनलाल के. पाहवा से अपना बिस्तर लेकर उनके साथ चलने को कहा। नारायण डी. आप्टे एक कार लेकर आए और नाथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा और दिगंबर आर. बैज दीक्षित महाराज के घर के लिए रवाना हुए। मदनलाल के. पाहवा का बिस्तर हॉल में रखा हुआ था। दीक्षित महाराज अस्वस्थ थे और पलंग पर लेटे हुए थे। पिछली शाम घर में छूटा हुआ सामान दीक्षित महाराज के कमरे में लाया गया और दिगंबर आर. बैज ने उसे दिखाया। कुछ बातचीत के बाद, सामान से भरा थैला नारायण डी. आप्टे ने विष्णु आर. करकरे को सौंप दिया।
नारायण डी. आप्टे ने विष्णु आर. करकरे और मदनलाल के. पाहवा को उसी शाम दिल्ली जाने के लिए कहा। विष्णु आर. करकरे ने सामान से भरा थैला मदनलाल के. पाहवा को सौंप दिया। इसके बाद विष्णु आर. करकरे और मदनलाल के. पाहवा दीक्षित महाराज के घर से चले गए। आप्टे ने रिवॉल्वर मांगी

नारायण डी. आप्टे ने दीक्षित महाराज से पूछा कि क्या वे उनके लिए एक-दो रिवॉल्वर का इंतजाम कर सकते हैं। दीक्षित महाराज ने बताया कि उस समय उनके पास कोई हथियार नहीं है और वे उन्हें रिवॉल्वर दिलाने में हर संभव मदद करेंगे। इसके बाद नथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे और दिगंबर आर. बैज दीक्षित महाराज के घर से बाहर निकले और मंदिर के परिसर में खड़े हो गए। नारायण डी. आप्टे ने दिगंबर आर. बैज से पूछा कि क्या वे उनके साथ दिल्ली जाने को तैयार हैं? उन्होंने कहा, 'तात्याराव सावरकर (विनायक डी. सावरकर) ने तय कर लिया है कि गांधीजी, जवाहरलाल नेहरू और सुहरावर्दी को 'खत्म' कर देना है, उन्होंने यह काम हमें सौंपा है।'
दिगंबर आर. बैज दिल्ली जाने के लिए उनके साथ चलने को तैयार हो गए, लेकिन उन्होंने कहा कि पहले वे घर-परिवार के कुछ काम निपटाने के लिए पुणे वापस जाना चाहेंगे। इस पर नाथूराम वी. गोडसे ने कहा कि उन्हें भी पुणे जाना है, अपने भाई गोपाल वी. गोडसे से मिलने के लिए, जिन्होंने एक रिवॉल्वर दिलाने का जिम्मा लिया था, और उन्हें बॉम्बे लाकर दिल्ली ले जाने के लिए। इसके बाद नाथूराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे और दिगंबर आर. बैज टैक्सी में बैठकर हिंदू महासभा कार्यालय की ओर चल पड़े। दिगंबर आर. बैज वहाँ टैक्सी से उतर गए। नारायण डी. आप्टे ने दिगंबर आर. बैज से 17 जनवरी 1948 की सुबह वी.टी. रेलवे स्टेशन पर मिलने को कहा। इसके बाद नाथूराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे टैक्सी में बैठकर चले गए।
16 जनवरी 1948 की सुबह तड़के दिगंबर आर. बैज शंकर किस्तय्या के साथ पुणे लौट आए। उन्होंने अपने घर पर बचा हुआ सामान गणपत एस. खरात (अमदार खरात) के पास रख दिया। नाथूराम वी. गोडसे दो बार

शस्त्र भंडार में दिगंबर आर. बैज से मिलने गए, लेकिन वे वहां नहीं मिले। इसके बाद दिगंबर आर. बैज हिंदू राष्ट्र कार्यालय गए और वहां उनकी मुलाकात नाथूराम वी. गोडसे से हुई। नाथूराम वी. गोडसे ने एक छोटी पिस्तौल निकाली और दिगंबर आर. बैज से उसे एक बड़े रिवॉल्वर से बदलवाने को कहा। दिगंबर आर. बैज ने शर्मा को एक रिवॉल्वर दी थी, इसलिए उन्होंने पिस्तौल के बदले वह रिवॉल्वर ले ली। गोपाल वी. गोडसे ने 17 जनवरी 1948 से 23 जनवरी 1948 तक किरकी (पुणे) में सात दिनों की आकस्मिक छुट्टी के लिए एक और आवेदन दिया। इस बार उनका आवेदन स्वीकार कर लिया गया। धन संग्रह
17 जनवरी 1948 की सुबह, दिगंबर आर. बैज शंकर किस्तय्या के साथ बंबई लौट आए। शंकर किस्तय्या दादर में उतरे और दिगंबर आर. बैज वी.टी. रेलवे स्टेशन पर उतरे। वहां उनकी मुलाकात नथुराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे से हुई। नारायण डी. आप्टे ने दिगंबर आर. बैज को सुझाव दिया कि दिल्ली जाने से पहले उन्हें कुछ पैसे इकट्ठा कर लेने चाहिए। नारायण डी. आप्टे ने एक टैक्सी किराए पर ली और नथुराम वी. गोडसे और दिगंबर आर. बैज के साथ बंबई के विभिन्न स्थानों पर गए। उन्होंने अलग-अलग बहाने बनाकर चरनदास मेघजी, गणपतराव बी. अफजुलपुरकर और महादेव जी. काले से पैसे वसूल किए।
एक यात्रा के दौरान, शंकर किस्तय्या को हिंदू महासभा कार्यालय से ले जाया गया। नाथूराम वी. गोडसे ने सुझाव दिया कि सभी को तात्याराव सावरकर के अंतिम दर्शन करने जाना चाहिए। इस प्रकार वे सावरकर सदन की ओर चल पड़े। शंकर किस्तय्या को बाहर इंतजार करने के लिए कहा गया। नाथूराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे और दिगंबर आर. बैज परिसर में दाखिल हुए। नारायण डी. आप्टे ने

दिगंबर आर. बैज को भूतल के कमरे में इंतजार करने के लिए कहा। नाथूराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे पहली मंजिल पर गए और 5-10 मिनट बाद नीचे आ गए। उनके पीछे तात्याराव सावरकर भी आ गए। तात्याराव सावरकर ने उन्हें 'यशस्वी हौन या' (सफल हों और लौट आएं) का आशीर्वाद दिया। नाथूराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे और दिगंबर आर. बैज शंकर किस्तय्या के साथ टैक्सी में बैठ गए। रास्ते में नारायण आप्टे ने कहा - 'तात्याराव ने भविष्यवाणी की थी कि गांधीजी के सौ वर्ष पूरे हो चुके हैं - इसमें कोई संदेह नहीं है कि अब हमारा काम सफलतापूर्वक पूरा हो जाएगा।' (तात्याराव ने भविष्यवाणी की थी कि गांधीजी के सौ वर्ष पूरे हो चुके हैं - इसमें कोई संदेह नहीं है कि अब हमारा काम सफलतापूर्वक पूरा हो जाएगा।)
नथुराम वी. गोडसे ने टैक्सी स्टैंड पर छोड़ने का अनुरोध किया; उन्हें टैक्सी स्टैंड पर छोड़ दिया गया। नारायण डी. आप्टे, दिगंबर आर. बैज और शंकर किस्तय्या दीक्षित महाराज के घर गए। शंकर किस्तय्या को हॉल में छोड़ दिया गया, जबकि नारायण डी. आप्टे और दिगंबर आर. बैज घर के अंदर चले गए। नारायण डी. आप्टे ने फिर से दीक्षित महाराज से रिवॉल्वर मांगी। दीक्षित महाराज ने उन्हें एक छोटी पिस्तौल दिखाई, लेकिन कहा कि जब तक उन्हें इसके बदले पैसे नहीं मिलेंगे, वे इसे नहीं देंगे। नारायण डी. आप्टे और दिगंबर आर. बैज ने शंकर किस्तय्या के साथ नथुराम वी. गोडसे को लिया और जुहू हवाई अड्डे और फिर सांता क्रूज़ हवाई अड्डे की ओर चल पड़े। नारायण डी. आप्टे वहां उतरे और दिगंबर आर. बैज को 250 रुपये दिए और उनसे कहा कि वे शंकर किस्तय्या के साथ उसी दिन शाम की ट्रेन से दिल्ली के लिए रवाना हो जाएं। इसके बाद दिगंबर आर.

बैज शंकर किस्तय्या के साथ कुर्ला के लिए रवाना हुए और वहां टैक्सी को उतार दिया।
दिल्ली में करकरे और मदनलाल 17 जनवरी 1948 को दोपहर के लगभग समय विष्णु आर. करकरे और मदनलाल के. पाहवा दिल्ली पहुँचे। वे हिंदू महासभा भवन गए, लेकिन वहाँ उन्हें रहने की जगह नहीं मिली। इसके बाद वे शरीफ होटल गए और वहाँ ठहरे। विष्णु आर. करकरे ने 'बी.एम. ब्यास' के छद्म नाम से वहाँ ठहरे। नाथूराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे ने सांता क्रूज़ हवाई अड्डे से दोपहर की उड़ान भरी और उसी शाम दिल्ली पहुँचे। उन्होंने 'डी.एन. करमरकर' और 'एस. मराठे' के छद्म नामों से यात्रा की थी। वे मरीना होटल गए और वहाँ 'एस. देशपांडे' और 'एन. देशपांडे' के छद्म नामों से ठहरे।
19 जनवरी 1948 को, गोपाल वी गोडसे शरीफ होटल आए और वहां विष्णु आर. करकरे और मदनलाल के. पाहवा के साथ कुछ घंटे बिताए। इसके बाद विष्णु आर. करकरे और मदनलाल के. पाहवा शरीफ होटल से चले गए। दिगंबर आर. बैज और शंकर किस्तय्या 18 जनवरी 1948 को पंजाब मेल से बंबई से रवाना हुए और 19 जनवरी 1948 की शाम को दिल्ली पहुंचे। वे हिंदू महासभा भवन गए और वहां ठहरने की व्यवस्था की। वहां उनकी मुलाकात मदनलाल के. पाहवा और गोपाल वी. गोडसे से हुई। इसके कुछ ही समय बाद नाथूराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे और विष्णु आर. करकरे भी हिंदू महासभा भवन पहुंचे और दिगंबर आर. बैज और शंकर किस्तय्या से हॉल में सोने का अनुरोध किया। मदनलाल के. पाहवा, गोपाल वी. गोडसे और दिगंबर आर. बैज ने शंकर किस्तय्या के साथ रात हॉल में ही बिताई।
लिए गए माप

20 जनवरी 1948 को सुबह लगभग 8:30 बजे नारायण डी. आप्टे और विष्णु आर. करकरे हिंदू महासभा भवन गए। नारायण डी. आप्टे, दिगंबर आर. बैज और शंकर किस्तय्या को बिरला हाउस ले गए और उन्हें वह प्रार्थना मंच दिखाया जहाँ महात्मा गांधी प्रार्थना सभाओं के दौरान बैठते थे। उन्होंने वहाँ खिड़की की जालीदार ग्रिल में बने छेदों का माप लिया। उन्होंने बताया कि उस छेद से रिवॉल्वर चलाई जा सकती है और पीछे वाले कमरे से हथगोला भी फेंका जा सकता है। फिर उन्होंने उन्हें पिछले द्वार के दोनों ओर दो स्थान दिखाए जहाँ से गन कॉटन स्लैब विस्फोट करके प्रार्थना स्थल पर जमा लोगों का ध्यान भटकाया जा सकता था। उन्होंने जालीदार वेंटिलेटर के पीछे वाले कमरे की ओर भी इशारा किया और बताया कि फोटोग्राफर बनकर उस कमरे में प्रवेश करना संभव है। इसके बाद वे वापस हिंदू महासभा भवन लौट आए।
नारायण डी. आप्टे ने गोपाल वी. गोडसे और दिगंबर आर. बैज को अपने साथ लाए रिवाल्वर लाने और हिंदू महासभा भवन के पीछे जंगल में जाकर उनका परीक्षण करने को कहा। नारायण डी. आप्टे, गोपाल वी. गोडसे और दिगंबर आर. बैज, शंकर किस्तय्या के साथ हिंदू महासभा भवन के पीछे जंगल में गए। वहां दोनों रिवाल्वरों का परीक्षण किया गया। फिर वे सभी हिंदू महासभा भवन लौट आए और वहां विष्णु आर. करकरे और मदनलाल के. पाहवा को मौजूद पाया। नारायण डी. आप्टे ने विष्णु आर. करकरे को मदनलाल के. पाहवा के साथ मरीना होटल जाने को कहा। नारायण डी. आप्टे ने गोपाल वी. गोडसे से कहा कि वे भी 'सामान' लेकर मरीना होटल चलें। सभी मरीना होटल के लिए रवाना हुए। वे मरीना होटल के कमरा नंबर 40 में इकट्ठा हुए, जो कमरा नाथुराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे के कब्जे में था।

गोपाल वी. गोडसे कमरे में अपनी रिवॉल्वर की मरम्मत करने लगे। नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा और दिगंबर आर. बैज बाथरूम में गन-कॉटन स्लैब में प्राइमर और हैंड ग्रेनेड में डेटोनेटर लगाने लगे। नाथूराम वी. गोडसे और शंकर किस्तय्या भी बाथरूम में मौजूद थे। नाथूराम वी. गोडसे ने कहा, 'बैज, यह हमारा आखिरी प्रयास है - काम पूरा होना ही चाहिए - ध्यान रखना कि सब कुछ ठीक से व्यवस्थित हो।' इसके बाद वे सभी कमरे में वापस आ गए। इस बीच गोपाल वी. गोडसे अपनी रिवॉल्वर की मरम्मत कर चुके थे।
काम विभाजित
इसके बाद आपस में यह तय किया गया कि कौन किस हथियार को लेकर चलेगा। उन्हें कर्तव्य भी सौंपे गए। विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा, शंकर किस्तय्या, गोपाल वी. गोडसे और दिगंबर आर. बैज को एक-एक हैंड ग्रेनेड ले जाना था। शंकर किस्तय्या और दिगंबर आर. बैज को एक-एक रिवॉल्वर भी ले जानी थी। मदनलाल के. पाहवा को एक गन कॉटन स्लैब ले जाना था। नारायण डी. आप्टे के संकेत पर मदनलाल के. पाहवा को बिरला हाउस की पिछली चारदीवारी के पास गन कॉटन स्लैब को विस्फोट करना था। नाथूराम वी. गोडसे के संकेत पर दिगंबर आर. बैज को रिवॉल्वर से गांधीजी पर गोली चलानी थी और जालीदार ग्रिल के पार ग्रेनेड फेंकना था। बाकी सभी लोग प्रार्थना स्थल पर आपस में मिल गए। इसके बाद 'सामान' को उनके बीच तदनुसार वितरित किया गया।
विष्णु आर. करकरे और मदनलाल के. पाहवा सबसे पहले मरीना होटल से बिरला हाउस के लिए रवाना हुए। नारायण डी. आप्टे, गोपाल वी. गोडसे और दिगंबर आर. बैज, शंकर किस्तय्या के साथ फिर मरीना होटल से बिरला हाउस के लिए निकले। नाथूराम वी. गोडसे ने कहा कि वह थोड़ी

देर बाद उनके पीछे आएंगे। मरीना होटल से निकलते समय, दिगंबर आर. बैज ने शंकर किस्तय्या से कहा कि वह जिस व्यक्ति पर हथगोला फेंकेगा, उस पर हथगोला फेंकेगा; जिस पर वह गोली चलाएगा, उस पर गोली चलाएगा; वह व्यक्ति 'गांधीजी' नाम का एक बूढ़ा आदमी था और उसे खत्म कर देना था।
नारायण डी. आप्टे ने एक टैक्सी ली और दिगंबर आर. बैज, शंकर किस्तय्या और गोपाल वी. गोडसे के साथ पहले हिंदू महासभा भवन और फिर बिरला हाउस के पीछे गए। गोपाल वी. गोडसे ने अपना बैग हिंदू महासभा भवन के हॉल की अलमारी में रख दिया। कुछ देर बाद बिरला हाउस के पीछे उनकी मुलाकात मदनलाल के. पाहवा, विष्णु आर. करकरे और नाथुराम वी. गोडसे से हुई। नारायण डी. आप्टे ने मदनलाल के. पाहवा से पूछा, 'तैयार है क्या?' मदनलाल के. पाहवा ने कहा कि वह तैयार हैं, उन्होंने गन कॉटन स्लैब रख दिया है और बस उसे जलाना बाकी है।
दिगंबर आर. बैज को जालीदार वेंटिलेटर के पीछे वाले कमरे में जाने के लिए कहा गया। हालांकि, वह डर गया क्योंकि उसे लगा कि अगर वह कमरे में गया और कुछ हुआ तो वह उसी कमरे में फंस जाएगा। नाथूराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे ने दिगंबर आर. बैज पर कमरे में जाने का दबाव डाला, लेकिन उसने इनकार कर दिया। उसने उनसे कहा कि कमरे के अंदर से हमला करने के बजाय वह सामने से हमला करना पसंद करेगा। इसके बाद दिगंबर आर. बैज शंकर किस्तय्या के साथ टैक्सी की ओर गया और उसमें तौलिए में लिपटी दो रिवॉल्वर छोड़ दीं। उसने अपना हैंड ग्रेनेड भी शंकर किस्तय्या को सौंप दिया। फिर दिगंबर आर. बैज और शंकर किस्तय्या वापस वहीं चले गए जहां नाथूराम वी. गोडसे और अन्य लोग खड़े थे।

नारायण डी. आप्टे ने दिगंबर आर. बैज से पूछा कि क्या वे तैयार हैं। बैज ने कहा कि वे तैयार हैं और शंकर किस्तय्या के साथ प्रार्थना स्थल की ओर चल पड़े। नारायण डी. आप्टे ने मदनलाल के. पाहवा की पीठ पर हाथ रखकर कहा, 'चलो, चलते हैं।' विष्णु आर. करकरे भी दिगंबर आर. बैज और शंकर किस्तय्या के पीछे प्रार्थना स्थल की ओर चल पड़े।
गन कॉटन स्लैब में विस्फोट हुआ इसके तुरंत बाद, नथुराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे, गोपाल वी. गोडसे के साथ टैक्सी की ओर बढ़े। उन्होंने टैक्सी चालक को टैक्सी चालू करने को कहा और उसमें बैठकर चले गए। इसी बीच मदनलाल के. पाहवा ने पीछे की दीवार पर रखी गन कॉटन की पटिया में विस्फोट कर दिया। कई लोग विस्फोट स्थल की ओर दौड़े और मदनलाल के. पाहवा को पकड़ लिया। दिगंबर आर. बैज और शंकर किस्तय्या ने मौका पाकर प्रार्थना स्थल छोड़ दिया और हिंदू महासभा भवन लौट आए। दिगंबर आर. बैज ने शंकर किस्तय्या को हिंदू महासभा भवन के पीछे दो हथगोले फेंकने को कहा। उन्होंने उसे वह बैग भी फेंकने को कहा जो गोपाल वी. गोडसे ने अलमारी में छोड़ा था। शंकर किस्तय्या ने अपने आका के आदेश का पालन किया। इसी बीच नथुराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे हिंदू महासभा भवन पहुंचे। दिगंबर आर. बैज ने उन्हें अपशब्द कहे। फिर वे चले गए।
दिगंबर आर. बैज और शंकर किस्तय्या उसी शाम दिल्ली से मुंबई और फिर पुणे के लिए रवाना हो गए। नाथूराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे भी उसी शाम कानपुर होते हुए दिल्ली से बॉम्बे के लिए रवाना हुए। विष्णु आर. करकरे और गोपाल वी. गोडसे ने फ्रंटियर हिंदू होटल में रात बिताई और अगले दिन दिल्ली से रवाना हो गए।

23 जनवरी 1948 को नारायण डी. आप्टे अपने एक मित्र के साथ बॉम्बे स्थित आर्य पथिक आश्रम आए और वहाँ ठहरे। उन्हें आठ बिस्तरों वाले एक सामान्य कमरे में दो बिस्तर आवंटित किए गए। उस समय दो बिस्तरों वाले कमरे उपलब्ध नहीं थे। नारायण डी. आप्टे ने 'डी. नारायण' के छद्म नाम से वहाँ निवास किया। नाथूराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे को 24 जनवरी 1948 से एल्फिंस्टन एनेक्स होटल में दो बिस्तरों वाला कमरा मिला। नाथूराम वी. गोडसे ने वहाँ 'एन. विनायक्रव' के छद्म नाम से निवास किया। इसी बीच नारायण डी. आप्टे ने आर्य पथिक आश्रम में दो बिस्तरों वाला कमरा प्राप्त कर लिया और 24 और 25 जनवरी की रात एक महिला के साथ वहाँ बिताई। इसके बाद वे एल्फिंस्टन एनेक्स होटल में चले गए। नाथूराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे 27 जनवरी 1948 तक एल्फिंस्टन एनेक्स होटल में ही रहे।
विमान में सीटें आरक्षित हैं 25 जनवरी 1948 की सुबह, नथुराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे एयर इंडिया कार्यालय गए और 27 जनवरी 1948 की सुबह बंबई से दिल्ली जाने वाली उड़ान में 'डी. नारायणराव' और 'एन. विनायकराव' के नाम से दो सीटें आरक्षित करवा लीं। इसके बाद नथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे और गोपाल वी. गोडसे ठाणे स्थित शिवाजी प्रिंटिंग प्रेस के जी.एम. जोशी के घर पर मिले और आपस में बातचीत की।
26 जनवरी 1948 की सुबह, नाथुराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे दादा महाराज और दीक्षित महाराज से मिले। उन्होंने उनसे रिवॉल्वर दिलाने में मदद मांगी। उसी शाम नाथुराम वी. गोडसे फिर दीक्षित महाराज से मिले और उनसे पूछा कि क्या उन्होंने उनके

लिए रिवॉल्वर का इंतजाम कर दिया है। दीक्षित महाराज ने जवाब दिया कि उन्होंने ऐसा नहीं किया है।
27 जनवरी 1948 को, नथुराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे सुबह की हवाई जहाज से बंबई से दिल्ली के लिए रवाना हुए। उन्होंने 'डी. नारायणराव' और 'एन. विनायकराव' के छद्म नामों से यात्रा की। उसी दिन दोपहर को नथुराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे ट्रेन से दिल्ली से रवाना हुए और लगभग रात 10:30 बजे ग्वालियर पहुंचे। वे डॉ. दत्तात्रेय एस. परचुरे के घर गए और रात वहीं बिताई।
28 जनवरी 1948 को, नथुराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे ने दत्तात्रेय एस. परचुरे की मदद से जगदीश प्रसाद गोयल से एक स्वचालित पिस्तौल प्राप्त की। इसके बाद वे ट्रेन से ग्वालियर से दिल्ली के लिए रवाना हो गए।
29 जनवरी 1948 को, नथुराम वी. गोडसे ने 'एन. विनायक्रव' के छद्म नाम से दिल्ली मुख्य रेलवे स्टेशन पर एक विश्राम कक्ष किराए पर लिया। नारायण डी. आप्टे और विष्णु आर. करकरे 29 और 30 जनवरी 1948 को नथुराम वी. गोडसे के साथ दिल्ली मुख्य रेलवे स्टेशन पर मौजूद थे।
30 जनवरी 1948 को, शाम लगभग 5 बजे महात्मा गांधी हमेशा की तरह प्रार्थना मंच की ओर बढ़े। उनके साथ कई लोग थे। प्रार्थना मंच पर एक बड़ी भीड़ उनके आने का इंतजार कर रही थी। महात्मा गांधी प्रार्थना मंच की सीढ़ियाँ चढ़े। जब वे छह-सात कदम ही चले थे कि भीड़ ने उन्हें रास्ता देने के लिए एक गली बना दी। तभी नाथूराम वी. गोडसे भीड़ में से निकलकर महात्मा गांधी के सामने बने खाली स्थान में आ गया और ग्वालियर से लाई गई स्वचालित पिस्तौल से उन पर बेहद करीब से एक के बाद एक तीन गोलियाँ चलाईं। उसे वहीं पकड़

लिया गया। महात्मा गांधी को लगी चोटों के कारण कुछ ही देर बाद उनका निधन हो गया।
अभियुक्तों के विरुद्ध अभियोजन पक्ष का मामला और जांच रिपोर्ट पढ़ने के बाद, दफ्तरी ने न्यायालय का ध्यान साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किए गए कुछ दस्तावेजों और पत्रों की ओर दिलाया। उन्होंने अप्रैल 1947 से जनवरी 1948 की अवधि के दौरान अग्रानी में प्रकाशित लेखों की ओर न्यायाधीश का ध्यान आकर्षित किया। लेखों को पढ़ने के बाद उन्होंने न्यायालय को बताया कि किस प्रकार ये लेख गांधीजी की नीतियों के प्रति अभियुक्तों के विरोध को दर्शाते हैं।
दफ्तारी का बयान दो घंटे दस मिनट तक चला। उनकी आवाज़ धीमी थी, लेकिन उनका उच्चारण दृढ़ था और उन्होंने महत्वपूर्ण मुद्दों पर स्पष्ट रूप से ज़ोर दिया। उन्होंने सुझाव दिया कि न्यायालय को 24 जून को सुबह 10 बजे अपराध स्थल, बिरला हाउस का निरीक्षण करना चाहिए। न्यायालय ने सुझाव स्वीकार कर लिया और बिरला हाउस के निरीक्षण के लिए सहमति दे दी। न्यायालय ने आरोपियों से पूछा कि क्या वे बिरला हाउस का निरीक्षण करना चाहेंगे। नाथूराम ने मना कर दिया और कहा कि उनकी बिरला हाउस जाने की कोई विशेष इच्छा नहीं है। आप्टे, करकरे, गोपाल गोडसे और मदनलाल और उनके वकीलों ने न्यायालय के साथ जाने की इच्छा व्यक्त की। दफ्तारी ने आरोपियों को साथ ले जाने पर आपत्ति जताई और न्यायालय से अनुरोध किया कि आरोपियों और उनके वकीलों को बाद में बिरला हाउस जाने की अनुमति दी जाए। उन्होंने बचाव पक्ष को बिरला हाउस के लेआउट प्लान उपलब्ध कराने की भी पेशकश की। न्यायालय ने दफ्तारी की आपत्तियों को खारिज कर दिया और पुलिस को न्यायालय और आरोपियों के निर्धारित निरीक्षण के लिए कड़ी सुरक्षा व्यवस्था करने का

आदेश दिया। अदालत ने बिरला हाउस के निरीक्षण दौरे के दौरान दर्शकों और प्रेस की उपस्थिति पर रोक लगा दी।
रक्षा पक्ष का पक्ष
नथुराम वी. गोडसे ने एक लंबा लिखित बयान दाखिल किया है। अपने बयान में उन्होंने कहा है:
14 जनवरी 1948 को वे नारायण डी. आप्टे के साथ पुणे से बंबई आए। 17 जनवरी 1948 को वे नारायण डी. आप्टे और दिगंबर आर. बैज के साथ टैक्सी से कई जगहों पर गए और पैसे इकट्ठा किए। वे और नारायण डी. आप्टे 'डी. एन. कर्मकार' और 'एस. मराठे' के छद्म नामों से बंबई से दिल्ली के लिए हवाई जहाज से गए। वे 17 जनवरी 1948 से 20 जनवरी 1948 तक दिल्ली के मरीना होटल में ठहरे। 20 जनवरी 1948 की सुबह उन्हें सिरदर्द हुआ। दिगंबर आर. बैज होटल आए। नारायण डी. आप्टे और दिगंबर आर. बैज ने बिरला हाउस जाने के बारे में आपस में बात की। इसके बाद वे और नारायण डी. आप्टे उसी रात एक्सप्रेस ट्रेन से दिल्ली से कानपुर के लिए रवाना हुए। वे कानपुर सेंट्रल रेलवे स्टेशन के विश्राम कक्ष में रुके। फिर वे कानपुर से बंबई के लिए रवाना हो गए। वे 24 जनवरी 1948 से 27 जनवरी 1948 तक बॉम्बे के एल्फिंस्टनी एनेक्स होटल में ठहरे। फिर उन्होंने 25 जनवरी 1948 को 'डी. नारायणराव' और 'एन. विनायकराव' के छद्म नामों से उस विमान में दो सीटें आरक्षित कीं, जो 27 जनवरी 1948 की सुबह बॉम्बे से दिल्ली के लिए रवाना होने वाला था। उन्होंने 27 जनवरी 1948 को इन्हीं छद्म नामों से विमान से बॉम्बे से दिल्ली की यात्रा की। वे 28 जनवरी 1948 को ग्वालियर में थे, जहाँ उनकी मुलाकात दत्तात्रेय एस. परचुरे से हुई। 29 जनवरी 1948 को वे 'एन. विनायकराव' के छद्म नाम से दिल्ली मुख्य रेलवे स्टेशन के विश्राम कक्ष में रुके। 30 जनवरी 1948 को उन्होंने बिड़ला हाउस

के प्रार्थना स्थल पर महात्मा गांधी की पिस्तौल से गोली मारकर हत्या कर दी।
Nathuram's Case
नथुराम वी. गोडसे के मामले में यह प्रतीत होता है कि महात्मा गांधी की हत्या करने में उनके और अन्य आरोपियों के बीच कोई 'षड्यंत्र' नहीं था; यह उनका व्यक्तिगत कृत्य था। उनके लिखित बयान के अनुसार, हत्या करने का उनका मकसद देश का 'पाकिस्तान डोमिनियन' और 'भारत डोमिनियन' में विभाजन था, जिसके लिए उन्होंने महात्मा गांधी को दोषी ठहराया था, और महात्मा गांधी द्वारा 13 जनवरी 1948 को शुरू किया गया उपवास था, जो उनके अनुसार महात्मा गांधी ने भारत सरकार पर दबाव डालने के लिए शुरू किया था ताकि वह पाकिस्तान सरकार को 55 करोड़ रुपये का भुगतान करे।
आप्टे की अपील
नारायण डी. आप्टे ने भी एक लिखित बयान दाखिल किया है, जिसमें उन्होंने कहा है:
वह लंबे समय से दिगंबर आर. बैज को जानते थे, जो उन्हें हथियार, गोला-बारूद और विस्फोटक सामग्री मुहैया कराते थे। 14 जनवरी 1948 को, वह नाथूराम गोडसे के साथ पुणे से बंबई आए। 15 जनवरी 1948 को दादर स्थित हिंदू महासभा कार्यालय में उनकी मुलाकात दिगंबर आर. बैज से हुई। दिगंबर आर. बैज ने उनसे पूछा कि वे बंबई क्यों आए हैं। उन्होंने बताया कि वे दिल्ली में प्रदर्शन करने की योजना बना रहे हैं। इस पर उन्होंने उनसे पूछा कि क्या वह भी उनके साथ दिल्ली जा सकते हैं। उन्होंने कहा कि उन्हें उनके साथ दिल्ली जाने में कोई आपत्ति नहीं है। उन्होंने उनसे 17 जनवरी 1948 को मिलने का वादा किया। 15 जनवरी 1948 को, उन्होंने एयर इंडिया कार्यालय में मिले एक व्यक्ति से बंबई से दिल्ली के दो

हवाई टिकट प्राप्त किए। टिकट 'डी.एन. कर्मकार' और 'एस.' के नाम पर थे। ये सभी लोग 'डी.एन. कर्मकार' और 'एस. मराठे' के छद्म नामों से दिल्ली के लिए 17 जनवरी 1948 की दोपहर को बॉम्बे से उड़ान भरने वाले विमान में सवार थे। 17 जनवरी 1948 को, वे और नाथूराम वी. गोडसे वी.टी. रेलवे स्टेशन पर दिगंबर आर. बैज से मिले। फिर उन्होंने टैक्सी से कई जगहों का दौरा किया और पैसे इकट्ठा किए। इसके बाद वे 'डी.एन. कर्मकार' और 'एस. मराठे' के छद्म नामों से हवाई जहाज से बॉम्बे से दिल्ली के लिए रवाना हुए। वे 17 जनवरी 1948 से 20 जनवरी 1948 तक दिल्ली के मरीना होटल में 'एम. देशपांडे' और 'एस. देशपांडे' के छद्म नामों से ठहरे।
20 जनवरी 1948 को दिगंबर आर. बैज उनसे और नाथूराम वी. गोडसे से मिलने आए। उन्होंने दिगंबर आर. बैज से उसी शाम बिरला हाउस आने और उनसे मिलने का अनुरोध किया ताकि यह पता लगाया जा सके कि क्या उस शाम वहां प्रदर्शन करना संभव है। वे शाम लगभग 4:30 बजे बिरला हाउस के लिए रवाना हुए। मरीना होटल से बाहर निकलते ही दिगंबर आर. बैज और शंकर किस्तय्या उनसे मिले। वे उन्हें अपनी निजी कार में बिरला हाउस ले गए। वे बिरला हाउस के पीछे कार से उतरे। फिर वे प्रार्थना स्थल की ओर बढ़े। जब प्रार्थना शुरू हुई, तो पता चला कि लाउडस्पीकर खराब हो गए हैं। इसलिए उन्होंने सोचा कि प्रदर्शन करने का यह उचित अवसर नहीं है।
इसके बाद वह और शंकर किस्तय्या मरीना होटल लौट आए और दिगंबर आर. बैज बिरला हाउस में ही रुके रहे। लगभग आधे घंटे बाद दिगंबर आर. बैज मरीना होटल पहुंचे और उनसे मिले। दिगंबर आर. बैज ने उन्हें बताया कि बिरला हाउस में हुए एक विस्फोट के सिलसिले में मदनलाल के. पाहवा नाम के एक शरणार्थी को पकड़ा गया है। दिगंबर आर. बैज ने उन्हें यह भी बताया कि उन्होंने मदनलाल के. पाहवा को कुछ

सामान बेचा था। मदनलाल के. पाहवा ने दिगंबर आर. बैज से जो कुछ भी सुना था, वह नाथूराम वी. गोडसे को बता दिया था। इसके बाद उन्होंने तुरंत दिल्ली छोड़ने का फैसला किया। फिर वे उसी रात एक्सप्रेस ट्रेन से दिल्ली से कानपुर के लिए रवाना हुए। वे कानपुर सेंट्रल रेलवे स्टेशन के विश्राम कक्ष में एक दिन रुके। बंबई पहुंचने पर वे 23 जनवरी 1948 से 24 जनवरी 1948 तक आर्य पथिक आश्रम, बंबई में रहे। उन्होंने अपना नाम 'डी. नारायण' के रूप में दर्ज कराया था। वे एल्फिंस्टोनी एनेक्स होटल में चले गए और 24 जनवरी 1948 से 27 जनवरी 1948 तक वहीं रहे। 25 जनवरी 1948 को उन्होंने उस विमान में दो सीटें आरक्षित कीं जो 27 जनवरी 1948 की दोपहर को बॉम्बे से दिल्ली के लिए रवाना होने वाला था। उन्होंने 'डी. नारायणराव' और 'एन. विनायकराव' के छद्म नामों से सीटें आरक्षित की थीं। 27 जनवरी 1948 को वे इन्हीं छद्म नामों से हवाई जहाज से बॉम्बे से दिल्ली के लिए रवाना हुए। 28 जनवरी 1948 को वे ग्वालियर में थे और दत्तात्रेय एस. परचुरे से मिले। इसके बाद वे बॉम्बे के लिए रवाना हो गए और नाथूराम वी. गोडसे दिल्ली के लिए रवाना हो गए।
गांधीजी का उपवास
नारायण डी. आप्टे का दावा यह प्रतीत होता है कि वे नाथूराम वी. गोडसे के साथ 17 जनवरी 1948 को दिल्ली आए थे, ताकि महात्मा गांधी द्वारा 13 जनवरी 1948 को शुरू किए गए उपवास के विरुद्ध प्रदर्शन कर सकें। इस उपवास का उद्देश्य भारत सरकार पर दबाव डालकर पाकिस्तान सरकार को 55 करोड़ रुपये देने के लिए बाध्य करना था। वे नाथूराम वी. गोडसे के साथ 28 जनवरी 1948 को ग्वालियर में दत्तात्रेय एस. परचुरे से कुछ स्वयंसेवकों को

प्राप्त करने के उद्देश्य से मौजूद थे। उनका यह भी दावा है कि 30 जनवरी 1948 को वे दिल्ली में नहीं बल्कि बंबई में थे। करकरे का मामला
विष्णु आर. करकरे ने भी लिखित बयान दाखिल किया था, उन्होंने कहा: वह मदनलाल के. पाहवा के साथ 15 जनवरी 1948 को रात की ट्रेन से बंबई से दिल्ली के लिए रवाना हुए और 17 जनवरी 1948 को दोपहर के आसपास दिल्ली पहुंचे। वे 17 जनवरी 1948 से 19 जनवरी 1948 तक शरीफ होटल में ठहरे। उन्होंने 'बी.एम. बायस' के छद्म नाम से निवास किया था।
विष्णु आर. करकरे का दावा यह प्रतीत होता है कि वे मदनलाल के. पाहवा के अनुरोध पर बंबई से दिल्ली आए थे। मदनलाल के. पाहवा ने उन्हें बताया था कि दिल्ली में उनकी शादी तय हो रही है और कुछ शरणार्थी महात्मा गांधी से मिलने के लिए दिल्ली में प्रतिनिधिमंडल भेजने की योजना बना रहे हैं। उनका यह भी दावा है कि 30 जनवरी 1948 को वे बंबई में थे, दिल्ली में नहीं।
मदनलाल का रुख
मदनलाल के. पाहवा ने भी लिखित बयान दाखिल किया है, उनका कहना है: अक्टूबर 1947 में उनका संपर्क डॉ. जे.सी. जैन से हुआ था। वे कमीशन के आधार पर उनकी पुस्तकें बेचा करते थे। 12 जनवरी 1948 को उन्होंने रेडियो पर सुना कि महात्मा गांधी दिल्ली के मुसलमानों के पुनर्वास और भारत सरकार द्वारा पाकिस्तान सरकार को देय 55 करोड़ रुपये की राशि वसूलने के लिए अनशन शुरू करने वाले हैं, और उन्हें यह सुनकर गुस्सा आया। कुछ शरणार्थियों ने उनसे संपर्क किया और बताया कि वे महात्मा गांधी के अनशन के विरोध में दिल्ली में उनके सामने प्रदर्शन करना चाहते हैं।

उन्होंने विष्णु आर. करकरे को बताया कि वे महात्मा गांधी से मिलने के लिए एक प्रतिनिधिमंडल का नेतृत्व करने जा रहे हैं और करकरे से दिल्ली चलने का अनुरोध किया। उन्होंने विष्णु आर. करकरे से अपने विवाह की व्यवस्थाओं के सिलसिले में भी दिल्ली आने का अनुरोध किया। वे और विष्णु आर. करकरे 15 जनवरी 1948 को बंबई से दिल्ली के लिए रवाना हुए और 17 जनवरी 1948 को दोपहर के आसपास दिल्ली पहुंचे। वे 17 जनवरी 1948 से 19 जनवरी 1948 तक दिल्ली के शरीफ हिंदू होटल में ठहरे। 18 जनवरी को उन्हें पता चला कि महात्मा गांधी ने अपनी सभी शर्तें पूरी होने का आश्वासन मिलने के बाद अपना अनशन तोड़ दिया है। 20 जनवरी 1948 को उनकी मुलाकात शरणार्थी शिविर में दिगंबर आर. बैज से हुई। दिगंबर आर. बैज ने उन्हें बताया कि वे शरणार्थियों को हथियार, गोला-बारूद और विस्फोटक बेचने के लिए दिल्ली आए हैं और उन्हें उस बैरक में ले गए जहां वे ठहरे हुए थे। दिगंबर आर. बैज के पास भारी मात्रा में हथियार, गोला-बारूद और विस्फोटक थे, और उन्होंने नमूने के तौर पर उन्हें एक गन कॉटन स्लैब और एक हैंड ग्रेनेड सौंप दिया। दिगंबर आर. बैज ने उन्हें बताया कि वे और उनके सहकर्मी एक-दो दिन में महात्मा गांधी के सामने प्रदर्शन करने की योजना बना रहे हैं और उनके कुछ सहकर्मी मरीना होटल में ठहरे हुए हैं।
तब उसे सूझा कि महात्मा गांधी से सुरक्षित दूरी पर जाकर गन कॉटन स्लैब को विस्फोटित करना, गिरफ्तारी देना और फिर महात्मा गांधी को शरणार्थियों की शिकायतें बताना बेहतर होगा। उसने विष्णु आर. करकरे को अपने साथ बिरला हाउस चलने के लिए कहा। विष्णु आर. करकरे डरे हुए दिखे और उन्होंने कहा कि वे थोड़ी देर में पहुँचेंगे। फिर वह गन कॉटन स्लैब और हैंड ग्रेनेड लेकर बिरला

हाउस की ओर चल पड़ा और वहाँ गन कॉटन स्लैब को विस्फोटित कर दिया।
मदनलाल के. पाहवा का मामला यह प्रतीत होता है कि वे महात्मा गांधी के समक्ष प्रतिनिधिमंडल ले जाने और अपने विवाह की व्यवस्था करने के उद्देश्य से दिल्ली आए थे। शरणार्थी शिविर में उनकी मुलाकात दिगंबर आर. बैज से हुई। दिगंबर आर. बैज ने उन्हें नमूने के तौर पर एक गन कॉटन स्लैब और एक हैंड ग्रेनेड दिया। उन्होंने महात्मा गांधी के बैठने की जगह से सुरक्षित दूरी पर गन कॉटन स्लैब को विस्फोटित कर दिया, ताकि गिरफ्तारी हो सके और बाद में महात्मा गांधी को शरणार्थियों की शिकायतें बताई जा सकें।
शंकर का मामला
शंकर किस्तय्या ने अपने बयान में निम्नलिखित बातें कही हैं: वह दिगंबर आर. बैज का सेवक था। नारायण डी. आप्टे और विष्णु आर. करकरे कभी-कभार शस्त्र भंडार आया करते थे। 14 जनवरी 1948 को वह और दिगंबर आर. बैज पुणे से बंबई आए। उनके पास दो गन कॉटन स्लैब और पांच हैंड ग्रेनेड थे। वे दादर स्थित हिंदू महासभा कार्यालय गए। नाथूराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे वहां आए और दिगंबर आर. बैज को अपने साथ ले गए। फिर वे वापस आए और उनके साथ दीक्षित महाराज के घर गए। उनके द्वारा लाया गया सामान वहां एक नौकर के पास छोड़ दिया गया। इसके बाद उन्हें और दिगंबर आर. बैज को हिंदू महासभा कार्यालय में छोड़ दिया गया, जहां उनकी मुलाकात मदनलाल के. पाहवा से हुई।
15 जनवरी 1948 को उनकी मुलाकात विष्णु आर. करकरे से हुई। उसी रात वे बॉम्बे से पुणे के लिए रवाना हुए। 16 जनवरी 1948 को नथुराम वी. गोडसे दो बार दिगंबर आर. बैज से पुणे में मिलने आए।

वे और दिगंबर आर. बैज 17 जनवरी 1948 को बॉम्बे वापस आ गए। नथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे और दिगंबर आर. बैज उन्हें कार में बिठाकर एक स्थान से दूसरे स्थान ले गए। 18 जनवरी 1948 को वे और दिगंबर आर. बैज पंजाब मेल से बॉम्बे से दिल्ली के लिए रवाना हुए। वे 19 जनवरी 1948 की रात दिल्ली पहुंचे और नई दिल्ली स्थित हिंदू महासभा भवन गए। वहां उनकी मुलाकात मदनलाल के. पाहवा और गोपाल वी. गोडसे से हुई। कुछ देर बाद नथुराम वी. गोडसे, नारायण डी. आप्टे और विष्णु आर. करकरे भी कुछ समय के लिए वहां आए।
20 जनवरी 1948 की सुबह, नारायण डी. आप्टे उन्हें और दिगंबर आर. बैज को बिरला हाउस ले गए। वे बिरला हाउस के पीछे गए और फिर प्रार्थना मंच पर पहुँचे। नारायण डी. आप्टे ने कई जगहों की नाप ली और कई स्थानों की ओर इशारा किया। नारायण डी. आप्टे और दिगंबर आर. बैज के बीच कुछ बातचीत हुई। फिर वे हिंदू महासभा भवन लौट आए। नारायण डी. आप्टे उन्हें, दिगंबर आर. बैज और गोपाल वी. गोडसे को हिंदू महासभा भवन के पीछे ले गए। दिगंबर आर. बैज की रिवॉल्वर उनके पास थी। गोपाल वी. गोडसे की रिवॉल्वर भी उनके पास ही थी। नारायण डी. आप्टे ने कहा कि दोनों रिवॉल्वरों को चलाकर देखा जाए। गोपाल वी. गोडसे की रिवॉल्वर नहीं चली। उन्होंने एक गोली चलाई, लेकिन गोली ज्यादा दूर नहीं गई। फिर वे हिंदू महासभा भवन लौट आए। इसके बाद नारायण डी. आप्टे ने उन्हें विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा, गोपाल वी. गोडसे और दिगंबर आर. बैज के साथ मरीना होटल जाने के लिए कहा।
गोपाल वी. गोडसे ने नाथूराम वी. गोडसे के कमरे में अपनी रिवॉल्वर की मरम्मत शुरू की। नारायण डी. आप्टे, विष्णु आर. करकरे, मदनलाल के. पाहवा और दिगंबर आर. बैज एक अंदरूनी कमरे में

गए और कुछ तार काटकर उसे किसी चीज़ से जोड़ने लगे। इसके बाद हथियारों और गोला-बारूद का वितरण हुआ। दिगंबर आर. बैज ने उन्हें एक 'पिस्तौल' और एक 'बम' सौंपकर उन्हें रखने को कहा। फिर वे नारायण डी. आप्टे, गोपाल वी. गोडसे और दिगंबर आर. बैज के साथ एक कार में हिंदू महासभा भवन गए और वहां से बिड़ला हाउस के पीछे पहुंचे। वहां उनकी मुलाकात मदनलाल के. पाहवा, विष्णु आर. करकरे और नाथूराम वी. गोडसे से हुई।
दिगंबर आर. बैज और उन लोगों के बीच कुछ बातचीत हुई। कुछ देर बाद दिगंबर आर. बैज ने उससे उसकी 'पिस्तौल' मांगी और तौलिये में लपेटी हुई दोनों पिस्तौलें कार में छोड़ दीं। दिगंबर आर. बैज ने उसे अपना 'बम' सौंप दिया और उसे दोनों 'बम' अपने पास रखने को कहा। इसके बाद वह और दिगंबर आर. बैज प्रार्थना स्थल की ओर चल दिए। कुछ देर बाद एक तेज आवाज सुनाई दी और धुआं उठा। फिर उसने मदनलाल के. पाहवा को हिरासत में ले जाते हुए देखा।
इसके बाद वह और दिगंबर आर. बैज बिरला हाउस से तांगे में बैठकर हिंदू महासभा भवन के लिए रवाना हुए। वहां दिगंबर आर. बैज ने उनसे हिंदू महासभा भवन के पीछे दो 'बम' फेंकने को कहा। साथ ही, उन्होंने अलमारी में रखे थैले का सारा सामान भी फेंकने को कहा। उन्होंने उनकी बात मान ली। फिर वे और दिगंबर आर. बैज दिल्ली से पुणे के लिए रवाना हो गए।
शंकर किस्तय्या के मामले में ऐसा प्रतीत होता है कि उसने जो कुछ भी किया, वह अपने आका दिगंबर आर. बैज के आदेशों का पालन करते हुए किया। उसे 'षड्यंत्र' के बारे में कुछ भी पता नहीं था और दिगंबर आर. बैज समेत किसी ने भी उसे इसके बारे में कुछ नहीं बताया था। शंकर किस्तय्या की ओर से दलीलें 14 दिसंबर 1948 को समाप्त हुईं। 29 दिसंबर 1948 को शंकर किस्तय्या ने अदालत के समक्ष 19

नवंबर 1948 को दिए गए अपने बयान को वापस लेने के लिए एक आवेदन दायर किया। उन्होंने अपने आवेदन में लिखा कि उन्होंने पुलिस के दबाव में यह बयान दिया था। शंकर किस्तय्या ने स्वयं दिगंबर आर. बैज की जिरह का कुछ हिस्सा किया। उन्हें ऐसा करने की अनुमति दी गई क्योंकि उनके वकील की नियुक्ति उन्होंने स्वयं नहीं की थी, बल्कि अदालत द्वारा सरकार के खर्चे पर की गई थी।
उसके द्वारा की गई जिरह उसके द्वारा न्यायालय के समक्ष दिए गए बयान से मेल खाती है। न तो उसकी जिरह और न ही उसके बयान से यह पता चलता है कि वह 'षड्यंत्र' के आरोप में किसी भी तरह से खुद को फंसाना चाहता है। इसलिए, उसके द्वारा दिया गया दोषमुक्ति का बयान पुलिस के लिए अन्य आरोपियों के विरुद्ध किसी काम का नहीं होता। अतः यह मानने का कोई कारण नहीं है कि उसने पुलिस के दबाव में यह बयान दिया था। मुझे यह संभव लगता है कि उसने अन्य आरोपियों या उनमें से कुछ के कहने पर अपना बयान वापस ले लिया हो।
गोपाल वी. गोडसे का मामला गोपाल वी. गोडसे ने भी लिखित बयान दाखिल किया है और अपने बयान में उन्होंने अभियोजन पक्ष के सभी आरोपों का पूर्णतः खंडन किया है। उनका कहना है कि वे 17 जनवरी 1948 से 25 जनवरी 1948 तक उक्सान (पुणे) में थे और उसके बाद उन्होंने करकी (पुणे) स्थित मोटर ट्रांसपोर्ट स्पेयर पार्ट्स उप-डिपो में अपना काम किया। उन्होंने यह स्वीकार किया है कि वे नाथुराम वी. गोडसे के भाई हैं।
सावरकर का मामला
विनायक डी. सावरकर ने भी एक लिखित बयान दाखिल किया है और अपने बयान में उन्होंने अभियोजन पक्ष के सभी आरोपों का पूर्णतः खंडन

किया है। उनका कहना है कि नाथुराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे पर उनका किसी भी प्रकार का कोई नियंत्रण नहीं था।
पारचुरे का मामला
दत्तात्रेय एस. परचुरे ने भी एक लिखित बयान दाखिल किया है और अपने बयान में उन्होंने निम्नलिखित बातें कही हैं:
28 जनवरी 1948 को, नाथूराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे उनके पास आए और दिल्ली में प्रदर्शन आयोजित करने के उद्देश्य से स्वयंसेवकों की मांग की। उन्होंने इस तरह के किसी भी उद्देश्य के लिए स्वयंसेवकों को भेजने से साफ इनकार कर दिया। दत्तात्रेय एस. परचुरे का तर्क यह प्रतीत होता है कि वह ग्वालियर राज्य का नागरिक है और इस नाते वह न्यायालय के अधिकार क्षेत्र के अधीन नहीं है।
इसलिए, सभी पक्षों का यही मत है कि 20 जनवरी 1948 और 30 जनवरी 1948 को दिल्ली में जो कुछ हुआ, उसका मकसद गैर-राजनीतिक था और इसकी जड़ें देश के 'पाकिस्तान डोमिनियन' और 'भारत डोमिनियन' में विभाजन के बाद पैदा हुई थीं। आरोपियों में से कम से कम कुछ लोगों का दृढ़ विश्वास था कि अगर महात्मा गांधी न होते तो देश कभी भी इन दो डोमिनियन में विभाजित न होता। 'पाकिस्तान डोमिनियन' में अल्पसंख्यक समुदाय के साथ जो कुछ हुआ, उसके लिए महात्मा गांधी को फिर से जिम्मेदार ठहराया गया। 13 जनवरी 1948 को महात्मा गांधी द्वारा शुरू किए गए अनशन के बाद आरोपियों में से कम से कम कुछ लोगों की उनके प्रति भावनाएँ और भी तीव्र हो गईं।
कहानी के दोनों संस्करणों में मुख्य अंतर यह है कि अभियोजन पक्ष के अनुसार, इसी मकसद से आरोपियों ने महात्मा गांधी की हत्या की 'षड्यंत्र' रचा था, जबकि बचाव पक्ष के अनुसार, इसी मकसद

से आरोपियों ने महात्मा गांधी के समक्ष शांतिपूर्ण प्रदर्शन करने के लिए एक 'समझौता' किया था। इसलिए, न्यायालय के समक्ष विचारणीय मुख्य बिंदु यह है कि क्या यह 'समझौता' महात्मा गांधी की हत्या करने के लिए था या केवल महात्मा गांधी के समक्ष प्रदर्शन करने के लिए।
सामान्य विधि संबंधी उठाए गए मुद्दे
इस मामले की सुनवाई बॉम्बे पब्लिक सिक्योरिटी मेजर्स एक्ट के उन प्रावधानों के तहत की गई, जिन्हें दिल्ली प्रांत में लागू किया गया है।
अधिनियम की धारा 13 इस प्रकार है:
1) विशेष न्यायाधीश अभियुक्त की उपस्थिति के बिना भी अपराधों का संज्ञान ले सकता है।
उसे मुकदमे के लिए उसकी अदालत में पेश किया जा रहा है।
2) एक विशेष न्यायाधीश सामान्यतः केवल निम्नलिखित का ज्ञापन ही दर्ज करेगा:
प्रत्येक गवाह की गवाही के सार का आकलन करने के बाद, यदि अभियुक्त की जांच के बाद संतुष्ट हो जाए कि ऐसे गवाह की गवाही महत्वपूर्ण नहीं होगी, तो वह किसी भी गवाह को तलब करने से इनकार कर सकता है और किसी भी उद्देश्य से किसी भी मुकदमे को स्थगित करने के लिए बाध्य नहीं होगा, जब तक कि ऐसा स्थगन, उसकी राय में, न्याय के हित में आवश्यक न हो।
2-ए) इस अधिनियम के अंतर्गत किसी अपराध की सुनवाई करने वाला विशेष न्यायाधीश, इस उद्देश्य से
किसी ऐसे व्यक्ति से साक्ष्य प्राप्त करने पर, जिसके बारे में यह माना जाता है कि वह अपराध में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से शामिल था या उससे संबंधित जानकारी रखता था, ऐसे व्यक्ति को

इस शर्त पर क्षमादान दिया जा सकता है कि वह अपराध से संबंधित और अपराध करने में मुख्य अपराधी या सहायक के रूप में शामिल प्रत्येक अन्य व्यक्ति के संबंध में अपने ज्ञान में मौजूद सभी परिस्थितियों का पूर्ण और सत्य खुलासा करे। इस प्रकार दिया गया कोई भी क्षमादान, संहिता की धारा 339 और 339-ए के प्रयोजनों के लिए, संहिता की धारा 338 के तहत दिया गया माना जाएगा।
3) उपधारा (1) और (2) के दायरे में न आने वाले मामलों में, संहिता के प्रावधान, जहां तक वे धारा 10 और 20 के प्रावधानों के साथ असंगत नहीं हैं, विशेष न्यायाधीश की कार्यवाही पर लागू होंगे; और उक्त प्रावधानों के प्रयोजनों के लिए, विशेष न्यायाधीश के न्यायालय को सत्र न्यायालय माना जाएगा। न्यायालय का क्षेत्राधिकार: विशेष न्यायालय को तदनुसार किसी मामले की सुनवाई सत्र न्यायालय की तरह करनी होती है, परन्तु यदि अभियुक्त को न्यायालय में सुनवाई के लिए भेजा न जाए तब भी वह अपराधों का संज्ञान ले सकता है। पुलिस ने अधिनियम की धारा 13(1) के अंतर्गत मामले में आरोपपत्र सीधे न्यायालय में प्रस्तुत किया। तब न्यायालय के समक्ष प्रश्न उठा कि क्या उसे वारंट मामलों की सुनवाई के लिए निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार या सत्र मामलों की सुनवाई के लिए निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार करनी चाहिए। अधिनियम की धारा 13(3) स्पष्ट रूप से यह निर्धारित करती है कि उपधारा (1) और (2) के दायरे में न आने वाले मामलों में, संहिता के प्रावधान, जहाँ तक वे धारा 10 से 20 के प्रावधानों के साथ असंगत नहीं हैं, विशेष न्यायाधीश की कार्यवाही पर लागू होंगे; और उक्त प्रावधानों के प्रयोजनों के लिए, विशेष न्यायाधीश के न्यायालय को सत्र न्यायालय माना जाएगा।

अतः सत्र न्यायालय के समक्ष मामले की सुनवाई सत्र न्यायालय के समक्ष सुनवाई के लिए निर्धारित प्रावधानों के अनुसार ही करनी थी। अधिनियम की धारा 13(3) के अंतर्गत दिए गए विशिष्ट प्रावधानों के मद्देनजर न्यायालय वारंट मामले की सुनवाई के लिए निर्धारित प्रावधानों के अनुसार सुनवाई नहीं कर सकता था। यह मामला लगभग अध्यादेश द्वितीय, 1942 पर आधारित है। यदि विधानमंडल का यह आशय होता कि विशेष न्यायालय वारंट मामले की सुनवाई के लिए निर्धारित प्रावधानों के अनुसार सुनवाई करे, तो वह ऐसा स्पष्ट रूप से निर्धारित करता, जैसा कि अध्यादेश द्वितीय, 1942 के अंतर्गत विशेष न्यायाधीश के न्यायालय में हुई सुनवाई के मामलों में किया गया था। इसके अतिरिक्त, वारंट मामले के रूप में सुनवाई का अर्थ अभियोगों के निर्धारण से पहले ही अभियुक्त को 'बरी' करने की शक्तियाँ प्राप्त करना भी होता, जो न्यायालय के पास निश्चित रूप से किसी भी प्रकार से नहीं थीं। बचाव पक्ष का तर्क
इस मामले में न्यायालय ने पुलिस द्वारा प्रस्तुत आरोपपत्र में निहित तथ्यों के आधार पर आरोप तय किए थे। बचाव पक्ष की ओर से यह तर्क दिया गया है कि आरोप केवल मामले के रिकॉर्ड में मौजूद न्यायिक साक्ष्यों के आधार पर तय किए जाने चाहिए थे, न कि पुलिस द्वारा प्रस्तुत आरोपपत्र में निहित तथ्यों के आधार पर। हालांकि, ऐसा नहीं किया जा सकता था क्योंकि दिए गए कारणों से इस मामले की सुनवाई वारंट मामलों की सुनवाई के लिए निर्धारित प्रावधानों के अनुसार नहीं की जा सकती थी। अभियोजन पक्ष और बचाव पक्ष दोनों के अनुसार, बॉम्बे प्रांत में ऐसे सभी मामलों की सुनवाई हमेशा सत्र मामलों की सुनवाई के लिए निर्धारित प्रावधानों के अनुसार होती है, न कि वारंट मामलों की सुनवाई के

लिए निर्धारित प्रावधानों के अनुसार, और आरोप हमेशा पुलिस द्वारा प्रस्तुत आरोपपत्र में निहित तथ्यों के आधार पर ही तय किए जाते हैं। ऐसा कोई निर्णय उपलब्ध नहीं है जिससे यह पता चले कि बॉम्बे प्रांत में निचली अदालत द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया की बॉम्बे उच्च न्यायालय द्वारा कभी आलोचना की गई हो। तदनुसार, इस मामले की सुनवाई अधिनियम की धारा 13(3) के तहत निर्धारित प्रावधानों के अनुसार सख्ती से की गई है।
साजिश का आरोप
अब मैं बचाव पक्ष द्वारा उठाए गए दूसरे कानूनी मुद्दे पर विचार करता हूँ। इस मामले में आरोपियों पर दिल्ली समेत विभिन्न स्थानों पर 'षड्यंत्र' रचने का आरोप है, जिनमें से कुछ ने दिल्ली में इसके अनुसरण में विभिन्न अपराध किए हैं और एक ने दिल्ली में इसके अनुसरण में हत्या की है। बचाव पक्ष का तर्क है कि इसके अनुसरण में किए गए विभिन्न अपराधों के बाद 'षड्यंत्र' का अपराध 'षड्यंत्र द्वारा उकसाने' के अपराध में विलीन हो गया है और 'षड्यंत्र' और 'षड्यंत्र द्वारा उकसाने' के अपराधों पर एक साथ मुकदमा नहीं चलाया जा सकता था।
अपने तर्क के समर्थन में वे मुख्य रूप से आई.एल.आर. 25 मद्रास 61 पर भरोसा करते हैं। यह 1901 का प्रिवी काउंसिल का फैसला है और इसमें कहा गया है कि 'षड्यंत्र द्वारा उकसाने' के विभिन्न अपराधों पर एक साथ मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। दूसरी ओर, अभियोजन पक्ष ने मेरा ध्यान 39 सीआर. एल.जे. 452 की ओर दिलाया है। यह 1938 का प्रिवी काउंसिल का फैसला है और इसमें कहा गया है कि 'शब्दों में चाहे जो भी अर्थ समाहित हो, यदि कई व्यक्ति अपराध करने की साजिश रचते हैं और साजिश के अनुसरण में प्रत्यक्ष

कृत्य करते हैं, तो ये कृत्य एक ही कृत्य के अंतर्गत आते हैं, जिसमें साजिश और उसके तहत किए गए कृत्य शामिल हैं।'
मामले के तथ्य यह थे कि 'कुछ व्यक्तियों ने कलकत्ता, हावड़ा और 24 परगना में विद्युत ऊर्जा की चोरी करने की साजिश रची - उनमें से कुछ ने इस साजिश के तहत चोरी में सहायता की और कुछ ने स्वयं चोरी की।' प्रिवी काउंसिल ने माना कि चोरी की साजिश, चोरी में सहायता करने के विभिन्न अपराध और चोरी का अपराध एक ही 'कार्य' के दौरान 'किए गए' थे और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 239 (घ) के तहत इन पर एक साथ मुकदमा चलाया जा सकता है। अभियोजन पक्ष द्वारा लगाए गए आरोप के अनुसार वर्तमान मामले के तथ्य भी समान हैं। आरोपियों पर महात्मा गांधी की हत्या करने के लिए दिल्ली, बॉम्बे, पुणे और अन्य स्थानों पर 'साजिश' रचने का आरोप है। कुछ आरोपियों ने इसके तहत दिल्ली में 'साजिश द्वारा सहायता' के विभिन्न अपराध किए। एक आरोपी ने इसके तहत दिल्ली में हत्या का अपराध किया।
वर्तमान मामले में षड्यंत्र का अपराध 1 दिसंबर 1947 से 30 जनवरी 1948 के बीच हुआ बताया जाता है। विभिन्न व्यक्तियों ने अलग-अलग तिथियों और स्थानों पर इस षड्यंत्र में भाग लिया। अतः विचारणीय मुख्य प्रश्न यह उठता है कि क्या षड्यंत्र उस क्षण पूर्ण हो गया जब पहले व्यक्ति ने किसी व्यक्ति या व्यक्तियों को अपनी मंशा बताई, या यह तब तक जारी रहा जब तक कि अंतिम व्यक्ति को षड्यंत्र में शामिल नहीं कर लिया गया।
यह आवश्यक नहीं है कि किसी षड्यंत्र में शामिल सभी व्यक्ति एक ही समय और एक ही स्थान पर षड्यंत्र रचें। 39 सीआर. एल.जे. 452 से पता चलता है कि उस मामले में षड्यंत्रकारियों ने अलग-अलग जिलों और अलग-अलग समय पर षड्यंत्र रचा था। 16 सीआर. एल.जे. 497 भी यही

दर्शाता है। 47 सीआर. एल.जे. 460 (2) में भी यही कहा गया है कि "...षड्यंत्र के अनुसरण में किए गए प्रत्यक्ष कृत्यों को स्वयं षड्यंत्र के साथ भ्रमित करने से कभी-कभी कठिनाई उत्पन्न होती है। जब किसी षड्यंत्र के किसी मध्यवर्ती चरण में किसी नए सदस्य को शामिल किया जाता है और वह किसी ऐसे अपराध में भाग लेने के लिए सहमत हो जाता है जिसकी योजना पहले से ही बनाई जा रही है, तो क्या यह कहा जा सकता है कि उसे योजना का खुलासा करना या उसे शामिल होने के लिए आमंत्रित करना मूल षड्यंत्रकारी द्वारा किया गया प्रत्यक्ष कृत्य है; या क्या यह कि केवल नए सदस्य द्वारा भाग लेने के लिए सहमति देना ही उसके द्वारा किया गया प्रत्यक्ष कृत्य है?" यदि यह तर्क स्वीकार कर लिया जाए कि किसी अपराध को अंजाम देने के लिए 'ए' और 'बी' के बीच सहमति होते ही षड्यंत्र अनिवार्य रूप से पूर्ण या समाप्त हो जाता है, तो 'सी' द्वारा बाद में भाग लेने की सहमति, चाहे वह कितनी भी जल्दी हो, तार्किक रूप से 'सी' को उसी षड्यंत्र में षड्यंत्रकारी नहीं बनाती। मुझे लगता है कि कुछ परिस्थितियों में, षड्यंत्र एक निरंतर अपराध हो सकता है। प्रत्येक मामला अपने तथ्यों पर निर्भर करता है। अतः मुझे लगता है कि कुछ मामलों में षड्यंत्र एक निरंतर अपराध हो सकता है।
दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 182 में यह प्रावधान है कि 'जहां कोई अपराध निरंतर होता है और एक से अधिक स्थानीय क्षेत्रों में लगातार किया जाता है, तो ऐसे किसी भी स्थानीय क्षेत्र पर अधिकार क्षेत्र रखने वाले न्यायालय द्वारा इसकी जांच या सुनवाई की जा सकती है।'
इस मामले में आरोपियों पर महात्मा गांधी की हत्या करने के लिए दिल्ली, बॉम्बे, पुणे और अन्य स्थानों पर 'षड्यंत्र' रचने का

आरोप है। उनमें से कुछ ने इसके अनुसरण में दिल्ली में षड्यंत्र द्वारा उकसाने के विभिन्न अपराध किए, और उनमें से एक ने इसके अनुसरण में दिल्ली में हत्या का अपराध किया। 39 सीआर. एल.जे. 452 में यह सिद्धांत भी निर्धारित किया गया है कि आरोपों और पक्षकारों के संयोजन का प्रश्न आरोपों के आधार पर तय किया जाना चाहिए, न कि अंतिम परिणामों के आधार पर। इसलिए यह मानने का कोई कारण नहीं है कि आरोपों और पक्षकारों के गलत संयोजन के कारण मुकदमा गलत है।
दत्तात्रेय एस. परचुरे की ओर से यह तर्क दिया गया है कि वह ग्वालियर सरकार का नागरिक है और इस नाते वह न्यायालय के अधिकार क्षेत्र के अधीन नहीं है।
अभियोजन पक्ष के आरोप हैं कि दत्तात्रेय एस. परचुरे एक ब्रिटिश नागरिक हैं जो 'भारत' में निवास करते हैं, कि नाथूराम वी. गोडसे और नारायण डी. आप्टे के कहने पर उन्होंने 28 जनवरी 1948 को ग्वालियर में महात्मा गांधी की हत्या के लिए एक पिस्तौल प्राप्त की थी और उसी पिस्तौल से नाथूराम वी. गोडसे ने 30 जनवरी 1948 को दिल्ली में महात्मा गांधी की हत्या की थी।
अभियोजन पक्ष ने दत्तात्रेय एस. परचुरे के मुकदमे की दिल्ली में सुनवाई के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 188 के तहत केंद्र सरकार की स्वीकृति प्रस्तुत की है। इन परिस्थितियों में न्यायालय को ग्वालियर में कथित रूप से किए गए अपराध के संबंध में दत्तात्रेय एस. परचुरे पर मुकदमा चलाने का क्षेत्रीय अधिकार क्षेत्र अवश्य प्राप्त है। न्यायालय को, उनके संबंध में कोई भी निर्णय देने से पहले, यह देखना होगा कि क्या वे वास्तव में भारत में निवास करने वाले ब्रिटिश नागरिक हैं।

दत्तात्रेय एस. परचुरे की ओर से यह तर्क दिया गया है कि अन्य आरोपियों के साथ उन पर एक ही मुकदमे में मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। ऊपर यह स्पष्ट किया जा चुका है कि षड्यंत्र का अपराध, उसके अनुसरण में षड्यंत्र द्वारा उकसाने के विभिन्न अपराध और उसके अनुसरण में हत्या का अपराध एक ही घटना का हिस्सा थे। इन परिस्थितियों में, दत्तात्रेय एस. परचुरे पर अन्य आरोपियों के साथ एक ही मुकदमे में मुकदमा चलाया जा सकता था।
इसके बाद अदालत की कार्यवाही 24 जून 1948 को दोपहर 2.00 बजे तक के लिए स्थगित कर दी गई।
(उपरोक्त अंश गांधी हत्याकांड मुकदमे नामक पुस्तक से लिया गया है, जो प्रकाशित हुई थी)
पहली बार मार्च 1949 में टैगोर मेमोरियल पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली के लिए।
(दीवान राम प्रकाश द्वारा।)

परिशिष्ट IV

अनुमोदक, बैज का बयान
मैं पुणे में हथियार और विस्फोटक बेचने का व्यवसाय करता हूँ, मेरी दुकान का नाम 'शास्त्र भंडार' है। 1940 में मेरा संपर्क हिंदू महासभा के पदाधिकारियों से हुआ। तब से मैं हिंदू महासभा के सम्मेलनों में भाग लेता रहा हूँ। इन सम्मेलनों के दौरान मैं किताबें और हथियार बेचा करता था। मैंने श्री दामोदर विनायक सावरकर के प्रवचन सुने हैं। मेरी मुलाकात सावरकर से 1944-45 में हुई थी। मैं सावरकर के अंगरक्षक अप्पा कासर को जानता हूँ। मैंने कासर के माध्यम से कुछ जांबिया (खंजर) बेचे थे।
'मैं गोडसे और आप्टे को 1940-41 से जानता हूं। मैं सावरकर के सचिव दामले के संपर्क में था। मैं करकरे को पिछले दो-तीन वर्षों से जानता हूं। मैं वधगांवकर नाम के एक व्यक्ति को भी जानता हूं।'
सन् 1944 में मैंने पुणे में हिंदू राष्ट्र दल की एक बैठक में भाग लिया था, जिसमें सावरकर ने भाषण दिया था। अपने भाषण में सावरकर ने कहा था कि कांग्रेस की नीतियां हिंदुओं के लिए खतरा हैं। उन्होंने यह भी आग्रह किया कि हिंदुओं को मुसलमानों का आर्थिक बहिष्कार करना चाहिए। यदि मुसलमान कोई आक्रोश दिखाएं तो हमें भी क्रूरता से जवाब देना चाहिए। हथियारों के इस्तेमाल में निपुणता हासिल करने और अपने युद्ध कौशल को निखारने के लिए हिंदुओं को बड़ी संख्या में सशस्त्र बलों में शामिल होना चाहिए।
1947 के दौरान मैं महीने में कम से कम दो बार दादर, बंबई में हिंदू महासभा के कार्यालय जाया करता था। जब भी मैं बंबई जाता,

महासभा के कार्यालय जाना मेरी प्राथमिकता होती थी। मुझे याद है कि सावरकर के आवास पर एक बैठक हुई थी। मेरे अलावा लगभग 20 से 25 लोग वहाँ मौजूद थे। वहाँ उपस्थित सभी लोगों की एक सामूहिक तस्वीर ली गई थी। मैं भी उस सामूहिक तस्वीर में था।
प्रश्न - 'क्या आपने कभी आप्टे को कोई हथियार दिए थे?'
उत्तर - 'हां, मैंने कई मौकों पर आप्टे को हथियार मुहैया कराए थे।'
अदालत ने प्रश्न और उत्तर को उसी रूप में दर्ज किया जिस रूप में इसे पूछा और उत्तर दिया गया था, क्योंकि बचाव पक्ष ने इस पर आपत्ति जताते हुए दावा किया था कि अभियोजन पक्ष ने एक भ्रामक प्रश्न पूछा था।
आगे बोलते हुए बैज ने कहा, 'आप्ते पहली बार जुलाई-अगस्त 1947 में मुझसे हथियार और विस्फोटक खरीदने आए थे। उस समय करकरे भी आप्ते के साथ थे। आप्ते पुणे स्थित मेरी दुकान पर हथियार, गोला-बारूद और विस्फोटक खरीदने आए थे। उन्होंने मुझसे कहा, 'कुछ बहुत ही प्रतिष्ठित लोग आपसे हथियार, गोला-बारूद और विस्फोटक खरीदना चाहते हैं। लेकिन इस समय मुझे एक स्टेन गन दिलवा दीजिए।' मैंने गुरदयाल सिंह से आप्ते और करकरे के लिए एक स्टेन गन मंगवाई। येरवदा जेल के पीछे आप्ते को स्टेन गन सौंपी गई। आप्ते ने इसके लिए मुझे 1200 रुपये दिए। जुलाई-अगस्त से दिसंबर 1947 तक मैंने आप्ते और करकरे को 3000 रुपये के हथियार, गोला-बारूद और विस्फोटक बेचे थे।'
एक दिन मैं अपने परिवार के साथ भोर राज्य की तीर्थयात्रा पर जा रहा था। हम बैलगाड़ी से जा रहे थे। यरवंदने नामक एक गाँव में मेरी मुलाकात आप्टे से हुई, जो मोटरसाइकिल चला रहा था। उसने मुझसे पूछा, 'मुझे सामान चाहिए' ('सामान' हथियारों, गोला-बारूद और

विस्फोटकों के लिए इस्तेमाल किया जाने वाला सांकेतिक शब्द था)। मैंने उसे आश्वासन दिया कि मैं लौटने पर सामान उपलब्ध करा दूंगा। आठ-दस दिन बाद तीर्थयात्रा पूरी करके मैं पुणे लौट आया। एक-दो दिन के भीतर मैंने आप्टे द्वारा मंगवाया गया सामान इकट्ठा कर लिया। सारा सामान इकट्ठा करने के बाद मैं हिंदू राष्ट्र दल के कार्यालय गया और आप्टे को सूचित किया कि उसका सामान तैयार है। आप्टे ने मुझसे कहा कि हिंदू राष्ट्र दल के सदस्य लौटते ही वह आकर अपना सारा सामान ले जाएगा। दिसंबर के आखिरी सप्ताह में आप्टे मेरी दुकान पर आया और मुझसे पूछा कि क्या मेरे पास अभी भी वह सामान है जो मैंने उसके लिए मंगवाया था? उसने कहा कि वह कुछ दिनों में करकरे को सामान लेने भेज देगा।
'फिर 9 जनवरी को शाम करीब 6:30 बजे आप्टे मेरी दुकान पर आए। उन्होंने मुझसे सामान तैयार रखने को कहा, करकरे कुछ लोगों के साथ कुछ घंटों में आकर सामान का निरीक्षण करेंगे। उसी शाम करीब 8:30 बजे करकरे तीन अन्य लोगों के साथ मेरी दुकान पर आए। वे तीनों मदनलाल, ओमप्रकाश और चोपड़ा थे। मैंने मदनलाल को इससे पहले कभी नहीं देखा था। करकरे ने परिचय कराया।'
फिर करकरे ने मुझसे पूछा, 'भाई, हमें वह सामान दिखाओ जो तुम आप्ते के लिए रखे हो।' मैंने अपने नौकर शंकर को वह सामान लाने को कहा। मदनलाल ने सामान का निरीक्षण किया और कहा कि वह जानता है कि इसका इस्तेमाल कैसे करना है। सामान में गन कॉटन के टुकड़े, हैंड ग्रेनेड, गोलियां, पिस्तौल, प्राइमर और फ्यूज शामिल थे। इन लोगों ने सारा सामान देखा और फिर चले गए। आप्ते 10 जनवरी को सुबह 10 बजे शस्त्र भंडार आए और मुझसे हिंदू राष्ट्र दल के कार्यालय चलने को कहा। जब हम कार्यालय पहुंचे तो वहां नाथूराम

गोडसे मौजूद थे। आप्ते ने मुझसे गन कॉटन की 2 पटियां, 2 रिवॉल्वर और 5 हैंड ग्रेनेड लाने को कहा। उस समय मैं आप्ते के साथ हिंदू राष्ट्र दल कार्यालय के ठीक बाहर खड़ा था। गोडसे कार्यालय के अंदर खड़े थे।
मैंने आप्टे से कहा कि उस समय मेरे पास रिवाल्वर का स्टॉक नहीं था, लेकिन बाकी सामान मैं तुरंत उपलब्ध करा सकता था। आप्टे ने मुझसे गन कॉटन की दो स्लैब और पांच हैंड ग्रेनेड तुरंत उपलब्ध कराने को कहा। उन्होंने बताया कि उन्हें सामान बॉम्बे में चाहिए। उन्होंने मुझे आश्वासन दिया कि बॉम्बे तक के अतिरिक्त परिवहन का खर्च वे उठाएंगे।
मैंने आप्टे से कहा कि चालीसगांव में अपना पैतृक घर बेचने के बाद ही मैं बॉम्बे में 'सामान' पहुंचा पाऊंगा। आप्टे इंतजार करने को तैयार हो गए। यह सब तय होने के बाद, आप्टे ने गोडसे को बुलाया और उसे सौदे के बारे में बताया और कहा, 'आपला एक काम पर पड़ गया'।
'गोडसे और आप्टे ने मुझे बताया कि मुझे 14 जनवरी तक बॉम्बे में हिंदू महासभा के दादर कार्यालय में 'सामान' पहुंचा देना चाहिए। 12 तारीख को मैंने चालीसगांव में अपना पुश्तैनी घर बेच दिया और अगले दिन पुणे लौट आया। मैंने अपने नौकर शंकर को आदेश दिया कि वह सारा 'सामान' बॉम्बे ले जाए और 14 तारीख की शाम को गोडसे और आप्टे को सौंप दे। मैंने उनके लिए दो गन कॉटन स्लैब, फ्यूज और प्राइमर तथा पांच हैंड ग्रेनेड एक खाकी बैग में पैक किए और शंकर को सौंप दिए।'
14 जनवरी को मैं शंकर के साथ बंबई के लिए रवाना हुआ। बंबई पहुँचकर हम सीधे दादर स्थित हिंदू महासभा कार्यालय गए। उस समय न तो आप्टे और न ही गोडसे वहाँ मौजूद थे। जब मैंने उनके आने का

समय पूछा, तो मुझे बताया गया कि वे जल्द ही आने वाले हैं। हमने आधे घंटे तक इंतज़ार किया। जब तक वे नहीं आए, हम चाय-नाश्ता करने नीचे आ गए। सीढ़ियों से उतरते समय मैंने आप्टे को ऊपर चढ़ते देखा। मुझे देखते ही आप्टे ने कहा, 'अच्छा हुआ कि तुम आ गए। हमें सामान को सुरक्षित रखने के लिए कोई जगह ढूंढनी होगी, मेरे साथ आओ।' मैंने शंकर से बैग लिया और उसे रुकने के लिए कहा। मैं आप्टे के पास चला गया। हम मुश्किल से चार-पाँच सीढ़ियाँ ही उतरे थे कि गोडसे से हमारी टक्कर हो गई, जो ऊपर चढ़ रहा था।
हम हिंदू महासभा कार्यालय से पैदल चलकर शिवाजी पार्क स्थित सावरकर के आवास पर पहुँचे। आप्टे ने मुझसे बैग ले लिया और मुझे बाहर इंतजार करने को कहा। वह गोडसे के साथ सावरकर के घर में दाखिल हुए। वे पाँच-दस मिनट बाद बाहर आए; आप्टे के हाथ में 'सामान' से भरा बैग था। हम तीनों वापस हिंदू महासभा कार्यालय गए। मैंने शंकर को आवाज़ दी और उसे हमारे साथ आने को कहा। आप्टे ने एक कार किराए पर ली और हम चारों भूलेश्वर में दीक्षित महाराज के घर गए। मैं दीक्षित महाराज को 1940-41 से जानता था। हम चारों उनके घर में दाखिल हुए। रात के 10:30 बज रहे थे, दीक्षित महाराज सो रहे थे। हमने शंकर को प्रवेश द्वार पर छोड़ दिया और घर के अंदर चले गए। हमने दीक्षित महाराज के एक नौकर को देखा और उसे बैग सौंप कर उसे सुरक्षित रखने को कहा। हमने उससे कहा कि हम सुबह उसे ले लेंगे। नौकर मान गया।
हम हिंदू महासभा के दादर कार्यालय वापस आ गए। शंकर और मुझे वहाँ छोड़ दिया गया। आप्टे ने गोडसे को कुछ पैसे दिए, गोडसे ने मुझे यात्रा और भोजन के लिए उसमें से 50 रुपये दिए। उन्होंने अगली सुबह मुझसे मिलने का वादा किया और हमें हिंदू महासभा परिसर में सोने के लिए कहा।

'मैं हिंदू महासभा कार्यालय में मदनलाल से मिला। मैंने उनसे पूछा, 'करकरे कहाँ हैं?' मदनलाल ने उत्तर दिया कि करकरे ठाणे गए हैं, वे एक-दो दिन में लौट आएंगे।'
अगले दिन, 15 जनवरी को, सुबह लगभग 8:30 बजे आप्टे और गोडसे महासभा कार्यालय पहुँचे। उस समय मदनलाल, शंकर और मैं दो-तीन कार्यालय कर्मचारियों के साथ वहाँ मौजूद थे। आप्टे ने हमें अपने साथ चलने को कहा। हम आप्टे के पीछे-पीछे चले। मदनलाल ने तब तक स्नान नहीं किया था, इसलिए वह पीछे रह गए। शंकर और मैं आप्टे और गोडसे के साथ शिवाजी प्रिंटिंग प्रेस के कार्यालय गए। कार्यालय के ठीक बाहर हमारी मुलाकात करकरे से हुई। आप्टे ने शंकर को बाहर इंतजार करने को कहा; हम बाकी लोग कार्यालय में चले गए। हमें प्रेस के मालिक जोशी से मिलना था। मुझे बाहरी कार्यालय में बैठने को कहा गया; करकरे, आप्टे और गोडसे जोशी के साथ भीतरी कार्यालय में गए। वे लगभग एक घंटे बाद बाहर आए। जोशी से विदा लेने के बाद, हम सभी हिंदू महासभा कार्यालय लौट आए। कार्यालय पहुँचते ही करकरे ने मदनलाल को अपना सामान उठाकर उनके साथ आने का आदेश दिया। हम सब बाहर निकले। शंकर को पीछे छोड़कर हम सब आप्टे द्वारा किराए पर ली गई टैक्सी में बैठ गए और दीक्षित महाराज के घर की ओर चल दिए। मदनलाल सामान के साथ प्रवेश द्वार पर इंतजार कर रहा था। बाकी सब अंदर चले गए। वहाँ हमारी मुलाकात दीक्षित महाराज से हुई; हम वो बैग लेने गए थे जिसमें वो सामान था जो हमने पिछली शाम वहीं छोड़ दिया था।
मैंने दीक्षित महाराज से अपने नौकर को थैला लाने के लिए कहा। वह तुरंत नहीं ला सका, लेकिन एक घंटे बाद थैला लाया गया। मैंने थैला खोला और उसमें रखा सारा सामान आप्टे को दिखाया। फिर मैंने थैला दोबारा पैक किया और आप्टे को सौंप दिया। आप्टे ने थैला

करकरे को दे दिया। आप्टे ने करकरे से कहा कि वह मदनलाल के साथ फ्रंटियर या पंजाब मेल से दिल्ली के लिए रवाना हो जाए। करकरे ने थैला मदनलाल को दिया और उसे बिस्तर में पैक करने के लिए कहा। फिर करकरे और मदनलाल दीक्षित महाराज के निवास से चले गए। 'गांधी, नेहरू और सुहरावर्दी को ख़त्म करो!'
हम सब दीक्षित महाराज के कमरे में बैठ गए और उनसे बातचीत करने लगे। आप्टे ने उन्हें बताया कि हम एक बहुत महत्वपूर्ण मिशन पर दिल्ली जा रहे हैं, और दीक्षित महाराज से एक-दो रिवॉल्वर देने का अनुरोध किया। दीक्षित महाराज ने कहा कि उनके पास कोई रिवॉल्वर नहीं है, उनके पास एक छोटी पिस्तौल है, लेकिन उन्होंने आप्टे को देने से इनकार कर दिया। आप्टे ने दीक्षित महाराज से अनुरोध किया कि वे कम से कम हमारे लिए एक रिवॉल्वर का इंतजाम कर दें। दीक्षित महाराज ने हमारे लिए एक रिवॉल्वर दिलाने की कोशिश करने का वादा किया। फिर हम दीक्षित महाराज के घर से बाहर निकले और आंगन में खड़े हो गए। आप्टे ने मुझसे पूछा कि क्या मैं उनके साथ दिल्ली चलूंगा? मैंने उनसे पूछा, 'मुझे क्यों आना चाहिए?' आप्टे ने मुझे बताया कि सावरकर ने गांधीजी, पंडित जवाहरलाल नेहरू और हसन शहीद सुहरावर्दी को खत्म करने का फैसला कर लिया है, और यह काम उन्होंने आप्टे और गोडसे को सौंपा है। उन्होंने कहा कि अगर मैं उनके साथ जाने के लिए सहमत हो जाऊं, तो वे मेरे यात्रा और भोजन का खर्च उठाएंगे।
मैंने आप्टे को बताया कि मैं सीधे बॉम्बे से दिल्ली नहीं जा सकता, मुझे पहले कुछ घरेलू काम निपटाने होंगे, इसलिए मुझे पुणे जाना पड़ेगा, उसके बाद मैं दिल्ली के लिए रवाना होऊंगा। गोडसे ने कहा कि उन्हें भी पुणे जाना है यह पता करने के लिए कि क्या उनके भाई गोपाल ने वादा किया हुआ एक रिवॉल्वर हासिल कर लिया है।

गोपाल गोडसे को भी बॉम्बे आना था और फिर हमारे साथ दिल्ली जाना था। फिर हम टैक्सी में बैठे और पायधोनी स्थित कॉटन एक्सचेंज बिल्डिंग पहुंचे। गोडसे और आप्टे बिल्डिंग के अंदर गए और बीस-पच्चीस मिनट बाद वापस आ गए। मैं कार से उतर गया। आप्टे ने मुझे बताया कि मुझे 17 जनवरी की सुबह बोरीबंदर, विक्टोरिया टर्मिनस स्टेशन पर उनसे मिलना चाहिए। मैं दादर स्थित हिंदू महासभा कार्यालय गया।
उस शाम मेरी मुलाकात हिंदू महासभा कार्यालय के सामने मदनलाल से हुई। उन्होंने मुझे बताया कि उनकी ट्रेन छूट गई थी और वे योजना के अनुसार दिल्ली नहीं जा सके। करकरे स्टेशन पर इंतजार कर रहे थे। मदनलाल कुछ निजी काम निपटाने के बाद उनसे मिलेंगे। उन्होंने कहा कि अब वे रात की ट्रेन से दिल्ली के लिए रवाना होंगे।
मैं 15 जनवरी की रात को किस्तय्या के साथ पुणे के लिए रवाना हुआ। हम अगले दिन आधी रात के बाद पुणे पहुँचे। मैं पुणे में रहने वाले देशमुख नाम के एक व्यक्ति को जानता हूँ। मैं उससे 16 जनवरी को पुणे में मिला। मैं उसे कुछ सामान देना चाहता था, जिसे वह निज़ाम के क्षेत्रों में प्रादेशिक कांग्रेस के लोगों को बेच देगा। मैं उस दिन अपना सारा माल बेचना चाहता था क्योंकि मुझे आप्टे और उनके समूह में शामिल होने के लिए निकलना था और उनके साथ दिल्ली जाना था। खरात के घर से लौटते समय, मेरी मुलाकात हिंदू राष्ट्र कार्यालय में एन.वी. गोडसे से हुई। मैं हिंदू राष्ट्र कार्यालय के पास से गुजर रहा था जब गोडसे ने मुझे दो बार आवाज़ दी और वापस बुलाया। गोडसे यह पुष्टि करना चाहता था कि मैं उनके साथ दिल्ली चलूँगा, मैंने उसे आश्वासन दिया कि मैं चलूँगा।

बाद में गोडसे मेरे पास एक छोटी पिस्तौल लेकर आया और मुझसे उसे एक बड़ी रिवॉल्वर से बदलने को कहा। मैं हैदराबाद स्टेट कांग्रेस के एक कार्यकर्ता शर्मा के घर गया। मैंने हाल ही में उसे एक 32 गेज की रिवॉल्वर बेची थी। मैंने शर्मा को रिवॉल्वर के बदले पिस्तौल देने के लिए मना लिया, वह मान गया और उसने चार जिंदा कारतूसों के साथ रिवॉल्वर मुझे सौंप दी।
उस रात शंकर और मैंने सुबह 2:40 बजे बॉम्बे के लिए ट्रेन पकड़ी। हम 17 तारीख की सुबह बॉम्बे पहुंचे। मैंने शंकर को दादर स्टेशन पर उतरकर हिंदू महासभा कार्यालय में मेरा इंतजार करने को कहा। मैं विक्टोरिया टर्मिनस की ओर बढ़ा, जहां मेरी मुलाकात नारायण आप्टे और नाथूराम गोडसे से होनी थी। मैं उनसे प्लेटफार्म के ठीक बाहर मिला। आप्टे ने सुझाव दिया कि दिल्ली जाने से पहले हमें कुछ पैसे ले लेने चाहिए। आप्टे ने एक टैक्सी बुलाई और हम लालबाग स्थित गवर्नमेंट गेट रोड की ओर चल पड़े, जहां बॉम्बे डाइंग वर्क्स स्थित था। वहां हमारी मुलाकात मालिक चरणदास मेघजी माथुरदास से हुई। मैंने आप्टे और गोडसे का परिचय उनसे कराया।
सावरकर का आशीर्वाद
वहाँ से हम दादर स्थित हिंदू महासभा कार्यालय आए और किस्तय्या को साथ ले लिया। जब हम सब टैक्सी में बैठ गए, तो गोडसे ने सुझाव दिया कि हमें सावरकर का अंतिम आशीर्वाद लेना चाहिए। इसलिए हम सावरकर सदन की ओर चल पड़े। हमने शंकर को टैक्सी में ही रुकने को कहा और हम तीनों सावरकर के घर में प्रवेश कर गए। आप्टे ने मुझे भूतल के एक कमरे में रुकने को कहा; वह और गोडसे पहली मंजिल पर चले गए। वे पाँच-दस मिनट में सावरकर के पीछे-पीछे लौट आए। उन्होंने गोडसे को संबोधित करते हुए कहा, 'यशस्वी होउन या।' 'सफल

होकर लौट आना।' फिर हम उसी टैक्सी में रूइया कॉलेज की ओर चल पड़े। रास्ते में आप्टे ने कहा, 'तात्याराव नी असे भविष्य केले आहे की अता गांधी ची शंभर वर्षे भरली।' अता कहीं संशय नहीं कि अपला काम यशस्वी होना चाहिए।'' तात्याराव, सावरकर ने भविष्यवाणी की है कि अब गांधीजी के सौ वर्ष पूरे हो गये। इसमें कोई संदेह नहीं कि हमारा कार्य सफल होगा।'
(आप्टे ने मराठी में कहा था, 'गांधी ची शंभर वर्षे भरली'। अभियोजन पक्ष ने यह सुनिश्चित किया कि न्यायालय को मराठी के ये शब्द रोमन लिपि में लिखवाए जाएं। गोडसे के वकील ओक ने मुख्य अभियोजक दफ्तरी की कड़ी निगरानी में यह फैसला लिखा।)
फिर हम अफजलपुरकर के घर गए और वहाँ करीब पंद्रह-बीस मिनट रुके। मैं उनसे अपने द्वारा विकसित की जा रही बुलेटप्रूफ जैकेट के बारे में बात करना चाहता था। मैंने गोडसे और आप्टे का उनसे परिचय कराया। हमने हैदराबाद राज्य की स्थिति पर चर्चा की। अफजलपुरकर ने हमें सौ रुपये दिए। अफजलपुरकर से सौ रुपये लेने के बाद हम टैक्सी से काले के घर गए। हमने पाटनकर को अपने साथ ले लिया ताकि वह हमें काले के घर का रास्ता दिखा सके। गोडसे, आप्टे, पाटनकर और मैं काले के घर गए। हमने शंकर को टैक्सी में ही रहने को कहा। पाटनकर ने गोडसे और आप्टे का काले से परिचय कराया और फिर चले गए। फिर गोडसे और आप्टे ने काले से अंग्रेजी में बात करना शुरू किया जो मुझे बिल्कुल समझ नहीं आया। करीब पाँच-दस मिनट की बातचीत के बाद, काले सीढ़ियों से ऊपर गए और पैसों का एक बंडल लेकर नीचे आए, उन्होंने वह बंडल गोडसे को दे दिया। बंडल में दस-पंद्रह सौ रुपये के नोट थे।
फिर हम सब बॉम्बे डाइंग वर्क्स वापस चले गए। मालिक का छोटा भाई दफ्तर में था। शंकर और मैं टैक्सी से उतरकर वहीं इंतजार करने

लगे, गोडसे और आप्टे टैक्सी में कहीं चले गए। डेढ़ घंटे बाद आप्टे उसी टैक्सी में वापस आया, वह अकेला था, गोडसे दूसरी टैक्सी लेकर कहीं और कोई काम निपटाने चला गया था। आप्टे के आने तक बॉम्बे डाइंग वर्क्स का मालिक भी वापस आ चुका था। आप्टे ने उससे करीब पंद्रह मिनट तक अंग्रेजी में बात की। फिर हम सब टैक्सी में बैठकर दीक्षित महाराज के घर आ गए। शंकर को टैक्सी में छोड़कर आप्टे और मैं घर में दाखिल हुए। आप्टे दीक्षित महाराज से एक रिवॉल्वर लेना चाहता था। दीक्षित महाराज ने उसे एक छोटी पिस्तौल दिखाई। आप्टे को पिस्तौल पसंद आ गई, लेकिन दीक्षित महाराज ने भुगतान होने तक पिस्तौल देने से इनकार कर दिया। आप्टे ने उन्हें याद दिलाया कि उनके बड़े भाई दादा महाराज ने पिस्तौल देने का वादा किया था, 'आपको कम से कम यह पिस्तौल तो देनी ही होगी।' लेकिन दीक्षित महाराज ने पिस्तौल देने से इनकार कर दिया और आखिरकार हम वहां से खाली हाथ लौट आए। 'हम पहले गलती से जुहू हवाई अड्डे चले गए और फिर वहां से जल्दी से सांता क्रूज़ हवाई अड्डे पहुंचे। आप्टे ने मुझे 350 रुपये दिए और शंकर किस्तय्या के साथ उसी रात ट्रेन से दिल्ली जाने को कहा। फिर किस्तय्या और मैं एक ही टैक्सी में कुर्ला गए, पटवर्धन से मिलने के लिए। वह उस समय वहां नहीं थे। मैंने वहीं रुकने का फैसला किया, इसलिए मैंने टैक्सी चालक को 55 रुपये और 50 पैसे दिए और उसे विदा करने से पहले उससे रसीद ले ली। हम वहां रात 9:30 बजे तक रुके, पटवर्धन ने मुझे 400 रुपये दिए।'
'18 जनवरी को शंकर और मैं सुबह दीक्षित महाराज के घर वापस गए। हमें उनसे कोई धन या हथियार नहीं मिले। हम दोपहर तक वहीं रुके रहे। हम दोपहर 2:30 बजे विक्टोरिया टर्मिनस स्टेशन पहुंचे और

पंजाब मेल के इंटर क्लास डिब्बे में सवार होकर दिल्ली के लिए रवाना हो गए।'
दिल्ली आगमन, हत्या की तैयारियां हम 19 जनवरी की शाम 9:30 बजे दिल्ली पहुंचे। हम एक तांगे में बैठकर हिंदू महासभा भवन पहुंचे। वहां हमने मदनलाल को एक अन्य व्यक्ति के साथ हॉल में बैठे पाया। मदनलाल ने उनका परिचय हमसे कराया, वे नाथूराम गोडसे के छोटे भाई गोपाल गोडसे थे। थोड़ी देर बाद आप्टे, करकरे और गोडसे भी आ गए। उन्होंने मुझे, शंकर, गोपाल और मदनलाल को उस रात हॉल में सोने के लिए कहा और अगली सुबह वापस आने का वादा करके चले गए।
20 जनवरी की सुबह, आप्टे और करकरे सुबह 8:30 बजे हिंदू महासभा भवन आए। उन्होंने मदनलाल को ईंधन खरीदने के लिए कुछ पैसे दिए और फिर चले गए। आप्टे आधे घंटे बाद लौटे और शंकर और मुझे बिड़ला हाउस चलने के लिए कहा। हम कार से बिड़ला हाउस गए और मुख्य द्वार पर कार रोक दी। जब आप्टे और मैं कार से उतरे और अंदर जाने की कोशिश की तो संतरी ने हमें रोक दिया। आप्टे ने उसे बताया कि हम गांधीजी के सचिव से मिलना चाहते हैं। संतरी ने हमसे एक पर्ची पर अपना नाम और मिलने का कारण लिखने को कहा और उसे देने को कहा। आप्टे ने पर्ची पर कुछ लिखा और संतरी को दे दिया। जैसे ही संतरी पर्ची लेकर अंदर गया, काले सूट पहने एक व्यक्ति द्वार से बाहर निकला। आप्टे ने उस व्यक्ति की ओर इशारा किया और मेरे कान में फुसफुसाया - 'यह सुहरावर्दी हैं, वे प्रार्थना के दौरान गांधीजी के बगल में बैठते हैं।'
तभी संतरी लौट आया और आप्टे और मैं बिरला हाउस के परिसर में दाखिल हुए। हम घर के पीछे वाले लॉन की ओर बढ़े जहाँ प्रार्थना सभाएँ होती थीं। आप्टे ने एक जगह की ओर इशारा करते हुए कहा कि

गांधीजी और सुहरावर्दी यहाँ बैठे होंगे। आप्टे ने मुझे एक खिड़की दिखाई; वह जालीदार ग्रिल से ढकी हुई थी। आप्टे ने ग्रिल के छेद नापकर बताया कि इसमें से रिवॉल्वर चलाई जा सकती है और हैंडगन भी फेंकी जा सकती है। "जहाँ तक संभव हो, हमें यह सुनिश्चित करना चाहिए कि गांधीजी और सुहरावर्दी दोनों पहले ही हमले में मारे जाएँ। अगर हम दोनों को नहीं मार सकते, तो कम से कम एक को तो मारना ही होगा।"
फिर हम प्लेटफार्म के दूसरी तरफ गए। आप्टे ने दो जगहों की ओर इशारा किया, एक जगह ठीक सामने दीवार के पास थी और दूसरी बाईं ओर। उन्होंने कहा, "हम दोनों जगहों पर गन कॉटन स्लैब से विस्फोट करेंगे, ताकि लोगों का ध्यान विस्फोटों की ओर चला जाए, फिर उस अफरा-तफरी में हम गांधीजी को बिना किसी को पता चले मार देंगे।" आप्टे ने मुझे बताया कि वेंटिलेटर के पीछे एक कमरा है, "तुम फोटोग्राफर बनकर उसमें घुस सकते हो।" अंदर घुसने के बाद मैं ग्रिल के पीछे से गोली चला सकता था और छेद से ग्रेनेड भी फेंक सकता था। हम कमरे में नहीं गए, लेकिन हम चारों ओर घूमे और जगह का जायजा लिया।
"20 जनवरी को हम बिरला हाउस परिसर और पूजा स्थल की पूरी तरह से छानबीन करने के बाद सुबह 11:30 बजे हिंदू महासभा भवन लौट आए। आप्टे मुझे महासभा में छोड़कर कहीं चले गए, वे बीस से पच्चीस मिनट बाद लौटे। फिर आप्टे ने गोपाल गोडसे से कहा कि हमें महासभा भवन के पीछे जंगल में जाकर तोपों का परीक्षण करना चाहिए। गोपाल गोडसे और मैं दिल्ली आते समय एक-एक रिवॉल्वर अपने साथ लाए थे। फिर आप्टे, गोपाल, शंकर और मैं महासभा भवन के पीछे के जंगलों में गए। गोपाल के पास.38 बोर की रिवॉल्वर थी; शंकर के पास दूसरी रिवॉल्वर थी जो या तो.32 या.22 बोर की थी।"

जब हम जंगल के अंदरूनी हिस्से में पहुँचे और रिवाल्वरों को चलाकर देखा, तो हमें पता चला कि गोपाल द्वारा लाई गई रिवाल्वर पूरी तरह से जाम थी और बिल्कुल बेकार थी। फिर आप्टे ने शंकर की रिवाल्वर का निरीक्षण किया। उन्होंने उसमें चार गोलियाँ भरीं और शंकर को उसे चलाने के लिए कहा। शंकर को दस कदम दूर एक पेड़ पर गोली चलाने के लिए कहा गया। कुछ गड़बड़ थी, गोली पेड़ तक पहुँची ही नहीं। वह कुछ ही फीट पहले ज़मीन पर गिर गई। आप्टे ने उस रिवाल्वर को भी अस्वीकार कर दिया। गोपाल ने वहीं अपनी रिवाल्वर को साफ और ठीक करने का फैसला किया। उन्होंने शंकर को महासभा भवन में रखे अपने बैग से एक चाकू और तेल की बोतल लाने के लिए कहा। थोड़ी देर में शंकर गोपाल द्वारा माँगी गई चीज़ें लेकर लौट आया। जब गोपाल अपनी रिवाल्वर ठीक कर रहा था, तीन वन रक्षक हमारे पास आए। उनमें से एक ने हमसे पूछा - 'आप यहाँ क्या कर रहे हैं?' इससे पहले कि रक्षक हम तक पहुँच पाते, हमने रिवाल्वरों को ज़मीन पर बिछाई हुई चादर के नीचे छिपा दिया। गोपाल ने उनके सवालों के जवाब दिए और फिर उनसे पंजाबी में बातचीत की, थोड़ी देर में तीनों रक्षक चले गए।
आप्टे ने कहा कि अब वहां रहना सुरक्षित नहीं है, इसलिए हम महासभा भवन लौट आए। हमने करकरे और मदनलाल को हॉल में बैठे पाया। आप्टे ने करकरे को मरीना होटल जाने और मदनलाल को अपने साथ ले जाने को कहा; उन्होंने करकरे से कहा कि हम भी थोड़ी देर में मरीना होटल पहुंच जाएंगे। मदनलाल बिस्तर हिंदू महासभा भवन में ही छोड़ आए थे। उन दोनों के जाने के कुछ देर बाद, आप्टे ने गोपाल और हम सभी को मरीना होटल की ओर चलने को कहा। 'गोपाल, तुम 'सामान' वाला थैला अपने साथ ले चलो।' गोपाल ने थैला उठाया और हम सभी मरीना होटल आ गए। हमने होटल की तीसरी मंजिल पर एक कमरे में

चारपाई पर नाथूराम गोडसे को लेटा हुआ पाया। गोपाल ने थैला कमरे में रख दिया। शंकर और मैं नीचे आए और दोपहर का भोजन किया। दोपहर के भोजन के बाद जब हम लौटे तो देखा कि गोपाल अभी भी अपनी बंदूक की मरम्मत कर रहा था। कमरे में घुसकर हमने अंदर से दरवाजे बंद कर दिए। आप्टे, करकरे, मदनलाल और मैं बाथरूम में चले गए, जबकि नाथूराम गोडसे और शंकर बाथरूम के दरवाजे के पास खड़े रहे। हम चारों ने बंदूक के लिए रुई की पट्टियाँ तैयार करना शुरू किया। हमने रुई की पट्टियों पर डेटोनेटर, प्राइमर और फ्यूज तार लगाए और उन्हें विस्फोट के लिए तैयार घातक बमों में बदल दिया। उसी समय, नाथूराम गोडसे ने मुझे संबोधित करते हुए कहा - 'बैज, हा आमचा शेवत चा प्रयत्न अहे, हे काम आज ज़लेच पहिजे, सगला व्यवस्थित फोडा', 'बैज, यह हमारा आखिरी प्रयास है, काम आज ही पूरा होना चाहिए। सुनिश्चित करें कि सब कुछ ठीक से जुड़ा हुआ है।' यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि नाथूराम 'आमचा' यानी 'हमारा' शब्द का प्रयोग बहुवचन या शाही अंदाज में एकवचन के रूप में कर रहे होंगे। कई उच्च जाति के महाराष्ट्रियों में स्वयं को संबोधित करने के लिए विनम्र 'मैं' के बजाय आडंबरपूर्ण 'हम' का प्रयोग करने की आदत थी।
हथियार वितरित किए गए - गुप्त नाम दिए गए - भेष बदले गए
बैज ने आगे बताया, 'जब तक हमने गन कॉटन बम तैयार कर लिया और हैंड ग्रेनेड को प्राइम करके कमरे में वापस आए, तब तक गोपाल ने अपना रिवॉल्वर ठीक कर लिया था और साफ कर लिया था। आप्टे ने कहा, "अब हमें तय करना होगा कि कौन किस हथियार और विस्फोटक को लेकर चलेगा। ठीक है, मदनलाल और शंकर, तुम दोनों एक-एक गन कॉटन बम और हैंड ग्रेनेड लेकर चलो। नाथूराम, गोपाल और करकरे एक-एक हैंड ग्रेनेड लेकर चलेंगे और बैज और मैं एक-एक रिवॉल्वर लेकर

चलेंगे।" मैंने उनसे कहा कि लोगों में दहशत फैलाने के लिए सिर्फ एक गन कॉटन बम ही काफी है, "यह उम्मीद करना बहुत ज्यादा है कि एक व्यक्ति दो जगहों पर दो गन कॉटन बम फोड़ दे और किसी को पता भी न चले। मदनलाल को एक गन कॉटन बम और एक हैंड ग्रेनेड दे दो। शंकर और मैं एक-एक हैंड ग्रेनेड और एक-एक रिवॉल्वर लेकर चलेंगे। बाकी सब एक-एक हैंड ग्रेनेड लेकर चलें।" नाथूराम और आप्टे बाकी सबको इशारा करेंगे और हम सब मिलकर काम करेंगे। आप्टे ने अंतिम निर्देश दिए। "मदनलाल, तुम मंच के जितना हो सके पास, पीछे की दीवार पर एक गन कॉटन बम फोड़ दो। बम फटते ही बैज, फोटोग्राफर बनकर नौकरों के क्वार्टर के पीछे वाले कमरे में घुस जाओ और गांधीजी पर पीछे से गोली चलाओ और वेंटिलेटर ग्रिल के छेदों से उन पर एक ग्रेनेड भी फेंक दो। मैं मदनलाल को इशारा करूंगा और नाथूराम मुझे इशारा करता रहेगा। बाकी लोग प्रार्थना सभा में मौजूद लोगों के बीच मिल जाएंगे।"
फिर आप्टे ने हम सभी को हमारे कोड नाम दिए। नथुराम गोडसे - देशपांडे, करकरे - व्यास, आप्टे - कर्मकार, बैज - बंदोपंत और शंकर
- तुकाराम। मुझे गोपाल और मदनलाल को दिए गए कोड नाम याद नहीं हैं। आप्टे ने यह भी कहा कि हमें उपयुक्त वेश धारण करना चाहिए। नथुराम ने सैन्य वर्दी के समान खाकी कपड़े पहनने का फैसला किया; आप्टे ने नीला सूट पहना; करकरे ने जवाहर कमीज (लंबी कमीज), धोती और गांधी टोपी पहनी; मदनलाल ने कोट, कमीज और पतलून पहनकर अंग्रेज की तरह कपड़े पहने; गोपाल ने कमीज, शॉर्ट्स और जैकेट पहनी; मैंने धोती और जवाहर कोट पहना; शंकर ने कोट, कमीज (कमरबंद), धोती और टोपी पहनी; करकरे ने अपनी मूंछें मुंडवा लीं और अपनी पतली साइडबर्न को आई पेंसिल से गहरा रंग दिया। उन्होंने अपने माथे पर चमकीला सिंदूरी तिलक लगाया।

फिर आप्टे ने करकरे को एक गन कॉटन बम और एक हैंड ग्रेनेड सौंपते हुए कहा कि वह इसे मदनलाल को दे दे। उसने मुझे और शंकर को एक-एक हैंड ग्रेनेड और एक-एक रिवॉल्वर दी। फिर मदनलाल और करकरे बिरला हाउस के लिए निकल गए। पंद्रह मिनट बाद आप्टे, शंकर, गोपाल और मैं एक टैक्सी में बैठकर बिरला हाउस के लिए रवाना हुए। नाथूराम ने वादा किया था कि वह बीस मिनट बाद निकलेंगे और बिरला हाउस में हमसे मिलेंगे। मरीना होटल से हम पहले हिंदू महासभा भवन गए।
22 जुलाई 1948: अपनी गवाही जारी रखते हुए, बैज ने उन घटनाओं का वर्णन किया जो 20 जनवरी को घटित हुई थीं, जब मदनलाल ने बिरला हाउस प्रार्थना स्थल पर गन कॉटन बम में आग लगाकर विस्फोट कर दिया था।
मैंने अपना रिवॉल्वर और हैंड ग्रेनेड एक हैंडबैग में छिपाकर रखा था। मरीना होटल से निकलने के बाद हम पहले हिंदू महासभा भवन गए और फिर बिरला हाउस। हम सीधे पीछे की ओर गए और ड्राइवर से नौकरों के क्वार्टर के पीछे वाले गोलचक्कर में गाड़ी पार्क करने को कहा, फिर हम गाड़ी से उतर गए। हम मुश्किल से कुछ कदम ही चले होंगे कि हमारी मुलाकात मदनलाल से हुई। आप्टे ने मदनलाल से पूछा - 'तैयार हो क्या?' मदनलाल ने जवाब दिया - 'हां, तैयार हूं।' 'हां, मैं तैयार हूं। मैंने गन कॉटन बम दीवार पर रख दिया है, अब बस मुझे इसकी बत्ती जलानी है।' उसी क्षण मैंने करकरे को पीछे के आंगन में जाते और प्रार्थना स्थल में बने चबूतरे के पीछे किसी से बात करते देखा। यह वही जगह थी जो आप्टे ने मुझे सुबह दिखाई थी।
पुलिस वाले का हौसला पस्त हो गया, हत्या का प्रयास विफल रहा 'करकरे हमारे पास आए और आप्टे से कहा, "आप बहुत देर से आए हैं, प्रार्थना शुरू हो चुकी है। गांधीजी अपनी जगह पर बैठ चुके हैं।

मैंने एक व्यक्ति को कमरे में पीछे से उनकी तस्वीर लेने के बहाने भेजने का इंतजाम किया है।" आप्टे ने मुझसे फोटोग्राफर बनकर अपने हैंडबैग के साथ कमरे में घुसने को कहा।' (करकरे की यह टिप्पणी कि वे देर से आए थे और प्रार्थना शुरू हो चुकी थी, इस संभावना की ओर इशारा करती है कि कुरान का पाठ शुरू होते ही बम विस्फोट किया जाना था, जिससे यह आभास होता कि यह कुरान के पाठ के खिलाफ चल रहे विरोध का हिस्सा था, और जब तक भ्रम की स्थिति बनी रहती, गांधीजी की आसानी से हत्या की जा सकती थी। इससे उन लोगों को, जो विस्फोट या हत्या में सीधे तौर पर शामिल नहीं थे, बिना किसी का ध्यान खींचे भागने का मौका मिल जाता, इस मामले में आप्टे, करकरे और गोडसे बंधुओं को।)
मैंने कमरे के सामने दो-तीन लोगों को बैठे देखा। मुझे तुरंत एहसास हो गया कि हत्या के बाद मेरे लिए कमरे से भागना नामुमकिन होगा, मैं डर गया। नाथूराम ने मुझसे कहा - 'दारू नाका, अपन सर्व इथुन सुरक्षित पाने बहेर पाडु शकु आशी व्यवस्था अम्ही केली अहे', 'डरो मत। हमने इंतज़ाम कर दिया है कि हम सब यहाँ से सुरक्षित निकल सकें।' नाथूराम, आप्टे और करकरे फिर मुझे कमरे में घुसने और अपना काम करने के लिए मजबूर करने लगे। मैंने उनसे कहा कि कमरे में जाकर गांधीजी पर पीछे से गोली चलाने के बजाय, मैं उनके पास जाकर सामने से गोली चलाना पसंद करूँगा ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि उनकी मौत हो जाए। मैं आप्टे और गोडसे को अपनी योजना की व्यावहारिकता के बारे में समझाने में कामयाब रहा (उनकी मंज़ूरी तो मिलनी ही थी। अब बैज को गांधीजी पर गोली चलाते हुए देखा जाएगा और हत्यारा साबित कर दिया जाएगा, मदनलाल को बम हमलावर के रूप में देखा जाएगा और वह पकड़ा जाए या न भी पकड़ा जाए, इस तरह दिमागी तौर पर बहकाया गया शरणार्थी और भाड़े का

हत्यारा मुख्य साजिशकर्ताओं का बलि का बकरा बन जाएंगे, और मुख्य साजिशकर्ता बिना किसी की नज़र में आए बच निकलेंगे)। मैंने शंकर को अपने पीछे आने का इशारा किया और हम दोनों उस जगह गए जहाँ टैक्सी खड़ी थी। बाकी गिरोह पिछवाड़े में ही रहा। मैंने अपने और शंकर के रिवॉल्वर और हथगोले एक तौलिये में लपेटकर अपने हैंडबैग में रख लिए। मैंने हैंडबैग को टैक्सी की पिछली सीट के नीचे रख दिया। मैंने शंकर को चेतावनी दी कि जब तक मैं इशारा न दूं, वह कुछ न करे। फिर मैं बाकी लोगों के पास लौट आया। मैंने अपने ऊपरी वस्त्र की जेबों में हाथ डाल रखे थे ताकि उन्हें लगे कि मैंने रिवॉल्वर और हथगोले कमीज की जेब में रखे हैं। मैंने गोडसे और आप्टे को बताया कि मैं तैयार हूं। आप्टे ने मुझसे एक बार फिर पूछा - 'बंदोभाऊ, तैयार हो ना?' मैंने कहा 'हां' और प्रार्थना स्थल पर दर्शकों की आगे की पंक्तियों में अपनी जगह ले ली, शंकर भी मेरे साथ था।
मैंने आप्टे को मदनलाल के पास जाते और उसकी पीठ पर हाथ रखकर उसे 'चलो' कहते देखा। मैंने मदनलाल को उस जगह की ओर बढ़ते देखा जहाँ उसने दीवार पर गन कॉटन बम रखा था। शंकर और मैं प्रार्थना सभा में गए। करकरे हमारे पीछे थे। मैंने देखा कि गांधीजी के ठीक सामने बीस-तीस महिलाएं और बच्चे बैठे थे। मैं गांधीजी के दाहिनी ओर लगभग पंद्रह कदम की दूरी पर खड़ा हो गया। शंकर और करकरे मुझसे कुछ कदम दाहिनी ओर खड़े हो गए। दो-तीन मिनट बाद हमें एक जोरदार धमाका सुनाई दिया। मैंने धमाके की दिशा से धुआँ उठता देखा। चार-पाँच आदमी धमाके वाली जगह की ओर दौड़े। गांधीजी ने हाथ जोड़कर सभा को शांत किया। कुछ मिनट बाद मैंने देखा कि मदनलाल पकड़ा गया था। सभा के सभी लोग शांति से बैठे रहे। मैंने यह भी देखा कि मदनलाल को पकड़ने के बाद वे उसे बिरला हाउस के

मुख्य द्वार के बाहर पुलिस शिविर में ले गए। फिर मैंने देखा कि तंबू से चार-पाँच आदमी निकले, वे पुलिसवाले लग रहे थे, मैंने उन्हें अपनी ओर दौड़ते देखा। मैं डर गया था, मुझे आशंका थी कि वे मदनलाल को उसके साथियों की पहचान करवाने के लिए ला रहे हैं। मैं मुड़ा और अपना चेहरा उनसे छिपा लिया। कुछ क्षण बाद जब मैंने दोबारा पुलिसकर्मियों की ओर देखा, तो पाया कि लोग प्रार्थना स्थल से बाहर निकल रहे थे। मैंने शंकर को अपने साथ आने का इशारा किया; हम लोगों की भीड़ में मिल गए और द्वार की ओर बढ़ने लगे। बिरला हाउस से निकलने के बाद हम एक तांगे में सवार होकर हिंदू महासभा भवन पहुँचे। प्रार्थना स्थल पर मुझे नथुराम गोडसे, आप्टे या गोपाल नहीं दिखे। मैंने शंकर को तुरंत महासभा भवन के पीछे जंगल में जाकर वहाँ रखे हथगोले ठिकाने लगाने का आदेश दिया। शंकर के जाते ही मैंने दिल्ली से भागने की तैयारी में अपना बिस्तर और बाकी सामान पैक करना शुरू कर दिया। उसी समय आप्टे और गोडसे भाई महासभा भवन पहुँचे। आप्टे ने मुझसे पूछा - 'बंदोभाऊ, क्या हुआ?' मैं उन पर बहुत गुस्सा था, मैं उनकी योजना समझ गया था कि वे मुझे हथियार के साथ छोड़कर खुद बच निकलेंगे। मेरा गुस्सा फूट पड़ा और मैं उन पर चिल्लाया। मैंने उनसे कहा कि वे चले जाएँ और भविष्य में कभी मुझसे संपर्क न करें।
तब तक शंकर लौट आया था, मैंने उसे हमारा सामान लेने को कहा। हम महासभा भवन से बाहर निकले और एक तांगा लेकर नई दिल्ली स्टेशन गए। मैंने बॉम्बे के लिए दो थर्ड क्लास टिकट खरीदे। मैंने स्टेशन पर कुछ पुलिस कांस्टेबलों को गश्त करते देखा। मैं घबरा गया। हम बाहर निकले, एक और तांगा लिया और पुरानी दिल्ली स्टेशन गए। वहाँ हमने उस ट्रेन में चढ़े जो रात 9:30 या 10:00 बजे बॉम्बे के लिए रवाना हुई। हम 22 जनवरी को सुबह 11:30 बजे कल्याण

स्टेशन पहुँचे। हमने कल्याण से पुणे के लिए ट्रेन पकड़ी और उसी दिन शाम 7:30 बजे पुणे पहुँचे।
'मुझे 31 जनवरी 1948 को सुबह लगभग 5.00 या 5.30 बजे पुणे स्थित मेरे आवास से गिरफ्तार किया गया था।'
अदालत में बैज ने हिंदू महासभा भवन के पीछे के जंगल से बरामद विस्फोटकों और बमों तथा मदनलाल से बरामद हथगोले की पहचान की। जब बैज से पूछा गया कि उसने हथगोले और विस्फोटक कहाँ से प्राप्त किए, तो उसने जवाब दिया, 'मैं इन्हें किरकी स्थित शस्त्रागार से लेता हूँ, मैं इन्हें वहाँ काम करने वाले कर्मचारियों से खरीदता हूँ। लेकिन मुझे नहीं पता कि इन्हें कौन बनाता है।' बैज ने अदालत को यह भी बताया कि पुणे में हिंदू राष्ट्र का कार्यालय एक अस्थायी शेड में था। गोडसे और आप्टे ने हिंदू राष्ट्र प्रेस के ठीक बाहर अपना एक अस्थायी कार्यालय बना रखा था। इस पत्रिका का पहले नाम दैनिक अग्रनी था और बाद में इसका नाम बदलकर हिंदू राष्ट्र कर दिया गया।
प्रश्न - 'आपने झूठी पहचान क्यों अपनाई?'
बैज - 'करकरे ने सुझाव दिया कि ऑपरेशन के दौरान हमें एक-दूसरे को पुकारने की आवश्यकता पड़ सकती है। अगर हम अपने असली नामों का इस्तेमाल करते, तो हमारी पहचान हो सकती थी और हमें गिरफ्तार किया जा सकता था, इसलिए उन्होंने सुझाव दिया कि हम झूठे नाम अपना लें।' बैज ने अदालत को आगे बताया कि आप्टे हिंदू महासभा के समर्पित स्वयंसेवक थे और गोडसे इसके महत्वपूर्ण नेताओं में से एक थे। वे मुझे महासभा के सभी वार्षिक सम्मेलनों में ले जाया करते थे। मैं महासभा के लिए चंदा इकट्ठा करता था और सदस्यों को भर्ती करता था। मैंने कई कारणों से उनके साथ बॉम्बे से दिल्ली जाने की सहमति दी। पहला कारण यह था कि मैं गोडसे और आप्टे को

लंबे समय से जानता था। दूसरा, हम सभी एक ही संगठन, हिंदू महासभा के सदस्य थे। तीसरा कारण यह था कि मैं उनके प्रति ऋणी महसूस करता था क्योंकि गोडसे और आप्टे समय-समय पर मेरे हथियार व्यवसाय को चलाने के लिए मुझे आर्थिक सहायता देते थे। मेरा मानना था कि तात्याराव सावरकर ने हमें आदेश दिया था और हमें हर कीमत पर उनके आदेश का पालन करना था। इसलिए मैं उनके साथ दिल्ली आने के लिए सहमत हो गया। जब से मैं गोडसे और आप्टे के संपर्क में आया हूं, मैंने हमेशा उनके आदेशों का पालन किया है।'

□□□□□□□□□ **V**

□□□□□ □□ □□□□□□ □□ □□□□□ □□□

□□□□ □□

□□. □□□□□□□? □□.□□.9 □□□□□□□-□□°? 1934 □□□□□□□□ □□□□ □□ □□□□□□□

□□□□□ □□□□ 1937-XV

□□□ □□

□□□□□□□□□□ □□□□

□□□□ □□□□□□□ 606824

परिशिष्ट VI

महात्मा गांधी की हत्या से जुड़े प्रतिष्ठान
दिल्ली:
1960 के दशक के उत्तरार्ध में, भारत सरकार ने बिरला परिवार से बाजार मूल्य चुकाकर बिरला हाउस का अधिग्रहण किया और इसे गांधी स्मृति में परिवर्तित कर दिया। के.के. बिरला ने 1966 में लंबी बातचीत के बाद इसे सरकार को बेच दिया। भारत सरकार ने 54 लाख रुपये का भुगतान किया और मुआवजे के तौर पर दिल्ली में सात एकड़ की प्रमुख भूमि भी दी। शशि भूषण, कृष्णकांत (जो बाद में भारत के उपराष्ट्रपति बने), मोहन धारिया और चंद्रशेखर (जो कुछ समय के लिए प्रधानमंत्री रहे) के प्रयासों और दबाव के कारण ही बिरला हाउस का अधिग्रहण संभव हो पाया। अंततः, शशि भूषण ने अधिग्रहण की प्रक्रिया में तेजी लाने के लिए धरना दिया। के.के. बिरला ने सौदेबाजी में कड़ा रुख अपनाया। एक मत के अनुसार, पारिवारिक हवेली की बिक्री कीमत तय करते समय, उन्होंने फलदार पेड़ों और लगाए गए सभी पौधों के मूल्य को भी कीमत में शामिल किया था। इस प्रकार, यह हर लिहाज से बेहद लाभदायक सौदा था। दुर्भाग्यवश, हाल के वर्षों में यह गलत धारणा प्रचलित हो गई है कि बिड़ला परिवार ने उदारतापूर्वक अपना पारिवारिक घर दान कर दिया था, ताकि इसे महात्मा गांधी के स्मारक में परिवर्तित किया जा सके। यह सच नहीं है।
बिरला हाउस में कई बदलाव किए गए हैं; हाल के वर्षों में, व्यक्तिगत प्रसिद्धि की लालसा में, क्रमिक रखवालों ने इस ऐतिहासिक स्मारक में अंधाधुंध निर्माण कार्य किया है। इतिहास को संरक्षित करने के बजाय, उन्होंने उसे सफलतापूर्वक मिटा दिया

है। गांधी स्मृति आज उस रूप से बिलकुल भिन्न है, जिस रूप में गांधी जी ने सितंबर 1947 से 30 जनवरी 1948 तक अपने अंतिम दिन यहाँ बिताए थे। आज आगंतुकों को बिरला हाउस के ऐतिहासिक महत्व का अहसास नहीं होता। जनवरी 1948 के महीने में, और विशेष रूप से 20 और 30 जनवरी को, इस स्थान पर घटी घटनाओं के सभी निशान मिटा दिए गए हैं।
मेम्फिस की यात्रा के दौरान, मैं उस मोटल को देखने गया जहाँ रेवरेंड डॉ. मार्टिन लूथर किंग की हत्या हुई थी। मोटल को ठीक उसी तरह संरक्षित किया गया है जैसा वह डॉ. किंग की हत्या के समय था। यहाँ तक कि पार्किंग में खड़ी गाड़ियाँ भी उसी तरह की हैं जैसी उस दुर्भाग्यपूर्ण दिन वहाँ खड़ी थीं। अल्बुकर्क रोड अब तीस जनवरी मार्ग कहलाता है। पीछे की ओर नौकरों के क्वार्टर अभी भी मौजूद हैं और पूर्व बिड़ला हाउस के पीछे का गोल चक्कर भी, जहाँ हत्यारों ने उस टैक्सी को पार्क किया था जो उन्हें 20 जनवरी 1948 की शाम को बिड़ला हाउस लेकर आई थी। यह टैक्सी आज लखनऊ के एक विंटेज कार प्रेमी के पास है। इसे गलत तरीके से 'हत्यारा कार' कहा जाता है। विभिन्न गांधी संग्रहालयों ने कई बार मालिक से कार उन्हें सौंपने की अपील की है, लेकिन उनकी अपील अनसुनी कर दी गई है।
मुझे लगता है कि हिंदू महासभा भवन का विस्तार और विस्तार किया गया है; मैंने इसकी वर्तमान स्थिति जानने की कोशिश नहीं की है। कनॉट सर्कस स्थित मरीना होटल में अब कुछ कार्यालय हैं।
मुझे फ्रंटियर होटल और शरीफ होटल के बारे में कोई जानकारी नहीं है। हो सकता है उन्हें दफ्तरों या दुकानों में बदल दिया गया हो या फिर विकास कार्यों के लिए उनकी जगह ले ली गई हो।

तेजी से बदलते कनॉट सर्कस में रीगल सिनेमा आज भी खड़ा है। यह कब तक टिका रहेगा, यह तो केवल ईश्वर ही जानता है।
पुराने दिल्ली रेलवे स्टेशन के प्रतीक्षा कक्ष शायद अभी भी मौजूद हैं। मुझे नहीं लगता कि पुराने दिल्ली स्टेशन का कोई बड़ा जीर्णोद्धार हुआ है। हत्यारे गोडसे, आप्टे और करकरे 29 जनवरी की रात को प्रथम श्रेणी के प्रतीक्षा कक्ष में रुके थे और 30 जनवरी 1948 की दोपहर को द्वितीय श्रेणी के प्रतीक्षा कक्ष से गांधी की हत्या करने के लिए निकले थे।
मुझे नहीं पता कि लाल किले के ऐतिहासिक परिसर में स्थित विशेष न्यायालय की इमारत और बैरकें, जिन्हें गांधी हत्याकांड के दौरान आरोपियों को रखने के लिए विशेष रूप से अधिसूचित जेल में परिवर्तित किया गया था, आज भी मौजूद हैं या नहीं। सौभाग्य से, लाल किला आज भी मौजूद है।
राजघाट में कई बार बदलाव हुए हैं और अब यह किसी साधारण व्यक्ति के साधारण श्मशान घाट जैसा नहीं दिखता।
पूना, जिसे अब पुणे के नाम से जाना जाता है
गांधी जी की हत्या के बाद हिंसक भीड़ ने 495 शनिवर पेठ स्थित उस इमारत पर हमला कर दिया, जहाँ हिंदू राष्ट्र प्रेस और अग्रानी का कार्यालय स्थित था। प्रेस और कार्यालय में तोड़फोड़ की गई और उन्हें जला दिया गया। मुझे यकीन नहीं है कि गोडसे या आप्टे परिवार ने कभी उस इमारत पर दोबारा अधिकार प्राप्त किया या नहीं।
सत्तर के दशक के आरंभ में, मैं अपने माता-पिता और दादी के साथ गोपाल गोडसे के घर गया था। मुझे लगता है कि वह घर अभी भी मौजूद है। गोपाल ने एक मंदिर बनवाया है और उसमें अपने भाई नाथूराम गोडसे की अस्थियां रखी हैं, जैसा कि उनका दावा है। नाथूराम की

पुण्यतिथि पर उनके प्रशंसकों का एक समूह इकट्ठा होकर उस हत्यारे की पूजा करता है, जिसे वे शहीद मानते हैं।
नारायण पेठ स्थित बैज का शास्त्र भंडार, जो 300 नंबर पर था, गायब हो गया है। गांधी जी की हत्या के बाद इस पर हमला किया गया और इसे लूटा गया।
नारायण आप्टे का पैतृक घर आनंद आश्रम 22 बुधवार पेठ में स्थित था। मुझे नहीं पता कि वह आज भी मौजूद है या नहीं। अगर है, तो क्या वह आप्टे परिवार की संपत्ति है? मैंने इसकी जानकारी जुटाने की कोशिश नहीं की है।
उक्सान
यह ज्ञात नहीं है कि गोडसे के वंशजों के पास उक्सान में उनकी पैतृक संपत्ति अभी भी है या नहीं। गोपाल गोडसे ने अपनी सैन्य रिवॉल्वर अपने पैतृक घर के परिसर में दफना दी थी। उन्होंने उसे निकाल लिया और 20 जनवरी 1948 को हुए हत्या के प्रयास के समय दिल्ली ले गए। गोपाल गोडसे को उक्सान से गिरफ्तार किया गया, जहां उन्होंने हत्या के बाद उन्हें पीट-पीटकर मार डालने पर आमादा भीड़ के प्रकोप से बचने के लिए शरण ली थी।
अहमदनगर, जिसे अब आम तौर पर नागर कहा जाता है
विष्णु करकरे का डेक्कन गेस्ट हाउस आज भी अहमदनगर के कपड़ा बाजार इलाके में स्थित परदेशी आली में मौजूद है।
Sholapur:
बरी होने के बाद शंकर किस्तय्या गुमनामी में चले गए। उनका आखिरी ज्ञात पता शोलापुर के येलम्मा पेठ था।
ग्वालियर:
डॉ. सदाशिव परचुरे ग्वालियर के स्टेशन रोड स्थित अपने संयुक्त परिवार के घर, परचुरे वाडा में रहते थे। सत्तर या अस्सी के दशक

में, स्वर्गीय मधुर वल्लूरी ने परचुरे वाडा में ही गंभीर रूप से बीमार परचुरे का साक्षात्कार लिया था। एक चतुर वकील और उच्च न्यायालय की लापरवाही के कारण परचुरे बरी हो गए थे। गांधी हत्याकांड में अपनी संलिप्तता से इनकार करते हुए परचुरे अंत तक यहीं रहे। संभवतः परचुरे वाडा आज भी मौजूद है और उनके वंशजों के स्वामित्व में है।
बॉम्बे, जिसे अब मुंबई के नाम से जाना जाता है
सी ग्रीन साउथ और सी ग्रीन नॉर्थ होटल आज भी मौजूद हैं। ये आज भी उन्हीं नामों से जाने जाते हैं और सुरम्य मरीन ड्राइव पर स्थित हैं।
लैंड्सडाउन रोड और कोलाबा कॉज़वे के जंक्शन पर स्थित पायर्क का अपोलो होटल, जो रीगल सिनेमा से कुछ ही दूरी पर है, आज भी वहीं मौजूद है।
सैंडहर्स्ट ब्रिज के निकट स्थित आर्य पथीकाश्रम, 1962 की बीएमसी की बॉम्बे गाइड में वल्लभभाई पटेल रोड पर स्थित बताया गया है। हालांकि, यह अब अस्तित्व में नहीं है।
हॉर्नबी रोड से थोड़ी दूर गनबो स्ट्रीट पर स्थित एल्फिंस्टोनी होटल (जिसे अब रुस्तम सिधवा मार्ग और दादाभाई नौरोजी रोड के नाम से जाना जाता है) का उल्लेख 1962 की बॉम्बे बीएमसी गाइड में भी था। मुझे इसका नंबर एमटीएनएल डायरेक्टरी इन्क्वायरीज़ से मिला। जब मैंने उस नंबर पर कॉल किया, तो मुझे बताया गया कि मैंने रेजिडेंसी होटल को कॉल किया है, उन्हें एल्फिंस्टोनी होटल के बारे में कोई जानकारी नहीं है। कार्नाक रोड पर स्थित इसका सहयोगी होटल एल्फिंस्टोनी एनेक्स होटल भी अब मौजूद नहीं है। हिंदू महासभा का कार्यालय परेल में दामोदर हॉल के ऊपर स्थित है। अदालती रिकॉर्ड में इसे दादर में बताया गया है, लेकिन उन

दिनों दादर और परेल में कोई खास अंतर नहीं था। परेल स्थित हिंदू महासभा का कार्यालय पहली मंजिल पर है। अदालती रिकॉर्ड में यह दर्ज है कि आरोपी आप्टे और गवाह बैज की मुलाकात हिंदू महासभा कार्यालय की ओर जाने वाली सीढ़ियों पर हुई थी, इसलिए यह वही कार्यालय होना चाहिए। जांच रिपोर्टों में पुलिस का दावा है कि 20 जनवरी को असफल प्रयास के बाद उन्होंने हिंदू महासभा के परेल कार्यालय पर निगरानी रखी थी, लेकिन तब तक साजिशकर्ता फरार हो चुके थे।
भुलेश्वर में स्थित मोटा मंदिर आज भी मौजूद है। हाल ही में यह मंदिर अपने ट्रस्टियों और कुछ दुकानदारों और गोदाम मालिकों (जो वहां किराए पर रहते हैं) के बीच हुए विवाद के कारण खबरों में था। मुझे नहीं पता कि दादा महाराज और दीक्षित महाराज के वंशज आज भी वहां रहते हैं या नहीं।
सावरकर सदन का निर्माण 1938 में वैद्यदेव सावरकर ने करवाया था। यह बालमोहन विद्यामंदिर से कुछ दूरी पर स्थित है, जो अब डॉ. मधुकर बी. राउत मार्ग के नाम से जानी जाने वाली गली में है। शिवसेना भवन से शिवाजी पार्क की ओर जाते समय यह पहला बायां मोड़ है। वैद्यदेव सावरकर के पुत्र यहीं रहते हैं। अब उनके पास अपने पिता के घर का केवल एक तिहाई हिस्सा ही है; शेष दो तिहाई हिस्सा दो अन्य परिवारों के स्वामित्व में है, जिनमें से एक मेरा परिचित है। महात्मा गांधी फाउंडेशन के लिए कार्यालय की तलाश करते समय, इस परिचित ने मुझे अस्थायी रूप से भूतल का एक कमरा कार्यालय के रूप में उपयोग करने की पेशकश की। इससे एक विडंबनापूर्ण पता बन जाता, महात्मा गांधी फाउंडेशन, सावरकर सदन।

यह दुखद है कि हालांकि सावरकर को कई लोग पूजते हैं, लेकिन उनके किसी भी अनुयायी ने कभी उनके घर को संरक्षित करने के बारे में नहीं सोचा।
सीआईडी मुख्यालय, जहाँ से नागरवाला ने अपनी जाँच चलाई और जहाँ परचुरे को छोड़कर सभी आरोपियों को हिरासत में रखा गया था, पुलिस मुख्यालय परिसर में क्रॉफर्ड मार्केट के सामने स्थित है, जिसका नाम अब महात्मा ज्योतिबा फुले मार्केट है। कहा जाता है कि गांधी हत्याकांड के मुकदमे के बाद, गवाह बैज को परिसर में एक फ्लैट आवंटित किया गया था, जहाँ वह अपनी मृत्यु तक रहा। प्रेसिडेंसी मजिस्ट्रेट कोर्ट आज भी उसी इमारत से संचालित होता है। इसी अदालत में गवाहों के कई बयान दर्ज किए गए और पहचान परेड आयोजित की गई। प्रेसिडेंसी मजिस्ट्रेट कोर्ट को आम तौर पर किला कोर्ट के नाम से जाना जाता है।
रिहाई के बाद मदनलाल पाहवा बंबई में बस गए। माना जाता है कि वे दादर में कहीं रहते थे। उनके निवास स्थान या संतान होने का कोई रिकॉर्ड नहीं है।
17 जनवरी और 27 जनवरी 1948 को आप्टे और गोडसे ने कलिना स्थित सैन्य शिविर के पास हवाई अड्डे के गेट से दिल्ली जाने वाली एयर इंडिया की फ्लाइट पकड़ी। उन दिनों यात्री यहीं से फ्लाइट में सवार होते थे। कई वर्षों तक इस क्षेत्र को 'पुराना हवाई अड्डा' कहा जाता था।

□□□□□□□□□□□□

9 □□□□ □□□□□□□
□□□□□□□□□□, □□□
□□□,
Afzalpurkar, Ganpatrao
Aga Khan Palace
□□□□□□□□
□□□□, □□□□□□□□□□□
□□□□□□□□
□□□□□□□□□ □□□
□□□□□□□□□□, □□□□□□□□ □□.
□□□□ □□□□□□ □□□□□□□□ □□□□□ (□□□□□□□)
□□□□□□□□
□□□□□□□, □□□□□□□□ □.
□□□□ □□□□□ □□□□□□□□
□□□□□ □□□□
□□□□□□, □□□□□□□□
□□□□□□, □□□□□□□ □□□□□□□□□□
□□□□ □□□□ □□□□□
□□□, □□.□□.
Atmacharan,
□□□□, □□ □□□□□□□□
□□□□□□□□, □□□□□
□□□□□□□□
□□□□□□□□□, □□□□□□□□□□□

आज़ाद, मौलाना अबुल कलाम बैज, दिगंबर रामचंद्र
Bajaj, Jamnalal
Bakshi, Chandrakant
बाल्किशन
Bandobhau
Bappa, Thakker
Bhargava, Gopichand Bhilare Guruji बिरला हाउस
बिरला, जी.डी.
बंबई
Bose, Netaji Subhas Chandra ब्राउन, ऑस्कर एच.
कैबिनेट मिशन
केंद्रीय संविधान सभा चक्रवर्ती, डॉ. अमिया
Chand, Kishen
चिश्ती, ख्वाजा मोइनुद्दीन चितपावन ब्राह्मण
Choturam
चौधरी, नूरुद्दीन
चर्चिल, सर विंस्टन
सविनय अवज्ञा
कांग्रेस कार्यकारी समिति
कांग्रेस
कांग्रेस कार्यकारी समिति (सीडब्ल्यूसी)

संविधान सभा
कपास विनिमय भवन
क्रिप्स, सर स्टैफोर्ड Dada Maharaj
दांडी मार्च
डेविड, ए.
डेक्कन गेस्ट हाउस
Desai, Mahadev
Desai, Morarji
देउलकर, न्यूयॉर्क
देवी, सुलोचना
ढिंगरा, मदनलाल
Dixit Maharaj
Dube, Gaya Prasad
Dutta, Kamini Kumar East Bengal एल्फिंस्टन एनेक्स होटल एल्फिंस्टन होटल
फर्ग्यूसन कॉलेज
प्रथम स्वतंत्रता संग्राम स्वतंत्र भारत समाज
फ्रंटियर हिंदू होटल
गाडगिल, अन्ना
गांधी राष्ट्रीय संग्रहालय Gandhi, Devdas
गांधी, हरिलाल
Gandhi, Jaisukhlal

Gandhi, Kanti
Gandhi, Mahatma
Gandhi, Manilal
अजीब
Ghosh, Prafulla Chandra गिल्डर, एम.डी.डी.
Godse, Gopal Vinayak गोडसे, नाथुराम विनायक गोडसे, सिंधुताई
Goel, Jagdish Prasad
Gupta, Satish
Gurtu, Raosaheb
ग्वालियर
हल्दीपुर, बी.ए.
Harijan Colony
Hariram
Hindu Mahasabha Bhavan,
Hindu Mahasabha
हिंदू राष्ट्र
हुसैन, डॉ. जाकिर
हुसैन, जाहिद इंडियन नेशनल आर्मी (आईएनए) जैक्सन, ए.एम.टी.
जैन, प्रो. जे.सी.
Jawdekar, Acharya Shankar Dattatrey जिन्ना, मोहम्मद अली
जोशी, जी.एम.

□□□□, □□□□□□□□□□ □□□□□ □□.□□.
Joshi, Shripad
□□□□□ □□□,
□□□□, □□□□□ □□.
□□□□, □□□□□□ □□.
□□□□ □□□□
Karkare, Vishnu Ramkrishna
Kashmirilal
Kasturba, Kaur, Rajkumari Amrit
□□□□□, □□.□□.
Khan , Ghazanafar Ali,
□□□, □□□ □□□□□□ □□□□□□
□□□, □□□□□□ □□□,
□□□, □□□□ □□□□
Khan, Sharif
□□□, □□.□□.
Khwaja Nazimuddin
□□□□□, □□□ □□□□
□□□□□, □□□ □□□□
□□□□□
Kistayya, Shankar
Kripalani, Acharya
□□□□□□, □□□□□□
□□□□□ □□□□□□□□
□□□□□□, □□□□□□□□
□□□□□□, □□□□□□

लिनलिथगो, लॉर्ड
Lohiya, Ram Manohar पटियाला के महाराजा
महात्मा गांधी: अंतिम चरण, मणिबेन
मनु
मरीना होटल
मसानी, मिनू
माज़िनी, ग्यूसेप्पे
मेघजी, चरनदास
Mehta, Jivraj, Meklai
मिंटो, भगवान
Modak, Shanta
मोहम्मद, बख्शी गुलाम माउंटबेटन, कॉर्ड
मुस्लिम लीग
Nagarvala, Jamshed Dorabjee नायडू, सरोजिनी
Narayan, Jayprakash
Narayanrav, D.
मालेर कोटला के नवाब
नय्यर, डॉ. सुशीला
Nayyar, Pyarelal
नेहरू, पंडित जवाहरलाल निर्मल बोस
निर्मल कुमार बोस

निश्तर, अब्दुर रब
Noakhali
दोपहर, फ़िरोज़ खान
उत्तर-पश्चिम सीमांत प्रांत (एनडब्ल्यूएफपी) पाचेको, सी.
पाहवा, मदनलाल,
Pant, Govind Vallabh
Parchure, Dr. Dattatreya Sadashiv
पटेल, सरदार
Patwardhan, Raosaheb Peshvas पेथिक-लॉरेंस, लॉर्ड
Phadnis, Jagan
पिंटो, क्लाउडियो
पूना ब्राह्मण
पूना
पॉवर, सी.आई., प्रसाद, डॉ. राजेंद्र प्रिवी काउंसिल
Purohit, Manishankar
कायद-ए-आजम
क़ुरैशी, शुएब
Raj Ghat,
Rajagopalachari, C.
Rajaji Formula
राणा, यू.एच.
रंधावा, एम.एस.
Rashtriya Swayamsevak Sangh (RSS)

लाल किला
रीगल सिनेमा
गोलमेज सम्मेलन
रॉय, बी.सी.
नमस्कार, आंटी अमटस
साल्वी, दौलतराव
साल्वी, मनोरमा,
Sapru, Tej Bahadur
Sarabhai, Mridula
शरत
सरवर, मियां गुलाम
शास्त्री
श्रीनिवास
Savarkar, Vinayak Damodar Scindia, Maharaja Jiyajirao द्वितीय विश्व युद्ध
सेंजेवी, टी.जी.
Sevagram
शरीफ होटल
शॉन, विंसेंट,
Shivaji Printing Press
शुक्ला, रविशंकर
शिमला सम्मेलन
हैं
सिंह, जनरल मोहन
सिंह, गुरबचन

सिंह, जसवंत
सिंह
Surjit
सिन्हा, सी.पी.एन.
सिन्हा
Shrikrishna
सुहरावर्दी, हसन
शहीद,
Sundarilal
टैगोर, रवींद्रनाथ
तेंदुलकर, बी.जी.
तेंदुलकर, डी.जी.
थाट्टे, एल.जी.
Tilak, Bal Gangadhar,
टाइम्स ऑफ इंडिया
उक्सान,
संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद उत्मनज़ई
वायसराय महल
विजय समाप्ति
विले पार्ले स्टेशन
Vinayakrav, N.
वेवेल, लॉर्ड
पश्चिम पंजाब व्हाइटहॉल वाइली, सर कर्ज़न

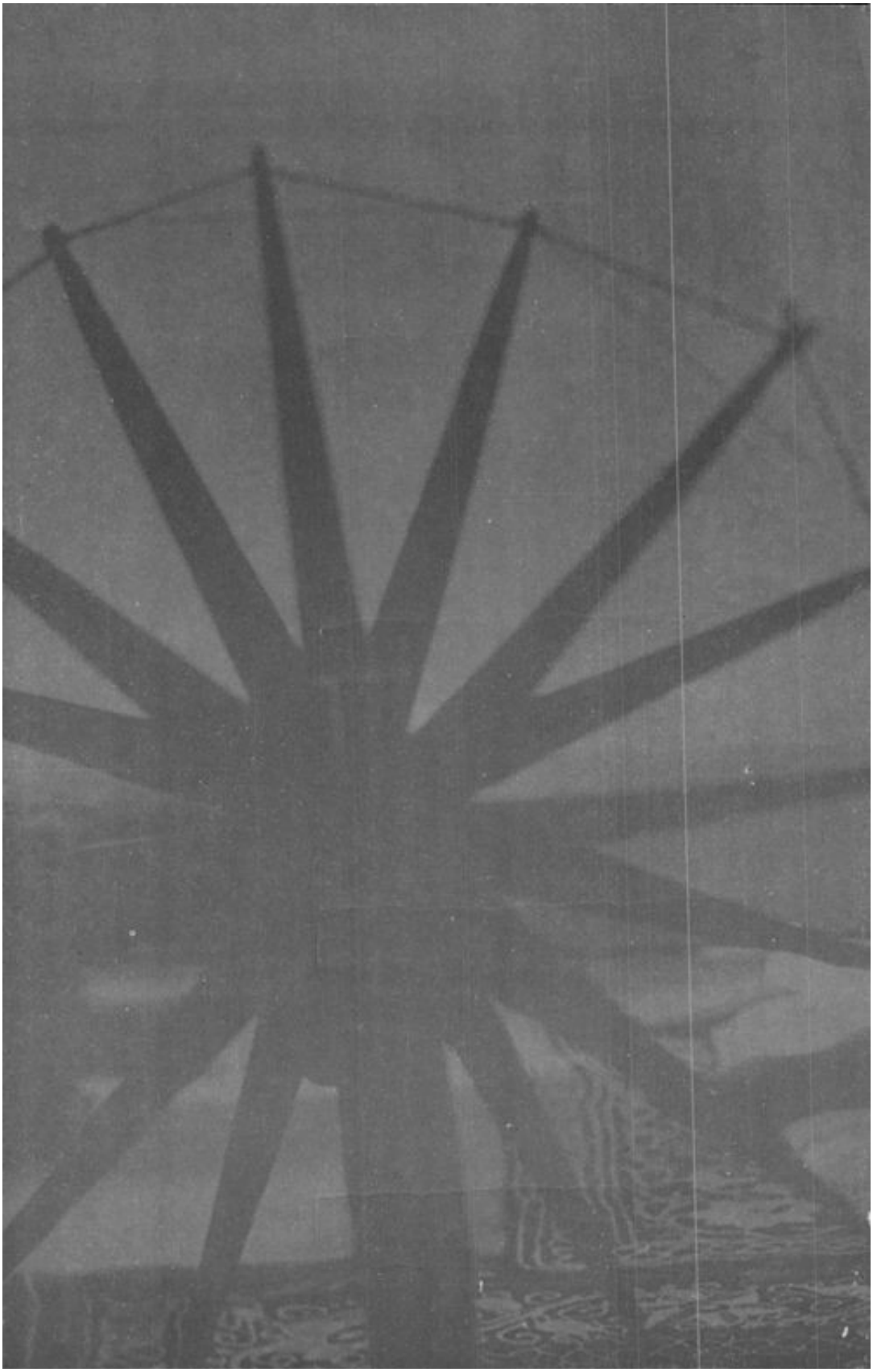

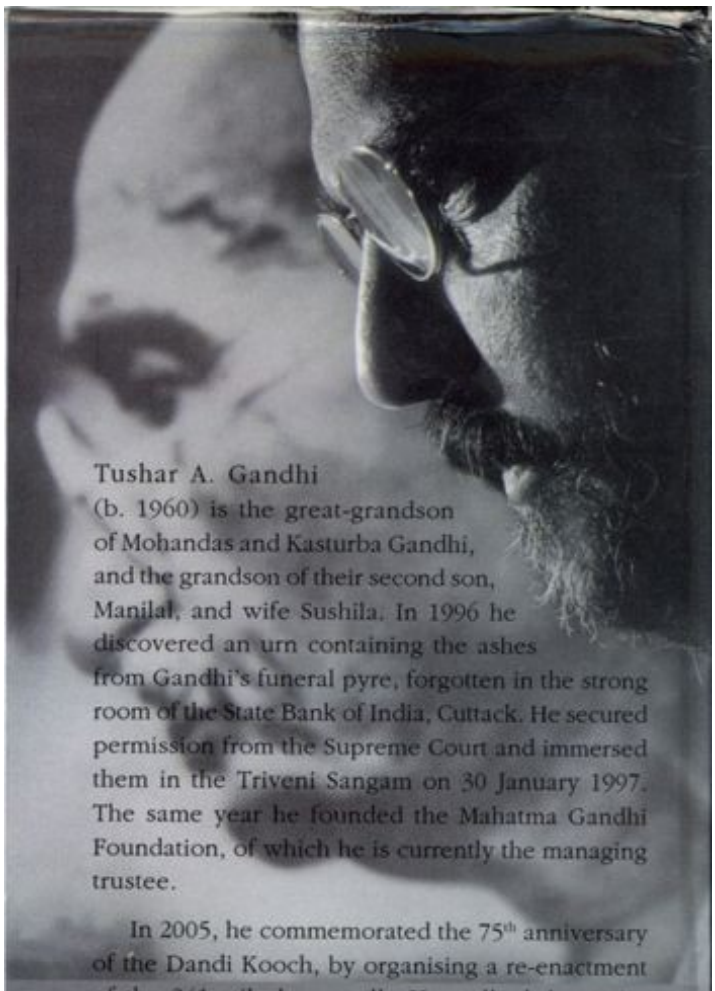

Tushar A. Gandhi (b. 1960) is the great-grandson of Mohandas and Kasturba Gandhi, and the grandson of their second son, Manilal, and wife Sushila. In 1996 he discovered an urn containing the ashes from Gandhi's funeral pyre, forgotten in the strong room of the State Bank of India, Cuttack. He secured permission from the Supreme Court and immersed them in the Triveni Sangam on 30 January 1997. The same year he founded the Mahatma Gandhi Foundation, of which he is currently the managing trustee.

In 2005, he commemorated the 75th anniversary of the Dandi Kooch, by organising a re-enactment of the 241-mile long walk. He walked the entire stretch and was instrumental in getting the prime minister to declare the route from Sabarmati Ashram to Dandi a historic heritage route.

Tushar currently lives in Mumbai with his wife Sonal and children Vivan and Kasturi.

Rupa . Co

www.rupapublications.com
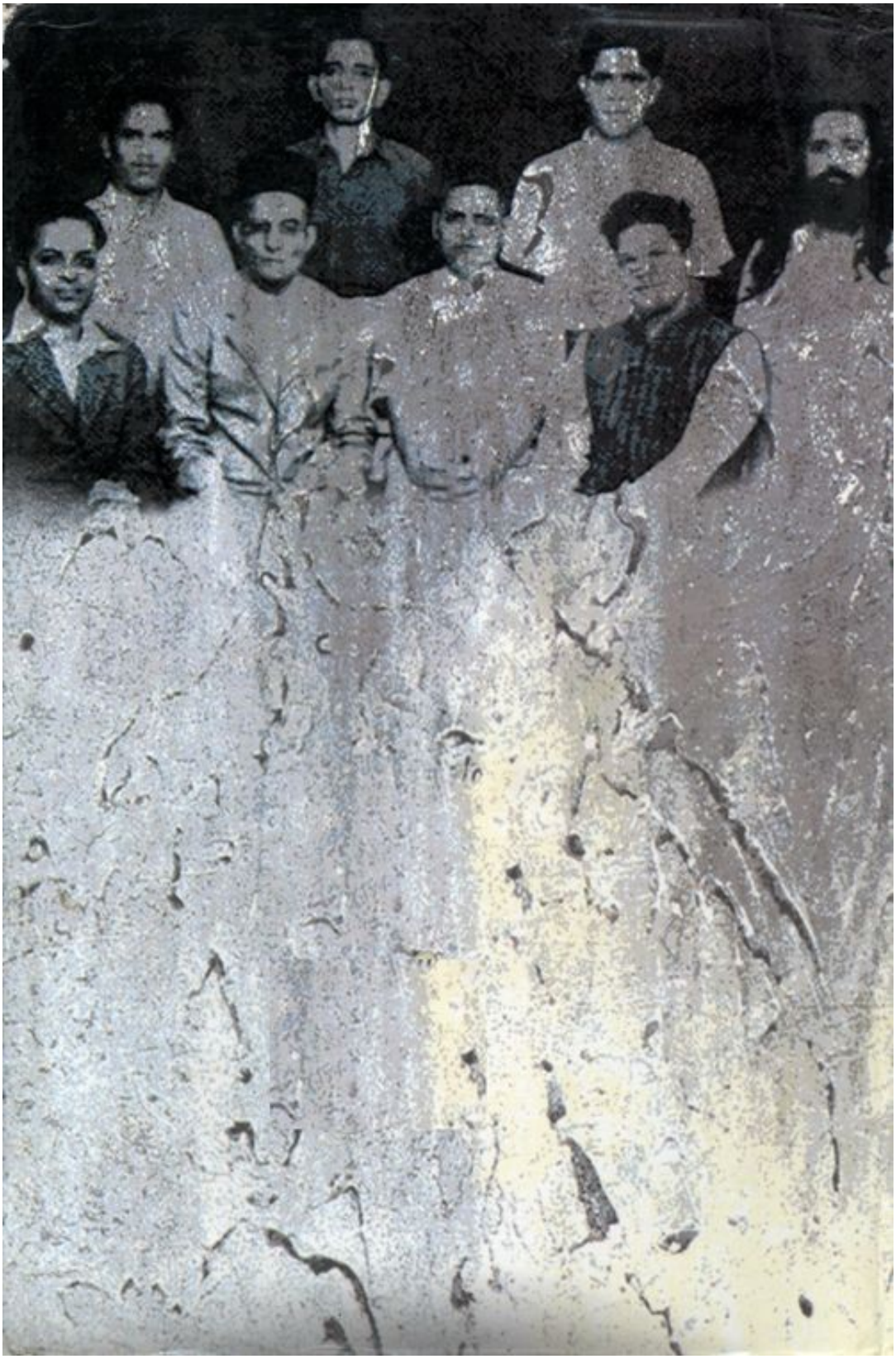
COVER DESIGN: ARRT CREATIONS